थेरागाथा

अंतर्वस्तु

थेरागाथा: वरिष्ठ भिक्षुओं के श्लोक (परिचय)

थेरागाथा (थेरा+गाथा) में 264 थेरों यानी वरिष्ठ भिक्षुओं (जिन्हें भिक्षु भी कहा जाता है) द्वारा रचित कविताएँ (गाथाएँ) शामिल हैं, जो बुद्ध के समय के सर्वोत्कृष्ट और पूर्णतः प्रबुद्ध (अरहत) थे। ये असीम रूप से आत्मप्रबुद्ध वरिष्ठ भिक्षु निर्वाण/निब्बान (दिव्य आयाम) के उस पार पहुँच चुके थे जहाँ शाश्वत आनंद और जीवन है। ये वृत्तांत उनके पदचिन्हों पर चलने की प्रेरणा देते हैं।

नोट: शिष्यों के बारे में अधिक जानकारी अपदाना में दी गई है , कुल 559 संख्याएँ।

थेरागाथा-विस्तृत : वरिष्ठ भिक्षुओं के विस्तृत जीवन और शिक्षाएँ

अध्याय 1: एकल श्लोक 1-120

थेरा 1.1: सुभूति (1)

थेरा 1.2: महान कोट्टिता (2)

थेरा 1.3: कंखा-रेवत (संदेही व्यक्ति)(3)

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(1):सुभूति

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।

आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

थेरागाथा <<<<------ (1) ------>>>> अगला

पाली संस्करण: पाली-अंग्रेज़ी संस्करण और पाली-देवनागरी संस्करण

1. सुभूति
हमारे बुद्ध के समय में, सावत्थी में, सलाहकार सुमना के परिवार में, जो अनाथपिंडिका के छोटे भाई थे, उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम सुभूति रखा गया। [1] जिस दिन उनके चाचा द्वारा खरीदा गया जेतवन भगवान बुद्ध को भेंट किया गया, उस दिन सुभूति वहाँ उपस्थित थे, और जब उन्होंने धम्म के बारे में सुना, तो उन्हें आस्था प्राप्त हुई और उन्होंने संसार त्यागकर संन्यास ग्रहण कर लिया। संन्यास की दीक्षा प्राप्त करने के बाद, उन्होंने विनय नियमों की दोनों श्रेणियों में महारत हासिल की। [2] इसके बाद, उन्हें ध्यान के अभ्यास के लिए एक विषय दिया गया, और वे वन में जाकर उसका अभ्यास करने लगे। आनंद-ज्ञान के आधार पर अंतर्दृष्टि विकसित करते हुए , [3] उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। और उन्होंने बिना किसी भेद या सीमा के धम्म का उपदेश देते हुए, सार्वभौमिक करुणा का विकास करने वाले भिक्षुओं में अग्रणी बन गए। और क्योंकि भिक्षा मांगते हुए वे घर-घर जाकर [5] समाधि की अवस्था में लीन हो जाते थे , और समाधि से बाहर आकर भिक्षा ग्रहण करते थे, इसलिए यह उनके दाताओं के लिए बड़ा प्रतिफल माना गया, और वे दान के योग्य लोगों में श्रेष्ठ हो गए। इसी कारण भगवान बुद्ध ने कहा: 'सुभूति, भिक्षुओं, मेरे भिक्षु-शिष्यों में सर्वव्यापी [4] करुणा में श्रेष्ठ हैं, और दान के योग्य लोगों में भी श्रेष्ठ हैं। [5] ...

तो यह महान भिक्षु, जो अनेकों के कल्याण के लिए देश-विदेश में यात्रा कर रहे थे, उचित समय पर राजगृह पहुँचे। राजा बिम्बिसार ने उनके आने की सूचना सुनी और उन्हें प्रणाम करने के लिए गए, तथा उनसे निवेदन किया, 'हे पूज्य, कृपया यहाँ निवास करें, मैं आपके लिए एक आवास बना दूँगा।' परन्तु जाते-जाते वे भूल गए। भिक्षु को कोई आश्रय न मिलने पर, वे खुले में ध्यान करने लगे। भिक्षु के इस आदर के कारण, देवता ने वर्षा नहीं की, जिससे लोग सूखे से पीड़ित हो गए और राजा के महल के द्वार पर हंगामा करने लगे। राजा ने अपने आप से प्रश्न किया कि देवता ने वर्षा क्यों नहीं की, और उन्होंने अनुमान लगाया कि इसका कारण भिक्षु का खुले में होना ही होगा। अतः उन्होंने उनके लिए एक पत्तियाँ-पत्थर की कुटिया बनवाई और उन्हें प्रणाम करते हुए कहा, 'हे प्रभु, कृपया इस पत्तियाँ-पत्थर की कुटिया में निवास करें,' और फिर वे चले गए। भिक्षु ने प्रवेश किया और घास-फूस के पलंग पर पालथी मारकर बैठ गए। फिर बारिश बूंद-बूंद करके टपकने लगी, मूसलाधार नहीं। लेकिन भिक्षु ने लोगों के मन से सूखे का डर दूर करने के लिए, यह घोषणा की कि उन्हें बाहर से या भीतर से कोई खतरा नहीं है, और इसके लिए उन्होंने यह श्लोक बोला:

[1] चन्ना मे कुतिका सुख निवाता वस्सा देव यथासुखः॥
चित्तं मे सुसामहितां विमुत्तं अतापि विहारामि वस्सा देवा' ति.॥ ॥

Itthaŋ sudaŋ āyasmā subhūtitthero gāthaŋ abhāsitthā' ti.॥ ॥

[1] मेरी छोटी सी झोपड़ी अच्छी छत वाली और सुखद है,
और हवाओं से सुरक्षित है - हे भगवान, अपनी इच्छा से बारिश करो!
मेरा दिल शांत है, मेरा दिल मुक्त है,
और मेरा मन उमंग भरा है। अब बारिश करो, भगवान! बारिश करो। [6]

इस प्रकार पूज्य वरिष्ठ भिक्षु सुभूति ने अपना कथन (गाथा) कहा। [7]

और वह श्लोक उनकी अञ्ञा (प्राप्ति) की अभिव्यक्ति थी।

[1] सदियों पहले, पद्ममुत्तरा बुद्ध के समय में, जब इस थेरा ने वह संकल्प लिया था जिसने उनके शेष जीवन को निर्धारित किया, तब उनका नाम नंदा था। यहाँ क्रॉनिकल में उनके चाचा द्वारा जेतवन में निर्मित विहार (मठ), महान महाविद्यालय, के निर्माण का संक्षिप्त विवरण दिया गया है, जैसा कि जातक कथाओं की प्रस्तावना में अधिक विस्तार से बताया गया है। देखें राइस डेविड्स, बुद्धिस्ट बर्थ स्टोरीज, पृष्ठ 130।

[2] विनय ग्रंथ देखें , i. '273 ; iii. 2, n. 'मानदंड' 'धम्म' है।

[3] किसी निर्दिष्ट 'स्वयं सम्मोहन के तरीके' द्वारा प्रेरित मंत्रमुग्ध लेकिन व्यवस्थित मानसिकता, और यहाँ अपनी वस्तुओं को सार्वभौमिक सद्भावना से भरने पर केंद्रित है (बुद्ध. साइ., 65 एफ.एफ.; विभंगा, 277)।

[4] एनोडिसाका। डॉ. ए.सी. टेलर के पैटिएम्बिडामग्गा, जेआरएएस, जनवरी, 1905 के संस्करण की मेरी समीक्षा देखें।

[5] अंगुत्तरा निकैया, i. 24 देखें , जहाँ कई भिक्षुओं, बहनों और गृहस्थों को औपचारिक रूप से एक विशिष्ट उपलब्धि में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए मान्यता दी गई है।

[6] धम्मपाल कहते हैं कि यहाँ देव का तात्पर्य गर्जन-बादल, पज्जुन्न या पर्जुन्य के देवता या आत्मा से है - इधापि मेघे पज्जुन्ने वा दत्तबब्बो। सुत्त-निपात, श्लोक 18; राइस डेविड्स, अमेरिकन लेक्चर्स, 167 ff.; बुद्धिस्ट इंडिया, 336. [?] तुलना करें LI.-LIV., CLV.
टीका में 'कुटिया' को शरीर के रूपक के रूप में देखने का विकल्प दिया गया है। अनुशासन के माध्यम से अच्छे प्रशिक्षण में होने के कारण, 'हृदय' ध्यान के माध्यम से और अंतर्दृष्टि ज्ञान के माध्यम से भी उतनी ही अच्छी तरह से प्रशिक्षित होता है, श्लोक तीन प्रकार के सिक्खा (प्रशिक्षण) के अंत को संक्षेप में प्रस्तुत करता है । मेरी बौद्ध धर्म पुस्तक, अध्याय viii देखें; तुलना करें नीचे, LVII., आदि।

[7] यह कथन प्रामाणिक है, निस्संदेह संपादकों द्वारा। निम्नलिखित वाक्य टीकाकार का है। अञ्ञ का अर्थ है ज्ञान या सहज ज्ञान, जो अरहंतत्व (ज्ञानोदय) की गारंटी है। मज्झिमा, i. 479; संयुत्त, ii. 22.
थेरा सुभूति का उल्लेख हमें केवल उदाना, vi. 7 में मिलता है, जहाँ बुद्ध उनकी ध्यान साधना में निपुणता की प्रशंसा करते हैं, और राजा मिलिंदा के प्रश्न, ii, 315,323 में, जहाँ उनके श्लोक (जो कहीं और नहीं मिलते) उद्धृत किए गए हैं। परिशिष्ट (नीचे) देखें।

1. एकल खंड

1.1 पहला अध्याय

1.1-1[1] के श्लोकों पर टिप्पणी

सुभूति थेरा.
अब थेरस की उन छंदों के अर्थ पर व्याख्या उपलब्ध है जो व्यवस्थित रूप से 'चन्ना मे कुटिका' से शुरू होती हैं। हालांकि, उन छंदों की व्याख्या उनके प्रसंगों को स्पष्ट करने के बाद की गई है, इसलिए यह स्पष्ट और आसानी से समझ में आने वाली है; इसी कारण हम यहाँ-वहाँ प्रसंगों को स्पष्ट करने के बाद अर्थ की व्याख्या संकलित करेंगे।

वहाँ, "चन्ना मे कुटिका" से शुरू होने वाले श्लोक की उत्पत्ति क्या है? इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है:— ऐसा कहा जाता है कि एक लाख युग (कप्पा) पहले, जब जगत के रक्षक, भगवान पद्ममुत्तर का जन्म नहीं हुआ था, तब हंसवता नामक नगर में एक अत्यंत धनी ब्राह्मण के पुत्र का जन्म हुआ। उनका नाम "नंद" रखा गया। वयस्क होने पर उन्होंने तीनों वेदों का ज्ञान प्राप्त किया, जहाँ उन्हें कोई सार नहीं मिला, तो उन्होंने संसार का त्याग कर अपने साथ चौवालीस हजार युवकों के दल के साथ एक पर्वत की तलहटी में तपस्वी बन गए और उन्होंने ध्यान की आठ आत्म-प्राप्तियों (समापत्ति) के साथ-साथ पाँच प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) को भी प्राप्त किया। उन्होंने अपने निवासी शिष्यों को मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) के बारे में बताया (या निर्देश दिया), जो शीघ्र ही ध्यान के लाभार्थी बन गए।

उस अवसर पर, भगवान पद्ममुत्तरा संसार में अवतरित हुए और हंसवती नगर के निकट आश्रित निवास करते हुए, जब भी उन्होंने संसार को देखा, तो उन्हें ऋषि नंदा के जटाधारी शिष्यों के अरहंत पद प्राप्त करने के लिए पर्याप्त योग्यता का पता चला, साथ ही ऋषि नंदा की उस आकांक्षा का भी पता चला कि उन्हें दो प्रकार के गुणों से युक्त शिष्य का दर्जा प्राप्त हो। उन्होंने सुबह-सुबह ही स्नान किया, सूर्योदय के समय (या भोर से पहले) अपना भिक्षापात्र और वस्त्र ग्रहण किया, किसी अन्य भिक्षु को नहीं पुकारा, सिंह के समान अकेले विचरण किया, और जब ऋषि नंदा के शिष्य छोटे-बड़े फल लाने गए थे, तब वे आकाश से अवतरित हुए, जब ऋषि नंदा अभी भी उन्हें देख रहे थे, और मन ही मन कहा: "उसे मेरे बुद्ध होने का ज्ञान हो जाए" और पृथ्वी पर स्थापित हो गए। ऋषि नंदा बुद्ध की शक्ति और उनके

सर्वांगीण विशिष्ट लक्षणों की परिपूर्णता का पता लगाने आए थे। उन्होंने लक्षणों के विज्ञान (लक्खणमंत) का ध्यान (सम्मसित्व) किया और इस प्रकार आश्वस्त हुए: “जो इन लक्षणों (लक्खण) से संपन्न है, यदि वह गृहस्थ जीवन व्यतीत करे, तो वह विश्वराज बन जाएगा; यदि वह संसार का त्याग करके भिक्षु बन जाए, तो वह सर्वज्ञ बुद्ध बन जाता है, जो संसार में (ब्रह्मांड का) प्रकटीकरण करता है; यह एक श्रेष्ठ व्यक्तित्व है; निःसंदेह वह बुद्ध हैं।” वे उनसे मिलने गए, पाँच प्रकार से जमीन पर बैठकर (पंचपतितित्त) उन्हें प्रणाम किया, एक आसन तैयार किया और उन्हें अर्पित किया। ऋषि नंदा ने अपने लिए भी एक उपयुक्त आसन लिया और एक तरफ बैठ गए।

उस समय, चौवालीस हजार चोटीदार संन्यासी, छोटे-बड़े सभी स्वादिष्ट फल एकत्र करके अपने गुरु के पास पहुँच गए थे। बुद्ध और गुरु दोनों को अपने-अपने आसनों पर बैठे देखकर उन्होंने कहा, “हे गुरु! हम इस धारणा के साथ भटकते हैं कि इस संसार में आपसे बड़ा कोई नहीं है; अब हम समझते हैं कि यह व्यक्ति आपसे भी बड़ा है।” संन्यासी नंदा ने उत्तर दिया, “हे मेरे प्रियो! तुम सब क्या कह रहे हो? क्या तुम सरसों के दाने की तुलना 68 लाख योजन ऊँचे सिनरू पर्वत से करना चाहते हो? मेरी तुलना सर्वज्ञ बुद्ध से मत करो।” तब वे संन्यासी बुद्ध के चरणों में सिर के बल गिर पड़े और उन्हें प्रणाम करते हुए बोले, “यदि यह व्यक्ति छोटा होता, तो हमारे गुरु कभी इस प्रकार की तुलना नहीं करते; वास्तव में, यह व्यक्ति कितना महान है!” तब उनके गुरु ने उनसे कहा, “मेरे प्रियो! हमारे पास बुद्धों के लिए उपयुक्त कोई दान (देय्यधम्म) नहीं है; भगवान बुद्ध भी भिक्षा मांगने के समय यहाँ आए थे; इसलिए, हम अपनी सामर्थ्य के अनुसार दान (देय्यधम्म) करें; आप सभी जो उत्तम फल, छोटे-बड़े, लाए हैं, उन्हें भी लाएँ।” ऐसा कहकर गुरु ने फल मंगवाए, अपने हाथ धोए और उन्हें तथागत के पात्र में डाल दिया। जैसे ही गुरु ने छोटे-बड़े फल ग्रहण किए, दिव्य सुगंध उनमें समा गई। साधु ने पीने का पानी भी स्वयं छानकर बुद्ध को अर्पित किया। इसके बाद, जब गुरु ने भोजन करने के बाद बैठना जारी रखा, तो गुरु ने अपने सभी शिष्यों को अपने पास बुलाया और गुरु के समक्ष बैठकर स्मरणीय वचन कहे। गुरु ने कहा, “भिक्षुओं के सभी स्वामी मेरे पास आएं।” गुरु के मन को जानने के बाद, लगभग एक लाख दोषरहित अरहंत आए, उन्होंने गुरु को प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए।

ऋषि नंदा ने अपने शिष्यों को संबोधित करते हुए कहा: “मेरे प्रियो! बुद्ध का आसन भी नीचा है; एक लाख भिक्षुओं के लिए भी आसन नहीं है; अब तुम्हारे लिए यह उचित है कि तुम भगवान बुद्ध और भिक्षुओं के समूह को स्वयं द्वारा बनाया गया एक बड़ा भेंट (सक्कारा) अर्पित करो; तुम सब पहाड़ियों की तलहटी से सुंदर रंग और मीठी सुगंध वाले फूल लाओ।” उच्च जादुई शक्तियों (इद्धि) के प्रभाव की अकल्पनीयता के कारण, वे पल भर में ही सुंदर और मीठी सुगंध से भरे फूल ले आए और बुद्ध के लिए एक मील (योजन) के आकार का, मुख्य शिष्यों के लिए तीन-चौथाई मील (तिगावुता) के आकार का, शेष भिक्षुओं के लिए आधे मील (योजन) के आकार का और भिक्षुओं के नए सदस्यों के लिए एक उषभ (बैल की पुकार) के आकार का पुष्प आसन तैयार किया। जब आसन तैयार हो गए, तो ऋषि नंदा तथागत के सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गए और बोले, “आदरणीय गुरुदेव! कृपया मेरी दीर्घकालीन भलाई और सुख के लिए इस पुष्प-आसन पर आसीन हों।” भगवान बुद्ध पुष्प-आसन पर बैठ गए। जब गुरुदेव इस प्रकार बैठ गए, तो गुरुदेव का संकेत पाकर आए भिक्षु भी अपने-अपने स्थान पर बैठ गए। ऋषि नंदा ने एक बड़ा पुष्प-छतरी उठाया और उसे तथागत के सिर के ऊपर थामे खड़े हो गए। गुरुदेव ने ऐसी प्रभावी ध्यान साधना (समापत्ति) में लीन हो गए, जिसे निरोध (दुःख का निवारण) कहा जाता है, और मन ही मन कहने लगे, “ऋषियों द्वारा स्वयं बनाई गई यह श्रद्धापूर्ण भेंट (सक्कारा) महान फलदायी हो।” गुरु की प्रभावी ध्यान अवस्था को जानकर भिक्षुओं ने भी उसी प्रकार ध्यान किया। तथागत ने निरोध (प्रभावी अमर ध्यान) में प्रवेश करने के बाद सात दिनों तक बैठे रहे। उनके शिष्य भोजन के समय सर्वथा सर्वांगीण फल और जड़ें खाते थे और शेष समय बुद्ध की ओर हाथ जोड़कर बैठे रहते थे। परन्तु नंदा ऋषि भोजन के लिए नहीं गए, बल्कि सात दिनों तक पुष्प-छाता धारण करके उत्साह और प्रसन्नता से समय व्यतीत किया।

निरोध ध्यान से उठने के बाद, गुरु ने एक शिष्य को आदेश दिया, जो दो गुणों से संपन्न था: शांत जीवन (अरण) और दान देने योग्य गुण। वह शिष्य महान योद्धा के समान आनंदमय हो गया, विश्वराज की उपस्थिति से महान लाभ प्राप्त करने वाला बन गया, अपने प्रभाव क्षेत्र में स्थिर रहा, तीन पिटक में निहित बुद्ध के वचनों का गहन अध्ययन किया और कृतज्ञता का उपदेश दिया। अपने उपदेश के अंत में, गुरु ने स्वयं सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। उपदेश के पूर्ण समापन पर, सभी चौवालीस हजार संन्यासियों ने अरहंतत्व प्राप्त किया। गुरु ने हाथ फैलाकर कहा, “आओ, हे भिक्षुओं!” उसी क्षण, उनके सिर के बाल और दाढ़ी गायब हो गए। आठ आवश्यक वस्त्र उनके शरीर से जुड़े रह गए। वे साठ वर्ष के वरिष्ठ भिक्षुओं के समान होकर गुरु के चारों ओर आ गए। हालांकि, नंदा ऋषि अपने अस्थिर मन के कारण विशिष्ट ज्ञान प्राप्त नहीं कर सके। कहा जाता है कि जब उन्होंने एकांतवास में रहने वाले थेरा की उपस्थिति में सत्य (धम्म) सुनना शुरू किया, तब उनके मन में यह विचार आया: "यह कितना अद्‌भुत होगा कि भविष्य में, यदि कोई बुद्ध प्रकट हों, तो मुझे भी इस थेरा द्वारा प्राप्त किए गए समान उत्तरदायित्व प्राप्त हो।" उस सर्वव्यापी चिंतन के कारण, वे मार्ग (मार्ग) और उसके फल (फल) को ठीक से नहीं समझ पाए। उन्होंने तथागत बुद्ध को प्रणाम किया, उनके सामने खड़े होकर पूछा, “आदरणीय गुरुदेव! आपके शासनकाल में संन्यासियों द्वारा अर्पित पुष्प-आसनों के प्रति कृतज्ञता का उपदेश देने वाले इस भिक्षु का नाम क्या है?” बुद्ध ने उत्तर दिया, “यह भिक्षु शांत जीवन जीने के गुण और दान देने के गुण में सर्वोपरि है।” उन्होंने अपनी प्रार्थना इस प्रकार व्यक्त की, “आदरणीय गुरुदेव! मैंने स्वयं सात दिनों तक आपके ऊपर पुष्प-छाता धारण करके जो श्रद्धापूर्वक सेवा की, उससे मुझे किसी अन्य उचित प्राप्ति (संपत्ति) की आकांक्षा नहीं है; परन्तु भविष्य में, बुद्ध के शासनकाल में इस थेरा के समान दो गुणों से संपन्न शिष्य बन सकूँ।”

भविष्य के ज्ञान का उपयोग करके यह जानने के बाद कि क्या उस ऋषि की आकांक्षा वास्तव में पूरी होगी, गुरु ने एक लाख युगों (कप्पा) के बाद प्राप्त सिद्धि की अवस्था का पता लगाया और ऋषि नंदा से कहा: "तेरी यह आकांक्षा व्यर्थ नहीं जाएगी; भविष्य में, एक लाख युगों (कप्पा) के बाद, गौतम बुद्ध प्रकट होंगे; उनकी उपस्थिति में ही तेरी सिद्धि होगी।" ऐसा कहकर, बुद्ध ने सत्य (धम्म) का उपदेश दिया और भिक्षुओं से घिरे हुए आकाश में चले गए। ऋषि नंदा गुरु और भिक्षुओं की ओर हाथ जोड़कर तब तक खड़े रहे जब तक वे उनकी दृष्टि से ओझल नहीं हो गए। इसके बाद वे बार-बार गुरु के पास जाकर सत्य (धम्म) सुनते रहे। पूर्णतया अविचलित ध्यान में रहते हुए, उन्होंने प्राण त्याग दिए और ब्रह्मालोक में पुनर्जन्म लिया। वहाँ से मृत्यु के बाद उन्होंने पाँच सौ जन्मों तक संसार का त्याग किया और वनवासी बन गए। आत्मज्ञानी बुद्ध कस्सपा के समय भी उन्होंने संसार का त्याग किया और वनवासी बनकर आने-जाने के इस कर्तव्य का पालन किया। कहा जाता है कि अपने कर्तव्य का पूर्ण पालन किए बिना कोई भी महान शिष्य की अवस्था को प्राप्त नहीं कर सकता। आने-जाने के कर्तव्य को आगमों (या सूत्रों) की टीकाओं में वर्णित विधि से ही समझा जाना चाहिए। बीस हजार वर्षों तक आने-जाने के कर्तव्य का पालन करने के बाद उनका निधन हुआ और वे इंद्रिय जगत के दिव्य लोक में तावतिंसा भवन में पुनर्जन्म हुए। वास्तव में, अपदान में इसका इस प्रकार वर्णन किया गया है:

"हिमवंता (हिमालय) से कुछ ही दूरी पर, वहाँ

निसाभा नाम की एक पहाड़ी थी। वहाँ,

मेरा आश्रम अच्छी तरह से बना हुआ था, एक पत्ता-

झोपड़ी अच्छी तरह से बनाई गई है।

कोसिया नाम से मैं

गुंथे बालों वाला एक तपस्वी, एक उग्र आत्म-

अपमान करने वाला; उस समय मैं अकेला रहता था

बिना किसी दूसरे (या साथी) के

निसाभा।

उन दिनों मैं फल नहीं खाता था।

जड़ों और पत्तियों को (तोड़कर);

लेकिन मैंने अपना गुजारा किया लेकिन क्या

वहाँ आसानी से गिर गया।

और तब।

मैंने अपने जीवन को अस्त-व्यस्त नहीं किया, त्याग किया

मैंने अपने जीवन को भी प्रसन्न किया।

और मैंने अनुचित व्यवहार से परहेज किया।

जब भी मेरे मन में कोई विचार आता था

कामवासना (राग) से जुड़ा हुआ, मैं स्वयं

मैंने इस पर विचार भी किया और इसे दबा दिया।

शांतिपूर्वक (या संयम से);

“तुम अपवित्र करने योग्य चीजों से आसक्त हो गए

मामले; आप नाराज हो गए

गुस्सा दिलाने वाली बातें; और तुम बन गए

भ्रामक बातों से भ्रमित; आप

बेहतर होगा कि हम जंगल से बाहर निकल जाएं।

यह पवित्र लोगों का निवास स्थान है

पवित्रजनों में से, उन संन्यासियों में से जो

अशुद्धियों (या गंदगी) से मुक्त; करें

वास्तव में, इससे पवित्रता को कोई नुकसान नहीं होना चाहिए;

बेहतर होगा कि आप जंगल से बाहर निकल जाएं।

“गृहस्थ बन जाने के बाद, जैसे और

जब तुम्हें पुत्र हो, तो पाप मत करना।

(या दोनों को छोड़ दें); आपके लिए बेहतर होगा

जंगल से बाहर निकलो।

“जैसे लकड़ी का एक टुकड़ा

अंत्येष्टि की चिता में ऐसा कुछ भी नहीं है जो होना चाहिए

यह कहीं भी किया जा सकता है, यहाँ तक कि यहाँ तक कि

गाँव जंगल में नहीं है; वास्तव में, यह

अब इसे जलाऊ लकड़ी के रूप में मान्यता नहीं दी जाती है

आम सहमति।

तुम अंत्येष्टि की चिता से निकलती मशाल के समान हो;

आप न तो आम आदमी हैं और न ही संन्यासी;

अब आप दोनों से अलग-थलग हैं; आपके पास

जंगल से बाहर निकल जाना ही बेहतर है।

“क्या सचमुच यह आपके लिए होगा? कौन?”

क्या तुम्हें इस बात का पता चल जाएगा?

मैंने अपने धर्मपरायण विश्वास का बोझ उठाया, साथ

बहुत आलस्य भी।

बुद्धिमान लोग इसे उसी प्रकार तुच्छ समझेंगे जैसे कि

एक नागरिक की अशुद्धता; संन्यासी

इसे खींचने पर हमेशा फटकार लगेगी

यह।

बुद्धिमान लोग खुलकर बोलेंगे (या दोषारोपण करेंगे)

तुम जो पार कर गए (या बच निकले)

मार्ग (या व्यवस्था, शासन);

वास्तव में, सह-निवास नहीं मिल रहा है, कैसे

क्या तुम जीवित रहोगे?

एक शक्तिशाली हाथी मातांग की ओर बढ़ता है

हाथी की वह प्रजाति जो प्रजनन के लिए तैयार हो सकती है

इसके तीन प्रकार के रिसाव के साथ-

विषैला शक्तिवर्धक द्रव (पभिन्न)

साठ वर्ष की आयु में घटते हुए (saṭṭhi-

(हायाना) और उस हाथी को भगा देता है

अपने झुंड से।

“चूंकि इसे इसके स्थान से बाहर निकाल दिया गया है

झुंड में रहने से उसे सुखद सुख नहीं मिलता;

इससे मन व्याकुल और निराश हो जाता है;

दुःख से व्याकुल होकर यह कांपने लगता है।

इसी प्रकार, चोटीदार बालों वाले तपस्वी भी ऐसा ही करेंगे

आपको मूर्खता करके बाहर निकाल देना; आपके पास होने पर

अगर आपको उनके द्वारा बाहर निकाल दिया गया है, तो आप नहीं

सुखद खुशी प्राप्त करें।

चाहे दिन हो या रात, चुभन होना

चिंता के कांटे से (या छेदा हुआ)

दुःख, साका) तुम चारों ओर से जल गए हो

हाथी जैसी गर्मी जो

अपने झुंड से बाहर निकाल दिया गया।

"जिस प्रकार प्राकृतिक सोने की चोटी नहीं होती

लेकिन तुम भी हर जगह चमकते रहो।

जिनके नैतिक सिद्धांत स्पष्ट रूप से निम्न स्तर के हैं

हर दिन तेज रोशनी से जगमगाता नहीं रहेगा-

कहाँ।

गृहस्थ जीवन जीने में कैसे मदद मिलेगी?

क्या तुम जीवित हो? तुम्हारे लिए तो अस्तित्व ही नहीं है।

माता और पिता दोनों की ओर से दफनाए गए खजाने-

ज़रूर।

खुद काम करना, व्यक्तिगत तनाव मुक्त करना-

अपने शरीर पर प्रेरणा से आप जीवित रहेंगे

अपने घर में ऐसा करना एक अच्छे आदमी का काम है।

मुझे आपका यह प्रस्ताव मंजूर नहीं है।

इस प्रकार मैं वहाँ अपने आप को रोकता हूँ

वह मन जो आत्म-विनाश की ओर अग्रसर हो गया था,

(किलेसा); कई प्रकार के बनाकर

मैं सत्य (धम्म) की शिक्षा का निषेध करता हूँ।

मेरे मन को बुराई से दूर रखो।

जब मैं इस प्रकार जीवन जी रहा था

लगन से तीस हजार साल बीत गए

मेरे लिए जंगल में बीता हुआ समय।

मुझे प्रसन्न देखकर

लगन से सर्वश्रेष्ठ की तलाश करना

कल्याण (या पदार्थ), आत्मजागृत

बुद्ध पद्ममुत्तरा मेरे समक्ष प्रकट हुए।

उस समय, अद्वितीय बुद्ध

उनकी शारीरिक सुंदरता, उनके रंग-रूप के साथ

अंजीर के फल का, अतुलनीय और

अतुलनीय व्यक्ति इधर-उधर चलता रहा

आकाश।

जैसे कि खूब खिलने वाला विशालकाय साल-

पेड़, बीच में बिजली की तरह दिखता है

बादलों का समूह, अद्वितीय बुद्ध

ज्ञान में, फिर सैर की

आकाश।

सिंहराज के समान निर्भीक, अभिमानी

जैसे राजा हाथी, खेलकूद (या

(चमकदार) राजा-बाघ की तरह, बुद्ध

फिर आकाश में एकांतवास में चले गए।

उनका रंग सोने की तरह चमक रहा था

निकहा के वजन का, अंगारों के समान

बबूल की लकड़ी, चमकते रत्न के समान

स्वाद, बुद्ध आकाश में विचरण करते थे।

एक शुद्ध सफेद पहाड़ की तरह, जो मिलता-जुलता है

यहां तक कि पूर्णिमा और इसी तरह

दोपहर के समय सूर्य के समय, बुद्ध टहलने निकले।

आकाश।

उन्हें टहलते हुए देखकर

आकाश, तब मैंने इस प्रकार सोचा:— "क्या यह

वास्तव में, प्राणी एक दिव्य प्राणी है, या

क्या यह एक इंसान है?

मैंने न तो कभी ऐसा सुना था और न ही कभी ऐसा देखा था।

मनुष्य पृथ्वी पर इसी रूप में है; शायद यही

गुरु को ज्ञान का मार्ग अवश्य जानना चाहिए।

मंडप (छतरीका)।

इस प्रकार विचार करने के बाद, मेरा स्वयं का मन

मैं अत्यंत धार्मिक हो गया; फिर मैंने संग्रह किया-

टेड डाइवर्स फूल और साथ ही मिठाई

सुगंध।

फूलों से बनी वेदी तैयार करने के बाद, अच्छा

मैंने कहा, "बहुमुखी और मनमोहक।"

यह शब्द मनुष्यों के सर्वोत्कृष्ट सारथी के लिए है।

हे वीर! यह मेरी आसन है, जो आपके लिए उपयुक्त है।

तैयार हो चुका है; कृपया बैठ जाइए।

कुसुमा फूल की सीट पर बैठकर मुझे आनंद हो रहा है

दिल।

भगवान बुद्ध वहाँ बैठ गए, मानो

एक निर्भीक शेर के लिए; बुद्ध ने सात दिन बिताए

बेहतरीन फूलों पर दिन और रातें-

सीट।

मैं सात दिनों तक श्रद्धापूर्वक खड़ा रहा।

और रातें; गुरु, जिनका कोई श्रेष्ठ नहीं है

दुनिया, उनके अस्तित्व से उत्पन्न हुई है-

केंद्रीकरण (समाधि), ने यह शब्द बोला

अपने काम की घोषणा करने के लिए। विकसित करें

बुद्ध पर उचित ध्यान देना,

मानसिक विकास का सबसे उत्कृष्ट उदाहरण

(भावना); अपने विकास के बाद

इस पर ध्यान केंद्रित करने से आपका मन शांत हो जाएगा-

पूरी तरह से आ जाओ।

तीस हजार युगों तक, तुम

दिव्य संसार में आनंद लें;

अस्सी बार तुम दिव्य बनोगे

राजा दैवीय संप्रभुता का प्रयोग करता है;

आप हजार बार विश्व बनेंगे-

राज्य में राजा।

असंख्य संख्या में प्रचुर मात्रा में होंगे-

आपकी क्षेत्रीय संप्रभुता का नृत्य; सभी

जिसका अनुभव आप करेंगे,

उचित ध्यान का फल

(अनुसति) बुद्ध को।

जैसे ही आप अपने चक्कर लगाते हुए आगे बढ़ते हैं

प्रमुख और गौण में बार-बार पुनर्जन्म

आप कई जन्म लेंगे और बहुत धन अर्जित करेंगे;

आपके धन में कोई कमी नहीं आएगी।

आपकी बुद्ध-दिमाग की चेतना की फलस्वरूप।

एक लाख युगों (कप्पा) बाद,

गुरु ओक्काका के परिवार में जन्मा,

गौतम गोत्र के नाम से जाना जाने वाला व्यक्ति

दुनिया में अस्तित्व में आना।

अस्सी करोड़ की संपत्ति त्यागने के बाद

और बहुत से दास और नौकर, तुम

भिक्षु बनो

भगवान गौतम।

स्वयं का दिल जीतने के बाद-

जागृत बुद्ध गौतम बैल

शाक्यनों, तुम शिष्य बनोगे

गुरु, जिनका नाम है,

सुभूति.

भिक्षुओं के बीच बैठे हुए, वह

इससे आपको दो स्थितियों में सबसे आगे स्थान मिलेगा:—

समर्पण के योग्य होने के गुण में-

टेड दान और इसी तरह गुणवत्ता में

शांति में रहने का।

यह कहने के बाद, आत्मजागृत व्यक्ति

बुद्ध, जिन्हें सबसे उत्कृष्ट नायक कहा जाता है

जलीय फूल, पदुमत्तरा, विशेष रूप से

हंस सम्राट की तरह आकाश में उड़ गया

आकाश में।

जगत के रक्षक (बुद्ध) के निर्देशानुसार,

मैंने तथागत को प्रणाम किया; प्रसन्नतापूर्वक

क्या मैंने हमेशा सर्वश्रेष्ठ विकास किया?

बुद्ध पर ध्यान लगाना।

उस उत्तम कार्य के कारण,

क्योंकि इच्छाशक्ति और आत्मनिर्णय के कारण,

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया और चला गया

तावतिंसा स्वर्ग।

मैं अस्सी बार दिव्य राजा बना

और उन्होंने दिव्य संप्रभुता का प्रयोग किया।

हजार बार भी मैं बन गया

बार-बार विश्व राजा बनने का गौरव प्राप्त करने वाला।

कई बार बहुतायत में, इतनी अधिक संख्या में कि

बताइए, क्या मुझे अच्छे फायदे पसंद आए?

क्षेत्रीय संप्रभुता की विविधता एक फल के रूप में

बुद्ध पर मेरे ध्यान का।

बार-बार किए जाने वाले अपने चक्करों में भटकते हुए

प्रमुख और गौण अस्तित्वों में पुनर्जन्म,

मैंने बहुत धन अर्जित किया; कोई

मेरे धन में कमी मेरे कर्मों के फल के रूप में

बुद्ध पर ध्यान लगाना।

पिछले एक लाख युगों के दौरान,

मैंने जो भी काम किया, मुझे याद नहीं है।

दुष्ट अस्तित्व में जाना पड़ा (या

(शुद्धिकरण)। यही मेरे कर्मों का फल है।

बुद्ध पर ध्यान लगाना।

मेरे द्वारा कल्पना की गई चार प्रकार की

विश्लेषणात्मक ज्ञान, आठ चरण

मुक्ति और छह प्रकार के सुपर-

ज्ञान; मेरे द्वारा निष्पादित किया गया था

बुद्ध का उपदेश (शासन)।

इस प्रकार, पूज्य थेरा सुभूति ने इन श्लोकों का उच्चारण किया।

इस प्रकार, उन्होंने तावतिंसा के दिव्य महल में समय-समय पर जन्म लेकर दिव्य आनंद का अनुभव किया, और वहाँ से मृत्यु के बाद, वे मानव जगत में कई सौ बार विश्वराज और क्षेत्रीय शासक बने, मानव जीवन के प्रचुर आनंद का अनुभव किया, और फिर, हमारे भगवान बुद्ध के समय में, सावत्थी में धनाढ्य सुमना के घर में अनाथपिंडिका के सबसे छोटे भाई के रूप में पुनर्जन्म लिया; उनका नाम "सुभूति" था।

उस समय तक, हमारे भगवान बुद्ध संसार में अवतरित हो चुके थे और धर्म के उत्कृष्ट चक्र को निरंतर घुमाते हुए धीरे-धीरे राजगृह चले गए थे, जहाँ वे संसार के उत्थानकारी कार्यों जैसे कि वेलुवन (बांस का वन) को स्वीकार करके राजगृह के निकटवर्ती शीतवन (सीतवन)

में निवास कर रहे थे। उस समय, धनाढ्य अनाथपिंडिका ने लाभवर्धक (उठानक) माल (भण्ड) धारण किया और अपने सहयोगी राजगृह के धनाढ्य के घर गए; बुद्ध के प्रकट होने के बारे में सुनकर, वे शीतवन (सीतवन) में निवास कर रहे गुरु के पास पहुँचे और प्रथम अवस्था (सोतापत्ति) की सिद्धि प्राप्त कर ली। बुद्ध के दर्शन मात्र से ही उन्होंने गुरु से श्रावस्ती आने का अनुरोध किया। इसके बाद, उन्होंने पैंतालीस मील (या मार्ग) की भूमि यात्रा (या मार्ग) पर प्रत्येक मील (या मार्ग) पर एक लाख (या मार्ग) के लिए एक लाख (या मार्ग) के बलिदान पर मठ स्थापित करवाए; सावत्थी में, उन्होंने करोड़ों (या) का दान देकर एक जेत राजकुमार की आठ एकड़ (या राजमान) भूमि खरीदी, जहाँ उन्होंने भगवान बुद्ध के लिए एक मठ बनवाया और उसे उन्हें अर्पित कर दिया। मठ स्वीकार किए जाने के दिन, इस गृहस्थ (या जागीरदार) सुभूति ने धनी अनाथपिंडिका के साथ जाकर धर्म का प्रवचन सुना, विधिवत श्रद्धा प्राप्त की और भिक्षु बन गए। दीक्षा प्राप्त करने के बाद, उन्होंने दो शास्त्रों (द्वेमातिका) का अभ्यास (कम्मट्ठान) किया, वन में भिक्षु के कर्तव्यों (धम्म) का पालन किया, प्रेममयी ध्यान पर आधारित आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। गुरु द्वारा सिखाए गए तरीके से ही सत्य (धम्म) का उपदेश देने और उसे सार्वभौमिक बनाने के कारण, वे एकांतवास में रहने वालों (या एकांत में रहने वालों) में अग्रणी माने गए। भिक्षा मांगने के लिए भटकते हुए, वे प्रत्येक घर में प्रेममयी ध्यान में लीन हो जाते, उस ध्यान से उठते और उसके बाद ही भिक्षा ग्रहण करते हुए मन में कहते, "इस प्रकार दानदाताओं को बड़ा फल मिलेगा।" अतः वे समर्पित दान के योग्य लोगों में अग्रणी माने गए। इसलिए भगवान ने कहा: “हे भिक्षुओं! मेरे शिष्यों, जो एकांतवास में रहते हैं, उनमें श्रेष्ठ भिक्षु सुभूति हैं; दान के योग्य भिक्षुओं में भी श्रेष्ठ सुभूति हैं।” इस प्रकार अरहंतशिप में स्थापित होकर और स्वयं सिद्ध सिद्धियों के शिखर को प्राप्त करके, इस महान थेरेप ने संसार में विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की और अनेक लोगों के कल्याण के लिए विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण करते हुए अंततः राजगृह पहुंचे।

राजा बिम्बिसार ने थेरा के आगमन के बारे में सुना, उनके पास गए, उन्हें प्रणाम किया और कहा, “आदरणीय महाराज! आप यहीं निवास करें,” और यह कहते हुए विदा हुए कि “मैं थेरा के लिए एक निवास स्थान बनवाऊंगा” और इस बात को भूल गए। बैठने और सोने के लिए कोई जगह न मिलने पर उन्होंने खुले में समय बिताया। थेरा की शक्ति के कारण वर्षा नहीं हुई। वर्षा न होने से व्याकुल होकर लोगों ने राजमहल के द्वार पर जयजयकार की। राजा ने यह जानने के लिए छानबीन की कि वास्तव में वर्षा क्यों नहीं हुई, और उन्हें लगा कि यह थेरा के खुले में निवास करने के कारण ही होगा। थेरा के लिए एक पत्तियाँ-पत्ता बनवाकर राजा ने कहा, “आदरणीय महाराज! आप इस पत्तियाँ-पत्ता में निवास करें,” और थेरा को प्रणाम करके विदा हुए। थेरा कुटिया में प्रवेश करके घास पर पालथी मारकर बैठ गए। तभी बूंद-बूंद करके बारिश होने लगी। बारिश एक समान (या उचित) बौछार नहीं थी। तब थेरा ने संसार में बारिश की कमी के खतरे को दूर करने की इच्छा से एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें उन्होंने अपने आंतरिक और बाह्य आधार (वत्थुक) के खतरे से मुक्त होने की बात स्वीकार की।

1. “मेरी झोपड़ी की छत है; मैं खुश हूँ, सुरक्षित हूँ।”

हवा से; हे वर्षा! अपनी इच्छा अनुसार वर्षा करो। मेरा मन शांत और पूर्णतः मुक्त है: मैं अपनी बुराइयों को जलाते हुए रहता हूँ। हे वर्षा! अपनी वर्षा बरसाओ।

वहाँ 'चन्ना' शब्द के संदर्भ में, यह व्याकरणिक शब्द 'पतिरूप' (उचित) के अर्थ में ऐसे संदर्भों में प्रयोग होता है जैसे "चन्ना सा कुमारीका इमस्सा कुमारदस्सा (इस युवक के लिए वह कन्या उचित है);" "नच्चन्नं नप्पतिरूपं (उचित नहीं)," इत्यादि। यह क्रिया विशेषण और संख्या भेद के अर्थ में ऐसे संदर्भों में प्रयोग होता है जैसे: "चन्नां त्वेव फाग्गुणा फस्सायतननं (वसंत ऋतु में संपर्क के छह अंग);" इत्यादि। यह पकड़ (या घनी झाड़ियों) के अर्थ में ऐसे संदर्भों में प्रयोग होता है जैसे: "चन्नमतिवस्सति, विवतं नातिवस्सति (यह वनस्पतियों के पत्तों पर वर्षा करता है, लेकिन खुली या नंगी भूमि पर नहीं)," इत्यादि। इसका अर्थ है ऊपरी और निचले वस्त्र, जैसे कि “क्याहं तेनच्चन्नो पि करिसामि (मैं इससे अपने आप को सजाऊँगा)”, इत्यादि। इसका अर्थ है पदनाम (पञ्ञत्ति), जैसे कि “आयस्मा चन्नो अनाचारं आचरति (आदरणीय चन्ना बुरी आदत में लिप्त है)”, इत्यादि। इसका अर्थ है घास या सरकंडे जैसी सामग्री से छत होना, जैसे कि “सब्बच्चन्नं सब्बपरिच्चन्नं (पूरी तरह से छत वाला, चारों ओर से पूरी तरह से छत वाला)”, और “चन्ना कुटि, आहितो गिनी (मेरा) घर छत से ढका हुआ है और आग जलाई गई है”, इत्यादि। यहाँ भी, ध्यान देने योग्य है कि छत घास आदि से ढकी हुई है; इसलिए, छत से ढकी हुई है। घास या पत्तों से इस प्रकार छत बनाई गई हो कि बारिश होने पर पानी का रिसाव न हो और बारिश का पानी घर के अंदर न गिरे; इस प्रकार छत को ठीक से बनाया गया है; यही अर्थ है।

व्याकरणिक शब्द: 'me' का प्रयोग कर्ता कारक के रूप में ऐसे संदर्भों में हुआ है जैसे “kicchena me adhikataṃ, halaṃdānipakāsituṃ (मेरे द्वारा कठिनाई से प्राप्त किया गया है; मुझे क्यों सिखाना चाहिए?) इत्यादि; मेरे द्वारा; इस प्रकार, इसका अर्थ है।” यह संबंध कारक (संपदान) के अर्थ में ऐसे संदर्भों में आया है जैसे: “tassa me bhante Bhagavā saṃkhittena dhammaṃ desetu (आदरणीय महोदय! भगवान बुद्ध सत्य (धम्म) का उपदेश दें), संक्षेप में मुझे;” इत्यादि; मुझे; इस प्रकार, इसका अर्थ है। यह

अधिकार कारक (सामि) के अर्थ में ऐसे संदर्भों में आया है जैसे: “Pubbe va me bhikkhave samnbodhā anabhisambuddhassa bodhisattasseva sato (हे भिक्षुओं! लेकिन मेरे आत्म-जागृत बुद्धत्व के समक्ष, जब मैं तो केवल बोधिसत्व था, अभी आत्म-जागृत बुद्ध नहीं बना था)," इत्यादि। यहाँ भी इसे स्वामित्व (या स्वामी) के संदर्भ में देखा जाना चाहिए; मेरा; इस प्रकार, इसका अर्थ है। क्योंकि जीवन के उतार-चढ़ावों (लोकधम्म) से दूषित होने जैसी कोई चीज नहीं है, यद्यपि दोषमुक्त (अरहंतों) के लिए कुछ भी संजोने योग्य नहीं है, फिर भी, सांसारिक परंपरा के अनुसार, उनके लिए भी "अहं मम (मैं, मेरा)" जैसा प्रयोग होता है। इसलिए भगवान ने ऐसा कहा: "किंति मे सावका धम्मदायादा भयय्युं, ***पृष्ठ 53 आमिसदायादा (तो फिर मेरे शिष्य आध्यात्मिक उत्तराधिकारी (धम्मदायादा) कैसे बनेंगे, भौतिक उत्तराधिकारी (आमिसदायादा) नहीं?

हालांकि, कुटिका शब्द का अर्थ इस प्रकार समझा जाना चाहिए: - इसे माता का गर्भ, नीच शरीर, छत की घास आदि के साथ-साथ उचित आश्रय (पटिसया) भी कहा जाता है। इसी प्रकार, वास्तव में:—

“तुम कहते हो कि माँ कुटिका है;

आप कहते हैं कि पत्नी घोंसला (कुलावक) है;

आप कहते हैं कि पुत्र उत्तराधिकार होंगे

पीढ़ी (संतानका) और आप कहते हैं

मेरे लिए वह लालसा (तण्हा) है

बंधन (बंधन)।"

इन ग्रंथों में और इसी तरह अन्य ग्रंथों में मां के गर्भ को “कुटिका (आश्रय या झोपड़ी)” के रूप में वर्णित किया गया है।

“कंकाल और शरीर (कुटिका) में

हड्डियों को, ऊपर से सिला (या ऊपर से जोड़ा) गया

शरीर में मौजूद मांस और नसें, जिन्हें आप संजोते हैं

दूसरों का; तुम पर धिक्कार हो क्योंकि यह

बदबू से भरा हुआ।

और इसी प्रकार, कुटिका शब्द का अर्थ है वह घृणित शरीर जो सिर के बालों आदि का संग्रह बन गया है। यह उचित आश्रय (पतिसय) है, जो घास से ढका होता है, जैसे कि: “कस्सपस्सा भगवतो भगिनीकुटि ओवस्सति (भगवान कस्सप की बहन की कुटिया या घर बारिश से भीगता है) (ओवस्सति);” “कुटिनामा उल्लित्ता वा होति अवलित्ता वा (घर या कुटिया, अर्थात्, या तो ऊपर से काँच से ढकी है या नीचे से काँच से ढकी है)।” यहाँ भी, क्योंकि यहाँ पत्तों की कुटिया का उल्लेख है, उस घर (या कुटिया) को भी समझना चाहिए। वास्तव में कुटिया (कुटि) भी कुटिका (आश्रय) है; एक कम ज्ञात कुटिया को भी “कुटिका (कुटिया-आश्रय)” कहा गया है।

व्याकरणिक शब्द सुखा का प्रयोग सुखद भाव से जुड़े संदर्भों में इस प्रकार किया गया है: “विपित्थिकत्वान सुखं दुःखं च, पुब्बेवा च सोमनस्सा डोमनस्सं (सुख और दुःख को पीछे छोड़ते हुए, यहां तक कि प्रसन्नता और उदासी से पहले भी),” इत्यादि। सुख के मूल भाव में इसका प्रयोग इस प्रकार किया गया है: “सुखो बुद्धानामुप्पादो, सुखा सद्धम्मदेसना (बुद्ध का प्रकट होना सुखद है, अच्छे धर्म का उपदेश सुखद है),” इत्यादि। सुख के कारण भाव में इसका प्रयोग इस प्रकार किया गया है: “सुखस्सेतं भिक्खवे अधिवचनं यदिदं पुण्यानि (हे भिक्षुओं! यही सुख का नाम है, ये पुण्य कर्म),” इत्यादि। यह आनंद के अर्थ में है, जैसे कि:- "यस्मा च महली! क्योंकि वास्तव में, भौतिक रूप आनंद से प्रभावित और आनंद से अभिभूत आनंद है," इत्यादि। यह इस तरह की प्रतियोगिताओं में पीड़ा (अव्यापज्झा) से मुक्ति के अर्थ में है: "दिठधम्म सुखविहार एते कुंडा अरियासा विनाय (हे कुंडा! ये भिक्षु (भिक्षु) वर्तमान में इस तत्काल अस्तित्व (दिठधम्म) में,

कुलीनों (अरिया) के अनुशासन (विनय) में आराम से रह रहे हैं," और इसी तरह। यह अमर आनंद की भावना में है निब्बाण, ऐसे संदर्भों में: "निब्बाणं परमं सुखं (निब्बाण पूर्ण या सर्वोत्तम सुख है)," और इसी तरह यह (पक्काया) खुशी पर निर्भर स्थान के अर्थ में है, जैसे: "यावांचिदं भिक्खवे न सुकारं अक्खानेन पापुणितुं।" यावा सुखा सग्गा (हे भिक्षुओं! जब तक कथावाचन (अक्खाना) द्वारा स्वर्गिक आनंद की प्राप्ति आसान न हो जाए), तब तक ऐसा ही रहेगा," इत्यादि। ऐसे संदर्भों में इसका अर्थ वांछनीय (इत्त) है, जैसे "सोवग्गिकं सुखम्पाकं सग्गसंवत्तनिकं (स्वर्ग से जुड़ा सुखद परिणाम, स्वर्ग के लिए सहायक) प्रिय (पिया) और हृदय को प्रिय (मनाप); यही अर्थ है। यहाँ भी, इसे वांछनीय या सुख पर निर्भर होने के अर्थ में देखा जाना चाहिए। वास्तव में, वह कुटिया अच्छी तरह से निर्मित थी, इसलिए वह निवासी के हृदय को आंतरिक रूप से प्रिय हो गई, और निवास के लिए आरामदायक होने के कारण इसे "सुख (सुख)" कहा गया है। इसी प्रकार, न अधिक ठंड और न अधिक गर्मी होने के कारण, मौसमी सुख (उत्सुख) की समृद्धि से जुड़े होने के कारण, यह सुख का स्रोत (पच्चय) है। शारीरिक और मानसिक सुख।

निवारा का अर्थ है हवा रहित; हवा से कोई खतरा नहीं, क्योंकि खिड़कियों को कुंडी लगे दरवाजों से बंद रखा जा सकता है; यही इसका अर्थ है। यह कुटिया की सुखमय स्थिति का स्पष्टीकरण है। वास्तव में, हवा वाले मठ में मौसम के अनुकूल वातावरण नहीं मिल सकता; यह अनुकूल जलवायु हवा रहित मठ में ही प्राप्त होती है। वस्सा का अर्थ है: बारिश करो; कृपया उचित वर्षा प्रदान करो। देव: व्याकरणिक रूप से यह शब्द देव, राजसी योद्धा वंश के पारंपरिक (सम्मुति) देवता (देव) के अर्थ में आया है, जैसे कि: “इमानि ते देव चतुरासीति नगरसहस्सानि कुसवती राजधानिपमुखानि एत्थ देव चंदं जनेहि जीविते अपेक्खा (महाराज! कुसवती राजनगर के नेतृत्व में ये चौरासी हजार नगर आपके हैं; महाराज! कृपया लोगों की इच्छा और उनके जीवन पर विचार करें),” इत्यादि। यह उन दिव्य प्राणियों के अर्थ में भी आया है जो दिव्य लोक (उपपत्ति) में पुनर्जन्म लेते हैं, जैसे कि: “चारुमहाफजिका देवा वण्णवन्तो सुखबहुला (चार महान दिव्य राजा सुंदर रंग और प्रचुर सुख से युक्त हैं), इत्यादि। आगे। यह शुद्धतम दिव्य सत्ता के अर्थ में है, जैसे: “तस्स देवतिदेवस्स, सासनं सब्बदास्सिनो (उस परम दिव्य सत्ता का विधान, जो सब कुछ देखता है);” इत्यादि। वास्तव में, जब भगवान बुद्ध की स्थिति को परम दिव्यता, शुद्धतम दिव्य सत्ता के रूप में बताया गया है, तो इसका अर्थ है कि यह बात दूसरों के बारे में भी कही गई है। यह आकाश के अर्थ में है, जैसे “विद्धे विगत वलहके देवे (बादल रहित निर्मल आकाश)”, इत्यादि। यह वर्षा-बादल या वर्षा-बहुलता के अर्थ में है, जैसे: “देवो च कालेना कालं न सम्मा धारं अनुप्पवेच्छति (ऋतु के उचित समय पर भी वर्षा पर्याप्त बौछार नहीं देती)”, इत्यादि। यहाँ भी, यह होना चाहिए। इसे वर्षा-बादल या वर्षा-फुहार के रूप में देखा जाता है। वास्तव में, वर्षा के रूप में, थेरा उन्हें अपने आदेश देने के लिए संबोधित करते हैं। यथा सुखं का अर्थ है इच्छा और प्रसन्नता (रुचि) के अनुसार। थेरा कहते हैं: "तुम्हारी वर्षा से मुझे कोई बाहरी खतरा नहीं है; इसलिए, तुम अपनी इच्छा अनुसार जितनी चाहो उतनी वर्षा करो," इस प्रकार, वे उन प्राणियों का उत्थान करते हैं जिनकी आजीविका वर्षा पर निर्भर है।

अब, आंतरिक खतरे की अनुपस्थिति को दर्शाने के लिए उन्होंने चित्तं (मन) से शुरू करते हुए कहा। वहाँ, चित्तं मे सुसमाहितं का अर्थ है कि मेरा मन एकाग्रचित्त होकर मानसिक चिंतन (अरम्मण) में प्रसन्न हुआ है, लेकिन उचित रूप से, अत्यंत सही ढंग से और अच्छी तरह से; वह भी वास्तव में, बाधाओं (निवरण) आदि के ध्यान (विक्खम्भन) द्वारा बचने की हद तक नहीं; फिर भी, वास्तव में, इधर-उधर के विभिन्न कर्मों के संग्रह जैसे सभी बंधनों (संयोजन) से मुक्ति और सभी भ्रष्ट कर्मों (किलेसा) से भेद के साथ मुक्ति है; मैंने उन्हें जड़ से उखाड़ फेंककर (समुच्छेदपथाना) और पूर्ण शांति प्राप्त करके (पणिपसद्धि) उन्हें त्याग दिया; यही अर्थ है। आतापी का अर्थ परिश्रम से युक्त होना है; मैं अपने परिश्रम से भली-भांति आरंभ करते हुए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का प्रयास करके फल प्राप्ति के उद्देश्य से वर्तमान सुख का जीवन (दित्तधम्मसुधा) जीता हूँ; मैं अपने शरीर को स्वर्गिक जीवन के समान सुख से युक्त करता हूँ, परन्तु दुराचार (किलेसा) को दूर करने के उद्देश्य से नहीं, क्योंकि ऐसा कोई पदार्थ है ही नहीं जिसे त्यागा जा सके; यही अभिप्राय है। इस प्रकार दर्शाने के लिए: “जिस प्रकार, हे वर्षा! बाह्य खतरे के अभाव में मैंने तुम्हें वर्षा करने के लिए प्रेरित किया, उसी प्रकार आंतरिक खतरे के अभाव में भी ऐसा करो, उसने फिर से कहा: “वस्सा देवा (हे वर्षा, वर्षा करो)।”

एक अन्य विधि:— चन्ना का अर्थ है छत से ढका हुआ, बंद किया हुआ। कुटिका का अर्थ है शरीर (अत्तभाव)। वास्तव में, यह शब्द शरीर (काया) के रूप में ऐसे संदर्भों में आया है जैसे:— “अनेकावयवस्सा समुदाय अविज्जानीवरणस्सा भिक्खवे पुग्गलस्सा तन्हासंयुत्तस्स अयंचेव कायो समुदागतो बहिद्धा च नामरूपं (हे भिक्षुओं! यह शरीर (काया) तब उत्पन्न हुआ है जब किसी व्यक्ति के अज्ञान (अविज्जा) की अनेक बाधाओं का सूक्ष्म अंश तृष्णा (तन्हा) से भली-भांति जुड़ जाता है, बाहर भी नाम और रूप (नामरूप) है,” इत्यादि। इसका प्रयोग नाव (नावा) के रूप में ऐसे संदर्भों में हुआ है जैसे “Siñce bhikkhu(monk) imaṃ nāvaṃ, sittā te lahumessati (हे भिक्षु! इस नाव से पानी निकाल दो, जब तुम पानी निकालोगे तो यह हल्की हो जाएगी), इत्यादि। इसका प्रयोग घर या मकान (गहा) के रूप में ऐसे संदर्भों में हुआ है जैसे “Gahakāraka! Diṭṭhosi; "गहकूतं विसंखतं (हे गृह निर्माता! तुम मिल गए; गृह का मुख्य स्तंभ नष्ट हो गया (विसंखत)," इत्यादि। यह गुफा (गुहा) के रूप में ऐसे संदर्भों में आया है जैसे: "सत्तो गुहायं बहुनाभिचन्नो, तित्तं नरो मोहनास्मिं पवाळ्हो

(एक प्राणी, जो विशेष रूप से गुफा में बहुत ढका हुआ हो, जहाँ खड़ा होकर मनुष्य कामुक सुखों के आकर्षण में बह जाता है)" इत्यादि। यह रथ (रथ) के रूप में ऐसे संदर्भों में आया है जैसे "नेलांको सेतापच्छादो, एकारो वत्तति रथो (दोषरहित भागों से बना, सफेद आवरण वाला, एक तीली वाला रथ)" इत्यादि। यह घर (गेह) के रूप में ऐसे संदर्भों में आया है। जैसे "पुना गेहं न काहसी (तुम फिर कभी घर नहीं बनाओगे)" इत्यादि। यह "लेकिन (कुटी)" के रूप में भी आया है, जैसे "विवटा कुटी निब्बुतो गिनि (मेरी झोपड़ी छतविहीन है, मेरी आग बुझ गई है)", इत्यादि। इसलिए, यहाँ भी इसे "कुटीका (झोपड़ी)" कहा गया है। वास्तव में, लकड़ी आदि जैसी सामग्री पर निर्भर झोपड़ी (कुटीका) के समान शरीर (अत्तभाव) को घर का नाम मिला है, और इसे "कुटीका (झोपड़ी)" कहा गया है। यह नाम पृथ्वी (पथवी) आदि के तत्वों (धातु), स्पर्श (फस्स) आदि, संघीत (हड्डियाँ) आदि के कारण मिला है, क्योंकि यह लकड़ी (अट्ठी) आदि से बना है। चित्तमक्कट (बंदरनुमा मन) का निवास स्थान। जैसा कि बुद्ध ने कहा है:—

"यह तो केवल कंकाल का शरीर (कुटी) है।"

हड्डियाँ; इस प्रकार, बंदर के दिमाग का निवास स्थान।

बंदर जैसी मानसिकता शरीर से बाहर निकल गई है

(कुटिका) पाँच दरवाजों के माध्यम से; बंदर-

मन दरवाजे के आर-पार या उसके ऊपर से होकर हर जगह भटकता है।

जिस पर वह बार-बार प्रहार करता है।

थेरा की इस शरीर-शौचालय के बारे में कहा गया है कि यह "छत से ढकी" है, क्योंकि यह तीन, छह और आठ खुले दरवाजों के माध्यम से ज्ञान (पञ्ञा) द्वारा अच्छी तरह से नियंत्रित है, जिससे कामवासना (राग) आदि के रिसाव को रोका जा सकता है। इसलिए, भगवान बुद्ध ने कहा: "मैं कानों के संयम की बात करता हूँ: इन्हें ज्ञान (पञ्ञा) द्वारा बंद (या ढका) जाना चाहिए।" इस प्रकार ढके रहने से, दुःख (दुक्खा) और दुराचार (किलेसा) का अभाव होता है और निराकार (निरामिसा) सुख प्राप्त होता है, इसलिए यह सुख (सुख) है, क्योंकि सुख प्राप्त हो चुका है। परिणामस्वरूप, यहाँ तक कि हवा (निवात) भी नहीं चलती, क्योंकि विनम्रतापूर्वक व्यवहार करने से अहंकार (निहत), नशा (मद), हठ (ताम्भ) और उग्रता (या झगड़ा, सारम्भ) को अपमानित (निहत) कर दिया गया है। यह भी विधि है: यह दिखाने के लिए कि: "केवल अवरोधक आवरण (संवरण) से सभी भ्रष्ट कर्मों (धर्म) का अंत (सिद्ध) नहीं होता; तो वास्तव में, प्रमुख श्रेष्ठ मार्ग (मार्ग) की एकाग्रता (समाधि) से, और उचित रूप से शांत मन से तथा सभी प्रकार के बंधनों (संयोजन) से स्पष्ट रूप से मुक्त मन से, प्रमुख श्रेष्ठ मार्ग (मार्ग) के ज्ञान (पञ्ञा) के माध्यम से," उन्होंने इस प्रकार कहा: "चित्तं मे सुसमाहितं विमुत्तं (मेरा मन शांत और स्पष्ट रूप से मुक्त है)। इस प्रकार भी, "इदानाहं कटकरणीययो (अब, मैं वह हूँ जिसने वह किया है जो किया जाना चाहिए;) इस प्रकार, मैं निष्क्रिय या आराम से (अपोसुक्क) नहीं जी रहा हूँ; तो वास्तव में, मैं जी रहा हूँ मैं उत्साहपूर्वक, आतापी विहारमि (मैं ब्रह्मविहार में एक घर से दूसरे घर जाकर, भिक्षा मांगते हुए भी, जगत और दिव्य जगत के कल्याण और सुख को उचित रूप से बढ़ावा देने में ऊर्जावान होकर अपना पुण्यमय जीवन व्यतीत करता हूँ। इसलिए, हे वर्षा देवता, मुझे अपना प्रिय बनाने की इच्छा से और वर्षाजल पर निर्भर प्राणियों के प्रति सहानुभूति से, आप भी पर्याप्त वर्षा करें; अतः, यहाँ अर्थ को इसी प्रकार समझना चाहिए।)

यहां भी थेरा अपने स्वयं के परम नैतिक-उपदेश-अनुशासन (अधिसीलसिक्खा) को लौकिक और पारलौकिक (लोकिय-लोकोत्तर) प्रकारों के रूप में प्रदर्शित करते हैं, इस प्रकार: "चन्ना मे कुटिका सुखा निवाता (मेरी देह-कुटिया अच्छी तरह से ढकी हुई, सुखी और हवा रहित है)।" "चित्तं मे सुसमाहितं (मेरा मन शांत है)" जैसे कथन से वे अपनी अतिमानसिक अनुशासन (अधिचित्तसिक्खा) प्रदर्शित करते हैं। "विमुत्तं (स्पष्ट रूप से मुक्त)" अभिव्यक्ति से वे अपनी अतिमानसिक अनुशासन (अधिपञ्ञा) प्रदर्शित करते हैं। "आतापी विहारमि (मैं सक्रिय रूप से जीता हूँ)" अभिव्यक्ति से वे अपने वर्तमान सुखी जीवन (दित्तधम्म) को प्रदर्शित करते हैं। दूसरे शब्दों में, "चन्ना मे कुटिका सुखनिवाता (मेरा शरीर ढका हुआ, सुखी और वायुहीन है)" से वे लक्षणहीन जीवन (अनिमित्त) प्रदर्शित करते हैं, क्योंकि यह क्षय (किलेसा) की वर्षा से बचाव के लिए बंद द्वार (पिधान मुख) के माध्यम से स्थायित्व आदि जैसे लक्षणों को दूर करने का प्रकाश उत्पन्न करता है। इस प्रकार, अर्थात्: "चित्तं मे सुसमाहितं (मेरा मन शांत है)," से वे सभी इच्छाओं से मुक्त (अपणिहित) जीवन को दर्शाते हैं। इस प्रकार, अर्थात्, "विमुत्तं (स्पष्ट रूप से मुक्त)" से वे शून्य (सुञ्जत) जीवन को दर्शाते हैं। इस प्रकार, अर्थात्: "आतापी विहारमि (मैं उत्साही होकर जीता हूँ)," से वे उन तीन जन्मों की प्राप्ति के साधन को दर्शाते हैं। वैकल्पिक रूप से, पहले द्वारा वे घृणा (दोष) का त्याग दर्शाते हैं; दूसरे द्वारा काम (राग) का त्याग; तीसरे द्वारा भ्रम का त्याग। इसी प्रकार, दूसरे द्वारा या पहले और दूसरे दोनों द्वारा वे धर्मविहार (धार्मिक जीवन) की समृद्धि दर्शाते हैं; तीसरे द्वारा स्पष्ट मुक्ति की समृद्धि। इस प्रकार, अर्थात्: "ātāpī viharāmi (मैं उत्साहपूर्वक जीता

हूँ)” वह दूसरों के कल्याण के लिए उचित अभ्यास (paṭipatti) में आलसी न होने की स्थिति को दर्शाता है; इसलिए, इसे देखा जाना चाहिए।

अतः, जैसा कि इस श्लोक के माध्यम से धर्मी जीवन (धम्मविहार) आदि को दर्शाया गया है, जैसा कि “यथा नाम (जैसा नाम दिया गया है)” से शुरू होने वाले श्लोक में कहा गया है, नाम और वंश में उन नामों को दर्शाने के लिए जिन्हें नहीं दर्शाया गया है, इस प्रकार कहा गया है: -“इत्थं सुदं” इत्यादि। वास्तव में, मैं उन थेरों को नाम से दर्शाऊंगा जो केवल नामों से ही सुप्रसिद्ध हैं; उन थेरों को वंश से दर्शाऊंगा जो केवल वंश से ही स्पष्ट हैं; उन थेरों को जो दोनों रूपों में सुप्रसिद्ध हैं, मैं दोनों रूपों से दर्शाऊंगा। यद्यपि, यह थेरा विशेष रूप से नाम से चिह्नित है, वंश से नहीं; अतः, इसे इस प्रकार कहा गया है: “इट्ठंसुदं आयस्मा सुभूति (इस स्वरूप में, यह पूजनीय सुभूति)। यहाँ, इट्ठं अभिव्यक्ति का अर्थ है यह विशेषता; इस प्रकार; यही अर्थ है। सुदं अभिव्यक्ति में सु और इदं शामिल हैं; संधि के कारण स्वर 'इ' का लोप हो गया है। सु, अर्थात्, एक अविभक्ति कण (निपात) है; यह श्लोक; यही व्याकरणिक संरचना है। आयस्मा अभिव्यक्ति का अर्थ है मधुरता से बोला गया शब्द; यह आदरपूर्ण सम्मान का शब्द है। सुभूति अभिव्यक्ति नाम की घोषणा है। वास्तव में, वह न केवल अपनी शारीरिक समृद्धि के कारण बल्कि अपने गुणों की समृद्धि के कारण भी सुंदर और मनमोहक हैं। इस प्रकार, राजसी वैभव से संपन्न होने के कारण। उत्कृष्ट शारीरिक बनावट और नैतिक उपदेशों जैसी समृद्धि की भव्यता से परिपूर्ण होने के कारण उन्हें सुभूति के नाम से जाना जाता है। वे थेरा (वरिष्ठ भिक्षु) हैं क्योंकि वे नैतिक उपदेशों के सार जैसे स्थिर गुणों से जुड़े हैं। 'अभासित्त' शब्द का अर्थ है: उन्होंने बोला। लेकिन ये महान थेरा अपने गुणों को क्यों प्रकट करते हैं? इस लंबी साधना के माध्यम से उन्होंने अत्यंत उत्कृष्ट, पूर्णतः गहन शांति प्राप्त की है, जो पहले कभी प्राप्त नहीं हुई थी। प्राप्त पारलौकिक सत्य (धम्म) पर चिंतन करने के बाद, जिन श्रेष्ठों की आवश्यकताएँ बहुत कम हैं, वे गंभीर उच्चारण के माध्यम से, उत्साह की शक्ति (या गति) को उचित रूप से उत्तेजित करते हुए, और संसार से बाहर निकलने का साधन बनने वाली व्यवस्था (शासन) की स्थिति को स्पष्ट करते हुए अपने गुणों को प्रकट करते हैं। जगत के रक्षक अपने गुणों को इस प्रकार प्रकट करते हैं: “हे भिक्षुओं! तथागत दस प्रकार की शक्तियों से संपन्न हैं और चार प्रकार के विश्वासों से आत्मविश्वासी हैं,” इत्यादि, ज्ञानोदय या जागृति (बोधनेय्या) को प्रेरित करने (या सुगम बनाने) की उनकी प्रवृत्ति (या झुकाव) के माध्यम से; इस प्रकार, इस थेरा के अरहंत पद (अञ्ञा) की भविष्यवाणी पर श्लोक है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा सुभूति का

थेरागाथा पर टीका

परमत्थदीपनी के नाम से जाना जाता है

तैयार है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(2):कोथिता द एल्डर

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (2) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
2. कोट्ठिता (वृद्ध)
बुद्ध युग [1] में सावत्थी में ब्राह्मणों (पुजारियों) के एक अत्यंत समृद्ध कुल में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम कोट्ठित रखा गया। [2] वयस्क होने पर उन्होंने तीनों वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था और ब्राह्मण (पुजारी) के सभी गुणों में निपुण हो गए थे। उन्होंने भगवान (बुद्ध) को धम्म के मार्ग का उपदेश देते हुए सुना, आस्था प्राप्त की और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। भिक्षु दीक्षा के दिन से ही उन्होंने अंतर्दृष्टि का अभ्यास करते हुए अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया और धम्म के रूप और अर्थ पर पूर्ण महारत हासिल की। [3] इस विषय में निपुण होने के कारण [7] वे महान थेरों और दस शक्तियों वाले [4] से इनके बारे में प्रश्न किया करते थे। इसी कारण उन्हें इस प्रकार निपुण

लोगों में श्रेष्ठ माना जाता था। तब भगवान (बुद्ध) ने वेदल्ल-सूत्र में अपनी उपलब्धियों को प्रदर्शित करते हुए उन्हें अंतर्दृष्टि में निपुण लोगों में प्रमुख स्थान दिया। [5]

बाद में एक अवसर पर, उन्होंने निर्वाण के आनंद को महसूस करते हुए, इस श्लोक में कहा:

[2] उपसंतो उपरतो मंतभानि अनुद्धतो॥
धुनाति पापे धम्मे दुमपत्तन वा मालुतो' ति.॥ ॥

इत्थं सुदां अयस्मा महाकोष्ठितो थेरो गाथां अभिसित्था' ति.॥ ॥

[2] जो कोई भी, शांत और स्थिर, संसार से विरक्त,
बुद्धिमान वाक्य बोल सकता है, [6] बिना अहंकार के ज्ञान के साथ।
शांत - उसने शरारती चीजों को ऐसे झटक दिया जैसे वे हवा के देवता द्वारा उड़ाई गई
जंगल की पत्तियां हों [7] ।

इस प्रकार पूज्य भिक्षु महन-कोत्थिता ने अपना वचन (गाथा) कहा।

[1] इमास्मिं बुद्धुप्पादे। शाब्दिक अर्थ है, 'युग' नहीं, बल्कि उदय, आगमन। हालाँकि, इस अवधि में महान ताचेर का संपूर्ण जीवन, अर्थात् अंतिम जीवन शामिल है; इसलिए केवल 'युग' ही उपयुक्त प्रतीत हुआ। यह वाक्यांश कालो, समायो, 'समय' के साथ वैकल्पिक रूप से प्रयोग किया जाता है।

[2] उच्चारण कोट्टहिता। यह नाम कोठिका और कोठिका के रूप में भी दर्ज है। थेरा स्पष्ट रूप से विनय और सुत्तंता में 'महान बुजुर्गों' में शामिल है, जो कई सुत्तों में वार्ताकार है - उदाहरण के लिए, मज्झिमा निकाय, i। 292; सयुत्ता निक., ii. 112; आंग. निक., मैं. 24, आदि। विनय ग्रंथ देखें, 2। 112, 317; iii. 359.

[3] इस तकनीकी वाक्यांश पर, सिस्टर्स, पृष्ठ 17, नोट 1 देखें।

[4] बुद्ध की एक उपाधि, जो विद्वतापूर्ण रचनाओं में अक्सर पाई जाती है। यह पहले अरहंतों (प्रबुद्ध लोगों) पर समान रूप से लागू होती थी। तुलना करें अंग., ii. 63; सांघ , ii. 28. शक्तियों का वर्णन मज्झ., i. 69-71 में किया गया है।

[5] अंग., i. 23; मज्झ., मैं. 232.

[6] मंत या मंत्र, उनके ब्राह्मण (पुजारी) या वैदिक प्रशिक्षण का संकेत। अगले दो वाक्यांश अनुद्धतो शब्द का अनुवाद हैं , जिसे टीका उद्दच्च, उत्तेजना से जोड़ती है।

[7] मालुतो, हवा, संभवतः इस तिथि पर वैदिक मारुतों, उर पवन-देवताओं का सुझाव देना बंद कर दिया होगा। तुलना करें सिस्टर्स, पृ. 150.

1.1-2[2] श्लोक पर टिप्पणी

महाकोट्थिका थेरा
उपसन्तो से शुरू होने वाले श्लोक महाकोट्थिका के श्लोक हैं। उस थेरा का उद्गम क्या है? यह थेरा भी, भगवान पद्ममुत्तरा के समय, हंसवती नगर में एक धनी परिवार में पुनर्जन्म लेकर आए थे। अपने माता-पिता के देहांत के बाद, जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने अपनी जागीर स्थापित की और गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए, एक दिन देखा कि जब भगवान पद्ममुत्तरा धर्म का उपदेश दे रहे थे, तो हंसवती नगर के निवासी सुगंधित इत्र और फूलों की माला लिए हुए, बुद्ध, धर्म और संघ के स्थान की ओर नीचे उतरते, अभिसरित होते और ढलान बनाते हुए जा रहे थे। वे भी लोगों की विशाल भीड़ के साथ उसी ओर चल पड़े। गुरु को विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त करने वालों (पटिसंभिदा) में एक भिक्षु को सबसे आगे बिठाते देख, उन्होंने मन ही मन सोचा: "कहा जाता है कि यह विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त करने वालों में सबसे आगे है; यह कितना अद्भुत होगा यदि मैं भी बुद्ध के युग में इस भिक्षु की तरह विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त करने वालों में

सबसे आगे हो जाऊं।" गुरु द्वारा धर्म की शिक्षा पूरी होने पर जब सभी श्रोता उठ खड़े हुए, तो वे भगवान बुद्ध के पास गए और उन्हें इस प्रकार आमंत्रित किया: "आदरणीय महोदय! कृपया कल मेरा भिक्षापात्र स्वीकार कीजिए।" गुरु ने स्वीकृति दे दी। उन्होंने भगवान बुद्ध को प्रणाम किया, उनकी परिक्रमा की, अपने निवास स्थान पर लौट आए, बुद्ध और उनके भिक्षुओं के लिए बैठने की व्यवस्था करवाई, उसे सुगंधित मालाओं, पुष्पमालाओं आदि से सजाया, रात भर पौष्टिक और पौष्टिक भोजन तैयार करवाया, और उस रात के बीतने के साथ ही उन्होंने भगवान बुद्ध और उनके एक लाख भिक्षुओं के दल को अपने निवास स्थान पर सुगंधित जौ (साली-चावल का भोजन) और विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट सूप और करी से भोजन कराया, और भोजन समाप्त होने पर मन ही मन सोचा: "जिस पद की मैंने कामना की है, वह वास्तव में महान है; लेकिन केवल एक दिन दान करने के बाद उस पद के लिए प्रार्थना करना मुझे उचित नहीं लगता; मैं लगातार सात दिनों तक दान करने के बाद ही उस पद के लिए अपनी इच्छा प्रकट करूँगा।" उसी प्रकार, उन्होंने सात दिनों तक व्यापक दान दिया और भोजन वितरण के पूर्ण होने पर, उन्होंने अपने वस्त्रों का भंडार (दुस्सा) खुलवाया, और तीन वस्त्रों के उत्तम समुच्चय के लिए पर्याप्त महीन वस्त्र का टुकड़ा बुद्ध के चरणों में रखा, एक लाख भिक्षुओं को तीन-तीन वस्त्रों का एक-एक समुच्चय भेंट किया, तथागत के पास जाकर इस प्रकार कहा: "आदरणीय महोदय! सात दिन पहले आपने जिस भिक्षु को सर्वोच्च स्थान दिया था, मैं भी भविष्य में प्रकट होने वाले बुद्ध के युग में भिक्षु बनकर विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त करने वाले उस भिक्षु के समान बनना चाहता/चाहती हूँ।"उन्होंने गुरु के चरणों में लेटकर अपनी मनोकामना व्यक्त की। उनकी मनोकामना की पूर्ति की शर्त जानने पर गुरु ने भविष्यवाणी की: "आने वाले समय में, एक लाख युगों (कप्पा) के अंतिम छोर पर, गौतम बुद्ध प्रकट होंगे; उनके विधान में आपकी मनोकामना पूरी होगी। यह बात अपदान में भी इस प्रकार कही गई है:

"पदुमुत्तरा नाम के विजेता,

ऋषि, अंतर्दृष्टि के स्वामी (चक्खु)

दुनिया में एक लाख का उदय हुआ

आज से युगों (कप्पा) पहले।

सलाहकार, निर्देश देने में चतुर,

(सभी जीवित प्राणियों का मार्गदर्शक तारा);

बुद्ध अपनी शिक्षा में निपुण थे, जिससे कई लोगों को लाभ हुआ।

एक आदमी (संसार के सागर को) पार करता है।

वे सहानुभूति रखने वाले, दयालु और

सभी प्राणियों के कल्याण का साधक;

उन्होंने सभी विधर्मियों को उचित स्थान पर रखा, जो

वह पाँच नैतिक उपदेशों के माध्यम से उन तक पहुँच चुके थे।

इस प्रकार, वह अशांति से मुक्त थे।

पूरी तरह से अनुपस्थित (या खाली) होना

विधर्मी; उसने अरहंतों के साथ विविधतापूर्ण व्यवहार किया।

जो अपनी शक्ति के स्वामी थे और

इस प्रकार का जो अविचलित रहेगा

जीवन के विभिन्न उतार-चढ़ावों (ताड़ी) द्वारा।

महान ऋषि की लंबाई अट्ठावन क्यूबिट है।

ऊंचाई में; वह कीमती सोने जैसा दिखता है और

बत्तीस उत्कृष्ट गुणों से युक्त है-

tics (lakkhaṇa).

जीवन की एक निश्चित अवधि अवश्य होती है।

एक लाख वर्षों तक चलने वाला, जीवित रहने वाला

उस जीवनकाल के अंत तक, उन्होंने ऐसा होने दिया-

कई लोगों को धोखा दिया।

उस समय मैं हंसवती में था;

ब्राह्मण वेदों का ज्ञाता;

उसने पूरे विश्व के मुखिया से संपर्क किया,

मैंने धम्म की शिक्षा सुनी।

उस अवसर पर, उस नायक ने एक स्थान रखा

शिष्य, जिसका चरागाह (गोकारा) था

बढ़ता हुआ (पभिन) प्रेम (मति), जो था

इस प्रकार के विश्लेषणात्मक ज्ञान में चतुर

अर्थ (अत्था) पाठ (धम्म) व्युत्पत्ति

(निरुत्ति), और तत्पर उत्तर (पटिभाण) में

सबसे आगे की स्थिति (etadagga); होने पर

इसके बारे में सुनकर, मुझे बहुत अच्छा अनुभव हुआ।

विजेता ने अपने शिष्यों के साथ भोजन किया

सात दिनों के भोजन के साथ।

जागृति के सागर को प्राप्त करने के बाद

ज्ञान, शिष्यों के साथ ढका हुआ

कपड़ों के साथ मैं खुद ही नीचे गिर गया।

मैंने उनके चरणों के तलवे पर बैठकर उस स्थान के लिए प्रार्थना की।

इसके बाद विश्व के मुखिया ने कहा:—

इस उत्कृष्ट व्यक्ति को देखिए, जो झुक रहा है।

मेरे पैरों के तलवों पर, किरणें किसके पास हैं?

कमल के फूल का सार, जल का सार।

यह व्यक्ति एक पद की आकांक्षा रखता है।

सर्वश्रेष्ठ बुद्ध के भिक्षु के माध्यम से

वह पवित्र आस्था, त्याग और

अच्छे धर्म को सुनना; होना-

हर जगह खुश रहो, और भटकते हुए

उनके बार-बार पुनर्जन्म के चक्रों के बारे में

प्रमुख और गौण अस्तित्वों में, यह एक

समय आने पर उसकी दिली इच्छा पूरी हो जाएगी।

आना।

अतः, एक लाख युग (कप्पा)

दुनिया में एक गुरु प्रकट होगा।

ओक्काका परिवार में जन्मा, कुल के अनुसार

जिसका नाम गौतम है। वह शिष्य बनेगा।

गुरु कोट्टिता के नाम से जाना जाता है,

उनके सभी धन्ना का उत्तराधिकारी, प्रिय पुत्र

सत्य (धम्म) द्वारा सृजित।

यह सुनकर मुझे खुशी हुई;

सचेत, बुद्धिमान और संयमित भी।

दयालु हृदय से, मैंने हर तरह से सेवा की।

विजेता तब तक जब तक मेरा जीवनकाल

चला।

उस कृत्य के परिणामस्वरूप, और स्वैच्छिक रूप से

मैंने आत्मनिर्णय (चेतना पणिधि) दिया

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया और तावतिंसा चला गया।

मैंने तीन सौ बार दिव्य अभ्यास किया

संप्रभुता; मैं पाँच वर्षों तक विश्व-राजा भी रहा।

सौ बार।

क्षेत्रीय शासन की भव्यता

संख्यात्मक रूप से गणना नहीं की जा सकती।

उस दस्तावेज़ के हस्तांतरण से मैं खुश था।

हर जगह।

मैं अपने नियमित चक्करों में इधर-उधर भटकता रहा।

ऐसे दो अस्तित्वों में पुनर्जन्म, जैसे कि

पहले एक दिव्य प्राणी और बाद में एक मनुष्य।

मैं कोई दूसरा कोर्स नहीं करता; यही मेरा एकमात्र कोर्स है।

संगति के अच्छे प्रदर्शन का पहला (फल)

उपलब्धि (सुचिण्ण)।

मैं दो परिवारों में पैदा हुआ हूँ; एक परिवार में...

पहले योद्धा राजकुमार का और फिर ब्राह्मण का।

मैं किसी निम्न परिवार में पैदा नहीं हुआ था; यह

अच्छे प्रदर्शन या उपलब्धि का फल

(सुचिण्ण)। जब मेरा पिछला जन्म सफलतापूर्वक संपन्न हुआ।

मैं ब्राह्मणों का वंशज था; मेरा पुनर्जन्म हुआ था।

एक धनी ब्राह्मण (विप्पा) परिवार में

सावत्थी.

मेरी माता का नाम चंदवती था; मेरे पिता

वह अस्सलायन था। जब बुद्ध ने मुझे अनुशासित किया, तब मैंने उसे अनुशासित किया।

संपूर्ण पवित्रता के लिए पिता, फिर, मैं बन गया

सुगाता के प्रति श्रद्धा से प्रेरित होकर मैं भिक्षु बन गया।

बेघर जीवन व्यतीत करो, मोग्गलाना मेरा था

शिक्षक, और सारी का पुत्र मेरा गुरु था।

या आध्यात्मिक प्रमुख (उपज्जा)।

जब मेरे बाल काटे जा रहे थे (या मुंडवाए जा रहे थे), विधर्मी

दृश्य उसके साथ ही कट गया था

जड़; जब भी मैं पीला वस्त्र धारण करता हूँ, मैं

मैंने अरहंत पद प्राप्त किया। क्योंकि मैंने अपना विकास किया।

अर्थ का ज्ञान (अत्था), परीक्षा (धम्म)

व्युत्पत्ति (निरुत्ती) और त्वरित उत्तर (पटीभाण),

इसलिए, दुनिया के मुखिया ने मुझे इस पद पर बिठाया।

यह सर्वोच्च स्थान (etadagga)।

उपतिस्सा द्वारा पूछे जाने पर मैंने उत्तर दिया

जिसके बारे में एक साथ नहीं देखा गया है या

अदृश्य (asandiṭṭha) nibbāna. उस कारण

मैं विश्लेषणात्मक क्षमता रखने वालों में अग्रणी बन गया।

व्यवस्था में कालिक ज्ञान (पटिसमभिदा)

आत्मजागृत बुद्ध का। मेरा दुराचार (किलेसा)

जलकर राख हो गया था, सभी अस्तित्व अच्छी स्थिति में थे

नष्ट (समुहता); एक हाथी की तरह जो

मैंने इसके बंधन तोड़ दिए थे, मैं मुक्त जीवन जीता हूँ।

कैंकर (आसवा)।

वास्तव में, मेरी उपस्थिति में जाना मेरे लिए अच्छा रहा।

बुद्ध का; त्रिविध ज्ञान (विज्जा) था

तदनुसार प्राप्त किया गया; बुद्ध का निर्देश

(शासन) संपन्न हो चुका था।

मेरे द्वारा कल्पना की गई चार प्रकार की चीजें हैं

विश्लेषणात्मक ज्ञान के ये आठ-

विमोक्खा मुक्ति भी, और

छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा)

साथ ही; बुद्ध का उपदेश (शासन)

कार्य संपन्न हो चुका था।

इस प्रकार इस और उस जन्म में पुण्य और ज्ञान का पर्याप्त संचय करके, वे बार-बार जन्म लेते हुए देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक अत्यंत धनी ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। उन्होंने उन्हें कोट्टित नाम दिया। वयस्क होने पर उन्होंने तीनों वेदों का अध्ययन किया, ब्राह्मणों के ज्ञान में निपुणता प्राप्त की, एक दिन गुरु के समक्ष गए, सत्य (धम्म) को सुना, श्रद्धावान आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए और दीक्षा लेने के समय से ही विपश्यना का अभ्यास करते रहे, अरहंतत्व तथा विश्लेषणात्मक ज्ञान (पटीसंबिदा) प्राप्त किया, चारों प्रकार के विश्लेषणात्मक ज्ञान में पारंगत हो गए, प्रसिद्ध और प्रख्यात महान थेरों के पास गए, उनसे प्रश्न पूछे और दशाबल से भी, जिनसे वे स्वयं गए थे, हमेशा चारों प्रकार के विश्लेषणात्मक ज्ञान के विषय में ही प्रश्न पूछे। इस प्रकार, इस थेरे ने इस विषय में अपनी निष्ठापूर्वक साधना और अपने ज्ञान और निपुणता (चिन्नवासी) के कारण विश्लेषणात्मक ज्ञान (पटीसंबिदा) प्राप्त करने वालों में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया। इसके बाद, गुरु ने महावेदल्ला सूत्र की एक कहानी सुनाते हुए, विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त करने वालों में उन्हें सर्वोच्च स्थान देते हुए कहा:— "हे भिक्षुओं! यह मेरे शिष्य भिक्षुओं में प्रमुख हैं, जिन्होंने विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त किया है, ये हैं महा-कोठ्ितका। एक बार, जब वे स्वयं मोक्ष के आनंद का पूर्णतः अनुभव कर रहे थे, तब उस पूजनीय थेरा महाकोठ्ितका ने गंभीर उच्चारण के रूप में यह वांछनीय श्लोक कहा:—

2. "शांत, आनंदित, स्थिर वक्ता"

ज्ञान भरी बातें बुरे कर्मों को दूर भगाती हैं।

हवा के झोंके से एक पत्ते को उड़ा ले जाते हुए

पेड़।"

वहाँ, उपसन्त का अर्थ है — मन सहित छह स्थानों पर नियंत्रण रखने वाली शक्तियों की शांति से घनिष्ठ और स्पष्ट रूप से जुड़े होने के कारण शांत और स्थिर रहना। उपरातो का अर्थ है सभी प्रकार के बुरे कर्मों से दूर रहना और स्पष्ट रूप से आनंदित रहना। मंतबाण का अर्थ है — मंत को ज्ञान (पञ्ञा) कहा जाता है; यद्यपि उस ज्ञान के माध्यम से उसे प्राप्त करने के बाद वह बोलता है; अतः, मंतभाणी (ज्ञान का वक्ता, बुद्धिमान वक्ता); वह बोलता तो है, लेकिन उचित समय पर बोलने जैसी शर्त का पालन नहीं करता; यही अर्थ है। वैकल्पिक रूप से, वह मंत (ज्ञान) का पाठ करते हुए बोलता है; अतः, मंतभाणी (बुद्धिमान शब्दों का पुनरावर्तक); वह अपने वाणी में चार गुणों से युक्त सुविचारित कथन बोलता है, जिसमें कोई अपशब्द नहीं होता; यही अर्थ है। वह असंतुलित नहीं है, क्योंकि वह अच्छे जन्म आदि गुणों के कारण स्वयं को श्रेष्ठ नहीं मानता; अतः, वह अनुद्धतो, सुसंतुलित है। दूसरे शब्दों में, तीन प्रकार के बुरे शारीरिक आचरणों के निवारण के कारण, उचित संयम के कारण शांत हो जाने से; तीन प्रकार के बुरे मानसिक आचरणों में असंतोष और उनके त्याग के कारण, वह संयमी (उपरता) है। सर्वांगीण संतुलित वक्ता होने के कारण, चार प्रकार के बुरे कर्मों के न होने के कारण, वह बुद्धिमान वक्ता (मन्तभाणी) हैं; तीन प्रकार के बुरे कर्मों के लक्षणों को उत्पन्न करने के कारण अहंकारी न होने के कारण, वह संतुलित (अनुद्धत) हैं। इसी प्रकार, तीन प्रकार के बुरे कर्मों का त्याग करके शुद्ध नैतिक उपदेशों में सुस्थापित होकर, अहंकार का त्याग करके शांत होकर, उसी एकाग्रता (समाधि) को मुख्य कारण बनाकर, स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करके, वह अच्छे मार्ग (मग्ग) के क्रमिक चरणों के माध्यम से बुरे कर्मों से छुटकारा पाते हैं (धुनाति पापके धम्मे): पापी अर्थ में, वह सभी बुरे और आत्म-भ्रष्ट कर्मों (धम्म) से भी छुटकारा पाते हैं, और पूर्ण रूप से त्याग (समुच्छेद) के माध्यम से उनका त्याग करते हैं। किस प्रकार? दुमपट्टं व मालुतो (जैसे हवा किसी बढ़ते हुए पेड़ के पीले सूखे पत्ते को झटक देती है); यह उसे उसकी टहनी से अलग कर देती है; इसी प्रकार, वह अपने स्वयं के सन्तान (सन्ताना) से बुरे कर्मों (धम्म) को निकाल देता है, क्योंकि उसने उचित प्राप्ति (पटिपत्ति) में स्वयं को स्थापित कर लिया है, जैसा कि कहा गया है। इस प्रकार, थेरा का यह श्लोक भी अरहंत पद (अञ्ञा) की भविष्यवाणी (या व्याख्या) है, जिसमें अरहंत पद (अञ्ञा) का संकेत दिया गया है; इस प्रकार, इसे समझा जाना चाहिए।

यहां भी, यह बुरे शारीरिक और मौखिक आचरण के त्याग के कथन से व्यावहारिक साधनों (पयोग) की शुद्धता को दर्शाता है; बुरे मानसिक आचरण के त्याग के कथन से (या इसके द्वारा) झुकाव (या इरादे) की शुद्धता को दर्शाता है। इस प्रकार, यह "अनुद्धतो (अपार)" के इस कथन के माध्यम से उस उद्देश्य की स्थिति के लिए व्यावहारिक साधनों और इरादे में शुद्ध व्यक्ति की बाधाओं के त्याग को दर्शाता है। इनमें से, व्यावहारिक साधनों की शुद्धता द्वारा नैतिक उपदेशों की समृद्धि प्रकट हुई है; शुद्ध इरादे के माध्यम से, विकास (भावना) के सहायक (या लाभकारी) कर्मों (धम्म) की प्राप्ति होती है, हृदय की शांति (समथा) प्राप्त होती है; इसके माध्यम से एकाग्रता (समाधि) का विकास (भावना) होता है, अर्थात्: — "धुनाति पापके धम्मे (वह बुरे कर्मों को त्याग देता है)," ज्ञान (पञ्ञा) का विकास (भावना) प्रकट हुआ है। इस प्रकार, तीन प्रकार के अनुशासनात्मक प्रशिक्षण (सिक्खा) हैं जिनमें अति-नैतिक उपदेश प्रशिक्षण (अधिशीलसिक्खा) आदि शामिल हैं, जो तीन पहलुओं में उत्कृष्ट निर्देश (या व्यवस्था) हैं; तीन प्रकार के त्याग हैं जिनमें क्षणिक (तदंग) त्याग आदि शामिल हैं; उचित प्राप्ति (पटिपत्ति) मध्य को प्राप्त करना, साथ ही दोनों चरम सीमाओं से पूरी तरह बचना शामिल है; नरक की अवस्था से परे जाने के साधन भी हैं, इत्यादि; उचित अर्थ निकालने के बाद ही व्याख्या की जानी चाहिए। इसी विधि से, शेष श्लोकों में भी, उचित भावों के अनुसार अर्थ की व्याख्या की जानी चाहिए। यद्यपि, कहीं-कहीं हम उन विषयों पर भी टिप्पणी करेंगे जिन पर पहले टिप्पणी नहीं की गई है, लेकिन केवल अर्थ के संदर्भ में। यह अभिव्यक्ति, अर्थात्, "इत्तं सुदं आयस्मा महाकोत्तिको (आदरणीय महाकोत्तिक की कामना है"), आदर का कथन है, ठीक उसी प्रकार जैसे महामोग्गलान के प्रति है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा महाकोट्ठिका का

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(3): कनखा-रेवता (रेवता द डाउटर)

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।

नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (3) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
3. कंखा-रेवत (संदेह करने वाला रेवत)
उनका पुनर्जन्म हमारे परम पूज्य बुद्ध के समय में, सावत्थी के एक समृद्ध परिवार में हुआ। जब वे भोजन के बाद दस शक्तियों के स्वामी बुद्ध का प्रवचन सुनने के लिए आए लोगों के सबसे बाहरी घेरे में खड़े थे, तब उन्होंने विश्वास किया और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। उन्होंने ध्यान साधना के माध्यम से अर्हत्व (ज्ञान) प्राप्त किया ; और वे ध्यान में इतने निपुण हो गए कि भगवान (बुद्ध) ने उन्हें ध्यान साधना करने वाले भिक्षुओं का प्रमुख घोषित किया।

[1] [8] इस प्रकार अपना कार्य पूरा करने के बाद, इस महान भिक्षु ने अपने मन की संशय की प्रवृत्ति पर विचार किया, जो अब पूरी तरह से दूर हो चुकी थी, [2] और उसने भगवान (बुद्ध) की शक्ति और ज्ञान की प्रशंसा की, जिससे उसका मन अब शांत और दृढ़ हो गया था, और कहा:

[3] पणनाm̩ [2] इमाm̩ पासा तथागतानाm̩॥
अग्गि यथा पज्जलितो निशिथे॥
अलोकदा चक्खुदादा भवन्ति॥
ये अगतानां विनयन्ति कांखं ति.॥ ॥

इत्थं सुदां अयस्मा कंखरेवतो थेरो गाथां अभिसित्था' ति.॥ ॥

[3]
देखो , तथागत (जो बुद्ध के समान आगे बढ़ते हैं) की बुद्धि कितनी महान है ! [3] वे मध्यरात्रि की अग्नि
के समान प्रकाश और दृष्टि प्रदान करने वाले हैं,
जो राहगीरों के सभी संदेहों को दूर करते हैं।

इस प्रकार पूज्य भिक्षु कंखा-रेवत ने अपना वचन (गाथा) कहा।

[1] एंग. निक. , आई. 24.

[2] इस प्रवृत्ति का उल्लेख अपादान में किया गया है। इसे जो उपनाम मिला है, वह रेवता को अधिक प्रतिष्ठित महा-थेरा रेवता, वैशाली परिषद के सह-निदेशक (विनय ग्रंथ, ii. 317; cf. 67) से अलग करने के लिए अनुचित रूप से बनाए रखा गया होगा।

[3] तथाइगता। इस प्रसिद्ध शब्द की पूर्ण व्याख्या के लिए, कॉमी उदाना और इति-वुत्तक टीकाओं का संदर्भ देता है। देखें जे.एच. मूर, बुद्ध के वचन, पृष्ठ 131; सर आर. चाल्मर्स, जे.आर.ए.एस., 1898, 108।

1.1-3[3] श्लोक पर टिप्पणी

कंखा रेवता थेरा
"पञ्ञं इमं पस्सा" से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कंखारेवत का श्लोक है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ये थेरा भी, भगवान पद्ममुत्तरा के समय में, हंसवती नगर में एक धनी ब्राह्मण के परिवार में पुनर्जन्म लिए थे। एक दिन बुद्ध द्वारा सत्य (धम्म) के उपदेश के अवसर पर, वे पूर्वोक्त (हेट्ठावुत्त) लोगों की बड़ी भीड़ के साथ मठ गए, श्रोताओं के चारों ओर एक छोर पर खड़े हो गए, और सत्य (धम्म) सुनते हुए उन्होंने देखा कि गुरु एक भिक्षु को ध्यान में विशेष आनंद लेने वालों में सबसे आगे बैठा रहे हैं, और उन्होंने मन ही मन सोचा: - "मेरे लिए भी भविष्य में ऐसा ही भिक्षु बनना उचित है।" प्रवचन के अंत में, उन्होंने गुरु को आमंत्रित किया, जैसा कि ऊपर बताया गया है, स्वयं ने श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की और भगवान से कहा: "आदरणीय गुरुदेव! इस भक्तिमय कर्म के फलस्वरूप, मैं किसी अन्य समृद्धि की कामना नहीं करता; परन्तु जिस प्रकार सात दिन पहले वह भिक्षु ध्यान प्राप्त करने वालों में सर्वोपरि हुआ था, उसी प्रकार भविष्य में किसी

बुद्ध के युग में मैं भी ध्यान प्राप्त करने वालों में सर्वोपरि हो सकूँ।" इस प्रकार उन्होंने अपनी यह कामना व्यक्त की। गुरु ने भविष्य की दृष्टि से उनकी कामना की पूर्ति देखकर भविष्यवाणी की और प्रस्थान किया: "भविष्य में एक लाख युगों के अंत में गौतम बुद्ध प्रकट होंगे; उनके युग में तुम ध्यान प्राप्त करने वालों में सर्वोपरि होगे।"

अपने जीवनकाल में अच्छे कर्म करते हुए, उन्होंने एक लाख युगों (कप्पा) तक देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म-मृत्यु का चक्र पूरा किया और हमारे प्रतापी बुद्ध के समय में सावती नगर के एक अत्यंत समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लिया। भोजन के बाद, वे बड़ी संख्या में लोगों के साथ धर्म का ज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से मठ गए, श्रोताओं के अंतिम छोर पर विराजमान हुए, दशाबल के धर्म उपदेश सुने, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बने, उपसंपदा दीक्षा प्राप्त की, मानसिक अभ्यास (कम्मट्टाना) किया, ध्यान का सर्वांगीण अभ्यास किया, ध्यान में निपुण हुए, ध्यान को अपना आधार बनाया और अरहंत पद प्राप्त किया। दसबल द्वारा दिन-रात की जाने वाली उचित ध्यान साधना (समापत्ति) में स्वयं प्रवेश करने से, वे ध्यान में सर्वथा शक्तिशाली (चिन्नवासी) हो गए। तब गुरु ने उन्हें ध्यान साधना में सर्वोच्च स्थान देते हुए कहा: - "हे भिक्षुओं! यह मेरे ध्यान साधक शिष्य भिक्षुओं में श्रेष्ठ है, यह है कंखा रेवता। अपदान में भी यही कहा गया है:—

तब विजेता नामक नेता का उदय हुआ।

पदुमुत्तारे, सभी विषयों में अंतर्दृष्टि के स्वामी

धम्म, एक लाख युग (कप्पा)

कुछ समय पहले।

वह सिंह के जबड़े वाला, ब्रह्मा की वाणी वाला, हंस के समान था।

ढोल की आवाज़ आई (निस्सानो), जो साथ चलता था

हाथी की मनमोहक चाल, किरणों के साथ

वह प्रकाश जो चंद्रमा और सूर्य को भी मात देता है।

रक्षक अत्यंत बुद्धिमान, अत्यंत वीर।

ध्यान की महान शक्ति से युक्त, सर्वोच्च

वह शक्तिशाली था और घोर अंधकार को दूर करने वाला था।

तीनों लोकों के उस प्रमुख ने नेतृत्व किया

संसार (विनयं) अनेक नेतृत्व योग्य लोग,

कभी-कभी; स्वयंजागृत ऋषि जो जानते थे

प्राणियों की इच्छा ने सत्य सिखाया

(धम्म)।

विजेता ने जनसमूह को प्रसन्न कर दिया।

उस सर्वांगीण ध्यानमग्न भिक्षु की प्रशंसा करते हुए,

ध्यानमग्न था (झायिं) आनंद ले रहा था

झाना, वीर, शांत और अविचलित।

उस समय मैं हंसवती में एक ब्राह्मण था।

जो समुद्र के दूसरे किनारे तक पहुँच चुके थे

वेदों का; सत्य (धम्म) को सुनकर

मुझे खुशी हुई और मैंने विशेष रूप से इसके लिए प्रार्थना की।

फिर विजेता, स्पष्ट नेता।

उन्होंने पुरोहितों के बीच अपनी भविष्यवाणी करते हुए कहा:

"हे ब्राह्मण! प्रसन्न हो जाओ; तुम्हें लाभ होगा।"

आपकी मनचाही वस्तु, जो आपको प्रसन्न करेगी

दिमाग।

"एक लाख युगों (कप्पा) के बाद, वहाँ

वह संसार में एक गुरु बन जाएगा, जिसका नाम होगा

गोतमा, कुल से उच्च कुल का, परिवार में जन्मा।

ओक्काका.

"तुम गुरु के शिष्य बनोगे,

रेवता के नाम से जाना जाने वाला, उसका प्रिय पुत्र

धर्म द्वारा आध्यात्मिक रूप से सृजित, उत्तराधिकारी

उनकी शिक्षाएँ (धम्मेसु)।"

उस अच्छे कार्य के कारण,

स्वैच्छिक आत्मनिर्णय भी (ceta-

(नापणिधि) मैं स्वयं तावतिंसा गया था

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया। अब जब मेरे पास था

अपने अंतिम जन्म में, मेरा जन्म हुआ था

कोलिया शहर में, योद्धाओं के एक परिवार में

समृद्धि, धन और सामर्थ्य से संपन्न राजकुमार

प्रचुर धन। जब बुद्ध ने शिक्षा दी

कपिलवस्तु में सत्य (धम्म) को जानकर, मैं बन गया

सुगाता से अत्यंत प्रसन्न होकर मैं एक

भिक्षु को बेघर जीवन व्यतीत करना होगा।

मुझे इस बारे में कई संदेह थे।

और युगों-युगों तक (कप्पा)। वे सभी

बुद्ध ने मुझे शिक्षा देने के बाद मेरे सभी संदेह दूर कर दिए।

सबसे उत्तम सत्य (धम्म)

इसलिए, मैं पार करने वालों में से एक बन गया।

संसार के सागर के ऊपर, और मैं जीवन यापन करता रहा।

तब ध्यान के आनंद में मग्न हो जाओ;

मुझे देखकर बुद्ध ने मुझसे यह कहा।

मुझे।

चाहे जो भी संदेह हो, चाहे इधर हो या उधर,

अपने स्वयं के ज्ञान के संबंध में या

दूसरों का ज्ञान, वे जो समर्पित हैं

झाना और उत्साही, उन सभी को हटा दो

क्योंकि वे अपने पवित्र आचरण में स्वयं को ढालते हैं

जीवन (ब्रह्मचर्य)।

एक लाख युगों में किया गया कार्य,

मुझे यहाँ इसका फल दिखाई देता है। मैंने सब कुछ जला दिया।

मेरी भ्रष्टता (किलेसा) गति के समान है

सही ढंग से छोड़े गए तीर का।

इसके बाद, मुझे प्रसन्न होते देख

ध्यान में, बुद्ध, अत्यंत बुद्धिमान, ऋषि

जो दुनिया के छोर तक गए थे, उन्होंने पहचान लिया

मैं ध्यान साधना करने वाले भिक्षुओं का प्रमुख था।

मेरे अनेक दुराचार जलकर राख हो गए थे, मेरा सारा अस्तित्व।

इसे पूरी तरह से खत्म कर दिया गया था। मैं मुंहासों से मुक्त जीवन जी रहा हूँ।

जैसे कोई हाथी अपनी बेड़ियाँ तोड़कर भाग गया हो।

वास्तव में, यह मेरी उपस्थिति में सद्भावना का भाव था।

मेरे बुद्ध। त्रिविध ज्ञान (विज्जा) प्राप्त हुआ था।

तदनुसार मुझे प्राप्त हुआ है; बुद्ध का

निर्देश का पालन किया जा चुका था।

मेरे द्वारा परिकल्पित चार गुना विश्लेषणात्मक

ज्ञान (पटिसमभिदा) अष्टांग मुक्ति-

विमोक्खा (शन) और छह प्रकार के उच्च ज्ञान;

बुद्ध के उपदेश (शासन) का प्रसार हो चुका था।

बाहर।

लेकिन महान थेरा ने अपने कर्तव्यों का निर्वाह करने के बाद, अब इस बात पर विचार किया कि वे सर्वथा संशयमुक्त हैं, जबकि पूर्व में उनका मन लंबे समय तक संदेह से घिरा हुआ था। उन्होंने मन ही मन कहा, "मेरे गुरु की शिक्षा की शक्ति अद्भुत है, जिसके कारण मैं वर्तमान में संशयमुक्त हूँ और आंतरिक रूप से शांत हो गया हूँ।" उनके मन में बुद्ध के प्रति बहुत आदर उत्पन्न हुआ और थेरा ने "पञ्ञं इमं पस्सा (इस ज्ञान को देखो)" श्लोक का पाठ किया, जिसमें उन्होंने भगवान बुद्ध के ज्ञान (पञ्ञा) की प्रशंसा की।

3. वहाँ, 'पञ्ञा' शब्द का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए: वह विशेषताओं को जानता है; वह विशेषताओं के माध्यम से बताता है; इस प्रकार, यह भी 'पञ्ञा' (ज्ञान) है। वह शिष्टाचार (या विशेषताओं) को जानता है कि कैसे उसे अच्छे कर्मों से लेकर सत्यों (धम्म) के समूह (खन्ध) से शुरू करके, प्रवृत्ति, पूर्वाग्रह, आचरण, मुक्ति आदि जैसी विशेषताओं में, नेतृत्व योग्य प्राणियों को शिक्षा देनी चाहिए; वह स्वाभाविक रूप से उचित रूप से प्रवेश करता है; वह उन विशेषताओं के माध्यम से भी बताता है; इस प्रकार, अर्थ है। यहाँ वास्तव में, गुरु के शिक्षण के ज्ञान (ज्ञान) का तात्पर्य है; इसलिए, उन्होंने इस प्रकार कहा: "इमं (यह)" - अपने भीतर शिक्षण की सिद्ध शक्ति से विधि को समझने के दृष्टिकोण से, जो आमने-सामने था, उसे लेने के बाद। गुरु की शिक्षाओं का जो भी ज्ञान अग्रणी शिष्यों द्वारा विधि के

रूप में ग्रहण किया जाता है, उचित अंतर्दृष्टि वाला वह ज्ञान विधि के दृष्टिकोण से अपने क्षेत्र में अग्रणी शिष्यों द्वारा ही ग्रहण किया जाता है। इसलिए, धर्म के पूज्य सेनापति ने ऐसा कहा:— "पूज्यवर! शायद धर्म का सामान्य निष्कर्ष भी मुझे समझ आ गया है।"
अभिव्यक्ति:— "पस्सा (देखो)," का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए:— विस्मय की अवस्था में वह अनिश्चित रूप से (या वह ऐसा करता है), यहाँ तक कि अपने मन को भी संबोधित करता है; जैसे गंभीर उच्चारण करते हुए भगवान ने कहा: "इस संसार को देखो, जो अनेक प्रकार से अज्ञान से पराजित होकर, जो कुछ हो गया है उसमें प्रसन्न होकर, सर्वत्र अस्तित्व से विमुख न हो गया होता।"
अभिव्यक्ति तथागतनं का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए:— इसी प्रकार आने वाले (तथागत) लोगों के आने के अर्थ के कारण, (वह) भी इसी प्रकार आया था; अत: वास्तव में तथागत हैं; इसी प्रकार गए थे; अत: तथागत हैं; सत्य के प्रतीक के पास आए थे; अत: तथागत हैं; यथार्थ के दृष्टिकोण से सत्य (तथा) के स्वरूप (धम्म) में विशेष रूप से आत्मप्रबुद्ध हैं; अत: तथागत हैं; इसी प्रकार किए जाने के कारण वे तथागत हैं; अत्यधिक अर्थ के कारण वे तथागत हैं; अत: आठ परिस्थितियों में इस प्रकार, भगवान तथागत हैं। वे उस तरीके से आए थे, वे तथागत हैं; वे उस तरीके से गए थे; अत: तथागत हैं; वे सत्य के प्रतीक के पास गए थे; अत: तथागत हैं; वे वास्तविकताओं के पास आए थे; अत: तथागत हैं; इस प्रकार के; अत: तथागत हैं; इसी प्रकार घटित हुए थे; अतः वे तथागत हैं; वास्तविकताओं के साथ आए थे; अतः वे तथागत हैं; इसी प्रकार जाने की अवस्था से वे तथागत हैं; अतः वे तथागत हैं; इस प्रकार, आठ परिस्थितियों में भी, भगवान तथागत हैं; यहाँ यह संक्षेपण है। हालाँकि, इसका अर्थ उदाना की टीका और परमत्थदीपनी के इतिवुत्तक की टीका में वर्णित विधि से ही समझा जाना चाहिए।

अब, उनकी विशिष्ट और अद्वितीय बुद्धि को दर्शाने के लिए, इसे "अग्गियथा (अग्नि के समान)" कहा गया है। यथा अभिव्यक्ति उस दृष्टांत की अवस्था को इंगित करती है; पज्जलितो अभिव्यक्ति तुलना के लिए उपयुक्त वस्तु (उपमेय्य) के साथ संयोजन का संकेत है; निसिथे (मध्यरात्रि में) अभिव्यक्ति क्रिया के क्रियान्वयन को दर्शाती है। नीचे इसका अर्थ दिया गया है: — जैसे, जब मध्यरात्रि में चार टुकड़ियों वाली सेना अंधकार में उपस्थित होती है, तो किसी ऊँचे स्थान पर प्रज्वलित अग्नि उस स्थान के अंधकार को दूर कर देती है, ठीक उसी प्रकार, तथागतों की इस बुद्धि को शिक्षा की बुद्धि के रूप में देखा जा सकता है, जो अनुशासन के योग्य प्राणियों के संशय के अंधकार को पूरी तरह से दूर करती है और उन्हें पूर्णतः अनुशासित (वेनेय्य) करती है। चूंकि तथागत अपने उपदेशों की सुंदरता से प्राणियों को ज्ञान का प्रकाश प्रदान करते हैं; इस प्रकार, आलोकदा (प्रकाशदाता)। वे बुद्धि से निर्मित आँख (पञ्ञा) भी प्रदान करते हैं; इस प्रकार, चक्खुदादा, आँख देने वाला। संदेह दूर करने के निकटतम कारण को बताने के बाद, इन दोनों को भी इंगित करने के लिए उन्होंने इस प्रकार कहा:— "ये आगतानं विनयंति कंखं, जो आए हुए लोगों के संदेह को दूर करते हैं।" ये का अर्थ है तथागत; आगतानं का अर्थ है अनुशासन के अधीन और बाहर ले जाए जाने योग्य प्राणी (वनेय्य) जो उनकी उपस्थिति में आए थे; कंखं का अर्थ है (सोलह आधारों पर संदेह, जैसे कि "क्या मैं वास्तव में अतीत में ऐसा हुआ था?" से शुरू होने वाली विधि का घटित होना, और आठ आधारों पर संदेह, जैसे कि "वह बुद्ध में संदेह करता है, वह धर्म में संदेह करता है।" विनयंति का अर्थ है कि वे शिक्षा की शक्ति से पूर्णतः दूर और नष्ट हो जाते हैं। अनुशासनात्मक नियमों (विनय) से संबंधित गंभीर पश्चाताप के रूप में माने जाने वाले संदेह भी उसी विनय द्वारा दूर हो जाते हैं।

दूसरी विधि: - जिस प्रकार मध्य रात्रि में प्रज्वलित तीव्र ज्वाला अपनी तेज रोशनी से ऊँचे स्थान पर विराजमान लोगों को प्रकाश देकर अंधकार को दूर करती है और समतल एवं असमान (या सम और विषम) भूमि को प्रकट करते हुए प्रकाश दाता बन जाती है; वहीं पास में खड़े लोगों को भी भूमि का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है, और क्योंकि प्रकाश की ज्वाला आँखों द्वारा किए जाने वाले कार्यों को प्रकट करती है, इसलिए वह आँखों की दाता है; ठीक उसी प्रकार तथागतों ने अपने सत्य (धर्म) के शरीर से दूर स्थित और समर्पित कर्तव्यों का पालन न करने वालों के भ्रम के अंधकार को अपनी प्रखर ज्ञान की ज्योति से दूर करके, समता और विषमता को शरीर की विषमता आदि के समान प्रकट करते हुए प्रकाश दाता बन जाते हैं; जो लोग निष्क्रिय अवस्था में रहे और जिन्होंने अपने भक्तिमय कर्तव्यों का पालन किया, उनमें आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (धम्मचक्खु) उत्पन्न करके, वे दृष्टि दाता बन जाते हैं। इन तथागतों के ज्ञान (ज्ञान) और बुद्धि (पञ्ञा) की श्रेष्ठता को देखो, जो उचित रूप से श्रेष्ठ मार्ग (अरीयमग्ग) को प्रेरित करके, मेरे समान उदार संदेहियों के संदेह को दूर करते हैं, जो अपने भाष्य क्षेत्र में आ चुके हैं और उसी स्वरूप में ढल चुके हैं; यही व्याख्या है। इस प्रकार, यह श्लोक थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) की भविष्यवाणी या व्याख्या (ब्याकरण) भी है, जो उनके संदेह के सागर को पार करने को प्रकट करता है। वास्तव में, जब ये थेरा एक साधारण भिक्षु (पुथुज्जन) थे, तब वे अपने प्रति उचित रूप से स्वीकार्य भेंटों (कप्पिया) के प्रति भी अत्यंत संशयपूर्ण थे, और संदेह में उदार होने के कारण, उन्हें स्पष्ट रूप से "कंखारेवत" (संदेही रेवत) के नाम से जाना जाता था; बाद में जब वे दोषमुक्त अरहंत बन गए, तब भी उन्हें इसी नाम से पुकारा जाता रहा। इसलिए, बुद्ध ने कहा: "आदरणीय कंखारेवत ने इच्छानुसार श्लोक का उच्चारण किया।" यही अर्थ कहा गया है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा कंखा रेवता का

तैयार है।

******

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(4): पुन्ना, मंटानिस का पुत्र

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (4) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
4. पुन्ण, मंतानियों का पुत्र
उनका पुनर्जन्म हमारे परम पूज्य बुद्ध के समय में, कपिलवस्तु (बुद्ध का जन्मस्थान) से कुछ ही दूरी पर स्थित दोनावत्थु नामक ब्राह्मण ग्राम में एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में हुआ था। वे बड़े कोंडञ्ञ के पुत्र थे, [1] और उनका नाम पुन्ञ रखा गया था। दीक्षा के सभी कर्तव्यों का पालन करने के बाद, उन्होंने भिक्षु के सर्वोच्च कर्तव्यों को प्राप्त करने के लिए अथक प्रयास किया। इसके बाद वे अपने चाचा के साथ कपिलवस्तु के आसपास के क्षेत्र को छोड़कर भगवान (बुद्ध) के निकट रहने चले गए। और साधना में पूर्णतः लीन होकर, वे कुछ ही समय बाद अरहंत (ज्ञानी) बन गए।

अब पुन्ण के 500 अनुयायी हो गए थे जिन्होंने संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया था)। और क्योंकि उन्होंने स्वयं [9] प्रवचन के दस आधार [2] प्राप्त कर लिए थे, इसलिए उन्होंने अपने अनुयायियों को तब तक उनका उपदेश दिया जब तक वे भी निपुण और अरहंत (प्रबुद्ध) नहीं हो गए। इस पर उन्होंने उनसे भगवान (बुद्ध) के पास ले जाने का अनुरोध किया। लेकिन उन्होंने उनके साथ जाना उचित नहीं समझा, इसलिए उन्होंने उनसे आगे जाने को कहा और उनके पीछे आने का वादा किया। वे सभी दस शक्तियों वाले भगवान के देशवासी थे, इसलिए वे राजगृह तक साठ योजन की दूरी तय करके गए और बांस के जंगल के महान विहार [3] में उन्हें पाया और उन्हें प्रणाम किया। अब, जब भिक्षु (भिक्षु) बुद्धों, परम पूज्यों के पास आते हैं, तो मैत्रीपूर्ण अभिवादन का आदान-प्रदान करना प्रथागत है। इसलिए परम पूज्य बुद्ध ने उनसे पूछा, 'हे भिक्षुओं, आशा है आप कुशल मंगल होंगे और सुखपूर्वक विश्राम किया होगा; आप कहाँ से आए हैं?' उन्होंने उत्तर दिया, 'हे प्रभु, आपके अपने देश से।' तब उन्होंने पूछा कि क्या कोई ऐसा भिक्षु है जो दस विषयों का ज्ञाता हो, और कहा, 'हे भिक्षुओं, मेरे ऐसे देशवासियों में से कौन है जो स्वयं सरल जीवनयापन करने वाला है, और सरल जीवन पर प्रवचन दे सकता है?' 'हे प्रभु, मंतानी के पूजनीय पुत्र, पुन्ण।'

और जब भगवान (बुद्ध) राजगृह से सावत्थी गए, तो पुन्ण भी वहाँ गए और सुगंधित कक्ष में [4] उन्हें धम्म का मार्ग सिखाया गया। सारिपुत्त उनसे मिलने की इच्छा से उनके पीछे-पीछे वन में गए, जहाँ वे भगवान (बुद्ध) के वचनों का ध्यान करने गए थे, और उन्हें एक वृक्ष के नीचे विश्राम करते हुए पाया। उन्होंने उन वचनों पर चर्चा की और एक-दूसरे से प्रसन्न हुए, पुन्ण ने रथ यात्रा के दृष्टांत से उनका हृदय जीत लिया।

अब भगवान (बुद्ध) ने पुण्ण को धम्म के उपदेश में भिक्षुओं का प्रमुख घोषित किया। [5] और एक दिन, भगवान (बुद्ध) के पास बैठकर, उन्होंने अपने द्वारा प्राप्त निर्वाण पर चिंतन करते हुए [10] सोचा: 'सचमुच मेरे और कई अन्य लोगों के लिए, जो दुःख के चक्र से मुक्त हैं, अच्छे लोगों के साथ संगति कितनी बड़ी सहायता है!' और उन्होंने आनंद और उत्साह के साथ यह श्लोक कहा:

[4] सब्भिरेव समासेत्थ पण्डितहत्थदस्सीभि॥
अट्ठौं महन्तं गम्भीरां दुद्दसां निपुणाअ अणुm̩॥
धीरा समाधिगच्छन्ति अप्पमत्ता विकक्खना' ति.॥ ॥

[4] निश्चित रूप से अच्छे साथी के साथ, उनके साथ

जो जानते हैं, जो समझते हैं, जो अच्छाई को देखते हैं। [6] अच्छाई महान है, गहरी है और देखना कठिन है,
सूक्ष्म और नाजुक रूप से सुंदर है, जिसमें
बुद्धिमान और बहादुर प्रवेश करते हैं, यहाँ तक कि वे
भी जो कठिन जीवन जीते हैं और उच्च दृष्टि प्राप्त करते हैं।

भिक्षु ने समझाया कि इस कथन (गथा) में उनकी सिद्धि की पुष्टि निहित है।

[1] भजन संहिता CCXLVI देखें। उनका पूरा नाम उन्हें LXX के पुन्ण से अलग करता है।

[2] अभिदानप्पदीपिका के अनुसार दस कथावत्थु हैं: सरल जीवन, संतोष, वैराग्य, पृथक्करण, प्रयास, नैतिकता, एकाग्रता, समझ, मुक्ति (निर्वाण), अंतर्दृष्टि सहित ज्ञान।

[3] सिस्टर्स देखें , पृष्ठ 81.

[4] जेतवन में बुद्ध की अपनी कुटिया। सिस्टर्स, पृष्ठ 11 देखें; जे.आर.ए.एस., 19.

[5] अंग., i. 23. भिक्षुओं (भिक्षुओं) की गवाही के बाद सारिपुत्त के साथ साक्षात्कार का वर्णन मज्झिमा ('रथविनीत सूत्र'), i. 146 ff. में किया गया है। उनके शिक्षण और प्रभाव की आगे की गवाही सांग्यी., ii. 156; iii. 105 f. में मिलती है।

[6] अत्था, सारिपुत्त के साथ चर्चा किया गया विषय।

1.1-4[4] श्लोक पर टिप्पणी

पुन्ण थेरा
सब्भिरेवा समासेथा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पुन्ण का श्लोक है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि दसबल पद्ममुत्तरा के प्रकट होने से भी पहले, इनका जन्म हंसवती नगर के एक अत्यंत धनी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। जब गुरु बुद्ध द्वारा सत्य (धम्म) का उपदेश दिए जा रहा था, तब धीरे-धीरे बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन वे बड़ी संख्या में लोगों के साथ मठ गए, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, और श्रोताओं के बीच में एक छोर पर बैठ गए। जब वे धम्म का उपदेश सुन रहे थे, तब उन्होंने देखा कि गुरु सत्य (धम्म) का उपदेश देने वालों में एक भिक्षु को सबसे आगे बैठा रहे हैं, और उन्होंने इस पर विचार किया: "भविष्य में मुझे भी ऐसा ही बनना चाहिए।" प्रवचन समाप्त होने पर, जब श्रोता उठ खड़े हुए, तो उन्होंने गुरु के पास जाकर उन्हें आमंत्रित किया, जैसा कि पहले बताया गया है, स्वयं एक बड़ा अर्पण (सक्कारा) किया और भगवान से कहा, "आदरणीय गुरुदेव! इस भक्तिमय कर्तव्य के पालन से मुझे किसी अन्य समृद्धि की इच्छा नहीं है; जिस प्रकार सात दिन पहले उस भिक्षु को धर्म के शिक्षकों में सर्वोच्च स्थान प्राप्त हुआ, उसी प्रकार भविष्य में किसी बुद्ध के युग में मुझे भी धर्म के शिक्षकों में प्रमुख बनने की कामना है।" इस प्रकार उन्होंने अपनी इच्छा व्यक्त की। गुरु ने भविष्य की दृष्टि से उनकी इच्छा की पूर्ति की स्थिति का पता लगाया और भविष्यवाणी की, "आने वाले समय में, एक लाख युगों (कप्पा) के बाद, गौतम नाम के बुद्ध प्रकट होंगे; उनके युग में, आप भिक्षु बनेंगे और धर्म के शिक्षकों में प्रमुख बनेंगे।"

अपने जीवनकाल में वहाँ अच्छे कर्म करने के बाद, उनका निधन हो गया। वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और एक लाख युगों (कप्पा) तक पुण्य और ज्ञान का संचय करते रहे। हमारे भगवान बुद्ध के समय में, उनका पुनर्जन्म थेरा अञ्ञासिकोण्डञ् के भतीजे के रूप में, एक अत्यंत धनी ब्राह्मण परिवार में, डोनावत्थु नामक ब्राह्मण गाँव में हुआ। उनके नामकरण के दिन, उनका नाम "पुण्" रखा गया। जब गुरु बुद्ध ने पूर्ण बुद्धत्व प्राप्त करने के बाद, धर्म के उत्कृष्ट चक्र का निरंतर संचालन करते हुए, धीरे-धीरे राजगृह पहुँचे और उस नगर में निवास करने लगे, तो उन्होंने, पुन्ञ, भिक्षु का रूप धारण किया और थेरा अञ्ञासिकोण्डञ् की उपस्थिति में उपसंपदा दीक्षा प्राप्त की। सभी प्रारंभिक कर्तव्यों को पूरा करने के बाद, उन्होंने कठोर परिश्रम (पधान) में स्वयं को समर्पित कर दिया और मन ही मन कहा, "मैं बुद्ध के समक्ष तभी जाऊँगा जब मैं भिक्षु के कर्तव्यों की सर्वोच्च ऊँचाई प्राप्त कर लूँगा।" वे अपने चाचा-थेरा के साथ गुरु के समक्ष नहीं गए, बल्कि कपिलवस्तु के आसपास भी वहीं रुके रहे। उन्होंने ऐसे कर्म किए जिससे वे ज्ञानपूर्वक सचेत हो गए, और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में लीन होकर शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अपदान में भी यही कहा गया है:

मैं एक शिक्षण पाठकर्ता और प्रतिबद्ध व्यक्ति हूँ

ज्ञान की स्मृति में (मन्त)

समुद्र के उस पार वाले किनारे पर चला गया

तीन वेद। मेरे शिष्यों द्वारा अनुसरण किया गया।

वह सबसे उत्कृष्ट पुरुषों के पास पहुंचा,

पद्ममुत्तरा, जगत के ज्ञाता,

बलिदान का उचित प्राप्तकर्ता

दान के बारे में, महान ऋषि ने मेरी घोषणा की।

संक्षेप में कार्य करें।

मैंने सत्य (धम्म) को सुनकर

मैंने गुरु को नमन किया, विदा ली-

दक्षिण (या दाईं ओर) की ओर मुख किए हुए, ऊपर उठाया हुआ

मैंने अपने जुड़े हुए हाथों को ऊपर उठाया। सुनने के बाद

संक्षेप में, मैंने दोहराया और बोला

जब मैंने ऐसा कहा, तो मेरे सभी विद्यार्थियों ने,

मेरी बात सुनकर, वे उनके साथ आ गए।

अपने स्वयं के तत्वों को दूर करने के बाद।

ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण से मेरा मन श्रद्धापूर्वक भर गया।

बुद्ध से प्रसन्न होकर मैंने संक्षेप में उपदेश दिया।

इसके अलावा और लेकिन इसी तरह विस्तार से।

मैं उन लोगों में से एक था जो सुपर- की विधि जानता था।

शुद्धतम का सत्य (अभिधम्म)

कथावत्थु (प्रवचनों का आधार);

सभी को स्पष्ट रूप से बता देने के बाद,

मैं मुंहासों से मुक्त जीवन जीता हूं।

आज से पांच सौ युग (कप्पा) पहले,

चार अच्छे भक्त, सात गुणों से संपन्न

चारों में विभिन्न प्रकार के रत्न पाए जाते थे।

द्वीप।

विश्लेषणात्मक ज्ञान के चार प्रकार,...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया है।

बाहर।

अच्छे कुल के वे पुत्र, जिन्होंने थेरा पुन्ण की उपस्थिति में भिक्षु दीक्षा ली थी, उनकी संख्या पाँच सौ थी। क्योंकि स्वयं थेरा ने शिक्षा के दस आधारभूत सिद्धांतों (कथावत्थु) को प्राप्त कर लिया था, इसलिए उन्होंने उन्हें भी दस आधारभूत सिद्धांतों (कथावत्थु) का उपदेश दिया। उनके मार्गदर्शन में स्थापित होकर, उन सभी ने अरहंत पद भी प्राप्त कर लिया। जब उन्हें पता चला कि उन्होंने स्वयं भिक्षु के रूप में किए जाने वाले सर्वोच्च कार्य को प्राप्त कर लिया है, तो वे अपने आध्यात्मिक गुरु के पास गए और इस प्रकार कहा: "आदरणीय गुरुदेव! हमने भिक्षु के रूप में किए जाने वाले सर्वोच्च कार्य को प्राप्त कर लिया है; हमने दस आधारभूत सिद्धांतों (कथावत्थु) को भी प्राप्त कर लिया है; अब समय आ गया है कि हम दशबल से मिलें।" उनकी बातें सुनकर थेरा ने मन ही मन सोचा: "गुरुजी जानते हैं कि मैंने दस शिक्षा सिद्धांतों (कथावत्थु) को प्राप्त कर लिया है; मैं सत्य (धम्म) का उपदेश तो देता हूँ, लेकिन स्वयं को इन दस शिक्षा सिद्धांतों से मुक्त नहीं कर पाता; जब मैं जाऊँगा, तो ये सभी भिक्षु मेरे साथ चलेंगे; परन्तु इस प्रकार भीड़-भाड़ वाली सभा में एक-दूसरे से मिलने के लिए दशबाला से मिलना मेरे लिए उचित नहीं है; अब इन्हें जाकर देखने दो।" फिर उन्होंने उन भिक्षुओं से कहा: "मित्रों! आप आगे जाकर तथागत के दर्शन कीजिए; मेरे संदेश के साथ उनके चरणों में प्रणाम कीजिए; मैं भी उसी मार्ग से आ रहा हूँ जिससे आप आए थे।" वे सभी थेरा, जो दशबाला के जन्मस्थान के निवासी थे, जो सभी रोगमुक्त थे, जिन्होंने दस शिक्षा सिद्धांतों (कहतावथु) को प्राप्त किया था, उन्होंने अपने आध्यात्मिक गुरु (उपज्जाया) की सलाह को विधिवत स्वीकार किया, थेरा को प्रणाम किया, अपनी क्रमिक यात्रा पर आगे बढ़े, साठ मील (योजना) की दूरी तय की और राजगृह में स्थित महान वेलुवन (बांस के उपवन) मठ में पहुँचे, दशबाला के चरणों में प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए।

यह वास्तव में बुद्धों की प्रथा है कि वे अपने अतिथि भिक्षुओं का हार्दिक अभिवादन करते हैं। इस प्रकार, वे मधुर वार्तालाप करते हुए पूछते हैं, "हे भिक्षुओं! आप कैसे हैं?" और फिर आगे पूछते हैं, "हे भिक्षुओं! आप कहाँ से आए हैं?" जब भिक्षुओं ने बताया कि वे अपने जन्मस्थान से आए हैं, तो बुद्ध ने दस सिद्धांतों (कथावत्थु) के ज्ञाता भिक्षु के बारे में पूछा, "हे भिक्षुओं! वास्तव में, अपने ही जन्मस्थान के ब्रह्मचारी साथी भिक्षुओं में से कौन इस प्रकार निपुण है? अर्थात्, 'स्वयं अल्प इच्छाओं वाले होकर वे भिक्षुओं को अल्प इच्छाओं का उपदेश देते हैं'?" उन्होंने उन्हें यह सूचना भी दी: "आदरणीय गुरुदेव! ये मंतानी के पुत्र, आदरणीय पुन्ण हैं।" यह सूचना सुनकर आदरणीय सारिपुत्त थेरा के दर्शन के लिए उत्सुक हो गए। तब गुरुराजगृह से सावत्थी चले गए। दशबल के वहाँ पहुँचने की सूचना पाकर थेरा पुन्ण भी वहाँ यह कहते हुए गए, "मैं गुरुदेव के दर्शन करूँगा।" वे तथागत के पास पहुँच गए और उनके सुगंधित कक्ष में प्रवेश कर गए। गुरुदेव ने उन्हें धर्म का उपदेश दिया। थेरा ने धर्म को सुना, दशबल को प्रणाम किया और एकांत ध्यान करने के लिए घने वन (अंधवन) में चले गए तथा एक वृक्ष के चरणों में दिनभर विश्राम किया।

थेरा सारिपुत्त ने भी उनके आगमन की सूचना पाकर ध्यानपूर्वक आगे देखा, अवसर का सदुपयोग किया, वृक्ष के चरणों में बैठे हुए व्यक्ति के पास पहुँचे, थेरा से हार्दिक अभिवादन किया और उनसे सात प्रकार की पवित्रता के बारे में पूछा। थेरा ने भी पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देते हुए रथ-सवारी के उदाहरण से प्रश्नकर्ता को प्रसन्न किया; दोनों ने एक-दूसरे की कही हुई बातों की सराहना की। इसके बाद, भिक्षुओं के बीच में बैठे गुरु ने थेरा को धर्म के शिक्षकों में सर्वोपरि स्थान देते हुए कहा: "हे भिक्षुओं! यह मेरे धर्म के शिक्षकों में श्रेष्ठ शिष्य हैं, अर्थात् पुण्ण।" एक दिन अपनी मुक्ति (विमुक्ति) की समृद्धि पर विचार करने के बाद, वे अत्यंत प्रसन्न और आनंदित हो उठे और मन ही मन कहने लगे: "गुरु पर निर्भर रहने से, मैं और अनेक अन्य प्राणी जन्म-जन्म के चक्रों के दुख (दुक्खा) से स्पष्ट रूप से मुक्त हो गए हैं; भले लोगों की सेवा करना वास्तव में बहुत लाभकारी है।" उन्होंने "सभिरेव समासेथा" (भले लोगों के साथ रहो) से शुरू होने वाले श्लोक का उच्चारण किया, उत्साह या उमंग (पीति) की गति को कम करते हुए गंभीर स्वर में कहा।

4. यहाँ 'सब्भिरेव' शब्द का अर्थ है 'अच्छे लोगों के साथ भी'। यद्यपि यहाँ अच्छे लोगों से तात्पर्य बुद्ध आदि जैसे श्रेष्ठ (आर्य) लोगों से है। वास्तव में, उन्हें 'सन्तो सप्पुरिसा' (अच्छे लोग) कहा जाता है, विशेष रूप से इसलिए क्योंकि उन्होंने असत्यता का पूर्णतः त्याग करके अच्छे धर्म में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया था और इसलिए भी क्योंकि उनकी उत्कृष्टता के साथ-साथ उनकी प्रशंसा भी की जाती है। 'समासेथा' का अर्थ है 'साथ रहना', 'साथ रहना': व्यक्ति उनकी सेवा करते हुए, उनकी बातों को ध्यानपूर्वक सुनते हुए, और उनके चिंतन के चिन्ह (दिट्ठानुगति) का अनुसरण करते हुए सह-निवासी बन जाता है; यही अर्थ है। 'पण्डिते हत्थादस्सिभि' उनकी प्रशंसा को दर्शाता है। 'पण्डा' को 'ज्ञान' (पञ्ञा) कहा जाता है; यह ज्ञान इन लोगों में भली-भांति विकसित हुआ है; अतः, 'पण्डित', बुद्धिमान लोग। इसी कारण वे लाभ को अपने स्वयं के लाभ के रूप में दृढ़तापूर्वक देखते हैं; अतः, वे अत्थादस्सिनो (लाभ के द्रष्टा) हैं। आपको उन बुद्धिमान लोगों के साथ रहना चाहिए जो लाभ के द्रष्टा हैं। यदि पूछा जाए क्यों? क्योंकि वे बुद्धिमान और अच्छे लोग हैं, इसलिए वे या उनकी सेवा करने वाले, कल्याण के निश्चित संवर्धक होने के कारण और उनके शांत स्वभाव के कारण, तथा श्रेष्ठ मार्ग (मग्ग) के ज्ञान के कारण, अत्थ (लाभ) हैं; महान गुणों और शांति (या अच्छाई) के कारण वे महान (महान) हैं; अथाह होने के कारण और उनके चरागाह गहन ज्ञान होने के कारण वे गंभीर (गहन) हैं; क्योंकि वे नीच इच्छाओं वाले लोगों द्वारा देखे नहीं जा सकते और क्योंकि उन्हें दूसरों द्वारा भी देखना मुश्किल है, इसलिए वे दुद्दसं (देखने में कठिन) हैं। क्योंकि उनका चरागाह सूक्ष्म ज्ञान है, क्योंकि उन्हें देखना कठिन है, और क्योंकि उनका स्वभाव कोमल और सूक्ष्म है, इसलिए वे निपुण हैं; सूक्ष्मता के कारण भी, वे सूक्ष्म (सुखम) हैं, इसलिए वे परमाणु (अणु) हैं; वैकल्पिक रूप से, परम अर्थ के स्वभाव के कारण, स्थिर महत्व के कारण यह कल्याणकारी है; महानता के गुण के कारण, श्रेष्ठ (आर्य) अवस्था के निर्माण के कारण यह महान है; अस्पष्ट स्वभाव के कारण यह गंभीर है; इसे देखना कठिन है, आसानी से नहीं देखा जा सकता; इसलिए, दुद्दसम् (देखने में कठिन); गहराई के कारण इसे देखना कठिन है, देखने में कठिन होने के कारण यह गहनर है; इस प्रकार, यह चार प्रकार का आर्य सत्य है। विशिष्ट रूप से, निपुणं अणुं (सूक्ष्म और परमाणु) दुखों के निवारण (निरोध) का सत्य है; इस प्रकार, इस तरह से, धीरा समाधिगच्छन्ति (बुद्धिमान लोग चार प्रकार के आर्य सत्य को प्राप्त करते हैं); दृढ़ता (धीति) से युक्त होने के कारण वे धीरा (दृढ़ता से बुद्धिमान लोग) हैं; चार प्रकार के आर्य सत्य पर मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) में स्वयं को लीन करने के बाद, वे उचित रूप से अपनी प्राप्ति करते हैं। अप्पमत्ता अभिव्यक्ति का अर्थ है:—हर जगह उत्सुकतापूर्वक सचेत रहते हुए, परिश्रम की उचित प्राप्ति (पटिपत्ति) को पूरा करते हुए। विचक्खण अभिव्यक्ति का अर्थ है: — वे चतुर और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में पारंगत हैं। इसलिए आपको अच्छे लोगों के साथ ही रहना चाहिए; यही व्याख्या है। वैकल्पिक रूप से, यह अभिव्यक्ति: पंडितेहत्थादस्सीभि; यही अपादान कारक (निस्साक्क) है। क्योंकि कल्याणकारी बुद्धिमान द्रष्टाओं के प्रवर्तक (समुदायभूत) बनने के कारण, दृढ़ बुद्धिमान, परिश्रमी और विवेकशील (विचक्खण) लोग स्वयं ही महान आदि गुणों का लाभ प्राप्त करते हैं; इसलिए आपको उपर्युक्त अच्छे लोगों के साथ ही रहना चाहिए; यही संबंध है। इस प्रकार, यह वह श्लोक भी था जो थेरा की उचित अंतर्दृष्टि (पटिवेध) को स्पष्ट करके थेरा के अरहंतत्व की व्याख्या करता है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा पुन्ण का

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(5): डब्बा (मल्लों का)

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (5) ------>>>> अगला

5. डब्बा [1] (मल्लों का)
उनका जन्म अनुपिया में मल्ल वंश के एक व्यक्ति के परिवार में हुआ था। [2] सात वर्ष की आयु में उन्होंने भगवान (बुद्ध) के दर्शन किए, जब वे उनके देश और घर आए थे। वे इतने मोहित हुए कि उन्होंने अपनी दादी से, जिनकी माता का उनके जन्म के समय ही निधन हो गया था, [3] पूछा कि क्या वे भगवान (बुद्ध) के मार्गदर्शन में संसार त्याग कर संन्यास ले सकते हैं। उनकी दादी उन्हें भगवान (बुद्ध)

के पास ले गईं, जिन्होंने एक भिक्षु को उन्हें संन्यास की दीक्षा देने के लिए कहा। और उस बालक ने, जिसके भीतर अतीत के कर्मों और आकांक्षाओं का फल भोग रहा था, अपने बाल कटवाने के दौरान ही चारों मार्ग एक-एक करके प्राप्त कर लिए।

[11] और जब भगवान (बुद्ध) मल्लाओं के देश से राजगृह के लिए रवाना हुए, तो दब्बा, एकांत ध्यान करते हुए और भिक्षु संघ की सेवा में अपना शरीर समर्पित करने की इच्छा रखते हुए, यह विचार किया कि वह रात्रि आवास और भोजन दोनों की व्यवस्था कर सकते हैं। भगवान (बुद्ध) ने उनके ऐसा करने की स्वीकृति दी, और इसमें उनकी सफलता, और इसमें उनकी अलौकिक शक्ति, अपनी चमकती उंगली से भिक्षुओं को उनके आवासों तक प्रकाश पहुँचाने का वर्णन पाली कथा में किया गया है। [4]

लेकिन मेत्तिया और भूममजक का अनुसरण करने वाले भिक्षुओं द्वारा उन्हें बर्बाद करने के उद्देश्य से किए गए निराधार मानहानि [5] के बाद, भिक्षु के संघ द्वारा निंदा किए जाने पर, भिक्षु ने दूसरों के प्रति अपनी सद्गुणी करुणा के प्रति सचेत होकर यह श्लोक कहा:

[5] यो दुद्दामियो दामेना दंतो दब्बो संतुसिटो वितिणकाकोन्खो॥
विजितावि आपेताभेरवो हि दब्बो सो परिणिब्बुतो चितत्तो' ति.॥॥

इत्थं सुदां अयस्मा दब्बो थेरो गाथां अभिसित्था' ति.॥॥

[5] कभी वश में करना कठिन था, वश में करने से अब
डब्बा वश में हो गया है, संदेह से मुक्त, संतुष्ट, शांत।
अब डब्बा विजेता है, और भय से रहित है; वह
परिपूर्ण [6] है और दृढ़ता में अडिग है।

इस प्रकार पूज्य भिक्षु डब्बा ने अपना वचन (गाथा) कहा।

[1] सी.एफ. नीचे, श्लोक 1218। इस प्रतिष्ठित भिक्षु पर, विनय ग्रंथ भी देखें, iii। 4-18; जातक, 1.21; उदान, viii. 9; आंग. निक., 23.

[2] शाब्दिक रूप से, मल्ल वंश के एक (राजा) राजा, स्वतंत्र कुलों का एक संघ, जिसे दो महान चीनी तीर्थयात्री इतिहासकारों ने बुद्ध के अपने कुल के पूर्व में पर्वतीय ढलानों पर स्थित किया था।

[3] टीका परंपरा के अनुसार, उनके जन्म से पहले।

[4] वत्थु-पलियान - अर्थात, खंडका चतुर्थ में। विनय ग्रंथ देखें , iii. 4 एफएफ.

[5] आयरलैंड, पृ. 10-18.

[6] परिनिर्वाण। इस पर धम्मपाल टिप्पणी करते हैं: 'दो परिनिर्वाण हैं - दुर्गुणों का परिनिर्वाण (किलेसा, "दस दुख" या "भ्रष्टाचार के आधार"; मेरी बौद्ध मनोवैज्ञानिक नैतिकता, पृष्ठ 327 आदि देखें), जो निर्वाण का तत्व है, जिसमें जीवन का शेष सार मौजूद है; और खन्धों (व्यक्तित्व के कारक) का परिनिर्वाण , जो उस शेष के बिना निर्वाण का तत्व है। यहाँ पूर्व प्रकार का तात्पर्य है, क्योंकि मार्ग द्वारा उन सभी चीजों का पूर्णतः निवारण किया गया है जिन्हें निवारण किया जाना चाहिए।' तुलना करें दर्शन का संकलन, पृष्ठ 108: मेरा बौद्ध धर्म, पृष्ठ 191।

1.1-5[5] श्लोक पर टिप्पणी

डब्बा थेरा
यो दुद्दामियो से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा दब्बा का श्लोक है। इसका उद्गम क्या है? इनका भी जन्म बुद्ध पद्ममुत्तरे के समय हंसावती नगर के एक पारिवारिक घर में हुआ था। वयस्क होने पर, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, वे सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनते रहे, उन्होंने देखा कि गुरु भिक्षुओं के सोने-बैठने की व्यवस्था करने वालों में एक भिक्षु को सबसे आगे रखते हैं। उन्होंने भक्तिपूर्वक अपने कर्तव्यों का पालन किया, उस पद की आकांक्षा की, गुरु द्वारा भविष्यवाणी की गई, अपने जीवनकाल तक अच्छे कर्म किए, देवताओं

और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और उस समय भिक्षु बने जब दशबल कस्सपा का युग समाप्त हो रहा था (ओसक्कना)। उस समय, उनके साथ छह अन्य लोग भी थे; इस प्रकार, सात भिक्षुओं ने एकमत होकर, दूसरों को शासन के नियमों का अनादर करते देखकर आपस में कहा: "अब हम क्या करें? एक कोने में भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करने के बाद दुख का अंत करें।" उन्होंने एक सीढ़ी लगाई, एक ऊँची पहाड़ी की चोटी पर चढ़े और आपस में कहा: "अपनी मानसिक शक्ति का निश्चय करने के बाद सीढ़ी को नीचे गिरा दें; जीवन के प्रति आसक्ति को त्याग दें; बाद में पश्चाताप न करें।" वे सब एकमत होकर सीढ़ी को नीचे गिरा दिया, आपस में सलाह करते हुए कहा: "हे मित्रों! तुम्हें परिश्रम करना चाहिए," अपने मनपसंद स्थानों पर बैठ गए और भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करने में जुट गए।

वहाँ, पाँचवें दिन एक थेरा ने अरहंत पद प्राप्त किया और मन ही मन कहा, "मेरा कर्तव्य पूरा हो गया, अब मैं इस स्थान पर क्या करूँ?", फिर वे उत्तरकुरु (उत्तरी द्वीप) से भिक्षा लेकर आए और बोले, "हे मित्रों! कृपया यह भिक्षा ग्रहण करें; भिक्षा जुटाने का कर्तव्य मेरा है; आप सब अपना-अपना कर्म करें।" उन्होंने कहा, "मित्र! यह कैसे संभव है? सीढ़ी गिराने पर क्या हम ऐसा कहते हैं: 'जो भी सबसे पहले धम्म का दर्शन करे, वही भिक्षा लाए, बाकी सब उसके द्वारा लाई गई भिक्षा ग्रहण करने के बाद भिक्षु का कर्तव्य पूरा करेंगे?'" उनके प्रश्न का उत्तर नकारात्मक था। उन्होंने थेरा के प्रस्ताव को यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया, "तुमने अपने पूर्व कर्म से लाभ उठाया है, हम भी जन्म-जन्म के चक्र को समाप्त करने में सक्षम होंगे। तुम यहाँ से चले जाओ।" थेरा उन्हें समझाने में असमर्थ रहे, इसलिए उन्होंने एक सुविधाजनक स्थान पर अपना भिक्षा भोजन किया और चले गए। एक अन्य थेरा ने सातवें दिन अनागामी (अनगामी) का फल प्राप्त किया और वहाँ से देह त्यागने के बाद, उनका पुनर्जन्म ब्रह्मलोक (शुद्धवास) में हुआ। अन्य थेराओं ने वहाँ से देह त्यागने के बाद, बुद्ध काल (बुद्धंतरं) के लिए देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते हुए विभिन्न परिवारों में पुनर्जन्म लिया। उनमें से एक का पुनर्जन्म गांधार राज्य के तक्कशिला नगर में राजपरिवार में हुआ; दूसरे का पुनर्जन्म मझंतिका राज्य की एक विचरणशील तपस्वी महिला के गर्भ में हुआ; तीसरे का पुनर्जन्म बाहिया राज्य के एक जमींदार के घर में हुआ; चौथे का पुनर्जन्म एक नन आश्रम में हुआ।

इस थेरा डब्बा का जन्म मल्ल राज्य के अनुपिया नगर में एक मल्ल राजा के घर हुआ था। उनकी माता प्रसव पीड़ा से पहले ही मर गईं। उनके लोग उनके शव को श्मशान ले गए, लकड़ियों के ढेर पर रखा और उसमें आग लगा दी। आग की लपटों से उनके पेट की श्लेष्म झिल्ली दो बार गर्म हुई। अपने पुण्य कर्मों के फलस्वरूप शिशु उछल पड़ा और एक मजबूत लकड़ी के खंभे (डब्बाथम्भ) पर गिर पड़ा। उन्होंने शिशु को उठाया और उसकी नानी को सौंप दिया। नानी ने उसका नाम "डब्बा (मजबूत लकड़ी)" रखा, क्योंकि मजबूत लकड़ी के खंभे (डब्बाथम्भ) पर गिरने के बाद ही उसे जीवन प्राप्त हुआ था। जब वह सात वर्ष के थे, तब गुरु, भिक्षुओं के एक दल से घिरे हुए, मल्ल राज्य में अपने भ्रमण पर निकले और अनुपिया के आम के बाग में रहने लगे। छोटे बालक डब्बा ने गुरु को देखा और उन्हें देखकर अत्यंत प्रसन्न होकर भिक्षु बनने की इच्छा उत्पन्न की और अपनी दादी से अनुमति मांगते हुए कहा, "मैं दशबाला के समक्ष भिक्षु बनना चाहता/चाहती हूँ।" "बहुत खूब, मेरे प्यारे!" कहते हुए उसकी दादी डब्बा को साथ लेकर गुरु के पास गईं और बोलीं, "आदरणीय गुरुजी! कृपया इस बालक को भिक्षु दीक्षा दें।" गुरु ने एक भिक्षु को निर्देश देते हुए कहा, "हे भिक्षु! इस बालक को सामणेर बनने की दीक्षा दो।" उस थेरा ने गुरु का वचन सुनकर, युवा दब्बा को दीक्षा देते हुए, शरीर के उन भागों पर मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) के बारे में बताया, जिनमें से पाँचवाँ भाग मदिरा है। पूर्व कर्म (पुबहेतु) से संपन्न और विशेष समर्पित दान करने वाले उस बालक (सत्ता) ने अपने बालों की लटें मुंडवाते समय ही पवित्रता (सोतापत्ति) के प्रथम चरण की सिद्धि प्राप्त कर ली। बालों की दूसरी लटें मुंडवाते ही उसने एक बार लौटने वाले (सकदागामी) के द्वितीय चरण की सिद्धि प्राप्त कर ली; तीसरी लटें मुंडवाते ही उसने मानव जगत में न लौटने (अनगामी) की सिद्धि प्राप्त कर ली; हालाँकि, उसके सभी बाल मुंडवाने के बाद न तो उसने अरहंतत्व की सिद्धि की कल्पना की और न ही उससे पहले। गुरु ने मल्ल राज्य में अपनी इच्छानुसार निवास करने के बाद, वहाँ से चले गए। राजगृह में जाकर वे बांस के वन (वेलुवन) में निवास करने लगे।

वहाँ, मल्ला के पुत्र पूज्य दब्बा, जो अपने कर्तव्यों के निर्वाह के बाद एकांतवास में चले गए थे, पुरोहितों की सेवा में अपना शरीर समर्पित करने की इच्छा से प्रेरित होकर इस प्रकार सोचने लगे: "यदि मैं पुरोहितों के लिए सोने-बैठने की व्यवस्था करूँ और विशेष रूप से उनके लिए भोजन का प्रबंध करूँ तो कैसा रहेगा?" वे गुरु के समक्ष गए और अपने इस सर्वांगीण इरादे के बारे में उन्हें बताया। गुरु ने उनका आभार व्यक्त किया और उनके द्वारा पुरोहितों के लिए सोने-बैठने की व्यवस्था करने और विशेष रूप से भोजन का प्रबंध करने की स्वीकृति दी। तब गुरु ने सात वर्ष की आयु में ही उन्हें पूर्ण भिक्षु बना दिया और दीक्षा देते हुए कहा: "यह दब्बा, यद्यपि अभी छोटा है, फिर भी उसने उच्च पद प्राप्त कर लिया है। पूर्ण भिक्षु बनने के समय से ही, थेरा ने राजगृह पर निर्भर रहने वाले सभी भिक्षुओं के लिए सोने और बैठने की व्यवस्था की; उन्होंने उनके लिए विशेष भोजन की व्यवस्था भी की। उनके द्वारा सोने और बैठने की व्यवस्था करने की बात सभी दिशाओं में इस प्रकार प्रसिद्ध हो गई: "कहा जाता है कि मल्ला के पुत्र दब्बा ने एक ही स्थान पर सभी प्रकार के भिक्षुओं के लिए सोने और बैठने की व्यवस्था की; उन्होंने पास और दूर दोनों जगह के लिए उपयुक्त व्यवस्था की; वे अपनी जादुई शक्तियों से उन लोगों का मार्गदर्शन करते थे जो चल नहीं सकते थे।"

फिर, उचित या अनुचित किसी भी समय, भिक्षु उनसे विशेष रूप से सोने और बैठने की व्यवस्था करने के लिए कहते थे: “हे मित्र! कृपया जीवकम्म (जीवन-कार्य) उपवन में हमारे लिए आवास तैयार करें; मद्दकुच्ची में हमारे लिए; मिगदया हिरण उद्यान में हमारे लिए।” और वे उनकी जादुई शक्ति को देखते हुए चले जाते थे। वह थेरा भी अपनी जादुई शक्तियों से अपने मन से निर्मित शरीर को विशेष रूप से तैयार करने के बाद, प्रत्येक वरिष्ठ भिक्षु को अपने समान एक-एक भिक्षु देते थे, अपनी जलती हुई उंगली के प्रकाश में आगे जाते थे और कहते थे: “यह पलंग है, यह गद्दी है” इत्यादि, सोने और बैठने की व्यवस्था करते थे और वापस अपने निवास स्थान पर लौट आते थे। यह संक्षेप में है; हालाँकि, विस्तृत रूप से यह कथा पाली ग्रंथों में मिलती है। गुरु ने इस बात को एक उपाख्यान बनाकर, बाद में आर्यों की भीड़ के बीच बैठकर, थेरा को सोने-बैठने की व्यवस्था करने वालों में सबसे आगे रखते हुए कहा:— “हे भिक्षुओं! यह मेरे शिष्य भिक्षुओं में सोने-बैठने की व्यवस्था करने वाला प्रमुख है, यह मल्ला का पुत्र दब्बा है। यह बात अपदान में भी कही गई है:—

“पदुमुत्तरा नाम के विजेता ने,

वह ऋषि जो समस्त संसार को जानता था,

दृष्टि का स्वामी (चक्खुमा) उत्पन्न हुआ

एक लाख युग (कप्पा) पहले।

वह सलाहकार थे, सूचना प्रसारक थे।

और समस्त प्राणियों का मार्गदर्शक तारा;

बुद्ध, जो शिक्षा देने में कुशल थे, ने संदेश भेजा।

संसार का सागर, अनेक पुरुष। दयालु-

पूर्ण सहानुभूति रखने वाला, कल्याण चाहने वाला

सभी जीवित प्राणियों में वही था जिसने उन्हें बनाया।

सभी विधर्मी उसके पास पहुँच गए, वे ठीक थे।

पांचों में ठीक से स्थापित हो जाएं

नैतिक उपदेश।

इस प्रकार वह विक्षिप्तता से मुक्त हो गया।

विधर्मियों से उत्पन्न अशांति समाप्त कर दी गई;

अरहंतों से भरा हुआ जो इस प्रकार के थे

क्योंकि वह अपने प्रभाव से शक्तिशाली हो गया था।

वह महान ऋषि अट्ठावन हाथ लंबा था।

कद में; उसका रूप अनमोल था

सोना और उसके शरीर में बत्तीस उत्कृष्ट अंग थे

विशेषताएँ।

उस समय जीवनकाल सौ वर्ष था।

हजार वर्ष; उस दौरान जीवन व्यतीत करना

उसने अपने जीवनकाल में कई लोगों को भेजा।

उस समय मैं एक बहुत ही प्रतिष्ठित व्यक्ति था।

हंसवती में बैंकर का पुत्र;

वह जलती हुई रोशनी की ओर बढ़ा।

मैंने उनकी शिक्षाओं को सुना।

धम्म।

यह सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई।

घोषणा के शब्द के संबंध में

उनका अपना शिष्य जिसने तैयारी की

सोने और बैठने की व्यवस्था

भिक्षुओं के लिए।

समर्पित सेवा करने के बाद

वह महान ऋषि अपने पुरोहितों के साथ,

मैं उनके चरणों में सिर रखकर गिर पड़ा और

विशेष रूप से उस पद के लिए इच्छुक थे।

उस महान नायक ने तब मेरे बारे में घोषणा करते हुए कहा

ऐसा कार्य जैसे किसी ने भोजन परोसा हो

विश्व के नेता के साथ

सात दिनों के लिए पादरी:—

यह वही है जो कमल की पंखुड़ियों के समान चमकता है।

शेर जैसी भुजाओं और सोने जैसी चमड़ी के साथ,

वे मेरे चरणों में गिर पड़े और सबसे बड़ी प्रार्थना करने लगे।

बहुत बढ़िया पद।

एक लाख युगों (कप्पा) के बाद,

दुनिया में एक गुरु का जन्म होगा।

उनके कुल द्वारा गौतम नाम दिया गया, उच्च कुल में जन्मे

ओक्काका का परिवार।

फिर यह व्यक्ति शिष्य बन जाएगा

वह बुद्ध, जो इस नाम से प्रसिद्ध हैं

डब्बा, नींद की तैयारी कराने वाला सर्वोपरि व्यक्ति-

भोजन और बैठने की व्यवस्था। खाते के अनुसार

उस सुनियोजित कार्य के साथ-साथ उसकी इच्छाशक्ति का भी।

और आत्मनिर्णय, त्याग करने पर

मैं अपने मानव शरीर में तावतिंसा गया।

स्वर्ग।

मैंने तीन सौ बार दिव्य अभ्यास भी किया।

संप्रभुता, और उससे भी पाँच सौ गुना अधिक

मैं विश्वराज बन गया।

ऐसे अवसरों की संख्या का अनुमान लगाना असंभव था।

मेरी क्षेत्रीय संप्रभुता की समृद्धि के लिए।

उस कार्य के फलस्वरूप मैं हर पल खुश रहता था।

कहाँ।

इक्यावन युग पहले, एक ऐसी घटना का उदय हुआ जो

नेता विपस्सी (बुद्ध), देखने में आकर्षक और

जिन्हें समस्त धर्मों का स्पष्ट ज्ञान था।

आक्रामक स्वभाव के कारण मैंने शिष्य का अपमान किया।

उस प्रकार के बुद्ध, जिनके पास सर्वांगीण गुण थे

उसके सारे घाव भर गए, हालाँकि बाद में

मुझे यह स्पष्ट रूप से पता था कि वह पवित्र था।

जब मैंने उन सबको पकड़ लिया, (सलाका)

मैंने शिष्यों को दूध-चावल भेंट किए।

वही बुद्ध, जो मनुष्यों के नायक हैं, जिन्होंने

वे महानता के साधक थे (महेसी)।

इस उत्कृष्ट युग में, भद्दकप्पा,

तब एक अत्यंत प्रसिद्ध रिश्तेदार का उदय हुआ।

ब्रह्मा के वंश से, कस्सपा नाम से जाने जाने वाले,

वक्ताओं में उत्कृष्ट।

अपनी व्यवस्था को चमकाने के बाद

दुष्ट विधर्मियों पर विजय प्राप्त करते हुए, उसने, साथ मिलकर

उनके शिष्य निर्वाण को प्राप्त हुए।

लेकिन नेतृत्व योग्य लोगों का स्पष्ट रूप से नेतृत्व करने के बाद

(उसी गंतव्य तक)।

जब प्रभु अपने शिष्यों के साथ

जब उनके सूर्य ने उन्हें निर्वाण में प्रवेश कराया,

व्यवस्था स्थापित हो गई थी, दिव्य प्राणी बन गए

पश्चाताप से भरे हुए और बिखरे बालों के साथ रोते हुए

बाल और आंसू से भीगे चेहरे।

धम्म (अक्खा) के पहिये का धुरा

हम काम करना बंद कर देंगे (निब्बायति)

अब हमें अच्छे भक्त देखने को नहीं मिलेंगे।

अब उन्हें अच्छी सच्चाई सुनने को नहीं मिलेगी

(धम्म); हाय! हममें कमी है

योग्यता।

तब यह पूरी अविचल पृथ्वी

कांप उठा और थरथरा गया; मानो दुख से

सागर से शोकपूर्ण सहानुभूति की ध्वनि निकली।

चारों ओर से अलौकिक ढोल की गूंज सुनाई दी।

चेहरे; बिजली अलग-अलग हो जाती है असाइन-

चारों ओर से खतरा मंडरा रहा है। आसमान से भी।

आग की मशालें नीचे गिरीं; वहाँ था

धुआं उगलती बत्तियाँ; जंगली जानवर

(मिगा) ने दयनीय ढंग से रोया।

गंभीर स्थिति को देखते हुए

(अस्त होते सूरज का) विधान का

(शासन) हम सात भिक्षु जो थे

तब पश्चाताप से भरा विचार इस प्रकार आया:— बिना

हमारे लिए व्यवस्था (शासन) थी, हम थे

अपने जीवन से तंग आ चुके हैं (अलं):

घने जंगल में प्रवेश कर चुके हैं, आइए प्रयास करें

स्वयं को शासन व्यवस्था (सासन) में

विजेता का।

फिर हमने जंगल में सबसे

ठोस पत्थर से बनी उत्कृष्ट ऊँची पहाड़ी; साथ

हमने सीढ़ी चढ़ी, और हम (बाद में)

सीढ़ी को गिरने दो।

उस समय हमारे वरिष्ठ भिक्षु ने निर्देश दिया

इस प्रकार:— इसे प्राप्त करना बहुत कठिन है

बुद्ध का प्रकट होना; प्राप्त करना

धार्मिक आस्था अत्यधिक कठिन है

बनना; व्यवस्था का जो शेष भाग बचा था

यह भी बहुत कम है।

जो लोग पलों को यूं ही बीतने देते हैं, वे गिर जाते हैं।

दु:ख के अंतहीन सागर में;

इसलिए यथासंभव प्रयास किया जाना चाहिए

जैसे कोई मृत्यु के नीचे कुचलकर खड़ा हो (मुने)

(मतां).

वह थेरा अरहंत बन गया; उसका अनुयायी

अनागामी (अनागामी) बन गया

उन्होंने अच्छे नैतिक मूल्यों का पालन किया और

हम (पांच) दिव्य लोक में गए।

अरहंत, जो समुद्र पार कर चुके थे

संसार से निर्वाण में परिवर्तित;

हम सुधावास (ब्रह्म संसार) में हैं; खुद,

पक्कुसाति, सभिया और इसी तरह बहिया

साथ ही कुमारकस्सपा, हम (पांच)

इस और उस अस्तित्व के करीब पहुंचे।

हमें बंधनों से मुक्ति मिली

पुनर्जन्मों का चक्र (संसार)

गौतम द्वारा, हमारे प्रति सहानुभूति के साथ।

जब मैं कुसिनारा में गर्भ में ही उत्पन्न हुआ

मल्ला समुदाय में, मेरी मृत माँ को घुड़सवार बनाया गया था।

जिस चिता से मैं गिरा था, उसी पर।

ढेर पर गिरने के परिणामस्वरूप

लकड़ी के डिब्बे से मैं अच्छी तरह से प्रशिक्षित हो गया।

डब्बा के नाम से जाना जाता है; पवित्रता की शक्ति पर-

ब्रह्मचारी जीवन में, मैं मुक्त हो गया।

सात साल की उम्र में।

दूध-चावल (अर्पण) की शक्ति से ऊपर

मुझे पाँच गुण प्राप्त हुए; आग्रह किया गया

अनेक बुराइयों के कारण, मैं एक अपराध में शामिल था।

किसी रोगमुक्त (खीणासव) का अपमान करना।

मैं अब उस स्तर से परे एक अवस्था में हूँ।

गुण और दोष दोनों से युक्त; प्राप्त कर लिया

पूर्ण शांति, मैं मुक्त जीवन जीता हूँ

कैंकर (आसवा)।

मैंने सोने और बैठने की व्यवस्था तैयार कर ली।

सदाचारी को प्रसन्न करने वाला दान; संतुष्ट

उस गुण के साथ, विजेता ने रखा

मुझे सबसे अग्रणी स्थान पर।

मेरी दुष्टता (किलेसा) जलकर भस्म हो गई थी।

सभी अस्तित्वों का नाश हो चुका था।

जैसे कोई हाथी जिसने काट डाला हो

इसके बंधन से मुक्त होकर, मैं रोगों से मुक्त जीवन जीता हूँ।

मेरा प्रदर्शन वाकई बहुत अच्छा रहा।

परम श्रेष्ठ बुद्ध की उपस्थिति;

तदनुसार त्रिगुणात्मक ज्ञान प्राप्त हुआ था

प्राप्त किया; बुद्ध का उपदेश (शासन)

कार्य संपन्न हो चुका था।

विश्लेषणात्मक ज्ञान के चार प्रकार...

बुद्ध का उपदेश (शासन) यह था:

किया गया।

यद्यपि एक दोषरहित थेरा को अपमानित करने के बुरे कर्म के कारण, पहले उन्हें कई लाख वर्षों तक नरक में भोगना पड़ा था; उसी कर्म से प्रेरित होकर, मेत्तियाभूमजक नामक भिक्षुओं ने, जो हर उस चीज़ के लिए प्रयासरत थे जिसे प्राप्त करना कठिन है, उन पर निराधार आरोप लगाकर उन्हें अपमानित किया कि उन्होंने एक गंभीर अपराध किया है जिसके लिए उन्हें निष्कासित (पाराजिका) किया जाना चाहिए, और कहा, "इस एक व्यक्ति ने हमारे और हमारे अच्छे भोजनदाता, एक धनी गृहस्थ के बीच दरार पैदा कर दी।" फिर, जब पुरोहितों द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही के माध्यम से, आरोपी भिक्षु के अंतरात्मा (सतिविनय) से अपील करके, उस विवाद का समाधान हो गया, तो इस थेरा ने संसार के प्रति करुणा से प्रेरित होकर, अपने गुणों को प्रकट करने के लिए, इस श्लोक का उच्चारण किया, जो इस प्रकार शुरू होता है: - "यो दुद्दामियो (जो भी वश में करना कठिन है),"

5. वहाँ, शब्द 'यो' का अर्थ है: एक अनिश्चित विशेषण; इस शब्द "सो" से इसकी निश्चित स्थिति देखी जानी चाहिए। उन्होंने अपने बारे में ऐसा कहा मानो वे किसी दूसरे के बारे में 'यो' और 'सो' दोनों शब्दों के माध्यम से ऐसा कह रहे हों। 'दुद्दामियो' का अर्थ है वश में करना कठिन; वश में न किया जा सकने वाला। उन्होंने यह बात अपनी सामान्य भिक्षु अवस्था (पुथुज्जन) के दौरान इंद्रियों के नियंत्रण की असमर्थता, अपने मन की संशयपूर्ण बेचैनी, इंद्रिय सुख की अधिकता से ग्रसित सभी प्रकार के दुराचार और झूठे विचारों के सहारा लेने पर विचार करते हुए कही। 'दामेना' अभिव्यक्ति का अर्थ है सबसे उत्तम और अग्रणी श्रेष्ठ मार्ग द्वारा वश में किया जाना; वास्तव में, उससे वश में हो जाने के कारण, क्योंकि वश में करने की प्रक्रिया पुनः करनी होगी, इसलिए यह उचित कथन के योग्य है: "दन्तो (वश में किया हुआ);" किसी अन्य (शब्द) द्वारा नहीं। दूसरे शब्दों में, दमेना का अर्थ है उस बुद्ध द्वारा वश में किया जाना, जो मनुष्यों को वश में करने वाले सारथी (पुरिसदम्मसारथी) के रूप में जाने जाते हैं। दब्बा शब्द का अर्थ है: वृक्ष-लकड़ी (द्रब्य); संभव; इस प्रकार, यही अर्थ है। अतः, इसी थेरा के संदर्भ में, भगवान बुद्ध ने इस प्रकार कहा,

“हे डब्बा! वास्तव में, सामग्री (डब्बा) इस प्रकार स्पष्ट नहीं करती।” संतुष्टि शब्द का अर्थ है, प्राप्त आवश्यकताओं की संतुष्टि, ध्यान और उचित प्राप्ति (समापत्ति) की संतुष्टि, श्रेष्ठ मार्ग (मार्ग) और फल (फल) की संतुष्टि। वितिण्णकम्भा शब्द का अर्थ है — संदेह से मुक्त, क्योंकि आठ और सोलह आधारों पर टिकी अनिश्चितता पूरी तरह से दूर हो गई है। विजयतावी शब्द का अर्थ है स्पष्ट रूप से विजय प्राप्त करना, क्योंकि एक सिद्ध पुरुष द्वारा स्पष्ट रूप से जीती जाने वाली सभी विकृतियों को स्पष्ट रूप से जीत कर नष्ट कर दिया गया है। अपेताभेरव शब्द का अर्थ है वह व्यक्ति जिसका खतरा दूर हो गया है और खतरे की अनुपस्थिति में प्रसन्न हो गया है, क्योंकि सभी प्रकार के पच्चीस खतरे दूर हो गए हैं। फिर से, डब्बा शब्द नाम की घोषणा है। परिनिर्वाण शब्द का अर्थ है दो प्रकार से सर्वांगीण निर्वाण की प्राप्ति: पहला, निर्वाण के तत्व (सौपादिसेष) के साथ पूर्णतः दुराचार (किलेसा) का निवारण, और दूसरा, निर्वाण के तत्व (सौपादिसेष) के बिना पूर्णतः स्कंधों (खंध) का निवारण। इन दोनों में से यहाँ दुराचार (किलेसा) के परिनिर्वाण का तात्पर्य है; अतः, उन्होंने श्रेष्ठ मार्ग (मार्ग) के माध्यम से सभी पहलुओं में त्यागे जाने योग्य कर्मों (पहातब्बधम्म) का त्याग करके अपने पूर्ण दुराचार

निवारण के द्वारा परिनिर्वाण प्राप्त किया; यही अर्थ है। 'ठितत्तो' शब्द का अर्थ है जीवन के विभिन्न उतार-चढ़ावों (लोकधम्म) से अविचलित, अविचलित रहने की अवस्था, जो वांछनीय वस्तुओं आदि में ऐसी अवस्था की प्राप्ति के कारण होती है। वह कारण के अर्थ में एक अविघटनीय कण (निपाता) मात्र है; इसी कारण, जो पहले वश में करना कठिन था, गुरु द्वारा सबसे उत्तम वशीकरण विधियों से दब्बा (दब्बत्ता) के मन को वश में करने के कारण वह संतुष्ट, संशयमुक्त, स्पष्ट विजेता और भयमुक्त हो गया; अतः दब्बा ने परिनिर्वाण प्राप्त किया क्योंकि उसका मन उसी के फलस्वरूप स्थिर रहा; इस प्रकार होने पर, थेरा ने अन्य प्रशिक्षु बुद्धिमान प्राणियों के प्रति सहानुभूति जताते हुए अपने अरहंतत्व की व्याख्या इस प्रकार की:— व्यक्ति को अपना पवित्र मन केवल उसी में लगाना चाहिए, कहीं और नहीं।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा डब्बा का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(6):सीता-वनिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (6) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
6. सीता-वानिया
यह आदरणीय भिक्षु सम्भूत का कथन (गाथा) है। उनका पुनर्जन्म राजगृह में एक प्रख्यात ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में हुआ और उनका नाम सम्भूत रखा गया। [1] अपने तीन मित्रों, भूमिजा, जय्यसेन और अभिरादन के साथ, उन्होंने भगवान बुद्ध को धम्म का उपदेश देते हुए सुना और संसार त्यागकर भिक्षु संघ में प्रवेश किया। 'शरीर के प्रति सजगता' की व्यवस्थित ध्यान साधना करते हुए, वे निरंतर सीतावन (शीतकालीन वन) में रहे और इस प्रकार सीतावनीय (शीतकालीन वनवासी) के नाम से जाने गए।

और जब उसने भिक्षुओं को भगवान (बुद्ध) के दर्शन के लिए जाते हुए देखा, तो उसने कहा: 'मित्रों, मेरी वाणी से भगवान की आराधना करो और उनसे इस प्रकार कहो' (भगवान (बुद्ध) को धर्म के मार्ग के प्रति अपनी निरंतर चिंता दर्शाते हुए)।

[6] यो सीतावनं उपागा भिक्खु एको सन्तुसिटो समाहितत्तो॥
विजिताविं एपेटलोमहंसो रक्खं कायगतासतिं धितिमा' ति.॥ ॥

इत्थं सुदां अयस्मा सीतावणियो थेरो गाथां अभिसित्था' ति.॥ ॥

[6] एक भिक्षु है जो ठंडे जंगल में जाकर
एकांत में, संतुष्ट, ध्यानमग्न परमानंद में रहता था,
विजयी, अब रेंगते हुए भय से विचलित नहीं,
वह उच्च साहस के साथ सचेत रूप से इंद्रियों की रक्षा करता है।

इस प्रकार पूज्य भिक्षु सीता-वानीया ने अपना वचन (गथा) कहा।

[1] यह CXCII, श्लोक 9 का सम्भूता नहीं हो सकता। मित्रों में, हम (संभवतः) केवल भूमिजा के साथ सांग्यी, ii. 39 में मिलते हैं।

1.1-6[6] श्लोक पर टिप्पणी

सीतावनिया थेरा

यो सीतावनं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा संब्लूत का है। उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि आज से एक सौ अठारह युग (कप्पा) पहले, संसार में स्वयंजागृत बुद्ध अत्थादस्सी का जन्म हुआ। वे संसार को, जिसमें दिव्य जगत भी शामिल था, संसार की महाबाढ़ से पार कराते हुए एक दिन कई भिक्षुओं के साथ गंगा नदी के किनारे पहुँचे। उस समय, उनका पुनर्जन्म एक धनी गृहस्थ परिवार में हुआ था और वहाँ भगवान बुद्ध के दर्शन करके वे श्रद्धा से भर गए, उनके पास गए, उन्हें प्रणाम किया और उनसे पूछा: “हे पूज्यवर! क्या आप उस पार जाना चाहते हैं?” भगवान बुद्ध ने उत्तर दिया कि वे जाना चाहते हैं। उसी समय उन्होंने नौकाओं का एक समूह बनाया और उन्हें उन्हें भेंट किया। उन पर दया करते हुए गुरुजी भिक्षुओं के साथ नौका पर सवार हुए। वे स्वयं भी नौका पर सवार हुए और भगवान बुद्ध तथा भिक्षुओं के साथ आसानी से दूसरे तट पर पहुँच गए। उन्होंने दूसरे दिन होने वाली एक बड़ी भेंट की, उनका अनुसरण किया, गर्व से भर गए, उन्हें प्रणाम किया और विदा हो गए। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए, एक सौ तेरह युग (कप्पा) पहले एक योद्धा राजकुमार (खत्तीय) के परिवार में पुनर्जन्म लिया और धर्मात्मा धम्मिका नामक विश्वराज बने। उन्होंने अपनी प्रजा को स्वर्ग के मार्ग पर स्थापित किया और वहाँ से देहान्त होने पर, उन्होंने भगवान बुद्ध के विपस्सी संप्रदाय में भिक्षु का रूप धारण किया, एक इक्यावन युग (कप्पा) पहले कठोर साधना (धूत धम्म) का पालन किया और श्मशान में निवास करते हुए भिक्षु के कर्तव्यों का निर्वाह किया। फिर, भगवान कश्यप के समय में भी, वे अपने तीन साथियों के साथ भिक्षु बने, बीस हजार वर्षों तक भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया, बुद्ध काल के दौरान बार-बार पुनर्जन्म लेते रहे और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब राजगृह में एक अत्यंत धनी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ। उन्होंने उन्हें “संभूत” नाम दिया। वयस्क होने पर, उन्होंने संपूर्ण ब्राह्मण विद्या में सिद्धि प्राप्त की। भूनिजा, जय्यसेन और अभिराधन जैसे तीन साथियों के साथ, वे भगवान के दर्शन करने पहुँचे, धर्म की शिक्षाएँ सुनीं, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की और भिक्षु बन गए। उनके संबंध में इस प्रकार कहा गया है:

“भूमिजा, जय्यसेन, सम्भूता और

अभिराधना, ये विशेष रूप से-

औषधालय में धम्म को पहले से स्थापित किया-

ऐसे उत्कृष्ट बुद्ध का चित्रण।

तब सम्भूता ने भगवान थेरा के दर्शन से शरीर की गति (कायगत) पर ध्यान केंद्रित करने का मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) लिया और शीतवन में स्थायी रूप से निवास करने लगे। इसी कारण वे "सीतवनीय (शीतवनवासी)" के नाम से जाने गए। उसी समय, महान देवराज वेसवण जंबूद्वीप में किसी कार्य से दक्षिण दिशा की ओर आकाश में जा रहे थे, जब उन्होंने थेरा को खुले आकाश में बैठे हुए, अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) में लीन देखा। वे अपने महल से नीचे उतरे, थेरा को प्रणाम किया और दो राक्षसों को यह आदेश देकर प्रस्थान किया: "जब भी थेरा अपनी समाधि से उठें, तो उन्हें मेरे आने की सूचना देना; और उनका ध्यान रखना।" वे थेरा के पास खड़े हो गए, जिन्हें उन्होंने (आदेशानुसार) सूचित किया, जब वे अपनी ध्यान साधना पूरी करने के बाद फिर से बैठ गए थे। दोनों राक्षसों की बात सुनकर, थेरा ने उन्हें यह कहते हुए जाने दिया: “तुम्हें अपने राजा वेसवण को मेरे नाम से यह बताना चाहिए कि भगवान ने अपने शिष्यों के लिए चेतना की रक्षा की व्यवस्था की है; वही रक्षा (चेतना की) मेरे जैसे उनके शिष्यों की भी रक्षा करे; तुम्हें वहाँ निश्चिंत रहना चाहिए; भगवान के शिष्यों के लिए ऐसी कोई रक्षा नहीं है।” उसी क्षण, उन्हें आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) प्राप्त हुई और उन्होंने त्रिविध ज्ञान का दर्शन किया। इसके बाद वेसवण पीछे हटते हुए थेरा के पास पहुँचे, उन्हें पता चला कि थेरा ने अपना कार्य पूरा कर लिया है, लेकिन अपने चेहरे के भावों से उन्होंने सावत्थी के पास जाकर थेरा को इसकी सूचना दी और गुरु की उपस्थिति में विशेष रूप से थेरा की प्रशंसा करते हुए इस श्लोक के माध्यम से थेरा के गुणों का गुणगान किया:

मानसिक सुरक्षा से संपन्न

जागरूकता, दृढ़ता से युक्त

प्रयास से अच्छी तरह संयमित, अच्छी तरह-

मास्टर द्वारा निर्मित, उन्होंने देखभाल की

उसे; तीन गुना ज्ञान के साथ वह

मृत्यु के दूसरे छोर तक पहुँच गया था।

इसी कारण अपदाना में इस प्रकार कहा गया है:—

परम पूज्य अत्थादस्सी, शासक

दो पैरों वाले प्राणियों में से, मनुष्यों में बैल के समान,

उनके शिष्य उनके पीछे-पीछे पास आए

गंगा का किनारा। पानी से लबालब भरा हुआ।

उतरने की जगह, उसके पानी के गिलास के साथ-

गंगा नदी के किनारे स्थित था या बहता था

पार करना कठिन था; मैंने भेजा

भिक्षुओं (भिक्षुओं) का धर्मगुरु वर्ग, जैसे

साथ ही बुद्ध, जो सबसे उत्कृष्ट हैं

दो पैरों पर चलने वाला।

उस समय मैंने जो काम किया था, उसके कारण

एक सौ अठारह युग (कप्पा)

मुझे याद नहीं कि कुछ समय पहले कोई बुराई मौजूद थी।

मेरा तनाव; यही इसका फल है

मेरे द्वारा भेजे जाने का।

तेरह सौ युग (कप्पा) पहले,

मैं पाँच वर्षों तक सार्वभौमिक सम्राट था

(अवसरों)। वे विश्व-राजा थे

सात 'जेन्स' से संपन्न और महान

हो सकता है।

इस अंतिम जन्म में मेरा पुनर्जन्म हुआ।

एक ब्राह्मण परिवार में; (मेरे साथ)

तीन साथियों के साथ, मैं भिक्षु बन गया।

गुरु का विधान।

मेरी दुष्टता (किलेसा) जलकर भस्म हो गई थी;

बुद्ध का उपदेश यही था।

किया गया।

तब पूज्य संभूत भगवान बुद्ध के दर्शन के लिए जाते समय भिक्षुओं से मिले और उनसे कहा, “हे मित्रों! मेरे नाम से भगवान बुद्ध के चरणों में सिर झुकाकर प्रणाम कीजिए; उनसे इस प्रकार भी कहिए।” उन्होंने “यो सीतावनं” से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिससे यह स्पष्ट होता है कि वे अपने विशेष धर्म अभ्यास में गुरु के प्रति शत्रुतापूर्ण नहीं बल्कि सौहार्दपूर्ण हैं। वे भिक्षु भगवान बुद्ध के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और थेरा संभूत के संदेश को उचित रूप से बताते हुए, उस श्लोक का पाठ करते हुए कहा, “आदरणीय महोदय! पूज्य संभूत भगवान बुद्ध के चरणों में सिर झुकाकर प्रणाम करते हैं; उन्होंने इस प्रकार भी कहा।” यह सुनकर, परम पूज्य ने यों कहा: “हे भिक्षुओं! भिक्षु संभूत बुद्धिमान हैं, जिन्होंने धर्म के अनुसार कर्म करते हुए अपना जीवन (पच्चपादि) व्यवस्थित किया; न ही उनके विशेष कर्म (धर्म) मेरे विरुद्ध रहे हैं; यह बात मुझे वेसवण ने बताई है।”

6. उन भिक्षुओं ने थेरा सम्भूता द्वारा बोले गए श्लोक की रचना की, जो “यो सीतावनं, गुरु को ज्ञात” से शुरू होता है। यहाँ सीतावन शब्द का अर्थ राजगृह के निकट स्थित एक विशाल, भयानक वन-कब्रिस्तान है। उपगा का अर्थ है कि वह वहाँ निवास करने के लिए आया; इसके द्वारा वह भगवान बुद्ध द्वारा अनुमत भिक्षुओं के लिए उपयुक्त अपने निवास स्थान को दर्शाता है। भिक्षु का अर्थ है: वह भिक्षु है क्योंकि वह संसार के खतरे को देखता है और साथ ही उसने अपने क्लेश को तोड़ दिया है। एको का अर्थ है कि उसका कोई साथी नहीं है (अर्थात अकेला); इसके द्वारा वह अपने शरीर के एकांत को दर्शाता है। संतुष्टुस्सितो का अर्थ है संतुष्ट; इसके द्वारा वह अपने चार धार्मिक मूल तत्वों में अपनी संतुष्टि से चिह्नित अपने श्रेष्ठ (आर्य) वंश को दर्शाता है। (पच्चया)। समाहितत्त, एकाग्रचित्त मन वाला, समाधि में रहने वाला, जिसमें उपचार और अप्पना जैसे गुण होते हैं; इसके द्वारा वह अपने श्रेष्ठ वंश को दर्शाता है, विकास में प्रसन्न रहता है और मानसिक एकांत में प्रवेश करता है। विजयतावी का अर्थ है: धर्म के अनुसार उचित और उपयुक्त अभ्यास द्वारा पराजित होने वाले दुराचार (किलेसा) के समूह पर विजय प्राप्त करना; इसके द्वारा वह आधारभूत एकांत (उपाधि) को दर्शाता है। अपेतलोमहंसो, रोंगटे खड़े न होने वाला, क्योंकि सभी प्रकार के दुराचार (किलेसा) जो खतरे का कारण बनते हैं, लुप्त हो गए हैं; इसके द्वारा वह धार्मिक उचित अभ्यास (पटिपत्ति) का फल दर्शाता है। रक्खं का अर्थ है रक्षा करना। कायगतस्ति का अर्थ है शरीर को ध्यान का विषय बनाकर जागरूकता; शारीरिक गतिविधियों में जागरूकता के रूप में ज्ञात मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) को सर्वांगीण प्रदर्शन (परिब्रुहन) के माध्यम से त्यागे बिना। धितिमा का अर्थ है दृढ़ निश्चयी बुद्धिमान व्यक्ति; यह उचित आचरण (पटिपत्ति) को इंगित करता है, चाहे वह समभाव (समाहित) की अवस्था हो या विजय प्राप्त करने की अवस्था। वास्तव में, यहाँ इसका संक्षिप्त अर्थ यह है: वह भिक्षु एकांत के आनंद पर ध्यान केंद्रित करने के लिए शीतल वन (सीतवन) की ओर अकेला गया; वहाँ पहुँचने पर भी, विकर्षणों (लोला) के अभाव के कारण, वह संतुष्ट, दृढ़ और ध्यान से परिपूर्ण हुआ, और उसने अपने शारीरिक गतिविधियों की जागरूकता से युक्त मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) विकसित करने के अनुसार ध्यान प्राप्त किया। (कायगत) को अपना आधार बनाकर, उसने अपने भीतर उत्पन्न हो रही स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में उत्सुकतापूर्वक लीन होकर, सर्वोत्कृष्ट मार्ग (मार्ग) की प्राप्ति के कारण शांत (समाहित) हो गया, अपने कर्तव्य का पालन करने के कारण विजय प्राप्त कर ली, और सभी प्रकार के खतरे के कारणों के समाप्त हो जाने के कारण उत्तेजना (लोमहंस) से मुक्त हो गया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा सीतावनिया का

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(7):भल्लिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (7) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
7. भल्लिया
वे अपने बड़े भिक्षु तपस्सा [1] के साथ, हमारे पूज्य (बुद्ध) के समय में, पोक्खरवती नगर में एक कारवां चालक के पुत्र के रूप में पैदा हुए थे। जब वे एक रमणीय मैदान में रथों का काफिला ले जा रहे थे, तभी एक कीचड़ भरे स्थान ने उनकी प्रगति रोक दी। तब उनके ही वंश का एक वृक्ष-परी प्रकट हुआ और बोला: 'महोदय, पूज्य (बुद्ध) ने अभी-अभी ज्ञान प्राप्त किया है, और राजा के [13] वृक्ष [2] की जड़ में बैठकर सात सप्ताह तक निर्वाण के आनंद में उपवास कर रहे हैं । उन्हें भोजन कराएँ; इससे आपको दीर्घायु सुख और प्रसन्नता प्राप्त होगी।' वे हर्षपूर्वक उत्सुकता से भोजन तैयार करने की प्रतीक्षा नहीं कर सके, बल्कि चावल के केक और शहद लेकर मुख्य मार्ग छोड़कर पूज्य (बुद्ध) की सेवा करने चले गए।

अब जब भगवान (बुद्ध) ने बनारस में धम्म के मार्ग का पहिया घुमाना शुरू किया, [3] तो वे उचित समय पर राजगृह में ठहरे। वहाँ तपस्सा और भल्लिया उनकी सेवा में आए और उन्हें उपदेश देते हुए सुना। तपस्सा गृहस्थ अनुयायी बन गए, जबकि भल्लिया ने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण किया) और अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) के छह रूपों में महारत हासिल की। [4]

एक दिन जब मारा [5] भिक्षु के सामने भयानक रूप में प्रकट हुआ, तो भल्लिया ने, यह प्रकट करते हुए कि वह सभी भय से परे हो चुका है, मारा को विचलित करने के लिए एक कहावत (गाथा) कही:

[7] योपानुडी मैक्कुराजस्सा सेनm||
नाससेतुं वा सुदुब्बलं महोघो॥
विजिताव‍ि आपेताभेरवो हि॥
दंतो सो परिनिब्बुतो थिताात्तो' ति.॥ ॥

इत्थै सुदां अयस्मा भल्लियो थेरो गाथां अभिसित्था' ति.॥ ॥

[7] जिसने भी मृत्यु-राजा और उसकी सेना को भगा दिया,
जैसे प्रचंड बाढ़ कमजोर सरकंडों के मार्ग को बहा ले जाती है,
वही विजयी है, आत्म-संयमी। भय फिर कभी नहीं आता।
उसका लक्ष्य सर्वोच्च है, और उसमें पूर्ण दृढ़ता है।

इस प्रकार पूज्य भल्लिया ने अपना कथन (गाथा) कहा। [6]

[1] टीका परंपरा में, वे कस्सपा बुद्ध के समय समान परिस्थितियों में भिक्षु थे, और उन्होंने कस्सपा को वैसी ही सेवा दी थी, यह विनती करते हुए कि वे भविष्य के जीवन में इसे दोहरा सकें।

[2] सी.एफ. बहनें, पी. 5. यह कहानी विनय ग्रंथों में आती है, iii. 81, और 'निदान-कथा' में, बड। जन्म कथाएँ, पृ. 110, भल्लिया वहाँ भल्लुका और भल्लुका है। इका और इया विनिमेय विशेषण समाप्ति हैं।

[3] उनका पहला उपदेश, आदि।

[4] अतिसामान्य विचार। तुलना करें पृष्ठ 82, नोट 1.

[5] प्रोफेसर विंडिश का मानना है कि इस तरह के मारा या शैतान किंवदंतियों का एक संग्रह हो सकता है (मारा और बुद्ध, 134)।

ओबिटर तानाशाही. पारित टिप्पणी.

[6] अब से यह ओबिटर डिक्टम समाप्त होता है।

1.1-7[7] श्लोक पर टिप्पणी

भल्लिया थेरा

यो'पनुदी से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा भल्लिया का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि इकत्तीस युग (कप्पा) पहले, जब कोई बुद्ध प्रकट नहीं हुए थे, तब वे मौन बुद्ध सुमन के प्रति श्रद्धा से भर आए और उन्हें छोटे-बड़े फल अर्पित किए; फलस्वरूप, उन्होंने अपने पुनर्जन्मों के चक्र में उत्कृष्ट जन्म (सुगति) लिए और अंत में आत्मजागृत बुद्ध सिख धर्म के समय अरुणावती नगर के एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। यह सुनकर कि “एक कारवां सरदार के दो पुत्र, उजिता और ओजिता ने नवप्रवर्तित भगवान सिखि को प्रथम भोज अर्पित किया,” वे अपने एक साथी के साथ भगवान सिखि के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, अगले दिन के भोज में आमंत्रित किया, एक महान दान किया और यह कामना व्यक्त की: “हे पूज्यवर! भविष्य में हम दोनों आपके समान किसी बुद्ध को प्रथम भोज अर्पित करने वाले बनें।” उन्होंने इस और उस जन्म में पुण्य कर्म किए और पुनर्जन्मों के चक्र में भटकते रहे तथा भगवान कश्यप के समय में साहूकार गोपालक के पुत्रों के रूप में भाई-भाई के रूप में पुनर्जन्म लिया। उन्होंने अनेक वर्षों तक भिक्षुओं की सेवा में दुग्धपान किया। परन्तु भगवान सिखि के समय में वे पोक्खरवती नगर में एक कारवां सरदार के पुत्रों के रूप में भाई-भाई के रूप में जन्म लिए। उन दोनों में से बड़े का नाम तफुस्सा था; छोटे को भल्लिया के नाम से जाना जाता था। उन्होंने पाँच सौ गाड़ियों में माल भरकर व्यापार यात्रा शुरू की और मुख्य सड़क से गुजरे, जो राजयतन वृक्ष से कुछ ही दूरी पर थी। उस समय भगवान बुद्ध, मोक्ष के आनंद (विमुक्ति) के कर्म (धम्म) पर सात सप्ताह चिंतन करने के बाद, आठवें सप्ताह में राजयतन वृक्ष की तलहटी में निवास कर रहे थे। उस समय, ज़मीन समतल और कीचड़ रहित होने के बावजूद, उनकी गाड़ियाँ आगे नहीं बढ़ पा रही थीं। जो लोग इस बात को लेकर असमंजस में थे कि वास्तव में इसका कारण क्या है, उन्हें वह देवी, जो पहले उनकी रक्त संबंधी थीं, एक वृक्ष की शाखाओं के बीच प्रकट हुईं और बोलीं: “प्रिय मित्रों! यह भगवान हाल ही में आत्मज्ञानी बुद्ध बने हैं; वे सात दिनों तक बिना भोजन के रहे हैं; वे अब राजयतन वृक्ष की चरणों में विमुक्ति के आनंद का पूर्णतः अनुभव कर रहे हैं: आप उन्हें भोजन अर्पित करें; इससे आपका कल्याण और सुख दीर्घकाल तक बना रहेगा।” यह सुनकर वे अत्यंत प्रसन्न और आनंदित हुए, और यह सोचकर कि भोजन तैयार करने में विलंब होगा, उन्होंने भगवान को चावल का केक और सादा भोजन अर्पित किया, द्वेवाचिक मंत्र का पाठ करके शरण ली, केश-शैल प्राप्त किए और अपने मार्ग पर चल दिए। वास्तव में, वे अग्रणी भक्त बन गए। (उपासक).फिर जब भगवान बनारस में धम्म-चक्क घुमाने के बाद राजगृह में निवास कर रहे थे, तब तपुस्स और भल्लिया राजगृह गए, भगवान के पास पहुँचे, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। भगवान ने उन्हें धम्म का उपदेश दिया। दोनों में से तपुस्स ने प्रथम अवस्था (सोतापत्ति) की सिद्धि प्राप्त करने के बाद केवल एक भक्त बनकर रह गए। भल्लिया भिक्षु बन गए और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) प्राप्त किए। इसी कारण अपदान में कहा गया है:—

उस समय, स्वयंजागृत मौन

बुद्ध ने ही इस महारत को सिद्ध किया था।

(वसी); वन के फल एकत्रित करने के बाद

(वल्लिकारा फला) मैंने वही भेंट की

स्वयं निर्मित (सयम्भू)।

आज से तीस युग (कप्पा) पहले,

(यह तब हुआ था), जब मैंने फल अर्पित किए थे;

इस फल भेंट का फल प्राप्त हुआ था

क्योंकि मुझे (अपनी मुलाकात) याद नहीं है।

कोई भी विपत्ति (दुग्गती)।

मेरी दुष्टता (किलेसा) जलकर भस्म हो गई थी;

बुद्ध के उपदेश (शासन) में यह बात थी कि...

संपन्न हो चुका है।

फिर एक दिन, मारा ने थेरा भल्लिया को डराने के लिए भय उत्पन्न करने वाली एक दृश्य वस्तु (रूप) दिखाई। उन्होंने "योऽपनुदी" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिससे यह स्पष्ट हो गया कि वे सभी खतरों से परे जा चुके हैं।

7. वहाँ यो'पनुदि अभिव्यक्ति का अर्थ है: — जिसने निकाला, फेंका, त्यागा और स्पष्ट रूप से कुचल दिया। मच्चुराजस्स अभिव्यक्ति का अर्थ इस प्रकार है: — मच्चु को मृत्यु, स्कंधों के विखंडन के रूप में जाना जाता है; वही मृत्यु राजा है क्योंकि यह संप्रभुता का प्रतीक है, क्योंकि यह जीवित प्राणियों को अपनी इच्छा (वस) का पालन करने के लिए बाध्य करती है; इस प्रकार, मृत्यु का राजा; उसका। सेनां अभिव्यक्ति का अर्थ है वृद्धावस्था, रोग, इत्यादि; वास्तव में (वृद्धावस्था इत्यादि) को सेना के रूप में जाना जाता है क्योंकि वे इसकी शक्ति (वसवत्तन) के संचालन में सदस्य हैं; वास्तव में, इसी कारण से इसे "महासेनो, एक विशाल सेना वाला" कहा जाता है, क्योंकि यह शक्तिशाली (महा), विभिन्न प्रकार और प्रचुरता (विपुल) से युक्त है। तदनुसार (बुद्ध) ने कहा:— "न हि नो संगरं तेन, महासेनेन मच्चुना (निःसंदेह, हमारे लिए उस मृत्यु से लड़ना संभव नहीं है जिसकी सेना बहुत बड़ी हो)। दूसरे शब्दों में, गुणों (गुण) को नष्ट करने के महत्व के कारण, यह "मच्चु (मृत्यु)" है; इस प्रकार, यहाँ युवा देवता मार का तात्पर्य है; काम (इंद्रिय सुख), आदि; उनकी सेना का निर्माण करते हैं क्योंकि वे उनके सहचर (सहायक) होने की अवस्था की ओर ले जाते हैं। इसी प्रकार, (बुद्ध) ने कहा:—

"Kāmā te paṭhamā senā

(इंद्रिय सुख/यौन सुख आपकी पहली सेना हैं);

dutiyā arati vuccati

(ध्यान के प्रति अरुचि को आपका दूसरा दोष कहा जाता है);

tatiyā khuppipāsā te

(आपकी तीसरी सेना भूख और प्यास से बनी है);

catutthī taṇhā pavuccati

(आपका चौथा चरण लालसा से भरा हुआ बताया जाता है);

pañcamī thinamiddhaṃte

(आपका पांचवा आलस्य और सुस्ती है);

चैथा भीरू पवुक्कति

(कायदगी को छठी श्रेणी कहा जाता है);

sattamī vicikicchā te

(अनिश्चितता/अनिर्णय आपका सातवां प्रश्न है),

mānomakkho ca aṭṭhamī

(और तुम्हारा आठवां अंश अभिमान और पाखंड से बना है।)

"नलासेतुं व सुदुब्बलं महोगो" इस अभिव्यक्ति का अर्थ इस प्रकार है: — जिसने नौ दिव्य धम्मों की प्रबल शक्ति के कारण एक महान बाढ़ के समान अत्यंत भंगुर सरकंडे के समान सार के समान कमजोर आत्म-दुराचार (संकिलेसा) के कवच को अपने सर्वथा श्रेष्ठ मार्ग (मग्ग) के माध्यम से दूर किया; जो इस प्रकार भयमुक्त और वश में होकर सर्वांगीण शांति (परिनिब्बुतो) प्राप्त कर स्पष्ट विजेता (विजितावी) बन गया; यही व्याख्या है। यह सुनकर, मारा ने मन ही मन कहा, "भिक्षु मुझे पहचान गया है," और वहीं से विलीन हो गया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा भल्लिया का

तैयार है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(8):वीरा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (8) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
8. वीरा
बुद्ध युग में सावत्थी में, राजा पासेनादि के एक मंत्री के परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम वीर रखा गया। [1] और जब, अपने नाम के अनुरूप, उन्होंने खेल-कूद में निपुणता प्राप्त कर ली, तो वे एक योद्धा बन गए। अपने माता-पिता की सहमति से विवाह करने पर उन्हें एक पुत्र हुआ। इसके बाद, [14] जीवन के निरंतर निर्वाह में कठिनाई देखकर, [2] उन्होंने व्यथित होकर संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण किया), और सभी प्रयास करके शीघ्र ही छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त कर ली। अब जब वे अरहंत (प्रबुद्ध) के रूप में फल के आनंद में लीन थे, तो उनकी पूर्व पत्नी ने उन्हें विभिन्न तरीकों से वापस लाने का प्रयास किया। लेकिन पूज्य वीर ने कहा:

'यह स्त्री, जो मुझे बहकाने की इच्छा रखती है, वह उस स्त्री के समान है जो मच्छर के पंख से सिनेरू पर्वत [3] को हिलाने की इच्छा रखती है ।' और उसने अपने इस कथन (गथा) से उसे दिखाया कि यह कितना व्यर्थ था:

[8] यो दुद्दामियो दामेना दांतो वीरो संतुसिटो वितिनकाकखो॥
विजिताविं एपेटलोमहंसो वीरो सो परिनिब्बुतो थित्तत्तो'ति॥ ॥

[8] एक समय जिसे वश में करना कठिन था, अब वश में कर लिया गया है
वीरा, संदेह से मुक्त, संतुष्ट, शांत;
विजेता है वीरा, रेंगते हुए भय से मुक्त;
उसका लक्ष्य सर्वोच्च है, और दृढ़ शक्ति है।

उसकी बात सुनकर वह महिला अत्यंत भावुक हो गई और सोचने लगी:

'मेरे पति ने यह जीत हासिल कर ली है - मेरे लिए गृहस्थ जीवन का क्या लाभ?' और वह ननों के बीच (भिक्षुता में) चली गई, और जल्द ही त्रिविध ज्ञान प्राप्त कर लिया। [4]

[1] वीर, बलवान। पासेनादि कोसल के राजा थे, बुद्ध के समान आयु के (मज्झ. निक., ii. 124)।

[2] शाब्दिक रूप से, सांसार में, 'निरंतर जारी रहना।' तुलना करें XCIX.

[3] सिस्टर्स, श्लोक 384 देखें । उच्चारण सिनेरू।

[4] देखें पृ. 29, नोट 1. यह त्रिविध अधिग्रहण अभिञ्ञा, या अलौकिक क्षमता के छह रूपों में से तीन का निर्माण करता है, पृ. 32, नोट 1.

1.1-8[8] श्लोक पर टिप्पणी

वीरा थेरा
यो दुद्दामियो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वीर का श्लोक है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि इन्होंने भगवान विपस्सी के निवास स्थान की देखभाल की। एक दिन उन्होंने सिंधुवारा पुष्पों के समान निग्गुंठ पुष्प एकत्र किए और श्रद्धापूर्वक उन्हें भगवान को अर्पित किया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और पैंतीस युग (कप्पा) पहले एक योद्धा राजकुमार (खत्तीय) के परिवार में पुनर्जन्म लेकर महापतापा के नाम से विश्वराज बने। उन्होंने धर्म और न्याय के साथ अपने शासन का प्रयोग करते हुए अपनी प्रजा को स्वर्ग के मार्ग पर स्थापित किया। फिर इसी युग (कप्पा) में, भगवान कस्सपा के समय, वे अपार धन के धनी बन गए और निर्धनों, यात्रियों आदि को दान देकर संघ के पुरोहितों को दूध का भोजन कराते थे। इस जन्म और उस जन्म में दान से पुण्य का भंडार जमा करते हुए और निर्वाण की प्राप्ति के लिए अन्य प्रकार के पुण्य भी संचित करते हुए, वे बार-बार जन्म लेते रहे और सावित्थी नगर में राजा पसेनदी के एक मंत्री के परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उन्होंने उनका नाम "वीर" रखा। वयस्क होने पर, अपने नाम के अनुरूप (नामानुगत) बलवान, तेज और इसी प्रकार के गुणों से संपन्न होकर, वह एक वीर योद्धा (संगमासूर) बन गया। उसे केवल एक पुत्र प्राप्त हुआ। माता-पिता द्वारा उसे बंधन में बांधने के लिए विवाह करना पड़ा, लेकिन अपने पूर्व उद्देश्य से प्रेरित होकर, उसने संसार और सांसारिक सुखों में हानि पाई, पश्चाताप किया, भिक्षु बन गया और परिश्रम करते हुए उसने छह प्रकार के ज्ञान प्राप्त किए, लेकिन शीघ्र ही। इसलिए, अपदान में इस प्रकार कहा गया है:—

मैं गौरवशाली मठ का रक्षक था

एक विपस्सी; निग्गुंठी का संग्रह करके

मैंने श्रद्धापूर्वक पुष्प अर्पित किए (अभिरोपयिं),

उन्हें बुद्ध के पास ले जाओ।

क्योंकि मैंने विशेष रूप से फूल भेंट किए थे

श्रद्धा, आज से इक्यावन युग पहले,

मुझे विशेष रूप से याद नहीं है कि मैं

उन्हें पीड़ादायक जीवन (दुग्गती) जीना पड़ा।

यह मेरी श्रद्धा का फल है।

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

आज से पच्चीस युग पहले, मैं एक बन गया था

मनुष्यों के संप्रभु; महापतापना के नाम से

मैं अपार शक्ति का विश्व राजा बन गया।

मेरी दुष्टता (किलेसा) जलकर भस्म हो गई थी।

बुद्ध के उपदेश (शासन) में यह बात थी कि...

संपन्न हो चुका है।

इस प्रकार अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उनकी पूर्व पत्नी, थेरा को, जो अपने फल प्राप्ति के आनंद में लीन थे, विचलित करने की इच्छा से, समय-समय पर अनेक प्रकार के प्रलोभन देने लगी। एक दिन वह उनके विश्राम स्थल पर गई और अपना स्त्री-सुलभ आकर्षण दिखाने लगी। तब पूज्य वीर ने उसके कार्यों की निरर्थकता को उजागर करते हुए एक श्लोक कहा, "यह स्त्री कितनी मूर्ख है! मुझे लुभाने की इच्छा से वह मच्छर के पंखों की हवा से मुझे हिलाने की इच्छा रखती प्रतीत होती है।"

8. वहाँ यो दुद्दामियो से शुरू होने वाले शब्दों का अर्थ पहले ही बताया जा चुका है। हालाँकि, यहाँ केवल यही व्याख्या है: यो का अर्थ इस प्रकार समझा जाना चाहिए: - पहले अनियंत्रित दुराचार (किलेसा) के कारण या शत्रुओं द्वारा स्थापित युद्ध मोर्चों (संगामसीसा) को वश में करने और जीतने में असमर्थ होने के कारण, वह दुद्दामियो स्वयं को वश में करने में कठिनाई का सामना कर रहा था; अब, हालाँकि, सर्वश्रेष्ठ वश में करने वाले द्वारा वश में किए जाने के कारण, मैं चार प्रकार के धार्मिक प्रयास (सम्मप्पधान) से संपन्न होने के कारण वीर (वीर) हूँ; परन्तु उक्त विधि से संतुष्ट होकर, अनिश्चितताओं से मुक्त होकर (वितिण्णकण्खो), स्पष्ट विजेता बनकर और उत्तेजना को दूर करके (लोमहंस) वे वीर बन गए, और उन्होंने सभी प्रकार की बुराइयों (किलेसा) को पूर्णतः बुझाकर परिनिब्बुतो (पूर्णतः शांत) हो गए, जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने स्थिर (ठितसभावो) स्वभाव प्राप्त कर लिया और सैकड़ों-हजारों शत्रुओं से भी विचलित नहीं हुए। यह श्लोक सुनकर वह स्त्री पश्चाताप से व्याकुल हो उठी और बोली, “जब मेरे पति ने इस प्रकार विधिवत अभ्यास (पटिपन्न) किया है तो मेरे गृहस्थ जीवन से क्या लाभ है?”, उन्होंने संसार त्याग दिया, भिक्षुणी बन गईं और शीघ्र ही त्रिविध ज्ञान (तेविज्जा) प्राप्त कर लिया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा वीरा का

तैयार है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(9):पिलिंडा-वाचा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (9) ------>>>> अगला
अध्याय I.

एकल श्लोक

9. पिलिंडा-वच्छ

भगवान बुद्ध बनने से पहले, सावत्थी में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने उनका नाम पिलिंडा रखा, क्योंकि उनके कुल का नाम वच्छ था। वे संन्यासी बन गए और उन्होंने लघु गांधार नामक मंत्र (जादू) को प्राप्त किया, जो उनकी महान प्रसिद्धि का परिणाम था। [1] लेकिन जब भगवान बुद्ध बने, तो यह मंत्र (जादू) काम करना बंद कर दिया। जब उन्हें पता चला कि वृहत्तर गांधार मंत्र ने लघु गांधार मंत्र को रोक दिया है, [15] तो उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि संन्यासी गौतम (बुद्ध) को पहले वाले मंत्र का ज्ञान था, और वे इसे प्राप्त करने की आशा में उनकी सेवा में लग गए, और उनसे यह अवसर देने का अनुरोध किया। भगवान (बुद्ध) ने उत्तर दिया: 'तुम्हें संसार त्यागकर संन्यासी बनना होगा।' उन्होंने यह सोचकर कि यह मंत्र (जादू) प्राप्त करने की तैयारी है, [2] वैसा ही किया। भगवान ने उन्हें धम्म का मार्ग सिखाया और ध्यान का अभ्यास कराया, जिससे परिस्थितियाँ अनुकूल होने पर उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

अब, जो व्यक्ति पिछले जन्म में पिलिंडा के मार्गदर्शन के फलस्वरूप स्वर्ग में देव बन गया था, वह कृतज्ञतावश सुबह-शाम उनकी सेवा करता था। अतः वह भिक्षु देवताओं का प्रिय माना जाता था और परमेश्वर (बुद्ध) द्वारा उसे ऐसे भिक्षुओं में श्रेष्ठ स्थान दिया गया था। [3]

और एक दिन पिलिंडा भिक्षुओं के बीच बैठे हुए अपनी सफलता पर विचार कर रहे थे, और उन्होंने उनसे कहा कि कैसे जादू (मंत्र) ने उन्हें बुद्ध के पास पहुँचाया, और उन्होंने यह गाथा कही:

[9] स्वगतौ न दुरागतौ नयिदौ दुमन्तिताऽ मम॥
संविभत्तेसु धम्मेसु यं सेठंहां तदुपगामिन्ति॥॥

[9] हे स्वागत है यह जो आया, और न ही व्यर्थ आया!
हे मुझे दी गई सलाह कितनी अच्छी थी!
मनुष्यों के बीच प्रचलित अनेक सिद्धांतों में से
यह निश्चित रूप से सबसे अच्छा था जिसे मैंने खोजा और पाया।

[1] गंधार विजय, या मंत्र के बारे में—जैसा कि यहाँ दो भागों में विभाजित नहीं किया गया है—देखें संवाद, i. 278. तुलना करें जाट, iv. 498 f. यहाँ कहा गया है कि यह मंत्र वायु में विचरण करने और विचार-पठन करने दोनों की शक्ति प्रदान करता है। इस थेरा की पहचान राजगृह के पिलिंडा-वच्छ (विन. ग्रंथ, ii. 61) के साथ संदिग्ध है; फिर भी अगले पृष्ठ, नोट 2 की तुलना करें ।

[2] यह नया त्याग (पब्बज्जा) संघ में प्रवेश करना ही रहा होगा, हालाँकि यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है। पिलिन्द के भ्रामक मत से तुलना करें, संवाद, i. 278, और iii., XXIV., Ī 4. तुलना करें वंगीसा, CCLXIV.

[3] अंग., i. 24, जिस पर उदानांग, iii. 6 उद्धृत है।

1.1-9[9] श्लोक पर टिप्पणी

पिलिंडावच्चा थेरा

स्वागतं से शुरू होने वाला श्लोक थेरा पिलिन्दवच्छ का श्लोक है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म हंसवती नगर में एक अत्यंत धनी परिवार में बुद्ध पद्ममुत्तरा के समय हुआ था। जैसा कि ऊपर बताया गया है, जब वे गुरु की उपस्थिति में धर्म का प्रवचन सुन रहे थे, तब उन्होंने देखा कि गुरु एक भिक्षु को देवताओं द्वारा प्रिय (पिया) और ध्यान में रखे जाने के कारण सर्वोच्च स्थान पर बिठा रहे हैं। उस पद की आकांक्षा रखते हुए, उन्होंने अपने जीवनकाल में अच्छे कर्म किए और मृत्यु के बाद, वे बार-बार जन्म लेते रहे और सुमेध के समय मनुष्यलोक में पुनर्जन्म लिया। जब भगवान बुद्ध परिनिर्वाण हुए, तो उन्होंने गुरु के मंदिर (थूप) में श्रद्धापूर्वक पूजा की, संघ (पुजारी) में भी व्यापक दान-पुण्य किया और वहाँ से देह त्यागने के बाद, उन्होंने बार-बार जन्म लेकर देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया, बुद्ध के प्रकट होने से पहले ही विश्वराज बन गए, अपने असंख्य अनुयायियों को पंच नैतिक उपदेशों में विधिवत स्थापित किया और उन्हें स्वर्ग (सग्ग) से बांध दिया (परायण)। हमारे प्रतापी बुद्ध के प्रकट होने से पहले ही उनका जन्म सावत्थी में एक ब्राह्मण के घर में हुआ। उन्हें "पिलिंदा" नाम दिया गया। हालाँकि, उनका कुल वच्छ था। इसी कारण बाद में उन्हें स्पष्ट रूप से "पिलिंदवच्छा" कहा जाने लगा (पहनायित्थ)। बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (संसार) के कारण अत्यधिक पश्चाताप से प्रेरित होकर, उन्होंने संसार का त्याग कर एक घुमंतू तपस्वी (परिब्बाजक) बन गए, चूल अंधार नामक व्यावहारिक ज्ञान (विज्जा) में स्वयं को सिद्ध

कर लिया, आकाश में विचरण करने वाले (आकाशचारी) और दूसरों के विचारों के ज्ञाता (परचित्तविदू) बन गए, सर्वोपरि लाभ और प्रसिद्धि प्राप्त की और राजगृह में अपना उचित निवास स्थान बना लिया।

इसके बाद जब हमारे भगवान बुद्ध विशेष रूप से स्वयं-जागृत बुद्ध बने और धीरे-धीरे राजगज पहुंचे, तब से बुद्ध की शक्ति के कारण, उनका व्यावहारिक ज्ञान (विज्जा) ठीक से काम नहीं कर रहा था; वे अपने कार्यों (किच्चा) को पूरा नहीं कर पा रहे थे। उन्होंने इस प्रकार चिंतन किया: “मैंने इस विषय में शिक्षकों की परंपरा से यह सुना है: “जहां महान गंधार का व्यावहारिक ज्ञान (विज्जा) प्रचलित होता है, वहां लघु गंधार का व्यावहारिक ज्ञान (विज्जा) निष्फल हो जाता है (न सम्पज्जति); जब से भिक्षु गौतम (यहां) आए हैं, तब से मेरा यह व्यावहारिक ज्ञान ठीक से काम नहीं कर रहा है (संपज्जति); निःसंदेह भिक्षु गौतम महान गंधार के व्यावहारिक ज्ञान (विज्जा) को जानते हैं; "यह बेहतर होगा कि मैं उनकी सर्वांगीण सेवा करूं और उनकी उपस्थिति में व्यावहारिक ज्ञान (विज्जा) सीखूं।" वह भगवान बुद्ध के पास गए और इस प्रकार बोले: "हे महान भिक्षु! मैं आपकी उपस्थिति में व्यावहारिक ज्ञान (विज्जा) सीखना चाहता हूं; कृपया मुझे एक अवसर प्रदान करें।" भगवान बुद्ध ने कहा: "तो फिर, तुम्हें भिक्षु बन जाना चाहिए।" उन्होंने यह सोचकर भिक्षु बन गए: "भिक्षुता व्यावहारिक ज्ञान (विज्जा) के लिए आवश्यक प्रारंभिक चरण (परिकम्मा) है।" भगवान बुद्ध ने उन्हें धर्म का उपदेश दिया और उनके आचरण (चरित) के अनुरूप मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) प्रदान किया। उपनिस्य बनने के लिए पर्याप्त योग्यता प्राप्त होने के कारण उन्होंने विपश्यना (स्पष्ट अंतर्दृष्टि) विकसित की और शीघ्र ही अरहंत पद प्राप्त कर लिया। जिन दिव्य प्राणियों ने अपने पिछले जन्म में उनके उपदेशों का पालन किया था, वे स्वर्ग (सग्ग) में पुनर्जन्म लेकर, उनके प्रति अत्यधिक कृतज्ञता से भरे (बहुमान) होकर, सुबह-शाम थेरा की सेवा करते हुए अपने मार्ग पर चले गए। यही कारण है कि थेरा को दिव्य प्राणियों द्वारा सबसे अधिक प्रेम और स्मरण प्राप्त हुआ। अतः अपदान में कहा गया है:—

“जब विश्व रक्षक सुमेधा,

सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति ने निर्वाण प्राप्त किया, यानी धार्मिक बन गया।

मैंने नेक और दयालु मन से श्रद्धापूर्वक व्यवहार किया।

मंदिर में चढ़ाया गया प्रसाद।

जो लोग थेरा चिकित्सा से मुक्त थे,

छह प्रकार के अतिज्ञान और उच्च

मैंने जादुई शक्तियों को एक साथ लाया।

मैं वहां गया और मैंने पादरियों के लिए भोजन बनाया।

गौरवशाली का सेवक

उस समय सुमेधा नाम से एक व्यक्ति जाना जाता था।

सुमेधा के। उस अवसर पर, उन्होंने

धन्यवाद दिवस।

मेरी उस मनभावन धार्मिकता के कारण

ध्यान रहे, मैं (स्वर्गिक) महल में पहुँच गया।

छियासी हजार अप्सराओं ने मुझे चकित कर दिया।

लेकिन मेरे लिए वे हमेशा मेरे पीछे-पीछे चलते थे, हर समय मेरे इशारे पर चलते थे।

(अनुवत्तंति), वे मुझे हमेशा प्रदान करते हैं

सभी इंद्रिय सुखों के साथ। मैं अति-

अन्य दिव्य प्राणियों को शक्ति प्रदान करता था; यही वह शक्ति थी।

मेरे पुण्य कर्म का फल।

पच्चीस युग (कप्पा) पहले, मैं एक था

योद्धा राजकुमार (खटिया) जिसका नाम वरुण था।

मैं उन लोगों में से था जिन्हें साफ-सुथरा खाना पसंद था;

मैं उस समय विश्वराज था। उन्होंने बीज नहीं बोए।

बीजों का भी उन्होंने उपयोग नहीं किया।

हल चलाना; लोगों ने ऐसी जौ (साली) का सेवन किया।

वह लकड़ी की आग पर नहीं पकाया गया था।

वहाँ अपनी संप्रभुता का प्रयोग करने के बाद

मैं फिर से एक दिव्य प्राणी बनने के लिए गया।

तब भी मैं इसी प्रकार का था,

धन-दौलत से समृद्ध होकर उभरे।

चाहे मित्र हो या शत्रु, सभी प्राणी

उन्होंने मुझे कभी परेशान नहीं किया। मैं सभी का प्रिय था।

उनमें से भी; यही इसका फल है

मेरा पुण्य कर्म।

तीस हजार युग पहले, जो भी हो

मैंने तब दान दिया था; मुझे याद नहीं है

कोई भी विपत्ति (दुग्गति); यही है

मीठी सुगंध के लेप का फल।

इस पांच बुद्धों के युग में (भद्दा

(कप्पा) मैं पुरुषों का सम्राट बन गया; मैं

वह एक महान शक्ति वाला राजा था, विश्व-

अत्यंत शक्तिवान राजा।

मैंने बहुत से लोगों को स्थापित किया

पाँच नैतिक उपदेश; मैंने उन्हें लोगों तक पहुँचाया

लेकिन स्वर्ग (सगति) में; मैं प्रिय बन गया

देवताओं (देवों) का।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी, ... बुद्ध की

निर्देश का पालन किया जा चुका था।

इसी प्रकार, वास्तव में, क्योंकि उनके थेरा देवताओं के अत्यंत प्रिय थे, भगवान ने उन्हें देवताओं द्वारा प्रिय और आदरपूर्वक याद किए जाने की स्थिति में सर्वोपरि स्थान दिया और कहा: "हे भिक्षुओं! यह मेरे शिष्य भिक्षुओं में देवताओं द्वारा प्रिय और आदरपूर्वक याद किए जाने वाले प्रमुख हैं, अर्थात् यह पिलिंडा वच्छ। एक दिन भिक्षुओं के बीच बैठे हुए, उन्होंने अपने गुणों पर चिंतन किया और "स्वागाहपगतं" से शुरू होने वाले एक श्लोक का पाठ किया, जिसमें ज्ञान के संकेतों (विज्जानिमित्त) के आगमन की प्रशंसा की गई थी, जो उन गुणों का कारण (कारण) बन गए थे, भगवान की उपस्थिति में।

9. वहाँ 'स्वागतं' अभिव्यक्ति का अर्थ है उत्तम आगमन; यह मेरा है; इस प्रकार, संबंध है। दूसरे शब्दों में, 'स्वागतं' का अर्थ है मेरे द्वारा सुचारु आगमन; अत:, विभत्ती (विभाति) को परिवर्तित किया जाना चाहिए। 'नापगतं' अभिव्यक्ति का अर्थ है बाहर न जाना, कल्याण के विशेष विकास से विमुख न होना। 'नयिदं दुमन्तितं नाना' अभिव्यक्ति का अर्थ है: मेरे लिए, यह न तो गलत कहा गया था और न ही गलत ढंग से जाँचा गया था। यह कहा गया है: भगवान बुद्ध की उपस्थिति में मेरा आगमन, या मेरा वहाँ आना, शुभ आगमन था; सुचारु आगमन की स्थिति के कारण, यह भी अशुभ आगमन नहीं था। मेरे लिए, जैसा कि कहा गया था, "मैं भगवान बुद्ध की उपस्थिति में धर्म सुनूंगा और भिक्षु बनूंगा" या मेरे मन द्वारा जाँचा गया था, यह भी गलत नहीं कहा गया था। अब, वहाँ कारण बताने के लिए, उन्होंने कहा: "संविभत्तेषु" इत्यादि। "संविभत्तेषु" का अर्थ है: विशेषता (पकार) के दृष्टिकोण से विश्लेषित किया गया। "धम्मेषु" का अर्थ है बोधगम्य सत्य (धम्म); या शमन के सत्य (समथधम्म); उक्त सत्यों (धम्म) का भली-भांति विश्लेषण, विधर्म (तित्तिया) के विभिन्न विवरणों और पीड़ा (दुक्खा) इत्यादि के माध्यम से आत्म-जागृत बुद्धों द्वारा किया गया। "यंसेट्ठं तदुपागमं" का अर्थ इस प्रकार है: जो कुछ भी सर्वोत्तम है, वही चार प्रकार के श्रेष्ठ ऋतु (चतुश्च) का उपदेश (धम्म) है। मैंने या तो शासन (सासन) के उपदेश (धम्म) को जानने के लिए या यह कहते हुए कि: "यह धम्म है और यह विनय है" के लिए प्रयास किया; या जो कुछ भी सर्वोत्तम, उत्कृष्ट, स्पष्ट रूप से फलदायी है, जो अच्छे कर्मों (कुसल) आदि के माध्यम से और स्कंध आदि के माध्यम से, उनके स्वरूप के अनुसार अच्छी तरह से विश्लेषित प्राकृतिक सत्यों (धम्म) में है, लेकिन आत्म-जागृत बुद्धों द्वारा, उस मार्ग (मार्ग), उस श्रेष्ठ फल (फल) और उस निर्वाण सत्य (धम्म) तक मैं पहुंचा; अपने व्यक्तिगत अनुभव से मैं उस ओर बढ़ा और मैंने कल्पना की; इसलिए, मेरे लिए, यह अच्छा मार्ग (स्वागतं) था, लेकिन अपगत नहीं, अच्छी तरह से घोषित था, लेकिन गलत तरीके से घोषित नहीं था; इस प्रकार, यह व्याख्या है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा पिलिंडावच्चा का

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(10):पुन्नमसा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (10) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
10. पुन्णमास
इस बुद्ध युग में समिद्धि के रूप में पुनर्जन्म लेकर, सावत्थी के एक ब्राह्मण (पुजारी) ने पुत्र के जन्म पर संसार त्याग दिया और परम पूज्य (बुद्ध) के अधीन भिक्षु संघ में प्रवेश करके, चार सत्यों को अपने ध्यान का अभ्यास बनाया और अरहंत बन गए। उनकी पूर्व पत्नी ने उन्हें उनके धर्म से विमुख करने का प्रयास किया, सजे-धजे रूप में और अपने बच्चे के साथ उनसे मिलने आई । [16] परन्तु भिक्षु ने पूर्ण वैराग्य का प्रदर्शन करते हुए यह कथन (गाथा) कहा:

[10] विहारी अपेक्खा इधा वा हुराअ वा॥
यो वेदागु समितो यत्ततो॥
सब्बेसु धम्मेसु अनुपालितो॥
लोकास्सा धन्ना उदयबबयान्या' ति.॥ ॥

[10] इस या दूसरे जीवन के लिए
मैंने सभी लालसाओं को अपने से दूर रखा है, जैसे कि मैंने
स्वयं को सत्य देखा है, जिसका हृदय शांत है,
जो स्वयं को वश में रखते हुए, सभी चीजों में निष्कलंक है,
जो संसार के निरंतर उतार-चढ़ाव को समझता है।

तब स्त्री ने सोचा, 'यह पवित्र व्यक्ति न तो मेरी परवाह करता है और न ही बच्चे की; मैं उसे मना नहीं सकती,' और चली गई। [1]

[1] इस कहानी की एक विचित्र विशेषता यह है कि अध्याय II में इसे पुन्णमास की कहानी के रूप में दोहराया गया है, टीकाकार ने किंवदंती और लेखकत्व में पर्याप्त समानता पर ध्यान नहीं दिया है। देखें भजन संहिता CXLVI.

1.1-10[10] श्लोक पर टिप्पणी

पुन्णमास थेरा
विहारीपेक्खं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पुण्णमास का श्लोक है। क्या यही इसकी उत्पत्ति है? ऐसा कहा जाता है कि भगवान विपस्सी के समय में उनका जन्म एक लाल हंस (चक्कवाक) के गर्भ में हुआ था। भगवान को जाते हुए देखकर, पक्षी का मन श्रद्धा से भर गया, उसने अपनी चोंच से साल का फूल इकट्ठा किया और उसे श्रद्धापूर्वक अर्पित किया। इस पुण्य कर्म के कारण वह देव-देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेता रहा और आज से आठ सत्रह युग पहले विश्वराज बना। इस युग (कप्पा) में, जब प्रतापी कस्सपा का युग समाप्त हो रहा था, तब उनका पुनर्जन्म एक कुटुंबी परिवार में हुआ। उन्होंने संसार त्याग दिया, भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया और वहाँ से देह त्यागने के बाद, उन्होंने बार-बार जन्म-मृत्यु का चक्र पूरा किया और सावत्थी नगर में समिद्धि नामक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, उसी समय बुद्ध का जन्म हुआ। जिस दिन उनका जन्म हुआ, उस घर के सभी खाली पात्र (कुंभी) सोने के सिक्कों से भर गए। इसी कारण उनका नाम पुण्णमासा रखा गया। वयस्क होने पर उन्होंने सभी प्रकार के ब्राह्मण विज्ञान (विज्जा) में निपुणता प्राप्त की, विवाह किया, पुत्र प्राप्त किया, अरहंत पद के लिए पर्याप्त योग्यता (उपनिषय) प्राप्त होने के कारण गृहस्थ जीवन से विमुख हो गए, भगवान के पास गए, उनकी शिक्षा (धम्म) सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, संसार का त्याग किया, भिक्षु दीक्षा (उपसंपदा) प्राप्त की, प्रारंभिक कर्तव्यों से परिपूर्ण हो गए, चार प्रकार के आर्य सत्यों (चतुश्च) के मानसिक अभ्यास

(कम्मट्ठान) में पूरी निष्ठा से लगे रहे, स्पष्ट आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में तत्परता से लगे रहे और अरहंत पद प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

सिंधु नदी के किनारे, मैं

तब वह एक लाल हंस (चक्कवाका) था।

मैं साफ काई खाता था और मैं

बुराई से बचने में उसने अच्छा संयम बरता।

काम।

मुझे स्टेनलेस स्टील की बुद्ध प्रतिमा दिखाई दी।

आकाश के माध्यम से। साल को तोड़ना (पग्गेहा)।

मैंने अपनी चोंच के माध्यम से विशेष रूप से फूल भेंट किया।

(अभिरोपयिं) इसे बुद्ध विपस्सी को सौंप दें।

जिसकी तथागत में अटूट आस्था थी

और सुस्थापित लोग नरक में नहीं गए

(दुग्गति) क्योंकि पवित्र मन के कारण।

आपकी उपस्थिति में आना मेरे लिए निश्चित रूप से सुखद था।

परम उत्कृष्ट बुद्ध का; शांत

मैंने आकाश में यात्रा करने वालों के लिए एक अच्छा बीज बोया था।

यह आज से 91 आरोन (कप्पा) साल पहले की बात है।

मैंने श्रद्धापूर्वक फूल अर्पित किए। मैं नहीं।

किसी भी विपत्ति (दुग्गति) को याद रखें; यही वह स्थिति है

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई भेंट का फल।

सुचारुदस्सन नाम से, ये आठ एक ही हैं

एक ही नाम ने महान शक्ति के विश्व राजा का दर्जा हासिल कर लिया

सत्रह युगों में (कप्पा)। मेरे विभिन्न प्रकार

दुराचार (किलेसा) के कारण जला दिया गया था; ... बुद्ध का

निर्देश (शासन) का पालन किया जा चुका था।

फिर, उनकी पूर्व पत्नी उन्हें लुभाने की इच्छा से, अपने सजे-धजे बेटे के साथ उनके पास आई और मधुर वादन आदि के माध्यम से अपनी अवस्था (भावविवरण) को प्रकट करने का प्रदर्शन (कम्म) करने लगी। उनका यह प्रदर्शन देखकर, थेरा ने "विहारी अपेक्खं" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिससे उन्होंने अपने अनासक्ति भाव को प्रकट किया।

10. वहाँ, विहारी शब्द का अर्थ है 'उठाकर ले जाया गया', 'दूर ले जाया गया'। अपेक्खं शब्द का अर्थ है 'लालसा' (तन्हा)। इध शब्द का अर्थ है 'या तो इस संसार में या अपने स्वयं के अस्तित्व में'। हुरं शब्द का अर्थ है 'या तो आने वाले समय में या भविष्य के अस्तित्व में'। दूसरे शब्दों में: इध इंद्रियों के आंतरिक निवासों को संदर्भित करता है। हुरं इंद्रियों के बाह्य निवासों को संदर्भित करता है। व्याकरणिक शब्द 'वा' एक कण है जो संचय को दर्शाता है, जैसे कि "अपदा वा द्विपदा वा, बिना पैरों वाला और दो पैरों वाला", इत्यादि। यो शब्द स्वयं को इंगित करता है मानो किसी दूसरे को। वेदगू शब्द का अर्थ है: ज्ञान (वेद) के माध्यम से जाना, ज्ञान (ज्ञान) के माध्यम से निग्गान प्राप्त करना, सही मार्ग (मार्ग) का ज्ञान प्राप्त करना; वैकल्पिक रूप से, पूर्ण ज्ञान (अभिसामय) के माध्यम से चारों आर्य सत्यों (सच्च) को जानकर (अभिसामेच्च) खड़े हुए, अर्थात्; सर्वांगीण बोध (परिञ्ञा) और दु:ख से बचाव (पाहन), निर्वाण का दर्शन (सच्चिकिरिया) और निर्वाण की ओर ले जाने वाले मार्ग का विकास (भावना)। अभिव्यक्ति यतत्तो का अर्थ है आर्य मार्ग (मेग्गा) के आत्म-नियंत्रण के माध्यम से आत्म-नियंत्रण की अवस्था; वैकल्पिक रूप से सही प्रयास के माध्यम से आत्म-नियंत्रण की अवस्था। अभिव्यक्ति: सब्बेसु धम्मेसु अनुपालित्तो का अर्थ है: सभी इंद्रिय विषयों (आरम्मण धम्म) में लालसा (तन्हा) और विधर्मी दृष्टिकोण (दिट्ठी) से दूषित न होना। इससे वह यह दर्शाता है कि वह जीवन के उतार-चढ़ावों (लोकधम्म) जैसे लाभ (लाभ) आदि से परे (समतिक्कम) हो चुका है। लोकस्स का अर्थ है आसक्ति (उपादान) के पाँच समूहों (खंड) में से, वास्तव में यही संसार (लोक) है, जो विघटन (लुज्जन) और विनाश (पलुज्जन) के कारण है। जाञ्ञा का अर्थ है जानना। उदयब्बयंच का अर्थ है उत्पन्न होना और नष्ट होना; इससे वह उचित अभ्यास (पटिपदा) को दर्शाता है, जो बताए गए गुणों का पूर्व भाग (पुब्बभाग) है। लेकिन यहाँ इसका अर्थ यह है: — जो कहीं से भी अछूता (उपलित्त) है, जो आत्मसंयमित (यतत्त) है, जिसने संपूर्ण जगत के प्रकट होने और लुप्त होने (उदयब्बय) का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, साथ ही पचास प्रकार के गुणों का भी ज्ञान प्राप्त कर लिया है, वह सर्वत्र व्यथा का नाश करेगा और संतुष्ट होकर तुम्हारे द्वारा किए गए इतने सारे परिवर्तनों को सार्थक नहीं समझेगा; इसलिए, हे अंधे मूर्ख! तुम्हें उसी मार्ग से वापस जाना चाहिए जिससे तुम आए हो।" इस पर वह स्त्री यह कहते हुए विदा हुई: "इस भिक्षु के मन में न तो मेरे लिए और न ही मेरे पुत्र के लिए कोई व्यथा थी; उसे लुभाना संभव नहीं है।"

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा पुण्णमास का पूर्ण हो चुका है।

**********oOo*********

प्रथम अध्याय पर टीका

परमत्थदीपनी की टीका

थेरागाथा पर

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(11): गवाचा द यंगर

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (11) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
भाग II
11. गवच्छा छोटा
कोसंबी में ब्राह्मण (पुजारी) के रूप में पुनर्जन्म लेकर और भगवान बुद्ध का उपदेश सुनकर, उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया। उस समय कोसंबी के भिक्षु आपस में झगड़ रहे थे। [1] तब गवच्छ ने किसी भी पक्ष का साथ न देते हुए, भगवान बुद्ध के अनुशासन (शिक्षा) में दृढ़ रहते हुए, अंतर्दृष्टि विकसित की और अर्हतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। भिक्षुओं के झगड़ालू स्वभाव में अपने स्वयं के कल्याण के पतन का कारण देखकर, उन्होंने अपनी विपरीत स्थिति पर प्रसन्नता और उत्साह के साथ विचार किया और कहा:

[11] पमोज्जाबहुलो भिक्खु धम्मे बुद्धप्पावेदिते॥
अधिगच्छे पादौ संतं संखरूपसामां सुखन्ति॥ ॥

[11] यह भिक्षु अत्यंत प्रसन्न हुआ,
क्योंकि बुद्ध द्वारा प्रकट किए गए आनंदमय सत्य
उसके हैं, और उसने शांति का मार्ग प्राप्त कर लिया है,
और वह आनंद उसका है जहाँ सांसारिक चिंताएँ शांत हो जाती हैं।

[1] ऐसा प्रतीत होता है कि वे बुद्ध की गंभीर और बार-बार की शिक्षाओं के बावजूद भी असाध्य रूप से ऐसे ही थे (मज्ह., i. 320 ff., 513)।

1.2 दूसरा अध्याय

1.2-1[11] श्लोक पर टिप्पणी

Cūḷ avaccha Thera
पामोज्जबहुलो से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा चूलवच्छ का श्लोक है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि भगवान पद्ममुत्तरा के समय में उनका पुनर्जन्म एक दरिद्र परिवार में हुआ था और वे दूसरों की सेवा करके मजदूरी (भाति) कमाते थे। जब उन्होंने भगवान पद्ममुत्तरा के शिष्य सुजाता नामक एक थेरा को कूड़ा-कढ़ाई (पंसुकूल) की तलाश में देखा, तो वे धर्मपरायण हो गए, थेरा के पास गए, उन्हें वस्त्र (वत्था) भेंट किए और पांच प्रकार की उचित मुद्राओं (पंचपतिठित) से उन्हें प्रणाम किया। इस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने तैंतीस बार दैवीय प्रभुत्व का प्रयोग किया। वे सतहत्तर बार विश्वराज बने; अनेक अवसरों पर वे क्षेत्रीय शासक भी रहे। इस प्रकार बार-बार जन्म लेकर देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते हुए, जब परम पूज्य बुद्ध कस्सपा का युग समाप्त होने लगा, तब वे भिक्षु बन गए। उन्होंने भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया, बुद्ध के काल (बुद्धंतर) में समय-समय पर देवताओं और मनुष्यों के बीच रहे, और अंत में भगवान बुद्ध के समय कोसंबी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। उनका नाम चूलवच्छ था। वयस्क होने पर उन्होंने ब्राह्मणों के सभी प्रकार के विज्ञानों में निपुणता प्राप्त की, बुद्ध के गुणों के बारे में सुना, धर्मपरायण हो गए और भगवान बुद्ध के पास गए, जिन्होंने उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। जब वे सच्चे धर्म के योग्य सिद्ध पुरुष बन गए, तो उन्होंने संसार का त्याग कर भिक्षु बन गए, उपसंपदा दीक्षा प्राप्त की, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों को पूरा किया, अपने आचरण के अनुरूप मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) एकत्रित किया और उसी के अनुसार जीवन व्यतीत किया। उस विशेष अवसर पर, कोसंबी के भिक्षुओं में कलह (झगड़ा) हो गया था। उस समय, थेरा चूलवच्छ ने दोनों वर्गों के भिक्षुओं का पक्ष नहीं लिया, बल्कि परमेश्वर द्वारा दिए गए निर्देशों का पालन करते हुए, स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

महान बुद्ध के शिष्य

पदुमुत्तरा, सुजाता नाम से, भटकता था

लगभग उसी समय कूड़े-कचरे के बीच में,

वस्त्र बनाने के लिए चिथड़ों की खोज (पंसुकूल)।

हंसवती नगर में मैं एक दिहाड़ी मजदूर था।

दूसरों के लिए कमाने वाला; भेंट करने के बाद

मेरे लगभग आधे कपड़े

मैंने अपने सिर पर श्रद्धा अर्पित की।

उस कार्य के सफल निष्पादन के कारण

साथ ही मेरा स्व (चेतना) भी

दृढ़ संकल्प (पणिधि) के साथ मैं तावतिंसा पहुँच गया

मेरे द्वारा अपने मानव शरीर को त्याग देने पर मुझे स्वर्ग प्राप्त हुआ।

मैं इकत्तीस बार दिव्य-राजा था

और मैंने दैवीय संप्रभुता का प्रयोग किया; क्योंकि

मैं सतहत्तर बार विश्व बन गया-

राजा।

कई अवसरों पर (विपुल) था

मेरे लिए क्षेत्रीय शासन, संख्यात्मक रूप से

अकल्पनीय।

अपने आधे कपड़े दान करने के कारण, मैं

किसी भी खतरे से मुक्त होकर मुझे खुशी महसूस हुई।

कहाँ।

अगर अब मेरी इच्छा हो तो मैं ढक लूँगा

पहाड़ी पर्वतों सहित पूरा क्षेत्र

आकाश तक पहुँचना (काननम्); यही है

मेरे आधे कपड़े (अर्पित करने) का फल।

यह एक लाख युग पहले की बात है।

मैंने तब अपनी दान राशि की पेशकश की थी, मैं करता हूँ।

किसी आपदा को याद नहीं (दुग्गती)

तब से; यह इसका फल है

(अपने) आधे कपड़े (प्रस्तावित करते हुए)।

मेरी दुष्टता (किलेसा) जल गई थी

पूरी तरह से; ... बुद्ध का निर्देश

कार्य संपन्न हो चुका था।

फिर, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा चूलवच्छ उन भिक्षुओं (भिक्षुओं) के कल्याण को नष्ट होते देखकर आध्यात्मिक रूप से पश्चाताप (धम्मसंवेग) करने लगे, जो झगड़ने में विशेष आनंद लेते थे, और अपनी विशिष्ट उपलब्धि पर विचार करते हुए, उन्होंने उत्साह और आनंद के साथ "पामोज्जबहुलो" से शुरू होने वाला एक श्लोक पढ़ा।

11. वहाँ, अभिव्यक्ति पामोज्जभुलो का अर्थ इस प्रकार समझा जाना चाहिए: उत्कृष्ट सर्वांगीण शुद्ध उपदेशों (शील) और दुर्भावना की अनुपस्थिति (विप्पतिसार) पर धम्म के पारलौकिक अच्छे कर्मों में विशेष रूप से प्रसन्न होने के कारण प्रचुर आनंद प्राप्त करना। इसलिए, इसे इस प्रकार कहा गया है:— “धम्मे बुद्धप्पवेदिता। यहाँ धम्म शब्द का अर्थ है: बोधि में योगदान देने वाली सैंतीस वस्तुएँ (बोधिपक्खिया धम्म) या नौ प्रकार के पारलौकिक सत्य (लोकउत्तरा धम्म)। वास्तव में, इसे बुद्ध द्वारा उत्कृष्ट रूप से (सातिसयं) समझाया गया है, क्योंकि यह सर्वज्ञ बुद्ध द्वारा स्वयं उन्नत और मानकीकृत शिक्षा (देसन) के माध्यम से प्रकट किया गया था। यहाँ शिक्षाप्रद सत्य (देसन धम्म) भी प्राप्त किया जा सकता है, क्योंकि इसकी प्राप्ति के साधन उपलब्ध हैं। पदंसंतं शब्द का अर्थ इस प्रकार है:— उन्होंने निर्वाण के संदर्भ में कहा। वास्तव में, ऐसा भिक्षु (भिक्षु) परम सुख और निर्वाण आनंद को प्राप्त करता है, क्योंकि वह पूर्ण सुख और निर्वाण को प्राप्त करता है। कर्मों की शांति (संखारुपस्सम्म्) संपूर्ण कर्म-सम्करण (संखार) की शांति की स्थिति के कारण होती है, जो शांत मार्ग और शांतिपूर्ण अंश (कोट्ठास) है। वास्तव में, एक भिक्षु, जिसके नैतिक उपदेश सर्वांगीण शुद्ध हैं, असंगतता (विप्पतिसार) के अभाव के कारण, आनंद से भरपूर और अच्छे धर्म में भक्तिपूर्वक लगे रहने के कारण, साथ ही स्पष्ट मुक्ति (विमुक्ति) की ओर अग्रसर होने के कारण, सभी प्रकार की समृद्धि प्राप्त करता है। (ऐसी स्थिति) बुद्ध के कथनानुसार है: “हे आनंद! नैतिक उपदेश अच्छे कर्म हैं जिनमें असंगतता (विप्पतिसार) न होने का लाभ है; असंगतियों से मुक्ति आनंदमय होने के लाभ की ओर सहायक है” इत्यादि। दूसरे शब्दों में, पामोज्जबहुलो का अर्थ है: तीन 'रत्नों' के संबंध में प्रचुर आनंदित होना, जैसे: भगवान बुद्ध उचित रूप से आत्मजागृत बुद्ध हैं, सत्य (धम्म) का उचित उपदेश दिया जाता है, संघ उचित अभ्यास (सुप्पटिप्पन्न) के प्रति समर्पित है। लेकिन फिर, जो आनंद से भरपूर है वह क्या करता है? उन्होंने कहा: “धम्मे*****पृष्ठ 125 (बुद्ध द्वारा ज्ञात सत्य, धम्म है)” इत्यादि। वास्तव में, जो व्यक्ति पवित्र आस्था से संपन्न है, उसके लिए प्रत्येक समृद्धि सहज (हत्थागत) हो जाती है, क्योंकि उचित उपलब्धियों (पटिपेट्टी) का उचित रूप से घटित होना, जैसे अच्छे लोगों के साथ रहना (सप्पुरिससंसेवन), अच्छे सत्य को सुनना (सद्धम्म), बुद्धिमान सचेतनता (योनिसो मनसीकार) आदि। सत्य के अनुसार धर्म (धम्मानुधम्म)। तदनुसार (बुद्ध) ने ऐसा कहा:— जिसमें श्रद्धा (सद्धा) उत्पन्न हुई हो (जातो), वह आगे बढ़ता है; जैसे ही वह आगे बढ़ता है, वह सेवा में तल्लीन हो जाता है (पयिरुपासति) इत्यादि।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा चूलावच्चा का

तैयार है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(12):गवाचा द एल्डर

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।

नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (12) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
12. गवच्चा एल्डर
उनका पुनर्जन्म बुद्ध के समय में मगध के नालक गाँव के ब्राह्मण (पुजारी) समिद्धि के पुत्र के रूप में हुआ। उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया क्योंकि सारिपुत्त [1] ने ऐसा किया था, और वे जानते थे कि सारिपुत्त बहुत बुद्धिमान थे। अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त करने के बाद, और निर्वाण के आनंद का अनुभव करते हुए, उन्होंने अपने साथी शिष्यों को प्रयास करने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु अपना वचन (गाथा) कहा:

[12] पणनाबली सिलावतुप्पन्नो॥
समाहितो झानरतो सतीमा॥
यदत्तियं भोजनं भुञ्जमानो॥
कण्खेथा कलां इधा वीतरागोऽति.॥

[12] बुद्धि में दृढ़, सद्गुण के नियम द्वारा निर्देशित, एकाग्र,
एकाग्रता के आनंद में लीन, फिर भी सतर्क;
ऐसा व्यवहार करो जो तुम्हें केवल लाभ पहुँचाए:
इसलिए विश्वास में, [2] भावनाओं को शांत करके, उस घड़ी की प्रतीक्षा करो।

[1] उसका साथी नगरवासी। देखें CCLIX.; सिस्टर्स, पृ. 98.

[2] इधा; शाब्दिक रूप से 'यहाँ,' 'यहाँ नीचे,' तकनीकी रूप से ऊपर प्रयोग किया जाता है, और इसी प्रकार व्याख्या की जाती है।

1.2-2[12] श्लोक पर टिप्पणी

महावच्चा थेरा
पञ्ञाबल्ली से शुरू होने वाला श्लोक थेरा महावच्छ का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि इन्होंने परम पूज्य बुद्ध पद्ममुत्तरा और भिक्षुओं को पेयजल दान किया था। फिर, वे भगवान सिख धर्म के समय उपासक बने और उन्होंने कई पुण्य कर्म किए जो पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति दिलाने में सहायक थे। इन पुण्य कर्मों के कारण वे पुनर्जन्म के चक्र से भटकते रहे, लेकिन इस सुखमय जीवन में उनका पुनर्जन्म हुआ और वे बुद्ध के प्रकट होने के समय मगध राज्य के नालक गाँव में समिद्धि नामक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पैदा हुए। उनका नाम महावच्छ था। वयस्क होने पर, उन्होंने पूज्य सारिपुत्त के बुद्ध के शिष्य बनने के बारे में सुना और मन ही मन कहा: “यद्यपि वह महान ज्ञानी व्यक्ति भी ऐसे व्यक्ति का शिष्य बनने के लिए आगे आया है, जो मेरे विचार से इस संसार में सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति हैं।” उन्होंने भगवान बुद्ध के प्रति अपनी श्रद्धा को और मजबूत किया, गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बन गए, तदनुसार मानसिक साधना (कम्मट्ठन) में संलग्न हुए और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः, इसमें कहा गया है कि

अपदाना:—

“पवित्र मन और अच्छे हृदय वाला होना

बुद्ध पदुमुत्तरा की ओर और उनके

भिक्षुओं (भिक्षुओं) का वह पुरोहित वर्ग जिसका कोई वरिष्ठ अधिकारी नहीं था

मैंने पीने के पानी के जार भर दिए।

चाहे पहाड़ी की चोटी पर हो, पेड़ की चोटी पर हो या कहीं और।

आकाश में हो या फिर धरती पर, जब भी

मुझे पीने का पानी चाहिए, यह अचानक से निकल आता है

मुझे जल्दी से।

एक लाख युग (कप्पा) पहले

अब से, मैंने ऐसा चढ़ावा चढ़ाया

तब; मुझे किसी विपत्ति की याद नहीं है

(दुग्गति) यह इसका फल है

पीने का पानी उपलब्ध कराना।

मेरी दुष्टता (किलेसा) जलकर भस्म हो गई थी;...

सभी अस्तित्व समाप्त हो गए थे; छह

उच्च ज्ञान के प्रकारों की कल्पना की गई थी;

बुद्ध का उपदेश (शासन) यह था:

किया गया।

इस प्रकार अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, मुक्ति (विमुक्ति) के आनंद का अनुभव करते हुए, उन्होंने साथी पवित्र जीवन के नेता (सब्रह्मचारी) को प्रेरित करने के उद्देश्य से "पञ्ञाबली" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने संसार से मुक्ति (निय्यानिक) की अवस्था को प्रकट किया, जिसे शासन व्यवस्था सुगम बनाती है।

12. यहाँ 'पञ्ञाबली' शब्द का अर्थ है: — ज्ञान (पञ्ञा) की अत्यधिक शक्ति से निरंतर परिपूर्ण होना, जो ज्ञान और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास (परिहार्य) के माध्यम से प्राप्त होता है। 'सीलवतुपपन्नो' शब्द का अर्थ है: — ऐसे नैतिक उपदेशों से सुसज्जित और संपन्न होना जो सर्वांगीण शुद्ध उपदेशों (चतुपारिसुद्धि शील) के समान श्रेष्ठता की अवस्था तक पहुँच चुके हों और ऐसे पालन (वात) से युक्त होना, जिसे कठोर कर्म (धुत धम्म) माना जाता है। समाहितो का अर्थ है, उपचार और अप्पना जैसी विभिन्न प्रकार की एकाग्रता (समाधि) के माध्यम से शांत रहना। झानरतो का अर्थ है, विचार के विषय (अरम्मण) और गुणों (लक्खण) के चिंतन (उपनिज्जान) में आनंदित रहना और सदा विशेष रूप से उसमें लीन रहना। सतिमा का अर्थ है, हर समय सचेत रहकर (अविप्पवास) सचेत रहना। यदत्तियं का अर्थ है, जिस उद्देश्य (अत्तिय) से, लाभ (अथ) से वंचित न रहकर, जो व्यक्ति अपनी इच्छानुसार भोजन करता है, उसे भोजन का सर्वांगीण आनंद प्राप्त होता है (यथा पच्चय); इसी प्रकार, भिजनं भुंजमानो है। वास्तव में, स्वामी (सामी) के उपभोग से या विरासत (दायज्जा) के उपभोग से इसका लाभ होता है; यह ध्यान रखना चाहिए कि यह किसी अन्य रूप में भोजन नहीं है। या तो इसे खाया जाता है या सर्वव्यापी रूप से ग्रहण किया जाता है; इस प्रकार, यह भोजन (भोजन) है; चारों आवश्यक वस्तुएँ (पच्चय)। इसका एक वैकल्पिक पाठ "यदत्तिकं" है; स्वामी ने आवश्यक वस्तुओं की अनुमति किसी भी उद्देश्य से, जिसके भी लाभ के लिए दी है, वह उद्देश्य शरीर की स्थिरता (ठिति) आदि के लिए है; और यह ऐसे निर्वाण के उद्देश्य से भी है जो अस्तित्व का कोई आधार न छोड़े (अनुपादिसेष)। अतः, अनुपादपरिनिर्वाण के लिए आवश्यक भोजन ग्रहण करने के बाद, कंखेत काल (प्रतीक्षा समय) तक, अस्तित्व के किसी भी आधार को छोड़े बिना पूर्णतः निर्वाण में विलीन होने के समय की प्रतीक्षा करनी चाहिए। इधा का अर्थ है इस अवस्था (शासन) में। वीतरागो का अर्थ है, परन्तु बाहरी व्यक्ति के लिए, जो कामवासना (राग) से रहित हो चुका है, यह अस्तित्व में नहीं है; इस प्रकार, यही अर्थ है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा महावच्चा का

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(13):वनवाच्चा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (13) ------>>>> अगला
अध्याय I.
एकल श्लोक
13. वनवच्छ
इस बुद्ध युग में उन्होंने कपिलवस्तु में वच्छ ब्राह्मण (पुजारी) वंश में पुनर्जन्म लिया। उनका जन्म वन में हुआ था, उनकी माता को उस वन में टहलते समय प्रसव पीड़ा होने लगी थी जिसे देखने की उन्हें बहुत लालसा थी। वे भविष्य के बुद्ध के साथ रेत में खेलने वाले साथियों में से एक बन गए। और क्योंकि उन्हें वन से प्रेम था, इसलिए उन्हें वन-वच्छ के नाम से जाना जाता था। [1] बाद में, जब उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया, [18] तो उन्होंने वन में ही अर्हत्व (ज्ञान) प्राप्त करने के लिए प्रयास किया और उसे प्राप्त किया। और वन जीवन की प्रशंसा में ही उन्होंने अपना कथन (गाथा) कहा, जब भिक्षुओं ने उनसे पूछा: 'वन में आपको क्या विश्राम मिल सकता है?' तो उन्होंने उत्तर दिया: 'मेरे मित्रों, वन और पर्वत कितने आनंदमय हैं!'

[13] नीलाभवाना रुचिरा सीतावारी सुचिंधरा॥
इंदगोपकासञ्चन्ना ते सेला रामयंति मन' ती॥ ॥

[13] आकाश के नीले बादलों के रंग वाली चट्टानें, जहाँ क्रिस्टल-स्पष्ट, ठंडे पानी के
कई चमकते हुए तालाब घिरे हैं , और जिनकी ढलानों को 'इंद्र के झुंड' [2] ढकते और सजाते हैं: वे पहाड़ियाँ हैं जिनमें मेरा मन प्रसन्न होता है।

[1] मानो किंवदंती उन्हें प्रकृति से और अधिक जोड़ने का प्रयास करती हो, उनके पिछले जन्मों में से केवल दो का ही विस्तार से वर्णन किया गया है, जिनमें उन्हें एक कछुआ और एक कबूतर के रूप में दर्शाया गया है। यह छंद, इसी तरह के अन्य छंदों के साथ, कस्सपा की कविता (CCXLIV) में दोहराया गया है। फिर से, दो पुन्ना-मलसा कथनों (गाथाओं) की तरह, टीकाकार नाम की समानता पर, न ही कहानी और छंद में सार की समानता पर ध्यान देता है। यह छंद लंबी कविता (CCLXI) में शामिल किया गया है।

[2] इन्दगोपका-संचन्ना 'इंद्र के ग्वालों से आच्छादित।' टीका के अनुसार (चाइल्डर्स देखें , 'बारिश के बाद दिखाई देने वाला एक लाल भृंग'), ये मूंगा-लाल रंग के कीड़े (किमी) हैं, जिनका उल्लेख हाल की बारिश के संदर्भ में किया गया है, लेकिन कुछ लोग इन्हें लाल घास कहते हैं, तो कुछ लोग इन्हें कणिकारा वृक्ष (टेरोस्पर्मम एसरीफोलियम) कहते हैं। किसी पहाड़ी या ऊंचे इलाके के चित्र में दिखने के लिए, इन लाल कीड़ों का झुंड होना आवश्यक है। इंद्र की गायें - यानी बादल - पृष्ठभूमि को कहीं अधिक आसानी से भर देते। हालाँकि, सर चार्ल्स एलियट ने मुझे बताया है कि रूसी लोग लेडीबर्ड को 'भगवान की छोटी गायें' (बोझ्या कोरोविका) कहते हैं; और गर्मियों के अंत में ऊपरी अल्पाइन चरागाहों पर मैंने लाल (? बर्नेट) पतंगों को झाड़ियों पर झुंड में देखा है। रंग के बारे में; देखें विन., iii. 42.

1.2-3[13] श्लोक पर टिप्पणी

वनवच्छा थेरा
नीलाब्भवण्णा से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा वनवच्छ का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि भगवान अत्थदस्सी के समय में उनका जन्म एक कछुए के गर्भ में हुआ था और वे वीणाता नामक नदी में रहते थे। उनका शरीर एक छोटी नाव के आकार का था। कहा जाता है कि एक दिन उस कछुए ने भगवान को नदी के किनारे खड़े देखा और मन ही मन कहा, "मुझे लगता है कि भगवान दूसरे किनारे जाना चाहते हैं," और उन्हें अपनी पीठ पर बिठाकर ले जाने की इच्छा से उनके चरणों में लेट गया। भगवान ने उसकी इच्छा जान ली और उस पर दया करके उस पर सवार हो गए। कछुआ उत्साह और प्रसन्नता से भर गया और नदी को पार कर गया और उन्हें तुरंत दूसरे किनारे पर ऐसे भेज दिया जैसे कोई तीर धनुष की डोरी से तेज़ी से चलाया गया हो। भगवान बुद्ध ने उस पुण्य कर्म के फल की भविष्यवाणी उसी क्षण की, साथ ही भविष्य में उत्पन्न होने वाली समृद्धि की भी भविष्यवाणी की और वे प्रस्थान कर गए। उस पुण्य कर्म के फल के कारण, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए, संसार का त्याग किया और कई सौ बार तपस्वी जीवन व्यतीत किया और वनवासी बन गए। फिर बुद्ध कश्यप के समय में, उनका एक कबूतर के गर्भ में पुनर्जन्म हुआ और वन में प्रेममयी भिक्षु को देखकर कबूतर का मन प्रसन्नतापूर्वक भक्तिमय हो गया।

वहाँ से मृत्यु के बाद, उनका पुनर्जन्म बनारस के एक परिवार में हुआ और वयस्क होने पर वे पश्चाताप से ग्रस्त हो गए, संसार का त्याग कर उन्होंने अनेक पुण्य कर्म किए, जो पुनर्जन्मों के चक्र से मुक्ति दिलाने में सहायक थे। इस प्रकार, वे इस और उस लोक में, देवताओं और मनुष्यों के बीच, अपने पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका गर्भ कपिलवस्तु नगर के वच्छगोत्त नामक एक ब्राह्मण के घर में हुआ। उनकी माता, जो गर्भावस्था में पूर्णतः परिपक्व हो चुकी थीं, वन देखने की तीव्र इच्छा से वन में प्रवेश कर गईं और वहाँ विचरण करने लगीं। तभी उन्हें प्रसव पीड़ा (कम्मजावत) हुई; तब उन्हें चारों ओर से पर्दा (तिरेकरणी) लगा दिया गया। उन्होंने एक पुत्र को जन्म दिया जिसमें भविष्य में सौभाग्य और पुण्य के लक्षण दिखाई दिए (धञ्ञपुञ्ञलक्खण)। वह बोधिसत्व के साथ कोमल रेत में खेलने का साथी बन गया (पम्सुकीलान)। उसकी गर्दन के बाल भी "वच्छा" थे। जंगल में विशेष आनंद होने के कारण वह वनवच्छ के नाम से जाना जाता था। इसके बाद जब भगवान ने महात्याग का त्याग किया और महापधान कर रहे थे, तब उन्होंने संसार का भी त्याग कर स्वयं से कहा: “मैं भी राजकुमार सिद्धार्थ के साथ वन में निवास करूँगा।” और एक संन्यासी बनकर वे वन में रहने लगे। उन्हें पता चला कि राजकुमार विशेष रूप से आत्म-जागृत बुद्ध बन गए हैं, वे भगवान के पास गए, भिक्षु बन गए, मानसिक साधना (कम्मट्ठाना) में लग गए, वन में ही रहे, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में लीन रहे और अरहंतत्व का दर्शन किया, लेकिन कुछ ही समय बाद। इसलिए, अपदान में कहा गया है:

“हे भगवान अत्थादस्सी, स्वयं-

तथागत को विश्व का नेता बनाया गया

विनाटा नदी के किनारे की ओर अग्रसर हुआ।

मैं, कछुआ, जिसका चारागाह पानी में है

विशेष रूप से पानी से बाहर निकला और पास पहुंचा

मैं दुनिया का नेता बनने की इच्छा रखता था।

बुद्ध को नदी के पार भेजने के बारे में।

महान ऋषि बुद्ध अत्थादस्सी को

मुझ पर सवार हो जाओ, मैं तुम्हें पार पहुंचा दूंगा;

हे दुखों के अंत के निर्माता!

(दुख)।

क्योंकि वह मेरा इरादा जानता था, इसलिए

प्रसिद्ध अत्थादस्सी मेरी पीठ पर सवार हो गया और

विश्व का नेता उस पर खड़ा था।

जहां तक मुझे याद है, जब से मैंने

बुद्धि के युग में, सुख का युग था।

मेरे लिए, ठीक वैसे ही जैसे मुझे उनके पैरों के तलवे का स्पर्श मिला था।

स्वयंजागृत बुद्ध अत्थादस्सी, जो महान ख्यातिप्राप्त हैं,

पार करने के बाद, किनारे पर खड़ा हो गया

नदी के किनारे खड़े होकर उन्होंने ये छंद कहे:—

'जब भी मेरे मन में यह विचार आता कि मैं ऐसा करूंगा'

बहती नदी को पार करो, कछुओं का यह राजा।

ज्ञान के स्वामी ने मुझे भेजा' इस कारण

बुद्ध को पार भेजने और कर्तव्यनिष्ठ

प्रेम और दयालुता से भरा हृदय, कछुए को आनंद आएगा

स्वयं को दिव्य जगत में अठारह सौ वर्षों तक बनाए रखा।

युग (कप्पा)।

दिव्य लोक से यहाँ आने के कारण,

उज्ज्वल आधार (सुक्कमूल) से उत्तेजित होने के कारण वह

वह एक सीट पर बैठ जाता और पार कर जाता।

अनिश्चितता की धारा (kaṇkhāsotaṃ) के ऊपर।

ठीक वैसे ही जैसे उपजाऊ खेत में, इसके बावजूद लेकिन

जब सही मात्रा में बीज बोए गए थे, तब कुछ ही बीज बोए गए थे।

बारिश से पानी मिलता है, फसल की कटाई होती है।

यह किसान को ठीक उसी तरह संतुष्ट करता है।

इस प्रकार, बुद्ध का यह उपजाऊ क्षेत्र, जिसके द्वारा शिक्षा दी गई है

स्वयंजागृत उत्कृष्ट बुद्ध, जब उचित स्नान

बारिश से मुझे पानी मिलता रहे, इससे मुझे संतुष्टि मिलेगी।

मुझे।

मैं उन लोगों में से हूं जिनका मन कठिन परिश्रम की ओर उन्मुख है।

प्रयास, शांत और नियंत्रित (निरुपाधि);

सभी को समझ लिया सभी रोग (आसव) मैं रहता हूँ

बिना किसी रोग (आसव) के।

मैंने वह काम तब किया था, इसलिए मुझे कुछ याद नहीं है।

अठारह सौ युगों (कप्पा) के लिए विपत्ति; यह

यह भेजने का फलस्वरूप प्राप्त हुआ है।

मेरे पाप (किलेसा) जलकर भस्म हो गए थे... बुद्ध के

निर्देश (शासन) का पालन किया जा चुका था।

लेकिन अरहंत बनने के बाद, जब भगवान कपिलवस्तु में निवास कर रहे थे, तब वे वहाँ गए, गुरु को प्रणाम किया और जब वहाँ उपस्थित भिक्षुओं ने उनसे बातचीत के दौरान पूछा, “मित्र! आपने वन में सुखमय जीवन कैसे प्राप्त किया?” तो उन्होंने उत्तर दिया, “मित्रों! वन की पहाड़ियाँ बहुत रमणीय हैं” और उन्होंने “नीलब्भवण्णा” से शुरू होने वाला एक श्लोक सुनाया, जिसमें उन्होंने उस पहाड़ी की प्रशंसा की जहाँ वे स्वयं निवास करते थे।

13. वहाँ, 'नीलब्बवण्णा' का अर्थ है नीले आकाश के समान, नीले आकाश के स्वभाव वाला। 'रुचिरा' का अर्थ है: तेज से चमकीला और तेजस्वी। 'सीतवारी' का अर्थ है ठंडा पानी। 'सुचिन्धरा' का अर्थ है कि भूमि का यह भाग स्वच्छ और शुद्ध होने के कारण शुद्ध मन वालों या कुलीनों (आर्य) के निवास के लिए एक पवित्र स्थान है। वास्तव में, काव्य की सरलता के लिए व्याख्या शब्द को उसके संबंधित अनुनासिक के साथ मिलाकर की गई है। एक पाठ इस प्रकार भी है: "सीतवारीसुचिन्धरा; इसमें ठंडे स्वच्छ जल और ठंडे शुद्ध जल की आपूर्ति होती है; यही इसका अर्थ है। अभिव्यक्ति: indagopakasañ-channā का अर्थ इस प्रकार है:— वर्षा के समय मूंगे के रंग के लाल कीड़ों से पूरी तरह ढका हुआ होना, जिन्हें indagopaka कहा जाता है, इस प्रकार कहा जाता है। हालाँकि, कुछ लोग इसे इस प्रकार कहते हैं: “Indagopakanāmāni, लाल सरकंडे जिन्हें “indagopaka” कहा जाता है।” कुछ लोग कहते हैं: “कणिकाररुक्खा (कणिकार पीले फूलों के वृक्ष)। सेला का अर्थ है मिट्टी के ढेर से बनी पहाड़ियाँ; यही इसका अर्थ है। इसीलिए बुद्ध ने कहा: “यथा पि पब्बतो सेलो (जैसे पत्थर की पहाड़ी भी)। रामयंति मम् का अर्थ है: उन्होंने मुझे विस्मित किया; उन्होंने एकांत में विशेष आनंद से मुझे बल दिया। इस प्रकार, थेरा ने अपने उस विशेष एकांत आनंद को प्रकट करते हुए, जो लंबे समय से विकसित हो रहा था, एकांत में विशेष आनंद के केवल तीन रूपों को उजागर किया। वहाँ, अस्तित्व के आधार (उपधिविवेक) के एकांत के माध्यम से ही उनके अरहंतत्व (अञ्ञा) की अभिव्यक्ति हुई है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा वनवच्छा का

तैयार है।

**********oOo*********
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (14): शिवका (भिक्षु वनवाचा में भाग लेने वाला एक नौसिखिया)

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (14) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
14. सिवक (भिक्षु वनवच्छ के शिष्य)।
बुद्ध युग में उनका जन्म वनवच्छ की बहन के पुत्र के रूप में हुआ था। जब उनकी माता ने सुना कि उनके बड़े भाई वनवच्छ ने संसार त्याग दिया है (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया है), भिक्षु संघ में दीक्षा प्राप्त कर ली है और वन में रह रहे हैं, तो उन्होंने अपने पुत्र से कहा: 'प्रिय शिवक, तुम्हें बड़े भाई के अधीन संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करके) उनकी सेवा करनी चाहिए; बड़े भाई अब बूढ़े हो रहे हैं।' माता के इस मात्र आग्रह और अपनी पूर्व इच्छाओं के कारण उन्होंने ऐसा ही किया और अपने मामा की सेवा करते हुए वन में रहने लगे। एक दिन, जब वे किसी [19] कार्य से गाँव के बाहरी इलाके में गए थे, तो वे बहुत बीमार पड़ गए। जब दवा से भी वे ठीक नहीं हुए और वापस नहीं आए, तो बड़े भाई को कारण समझ नहीं आया और वे उनके पास गए और उन्हें बीमार पाया। भोर होने से पहले, बड़े भाई ने उनका इलाज किया और उनकी देखभाल की और कहा: 'शिवक, जब से मैंने संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण किया है) गाँव में नहीं रुका हूँ। चलो अब हम यहाँ से वन चलते हैं।' शिवका ने उत्तर दिया, “हे प्रभु, भले ही मेरा शरीर अभी गाँव में रहे, मेरा मन जंगल में है, यहाँ लेटे रहने के बावजूद मैं वहाँ क्यों जाऊँगा?” तब गुरुजी ने उसका हाथ पकड़कर उसे जंगल में ले गए और उसे शिक्षा दी। उस शिक्षा से दृढ़ निश्चय प्राप्त करके उसने अरहंतस्बिप प्राप्त किया।

इसके बाद उन्होंने अपने प्रभु (बुद्ध) के शब्दों और अपने स्वयं के शब्दों को मिलाकर अपनी बात (गाथा) कही, जिसमें उन्होंने एकांत के प्रति अपने प्रेम और अपनी उपलब्धि, अपने प्रभु (बुद्ध) के प्रति अपनी आज्ञाकारिता और ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) की विजय को व्यक्त किया।

[14] उपज्झायो माऽ अवचा इतो गच्छाम शिवका॥
गेमे मे वसति कायो अरण्यं मे गतो मानो॥
सेमनाको पि गच्छामि नत्थि सङ्गो विजानतन' ती॥ ॥

[14] शिक्षक ने मुझसे इस प्रकार कहा: 'सीवक, चलो
चलें!' [1] यहाँ नगर में मेरा शरीर रहता है;
मेरे विचार वन में चले गए हैं। इसलिए,
चाहे मैं दंडवत प्रणाम करूँ, फिर भी मैं जाता हूँ।
जो समझते हैं, उनके लिए कोई बंधन नहीं है।

[1] टीका में ' गच्छामी ' (मैं जाता हूँ) का अर्थ है ' गच्छामा ' (चलो चलें)। यह पाठ कथा के अनुरूप है, और वनवच्छ द्वारा अपने शिष्य की सक्रिय देखभाल और उसकी भक्ति को भी दर्शाता है। टीका में युवक की त्वरित प्रतिक्रिया की तुलना चाबुक से घायल हुए एक जोशीले घोड़े से की गई है। जोशीले घोड़े को भद्रो कहा जाता है, जिसका अर्थ शुभ या भाग्यशाली भी होता है (सीवक। शिव से तुलना करें)।

1.2-4.[14] श्लोक पर टिप्पणी

शिवकासामणेर
14. उपज्झायो से शुरू होने वाला श्लोक नवोदित शिवक का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उनका पुनर्जन्म भगवान वेसभु के समय में एक पारिवारिक घर में हुआ था, जो आज से इकत्तीस युग (कप्पा) पहले हुआ था। एक दिन, वे किसी काम से जंगल में गए और वहाँ उन्होंने पहाड़ियों के बीच बैठे हुए प्रतापी वेसभु को देखा, वे श्रद्धा से भर गए, उनके पास गए, उन्हें प्रणाम किया और हाथ जोड़कर खड़े हो गए। फिर सुंदर (मनोहर) कासुमारिका फल देखकर, उन्होंने उन्हें इकट्ठा किया और प्रतापी को अर्पित किया। उन पर दया करके, भगवान ने उनकी भेंट स्वीकार कर ली उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और भगवान कस्सपा के शासनकाल में, जब उनके मामा ने संसार त्याग दिया, तो वे भी उनके साथ भिक्षु बन गए। उन्होंने ऐसे अनेक पुण्य कर्म किए जो जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति दिलाने में सहायक थे और जब थेरा वनवच्छ बुद्ध प्रकट हुए, तो वे उनके भतीजे के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम सावक था। उनकी माता ने जब यह सुना कि उनके बड़े भाई वनवच्छ ने शासनकाल में भिक्षु बनकर भिक्षु जीवन के सर्वोच्च पद को प्राप्त किया है और वन में निवास कर रहे हैं, तो उन्होंने अपने पुत्र से कहा, "मेरे प्रिय पुत्र सावक! तुम्हें थेरा के समक्ष संसार त्याग कर उनकी सेवा करनी चाहिए; थेरा अब वृद्ध हो गए हैं।" अपनी मां के एक ही शब्द पर, उनके द्वारा पहले की गई समर्पित सेवा के कारण, वह अपने चाचा थेरा के पास गए, संसार का त्याग किया और जंगल में उनकी सेवा में रहने लगे।

एक दिन जब वह किसी काम से गाँव के आखिरी छोर पर गए, तो उन्हें अचानक तीव्र कष्ट हुआ। लोगों ने उनका इलाज किया, फिर भी उनकी पीड़ा कम नहीं हुई। जब वह बहुत दूर चले गए, तो थेरा ने मन ही मन कहा, "नवदीक्षित तो बहुत पहले ही चले गए; आखिर उन्हें क्या हुआ है?" वे वहाँ गए, उन्हें बीमार देखा, दिनभर अपने बीमार भतीजे की देखभाल की, जो भी उचित था वह किया, और रात को, सुबह बहुत जल्दी, उन्होंने कहा, "हे शिवक! जब से मैंने भिक्षु का संस्कार ग्रहण किया है, मैं कभी गाँव में नहीं रहा; चलो हम यहाँ से ही जंगल चलें।" अपने चाचा की बात सुनकर शिवक ने उत्तर दिया, "आदरणीय महोदय! यद्यपि मेरा शरीर अब गाँव में है, मेरा मन जंगल में है; इसलिए लेटे हुए भी, मैं जंगल ही जाऊँगा।" अपने भतीजे की बात सुनकर थेरा ने उन्हें अपनी बाहों में उठाया, जंगल ले गए और उन्हें उपदेश दिया। थेरा की सलाह का पालन करते हुए, उन्होंने स्पष्ट अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

मैंने पहाड़ियों के बीच में देखा,

निर्मल बुद्ध, बैल के बीच

पुरुष, दुनिया में सबसे बुजुर्ग, चमकते हुए

कणिकारा फूल की तरह।

मैं धर्मनिष्ठ और नेक हृदय वाला व्यक्ति हूँ।

मैंने अपने जुड़े हुए हाथों को अपने सिर पर रख लिया।

कासुमारिका फल एकत्र किए और अर्पित किए

उन्हें परम श्रेष्ठ बुद्ध को समर्पित कर दो।

तब से मैंने वह फल भेंट किया है

मुझे किसी विपत्ति की याद नहीं है

(दुग्गती) इकत्तीस युगों में

(कप्पा) अब से; यह फलदायी है

फल चढ़ाने का परिणाम।

मेरी दुष्टता (किलेसा) जलकर भस्म हो गई थी।

बुद्ध के उपदेश (शासन) में यह बात थी कि...

किया गया है।

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने आध्यात्मिक गुरु (उपज्जया) और स्वयं द्वारा कही गई बातों को संकलित किया और एकांत में विशेष रूप से प्रसन्न होने और अपने कर्तव्य (किच्चा) को पूरा करने की अपनी स्थिति को प्रकट करने के लिए उपज्जायो मन अवच से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला

14. यहाँ 'उपज्जायो' अभिव्यक्ति का अर्थ इस प्रकार है:— वह पाप और निर्दोषता पर चिंतन करता है, और अपनी चिंता को दूर करने के बाद वह अपनी ज्ञान की दृष्टि (ज्ञानचक्खु) से देखता है; इस प्रकार, 'उपज्जायो' (आध्यात्मिक गुरु)। मम् का अर्थ है कि उसने अपने बारे में कहा। अवच का अर्थ है कि उसने कहा। अभिव्यक्ति: 'इतो गच्छामा सीवक' कहने के तरीके का संकेत देती है: "हे सीवक! आओ! हम इस गाँव से अपने वनवास चलें; वही हमारा उपयुक्त निवास है;" इस प्रकार, इसका अर्थ है। हालाँकि, अपने आध्यात्मिक गुरु द्वारा ऐसा कहे जाने पर, सीवक, एक अच्छे नस्ल के घोड़े की तरह जिसे विशेष रूप से कोड़े मारे गए हों, पश्चाताप से भर गया और वनवास जाने की अपनी इच्छा को प्रकट करने के लिए इस श्लोक का उच्चारण किया:—

मेरा शरीर गाँव में रहता है, मेरा

मेरा मन जंगल में चला गया है। मैं जाता हूँ।

हालांकि बीमार होने के बावजूद; कोई नहीं है

ज्ञानियों के प्रति आसक्ति।

इसका अर्थ है:— यद्यपि अब मेरा यह शरीर गाँव में स्थिर है, फिर भी मेरे विचार वन की ओर ही भटक रहे हैं; अतः मैं निर्धन होते हुए भी जा रहा हूँ; क्योंकि रोग के कारण मैं खड़े होने, बैठने और चलने में असमर्थ हूँ, और इस प्रकार रेंगते हुए निर्धन की तरह लेट रहा हूँ; आदरणीय महोदय! आइए! हम वन चलें। क्यों? क्योंकि जो व्यक्ति सत्य (धम्म) के स्वरूप के अनुसार इंद्रिय सुखों (काम) और जन्म-जन्मों (संसार) के हानि और त्याग एवं निर्वाण के लाभ को जानता है, उसका किसी भी स्थान से कोई लगाव नहीं है; इसलिए उसने केवल एक शब्द में अपने गुरु के आदेश का पालन किया; उसने उस संकेत (पदेसा) से अपने अरहंतत्व को प्रकट किया।

श्लोक पर टिप्पणी

नवोदित सिवक का

पूरा हो गया है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(15):कुंड-धन

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (15) ------>>>> अगला

अध्याय I.

एकल श्लोक

15. कुण्ड-धान [1]

हमारे पूज्य बुद्ध के युग में, उनका जन्म सावत्थी में एक ब्राह्मण पुत्र के रूप में हुआ और उनका नाम धाना रखा गया। [2] तीनों वेदों को कंठस्थ जानते हुए , जब वे वृद्ध हो गए, तो उन्होंने भगवान (बुद्ध) का उपदेश सुना और संसार त्याग कर संन्यास ग्रहण कर लिया। अब कोसल के राजा प्रसेनदी (प्रसेनजित) को उनमें रुचि हुई और उन्होंने उन्हें आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं, ताकि उन्हें भिक्षा मांगने की आवश्यकता न पड़े। लेकिन जब महान सुभद्दा ने भगवान (बुद्ध) और उनके साथियों को अपने साथ भोजन करने के लिए आमंत्रित किया, तब कुण्ड-धाना ने अपनी शक्तियों और उपलब्धियों को प्रकट किया, जैसा कि अंगुत्तरा-निकाय की टीका में लिखा है। [3] और उन्होंने भिक्षुओं को यह श्लोक सुनाया:

[15] पञ्च चिन्दे पञ्च जहे पञ्च कटर भावये॥
पञ्कासंगतिगो भिक्खु ओघातिनो' ति वुकाति' ति.॥ ॥

[15] पाँच तुम्हें काट देते हैं; पाँच पीछे छोड़ देते हैं, और पाँच सभी से परे खेती करते हैं!
जो पंचांग बंधन [4]
को पार करता है - उसे बाढ़ पार करने वाला भिक्षु कहा जाता है।

[1] कॉमी में। कोंड- कोंड- कुंड- कुंद-धन। मज्झ में उनका जिक्र है . मैं। 462; उड्डन , ii. 8; धम्मपद कॉम., iii. 52-58.

[2] कॉमी. इस भिक्षु के पूर्वजों की कथा का विस्तार से वर्णन करता है, जिसका तात्कालिक उद्देश्य यह समझाना है कि धाना को कुण्ड या कोण्ड की उपनाम कैसे प्राप्त हुई, जो संदर्भ के अनुसार 'वीर' का अर्थ प्रतीत होता है। पिछले जन्म में वे एक परी के मज़ाक का शिकार हुए थे, और इसके परिणामस्वरूप उन्होंने एक निर्दोष साथी भिक्षु पर जो दोष लगाया, वह एक कर्म था, जो इस जीवन में उनका पीछा करता है और उन्हें कष्ट देता है। चूंकि कथा इस श्लोक पर कोई प्रकाश नहीं डालती, इसलिए इसे यहां नहीं दिया गया है, न ही भोजन-पात्र प्राप्त करने में उनकी पूर्व स्थिति का विवरण (देखें अंग., i. 24) दिया गया है, और इसी कारण से। वास्तव में, यह श्लोक किसी भी विद्वान थेरा द्वारा बोला गया हो सकता है (तुलना करें CCXLII., श्लोक 633)। सुभद्दा संभवतः साकेत में रहने वाले अनाथपिंडिका की पुत्री हैं (मिलिंदा, द्वितीय. 308)। उनके पास जाने का मार्ग (सावत्थी से) दूर बताया गया है: मज्झ., प्रथम. 149 में, सात स्पष्ट सवारी चरणों के रूप में वर्णित है।

[3] यानी, एताड-अग्गा-वाग्गा (अंग., i. 28 एफ.) पर , जिसमें थेरा की सफलता दर्ज है। यह ध्यान देने योग्य है कि, इस टिप्पणी का हवाला देते हुए, धम्मपाल ने इसे बुद्धघोष की मनोरथपुराणि के रूप में उद्धृत नहीं किया है ।

[4] टीका के अनुसार, इन चार पंचक में से पहला पंचक पाँच निम्न बंधनों का समूह है (बुद्ध मनोविज्ञान, 1113-1134; राइस डेविड्स, अमेरिकन लेक्चर्स, पृष्ठ 141 आदि)। दूसरा पंचक शेष पाँच बंधनों का है, जो पुनर्जन्म से मुक्ति सहित दस बंधनों से छुटकारा दिलाता है। तीसरा पंचक पाँच नैतिक शक्तियों या क्षमताओं को संदर्भित करता है (बुद्ध मनोविज्ञान, 305-311), और चौथा जुनून, घृणा, मूर्खता, अहंकार और राय के बंधनों को संदर्भित करता है (विभंग, पृष्ठ 877)। यह श्लोक धम्मपद, श्लोक 370, और सायुत्त निक., अध्याय 8, और नीचे, 633 में मिलता है, जहाँ यह टिप्पणी दोहराई गई है। यह श्लोक उस प्रकार की पवित्र पहेली का एक अच्छा उदाहरण है जिसमें इन वरिष्ठ विद्वानों (अपने आस-पास के अन्य विद्वानों की तरह) को विशेष आनंद आता था। (तुलना कीजिए LXIV.)

1.2-5[15] श्लोक पर टिप्पणी

कुण्डधाना थेरा

पंच चिंदे पंच जहे से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कुण्डधान का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि उनका जन्म हंसवती नगर में एक पारिवारिक घर में, प्रतापी पद्ममुत्तरा के समय हुआ था और वयस्क होने पर (वयपत्तो) वे भगवान बुद्ध के पास गए। जब वे सत्य (धम्म) का उपदेश सुनते रहे, तो उन्होंने देखा कि गुरु द्वारा पहले भिक्षा (सलाका) प्राप्त करने वालों में एक भिक्षु को सबसे आगे स्थान दिया जा रहा है। उन्होंने भी उस पद की आकांक्षा की (ठाणंतर) और अपनी उस आकांक्षा के अनुरूप पुण्य कर्म किए। एक दिन उन्होंने बैठे हुए भगवान पद्ममुत्तरा को, जो निरोधसमापत्ति की समाधि से उठे थे, भूरे लाल रंग के आर्सेनिक पाउडर (मनोसिलाचुणपिंजरा) के समान रंग का केले का एक बड़ा गुच्छा भेंट किया। भगवान ने उसे स्वीकार किया और उसका आनंद लिया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने ग्यारह बार देवताओं के बीच दैवीय प्रभुत्व धारण किया। चौबीस बार वे विश्वराज बने। इस प्रकार बार-बार पुण्य

कर्म करने के कारण, वे समय-समय पर देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे और बुद्ध कस्सपा के समय में एक पार्थिव देवता के रूप में पुनर्जन्म लिया। दीर्घायु बुद्धों के लिए, प्रत्येक पखवाड़े में उपोसथ का पालन करना आवश्यक नहीं था, ठीक उसी प्रकार, भगवान विपस्सी के लिए प्रत्येक छह वर्ष में एक बार उपोसथ का पालन करना आवश्यक था। दशाबला कस्सपा ने हर छह महीने में एक बार अनुशासन के नियम (पातिमोक्खा) प्रतिपादित किए। उनके द्वारा पातिमोक्खा प्रतिपादित किए जाने के समय, दो साथी भिक्षु (भिक्षु), जो एक विदेशी देश (दिसा) में रहते थे, उनके पास यह कहते हुए गए: "हम सब्त के कर्तव्यों (उपोसथा) का पालन करेंगे।"

इस सांसारिक देवता ने ऐसा सोचा: "इन दोनों भिक्षुओं के बीच प्रेम अत्यंत दृढ़ है; वास्तव में ऐसा क्यों है? क्या कोई वियोग होने पर भी इनमें फूट पड़ेगी या नहीं?" ऐसा सोचकर, वह देवता उनसे कुछ ही दूरी पर जाकर, उनके बीच वियोग उत्पन्न करने का अवसर तलाशने लगे। तब उनमें से एक ने अपना कुंड और वस्त्र अपने साथी को सौंप दिया और शरीर को आराम देने के लिए जल उपलब्ध स्थान पर जाकर, हाथ-पैर धोकर झाड़ी के पास से निकल गए। उस सांसारिक देवता ने उस थेरा के पीछे एक अत्यंत सुंदर स्त्री का रूप धारण किया और ऐसा दिखावा किया जैसे उन्होंने अपने सिर के बालों को संवारकर संवारा हो, अपनी पीठ से कोमल मिट्टी पोंछी हो, अपने वस्त्र को ठीक से पहना हो, और थेरा के पदचिन्हों पर चलते हुए झाड़ी से बाहर आ गए हों। एक कोने में खड़े साथी थेरा ने जैसे ही यह बात देखी, वे अप्रसन्न हो गए और मन ही मन सोचने लगे, "मैं अब व्यर्थ हो गया हूँ कि इतने लंबे समय तक इस भिक्षु का इतना स्नेहपूर्ण अनुसरण किया; काश मुझे पता होता कि वह ऐसा है, तो मैं इतने लंबे समय तक उसके साथ घनिष्ठ संबंध नहीं रखता।" उन्होंने अपने मित्र से, जो अभी भी उनकी ओर आ रहा था, कहा, "मित्र! आओ! यह रहा तुम्हारा कुंड और वस्त्र; मैं तुम्हारे जैसे दुष्ट व्यक्ति के साथ यात्रा नहीं करूँगा।" यह सुनकर उस विवेकशील भिक्षु का हृदय मानो किसी तीखे भाले से छलनी हो गया हो। इसके बाद, (आरोपी) ने (शिकायतकर्ता से) कहा, "मित्र! तुम ऐसा क्यों कह रहे हो? मुझे याद नहीं कि मैंने इतने लंबे समय तक दुक्काता जैसी मामूली अनुशासनिक श्रेणी का कोई अपराध किया हो; लेकिन अब तुम मुझ पर पाप का आरोप लगा रहे हो; तुमने क्या देखा है?" उत्तर था: "अन्य बातें देखने का क्या लाभ? तुम इतनी सजी-धजी स्त्री के साथ एक ही स्थान पर रहकर क्यों बाहर आ गए?" (आरोपित) थेरा ने उत्तर दिया: "मित्र! यह मेरी नहीं है; मैंने ऐसी कोई स्त्री नहीं देखी।" यद्यपि तीसरी बार कहने पर भी दूसरे थेरा ने अपने मित्र की बात पर विश्वास नहीं किया, बल्कि अपने द्वारा देखी गई बात को भी सत्य मानकर उस थेरा के साथ उसी यात्रा पर नहीं गए और गुरु के पास दूसरे मार्ग से चले गए। दूसरा भिक्षु भी गुरु के पास दूसरे मार्ग से गया।

इसके बाद, भिक्षुओं की सभा के उपोसथ हॉल में प्रवेश करते समय, उस भिक्षु ने पातिमोक्खा पाठ के हॉल में अपने पुराने मित्र उस भिक्षु को पहचान लिया और मन ही मन कहा, "इस उपोसथ हॉल में ऐसा दुष्ट भिक्षु उपस्थित है; मैं उस भिक्षु के साथ उपोसथ नहीं करूँगा।" यह कहकर वह हॉल छोड़कर बाहर खड़ा हो गया। तब उस दिव्य देवता ने मन ही मन कहा, "मुझसे बहुत बड़ी गलती हो गई है।" वह एक वृद्ध भक्त का वेश धारण करके बाहर खड़े भिक्षु के पास गया और उससे पूछा, "आदरणीय महोदय! मेरे स्वामी यहाँ क्यों खड़े हैं?" थेरा ने उत्तर दिया कि वह वहाँ खड़े रहे और उनसे कहा, "हे भक्त! एक दुष्ट भिक्षु इस उपोसथ हॉल में प्रवेश कर गया था, मैं उसके साथ व्रत नहीं करूँगा।" भक्त ने कहा, "आदरणीय महोदय! कृपया ऐसा न समझें; यह भिक्षु सर्वांगीण शुद्ध नैतिक आचरण वाला है; जिसे आपने देखा है, वह मैं ही हूँ; वह कार्य मैंने आपको देखने के दौरान किया था ताकि आपके विखंडन की संभावना का पता लगा सकूँ और मन ही मन सोच सकूँ: "क्या इन दोनों थेरों का प्रेम वास्तव में दृढ़ है या नहीं?" थेर ने पूछा, "हे भले मनुष्य, तुम कौन हो?" भक्त ने उत्तर दिया, "आदरणीय महोदय! मैं एक पार्थिव देवता हूँ।" ऐसा कहकर युवा देवता अपनी दिव्य शक्ति को त्यागकर थेर के चरणों में गिर पड़े और उनसे क्षमा मांगते हुए कहा, "आदरणीय महोदय! कृपया मुझे क्षमा करें; दूसरे थेर को मेरे इस पाप (दोष) की जानकारी नहीं है; कृपया उपोसथ करें।" ऐसा कहकर देवता ने थेरा को उपोसथ हॉल में प्रवेश कराया। उस थेरा ने फिर उसी स्थान पर उपोसथ अनुष्ठान किए; हालाँकि, मैत्रीपूर्ण संबंध के चलते वे दोनों थेरा फिर कभी एक ही स्थान पर साथ नहीं मिले। इस थेरा के इस कार्य का उल्लेख नहीं किया गया; हालाँकि, प्रश्न में उल्लिखित थेरा ने समय-समय पर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का विकास करते हुए अरहंतत्व प्राप्त किया।

उस कर्म के फलस्वरूप, पृथ्वी के देवता बुद्ध के शासनकाल के अंतराल (एकं बुद्धांतरं) तक नरक के खतरे (अपाय) से मुक्त नहीं हुए। यद्यपि, यदि वे कभी मनुष्य रूप में प्रकट हुए, तो किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किया गया कोई भी दोष केवल उन्हीं पर पड़ा। उनका पुनर्जन्म हमारे प्रतापी बुद्ध के समय में सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। उन्होंने उनका नाम "धानमाणव" (युवक धान) रखा। वयस्क होने पर उन्होंने तीनों वेदों का अध्ययन किया और वृद्धावस्था में उन्होंने गुरु से धर्म की शिक्षाएँ सुनीं, श्रद्धा (सद्धा) प्राप्त की और भिक्षु बन गए। उनके दीक्षा संस्कार (उपसंपदा) के दिन से ही, जब भी वे गाँव में प्रवेश करते, एक सुसज्तृश और अलंकृत महिला उनके साथ जाती; जब वे बाहर जाते, तब भी वह ऐसा ही करती। यहाँ तक कि जब वे मठ में प्रवेश करते, तब भी वह उनके साथ जाती। खड़े होने पर भी वह खड़ी रही; इस प्रकार, वह निरंतर उसका पीछा करती हुई प्रतीत हुई। थेरा ने उसे नहीं देखा। हालाँकि, उनके पूर्व कर्म के फलस्वरूप, वह दृश्यमान (उपट्ठति) हो गई। जब गाँव में चावल का दलिया और भिक्षादान किया जा रहा था, तो महिलाओं ने थेरा का उपहास करते हुए कहा: — "आदरणीय महोदय! चावल के दलिया का यह एक करछुल आपके लिए है; दूसरा हमारी इस महिला साथी

के लिए है।" थेरा को बहुत कष्ट हुआ। मठ पहुँचने पर भी, नौसिखिए और युवा भिक्षुओं ने उन्हें घेर लिया और उनका उपहास किया: "धन कुंठित (कोण्ड) हो गया है।" इसके बाद, इसी कारण से उनका नाम कुण्डधान थेरा के रूप में प्रचलित हो गया। वे उठे और स्वयं खड़े हो गए और उनके उपहास को सहन न कर पाने के कारण वे पागल हो गए और इस प्रकार बोले; "तुम कुटिल हो; तुम्हारे गुरु कुटिल हैं; तुम्हारे शिक्षक कुटिल हैं।" तब उन्होंने गुरु को उसके बारे में इस प्रकार सूचित किया:— "आदरणीय गुरु! कुटिल भिक्षुओं के साथ कुटिल शब्द बोले।" गुरु ने उसे बुलवाया और पूछा:— "हे धान! क्या यह सच है, जैसा आरोप है, कि तुमने भिक्षुओं के साथ अपशब्द बोले?" जब उसने हाँ में उत्तर दिया, तो गुरु ने उससे इसका कारण पूछा। उसने उत्तर दिया:— "आदरणीय गुरु! मैंने ऐसा इसलिए कहा क्योंकि मैं निरंतर उत्पीड़न सहन नहीं कर पा रहा था।" बुद्ध ने उसे फटकारते हुए कहा: "तुमने अभी तक अपने पहले किए गए कर्म को पचाया नहीं है; हे भिक्षु! फिर कभी ऐसे अपशब्द मत बोलना" और निम्नलिखित (दो) श्लोक कहे:—

किसी से भी अपशब्द न बोलें;

जिनसे बात की जाएगी वे यही कहेंगे।

वापस आपके पास। सचमुच बहुत दुख है।

ये क्रोधपूर्ण भाषण हैं; प्रतिशोधात्मक कृत्य हैं।

आप पर व्याप्त हो जाएगा।

यदि आप स्वयं को नहीं हिलाते हैं, तो

एक नष्ट (उपहत) कांसे के बर्तन के समान

(कंस), इस प्रकार आपने शांति प्राप्त कर ली है।

(निब्बान); झगड़ा नहीं होता

आप।"

लोगों ने राजा कोसल से भी थेरा के इस व्यवहार के बारे में बात की, जिसमें वह एक स्त्री के साथ भटकते थे। राजा ने अपने सैनिकों को यह आदेश देते हुए भेजा, "मेरे सैनिकों! जाओ और जाँच करो।" वह स्वयं अपने सीमित शाही दल के साथ थेरा के निवास स्थान पर गए और एक कोने में खड़े होकर निगरानी करने लगे। उस समय थेरा सुई-धागे का काम कर रहे थे; वह स्त्री भी प्रकट हुई, मानो वह थेरा से कुछ ही दूरी पर खड़ी हो। राजा ने उसे देखकर यह जानने के लिए उस स्थान पर गए जहाँ वह खड़ी थी: "क्या यही कारण है?" जब राजा उसके पास पहुँचे, तो वह स्त्री मानो थेरा की पत्तियाँ-पत्थर की कुटिया में प्रवेश कर गई। राजा भी उसके साथ उसी पत्तियाँ-पत्थर की कुटिया में प्रवेश कर गए और चारों ओर देखने पर उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं दिया, उन्होंने अपनी धारणा बना ली। "यह स्त्री नहीं है; यह थेरा के कर्म का फल है," सबसे पहले तो उसने थेरा को प्रणाम नहीं किया, यद्यपि उसका मार्ग थेरा के निकट ही था। जब उसे पता चला कि थेरा पर लगाया गया आरोप असत्य है, तो वह वापस आया, थेरा को प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गया और इस प्रकार पूछा: "आदरणीय महाराज! क्या आपको भिक्षा प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं है?" थेरा ने उत्तर दिया: "हे महान महाराज! यह उचित ही है।" राजा ने थेरा को भिक्षा-भोजन की निरंतर व्यवस्था करते हुए कहा: "आदरणीय महाराज! मैं समझ गया कि मेरे स्वामी ने मुझसे क्या कहा; भला कौन प्रसन्न होगा जब आप इस प्रकार के सर्वांगीण दुराचार (किलेसा) के साथ इधर-उधर भटकते रहेंगे? अब से आपको कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है; मैं आपको चारों धार्मिक आवश्यक वस्तुएँ (पच्चाय) उपलब्ध कराऊँगा; कृपया अपनी विवेकपूर्ण (योनिसो) ध्यान-साधना (मानसिकारा) में लापरवाही न करें।" राजा का समर्थन प्राप्त करके थेरा भिक्षा-भोजन से एकाग्र हो गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। उस समय से वह स्त्री लुप्त हो गई।

उस समय, उगा नगर में विधर्मियों के परिवार में रहने वाली रानी महासुभद्दा ने स्वयं द्वारा निर्धारित शुद्ध नैतिक नियमों (उपोसतं अधिष्ठाय) का पालन करते हुए शाकाहारी (आमगंध) बन गईं। उनका विचार था, "गुरुजी मुझ पर दया करें।" उन्होंने अपने महल की ऊपरी मंजिल पर खड़े होकर सत्य की घोषणा (सच्चकिरिया) इस प्रकार की: "ये फूल दशबल के ऊपर छत्र बनाकर रहें, न कि इस महल के अंदर। इस संकेत से, दशबल और पाँच सौ भिक्षु कल मेरा भिक्षा ग्रहण करें।" उन्होंने अपने हाथ से चमेली के आठ मुट्ठी फूल छोड़े।

फूल उड़ गए और धर्मोपदेश देते समय गुरुजी के ऊपर छत्र बनकर खड़े हो गए। चमेली के फूलों की उस छतरी को देखकर गुरुजी ने मन ही मन सुभद्रा के भिक्षा भोज के निमंत्रण को स्वीकार कर लिया और अगले दिन सूर्योदय के समय आनंद से कहा, "हे आनंद! आज हम भिक्षा मांगने के लिए दूर जा रहे हैं; सामान्य शिष्यों को शामिल मत करना; केवल आर्यों को ही भिक्षा देना।" थेरा ने भिक्षुओं को सूचित किया, "मित्रों! आज गुरुजी भिक्षा मांगने के लिए दूर जा रहे हैं; सामान्य शिष्यों को शामिल मत करना; केवल आर्यों को ही भिक्षा प्राप्त करनी है।" थेरा कुण्डधान ने अपना हाथ बढ़ाया, लेकिन पहले कहा, "मित्र! सलाका लाओ।" आनंद ने मन में यह विचार उत्पन्न किया, "गुरुजी ने मुझे उनके जैसे भिक्षुओं को सलाका देने की अनुमति नहीं दी, उन्होंने मुझे केवल आर्यों को ही देने की अनुमति दी।" आनंद जाकर गुरुजी को इस बारे में सूचित किया। गुरुजी ने कहा, "तुम इसे उसी को दो जिसने इसे लाने के लिए कहा है।" थेरा ने इस पर विचार किया, "यदि कुण्डधान को सलाका देना उचित न होता, तो गुरुजी ने ऐसा क्यों मना किया होता; इस मामले में अवश्य ही कोई कारण होगा।" उन्होंने अभिहरि से कहा, "मैं कुण्डधान को सलाका दूंगा।" उनके आने से पहले ही, कुण्डधान ने अपने असाधारण ज्ञान (अभिज्ञा) के आधार पर चौथे ध्यान में प्रवेश किया और अपनी जादुई शक्तियों से आकाश में लीन होकर हाथ फैलाते हुए कहा, "मित्र आनंद! कृपया इसे लाओ; गुरुजी मुझे जानते हैं; गुरुजी मेरे जैसे भिक्षु को पहली बार सलाका लेने से मना नहीं करते," और उन्होंने सलाका पकड़ ली। गुरुजी ने इसका एक किस्सा बनाया और इस युग में उस थेरा को सलाका लेने वालों में सर्वोपरि स्थान दिया। इस थेरा ने राजसत्ता प्राप्त कर ली और लाभकारी पोषण तथा आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के अभ्यास से मानसिक रूप से शांत होकर छह प्रकार के उच्च ज्ञान प्राप्त कर लिए, क्योंकि उन्हें अरहंत के योग्य पर्याप्त योग्यता (उपनिषय) प्राप्त हुई थी। अतः अपदान में कहा गया है:—

मैंने सबसे उत्कृष्ट लोगों की सेवा की।

बुद्ध, स्व-निर्मित (स्याम्भू) शीर्ष-

अपने सात दिनों के प्रवास में अधिकांश प्रमुख हस्तियों से मुलाकात की।

एकांत में (पटीसल्लीना), धर्मपरायण-

मन से और अच्छे दिल से।

समय का पता चलने पर जब

महान ऋषि पद्ममुत्तरा उठे थे

मैंने ऊपर से केलों का एक बड़ा गुच्छा इकट्ठा किया।

और उनके पास पहुँचे।

सर्वज्ञ भगवान, जगत के नेता

ने (मेरी भेंट) स्वीकार की और

महान ऋषि ने इसका भरपूर आनंद लिया।

ताकि मेरा मन प्रसन्न हो सके-

पवित्र।

स्वयंजागृत बुद्ध, अतुलनीय

कारवां-नेता, भोजन के बाद बैठ गए

वह अपनी सीट पर बैठ गया और उसने ये छंद कहे।

उन संतुष्ट (समितरो) राक्षसों को जो

इस पहाड़ी में कौन हैं और कौन थे और कौन

वन में होंगे (araññe bhūtabhayāni)

मेरी बात सुनो।

जो भी बुद्ध की सेवा करता था, वह उनसे मिलता-जुलता था।

शेर की गर्दन, पशुओं का राजा, उसके बारे में

मैं घोषणा करूंगा; जब मैं बोल रहा हूँ,

मेरी बात सुनो।

वह ग्यारह बार दिव्य राजा बनेगा;

चौबीस बार वह विश्व-

राजा।

एक लाख युगों (कप्पा) बाद,

वह संसार में स्वामी बन जाएगा,

अपने गोत्र नाम गौतम से जाने जाते हैं, जिनका जन्म हुआ था

ओक्काका परिवार।

अच्छे नैतिक और

घावों (आसव) से मुक्त भिक्षुओं का अपमान करने के कारण उसे मिलेगा

उसके बुरे कर्म के परिणामस्वरूप उसे बदनामी मिली।

वह एक शिष्य बन जाएगा, जिसे इस नाम से जाना जाएगा।

कुण्डधान का नाम, उत्तराधिकारी

उनका धर्म, उनका प्रिय पुत्र, द्वारा सृजित

धम्म।

मैं हमेशा एकांत में लीन रहता था

ध्यान (झायी) का व्यक्ति था और मैंने लिया

ध्यान में आनंदित होना। संतुष्ट होकर

मेरे गुरु के साथ रहते हुए मैं रोग से मुक्त रहा।

शिष्यों से घिरे हुए और उनके पीछे-पीछे चले गए

भिक्षुओं के समूह द्वारा,

विजेता बीच में बैठ गया

भिक्षुओं के पुरोहितों का और बनाया (उनका)

शिष्य लॉट (सलाका) एकत्र करते हैं।

मैंने अपना चोला एक कंधे पर टिका लिया।

(एकंसं), मैंने नेता को अपना सम्मान अर्पित किया।

दुनिया में से, मैंने इसे सबसे पहले इसमें एकत्र किया था

सर्वश्रेष्ठ वक्ताओं के सामने।

मेरे उस कृत्य के कारण

हे ईश्वर, दस हजार कांपने वालों में से एक!

(पृथ्वी का ढेर), पादरियों के बीच बैठा हुआ

भिक्षुओं (भिक्षुओं) के बीच, मुझे सबसे आगे स्थान दिया गया।

स्थिति।

मेरे प्रयास की तुलना जुते हुए

बैलों से की जा सकती है जो मुझे विशेष रूप से सुरक्षित स्थान पर ले जा रहे हैं

बंधनों से दूर निवास (योगक्खेमा);

मैं (अब) अपने अंतिम शरीर को विखंडन में धारण करता हूँ-

आत्मजागृत बुद्ध का प्रतिफल।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी; ...

बुद्ध के उपदेश (शासन) में

किया गया है।

इस प्रकार घटित होने के बावजूद, सामान्य श्रेणी (पुथुज्जन) के भिक्षु (भिक्षु), इस थेरा के गुणों को न जानते हुए, जब उन्होंने सबसे पहले लॉटरी ली, तो उन्होंने हमेशा यही सोचा: — "यह वास्तव में कैसे है?" उनके संदेह को दूर करने के उद्देश्य से, थेरा आकाश में गए, अपनी अद्भुत जादुई शक्तियों का प्रदर्शन किया और "पंच चिंदे" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, और अपनी अरहंतता को उसी की उपलब्धि के संकेत के माध्यम से प्रकट किया

15. वहाँ, पंच छिन्दे का अर्थ है कि मनुष्य को तीन निम्न मार्गों (मग्ग) की तलवार से उन पाँच बंधनों (संयोजन) को काट कर त्याग देना चाहिए जो मनुष्य को जन्म लेने और नरक में जाने के लिए प्रेरित करते हैं, मानो वह अपने पैरों को बाँधने वाली रस्सियों को काट रहा हो। पंच जहे का अर्थ है: मनुष्य को अरहंतत्व के मार्ग से उन पाँच बंधनों (संयोजन) को त्याग देना चाहिए जो दिव्य लोक में जन्म लेने के लिए सहायक होते हैं, मानो वह अपने गले में बंधी रस्सियों को काट रहा हो; यही अर्थ है। पंचकुत्तरी भावये का अर्थ है:- उन बंधनों का त्याग करके, मनुष्य को सर्वोच्च मार्ग की प्राप्ति करते हुए, अनागामी (अनगामि) के मार्ग से आगे बढ़कर, श्रद्धा आदि पाँच इंद्रियों का विकास करना चाहिए। पंचसंगतिगो का अर्थ इस प्रकार है:- इस प्रकार होकर, वह पाँच आसक्तियों (संग) पर विजय प्राप्त करने वाला (अतिगो) बन जाता है, क्योंकि वह पाँच प्रकार की आसक्तियों, जैसे राग, दोष, मोह, मान और विधर्म का त्याग कर उनसे परे चला जाता है। bhikkhu(monk) oghatiṇṇo ti vuccati का अर्थ है:— वह भिक्षु हर तरह से विघटित भ्रष्टता (किलेसा) की अवस्था में है, साथ ही वह निर्वाण में भी खड़ा है जो काम, भव, विधर्म और अज्ञान जैसे बाढ़ों के सागर के दूसरे किनारे पर स्थित है; यही इसका अर्थ है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा कुण्डधान का

पूरा हो गया है।

oOo
तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरगाथा >> थेर (16): बेलट्ठसीस

प्राचीन अनुवाद (श्रीमती सी. ए. एफ. रीस डेविड्स) से रूपांतरित
टिप्पणी (अट्ठकथा) आचार्य धम्मपाल द्वारा
नोट: पालि में 'C' का उच्चारण 'च' (जैसे 'चाइना') की तरह होता है।

अध्याय 1 — एकल गाथाएँ
16. बेलट्ठसीस

इस बुद्ध-युग में उनका पुनर्जन्म श्रावस्ती में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। भगवान के बुद्ध बनने से पहले ही उन्होंने संसार का त्याग कर उरुवेला कश्यप के तपस्वी संघ में प्रवेश किया और अग्नि-पूजा का पालन किया। जब कश्यप को बुद्ध द्वारा वश में किया गया, तब वे उन हजार तपस्वियों में से एक थे जिन्होंने "आदित्तपरियाय" (अग्नि उपदेश) सुनकर अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया।

इसके बाद वे 'धम्म के कोषाध्यक्ष' (आनंद) के शिक्षक बने। एक दिन फल-समापत्ति के निर्मल आनंद और अपने पूर्व साधना का चिंतन करते हुए, उन्होंने हर्षपूर्वक यह गाथा कही:

[16]
"जिस प्रकार उत्तम कुल का सशक्त बैल, शिखायुक्त (कूबड़ या सींग वाला),
हल को बिना कष्ट के खेत की मेड़ों पर फेरता है,
उसी प्रकार मेरे लिए दिन और रात सहज ही बीत जाते हैं,
अब जब यह निर्मल, निष्कलुष आनंद प्राप्त हो गया है।"

गाथा पर टिप्पणी

यह गाथा आदरणीय थेर बेलट्ठसीस की है।

कहा जाता है कि उनका जन्म पूर्व बुद्ध पदुमुत्तर के समय एक श्रेष्ठ कुल में हुआ था। उन्होंने बुद्ध के पास जाकर धर्म श्रवण किया, श्रद्धा उत्पन्न हुई, और भिक्षु बने। यद्यपि उन्होंने भिक्षु धर्म का पालन किया, किन्तु अरहंतत्व के लिए आवश्यक पूर्ण योग्यता के अभाव में वे उस समय अंतिम लक्ष्य प्राप्त न कर सके। फिर भी उन्होंने अपार पुण्य संचय किया जो भवचक्र से मुक्ति के लिए सहायक बना।

इकतीस कल्प पूर्व उन्होंने बुद्ध वेस्सभु को देखकर श्रद्धा से एक मातुलुंग (बीजौरा) फल अर्पित किया। उस पुण्य के फलस्वरूप वे देव लोक में उत्पन्न हुए और अनेक शुभ जन्मों में विचरण करते रहे। वर्तमान बुद्ध के समय उनका जन्म श्रावस्ती में ब्राह्मण कुल में हुआ।

उन्होंने संसार त्यागकर उरुवेला कश्यप के साथ तपस्या की। जब भगवान ने "आदित्तपरियाय" (अग्नि दृष्टांत) का उपदेश दिया और कश्यप सहित उनके सहस्र जटाधारी तपस्वी शिष्य प्रभावित हुए, तब वे भी अरहंत हो गए।

गाथा का भावार्थ

"यथा पि" — जैसे कि (उदाहरण देने हेतु अव्यय)।
"भद्दो" — श्रेष्ठ, बल, सामर्थ्य, वेग और प्रयास से युक्त।
"आजञ्ञो" — उत्तम वंश का, प्रशिक्षित। यहाँ इसका अर्थ उत्तम बैल है (घोड़ा या हाथी नहीं)।
"नंगळावत्तनी" — जो हल को इधर-उधर सहजता से घुमाता है।
"सिखी" — शिखायुक्त, अर्थात सींग या कूबड़ वाला।
"अप्पकसिरेन" — बिना अधिक कष्ट के।
"रत्तिंदिवा" — रात और दिन।

अर्थ यह है: जैसे एक उत्तम बैल, जो हल चलाते समय मार्ग में आने वाली घास, जड़ों आदि की बाधाओं की चिंता नहीं करता और बिना अधिक परिश्रम के खेत को समतल कर देता है, उसी प्रकार मेरे लिए दिन और रात बिना कष्ट के बीत जाते हैं।

क्यों? — क्योंकि "सुखे लद्धे निरामिसे" — मैंने वह निर्मल, लौकिक विषयों से रहित, निर्विकार आनंद प्राप्त कर लिया है जो फल-समापत्ति का सुख है। जब से यह अलौकिक सुख प्राप्त हुआ है, तब से दिन और रात सहज ही बीतते हैं।

इस प्रकार थेर बेलट्ठसीस की गाथा पर अट्ठकथा (व्याख्या) पूर्ण होती है।

******* समाप्त *******
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(17):दसाका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (17) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
17. दशक
अपने कर्मों के फलस्वरूप, उनका पुनर्जन्म हमारे पूज्य (बुद्ध) युग में सावत्थी में अनाथपिंडिका के दास के पुत्र के रूप में हुआ, [22] और उन्हें उनके द्वारा विहार (मठ) का द्वारपाल नियुक्त किया गया। [1] उनके सदाचारी आचरण और उनकी इच्छाओं को सुनकर, उनके स्वामी (बुद्ध) ने उन्हें मुक्त कर दिया और कहा, संसार के जीवन को छोड़ना कितना सुखद है। तदनुसार उन्हें भिक्षुत्व में दीक्षा दी गई; परन्तु उस समय से वे आलसी और परिश्रमहीन हो गए, पुनर्जन्म के चक्र को पलटने के लिए कोई कदम नहीं उठाया और भोजन के बाद बहुत सोते थे। प्रवचन के समय वे सभा के बाहरी कोने में जाकर खर्राटे लेते हुए बैठ जाते थे। अब पूज्य (बुद्ध), उनके पूर्ववृत्तों को जानकर, उनमें तत्परता जगाने के लिए उनसे निम्नलिखित श्लोक कहा:

[17] मिद्धि यदा होति महघघसो च॥
निद्दयिता समपरिवत्सयि॥
महावाराहोऽव निवापापुत्थो॥
पुनप्पुनाऽ गब्भमुपेति मांदोऽ ति.॥ ॥

[17] जो आलसी और आहार में स्थूल हो जाता है,
जो सोते हुए करवटें बदलता रहता है,
जैसे बहुत सारा खाना खाने वाला एक बड़ा सूअर -
वह मंदबुद्धि फिर से गर्भ (पुनर्जन्म) में लौट आता है।

यह सुनकर दासक व्याकुल हो गए और अंतर्दृष्टि प्राप्त करके कुछ ही समय बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) को प्राप्त कर लिया। इसके बाद उन्होंने सोचा, 'परमेश्वर (बुद्ध) का यह श्लोक मेरे लिए प्रेरणा बन गया है,' और उन्होंने उस श्लोक को दोहराया। इस प्रकार, यद्यपि यह भोजन के संबंध में विरोध के रूप में कहा गया था, यह उनकी अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा बन गया।

[1] जेतवन का। अनाथपिंडिका द्वारा निर्मित इस प्रसिद्ध संस्थान के खंडहरों के उदाहरण के लिए सिस्टर्स देखें । दसका = डेसीमस।

1.2-7[17] श्लोक पर टिप्पणी

दासका थेरा
मिद्धि यदा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा दासक का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि 91 युग (कप्पा) पहले, तथागत के प्रकट होने से पहले, जब अजित नामक एक मौन बुद्ध गंधमादन पर्वत से मनुष्य मार्ग (मनुस्सपथ) पर उतरने के बाद एक गाँव में भिक्षा मांग रहे थे, तब उन्होंने स्वादिष्ट आम दान किए। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और तेजस्वी बुद्ध कस्सपा के समय, वे उस युग में भिक्षु बन गए और विकास (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले अनेक पुण्य कर्म किए। इस प्रकार वे अच्छे कर्मों की खोज में लगे रहे और एक अच्छे जन्म से दूसरे अच्छे जन्म (सुगति) की ओर बढ़ते रहे, और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब उनका जन्म सावत्थी में एक पारिवारिक घर में हुआ। उनका नाम दासक था। उन्हें गृहस्थ अनाथपिंडिका द्वारा मठ की उचित देखभाल करने के कर्तव्य के लिए नियुक्त (ठपित) किया गया था और चूंकि वे नियमित रूप से व्यक्तिगत रूप से आदरपूर्वक मठ की सेवा करते रहे, इसलिए उन्होंने बुद्ध के निरंतर दर्शन और धम्म की शिक्षाओं को सुनने के कारण उचित रूप से धार्मिक आस्था (सद्धा) प्राप्त की और भिक्षु बन गए। कुछ लोग इस प्रकार कहते हैं:— "इसका पुनर्जन्म भगवान कस्सपा के समय एक पारिवारिक घर में हुआ था और वयस्क होने पर इसने एक रोगमुक्त (खीणासव) थेरा की सेवा की। थेरा से कोई विशेष कार्य करवाने की इच्छा से इसने थेरा को आदेश दिया। इस कार्य के कारण, इसका पुनर्जन्म भगवान के समय सावत्थी में अनाथपिंडिका की एक दासी के गर्भ में हुआ; वयस्क होने पर, इसे धनाढ्य व्यक्ति द्वारा मठ की सेवा के लिए उपयुक्त रूप से नियुक्त किया गया और इसने पूर्वोक्त तरीके से धार्मिक आस्था प्राप्त की। महान धनाढ्य व्यक्ति ने जब उसके नैतिक आचरण और झुकाव को जाना, तो उसे दासता से मुक्त (भुजिसा) कर दिया और कहा:— 'तुम्हें अपनी इच्छा के अनुसार भिक्षु बनना चाहिए।' भिक्षुओं ने उन्हें भिक्षु बना दिया। भिक्षु बनने के बाद से ही वे आलसी और ऊर्जाहीन हो गए, और उन्होंने कोई भी कर्तव्य या प्रतिफल (वत्तपटीवत्त) नहीं निभाया, जो भिक्षुओं के कर्तव्य (समणधम्म) हो सकते थे; वे भरपेट खाकर भी बहुत सोते थे। यहाँ तक कि धर्म की शिक्षा सुनते समय भी वे एक कोने में जाकर श्रोताओं के सबसे दूर वाले छोर पर बैठ जाते और खर्राटे लेते हुए सो जाते। तब भगवान ने उनकी पूर्व की अर्हता (उपनिषय) को देखकर, उनके पश्चाताप को प्रेरित करने के उद्देश्य से "मिद्धि यदा होति-महाग्घसो च" से शुरू होने वाला एक श्लोक कहा।

17. यहाँ मिद्धि का अर्थ है: आलस्य और उन्मत्त; जिसे उन्मत्तता वश में कर लेती है, उसे आलस्य भी वश में कर लेता है। यदा का अर्थ है किसी भी समय। महाग्घसो का अर्थ है अधिक खाने वाला, ऐसे कुख्यात पेटू लोगों के समान जो मुट्ठी भर भोजन (आहारहत्तक), पर्याप्त वस्त्र (अलंसाटक), भोजन (तत्थ) (वट्टक), कौवे (काक) जितना भोजन (आमासक), खाए हुए भोजन (भूत्त) को उल्टी करने वाला (वामितक) के रूप में जाने जाते हैं। निद्दायिता, वह व्यक्ति जिसे सोने (सुपना) की आदत (सीला) हो। सम्परिवत्तसाई (लेटते हुए करवटें बदलना) तदनुसार लेटने के आनंद, करवट के आनंद (पासा) और उनींदापन के आनंद का अनुभव करने में संलग्न हो गया; इस प्रकार, वह बताते हैं। नुवापपुट्ठो का अर्थ इस प्रकार है: — चावल के छिलकों के लाल पाउडर (कुंडक) आदि से युक्त सूअर के भोजन से पोषित और बड़ा हुआ; वास्तव में, एक घरेलू सूअर, अपने बचपन से ही पोषित होने के बाद, जब उसका शरीर मोटा हो गया, तो उसे घर से

बाहर निकलने की अनुमति नहीं दी गई, बल्कि वह पलंग के नीचे करवटें बदलते हुए सोता रहा। यही कहा गया है: — जब कोई व्यक्ति उनींदा भी होता है और अधिक खाने वाला (महाग्घस) भी होता है, तो चारे से पोषित एक बड़े सूअर की तरह, किसी अन्य मुद्रा (इरियापथ) में रहने में असमर्थ होने के कारण, सोने का आदी हो जाता है, करवटें बदलता रहता है; तब वह तीन लक्षणों के प्रति सचेत रहने में असमर्थ हो जाता है, अर्थात्: "अनित्यता, दुःख और अनात्म; अल्पज्ञानी (मंदपञ्ञो) इनके प्रति सचेत न रहने के कारण बार-बार गर्भ (गम्भा) की ओर जाता है; वह माता के गर्भ में रहने से पूर्णतः बच निकलता है। उस श्लोक को सुनकर थेरा दासक पश्चात्तापित हुए और उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) प्राप्त की तथा अरहंतत्व का दर्शन किया, परन्तु कुछ ही समय बाद। अतः अपदान में कहा गया है;

"अजिता नामक स्वयंजागृत मौन बुद्ध"

फिर वे हिमवंत (हिमालय) में निवास करने लगे; ऋषि चतुर थे।

एकाग्रता (समाधि) में और साथ ही संपन्न

अच्छे आचरण (चरणा) के साथ; मैंने आम भेंट किया

जब आत्मजागृत मौन बुद्ध को फल प्राप्त होता है

सुनहरे रंग की वह स्त्री जो स्वीकार किए जाने योग्य थी।

जैसे ही उन्होंने प्रवेश किया, उन्होंने समर्पित दान दिया।

रथ मार्ग।

इसके परिणामस्वरूप नब्बे

एक युग (कप्पा) पहले, मुझे याद नहीं है

किसी भी विपत्ति का यही परिणाम है।

फल का अर्पण। मेरी दुराचारिता थी

जला दिया गया; ... बुद्ध का उपदेश रहा है

पूरा किया गया।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने स्वयं से कहा: "इस श्लोक के माध्यम से भगवान ने मुझे निर्देश दिया; यह श्लोक मेरे लिए एक प्रेरक शक्ति (अंकुसा) बन गया है," उन्होंने उत्तर में (पच्चुदाहासी) उसी श्लोक का पाठ किया। यही थेरा द्वारा सर्वांगीण कथन (परिवत्ताहार) को लाने की विधि से अपने अरहंत पद को प्रकट करने का माध्यम बन गया है

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा दासका का

पूरा हो गया है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(17):दसाका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।

आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (17) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
17. दशक
अपने कर्मों के फलस्वरूप, उनका पुनर्जन्म हमारे पूज्य बुद्ध के युग में सावत्थी में अनाथपिंडिका के दास के पुत्र के रूप में हुआ, [22] और उन्हें विहार (मठ) का द्वारपाल नियुक्त किया गया। [1] उनके सदाचारी आचरण और इच्छाओं को सुनकर, उनके स्वामी (बुद्ध) ने उन्हें मुक्त कर दिया और कहा, संसारिक जीवन को छोड़ना कितना सुखद है। तदनुसार, उन्हें भिक्षु दीक्षा दी गई; परन्तु उस समय से वे आलसी और परिश्रमहीन हो गए, पुनर्जन्म के चक्र को पलटने के लिए कोई कदम नहीं उठाया और भोजन के बाद बहुत सोते थे। प्रवचन के समय वे सभा के बाहरी कोने में जाकर खर्राटे लेते हुए बैठ जाते थे। अब पूज्य बुद्ध ने उनके पूर्ववृत्त को जानकर, उनमें तत्परता जगाने के लिए उनसे निम्नलिखित श्लोक कहा:

[17] मिद्धि यदा होति महघघसो च॥
निद्दयिता समपरिवत्सयि॥
महावाराहोऽव निवापापुत्थो॥
पुनप्पुनाऽ गभ्भमुपेति मांदोऽ ति.॥ ॥

[17] जो आलसी और आहार में स्थूल हो जाता है,
जो सोते हुए करवटें बदलता रहता है,
जैसे बहुत सारा खाना खाने वाला एक बड़ा सूअर -
वह मंदबुद्धि फिर से गर्भ (पुनर्जन्म) में लौट आता है।

यह सुनकर दासक व्याकुल हो गए और अंतर्दृष्टि प्राप्त करके कुछ ही समय बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) को प्राप्त कर लिया। इसके बाद उन्होंने सोचा, 'परमेश्वर (बुद्ध) का यह श्लोक मेरे लिए प्रेरणा बन गया है,' और उन्होंने उस श्लोक को दोहराया। इस प्रकार, यद्यपि यह भोजन के संबंध में विरोध के रूप में कहा गया था, यह उनकी अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा बन गया।

[1] जेतवन का। अनाथपिंडिका द्वारा निर्मित इस प्रसिद्ध संस्थान के खंडहरों के उदाहरण के लिए सिस्टर्स देखें । दसका = डेसीमस।

1.2-7[17] श्लोक पर टिप्पणी

दासका थेरा
मिद्धि यदा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा दासक का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि 91 युग (कप्पा) पहले, तथागत के प्रकट होने से पहले, जब अजित नामक एक मौन बुद्ध गंधमादन पर्वत से मनुष्य मार्ग (मनुस्सपथ) पर उतरने के बाद एक गाँव में भिक्षा मांग रहे थे, तब उन्होंने स्वादिष्ट आम दान किए। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और तेजस्वी बुद्ध कस्सपा के समय, वे उस युग में भिक्षु बन गए और विकास (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले अनेक पुण्य कर्म किए। इस प्रकार वे अच्छे कर्मों की खोज में लगे रहे और एक अच्छे जन्म से दूसरे अच्छे जन्म (सुगति) की ओर बढ़ते रहे, और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब उनका जन्म सावत्थी में एक पारिवारिक घर में हुआ। उनका नाम दासक था। उन्हें गृहस्थ अनाथपिंडिका द्वारा मठ की उचित देखभाल करने के कर्तव्य के लिए नियुक्त (ठपित) किया गया था और चूंकि वे नियमित रूप से व्यक्तिगत रूप से आदरपूर्वक मठ की सेवा करते रहे, इसलिए उन्होंने बुद्ध के निरंतर दर्शन और धम्म की शिक्षाओं को सुनने के कारण उचित रूप से धार्मिक आस्था (सद्धा) प्राप्त की और भिक्षु बन गए। कुछ लोग इस प्रकार कहते हैं:— "इसका पुनर्जन्म भगवान कस्सपा के समय एक पारिवारिक घर में हुआ था और वयस्क होने पर इसने एक रोगमुक्त (खीणासव) थेरा की सेवा की। थेरा से कोई विशेष कार्य करवाने की इच्छा से इसने थेरा को आदेश दिया। इस कार्य के कारण, इसका पुनर्जन्म भगवान के समय सावत्थी में अनाथपिंडिका की एक दासी के गर्भ में हुआ; वयस्क होने पर, इसे धनाढ्य व्यक्ति द्वारा मठ की सेवा के लिए उपयुक्त रूप से नियुक्त किया गया और इसने पूर्वोक्त तरीके से धार्मिक

आस्था प्राप्त की। महान धनाढ्य व्यक्ति ने जब उसके नैतिक आचरण और झुकाव को जाना, तो उसे दासता से मुक्त (भुजिसा) कर दिया और कहा:— 'तुम्हें अपनी इच्छा के अनुसार भिक्षु बनना चाहिए।' भिक्षुओं ने उन्हें भिक्षु बना दिया। भिक्षु बनने के बाद से ही वे आलसी और ऊर्जाहीन हो गए, और उन्होंने कोई भी कर्तव्य या प्रतिफल (वत्तपटीवत्त) नहीं निभाया, जो भिक्षुओं के कर्तव्य (समणधम्म) हो सकते थे; वे भरपेट खाकर भी बहुत सोते थे। यहाँ तक कि धर्म की शिक्षा सुनते समय भी वे एक कोने में जाकर श्रोताओं के सबसे दूर वाले छोर पर बैठ जाते और खर्राटे लेते हुए सो जाते। तब भगवान ने उनकी पूर्व की अर्हता (उपनिषय) को देखकर, उनके पश्चाताप को प्रेरित करने के उद्देश्य से "मिद्धि यदा होति-महाग्घसो च" से शुरू होने वाला एक श्लोक कहा।

17. यहाँ मिद्धि का अर्थ है: आलस्य और उन्मत्त; जिसे उन्मत्तता वश में कर लेती है, उसे आलस्य भी वश में कर लेता है। यदा का अर्थ है किसी भी समय। महाग्घसो का अर्थ है अधिक खाने वाला, ऐसे कुख्यात पेटू लोगों के समान जो मुट्ठी भर भोजन (आहारहत्तक), पर्याप्त वस्त्र (अलंसाटक), भोजन (तत्थ) (वट्टक), कौवे (काक) जितना भोजन (आमासक), खाए हुए भोजन (भूत्त) को उल्टी करने वाला (वामितक) के रूप में जाने जाते हैं। निद्रायिता, वह व्यक्ति जिसे सोने (सुपना) की आदत (सीला) हो। सम्परिवत्तसाई (लेटते हुए करवटें बदलना) तदनुसार लेटने के आनंद, करवट के आनंद (पासा) और उनींदापन के आनंद का अनुभव करने में संलग्न हो गया; इस प्रकार, वह बताते हैं। नुवापपुट्ठो का अर्थ इस प्रकार है: — चावल के छिलकों के लाल पाउडर (कुंडक) आदि से युक्त सूअर के भोजन से पोषित और बड़ा हुआ; वास्तव में, एक घरेलू सूअर, अपने बचपन से ही पोषित होने के बाद, जब उसका शरीर मोटा हो गया, तो उसे घर से बाहर निकलने की अनुमति नहीं दी गई, बल्कि वह पलंग के नीचे करवटें बदलते हुए सोता रहा। यही कहा गया है: — जब कोई व्यक्ति उनींदा भी होता है और अधिक खाने वाला (महाग्घस) भी होता है, तो चारे से पोषित एक बड़े सूअर की तरह, किसी अन्य मुद्रा (इरियापथ) में रहने में असमर्थ होने के कारण, सोने का आदी हो जाता है, करवटें बदलता रहता है; तब वह तीन लक्षणों के प्रति सचेत रहने में असमर्थ हो जाता है, अर्थात्: "अनित्यता, दुःख और अनात्म; अल्पज्ञानी (मंदपञ्ञो) इनके प्रति सचेत न रहने के कारण बार-बार गर्भ (गम्भा) की ओर जाता है; वह माता के गर्भ में रहने से पूर्णतः बच निकलता है। उस श्लोक को सुनकर थेरा दासक पश्चात्तापित हुए और उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) प्राप्त की तथा अरहंतत्व का दर्शन किया, परन्तु कुछ ही समय बाद। अतः अपदान में कहा गया है;

"अजिता नामक स्वयंजागृत मौन बुद्ध"

फिर वे हिमवंत (हिमालय) में निवास करने लगे; ऋषि चतुर थे।

एकाग्रता (समाधि) में और साथ ही संपन्न

अच्छे आचरण (चरणा) के साथ; मैंने आम भेंट किया

जब आत्मजागृत मौन बुद्ध को फल प्राप्त होता है

सुनहरे रंग की वह स्त्री जो स्वीकार किए जाने योग्य थी।

जैसे ही उन्होंने प्रवेश किया, उन्होंने समर्पित दान दिया।

रथ मार्ग।

इसके परिणामस्वरूप नब्बे की पेशकश की गई

एक युग (कप्पा) पहले, मुझे याद नहीं है

किसी भी विपत्ति का यही परिणाम है।

फल का अर्पण। मेरी दुराचारिता थी

जला दिया गया; ... बुद्ध का उपदेश रहा है

किया गया।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने मन ही मन कहा, "इस श्लोक के माध्यम से भगवान बुद्ध ने मुझे शिक्षा दी; यह श्लोक मेरे लिए प्रेरणा (अंकुसा) बन गया है," और उत्तर में उन्होंने उसी श्लोक का पाठ किया। यही वह तरीका है जिससे थेरा ने सर्वांगीण कथन (परिवत्ताहार) के माध्यम से अपने अरहंत पद को प्रकट किया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा दासका का

तैयार है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(18):सिंगाला-पितर

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (18) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
18. सिंगाला-पिटर [1]
बुद्ध युग में सावत्थी में धनी माता-पिता के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने विवाह किया और अपने पुत्र का नाम सिंगाला (का) रखा, और स्वयं सिंगाला के पिता के रूप में जाने गए। बाद में उन्होंने गृहस्थी बंधनों को त्याग दिया और भिक्षु बनने के लिए संसार त्याग दिया। भगवान (बुद्ध) ने उनकी प्रवृत्तियों पर विचार करते हुए उन्हें कंकाल के विचार का ध्यान अभ्यास कराया। इसे अपनाकर वे सुंसुमारगिरा में शाकियों के बीच भेषकला वन में रहने लगे। [23] अब उस वन में एक वनदेवदूत ने यह जानते हुए कि थेरा को शीघ्र ही वह फल प्राप्त हो जाएगा जिसके लिए वे परिश्रम कर रहे थे, यह श्लोक कहा:

[18] अहो बुद्धस्स दयादो भिक्खु भेसाकलावने॥
केवलाऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ केवलाऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ केवलाऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ
मन्नेऽहं कामरागां सो खिप्पमेव पहिस्साति.॥ ॥

[18] देखो! भेषकला के वन में एक भिक्षु रहता है, जो बुद्ध की कृपा का उत्तराधिकारी है,
और इस पार्थिव शरीर में गहन
, गंभीर, कंकालनुमा विचार व्याप्त है। [3]
मुझे धिक्कार है, यदि वह सभी इंद्रियों के जुनून को शीघ्रता से दूर न करे !

उस श्लोक को सुनकर भिक्षु ने सोचा, 'परी ने मुझसे ये इसलिए कहा ताकि मैं प्रयास करूं।' और अटूट प्रयास करते हुए उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने परी के शब्दों को याद किया और उसी श्लोक को अपने अन्न (प्राप्ति) की घोषणा के रूप में दोहराया।

[1] टीका सिंगालक-पिता में। नाम का अर्थ है 'सियार'।

[2] यह शहर (विंडिश, मारा उ. बुद्ध, पृ. 150 देखें) और यह वन अब तक शाकियों के साथ नहीं, बल्कि भगों के साथ जुड़े पाए गए हैं (जेपीटीएस, 1888, पृ. 63, 98)। अतः या तो इस नाम के एक से अधिक वन थे, या भग, जिनका स्थान संदिग्ध प्रतीत होता है, शाकियाओं का एक उपसमूह थे। तुलना करें , पद 1208।

[3] केवलाण अथिसनन्या अपहरि पथवीउ इमं। डॉ. न्यूमैन इस पंक्ति में साओय के एक अंश का संकेत देखते हैं । निक., ii. 178 एफएफ., और सुमेधा द्वारा संदर्भित (बहनें, पृष्ठ 173):

और उस अस्थि-कक्ष को याद रखो,
जो संसार में भटकने वाले प्राणियों द्वारा ढेर किया गया है। उस विशाल अस्थि-कक्ष को याद रखो , जो एक ही स्थान से
एक मनुष्य की हड्डियों से बना है, जो विपुल के समान है।

दूसरी ओर, धमिनपाला इस तरह के किसी भी संकेत को अनदेखा करते हुए इस पंक्ति की व्याख्या असुभ-संज्ञा या ' अत्थिका-भावना ' नामक कसिणा के संदर्भ में करते हैं। पथवी, जिसे आमतौर पर विस्तारित जगत पर लागू किया जाता है, को वे अत्त-भाव-पथवी के रूप में समझाते हैं, जो व्यक्ति का वह विस्तारित या पार्थिव गुण है जिसे निकायों में अज्जत्तिका-पथवीधातु (व्यक्तिगत विस्तारित तत्व) कहा जाता है। इसे कभी भी केवल पथवी (विस्तारित या पृथ्वी) नहीं कहा जाता है, यह आलोचक को उपसंहार परंपरा से असहमत होने के लिए प्रेरित कर सकता है। फिर भी, यदि वास्तव में हड्डियों के पहाड़ का संकेत दिया गया होता, तो बाद वाले ने इस अच्छे व्याख्यात्मक अवसर को क्यों गंवा दिया होता? 'हड्डियों की धारणा से अपने या सभी प्राणियों के शरीर को पूरी तरह से इस विचार से भर देने के बाद कि "यह हड्डी है!" और उसे ध्यान का आधार बनाकर , वह अनावर्ती (मुक्तिदाता) के मार्ग से सभी कामुक भावनाओं को त्याग देगा...' टीका में यही कहा गया है।

1.2-8[18] श्लोक पर टिप्पणी

सिंगालापितु थेरा

अहु बुद्धस्स दयादो से शुरू होने वाला श्लोक थेरा सिंहलकपितु का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि चौरानवे युग (कप्पा) पहले उन्होंने सतुरंसी नामक एक मौन बुद्ध को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे धर्मपरायण हो गए, उन्हें प्रणाम किया और अपने हाथ में आए ताड़ के फल को अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण उनका जन्म दिव्य लोक में हुआ, उन्होंने समय-समय पर पुण्य कर्म किए, बार-बार जन्म लेकर सुखी जन्मों में विचरण किया, भगवान कस्सपा के समय मनुष्य के गर्भ में उनका पुनर्जन्म हुआ, वे शासन में धर्मपरायण आस्था के अच्छे लाभार्थी बने, भिक्षु बने और अस्थि-बोध (अट्ठिकसंज्ञा) में अपना मन विकसित किया। बाद में, जब ये बुद्ध प्रकट हुए, तो उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक पारिवारिक घर में हुआ और वयस्क होने पर उन्होंने गृहस्थ जीवन स्थापित किया, एक पुत्र प्राप्त किया और उसका नाम "सिंगालक" रखा। इसी कारण लोग उन्हें सिंगालकपिता कहने लगे। इसके बाद उन्होंने गृहस्थी त्याग कर भिक्षु बन गए। उनकी प्रवृत्ति को देखते हुए, भगवान बुद्ध ने उन्हें अस्थि-बोध (अट्ठिकसंज्ञा) का मानसिक अभ्यास (कम्मठना) दिया। उन्होंने इसे ग्रहण किया और भेषकला वन में सुसुमारगिरि नामक मगरमच्छ पर्वत पर भगों के बीच निवास किया। फिर, उस जंगल में निवास करने वाले देवता ने "अहु बुद्धसदायादो" से शुरू होने वाले श्लोक का पाठ किया, जो उनके अरहंतत्व को इंगित करने के उद्देश्य से प्रकट करता है, अर्थात्, 'यह मानसिक विकास (भावना) के फल को उनके हाथों (हत्थगतं) में लाएगा, लेकिन जल्द ही, भिक्षु के प्रयास (उस्साह) को प्रेरित करने के उद्देश्य से।

18. यहाँ, अहु का अर्थ है (होति)। वास्तव में यह भूतकाल का शब्द वर्तमान काल में है। बुद्धस्स का अर्थ है सर्वज्ञ बुद्ध का। दायदो का अर्थ है आध्यात्मिक उत्तराधिकारी, नौ प्रकार के दिव्य धर्मों की विरासत को ग्रहण करने वाला और संग्राहक, जो अपने धार्मिक लाभ (सम्मापतिपत्ति) के लिए इसका उपयोग करता है। दूसरे शब्दों में, अहु का अर्थ है (अहोसि); इस प्रकार के नाम वाले बुद्ध का उत्तराधिकारी बनने पर, कोई भी व्यक्ति अभी भी विबंधित हो जाएगा; यही इसका महत्व है। इसलिए बुद्ध ने कहा: "मञ्ञेहं कामरागं सो, खिप्पमेव वहिस्साति, मेरा मानना है कि वह कामराग के बंधन को शीघ्र ही त्याग देगा।" भेषक... पथविं का अर्थ है अपने शरीर की धरती (अत्तभाव)। वास्तव में, शरीर (अत्तभाव) को यहाँ "पथवी (धरती)" कहा गया है, जैसे कि "सो इमं पथविं विच्चेसति" आदि संदर्भों में। मन्ञेहं का अर्थ है मैं सोचता हूँ। इसका एक पाठ "मञ्ञाहं" भी है। सो का अर्थ है वह भिक्षु। खीप्पमेव का अर्थ है, लेकिन शीघ्र ही वह कामुक वासना के बंधन को त्याग देगा; इसलिए मैं सोचता हूँ। क्यों? क्योंकि अस्थि की अनुभूति कामुक वासना के ठीक विपरीत होती है। यह कहा गया है:— जो कोई भी किसी विशेष स्थान पर अस्थि के विचार से प्रेरित होकर, अपने शरीर या सभी के शरीरों में अस्थि के दृष्टिकोण से व्याप्त होकर खड़ा होता है, वह भिक्षु अस्थि ध्यान को आधार बनाकर, स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सन्तो) विकसित करते हुए, शीघ्र ही अनागामी मार्ग (अनगामीमग्ग) के माध्यम से अपनी कामुक वासना (कामराग) या संपूर्ण तृष्णा (तन्हा) का त्याग कर देगा, और इस प्रकार उसे "काम (कामुक इच्छा)" नाम प्राप्त होगा, क्योंकि इसका अर्थ तृष्णा है और "राग (वासना)" क्योंकि इसका अर्थ तृष्णा और "राग (वासना)" है, क्योंकि इसका अर्थ कलंकित उत्तेजना (रांझना) है, सर्वोत्कृष्ट मार्ग (अग्गमग्ग) के माध्यम से। इस श्लोक को सुनकर, उस थेरा ने मन ही मन कहा: "इस देवता ने मेरे प्रयास को प्रेरित करने के उद्देश्य से ऐसा कहा," जिससे उनका आत्म-संकल्प (अधित्थाय) अटूट हो गया, उन्हें स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) प्राप्त हुई और उन्होंने अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः, अपदान में कहा गया है:

“महान मौन बुद्ध, नाम

सतुरंसी, स्वयं उत्पन्न होने वाला,

अपराजित, अपने एकांत से उठ खड़ा हुआ

और विशेष रूप से भीख मांगने पर सामने आया-

दौर।

मेरे हाथ में फल थे, मैंने देखा कि

वह पुरुषों के बीच एक सांड की तरह खड़ा था और उसके पास पहुंचा।

धार्मिक और नेक बनना

मैंने बड़े मन से ताड़ का फल भेंट किया।

यह चौरानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

फिर मैंने फल भेंट किए। मैं करता हूँ।

किसी भी बुरी सत्ता को याद नहीं; यह

यह मेरे द्वारा किए गए प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

फल का। मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी;

बुद्ध का उपदेश यही था।

किया गया।

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने आनंदमय और गंभीर उच्चारण (उदान) के माध्यम से उस देवता द्वारा कहे गए वचन का सम्मान करते हुए उसी श्लोक का पाठ किया। यही उस थेरा के अरहंत पद का प्रकटीकरण (अञ्ञा) था।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा सिंहलापितु का

तैयार है।

**
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(19):कुला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (19) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
19. कुला
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया, लेकिन मानसिक संतुलन के अभाव में वे किसी एक विचार पर ध्यान केंद्रित नहीं कर सके। [1] एक दिन भिक्षा मांगने के लिए नगर जाते समय, उन्होंने देखा कि लोग नहरें खोदकर बहते पानी को अपनी इच्छानुसार कहीं भी ले जा रहे थे। नगर के भीतर उन्होंने अपनी दृष्टि के कोने से देखा [2] कि कैसे धनुष बनाने वाला अपने खराद में बाण का शाफ्ट लगा रहा था, और कटोरा भरकर निकलते समय उन्होंने रथ बनाने वालों को धुरी, टायर और हब को समतल करते देखा। अतः विहार (मठ) में प्रवेश करके उन्होंने भोजन किया; फिर दोपहर के आराम के दौरान उन्होंने चीजों को वश में करने के इन तीन तरीकों पर चिंतन किया, उन्हें अपना मार्गदर्शक बनाया और उन्हें आत्म-नियंत्रण की अपनी आवश्यकता पर लागू किया। इस प्रकार प्रयास करते हुए उन्होंने कुछ ही समय बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। और उन उदाहरणों को अपने हृदय के वशीकरण से जोड़ते हुए, उन्होंने इस श्लोक में अन्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[19] उदकाऽ हि नयन्ति नेत्तिका उसुकारो नमयन्ति तेजनाऽ॥
दारुं नमयन्ति तच्चका अत्तानां दमयंति सुब्बता' ति.॥ ॥

[19] नहर बनाने वाले धारा का नेतृत्व करते हैं,
धनुष बनाने वाले तीर के शाफ्ट को सीधा करते हैं,
बढ़ई लकड़ी के तख्ते को आकार देते हैं;
स्वयं-यह है कि धर्मी, शांत। [3]

[1] विसेसाṃ निब्बटेतुṃ। सी एफ चाइल्डर्स, एसवी विसेसो।

[2] देखें विन. टेक्स्ट्स, i. 59: 'नीचे झुकी हुई आँखों से।' व्यावहारिक रूप से उसके सामने हल की लंबाई के बराबर जमीन पर निर्देशित (टिप्पणी)।

[3] यह श्लोक सीसीएलवी में पुनः आता है, और धम्मपद में दो बार आता है, जिसे उस ग्रंथ की टीका में श्लोक 80 में पंडित-सामनेर और श्लोक 145 में सुखा-सामनेर को सौंपा गया है। दोनों ही सावत्थी के हैं, और दोनों को ही संदर्भित शिल्पों में पदार्थ पर मानव कौशल के उदाहरण के रूप में वर्णित किया गया है। लेकिन पहले उदाहरण में कहानी का बहुत विस्तार किया गया है।

1.2-9[19] श्लोक पर टिप्पणी

कुला थेरा
"उदकं हि नयन्ति" से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कुल का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि इस थेरा ने भी पहले अनेक पुण्य कर्म किए थे, जो उन्हें जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति दिलाते थे। वे भक्तिमय कर्तव्यों (अधिकार) से परिपूर्ण थे। उन्होंने भगवान विपस्सी को आकाश में विचरण करते देखा, वे श्रद्धा से भर गए और नारियल अर्पित करने की इच्छा से खड़े हो गए। गुरु को जब उनकी इच्छा का ज्ञान हुआ, तो वे अवतरित हुए और उनका अर्पण स्वीकार किया। वे अत्यंत श्रद्धामय हो गए और इसी पुण्य भाव के फल के कारण गुरु के पास जाकर भिक्षु बनने का निवेदन किया। गुरु ने एक भिक्षु को इस प्रकार आदेश दिया: "इस व्यक्ति को भिक्षु बना दो।" इसने दीक्षा ली, उपसंपदा दीक्षा प्राप्त की, भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया, वहाँ से देहांत हो गया, छह बुद्ध काल (बुद्धंतर) तक दिव्य और मानव प्राणियों के बीच बार-बार जन्म-मृत्यु का चक्र चलता रहा और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में इसका पुनर्जन्म हुआ। इसका नाम कुला था। वयस्क होने पर, इसने धर्म में श्रद्धा प्राप्त की, भगवान बुद्ध की उपस्थिति में भिक्षु बन गया, लेकिन विक्खेप (विषेप) की अधिकता के कारण विशेषण (विशेषा) प्राप्त करने में असमर्थ रहा। फिर, एक दिन भिक्षा मांगने के लिए गाँव में प्रवेश करते समय, उसने देखा कि लोग मिट्टी खोदकर जल पात्र बनाकर जहाँ-जहाँ आवश्यकता हो, वहाँ जल पहुँचा रहे हैं। रास्ते में उसने ध्यान से देखा और गाँव में प्रवेश किया। वहाँ उसने एक बाणकार को अपनी आँख के एक छोर से बाण को सीधा करते हुए देखा। उन्होंने बाण यंत्र में बाण की छड़ डाली, उसे भी ध्यान से देखा और आगे बढ़ते हुए उन्होंने बढ़ईयों को रथ के पहिये के विभिन्न भाग, जैसे कि तीली, रिम, केंद्र आदि बनाते हुए देखा। आगे जाकर उन्होंने उसे भी ध्यान से देखा और अपने मठ में प्रवेश किया, भोजन किया, अपना कटोरा और वस्त्र व्यवस्थित किया, अपने विश्राम कक्ष में बैठे, स्वयं द्वारा देखे गए उदाहरण के गुणों को एकत्रित किया,

अपने मन को वश में करने के करीब पहुंचे और इस प्रकार विचार किया: — "लोग जल जैसी निर्जीव वस्तु (अचेतनम्) को भी आवश्यकतानुसार स्थान पर ले जाते हैं; उसी प्रकार बाण बनाने वाले टेढ़ी-मेढ़ी निर्जीव छड़ को भी व्यवस्थित रूप से मोड़कर सीधा कर देते हैं; उसी प्रकार बढ़ई लकड़ी के टेढ़े-मेढ़े टुकड़ों को पहिये के रिम के रूप में बनाते हैं, तो मैं अपने मन को सीधा क्यों न करूँ?" उन्होंने विपश्यना (स्पष्ट अंतर्दृष्टि) विकसित की, परिश्रम किया, प्रयास किया और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में कहा गया है: —

मैं उस समय एक आराम का सेवक था।

बंधुमती शहर में। मैंने देखा

निर्मल (विरज) बुद्ध आकाश में विचरण कर रहे हैं।

एक नारियल का फल इकट्ठा करने के बाद मैंने

इसे परम श्रेष्ठ बुद्ध को अर्पित किया गया;

अत्यंत प्रतिष्ठित बुद्ध, खड़े हुए

आकाश ने (मेरी भेंट) स्वीकार कर ली।

समृद्धि को अच्छी तरह से बढ़ावा दिया गया था, यह था

तत्काल सुख लाने वाला,

फल अर्पित करने के बाद

मेरा मन अत्यंत प्रसन्न हुआ।

तब मुझे अत्यधिक उत्साह और उमंग का अनुभव हुआ।

अत्यंत सुख भी प्रचुर मात्रा में।

रत्न लेकिन (मेरे लिए) अचानक प्रकट हुआ जो पैदा हुआ था

इधर - उधर।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

फिर मैंने फल भेंट किए। मैं करता हूँ।

किसी भी बुरी सत्ता को याद नहीं; यह

फल अर्पण का फलदायी (1) परिणाम है।

मेरी दिव्य दृष्टि पूरी तरह से शुद्ध हो चुकी थी;

मैं एकाग्रता में निपुण हो गया हूँ।

(समाधि)। मैंने पूर्णता प्राप्त कर ली है।

उच्च ज्ञान (अभिञ्ञा) में; इस प्रकार है

फल (1) भेंट का फलदायी (1) परिणाम।

मेरी दुष्टता जलकर भस्म हो गई है;...

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया गया है।

इस प्रकार निमित्त गुणों को मार्गदर्शक (अंकुसा) बनाकर उन्होंने शुद्ध अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अपने मन को वश में करने को इन गुणों से जोड़कर उन्होंने "उदकं हि नयन्ति नेत्तिका" से शुरू होने वाला श्लोक बोला, जिससे उनका अरहंतत्व प्रकट हुआ।

(1) शब्दों का खेल व्यंग्य प्रदर्शित करने के लिए किया जाता है

पाली शब्द "फला" में उल्लिखित

दोनों छंदों में दो-दो बार।

मेरा अनुवाद ही इसकी पुष्टि कर देगा।

19. यहाँ उदकं हि का अर्थ इस प्रकार है:— व्याकरणिक शब्द हि एक अविभक्ति कण (निपात) है। नयन्ति का अर्थ है:— पृथ्वी पर यह या वह ऊँचा स्तर खोदकर, निचले स्तर को भरकर, या जलमार्ग (माटिका) बनाकर, या वृक्ष से बना (लकड़ी का) कुंड रखकर, वे जल को अपनी इच्छानुसार किसी भी स्थान पर ले जाते हैं। इसी प्रकार वे जलमार्ग ले जाते हैं; इस प्रकार, नेत्तिका (जलमार्ग निर्माता)। तेजा नं का अर्थ है तीर (कण्डं)। यही कहा गया है:— जलमार्ग निर्माता नयन्ति (जल के प्रवाह को) अपनी इच्छा (रुचि) के अनुसार जहाँ भी चाहें, ले जाते हैं; तीर निर्माता भी (उसुकारापि) तीर को गर्म करके (नमयंति) उसे सीधा करते हैं। लकड़ी का काम करते समय, जैसे कि गाड़ी के पहिये का किनारा आदि बनाने के लिए लकड़ी को मोड़कर, tacchakā (लकड़ी का काम करने वाले), dāruṃ namayanti अपनी इच्छा (ruci) के अनुसार सीधी या घुमावदार (vaṇka) बनाते हैं, जो चेतना (ārammaṇa) के संचालन का मूल उद्देश्य है। subbatā दृढ़ निश्चयी बुद्धिमान लोग (dhīrā) जो नैतिक उपदेश आदि गुणों से युक्त उत्कृष्ट अभ्यास (vata) करते हैं, और सही मार्ग (magga) के पहले चरण (sotāpatti) के रूप में गंतव्य को प्रेरित करते हैं, attānaṃ damenti अरहंत पद प्राप्त करने पर निश्चित रूप से वश में हो जाते हैं।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा कुला का

तैयार है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(20):अजिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (20) ------>>>> अगला

अध्याय I.

एकल श्लोक

20. अजिता

जब हमारे भगवान (बुद्ध) जीवित थे, तब उनका पुनर्जन्म सावत्थी में हुआ, वे कोसल के राजा के यहाँ मूल्य निर्धारण करने वाले ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र थे । [1] वे गोदावरी नदी के किनारे कपिट्ठ उद्यान में रहने वाले विद्वान ब्राह्मण (पुजारी) बावरी के अनुयायी बनकर तपस्वी बन गए। बावरी [2] ने उन्हें तिस्सा और मेत्तेय के साथ भगवान (बुद्ध) के पास भेजा। अजित भगवान (बुद्ध) द्वारा अपने प्रश्नों के उत्तरों से इतने संतुष्ट हुए कि उन्होंने भिक्षु दीक्षा ले ली। मानसिक अभ्यास का एक रूप चुनकर उन्होंने अंतर्दृष्टि विकसित की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इस पर उन्होंने इस श्लोक में अपना विजय गीत [3] गाया:

[20] मरने में भयो नत्थि निकंती नत्थि जीविते॥
सन्देहान् निक्खिपिस्सामि संपाजानो पतिस्सातो' ति.॥ ॥

[20] मृत्यु से बिल्कुल भी भयभीत नहीं, न ही जीने में प्रसन्न,
मैं शीघ्र ही इस सांसारिक शरीर को त्याग दूँगा, [4] सचेत मन से, नियंत्रित चेतना से।

[1] जातक ग्रंथों में यह प्रतीत होता है कि राजा द्वारा या राजा के लिए माल की खरीद आधिकारिक रूप से निर्धारित मूल्य पर की जाती थी। यह मूल्य न्यायालय के मूल्यांकक द्वारा तय किया जाता था, जिस पर कोई अपील नहीं की जा सकती थी। मूल्यांकक दोहरी दुविधा में रहता था: यदि वह प्रस्तुत माल का मूल्य बहुत अधिक लगाता तो राजा नाराज हो जाता, और यदि वह रिश्वत लेने से इनकार करता और माल की कीमत कम कर देता तो व्यापारी भाग जाते। मेरी पुस्तक 'उत्तरी भारत की प्रारंभिक आर्थिक स्थितियाँ', जेआरएएस, अक्टूबर, 1901 देखें।

[2] यह प्रकरण सुत्त-निपाता, श्लोक 976-1089 (एसबीई, x. 184 ff.) का हिस्सा है ।

[3] उसकी 'शेर की दहाड़' (सीहनादा)।

[4] तुलना करें. साम्युत्त, iii. 25.

1.2-10[20] श्लोक पर टिप्पणी

अजुता थेरा

'मरणे मे भयं नत्थि' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अजुत का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि 91 युग (कप्पा) पहले उन्होंने भगवान विपस्सी के दर्शन किए, पुण्य भाव से प्रेरित हुए और उन्हें बेल (कपित्थ) भेंट की। इसके बाद भी उन्होंने कई पुण्य कर्म किए, देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, जो हमारे गुरु के इस युग (कप्पा) में जन्म लेने से पहले ही सावत्थी में राजा महाकोसल की सेवा में प्रमुख पद पर आसीन थे। उनका नाम अजिका था। उस समय भी, सावत्थी के एक नागरिक, बावरी नामक एक ब्राह्मण, जो एक महान व्यक्ति के तीन गुणों से संपन्न था, तीन वेदों का पारगू (चिकित्सक), सावत्थी से बाहर चला गया, संसार का त्याग कर एक संन्यासी बन गया और गोदावरी नदी के किनारे स्थित बेल के मठ (कपित्थराम) में निवास करने लगा। तब अजित ने उनकी उपस्थिति में संसार का त्याग कर दिया और एक शुभचिंतक (अत्थकामा) देवता द्वारा प्रेरित (कोदिता) होकर, बावरी द्वारा उन्हें गुरु के समक्ष भेजा गया। उन्होंने तिस्सामेत्तेय आदि के साथ मन ही मन भगवान के पास जाकर प्रश्न पूछे और जब उनके उत्तर मिल गए, तो वे धर्मपरायण हो गए, गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बन गए, मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) किया, स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतशिप प्राप्त की। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

मैंने जंगली सेब का फल अर्पित किया

स्वयंजागृत बुद्ध, ग्रहणकर्ता

पवित्र चढ़ावों का, स्वर्णिम वस्तुओं का-

रथ यात्रा पर प्रवेश करते हुए, चेहरे पर भाव-भंगिमा।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है

फिर मैंने फल पेश किया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति (दुग्गती) को याद रखें।

यह फल का फलदायी परिणाम है

पेशकश.(1)

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसकी शुरुआत "मरणे मे भयं नत्थि" से हुई, जिसका अर्थ है सिंह की दहाड़।

(1) फला में शब्दों का खेल है।

यह शब्द-खेल इसके दो अलग-अलग रूपों में देखा जा सकता है।

अर्थ: (1) फलदायी परिणाम

और (2) वृक्ष का फल।

20. वहाँ, 'मरणे' का अर्थ है: मृत्यु का चिन्ह (निमित्त), मृत्यु का कारण (हेतु)। 'मे' का अर्थ है मुझे (मयः), कोई खतरा नहीं है क्योंकि अस्तित्व का मूल कट चुका है और जन्म की अवस्था सर्वत्र समाप्त हो चुकी है। वास्तव में, जिनके अस्तित्व का मूल कटा नहीं है, उन्हें मृत्यु का खतरा होगा, वे स्वयं से ऐसा कहेंगे: "मेरा भविष्य कैसा है जो (उपत्ती) उभर रहा है? निकांति का अर्थ है (अपेक्खा) लालसा (तण्हा); वह (लालसा, तण्हा) मेरे जीवन में नहीं है, क्योंकि मेरे कर्मों का समूह (संखार) चारों ओर से अच्छी तरह से कुचला (मद्दिता) गया है; क्योंकि मैंने आसक्ति (उपादान) के समूह (खंड) की अच्छी देखभाल की है, उनकी ऐसी अवस्था के कारण जो दुखदायी (दुक्खा), सारहीन (असरका) आदि है। ऐसा होने पर भी, मैं निक्खिपिसामि (फेंक दूंगा), अपने दुख (दुक्खाभर) के बोझ को, जिसे शरीर संदेह (मेरा अपना शरीर), शारीरिक अवशेष माना जाता है, फेंक दूंगा; फेंकते समय भी, मैं उसे फेंक दूंगा। ज्ञान के भंडार (पञ्ञावपुल्ला) की प्राप्ति के लिए संपजनो (सचेत) होकर उन्होंने कहा: "इस शरीर द्वारा जो कुछ भी पूरा होना था, वह पूरा हो चुका है; अब इस शरीर को निश्चित रूप से त्याग देना चाहिए।" और अनेक प्रकार की चेतना (सति-पुल्ला) की प्राप्ति के लिए पटिसातो (सचेत) होकर उन्होंने यह श्लोक पढ़कर ध्यान में प्रवेश किया और उसके तुरंत बाद परिनिर्वाण हो गए।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा अजिता का

तैयार है।

******* oOo *******

द्वितीय अध्याय पर टीका

तैयार है।

********* oOo **********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(21):निग्रोधा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (21) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
भाग III
21. निग्रोधा
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार में हुआ। जिस दिन जेतवन प्रस्तुत किया गया, उन्होंने बुद्ध की महिमा देखी और तृप्त होकर भिक्षु संघ में प्रवेश किया। अंतर्दृष्टि जागृत होने पर वे शीघ्र ही छह प्रकार के अलौकिक चिंतन में निपुण हो गए। फल प्राप्ति के आनंद में लीन होकर, पुनर्जन्म से मुक्ति दिलाने वाले सिद्धांत के लाभों पर विचार करते हुए, उन्होंने आज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की अभिव्यक्ति के रूप में यह श्लोक कहा:

[21] नहं भयस्सा भयामि सत्थ नो अमातस्सा कोविदो॥
यत्थ भयं नावतिथति तेन मग्गेन वजंति भिक्खवो' ति.॥ ॥

[21] मुझे भयानक चीजों का कोई भय नहीं है, क्योंकि हे
हमारे प्रभु (बुद्ध) को अमृतमय ज्ञान भली-भांति ज्ञात है। [1] जिस मार्ग पर भय का कोई स्थान नहीं है,
उस मार्ग पर भिक्षु अपना मार्ग स्वयं ही तय करते हैं।

[1] शाब्दिक रूप से, 'अमृत में कुशल, विद्वान', अमाता, निर्वाण का सबसे प्रचलित पर्यायवाची। यह मार्ग आर्य अष्टांगिक मार्ग (टीका) है।

1.3 तीसरा अध्याय

1.3-1[21] श्लोक पर टिप्पणी

निग्रोधा थेरा
नाहं भयस्स भयामि से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा निग्रोध का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि अठारह सौ युग पहले इनका पुनर्जन्म एक अत्यंत समृद्ध ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वयस्क होने पर उन्होंने सांसारिक सुखों में हानि और त्याग में लाभ देखा, गृहस्थी त्याग दी, वन क्षेत्र में प्रवेश किया, एक साल के वन में पत्तों की कुटिया बनाई, संसार का त्याग किया, संन्यासी बन गए और वन की जड़ों और फलों से अपना जीवन यापन करने लगे। उस अवसर पर स्वयंजागृत बुद्ध पियादस्सी संसार में अवतरित हुए और धर्म की अमर वर्षा से संसार और दिव्य जगत की भ्रष्टता (किलेसा संताप) को शांत कर रहे थे। एक दिन, उस तपस्वी पर दया करते हुए, बुद्ध थाट साल वन में प्रवेश कर निरोध समाधि में लीन हो गए। वन की जड़ें और फल लाने के उद्देश्य से जाते समय, तपस्वी की मुलाकात भगवान बुद्ध से हुई, वे श्रद्धा से भर गए, खिले हुए साल के पेड़ की टहनियाँ और शाखाएँ एकत्र कीं, साल का मंडप बनाया और उसे साल के फूलों से सजाया, और हर तरह से भगवान बुद्ध को प्रणाम किया। वे भोजन के लिए भी नहीं गए, बल्कि परमानंद और मानसिक सुख से प्रेरित होकर उनके सामने झुक गए। गुरुजी अपनी निरोध समाधि से उठे और उस पर दया करते हुए उन्होंने सोचा, "भिक्षुओं का समूह आए।" उन्होंने मन ही मन कहा, "वह भिक्षुओं के समूह के प्रति भी प्रसन्न हो जाए।" तभी भिक्षुओं का समूह वहाँ आ गया। भिक्षुओं के समूह को देखकर वह भी श्रद्धा से भर गया, उसने प्रणाम किया और हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। अपनी प्रसन्नता (सीता) प्रकट करते हुए, उन्होंने उसे धर्म का उपदेश दिया ताकि उसकी भावी समृद्धि (संपत्ति) स्पष्ट हो सके और भिक्षुओं के समूह के साथ प्रस्थान किया। उस

पुण्य कर्म के कारण, वह जन्म-जन्म के चक्रों में केवल देवताओं और मनुष्यों के बीच ही विचरण करता रहा और जन्म-जन्म के चक्रों से मुक्ति दिलाने वाले अनेक पुण्य कर्मों का संचय करके, जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब उनका जन्म सावत्थी में एक अत्यंत धनी ब्राह्मण परिवार में हुआ। उनका नाम था निग्रोधा। जेतवन मठ में प्रवेश ग्रहण करने के दिन, वे बुद्ध की शक्ति पर विजय प्राप्त कर (संजातपसदो), भिक्षु बन गए, विपश्यना विकसित करने लगे और छह प्रकार के उच्च ज्ञान के स्वामी बन गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

साल के पेड़ों के झुरमुट में प्रवेश करने के बाद

मेरे लिए एक आश्रम अच्छी तरह से बनाया गया था।

फिर मैं सैल के साथ अच्छी तरह से सुरक्षित होकर रहने लगा।

जंगल में फूल।

हे भगवान पियादस्सी, स्वयं-

सबसे प्रमुख व्यक्ति बनाया गया, स्वयं-

जागृत बुद्ध, एकांत के इच्छुक,

साल के पेड़ों के झुरमुट के पास पहुंचा।

अपने आश्रम से बाहर आने के बाद,

मैं जंगल में गया; फिर मैं इधर-उधर भटकने लगा।

जड़ों की तलाश में जंगल में घूमना

और फल।

वहाँ मैंने आत्मजागृत बुद्ध के दर्शन किए।

पियादास्सी, जो अपनी महान प्रसिद्धि के साथ चमक रहे थे

घने जंगल के कुएं में वैभव

ध्यान में लीन बैठे हुए (समापन्न)।

चार (सहायक) छड़ें लगाने के बाद

बुद्ध के अलावा, मैंने एक अच्छी तरह से निर्मित मूर्ति बनाई।

पंडाल बनाया और उसकी छत को साल के फूलों से सजाया।

मैंने सात दिनों तक साल की छत वाले को थामे रखा।

पंडाल; वहाँ मेरा मन प्रसन्न हो गया,

मैंने परम उत्कृष्ट को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

बुद्ध।

उस समय भगवान उठ खड़े हुए।

उनकी एकाग्रता (समाधि) से।

वह एक खंभे की ओर देखते हुए आगे बढ़ रहा था।

लंबाई, सबसे उत्कृष्ट व्यक्ति बैठा था

खुद को नीचे गिरा दिया।

गुरु के शिष्य वरुण का नाम था।

पियादस्सी, अपने एक लाख सैनिकों के साथ

(उसकी इंद्रियों पर) शक्तियां उसके करीब आ रही थीं

विशिष्ट नेता (विनायक)।

महानुभाव पियादस्सी, सबसे बड़े

दुनिया का, पुरुषों में बैल जैसा श्रेष्ठ व्यक्ति

वह सभा के बीच में बैठ गया।

भिक्षुओं, विजेता ने मुस्कुराते हुए कहा

प्रकट।

अनुरुद्ध, सेवक

मास्टर पियादस्सी ने अपना वस्त्र बनाया

एक कंधे पर आराम करना (एकंसं) पूछा

महान ऋषि।

हे भगवान! वास्तव में, यह क्या है?

गुरु के चेहरे पर मुस्कान लाने का कारण?

जब कारण मौजूद होता है, तब स्वामी निर्माण करता है।

उनकी मुस्कान स्पष्ट थी।

जिस युवक ने मेरे लिए साल को थामे रखा था-

सात दिनों के लिए कवर; याद रखना

उसके इस कृत्य को देखकर मेरे चेहरे पर मुस्कान आ गई।

मुझे अवसरों की कोई कमी नहीं दिखती।

(ओकासा) जिसमें पुण्य परिपक्व होता है।

या तो दिव्य जगत में या

वहाँ पुरुषों की संख्या कम नहीं होती बल्कि

अवसर।

जब गुणवान व्यक्ति

कर्म ही दिव्य जगत में जीवन जीना है।

जितने लोगों के लिए सैल-कवर उपलब्ध होगा

उनकी सभा में जितने सदस्य शामिल हैं, उतनी ही संख्या में सदस्य होंगे।

गुणपरक गुणों से संपन्न

वहाँ कर्म हमेशा ही विस्मित रहेंगे

दिव्य नृत्य, गायन और

संगीत।

वहाँ मीठी खुशबू वाला इत्र होगा।

उसके जैसे दल के लिए; वहाँ और

फिर बारिश होगी

साल के फूल का।

वहाँ से चले जाने के बाद, यह व्यक्ति

मनुष्य बन जाएगा। यहाँ

साथ ही, हर समय एक सैल-कवर भी उपलब्ध रहेगा।

उसके ऊपर रखा हुआ था।

यहाँ, पर्याप्त संसाधनों से युक्त (समाहिता), वह

नाच-गायन और प्रहार के साथ रहें

झांझों का, जो इसे घेर लेंगे

एक। यह इसका फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

जब सूरज उगेगा तब भी बारिश होगी

नीचे सैल-शावर। वहाँ हर समय शावर चलता रहता है।

मेधावी लोगों से अच्छे संबंध होंगे।

काम।

अठारह सौ युगों (कप्पा) बाद,

ओक्काका के परिवार की संतान,

गुरु, जिन्हें गौतम के नाम से जाना जाता है,

दुनिया में प्रकट होगा।

अपने धर्म में, वह एक अच्छा व्यक्ति बनेगा।

धर्म द्वारा उत्पन्न पुत्र, उत्तराधिकारी;

सभी क्षेत्रों के सर्वांगीण ज्ञान के साथ-

kers (āsava), वह मुक्त होकर

कैंकर, निब्बाना में प्रवेश करें।

जब भी उसे अहसास होगा (अभिसामेति)

धम्म, वहाँ साल-आश्रय होगा

(उसके लिए), जो भी घटित होगा

वह अंतिम संस्कार की चिता जहाँ और जब उसका

शव को जलाया जाएगा।

सफल परिणाम की घोषणा करते हुए

(मेरे अच्छे कर्म के बारे में), महान ऋषि

पियादस्सी ने अपने शिष्यों को धर्म का उपदेश दिया।

सभा को संतुष्ट करने वाले श्रोता

धम्म की वर्षा।

मैंने दिव्य संप्रभुता का प्रयोग किया

तीस वर्षों तक दिव्य प्राणियों के बीच

युग (कप्पा)। साठ और सात के लिए

एक समय था जब मैं विश्वराज था।

मैं दिव्य लोक से यहाँ आया हूँ और

मुझे अपार आनंद प्राप्त हुआ। यहाँ भी,

वहाँ सैल-आश्रय है। यह है

पंडाल का सफल परिणाम।

यह मेरा अंतिम चरण है; पता चला कि

यही मेरा अंतिम अस्तित्व होगा। यहाँ भी।

वहाँ साल का आश्रय है; ऐसा ही होगा।

हमेशा के लिए।

महान ऋषि गौतम को संतुष्ट करने के बाद,

मैंने शाक्यों का बैल प्राप्त कर लिया है।

अविचलित स्थान ने त्याग दिया-

खोज और हार।

अठारह युग (कप्पा) पहले की बात है,

मैंने विशेष रूप से श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाई

बुद्ध। मुझे कोई बुरा पूर्व याद नहीं है।

अस्तित्व (दुग्गेट)। यह फलदायी है

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई भेंट का परिणाम।

मेरी सारी विक्षिप्तता जलकर राख हो गई थी, समस्त अस्तित्व।

जड़ से उखड़ गया था। हाथी के समान

जिसने अपनी जंजीरें तोड़ दी थीं,

कैंसर से मुक्त जीवन जियो। मेरा जाना...

परम श्रेष्ठ बुद्ध की उपस्थिति थी,

सचमुच, अच्छा चल रहा है। त्रिगुणात्मक ज्ञान

तदनुसार (विज्जा) प्राप्त हो गई थी;

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

चार प्रकार का विश्लेषणात्मक ज्ञान (पटीसंभिदा),

ये आठ प्रकार की मुक्ति (विमोक्खा)

और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा)

कल्पना की जा चुकी थी। बुद्ध का निर्देश

इसे अंजाम दिया जा चुका था।

हालाँकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान में से एक प्राप्त करने के बाद, फल प्राप्ति के सुख में अपना समय व्यतीत करते हुए, उन्होंने "नाहं भयस्स भयामि" से शुरू होने वाला एक श्लोक कहा, जो उनके अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने के उद्देश्य से था, ताकि यह स्पष्ट किया जा सके कि शासन (सासन) निर्वाण की ओर ले जाने वाला मार्ग है।

21. वहाँ लोग भयभीत हैं, क्योंकि यह भयं (खतरा) है, अर्थात् जन्म, वृद्धावस्था आदि जैसे खतरे। भयस का अर्थ इस प्रकार है:— यह अपादान कारक के अर्थ में एक संबंधवाचक शब्द है; खतरे के दृष्टिकोण से मैं जन्म, वृद्धावस्था, मृत्यु आदि जैसे कारणों से भयभीत नहीं हूँ, जो भय के संकेत हैं; यही इसका अर्थ है। उन्होंने वहाँ कारण के बारे में इस प्रकार कहा: "सत्था नो अमतस्स कोविदो।" हमारे स्वामी, अमरता में निपुण (अमत), जो नेतृत्व योग्य प्राणियों (वेनेय्या) को अमरता का वरदान देने में निपुण (चेक) हैं। यत्थ भयं नावतित्तति, जिस स्थान पर, निब्बान, ऐसा कोई खतरा नहीं है (तित्तति); उसे कोई अवसर (ओकास) प्राप्त नहीं होता। तेना का अर्थ है उस निर्वाण के कारण। वजंति का अर्थ है वे केवल भयरहित (अभय) क्षेत्र में जाते हैं। वास्तव में, निर्वाण को भयरहित (अभय) स्थान के रूप में जाना जाता है। उन्होंने इस प्रकार कहा: "इस प्रश्न के उत्तर में कि वे किस मार्ग से जाते हैं, मैं यह कहना चाहता हूँ कि वे अष्टांगिक मार्ग (अरीयमग्ग) के माध्यम से संसार में आने वाले खतरे के प्रति अचूक दृष्टि (इक्खना) रखते हैं। यही इसका अर्थ है। वैकल्पिक रूप से, यथा का अर्थ यह है कि अष्टांगिक मार्ग (अरीयमग्ग) की सिद्धि के कारण, स्वयं को दोष देने (अत्तनुवाद) आदि से शुरू होने वाले पच्चीस प्रकार के खतरे का संकेत स्थिर नहीं रहता, वह जड़ नहीं जमाता; उस मार्ग से भिक्षु, गुरु के मार्गदर्शन (शासन) में खतरे से मुक्त स्थान पर जाते हैं; मैं भी उसी मार्ग से गया हूँ; इसलिए मुझे खतरे का भय नहीं है।" इस प्रकार, थेरा ने अपने अरहंतत्व को प्रकट किया। (अन्ना).

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा निग्रोधा का

तैयार है।

******
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(22):चित्तका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (22) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
22. चित्तका
उनका जन्म बुद्ध युग में राजगृह में एक विपुल ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में हुआ था। जब भगवान (बुद्ध) बाँस के वन में निवास कर रहे थे, तब चित्तक [1] उन्हें सुनने गए और उन्हें श्रद्धा प्राप्त हुई और उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया। नैतिक आचरण को अपना अभ्यास चुनकर, वे एक वन क्षेत्र में गए और वहाँ भक्ति अभ्यास में ध्यान लगाया। उस विकसित अंतर्दृष्टि से उन्होंने शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इसके बाद वे भगवान (बुद्ध) को प्रणाम करने गए। भिक्षुओं द्वारा पूछे जाने पर, [27] 'क्या आपने वनवास में परिश्रम किया है, मित्र?' उन्होंने यह दिखाने के लिए अपनी बात (गाथा) कही कि उन्होंने परिश्रम किया था और अपनी अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[22] निला सुगिवा सिखिनो मोरा करासिअ अभिनदंती॥
ते सीतावतकद्दितकलिता सुत्तं झायं निबोधेन्ति' ति.॥॥

[22] नीलमणि गर्दन और सुंदर कलगी वाले मोर
करांगविया के जंगलों में पुकारते हैं; [2] ठंडी और नम हवाओं से संगीतमय होकर: [3] वे विचारक को उसकी दोपहर की नींद से जगाते हैं।

[1] उच्चारण चित्तका। बहन चित्ता भी राजगृह की थीं (बहनें, पृ. 27)।

[2] टीका, करम्भिया पढ़ते हुए, बताती है कि यह शब्द वृक्ष की एक प्रजाति का नाम है, और संभवतः लकड़ी का नाम भी है।

[3] सीतावत-कलिता शब्द में , टीका के ब्र. एम8. में इसे किलिता और एस. एम. में कद्दिता पढ़ा जाता है। दोनों में यह शब्द मोर की मधुर पुकार (मधुरवस्सिता) को दर्शाता है (मोरा-मयूर)। अभिधानप्पदीपिकु (137) के अनुसार, कलसद्दो शब्द का प्रयोग किसी भी अस्पष्ट, सुखद ध्वनि को दर्शाने के लिए किया जाता है। पक्षियों को बारिश की सूचना देने वाले बादलों की गड़गड़ाहट सुनकर के-का की पुकार लगाते हुए वर्णित किया गया है। मोरा, एक अनावश्यक शब्द, शायद टीका से आया है। टीका में मेघवातेन, 'वर्षा-बादल-हवा' से अनुवादक की व्याख्या 'नम' है ।

1.3-2[22] श्लोक पर टिप्पणी

चित्तका थेरा
नीला सुगीवा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा चित्तक का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि बुद्ध पद्ममुत्तरा के समय से ही उन्होंने पुनर्जन्मों के चक्र (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय करते हुए, आज से 91 युग पहले एक मानव माता के गर्भ में पुनर्जन्म लिया और बुद्धि प्राप्त कर ली। संयोगवश उन्होंने भगवान विपस्सी के दर्शन किए, वे श्रद्धावान हो गए, आदरपूर्वक फूल चढ़ाए, उन्हें प्रणाम किया और गुरु एवं निर्वाण के बारे में स्पष्ट हो गए, उन्होंने मन ही मन कहा: "यहाँ, अर्थात्, शांत सत्य (धम्म) है।" उस पुण्य कर्म के कारण वे वहाँ से चले गए और तावतिंसा स्वर्ग में पुनर्जन्म लिया। समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे राजगृह में एक धनी

ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। वे चित्तक नाम से जाने जाते थे। जब भगवान राजगृह गए और बाँस के वन में निवास कर रहे थे, तब वे गुरु के पास गए, धर्म का प्रवचन सुना, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए, अपने आचरण के अनुरूप मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठन) किया, वन क्षेत्र में प्रवेश किया, निरंतर अपने मानसिक विकास (भावना) में लगे रहे, ध्यान की साधना की, ध्यान पर आधारित स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और कुछ ही समय में अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

मैंने निर्मल (विरज) बुद्ध को देखा,

विश्व नेता विपस्सी, अंदर बैठे हुए

वह पर्वत कणिकारा के समान प्रकाशमान था।

पीले रंग का फूल।

मैंने तीन छोटे घंटी के आकार के फल तोड़े

(किंकणी) फूलों से मैंने अपना विशेष बनाया

विशेष रूप से अर्पित (अभिरोपयिं)।

आत्मजागृत व्यक्ति को श्रद्धापूर्वक अर्पित किया गया

बुद्ध, मैं दक्षिण की ओर (दक्खुणामुख) मुख करके गया।

उस सुचारु कार्य के कारण

इच्छाशक्ति (चेतना) और आत्मनिर्णय

(पणिधि), मैं तावतिंसा पहुंचा, उसके बाद मैं

उसने मेरे मानव शरीर को त्याग दिया था।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब, जिसे मैंने विशेष रूप से श्रद्धापूर्वक बनाया है

मुझे कोई बुराई याद नहीं है।

अस्तित्व; यही फल प्राप्ति का परिणाम है।

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे गुरु को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए राजगृह गए। वहाँ भिक्षुओं द्वारा पूछे जाने पर, "हे मित्र! आप कैसे हैं? क्या आपने वन में लगन से निवास किया?" उन्होंने "नीला सुगीवा" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिससे उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट किया और अपने स्वयं के लगन से वनवास के बारे में बताया।

22. यहाँ नीलासुगीवा वास्तव में नीलासुगीवा है; श्लोक की रचना में सुगमता के लिए स्वर को लंबा किया गया है; सुंदर गर्दन वाली (राजी); यही अर्थ है। क्योंकि वे सामान्यतः नीले रंग के होते हैं, नीला (नीलम जैसा नीला)। सुंदर (शोभन) गर्दन के कारण, सुगीवा (सुंदर गर्दन वाला)। सिखिनो का अर्थ सिर पर उगी कलगी से है और अपने सिर के साथ होने के कारण यह सिखिमो (कलगी वाला) है। मोर का अर्थ मोर है। कारंभीयं का अर्थ कारंभ वृक्ष पर है; वैकल्पिक रूप से, आरंभीय उस वन का नाम है। इसलिए, कारंभीयं का अर्थ कारंभ नामक वन में है; यही अर्थ है। अभिनादंति का अर्थ इस प्रकार है:— वर्षा के समय, वर्षा की गर्जना (मेघगज्जिता) सुनकर, हंस (हंस) आदि का रोना (नादंति) मानो वे ऋतु की सफलता (संपदा) की ध्वनि (सर) से अभिभूत होकर 'के का' जैसी ध्वनि निकालते हैं। ते का अर्थ है वे मोर। सीतावतकीलिता का अर्थ इस प्रकार है:— ठंडी हवा के साथ आनंद उत्पन्न करने वाली मधुर वर्षा। सुत्तं का अर्थ है भोजन के समय उनींदापन दूर करने के लिए सोना (भट्टसम्मद); या फिर, शारीरिक थकान (कायकिलमथ) को ठीक से दूर करने के लिए अनुमत अवधि (अनुञ्ञातवेला) के दौरान सोना (पटिपसम्भना)। झायं उचित रूप से मानसिक विकास (भावना) में लगे रहते हैं, शांति (समाथा), स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) और ज्ञान में प्रवेश करने की आदत विकसित करते हैं। निबोधन्ति का अर्थ है जागृत होना। "ये (पक्षी) भी, बिना सोए, जागृत अवस्था में ही अपना कार्य स्वयं कर लेते हैं; तो मैं क्यों?" ऐसा कहकर, सावधानी बरतकर स्वयं को नींद से जगाना; यही इसका अर्थ है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा चित्तका का

तैयार है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(23):गोसाला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (23) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
23. गोसाला
उनका जन्म बुद्ध युग में एक धनी मगध परिवार में हुआ था। वे सोन-कुटिकाण से परिचित हुए; [1] और जब उन्होंने सुना कि सोन-कुटिकाण ने संसार त्याग दिया है (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया है), तो वे व्याकुल हो गए और सोचने लगे: 'यदि इतना धनवान व्यक्ति संसार त्याग सकता है (भिक्षुत्व ग्रहण कर सकता है), तो मैं क्यों न करूँ?' और भिक्षु संघ में प्रवेश करके, उन्होंने नैतिक आचरण का अध्ययन किया, [2] और एक उपयुक्त स्थान की तलाश में, अपने पैतृक गाँव से कुछ दूर पहाड़ी पर रहने लगे। एक दिन उनकी माता, जो प्रतिदिन दान करती थीं, ने उन्हें उनके दैनिक विश्राम के समय शहद और चीनी से बना चावल का दलिया दिया। उन्होंने इसे लिया और उस पहाड़ी की छाया में बांस के झुरमुट के नीचे बैठकर खाया। कटोरा और हाथ धोकर, और उचित उपचार से तरोताज़ा होकर, उन्होंने बिना किसी परिश्रम के अंतर्दृष्टि का प्रदर्शन किया और सभी चीजों के उतार-चढ़ाव पर ध्यान केंद्रित करते हुए , मार्गों की सर्वोच्च ध्यान अवस्था को प्राप्त किया, और अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया, साथ ही सिद्धांत के रूप और अर्थ पर महारत हासिल की। पर्वतीय क्षेत्र में जाकर आनंदमय जीवन व्यतीत करने की इच्छा रखते हुए, उन्होंने इस श्लोक में अपने अनुभव का वर्णन किया:

[23] अहाṃ [5] खो वेगुंबस्मिṃ भुत्वान् मधुपायसाऽ॥
पदक्खिनं सम्मसंतो खंडाणं उदयबयं॥
सानुं पतिगामिस्सामि विवेकमनुब्रुहयन्ति॥ ॥

[23] देखो! मैं, जिसने बाँस के घने जंगल में
चावल और शहद खाया, जो अब समझता हूँ,
उसकी उपासना करते हुए, [3]
मेरे जीवन के इन सभी कारकों के उतार-चढ़ाव को , मैं वापस अपनी पहाड़ी पर जाऊँगा, वहाँ हृदय के वैराग्य, एकाकी और पृथक विकास को पोषित करने के लिए । [4]

[1] भजन संहिता CCVIII देखें। सोन अवंती से पूर्व की ओर बहुत दूर था।

[2] करियानुकुलाṃ कम्मनथनाṃ।

[3] पदक्खिण सम्मतन्तो। टीका पूर्व शब्द की व्याख्या 'भगवान (बुद्ध) के अनुशासन (शिक्षा) को पूर्णतः स्वीकार करना' के रूप में करती है। क्रॉनिकल उनके आध्यात्मिक विकास पर भोजन के टॉनिक प्रभाव पर जोर देता है, जो एक विशिष्ट रूप से तपस्वी विरोधी टिप्पणी है।

[4] विवेकं अनुबृहयां ति. सी एफ बाद वाले शब्द के अंतर्गत बालक। टीका में पतिपास8अधि-विवेकं फलसमापत्तिं काया-विवेकं च परिब्रुहनतो। सी एफ ver. 1246, एन.

1.3-3[23] श्लोक पर टिप्पणी

गोसाला थेरा
अहं खो वेलुगुम्बस्मिं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा गोसाला का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की भक्तिपूर्वक सेवा करते हुए, बार-बार जन्म-जन्म के चक्र से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए, और आज से 91 युग (कप्पा) पहले एक पहाड़ी पर एक वृक्ष की शाखा पर लटके हुए एक मौन बुद्ध के वस्त्र (पंसुकूल) को देखकर वे श्रद्धापूर्वक मन ही मन कहने लगे, “यह वास्तव में एक अरहंत का प्रतीक (धज) है” और पुष्प अर्पित करके उसका आदर किया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप उनका जन्म तावतिंस स्वर्ग में हुआ। उस समय से वे केवल देवताओं और मनुष्यों के बीच ही अपने बार-बार जन्म लेने के चक्र में विचरण करते रहे और जब इस बुद्ध का पुनर्जन्म हुआ, तो उनका जन्म मगध राज्य में एक साधारण परिवार में हुआ और वे गोसाला नाम से जाने गए। उनका सोन से बहुत निकट परिचय हुआ और जब सोन ने उनके भिक्षु बनने के बारे में सुना, तो उन्हें बहुत खेद हुआ और उन्होंने मन ही मन कहा, “वह तो धनवान है और फिर भी भिक्षु बन गया, तो मैं क्यों?” उन्होंने भगवान बुद्ध की उपस्थिति में भिक्षु का दीक्षा संस्कार ग्रहण किया, अपने आचरण के अनुरूप मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठन) किया, एक उपयुक्त निवास स्थान (सप्पाय) की खोज की और अपने पैतृक गाँव से कुछ ही दूरी पर स्थित एक पहाड़ी वन में निवास किया। उनकी माता उन्हें प्रतिदिन भिक्षा भोजन कराती थीं। फिर एक दिन जब वह भिक्षा मांगने के लिए गांव में दाखिल हुआ, तो उसकी मां ने उसे शहद और चीनी से विशेष रूप से तैयार किया हुआ दूध-चावल दिया। उसने उसे ग्रहण किया, उस पहाड़ी की छाया में एक विशेष बांस की झाड़ी के नीचे बैठ गया, उसका भरपूर आनंद लिया, अपने हाथ और भिक्षापात्र को धोया, और उसे विपश्यना (स्पष्ट अंतर्दृष्टि) प्राप्त होने लगी। भिक्षा भोजन (भोजन) की अनुकूल व्यवस्था प्राप्त करने के कारण उनके शरीर और मन की तत्परता (कल्ला) के कारण, वे शांत (समाहितो) हो गए और उदय और अस्त (उदयब्बय) आदि जैसे दिव्य ज्ञान को चतुराई और साहसपूर्वक धारण करते हुए, उन्होंने थोड़ी सी भी असुविधा (कसिर) के साथ स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में स्वयं को संलग्न किया, और क्रमिक (पटिपाटि) धार्मिक मार्ग (मग्ग) के विकास (भावना) की सर्वोच्च ऊँचाई (मत्तकम्) तक पहुँचे तथा (चार प्रकार के) विश्लेषणात्मक ज्ञान (पटिसंभिदा) के साथ अरहंत पद की कल्पना (सच्चाकासि) की। अतः, अपदान में कहा गया है:—

“उदंगण नाम की एक पहाड़ी थी

हिमावंता से ज्यादा दूर नहीं; वहाँ मैं

एक फटा हुआ वस्त्र देखा (पंसुकूल)

पेड़ की चोटी पर लटका हुआ।

तीन किंकणी तोड़कर

फिर फूल खिले, मैं प्रसन्न हो गया और

फटेहाल (पंसुकूल) को सम्मान दिया

आनंदित मन से वस्त्र धारण करें।

उस कार्य के लिए बधाई हो!

मेरी इच्छाशक्ति और आत्मनिर्णय, मैं

तावतिंस (स्वर्ग) पहुँच गया

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया।

इक्यावन युग (कप्पा) पहले, से

अब, मैंने तब वह काम कर दिया था;

मुझे दुष्ट अस्तित्व याद नहीं है

(दुग्गती) मेरे द्वारा सम्मान किए जाने के बाद

अरहंत का प्रतीक चिन्ह (धजा)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालाँकि अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे वर्तमान (दिट्ठधम्म) सुख का आनंद लेने के उद्देश्य से वन पर्वत पर जाने के लिए इच्छुक थे और उन्होंने अपनी उचित प्राप्ति (पटिपत्ति) के बारे में सूचित करने के लिए "अहं खो वेलुगुम्बस्मिं" से शुरू होने वाला एक श्लोक कहा।

23. वहाँ, veḷugumbasmiṃ का अर्थ है बांस की झाड़ी के पास; उस जंगल की छाया में। Bhutvāna madhupāyāsaṃ, शहद से छिड़के हुए दूध-चावल का भोग लगाकर। Padakkhinaṃ का अर्थ है अच्छी समझ के साथ; गुरु की शिक्षा को विधिवत ग्रहण करके; यही अर्थ है। Sammasanto khandhānaṃ udayabbayaṃ का अर्थ है आसक्ति (upādāna) के पाँचों स्कंधों (khandha) के उदय और अस्त होने को स्पष्ट रूप से देखना; यदि अब भी कर्तव्य का पालन किया गया हो (katakicco), तो फल (phala) की उचित प्राप्ति (samāpatti) के लिए स्पष्ट अंतर्दृष्टि (vipassanā) स्थापित करना; यही अर्थ है। Sānuṃ paṭigamissāmi मैं उस वन पर्वत की दिशा में जाऊँगा (uddissa) जिसका उल्लेख मैंने पहले किया है। विवेदमनुब्रुहयं का अर्थ है — शारीरिक एकांतवास के उचित फल प्राप्ति (फलसमापत्ति) के लिए सर्वांगीण पोषण; या फिर, मैं इसके सर्वांगीण संवर्धन के कारण जाऊँगा (तस्सहेतु)। इस प्रकार कहने के बाद, थेरा वहीं चले गए; यही वह श्लोक है जो इस थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करता है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा गोसाला का

तैयार है।

*********oOo********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(24):सुगंधा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (24) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
24. सुगंधा
उनका पुनर्जन्म बुद्ध युग में, धनी माता-पिता के परिवार में, सावत्थी में हुआ। अतीत में उनकी यही इच्छा थी कि जब उन्होंने कश्यप बुद्ध को चंदन का सुगंधित कक्ष भेंट किया, ताकि वे एक ही जन्म में सुगंधित शरीर के साथ पुनर्जन्म लें, तो उन्होंने अपने जन्म के दिन और उससे पहले उनकी माता ने पूरे घर को सुगंध से भर दिया। तब उनके माता-पिता ने कहा, 'हमारा पुत्र अपने नाम के साथ आया है!' और उन्होंने उनका नाम सुगंधा रखा। बड़े होकर, थेरा महा-सेला के उपदेश से प्रेरित होकर उन्होंने संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करने के लिए) संन्यास ले लिया। [1] और सात [29] दिनों के भीतर ही उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार करते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:

[24] अनुवस्सिको पब्बाजिटो पासा धम्मसुधम्मतm॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[24] मेरे संन्यासी बनने के बाद से वर्षा अभी मुश्किल से ही समाप्त हुई है, फिर
भी देखो धम्म मार्ग का उचित क्रम! मैंने अब
त्रिविध ज्ञान प्राप्त कर लिया है और बुद्ध द्वारा बताए गए सभी कार्य किए हैं। [3]

[1] यह थेरा ('महान चट्टान') संभवतः सुत्त-निपात में सेला-सुत्त के ब्राह्मण (पुजारी) शिक्षक हैं, जो बुद्ध द्वारा परिवर्तित होकर अरहंत (प्रबुद्ध) बन गए और स्वाभाविक रूप से अपनी वाक्पटुता का अभ्यास जारी रखते थे। मिलिंद, i. 253; सुम. वी., i. 276 देखें।

[2] तेविज्जो, शाब्दिक अर्थ, 'तीन बार बुद्धिमान'। यह ब्राह्मणवादी वाक्यांश, जो तीन वेदों का ज्ञान रखने वाले व्यक्ति को संदर्भित करता है, बुद्ध द्वारा अपनाया गया था और इसे तीन प्रकार के प्रज्ञा, विज्जा या आभिज्ञा (अंतर्ज्ञान, अंतर्दृष्टि) रखने वाले व्यक्ति पर लागू किया गया था, जिसे पूर्व जन्मों की स्मृति, दिव्य दृष्टि और आसवों या मादक पदार्थों (विकारों/इच्छाओं) - कामुकता, जीवन की वासना, मत, अज्ञान का नाश कहा जाता है (अंग. निक., i. 163-165)। तुलना करें पृष्ठ 14, नोट 3।

उत्पत्ति 8:22: "जब तक पृथ्वी रहेगी, तब तक बीज बोने का समय और कटाई का समय, सर्दी और गर्मी, ग्रीष्म और शीत ऋतु, दिन और रात निरंतर चलते रहेंगे।" - केजेवी

[3] टीका के अनुसार, अनुवस्सिका-पब्बजितो वाक्यांश की एक से अधिक व्याख्याएँ संभव हैं। यदि इसका अर्थ 'एक वर्ष पहले संसार का त्याग किया' (न्यूमैन देखें) है, तो यह विचित्र है कि धम्मपाल इसे संवच्छरा शब्द से व्याख्यायित नहीं करते । क्या धम्म के मार्ग (शाब्दिक रूप से, 'नियमितता') पर दिए गए बल को देखते हुए, ब्रह्मांड के पंचमार्ग (नियम) के दो पहलुओं - ऋतुओं और धम्म (उतु-नियम, धम्म-नियम) - के बीच समानता देखना अनुमेय नहीं है ? (बुद्ध के संवाद, ii 8, n. 3, और मेरा बौद्ध धर्म, 118 f. देखें ।) फल प्राप्ति - अर्थात्, उनके नैतिक और आध्यात्मिक विकास की - उतनी ही निश्चित और अपरिहार्य थी जितनी कि 'बीज बोने का समय और कटाई का समय, ... ग्रीष्म और शीत ऋतु का अंत नहीं होगा' (उत्पत्ति 82:22)। हालांकि, यह वाक्यांश बिना किसी विशेष उद्देश्य के बार-बार दोहराया जाता है।

1.3.4[24] श्लोक पर टिप्पणी

सुगंधा थेरा
अनुवस्सिको पब्बजितो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुगंधा का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि बानवे युग (कप्पा) पहले, स्वयंजागृत बुद्ध तिस्सा के समय, उनका पुनर्जन्म एक मानव माता के गर्भ में हुआ और बुद्धि प्राप्त करने पर वे वन में हिरणों का शिकार करते हुए विचरण करने लगे। गुरु ने उन पर दया करते हुए अपने पदचिह्न प्रकट किए। उनके चरण-शिलाओं (पादचेतिया) को देखकर वे पूर्व बुद्धों के प्रति अपनी समर्पित सेवा के कारण उत्साह और आनंद से भर गए और मन ही मन कहने लगे: "ये पदचिह्न (पदानि) इस संसार और दिव्य जगत के सर्वोच्च व्यक्ति के हैं।" उन्होंने कोरण्डक झाड़ी के फूल एकत्र किए, श्रद्धापूर्वक अर्पण किया और अपने मन को प्रसन्न किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप उनका जन्म दिव्य लोक में हुआ और वहाँ से देहान्त होकर उन्होंने समय-समय पर पुण्य कर्म किए, अपने जन्म-जन्म चक्रों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया, भगवान कस्सपा के समय में एक कुटुम्बिका (जागीरदार) बने, गुरु और भिक्षुओं के समुदाय को दान दिया, बहुमूल्य चंदन (गोसितचंदन) को कूटकर सुगंधित कक्ष (गंधकुटी) को चारों ओर से उससे लेप किया और यह मनोकामना स्थापित की: "जहाँ भी मेरा पुनर्जन्म हो, मेरा शरीर इसी प्रकार सुगंधित रहे।" अपने जन्म-जन्म चक्रों में विचरण करते हुए उन्होंने इस और उस जन्म में अन्य अनेक पुण्य कर्म किए और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक धनी ब्राह्मण के घर में पुनर्जन्म लिए। जब से वह अपनी माता के गर्भ में आया और जन्म लिया, तब से ही माता के शरीर और पूरे घर में मधुर सुगंध से भरी हवा चल रही थी। जिस दिन उसका जन्म हुआ, उस दिन तो पूरे घर में असाधारण रूप से मीठी सुगंध वाली हवा बह रही थी। उसके माता-पिता ने उसका नाम सुगंधा रखा और मन ही मन कहा, "हमारा पुत्र अपने नाम को स्वयं ही लेकर आया है।" धीरे-धीरे वयस्क होने पर, उसकी मुलाकात थेरा महासेल से हुई, उसने उनकी उपस्थिति में धर्म का ज्ञान प्राप्त किया, भिक्षु बन गया और विपश्यना का अभ्यास करके सात दिनों के भीतर अर्हत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है:

मैं पूर्व में एक वनकर्मी का पुत्र था;

मेरे माता-पिता की मृत्यु के साथ, मैं

मैं जीवों को मारकर (पसु) अपना जीवन यापन करता था;

मैंने कोई अच्छा काम नहीं किया था।

मेरे निवास स्थान (आसय) के पड़ोस में, दुनिया-

नेता तिस्सा, दृष्टि (चक्खु) के स्वामी,

मुझ पर दया करके, उसने मुझे तीन चीजें दिखाईं-

पदचिह्न (pada).

किसी के पदचिह्न (अक्कंता) को देखकर

गुरु तिस्सा के साथ मुझे आनंद हुआ

आनंदित मन; मैंने अपने मन को प्रसन्न किया

पदचिह्न (pada).

कोरंडा झाड़ी को खिलते हुए देखकर,

जमीन पर उगने वाली झाड़ी को मैंने इकट्ठा किया

मेरे अपने पात्र (सकोसाकम्) में लगे फूल

और मैंने परम पूज्य ईश्वर को अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की।

उत्कृष्ट पदचिह्न (pada).

उस कार्य के कारण, मैंने अच्छा किया।

मानसिक इच्छाशक्ति और दृढ़ संकल्प से मैं वहाँ पहुँचा।

तावतिंसा ने अपना मानव शरीर त्याग दिया।

जिस भी निवास स्थान पर मैं पुनर्जन्म लेने के लिए पहुंचा

चाहे दिव्य हो या मानवीय, मेरी त्वचा करेण्डा थी।

रंग बदलने पर, मैं अत्यंत तेजस्वी हो गया।

यह बानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब, मैंने तब अपना काम कर दिया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें। यही है।

सम्मान करने का फलदायी परिणाम

पदचिह्न (padapūjā)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए "अनुवस्सिको पब्बजितो" से शुरू होने वाले इस श्लोक का उच्चारण किया।

24. वहाँ, अनुवस्सिको का अर्थ है पीछे जाना; वर्षावास के निकट जाना (वस्सं) वर्षावास के अनुसार है (अनुवस्सो); वर्षावास के अनुसार वही अनुवस्सिका है। पब्बजितो का अर्थ है भिक्षुत्व की ओर जाना; भिक्षु बनकर वह वर्षावास के निकट जाना चाहता है; वह एक वर्षावास कर चुका है (एकवस्सिको); यही अर्थ है। दूसरे शब्दों में, वह एक वर्ष (अनुवस्सं) के लिए वर्षाकाल में समान रूप से गया (अनुगत), बाद में गया (पच्छगत) और बाहर गया (अपगत); उसके पास वह एक वर्ष है; इस प्रकार, वह एक वर्ष का है (अनुवस्सिका)। वह भिक्षु जिसका वर्षाकाल (वस्सं) सर्वांगीण पूर्ण न होने के कारण गणना में नहीं आया; उसे इस प्रकार बताया गया; उपवास न करने के कारण। पास धम्म सुधम्मतं का अर्थ है; अपने गुरु की शिक्षाओं के अच्छे धर्म का पालन करने की अवस्था, उसका सुगठित होना, और निर्वाण की ओर अग्रसर होने की निश्चितता (निय्यानिका) की अवस्था; जहाँ आप भिक्षु बन चुके हैं और एक वर्ष का उपवास (अनुवस्सिको) व्यतीत कर चुके हैं। पूर्व निवासों का ज्ञान, दिव्य दृष्टि का ज्ञान, दोषों के नाश का ज्ञान; इस प्रकार तीस्सोविज्जा, त्रिविध ज्ञान, अनुपत्ता (आपने तदनुसार प्राप्त किया था), जिसका आपने अवलोकन किया था। फलस्वरूप, कतं बुद्धस्स शासनं का अर्थ है कि आत्म-जागृत बुद्ध के उपदेशों का तदनुसार पालन किया गया था और सलाह का अनुसरण एवं अभ्यास किया गया था; इस प्रकार, थेरा ने अपने बारे में इस प्रकार बात की मानो वह किसी अन्य व्यक्ति के बारे में बात कर रहे हों क्योंकि अपने कर्तव्य का पालन करने के कारण वे उत्साह और आनंद से भर गए थे।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा सुगंधा की

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(25):नंदिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (25) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
25. नंदिया
बुद्ध युग में कपिलवस्तु में एक शाक्य राजा के घर जन्मे, उनके माता-पिता ने कहा: यह हमारे लिए आनंद लेकर पैदा हुआ है; और उन्होंने उसका नाम नंदीय (आनंद) रखा। बड़े होकर, जब अनुरुद्ध और अन्य सभी ने भगवान (बुद्ध) के मार्गदर्शन में संसार त्याग दिया, तो वह भी भिक्षु बन गए। अपने अध्ययन और अतीत में किए गए संकल्प के कारण, उन्होंने शीघ्र ही अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इसके बाद वे अनुरुद्ध थेरा [1] और उनके [30] मित्रों के साथ पूर्वी बाँस के जंगल में रहने लगे। वहाँ, दुष्ट मारा (मृत्यु का देवता/राक्षस), उन्हें डराने के लिए एक भयानक रूप में प्रकट हुआ। लेकिन थेरा ने उसे इन शब्दों से भगा दिया, 'हे दुष्ट! जो तुम्हारे लोक से ऊपर उठ गए हैं, उनका तुम क्या कर सकते हो? तुम ही इसके द्वारा पराजित और नष्ट हो जाओगे।'

[25] ओभासजाताṃ फलगाṃ चित्ताṃ यस्सा अभिनहसो॥
तदिसैं भिक्खुमसज्जा कान्हा दुक्खं निगच्छसि' ति.॥ ॥

[25]
जिसका विचार मार्ग की भव्यता से सदा नवजन्मित होता है , और जिसने कठिन परिश्रम
से फल को स्पर्श किया है - यदि तुम ऐसे भिक्षु पर आक्रमण करोगे,
हे काले हृदय वाले प्रेत, तो तुम्हें दुख में जाना होगा। [2]

[1] अनुरुद्ध और उसके दोस्तों पर, पीएस देखें। CXXXVIII. - CXXXIX., CCLVI. (सीएफ. पी.एस. CXXXVIII). एकमात्र मार्ग जहां नंदिया का स्वतंत्र रूप से उल्लेख किया गया है, वह सैय्य, वी. 403 है। धम्मपद कॉम, छंद 219, 220 पर, बनारस के एक बिल्कुल अलग नंदिया (श्लोक 11, नंदिका, नंदा) को संदर्भित करता है, जो एक सामान्य अनुयायी है।

[2] श्लोक 1189 देखें।

1.3-5[25] श्लोक पर टिप्पणी

नंदिया थेरा
ओभासजातं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा नंदीय का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि भगवान पद्ममुत्तरा के समय, जब गुरु का परिनिर्वाण हो गया था, तब उन्होंने उनके मंदिर में चंदन की लकड़ी से बनी एक बाड़ (चंदनसार) बनवाई और स्वयं द्वारा एक विशाल आदर भेंट (सक्कारा) अर्पित की। तब से वे उत्तम प्रवृत्ति (अज्जासय) से संपन्न हो गए, उन्होंने इस और उस (जन्म) में बार-बार जन्म लेने के चक्रों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले प्रचुर पुण्य कर्मों का संचय किया, देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने पुनर्जन्म के चक्रों में विचरण किया और कपिलवस्तु में शाक्यन वंश में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनके माता-पिता ने उनका नाम नंदीय रखा, यह कहते हुए कि वे आनंद उत्पन्न करने वाले के रूप में पैदा हुए थे। जब वे वयस्क हुए, और अनुरुद्ध और अन्य लोग गुरु की

उपस्थिति में भिक्षु बन गए, तो उन्होंने भी वैसा ही किया, उन्होंने विपश्यना (स्पष्ट अंतर्दृष्टि) विकसित करने का कर्म किया, और अपने द्वारा की गई समर्पित सेवा (अधिकार) के कारण शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"पदुमुत्तरा नाम के विजेता ने,

दुनिया का सबसे बुजुर्ग, पुरुषों का बैल,

स्वयंजागृत बुद्ध ने प्रकाशमान होकर

आग के एक विशाल पिंड के समान, उनका निधन हो गया

परिनिब्बान को।

जब महान वीर निर्वाण को प्राप्त हुए,

वहाँ एक विशाल तीर्थस्थल बन गया। लेकिन

दूर-दराज के लोगों ने इसकी देखभाल करवाई (उपट्ठेंटी),

सबसे उत्कृष्ट और सुव्यवस्थित अवशेष कक्ष में।

पवित्र मन और नेक हृदय होने के कारण, मैंने

चंदन की रेलिंग; फिर ठोस मंदिर

यह किसी तीर्थस्थल के लिए उपयुक्त रूप से दिखने योग्य लग रहा था।

मैं जिस भी जन्म में पुनर्जन्म लेता, चाहे

चाहे दैवीय हो या मानवीय, मैंने कभी अपनी हीनता नहीं देखी।

(ओमाट्टा), यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

पूर्व (अच्छा) कर्म।

आज से पंद्रह सौ युग (कप्पा) पहले,

आठ लोग महान विश्व राजा बने

शक्ति; उन सभी का नाम एक ही था।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, जब यह थेरा, थेरा अनुरुद्ध और अन्य लोगों के साथ पूर्व (पाचीन) विंसा में स्थित हिरण उद्यान (मिगदया) में रह रहे थे, तब दुष्ट मारा ने उन्हें भयभीत करने के उद्देश्य से अपना भयानक रूप (भेरवरूप) दिखाया। थेरा ने उन्हें इस प्रकार पहचानते हुए कहा, "यह मारा है," और "ओभासजातंफलंवा" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, ताकि उन्हें यह दिखाया जा

सके: "हे दुष्ट! तुम्हारा कर्म उन लोगों पर क्या प्रभाव डालेगा जिन्होंने मारा के राज्य पर विजय प्राप्त की थी; इसके फलस्वरूप तुम स्वयं भी विनाश और दुर्भाग्य का शिकार होगे।"

25. यहाँ ओभासजातं का अर्थ है: सर्वोत्कृष्ट मार्ग (मग्ग) का ज्ञान प्राप्त करने के कारण, ज्ञान के प्रकाश से उत्पन्न प्रकाश; अतः वह अत्यंत तेजस्वी (पभासर) था, क्योंकि उसने पाप के अंधकार को पूर्णतः नष्ट कर दिया था; यही अर्थ है। फलागं का अर्थ है फल प्राप्ति के निकट पहुँच जाना; सर्वोत्कृष्ट फल के ज्ञान से युक्त (सहिता); यही अर्थ है। चित्तं का अर्थ है कि उसने सामान्यतः दोषरहित (खीणासव) अरहंत के मन के बारे में कहा था। अतः उसने कहा: “अभिनहसो।” वास्तव में, "फलन सहित (फल प्राप्ति के साथ)" कहना उचित है क्योंकि दोष रहित अरहंतों द्वारा निरंतर (निच्चकप्पम) अरहंतत्व के फल की उचित प्राप्ति (समापत्ति) में प्रवेश करने से दुःख (निरोध) का निवारण होता है। तादिसं का अर्थ है, उस प्रकार, उसी रूप में; इस प्रकार, अरहंतों का यही अर्थ है। आसज्जा का अर्थ है स्पष्ट रूप से शुद्ध किया हुआ और तिरस्कार (परिभुय्या) किया हुआ। काण्ह का अर्थ है, मार को पुकारना और संबोधित करना; वास्तव में, उन्हें “कण्हो” कहा जाता है, विशेष रूप से काला जन्म। दुक्खं निगच्छसि का अर्थ है कि इस जन्म में गर्भ में प्रवेश आदि जैसे कर्मों से आप अलाभकारी शारीरिक थकान की ओर अग्रसर होंगे और भविष्य में भी बिना किसी प्रतिफल के नरक की पीड़ा भोगेंगे। यह सुनकर, मारा ने मन ही मन कहा, “भिक्षु मुझे पहचान गया है” और वहीं से गायब हो गया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा नंदिया का

तैयार है।

*********oOo*********
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(26):अभय

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (26) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
26. अभया
उनका पुनर्जन्म इस बुद्ध युग में राजा बिम्बिसार के पुत्र के रूप में हुआ। उनके पुनर्जन्म की परिस्थितियों का वर्णन आगे किया जाएगा। [1] जैन नेता नाटपुत्त ने उन्हें 'समना गौतम (बुद्ध)' के समक्ष एक दुविधा प्रस्तुत की, परन्तु भगवान (बुद्ध) के उत्तर में उन्होंने जैन की पराजय और परम पूज्य बुद्ध के सर्वोच्च ज्ञान को स्वीकार किया। इसके बाद, जब राजा का निधन हुआ, अभय चिंतित हो गए और संसार छोड़कर संन्यासी संघ में चले गए। जुए में छेद की दृष्टांत कथा पर आधारित सूत्र के उपदेश से वे प्रथम मार्ग (निर्वाणिक समाधि) तक पहुँचे; फिर से अंतर्दृष्टि जागृत करके उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। [2] इस पर, अपनी विजय का गुणगान करते हुए उन्होंने अन्न (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा करते हुए कहा:

[26] सुत्वा सुभासितां वाकें बुद्धस्सदिक्कबन्धुणो॥
पच्चव्याधिं हि निपुणं वलग्गं उसुना यथा' ति.॥ ॥

[26] सूर्य वंश के बुद्ध के विषय में, मैंने
सबसे वाक्पटु शब्द सुना, और सुनकर
सूक्ष्म सत्य भेद गया, जैसे
किसी कुशल धनुर्धर के बाल की नोक भेदी जाती है। [3]

[1] सिस्टर्स, पृष्ठ 80 देखें (जहाँ प्रिंटर ने नाम बदलकर अभया कर दिया)। दुविधा प्रकरण मज्झ. निक. के अभयराजकुमार सुत्त (58) में है।

[2] अर्थात्, चौथे या सर्वोच्च मार्ग की सफलता। यह सूत्र संभवतः कछुए और तैरते जाल का है (स., खंड 455; मज्ज. iii. 169)।

[3] धनुष के साथ कौशल का विशिष्ट परीक्षण (डीएचपी. कॉम., आई., पृ. 288)।

1.3-6[26] श्लोक पर टिप्पणी

अभया थेरा

सुत्वसुभासितं वाचं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अभय का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि वे भगवान पद्ममुत्तरा के युग में भिक्षु बने और धर्म के शिक्षक थे। धर्म का अध्यापन करते समय उन्होंने सर्वप्रथम भगवान की स्तुति में चार श्लोक पढ़े और उसके बाद धर्म का अध्यापन किया। उनके इस पुण्य कर्म के बल पर, एक लाख युगों (कप्पा) तक नरक में उनका कोई आभास नहीं हुआ। वास्तव में, ऐसा कहा गया है:

विजेता की विशेष रूप से प्रशंसा करते हुए

पद्ममुत्तरा, जो स्वयं ही बुद्ध बन गए,

मैं खतरे से मुक्त और धार्मिक विचारों वाला बन गया और

मेरी धर्मनिष्ठ आस्था प्रबल होने के कारण, मैंने ऐसा नहीं किया।

सौ वर्षों के लिए नरक की भूमि पर जाओ

हजार युग (कप्पा)।

उपजाऊ खेत जैसी समृद्धि से परिपूर्ण, वे ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने अपने जन्म से पहले और बाद में अत्यंत दृढ़ संकल्प (सन्निरत्थाना चेतना) के कारण अपार पुण्य और अच्छे कर्मों (कुसला) का फल (अभिषन्द) अर्जित किया। वास्तव में, यह कहा गया है: "अकल्पनीय पुण्य से अकल्पनीय फल प्राप्त होता है।" निश्चय ही, इस और उस जन्म में संचित पुण्य उनका सहारा (उपत्तम्भक) बना। इसी प्रकार, उन्होंने भगवान विपस्सी को केतका पुष्प का आदरपूर्वक अर्पण किया। इस प्रकार किए गए अत्यंत विशिष्ट पुण्य कर्म के कारण, वे अपने पुनर्जन्मों के चक्रों में उत्तम जन्मों (सुगति) में विचरण करते रहे और इस बुद्ध के जन्म के समय राजा बिम्बिसार के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया। उनका नाम अभय था। उनके मूल के बारे में आगे (परतो) बताया जाएगा। नाट के पुत्र द्वारा भेजे जाने पर, जैन (निगंठ) ने उन्हें एक दोधारी (उभतोकोटि) समस्या (पंहं) समझाते हुए निर्देश दिया: “भिक्षु गौतम से यह प्रश्न पूछने के बाद, आपको यह दृष्टिकोण (वाद) स्थापित करना चाहिए।” इसके बाद वे भगवान बुद्ध के पास गए, उनके समक्ष वह समस्या रखी और जब भगवान बुद्ध ने उस समस्या के अनेक उत्तरों की स्थिति बताई, तो उन्हें निगंठों की पराजय और गुरु की आत्म-जागृत अवस्था का पता चला और उन्होंने स्वयं को उनका भक्त घोषित किया। इसलिए, जब राजा बिम्बिसार की मृत्यु हुई, तो उन्हें पश्चाताप हुआ, उन्होंने उनके मार्गदर्शन में भिक्षुओं के संघ में प्रवेश किया, तालच्छिलूपमा (कुंजी के छेद की उपमा) पर आधारित सूत्र की शिक्षा के माध्यम से सोतापन्न (धारा-प्रदर्शक) बन गए, बाद में उन्हें विपश्यना (स्पष्ट अंतर्दृष्टि) प्राप्त हुई और उन्होंने अरहंतत्व का दर्शन किया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

“सर्वोत्तम पुरुष जीवित रहे

विनता नदी का किनारा। मैंने देखा

निर्मल बुद्ध जो एकमुखी थे

और सुव्यवस्थित (समाहिता)। फिर मैं

सबसे उत्तम बुद्ध को सुगंधित भेंट की

केतका फूल, श्रद्धापूर्वक और अच्छे भाव से।

पूरे दिल से।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब, मैंने श्रद्धापूर्वक फूल चढ़ाए थे-

वास्तव में; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "सुत्वा सुभाषितं वाचं" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञं) को प्रकट किया और साथ ही अपने स्वयं के उचित अभ्यास (पटिपत्ति) की घोषणा की।

26. वहाँ, सुत्व का अर्थ है कान को नीचे करना (ओदहित्वा); कान के द्वार के अनुरूप (सोतद्वारानुसारण) ध्यान से सुनना (उपधारे त्वा)। सुभासुतं का अर्थ है सुस्पष्ट; उचित ढंग से बोला गया; धम्म की शिक्षा, जो सर्वथा स्पष्ट (विभावनी) करती है, जिसमें सर्वथा स्पष्ट (साधना) अर्थ (अत्थ) को अर्थ के अनुसार स्पष्ट (एकन्ततो) किया जाता है, और आत्म-जागृत बुद्ध होने के कारण उनकी अपार कृपा से कोई अप्रिय (अविसं) बात नहीं कही जाती; वास्तव में, भगवान बुद्ध की कोई भी धम्म शिक्षा ऐसी नहीं है जो सर्वथा सत्य (सच्च) से स्पष्ट रूप से मुक्त (विनिमुत्त) हो। बुद्धस्स का अर्थ है सर्वज्ञ बुद्ध। आदिच्चबंधुनो का अर्थ है: वे आदिच्च (सूर्य) हैं क्योंकि उनका जन्म सूर्य वंश में हुआ था; वे इस वंश के संबंधी हैं; अतः वे सूर्य के संबंधी, भगवान बुद्ध हैं; सूर्य के उस संबंधी के। वैकल्पिक रूप से, वे सूर्य के संबंधी हैं; अतः वे आदिच्चबंधु, भगवान बुद्ध हैं। मैं उस भगवान बुद्ध का सगा पुत्र शिष्य था। अत:, मैं भगवान बुद्ध हूँ। अत:, महिमावान बुद्ध ने कहा:—

"शनि (राहु) इसे निगल न ले"

सूर्य, जो अंधों में प्रकाश उत्पन्न करता है-

अंधकार (तमासी), चमक

ओर्ब (मंडली) बढ़ती गर्मी (उग्गा)।

(तेगो) जैसे ही यह आकाश में विचरण करता है।

शनि (राहु), तुम्हें मुझे जाने देना चाहिए

जीवित प्राणियों।"

पच्चब्यधिं का अर्थ है मैंने विधिवत प्रवेश किया (पटिविज्झिं)। यहाँ 'ही' एक अविघटनीय कण (निपात) है। निपुणं का अर्थ सूक्ष्म (सन्ह) यानी अत्यंत कोमल; निरोध का आर्य सत्य; या वैकल्पिक रूप से चार आर्य सत्य (सच्च) है। वैकल्पिक रूप से 'ही' एक क्रियाविशेषण (निपात) है, जो कारण (हेतु) के अर्थ में है, क्योंकि मैंने सूक्ष्म चार आर्य सत्यों में प्रवेश कर लिया है, इसलिए अब कुछ भी ऐसा नहीं है जिसमें विधिवत प्रवेश (पटिविज्झितब्बा) किया जाना चाहिए; इस प्रकार, यही अर्थ है। विधिवत प्रवेश किस प्रकार है? उन्होंने कहा: "वालग्गंसुना यथा;" इसका अर्थ इस प्रकार है: — जिस प्रकार एक कुशल और चतुर धनुर्धर (इस्सासा) अपने बाण से सात भागों में विभाजित बाल (वाल) के सिरे (कोटि) को बिना चूके (अविराज्झंता) भेद देता है (विज्झय्या), उसी प्रकार मैंने सूक्ष्म आर्य सत्यों में प्रवेश किया; यही व्याख्या (योजना) है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा अभया का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(27): लोमसाकांगिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (27) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
27. लोमासाकंगिया
जब कस्सपा बुद्ध थे, तब इस भिक्षु ने संसार त्याग दिया और उनका अनुसरण किया। अब जब भगवान (बुद्ध) ने सुखी-अकेले सूत्र का उपदेश दिया, तो एक भिक्षु ने लोमसकंगिया से इस विषय पर चर्चा की। हमारे थेरा, इसे समझाने में असमर्थ होकर, यह इच्छा व्यक्त की: 'काश मैं भविष्य में आपको सुखी-अकेले का उपदेश दे सकूँ!' दूसरे ने उत्तर दिया: 'क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ!' इन दोनों में से पहले, जब हमारे बुद्ध जीवित थे, कपिलवस्तु में एक शाक्य राजा के घर में पुनर्जन्म हुआ। वे बहुत कोमल और घने बालों से ढके हुए थे, इसलिए उन्हें लोमसकंगिया कहा गया। [1] दूसरे का उसी समय देवताओं के बीच पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम चंदन रखा गया। [2]

जब अनुराद्ध और अन्य शाक्य युवकों ने संसार त्यागकर संन्यास ग्रहण किया, तो लोमसकंगिया ने ऐसा नहीं किया। तब चंदन ने उन्हें प्रेरित करने के लिए उनके पास आकर सुखी-अकेले के विषय में पूछा। लोमसकंगिया को समझ नहीं आया कि उनका क्या तात्पर्य है। तब चंदन ने उन्हें याद दिलाया। तब लोमसकंगिया भगवान बुद्ध के पास गए और उनसे पूछा कि क्या यह सच है कि उन्होंने अतीत में ऐसा संकल्प लिया था। 'जी, हे युवक,' भगवान बुद्ध ने उत्तर दिया; 'और इसका अर्थ पचास से अधिक बिंदुओं में विस्तार से समझा जा सकता है।' तब लोमसकंगिया ने कहा: 'अतः, हे प्रभु, मुझे संन्यास दीक्षा दें।' और भगवान बुद्ध ने उन्हें अपने माता-पिता से अनुमति लेने के लिए भेजा। उन्होंने अपनी माता से पूछा, लेकिन माता ने उनके स्वास्थ्य को लेकर चिंता व्यक्त करते हुए कहा: 'मेरे प्रिय, तुम नाजुक हो। तुम संसार कैसे त्यागकर संन्यास ग्रहण कर सकते हो?' तब लोमसकंगिया ने यह श्लोक कहा:

[27] डब्बाṃ कुसाṃ पोआकिलाṃ उसिराṃ मुन्जाबब्बाजाṃ॥
उरसा पनुदिस्सामि विवेकमनुब्रूहयन् ति.॥॥

[32] [27] डब्बा और कुसा घास और चुभने वाले तने
और झाड़ियों और अंडरवुड में जो कुछ भी चुभता है,
मैं उसे अपने सीने से धकेल कर दूर कर दूँगा, और वहाँ जाऊँगा जहाँ मैं हृदय के वैराग्य, अकेले और पृथक
विकास को पोषित कर सकूँ । [3]

इस पर उनकी माता ने कहा, 'अच्छा, मेरे प्रिय, जाओ।' और उन्होंने भगवान (बुद्ध) से भिक्षु दीक्षा लेने की अनुमति प्राप्त कर ली। प्रारंभिक अभ्यास करने के बाद वे वन में प्रवेश करने चले गए। वहाँ भिक्षुओं ने उनसे कहा, 'मित्र, तुम नाजुक हो। यहाँ क्या करोगे? वन

में ठंड है।' परन्तु उन्होंने अपना श्लोक दोहराया और वन में प्रवेश करके ध्यान में लीन हो गए, और शीघ्र ही उन्होंने छह प्रकार के अलौकिक चिंतन को प्राप्त कर लिया। [4] जब उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया, तो उन्होंने उसी श्लोक में अन्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[1] यानी, नीचे वाले अंग। उच्चारण लोमसा कांगिया।

[2] उच्चारण चंदना.

[3] तुलना करें XXIII, और भजन CLXXIV देखें। टीका हमें कथा का पूर्व भाग देती है, जिसका उत्तरार्ध मज्झ (iii. 199) के लोमसा-कांगिया-सूत्र में वर्णित है। यहाँ चंदन को थेरा को संबंधित सूत्र का उपदेश देते हुए दर्शाया गया है। इस निकाय के कम से कम चार सूत्र 'भद्देकरत्ता' या 'सुखद-अकेला' नामक लघु कविता से संबंधित हैं, जिनमें बुद्ध, आनंद, कच्चन महान और चंदन द्वारा क्रमशः व्याख्याएँ दी गई हैं।

[4]

इन शक्तियों को इद्धि, दिव्य कान,
दूसरों के विचारों को समझने की शक्ति;
पूर्व जन्मों की स्मृति, और पांचवीं, दिव्य नेत्र नाम दिया गया है।

दर्शनशास्त्र का संकलन, पृष्ठ 209।

छठा, आसवों का उन्मूलन, अरहंतत्व (ज्ञानोदय) के समतुल्य है। ये छह 'अभिज्ञा' शब्द में समाहित हैं और निम्नलिखित गाथाओं में इनका अनुवाद 'अभिज्ञा' के रूप में नहीं किया गया है।

1.3-7[27] श्लोक पर टिप्पणी

लोमासकंगिया थेरा
दब्बंकुसं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा लोमसकंगिया का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि आज से 91 युग (कप्पा) पहले उन्होंने भगवान विपस्सी के दर्शन किए, पुण्य भाव से उन्हें अनेक प्रकार के पुष्प अर्पित किए, और इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप दिव्य लोक में पुनर्जन्म लिया। बाद में उन्होंने समय-समय पर अनेक पुण्य कर्म किए, उत्तम जन्मों (सुगति) में विचरण किया, भगवान कस्सपा के मार्गदर्शन में भिक्षु बने और भिक्षुओं के कर्तव्यों (धम्म) का पालन किया। उसी अवसर पर एक भिक्षु ने उनसे भद्देकरत्त (साधारण रात्रि) के उपदेश (सुत्त) के माध्यम से चर्चा की, जो गुरु द्वारा भद्देकरत्त (साधारण रात्रि) के उचित अभ्यास (पटीपदा) के लिए सिखाया गया था। वह इसका स्पष्टीकरण नहीं दे सका। स्पष्टीकरण न दे पाने पर उसने यह संकल्प लिया: "काश भविष्य में मैं किसी सुखद रात्रि में आपसे संवाद कर सकूँ।" दूसरे ने कहा: "काश मैं भी आपसे प्रश्न पूछ सकूँ।" इन दोनों में से, पहला (अर्थात पहले वाला) बुद्ध काल के दौरान देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेता रहा और भगवान बुद्ध के समय कपिलवस्तु में शाक्यन परिवार में पुनर्जन्म लिया। इस अवस्था के कारण उसके पैरों के तलवों पर सोन के समान कोमल बाल उग आए। इसी कारण उसका नाम लोमसकंगिया पड़ा। दूसरा (अर्थात बाद वाला) स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लेकर चंदन के नाम से जाना गया। जब अनुरुद्ध आदि शाक्यन राजकुमार भिक्षु बन गए, तो लोमसकंगिया भिक्षु बनने के इच्छुक नहीं थे। तब, उन्हें पश्चाताप कराने के लिए, युवा देवता चंदन उनके पास गए और उनसे एक सुखद रात्रि (भद्देकरत्ती) के बारे में पूछा। चंदन ने कहा: "मुझे नहीं पता।" बाद में (पुन), युवा देवता ने उनसे आग्रह किया: "तो फिर आपने ऐसा समझौता क्यों किया: 'क्या मैं एक सुखद रात्रि (भद्देकरत्ती) के बारे में बात कर सकता हूँ?' अब, आप तो नाम तक नहीं जानते।" चंदन उनके साथ भगवान के पास गए और इस प्रकार पूछा: "आदरणीय महोदय! ऐसा कहा जाता है कि मैंने पहले इस प्रकार एक समझौता किया था: 'मैं इस व्यक्ति से एक सुखद रात्रि (भद्देकरत्ती) के बारे में बात करूँगा'।" भगवान ने उत्तर दिया: "हे अच्छे कुल के पुत्र! हाँ, इस प्रकार का समझौता आपने ही प्रतापी कस्सपा के समय में किया था।" इस अर्थ को उपरिपण्णास (मज्झिमानिकाय के तीसरे पचास सूत्र) में वर्णित तरीके से विस्तार से समझा जाना चाहिए। तब लोमसकंगिया ने कहा, "तो फिर, हे पूज्यवर! कृपया मुझे भिक्षु बना दीजिए।" भगवान बुद्ध ने यह कहते हुए उन्हें अस्वीकार कर दिया, "तथागत ऐसे पुत्र को भिक्षु नहीं बनाते जिसे उसके माता-पिता ने अनुमति न दी हो।" वह अपनी माता के पास गए और उनसे कहा, "हे माता! कृपया मुझे भिक्षु बनने की अनुमति दीजिए; मैं भिक्षु बनूँगा।" उनकी माता ने उनसे कहा, "मेरे प्यारे पुत्र!तुम तो नाजुक हो; तुम भिक्षु कैसे बनोगे?" उन्होंने "दब्बं

कुसं पोटकिलं" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, ताकि वे स्वयं किसी भी कष्ट को सहन करने की अपनी क्षमता को प्रकट कर सकें।

वहाँ 'डब्बा' का अर्थ है: — उन्होंने कहा डब्बा घास; इसे तेंदुआ (सद्दुलो) भी कहा जाता है। कुसं का अर्थ है कुसा घास; इसे कासो (कासा सरकंडा) कहा जाता है। पोटकिलं का अर्थ है काँटेदार या काँटे रहित यात्रा (गच्छं); हालाँकि, यहाँ केवल काँटेदार यात्रा का ही अर्थ है। सुगंधित उसीरा जड़ आदि को भली-भांति समझ लेना चाहिए। डब्बा आदि घास, बीराणा जैसी घासें दुख (दुक्खा) को बढ़ाती हैं और उन पर पैर रखने वालों के लिए खतरनाक यात्रा का कारण बनती हैं; मैं उन्हें भी अपने हृदय (उरा) से उरासा पानुदिस्सामि द्वारा हटा दूँगा। इस प्रकार उस विशिष्ट (निमित्त) दुख (दुक्खा) को सहन करते हुए, मैं वन क्षेत्र में झाड़ियों के भीतर प्रवेश करूँगा और भिक्षु के कर्तव्यों का पालन कर सकूँगा। वह इस प्रकार बताते हैं: 'मेरे पैरों से कुचले जाने की बात कौन करेगा?' विवेकमनुबृहयं का अर्थ है शारीरिक एकांतवास, मानसिक एकांतवास और बुनियादी (उपाधि) एकांतवास में लिप्त होना; वास्तव में, भीड़-भाड़ वाले समाज का त्याग करने के बाद, केवल शारीरिक एकांतवास ही रह जाता है; जो व्यक्ति ध्यान के लिए अपने मन को अड़तीस प्रकार के इंद्रिय-विषयों (आरम्मण) में से किसी एक में उचित रूप से लगाता है, उसे मन का एकांतवास प्राप्त होता है; समाज में आनंद लेने वाले को नहीं। जो व्यक्ति शांत और संयमित है, जो स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कार्य करता है, सभी प्रकार की बुराइयों को त्यागकर, दो प्रकार के मानसिक अभ्यासों, शमन (समाथ) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास को एक साथ जोड़ता है, उसे बुनियादी एकांतवास (उपाधिविवेक) प्राप्त होता है; लेकिन जो शांत और संयमित नहीं है, उसे नहीं। इसलिए, यह इस प्रकार कहा गया है: — "विवेकबृहयं, तदनुसार शारीरिक एकांतवास, मानसिक एकांतवास और बुनियादी एकांतवास में लिप्त रहना।" जब पुत्र ने माता को इस प्रकार बताया, तो उन्होंने इस प्रकार अपनी स्वीकृति दी: "तो फिर, प्रिय पुत्र! तुम्हें भिक्षु बन जाना चाहिए।" वह भगवान बुद्ध के पास गए और भिक्षुत्व की प्रार्थना की। गुरु ने उन्हें भिक्षु बना दिया। जो भिक्षु बन गए थे और अपने प्रारंभिक कर्तव्यों (पुब्बकिच्चा) को पूरा करने और मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) करने के बाद वन में प्रवेश कर रहे थे, उनसे भिक्षुओं ने कहा: "मित्र! तुम नाजुक हो; तुम्हारे लिए वन में रहना कैसे संभव होगा?" उन्होंने उनसे भी वही श्लोक कहा, वन में प्रवेश किया, स्वयं को मानसिक विकास (भावना) में समर्पित किया और शीघ्र ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बन गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है:

मैंने श्रद्धापूर्वक अलग-अलग प्रस्ताव रखे।

स्वयं उगने वाले फूलों की किस्में

सुनहरे रंग वाले जागृत बुद्ध,

पवित्र बलिदान स्वीकार करने योग्य

रथ मार्ग में प्रवेश करने की पेशकश।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाई

विशेष रूप से फूल; मैं इससे असहमत नहीं हूँ-

किसी भी बुरी घटना को स्पष्ट रूप से याद रखना;

यह श्रद्धा का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली विशेष भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करते हुए उसी श्लोक का पाठ किया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा लोमस्सकंगिया के

तैयार है।

**
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(28): जंबुगामिका का पुत्र

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (28) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
28. जंबुगामिका का पुत्र
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म चंपा में जंबुगामिका नामक एक गृहस्थ अनुयायी के पुत्र के रूप में हुआ, [1] और उनका नाम [33] उनके पिता के नाम पर रखा गया। भिक्षु संघ में एक नौसिखिया के रूप में अध्ययन करते हुए, वे अंजना वन में साकेता में रहते थे। [2] तब उनके पिता ने यह सोचकर कि 'मुझे आश्चर्य है कि मेरा पुत्र भिक्षु संघ में अपने जीवन के प्रति समर्पित रहता है या नहीं?' उनकी परीक्षा लेने के लिए निम्नलिखित श्लोक लिखा और उन्हें भेजा:

[28] कच्चि नो वत्थपसुतो कच्चि नो भूषणारतो॥
कच्चि सिलामयं गंधं किं त्वं वयसि नेतर पजा' ति.॥॥

[28] तो क्या तुम वस्त्रों से प्रसन्न नहीं होते?
और क्या तुम फैशन से मोहित नहीं होते?
और क्या यह सुगंधित, सद्गुणों से भरी खुशबू
तुम्हारे द्वारा फैलाई जाती है, न कि अन्य लोगों द्वारा?

जब उन्होंने यह पढ़ा, तो उनके मन में विचार आया: 'मेरे पिता को संदेह है कि मैं सांसारिक भोग-विलास में लिप्त हूँ। आज तक तो मैं सामान्य मनुष्य के स्तर से ऊपर नहीं उठ पाया हूँ!' चिंता से व्याकुल होकर उन्होंने परिश्रम और संघर्ष किया, जिससे शीघ्र ही उन्होंने छह अभिन्न प्राप्त कर लिए। अपने पिता द्वारा भेजे गए श्लोक को प्रेरणा मानकर उन्होंने अंततः अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। और अपनी अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार करने और अपने पिता का सम्मान करने के लिए उन्होंने उस श्लोक का पाठ किया।

[1] जंबुगामिया की टीका में। नाम एक कार्यालय को संदर्भित करता है, और इसका अर्थ है कोसे-सेब-वृक्षों के गाँव का संघ, एक स्थान जिसे बुद्ध ने अपने अंतिम उपदेश दौरे में शामिल किया था (संवाद, ii. 138), और जो संभवतः गंगा पर चंपा (उच्चारण चंपा) का एक उपनगर था, जो बुद्ध की सेवाओं का सबसे पूर्वी बिंदु था।

[2] देखें सिस्टर्स, पृ. 84, 158; बुड. इंडिया, पृ. 39, 40; न्यूमैन, मज्झ. अनुवाद, iii. 801, n.

1.3-8[28] श्लोक पर टिप्पणी

जंबुगामियापुत्त थेरा

कच्चु नो वत्थापसुतो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा जंबुगामियापुत्त का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म के चक्रों से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए, इकत्तीस युग (कप्पा) पहले, तेजस्वी वेसभु (बुद्ध) के समय में, एक दिन रेशम-कपास के कपोक (किंसुका) फूल प्राप्त किए, उन फूलों को एकत्र किया और श्रद्धापूर्वक आकाश में प्रक्षेपित करते हुए, बुद्ध के गुणों का उचित चिंतन करते हुए उन्हें भगवान बुद्ध को समर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म तावतिंसा स्वर्ग में तैंतीस देवताओं के बीच हुआ। इसके बाद, उन्होंने पुण्य कर्म किए और बार-बार जन्म लेते हुए देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते हुए चंपा में जंबुपामुया नामक एक भक्त के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, जब बुद्ध प्रकट हुए। इसलिए उनका नाम जंबुगामियापुत्त पड़ा। वयस्क होने पर उन्होंने भगवान बुद्ध की उपस्थिति में धर्म का अध्ययन किया, पश्चाताप किया, भिक्षु बन गए, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों (पुब्बकिच्चा) को पूरा किया, मानसिक साधना (कम्मट्ठाना) की और साकेत के घने वन (अंजना) में निवास किया। तब उनके पिता ने यह जानने के लिए (विमंसना) कहा: "क्या मेरा पुत्र बुद्ध के उपदेशों (शासन) में विशेष रूप से प्रसन्न होकर जीवन व्यतीत कर रहा है या नहीं," और "कच्चि नो वत्थ-पसुतो" से शुरू होने वाला एक श्लोक लिखकर भेजा। उस श्लोक को पढ़कर (वाचेति) उन्हें पश्चाताप हुआ और उन्होंने कहा: "मेरे पिता मेरे लापरवाह जीवन को लेकर चिंतित (आसंकति) हैं; मैं आज भी साधारण भिक्षु (पुथुज्जनभूमि) के दायरे से आगे नहीं बढ़ पाया हूँ," और एकाग्र होकर (घटेंतो) और प्रयास करके (वायामेंटो) वे कुछ ही समय में अरहंत बन गए। अतः अपदान में कहा गया है:—

रेशम-कपास (किंसुका) को देखकर

पेड़ खिल रहा था, मैंने अपनी मुट्ठी ऊपर उठाई

हाथों ने सबसे उत्कृष्ट को याद किया

बुद्ध और विशेष रूप से श्रद्धापूर्वक बनाया गया

आकाश में भेंट।

उस अच्छे कार्य के कारण

इच्छाशक्ति (चेतना) और स्वयं के साथ-

दृढ़ संकल्प (पणिधि), मैं पहुँच गया

तावतिंस ने मेरा त्याग कर दिया था

मानव शरीर।

आज से इकत्तीस युग पहले, यह था

मैंने तब वह काम किया था। मैं नहीं करता।

किसी भी बुरी घटना को स्पष्ट रूप से याद रखना;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया है।

बाहर।

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे अपने रिश्तेदारों के निवास नगर गए और अपनी जादुई शक्तियों से चमत्कार प्रदर्शित किया ताकि संसार (शासन) के निय्यानिक मार्ग से मुक्ति की अवस्था को प्रकट कर सकें। उस चमत्कार को देखकर उनके रिश्तेदार धर्मपरायण हो गए और पुरोहितों (संघ) के लिए अनेक मठ बनवाए। थेरा ने अपने पिता द्वारा भेजे गए श्लोक को क्रियान्वित करते हुए (घटेंतो) और प्रयास करते हुए (वायमंतो) अरहंत पद का दर्शन किया। अरहंत पद की प्राप्ति को प्रकट करते हुए (अञ्ञा), उन्होंने अपने पिता को आदर देने के उद्देश्य से "कच्चिनो वत्थापसुतो" से शुरू होने वाले उसी श्लोक का पाठ किया।

28. यहाँ, कच्चि प्रश्नवाचक शब्द (निपात) है। न नकारात्मक शब्द है। वत्थपसुतो का अर्थ है वस्त्रों के प्रति प्रेम, वस्त्रों का लालच; विशेष रूप से वस्त्रों के अलंकरण में प्रसन्न होना; हालाँकि, यह केवल एक उदाहरण है, क्योंकि यह भिक्षापात्र के अलंकरण आदि जैसी चंचलता (चापल्ल) और निषेध (पटिक्खेप) को भी दर्शाता है। इसका एक भिन्न पाठ (पाठ) है "कच्चि न वत्थपसुतो; यही इसका अर्थ है। भूसनारतो का अर्थ है अपने शरीर को अलंकृत करने में प्रसन्न और विशेष रूप से आनंदित होना; कुछ लोगों के समान, जो भिक्षु बनने के बावजूद शारीरिक रूप से चंचल और फुर्तीले (दल्ही बहुला) होते हैं, वे न केवल वस्त्र आदि जैसे धार्मिक आवश्यक वस्तुओं को सजाने-संवारने में लगे रहते हैं, बल्कि अपने शरीर को भी संवारते हैं। "यह संन्यासी की आवश्यकताओं की पूर्ति और श्रृंगार में आनंद लेने के अलावा और क्या हो सकता है?" श्लोक के दो चरणों (पदद्वय) का यही अर्थ है, सीलमयं गंधं का अर्थ है नैतिक उपदेशों से उत्पन्न मधुर सुगंध; इसे इस प्रकार कहा गया है: — "उत्तम नैतिक उपदेशों से युक्त लोगों की यह मधुर सुगंध देवताओं के बीच अपनी मीठी हवा बहाती है," सर्वांगीण शुद्ध चार प्रकार के नैतिक उपदेशों के माध्यम से अखंडता आदि की स्थिति उत्पन्न करके; त्वं वायसि का अर्थ है वह हवा जो आप बहाते हैं; नैतिक उपदेशों में अत्यंत समृद्ध होकर (सीलसम्पति), अच्छी प्रतिष्ठा की ध्वनि से आप चारों दिशाओं में क्या फैलाते हैं? यही अर्थ है। नेतरा पजा का अर्थ है बुरे आचरण वाले अन्य लोग नहीं; बल्कि बुरे नैतिक उपदेशों के कारण बुरी गंध हवा में फैलती है; क्या आप किसी बुरी गंध की हवा को इस प्रकार फैलाए बिना नैतिक उपदेशों की मीठी सुगंध फैलाते हैं? यही अर्थ है। दूसरे शब्दों में, नेतरा पजा का अर्थ है बुरे नैतिक उपदेशों वाले अन्य लोग नहीं; नैतिक उपदेशों की मीठी सुगंध फैलाने से ऐसा किसी भी प्रकार से नहीं होता (कच्ची)। इस प्रकार, अधिकता से यह केवल नैतिक उपदेशों की मीठी सुगंध को ही प्रकट करता है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा जंबुगामिय का

पुट्टा पूर्ण है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(29): हरिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (29) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
29. हारिता
बुद्ध युग में सावत्थी में एक धनी ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, [1] उनके माता-पिता ने उनका विवाह एक ब्राह्मण की पुत्री से किया जो जन्म, सौंदर्य और हर तरह से उपयुक्त थी। और वह उसके साथ अपने भाग्य का आनंद लेते हुए, एक दिन, जब वह उसकी सुंदरता की पूर्णता का चिंतन कर रहे थे, तो उन्हें सृष्टि के नियम से यह बात समझ में आई, [2] कि ऐसी सुंदरता शीघ्र ही क्षय और मृत्यु से नष्ट हो जाएगी। नहीं, कुछ ही दिन बीते थे कि उनकी पत्नी को एक काले साँप ने काट लिया और उनकी मृत्यु हो गई। व्यथा से व्याकुल होकर उन्होंने भगवान (बुद्ध) की शरण ली और धम्म का मार्ग सुनकर अपने गृहस्थी बंधन तोड़ दिए और संसार त्याग कर संन्यास ग्रहण कर लिया। अब जब वह स्वयं को नैतिक रूप से प्रशिक्षित कर रहे थे, तब भी वे अपने हृदय को शुद्ध नहीं कर सके। [3] और गाँव में भिक्षा माँगते हुए, [4] उन्होंने एक धनुष निर्माता को अपने औजारों का प्रयोग करते हुए और बाण के शाफ्ट को सीधा करते हुए देखा। तब उन्होंने सोचा: 'ये लोग तो एक निराकार वस्तु को भी सीधा कर देते हैं; मैं अपने हृदय को क्यों न सीधा करूँ?' इसलिए वह

वापस मुड़ा और दोपहर की नींद के लिए बैठ गया, और उसने अंतर्दृष्टि का अनुभव किया। और देखो! उसके ऊपर आकाश में विराजमान परम पूज्य (बुद्ध) ने उसे इस श्लोक से संबोधित किया:

[29] समुन्नमयमत्तनं उसुकारोऽव तेजानां॥
चित्तं उजुं करित्वाना अविज्जां भिंदा हरिता' ती॥ ॥

[29] अब अपने आप को ऊपर की ओर झुकाओ; जैसे
धनुष बनाने वाला अपना वज्र बनाता है, वैसे ही तुम भी, हे हरित, अपने हृदय को सीधा करो और अज्ञान को दूर करो।

उनकी बात सुनकर थेरा को अंतर्दृष्टि प्राप्त हुई और वे शीघ्र ही अरहंत (प्रबुद्ध) हो गए। इसके बाद उन्होंने इसी श्लोक से ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[1] तुलना करें CLXXXIV. हरित, ब्रह्मा (प्रधान देवदूत)-स्वर्ग के देवताओं में से एक (संवाद, ii 292), जातक में एक भटके हुए भिक्षु का नाम था , जिसके कारण बुद्ध ने बोधिसत्व के रूप में अपनी स्वयं की त्रुटि की जन्म-कथा सुनाई (जातक, iii. 295)।

[2] शाब्दिक रूप से, धम्मता, देखें पृष्ठ 89, और मेरा बौद्ध धर्म, पृष्ठ 119, 241.

[3] Cittaŋ को हृदय या मन से अनुवादित किया जा सकता है, जिसे हमारे नए नियम में समानार्थी समझा जाता है।

[4] गामो, चाहे वह सावत्थी हो, जिसे कहीं और नागरो कहा जाता है, 'नगर', या उपनगर, या अन्य स्थान, यह नहीं बताया गया है। तुलना करें भजन संहिता XIX.

1.3-9[29] के श्लोक पर टिप्पणी

हरिता थेरा
समुन्नमयमत्तनं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा हारित का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए पर्याप्त पुण्य कर्म संचित किए, और इकत्तीस युग (कप्पा) पहले सुदस्सन नामक एक मौन बुद्ध को देखा। वे धर्मपरायण हो गए, उन्होंने कुटज (औषधीय) पुष्पों का आदरपूर्वक अर्पण किया और उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप उत्तम जन्मों (सुगति) में बार-बार जन्म लिया और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब उनका जन्म सावत्थी नगर के एक समृद्ध ब्राह्मण परिवार में हुआ। उनका नाम हारित था। जब वे वयस्क हो गए, तो उनके माता-पिता ने उनके लिए एक ब्राह्मण परिवार की युवती को जन्म दिया, जो परिवार, रूप, सौंदर्य आदि गुणों से परिपूर्ण थी। वह अपनी पत्नी के साथ धन के सुख का आनंद ले रहा था, तभी एक दिन उसने अपनी और उसकी पत्नी की समृद्धि (संपत्ति) को सुंदर और परिपूर्ण रूप में देखा और अपने स्वभाव (धम्मता) के अनुसार स्वाभाविक पश्चाताप से भर गया: "इतना सुंदर रूप शीघ्र ही वृद्धावस्था और मृत्यु के अधीन हो जाएगा।" परन्तु कुछ ही दिनों में एक काले साँप ने उसकी पत्नी को काट लिया और उसकी मृत्यु हो गई। इस कारण वह और भी अधिक पश्चाताप से भर गया, गुरु के पास गया, धर्म का पाठ किया, गृहस्थी के बंधनों को तोड़कर भिक्षु बन गया। परन्तु जब उसने अपने आचरण के अनुरूप मानसिक साधना (कम्मट्ठान) का अभ्यास किया, तो उसकी साधना सफल नहीं हुई; उसका मन एकाग्र नहीं हुआ। वह भिक्षा मांगने के लिए गांव में दाखिल हुआ, वहां उसने एक तीर बनाने वाले को यंत्र में तीर की छड़ी डालकर उसे सीधा करते देखा। उसने सोचा, "ये तीर बनाने वाले तो निर्जीव वस्तुओं को भी सीधा कर देते हैं; तो मैं अपना मन सीधा क्यों न करूँ?" वह तुरंत वहां से चला गया, लेकिन फिर अपने दैनिक जीवन में लौट आया और विपश्यना विकसित करने लगा। तब भगवान बुद्ध उसके ऊपर आकाश में बैठ गए और "समुन्नमयमत्तानं" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोलकर उसे उपदेश दिया। यह भी कहा जाता है कि स्वयं भगवान बुद्ध ने स्वयं को उपदेश देते हुए कहा, मानो वे किसी दूसरे व्यक्ति को उपदेश दे रहे हों।

29. वहाँ, समुन्नमयं का अर्थ है अच्छी तरह ऊपर की ओर झुकना: उचित ध्यान (समापत्ति) की प्राप्ति के प्रभाव से आलस्य के पंख की ओर गिरने न देना, वहाँ से ऊपर उठना (उद्धरन्तो), स्वयं को समान परिश्रम (वीर्यसमतं) में लगाना; यही अर्थ है। अत्तानं का अर्थ है मन; दूसरे शब्दों में, समुन्नमयं का अर्थ है आलस्य के आधे भाग से स्वयं को ऊपर की ओर झुकाना। 'म' अक्षर शब्दों के संयोजन (संधि) का सूत्र है; यदि कम परिश्रम के कारण आपका मन मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) के मार्ग पर उचित रूप से प्रवेश नहीं कर पाया, तो बेहतर है कि आप उसे सही ढंग से प्रयास (वीर्यरम्भ) द्वारा ऊपर की ओर झुकाएँ; नीचे की ओर झुकना या नीचे की ओर झुकना न करें; यही अर्थ है। इस प्रकार करने से, हालांकि, उसुकारो व ते जनं; चित्तं उजं करित्वाना, अविज्जं भिंदा हरिता।" इस अभिव्यक्ति का अर्थ इस

प्रकार है: — जैसे एक तीर बनाने वाला अपने तीर को, जो थोड़ा सा भी टेढ़ा या मुड़ा हुआ हो, सीधा कर देता है ताकि तीर चलाते समय वह लक्ष्य (लक्खं) पर सही से लगे (भिंडन) — उसी प्रकार अपने मन को, जो आलस्य में गिरने के कारण टेढ़ा हो गया है और ध्यान न देने के कारण विचलित हो गया है, सीधा करके एकाग्रता (अप्पना) प्राप्त करने के लिए, आपको मन को शांत (समाहित) करके, स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में तत्पर (उसुक्कापेति) लगन से लीन होकर, सर्वोत्कृष्ट सही मार्ग (मग्ग) के ज्ञान से अज्ञान (अविज्जा) को शीघ्र ही कुचल कर नष्ट कर देना चाहिए। यह उपदेश सुनकर, थेरा को स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) प्राप्त हुई और वे शीघ्र ही अरहंत बन गए। अतः यह कहा गया है। अपदान में:—

हिमावंता (हिमालय) से कुछ ही दूरी पर, एक स्थान था।

वासला नाम की एक पहाड़ी। बुद्ध ने नाम दिया

सुदस्सन पहाड़ी के भीतर निवास करता था।

हिमावंता के फूल एकत्रित करने के बाद

मैं आकाश से होकर गुजरा जहाँ से मैं आया था

आत्मजागृत बुद्ध के पार मुक्त

उन घावों (आसव) से जो पार कर गए थे

संसार की बाढ़ के ऊपर।

मैं अपने साथ औषधीय कुटजा ले जा रहा हूँ

वे फूल जिन्हें मैं तब अपने सिर पर लेकर चलती थी,

मैंने इन्हें बुद्ध दिवस पर विशेष रूप से भेंट करवाया था।

स्वयंभू महान ऋषि।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने विशेष रूप से श्रद्धा व्यक्त की है-

फूलों की भेंट, मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति (दुग्गती) को याद रखें;

यह श्रद्धा का फलदायी परिणाम है।

पारंपरिक पुष्प अर्पण।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए उसी श्लोक का पाठ किया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा हारिता का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(30):उत्तिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (30) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
30. उत्तिया
उनका जन्म बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में हुआ था, और अमृत की खोज में संसार छोड़कर वे एक घुमंतू बन गए। [1] एक दिन अपनी यात्रा के दौरान [35] वे उस स्थान पर पहुँचे जहाँ भगवान बुद्ध उपदेश दे रहे थे, और उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया। अपने नैतिक सिद्धांतों की अशुद्धता के कारण वे लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सके। अन्य भिक्षुओं को देखकर, जिन्होंने ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) को स्वीकार करते हुए सफलता प्राप्त की थी, उन्होंने भगवान (बुद्ध) से संक्षेप में एक पाठ का अनुरोध किया। भगवान (बुद्ध) ने उत्तर दिया, 'इसलिए, हे उत्तिया, तुम्हें मूल तत्वों को शुद्ध करना होगा,' [3] और उन्होंने उन्हें संक्षेप में सिखाया। उत्तिया ने पाठ को ग्रहण करते हुए अंतर्दृष्टि प्राप्त की, लेकिन इस प्रक्रिया में वे बीमार पड़ गए। अपनी चिंता में उन्होंने हर संभव प्रयास किया, और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। चूंकि उन्होंने ऐसी परिस्थिति के बावजूद पूर्णता प्राप्त कर ली, इसलिए उन्होंने अपनी बीमारी के संदर्भ में 'अञ्ञा' (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[30] आबधे मे समुप्पन्ने सति मे उपपज्जथा॥
आबादो मे समुप्पन्नो कालो मे नप्पमज्जितुन्ति॥ ॥

[30] चूंकि मुझे बीमारी हो गई है, हे अब
मुझमें सच्ची जागरूकता उत्पन्न हो।
मुझे बीमारी हो गई है - अब समय आ गया है
कि मैं और आराम न करूं या देरी न करूं। [4]

[1] अमाता, जो अमर है, यह शब्द निर्वाण या उसके मार्ग पर लागू होता है; अधिक सामान्यतः, परम कल्याण के लिए।

[2] परिब्बाजक - यानी, अनासक्त धर्मी। यह बहुत संभव है कि अंगी., श्लोक 193 का उत्तिया परिब्बाजक और सांयी., श्लोक 166 का उत्तिया भिक्षु (भिक्षु), जो संक्षेप में पाठ मांगता है, इस उत्तिया के समान ही हैं।

[3] त्वं आदिम एव विशोधेहिति।

[4] पाई भाषा में 'me' शब्द का अद्वितीय पुनरावर्तन, दो बार स्थानवाचक और दो बार कर्मवाचक रूप में (दोनों भाषाओं में यह शब्द समान है), किसी सुंदर काव्य का निर्माण नहीं करता; परन्तु, निष्ठापूर्वक अनुवाद करना आवश्यक था। यह संभव है कि इसमें बुखार से पीड़ित और बीमार, परन्तु अडिग, अदम्य मस्तिष्क की पीड़ादायक परिश्रम का संकेत निहित हो। इस दृष्टि से यह काव्य एक जीवंत दस्तावेज बन जाता है।

1.3-10[30] श्लोक पर टिप्पणी

उत्तिया थेरा

आबाधे मे समुप्पन्ने से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उत्तिया का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि पूर्व बुद्धों की भक्तिपूर्वक सेवा करके, पुण्य संचय करते हुए, जिससे उन्हें इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों से मुक्ति मिली, वे आज से 91 युग पहले भगवान सिद्धार्थ के समय चंदभागा नदी में एक विशाल मगरमच्छ के रूप में पुनर्जन्म लिए। जब उन्होंने भगवान को नदी के किनारे आते देखा, तो वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें नदी पार ले जाने की इच्छा से नदी के किनारे लेट गए। भगवान ने उन पर दया करके अपने पैर उनकी पीठ पर रख दिए। वे प्रसन्न और उत्साहित हो गए, उनकी ऊर्जा दोगुनी हो गई और परिणामस्वरूप उन्होंने नदी के मार्ग (सोटा) को तेजी से पार किया और भगवान को दूसरे किनारे पर ले गए। भगवान बुद्ध ने अपनी मानसिक प्रसन्नता का अवलोकन किया और यह भविष्यवाणी करने के बाद प्रस्थान किया: "यह प्राणी जब इस दुनिया से विदा हो जाएगा, तब से यह श्रेष्ठ प्राणियों (सुगति) के बीच अपने बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करेगा और चौरानवे युगों (कप्पा) बाद अमर (अमता) निर्वाण प्राप्त करेगा।"

इस प्रकार उत्तम जन्मों में विचरण करते हुए, उनका पुनर्जन्म श्रावस्ती में उत्तिया नामक एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में हुआ, जब बुद्ध का जन्म हुआ। वयस्क होने पर वे परिब्बाजक (घूमने वाले तपस्वी) बन गए, और मन ही मन कहते रहे, "मैं अमर मार्ग (अमता) की खोज करूंगा।" एक दिन वे भगवान बुद्ध के पास पहुँचे, धर्म का प्रवचन सुना, और यद्यपि वे शासन (सासन) में भिक्षु बन गए, फिर भी नैतिक उपदेशों आदि गुणों के शुद्धिकरण के कारण वे विशिष्टता (विशेष) प्राप्त नहीं कर सके। परन्तु अन्य भिक्षुओं को विशिष्टता (विशेष) प्राप्त करने के बाद अपने अर्हतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करते देखकर, वे गुरु के पास गए और उनसे संक्षेप में उपदेश मांगा। गुरु ने भी उन्हें संक्षेप में उपदेश देते हुए कहा, "हे उत्तिया! अतः, यहाँ से ही तुम्हारा आरंभ शुद्ध होकर होना चाहिए।" उन्होंने ईश्वर की सलाह का पालन किया और विपश्यना का अभ्यास शुरू किया। जब उन्होंने विपश्यना का अभ्यास शुरू किया, तो उन्हें रोग हो गया। लेकिन रोग होने पर उनके मन में पश्चाताप जागा, जिसे उन्होंने अपने परिश्रम का आधार बनाया, और विपश्यना का अभ्यास किया, जिसमें वे लीन हो गए और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:

"मैं उस समय नदी पर एक मगरमच्छ था।"

चंदभात का किनारा; मेरी खोज में

मैं अपने चरागाह में गया, और घाट पर पहुँच गया।

नदी का स्थान।

उस समय, सिद्धार्थ, वह आत्म-

प्रमुख व्यक्ति निकट आया

नदी के किनारे उतरने की जगह इच्छुक होने के कारण

नदी पार करने का।

जब आत्मजागृत बुद्ध पास आए

मैं भी वहाँ पास गया; पास पहुँचने पर

आत्मजागृत बुद्ध, मैंने ये बातें कही थीं

शब्द।

हे महान वीर, कृपया मुझे अपने साथ ले चलो! मैं

मैं तुम्हें पार भेज रहा हूँ; यह मेरा पैतृक कर्तव्य है।

मारो; हे महान, मुझ पर दया करो।

समझदार!

मेरी प्रार्थना (uggajjana) सुनकर

महान ऋषि मुझ पर सवार हुए; आनंदित

मैंने प्रसन्न हृदय से नेता को भेजा

पूरी दुनिया में।

विश्व नेता सिद्धार्थ ने सांत्वना दी

(assāseti) me there on the other bank

उस नदी का जो (यह वाली) होगी

अमर अवस्था (अमता) प्राप्त करें।

उस शरीर से विमुख होकर,

मैं दिव्य लोक में पहुँच गया; मैंने आनंद लिया

दिव्य आनंद से घिरा हुआ (पुरक्खतो)

अप्सराओं द्वारा।

मैं सात बार दिव्य राजा था

स्वर्गीय संप्रभुता का प्रयोग करते हुए; क्योंकि

मैं तीन बार विश्व राजा के रूप में शासन कर चुका हूँ।

पृथ्वी पर।

मैंने एकांतवास का आनंद लिया; परिपक्व होने के कारण

बुद्धि और अच्छे आत्मसंयम में, मैं

मेरे अंतिम शरीर को ले जाओ, डिस्पेन्सा में-

स्वयंजागृत बुद्ध की रचना।

यह चौरानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब जब मैंने बैल को भेज दिया है

सभी पुरुष। मुझे कोई याद नहीं है।

दुष्ट अस्तित्व (दुग्गति); यही है

भेजने का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई है।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालाँकि, अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, उन्होंने आबाधामे समुप्पन्ने से शुरू होने वाले एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें उन्होंने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया, और अपने स्वयं के उचित अभ्यास (पटिपत्ति) की सर्वांगीण पूर्णता (परिपुण) के तरीके को स्पष्ट (विभावनमुध) किया।

30. वहाँ, ābādhe me samuppanne का अर्थ इस प्रकार है:— जब असामान्य द्रव्यों के विक्षोभ (धातुक्खोभ) से उत्पन्न रोग, जिसे शारीरिक रोग होने के कारण ābādha (रोग) का नाम दिया गया, स्वयं मुझमें उत्पन्न हुआ। Sati me udapajjada का अर्थ इस प्रकार है:— "मुझे वास्तव में रोग हुआ है; वास्तव में, यह स्थिति (ठाण) बनी हुई है; यदि यह रोग बिगड़ता है (वाड्ढेय्या); जब तक, यह रोग बिगड़ता रहता है (वाड्ढेय्या); जब तक यह रोग और अधिक गंभीर न हो जाए (वाड्ढति), तब मैं स्वयं से यह कहते हुए प्रयास करना शुरू कर देता हूँ: "जो प्राप्त नहीं हुआ है, उसे प्राप्त करने के लिए, जो प्राप्त नहीं हुआ है, उसे प्राप्त करने के लिए, जो देखा नहीं गया है, उसे देखने के लिए।" इस प्रकार, उस पीड़ादायक अनुभूति से पीड़ित मुझमें चेतना का जन्म हुआ, जो प्रयास का आधार (वत्थु) बन गई थी। इसलिए कहा गया है: "आबाधो मे समुप्पन्नो, कालो मे नप्पमज्जितुं (रोग स्वयं मुझमें उत्पन्न हुआ है; अब समय आ गया है कि मैं लापरवाही न करूँ)।" इस प्रकार, उत्पन्न चेतना को प्रेरणा बनाकर, इस थेरा ने अरहंतत्व प्राप्त किया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा उत्तिया का

तैयार है।

तीसरे अध्याय पर टीका

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(31):गह्वरतिरिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (31) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
भाग IV

31. गह्वरातीरिया
उनका पुनर्जन्म बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ और उनका नाम अग्गिदत्त रखा गया। [1] बड़े होकर [36] उन्होंने भगवान बुद्ध को दो चमत्कार करते देखा, [2] और आश्वस्त होकर उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया। ध्यान के लिए एक विषय चुनकर वे रतीरा वन गए और गह्वा-रतीरिया के नाम से प्रसिद्ध हुए। अंतर्दृष्टि में वृद्धि करते हुए, उन्होंने थोड़े ही समय में अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इसके बाद वे सावत्थी में भगवान बुद्ध की पूजा करने गए। उनके परिवार ने उनके आने की खबर सुनकर उन्हें उदारतापूर्वक उपहार दिए। और जब उन्होंने वन में वापस जाने की इच्छा व्यक्त की, तो उन्होंने कहा: 'महोदय, वन मक्खियों और मच्छरों से भरा हुआ है। यहीं ठहरिए!' लेकिन वैराग्य में लीन थेरा ने उत्तर दिया, 'वन में जीवन मुझे भाता है,' और ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) को स्वीकार करते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:

[31] फुṭṭहो [6] ḍaṃsehi makasehi araññasmiṃ ब्रहावणे॥
नागो संगमसीसेवा सतो तत्राधिवासये' ति.॥ ॥

[31] विशाल जंगल में, विशाल वनों में,
भले ही मैं मक्खी और मच्छर से प्रभावित हो जाऊं,
फिर भी मैं योद्धा-हाथी की तरह घूमूंगा,
युद्ध के बीच में, सचेत, सतर्क। [3]

[1] यानी, अग्नि-प्रदत्त। भले ही रतीरिया का अर्थ रतीरा वनवासी हो (अगला पृष्ठ देखें), यह स्पष्ट नहीं है कि गह्वा की व्याख्या कैसे की जाए। यह नाम और थेरा कहीं और नहीं मिलते। भिक्षु का स्वभाव और उनकी उपमा एक सूत्र में मिलती है जो हाथियों और भिक्षुओं में उत्कृष्टता के लिए सामान्य पाँच गुणों की तुलना करता है (अंग., iii. 161 ff.)।

[2] शरीर के किन्हीं दो विपरीत भागों से क्रमशः और एक साथ अग्नि और जल उत्सर्जित करने की शक्ति, साथ ही स्वयं से भिन्न गतिमान आकृति को प्रकट करने की शक्ति (पटिसंभिदा, i. 125)। बुद्ध ने (उत्तर-प्रामाणिक ग्रंथों में) सावत्थी में ऐसा किया था (मिलिंदा, ii. 247; सुमंगल-विल., i. 57; धाम. कॉमी., iii. 213 ff.)।

[3] पुनरावर्ती CLXXVIII, श्लोक 244।

1.4 चौथा अध्याय

1.4-1[31] श्लोक पर टिप्पणी

गह्वरातीरिया थेरा
'फुट्ठो दम्सेहि' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा गह्वरातीरिया का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करने के बाद, उन्होंने भगवान सिख धर्म के समय, इकत्तीस युग (कप्पा) पहले, हिरण का शिकार करना शुरू किया। जंगल में घूमते हुए, उन्होंने एक वृक्ष के नीचे भगवान सिख धर्म के अनुयायियों, नागों और दैत्यों को धर्म का उपदेश देते हुए देखा। यह देखकर वे श्रद्धा से भर गए और उन्होंने उस वाणी (सार) में संकेत (निमित्त) ग्रहण किया और मन ही मन कहा, "यह धर्म है।" इसी श्रद्धा के कारण वे दिव्य लोक में अवतरित हुए और समय-समय पर अपने पुनर्जन्मों के चक्र में घूमते रहे, परन्तु उत्तम देहों (सुगति) में, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। उन्हें "अग्गिदत्त" नाम प्राप्त हुआ और जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने भगवान बुद्ध के दोहरे चमत्कार देखे। उनके भीतर भक्ति भाव जागृत हुआ, वे शासन के मार्ग पर चलकर भिक्षु बन गए, मानसिक साधना में लीन हो गए और गहवर नदी के तट पर स्थित वन क्षेत्र में रहने लगे। इसी कारण वे गहवरतारिया कहलाए। उन्होंने विपश्यना का ज्ञान प्राप्त किया और कुछ ही समय में अरहंत बन गए। अतः अपदान में कहा गया है:

"पहले मैं हिरण का शिकारी था,

एक वन उपवन (विपिना)। मैंने देखा

स्टेनलेस स्टील से बनी बुद्ध प्रतिमा, चारों ओर से घिरी हुई।

दिव्य प्राणियों की भीड़।

वह चारों को प्रकट कर रहा था-

महान सत्य को प्रकट करना मृत्यु को दर्शाता है-

कम रास्ता। मैंने मधुर संगीत सुना।

सिख धर्म का धम्म, के रिश्तेदार

दुनिया।

मैंने उनके प्रति अपनी रुचि को संतुष्ट किया।

आवाज, अद्वितीय व्यक्तित्व में

अद्वितीय। मैंने अपना मन बना लिया है।

मुझे खुशी हुई और मैंने नदी पार कर ली।

ऐसा अस्तित्व जो कठिन है

पार करना।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब जब मुझे वह धारणा प्राप्त हो गई है-

मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व (दुग्गति); यही है

आवाज को समझने का सार्थक परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने भगवान बुद्ध को प्रणाम किया और सावत्थी चले गए। उनके आगमन की सूचना पाकर उनके रिश्तेदार उनके पास आए और उन्होंने बड़ा दान किया। कुछ दिन वहाँ रहने के बाद, उन्हें वन जाने की तीव्र इच्छा हुई। उनके रिश्तेदारों ने उनसे कहा, “आदरणीय महोदय! वन में मक्खियों, मच्छरों आदि के कारण बहुत खतरे (परिश्य) हैं; कृपया यहीं निवास करें।” रिश्तेदारों की बात सुनकर, थेरा ने “फुट्थोदंसेहि” से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट किया, और एकांत में अपने विशेष आनंद की घोषणा करते हुए कहा, “वन निवास ही मुझे प्रसन्न (रुच्चति) करता है।”

31. यहाँ phuṭṭhoḍaṃsehi makasehi का अर्थ है — ऐसे सुईनुमा मुख वाले जीवों द्वारा स्पर्श और काटा जाना, जैसे कि अंधी मक्खियाँ, जिन्हें “ḍaṃsa (गड-मक्खियाँ)” नाम दिया गया है क्योंकि वे काटने की आदत रखती हैं और स्पष्ट रूप से मच्छर के रूप में जानी जाती हैं; इस प्रकार, इसका अर्थ है। Araññasmiṃ का अर्थ है जंगल में (arañña) क्योंकि यह जंगल की विशेषता (lakkhaṇa) से जुड़ा है, जैसा कि कहा गया है: “pañcadhanusatikaṃ pacchimaṃ (अंत में पाँच सौ धनुष की लंबाई)।” ब्रह्मवाने का अर्थ है स्थायी (नियं)

वनभूमि, विशाल वृक्षों के घने जंगल के कारण बड़ा वन। नागो संगामसीसे व का अर्थ है युद्ध में अपने घर में विशाल हाथी के समान, जो स्वयं युद्ध मोर्चे के अग्रभाग (मुद्धनि) पर शत्रु सेना पर प्रहार करता है। वह ऊर्जावान (उस्साहा) होकर इस प्रकार बोला: "वनवासी, अर्थात्, बुद्ध आदि द्वारा प्रशंसित और सराहे गए हैं;" सतो का अर्थ है सचेतन। तत्र का अर्थ है उस वन में; या वैकल्पिक रूप से, काटने वाली मक्खियों, मच्छरों आदि के हमले के स्थान पर। अधिवासये का अर्थ है वह सहमति से सहन करेगा और कहेगा: "काटने वाली मक्खियाँ आदि मुझे कष्ट दें," मैं वन में अपना निवास नहीं छोड़ूंगा; यही अर्थ है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा गह्वरातीरिया का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(32): सुप्पिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (32) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
32. सुप्पिया
बुद्ध युग में, अपने कर्मों के फलस्वरूप, [1] उनका पुनर्जन्म एक तिरस्कृत वर्ग में हुआ, सावत्थी के एक कब्रिस्तान में पहरेदारों के एक कुल में। अपने मित्र थेरा सोपाका [2] के उपदेश से प्रेरित होकर , उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और सर्वोच्च पद प्राप्त किया, और अरहंत पद के लिए प्रयास करते हुए अपने कथन (गाथा) में इसकी घोषणा की।

[32] अजराण जीरामनेन तप्पमनेना निब्बुतिṃ॥
निम्मिसाṃ परमं शांतिं योगाक्खेमं अनुत्तरं' ति.॥ ॥

[37] [32] हे, काश मैं, जो पल भर बर्बाद करता हूँ, बदल जाऊँ [3] क्योंकि जो कभी नष्ट नहीं होता - जो हमेशा जलता रहता है,
वह उस शांतिपूर्ण आनंद के लिए बदल जाए - उस शांति के लिए
जो सब कुछ पार कर जाती है, अतुलनीय सुरक्षा! [4]

[1] कस्सपा बुद्ध के संघ में भिक्षु (भिक्षु) होने पर अभिमान और घमंड के कारण। स्पष्ट रूप से संवादों का आलोचक नहीं , i. 1.

[2] तुलना करें. XXXIII., CCXXVII.

[3] टीका में निमियाम् लिखा है, और परिवत्तेय्यम् चेतापेय्यम् (देखें विन., iii. 219) द्वारा व्याख्या की गई है, और निष्कर्ष निकाला गया है: 'जैसे मनुष्य, उन वस्तुओं का आदान-प्रदान करते हैं जिनकी उन्हें परवाह नहीं होती, फिर भी जो उन्हें मिलता है उससे बहुत प्रसन्न होते हैं, वैसे ही यह भिक्षु, शरीर या जीवन (जीवितम्) की परवाह न करते हुए, निर्वाण की प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहा जब तक कि उसे वह प्राप्त नहीं हो गया।' 'शांतिपूर्ण आनंद' निब्बुत है, जिस पर और अंतिम खंड पर, सिस्टर्स, पृष्ठ 19, नोट 4, पृष्ठ 13, नोट 2 और पृष्ठ 14, नोट 2 क्रमशः देखें। यह उन कुछ कथनों (गाथाओं) में से एक है जो अभी तक प्राप्त न हुई खोज के भार को धारण करने के मामले में हमारे अपने संकलनों से मिलते-जुलते हैं।

[4] परम, परिपूर्ण (anuttaro).

1.4-2[32] के श्लोक पर टिप्पणी

सुप्पिया थेरा

अजरं जारमानेन से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुप्पिया का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि उनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक पारिवारिक घर में हुआ, उन्होंने संसार त्याग दिया, संन्यासी बन गए और वन क्षेत्र में रहने लगे, जहाँ और जब उन्होंने भगवान को देखा, तो वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें छोटे-बड़े फल अर्पित किए; इसी प्रकार उन्होंने भिक्षु संघ के लोगों को भी फल अर्पित किए। इस पुण्य कर्म के कारण, वे जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और आत्मज्ञानी बुद्ध कस्सपा के समय एक योद्धा-राजकुमार (खत्तीय) के परिवार में पुनर्जन्म लिया। समय आने पर, ज्ञान की आयु प्राप्त करने पर, अच्छे मित्रों के साथ अपने संबंध (सन्निस्सय) के कारण, उन्हें पश्चाताप हुआ, वे भिक्षु बन गए और बहुत ज्ञानी हो गए। जन्म से क्रोधित और ज्ञान के नशे में चूर होकर वह स्वयं को महान समझते हुए और दूसरों को नीचा दिखाते हुए जीवन व्यतीत करता था। उसके इस कृत्य के फलस्वरूप, जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब उसका पुनर्जन्म एक श्मशान परिरक्षक के परिवार में एक घृणित रूप (परिभूतरूप) में हुआ। उसका नाम सुप्पिया था। फिर बुद्धि प्राप्त करने पर, वह अपने सहोदर थेरा सोपाका के पास गया, उनकी उपस्थिति में धर्म का प्रवचन सुना, पश्चाताप किया, भिक्षु बन गया, धार्मिक आचार संहिता का पालन किया और "अजरं जिरामनेन" से शुरू होने वाला श्लोक बोला।

32. वहाँ, अजरं (वृद्धावस्था से मुक्त) - उन्होंने (संध्याय) निर्वाण के संदर्भ में कहा। वास्तव में, अजन्मे (अजत) होने के कारण यहाँ वृद्धावस्था नहीं है; या फिर, जब यह प्राप्त हो जाता है तो उस व्यक्ति के लिए वृद्धावस्था का अस्तित्व नहीं रहता; इस प्रकार, वृद्धावस्था के कारण के दृष्टिकोण से इसे वृद्धावस्था का अभाव कहा जाता है। जीरामनेन का अर्थ है वृद्ध होना; पल-पल वृद्धावस्था की प्राप्ति। तप्पमानेन का अर्थ है अच्छी तरह से जल जाना; कामवासना (राग) आदि ग्यारह प्रकार की अग्नि से जल जाना। निब्बुतिं का अर्थ है निर्वाण जिसका स्वरूप (सभाव) है, जो ऊपर बताए गए अनुसार जलने से बुझ गया है। निमिअं (चलना) शुरू हो जाएगा और लेन-देन (चेतापेय्यं) करेगा। परमं शांतिं का अर्थ है सर्वव्यापी ऊष्मा (परिलाह) को शांत करने की प्रकृति (धम्मता) के कारण प्राप्त परम शांति, जो विशेष कर्मों (अभिसंखार) और पूर्ण (अनवसेसा) भ्रष्टता (किलेसा) से उत्पन्न होती है। योगक्खेमं का अर्थ है चार बंधनों (योग) से मुक्त होने की अवस्था। अनुत्तरम का अर्थ है स्वयं से श्रेष्ठ किसी भी शरीर का अस्तित्व न होना। वास्तव में, यहाँ इसका संक्षिप्त अर्थ यही है: पल-पल वृद्धावस्था से ग्रस्त होकर वृद्ध होना, और इसी प्रकार काम (राग) आदि जैसी अग्नि से जलकर मर जाना। हर तरह से शांत न रहने (उपसन्त) की स्वाभाविक स्थिति के कारण अपने ही खतरे (सौपद्दव) से, और अनित्यता, दुःख (दुक्खा), सार की कमी (सार) के कारण, यह वृद्धावस्था (अजरं) से मुक्त है क्योंकि यह उसके विपरीत (तप्पतिपक्खा) है: यह परम उत्कृष्ट शांति (उपसम) बन गया है, किसी से भी पीड़ित (उपद्दुत) नहीं है, यहाँ अदला-बदली (निमियं) और अतुलनीय (अनुत्तरं) निर्वाण की शुरुआत हो रही है, इस प्रकार कहते हुए: — "वास्तव में, मेरा लाभ महान है; महान वृद्धि (उदय) मेरे हाथों में आ गई है (हत्थगतो)।" जिस प्रकार मनुष्य किसी भी प्रकार के खजाने (भण्ड) को ध्यान दिए बिना ही संभालते (परिवत्तेन्ता) वह प्रचुर मात्रा में (साम्भाहुमाना) एकत्रित (गयहमानेन) हो जाता है, उसी प्रकार, इस थेरा ने निर्वाण (पहितत्तो) की ओर मन लगाकर, अपने शरीर और जीवन के प्रति अनासक्त भाव प्रकट करते हुए, यह दर्शाया कि उनका मन (अत्ता) निर्वाण की ओर उचित रूप से लगा हुआ (पटिपेसिट) है, और उन्होंने कहा: "प्रतिदान में पूर्ण शांति प्राप्त हुई है (निमियं), बंधनों (योग) से मुक्ति अतुलनीय (अनुत्तरा) है;" उसी उचित अभ्यास (पटिपत्ति) में स्वयं को लीन करते हुए (परिब्रुहयन्तो), और भक्तिपूर्वक (उस्सुक्कापेति) स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करते हुए उन्होंने अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः, अपदान में यह कहा गया है:—

मैं एक ब्राह्मण था और ज्ञान में निपुण था।

(मन्तपारागू) वरुण नाम से जाना जाता है;

मैंने अपने दस पुत्रों को त्याग दिया था, उस समय

समय जंगल में प्रवेश कर गया।

एक सुव्यवस्थित आश्रम बनाकर,

एक अच्छी तरह से विभाजित (सुविभट्टं) और

हृदय को आनंदित करने वाला (मनोरमं) और

पत्तों की झोपड़ी बनाकर, मैं उसमें रहने लगा।

जंगल।

वह विश्व-बुद्धिमान (लिकाविदु) पदुमुत्तारा,

पवित्र बलिदान का उचित प्राप्तकर्ता-

विशेष भेंट (आहुति) इच्छुक होना

मुझे प्रेरित करने के लिए, वह मेरे आश्रम में आया।

वह अत्यंत प्रतिभाशाली हो गया

घने जंगल में हर तरफ रोशनी।

उस समय जंगल बहुत चमक रहा था।

बुद्ध की शक्ति के कारण।

उस चमत्कार को देखकर,

मुझे जो मिला वह सबसे उत्कृष्ट बुद्ध थे।

पत्ती-कंटेनर को पकड़ना (पत्तापुटा)

और मैंने श्रद्धापूर्वक फल अर्पित किए।

आत्मजागृत व्यक्ति के पास पहुँचने पर

मैंने टोकरी के साथ बुद्ध को भेंट चढ़ाई।

(खारी)। मुझ पर दया करके

ये शब्द बुद्ध ने कहे थे।

टोकरी का भार अपने हाथ में लेने के बाद

(खारी) आपको पीछे-पीछे आना चाहिए

मुझे; जब भिक्षुओं का पुरोहित वर्ग आनंद लेता है

(तुम्हारे कर्मों का फल) वही तुम्हारा पुण्य होगा।

उस डिब्बे को हासिल करने के बाद,

मैंने इसे भिक्षुओं के पुरोहितों को अर्पित किया।

वहाँ मेरा मन प्रसन्न हो गया था,

मैं तुसीता के स्वर्ग में प्रकट हुआ।

वहाँ मुझे निरंतर आनंद का अनुभव हुआ।

मेरे पुण्य कार्य से जुड़ा हुआ

दिव्य नृत्य, गायन और वादन

का संगीत।

जब भी मैं दिव्य बन गया

कोई प्राणी या मनुष्य नहीं था

मेरी समृद्धि में कमी आई है, यही कारण है।

मेरे द्वारा चढ़ाए गए फलों का फलदायी परिणाम।

बुद्ध को फल अर्पित करने के बाद,

मैंने ऐसे मामलों में संप्रभुता का प्रयोग किया।

गोले के साथ-साथ चार द्वीप भी शामिल हैं।

उनके महासागर और उनके पहाड़।

जितने पक्षियों के झुंड थे

जो आकाश में उड़ना चाहिए, वे भी

मैंने अपनी इच्छा (वस्सा) का पालन किया; यही है

मेरे द्वारा चढ़ाए गए फलों का फलदायी परिणाम।

जितने भी छोटे देवता (यक्ष) थे,

शक्तिशाली प्राणी (भूत) और राक्षस

(रक्खासा), स्वर्ग के रक्षक (कुंभण्ड)

और गरुड़ पक्षी भी मेरे पास आने लगे।

मेरी सेवा करने के लिए (पारीकारिया)।

कछुए, कुत्ते (सोना), मधुमक्खियाँ (मधुकरा),

काटने वाली मक्खियाँ (ḍaṃsā) और मच्छर दोनों

(मकसा); उन्होंने भी मेरी इच्छा का पालन किया।

(वास); यह फलदायी परिणाम है

फल का प्रसाद।

सुपण्ण नामक पक्षी, जिन्हें उत्तम पंखों वाला पक्षी कहा जाता है।

अत्यंत शक्तिवान पंखयुक्त प्राणी; वे

उन्होंने मुझसे शरण भी मांगी; यह है

फल अर्पण का फलदायी परिणाम।

ऐसे हाथी (नाग) जो लंबे होते हैं-

जीवित, शक्तियों से युक्त और

उनकी बहुत प्रतिष्ठा थी; उन्होंने इसका पालन भी किया।

मेरी इच्छा; यही फलदायी पुनरावृति है-

मेरे द्वारा चढ़ाए गए फल का परिणाम।

शेर, बाघ और तेंदुआ (दीपी),

भालू (अचा) भेड़िये (कोका), लकड़बग्घे

(तराच्चका); उन्होंने भी मेरी आज्ञा का पालन किया

इच्छा; यही फलदायी परिणाम है

मेरे फल-अर्पण का।

उपचार का तारा (ओसाधी), घास-

निवासी (तणवासी) और वे लोग जो

आकाश में रहते हैं; वे सभी पास आते हैं

मुझे शरण दें; यही फलदायी है

मेरे द्वारा चढ़ाए गए फल का परिणाम।

मैं धर्म से परिपूर्ण होकर जीवन व्यतीत करता हूँ।

जिसे देखना बेहद मुश्किल है

अत्यंत सूक्ष्म, गहन और सुव्यवस्थित

स्पष्ट किया गया; यह एक सार्थक परिणाम है।

फल प्रसाद का।

मैं अनासव रोगों से मुक्त रहता हूँ।

इसके द्वारा व्याप्त होने के बाद

मुक्ति के आठ रूप (विमोक्खा);

मैं एक परिपक्व (निपाका) जलाने वाला हूँ

आतापी (अनैतिकता) भी; यही है

मेरे द्वारा किए गए फल अर्पण का फलदायी परिणाम।

मैं बुद्ध के उन पुत्रों में से एक हूँ।

जो इसमें स्थापित हो चुके हैं

सही रास्तों की सफलता, जिनके

दोष (दोसा) समाप्त हो गए थे

और जो बहुत प्रतिष्ठित हैं।

फल का फलदायी परिणाम है

पेशकश।

उच्चतर स्तर की पूर्णता प्राप्त करने के बाद

ज्ञान (अभिञ्ञा), जिसे प्रेरित किया गया है

उज्ज्वल आधार (सुक्कमूल) द्वारा और

सभी को जानने के बाद (परिञ्ञाय)

मैं जिन रोगों (आसव) से मुक्त रहता हूँ

कैंकर (आसवा)।

मैं बुद्ध के उन पुत्रों में से एक हूँ, जो

तीन प्रकार का ज्ञान (तेविज्जा) प्राप्त था।

उसने जादुई शक्तियां (इद्धि) प्राप्त कर ली थीं।

बहुत ख्यातिप्राप्त रहे हैं, और जिन्होंने

अच्छी तरह से प्राप्त (समापन्ना) दिव्य श्रवण शक्ति।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

मैंने कुछ समय पहले फल चढ़ाए थे; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति (दुग्गती) को याद रखें;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

फल-अर्पण।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद भी, उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए उसी श्लोक का पाठ किया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा सप्पिया का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(33): सोपका (एक लड़का-भिक्खु)

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (33) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
33. सोपाका
(एक बालक-भिक्षु)
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक अत्यंत निर्धन स्त्री के पुत्र के रूप में हुआ। प्रसव पीड़ा के कारण उनकी माता बेहोश हो गईं, जिससे उनके परिवारवालों ने कहा, 'वह मर गई!' और वे उन्हें श्मशान ले गए और शव का दाह संस्कार करने की तैयारी करने लगे। लेकिन एक आत्मा ने तेज हवा और बारिश से अग्नि को जलने से रोक दिया, इसलिए वे चले गए। तभी स्वस्थ शिशु का जन्म हुआ जबकि माता की मृत्यु हो गई। उस आत्मा ने मानव रूप धारण करके शिशु को पहरेदार के घर में रख दिया और कुछ समय तक उसे उचित भोजन देकर पाला-पोसा। उसके बाद पहरेदार ने उसे गोद ले लिया और वह शिशु उसके पुत्र सुप्पिया के साथ पला-बढ़ा (भजन 32)। श्मशान में जन्म लेने के कारण वे सोपाका, यानी अनाथ शिशु के नाम से प्रसिद्ध हुए। [1] जब वह सात वर्ष का था, तब ऐसा हुआ कि भगवान (बुद्ध) ने सुबह सवेरे ध्यान में अपनी दिव्य अंतर्दृष्टि का जाल फैलाया कि किन लोगों को उसमें लाया जा सकता है। जाल में

जो कुछ भी समाहित हुआ, उसे देखकर [38] वे श्मशान गए। अपने पूर्ववृत्तों से प्रेरित होकर, बालक प्रसन्न मन से भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचा और उन्हें प्रणाम किया। भगवान (बुद्ध) ने उसे शिक्षा दी, जिससे उसने संसार त्यागकर संन्यास लेने का अनुरोध किया, और जब उससे अपने पिता की सहमति मांगी गई, तो वह उन्हें भगवान (बुद्ध) के पास ले आया। पिता ने प्रणाम किया और भगवान (बुद्ध) से बालक को प्रवेश देने का अनुरोध किया। भगवान (बुद्ध) ने उसे प्रवेश दिया और उसे भाईचारे के प्रेम का अध्ययन करने का कार्य सौंपा। [2] इस अभ्यास को करते हुए और श्मशान में रहते हुए, उसने शीघ्र ही संबंधित ध्यान प्राप्त कर लिया। और उसे अपना आधार बनाकर, [3] उसने अंतर्दृष्टि का विकास किया और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। एक अरहंत (प्रबुद्ध) के रूप में उन्होंने अपने श्लोक में वहाँ रहने वाले अन्य भिक्षुओं को प्रेम अभ्यासों का सिद्धांत समझाया और उनसे कहा कि वे अपने मित्रवत, उदासीन या शत्रुतापूर्ण लोगों में कोई भेद न करें। सभी के लिए उनका प्रेम एक समान होना चाहिए और उसमें सभी लोकों, सभी प्राणियों और सभी युगों के लोगों को शामिल किया जाना चाहिए।

[33] यथापि एकपुत्तस्मिṃ पियास्मिṃ कुसलि सिया॥
एवं सब्बेसु पनेसु सब्बत्था कुसालो सिया' ती॥ ॥

[33] जिस प्रकार वह
अपने इकलौते बच्चे, अपने प्रिय पुत्र के प्रति बहुत अच्छी होती है,
उसी प्रकार तुम्हें भी
सभी प्राणियों के प्रति, हर जगह और हर किसी के प्रति बहुत अच्छा व्यवहार करना चाहिए। [4]

[1] सी.एफ. सुत्त-निपात, श्लोक 137.

[2] देखें संवाद, ii. 219. यह एक सुंदर स्पर्श है कि उस लड़के को, जो एक अनाथ के रूप में भाईचारे के प्यार और दया का ऋणी था, यह अध्ययन सौंपा गया था। देखें भजन 1.

[3] संकलन, पृ. 62.

[4] यह उपमा सुत्त-निपात (श्लोक 149) और खुद्दक-पाठ में दिए गए रूप में अधिक प्रसिद्ध है , जिसमें प्रेममयी माँ का अधिक स्पष्ट उल्लेख है। यहाँ भाषा इतनी सरल है कि यह टीकाकार द्वारा वर्णित बालक-भिक्षु की कहानी को और भी विश्वसनीय बनाती है, जिसने एक अनाथ होने के कारण कभी माँ को नहीं जाना था। इसलिए मैंने इसे एक बच्चे के प्रयास के रूप में प्रस्तुत किया है। 'ये' का शाब्दिक अर्थ है 'एक'।

1.4-3[33] श्लोक पर टिप्पणी

सोपाका थेरा
यथा पि एकपुत्तस्मिं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सोपाका का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले अच्छे कर्मों का संचय किया और भगवान ककुसंध के समय में एक जमींदार (कुटुम्बिका) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया। एक दिन, गुरु को देखकर वे धर्मपरायण हो गए और गुरु को बीज से भरपूर फल (बीज) अर्पित किए। भगवान ने उन पर दया करके (उनका) अर्पण स्वीकार किया। भिक्षुओं के धर्मप्रबंध से विशेष रूप से प्रसन्न होकर उन्होंने सलाकभट्ट द्वारा भोजदान की व्यवस्था की और अपने जीवनकाल में तीन भिक्षुओं को संपूर्ण भिक्षु समुदाय के प्रति अपनी निष्ठा के प्रतीक के रूप में दूध का भोज अर्पित किया। इन पुण्य कर्मों के फलस्वरूप, देवताओं और मनुष्यों के बीच समृद्धि का आनंद लेते हुए, उन्होंने एक बार मनुष्य के गर्भ में पुनर्जन्म लिया और एक मौन बुद्ध को दान के रूप में दूध का भोज दिया। इस और उस जन्म में पुण्य कर्म करते हुए, वे सुगति नामक उत्तम जन्मों में घूमते रहे और अपने पूर्व कर्म के फलस्वरूप सावत्ती में एक दरिद्र स्त्री (दुग्गतिति) के गर्भ में गर्भ धारण किया, जिसके फलस्वरूप इस बुद्ध का जन्म हुआ। माता ने दस माह तक गर्भ धारण करके गर्भ को पूर्णतः अपने गर्भ में रखा, लेकिन जब गर्भावस्था पूर्णतः विकसित हो गई, तो प्रसव के समय वह प्रसव करने में असमर्थ हो गईं। वे बेहोश हो गईं और काफी देर तक मृत समान पड़ी रहीं। उनके रिश्तेदारों ने उन्हें मृत समझकर श्मशान ले जाकर चिता पर बिठाया, लेकिन जब दैवीय शक्ति से हवा और बारिश चलने लगी, तो चिता में आग नहीं लगी और वे चले गए। दैवीय शक्ति से शिशु स्वस्थ अवस्था में माता के गर्भ से बाहर आया, क्योंकि यह उसका अंतिम जन्म था। माता की मृत्यु हो गई। दैवीय प्राणियों ने मनुष्य का रूप धारण करके शिशु को अपने साथ ले लिया और श्मशान के संरक्षक के घर में रख दिया, और कुछ समय तक उसे उचित पोषण प्रदान किया। इसके बाद, कब्रिस्तान के रखवाले ने उस बच्चे को अपना बेटा मान लिया और उसका पालन-पोषण किया। इस तरह बड़े

होते हुए, वह लड़का कब्रिस्तान के रखवाले के बेटे सुपिया के साथ खेल-कूद करता हुआ घूमता था। कब्रिस्तान में जन्म और परवरिश होने के कारण उसका नाम सोपाका पड़ गया।

फिर एक दिन भगवान बुद्ध की नज़र सात वर्षीय बालक पर पड़ी और वे अंतर्देशीय जल में प्रवेश कर गए। उन्होंने सुबह-सुबह ज्ञान का जाल फैलाकर संसार में अपने लिए उपयुक्त बंधुओं की खोज की और श्मशान की ओर चल पड़े। अपने पूर्व उद्देश्य से प्रेरित होकर बालक ने धर्मपरायणता का भाव धारण किया और गुरुदेव के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया। गुरुदेव ने उन्हें धर्म का उपदेश दिया। उन्होंने धर्म को ध्यान से सुना और भिक्षु बनने की इच्छा व्यक्त की। जब उनसे पूछा गया कि क्या उनके पिता ने उन्हें दीक्षा दी है, तो वे अपने पिता को गुरुदेव के पास ले गए। उनके पिता ने गुरुदेव के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया और अपनी सहमति देते हुए कहा, “हे पूज्यवर, कृपया इस बालक को भिक्षु बना दीजिए।” गुरु ने उन्हें अपने भिक्षु संघ में दीक्षा दी और उन्हें प्रेम और करुणा (मेट्टा) विकसित करने का कर्तव्य सौंपा। उन्होंने प्रेम और करुणा का मानसिक अभ्यास किया और श्मशान में निवास करते हुए प्रेम और करुणा का ध्यान स्थापित किया, ध्यान को अपना आधार बनाया, विपस्सना विकसित की और कुछ ही समय में अरहंतत्व की कल्पना की। अतः अपदान में कहा गया है:—

“वह महान नायक काकुसंध, निपुण

(पारागू) समस्त धर्मों में स्वयं को विभाजक बना लिया

उन्होंने अपने संगठन (गण) से निकलकर चले गए।

जंगल के बीचोंबीच।

मैंने बीजों का गूदा (बीजामिंजम) एकत्र किया।

और उन पर एक लता लपेट दी

(latāya āvuṇiṃ). उस समय

भगवान ध्यान में प्रवेश कर चुके थे।

पहाड़ियों के बीच।

दिव्य के दिव्य को देखकर

(देवदेव), मैंने बीज-मज्जा अर्पित की

समर्पित दान के योग्य नायक (वारा)

मैं अपने पवित्र मन से इस बात को स्वीकार करता हूँ।

इसी युग (कप्पा) में ऐसा हुआ कि

मैंने तब मज्जा (मिंजा) अर्पित की।

किसी भी बुरी घटना को याद न करो;

यह बीज का फलदायी परिणाम है।

मज्जा (अर्पण)।

मेरी विकृतियाँ नष्ट हो चुकी थीं।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "यथा पि एकपुत्तस्मिं" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, ताकि श्मशान-तपस्या (सोसानिका) का अभ्यास करने वाले अन्य भिक्षुओं को प्रेम और करुणा (मेट्टावहना) विकसित करने की विधि (विधि) की ओर इशारा किया जा सके।

33. यहाँ यथा एक अविकारी कण (निपात) है, जो उदाहरण के रूप में प्रयुक्त होता है। एकपुत्तस्मि का अर्थ इस प्रकार है: वह कुलवंश का शुद्धिकरण (पुनाति) करता है और उसकी देखभाल भी करता है; इस प्रकार वह पुत्र है; पुत्र अपने ही वंशजों आदि का गुणधर्म होता है। एक पुत्र इकलौता पुत्र होता है; उस इकलौते पुत्र में भी यह स्थानवाचक शब्द है। पियास्मिं का अर्थ है: — क्योंकि उसे प्रेम किया जाना चाहिए, और इसलिए भी कि वह इकलौता पुत्र है, ऐसा पुत्र जो सौंदर्य (रूप), नैतिक उपदेश, अच्छे आचरण (आचार) आदि गुणों से युक्त स्नेहपूर्ण प्रेम (पेमा) उत्पन्न करने का केंद्र बन गया है। कुसली का अर्थ इस प्रकार है: — कुसल को सुरक्षा (खेमा), सुख की अवस्था (सोत्थी) कहा जाता है; इसमें वह सुरक्षित सुख है जिसे प्राप्त किया जाना चाहिए; इस प्रकार, सुरक्षित रूप से सुखी (कुसली); जीवित प्राणियों के कल्याण का साधक, जिसका हृदय केवल प्रेममय (मेत्तज्जासयो) है। सब्बेसु पाणेसु का अर्थ है सभी जीवित प्राणियों के प्रति। सब्बत्था का अर्थ है: — सभी दिशाओं में (दिसा); वैकल्पिक रूप से, सभी अस्तित्वों में इत्यादि; या सभी असीमित अंतरिक्ष में (अवत्थासु)। यह कहा गया है: — जिस प्रकार माता-पिता सुरक्षित रूप से सुखी लोग (कुसली) होंगे और अपने इकलौते प्यारे (पिया) और प्रिय (मनप) पुत्र के प्रति सच्चे कल्याणकारी (एकान्तहितेसी) होने पर, उन्हें उसी प्रकार निश्चिंत होकर प्रसन्न (कुसली) रहना चाहिए; उसी प्रकार, पूर्व दिशा से लेकर सभी दिशाओं तक, इंद्रिय-संबंधी विविधताओं से लेकर सभी रूपों तक, और युवाओं से लेकर सभी रूपों तक, सभी प्राणियों के प्रति, जो असीम विवरणों (अवत्थासु) में विद्यमान हैं, उन्हें निश्चिंत होकर प्रसन्न (कुसली) रहना चाहिए, क्योंकि वे निश्चिंत होकर कल्याणकारी हैं। एक ही प्रकार का (एकरसं) प्रेम और करुणा बिना किसी सीमा-विभाजन (सीमासंभेद) के, हर जगह विकसित की जानी चाहिए, और ऐसी कोई सीमा नहीं बनानी चाहिए जैसे: "मित्र, उदासीन और शत्रु।" इस श्लोक को कहने के बाद, उन्होंने इस प्रकार निर्देश दिया: "यदि आप सभी पूजनीय स्वयं को भोग-विलास में लगा लें, तो (अनुयुन्जेय्याथा) इस प्रकार प्रेम और करुणा के विकास में, आप सभी निश्चित रूप से (भवथा) प्रेम और करुणा से प्राप्त होने वाले ग्यारह प्रकार के लाभों के प्राप्तकर्ता बनेंगे, जैसा कि "आनंदपूर्वक नींद आती है" से शुरू होता है, और इसी प्रकार जिनका उल्लेख भगवान ने किया था।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा सोपाका का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(34):पोसिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (34) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
34. पोसिया
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक अत्यंत धनी पार्षद के पुत्र के रूप में हुआ, [1] और वे थेरा संगमजी के छोटे भाई थे। [2]
बड़े होने पर उनका विवाह हुआ; परन्तु पुत्र के जन्म के बाद, जीवन के अंतिम चरण से संबंधित नियमों के कारण वे जन्म और उससे

संबंधित बातों को लेकर चिंतित हो गए। अतः उन्होंने संसार त्याग दिया (भिक्षुता के लिए) और वन में एकांतवास में रहकर चार सत्यों का अभ्यास किया। और शीघ्र ही उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया।

फिर वह बुद्ध की पूजा करने के लिए सावत्थी गए और अपने घर लौट आए। वहाँ उनकी पूर्व पत्नी ने उनका सत्कार किया और उनके स्वभाव से अनभिज्ञ होकर, अपने आकर्षण से उन्हें वापस अपनी ओर खींचने की इच्छा रखी। थेरा ने सोचा, 'अरे! इच्छा की मूर्खता मुझ जैसे व्यक्ति पर भी बुरी नज़र रखती है,' और कुछ नहीं कहा, बल्कि उठकर जंगल में चले गए। वहाँ के भिक्षुओं ने उनसे कहा, 'हे मित्र, आप इतनी जल्दी वापस क्यों आ गए; क्या आपने अपने लोगों को नहीं देखा?' थेरा ने उन्हें सारी घटना बताई और एक श्लोक सुनाया:

[34] अनासन्नवारा एटा निक्कमेव विजानाता॥
गमा अरण्यमगम्मा ततो गेहं उपविसिण॥
ततो उथया पक्कमिं अनमन्तीय1 पोसियो' ति.॥ ॥

इत्थै सुदां अयस्मा पोसियो थेरो गाथां अभिसित्था' ति.॥ ॥

[34] सबसे अच्छा तब होता है जब पास न हों, अभी और हमेशा के लिए,
ऐसे लोग समझने वाले के लिए होते हैं।
मैं बस्ती से जंगल में गया,
वहाँ से मैं फिर अपने घर आया; लेकिन वहाँ से उठकर मैं फिर से खड़ा हो गया, और इस पोसिया ने
कभी एक शब्द भी नहीं कहा।

[1] सेट्ठी शब्द पर , सिस्टर्स, पृष्ठ 192, नोट 1 देखें । मैंने इस काम में 'काउंसिलर' का उपयोग करने का निर्णय लिया है, जो हमारे लिए किसी आधिकारिक महत्व के बर्गेस, प्रमुख (सेट्ठी) - जैसे, किसी गिल्ड आदि को व्यक्त करता है।

[2] उडाना देखें , i. 8; नेति, पी. 150.

1.4-4[34] श्लोक पर टिप्पणी

पोसियाथेरा
4.1. अनासन्न वरा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पोसिया का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, प्रचुर मात्रा में पुण्य कर्म संचित किए, जो उन्हें इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने में सहायक थे। वे अपने पुनर्जन्मों के चक्रों में उत्तम जीवन (सुगति) व्यतीत करते हुए, भगवान तिस्सा के समय, बानवे युग (कप्पा) पहले, हिरण शिकारी बन गए और वन में विचरण करने लगे। उस समय, उनकी उन्नति के लिए, भगवान वन में गए और उनके दर्शन किए। भगवान को देखकर वे श्रद्धा से भर गए, अपना शस्त्र त्याग दिया और हाथ जोड़कर आदरपूर्वक खड़े हो गए। भगवान ने बैठने की इच्छा प्रकट की। वहीं उन्होंने मुट्ठी भर घास (तिनमुट्ठी) ली, उसे स्वयं आदरपूर्वक समतल भूमि पर फैलाया और भगवान बुद्ध को वह स्थान अर्पित किया। उन पर दया करते हुए भगवान बुद्ध ने वहीं अपना आसन ग्रहण किया। जब भगवान बुद्ध बैठ गए, तो उन्हें अपार आनंद और प्रसन्नता का अनुभव हुआ, उन्होंने भगवान बुद्ध को प्रणाम किया और स्वयं एक उपयुक्त स्थान (एकमंतं) पर बैठ गए। तब भगवान बुद्ध ने मन ही मन कहा, "इस मनुष्य के लिए इतना पुण्य बीज (कुसल) उचित है।" वे अपने आसन से उठकर चले गए। भगवान बुद्ध के जाने के कुछ ही समय बाद, पशुओं के राजा (मिगराज) सिंह ने उन्हें मार डाला। मृत्यु के बाद वे स्वर्गलोक में अवतरित हुए। कहा जाता है कि यदि भगवान बुद्ध उनके पास न जाते, तो वे सिंह द्वारा मारे जाते और नरकलोक में पुनर्जन्म लेते। अतः, उन्हें देखकर भगवान बुद्ध उनके पास गए ताकि वे उत्तम अस्तित्व (सुगति) प्राप्त करें और उन पर पुण्य बीज बोएं।

4.2. वह अपने जीवनकाल तक वहीं रहे, फिर दिव्य लोक से विदा हुए, उत्तम अस्तित्वों (सुगति) में अपने पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब वे सावत्थी में एक अत्यंत धनी बैंकर के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए, जो थेरा संघामजिता के सबसे छोटे भाई थे। उनका नाम पोसिया था। वयस्क होने पर उन्होंने विवाह किया (दारपरिग्गहं कत्वा), पुत्र प्राप्त किया, और अपने अंतिम अस्तित्व (पच्चिमभव) की प्रकृति (धम्मता) से प्रेरित होकर (चोदियमानो), उनमें पश्चाताप उत्पन्न हुआ, जो जन्म (जाति) आदि जैसी घटनाओं पर निर्भर (पटिच्च) था, वे भिक्षु बन गए, वन में प्रवेश किया, एकांतवास किया (वुपकट्ठो), चार आर्य सत्यों पर निरंतर मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठन) में लगे रहे, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास में लीन रहे और कुछ ही समय में अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में कहा गया है:—

हिमावंता (हिमालय) से कुछ ही दूरी पर, एक स्थान था।

लंबका नाम की एक पहाड़ी। स्वयं-

जागृत बुद्ध तिस्सा चलकर आगे बढ़े और

लेकिन वहां खुली हवा में।

मैं उस समय हिरण का शिकारी था।

लकड़ी का जंगल। यह देखकर

परमात्मा का दिव्य (देवदेवं)

मैंने उन्हें मुट्ठी भर घास भेंट की।

इसे इस उद्देश्य के लिए पेश करने के बाद

मैंने बुद्ध के आसन के बारे में अपना मन बना लिया था।

प्रसन्न। श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद

मैंने आत्मजागृत बुद्ध को अपने साथ ले लिया

विशेष रूप से उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान करना।

मेरे जाने के कुछ ही समय बाद, एक राजा

जानवरों ने मुझ पर हमला किया। मुझ पर हमला हुआ।

शेर के हमले में मेरी वहीं मौत हो गई।

क्योंकि इसके तुरंत बाद (आसन्ने) यह कार्य हुआ था

मैंने इसे बिना किसी संक्रमण वाले सबसे अधिक के लिए किया है।

हे उत्कृष्ट बुद्ध, मैं दिव्य अवस्था तक पहुँच गया।

दुनिया तीर की गति के समान है

बहुत बढ़िया शॉट (सुमुत्तो)।

वहाँ मेरा दिव्य महल सुखद था।

मेरे द्वारा विशेष रूप से निर्मित किया गया

पुण्य कर्म। इसमें एक हजार थे

खंडीय विवरण (कण्ड) के साथ

सौ गेंद बुर्ज (भेण्ड), पूर्ण

सोने (हरिता) से बने झंडों (धजालु) का।

इसकी दीप्तिमान किरणें (पभा) आश्चर्यजनक रूप से

विकिरणित हुआ (निद्धावते) और ऊपर उठा (उग्गतो)

सौ किरणों वाले सूर्य के समान

(सतरंसी)। यह दिव्य लोगों से भरा हुआ था।

युवतियों, मैंने खूब आनंद लिया (āmodiṃ)

मेरी सभी इच्छाओं (कामकामी) की पूर्ति हो रही है।

दिव्य शक्ति से विदा होने के बाद

दुनिया, और प्रेरित (codito) द्वारा

उज्ज्वल आधार (सुक्कमूल) मैं बन गया

मैं एक मनुष्य हूँ और मैंने अरहंत पद प्राप्त किया।

(आसवक्खया).

यह 94 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने जो भेंट चढ़ाई है

सीट; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व (दुग्गति); यही फल है-

मुट्ठी भर घास का पूरा परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

4.3. अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे भगवान बुद्ध को प्रणाम करने के लिए सावत्थी आए और अपने सगे-संबंधियों के प्रति दया भाव से उनके घर गए। वहाँ उनकी पूर्व पत्नी (पोराणदुतीयिका) ने उन्हें प्रणाम किया, सबसे पहले उन्होंने एक भक्त की तरह आसन अर्पित करने जैसे कर्तव्य निभाए, और थेरा के स्वभाव (अज्जासय) को न जानते हुए, बाद में कुत्त (कुत्ता) आदि स्त्री-सुलभ चालों से थेरा को

लुभाने की इच्छा करने लगीं। थेरा ने इस प्रकार सोचा: “यह कितना आश्चर्य की बात है (अहो)! एक अंधा मूर्ख इस प्रकार व्यवहार करता है (पटिपज्जति), अर्थात् मुझ जैसे मनुष्य (मादिसा) के साथ,” उन्होंने कुछ नहीं कहा, अपने आसन से उठे और जंगल की ओर चले गए। वनवासी भिक्षुओं ने उनसे पूछा, “कैसी बात है, मित्र? आप अत्यंत शीघ्र (अटिलहुं) लौट आए हैं; क्या आपके सगे-संबंधियों ने आपको नहीं देखा?” थेरा ने “अनासन्नवरा एता” से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, ताकि वहाँ घटी घटना (पवत्ति) का वर्णन कर सकें।

34. वहाँ, अनासन्नवरा का अर्थ इस प्रकार है:— एता का अर्थ है ये स्त्रियाँ: अनासन्न ना आसन्न (निकट नहीं), पहुँच से परे; वैकल्पिक रूप से, दूर स्थित होकर भी वे उत्कृष्ट (वरा) हैं, वे मनुष्य के कल्याण की सर्वोत्तम संवर्धक हैं; वह भी निच्चमेव (स्थायी रूप से), हर समय; न केवल रात में, न दिन में, न ही अकेलेपन (रहवेलाय) के अवसर पर। विजयानाता का अर्थ है जो स्पष्ट रूप से जानता हो। “अनासन्नपरा” जैसा एक पाठ भी है; उसका अर्थ यही है। यहाँ, वास्तव में, यही अर्थ (अधिप्पाय) है ----- भयंकर हाथी, गौशाला, भैंस, शेर, बाघ, राक्षस, दानव और पिशाच भी जो लोगों के पास नहीं जाते, उत्कृष्ट, सर्वोत्तम और कल्याण के संवर्धक हैं; वे (लोगों के) पास जाकर (लोगों के) लिए वर्तमान समय में भी (दित्तधम्मिका) हानि ही करेंगी। दूसरी ओर, स्त्रियाँ (पुरुषों के) पास जाकर वर्तमान जीवन (दित्तधम्मिका) और भविष्य के पुनर्जन्म (संपरायिक) से संबंधित मुक्ति (विमोक्खनिस्सिता) के लिए सहायक कल्याण को नष्ट कर देती हैं और (आपादेन्ति) भारी हानि (अनत्तं) उत्पन्न करती हैं; इसलिए, इन स्त्रियों का पास न रहना ही बेहतर है और इन्हें हर समय स्पष्ट रूप से (विजानता) समझा जाना चाहिए। अब, स्वयं (उपनायिका) के संदर्भ में उस बात को स्पष्ट करने के लिए, उन्होंने गामा शब्द से प्रारंभ किया। यहाँ गामा का अर्थ गामं (गाँव के लिए) समझा जाना चाहिए; वास्तव में, यह शब्द अपादान कारक रूप (निस्साक्का) में कर्म कारक अर्थ (उपयोगत्थ) में कहा गया है। अरञ्ञमागम्म का अर्थ है अरञ्ञतो आगन्त्वा, यानी जंगल से आया हुआ; व्यंजन म शब्दों के संयोजन (संधि) का सूत्र है; यह कर्म कारक शब्द (उपयोगवचनं) अपादान कारक (निस्साक्का) के अर्थ में है। ततो का अर्थ है पलंग (मंचक) से। अनामन्तेत्वा का अर्थ है; अपनी पूर्व पत्नी (दुतीयिका) को संबोधित करते हुए (आलपति) पुकारे बिना, यहाँ तक कि इतना भी नहीं कहा, अर्थात्:— अपनी पूर्व पत्नी से “मेहनती रहो”। पोसियो का अर्थ है:— उसने अपने बारे में ही कहा, मानो किसी और का जिक्र कर रहा हो। हालाँकि, जो कोई भी उनके बारे में पढ़े (पाठन्ति), मैं, पोसिया, विदा लेता हूँ; अतः, यही व्याख्या (योजना) है। परन्तु जो कोई इस प्रकार कहे: “उस स्त्री ने अपने घर आए थेरा को भोजन कराया, तो वह उन्हें लुभाने की इच्छा करने लगी: यह देखकर थेरा तुरंत घर से निकलकर मठ चले गए और अपने निवास स्थान पर पलंग पर बैठ गए; वह स्त्री भी भोजन के बाद सज-धज कर मठ में थेरा के निवास स्थान पर गई; उसे देखकर थेरा ने कुछ नहीं कहा, उठकर अपने दिन के विश्राम स्थल पर चले गए;” उनके लिए श्लोक के चरणों का अर्थ इस प्रकार है: “गाँव से वन में लौटकर;” यह निर्देशित (निय्याति) है, परन्तु तदनुसार (यथा) गाए जाने (ऋत) के माध्यम से। यहाँ वास्तव में विहार (मठ) का तात्पर्य (अधिप्पेतो) “अरञ्ञं (वन)” है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा पोसिया का

तैयार है
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(35):समन्नाकानि

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (35) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
35. समाञ्ञकनी
वह इस बुद्ध युग में एक घुमक्कड़ के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर [1] परमेश्वर (बुद्ध) को दो चमत्कार करते हुए देखकर धार्मिक जीवन (मार्ग/धम्म) में परिवर्तित हो गया। [2] और ध्यान के माध्यम से उसने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

अब कातियाना नाम का एक घुमक्कड़, जिसे वे गृहस्थ के रूप में जानते थे, बुद्ध के उदय के बाद से गृहस्थों से मिलने वाला सारा समर्थन खो बैठा था और निर्धन हो गया था। वह थेरा के पास आया और बोला, 'आप शाक्य वंश के लोग, जिन्होंने बहुत प्रसिद्धि और समर्थन

प्राप्त किया है, सुखी जीवन व्यतीत करते हैं, परन्तु हम दुखी और निर्धन हैं। इस जीवन और परलोक दोनों में सुख प्राप्त करने के लिए क्या करना चाहिए?' थेरा ने कहा, 'सांसारिक सुख से इतर सुख: - जो व्यक्ति इसे प्राप्त करने के लिए उचित प्रक्रिया का पालन करता है और इसे प्राप्त करता है, वही पूर्ण सुख कहलाता है।' और अपनी स्वयं की उपलब्धि से इसे स्पष्ट करते हुए, उन्होंने यह श्लोक कहा:

[35] सुखाऽ सुखत्थो लभते तदाचाराऽ॥
कित्तिओ च पप्पोति यस्सा वदहति॥
यो अरियामंथागोंगिकमंजसां उजुm॥
भवेति मग्गं अमतस्सा पत्तिया' ति.॥ ॥

[35] सुख की खोज करने वाला व्यक्ति निरंतर प्रयास करने पर सुख प्राप्त कर सकता है।
उसे सम्मान भी प्राप्त होगा और यश भी उसकी प्राप्ति होगी।
बशर्ते वह सीधे मार्ग का अनुसरण करे, [3] अर्थात् आर्य मार्ग,
वह अष्टमार्ग जिससे मोक्ष प्राप्त होता है। [4]

[1] परिब्बाजक - यानी, अनासक्त धर्मी । क्या उसका जन्म पिता के संसार छोड़ने (भिक्षुता के लिए) से पहले हुआ था, या उसके फिर से उसमें विलीन होने के बाद (देखें सिस्टर्स, भजन संहिता lxviii.), यह नहीं बताया गया है।

[2] देखें पृष्ठ 36, नोट 1.

[3] टीका में व्याख्या की गई है, 'क्योंकि व्यक्ति ने सभी शारीरिक और अन्य कुटिलताओं को त्याग दिया है।' मुझे निकाय के इस श्लोक की प्रतिध्वनि सुनाई देती है: उजुको नाम सो मग्गो (संध्या, अध्याय 14; सिस्टर्स, श्लोक 361) - 'मार्ग को सीधा नाम दिया गया है।' पाली गायत्री छंद (वैदिक) में है।

[4] अमाता. तुलना करें. XXI.

1.4-5[35] श्लोक पर टिप्पणी

Sāmaññakāni Thera
5.1. सुखमसुखत्थो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सामञ्चकानी का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में अच्छे कर्म संचित किए, और आज से 91 युग (कप्पा) पहले, भगवान विपस्सी के समय में मनुष्य की योनि में पुनर्जन्म लिया। भगवान विपस्सी को देखकर वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें अपना पलंग (मंच) अर्पित किया। इस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे।

दिव्य और मानवीय प्राणियों के बीच अंतरात्माओं के दर्शन करने वाले इस बुद्ध का पुनर्जन्म एक परिब्बाजक (घूमते-फिरते तपस्वी) के पुत्र के रूप में हुआ। उनका नाम सामञ्चकानी था। बुद्धि प्राप्त करने पर उन्होंने गुरु के दोहरे चमत्कार को देखा, वे धर्मपरायण हो गए, भिक्षु के रूप में दीक्षा ली, अपने आचरण के अनुरूप मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) किया, ध्यान साधना की शुरुआत की, ध्यान को अपना आधार (पादक) बनाया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

“अपनी हथेलियों और मनभावन भक्ति से,

मैंने एक सोफे की पेशकश की थी, ऐसे व्यक्ति को

भगवान विपस्सी के रूप में, सबसे बड़े

दुनिया।

मुझे (समाज्झगं) एले- प्राप्त हुआ था।

पक्षी परिवहन, घोड़ा परिवहन और

दैवीय परिवहन; इसी कारण

मुझे सोफे का प्रस्ताव मिला था।

अरहंत पद से मुक्त हो जाने के बाद

कैंकर (आसवा)।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने तब सोफे की पेशकश की;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह सोफे पर बैठने का फलदायी परिणाम है-

पेशकश।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

5,2. थेरा के एक गृहस्थ सहयोगी, कातियान नामक एक घुमंतू दार्शनिक (परिब्बाजक), बुद्ध के प्रकट होने (उप्पाद) के बाद से विधर्मियों के लाभ और मान-सम्मान (सक्कारा) पर भारी चोट पहुँचने के कारण, उन्हें भोजन और वस्त्र तक नहीं मिल पा रहे थे, इसलिए वे आजीवक तपस्वियों के समूह से अलग हो गए (अपकतो), थेरा के पास गए और उनसे पूछा: "आप सभी, अर्थात् शाक्यवंशी पुत्र, अत्यधिक लाभ और प्रसिद्धि प्राप्त करने के कारण सुखी जीवन व्यतीत करते हैं; हम तो दरिद्र हैं और कठिन जीवन (किच्छ जीविका) व्यतीत करते हैं; वास्तव में, जो व्यक्ति उचित अभ्यास (पटिपज्जमान) करता है, उसे वर्तमान (दित्तधम्मिका) और भविष्य (संपरायिकञ्च) दोनों प्रकार के सुख कैसे प्राप्त होते हैं?" इस पर, थेरा ने "सुखं सुखत्थो लभते तदाचारं" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला। उन्होंने उस सुख की प्राप्ति की अवस्था को प्रकट करते हुए उनसे कहा: "स्पष्टीकरण के अभाव में (निप्परियायतो) सुख, अर्थात्, केवल दिव्य सुख (लोकउत्तरासुख) है; वह भी उस व्यक्ति का है जो उस सुख के अनुरूप उचित अभ्यास (पटिपत्ति) का उचित अभ्यास (पटिपज्जन्ता) करता है," उपदेश (परियायेन) के माध्यम से।

35. यहाँ सुखम् का अर्थ है; यहाँ इसका अर्थ है इंद्रिय सुखों से मुक्त सुख। इस सुख में श्रेष्ठ फल (फलसमापत्ति) और निर्वाण की उचित प्राप्ति भी शामिल है। इसी प्रकार, वास्तव में, यह कहा गया है: — "यह एकाग्रता (समाधि) ही सुख (सुखविपाको) है;" "निर्वाण सर्वोच्च (परमम्) सुख है।" सुखथो का अर्थ है: सुख का उद्देश्य (पयोजन); वह व्यक्ति जो उपर्युक्त सुख की इच्छा रखता है (अत्थिको)। लभते का अर्थ है वह प्राप्त करता है: यह सुख इच्छा रखने वाले का है; किसी और का नहीं। उन्होंने कहा: — "लेकिन इच्छा रखने वाला कौन है?" "तदाचारम्" का अर्थ है उस उद्देश्य के लिए स्वयं को संचालित करना; उस उचित प्राप्ति के लिए सहायक उचित अभ्यास (पटिपत्तिम्) का उचित अभ्यास (पटिपज्जन्तो) करना; यही अर्थ है। वह आचरण (आचार) केवल सुख ही नहीं देता; वास्तव में, कित्तिंच पप्पति का अर्थ है कि वह दूर-दूर तक ख्याति प्राप्त करता है, जिसकी घोषणा उसके सामने (परममुखा) इस प्रकार की जाती है: — "इस प्रकार भी वह नैतिक उपदेशों से युक्त है; उसके शारीरिक और मौखिक कर्म सर्वथा अत्यंत शुद्ध हैं; उसकी आजीविका सर्वथा अत्यंत शुद्ध है; वह ध्यान का स्वामी है और ध्यान में लीन है (झानयुत्तो)।" यस'स वड्धते का अर्थ है: उसकी प्रसिद्धि, जिसे परिवार (परिचारक) के सौभाग्य (संपदा) के रूप में गिना जाता है। अब, सामान्य रूप से कहे जाने वाले अर्थ (सामञ्ञातो) को "तदाचारं (वह आचरण)" के रूप में स्पष्ट रूप से दर्शाने (सरूपतो) के लिए, उन्होंने इस प्रकार कहा:— "यो अरिवमत्थंगिकमञ्जसं उजुं, भावेति मग्गां अमतस्स पट्टिया।" इसका

अर्थ है:— यो का अर्थ है वह व्यक्ति जो सभी प्रकार की बुराइयों (किलेसा) से दूर (आरकत्ता) है, अपनी सर्वांगीण पवित्रता की भावना के कारण और उचित अभ्यास करने वालों (पटिपज्जन्त) की श्रेष्ठ अवस्था (अरियभाव) को बनाने की भावना के कारण, वह अरियम् है, एक श्रेष्ठ व्यक्ति; क्योंकि यह आठ ऐसे घटक भागों (अंग) की मात्रा (समुदय) है जो सही दृष्टिकोण (सम्मादिट्ठी) से शुरू होती है, इसलिए यह आठ गुना है: — अट्ठंगिकं; मध्य मार्ग (मज्झिमा) के उचित अभ्यास (पटिपत्ति) के कारण टेढ़ा न होने के अर्थ में, दो चरम सीमाओं (अंतद्वय) से बचकर (रहित) वह सीधा है; अंजसं, क्योंकि वह झुके हुए शरीर (कायवंक) से रहित है, और इसी प्रकार वह उजुं (सीधा) है; अपने स्वयं के (निया) सही मार्ग (मग्ग) के अर्थ में, जो लोग निर्वाण (निब्बानत्थिका) की इच्छा रखते हैं, और सभी प्रकार के दुराचार (किलेसा) का नाश करते हुए आगे बढ़ने के अर्थ में, "मग्ग" नाम प्राप्त होता है, जो दुख (दुक्खा) के निवारण (निरोध) की ओर ले जाने वाला उचित मार्ग (पटिपदा) है; अमतस का अर्थ है; अजन्मे (असंखत) तत्व (धातु) का; पटिया का अर्थ है (अधिगम) की प्राप्ति के लिए; भावेति का अर्थ है वह अपने स्वयं के (सन्ताना) तंत्र में उत्तेजित (उप्पादेति) और विकसित (वड्ढेति) करता है; बिना किसी स्पष्टीकरण (निप्परियायेन) के उन्होंने कहा, "सुखत्थो तदा चरं (जो सुख की इच्छा रखता है, वह अभ्यास करे);" इसलिए, जैसा कहा गया है, उसे सुख प्राप्त होता है।यह सुनकर, परिब्जाक नामक भ्रमणशील दार्शनिक, जो धर्मपरायण था, भिक्षु बन गया, उचित विधि से साधना की, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और शीघ्र ही अरहंत पद प्राप्त कर लिया। यह बात थेरा के अरहंत पद की व्याख्या (या भविष्यवाणी) भी बन गई।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा समाञ्चकानी का

तैयार है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(36): कुमा का पुत्र

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (36) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
36. कुमा का पुत्र
अवंती देश में, [1] वेलुकाण्ड नगर में एक गृहस्थ के परिवार में, बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम नंदा रखा गया। उनकी माता का नाम कुमा था, इसलिए वे कुमा के पुत्र के नाम से जाने जाते थे। आदरणीय सारिपुत्त का उपदेश सुनकर उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और सीमावर्ती पहाड़ियों की ढलानों पर अध्ययन किया; लेकिन बुद्ध का प्रवचन सुनने के बाद ही वे अपने अभ्यासों को इस प्रकार सुधार सके कि उन्हें अर्हतत्व (ज्ञान) प्राप्त हुआ। अर्हंत (ज्ञान प्राप्त) के रूप में उन्होंने देखा कि अन्य भिक्षु (भिक्षु) शारीरिक आवश्यकताओं में अतिभोग कर रहे थे, और उन्होंने उन्हें उपदेश देते हुए कहा:

[36] साधु सुतṃ साधु कारितकाṃ॥
साधु सदा अनिकेतविहारो॥
अत्थपुच्चनं पदक्खिनकम्माṃ॥
एतां समन्नमाकिंचनस्सा' ति.॥ ॥

[36] हे कितनी अच्छी बातें हैं जो अब हमारे कान सुनते हैं!
हे कितना अच्छा जीवन है जो हम यहाँ जी सकते हैं!
हे कितना अच्छा है कि हमारे पास घर नहीं है! [2] अब उच्च महत्व की बातों पर प्रश्न करते हुए,
अब सभी उचित धन्यवाद और श्रद्धा दिखाते हुए:

यही सच्चे भिक्षु का आह्वान है,
उसका जो किसी भी चीज का मालिक नहीं है।

[1] राइस डेविड्स द्वारा लिखित 'बुद्धिस्ट इंडिया' , पृष्ठ 8 एफ देखें । यह उल्लेखनीय है कि बुद्ध के प्रमुख गृहस्थ अनुयायियों में से एक महिला थीं जिन्हें वेलुकांडियन या -कंटिकन कहा जाता था, जो नंदा की माता थीं। हालाँकि, यह संभवतः उत्तरा थीं; वह हमारी कुमा नहीं हो सकतीं, क्योंकि उन्हें प्रमुख थेरों को यह बताते हुए दर्शाया गया है कि उनके इकलौते बेटे नंदा को बचपन में ही राजाओं (राजानो) या कुलीन वर्ग द्वारा मार डाला गया था। नंदा एक सामान्य नाम था, और यह संभव है, यदि हम ऐसे सभी संदर्भों को विशुद्ध रूप से काल्पनिक मानकर जल्दबाजी न करें, कि पड़ोसियों के बीच एक सुविधाजनक भेद करने के लिए नंदा कुमापुत्त कहना उचित था। इसका संबंध बीना-विवाह वंश से हो सकता है (सांग्य., ii. 236; अंग., i. 26, 88, 164; iii. 336; iv. 63; और तुलना करें संवाद, i. 193, Ī 5)।

[2] सुत्त-निपाता, श्लोक 844 का संकेत। इस पर सांग्यी, iii. 9 ff. में चर्चा की गई है ; 'घर का अभाव' 'इंद्रिय सुखों और वस्तुओं में लीन न होने' का प्रतीक है।

1.4-6[36] श्लोक पर टिप्पणी

कुमापुत्त थेरा

साधुसुतं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कुमापुत्त का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करने के बाद, उन्होंने 91 युग पहले एक हिरण की खाल धारण करने वाले संन्यासी बन गए और बंधुमती नगर के राज उद्यान में निवास कर रहे थे, जब उन्होंने भगवान विपस्सी (बुद्ध) के दर्शन किए, वे पुण्यभाव से भर गए और उनके चरणों की मालिश के लिए तेल अर्पित किया (पादाभंजन)। इस पुण्य कर्म के कारण, उनका पुनर्जन्म देवलोक में हुआ। वहाँ से, उन्होंने कई जन्मों का चक्र पूरा किया और सुगति येव में, अवंती राज्य के वेलुकन्तक नगर में एक धनी गृहस्थ परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ, जब इस बुद्ध का उदय हुआ। उन्होंने उन्हें "नंदा" के नाम से जाना। उनकी माता का नाम कुमा था, इसलिए उन्हें कुमापुत्त कहा जाने लगा। पूज्य सारिपुत्त की उपस्थिति में धर्म का ज्ञान प्राप्त करने के बाद, उन्होंने सुखद धार्मिकता प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और अपने प्रारंभिक कर्तव्यों का पालन करने के बाद, भिक्षु के कर्तव्यों (समणधम्म) का पालन किया, और भेद प्राप्त करने में असमर्थ होने पर, भगवान बुद्ध के पास गए, सत्य (धम्म) सुना, अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) को शुद्ध किया, एक उपयुक्त स्थान (सप्पयट्ठान) पर निवास किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व की कल्पना (सच्चाकासि) की। अतः, अपदान में कहा गया है:—-

मैं शाही बगीचे में रहता था

बंधुमती नगर; मैं तब एक

चमड़ी (कम्मा) धारण करने वाला और वाहक

पानी के प्याले (कमण्डलु) का।

मैंने उस निर्मल (विमल) बुद्ध को देखा,

स्वयं निर्मित (सयम्भु) असंबद्ध-

विवादनीय (अपराजिता), जिसने निर्देशित किया था

उनका मन परिश्रमपूर्ण प्रयास (पधाना) की ओर लगा हुआ था।

ध्यान में प्रवेश किया, और जो निवास कर रहा था-

ध्यान में प्रसन्नता के साथ (वसिं)

रोगमुक्त (अनासव) को देखकर जो

जो बाढ़ (ओघा) पार कर चुके थे और जो

सभी मामलों में पूर्ण सिद्ध (समिद्धा)

आवश्यकताओं (काम) के कारण, मैं धार्मिक हो गया।

(पसंद) और प्रसन्न (सुमना) और

उन्होंने (उन्हें) मरहम (अब्बंजन) अर्पित किया।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है,

मैंने मरहम चढ़ाया था; मुझे याद नहीं है

किसी भी प्रकार का बुरा अस्तित्व; यही उसका फल है।

मेरे द्वारा अर्पित मरहम का पूरा परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

6,2. हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, जब उनका सामना शारीरिक शक्ति (दाल्ह) की परिपूर्णता (बहुले) में भिक्षुओं (भिक्षुओं) से हुआ, तो उन्होंने "साधु सुतं साधु चरितकं" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, उन्हें उपदेश देते हुए, व्यवस्था (शासन) के दुःख (निय्यानिका) से मुक्ति की सुगमता की स्थिति को प्रकट किया।

36. यहाँ, सादु (अच्छा) का अर्थ उत्कृष्ट (सुंदरं) है। सुतं (सुना) का अर्थ श्रवण (सवनं) है। यहाँ जिस श्रवण का तात्पर्य (अधिप्पेतं) है, वह है जो वास्तव में पुनर्जन्मों के चक्र से मुक्ति दिलाने में सहायक है; यह उन दस मूलभूत शिक्षाओं (कथावत्थु) को सुनना है जो कम इच्छाओं (अप्पिच्छता) आदि से उचित रूप से संबंधित हैं। सादु चरितकं का अर्थ इस प्रकार है: — कम इच्छाओं आदि के उस अभ्यास का अभ्यास करना; वास्तव में, उसी अच्छे अभ्यास (चरित) को ही "चरितक (अभ्यास)" कहा गया है। दो शब्दों के माध्यम से, वे "सुंदरं (अच्छा)" के रूप में बहुत अधिक ज्ञान और उससे संबंधित उचित अभ्यास (पटिपत्ति) को भी इंगित करते हैं। सदा का अर्थ है हर समय, नवका अवस्था में, मध्यकालीन अवस्था में और वरिष्ठ अवस्था में; या फिर, सभी शारीरिक गतिविधियों के दौरान। अनिकेतविहार का अर्थ है: यह पांच प्रकार के इंद्रिय सुखों का निवास स्थान है क्योंकि यह विकृतियों (किलेसा) का निवास क्षेत्र है; या फिर, यह चिंतन के छह सांसारिक विषय (धम्म) हैं। तदनुसार (बुद्ध) ने ऐसा कहा:— "हे धनी गृहस्थ! वास्तव में, रूप (रूप) के चिन्ह (निमित्त) वाले निवास (निकेत) के व्यापक बंधन (विसाराविनीबंध) को 'निकेतसारी (गृह-भटकने वाला)' कहा जाता है, इत्यादि। उन घरों (निकेत) को त्यागने के लिए उचित अभ्यास (पटिपदा) गृहस्थ जीवन (अनिकेतविहारो) है। अत्थपुच्चनं का अर्थ है: किसी मित्र (कल्याणमित्त) के पास जाने के बाद, जो अच्छे कर्म (कुशल) इत्यादि या स्वाभाविक (सभाव) सत्य के लाभकारी अर्थ (अत्थ) के बारे में पूछना चाहता है, वर्तमान (दित्तधम्मिका) कल्याण (अत्थ), भविष्य (संपरायिक) कल्याण और परम (परम) कल्याण जैसे विभिन्न विषयों के बारे में पूछना। (धम्म) कहते हुए: "आदरणीय महोदय! अच्छा कर्म (कुसला) क्या है? निष्पाप (अनावज्जा) क्या है?" इत्यादि। पदक्खिण कम्मं का अर्थ यह है: यद्यपि यह प्रश्न पूछने के बाद, अपने उपदेश (ओवादा) पर आत्मनिर्णय (आशिष्ठान) और धार्मिक रूप से (सम्मा) उचित अभ्यास

(पटिपत्ति) किया जाता है। यहाँ भी, “साधु (अच्छा)” शब्द (पद) द्वारा व्याख्या की जानी चाहिए (योजेतब्बं)। एतं सामञ्ञं का अर्थ इस प्रकार है:— यही भिक्षुत्व (सामञ्ञं) है, यही भिक्षु होने की अवस्था (समणभावो) है, जो श्रवण (यंसुतं) है, जो अभ्यास (चरितं) भी है, जो फिर से गृहस्थ जीवन (अनिकेतविहारो) है, जो लाभकारी अर्थ (अत्थ) का प्रश्न पूछना (अत्थ) है, और जो कहे गए (वुत्तं) का सही ढंग से पालन करना (यञ्च पदक्खिण कम्म) भी है, जैसे “साधु सुतं (सुनना अच्छा है)” इत्यादि। क्योंकि इस उचित मार्ग या अभ्यास (पटिपदा) के माध्यम से ही भिक्षु होने की अवस्था (समणभाव) प्राप्त होती है, किसी अन्य तरीके से नहीं, इसलिए, “सामन्नं (भिक्षुत्व);” इस प्रकार,सही मार्ग (मग्गफल) के फल की प्राप्ति का विशेष शब्द (अधिवचन) स्पष्ट रूप से (निप्परियायतो) है। वैकल्पिक रूप से, यह उचित मार्ग (पटिपदा) है जो निश्चित रूप से सत्य (अपण्णक) है; ऐसे व्यक्ति को यह भिक्षुत्व (सामञ्ञ) उचित रूप से प्राप्त होता है (संभवति)। इसे दर्शाने के लिए कहा गया है: "स्किआचनस, एक चिंतामुक्त अरहंत का।" जो संचय नहीं करता (अपरिग्गहक), जिसका खेतों, हिरण्य और सुवण्य गुणों के सोने, पुरुष और स्त्री दासों आदि को हर तरफ से हड़पने (परिग्गह) और स्वीकार करने (पटिग्गह) से कोई संबंध नहीं है (रिहित); यही अर्थ है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा कुमापुत्त का

तैयार है।

*********oOo*********
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(37): कुमा के बेटे का मित्र

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (37) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
37. कुमा के पुत्र का मित्र
बुद्ध युग में वेलुकाण्ड नगर में एक धनी परिवार में पुनर्जन्म लेकर सुदंत नाम से जन्मे (कुछ लोग उन्हें वासुलोकी भी कहते हैं), वे कुमा के पुत्र के प्रिय मित्र बन गए। जब कुमा ने संसार त्यागकर संन्यास ग्रहण किया, तो उन्होंने सोचा, 'कुमा के पुत्र ने जिस धर्म को अपनाया है, वह कोई साधारण धर्म नहीं है।' इसलिए वे भगवान (बुद्ध) का प्रवचन सुनने गए। इससे उनके मन में और भी तीव्र इच्छा जागृत हुई और उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश कर लिया। वे कुमा के पुत्र के साथ सीमावर्ती पहाड़ियों पर धार्मिक अनुष्ठानों में लीन होकर रहने लगे।

उस समय विभिन्न क्षेत्रों में भ्रमण कर रहे कई भिक्षु (साधु) आते-जाते उस स्थान पर ठहर गए, जिससे काफी शोरगुल हो गया। सुदंत की एकाग्रता भंग हो गई और उन्होंने अपनी इस विपत्ति को अपने विचारों को शांत करने का साधन बनाकर यह श्लोक कहा:

[37] नानाजनापदं यंति विकारान्तो असंन्याताा॥
समाधिओ च विरोधेन्ति किसु रथचरीया करिस्सति॥
तस्मा विनेय्य सरंभं झायेय्य अपुरक्खतोऽ ति.॥॥

[37] वे अनेक क्षेत्रों में इधर-उधर भटकते रहते हैं, अपने
चक्करों पर मन की परवाह किए बिना, और
मन की उचित एकाग्रता में बाधक होते हैं। वास्तव में,
इस सारी आवारागर्दी से क्या होगा? इसलिए यह उचित है कि शोरगुल को शांत किया जाए, और जो प्रसन्नतापूर्वक ध्यान करना चाहता है उसे परेशान न किया जाए।

[1] रट्ठंचारिया, शाब्दिक अर्थ, राज्य-भ्रमण; हमारे 'विश्व भ्रमण' का एक बुरा पूर्ववर्ती नहीं है। यह एक भिक्षु के कर्तव्यों का हिस्सा था, हालाँकि इसका दुरुपयोग या - कम से कम, जैसा कि यहाँ है - कुप्रबंधन होने की संभावना थी। रट्ठं शब्द छंद की दृष्टि से अनावश्यक है, लेकिन लय में गड़बड़ी जानबूझकर हो सकती है।

1.3-7[37] श्लोक पर टिप्पणी

कुमापुत्तसहायत्तरा

7.1. 'नाना जनपदं यंति' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कुमापुत्तसहाय का है। इसका उद्‌गम क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए अच्छे कर्म संचित किए, जिससे उन्हें इस और उस जन्म में बार-बार पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति मिली। आज से चौरानवे युग पहले, प्रतापी सिद्धार्थ के समय में, उनका पुनर्जन्म एक पारिवारिक घर में हुआ। ज्ञान की आयु प्राप्त करने पर, वे वन में गए, पेड़ों की कई डालियाँ और शाखाएँ काटीं, उनसे चलने की छड़ें (कत्तरयट्ठी) बनाईं और उन्हें भिक्षुओं के संगठन को भेंट कर दिया। अपनी संपत्ति के अनुसार अन्य पुण्य कर्म करने के कारण (यथा विभव), उनका पुनर्जन्म देवताओं के बीच हुआ और तब से वे उत्तम स्वरूप में (परिबत्तन्तो) चारों ओर विचरण करते रहे और वेलुकन्तक नगर में एक समृद्ध (इद्ध) परिवार में पुनर्जन्म लेकर इस बुद्ध के जन्म के समय प्रकट हुए। उनका नाम सुदंत था। कुछ लोग कहते हैं कि उनका नाम “वासुला” था। वे कुमापुत्त के साथी हिरण थे और जब वे घूम रहे थे तो उन्हें पता चला कि कुमापुत्त भिक्षु बन गए हैं और उन्होंने मन ही मन कहा, “निःसंदेह, वह आध्यात्मिक साधना (धम्मविनय), जिसमें कुमापुत्त भिक्षु बने हैं, किसी से कम नहीं है।” अपने साथी का अनुसरण करते हुए, वे स्वयं भी भिक्षु बनने की इच्छा रखने लगे और गुरु के समक्ष उपस्थित हुए। गुरु ने उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। उनकी भिक्षु बनने की इच्छा और भी प्रबल हो गई, वे भिक्षु बन गए और कुमापुत्त के साथ एक पहाड़ी के चारों ओर स्थित परियंत पब्बत में ध्यान (भावना) के विकास में लीन होकर रहने लगे। उस समय भी, कई भिक्षु विभिन्न क्षेत्रों (जनपद) में भ्रमण करते हुए उस स्थान के पास से गुजरे, जब वे यात्रा पर निकले और जब वे यात्रा से लौटे। इसी कारण वहाँ कोलाहल (अप्रलय) मच गया। यह देखकर थेरा सुदंता को पश्चाताप हुआ और उन्होंने मन ही मन कहा: “ये भिक्षु, बार-बार जन्म लेने से मुक्ति दिलाने वाली व्यवस्था (शासन) में भिक्षु बनकर, अपने क्षेत्रीय चिंतन (जनपद वितक्क) में लिप्त होकर, अपनी एकाग्रता (चित्तसमाधि) से वंचित रह जाते हैं।” उसी पश्चाताप को अपने मन को वश में करने के लिए मार्गदर्शक (अंकुसा) बनाकर, उन्होंने “नानाजनपदं यंति” श्लोक का उच्चारण किया।

31. वहाँ, नाना जनपदं का अर्थ है: विभिन्न संप्रदायों के जिले अलग-अलग और व्यक्तिगत रूप से (विसुं विसुं); काशी, कोसल आदि से मिलकर बने अनेक राज्य; यही अर्थ है। यन्ति का अर्थ है वे जाते हैं। विकारन्ता का अर्थ है: जिलों के भ्रमण पर भटकना, इस प्रकार के चिंतित विचारों (वितक्का) में लीन रहना: “क्या अमुक जिले में भोजन की पर्याप्त व्यवस्था है?; क्या वहाँ भिक्षा आसानी से उपलब्ध है? क्या अमुक जिला सुरक्षित और रोगमुक्त है?” इत्यादि। असञ्ञता का अर्थ है मानसिक रूप से अनियंत्रित होना, क्योंकि जिलों के बारे में मन की उसी व्यस्तता (वितक्का) को त्याग नहीं पाया है। समाधिं च विराधेन्ति का अर्थ है; वे दीक्षा (उपचार) और समाप्ति (अपना) दोनों प्रकार की समाधि (समाधि) से वंचित रह जाते हैं, जो सभी पारलौकिक सत्यों (उत्तरिमनुस्सधम्म) का मूल आधार है। व्याकरणिक अक्षर 'च' का अर्थ है धारणा या अनुमान (संभावना)। वे ध्यान (झायितु) करने के अवसर न मिलने के कारण उस समाधि (समाधि) से वंचित रह जाते हैं, क्योंकि वे विभिन्न क्षेत्रों में भटकते रहते हैं। इस कारण वे अधिगत (अधिगत) पर महारत (वसीभावनापदानेन) प्राप्त किए बिना ही बूढ़े होने लगते हैं। 'किं सु रट्ठचरिया करिस्सति' का अर्थ है: सु का अर्थ है एक अविकारी कण (निपात)। वह निंदा करते हुए कहते हैं: “ये विभिन्न क्षेत्रों में घूमने वाले, राज्य के आचरण (रट्ठचरिया) करने वाले भिक्षु क्या करेंगे? उन्हें इससे क्या लाभ होगा? यह तो सरासर लाभहीन है।” तस्मा का अर्थ है: क्योंकि विभिन्न क्षेत्रों में घूमना (देसंतरचरिया) भिक्षु के कल्याण (अत्थवहा) के लिए अनुकूल नहीं है; दूसरी ओर, वास्तव में (अपि च खो), क्योंकि वह सभी प्रकार की समृद्धि (संपत्तिनं विराधनतो) से वंचित है, यह उसके हित (अनत्थवहा) के लिए हानिकारक है; इसलिए। विनेय्य सारम्भं का अर्थ है: निवास स्थान में उत्पन्न मानसिक विकृति (चित्तसमकिलेसं) के क्रोध (सारम्भं) को, जो कि अप्रसन्नता (आरति) के रूप में प्रकट होता है, उचित (तदनुरूप) सावधानीपूर्वक विचार (पटिसंखाना) द्वारा दूर (विनत्वा) और शांत (वूपसमेत्वा) करना। झाय्य का अर्थ है: दो प्रकार के ध्यान से ध्यान करना चाहिए: (1) इंद्रिय-विषय (आरम्मण) पर चिंतन (उपनिज्जान) और (2) गुणों (लक्खण) पर चिंतन। अपुरक्खतो का अर्थ इस प्रकार है:— न तो बुरे विचारों (मिच्छावितक्क) और न ही तृष्णा (तन्हा) आदि से प्रेरित होकर (पुरक्खतो); अतः, उनके निर्देशों का पालन किए बिना (वसं) व्यक्ति को केवल अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए; यही इसका अर्थ है। यद्यपि, इस प्रकार कहने के बाद, थेरा ने उसी पश्चाताप (संवेग) को अपना मार्गदर्शक (अंकुसा) बनाया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः, अपदान में यह कहा गया है:—

जंगल में प्रवेश करने के बाद और

मैंने बांस काटा, फिर कई सहारे बनाए।

(आलंबन) और उन्हें अर्पित किया

भिक्षुओं का संगठन।

सदाचारी लोगों को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद

(सुब्बाटा) और समर्थन की पेशकश करने के बाद

मैं उत्तर दिशा की ओर मुख करके उनके पास से चला गया।

यह 94 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब जबकि मैंने उन्हें छड़ें भेंट कीं: मैं करता हूँ

मुझे किसी भी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यही है

दंडदान (डंडदान) का फल।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

31,7. इस थेरा ने अपने हृदय में उस परिस्थिति (अत्थ) को संजोकर रखा, जिसने उन्हें अरहंतत्व प्राप्त करने में लाभकारी मार्गदर्शक शक्ति प्रदान की, और अरहंतत्व प्राप्त करने के बावजूद, उन्होंने "नाना जनपदं यन्ति" से शुरू होने वाले इस श्लोक का उच्चारण किया। अतः, वही श्लोक उनके अरहंतत्व (अञ्ञा) का स्पष्टीकरण (व्याकरणं) बन गया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा कुमापुत्तशय का

तैयार है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(38):गवमपति

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (38) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
38. गवमपति

उनका पुनर्जन्म इस बुद्ध युग में थेरा यासा के चार गृहस्थ साथियों में से एक के रूप में हुआ, जिन्होंने यासा के त्याग के बारे में सुनकर उनका अनुकरण किया और अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। [1] इसके बाद वे साकेता के अंजन वन में रहने लगे और [43] निर्वाण के आनंद का अनुभव किया। उस समय भगवान बुद्ध भी भिक्षुओं के एक बड़े समूह के साथ अंजन वन में आए, और आवास अपर्याप्त था, इसलिए कई भिक्षु सरभू नदी के रेतीले किनारों पर विहार के आसपास सो गए। [2] फिर आधी रात को नदी में बाढ़ आ गई और युवा भिक्षुओं में से एक बड़ा विलाप सुनाई दिया। यह सुनकर परम पूज्य बुद्ध ने आदरणीय गवमपति को बुलवाया और कहा: 'हे गवमपति, उफनती धारा को रोकिए और भिक्षुओं को शांति प्रदान कीजिए।' थेरा ने अपनी रहस्यमयी शक्ति से ऐसा ही किया और धारा को दूर रोक दिया, जिससे वह पर्वत शिखर की तरह खड़ी हो गई। तब से थेरा की शक्ति प्रसिद्ध हो गई। एक दिन जब भगवान (बुद्ध) एक विशाल सभा के बीच उपदेश दे रहे थे, तब उन्होंने गवमपति को देखा और संसार पर दया करते हुए उनके गुणों की प्रशंसा इस श्लोक में की:

[38] यो इद्धिया सरभूm1 अथपेसी॥
सो गवमपति असितो अनेजो॥
तं सब्बासंगतिगतं महामुनि॥
देवा नमस्सांति भावस्स परागुं ति.॥ ॥

[38] जिसने अपनी शक्ति से [3] सरभू को उठाया, जो आत्मनिर्भर और अविचल है,
जिसने हर बंधन को पार कर लिया है, गवमपति,
हे महान द्रष्टा, स्वयं देवता उसकी स्तुति करते हैं,
पुनर्जन्म से परे। [4]

[1] विनय ग्रंथ देखें, i. 110, और नीचे, CXXXII। गवाम्पति पर. संवाद भी देखें , ii. 373; साओय., वी. 436 ; कथावत्थु, पृ. 220.

[2] अयोध्या का वर्तमान शहर उस स्थान के एक कोने पर स्थित है जहाँ कभी बनारस से लगभग 100 मील उत्तर-उत्तर-पूर्व में स्थित साकेत का महान शहर हुआ करता था, जिसकी परिधि 24 मील थी। सरभू या सरयू नदी इससे होकर गंगा की सहायक नदी घरघरा में बहती है। देखें XXVIII.

[3] टीका में इद्दिया के बजाय वदन्ति (वे कहते हैं) लिखा है।

[4] भवास्स पारगुंग। गाथा का पूर्व आधा भाग त्रिष्टुभ का है, पश्चात भाग जगती छंद का है।

1.3-8[38] श्लोक पर टिप्पणी

गवमपतिथेरा
8.1. यो इद्धिया सरभुं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा गवमपति का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इकत्तीस युग (कप्पा) पहले, भगवान सिखि के दर्शन किए, वे श्रद्धावान हो गए और उन्हें पुष्प अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप वे दिव्य लोक में अवतरित हुए और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए उन्होंने कोणागमना मंदिर में एक छत्र और एक रेलिंग (वेदिका) बनवाई। उनका पुनर्जन्म तेजस्वी कस्सपा के समय एक परिवार में हुआ। उस परिवार में भी कई बैल-पालक (गोमंडल) थे। ग्वाले उनकी देखभाल करते थे। वे समय-समय पर वहाँ भ्रमण करते हुए खोजबीन (विचारेंतो) में लीन (युत्तपयुत्तं) रहते थे। एक रोगमुक्त अरहंत को गाँव में भिक्षा मांगने के बाद गाँव के बाहर एक निश्चित स्थान पर प्रतिदिन भोजन कराते देखकर, उन्होंने मन ही मन सोचा, "भगवान सूर्य की गर्मी से थक गए होंगे," और चार बबूल के वृक्ष स्थापित करवाए, उनके ऊपर बबूल की शाखाएँ रखीं, शाखाओं का एक मंडप बनाया और उसे अर्पित किया। कुछ लोग यह भी कहते हैं: "उन्होंने मंडप के पास एक बबूल का वृक्ष लगाया।" उन पर दया करके, थेरा प्रतिदिन वहाँ बैठ जाते थे। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे वहाँ से चले गए और चार महान दिव्य राजाओं के बीच स्वर्गलोक में पुनर्जन्म लिया। उनके स्वर्गलोक के द्वार पर एक विशाल बबूल का वृक्ष उग आया, जो उनके पूर्व कर्म का प्रतीक था, और सुंदर रंग और मीठी सुगंध से परिपूर्ण था, जो हमेशा अन्य फूलों को भी मात देता था। इसी कारण उस महल को "सेरिसाका" (बबूल) के नाम से जाना जाने लगा। वह दिव्य युवक दो बुद्धों के अंतराल (एकं बुद्धन्तरं) तक देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार जन्मों का भ्रमण करता रहा, और जब थेरा यासा, जिन्हें गवम्पति के नाम से जाना जाता था, प्रकट हुए, तो वह उनके चार गृहस्थ साथियों (गिहिसहाय) में से एक बन गया। जब उसे पता चला कि पूज्य थेरा यासा भिक्षु बन गए हैं, तो वह अपने साथियों के

साथ भगवान बुद्ध के पास गया। गुरु ने उसे सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। उपदेश के अंत में, वह अपने साथियों के साथ अरहंत बन गया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:

मैं पहले एक शिकारी था।

जो जंगल में इधर-उधर भटकता रहता था।

वहाँ मैंने निर्रचित बुद्ध प्रतिमा देखी।

अत्यंत कुशल व्यक्ति-

समस्त धर्मों की संतान।

हृदय से पवित्र और मन से प्रसन्न,

मैंने श्रद्धापूर्वक त्रुटिहीन पेशकश की

उस अत्यंत दयालु को फूल।

जो लोगों के कल्याण में आनंद लेते थे

सभी जीवित प्राणी।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने विशेष श्रद्धा प्रकट की है-

फूलों की विशेष भेंट।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

8.2. अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, थेरा ने मुक्ति के आनंद का पूर्णतः अनुभव करते हुए, साकेता में अंजना वन (घने काले रंग का वन) में निवास किया। उस अवसर पर, भगवान बुद्ध भिक्षुओं के एक बड़े समूह के साथ साकेता गए और घने वन (अंजनावन) में रहने लगे। वहाँ बैठने और सोने के लिए पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी। कई भिक्षु (भिक्षु) अपने मठ के किनारे बहने वाली सरभु नदी के रेतीले किनारे पर सोए। फिर, आधी रात को, जब नदी में बाढ़ आई, तो नौसिखिए और अन्य लोग बहुत शोर मचाने लगे। यह जानकर भगवान बुद्ध ने पूज्य गवम्पति को आदेश दिया: "हे गवम्पति! जलप्रलय (जलोघं) को नष्ट करके भिक्षुओं का जीवन सुखमय (फासु) बनाइए।" थेरा ने उत्तर दिया: "बहुत अच्छा, पूज्यवर!" और अपनी जादुई शक्तियों के बल पर उन्होंने नदी के प्रवाह को रोक दिया (नदीसोतं विक्खम्भी); वह नदी-धारा दूर से किसी पर्वत शिखर के समान प्रतीत होने लगी। तब से थेरा की शक्ति संसार में प्रकट हो उठी (पाकट)। बाद में, एक

दिन, गुरु ने थेरा को दिव्य प्राणियों की एक विशाल सभा में बैठकर सत्य (धम्म) का उपदेश देते हुए देखकर, संसार के प्रति करुणावश उनके गुणों को स्पष्ट करने के लिए उनकी स्तुति में "यो इद्धिया सरभूं" से शुरू होने वाला एक श्लोक कहा।

38. वहाँ, इद्धिया का अर्थ है दृढ़ संकल्प के साथ जादुई शक्तियों द्वारा। सरभूम का अर्थ है: उस प्रकार से नामित नदी; वह नदी जिसे संसार में "सरभू" कहते हैं। अट्ठपेसी का अर्थ है: (थेरा) पर्वत शिखर के समान ऊँचा जल का ढेर बनाकर, धारा को पीछे हटाकर, उसे आगे बढ़ने से रोककर रखा गया है। असितो का अर्थ है: अनासक्त, आसक्ति रहित (नासितो); लालसा (तन्हा) और गलत दृष्टिकोण (दिट्ठी) पर निर्भरता से रहित; या किसी भी बंधन (बंधन) से बंधा हुआ नहीं (अबाद्धो), क्योंकि उसने सभी बंधनों (संयोजन) को पूरी तरह से काट दिया है (समुच्चिन्न)। इसके बाद भी, विचलित करने वाले (एजा) दुराचार (किलेसा) के अभाव के कारण, अनेजो सो गवमपति, कि थेरा गवमपति भावहीन और शांत हैं; तं सब्बासंगतिगतं का अर्थ है: वह जो सभी आसक्तियों (संग) से मुक्त (अतिगत) हो गया है, क्योंकि वह स्थापित (ठित) हो गया है, कामवासना (राग), घृणा (दोष), मोह (मोह), अभिमान (मान), विधर्म (दिट्ठी) जैसी सभी आसक्तियों से परे (अतिक्कमित्वा) चला गया है; जो महामुनि (महान ऋषि) है, क्योंकि वह शिक्षार्थी के बाद का (असेक्खा) ऋषि (मुनि) है; इसके अलावा, जो व्यक्ति भावस पारगुं (अस्तित्व के पराक्रम को पार कर चुका) है, वह भी निर्वाण को प्राप्त कर चुका है, जो संपूर्ण अस्तित्व का पराक्रम है, जिसे इंद्रियजन्य, कर्मजन्य (कर्म) अस्तित्व आदि के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। देव नमस्सन्ती (दिव्य प्राणी) उनकी आराधना करते हैं; यहां तक कि दिव्य प्राणी भी उनकी पूजा करते हैं; और अन्य जीव भी।

38,1. श्लोक के अंतिम छोर पर जनसमूह के लिए सत्य (धम्म) की स्पष्ट समझ (अभिसामय) थी। थेरा ने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए "सत्थारं पूजस्सामि" से शुरू होने वाले इसी श्लोक का उच्चारण किया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा गवमपति के

तैयार है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(39):तिस्सा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (39) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
39. टिस्सा
उनका जन्म इसी बुद्ध युग में कपिलवस्तु में बुद्ध की मौसी के पुत्र के रूप में हुआ था और उनका नाम तिस्सा रखा गया था। [1] उन्होंने परम पूज्य (बुद्ध) का अनुसरण करने के लिए संसार त्याग दिया और एक वन बस्ती में रहते हुए, अपने पद के कारण अभिमानी हो गए, [44] चिड़चिड़े और आलोचनात्मक स्वभाव के कारण वे अपने कर्तव्यों का उत्साहपूर्वक पालन नहीं करते थे। तब एक दिन दोपहर में जब वे खुले मुँह सो रहे थे, तब भगवान (बुद्ध) ने दूर से दिव्य दृष्टि से उन्हें देखते हुए, एक तेजस्वी दिव्य स्वरूप के रूप में उनके ऊपर प्रकट होकर उन पर कृपा बरसाई और उन्हें इन शब्दों से जगाया:

[39] सत्तिया विया ओमाथो दयहामानोऽव मत्थके॥
कामरागप्पाहनाय सातो भिक्खु परिब्बजे' ति.॥॥

[39] जैसे कोई आसन्न तलवार से घायल होकर गिर जाता है,
जैसे किसी के बाल और पगड़ी जल उठते हैं, [2] वैसे ही भिक्षु, सचेत और सतर्क होकर,

सभी सांसारिक भावनाओं को पीछे छोड़कर आगे बढ़े।

जब थेरा ने यह सुना, तो उनका हृदय व्यथा से भर गया और वे अंतर्दृष्टि में लीन हो गए। यह देखकर, भगवान (बुद्ध) ने उन्हें 'थेरा तिस्सा का सूत्र' सिखाया, जो संयुत्त संग्रह में है। [3] इसके अंत में तिस्सा ने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। और ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार करने और भगवान (बुद्ध) का सम्मान करने के लिए, उन्होंने उसी श्लोक का उच्चारण किया।

[1] अर्थात, अमाता (अमृता) का पुत्र, शुद्धोदन की बहन।

[2] इस रूपक पर, सिस्टर्स, पृष्ठ 172, श्लोक 7 देखें। टीका में विभिन्न तलवार के घावों पर एक टिप्पणी है, लेकिन नैतिक शिक्षा बस तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता है, चाहे वह उपचार के लिए हो या बुझाने के लिए। श्लोक 1, 162 f देखें।

[3] संग्य., iii. 106. तिस्सा भिक्षुओं के समक्ष अपनी मानसिक सुस्ती और धर्म के प्रति अरुचि स्वीकार करता है। वे उसे भगवान (बुद्ध) के पास ले जाते हैं। प्रवचन, उपदेश सहित, उपरोक्त के अनुरूप है। धम्मपद कॉमी (i. 37) में उसे थुल्ला-तिस्सा (फत तिस्सा) कहा गया है। तुलना करें संग्य., i. 13.

1.4-9[39] श्लोक पर टिप्पणी

टिस्सा थेरा
9.1. 'सत्तिया विय ओमत्तो' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा तिस्सा का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करने और इस-उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों को संचित करने के बाद, उन्होंने भगवान तिस्सा के बोधि वृक्ष की पुरानी पत्तियों को हटाकर उसकी जड़ साफ की। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने जन्मों के चक्रों में विचरण करते रहे, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे कपिलवस्तु नगर में भगवान तिस्सा की बुआ (पितुच्छा) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उन्होंने भगवान बुद्ध से दीक्षा लेकर भिक्षु बनने का निश्चय किया, पूर्णतः दीक्षा ग्रहण की (उपसम्पन्नो), वन क्षेत्र में निवास किया, अपने उच्च जन्म पर अहंकारी (पटिच्च) हो गए और क्रोध, अशांति और अत्यधिक अपराधबोध से ग्रस्त होकर इधर-उधर भटकते रहे; उन्होंने भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करने का कोई प्रयास नहीं किया (समणधम्म)। फिर एक दिन, गुरु ने अपनी दिव्य दृष्टि से उन्हें उस स्थान पर मुख खुले हुए सोते हुए देखा (ओलोकेन्टो), जहाँ वे दिन में निवास करते थे (दिवाठान), श्रावस्ती से आकाश में आए, उनके ऊपर खड़े हुए, आकाश में अपनी प्रकाश किरण से उसे व्याप्त किया, उस प्रकाश किरण के माध्यम से उनकी बुद्ध की ओर जागरूकता जगाई (पटिबुद्धस्स) और उन्हें उपदेश देते हुए "सत्तिया विय ओमत्थो" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला।

39. वहाँ सात्तिया का अर्थ इस प्रकार है:— यह शब्द निर्देश (देसन) का शीर्षक है; धार (धार) को एक साथ (एकतो) आदि, चाकू जैसे हथियार से धारण करने के साथ; यही इसका अर्थ है। ओमाठो का अर्थ है प्रहार (पहटो)। वास्तव में, प्रहार या चोट (पहड़ा) के चार रूप हैं: - ओमाठो (नीचे से मारना), उम्मठो (ऊपर की ओर प्रहार), मठठो (चोट) और विमठो (विभिन्न प्रकार की चोटें)। वहाँ, ऊपर खड़े होकर, चेहरा नीचे की ओर करके दी गई चोट को नीचे की ओर मुख करके दी गई चोट (ओमाठ) कहा जाता है; नीचे खड़े होकर, ऊपर की ओर मुख करके दी गई चोट को ऊपर की ओर मुख करके दी गई चोट (उम्मठ) कहा जाता है; वह प्रहार जो आर-पार छेद कर गया (विनिविज्झित्वा), जैसे सुई (अग्गल-सूचि) उसे प्रहार (मठ) कहा जाता है; बाकी सभी प्रहारों को भी विभिन्न प्रकार के प्रहार (विमठो) कहा जाता है। इस संदर्भ में (ठाण), नीचे की ओर दिया गया प्रहार (ओमठो) ही प्रभावी माना गया है। वास्तव में, वह पूरी तरह से गंभीर (दारुणो) था, उसके शरीर में एक तीर लगा था जिसे निकालना मुश्किल था (दुरुद्धरणसल्लो), उसका इलाज करना मुश्किल था (दुत्तिकिच्को), वह आंतरिक रूप से दोषपूर्ण (अन्तोदोसो) था और उसके अंदर केवल मवाद और (खराब) रक्त भरा हुआ था (अन्तोपुब्बलोहितो); मवाद से बना रक्त बाहर नहीं निकला बल्कि घाव को घेरे रहा (वनमुख)। जो लोग मवाद से भरा रक्त निकालना चाहते हैं (निहारितुकाम), उन्हें रोगी को पलंग के साथ बांधकर सिर नीचे की ओर (अधोसितो) लिटा देना चाहिए। रोगी या तो मृत्यु के रूप में या उस हद तक कष्ट भोगते हैं। देहमाने का अर्थ है आग से जल जाना। मत्थके का अर्थ है सिर पर। यही कहा गया है:— जिस प्रकार चाकू से घायल व्यक्ति (सत्ति) नीचे की ओर मुंह करके (ओमत्तो) तीर निकालने (सल्लुब्बाहन) और अपने घाव को भरने (गणतिकिच्चन) के लिए प्रयास करता है, वैसी तैयारी (पयोग) करता है, अपना प्रयास (परक्कमति) लगाता है; जिस प्रकार सिर जलने से पीड़ित व्यक्ति उस आग को बुझाने के लिए प्रयास करता है, उसी प्रकार का उपक्रम (पयोग) करता है (तादिसं), ठीक उसी प्रकार एक भिक्षु को सजग (सतो), परिश्रमपूर्वक (अप्पमत्तो) और कामुक वासना (कामराग) से मुक्ति पाने के लिए अत्यधिक ऊर्जावान होकर जीवन व्यतीत करना चाहिए।

39.1. इस प्रकार, भगवान बुद्ध ने उस थेरा को उनके क्रोध और अशांति (उपायसा) को शांत करने के लिए उपदेश देते हुए, उनके एकांत में रहने के दौरान कामवासनाओं के त्याग (सीसेन) के विषय पर अपना उपदेश (देशनं) पूरा किया। इस श्लोक को सुनकर, थेरा हृदय से दुखी हुए और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विप्पसन) विकसित करने में तल्लीन (युत्तपयुत्तो) हो गए। उनकी प्रवृत्ति (अज्जासय) को समझकर, गुरु ने संयुक्तक में तिसत्थेरासुत्त का उपदेश (देसेसि) दिया। अतः, अपदान में कहा गया है:—

दोनों प्रकार के आनंद (यसा) का अनुभव करने के बाद

दिव्य जगत में और साथ ही मानवीय जगत में, मैं

उन्होंने अतुलनीय, शीतल निर्वाण प्राप्त किया।

अंत में भी।

वास्तव में, क्या हासिल करना मुश्किल है?

एक ऐसा व्यक्ति जिसने योग्यता और सम्मान उत्पन्न किया (पासवी)।

उस गुरु के बोधि वृक्ष की पूजा करने के बाद

इसे विशेष रूप से आवंटित करके (उद्दिसित्वाना)

स्वयंजागृत बुद्ध (स्वयं) को।

मैं आसव दोषों से मुक्त हूँ।

श्रेष्ठता प्राप्त कर निर्वाण में प्रवेश करना

(अधिको) दूसरों को अधिकार प्राप्त करने में सहायता करना

महान मार्ग (मग्गा), इसकी सफलता,

पिटकों को याद करने की क्षमता (आगमे)

साथ ही ध्यान और जैसे गुणों में भी।

उच्चतर ज्ञान (अभिञ्ञा)।

पहले मेरा मन आनंद से भरा रहता था।

(साफ़ किए हुए) सूखे पत्तों को फेंक दिया।

बोधि वृक्ष। (परिणामस्वरूप) मैं बन गया

हर तरह से इन गुणों से संपन्न

बीस गुण (अंग)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

39,2. हालाँकि अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने गुरु का आदर करने के लिए उसी श्लोक का उच्चारण किया, जिससे उनका अरहंत पद (अञ्ञा) प्रकट हुआ।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा टिस्सा का

तैयार है।

**********oOo*********
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(40):वद्धमना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (40) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
40. वड्ढमना
बुद्ध युग में वैशाली में एक लिच्छवी राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, वे एक धर्मनिष्ठ बालक के रूप में भिक्षु संघ के सेवक बन गए। बाद में, भिक्षु दीक्षा प्राप्त करने के बाद, वे भी आलस्य और सुस्ती के शिकार हो गए, और भगवान (बुद्ध) ने उन्हें इस श्लोक से जागृत किया:

[40] सत्तिया विया ओमाथो दैहमानोऽव मत्थके॥
भवरागप्पाहनाय सातो भिक्खु परिब्बजे' ति॥॥

[40] जैसे कोई आसन्न तलवार से ग्रस्त हो,
जैसे किसी के बाल और पगड़ी जल रहे हों,
वैसे ही भिक्षु सचेत और सतर्क होकर
आगे बढ़े, जीवन की सभी वासनाओं को पीछे छोड़ते हुए। [1]

[1] शाब्दिक रूप से, बनने का। satto के लिए sato पढ़ें।

1.4-10[40] श्लोक पर टिप्पणी

वट्टमना थेरा
10.1. 'सत्तिया विय ओमत्तो' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वद्धमान का है। इसका उद्‌गम क्या है? कहा जाता है कि पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करने के बाद, उन्होंने बानवे युग (कप्पा) पहले भगवान तिस्सा के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया और बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने भगवान तिस्सा को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे पुण्यभाव से भर गए और उन्हें टहनियों से तोड़े गए अच्छे पके आम (वण्ततो) भेंट किए। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने दिव्य लोक में पुनर्जन्म लिया और समय-समय पर पुण्य कर्मों को संचित करते हुए, वैशाली के लिच्छवी के राजपरिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का उदय हुआ। उनका नाम वद्धमान था। वयस्क होने पर, वे परम

श्रद्धा और भक्ति से परिपूर्ण दाता बन गए, दान देने में आनंद लेते थे और कर्म करने वाले के रूप में पुरोहितों की सेवा करते थे। जब गुरु द्वारा भिक्षापात्र को उलट देने जैसा अपराध किया गया, तो उन्होंने विनम्रतापूर्वक पुरोहितों से क्षमा मांगी, मानो वे आग पर चल रहे हों, अपने किए पर क्षमा प्राप्त की, पश्चाताप किया और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। हालांकि, भिक्षु बनने के बाद वे आलस्य और सुस्ती से ग्रस्त रहने लगे। उन्हें पश्चाताप कराने के लिए गुरु ने "सत्तिया विय ओमत्तो" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला।

40. वहाँ, भवरागप्पहानाय का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए: — अस्तित्व (भव) से आसक्ति (राग), भौतिक रूप (रूप) से आसक्ति (रूप) और निराकार (अरूप) से आसक्ति का त्याग करने के उद्देश्य से। बाह्य बंधनों (बहिद्ध संयोजन) को त्यागे बिना आंतरिक बंधनों (अज्जत्त संयोजन) का त्याग (पहान) संभव नहीं है, यदि ऐसा ही हो (यदि पि); हालाँकि, किसी भी मध्यस्थ (नानंतरिका) के अभाव में, ऊपरी भाग (उद्धम्भागीय) से संबंधित बंधनों को त्यागने का अर्थ निचले भाग से संबंधित बंधनों को भी त्यागने के समान है। वैकल्पिक रूप से, चूंकि यह संभव हो सकता है कि उच्चतर भाग के बंधनों को तोड़ना उन श्रेष्ठ आत्माओं के लिए कठिन हो जो निम्नतर भाग के सभी बंधनों को स्वयं काट चुकी हों। इसलिए, सहज त्याग के दृष्टिकोण से त्याग की उसी कठिनाई को दर्शाने के लिए, भगवान बुद्ध ने अस्तित्व से आसक्ति (भवराग) को त्यागने के शीर्षक (सीस) के साथ उच्चतर भाग के सभी बंधनों को भी त्यागने के बारे में बात की। वैकल्पिक रूप से (वा), यह बात थेरा की प्रवृत्ति (अज्जासय) के अनुसार इस प्रकार कही गई है। शेष उसी प्रकार है जैसा कहा गया है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा वड्डमना का

तैयार है।

चौथे पर टिप्पणी

अध्याय आ गया है

एक समाप्ति के लिए।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(41):सिरीवद्ध

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (41) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
41. सिरिवाढ
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म राजगृह में एक समृद्ध ब्राह्मण (पुजारी) के घर हुआ। पूर्व कारणों से प्रेरित होकर, जब राजा बिम्बिसार की मुलाकात भगवान (बुद्ध) से हुई, तो उन्होंने भिक्षु बनने का निश्चय किया और वे वेभार और पांडव पहाड़ियों के निकट एक वन में जाकर धार्मिक साधना में लीन हो गए। एक बार भयंकर तूफान आया और बिजली गुफा में घुस गई। लेकिन घने बादलों से आती हवा ने थेरा को परेशान कर रही गर्मी और बुखार को शांत कर दिया, जिससे अनुकूल तापमान के कारण उनका मन एकाग्र हो गया और वे ऐसी अंतर्दृष्टि प्राप्त करने में सक्षम हुए कि उन्हें अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त हो गया। अतः उन्होंने ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) का बहाना बनाकर अपने विषय में यह वाणी कही:

[41] विवरमनुपतन्ति विज्जुता वेभारस्सा च पाण्डवस्सा च॥
नागविवारागतो च झायति पुत्तो अप्पतिमस्सा ताडिनो' ति.॥ ॥

[41] चट्टानी गुफा में भी बिजली चमकती है,
वेभारा की चोटी और पांडव पर प्रहार करती है, [1] और, पर्वत की गोद में छिपा हुआ,
उस अतुलनीय भगवान (बुद्ध) का एक बच्चा
ध्यानमग्न परमानंद (समाधि/समाधि) में बैठा है।

[1] राजगृह (राजगीर) के ऊपर उठने वाली पर्वत श्रृंखलाओं में से दो शिखर। पूर्व में स्थित बैभारा या वैभारा (चित्र देखें) [संपादक?] के रूप में इसका पुराना नाम प्रचलित है। अंतिम पंक्ति में एक शब्द ' झायति' का विस्तार किया गया है, जिसका पाली भाषा में अर्थ 'जलना' और 'ध्यान में लीन होना' दोनों है । श्लोक 1, 167 देखें ।

1.5 पांचवां अध्याय

1.5-1[41] श्लोक पर टिप्पणी

सिरिवाड्ढ थेरा
1.1. विवरणमनुपतन्ति विज्जुत से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सिरिवद्ध का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, पुनर्जन्मों के चक्र से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय करते हुए, इनका जन्म भगवान विपस्सी के समय, आज से 91 युग (कप्पा) पहले एक परिवार में हुआ था। जब उन्होंने ज्ञान प्राप्त किया, तो उन्होंने देखा कि भगवान विपस्सी ने किंकणिका पुष्पों का आदरपूर्वक अर्पण किया। उस पुण्य कर्म के कारण, उनका जन्म दिव्य लोक में हुआ और पुण्य कर्म करते हुए, वे समय-समय पर अपने पुनर्जन्मों के चक्रों में भटकते रहे, परन्तु उत्तम देहों (सुगति) में, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका जन्म राजगृह में एक धनी ब्राह्मण के घर में हुआ। उनका नाम सिरिवद्धा था। वयस्क होने पर, बिम्बिसार की राजसभा और गुरु तथा उनके उत्तम धर्म के प्रति उनके मन में प्रेम जागा और वे भिक्षु बन गए क्योंकि उनमें विवेक उत्पन्न हुआ था। भिक्षु बनने के बाद, उन्होंने अपने प्रारंभिक कर्तव्यों का पालन किया और वेभारा और पांडव पहाड़ियों से कुछ ही दूरी पर स्थित एक वन क्षेत्र की पहाड़ी गुफा में मानसिक साधना (कम्मट्ठाना) में लीन हो गए। उसी समय, असमय वर्षा हुई। बिजली की लताएँ मानो पहाड़ी के द्वार से प्रवेश कर रही हों, इधर-उधर भटक रही थीं। ग्रीष्म ऋतु की गर्मी से व्याकुल (घम्मपरिलाह) थेरा के लिए वर्षा की हवा (मेघवात) के भंडार (सारगब्भ) से शीतलता प्राप्त हुई। अनुकूल मौसम मिलने पर उनका मन एकाग्र हो गया। मन शांत होने पर उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास में स्वयं को लीन कर लिया और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

सर्वज्ञ बुद्ध, नेता

दुनिया का, जिसका स्वरूप था

कीमती सोने का, सबसे प्रमुख प्रति-

सोनाज पानी में नीचे चला गया

उन्होंने झील में स्नान किया।

मैंने किंकानी के फूल तोड़े और

उन्हें विशेष रूप से विपस्सी पर रखा गया था;

मैं प्रसन्न मन और प्रसन्न हृदय से भरा हुआ था।

ऐसे बुद्ध के लिए जो सम्राट थे

दो पैरों पर चलने वाले मनुष्यों के बारे में।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने फूल भेंट किए हैं

दान; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी पुनरावलोकन है।

श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाने का परिणाम

बुद्ध को।

मैं राजा था, भीमराथ, संसार का स्वामी-

परम शक्ति का राजा, संपन्न

सत्ताईस युगों में सात रत्न

(कप्पा)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

1,2. हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "विवरमनुपतन्ति विज्जुता" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) की ओर इशारा करते हुए (पदेसा) अपने संबंध में आनंदमयी वाणी (अत्तसन्निस्सया) कही।

41. यहाँ vivaraṃ का अर्थ है बीच में (अंतरा), मध्य, केंद्र (वेमज्ज)। Anupatanti का अर्थ है प्रत्येक अक्षर में पतन (पता), वे चमकते हैं (पवत्तन्ति), वे तेज चमकते हैं (विज्जोतन्ति); यही अर्थ है। वास्तव में, उसी तेज चमक (विज्जोतना) को बिजली की चमक (विज्जुलता) कहा जाता है। यहाँ Anu का अर्थ व्याकरणिक रूप से जुड़े होने के कारण लोप भी है (सद्दओगेने): उदाहरण के लिए:— "रुक्खमनुविज्जोतं (वृक्ष समान रूप से चमक रहा है)।" विज्जुता का अर्थ है बिजली (सतेरता)। Vebhārassa ca paṇḍavassa ca का अर्थ है: वे वेभार पर्वत और पाण्डव पर्वत के खुलने (vivaramanupatanti) के अनुरूप गिरते हैं; अतः, यह व्याख्या है। नागविवरगतो का अर्थ है: पर्वत-गुफा, पर्वत (नाग) की दरार (विवर) के पास पहुँचा; झायति का अर्थ है: वह ध्यान के विषय (आरम्मणूपनिज्जान) पर चिंतन करते हुए और विशिष्ट चिन्ह (लक्कणूपनिज्जान) पर चिंतन करते हुए ध्यान करता है; वह स्वयं को शांत अवस्था (समथा) में लिप्त करके और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करता है। पुत्तो अप्पतिमस्स तादिनो का अर्थ इस प्रकार है: भगवान बुद्ध के सगोत्र पुत्र, ऐसे बुद्ध जो धर्म के सार से परिपूर्ण, नैतिक उपदेशों के समूह से युक्त, शारीरिक रूप से परिपूर्ण, अद्वितीय, उपमारहित, और वांछनीय एवं अवांछनीय मामलों में उत्कृष्ट गुणों से युक्त। यहाँ भी पुत्त शब्द से अरहंत पद का ही अर्थ है, और थेरा ने गुरु के अरहंत पद तक पहुँचने वाले पुत्र के रूप में उनकी स्थिति को प्रकाश में लाकर इसकी व्याख्या की है; इस प्रकार इसका अर्थ समझा जाना चाहिए।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा सुरिवाद्ढ का

समाप्त हो गया है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(42): खदिरा-वनिया (रेवता)

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (42) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
42. खदिरा-वानिया
(रेवत)
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म मगध राज्य के नालक गाँव में ब्राह्मणी रूपसारी के पुत्र के रूप में हुआ। जब वे बड़े हुए तो उनकी माता ने [46] उनका विवाह करने की इच्छा व्यक्त की, परन्तु उन्होंने सारिपुत्त [1] के त्याग के बारे में सुना और कहा: 'यदि मेरे बड़े भाई उपतिस्सा ने यह धन त्याग दिया है, तो मैं भी उसका त्याग कर दूंगा,' और वे भिक्षुओं के पास गए और स्वयं को 'धर्म के सेनापति' [2] का छोटा भाई बताकर भिक्षु दीक्षा का अनुरोध किया। बबूल के वन में अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त करने के बाद, [3] वे बुद्ध और उनके भाई को प्रणाम करने के लिए सावत्थी गए और कुछ दिन जेतवन में रहे। तब भगवान (बुद्ध), आर्यों की सभा में बैठे हुए, ने 'रेवत बबूल-वनवासी को वन भिक्षुओं (भिक्षुओं) में पहला स्थान दिया।' [4]

एक बार वह अपने पैतृक गाँव गए और अपने तीन भतीजों, अपने तीन शिष्यों, काला, उपकला और सिसूपकला के पुत्रों को ले आए। [5] जिनका नाम क्रमशः काला, उपकला और सिसूपकला था, और उन्हें भिक्षुत्व में दीक्षित किया। एक दिन थेरा बीमार पड़ गए, और सारिपुत्त ने यह सुना, और कहा: 'मैं रेवता की स्थिति और उपचार के बारे में पता लगाऊंगा।' और उन्हें दूर से आते देख, रेवता ने तीनों नौसिखियों को सावधान रहने के लिए कहा:

[42] काले उपाकाले शिशुपकाले॥
पतिसता नु खो विहारथा॥
अगतो वो वलान् विया वेधि' ति.॥॥

[42] आओ, काला, और तुम भी, उपकला, और शिशुकला, सावधान
रहो, क्योंकि जो तुम्हारे पास आता है वह
बाल-बाल बाँटने वाले अद्भुत धनुर्धर के समान है।

जब उन्होंने यह सुना तो नौसिखिए धम्म पथ के सेनापति से मिलने (भिक्षु बनने के लिए) चले गए, और जब वे उनके चाचा से बातचीत कर रहे थे, तो वे शांत और एकाग्र होकर पास बैठे रहे। जब वे उनके पास पहुँचे, तो वे उठ खड़े हुए, प्रणाम किया और खड़े रहे। थेरा ने उनसे पूछा कि वे किस विहार (मठ) में रह रहे हैं, और उन्होंने उत्तर दिया: 'ऐसे विहार में।' तब, लड़कों को उपदेश देते हुए उन्होंने कहा: 'मेरे छोटे भाई ने वास्तव में धम्म पथ के छोटे कर्तव्यों को सिखाया है,' और रेवता की प्रशंसा करते हुए वे चले गए।

[1] उपतिस्सा सारिपुत्त (अर्थात, सारी के पुत्र) से रूपसारी का संबंध , जो मुख्य थेरा थे, ध्य. कॉम., i. 88, और नीचे CCLIX में दिया गया है।

[2] सारिपुत्त की सामान्य उपाधि।

[3] खदिरा; चाइल्डर्स के अनुसार बबूल कत्था।

[4] एंग., i. 24. रेवता की लंबी कविता के लिए CCXLIV देखें।

[5] सिस्टर्स, भजन संहिता lix, lx, lxi देखें । टीका के अभाव में, डॉ. न्यूमैन ने मान लिया है कि पाठ में तीन पुल्लिंग संबोधन स्त्रीलिंग हैं, और रेवता अपनी बहनों को संबोधित कर रहे हैं। इन सभी नामों में Cāl- का उच्चारण Chāl- की तरह करें।

1.5-2[42] श्लोक पर टिप्पणी

खदिरावनिया थेरा

2.1. Cāleupacāle से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा खदिरवनीय रेवेता का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म हंसवती नगर में एक नदी पार कराने वाले नाविक के परिवार में, भगवान पद्ममुत्तरा के समय में हुआ था। गंगा नदी के पायागा घाट पर नाविक का काम करते हुए, एक दिन उन्होंने देखा कि भगवान बुद्ध अपने शिष्यों के साथ नदी के किनारे आ रहे हैं। वे श्रद्धा से भर गए, अनेक नौकाओं को संयोजित किया और उन्हें अत्यंत श्रद्धापूर्वक नदी के किनारे तक पहुँचाया। उन्होंने देखा कि गुरु ने एक भिक्षु को वनवासियों में सबसे आगे स्थान दिया है, और उन्होंने इस संबंध में एक मनोकामना की स्थापना की और भगवान बुद्ध और भिक्षुओं के समूह को एक बड़ा दान दिया। भगवान बुद्ध ने उनकी मनोकामना की सफलता की भविष्यवाणी भी की। इसके बाद, उन्होंने इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए अच्छे कर्म किए, अपने पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण किया और मगध राज्य के नालद गाँव में ब्राह्मण स्त्री रूपसारी के गर्भ में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनके माता-पिता उन्हें वयस्क होने पर गृहस्थी में बांधना चाहते थे। थेरा सारिपुत्त के भिक्षुत्व के बारे में सुनकर उन्होंने मन ही मन कहा, "मेरे बड़े भाई, भगवान उपतिस्सा ने इस धन का त्याग करके भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया है; मैं बाद में उनके द्वारा उगली गई लार के ढेर को कैसे निगल पाऊँगा?" उसे पश्चाताप हुआ, उसने अपने रिश्तेदारों को हिरण की तरह धोखा दिया, और अपने कर्मों की सफलता से प्रेरित होकर भिक्षुओं के समक्ष गया। उसने उन्हें बताया कि वह धम्म के सेनापति का सबसे छोटा भाई है और भिक्षु बनने की अपनी इच्छा से भी अवगत कराया। भिक्षुओं ने उसे दीक्षा दी और जब उसकी आयु बीस वर्ष पूरी हो गई, तो उसे पूर्ण दीक्षा दी और उसे मानसिक अभ्यास करने का कार्य सौंपा। उन्होंने मानसिक अभ्यास का अपना कार्य एकत्रित किया, बबूल (खदिरा) के वन में प्रवेश किया और मन ही मन यह कहते हुए कि – "अरहंत बनने पर मैं भगवान बुद्ध और धर्म के सेनापति दोनों के दर्शन करूँगा," निरंतर प्रयास किया (घटेंतो वायामंतो)। कुछ ही समय में वे छह प्रकार के उच्च ज्ञान से युक्त अरहंत बन गए, क्योंकि उनकी बुद्धि (ज्ञान) सर्वांगीण परिपक्वता तक पहुँच गई थी। अतः अपदान में कहा गया है:

भागीरती नामक नदी ने अपना उद्गम स्थल बनाया।

हिमावंता (हिमालय) से प्राप्त स्रोत; मैं एक नाव था-

एक आदमी खतरनाक नदी पार करने की जगह पर था; मैंने बनाया

मेरा निकटवर्ती तट (ओरिमे) पर पारगमन।

नेता पदुमत्तरा, स्वयं-

जागृत बुद्ध, सबसे उत्कृष्ट

दो पैरों पर चलने वाले मनुष्य, पास आए

नदी के किनारे, साथ ही साथ

एक लाख शक्तिशाली शिष्य

(वसी).

कई नावें एकत्र करने के बाद, अच्छी तरह से-

बढ़ई द्वारा बनाया गया, मैंने सेवा की

पुरुषों में श्रेष्ठ (नरासभ)

नाव के लिए छत बनाकर।

स्वयंजागृत बुद्ध भी आए।

और उस नाव पर सवार;

मास्टर बीच पानी में खड़ा था

उन्होंने ये छंद कहे;

जिसने स्वयंजागृत को भेजा

बुद्ध और साथ ही दोषमुक्त पुरोहित

ईश्वरीय वचन में आनंद लेंगे

उस धार्मिक भावना का विवरण।

एक दिव्य उत्पत्ति होगी

आपके लिए एक आलीशान हवेली, अच्छी तरह से निर्मित

जहाज की आकृति; आकाश में एक फूल

क्या कभी आपके ऊपर छाता रखा जाएगा?

इसके बाद अट्ठावन युग (कप्पा) बीत चुके हैं, एक

योद्धा-राजकुमार (खटिया) नामित

तारका, तुम एक विश्व बन जाओगे

वह राजा जिसने (भूमि पर) विजय प्राप्त की थी

चार दूरस्थ सीमाओं (चतुरंता) के साथ।

सत्तावन युगों (कप्पा) के बाद, एक

कैम्मका नाम का खटिया, महान का

जोश (महाबलो) चमकेगा

उगते सूरज की तरह।

एक लाख युगों बाद,

ओक्काका परिवार के बाहरी घेरे से, जिसे इस नाम से जाना जाता है

गौतम का कुलनाम बन जाएगा

विश्व का गुरु।

मृत्यु के बाद

तैंतीस का स्वर्गीय निवास

वह एक इंसान बनने जा रहा है; जिसे जाना जाएगा

रेवेटा नाम से, वह बन जाएगा

एक ब्राह्मण, ब्रह्मा का संबंधी।

घर से बाहर आने के बाद-

रुको, वह भिक्षु बन जाएगा

भगवान की व्यवस्था

गौतम, उज्ज्वल आधार द्वारा प्रेरित होकर

(सुक्कमूला).

बाद में, भिक्षु बनने के बाद,

प्रयास में गंभीर (युत्तयोगो) और

वह आत्मनिरीक्षण में निपुण (विपस्सको) है।

रोगग्रस्त (आसव) होने के कारण

सर्वांगीण सफलता के बाद निर्वाण में प्रवेश करें

कैंकर के बारे में ज्ञान (परिञा)।

मेरी मेहनत जुते हुए बैल के समान है।

(धूराधोरैहा) ले जाना (अधिवाहन)

सर्वोच्च सुरक्षा की ओर

पूर्ण शांति (योगक्खेमा); मैं सहन करता हूँ

मेरे अंतिम शरीर (एंटीमा देहा) में-

आत्मजागृत बुद्ध का प्रतिफल।

मेरे द्वारा किया गया कार्य एक लाख-

रेत ने (युगों पहले) अपनी फलदायी क्षमता दिखाई।

मुझे यहाँ परिणाम मिला; जो अच्छी तरह से मिलता-जुलता है-

तीर की गति से छोड़ा गया; मेरी दुराचार

(किलेसा) जल गया था।

इसके बाद, जो ऋषि गए थे...

दुनिया का अंत (लोकंतगू)

मुझे जंगल का शौकीन देखकर,

बुद्धिमान (महामति) ने मुझे प्रमुख घोषित किया

वन में रहने वाले भिक्षु।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

2.2. छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनने के बाद, थेरा ने अपने पलंग को छोड़ा (सेनासनं संसामेत्वा), अपना कुंड और वस्त्र धारण किया ताकि वे गुरु और धर्म के सेनापति को प्रणाम कर सकें, समय रहते सावत्थी पहुँचे, जेतवन में प्रवेश किया, गुरु और धर्म के सेनापति को प्रणाम किया और कुछ दिनों तक जेतवन में रहे। तब, गुरु ने श्रेष्ठ (आर्य) समूह (गण) के बीच बैठकर उन्हें वनवासी भिक्षुओं (अरञ्चक भिक्षु) में सबसे आगे बिठाते हुए कहा: — "हे भिक्षुओं! यह मेरे वनवासी शिष्य भिक्षुओं में प्रमुख है, अर्थात् यह रेवत बबूल वनवासी (खदिरवणीय) है।" इसके बाद, वे अपने पैतृक गाँव गए और अपने तीन भतीजों - काला, उपाकाला और सीसूपच्चाला - को साथ लाए, उन्हें भिक्षु बनाया और उन्हें मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) सौंपा। वे वहाँ रहने लगे, मानसिक साधना में लीन हो गए। उसी समय, थेरा को एक विशेष रोग हो गया। इसके बारे में सुनकर थेरा सारिपुत्त रेवता के पास गए और मन ही मन कहने लगे, "मैं रोग के बारे में भी प्रश्न पूछूंगा और अधिगम (प्राप्ति) के बारे में भी।" थेरा रेवता ने धर्म के सेनापति को पीछे से आते हुए देखा और नौसिखियों (सतुप्पा-दान) को सचेतनता (सतुप्पा-दान) उत्पन्न करने के उद्देश्य से "काले उपाकाले" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला।

42. वहाँ, Cāle Upacāle Sīsūpacāle का अर्थ है उन्हें पुकारना या संबोधित करना। वास्तव में, वे तीनों बालक, जिन्हें स्त्रीलिंग नाम "Cālā, Upacālā और Sīsūpacālā" दिए गए थे, यद्यपि उन्होंने संसार त्याग दिया था और संन्यासी बन गए थे, फिर भी उन्हें इसी नाम से पुकारा जाता रहा। विद्वान यह भी कहते हैं: "उनके नाम 'Cālī, Upacālī और Sīsūpacalī' थे।" लाभप्रद (अत्थ) दर्शाने के लिए, "Cāle" से शुरू होने वाला ऐसा संबोधन किया जाता था। यह दर्शाने के लिए उन्होंने कहा:— "Patisstā nu kho viharathā (क्या तुम उचित रूप से सचेत होकर निवास करते हो?)" और वहाँ की परिस्थिति (कारणं) के बारे में कहा:— "Āgato vo vālaṃ viya vechi (तुम्हारे लिए बाल-फाड़ करने वाले के समान कोई आया)।" Patissatā का अर्थ है जो उचित रूप से सचेत (patissatikā) हैं। Kho का अर्थ है ध्यान आकर्षित करना, ज़ोर देना। Āgato का अर्थ है वह आया। Vo का अर्थ है तुम्हारा, तुम्हारे लिए। Vālaṃ viya vedhī का अर्थ है बाल-फाड़ करने वाले के समान; वास्तव में, यहाँ इसका संक्षिप्त अर्थ यह है:— वहाँ और यहाँ थेरा, तुम्हारे (बड़े) चाचा, गुरु के समान, बाल-फाड़ करने वाले के समान, अपने तीक्ष्ण, तीव्र और मर्मस्पर्शी ज्ञान के कारण आए; इसलिए, आपको नवदीक्षित भिक्षु होने की अपनी अनुभूति को जगाते हुए, सजगता और सावधानी (संपजाञ्ञा) में लीन रहना चाहिए। "आपको अपनी सिद्धि के अनुरूप निवास करने में तत्पर रहना चाहिए।"

42.1. उस श्लोक को सुनकर, उन नौसिखियों ने धर्म के सेनापति का स्वागत आदि किया और अपने दोनों चाचा थेरों के बीच चल रही बातचीत के दौरान एकाग्रचित्त (समाधि) में लीन होकर उनसे कुछ दूरी पर बैठ गए। धर्म के सेनापति ने थेरा रेवता से बातचीत करने के बाद अपने आसन से उठकर उन नौसिखियों के पास गए। चूंकि उन्होंने भी समय सीमा के भीतर ही अपना कार्य पूरा कर लिया था, इसलिए जब थेरा उनके पास आए, तो वे उठ खड़े हुए, उन्हें प्रणाम किया और खड़े रहे। थेरा ने पूछा, “तुम सब किस प्रकार का जीवन जीते हो?” जब तीनों ने एक ही बात कही, तो उन्होंने थेरा की प्रशंसा करते हुए विदा ली, “यहाँ तक कि बालकों ने भी, जब मेरे छोटे भाई ने उन्हें इस प्रकार अनुशासित किया, तो उन्होंने वास्तव में सत्य के अनुसार अपने धर्ममय जीवन को व्यवस्थित किया।”

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा खदिरावनिया का

तैयार है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(43):सुमंगला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (43) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
43. सुमांगला
उनका पुनर्जन्म बुद्ध युग में सावत्थी के निकट एक छोटे से गाँव में एक गरीब परिवार में हुआ। बड़े होकर उन्होंने खेतों में काम करके अपना जीवन यापन किया, उनके पास एक छोटी सी हंसिया, हल और कुदाल थी। एक दिन जब कोसल के राजा पसेनुदी भगवान बुद्ध और भिक्षु संघ को एक बड़ा दान दे रहे थे, तो वे लकड़ी का काम करने वाले पुरुषों के साथ दूध और मक्खन लेकर गए। भिक्षुओं और भिक्षुणियों को दिए जा रहे सम्मान और आदर को देखकर उन्होंने सोचा, 'ये शाक्य भिक्षु सुरक्षित आवासों और सुंदर वस्त्रों में रहते हैं - अगर मैं भी अब संसार छोड़कर भिक्षु बन जाऊं तो क्या होगा?' और वे एक महान थेर के पास गए और उन्हें अपनी इच्छा बताई। थेर ने करुणावश उन्हें स्वीकार किया और उन्हें एक अभ्यास देकर जंगल में भेज दिया। लेकिन एकांत में वे व्याकुल और दुविधा में पड़ गए और अपने पैतृक गाँव लौट गए। फिर आगे बढ़ते हुए उन्होंने देखा कि किसान गर्म हवाओं से उड़ती धूल से सने गंदे वस्त्रों में खेतों की जुताई कर रहे हैं। और उन्होंने सोचा: 'सचमुच ये लोग बड़ी तकलीफों में अपना जीवन यापन करते हैं!' और चिंतित होकर, उनकी अंतर्दृष्टि परिपक्व होने लगी, तो उन्होंने अपने दिए गए अभ्यासों को करने का निश्चय किया, एक पेड़ की जड़ों में गए और एकांतवास में रहे। इस प्रकार अंततः उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, जीवन के दुखों से अपनी मुक्ति (निर्वाण) का जश्न मनाने के लिए, उन्होंने यह गाथा सुनाई:

[43] सुमुत्तिको सुमुत्तिको साहू सुमुत्तिकोम्ही तीहि खुज्जाकेहि॥
असितासु मया नंगलसु मया कुड्डालसु1 मया॥
यदिपि इधमेव इधमेव अथवा पि आलमेव आलमेव॥
झाया सुमंगला झाया सुमंगला अप्पमत्तो विहार सुमंगला' ति.॥ ॥

[43]
मैं इन तीन टेढ़े-मेढ़े कामों और औजारों से पूरी तरह छुटकारा पा चुका हूँ, पूरी तरह छुटकारा पा चुका हूँ, हे उत्तम रूप से छुटकारा पा चुका हूँ,
तुम्हारी हंसियाओं से कटाई से छुटकारा पा चुका हूँ,
हलों से काम करने से छुटकारा पा चुका हूँ, और
इन तुच्छ छोटे फावड़ों पर झुकने से अपनी पीठ से छुटकारा पा चुका हूँ।

यद्यपि वे हमेशा यहाँ रहें, हाँ, हमेशा यहाँ रहें,
बस बहुत हो गया, मैं कहता हूँ, मेरे लिए, बस!
जाओ ध्यान करो, सुमंगल, हाँ, जाओ
और ध्यान करो, सुमंगल, और
गंभीर और मेहनती बने रहो, सुमंगल! [1]

[1] यह विचित्र और जोशीला छंद चार पंक्तियों में फैला है, इसमें कोई निश्चित लय या समरूपता नहीं है, और ऐसा प्रतीत होता है कि यह वाल्ट-व्हिटमैन की शैली में एक किसान भिक्षु (साधु) द्वारा अपनी भावनाओं की खुरदरी अभिव्यक्ति को दर्शाने का प्रयास है। इस प्रकार, यह अत्यंत रोचक है, और सादगी और जीवंतता में मुत्ता (बहनें , भजन 11) के छंदों से मेल खाता है, जो स्वयं साधारण परिस्थितियों से थीं और अपने तीन विशेष कुटिल चीजों - पति, चक्की और मथनी - से छुटकारा पाकर प्रसन्न थीं।

1.5-3[43] श्लोकों पर टिप्पणी

सुमंगला थेरा
3.1. सुमुत्तिको से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुमंगला का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा करते हुए, इस और उस जन्म के चक्रों से मुक्ति पाने के लिए पुण्य अर्जित किया और भगवान सुद्धत्थ के समय वृक्ष-देवता के रूप में प्रकट हुए। एक दिन, उन्होंने स्नान के बाद एक ही वस्त्र धारण किए खड़े गुरु को देखा, प्रसन्न हुए और अपनी कोहनियों को ताली बजाई। इस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने जन्म-जन्मों के चक्रों में विचरण करते रहे, और इसी कर्म के फलस्वरूप एक निर्धन परिवार में पुनर्जन्म लिया, जो उस समय सावत्थी से कुछ ही दूरी पर स्थित एक गाँव में हुआ था जब इस बुद्ध का जन्म हुआ था। उनका नाम सुमंगला था। वयस्क होने पर उन्होंने एक किसान के रूप में अपना जीवन व्यतीत किया, उनके औजारों में हल का एक साधारण फाल और एक कुदाल था। एक दिन, जब राजा पसेनदी कोसल द्वारा भगवान बुद्ध और भिक्षुओं को एक बड़ा दान दिया जा रहा था, तब उन्होंने दान देने के लिए सामग्री एकत्र की और दूध से भरा एक बर्तन लेकर उन लोगों के साथ आ गए जो उस महान राजदान में जा रहे थे। भिक्षुओं को दिए जाने वाले सम्मान और श्रद्धा को देखकर उन्होंने मन ही मन सोचा, "ये भिक्षु, शाक्य वंश के पुत्र, उत्तम वस्त्र धारण किए हुए, अच्छे भोजन का आनंद लेते हुए, वायु रहित मठों में निवास करते हैं; क्या यह अच्छा नहीं होगा कि मैं भी भिक्षु बन जाऊं?" यह कहकर वे एक महान थेर के पास गए और उन्हें भिक्षु बनने के अपने इरादे के बारे में बताया। उस थेरा ने उस पर दया करके उसे भिक्षु बना दिया और उसे मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) का ज्ञान दिया। वन में निवास करते हुए वह अकेलेपन से ऊब गया, असंतुष्ट (उक्कण्टितता) हो गया और संघ को त्यागने की इच्छा से अपने रिश्तेदारों के गाँव चला गया। रास्ते में उसकी मुलाकात दलदली भूमि (कच्छं) को तैयार (बंधित्वा) कर रहे किसानों से हुई, जो खेत जोत रहे थे, गंदे वस्त्र पहने हुए थे, उनके शरीर चारों ओर की धूल से सने हुए थे, हवा और गर्मी से पीड़ित थे। उसे उचित पश्चाताप हुआ और उसने मन ही मन कहा: "वास्तव में, इन प्राणियों को अपने जीवन के अनुरूप दुख भोगना ही पड़ता है (जीवक निमित्तं)। उसके निकट (उपत्थासि) ऐसा मानसिक अभ्यास (कम्मत्थान) था जो उसने अपने ज्ञान (ज्ञान) के कारण एकत्रित किया था। वह एक वृक्ष की जड़ की ओर गया, उचित एकांत प्राप्त किया और बुद्धिमानी से एकाग्र हो गया। (योनिसो), ने शुद्ध अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और श्रेष्ठ सही मार्ग (मग्गपटिपातिया) के क्रम में अरहंत पद प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"उत्कृष्ट विजेता अत्थादस्सी,

दुनिया का सबसे बुजुर्ग, बैल

पुरुषों के बीच, विशेष रूप से बाहर आने के बाद

मठ से निकलकर झील की ओर बढ़े।

स्नान करने और पानी पीने के बाद

जल का, स्वयंजागृत बुद्ध

झील से एक ही बार में ऊपर आया

वस्त्र। भगवान स्वयं खड़े थे।

वे अलग-अलग दिशाओं में देख रहे हैं।

मैं अपने महल के पास पहुँचा और मैंने देखा कि

दुनिया का नेता। मुझे खुशी हुई और

उस समय मेरे प्रसन्न मन के साथ,

मैंने अपनी कोहनियों से ताली बजाई।

मैं नृत्य में व्यस्त था (पयुट्टो)।

और गायन, साथ ही पांच रूपों

संगीत वाद्ययंत्रों का, शानदार ढंग से

सूर्य के समान चमकने वाला (सतरंसी),

चमकीला, सोने जैसा भी।

मैं जिस भी अस्तित्व में पुनर्जन्म लेता,

चाहे वह दिव्य हो या मानवीय, मैंने उसमें भाग लिया।

सभी प्राणियों पर विजय प्राप्त करना; मेरी प्रसिद्धि थी

प्रचुर।

हे सुसंस्कृत पुरुष! मैं आपकी बहुत प्रशंसा करती हूँ।

हे परम पूज्य, मेरी श्रद्धा आपके प्रति है।

बहुत बढ़िया व्यक्ति!

हे ऋषि, आप स्वयं संतुष्ट हैं।

दूसरों को संतुष्ट किया।

अपनी चीजों पर बैठने के बाद

(परिगाहे), नेक बनाया

आनंदमय (हासा) और सेवा प्राप्त

मैं स्वयंजागृत बुद्ध था

तुसिता स्वर्ग में पुनर्जन्म।

सोलह सौ युग (कप्पा) पहले

अब से मैं दो, नौ और एक हो गया

विचार-विमर्श (द्विनावा एक सिंटिटा)

विश्व के राजाओं के पास शक्तिशाली सेनाएँ थीं

और सात रत्नों से सुसज्जित।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

3,2. हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "सुमुत्तिको" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने अपनी समृद्धि और दुख (दुक्खा) से उत्कृष्ट मुक्ति (विमुक्ति) की घोषणा करते हुए आनंदमयी वाणी का उच्चारण किया।

43. वहाँ, सुमुत्तिको का अर्थ इस प्रकार है:— वह व्यक्ति जिसे स्वतंत्रता (मुक्ति) प्राप्त है, जो अस्तित्वहीनता की स्थिति है, वह उत्कृष्ट (संदारा) और पूर्णतः (अच्चंतिकताय) है; अतः, सुमुत्तिको (एक भली-भांति मुक्त व्यक्ति)। उसने अपनी उंगलियाँ चटकाते हुए कहा, "सुमुत्तिको, क्योंकि वह स्पष्ट स्वतंत्रता (विमुक्ति) प्रशंसनीय और अद्भुत (अच्चरिया) थी।" फिर वहाँ अपनी उत्कृष्ट मुक्ति (विमुक्ति) में, अपनी सुखद धार्मिकता (पसादा) की दृढ़ता (दलभाव) को दर्शाने के लिए, उसने इस प्रकार कहा: "साहु सौमुत्तिकोऽम्हि (शाबाश! मैं उत्कृष्ट रूप से मुक्त हूँ)।" सचमुच अच्छा! मैं पूर्णतः मुक्त हो गया हूँ; यही अर्थ है। परन्तु यह व्यक्ति कहाँ से इतना उत्कृष्ट रूप से मुक्त हुआ? इच्छा करते हुए (कामंच), यह थेरा सभी प्रकार के दुःखों (दुक्खा) से पूर्णतः मुक्त हो गया था, जिनमें बार-बार जन्म-जन्म लेना (वट्ट) शामिल है; परन्तु अब अपने दुःख (दुक्खा) को दिखाने के लिए, जो उसके निकट (उपट्टहितं) था और जो अत्यंत अवांछनीय (अनित्थभूतं) था, उसने इस प्रकार कहा: — "तिहि खुज्जकेहि," इत्यादि। यहाँ, खुज्जकेहि का अर्थ है छोटा या हीन स्वभाव वाला; या फिर हीन विशेषताओं वाला। यह शब्द (वचनं) व्याकरणिक शब्द मुत्त (मुत्तसद्दापेक्खाय) के संदर्भ में अपादान कारक (निसक्क) में है। वास्तव में एक किसान, यद्यपि हीन नहीं है, इसका तात्पर्य (दाससेटी) स्वयं को तीन स्थानों पर हीन बनाना है: कटाई, हल चलाने और फावड़ा चलाने में। वास्तव में, उस किसान ने कटाई आदि की।

43.1. अब, उन्हें उनके व्यक्तिगत रूपों में सारगर्भित रूप से दर्शाने के लिए (सरूपतो), उन्होंने इस प्रकार कहा:— "असितासु मया, नांगलसु मया, खुद्दकुद्दालसु मया।" यहाँ असितासु मया का अर्थ इस प्रकार है:— मैं हंसिया, कटाई के औजारों (लवित्त) से बच गया हूँ। अपादान कारक में, यह शब्द स्थानवाचक अर्थ में है। शेष मामलों में भी विधि (नय) यही है (एसेवा)। हालाँकि, अन्य लोग ऐसा कहते हैं:— "मेरे द्वारा हंसिया से काम करने की स्थिति से विचलित (खुज्जिता) हो गया था।" उनके मत (मतेन) में, यह शब्द (वचन) या तो स्थानवाचक (भूम्म) अर्थ में है या परिस्थितिजन्य कारण (हेतु) को इंगित करने वाला साधन है। "नंगलासु" का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए: — लिंग भेद करते हुए ऐसा कहा गया है: हल (नंगलेहि) और हल चलाने के औजारों (कसिरेहि) से; यही अर्थ है। ऐसा भी कहा गया है: — "खुद्दककुद्दालासु, निम्न कुदालों में," क्योंकि वह या तो स्वभाव से (अप्पाकटत्ता) उस व्यवहार (वलंजन) के अनुरूप नहीं था या फिर उसके द्वारा इस्तेमाल किए गए कुदाल की प्रकृति (वलंजित) के कारण। "कुंठकुद्दालासु, कुंद कुदालों में" जैसा एक उदाहरण भी है। लेकिन व्यवहार या खुदाई (खिणखणित्त) में इधमेव का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए: — अक्षर 'म' शब्दों को जोड़ने वाला है। 'वा' शब्द एक अविघटनीय कण (निपात) है। गाँव में स्थित होने के कारण, वे हंसियाएँ और अन्य वस्तुएँ, चाहे वे कुछ भी हों, यहाँ भी मेरे निकट ही हैं; इसके बावजूद वही मेरे लिए पर्याप्त है; यही अर्थ है। जल्दबाजी (तुरित) के कारण, यह सहानुभूति (आमेदित) की अभिव्यक्ति (वचन) है। झाया का अर्थ इस प्रकार है: — यह फल प्राप्ति (फलसमापत्ति) और दिव्य निवास के उचित ध्यान के माध्यम से है, न कि वर्तमान सुख के उद्देश्य से; इस प्रकार झाया (ध्यान करो)। सुमंगल का अर्थ है: — वह स्वयं को संबोधित करता है। हालाँकि, ध्यान में, आदर (आदर) दिखाने के उद्देश्य से सहानुभूति (आमेदित) व्यक्त की जाती है। अप्पमत्तो विहार का अर्थ इस प्रकार है: हे सुमंगल! प्रचुर (वेपुल्ला) ध्यान और (पञ्ञा) की प्राप्ति के लिए आपको सर्वत्र लगन से रहना चाहिए; अतः अब आप

सुखी जीवन व्यतीत कर सकते हैं। कुछ विद्वान कहते हैं: “अरहंतत्व प्राप्त न करते हुए भी, गृहस्थ जीवन के कष्टों को तुच्छ जानते हुए, अपने विशेष आनंद के लिए, जो उन्हें विपश्यना के मार्ग पर उचित रूप से प्रवेश करने हेतु प्राप्त हुआ, थेरा ने इस श्लोक का पाठ किया, बाद में आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपश्यना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया।” उनके विचार के अनुसार, “झाया अप्पमत्तो विहार (ध्यान करो, लगन से जीवन व्यतीत करो)” शब्दों का अर्थ आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपश्यना) के उचित मार्ग में ही समाहित होता है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा सुमंगला का समापन हो गया है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(44): सानु

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (44) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
44. सानु
पिता के घर छोड़कर चले जाने के बाद, सावत्थी में एक गृहस्थ अनुयायी के परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ। माता ने उनका नाम सानु रखा और सात वर्ष की आयु में उन्हें भिक्षुओं के पास दीक्षा के लिए ले गईं, यह सोचकर कि इससे उन्हें परम सुख प्राप्त होगा। सानु, जो नौसिखिया थे, बहुत विद्वान, धर्म के शिक्षक और आनंदमय ध्यान में लीन हो गए, और देवताओं और मनुष्यों के प्रिय बन गए। जैसा कि हम सानु-सूत्र (सयुत्त निकाय, 1:208) से जानते हैं, उनके पिछले जन्म में उनकी माता यक्ष थीं। [1] समय बीतने के साथ-साथ सानु ने अपनी बौद्धिक क्षमता खो दी और असंतुष्ट हो गए, और घूमने-फिरने की इच्छा करने लगे। तब उनकी पूर्व माता ने यह देखा और उनकी मानव माता को चेतावनी देते हुए कहा: 'तुम्हारे पुत्र को घूमने का मन कर रहा है, इसलिए मैंने उसे चलने-फिरने के लिए प्रेरित किया।' उसे बताओ कि यक्खा क्या कहते हैं:

बुराई न करो, चाहे वह खुली हो या छिपी हुई।
यदि तुम अभी बुराई करोगे या बाद में करोगे,
तो तुम दुख से नहीं बच पाओगे, चाहे तुम भाग जाओ। [2]

ऐसा कहकर यक्ष माता अंतर्धान हो गईं। परन्तु जब मनुष्य माता ने यह सुना तो वह दु:ख से व्याकुल हो उठीं। तब नौसिखिए सानु ने अपना वस्त्र और कुंड लेकर सुबह जल्दी निकलकर अपनी माता के पास आए। उनका दु:ख देखकर उन्होंने कहा, ‘माँ, आप क्यों रो रही हैं?’ जब माता ने कारण बताया तो उन्होंने यह श्लोक कहा:

[44] मातां वा अम्मा रोदन्ति यो वा जीवं न डिस्सति॥
जीवनान्तं माṃ अम्मा पासन्ती कस्मा माṃ अम्मा रोदासी' ती॥ ॥

[44] हे माँ, वे मृतकों के लिए रोते हैं, या जीवितों को वे देख नहीं पाते।
परन्तु हे माँ, जो जीवित है, जो यहाँ है, उसके लिए तुम मेरे लिए क्यों शोक मनाती हो?

उनकी माता ने उन्हें सूत्रों से उत्तर दिया, "हे भिक्षुओं, यही मृत्यु है कि कोई प्रशिक्षण को त्यागकर फिर से निम्नतर चीजों की ओर मुड़ जाए," [3] और इस श्लोक के साथ:

वे अपने मृत पुत्र के लिए शोक मनाते हैं, या उसके लिए
जो जीवित तो है लेकिन जिसे वे अब देख नहीं सकते।
और वे उसके लिए भी शोक मनाते हैं, जिसने
संसार का त्याग कर दिया था, मेरे पुत्र, फिर भी वह यहाँ पुनः आ गया है,
क्योंकि यद्यपि वह पुनः जीवित है, फिर भी वह मृत है।
जलते अंगारों से निकलकर, हे मेरे प्रिय,
क्या तुम अंगारों पर पुनः गिरना चाहते हो?

जब उसने उसे सुना, तो नौसिखिए सानु को पीड़ा हुई, और अपनी अंतर्दृष्टि को दृढ़ करते हुए, उसने शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त कर लिया। और यह सोचकर कि 'मेरी विजय उस श्लोक के कारण है,' उसने उसे अपने कथन (गाथा) के रूप में दोहराया। [4]

[1] यक्खा, उत्तरी क्षेत्र के अदृश्य छोटे देवता।

[2] साम., इ. 209; उदाना, खंड 4; बहनें, आयतें 246, 247.

[3] सय्य., ii. 271; बहनें, आयतें 246, 247; आयत सय्य. i. 209 से है।

[4] धम्मपद टीका, श्लोक 826 की चर्चा करते हुए, सानु और उनकी माता को अपने विषय के रूप में प्रस्तुत करती है। उनका स्वयं का प्रश्न उनकी विजय का अंतिम कारण था, यद्यपि प्रत्यक्ष कारण नहीं था।

1.5-4 [44] श्लोक पर टिप्पणी

सानु थेरा
4.1. "मतं वा अम्मा रोदन्ति" से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सानु का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों से मुक्ति पाने के लिए पुण्य अर्जित किया और आज से चौरानवे युग (कप्पा) पहले भगवान सिद्धार्थ को उनके मुख धोने के लिए जल अर्पित किया। वास्तव में, गुरु भोजन करते समय अपने हाथ-पैर धोना चाहते थे। उन्होंने गुरु की आवश्यकता (आकारा) को भली-भांति समझा और जल प्रदान किया। अपने हाथ-पैर धोने और भोजन करने के बाद, गुरु अपने मुख को कुल्ला (विक्खालेतुं) और मुख को धोने की इच्छा रखते थे। यह भी वे जानते थे और मुख और मुख के लिए जल अर्पित किया। गुरु ने अपने मुख को कुल्ला किया और मुख धोया और इस प्रकार उनके मुख और मुख की सफाई पूरी हुई। इस प्रकार, भगवान बुद्ध ने उन पर दया करके उनकी सेवा करने की स्वीकृति दी। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप उनका जन्म दिव्यलोक में हुआ, और पुण्य कर्म करते हुए वे समय-समय पर देवताओं और मनुष्यों के बीच जन्म-मृत्यु के चक्र में विचरण करते रहे, और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे सावत्थी में एक भक्त के घर में गर्भ धारण किया। जब वे अपनी माता के गर्भ में प्रवेश कर चुके थे, तभी उनके पिता घर से चले गए; दस माह की अवधि में उस भक्त ने पुत्र को जन्म दिया और उसका नाम सानु रखा। जब वह समय के साथ वयस्क हुआ, तो माता ने सात वर्षीय पुत्र को भिक्षुओं की उपस्थिति में भिक्षु संघ में शामिल कर लिया और मन ही मन कहा: "इस प्रकार, यह सुरक्षित रूप से (अनंतराय) बड़ा होगा और सुख का निश्चित (अच्छन्त) भागीदार (भागी) बनेगा।" वह सत्य (धम्म) के शिक्षक, कर्तव्यनिष्ठा से परिपूर्ण और ज्ञानवान "सानुसामणेर" के रूप में प्रसिद्ध हुआ। प्राणियों के प्रति प्रेम और दया की भावना के कारण वह देवताओं और मनुष्यों का प्रिय और प्रियतम बन गया; अतः उसके बारे में सब कुछ सानु सूत्र में वर्णित तरीके से समझा जाना चाहिए।

4.2. उनके पिछले जन्म में उनकी माता का पुनर्जन्म एक राक्षसी के गर्भ से हुआ था। राक्षसी को उनसे स्नेह हो गया (मानेंति), और वे बहुत आदर भाव से मन ही मन कहने लगीं, "यह थेरा सानु की माता हैं।" इस प्रकार समय बीतने के साथ, साधारण जन वर्ग (पुथुज्जन) की स्थिति के नुकसान को प्रकट करते हुए, एक दिन सानु के मन में गृहस्थ जीवन में लौटने की तीव्र इच्छा उत्पन्न हुई (विभमितुकामताचित्तं), जो कि उनकी बुद्धिमानी से सचेत अवस्था (योनिसो मनसिकाराभावतो) से नासमझी से उभरी (उम्मुज्जंतस्स)। यह जानकर उनकी राक्षसी माता ने उनकी मनुष्य माता को इस प्रकार बताया:— "आपके पुत्र सानु ने गृहस्थ जीवन में लौटने की इच्छा को प्रज्वलित किया है।" इसलिए, आप उनसे इस प्रकार कहें:—

'वहाँ (असि) निंदनीय दोष है (वज्जा)

जागृत सामु के लिए; यही निर्णय (वचन) है।

राक्षसी का। चाहे सार्वजनिक रूप से (āvi) या

एकांत में (रहते हुए), कोई भी बुरा काम न करें।

क्या आपको ऐसा करना चाहिए था, या यदि आप ऐसा करेंगे,

बुरे कर्मों के कष्टों से तुम बच नहीं पाओगे।

भागने पर भी दुख (दुक्खा) सहना पड़ेगा

(palāyato) ऊपर उड़ना (uppacca).

4,3. इस प्रकार कहने के बाद राक्षसी माता वहाँ से विमुख हो गई। दूसरी ओर, मनुष्य माता ने यह सुनकर चिंता और व्याकुलता से भर गई और मानसिक विक्षिप्तता (चेतोदुक्खा) से ग्रस्त हो गई। तब नौसिखिए सानु ने भोर होते ही वस्त्र धारण किए, कुंड और वस्त्र धारण किए, अपनी माता के पास गए, जिन्हें उन्होंने रोते हुए देखा और उनसे पूछा: "माता! आप किसलिए रो रही हैं?" जब माता ने उत्तर दिया: "उसके कारण," तो उन्होंने अपनी माता के लिए "मतं वा अम्मा रोदन्ति, यो वा जीवं नदिस्साति" से शुरू होने वाला श्लोक बोला।

44. श्लोक का अर्थ है: अन्ना का अर्थ इस प्रकार समझा जाना चाहिए:— रिश्तेदार या मित्र रोते हैं, अर्थात् किसी रिश्तेदार या मित्र के लिए; मतं, मृत को गति देता है; मृत्यु के कारण; रोदन्ति का अर्थ है कि वे रोते हैं, क्योंकि (वह मित्र या रिश्तेदार) दूसरे लोक में चला गया है; यो वा का अर्थ है या जो कोई भी, रिश्तेदार या मित्र; जीवं का अर्थ है जीवित; न दिस्साति का अर्थ है दिखाई नहीं देता, क्योंकि वह दूसरे लोक में चला गया है (देसंतत); यह उस व्यक्ति के संदर्भ में हो सकता है (तं वा उद्दिस्सा) लोग रोते हैं (रोदन्ति); ये दोनों (परिस्थितियाँ) मुझमें विद्यमान नहीं हैं; ऐसा होने पर, जीवतं का अर्थ है जीवित, सजीव (धरमानं), मं का अर्थ है मैं, मैं जो तुम्हारे सामने खड़ा हूँ (पुरतो ठितं); passantī kasamā amma rodasi, का अर्थ है: मुझे देखकर, माँ! तुम क्यों रो रही हो? मेरे कारण रोने का कोई कारण नहीं है।

44,1. अपने बेटे की बात सुनकर उसकी माँ ने दो श्लोक कहे, जिसमें बताया गया कि भिक्षुत्व का त्याग करना, बुद्ध के सुत्त पिटक (सुत्तपाद) में प्रामाणिक शब्दों के अनुरूप (अनुसारेना) पवित्र कुलीन (आरिया) के अनुशासन में मृत्यु के समान है।

"हे पुत्र! लोग मृतकों पर विलाप करते हैं,

या फिर ऐसे व्यक्ति के ऊपर जिसका जीवन दिखाई न दे।

फिर से, हे पुत्र! लोग बारी-बारी से रोते हैं (वा)

उस पर भी विलाप करो, जिसने, हालांकि,

त्याग दिया (cajitvāna) यहाँ वापस आता है

फिर से; इसके अलावा, वह व्यक्ति वास्तव में है,

हे प्रिय!

पुत्र! राख से उठकर, तुम

अंगारों की ओर गिरना चाहता हूँ।

44.2. वहाँ, कामे चजित्वाना का अर्थ इस प्रकार है: — त्याग की प्रवृत्ति (अज्जासय) द्वारा मूलभूत इंद्रिय सुखों (वत्थुकाम) का त्याग करके; इसे भी अनैतिकता (किलेसा काम) में इंद्रिय इच्छाओं (काम) के अस्थायी निवारण के रूप में समझा जाना चाहिए। वास्तव में,

यहाँ भिक्षुत्व का अर्थ (अधिप्पेतो) इंद्रिय इच्छाओं (काम) का सर्वांगीण त्याग है। पुनरागच्छते इधा का अर्थ है कि वह फिर से अपने घर लौट आता है; वह अपने पुत्र की संसार में लौटने की इच्छा (हीनायावत्तनं) के संदर्भ में कहती है। तं वा पि का अर्थ है: जो भिक्षु बनकर संघ का त्याग (विभमति) करता है; ऐसे व्यक्ति पर भी, मेरे जैसे लोग ऐसे रोते हैं मानो वह मर गया हो। यदि पूछा जाए: क्यों? पुना जीवं मतो हि सो का अर्थ है: जो व्यक्ति भिक्षु संघ त्यागने के बाद जीवित रहता है, वह अपने गुणों के मृत होने (गुणमरण) की स्थिति में मृत ही होता है। अब, अपने पुत्र (तस्स) में विशिष्ट पश्चाताप (सविसेससंवेगं) उत्पन्न करने के लिए, "कुक्कुळा (अंगारों से)" से शुरू होने वाला ऐसा कथन किया गया। इसका अर्थ है: — दिन-रात जलते रहने के कारण, और जलते रहने (ठहनत्तेन) के कारण गृहस्थ (गिहिभावा) की स्थिति अंगारों के नरक (कुक्कुळा) के समान है। कुक्कुळा का अर्थ है अंगारों के समान गृहस्थ जीवन। अपने पुत्र के प्रति करुणावश (अनुकम्पन्तिया), उभतो का अर्थ है मैंने अपने पुत्र का पालन-पोषण किया, मैंने उसे गृहस्थ जीवन की अवस्था से बाहर निकाला; ताता का अर्थ है हे सानु! कुक्कुलं पतितुं इच्छासि का अर्थ है कि तुम अंगारों में गिरने की इच्छा रखते हो।

44.3. अपनी माता की बात सुनकर, नवोदित सानु पश्चाताप से भर गया, उसे विपश्यना का ज्ञान हुआ और उसने कुछ ही समय में अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"भोजन करते भिक्षु को देखकर

शुद्ध (विप्पेसन्ना) और स्वच्छ (अनविला),

मैं एक घड़े में पानी लेकर आया और उसे पेश किया

इसे सिद्धार्थ को दे दो।

आज मैं अशुद्धता से मुक्त हूँ, अशुद्ध हूँ

संदेह दूर होने के साथ गंदगी। सुखद

मेरे लिए यह साकार हो जाएगा

जो किसी भी अस्तित्व में पुनर्जन्म लेता है।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब जब मैंने अपनी भेंट चढ़ा दी है

पानी। मुझे कोई बुराई याद नहीं है।

अस्तित्व (दुग्गति)। यही है

जल दान का फलदायी परिणाम।

आज से इकसठ युग (कप्पा) पहले,

मैं तो केवल एक विश्व-राजा विमला थी।

शुद्ध, सात संप्रभु शक्तियों से संपन्न

रत्न और अपार शक्ति।

मेरे सारे दुराचार जलकर राख हो गए थे।

बुद्ध का उपदेश यही था।

किया गया।

44,5. हालाँकि अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने उसी श्लोक का आनंदमय उच्चारण करते हुए पुन: पाठ किया और इन श्लोकों के प्रभाव में स्वयं से कहा: — "स्पष्ट अंतर्दृष्टि (विपस्सना) प्राप्त करने का मेरा प्रयास और अरहंत पद की मेरी प्राप्ति हुई।"

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा सानु का

तैयार है।

**********oOo*********

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (45) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
45. रमणीयविहारिन
बुद्ध युग में राजगृह में एक प्रमुख नागरिक के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने युवावस्था में व्यभिचार का जीवन व्यतीत किया। एक दिन उन्होंने राजा के अधिकारियों को एक व्यभिचारी को गिरफ्तार करते देखा और व्याकुल होकर, उन्होंने भगवान (बुद्ध) के उपदेश सुने और संसार त्याग कर भिक्षु बन गए। भिक्षु के रूप में, यद्यपि वे अभी भी शारीरिक वासनाओं के वश में थे, उन्होंने अपने लिए एक सुसज्जित कक्ष बनवाया, जिसमें भोजन, पेय, आसन और पलंग जैसी सभी व्यवस्थाएँ थीं ; और वे इसी प्रकार जीवन व्यतीत करते रहे। इसी कारण वे रमणीय-विहारिन (सुखद-आश्रय भिक्षु) के नाम से जाने गए। परन्तु अपने पूर्व भोग-विलास के कारण भिक्षु का जीवन उनके लिए बहुत कठिन हो गया था, इसलिए उन्होंने भक्तों की भेंट स्वीकार करने में स्वयं को अयोग्य समझा और कहा: 'मैं भ्रमण करूँगा।' रास्ते में वे एक वृक्ष के नीचे बैठ गए। और जब मार्ग पर गाड़ियाँ गुजर रही थीं, तो एक थका हुआ बैल एक ऊबड़-खाबड़ स्थान पर ठोकर खाकर गिर गया। गाड़ीवान ने बैल का जुआ ढीला किया, उसे घास और पानी दिया और इस प्रकार उसकी थकान दूर की; फिर उसने उसे दोबारा जोता और वे आगे बढ़ गए। तब थेरा ने सोचा: 'जिस प्रकार यह बैल ठोकर खाकर उठा है और अपना बोझ स्वयं खींच रहा है, उसी प्रकार मेरा भी कर्तव्य है, जो एक बार बुराई के जंगल में ठोकर खा चुका हूँ, कि मैं उठूँ और एक भिक्षु के कर्तव्य का पालन करूँ।' और विचारपूर्वक पीछे मुड़कर, उन्होंने थेरा उपाली को अपने किए और देखे हुए के बारे में बताया, [2] जिन्होंने उन्हें उनके दोष से मुक्त किया और सही मार्ग पर वापस लाने में सहायता की। और कुछ ही समय बाद उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद स्वतंत्रता के आनंद का अनुभव करते हुए, उन्होंने इस श्लोक में अपने पतन और वापसी का वर्णन किया:

[45] यथापि भद्दो अजन्नो खलित्वा पतितिथति॥
एवं दस्सानसम्पन्नानां सम्मासंबुद्धसावकांति ॥॥

[45] चाहे वह ठोकर खाकर गिर भी जाए,
श्रेष्ठ वंश का वह साहसी प्राणी एक बार फिर दृढ़ता से खड़ा हो जाएगा।
इसलिए मुझे उस व्यक्ति के रूप में देखो जिसने
सर्व-प्रबुद्ध ईश्वर से ज्ञान प्राप्त किया है,
सच्ची अंतर्दृष्टि प्राप्त की है, श्रेष्ठ वंश का हो गया है,

और स्वयं बुद्ध का ही बालक बन गया है। [3]

[1] या अच्छी तरह से पॉलिश किया हुआ, सुसामाṭṭहाṃ।

[2] भजन संहिता CLXXX देखें। विनय या संघ के अनुशासन में सबसे बड़े विशेषज्ञ के रूप में, उपाली (यदि यह वही उपाली है जिसका अर्थ है) उसकी चूक के संबंध में निर्णय लेने और उसे सलाह देने के लिए अत्यंत योग्य थे।

[3] 'जैसा कि यह श्लोक पीटीएस संस्करण में है, यह अधूरा है। टीका से हमें यह अनुमान लगाने की प्रेरणा मिलती है कि इसे पूरा किया जाना चाहिए, जैसा कि श्लोक 174 में है, देखें

1.5-5[45] श्लोक पर टिप्पणी

रमणीयविहारी थेरा
5.1. यथा पि भद्दो आजाञ्ञो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा रामणियविहारी का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों के प्रति भक्तिपूर्ण कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और संयोगवश उन्हें 91 ईओम (कप्पा) पूर्व विपस्सी बुद्ध के दर्शन हुए। वे श्रद्धापूर्वक पांच रूपों में पृथ्वी पर आसीन होकर (पंचपतिठित) उन्हें प्रणाम किया और कोरण्ड के पुष्प अर्पित किए। इस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म देवताओं के बीच हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे, और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब वे राजगृह में एक धनाढ्य के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। कामुक सुखों में मदहोश (मुच्चं आपनो) होकर, एक दिन उन्होंने राजपुरुषों द्वारा विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में व्यभिचार करते देखा। उन्हें पश्चाताप हुआ, गुरु के समक्ष उन्होंने सत्य (धम्म) सुना और भिक्षु बन गए। भिक्षु बनने के बाद भी, अपने कामुक आचरण (रागचरित) के कारण, वे हर समय सुसम्मत्त में रहते थे, उनका भोजन और पेय पदार्थ उनके पास ही परोसा जाता था और उनका पलंग एवं सिंहासन भी सुव्यवस्थित रहता था। इसी कारण वे रमणीयविहारी के नाम से भी प्रसिद्ध हुए।

5.2. कामवासना (राग) के संचय (उस्सान्नता) के कारण, उसने अपनी जागरूकता को नासमझी (अयोनिसो) में बदल दिया, और वीर्यपात (सुक्का) का ऐसा धार्मिक अपराध (आपात्ती) किया जो जानबूझकर (संचेतनिक) था, और पश्चाताप (विप्पतिसारी) करते हुए अपने मन में कहा: — "यह मेरे लिए शर्मनाक है कि मैं इस प्रकार दानदाताओं द्वारा उनके श्रद्धापूर्ण विश्वास (सद्धा) के साथ अर्पित भोजन का आनंद लेने लगा।" संघ को त्यागने के इरादे से जाते समय, वह रास्ते में एक पेड़ के नीचे बैठ गया; जब उसी रास्ते से बैलगाड़ियाँ चलती रहीं, तो एक बैल, जो गाड़ी से जुता हुआ था, थकान (परिस्सामंतो) से भरा होने के कारण, एक ऊबड़-खाबड़ जगह पर ठोकर खाकर गिर गया; गाड़ीवालों ने उस बैल को जुए से मुक्त किया, उसे घास और पानी खिलाया, उसकी थकान दूर की, फिर से उसे जुए में जोतकर बोझ ढोने के लिए तैयार किया और चले गए। यह देखकर थेरा ने मन ही मन कहा: "जिस प्रकार यह बैल एक बार ठोकर खाने के बावजूद उठ खड़ा हुआ और फिर से अपना बोझ ढोने लगा, उसी प्रकार मेरे द्वारा भी, जो एक बार ठोकर खाकर गिरा था, यह उचित है कि भिक्षु के कर्तव्य उठकर ही पूरे किए जाएं।" इस प्रकार, बुद्धिमानी से (योनिसो), वे वापस लौटे, थेरा उपाली को अपने साथ घटी घटना की सूचना दी, थेरा के निर्देशानुसार विधिपूर्वक (वत्त) धार्मिक अपराध से मुक्त हुए (वुट्ठहित्वा), अपने नैतिक उपदेश को सामान्य बनाया, स्पष्ट अंतर्दृष्टि को बढ़ावा दिया (पट्ठपेत्वा) और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है:

कुचले हुए लोगों को देखकर

पहियों से सजे पदचिह्न-

आभूषण, मैं उसका बारीकी से पीछा करता रहा।

महान ऋषि के पदचिह्न

विपस्सी (बुद्ध)।

कोरण्ड को देखते ही

झाड़ी का फूल जो खिल रहा था,

मैंने इसे श्रद्धापूर्वक अर्पित किया-

अपनी जड़ के साथ इकट्ठा; बन गया

मुझे खुशी है कि मैंने सबसे महान व्यक्ति को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

मेरे खुश पैरों के साथ उत्कृष्ट पैर (पाड़ा)

हृदय (haṭṭhena cittena).

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब जबकि मैंने विशेष रूप से पेशकश की है

आदरपूर्वक फूल चढ़ाएं। मैं पुनः नहीं करता-

किसी भी बुरी शक्ति का सदस्य; यही है

मेरे श्रद्धापूर्वक करने का फलदायी परिणाम

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

सत्तावन युग (कप्पा) पहले, मैं एक था

एकमात्र विश्व-राजा जो अशुद्धियों से रहित हो (वीतमालो)

शक्तिशाली और बलवान, सात शक्तियों से संपन्न

रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

5,3. हालाँकि, अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, उन्होंने मुक्ति के आनंद का अनुभव किया और एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसकी शुरुआत "यथा पि भद्दो आजञ्ञो खालित्वा पतितित्तति" से होती है, जो उनके पवित्र कर्म (अरियाधम्म) की उपलब्धि और उनके उचित अभ्यास (पतिपत्ति) पर प्रकाश डालता है: उनके अपने अतीत (पुब्बभाग) का।

45. यहाँ 'खलित्वा' का अर्थ है ठोकर खाना, लड़खड़ाना (पक्खलित्वा)। 'पतितित्तति' का अर्थ है फिर से खड़ा होना, वह फिर से खड़ा हो जाता है, जैसे वह खड़ा हुआ था (यथाठाने)। 'एवम्' का अर्थ इस प्रकार है:— जैसे एक उत्तम नस्ल का बैल, अपना बोझ ढोते हुए, थककर एक ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर आ गिरा, एक बार ठोकर खाई और गिरने के बावजूद उस दुर्घटना (तत्तकेना) के कारण अपना बोझ नहीं छोड़ा (धुरा): इसके विपरीत, शारीरिक शक्ति (थामा), चपलता (जावा) और प्रयास (परक्कमा) से संपन्न होने के कारण, ठोकर खाने के बावजूद, वह फिर से खड़ा हो गया, और अपने स्वभाव से ही खड़े होने के बाद अपना बोझ ढोता है; इसी प्रकार, दुराचार (किलेसा) के कारण थकावट से ग्रस्त होकर और पाप करने के कारण ठोकर खाकर, उसने अपनी शारीरिक शक्ति और परिश्रम की समृद्धि के कारण, सही दृष्टिकोण (मग्गसम्मादिट्ठी) के पवित्र मार्ग के माध्यम से उस ठोकर को उचित रूप से सामान्य (पटिपाकटिकं)

बना दिया; दस्सनसम्पन्नं का अर्थ है अंतर्दृष्टि, सही दृष्टिकोण से संपन्न होना; इसके फलस्वरूप, सम्मासंबुफ्हस्स सावकं का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए: — सुनने के अंत में (सवनन्ते), क्योंकि मैं पवित्र (आरिया) का (जातता) फल (जाति) हूँ और उनके हृदय (तस्सौरे) में परिश्रम (वायामजनित) से उत्पन्न (अभिजाति) होने के कारण, आपको मेरा ध्यान (धारेत) रखना चाहिए और मुझे ध्यानपूर्वक (उपधारेत) याद रखना चाहिए कि मैं उनका प्रिय पुत्र हूँ और उत्तम (आजनीय) हूँ क्योंकि मैंने उत्तम शुद्ध पुरुष के समान कर्म किए हैं; यही अर्थ है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा रमणीयविहारी का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(46):समिद्धि

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (46) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
46. समिद्धि
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म राजगृह में एक कुलवासी परिवार में हुआ। [1] जन्म से ही उनके परिवार की संपत्ति बढ़ती गई और वे स्वयं, सुंदर और गुणी होने के कारण, समिद्धि (प्रोस्पेरो) के नाम से प्रसिद्ध हुए। उन्होंने बुद्ध की शक्ति को तब देखा जब बिम्बिसार उनसे मिले थे, [2] उन्होंने बुद्ध में आस्था प्राप्त की और संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करके) ध्यान में लीन हो गए। जब भगवान (बुद्ध) तपोद उद्यान में ठहरे हुए थे, [3] एक दिन समिद्धि भिक्षु के रूप में अपने सौभाग्य पर अत्यंत प्रसन्नता से ध्यान कर रहे थे। तभी दुष्ट मारा (मृत्यु का देवता/राक्षस) इसे सहन न कर पाने के कारण उनके पास एक भयानक ध्वनि उत्पन्न की, मानो पृथ्वी फट रही हो। थेरा ने यह बात भगवान (बुद्ध) को बताई। बुद्ध ने उनसे कहा कि वे जहाँ हैं वहीं बने रहें और इसके बारे में और न सोचें। उन्होंने आज्ञा का पालन किया और शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। मारा, इससे अनभिज्ञ होकर, एक बार फिर भयानक शोर मचाने लगा। परन्तु थेरा को कोई भय नहीं हुआ: 'ऐसे सभी मारों से भयभीत न होकर, मैं जरा भी विचलित नहीं हुआ!' और ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) का स्वीकार करते हुए, उन्होंने यह श्लोक कहा:

[46] सद्ध्यायहाऽ पब्बजितो अग्रस्मानगरियौ॥
सति पणना च मे वुद्धा चित्तौ च सुसामहितां॥
कामां करासु रूपाणि नेवा माऽ बधायिस्सि' ति.॥ ॥

[46] विश्वास और आशा के साथ मैं अपने घर से निकलकर
बेघर जीवन में आया। और वहाँ मुझमें
सजगता और अंतर्दृष्टि विकसित हुई, और
मेरा हृदय और मन शांत और स्थिर हो गया। तुम
चाहे जो भी बहाने बना लो, तुम मुझे हानि नहीं पहुँचा सकते।

और मारा (मृत्यु का देवता/राक्षस), इस प्रकार फटकार खाकर, बोला, 'भिक्षु मुझे जानता है,' और उस स्थान से गायब हो गया।

[1] कुलायेहे. तुलना करें. राइस डेविड्स, बुद्धिस्ट इंडिया, पृ. 17-22.

[2] विनय ग्रंथ , इ. 130.

[3] यह प्रसंग लगभग उन्हीं शब्दों में और उसी गाथा के साथ मारा-संयुत्त (संयुत्त, i. 119 f., पृ. 91) में वर्णित है, लेकिन भूगोल थोड़ा अस्पष्ट है। निकाय में यह स्थान शाक्यों का सिलावती है; तपौदा उद्यान राजगृह में उसी नाम की नदी पर स्थित था। समिद्धि, एडोनिस और गलाहद की दोहरी भूमिका में, 'समिद्धि-जातक' (जातक ii., संख्या 167) का विषय है।

1.5-6 [46] श्लोक पर टिप्पणी

समिद्धि थेरा
6.1. सद्धायाहं पब्बजितो से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा समिद्धि का है। इसका उद्‌गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और आज से चौरानवे युग (कप्पा) पहले भगवान सुद्धत्था के दर्शन किए, तो वे श्रद्धापूर्वक फूल और उनकी टहनियों को एक गठरी में बाँधकर (कणिक-बद्ध) उन्हें आदरपूर्वक अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण उनका जन्म दिव्य लोक में हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, अपने बार-बार के जन्मों में उत्तम जन्मों में भी, उनका जन्म राजगृह के एक पारिवारिक घर में हुआ, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनके जन्म के समय से ही वह परिवार धन और अनाज की संपत्ति से उत्तरोत्तर समृद्ध होता गया; उनका शरीर भी विशेष रूप से सुंदर, आकर्षक और अच्छे गुणों से युक्त था; इसलिए धन की समृद्धि और गुणों की महिमा के कारण उन्हें समिद्धि के नाम से भी जाना जाता था। बिम्बिसार की राजसभा में बुद्ध की शक्ति को देखकर, उन्होंने उचित श्रद्धा (सद्धा) धारण की, भिक्षु बन गए और भावना में लीन होकर जीवन व्यतीत किया। एक दिन, जब भगवान बुद्ध तपौदा मठ में निवास कर रहे थे, तब उन्होंने मन ही मन सोचा, “हे गुरु, हे योग्य, स्वयं-जागृत बुद्ध, मुझे तो लाभ ही है; मैं धर्म के सुगठित अनुशासन में भिक्षु बन गया हूँ; मेरे साथी धर्मनिष्ठ (सब्रह्मचारी) नैतिक उपदेशों से युक्त और स्वभाव से अच्छे हैं।” ऐसा सोचते हुए उन्हें अपार उत्साह और आनंद प्राप्त हुआ। इसे सहन न कर पाने के कारण, दुष्ट मारा ने थेरा से कुछ ही दूरी पर एक भयानक ध्वनि उत्पन्न की; ऐसा लगा मानो पृथ्वी का प्रलय आ गया हो; थेरा ने इस विषय की सूचना भगवान बुद्ध को दी। भगवान बुद्ध ने कहा:— “यह मारा की योजना थी तुम्हें भ्रमित करने की; हे भिक्षु! वहाँ जाओ और इसके बारे में सोचे बिना जीवन व्यतीत करो।” थेरा वहाँ गए, जहाँ उन्होंने जीवन व्यतीत किया, विपश्यना में लीन रहे और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में कहा गया है:—

सिद्धार्थ को देखकर सारथी

पहाड़ी के अंदर बैठे पुरुषों में से, चमकते हुए-

कनिकारा फूल की ओर बढ़ते हुए, सभी दिशाओं को रोशन करते हुए-

तब मैंने पूरी निश्चितता के साथ प्रणाम किया।

मैंने तीर से खुद को लैस किया और एक फूल तोड़ा।

इसकी टहनी के साथ और विशेष रूप से पेश किया गया

इसे बुद्ध को अर्पित करें।

यह 94 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब, मैंने विशेष रूप से फूल भेंट किया है;

मुझे किसी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यह

श्रद्धापूर्वक की गई भेंट का फलदायी परिणाम यही है।

बुद्ध को।

आज से इक्यावन युग (कप्पा) पहले मैं बना था

एक अकेला विश्व-राजा, प्रतिभा का वाहक,

शक्तिशाली, बलवान और सात रत्नों से सुशोभित।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

6.2. हालांकि, जब थेरा अभी भी वहीं रह रहे थे और अरहंतत्व प्राप्त कर चुके थे, तब मारा, इस तथ्य से अनभिज्ञ होकर कि थेरा रोगमुक्त हो चुके हैं, पहले की ही तरह एक भयानक ध्वनि उत्पन्न की। यह सुनकर, थेरा, जो भयभीत और अविचलित थे, ने "सद्धायाहं पब्बजितो" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करते हुए मारा से कहा: "तुम्हारे जैसे सौ-हजारों मारा भी मेरे शरीर के एक-एक बाल को भी नहीं हिला सकते।"

46. वहाँ, सद्धाय का अर्थ है: कर्म और उसके फल (कम्मफल) में पवित्र आस्था के माध्यम से, साथ ही धर्म के प्रति इच्छा जागृत करने के उद्देश्य से तीन रत्नों में आस्था के माध्यम से। अहं का अर्थ है: वह स्वयं को इंगित करता है। पब्बजितो का अर्थ है भिक्षुत्व के निकट जाना। अगरस्मा का अर्थ है या तो घर से या गृहस्थ जीवन से। अनागारियं का अर्थ है त्याग, भिक्षुत्व। वास्तव में, खेती, व्यापार आदि का जो भी कार्य 'गृहस्थ का कल्याण' (अगारस्स हितं) है; अर्थात्, गृहस्थ जीवन है; इसके अभाव के कारण इसे "अनागारिय (गृहस्थ जीवन)" कहा जाता है। सति पन्ना च मे वुद्धा का अर्थ इस प्रकार है: स्मरण (सरण) सति की विशेषता (लक्खण) है; तार्किक ज्ञान (पजानन) सती सजगता का प्रतीक (लक्खण) है; तार्किक ज्ञान (पजानन) ज्ञान (या बुद्धि) का प्रतीक (लक्खण) है; इस प्रकार, इन घटनाओं (धम्म) को स्पष्ट रूप से देखने (विपस्सनाखण) के क्षण से ही, अरहंतत्व की प्राप्ति तक, पवित्र मार्गों (मग्ग) का क्रमिक विकास (पटिपाटि) होता रहा; अब ऐसा कुछ भी नहीं बचा है जिसे और अधिक विकसित किया जाना चाहिए; सती सजगता और बुद्धि (पक्खण) की प्रचुरता प्राप्त हो चुकी है; इस प्रकार, वे दर्शाते हैं। चित्तंच सुसमाहितं का अर्थ इस प्रकार है: — आठ प्रकार की उत्कृष्ट ध्यान संबंधी उपलब्धियों (समापत्ति) और दिव्य एकाग्रता (लोकउत्तर समाधि) के द्वारा मेरा मन अच्छी तरह से स्थिर हो गया है; अब उस मन के लिए एकाग्रता की कोई आवश्यकता नहीं है; एकाग्रता की प्रचुरता (समाधि) प्राप्त हो गई है; इस प्रकार, वे बताते हैं। अतः कामं करस्सु रूपानि का अर्थ इस प्रकार है: — हे दुष्ट! तुम मुझे अपना निशाना बनाकर हर प्रकार का परिवर्तन करते हो; न'एव मन ब्याधयिस्ससि का अर्थ इस प्रकार है: — यद्यपि तुम उनके द्वारा मेरे शरीर को हिला भी नहीं पाओगे; तो मेरे मन में परिवर्तन (चित्तञ्ञथत्त) कहाँ से आया? अत: तुम्हारे कर्मों से कोई लाभ नहीं होगा, ठीक वैसे ही जैसे कोई उपहार अस्वीकृत कर दिया जाए (अप्पतिच्छित पाहेनक); तुम्हारे कर्मों का फल केवल तुम्हारे मन को और अधिक विचलित करेगा; इस प्रकार, थेरा ने मारा को धमकी दी। थेरा की बात सुनकर मारा वहाँ से विदा हो गया, परन्तु मन ही मन बोला, "भिक्षु मुझे पहचान गया।"

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा समिद्धि का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(47):उज्जय

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (47) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
47. उज्जया
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म राजगृह में एक ब्राह्मण (पुजारी) स्नातक के पुत्र के रूप में हुआ। [1] परिपक्व होकर और तीनों वेदों में निपुण होकर, उन्होंने उनमें कोई सार नहीं देखा, और परिस्थितियों की परिपक्वता से प्रेरित होकर, वे बाँस के वन में गए, और जब उन्होंने

भगवान (बुद्ध) का उपदेश सुना, तो उन्होंने संसार त्याग दिया (सन्यास के लिए)। वन में नैतिक आचरण पर ध्यान करते हुए, उन्हें अर्हत्व (ज्ञान) प्राप्त करने में अधिक समय नहीं लगा। इसके बाद वे भगवान (बुद्ध) के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और भगवान (बुद्ध) की स्तुति करते हुए, इस श्लोक में अन्न (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[47] नमो [8] ते बुद्धविरत्थु विप्पमुत्तोसि सब्बाधि॥
तुयहापादाने विहारं विहारामि अनासवोऽ ति.॥॥

[47] बुद्ध, प्रबुद्ध, महान! जय हो! सभी को! [2] आप जो हर बंधन से पूर्णतः मुक्त हैं!
आपसे प्राप्त ज्ञान में बलवान होकर मैं जीता हूँ [3] चौगुने विष से शुद्ध, समझदार, प्रतिरक्षित। [4]

[1] सोत्थिया ब्राह्मण (संस्कृत श्रोत्रिय), 'वह जिसने पवित्र परंपरा में स्नातक की उपाधि प्राप्त की हो।'

[2] सिस्टर्स, श्लोक 157 देखें ।

[3] अधिक शाब्दिक रूप से, 'आपकी बुद्धिमत्ता में मैं एक जिगर के रूप में जीवित रहता हूँ।'

[4] अर्थात्, चार आसवों, या विषों या मादक पदार्थों (अपराध/इच्छाओं) में से - कामुकता, पुनर्जन्म का प्रेम, राय या अटकल, अज्ञान (संकलन पृ. 227)।

1.5-7 [47] श्लोक पर टिप्पणी

उज्जयत्थेरा
7.1. 'नमो ते बुद्ध विरत्थु' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उज्जैन का है। इसका उद्‍गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म किए, और आज से बानवे युग (कप्पा) पहले भगवान तिस्सा के दर्शन किए, वे श्रद्धावान हुए और उन्हें कणिकार पुष्प अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के कारण उनका जन्म दिव्य लोक में हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने जन्म-जन्म चक्र में विचरण करते रहे और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे राजगृह में सोत्तिया नामक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम उज्जैन था। जब वे वयस्क हुए तो तीनों वेदों में पारंगत (तिण्णं वेदनं पारगू) थे, तथा उनमें कोई सार न देखकर, और अरहंत पद (उपनिषय) प्राप्त करने के लिए पर्याप्त योग्यता की समृद्धि (संपत्ति) से प्रेरित होकर, वे वेलुवन वन में गए, गुरु की उपस्थिति में धर्म का प्रवचन सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था (पटिलद्ध सद्धो) प्राप्त की, भिक्षु बन गए, अपने आचरण के अनुरूप मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठन) किया, वन में निवास करते हुए आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की, और कुछ ही समय में अरहंत पद प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"कणिकारा फूल को खिलते हुए देखकर,

मैंने तब इसे तोड़ा और विशेष रूप से भेंट किया।

तिस्सा जैसे बुद्ध के लिए भी यही बात लागू होती है।

संसार की बाढ़ को पार कर लिया था।

यह बानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब जब मैंने पुष्प अर्पित कर दिए हैं।

किसी भी बुरी सत्ता को याद मत करो; यह

श्रद्धा भाव रखने का यही फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली विशेष भेंट।

आज से पैंतीस युग पहले, मैं एक था

विश्वराज, पराक्रमी और बलवान, वरदान प्राप्त

सात रत्नों से सुप्रसिद्ध, अरुणपाणी

(सूर्य ताड़)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

7,2. हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वह गुरु के समक्ष उपस्थित हुए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और "नमोते बुद्ध विरत्थु" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिससे उन्होंने भगवान की स्तुति करने के तरीके से अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट किया।

47. यहाँ नमो का अर्थ है आराधना की घोषणा। ते का अर्थ है आराधना करने के लिए संपदान (संपदान) की घोषणा; इसका अर्थ है: आपको (तुयहं)। बुद्धवीर भगवान को संबोधित शब्द है। वास्तव में, भगवान को "बुद्ध, प्रबुद्ध, ज्ञाता" कहा जाता है, क्योंकि उन्होंने आत्म-ज्ञान (सयम्भुणा) के माध्यम से उचित रूप से समझे जाने वाले सभी विषयों का पूर्ण ज्ञान (अत्थस) प्राप्त कर लिया है, जिसे विशेष बोध (अभिञ्ञेय्यदि) के रूप में वर्गीकृत किया गया है। इस प्रकार, उन्हें "वीर" कहा जाता है, क्योंकि उन्होंने मार के पाँच रूपों को विशेष रूप से कुचलकर अपने परिश्रम (पदाहन्त) में अपार परिश्रम किया है। अत्थु का अर्थ है हो (होतु): उनका "नमो (आराधना)" हो; यही संबंध है। विप्पमुत्तोसि सब्बधि का अर्थ इस प्रकार है: — जब सब कुछ भौतिक समुच्चय (संस्कार) बन गया है, तब आप सभी प्रकार की बुराइयों (किलेसा) से स्पष्ट रूप से मुक्त (विप्पमुत्तो) और स्पष्ट रूप से विखंडित (विसंयुत्तो) हो गए हैं; अर्थात्, ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे आप स्पष्ट रूप से मुक्त न हुए हों; तुयहपादाने विहारं, विहारमि अनासवो का अर्थ इस प्रकार है: — चूंकि मैं आपकी शिक्षा और सलाह के अनुसार पवित्र मार्ग (मार्ग) पर उचित प्राप्ति (पटिपत्ति) के आचरण (चरिया) का पालन करते हुए, अपनी क्षमता और सामर्थ्य के अनुरूप जीवन व्यतीत करता हूँ, इसलिए मैं चारों प्रकार के दोषों (आसव) से मुक्त हूँ, जिनमें कामासव दोष भी शामिल है; हे वीर बुद्ध! आप जैसे व्यक्ति को मेरी श्रद्धा हो!

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा उज्जैन का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(48):संजय

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (48) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
48. संजय

बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म राजगृह में एक धनी ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में हुआ। बड़े होकर उन्होंने ब्रह्मायु, पोक्खरसाती और अन्य प्रसिद्ध ब्राह्मणों (पुजारियों) का अनुसरण किया, जिन्होंने भगवान (बुद्ध) में आस्था पाई और प्रथम मार्ग (निर्वाणिक समाधि) को प्राप्त किया। बाद में उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और छह अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त किए । [53] फिर, अन्न (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा करते हुए, उन्होंने यह श्लोक कहा:

[48] यतो अहं पब्बजितो अग्रस्मानगरियौ॥
नाभीजानामि संकप्पां अनारियं दोषसंहितं' ति.॥ ॥

[48] जब से मैं घर छोड़कर (भिक्षुता के लिए) बेघर जीवन में गया हूँ,
मैंने कभी भी सचेत इच्छा या योजना नहीं रखी है
जो अन-आर्यन हो, या शत्रुता से जुड़ी हो। [1]

[1] श्लोक 603, 645 देखें। पोक्खरसाती और अन्य ब्राह्मणों (पुजारियों) का नाम वासेठ सूत्र (सूत्र-निपात, iii. 9) में अनुयायियों के रूप में लिया गया है, लेकिन संजय का उल्लेख नहीं है। यह सारिपुत्त का गुरु नहीं है (CCLIX)।

1.5-8[48] श्लोक पर टिप्पणी

संजय थेरा

8.1. यतो अहं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा संजय का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, पुनर्जन्मों के चक्र से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय किया, एक बड़े व्यापारिक संघों के समूह में प्रचार करके सामग्री एकत्र की, तीन रत्नों को समर्पित पुण्य कर्म किए। हालांकि, भगवान विपस्सी के समय वे स्वयं दरिद्र थे, और उन्होंने उस समूह के लिए पुण्य कर्म करने में स्वयं को व्यस्त रखा। बार-बार वे भगवान बुद्ध के पास जाते, उन्हें प्रणाम करते और अपने पुण्य भाव से वे न केवल बुद्ध बल्कि भिक्षुओं की भी सेवा करते। इसी पुण्य कर्म के फलस्वरूप उनका जन्म हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे कई जन्मों तक उत्तम देह धारण करते रहे। अंत में उनका पुनर्जन्म राजगृह में एक धनी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में हुआ, जब संजय नाम से बुद्ध का जन्म हुआ। वयस्क होने पर उन्होंने ब्रह्मायु, पोक्खरसाती आदि जैसे प्रसिद्ध ब्राह्मणों को शासन के प्रति विशेष श्रद्धा रखते देखा। इससे उनके मन में भी श्रद्धा का भाव जागा और वे गुरु के पास गए। गुरु ने उन्हें धर्म का उपदेश दिया। उन्होंने धर्म को ध्यान से सुना और एक संत बन गए। बाद में वे भिक्षु बन गए। भिक्षु बनने पर उन्हें अपने मुंडन कक्ष में भी छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) प्राप्त हुए। इसीलिए अपदान में कहा गया है:—

"वहाँ एक बहुत बड़ा निगम था

भगवान विपस्सी के लिए संघ;

मैंने भी अपनी सेवा प्रदान की।

(veyyāvaccakaro); मैंने खुद को रखा

उन सभी चीजों में व्यस्त जो

किया जाना चाहिए (सब्बाकिसेसु ववातो)।

मेरे पास दान करने के लिए कुछ भी नहीं था।

सुगाता को अर्पण (देय्यधम्म)।

महान ऋषि। गुरु के चरणों में।

मैंने मन ही मन प्रसन्नतापूर्वक अपना सम्मान व्यक्त किया।

पवित्र (विप्पसन्नेन)

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने अपने सेवा कर्तव्यों का पालन किया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही वह बात है

सेवा प्रदान करने का फलदायी परिणाम।

आज से आठ युग (कप्पा) पहले भी,

मैं एक महान और शक्तिशाली विश्व राजा बन गया।

सुविचारशील (सुसिंटिटा) से संपन्न

सात रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

8,2. हालाँकि, छह प्रकार के अतिज्ञान से परिपूर्ण होकर, उन्होंने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए “यतो अहं पब्बजितो” से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला।

48. यतो अहं पब्बजितो का अर्थ है: मेरे भिक्षु बनने के समय से उत्पन्न, आरंभ से। नाभिजानामि संकप्पं अनरियं दोससंहितं का अर्थ इस प्रकार है:– मेरे भिक्षु बनने के समय से, मुझे ऐसे बुरे विचारों जैसे कामुक विचारों आदि के उत्पन्न होने का स्मरण नहीं है, जिन्हें अवास्तविक गुणों आदि के कारण “संकप्पो (इरादा)” का नाम दिया गया था, इंद्रियों के नीच बुरे विषयों पर चिंतन (आरम्मणे) करने में, जो कामवासना आदि जैसे दोषों से जुड़े हैं, जो नीच और निम्न स्तर (निहीन) हैं, क्योंकि पवित्र (अरीय) लोग या तो उनसे बचते हैं (अनरणीयता) या अपवित्र (अनरिय) लोग उन्हें संजोते हैं (अरणीयता); उन्होंने इन शब्दों से अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया; “खुरग्गेयेव मया अरहन्तं पट्टां (मुझे अरहंतत्व उसी प्रकार प्राप्त हुआ जैसे मेरे बाल खुरा से मुंडवाए गए थे)।”

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा संजय का

तैयार है।

**********oOo*********
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(49):रामनेय्यका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (49) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
49. रामणेय्यक
बुद्ध युग में सावत्थी में एक धनी परिवार में पुनर्जन्म लेने पर, जेतवन भेंट किए जाने पर उनका हृदय द्रवित हो गया, [1] और उन्होंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व के लिए)। वन में रहते हुए उन्होंने नैतिक आचरण पर ध्यान किया, और अपनी उपलब्धियों और आकर्षण के कारण वे रामाणेय्यक (ग्रेटस, ग्रेटुलस) कहलाने लगे ।

एक दिन, दुष्ट मारा (मृत्यु का देवता/राक्षस) ने उसे परेशान करने के इरादे से एक भयानक शोर मचाया। थेरा ने उसे सुनकर, अपने स्वभाविक साहस के साथ, निडर होकर, यह जान लिया कि यह मारा ही है। और अपना तिरस्कार दिखाने के लिए उसने यह श्लोक कहा:

[49] विहाविहाभिनादिते सिप्पिकाभिरुते च॥
न मे तं फंदति चित्ताm̩ एकत्तनिरताm̩ ही मे' ती॥ ॥

[49] तुम्हारे शोर का सारा खड़खड़ाहट नहीं,
जंगल की आवाज़ों की चहचहाहट और चीख से ज़्यादा नहीं, [2] नाड़ी को धड़कने या मन को व्याकुल करने के लिए पर्याप्त है,
क्योंकि एक ही लक्ष्य है जिसके लिए मेरा दिल समर्पित है।

यह श्लोक थेरा द्वारा अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा बन गया।

[1] देखें पृष्ठ 4; सिस्टेन, पृष्ठ 60.

[2] पाली शब्दकोश की सीमित सीमा के कारण, टीका में सिप्पिका की व्याख्या को समझना कठिन है । लेकिन यह स्पष्ट है कि थेरा ने मारा के 'भयानक शोर' की तुलना बंदरों और गिलहरियों द्वारा उत्सर्जित छोटी-छोटी वन ध्वनियों से तिरस्कारपूर्वक की है। गाथा, संक्षेप में, इस प्रकार है: जहाँ तक xy शोर और z ध्वनियों का संबंध है, वे मेरे हृदय को नहीं धड़कातीं, क्योंकि एकता के प्रति मेरी भक्ति है।

1.5-9 [49] श्लोक पर टिप्पणी

रामाणेय्यक थेरा
'चिहाविबाभिनादी ते' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा रामणेय्यक का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करने और इस-उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करने के कारण, वे भगवान सिख धर्म के समय एक परिवार में पुनर्जन्म लेकर आए। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो उन्होंने भगवान बुद्ध के दर्शन किए, श्रद्धा से भर गए और उन्हें पुष्प अर्पित किए। इस पुण्य कर्म के कारण, वे दिव्य लोक में पुनर्जन्म लेकर आए और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, लेकिन उत्तम जन्मों में, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत में एक समृद्ध (इब्भा) परिवार में पुनर्जन्म लेकर आए। वयस्क होने पर, जेतवन मठ के प्रवेश समारोह में उनमें मनभावन श्रद्धा उत्पन्न हुई; वे भिक्षु बन गए और मानसिक साधना में लीन हो गए। (कम्मट्ठाना) उनके आचरण के अनुरूप, और वे वन में रहते थे। उनकी समृद्धि और भिक्षु के लिए उपयुक्त उचित अभ्यास (पटिपत्ति) के कारण, तथा उनके सुखद स्वभाव (पासादिकभाव) के कारण, उनका नाम रामणेय्यक पड़ गया। फिर एक दिन, मारा ने थेरा को भयभीत करने की इच्छा से एक भयानक ध्वनि उत्पन्न की। थेरा ने अपनी स्वाभाविक दृढ़ता के कारण निर्भयता से यह ध्वनि सुनकर जान लिया कि यह मारा है और वहाँ अपनी अवहेलना (अनादरं) प्रदर्शित करने के लिए “चिहाचिहाभिनादिते” से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला।

49. वहाँ, cihacihābhinadite का अर्थ इस प्रकार है:— cihaciha जैसी ध्वनि के निरंतर प्रचलन के कारण, रथों (vaṭṭaka) का शोरगुल वाला स्वभाव, जिसे “cihaciha” नाम दिया गया है; गर्जना का कारण; यही इसका अर्थ है। Sippikābhirutehi ca का अर्थ इस प्रकार है:— Sippikā को दूसरे नाम से देवका कहा जाता है। ये बंदर (sākhāmigā) हैं जिनमें बीमारी के कारण भूखे (chāta) और दुबले (kisa) लड़कों का स्वभाव होता है। कुछ लोग इन्हें “mahādalandakā (एक बड़ी गिलहरी)” कहते हैं। Sippika (बंदरों और गिलहरियों) की तेज आवाज़ों और चीखों के कारण। इस वाद्य अभिव्यक्ति का प्रयोग कारण (hetu) के संदर्भ में किया जाता है। इसी कारण; यही इसका

अर्थ है। Na me taṃ phandati cittaṃ का अर्थ है कि ध्वनि यह भटक जाता है (चवति)। ऐसा कहा गया है:— हे दुष्ट! इस वन में, पशुओं के रोने और गिलहरियों और बंदरों के चिल्लाने के कारण के समान, तुम्हारा चीखना मेरे मन को मानसिक अभ्यास से विचलित नहीं कर सकता (कम्मट्ठान)। उन्होंने वहाँ इसका कारण इस प्रकार बताया: "एकत्तनिरतं हि मे", जिसका अर्थ है:— व्याकरणिक शब्द 'हि' का अर्थ कारण (हेतु) है; क्योंकि मेरे मन ने समाज से संबंध त्याग दिया है (गणसंगणिक) और एकांत और एकांत की अवस्था में रहा है; दूसरे शब्दों में, बाह्य रूप से अशांति को त्याग दिया है और चिह्नहीन और एकाग्र (एकग्गता) की अवस्था में रहा है; दूसरे शब्दों में, एकांत की अवस्था में, स्वभाव से बिल्कुल अकेला (एकसभाव) मेरे मन को आनंद मिला है। और निर्वाण में आनंद; इसलिए, (मेरा मन) विचलित (फंदति) नहीं होता और मेरे मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) से विमुख (चवति) नहीं होता: ऐसा कहा जाता है कि इस श्लोक का उच्चारण करके, थेरा ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) प्राप्त की और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"स्वर्ण रंग वाले धन्य पुरुष,

धधकती सौ किरणों का स्वामी,

पुरुषों के बीच बैल की कलगी (सिखीसभो),

उन्होंने अपने मन में प्रेम और दया का भाव भर लिया था

मठ के गलियारे में अच्छी तरह से स्थापित।

धार्मिक और नेक दिल होने के कारण, मैंने भुगतान किया।

मैं उस उत्कृष्ट व्यक्ति को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

ज्ञान; मिनेला को ऊपर उठाकर

मैंने यह फूल बुद्ध को अर्पित किया।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने अपना आदरपूर्वक

फूल का अर्पण। मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही है

मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

उन्नीस युग (कप्पा) पहले, मैं बन गया

सुमेघाघना नामक एक विश्व-राजा,

अत्यधिक शक्ति से परिपूर्ण, सात रत्नों से सुसज्जित।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

यही वह श्लोक था जिसके द्वारा थेरा ने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया था।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा रामणेय्यक का

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(50):विमला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (50) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
50. विमला
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म राजगृह में एक धनी परिवार में हुआ, और (कसेपा बुद्ध रहते हुए एक पुण्य कर्म पर की गई अपनी मनोकामना के कारण) उनका शरीर कमल के पत्ते पर ओस की बूंद के समान, या उनके पिछले जन्म के बोधिसत्व के समान शुद्ध था। इसी कारण उनका नाम विमला (इम-मैकुलेटस) रखा गया। बड़े होकर राजगृह में बुद्ध के दर्शन से वे श्रद्धा से भर गए, [1] और संसार त्याग कर अध्ययन का मार्ग अपनाया तथा कोसल पर्वत की एक गुफा में रहने चले गए।

एक दिन आकाश में एक विशाल तूफानी बादल छा गया और बारिश हुई, जिससे गर्मी और बुखार कम हो गया, और इस प्रकार थेरा एकाग्रता से काम करते हुए अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त करने में सक्षम हुए। अपने इस कार्य की पूर्ति पर प्रसन्न होकर उन्होंने यह गीत गाया:

[50] धरणि च सिञ्चति1 वती मालुतो विज्जुता चरति नाभे॥
उपासमन्ति वितक्क चित्तं सुसमाहितं मम' ति.॥॥

[50] बोझ से दबी धरती पर बारिश की बूँदें पड़ रही हैं,
ठंडी हवाएँ बह रही हैं, बिजली आसमान में चमक रही है।
मन की चिंताओं को शांत किया
और मेरे हृदय में आत्मा की महारत स्थापित की। [2]

यह श्लोक थेरा द्वारा ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा थी।

[1] तुलना करें . पृष्ठ XLI., XLVI.

[2] शाब्दिक रूप से, 'मेरा हृदय (चेतना!) अच्छी तरह से व्यवस्थित है।'

1.5-10 [50] श्लोक पर टिप्पणी

विमला थेरा

10.1. 'धरणी च सिंचति' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा विमला का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले अच्छे कर्मों का संचय किया और तेजस्वी विपस्सी के समय में एक शंख वादक के परिवार में पुनर्जन्म लिया। बुद्धि प्राप्त करने पर उन्होंने उस विद्या में निपुणता प्राप्त की और एक दिन भगवान विपस्सी से मिलने पर वे श्रद्धापूर्वक उनके समक्ष शंख वादन का अर्पण किया और तब से वे हर उपलब्ध समय में गुरु की सेवा करते रहे (कालें कालं)। उस पुण्य कर्म के कारण, उनका दिव्य लोक में पुनर्जन्म हुआ, वे समय-समय पर पुण्य कर्म करते रहे (अपरापरं) और अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते हुए, उन्होंने बोधि वृक्ष को सुगंधित जल से स्नान कराया, मंदिरों और बोधि वृक्षों के परिसर में सभी आसन धुलवाए और भिक्षुओं की सभी मैली धार्मिक वस्तुओं को भी साफ करवाया, उस समय भगवान कस्सपा ने मन ही मन कहा: “आने वाले समय में मेरा शरीर अशुद्धता से मुक्त और शुद्ध हो।”

10.2. वहां से विदा होकर, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने पुनर्जन्म के चक्रों में विचरण किया और राजगृह में एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। जब वे अपनी माता के गर्भ में थे और जब वे अपनी माता के गर्भ से बाहर आए, तब भी उनका शरीर (उनकी माता के) पित्त और कफ आदि से दूषित नहीं हुआ, और न ही वह हरे कमल के पत्ते पर पानी की बूंद की तरह उलझा (अलग) हुआ; उनका शरीर बोधिसत्व के अंतिम पुनर्जन्म के समान शुद्ध और पवित्र था। इसी कारण उनका नाम विमला रखा गया। वयस्क होने पर उन्होंने राजगृह के प्रवेश द्वार पर बुद्ध की शक्ति देखी, जिससे उन्हें उचित श्रद्धा प्राप्त हुई, वे भिक्षु बन गए, मानसिक साधना (कम्मट्ठान) में लग गए और कोसल राज्य की एक पर्वत-गुफा में निवास करने लगे। फिर एक दिन, चारों महाद्वीपों (चतुदीपिका) को ढकते हुए मूसलाधार वर्षा हुई, जो संपूर्ण ब्रह्मांड (चक्कवाल) की गुफा (गब्ब) में फैल गई। कहा जाता है कि इस प्रकार की वर्षा बुद्धों और विश्व-राजाओं के जीवनकाल (धर्मानाकाल) में उस विश्व-चक्र में होती थी जो गतिमान (विवत्तत्थायि) था। थेरा का मन शांत हो गया। और ग्रीष्म ऋतु की चिलचिलाती गर्मी से मुक्ति पाने के बाद अनुकूल मौसम प्राप्त करने पर एकाग्रचित्त होकर, उन्होंने वहीं पर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में स्वयं को लीन कर लिया और क्रमिक रूप से सही मार्ग (मग्गपटीपाटिया) पर चलकर अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

मैं शंख बजाने वाला था

भगवान विपस्सी। स्थायी रूप से

मैं सेवा कार्य में व्यस्त था।

अच्छे शब्दों का वक्ता (सुगाता),

महान ऋषि (महेसी)।

भाग लेने के लाभकारी परिणाम देखें

ऐसे ही एक पर, रक्षक

विश्व! साठ हजार संगीतकार

हर समय मुझे घेरे रहो।

यह 91 युग पहले की बात है जब मैंने

मैंने महान तपस्वी की सेवा की।

किसी भी बुरी घटना को याद न करो;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

सेवा।

आज से चौबीस युग (कप्पा) पहले,

वहाँ सोलह विश्व-

महान शक्ति वाले राजा जिन्हें इस नाम से जाना जाता है

महानिघोष का।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

10,3. अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "धरणी चे सिंचति वात्ति, मलुतो" से शुरू होने वाले श्लोक का उच्चारण किया। अपने कर्तव्य को पूरा करने के बाद अपनी मानसिक संतुष्टि पर आनंदित होकर उन्होंने यह उच्चारण किया।

50. वहाँ, धारणी का अर्थ पृथ्वी (पथवी) है; वास्तव में उस पृथ्वी को "धारणी (वाहक)" कहा गया है, क्योंकि वह सभी सहनीय या असहनीय (धरधरं) को वहन करती है। सिंचिति का अर्थ इस प्रकार है:— चारों ओर फैले आकाश में विशेष वर्षा होने के कारण, यह बड़े वर्षा-बादल की वर्षा से भर जाती है। वात मालुतो का अर्थ है कि जल से व्याकुल और अच्छी तरह मिश्रित होने के कारण ठंडी हवा चलती है। विजयता चरति नभे का अर्थ इस प्रकार है:— गर्जना और गर्जना के कारण, भारी वर्षा-बादल से बिजली की चमक निकली और आकाश में इधर-उधर विचरण करती रही। उपासमेंटि वितक्का का अर्थ इस प्रकार है: अनुकूल मौसम से लाभान्वित होकर, प्रारंभिक चरण (पुब्बभागे) में शांति (समथा) और संयम (विपस्सना) की प्राप्ति से, क्षणिक (तगंग) होने के कारण शांत होकर, इंद्रिय सुख आदि से संबंधित सभी नौ उग्र विचार (वितक्का) पवित्र श्रेष्ठ मार्ग (अरियमग्ग) की प्राप्ति से शांत हो गए; वे पूर्णतः समाप्त (अनवसेसतो) हो गए। उन्होंने पवित्र मार्ग (अरियमग्गक्खण) के निकट होने के कारण उसे वर्तमान में उपस्थित (वत्तमान) बनाकर उसके क्षण का वर्णन किया। दूसरे शब्दों में, यह वर्तमान काल की अभिव्यक्ति भूतकाल के अर्थ में प्रयुक्त की गई है। Cittaṃ susamāhitaṃ mama का अर्थ इस प्रकार है:— उसके बाद भी, मेरी मन दिव्य एकाग्रता (लोकउत्तरासमाधि) के माध्यम से अच्छी तरह से स्थिर हो गई थी; अब उस मानसिक स्थिरता (समाधाने) में कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है; इस प्रकार, थेरा ने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा विमला का

तैयार है।

पांचवें अध्याय पर टीका

(pañcamavagga)

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(51): गोधिका, सुबाहु, वल्लिया, उत्तिया
श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।

नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (51,52,53,54) ------>>>> अगला

अंतर्वस्तु

अध्याय I.

एकल श्लोक

भाग IV

51. गोधिका, सुबाहु, वल्लिय, उत्तिया

हमारे बुद्ध के समय में, ये चारों, जो पूर्व जन्म में कश्यप बुद्ध के पृथ्वी पर रहने के दौरान सहपाठी थे, पावा [1] में चार मल्ल (राजा) राजाओं [2] के पुत्रों के रूप में पुनर्जन्म लेकर [55] वहाँ उनके बीच पूर्ण मित्रता थी। वे कपिलवस्तु के राजा के पास किसी कार्य के लिए गए। उस समय भगवान (बुद्ध) भी वहाँ गए थे और बरगद के उद्यान में ठहरे हुए थे, जहाँ उन्होंने अपने जुड़वां चमत्कार [3] से शाक्य राजाओं को आश्वस्त किया । तब चारों ने वही चमत्कार देखा और विश्वास किया। उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और कुछ ही समय बाद धर्म (धम्म) के अक्षर और भाव में पूर्ण निपुणता प्राप्त करके अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। अब राजा और उनके मंत्रियों से बहुत सम्मान और समर्थन प्राप्त करने के बाद, वे वन में रहने लगे। फिर राजा बिम्बिसार, जब वे राजगृह गए, तो उन्होंने थेरों को अपने यहाँ बुलाया और वर्षा ऋतु में उनके साथ समय बिताने का निमंत्रण दिया। उन्होंने प्रत्येक थेरे के लिए एक कुटिया बनवाई, लेकिन लापरवाही से उन पर छत नहीं बनवाई। इसलिए थेरों को उन कुटियाओं में बिना छत के रहना पड़ा। लेकिन वर्षा ऋतु में देवता ने वर्षा नहीं की। [4] राजा को यह देखकर आश्चर्य हुआ, उन्हें अपनी लापरवाही याद आई, और उन्होंने कुटिया पर प्लास्टर और रंग करवाया, और एक उद्घाटन समारोह आयोजित किया, साथ ही भिक्षु संघ को उपहार भी दिए। थेरों ने राजा पर कृपा करते हुए कुटिया में प्रवेश किया, और तुरंत ही उन्हें सर्वव्यापी प्रेम का अनुभव हुआ। फिर उत्तर और पूर्व से एक बड़ा तूफानी बादल उठा, और जैसे ही थेरे अपनी समाधि से बाहर आए, वर्षा होने लगी। तब गोधिका, तूफान की गर्जना से जागृत होकर, इस श्लोक का उच्चारण किया:

---

[51] वस्सति देवो यथा सुगीतौ॥
चन्ना मे कुतिका सुख निवाता॥
चित्तं सुसामहितां च मयहा॥
अथ सी पत्थयसि पवस्सा देवा' ति.॥॥
[51] हे ईश्वर, मधुर संगीत की तरह वर्षा करो।
मेरी छोटी सी झोपड़ी आरामदायक, सुरक्षित और अच्छी छत वाली है।
मेरा हृदय दृढ़ और शांत है।
अब हे ईश्वर, जैसा आपको प्रसन्न करे, वर्षा करो!

और सुबाहु:
[52] वस्सति देवो यथा सुगीतौ॥
चन्ना मे कुतिका सुख निवाता॥
चित्तौ सुसमाहिता च कायो॥
अथ सी पत्थयसि पवस्सा देवा' ति.॥॥
[52] ईश्वर ऐसी वर्षा करता है मानो कोई मधुर धुन हो।
मेरी छोटी सी झोपड़ी आरामदायक है, आश्रययुक्त, अच्छी छत वाली,
मेरे मन ने शरीर की प्रकृति को अच्छी तरह समझ लिया है। [5]
हे ईश्वर, अब जब आपको वर्षा करने की इच्छा हो, वर्षा कीजिए!

और वल्लिया:
[53] वस्सति देवो यथा सुगीतौ॥
चन्ना मे कुतिका सुख निवाता॥
तस्सं विहारमि अप्पमत्तो॥
अथ सी पत्थयसि पवस्सा देवा' ति.॥ ॥
[53] हे ईश्वर, बारिश करो मानो कोई मधुर धुन हो।
मेरी छोटी सी झोपड़ी आरामदायक, सुरक्षित और अच्छी छत वाली है।
मैं इस लगन और मेहनत में जीता हूँ।
हे ईश्वर, अब यदि आप चाहें तो बारिश करो!

और उत्तिया:
[54] वस्सति [9] देवो यथा सुगीताm॥
चन्ना मे कुतिका सुख निवाता॥
तस्सं विहारामि अदुतियो॥
अथ सी पत्थयसि पवस्सा देवा' ति.॥ ॥
[54] हे भगवान, बारिश करो मानो कोई मधुर धुन हो।
मेरी छोटी सी झोपड़ी आरामदायक है, सुरक्षित, अच्छी छत वाली।
इसमें मैं अकेला और बिना साथी के रहता हूँ। [6] हे भगवान, अब अगर आपको बारिश करना पसंद हो, तो बारिश करो!

---

[1] संवाद देखें , ii. 186 ff.
[2] मल्लों, कोलियानों, लिच्छवियों, शाकियों में, प्रत्येक कुल के व्यक्ति को (राजा)राजा कहा जाता था।
[3] पृष्ठ 36, नोट 1 देखें।
[4] 'बारिश हुई' के लिए सामान्य मुहावरा (cf. I.)। टीका में फिर से 'देव' को वर्षा-बादल (मेघ) के रूप में वर्णित किया गया है, बिना पज्जुन्ना के। इन वर्षा-संबंधी छंदों की लय एक विचित्र लहरदार लय है। मैं इसे निर्धारित नहीं कर सकता।
[5] शाब्दिक अर्थ: 'इंद्रियों के संबंध में मन अच्छी तरह से संतुलित है।'
[6] अदुतियो का अर्थ यह हो सकता है, या फिर 'लालसा से मुक्त।' देखें श्लोक 896, n.

1.6 अध्याय VI
1.6-1[51] श्लोक पर टिप्पणी
Godhikādicatu Thera
1.1. 'वस्सति देवो' से शुरू होने वाले चार श्लोक इन चार थेरों - गोमिका, सुबाहु, वल्लिया और उत्तिया - के हैं। इनका उद्गम क्या है? इन सभी ने पूर्व बुद्धों की भक्तिपूर्वक सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और आज से चौरानवे युग (कप्पा) पहले भगवान सिद्धार्थ के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। ज्ञान की आयु प्राप्त करने पर, वे सहचर बन गए और साथ-साथ विचरण करने लगे। उनमें से एक ने भगवान सिद्धार्थ को भिक्षा मांगते हुए देखा और एक चम्मच भोजन अर्पित किया। दूसरे ने श्रद्धापूर्वक पृथ्वी को स्पर्श करते हुए (पंचपतित्तित) पांच रूपों में प्रणाम किया और अपने हाथ जोड़कर प्रणाम किया। तीसरे ने प्रसन्न मन से भगवान को मुट्ठी भर फूल अर्पित किए। चौथे ने चमेली के फूल आदरपूर्वक अर्पित किए। इस प्रकार, उनका मन गुरु के प्रति अत्यंत श्रद्धामय था, और पुण्य कर्म में लीन होकर वे दिव्यलोक में पुनर्जन्म लेते रहे। बार-बार पुण्य कर्म करते हुए वे देवताओं और मनुष्यों के बीच जन्म-मृत्यु के चक्र में विचरण करते रहे और अंत में भगवान कस्सपा के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लेकर उनके साथी और भिक्षु बने। उन्होंने भिक्षुओं के कर्तव्य निभाए और हमारे प्रतापी भगवान के समय पावा में चार मल्ल राजाओं के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया। उन्होंने उन्हें गोमिका, सुबाहु, वल्लिया और उत्तिया नाम दिए। वे आपस में प्रिय साथी बन गए। किसी कार्य से वे कपिलवस्तु गए। उस अवसर पर भी गुरु कपिलवस्तु गए, निग्रोध मठ में निवास किया, दो चमत्कार दिखाए और राजा सुद्धोदन के नेतृत्व वाले शाक्य राजाओं को पराजित किया। तब मल्लमोनार्च के उन चारों पुत्रों ने भी चमत्कार देखा, प्रसन्नतापूर्ण भक्ति प्राप्त की, भिक्षु बन गए, विपश्यना के कर्म किए और विश्लेषणात्मक ज्ञान के साथ-साथ अर्हंत पद भी प्राप्त कर लिया, लेकिन शीघ्र ही। इसीलिए अपदान में कहा गया है:—
"(सुनहरे रंग वाले को देखकर)
आत्मजागृत बुद्ध, सही प्राप्तकर्ता
समर्पित दान के माध्यम से उत्कृष्ट रूप से उभरना
(अभिनिक्खन्तं) उत्कृष्टता से (पवारा)

लकड़ी से लकड़ीहीन अवस्था में आने के बाद
(अर्थात् तन्हा के जंगल से नंगा क्षेत्र तक)
(तण्खाय) क्षेत्र में, मैंने एक चम्मच चढ़ाया
ऐसे महान नायक, महान व्यक्ति को भिक्षा-भोजन
ऋषि सिद्धार्थ, जिन्होंने स्वयं को शांत कर लिया था
उनकी बुद्धि (पञ्ञा) के माध्यम से।
मेरे सगे संबंधियों, बुद्ध में मेरा आनंद (विट्टी)
सूर्य का, जिसका मैंने बारीकी से अनुसरण किया
उनके पीछे कदम-दर-कदम, जैसे-जैसे वह शांति प्रदान करते गए (निब्बापेंटे)
पुरुषों की भीड़ (महाजनम) बहुत बढ़ गई।
(उलराजता).
यह चौरानवे युग (कप्पा) पहले की बात है,
अब, मैंने तब अपनी भेंट दी।
मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;
यह दान-भोजन का फलदायी परिणाम है।
पेशकश।
आज से सत्तासी युग (कप्पा) पहले,
(मैं) ये सात विश्व-राजा बन गया,
सात रत्नों से सुशोभित, जिसे इस नाम से जाना जाता है
महारेणु का।
मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।
बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।
बाहर।"
थेरा गोधिका ने कहा
****

सुबाहु थेरा
मैंने सुनहरे रंग वाले व्यक्ति को देखा
आत्मजागृत बुद्ध, जो पूर्णतः आत्मजागृत बुद्ध के समान हैं-
नस्लबद्ध बैल निसाभा, तीन बार उल्लंघन के समान
मातंग के रट (तिधाभिन्न) हाथी के साथ
प्रजाति, महानता का साधक (मदेसी),
दुनिया के सबसे बड़े, अच्छी तरह से प्रवेश कर रहे हैं
रथ मार्ग सभी दिशाओं को रोशन कर रहा है
पूर्णिमा के चंद्रमा (उलराजा) के समान, जहाँ-
मैंने अपने मन को सुखद रूप से धार्मिक बना लिया था
अपने ज्ञान (ज्ञान) को ऊपर उठाकर
मेरे जुड़े हुए हाथ। धर्मपरायण और नेक-
मैंने पूरे मन से बुद्ध को नमन किया।
सिद्धार्थ।
यह 94 युग (कप्पा) पहले की बात है।
अब से, मैंने अपना कर्म कर दिया है;
मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;
यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।
बुद्ध के ज्ञान का ग्रहण (सन्ना)
(ज्ञान).
तिहत्तर युग (कप्पा) पहले, से
अब, मैं सोलह विश्व-राजा बन गया

महान शक्ति से परिपूर्ण, सात रत्नों से युक्त,
उन्हें सर्वश्रेष्ठ पुरुषों में से एक के रूप में जाना जाता है।
मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...
बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।
बाहर।"
थेरा सुबाहू ने कहा
****
वल्लिया थेरा

मैं तिवारा में रहता था, जो एक फूलवाला था।
मैं तब था। मैं स्टेनलेस स्टील से मिला।
(विराजा) बुद्ध सिद्धार्थ को सम्मानित किया गया
(पूजिता) दुनिया द्वारा।
मैं धर्मनिष्ठ और नेक हृदय वाला व्यक्ति हूँ।
उन्होंने उन्हें मुट्ठी भर फूल भेंट किए।
मैं जहाँ कहीं भी पैदा हुआ, वह इसी के कारण हुआ।
उस कर्म का वाहन (वाहा)।
मुझे अपने प्रयासों का मनचाहा फल मिला।
अपना काम अच्छी तरह से किया गया, पहले, होना
चारों ओर सुंदर चमेली के फूल खिले हुए थे;
यह फूल का फलदायी परिणाम है
पेशकश।
यह चौरानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।
मैंने विशेष रूप से फूलों की भेंट चढ़ाई।
मुझे अपने किसी भी बुरे अस्तित्व की याद नहीं है;
यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।
फूलों का आदरपूर्वक अर्पण।
वर्तमान को छोड़ दें तो,
चौरानवे युगों के लिए, वहाँ, (मैं
पाँच सौ राजा बन गए जिन्हें इस नाम से जाना जाता है
नज्जसमा का नाम।
मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी। :P
बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।
बाहर।"
थेरा वल्लिया।
****
उत्तिया थेरा
मैंने प्राकृतिक फूल (जातिपुप्फा) अर्पित किए।
भगवान सिद्धार्थ को।
आनंदमय मुस्कान (हसा) के साथ सात फूल
मैंने उन्हें बड़ी संख्या में नीचे बिखेर दिया।
उसके पैर। उस कृत्य के कारण अब,
मुझे मानव अमरता (नारामर) का आनंद मिलता है।
स्वयंजागृत लोगों के युग में
बुद्ध, मैं अपना परम शरीर धारण करता हूँ।
यह 94 युग (कप्पा) पहले की बात है।
अब से, मैंने एक विशेष भेंट अर्पित की है।
फूलों का; मुझे कोई याद नहीं है

बुरा अस्तित्व; यही फलदायी है
श्रद्धापूर्वक फूल अर्पित करने का परिणाम।
तेरह विश्व-राजा थे, जिन्हें जाना जाता था।
समंतगंधा (मीठा-
चारों ओर सुगंधित), पाँच युग (कप्पा)
बहुत समय पहले; वे मनुष्यों के शासक थे।
पूरी दुनिया पर (चतुरंता)।
मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...
बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।
बाहर।
उत्तिया थेरा ने कहा।
****

1.2. अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, ये चारों थेरा, जो विश्व में विख्यात और प्रसिद्ध थे, राजाओं और मुख्य मंत्रियों द्वारा विधिवत सम्मानित और पूजनीय हो गए और वन में एक साथ रहने लगे। फिर एक बार, राजा बिम्बिसार ने राजगृह के पास आए इन चारों थेराओं से संपर्क किया, उन्हें प्रणाम किया और उन्हें इस प्रकार आमंत्रित किया कि वे वर्षा ऋतु के तीन महीने उपवास के दौरान वहीं बिताएँ। राजा ने उनके लिए एक-एक करके आवासीय संरचनाएँ बनवाईं, लेकिन ध्यान की गड़बड़ी (सम्मोसा) के कारण राजा ने उन पर छत नहीं बनवाई। थेरा बिना छत वाले घरों में ही रहने लगे। जब वर्षा का समय आया, तो वर्षा नहीं हुई। राजा ने यह सोचकर कि "अत्यंत किस परिस्थिति में वर्षा नहीं हुई?" इसका कारण जानकर, उन्होंने उन कुटियाओं की छतें बनवाईं, मिट्टी का काम और अलंकरण करवाया और कुटिकममहा विधि संपन्न कर भिक्षुओं के एक विशाल समूह को दान दिया। राजा पर दया करके, थेरों ने कुटियाओं में प्रवेश किया और प्रेममयी ध्यान में लीन हो गए। तभी उत्तर-पूर्व दिशा से एक विशाल वर्षा-बादल उठा और ठीक उसी क्षण वर्षा होने लगी जब थेर अपनी समाधि से उठे। उन चारों में से, थेर गोधिका अपनी समाधि से उठे और वर्षा-बादल की गर्जना के साथ इस श्लोक का उच्चारण किया।

51. "बारिश अपनी बौछार को समान बनाती है"
मधुर गायन के लिए; मेरा आवासीय
संरचना की छत बन चुकी है और मेरा
मेरा निवास सुखदायक है;
मन शांत है (susamāhita)
इसके अलावा, यदि आप चाहें तो,
हे वर्षा!

वहाँ, वस्सति का अर्थ है: यह फुहारें बरसाता है, यह वर्षा लाता है। देवो का अर्थ है वर्षा-बादल (मेगाह)। यथा सुगीतं का अर्थ है मधुर गीत के समान गर्जना (सुंदर गीत), इस प्रकार इसका महत्व है। वास्तव में, वर्षा के समय वर्षा का बादल सौ ढेरों (पाटल) और हजार छतों (पाटल) में उठता है, गर्जना करता है और बिजली चमकाता है, जो देखने में भी सुंदर लगता है; केवल इतना ही नहीं। इसलिए, मनमोहक (सिनिद्ध), मधुर, गहरी ध्वनि वाली वर्षा बरसती है; इस प्रकार वह दर्शाता है। उसने उस ध्वनि से विचलित न होने के बारे में इस प्रकार कहा: — "चन्ना मे कुटिका सुखा निवाता," मेरे घर की यह छत सरकंडों आदि से इस प्रकार ढकी है कि वर्षा अंदर नहीं आती; उसने उस वर्षा से विचलित न होने की बात कही। स्वाभाविक रूप से (सब्भावतो) आवास की सुविधा (परिभोगसुख) और अनुकूल जलवायु में मौसम की सुविधा (उत्सप्पाय) जैसी खुशियाँ थीं। (मेरा निवास स्थान) अपनी दृढ़ता से बंद, व्यापक (फुसितद्दलहपिहित) खिड़कियों (वातपान) के कारण हवा के खतरे से मुक्त (रहिता) है। उन्होंने दोनों प्रकार की आवासीय सुविधाओं (सप्पाय) के कारण अपने पीड़ित न होने के बारे में बताया। चित्तं सुसमाहितं च मयः का अर्थ इस प्रकार है: — मेरा मन भी अद्वितीय एकाग्रता (अनुत्तरसमाधि) के कारण शांत है, जो निब्बान को विचार के विषय (अरम्मण) के रूप में मानकर पूर्णतया एकाग्र है। उन्होंने इस गहरे आंतरिक खतरे (परिसय) की अनुपस्थिति के कारण चिंता मुक्त (अपोसुक्क) होने की अपनी स्थिति को दर्शाया। अथा चे पत्थयासी का अर्थ है: यदि आप चाहें तो अब ऐसा कर सकते हैं; यदि आप चाहें। पवस्स का अर्थ है: आप अपना जल छिड़क सकते हैं, बिखेर सकते हैं; अपनी वर्षा बरसा सकते हैं। देवा का अर्थ है वर्षा के बादल को पुकारना।

श्लोक पर टिप्पणी
थेरा गोधिका का
तैयार है।
*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(55): अंजना-वनिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (55) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
55. अंजना-वानिया [1]
उनका पुनर्जन्म इसी बुद्ध युग में वैशाली में हुआ, वे वज्जियन वंश के एक राजा [2] के परिवार में हुए थे। जब वे बड़े हुए, तो वज्जियन क्षेत्र में तीन प्रकार का भय फैल गया था—सूखा, बीमारी और अमानवीय शत्रुओं का भय। यह सब रत्न-सूत्र की टीका में वर्णित है। [3] जब भगवान बुद्ध ने वैशाली में भय को शांत किया और एक विशाल जनसमूह ने उनका उपदेश सुना, तो इस राजा के पुत्र ने भी उन्हें सुना और विश्वास प्राप्त करके संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया)।
प्रारंभिक प्रशिक्षण पूर्ण करने के बाद, वे साकेत के अंजन वन में रहने लगे। जब वर्षा ऋतु निकट आई, तो उन्होंने एक पुराना, परित्यक्त पलंग प्राप्त किया और उसे चार पत्थरों पर रखकर, ऊपर और चारों ओर घास से घेरकर, उसमें एक द्वार बनाया, और इस प्रकार वर्षा ऋतु के लिए एक आश्रयस्थल [57] प्राप्त किया। केवल एक माह के बाद ही उनके गहन अध्ययन ने उन्हें अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त करा दिया। इसके बाद, निर्वाण के आनंद को अनुभव करते हुए, उन्होंने स्वयं को जागृत किया और अपनी विजय का ध्यान करते हुए परमानंद से यह श्लोक कहा:

---

[55] आसंदी कुटिकै कत्वा ओगयहा अंजनाṃ वनाṃ॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

---

[55] अंजना के घने पत्तों वाले घाटियों में मैंने अपने पलंग को एक छोटी सी झोपड़ी में बदल दिया।
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध के सभी विधानों का पालन किया है। [4]

---

[1] टीका में अंजनवनिरा है।
[2] (राजा)राजों पर, ऊपर देखें, एल.आई.
[3] या ज्वेल डिस्कोर्स, सुत्त-निपाता और खुद्दक-पाठ; एक दिलचस्प टिप्पणी, अगर वह जिस टीका का जिक्र कर रहे हैं वह परमत्था-ज्योतिका है। मुझे इस दहशत का कोई प्रामाणिक विवरण नहीं मिला है।
[4] श्लोक 24, n. 3.

1.6-5 [55] श्लोक पर टिप्पणी
अंजनवनिया थेरा
आसंदिं कुटिकं कट्वा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अंजन वणीय का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि वे सुदस्सन नामक एक मालाकार थे, जो भगवान पद्ममुत्तरा के समय में थे। उन्होंने भगवान को चमेली के फूल अर्पित किए, जगह-जगह अनेक पुण्य कर्म किए, देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार जन्मों का चक्र पूरा किया, भगवान कस्सपा के मार्गदर्शन में भिक्षु बने और भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया। फिर, जब ये बुद्ध प्रकट हुए, तो उनका पुनर्जन्म वैशाली में वज्जी के राजपरिवार में हुआ और जब वे वयस्क हुए, तो वज्जी राज्य में तीन प्रकार की विपत्तियाँ आईं, अर्थात्: वर्षा न होने का खतरा, रोग का खतरा और अमानवीय प्राणियों से खतरा। इन सभी बातों को रतनसुत्त की व्याख्या में बताए गए तरीके से ही समझना चाहिए। जब भगवान बुद्ध वैशाली में प्रवेश कर गए और जब सारे खतरे टल गए, और जब गुरु द्वारा सत्य (धम्म) की शिक्षा दिए जाने के परिणामस्वरूप असंख्य मनुष्यों और देवताओं में सत्य (धम्म) का ज्ञान उत्पन्न हुआ, तब इस राजकुमार ने बुद्ध की शक्ति को देखा, उचित श्रद्धा धारण की और भिक्षु बन गए। इसी प्रकार, बिना किसी अंतराल के, चार और पुरुष भी भिक्षु बन गए। वे भी, क्योंकि वे लिच्छवी राजकुमार थे और इस राजकुमार के सहयोगी बन गए थे, इसी प्रकार भिक्षु बन गए। आत्मज्ञानी बुद्ध कस्सपा के समय भी, वे उनके सहयोगी थे, इस राजकुमार के साथ भिक्षु बन गए और अपने भिक्षु कर्तव्यों का पालन किया; भगवान पद्ममुत्तरा के चरणों में भी, उन्होंने अच्छे कर्मों के बीज का संवर्धन किया, इत्यादि। वहाँ एक व्यक्ति ने अपने प्रारंभिक कर्तव्यों को पूरा करने के बाद, साकेत के अंजन वन में स्थित कब्रिस्तान क्षेत्र में निवास किया और लोगों द्वारा त्यागी गई एक पुरानी, अतिरिक्त लंबी कुर्सी (आसंडी) प्राप्त करके, जब भी उपवास का समय निकट आता, उसे चार पत्थरों पर

स्थापित किया, उसे सरकंडों, घास और अन्य सामग्री से ढक दिया, एक दरवाजा लगवाया और उपवास का पालन किया। परिश्रम और प्रयास से उसने प्रथम माह में ही अरहंत पद प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में कहा गया है:—
"मैं उस समय माला बनाने वाला था जिसका नाम था
सुदासना। मैंने स्टेनलेस स्टील देखा।
बुद्ध, पुरुषों के सांड, सबसे वृद्ध
दुनिया के।
प्राकृतिक फूलों को एकत्रित करने के बाद,
मैंने श्रद्धापूर्वक उन्हें बुद्ध को अर्पित किया।
पदुमुत्तरा। दृष्टि में शुद्ध, कुशल
मैंने स्वयं ही दिव्य दृष्टि प्राप्त कर ली।
इस श्रद्धापूर्ण भेंट के कारण,
फूल के साथ-साथ मानसिक कारणों से भी
संकल्प, मैं कभी किसी भी तरह से अचानक सामने नहीं आया।
दुष्ट अस्तित्व, एक लाख के लिए
युग (कप्पा)।
वहाँ सोलह शासक हो गए।
देवोत्तरा (परमदेवता) जैसा नाम,
महान शक्ति के विश्व-राजा छत्तीस
आज से कई युग (कप्पा) पहले।
मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी। :P
बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।
हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे मुक्ति के सुख का उचित आनंद ले रहे थे, अपनी ध्यानमग्न अवस्था (समापेट्टी) से उठे, अपने द्वारा प्राप्त समृद्धि पर चिंतन किया, और "आसंदिं कुटिकं कत्वा" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने अपने उत्साह की गति से अपनी आनंदमय अभिव्यक्ति दी।
55. यहाँ āsandiṃ kuṭikaṃ katvā का अर्थ इस प्रकार है: — āsandi, अर्थात्, चार भुजाओं वाला एक लंबा आसन; जिसकी लंबाई केवल चारों भुजाओं तक ही सीमित है; जहाँ केवल बैठना ही संभव है, लेटना नहीं; उस लंबे आसन को आवासीय संरचना बनाकर; पहले बताए गए तरीके से (हेट्ठा) एक झोपड़ी बनाकर; इस प्रकार कि जो व्यक्ति मौसम संबंधी खतरों के अभाव में प्रसन्नतापूर्वक वहाँ बैठा हो, उसे भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करने की सुगमता हो; इस प्रकार एक आवासीय संरचना बनाकर। इसके द्वारा वह बैठने और सोने की व्यवस्था (सनासना) में अपनी सर्वोच्च ऊँचाई, अपनी इच्छाओं की कमी और संतोष को दर्शाता है। यह बात धम्म के सेनापति ने भी कही है।
"जो व्यक्ति क्रॉस-फोकस बैठा था, उसके लिए-
वहाँ पैरों से विशेष बारिश हुई
घुटनों तक पानी में स्नान करना; एक भिक्षु (भिक्षु) के लिए जिसका
अपना मन निर्वाण की ओर उन्मुख है।
यह आराम से रहने के लिए बिल्कुल उपयुक्त है।
कुछ विद्वानों ने पाठ (पाठ) को "आसंदिकुटिकं" कहा है और इसके अर्थ का वर्णन इस प्रकार किया है: "आसंदिप्पमाणं कुटिकं कट्वा, यानी एक लंबी कुर्सी के आकार की झोपड़ी बनाना।" हालांकि, अन्य विद्वान इसके अर्थ का वर्णन इस प्रकार करते हैं: "पुरुषों के बैठने और सोने के लिए बने पलंग के ऊपर निर्मित आवासीय संरचना को आसंदि (लंबी चौकी) कहा जाता है; उस लंबी चौकी (आसंदिं) को आवासीय संरचना (कुटिका) बनाकर। ओग्गयाहा का अर्थ है नीचे गोता लगाना, तदनुसार प्रवेश करना। अंजनवनं का अर्थ है इस नाम का वन; वास्तव में, काजल रंग के फूलों की उपस्थिति के कारण चढ़ने वाली लताओं को अंजन (काजल की लताएँ) कहा जाता है; उन लताओं की प्रचुरता के कारण उस वन का नाम "अंजनवन (काजल की लता वन)" पड़ा।" लेकिन कुछ अन्य लोग इस प्रकार कहते हैं: "अंजन नाम महागच्छ (अंजन नामक एक बड़ा झाड़ीदार वन); उस अंजन वन में प्रवेश करके और एक लंबी कुर्सी सहित एक आवासीय संरचना का निर्माण करके; तिस्सो विज्जा अनुपत्ता, कतं बुद्धस्स शासनं, इस अभिव्यक्ति की व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए, लेकिन कुछ शब्दों को छोड़कर: विहारता मया (मेरे द्वारा जो उस वन में रह रहा था) ने तदनुसार तीन प्रकार के महाविज्ञान (विज्जा) प्राप्त किए थे; बुद्ध के उपदेश का पालन किया गया था। यही श्लोक थेरा के अरहंत पद (अञ्ञा) की घोषणा (ब्याकरण) भी था।
श्लोक पर टिप्पणी
थेरा अंजना का
तैयार है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(56):कुटिविहारिन

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (56) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
56. कुटिविहारिन [1]
इस जीवन में उनकी कहानी अंजन-वानिय की कहानी जैसी ही है, बस एक अंतर है: ज्ञान प्राप्ति के प्रयास में वे खेतों के किनारे टहल रहे थे और बारिश से बचने के लिए खेत के रखवाले की छोटी सी खाली झोपड़ी में शरण ली, और वहीं उन्हें अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त हुआ। इस पर रखवाला आया और बोला, 'झोपड़ी में कौन है?' उत्तर था, 'झोपड़ी में एक भिक्षु है,' और श्लोक का शेष भाग इस प्रकार है:

[56] को कुतिकायं भिक्खु कितिकायं॥
वीतरागो सुसमाहिता चित्तो॥
एवं जनाहि आवुसो॥
अमोघा ते कुतिका काटा' ती॥ ॥

[56] मेरी छोटी सी कुटिया में कौन है? एक भिक्षु है,
जिसने अपनी छोटी सी कुटिया में, सभी भावनाओं को वश में करके,
अपना मन पूरी तरह से एकाग्र कर लिया है। हे मित्र, यह जान लो कि
तुमने अपनी छोटी सी कुटिया व्यर्थ नहीं बनाई!

तब चौकीदार ने कहा: 'मेरे लिए तो वाकई सौभाग्य की बात है, कि आप मेरी छोटी सी झोपड़ी में आए हैं और यहाँ बैठे हैं!'

और परम पूज्य (बुद्ध) ने अपनी दिव्य श्रवण शक्ति से उनकी बातचीत सुनी और पहरेदार की इच्छा को समझा। और उन्होंने उससे ये श्लोक कहे:

कुटिया में एक भिक्षु रहता है, उसके हृदय में शांति है, वह सभी पापों से मुक्त है।
इस कर्म का फल तुम्हें यह मिलेगा: तुम देवताओं के स्वामी बनोगे,
छह बार, हाँ, सात बार, देवताओं के स्वामी, स्वर्गीय लोकों के शासक,
उसके बाद तुम्हारी सभी वासनाएँ शांत हो जाएँगी, तुम एक मौन बुद्ध [2] बन जाओगे।

उस समय से थेरा को कुटिविहारिन कहा जाने लगा।

[1] अर्थात्, झोपड़ी में रहने वाला; टीका कुटिविहारिया में।

[2] पच्चेक-बुद्ध। सिस्टर्स देखें, पृ. 11, नोट 4.

1.6-6[56] श्लोक पर टिप्पणी

कुटिविहारी थेरा
6.1. 'को कुटिकावं' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कुटिविहारी का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि जब भगवान पद्ममुत्तरा आकाश में विचरण कर रहे थे, तब उन्होंने ठंडे पानी को इकट्ठा करते हुए मन ही मन कहा, "मैं जल दान करूंगा।" वे अत्यंत प्रसन्न हुए, ऊपर की ओर मुख करके जल को ऊपर उछाल दिया। गुरु को उनके इस इरादे का पता चल गया और उन्होंने आकाश में खड़े

रहते हुए ही उनकी भेंट स्वीकार कर ली, ताकि उनकी पुण्यता और बढ़ जाए। इस कारण उन्हें अपार प्रसन्नता का अनुभव हुआ। शेष भाग थेरा अंजनवणीय की कथा में वर्णित बातों के समान ही है। हालांकि, अंतर यह है। ऐसा कहा जाता है कि इस व्यक्ति ने पूर्वोक्त विधि से भिक्षु दीक्षा ली और अपने प्रारंभिक कर्तव्यों का पालन करते हुए, स्वयं को आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपश्यना) के विकास में समर्पित कर दिया। शाम को जब वे एक खेत के पास से गुजर रहे थे, तो बारिश होने पर उनकी नज़र एक सरकंडे की कुटिया पर पड़ी, जो खेत के रखवाले के पुण्य कर्म का फल था। वे उसमें प्रवेश कर गए और घास पर बैठ गए। बैठते ही थेरा को अनुकूल मौसम प्राप्त हुआ, उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपश्यना) के विकास में स्वयं को लीन कर लिया और अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में इसका उल्लेख किया गया है।

"(सुनहरे रंग वाले को देखकर)

स्वयंजागृत बुद्ध, सीधे ऊपर की ओर जा रहे हैं

हवा में (anilañjasa), चमकता हुआ

जैसे बलि में घी छिड़की हुई अग्नि

(घटासनं), मानो वेदी पर जल रहा हो

भेंट चढ़ाने के लिए, मैंने अपने पास पानी इकट्ठा किया

हथेलियों से पकड़कर उसे आकाश में फेंक दिया।

बुद्ध, दयालु ऋषि, महान

हीरो ने मेरी भेंट स्वीकार कर ली।

पदुमुत्तरा नामक गुरु वहाँ खड़े थे।

आकाश की ओर देखकर उसने यह छंद कहा, क्योंकि

वह मेरी मंशा जानता था।

इस जल अर्पण के द्वारा और

उसके अंदर जोश का संचार हो रहा था

कभी भी किसी बुरी सत्ता में पुनर्जन्म न हो

एक लाख युगों (कप्पा) तक भी।

हे मनुष्यों के स्वामी (द्विपदिन्द)!

हे जगत के सबसे बड़े और सर्वोत्कृष्ट पुरुष,

पुरुषों! उस कृत्य के कारण, मुझे

निर्वाण के अविचल स्थल को प्राप्त किया।

जिसका विजय से कोई लेना-देना नहीं है और

हराना।

उन तीन विश्व-राजाओं का नाम एक हजार था

सामंत (सहस्त्रजा) (मैं साठ हो गया)

पांच सौ युग (कप्पा) पहले; वे थे

सभी क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के शासक-

पृथ्वी की परिक्रमा (चतुरंता)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

6.2. हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, जब थेरा वहां बैठे थे, तो क्षेत्र-निरीक्षक आकर इस प्रकार पूछा: "कुटिया में कौन है?" यह सुनकर थेरा ने इस प्रकार उत्तर दिया: "कुटिया में एक भिक्षु है।" क्षेत्र-निरीक्षक और थेरा दोनों के इस शब्द को एक साथ मिलाकर (एकज्जा) उसी रूप में (तथारूप) संगीतमय गायन की स्थापना की गई।

56. "कुटिया में कौन है? एक भिक्षु"

कामवासना से मुक्त (वीतराग), अच्छी तरह से-

मन की शांति के साथ वह कुटिया में है।

मित्र! इसे जान लो; यह व्यर्थ नहीं है।

क्या आपने अपनी कुटिया बनाई थी?

56,1. वहाँ, को कुटिकायं का अर्थ है:— क्षेत्र-निरीक्षक का प्रश्नवाचक शब्द इस प्रकार है:— इस कुटिया में कौन बैठा है? भिक्षु (भिक्षु) कुटिकायं का अर्थ है: उस थेरा का उत्तर इस प्रकार है:— "कुटिया में एक भिक्षु (भिक्षु) है।" फिर, उस प्रश्नकर्ता को उस कुटिया में रहने से प्रसन्न (अनुमोदापेत्वा) करते हुए, क्योंकि वह दान के लिए अतुलनीय (अनुत्तरा) योग्य प्राप्तकर्ता (दक्खिणेय्य) हो गया था, "वीतारागो" से शुरू होने वाला कथन उस पुण्य कर्म को अत्यधिक स्थापित (उलारमपटिट्ठापेतुं) करने के लिए किया गया है। उस कथन का अर्थ यह है:— "एक भिक्षु जिसने अपने दुराचार को त्याग दिया है, आपकी कुटिकायां में बैठा है; इसके परिणामस्वरूप, वह भिक्षु अब निर्मल है क्योंकि उसने सर्वोच्च मार्ग (मार्ग) की प्राप्ति से अपनी कामवासना को पूरी तरह से नष्ट कर दिया है; उस भिक्षु का मन सुसमाहितचित्तो (संतुलित) हो गया है क्योंकि उसने अद्वितीय एकाग्रता (समाधि) के माध्यम से निर्वाण को अपना ध्यान (आरम्मण) बनाकर अपने मन को उत्कृष्ट रूप से शांत कर लिया है; आवुसो (हे मित्र, क्षेत्र रक्षक!) जैसा कि मैं आपको यह अर्थ बताता हूं, एवं जानाहि (जिस प्रकार आप जान सकें) वैसा ही विश्वास करें और इसे स्पष्ट करें (अधिमुच्चस्सु)। अमोघा ते कुटिका का अर्थ है:- आपके द्वारा निर्मित कुटिया व्यर्थ नहीं है, बंजर नहीं है, बल्कि फलदायी और अनुकूल परिणाम (सौद्रया) देती है, क्योंकि इसका पूर्ण उपयोग एक दोषरहित अरहंत द्वारा किया गया है। यदि आप प्रसन्नतापूर्वक इसे स्वीकार करते हैं, तो आपकी यह प्रसन्न स्वीकृति आपके कल्याण और सुख के लिए दीर्घकालिक रूप से सहायक होगी।

56.2. थेरा की बातें सुनकर, क्षेत्र-रक्षक श्रद्धा से भर गया और मन ही मन कहने लगा, "सचमुच, यही तो मेरा लाभ है; निश्चय ही मेरा लाभ उत्तम है कि थेरा जैसे स्वामी ने मेरी कुटिया में प्रवेश किया और उसमें विराजमान हुए" और प्रसन्नतापूर्वक खड़े रहे। भगवान बुद्ध ने उनकी यह बातचीत अपने दिव्य श्रवण से सुन ली और उनकी प्रसन्नता (अनुमोदन) का भी ज्ञान प्राप्त कर लिया, इसलिए उन्होंने क्षेत्र-रक्षक को इन श्लोकों से संबोधित किया ताकि उन्हें इससे प्राप्त होने वाली समृद्धि का ज्ञान हो सके।

"एक शांत मन वाला, दोषरहित भिक्षु

झोपड़ी में निवास किया; परिणामस्वरूप

उस कार्य से तुम संप्रभु बन जाओगे

दिव्य प्राणियों का।

छत्तीस बार तुम दिव्य बनोगे-

राजा बनें और दिव्य संप्रभुता का प्रयोग करें।

चौंतीस बार, तुम दुनिया बनोगे-

राजा बनकर किसी राज्य का संप्रभु शासक बनना।

(अंत में) आप अपनी वासना से छुटकारा पा लेंगे

और रतनकुटी नामक मौन बुद्ध बन जाएं।

56,3. यद्यपि कुटिया (कुटिका) में थेरा की विशिष्ट स्थिति प्राप्त हो जाने के कारण, सर्वप्रथम, उसी घटना से, उनके लिए कुटिविहारी की उपाधि उत्पन्न हुई। संयोगवश, वही श्लोक उनके अरहंतत्व (अञ्ञा) को स्पष्ट रूप से दर्शाता है (ब्याकरण)।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा कुटिविहारी का

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(57):कुटिविहारिन2

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (57) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
57. कुटिविहारिन (2)

उनकी कहानी अंजना वन थेरा की कहानी से मिलती-जुलती है, बस एक अंतर है: जब उन्होंने समान परिस्थितियों में संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण किया), तो उन्होंने एक बहुत पुरानी कुटिया में धार्मिक अध्ययन किया। और उन्होंने सोचा: 'यह पुरानी कुटिया अब सड़ चुकी है; मुझे दूसरी बनानी चाहिए।' इसलिए उन्होंने नए कार्य की ओर ध्यान दिया। [1] तब मोक्ष की तलाश में एक आत्मा ने उन्हें यह श्लोक बोलकर विचलित करने का प्रयास किया, जो शब्दों में सरल है लेकिन अर्थ में गहरा है:

[57] अयामाहु पुराणिय कुटि अण्णाm̥ पत्थयसे नवाऽ कुटिm̥॥
आसां कुटिया विराजया दुक्ख भिक्खु पुना नवा कुटि' ती.॥॥

[57] आप कहते हैं कि यह एक प्राचीन झोपड़ी थी? एक और झोपड़ी, एक नई झोपड़ी बनाना
आपकी इच्छा है?
हे झोपड़ी की लालसा को त्याग दो!
नई झोपड़ी तुम्हारे लिए नया दर्द लाएगी, भिक्षु। [2]

ये शब्द सुनकर थेरा चिंतित हो गए और अथक परिश्रम से अंतर्दृष्टि प्राप्त करके शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इसके बाद उन्होंने उस श्लोक को दोहराया जिसने उन्हें विजय की ओर प्रेरित किया था और अपनी अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा के रूप में प्रस्तुत किया। क्योंकि उन्होंने कुटिया में रहते हुए ही ज्ञान प्राप्त कर लिया था, इसलिए वे भी कुटिविहारिन के नाम से जाने जाने लगे।

[1] कम्मा, कर्म.

[2] सी.एफ. सरभंगा, CCXXVIII। 'नई झोपड़ी' पुनर्जन्म का प्रतीक है।

1.6-7[57] श्लोक पर टिप्पणी

Dutiyakuṭivihārī Thera
अयमाहु पुराणिया से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कुटिविहारी का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि परम पूज्य पद्ममुत्तरा के प्रति श्रद्धा से भरे हुए उन्होंने भीषण गर्मी के समय उन्हें सरकंडे की पत्तियों से बना पंखा भेंट किया। गुरु ने धन्यवाद के श्लोक से उन्हें प्रसन्न किया। इसके आगे जो भी कहा जाना है, वह थेरा अंजनवनिया की कथा में कही गई बातों के समान ही है। हालांकि, अंतर यह है: कहा जाता है कि उन्होंने उक्त तरीके से भिक्षु का जीवन व्यतीत किया और एक पुरानी कुटिया (कुटिका) में निवास करते हुए अपने भिक्षु कर्तव्यों की परवाह नहीं की, बल्कि नवकम्मा (सुधार) की ओर अपना ध्यान लगाया और कहा: "यह कुटिया (कुटिका) तो पुरानी हो चुकी है; दूसरी कुटिया बनाना उचित होगा।" एक देवता ने, उनके कल्याण की कामना करते हुए, उनमें पश्चाताप की भावना उत्पन्न करने के उद्देश्य से, "अयमाहु" से शुरू होने वाले इस स्पष्ट रूप से ज्ञानवर्धक और अत्यंत महत्वपूर्ण श्लोक का उच्चारण किया।

57. यहाँ 'अयं' का अर्थ है निकट वर्तमान को दर्शाने वाला शब्द, जो स्पष्ट रूप से दिखाई देता है (आसन्नपच्चक्ख)। 'आहू' का अर्थ है 'यह था'; इस प्रकार, यही अर्थ है। यहाँ श्लोक की रचना में सुगमता के लिए स्वर को लंबा करके कहा गया है। 'पुराणीय' का अर्थ है पुराना और अपनी जीवन अवधि पूरी कर चुका (अद्धगत)। 'अञ्ञं पत्थयते नेवं कुटिं' का अर्थ है: इस कुटिया की पुरानी अवस्था और वृद्धावस्था के कारण, अब इससे अलग एक नई कुटिया के निर्माण की आपने आकांक्षा, इच्छा और माँग की। 'आसं कुटिय्या विराजय' (आपको अपनी इच्छा से विरक्त होना चाहिए), पुरानी कुटिया के समान ही नई कुटिया की लालसा और लालसा करते हुए, फिर भी; वहाँ आप सभी प्रकार से विरक्त रहें। क्यों? दुक्खा भिक्खु (भिक्षु) पुना नवा कुटी का अर्थ इस प्रकार है:— हे भिक्षु! नया नाम दिया गया एक कुटिया, अब फिर से बनाई जा रही है, दुखदायी (दुक्खा) है क्योंकि यह पीड़ा लाएगी; इसलिए, एक और नई पीड़ा को उत्पन्न किए बिना, आपको उसी पुरानी कुटिया में रहना चाहिए जो आपके लिए बनाई गई थी और जो कुछ भी आपको करना चाहिए वह स्वयं करें। वास्तव में, यहाँ यही अर्थ है:— हे भिक्षु! आपने मन ही मन कहा: "यह पुराना सरकंडा निवास तो है, पर भिक्षु के कर्तव्य नहीं; परन्तु ऐसा चाहने से, सही एकाग्रता (भावना) के विकास के प्रति समर्पित न होकर, क्योंकि आपने दूसरे जन्म में पुन: जन्म लेने की घटना पर विशेष रूप से विजय प्राप्त नहीं की है, यह तो भविष्य में अपने शरीर-निर्माण (अत्तभावकुटी) के लिए भी आकांक्षा करने के समान है। परन्तु नया शरीर तो वृद्धावस्था, मृत्यु, चिंता, विलाप (परिदेव) आदि जैसे कष्टों से ग्रस्त होने का दुख है; इसलिए, सरकंडे निवास के समान अपने शरीर-निर्माण (अत्तभावकुटी) से अनासक्त होकर, उसकी खोज न करके और उसमें कोई आशा न रखकर, वहाँ सर्वथा अनासक्त मन से विरक्त हो जाओ; इस प्रकार, तुम्हें बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) के दुख (दुक्खा) का सामना नहीं करना पड़ेगा। इस प्रकार, यह सुनकर हे दैवीयता, थेरा पश्चाताप से भर गए, उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास को प्रेरित किया, परिश्रम किया, प्रयास किया और कुछ ही समय में अरहंत पद पर आसीन हो गए। अतः अपदान में कहा गया है:—

"बुद्ध पद्ममुत्तरा के लिए, ऐसा व्यक्ति

जैसा कि दुनिया में सबसे बड़ा था, जो था

फैली हुई घास पर बैठे हुए, इस तरह

मैंने उस व्यक्ति को शांत स्वभाव का मानते हुए जानकारी एकत्र की।

घास-नरकट की माला और बांधकर

उसी को एक परिवार में शामिल किया और बुद्ध को अर्पित किया।

ऐसा व्यक्ति जो मनुष्यों का सम्राट हो।

(द्विपदिन्दा)। मेरी भेंट स्वीकार करके,

वह पंखा, दुनिया का सर्वज्ञानी नेता

मेरे इरादे का पता चलने पर

यह श्लोक।

जैसे मेरा शरीर ठंडा है और वहाँ मौजूद है

गर्मी पर, इसी प्रकार, आपका मन भी ऐसा ही हो।

स्पष्ट रूप से आग की तीन श्रेणियों से मुक्त।

सभी दिव्य प्राणी, जो सभी आश्रित थे

जंगल में सब एक साथ आए, (कहते हुए)

स्वयं:) "आइए सुनें कि बुद्ध क्या कहते हैं

दानदाता को प्रसन्न करना सिखाने जा रहा हूँ

(हासयन्तं).

वहाँ दिव्य के शीर्ष पर विराजमान

देवसंघ (भीड़), भगवान

इन छंदों का उच्चारण करते हुए दाता

बहुत आनंदित। इस दान के कारण

पंखे की पेशकश के साथ-साथ इसके कारण भी

मानसिक संकल्प से, दाता बन जाएगा

सुब्बत नाम से प्रसिद्ध एक विश्वराज।

उस अधिनियम के अवशेष के कारण,

उज्ज्वल आधार (सुक्कमूल) से प्रेरित होकर वह

विश्व-राजा बनो, जिसे इस नाम से जाना जाता है

मालुता.

इस पंखे की पेशकश के साथ-साथ

उसने अत्यधिक सम्मान नहीं किया।

किसी भी दुष्ट अस्तित्व में उत्पन्न होना पड़ता है

(दुग्गति) एक लाख युगों के लिए

(कप्पा)।

तीस हजार युगों (कप्पा) में वे

(विश्व-राजा) सुब्बता तीस वर्ष का होगा-

संख्या में आठ; उनतीस हजार में,

मालुता नाम के आठ (विश्व राजा) थे।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी; :P

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद पर आसीन होने के बाद, उन्होंने उसी श्लोक का पुनः पाठ करते हुए मन ही मन कहा; 'यह (श्लोक) मेरे अरहंत पद की प्राप्ति का प्रेरक था।' कुटिया से संबंधित सलाह के माध्यम से प्रसिद्धि प्राप्त करने के कारण उनका नाम (समाञ्ञा) कुटिविहारी पड़ गया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा दुतियाकुतिविहारी का

तैयार है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(58):रमानियाकुटिका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (58) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
58. रमणीयकुटिका
उनकी कहानी अंजना -वनवासी की कहानी से मिलती-जुलती है, बस एक अंतर है: वे वज्जियान क्षेत्र के एक छोटे से गाँव के पास एक झोपड़ी में रहते थे। वह एक सुंदर, मनमोहक छोटी सी झोपड़ी थी, जिसकी फर्श और दीवारें अच्छी तरह से बनी हुई थीं, चारों ओर एक पार्क और तालाब था, और उसके चारों ओर चिकनी, मोती जैसी रेत बिछी हुई थी। थेरा के उत्कृष्ट गुणों ने उसकी सुंदरता को और भी बढ़ा दिया था। उन्होंने वहीं अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया और वहीं रहने लगे। अब जब लोग बस्ती देखने आते थे, तो उन्हें वह झोपड़ी भी दिखाई देती थी। एक दिन कुछ व्यभिचारी स्त्रियाँ पास से गुजरीं और झोपड़ी की सुंदरता देखकर बोलीं:

'वहाँ रहने वाला भिक्षु एक ऐसा युवक हो सकता है जिसे हम मोहित कर सकें।' इसलिए वे उसके पास गए और बोले: 'महोदय, आपका निवास स्थान बहुत सुंदर है। हम भी अपनी जवानी के चरम पर हैं, और हमें देखना भी बहुत अच्छा लगता है।' और फिर वे अपने वस्त्र आदि दिखाने लगे। लेकिन थेरा ने अपनी भावहीन अवस्था को इस श्लोक में व्यक्त किया:

[58] रामणियो मे कुतिका सद्धादेया मनोरमा॥
न मे अत्थो कुमारीहि यसां अत्थो ताहिं गच्छथ नारियो' ती॥ ॥

[58]
मेरी छोटी सी झोपड़ी कितनी प्यारी है, जो सच्चे और धर्मनिष्ठ लोगों का सबसे सुंदर उपहार है ।
तो मुझे स्त्रियों की क्या आवश्यकता है? नहीं, जाओ
वहाँ उनके पास, हे स्त्रियों, जिन्हें तुम्हारी आवश्यकता है।

इस 'आवश्यकता न होने' वाले कथन से, थेरा के अरहंतत्व (ज्ञानोदय) की घोषणा निहित है।

1.6-8[58] श्लोक पर टिप्पणी

रमणीयकुटिका थेरा
रामाणीय मे कुटिका से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा रामाणीय कुटिका का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि उन्होंने भी भगवान पद्ममुत्तरा के समय में अच्छे कर्मों का बीज बोया, अपने जन्म-जन्म चक्रों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और आज से अठारह सौ युग (कप्पा) पहले भगवान अत्थादस्सी के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। ज्ञान की आयु प्राप्त करने पर, उन्होंने भगवान को बुद्ध के योग्य आसन अर्पित किया। भगवान को श्रद्धापूर्वक पुष्प अर्पित करने के बाद, उन्होंने पांच पृथ्वी-स्पर्शी मुद्राओं (पंचपतिठित) से उन्हें प्रणाम किया, उनकी परिक्रमा की और प्रस्थान किया। शेष कथा थेरा अंजनवनिया की कथा में वर्णित कथा के समान है। लेकिन यही अंतर है। --- ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने पहले बताए गए तरीके से भिक्षु दीक्षा ली और अपने प्रारंभिक कर्तव्य पूरे करने के बाद, वज्जी राज्य के एक गाँव में स्थित एक कुटिया में निवास किया। वह कुटिया अत्यंत सुंदर, आकर्षक और सुखदायक थी, जिसकी दीवारें और फर्श अच्छी तरह से निर्मित थे, और उसके चारों ओर सुंदर उद्यान और तालाब आदि थे। वह एक ऐसे स्थान पर स्थित थी जहाँ रेत मोतियों की तरह बिखरी हुई थी और उसके आसपास का क्षेत्र पॉलिश किया हुआ, साफ-सुथरा आदि होने के कारण और थेरा के संन्यासी कर्तव्यों के पूर्ण पालन के कारण वह और भी अधिक मनमोहक प्रतीत होती थी। वहाँ रहते हुए, थेरा ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का विकास किया और शीघ्र ही अरहंत पद प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:

“अंदर प्रवेश करने के बाद

घना जंगल, जो शांत था

(अप्पसद्दा) और अशांति से मुक्त

(निराकुला), एक सिंह-आसन की पेशकश की गई थी

मुझे अत्थादस्सी जैसे बुद्ध के पास ले जाओ।

फूलों की माला एकत्र करने के बाद

मैंने हाथ में लेकर उनकी परिक्रमा की।

गुरु की सेवा करने के बाद,

मैंने उत्तर दिशा की ओर मुख करके प्रस्थान किया।

दिशा।

हे मनुष्यों के सम्राट (द्विपदिन्द),

दुनिया का सबसे बुजुर्ग, बैल

पुरुषों! मैंने स्वयं को (आग से) बनाया है।

पूरी तरह से बुझ गया; सभी अस्तित्व

पूरी तरह से समाप्त हो गया था।

यह अठारह सौ युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले मैंने अपनी दानशीलता का प्रस्ताव रखा था।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह (अर्पण करने का) फलदायी परिणाम है।

सिंह-सिंहासन।

सात सौ युग पहले, मैं एक बन गया

महान शक्ति का विश्व-राजा, संपन्न

सात पीढ़ियों के साथ, एक योद्धा राजकुमार

(खट्टिया) सन्निब्बापक के नाम से जाना जाता है।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, थेरा के वहां रहते हुए अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, कुटिया की सुंदरता (कुटिका) के कारण, मठवासी प्रवृत्ति के लोग इधर-उधर से आकर कुटिया को देखने आए। फिर एक दिन, कुछ जन्मजात दुष्ट स्त्रियाँ, जो वहाँ गई थीं, ने कुटिया की सुखद स्थिति को देखकर कहा: "आदरणीय महोदय! आपका निवास स्थान रमणीय है; हम भी अत्यंत सुंदर हैं और अभी भी अपनी युवावस्था में हैं," इस इरादे (अधिप्पाय) से कि "यहाँ रहने वाले इस भिक्षु का हृदय हमारे प्रति आकर्षित हो जाए।" ऐसा कहकर, वे अपने स्त्रीत्वपूर्ण इश्कबाज़ी आदि का प्रदर्शन करने लगीं। थेरा ने "रामणीय मे कुटिका, सद्धादेय्या मनोरमा" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, ताकि वे स्वयं के कामवासना से रहित (राग) होने की स्थिति को प्रकट कर सकें।

58. वहाँ, ramaṇīyā me kuṭikā का अर्थ इस प्रकार है:— आपने जो कहा है, अर्थात्: "आदरणीय महोदय! आपकी कुटिया रमणीय है," वह सत्य है; मेरी यह आवासीय कुटिया रमणीय और देखने में सुंदर है (manuññarūpā)। सद्धा दय्या का अर्थ इस प्रकार है:— वास्तव में, वह कुटिया भी धार्मिक आस्था के साथ दान की गई थी, क्योंकि इसे धार्मिक इच्छा और धार्मिक आस्था के साथ, कर्म के फल में विश्वास रखते हुए अर्पित किया जाना चाहिए था। "इस प्रकार प्रेमपूर्वक बनाकर भिक्षुओं को अर्पित करने से, दान का यह फल प्राप्त हुआ; मेरी कुटिया धन से नहीं बनी थी।" मनोरमा का अर्थ इस प्रकार है:— इसने दान को देखने और उसका आनंद लेने वालों के मन को भी आनंदित किया; इस प्रकार, मनोरमा (मन को आनंदित करने वाली)। वास्तव में, धार्मिक आस्था के साथ दान करने के कारण यह मन को भी आनंदित करती है; धार्मिक आस्था आदि के साथ, लोगों ने आदरपूर्वक स्वयं दान (दय्याधम्म) तैयार करने के बाद अपना दान दिया; अच्छे लोग दान का आनंद लेते हुए, उसका पालन-पोषण करने का दायित्व ग्रहण करते हैं। (पयोगासय) दाता की सत्यनिष्ठा (अविसंवादनत्थ) भी; उन्होंने आप सभी द्वारा परिकल्पित तरीके (आकार) से सहायता प्रदान करने में कोई चूक नहीं की; यही इसका महत्व है। न मे अत्थो कुमारीहि का अर्थ है: क्योंकि मेरा मन सभी पहलुओं में इंद्रिय सुखों से विचलित नहीं होता, इसलिए मुझे कन्याओं की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में, विधिवत उचित कर्म करने के द्वारा भी, अर्थात्, मेरे जैसे भिक्षुओं के लिए स्त्रियों द्वारा कोई वचन नहीं लिया जाता; और न ही (पगेव) कामवासना (राग) के कारण; इसलिए मुझे युवतियों की आवश्यकता नहीं है। यहाँ, युवतियों को लेने को विवेक (उपलक्खण) के प्रकाश में देखा जाना चाहिए। "आपको अपने जीवन को इस प्रकार व्यवस्थित करना चाहिए (पटिपज्जा), अर्थात्, मेरे जैसे भिक्षु की उपस्थिति में: पाप तक अनुचित कर्मों के साथ भी, आपके द्वारा यह प्रदर्शन आप जैसे समान प्रवृत्ति (अज्जासय) वाले लोगों की उपस्थिति शानदार हो सकती है; उन्हें इंगित करते हुए उन्होंने कहा: "येसंथो ताहिं गच्छथा नारियो।" यहाँ, येसं का अर्थ है: उन लोगों का जो कामुक सुखों (काम) के प्रति आसक्त हैं। अत्थो का अर्थ है उद्देश्य (पयोजन)। ताहिं का अर्थ है वहाँ, उनकी उपस्थिति में। नारियो स्त्रियों को संबोधित करने का एक शब्द है। यह सुनकर स्त्रियाँ भ्रमित (मंकु) और निराश (पट्टक्खन्ध) हो गईं और उसी रास्ते से चली गईं जिससे वे आई थीं। यहाँ भी, "न मे अत्थो कुमारीहि (मुझे युवतियों की आवश्यकता नहीं है);" इस प्रकार, कामुक सुखों की आवश्यकता न होने की स्थिति के बारे में उनके शब्दों के माध्यम से भी, थेरा ने उनके अरहंतत्व को प्रकट किया है; अतः, इसे देखा जाना चाहिए।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा रमणीयकुटिका का

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(59):कोसलाविहारिन

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (59) ------>>>> अगला

अध्याय I.

एकल श्लोक

59. कोसलाविहारिन

उनकी कहानी अंजना-वनवासी की कहानी से मिलती-जुलती है, बस एक अंतर है: दीक्षा लेने के बाद, वे कोसल राज्य के एक गाँव के पास जंगल में, एक गृहस्थ अनुयायी के निवास के निकट रहने लगे। अनुयायी ने उन्हें एक पेड़ के नीचे डेरा डाले हुए देखा , तो एक छोटी सी झोपड़ी बनाकर उन्हें दे दी। वहाँ थेरा ने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। फिर अपनी मुक्ति (निर्वाण) से परिपूर्ण होकर उन्होंने यह गाथा कही:

[59] सद्ध्याहाऽ पब्बजितो अरण्ये मे कुतिका काटा॥
अप्पमत्तो च अतापि संपाजानो पतिस्सातो' ति.॥॥

[59] अपने विश्वास में दृढ़ [1] मैंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व के लिए)। अब यहाँ
जंगल में मेरे लिए एक कुटिया बनाई गई है;
और मैं उत्साह और उमंग से ध्यान करता हूँ,
सतर्क बुद्धि और मन की स्पष्टता के साथ।

यह उनकी अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा थी, और चूंकि वे कोसला में इतने लंबे समय तक रहे, इसलिए वे कोसला निवासी के रूप में जाने जाने लगे।

[1] 'जब मैंने वैशाली में परम पूज्य (बुद्ध) की शक्ति देखी, तो मैंने सोचा: "यह सिद्धांत और नियम पूर्णतः मार्गदर्शन करने में सक्षम है; इसलिए मैं निश्चित रूप से इस प्राप्ति के द्वारा वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्त हो जाऊँगा।" और इस प्रकार उत्पन्न विश्वास के कारण, मैं (भिक्षुत्व के लिए) प्रस्थान कर गया' (टीका)। श्लोक की अंतिम दो पंक्तियाँ चार विशेषणों का विस्तार हैं, वाक्य में कर्ता और विधेय का स्पष्ट उल्लेख नहीं है।

1.6-9 [59] श्लोक पर टिप्पणी

कोसलाविहारी थेरा

सद्धायाहं पब्बजितो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कोसलविहारी का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहते हैं कि इन्होंने भी भगवान पद्ममुत्तरा के समय में पुण्य का बीज बोया और यह-वह पुण्य कर्म किए। शेष कथा थेरा अंजनवणीय की कथा से मिलती-जुलती है। परन्तु अंतर यह है: कहा जाता है कि इन्होंने उक्त प्रकार से संन्यासी बनकर अपने प्रारंभिक कर्तव्यों का पालन किया और कोसल राज्य के एक गाँव में एक भक्त के परिवार के साथ वन में निवास किया। उस भक्त ने उन्हें एक वृक्ष की तलहटी में रहते देखा, एक कुटिया बनवाई और उसे थेरा को भेंट कर दिया। कुटिया में रहते हुए, अनुकूल वातावरण के कारण थेरा ने मानसिक एकाग्रता (समाधान) प्राप्त की, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में लगे रहे और कुछ ही समय में अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदाना में कहा गया है:—

“हिमवंता (हिमालय) से कुछ ही दूरी पर, मैं रहता था।

एक पत्ती-फैलाव। मैंने अपनी प्रदर्शनी लगाई है।

मैं अपने भोजन (घासा) में लालची था, तब

लेटने की भी आदत थी।

छोटी (लैम्बा) कंदयुक्त जड़ों को खोदकर निकालना,

कंद और कंद (तक्कला), जिनमें

बेर (कोला) फल लाया, निशान-

भल्लाटक और क्विंस फल

(बिल्ला) मैंने तब (भोजन के लिए) तैयार रखा था।

पदुमुत्तरा, संसार के ज्ञानी, प्राप्तकर्ता

बलि चढ़ाने के बाद, आने पर

मेरी मंशा जानने के लिए, वे मेरे समक्ष आए।

पास पहुँचने पर, विशाल हाथी,

देवताओं के देवता, मनुष्यों में श्रेष्ठ बैल,

मैंने एक कंद को जलाया और उसे बिखेर दिया।

उनके कटोरे में।

मुझे खुशी हो रही है (तोसायांतो),

महान नायक ने (मेरी भेंट) को भोजन के रूप में ग्रहण किया।

(परिभुञ्जि). खाना ख़त्म करके,

सर्वज्ञ बुद्ध ने यह कहा था

श्लोक।

अपने मन को सुखद रूप से धार्मिक बनाने के बाद

आपने मुझे एक कंद की पेशकश की थी; आप ऐसा नहीं करेंगे

सौ वर्षों तक किसी भी दुष्ट अस्तित्व में पुनर्जन्म लेना।

हजारों युगों का भय।

बाद में (carimaṃ) ऐसा हुआ (vattate)

मेरे लिए; सभी अस्तित्व सुधर गए थे

समाप्त; मैं अपना अंतिम शरीर धारण करता हूँ

स्वयंजागृत बुद्ध का उपदेश।

आज से चौवन युग (कप्पा) पहले,

मैं महान शक्ति वाला विश्व-राजा बन गया।

सात वंशों से संपन्न, सुमेखालिया के नाम से जाने जाते हैं।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "सद्धायाहंपब्बजितो" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने मुक्ति के आनंद के अनुभव के कारण उत्पन्न उत्साह की गति से आनंदमय उच्चारण (उदान) किया।

59. वहाँ, सद्धाय का अर्थ इस प्रकार है:— जब भगवान वेसाली के पास पहुँचे और उन्होंने अपने भीतर उत्पन्न हुई श्रद्धा (सद्धा) के फलस्वरूप उनकी शक्ति को देखा, तो उन्होंने कहा:— "यह व्यवस्था निश्चय ही संसार (निय्यानिक) से मुक्ति दिलाने में सहायक है; अतः, इस उचित अभ्यास (पटिपत्ति) के द्वारा मैं वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्त हो जाऊँगा; पब्बजितो का अर्थ है भिक्षुत्व की ओर अग्रसर होना। अरञ्ञे मे कुटिका कटा का अर्थ है; उस भिक्षुत्व के अनुकूल होने के कारण, मेरे लिए वन में एक कुटिया बनाई गई थी; भिक्षुत्व के अनुरूप वनवासी बनकर, मैं एकांतवास में रहने लगा; इस प्रकार उन्होंने बताया। अतः उन्होंने कहा: "अप्पमत्तो च आतापी, "संपजानो पतिसत्तो," जिसका अर्थ इस प्रकार है:— वनवास के लाभ से, शारीरिक एकांतवास के माध्यम से, वहाँ सचेतनता में लगे रहकर और विचारहीनता से बचकर, वह अप्पमत्तो हो गया, जिसका अर्थ है परिश्रमी, न कि लापरवाह; आतापी का अर्थ है सुनियोजित परिश्रम की अवस्था; संपजानो पतिसत्तो का अर्थ है:— मैं निरंतर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करता रहा, ताकि सचेतनता और सावधानी (संपजाञ्ञा) की सर्वांगीण पूर्ति हो सके, जो प्रारंभिक भाग (पुब्बभागीय) है, और प्रचुर ज्ञान (पञ्ञा) और जागरूकता (सती) की प्राप्ति हो सके, साथ ही अरहंतत्व की प्राप्ति हो सके; यही इसका अर्थ है। उनकी परिश्रम की अवस्था आदि की घोषणा में, यह उनके अरहंतत्व (अञ्ञा) की प्राप्ति का प्रकटीकरण मात्र था; उनके लंबे समय तक वनवास की अवस्था के कारण। हालांकि, कोसल राज्य में ही उनका पदनाम कोसलविहारी (Kosalavihārī) अस्तित्व में आया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा कोसलविहारी का

तैयार है।

**********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(60):सिवली
श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (60) ------>>>> अगला

अंतर्वस्तु

अध्याय I.
एकल श्लोक

60. सीवली
भंते शिवली शाक्यपुत्र
उनका पुनर्जन्म इस बुद्ध युग में राजा की पुत्री सुप्पवासा के पुत्र के रूप में हुआ। [1] जब उनकी माता संतानाभ्रंश से पीड़ित थीं और सात दिन तक घोर पीड़ा में रहीं, तो उन्होंने अपने पति से कहा: 'मरने से पहले मैं एक भेंट दूंगी।' और उन्होंने उन्हें भगवान (बुद्ध) के पास यह कहते हुए भेजा: 'जाओ और मेरी दशा के बारे में भगवान (बुद्ध) को बताओ, और उन्हें आमंत्रित करो; और वे जो कहें, उसे ध्यान से सुनो और आकर मुझे बताओ।' उन्होंने सुप्पवासा की इच्छा का पालन किया, और भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'कोलियों की पुत्री सुप्पवासा प्रसन्न हों। वे सुखी और स्वस्थ होकर एक स्वस्थ बच्चे को जन्म दें।' राजा ने यह सुना, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और गाँव के लिए निकल पड़े। उनके आने से पहले ही सुप्पवासा ने एक पुत्र को जन्म दिया। [61] जो लोग आँसू भरी आँखों से उनके चारों ओर खड़े थे, वे प्रसन्न होकर राजा को यह बताने के लिए चले गए। उन्होंने उन्हें आते देखा और सोचा, 'दस शक्तियों वाले (दशबल यानी बुद्ध) ने जो कहा था, वह पूरा हो गया है।' और वे राजकुमारी के पास गए और उन्हें बताया कि भगवान (बुद्ध) ने क्या कहा था। तब राजकुमारी ने उनसे बुद्ध और भिक्षु संघ का सात दिनों तक आतिथ्य सत्कार करने का अनुरोध किया। और यह कहते हुए कि, 'बच्चे का जन्म हुआ है, जिससे हमारे सभी सगे-संबंधियों के हृदय में प्रसन्नता आई है,' उन्होंने उसका नाम सिवाली (शुभ) रखा।
जन्म के सातवें दिन ही वह सब कुछ करने में सक्षम हो गया था। उस दिन धम्म के सेनापति सारिपुत्त ने उससे बातचीत की, [2] और कहा: 'क्या तुम्हारे जैसे कष्टों पर विजय प्राप्त करने वाले के लिए संसार त्यागकर संन्यास लेना आवश्यक नहीं है?' शिशु ने तुतलाते हुए कहा, 'महोदय, मैं संसार त्यागकर संन्यास लूँगा।' सुप्पवासा ने उन्हें बात करते देखा और थेरा से पूछा कि उन्होंने क्या कहा। 'हमने उसके द्वारा प्राप्त किए गए दीर्घ कष्टों के बारे में बात की। आपकी अनुमति से मैं उसे संन्यास की दीक्षा दूँगा।' उसने उत्तर दिया: 'ठीक है, महाराज; उसे दीक्षा दीजिए।' और सारिपुत्त ने उसे दीक्षा देते हुए कहा: 'सीवली, तुम्हें अपने द्वारा प्राप्त किए गए दीर्घ कष्टों के कारण के अलावा और कोई शिक्षा नहीं चाहिए। इस पर विचार करो।' बच्चे ने उत्तर दिया, 'महोदय, मुझे दीक्षा देने का भार आपका था; लेकिन मैं अपनी क्षमता का पता लगा लूँगा।' जिस क्षण उसके बालों की पहली लट काटी गई, वह प्रथम मार्ग (निर्वाणिक समाधि) की सिद्धि में स्थापित हो गया, दूसरी लट काटे जाने पर द्वितीय मार्ग की सिद्धि में, और इसी प्रकार तीसरी और चौथी लटों के लिए भी। ... [3]
अन्य शिक्षकों का कहना है कि सारिपुत्त द्वारा उन्हें भिक्षु दीक्षा दिए जाने के बाद, वे उसी दिन चले गए और एक एकांत कुटिया में निवास करते हुए, अपने दुखद विलंबित जन्म पर ध्यान किया, और इस प्रकार, उनका ज्ञान परिपक्व होकर अंतर्दृष्टि के मार्ग में उतर गया, मन के सभी मादक पदार्थों (विकारों/इच्छाओं) को त्यागकर [4] और इस प्रकार अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। उस पर [62] निर्वाण के आनंद का अनुभव करते हुए, उन्होंने भावुक होकर यह कहा (गाथा):

---

[60] ते मे इज्झसु संकप्पा यदत्तो पविसिm कुतिइm॥
विज्जविमुत्तिं पचेसां मनानुसयामुज्जहिं' ति.॥ ॥

---

[60] अब वे सफल हो गए हैं, मेरे सभी सर्वोच्च उद्देश्य,
जिनकी पूर्ति के लिए मैंने यह शांत शरणस्थल चुना।
पवित्र ज्ञान और स्वतंत्रता, मेरी खोज,
सभी छिपे हुए व्यर्थ अभिमानों को मैं त्याग देता हूँ।

---

[1] कोलिया का राजा। यह कहानी 100वें जातक (i. 242) की प्रस्तावना में, उदाना (II. 8) में, और ध्प. टिप्पणी में श्लोक 414 पर (cf. अंग., ii. 62) बताई गई है। किंवदंती के अनुसार, माँ सात साल और सात दिन तक अपने बच्चे को जन्म देने में असमर्थ रही।
[2] धम्मपद (414) में श्लोक यहाँ उद्धृत किया गया है, और टीका (पीटीएस संस्करण, खंड iii) में वर्णित प्रकरण।
[3] यहाँ अंग पर टिप्पणी , i. 24. द्वारा निपटाए गए प्रकरण का अनुसरण किया गया है, जहाँ भेंट प्राप्तकर्ता के रूप में सिवली की श्रेष्ठता का उल्लेख किया गया है।
[4] पृष्ठ 52, नोट 4 देखें।

1.6-10 [60] श्लोक पर टिप्पणी
सिवली थेरा
10.1. 'ते मे इज्जिंसु संकप्पा' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सीवली का है। क्या यही इसका मूल है? यह भी, भगवान बुद्ध पद्ममुत्तरा के समय में, पहले बताए गए तरीके (हेट्ठा) से मठ गए, श्रोताओं के सबसे दूर खड़े हुए, और जब वे सत्य (धम्म) सुन रहे थे, तो उन्होंने देखा कि गुरु एक भिक्षु को दान प्राप्त करने वालों (लाभी) में सर्वोच्च स्थान पर बिठा रहे हैं। मन ही मन यह कहते हुए कि "भविष्य में मेरे लिए भी ऐसा ही बनना उचित है," उन्होंने दशबाला (बुद्ध पदुमुत्तरा) को आमंत्रित किया, गुरु और भिक्षुओं के समूह को बड़ी मात्रा में दान दिया और अपनी यह इच्छा व्यक्त की: "हे भगवान! इस भक्तिमय कर्म के फलस्वरूप, मैं किसी अन्य समृद्धि की कामना नहीं करता; परन्तु भविष्य में, बुद्ध के आगमन पर, मैं भी उस भिक्षु के समान दान प्राप्त करने वालों में सर्वोच्च बनना चाहता हूँ, जिसे आपने

इस सर्वोच्च पद (एतदग्ग) पर आसीन किया है।" गुरु ने अनंतार्य की अनुपस्थिति देखकर उनसे भविष्यवाणी की: "तुम्हारी यह इच्छा भविष्य में बुद्ध गौतम के समक्ष पूर्ण होगी," और वे प्रस्थान कर गए। एक सुकुल के पुत्र ने अपने जीवन भर अच्छे कर्म किए और जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते हुए, बुद्ध विपस्सी काल में बंधुमती नगर से कुछ ही दूरी पर स्थित एक गाँव में जन्म लिया। उस समय बंधुमती नगर के नागरिकों ने अपने राजा से विचार-विमर्श करने के बाद दस प्रकार की शक्ति वाले दशबल को दान दिया। एक दिन जब वे सब मिलकर दान दे रहे थे, तो उन्होंने आपस में कहा, "हमारे दान (दानमुख) में ऐसी क्या बात है जो प्रकट नहीं होती?" और उन्हें शहद और दही के गोले का भी पता नहीं चला। उन्होंने जिले से शहर में प्रवेश करने वाली सड़क पर लोगों को तैनात कर दिया और कहा, "हम इन्हें हर जगह से लाएंगे।" उसी समय, एक अच्छे परिवार का यह पुत्र अपने गाँव से दही के गोलों से भरा एक बर्तन लेकर शहर की ओर जा रहा था, इस इरादे से कि जो भी उपलब्ध होगा, उसे वापस ले आएगा। उसने मन ही मन कहा, "मैं अपना चेहरा, हाथ और पैर धोकर प्रवेश करूँगा।" उसने आराम करने के लिए उपयुक्त स्थान (फासु) की तलाश की और उसे हल के सिर के बराबर एक मधुमक्खी रहित छत्ता (निम्मक्खिका दण्डमधु) मिला। उसने उसे इकट्ठा करते हुए मन ही मन कहा, "यह मेरे पुण्य फल स्वरूप उगा है।" और शहर में प्रवेश कर गया। नागरिकों द्वारा तैनात व्यक्ति ने उसे देखा और पूछा, "हे व्यक्ति! तुम इसे किसके लिए लाए हो?" उत्तर था, "भगवान के लिए। किसी के लिए नहीं; लेकिन इसे बेचने के लिए लाया हूँ।" (पहले वाले ने दूसरे से इस प्रकार निवेदन किया):— "हे मनुष्य! उस स्थिति में, कृपया यह सोने का सिक्का (कहापना) ले लीजिए और अपना शहद तथा दही का गोला भी दे दीजिए।" उस ग्रामीण ने मन ही मन सोचा: "यह वस्तु तो अधिक महंगी नहीं है; फिर भी इस व्यक्ति ने एक ही बार में इतना कुछ देने की पेशकश की (एकप्पाहारेनेवा); मुझे इसकी जांच करनी चाहिए (यीमंसितुं)।" इसके बाद,उसने उत्तर दिया: "मैं अपना माल (डेमी) एक सोने के सिक्के की कीमत पर नहीं दूंगा।" (खरीददार ने कहा): "यदि ऐसा है, तो कृपया मुझे दो (सोने के सिक्के) स्वीकार करके बेच दें।" उत्तर था, "मैं दो की कीमत पर भी नहीं बेचूंगा।" इस प्रकार प्रस्ताव बढ़ाते हुए सौदा एक हजार तक पहुंच गया।

10.2. उस (ग्रामीण) ने ऐसा सोचा:— "और बढ़ाना उचित नहीं है; इसे यहीं रहने दो; मैं पता लगाऊंगा कि इस (वस्तु) का क्या किया जा सकता है।" फिर उसने उस खरीदार से पूछा:— "यह वस्तु अधिक महंगी नहीं है; दूसरी ओर, आपने बहुत अधिक कीमत लगाई है; किसलिए आप इसे ले रहे हैं?" उत्तर था: "हे मित्र! यहाँ, राजा के साथ प्रतिद्वंद्विता (पटिविरुज्जित्वा) में लगे नागरिक, दान करते समय, अपने दान (दानमुध) के सामने इन दोनों वस्तुओं को अनदेखा करते हुए, इनकी खोज में लगे हैं; यदि वे इन दोनों को प्राप्त नहीं कर सके, तो नागरिकों की हार होगी; इसलिए, मैंने एक हजार की भेंट दी है और मैं इन्हें ले रहा हूँ।" (ग्रामीण ने पूछा:—) "लेकिन यह कैसे? क्या यह नागरिकों के लिए भी उचित है? क्या इसे दूसरों को देना उचित नहीं है?" (उत्तर था:) "इसे किसी को भी देने में कोई बाधा नहीं है।" (ग्रामीण ने पूछा:—) "क्या नागरिकों के दान में कोई ऐसा दाता है जिसने एक ही दिन में हज़ार का दान दिया हो?" (उत्तर था:) "कोई नहीं, हे मित्र!" ग्रामीण ने फिर पूछा: "क्या तुम निश्चित रूप से जानते हो कि ये दोनों वस्तुएँ हज़ार के बराबर हैं?" (उत्तर था:—) "हाँ, मैं जानता हूँ।" (तब ग्रामीण ने कहा:—) "तो फिर तुम जाकर नागरिकों को इस प्रकार सूचित कर दो:— 'एक व्यक्ति इन दोनों वस्तुओं को किसी भी कीमत पर नहीं देता; वह इन्हें अपने हाथों से दान के रूप में देना चाहता है; तुम्हें इन दोनों वस्तुओं के कारण चिंता नहीं करनी चाहिए; तुम इस दान के मामले में मेरे सबसे बड़े होने के साक्षी बनो।" खर्च के लिए लाए गए एक छोटे सिक्के (मासका) से उसने पाँच दाने मसाले (कटुका) लिए, उन्हें पीसकर पाउडर बनाया, दूध के दही से खट्टी तलछट (कंजिया) निकाली, उसमें शहद को दबाकर, पाँच दाने मसाले के पाउडर के साथ सब कुछ मिलाया, मिश्रण को कमल के पत्ते में लपेटकर अच्छी तरह सजाया, उसे लेकर दशबाला से कुछ दूर एक स्थान पर बैठ गया, जहाँ बहुत से लोग अपनी श्रद्धा के लिए भेंट लेकर आए थे; जब उसे पता चला कि उसका अवसर आ गया है, तो वह गुरु के पास गया और इस प्रकार कहा: "हे भगवान! यह दान (मेरा) बड़ी मुश्किल से (दुग्गता) प्राप्त हुआ है; मुझ पर दया करके, कृपया इसे स्वीकार करें।" गुरु ने उस भिक्षु पर दया करते हुए, चार महान देवताओं द्वारा अर्पित पत्थर के पात्र में रखी उस भेंट को स्वीकार किया और इस प्रकार संकल्प लिया: "यह 68 लाख भिक्षुओं को अर्पित करते समय कभी समाप्त न हो।" उस भले परिवार के पुत्र ने भोजन की व्यवस्था समाप्त होने पर भगवान बुद्ध को प्रणाम किया, एक तरफ खड़े होकर कहा: "आज मैंने भगवान बुद्ध को बंधुमती के नागरिकों के साथ अपनी सादर भेंट (सक्कारा) अर्पित करते हुए देखा है; इस (अच्छे) कर्म के फलस्वरूप,"हे युवक! ऐसा ही हो," यह कहकर गुरु ने उसे और नागरिकों को उनके द्वारा दिए गए भोजन-अर्पण के लिए धन्यवाद दिया और विदा हो गए।

10.3. उस पुण्य कुल के पुत्र ने भी जीवन भर अच्छे कर्म किए और देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म-मृत्यु का चक्र पूरा करने के बाद, राजा की पुत्री सुप्पवासा के गर्भ में गर्भ धारण किया, जब यह बुद्ध (गौतम) प्रकट हुए। गर्भ धारण करने के समय से ही, सुबह और शाम दोनों समय, सैकड़ों उपहार गाड़ियों में भरकर सुप्पवासा को सौंपे जाते थे। फिर, उनके पुण्य की परीक्षा लेने के लिए, उन्हें अपने बीज-पात्र को हाथ से छूने के लिए कहा गया। प्रत्येक बीज से सौ नहीं, बल्कि हज़ार तक अंकुर निकले। खेती योग्य खेत (खेत्त) के प्रत्येक एकड़ (करिसा) में पचास नहीं, बल्कि साठ गाड़ी भर फसलें उगीं। अन्न भंडार भरते समय, उन्हें अन्न भंडार का द्वार छूने के लिए कहा गया। राजा की पुत्री के पुण्य के कारण, जहाँ-जहाँ अनाज ले जाया जाता था, वह स्थान फिर से उन लोगों के लिए भर दिया जाता था जो उसे लेते थे। यहाँ तक कि पूरी तरह से भरे हुए आटे के पात्र से भी, हर किसी को "राजा की पुत्री का पुण्य" कहकर अनाज देते समय, जब तक वह पात्र खाली नहीं हो जाता, तब तक अनाज समाप्त नहीं होता था: शिशु के गर्भ में आने के बाद सात वर्ष बीत चुके थे। लेकिन जब उनका गर्भ पूर्ण हो गया, तो उन्हें सात दिनों तक असहनीय पीड़ा हुई। उन्होंने मन ही मन कहा, "मरने से पहले, जब मैं जीवित हूँ, मैं दान करूँगी," और अपने पति को बुलाया और उन्हें गुरु के समक्ष यह निर्देश देकर भेजा: "जाओ, गुरु को इस बात की सूचना दो; और उन्हें आमंत्रित करो; गुरु जो कुछ भी कहें, उसे ध्यान से सुनो, वापस आकर मुझे बताओ।" उनके पति ने जाकर उनका संदेश

भगवान बुद्ध को दिया। गुरु बुद्ध ने कहा, "कोलिय (राजा) की पुत्री सुप्पवासा सुखी और रोगमुक्त हो; वह एक स्वस्थ पुत्र को जन्म दे।" यह सुनकर राजा ने भगवान बुद्ध को प्रणाम किया और अपने गाँव की ओर चल दिए। उनके घर पहुँचने से पहले ही सुप्पवासा के गर्भ से एक शिशु (गब्बह) निकला, जो छलनी से छनने वाले पानी के समान था: उनके चारों ओर बैठे लोगों की भीड़, जिनके चेहरे नम थे, मुस्कुराने लगी; प्रसन्न और प्रसन्न होकर, लोगों की भीड़ राजा को खुशखबरी सुनाने के लिए गई।

जैसे ही राजा ने उन्हें अपनी ओर आते देखा, उसने सोचा: "मुझे लगता है, दशाबल के कहे शब्द साकार हो गए होंगे।" वह आया और उसने गुरु का संदेश राजा की पुत्री को दिया। राजा की पुत्री ने कहा: "मेरा वही प्राण-भोजन, जिसमें आपने बुद्ध को आमंत्रित किया था, शुभ भोज बनेगा; जाइए; दशाबल को सात दिनों के लिए आमंत्रित कीजिए।" राजा ने वैसा ही किया। उन्होंने बुद्ध के नेतृत्व में सात दिनों तक पुरोहितों के बीच महान दान-पुण्य किया। बालक का जन्म हुआ और उसने सभी रिश्तेदारों के गर्म हृदय को शांत कर दिया; इसलिए उन्होंने उसका नाम सीवली दारक रखा। सात वर्ष तक गर्भ में रहने के कारण, वह जन्म से ही सभी प्रकार के कर्मों के प्रति उदार (खम) हो गया। सातवें दिन धर्म के सेनापति सारिपुत्त ने उससे वार्तालाप किया। गुरु ने धम्मपद का एक श्लोक भी सुनाया:

जिसने भी इस खतरनाक स्थिति पर काबू पा लिया है
पुनर्जन्मों का चक्र (संसार)
जो कठिन और भ्रामक है।
पार करके आगे चला गया है
निब्बान के तट पर, ज्ञान धारण किया हुआ था
(झायी), तृष्णा से मुक्त हो जाओ (ईजा)
और संदेह (कथंकथी) दूर हो जाए, शांत हो जाओ
(दुराचार से) विरक्त होना; उसे,
मैं ब्राह्मण को (ब्राह्मण) कहता हूँ।

10.6. तब थेरा ने उससे कहा, "फिर भी क्या बात है? इस प्रकार के कष्टों को सहने के बाद क्या तुम्हारे लिए भिक्षु संघ में शामिल होना उचित नहीं है?" बालक ने उत्तर दिया, "आदरणीय महोदय! यदि मुझे यह अनुमति मिल जाए तो मैं भिक्षु बन जाऊंगा।" सुप्पावासा ने अपने पुत्र को थेरा से बात करते हुए देखकर मन ही मन कहा, "यह कैसे हो सकता है? मेरा पुत्र धर्म के सेनापति से बात कर रहा है?" सुप्पावासा थेरा के पास गईं और उनसे पूछा, "आदरणीय महोदय! मेरे पुत्र ने आपसे क्या कहा?" उत्तर मिला, "गर्भ में रहने के कष्टों के बारे में बताने के बाद, जो उसने स्वयं सहे थे, उसने कहा कि आपके द्वारा स्वीकृत (अनुज्ञात) होने पर वह भिक्षु संघ में शामिल हो जाएगा।" (माता ने उत्तर दिया,) "आदरणीय महोदय! अच्छा; उसे भिक्षु संघ में शामिल होने दीजिए।" थेरा उन्हें मठ ले गए, उन्हें मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) कराया जिसमें त्वचा को पाँचवें अंग (मानव शरीर के बत्तीस भागों में से) के रूप में शामिल किया गया था, और उन्हें भिक्षु संघ में शामिल होने की अनुमति देते हुए, थेरा ने उनसे कहा:— "हे सिवली! आपके लिए किसी अन्य सलाह का कोई कार्य (कम्म) नहीं है; आपको अपने द्वारा सात वर्षों तक सहे गए दुख (दुक्खा) पर चिंतन करना चाहिए।" (सिवली ने इस प्रकार कहा:—) "आदरणीय महोदय! आपका दायित्व केवल मुझे भिक्षु बनाना है; मेरे लिए जो कुछ भी संभव हो, मैं वह समझूंगा।" हालांकि, वे बाल की पहली चोटी (वट्टी) मुंडवाते ही पवित्रता (सोतापत्ति) के प्रथम चरण की सिद्धि में स्थापित हो गए; दूसरी चोटी (वट्टी) को हटाते ही, वे एक बार लौटने वाले (सकदागानी) की सिद्धि में स्थापित हो गए; तीसरे चरण में, अनागामी (अनानामी) के फल की प्राप्ति पर; उनके सिर के सारे बाल मुंडवाने के बाद और अरहंतत्व की कल्पना करने के बाद न तो कोई और चरण था और न ही कोई और चरण। जिस दिन से वे भिक्षु बने, उसी दिन से भिक्षुओं के लिए आवश्यक चारों चीजें आवश्यकतानुसार प्राप्त की जाने लगीं। इस प्रकार यहाँ से यह कहानी उत्पन्न हुई।

10,7. इसके बाद, गुरु सावत्थी गए। थेरा ने गुरु को प्रणाम किया और कहा:— "आदरणीय गुरुदेव! मैं अपने पुण्य की परीक्षा लेने जा रहा हूँ; कृपया मुझे पाँच सौ भिक्षु दें।" (बुद्ध का उत्तर था:—) "हे सीवाली! आप ले सकते हैं।" उन्होंने पाँच सौ भिक्षुओं को लिया और हिमवंत की दिशा में वन मार्ग से चले; उन्हें सबसे पहले दिखाई देने वाले बरगद (निग्रोध) वृक्ष में निवास करने वाले देवता ने सात दिनों का दान दिया। इस प्रकार, उन्होंने

"सबसे पहले निग्रोध का पेड़ देखा,
दूसरा पांडव पर्वत, तीसरा
असिरावती नदी, चौथा वरा
महासागर; पाँचवीं बार उसने हिमा को देखा-
वांटा पर्वत, छठा वह पास गया
चद्दंता झील; सातवाँ गंधा-
मदाना और फिर, आठवां रेवता।"

सभी स्थानों पर, उन्होंने सात दिनों तक लगातार दान दिया। लेकिन गंधमादन पर्वत पर, नागदत्त नामक दिव्य राजा ने सात दिनों में से एक दिन दूध का भिक्षादान किया; दूसरे दिन घी का भिक्षादान किया। भिक्षुओं ने कहा, "इस दिव्य राजा के न तो दूध दुहा जा रहा है और न ही

दही मथा जा रहा है; हे दिव्य राजा! यह आपको कहाँ से प्राप्त हुआ?” दिव्य राजा ने उत्तर दिया, “आदरणीय महोदय! यह दशाबल कस्सपा के समय मेरे द्वारा लॉटरी द्वारा भिक्षादान (सलाका) करने का फल है।” इसके बाद, गुरु ने बबूल के वन में रहने वाले रेवता से मिलने (पच्चुग्गमन) की घटना को एक कथा के रूप में वर्णित करते हुए, थेरा को सर्वोच्च लाभ और प्रसिद्धि प्राप्त करने वालों में अग्रणी स्थान दिया।

10,8. कुछ शिक्षक इस थेरा के अरहंत पद प्राप्ति के विषय में इस प्रकार कहते हैं, जिन्होंने इस प्रकार सर्वोच्च लाभ और प्रसिद्धि प्राप्त की: “जब धर्म के सेनापति ने उन्हें पहले से ही वर्णित (हेट्ठा) तरीके से सलाह दी, तो उन्होंने यह कहते हुए भिक्षुत्व ग्रहण किया; 'जो कुछ मेरे लिए संभव है, वही मैं समझूंगा', उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास के लिए मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) किया, उसी दिन एक एकांत कुटिया देखी, उसमें प्रवेश किया, अपनी माता के गर्भ में सात वर्षों तक अपने द्वारा सहे गए दुःख (दुक्खा) पर चिंतन (अनुस्सरित्वा) किया और जब उन्होंने अतीत और भविष्य को देखा, तो उसके अनुरूप तीनों अस्तित्व (भव) उन्हें धधकते हुए प्रतीत हुए (उपट्ठहिंसु)। अपने ज्ञान के सर्वांगीण परिपक्व हो जाने के कारण, उन्होंने स्वयं को (ओतरी) आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के मार्ग पर चलते हुए, वहीं और उसी क्षण, क्रमिक श्रेष्ठ मार्गों (मग्ग) के माध्यम से, उनके सभी दोष दूर हो गए और उन्होंने अरहंतत्व प्राप्त किया। दोनों ही तरीकों से थेरा की अरहंतत्व प्राप्ति स्पष्ट हो गई थी। हालांकि, थेरा विश्लेषणात्मक ज्ञान और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (पभिन्न) से संपन्न हो गए थे। इसलिए, अपदान में ऐसा कहा गया है।

“मैं उस समय एक दिव्य राजा के रूप में जाना जाता था
वरुणा नाम से। मैंने भाग लिया
स्वयंजागृत बुद्ध पर,
उन्हें अपनी मजबूत बाहों में लिए हुए
परिवहन (sayoggabalavāhano).
जब अत्थादस्सी, सबसे उत्कृष्ट
पुरुषों में से, दुनिया का रक्षक
निर्वाण में प्रवेश करने के बाद, मैं चला गया
सबसे उत्कृष्ट बोधि वृक्ष, लेते हुए
मेरे साथ, सभी संगीतकार
वाद्ययंत्र। जब बजाना
संगीत और नृत्य के साथ,
झांझों की थाप से (समाहितो)
(सममाताला), मैंने सेवा की
सबसे उत्कृष्ट बोधि वृक्ष, मानो मैं
स्वयं (जीवित) की सेवा कर रहा था।
उनकी उपस्थिति में जागृत बुद्ध
(सम्मुख)।
उस कार्यक्रम में भाग लेने के बाद
बोधि वृक्ष, वह वृक्ष जो उगता है
मैं जमीन पर पेट के बल बैठ गया।
वहीं उसकी मौत हो गई।
मैं अपने आप से संतुष्ट हूँ (अभिराद्ध)।
कार्य करते ही मैं अत्यंत प्रसन्न हो गया
सबसे उत्तम बोधि वृक्ष; हो-
उस पवित्र मन के कारण ही मैं उछल पड़ा।
निम्मानारति के दिव्य लोक में।
साठ हजार संगीतकारों ने घेर लिया
मुझे लगातार। छोटे अस्तित्वों में
और प्रमुख (भवभवे) मैं निकला
दिव्य और
मनुष्य।
मेरी तीन प्रकार की आग थी
सभी अस्तित्व समाप्त हो गए थे;
समाप्त। अब मैं अपना अंतिम लक्ष्य साथ रखता हूँ।

अच्छी व्यवस्था में शरीर-
स्वयंजागृत बुद्ध।
पांच सौ युग (कप्पा) पहले, से
अब, चौंतीस विश्व राज्य हो गए-
योद्धा वंश (खत्तिया) के राजाओं को वरदान प्राप्त था
सात रत्नों के साथ और इस नाम से जाना जाता है
सुबाहू। मेरी दुष्टता जलकर भस्म हो गई थी।
बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।
बाहर।"

10,9. हालाँकि अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "ते मे इज्जिंसु संकप्पा" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने उत्साह की गति से आनंदमय उच्चारण (उदानेंतो) किया और मुक्ति के आनंद का उचित अनुभव किया।

60. There te me ijjhiṃsu saṅkappā, yadattho pāvisiṃ kuṭiṃ, vijjā vimuttiṃ paccesaṃ का अर्थ इस प्रकार है:— जो कुछ भी मैंने पहले विशेष रूप से चाहा था, अर्थात् त्याग आदि, जो आत्म-विभाजन (समुच्चेदकर) का कारण बनते हैं, इंद्रिय सुख (काम) पर अभिमान आदि, अपने मन में यह कहते हुए: "मैं कब उस निवास (आयतन) को प्राप्त (उपसम्पज्जा) कर पाऊंगा, जिसे पवित्र श्रेष्ठों (आरिया) ने प्राप्त किया है और अब उसमें रहते हैं?" (इन पवित्र श्रेष्ठों) की धारणाएँ मुक्ति (विमुत्तधिप्पायसञ्जिता) के लिए थीं, उनके इरादे मुक्ति की ओर प्रवृत्त (उद्दिस्सा) थे; इसी प्रकार उनका वांछित लक्ष्य (मनोरथ) भी था; वे निरंतर परिश्रमी थे; जो भी इच्छा, जो भी प्रयास (पयोजनो) मैंने पूरा करने के उद्देश्य से एक कुटिया, एक खाली, शांत घर (सुञ्ञागार) में प्रवेश किया, तीनों प्रकार के परम विज्ञान (विज्जा) और फलदायी मुक्ति (फलविमुक्ति) की खोज में; यहाँ तक कि उन सभी ने भी मेरे लिए समृद्धि प्राप्त की; अब, (मेरे सभी प्रयास) सफल और समृद्ध हो गए थे; मेरे अच्छे कर्मों का इरादा पूर्ण हो गया था, सर्वांगीण रूप से परिपूर्ण हो गया था, मेरा इच्छित लक्ष्य प्राप्त हो गया था: यही अर्थ है। उनकी उत्कृष्ट समृद्धि (समिद्धभाव) की स्थिति को दर्शाने के लिए, यह कहा गया है: — "मननुसयमुज्जहं" जिसका अर्थ यह है: — क्योंकि मैंने अहंकार के पूर्वाग्रह (मानानुसय) को त्यागकर (उज्जहं) उसे अच्छी तरह से काट दिया था, इसलिए मेरे वे इरादे साकार हुए (इज्जिंसु); अतः, यही व्याख्या (योजना) है: वास्तव में, जब अहंकार का पूर्वाग्रह त्याग दिया गया, तो कोई अन्य पूर्वाग्रह नहीं रह गया जिसे त्यागा न जा सके; यह केवल अरहंतत्व की प्राप्ति ही बन गई; अतः, जैसा कि कहा गया है, अहंकार के पूर्वाग्रह का त्याग ही इरादे की अच्छी सिद्धि का परिस्थितिजन्य कारण है।

श्लोक पर टिप्पणी
थेरा सिवली का
तैयार है।
**********oOo*********

छठे अध्याय पर टीका
तैयार है।
*********oOo*********

BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी
शिवली थेरा

बुद्ध गौतम के समय में कोलिया और सुप्पवासा नामक एक धर्मात्मा राजा और रानी का शासन था। कुछ समय बाद रानी सुप्पवासा गर्भवती हुईं। इस गर्भस्थ संतान ने राज्य में अपार समृद्धि लाई। रानी को न केवल मित्रों और रिश्तेदारों से अनेक उपहार प्राप्त हुए, बल्कि पूरा राज्य समृद्ध हो गया। फसलें भरपूर हुईं और सभी लोग स्वस्थ और सुखी थे।

रानी गर्भवती हो गईं, लेकिन प्रसव का स्वाभाविक समय आने पर भी उन्होंने बच्चे को जन्म नहीं दिया। समय बीतने के साथ प्रसव के कोई संकेत न मिलने पर रानी बेचैन हो गईं और उन्होंने राजा से बुद्ध और उनके भिक्षुओं को भोजन पर आमंत्रित करने का अनुरोध किया। भोजन के बाद बुद्ध ने रानी को आशीर्वाद देते हुए कहा:

"कोलिया वंश की पुत्री सुप्पावासा,
खुश और स्वस्थ रहो और एक स्वस्थ बेटे को जन्म दो।"

बुद्ध के जाने के बाद, रानी ने एक सुंदर और स्वस्थ पुत्र को जन्म दिया। बुद्ध के प्रति सम्मान के प्रतीक के रूप में, जिन्होंने अपने आशीर्वाद से रानी के भारी बोझ को हल्का किया था, उन्हें और उनके अनुयायियों को सात दिनों के लिए महल में भिक्षा ग्रहण करने के लिए आमंत्रित किया गया। राजकुमार का नाम सिवली रखा गया, क्योंकि उनके जन्म के समय से ही भरपूर फसल के माध्यम से लोगों की कठिनाइयाँ कम होने लगीं।

एक दिन जब सारिपुत्त भिक्षा मांगने निकले थे, तब वे राजकुमार के पास गए और उन्हें बताया कि गर्भावस्था में देरी के कारण उन्हें और उनकी माता को कितना कष्ट सहना पड़ा था। सारिपुत्त ने राजकुमार को अपने और अपनी माता के द्वारा किए गए अनुचित कार्य और उसके परिणामों के बारे में विस्तार से बताया।

पिछले जन्म में सिवली बनारस के राजा के रूप में पैदा हुए थे और उन्होंने पड़ोसी राज्य पर युद्ध छेड़ दिया था। उन्होंने राज्य को घेर लिया और नागरिकों को आत्मसमर्पण करने या पलटवार करने के लिए कहा। जब उन्होंने आत्मसमर्पण करने से इनकार कर दिया, तो उन्होंने अपनी पत्नी, अपनी वर्तमान माता के साथ मिलकर, शहर को घेरने और नागरिकों को तब तक बंधक बनाकर रखने का फैसला किया जब तक वे आत्मसमर्पण न कर दें। नागरिक, जो न तो पलटवार करना चाहते थे और न ही ऐसे राजा के शासन के अधीन रहना चाहते थे, उन्होंने आत्मसमर्पण नहीं किया। परिणामस्वरूप, उन्हें बहुत लंबे समय तक भोजन के बिना भारी कष्ट सहना पड़ा। कई बीमार और बुजुर्ग मर गए, लेकिन अहंकारी राजा और उसकी रानी ने हार नहीं मानी। कई महीनों बाद राजा ने अपनी सेना वापस बुला ली और अपने बंधकों को रिहा कर दिया, लेकिन उन्हें अपने द्वारा किए गए कष्टों की भारी कीमत चुकानी पड़ी। मृत्यु के बाद उनका पुनर्जन्म अविची नरक में हुआ। विलंबित गर्भावस्था और उस विलंब के परिणामस्वरूप उन्हें और उनकी माता को जो कष्ट सहना पड़ा, वह इस कर्म का परिणाम था।

दुख के आर्य सत्य का वर्णन करने के बाद, सारिपुत्त ने राजकुमार से पूछा कि क्या वह आर्य संघ में शामिल होना चाहेंगे ताकि वे सभी दुखों के अंत का मार्ग खोज सकें। राजकुमार इस निमंत्रण से अत्यंत प्रसन्न हुए और अपनी माता की अनुमति से संघ में शामिल होने के लिए सहमत हो गए।

बुद्ध की परम भक्त रानी मान गईं। उन्होंने राजकुमार सिवली को दीक्षा समारोह के लिए मठ तक जुलूस के साथ ले गईं। दीक्षा के दिन जब उनके बाल मुंडवाए गए, तो सारिपुत्त ने सिवली को शरीर की अशुद्धियों पर ध्यान करने की सलाह दी। सिवली, जो अपने पूर्व पुण्य कर्मों के कारण आध्यात्मिक रूप से उन्नत थे, ने निर्देशानुसार अपना ध्यान केंद्रित किया। बाल मुंडवाने की प्रक्रिया पूरी होने से पहले ही सिवली ने निर्वाण का सर्वोच्च ज्ञान प्राप्त कर लिया।

सिवली के साथ रहने पर भिक्षुओं ने जल्द ही एक विचित्र घटना देखी। सिवली के पास हमेशा भरपूर मात्रा में स्वादिष्ट और सुगंधित भोजन तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ (वस्त्र, आश्रय और औषधियाँ) उपलब्ध रहती थीं। उनके साथ रहने वाले भिक्षुओं को भी इस प्रचुरता का लाभ उठाने का अवसर मिलता था। सिवली जहाँ भी जाते, लोग उनके लिए भोजन तैयार करने के लिए उमड़ पड़ते थे। सिवली वास्तव में एक भिक्षु के लिए आवश्यक सभी वस्तुओं से संपन्न थे।

और इस प्रकार, सिवली जहाँ भी गए, उनकी अच्छी तरह से देखभाल की गई। वे और उनके 500 भिक्षुओं का दल सात दिनों तक एक निर्जन जंगल में रहे, लेकिन उन्हें भोजन की कमी नहीं हुई। देवताओं ने यह सुनिश्चित किया कि उनकी सभी आवश्यकताएँ पूरी हों। इसी प्रकार, जब सिवली रेगिस्तान से यात्रा कर रहे थे, तब भी उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति की गई। बुद्ध ने देखा कि सिवली उनके शासनकाल में की गई एक पूर्व इच्छा को पूरा कर रहे हैं, इसलिए उन्होंने घोषणा की कि वे आवश्यकताओं की प्राप्ति में भिक्षुओं में सबसे आगे हैं। उन्होंने निर्जन भूभाग से होकर लंबी और कठिन यात्राएँ करने वाले भिक्षुओं को भी सिवली को अपने साथ ले जाने का निर्देश दिया, क्योंकि उनके साथ रहने से उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित होगी। वास्तव में, एक बार जब बुद्ध और उनके 30,000 भिक्षुओं का दल भिक्षु खदिरावनीय रेवता (सारिपुत्त के छोटे भाई) से मिलने जा रहे थे, तब उन्हें एक निर्जन जंगल पार करना पड़ा। आनंद को डर था कि जंगल में इतने सारे भिक्षुओं के लिए भोजन का इंतजाम नहीं हो पाएगा, इसलिए उन्होंने बुद्ध से यात्रा की व्यवस्था के बारे में पूछा। बुद्ध ने आनंद को आश्वासन दिया कि उन्हें चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है क्योंकि सिवली उनके साथ हैं। सिवली के साथ होने से भोजन की कोई कमी नहीं होगी क्योंकि देवता भी उनकी जरूरतों का ख्याल रखने में आनंद लेते हैं।

सामान्यतः, किसी व्यक्ति के सद्गुणों (अच्छे और बुरे) के फल केवल कर्मकर्ता को ही प्राप्त होते हैं। यद्यपि, शिवली के उदाहरण से मिलते-जुलते ऐसे उदाहरण भी हैं, जिनमें दूसरों को भी किसी अन्य व्यक्ति के असाधारण रूप से प्रबल कर्मों से लाभ होता है। किसी व्यक्ति के प्रबल कर्मों के फल का दूसरों पर पड़ने वाला यह अतिप्रवाह निसंध पाला (कर्मों का अतिप्रवाह) कहलाता है। जबकि कर्मों के विपाक पाला (फल) केवल कर्मकर्ता को ही प्राप्त होते हैं, निसंध पाला उन लोगों को भी अनुभव होता है जो उस समय आपके साथ होते हैं। निसंध पाला कर्म के अनुसार अच्छे और बुरे दोनों प्रकार का हो सकता है। उदाहरण के लिए, एक बार सारिपुत्त को लोषक के प्रबल बुरे कर्मों के निसंध पाला के परिणामस्वरूप भिक्षा प्राप्त नहीं हुई।

इस विचित्र घटना के कारण का पता लगाने के लिए हमें कई युगों पहले बुद्ध पद्ममुत्तरा के समय में जाना होगा। सिवली, जो एक गरीब परिवार में पैदा हुए थे, को बुद्ध पद्ममुत्तरा द्वारा एक अन्य भिक्षु को आवश्यक वस्तुओं को प्राप्त करने वाले भिक्षुओं में श्रेष्ठ होने का सम्मान प्रदान करते हुए देखने का अवसर मिला। इस भिक्षु को भिक्षा और वस्त्र देने की सभी की इच्छा देखकर सिवली मोहित हो गए और उन्होंने भी भविष्य में ऐसा ही पद प्राप्त करने का निश्चय किया। तब उन्होंने बुद्ध पद्ममुत्तरा और उनके अनुयायियों के प्रति अनेक उदारतापूर्ण कार्य किए और एक मनोकामना की।

बुद्ध पद्ममुत्तरा ने सिवली की मनोकामना पूरी होने का पूर्वाभास करते हुए भविष्यवाणी की थी कि गौतम बुद्ध के समय में वे उन भिक्षुओं में अग्रणी होंगे जिन्होंने आवश्यक योग्यताएँ प्राप्त कीं। इसी क्षण से सिवली ने अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए पूरी लगन से प्रयास करना शुरू कर दिया। मृत्यु के बाद उनका पुनर्जन्म स्वर्गलोक में हुआ जहाँ उन्होंने अनेक वर्षों तक दिव्य आनंद का अनुभव किया।

अगली प्रलेखित जन्म कथा गौतम बुद्ध से 91 विश्व चक्र पूर्व, बुद्ध विपस्सी के समय की है। सिवली का जन्म बंधुमती नगर में एक व्यापारी के रूप में हुआ था। नगर में बुद्ध विपस्सी और उनके भिक्षुओं के लिए एक बड़े दान-पुण्य की तैयारी चल रही थी, तभी उन्हें पता चला कि उनके पास दही और शहद की कमी है, जो दोपहर के भोजन के बाद अक्सर परोसा जाने वाला एक विशेष व्यंजन था। आवश्यक व्यंजन प्राप्त करने के लिए पूरे नगर में संदेश भेजे गए। आवश्यक मात्रा प्राप्त न होने पर, राजा के आदमियों ने दही और शहद की कीमत एक सोने के सिक्के से बढ़ाकर 100 सिक्के कर दी।
इसी बीच, दही और शहद बेचने वाले व्यापारी सिवली के पास एक व्यापारी आया और उसके माल के बदले 100 सोने के सिक्के देने की पेशकश की। सिवली को यह असामान्य रूप से अधिक कीमत देखकर आश्चर्य हुआ और उसने पूछा कि वे किसके लिए दही खरीद रहे हैं। यह जानकर कि यह विपस्सी बुद्ध और उनके भिक्षुओं के लिए है, सिवली ने बुद्ध को अपना माल दान करने की अनुमति मांगी। फिर उसने भिक्षुओं में सबसे आगे रहने की अपनी इच्छा को दोहराया। विपस्सी बुद्ध ने सिवली की इच्छा पूरी होते देख उसे आशीर्वाद देते हुए कहा, "तेरी इच्छा पूरी हो।" इसके बाद सिवली विपस्सी बुद्ध का भक्त बन गया और उनके धर्म का पालन करने लगा।
इस प्रबल आकांक्षा और पिछले जन्मों में किए गए पुण्य कर्मों और प्रयासों के फलस्वरूप, सिवली ने गौतम बुद्ध के समय में आवश्यक योग्यताएँ प्राप्त करने वाले भिक्षुओं में अग्रणी बनने की अपनी आकांक्षा को पूर्ण किया। आज भी, बौद्ध अरहंत सिवली का आदर करते हैं और अक्सर भोजन और समृद्धि की प्रचुरता के प्रतीक के रूप में सिवली परित्त नामक चित्र या प्रवचन को अपने घर में रखते हैं।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(61):वप्पा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (61) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
61. वप्पा
उनका पुनर्जन्म इसी बुद्ध युग में कपिलवस्तु में ब्राह्मण (पुजारी) वासेत्थ के पुत्र के रूप में हुआ। जब द्रष्टा असिता [1] ने भविष्यवाणी की थी कि युवा श्रेष्ठ सिद्धार्थ (राजकुमार जो बुद्ध बने) सर्वज्ञ होंगे, तब वप्पा अपने चार अन्य ब्राह्मण पुत्रों, जिनमें कोंडञ्ञ प्रमुख थे, [2] के साथ भिक्षु बन गए। जब असिता की भविष्यवाणी पूरी हुई, तो वप्पा ने बुद्ध का उपदेश सुना और सोचा: 'मैं मोक्ष प्राप्त करूंगा।' वे उन छह वर्षों के दौरान उपस्थित रहे जब बुद्ध ने तपस्या की; जब बुद्ध ने पुनः ठोस भोजन ग्रहण किया तो वे निराश होकर इसिपताना गए और वहाँ उनकी मुलाकात भगवान (बुद्ध) से हुई, जिन्होंने धम्म का चक्र चलाना शुरू किया और सोतापाण (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त की। पाँचवें दिन उन्होंने और उनके चार साथियों ने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। भगवान (बुद्ध) की शक्ति और संसार के अंधापन पर विचार करते हुए, और आर्य राज्य द्वारा प्रदान की गई दृष्टि पर विचार करते हुए, उन्होंने यह श्लोक कहा:

[61] पस्सति पास्सो पस्संताṃ अपासंता सीए पस्सति॥
अप्सान्तो अप्सन्तो पशन्ताṃ च न पसाति' ति.॥ ॥

[61] जिसने देखा है, वह दूसरे द्रष्टा को भी देख सकता है,
वह भी जिसके पास देखने के लिए आंखें नहीं हैं,
वह स्वयं नहीं देखता, वह
न तो उस आंख को पहचान सकता है जो नहीं देखती, न ही द्रष्टा को। [3]

[1] सुत्त निपाता, श्लोक 128 एफ.एफ.; विनय ग्रंथ, i. 90, एन. 1; कली. जन्म कथाएँ, पृ. 118.

[2] सीसीएक्सएलवीआई देखें।

[3] यहाँ बुद्ध के आध्यात्मिक विकास के प्रति पाँच भिक्षुओं के अविवेकी रवैये का संकेत है, जैसा कि संदर्भित पुस्तकों में दर्ज है। तुलना करें ए. ii. 179 f.

1.7 सातवाँ अध्याय

1.7-1[61] श्लोक पर टिप्पणी

वप्पा थेरा
पसती पस्सो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वप्पा का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि उनका पुनर्जन्म हंसवती नगर के एक पारिवारिक घर में भगवान पद्ममुत्तरा के समय हुआ था; जब वे ज्ञानोदय की आयु प्राप्त कर चुके थे, तब उन्होंने प्रशंसा के ऐसे शब्द सुने: "अमुक थेरा सत्य (धम्म) के प्रथम प्राप्तकर्ता (पटिग्गाहक) बन गए हैं।" वे भगवान के पास गए और अपनी इस प्रकार प्रार्थना की: "हे भगवान! मैं भी भविष्य में आपके समान एक उत्कृष्ट आत्म-जागृत बुद्ध से सत्य (धम्म) के प्रथम प्राप्तकर्ता बनना चाहता हूँ।" उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि वे गुरु की उपस्थिति में उनकी शरण में आए हैं। अपने जीवनकाल में पुण्य कर्म करने के बाद, वे वहाँ से चले गए, देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और कपिलवस्तु में वासेठ नामक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का उदय हुआ। उनका नाम वप्पा था। तपस्वी असित (अनासक्त) द्वारा यह भविष्यवाणी किए जाने पर कि राजकुमार सिद्धार्थ सर्वज्ञ (बुद्ध) होंगे, उन्होंने कोंडञ्ञ के नेतृत्व में ब्राह्मणों के पुत्रों के साथ गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संसार का त्याग कर संन्यासी बन गए और उरुवेला (वन) में निवास करने वाले महासत्त की छह वर्षों तक सेवा करते रहे, जो मन ही मन कहते थे: "जब वह राजकुमार सर्वज्ञता प्राप्त कर लेंगे, तो मैं उनकी उपस्थिति में सत्य (धम्म) सुनूंगा और अमरत्व (अमता) प्राप्त करूंगा।" उन्हें भरपूर भोजन से घृणा होने लगी और वे इसिपताना चले गए। जब गुरु ने पूर्ण बुद्ध (अभिसंबुज्जित्वा) होने के बाद धर्मचक्र घुमाया, सात दिन सात बार व्यतीत किए और इसिपताना गए, तो चंद्र माह के प्रथम दिन (पतिपाददिवसे) वे मोक्ष की प्रथम अवस्था (सोतापत्ति) के फल में स्थापित हो गए, और अर्धपक्खा के पाँचवें दिन (पक्खा) वे अञ्ञासिकोण्डञ्ञ के साथ अरहंत पद प्राप्त कर चुके, इत्यादि। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"दोनों दिव्य राजाओं का युद्ध

आसन्न था (समुपट्टितो)।

(लड़ाई) पूरी तरह से तेज हो गई।

(समुपब्युल्हो); वहाँ हुआ

एक ज़ोरदार चीख (घोसा)।

पदुमुत्तारा, विश्व-ज्ञानी (लोकविदु),

बलिदान का उपयुक्त प्राप्तकर्ता

भेंट चढ़ाते हुए, गुरु वहाँ खड़े थे

आकाश और पुरुषों की भीड़ बनाई

पश्चातापी।

सभी दिव्य प्राणी बन गए

मंत्रमुग्ध होकर, उन्होंने अपने

कवच और हथियार

उन्होंने स्वयं को श्रद्धांजलि अर्पित की।

जागृत बुद्ध और शांत हो गए

हमेशा के लिए संग्रहित।

मेरी मंशा का पता चलने पर,

लोकविद्या ने कहा

प्रभुत्वपूर्ण (आसभिं) शब्द (वाचा)।

दयालु स्वामी ने बुझा दिया

क्रोध की आग (निब्बापेसी)

पुरुषों की भीड़।

आक्रामक मानसिकता वाला (padaṭṭhacitto)

मनुष्य होने के नाते, किसी प्राणी को चोट पहुँचाना

उस कारण नरक में कष्ट भोगना

मन में क्रोध।

कई जीवों को नुकसान पहुंचाना जो समान हैं

सेना के आगे हाथी

अपने मन को शुद्ध करो (निब्बापेथ);

बार-बार हत्या मत करो।

उन दो दिव्य सेनाओं की

(यक्खा) शासक हताश हो गए

(विम्हिता)। वे उस ओर चले गए

इस तरह के उत्कृष्ट लोगों की दुनिया में सबसे बड़े

सुतादिनम् (Sutādinaṃ) गुण ही उनका आश्रय हैं

भी।

भीड़ को शांत करने के बाद,

दृष्टि का स्वामी (चक्खुमा) उठाया

उसका पैर। उसने अपना प्रस्थान किया।

उत्तर की ओर, अभी भी देखा जा रहा है

दिव्य प्राणियों द्वारा। मैं पहले गया था

ऐसे व्यक्ति की शरण की ओर

मनुष्यों के संप्रभु (द्विपदिन्द) के रूप में;

मुझे किसी बुराई में जन्म लेने की आवश्यकता नहीं थी।

एक लाख युगों तक अस्तित्व

(कप्पा)।

मैं सोलह विश्व-राजा, सोलह स्वामी बन गया।

रथ चालकों (रथेसभा) के नाम पर

महादुंदुभी, तीस हजार में

युग (कप्पा)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने स्वयं द्वारा अर्जित समृद्धि पर विचार करते हुए गुरु के गुणों की महानता पर चिंतन किया और "पस्सति पस्सो" से शुरू होने वाला यह श्लोक कहा, ताकि यह दिखाया जा सके: "हम गुरु को इस प्रकार विलासी (बाहुलीका) भाषा (वाद) से संबोधित करते हैं; साधारण विश्वराज होना निश्चित रूप से अंधकार (अंधकरण) का कार्य है, अंधता (अचक्खु) का निर्माण (करण) है; केवल पवित्र श्रेष्ठ अवस्था (अरियभव) ही नेत्र (चक्खुकरण) का निर्माण (अचक्खुकरण) है।"

61. वहाँ, पस्सति पस्सो का अर्थ इस प्रकार है:— वह घटनाओं (धम्म) को अपनी सही दृष्टि (सम्मादित्ति) से देखता है, वह घटनाओं (धम्म) को स्पष्ट रूप से जानता है और उनके प्रति जागृत होता है (अविपरीतं); इस प्रकार, पस्सो, देखने वाला; दृष्टि से संपन्न एक पवित्र कुलीन (आरिया); पस्सन्तं का अर्थ है; वह स्पष्ट द्रष्टा (दस्सावी) को यह कहते हुए देखता है: "यह व्यक्ति सभी चीजों को निश्चित रूप से जानता है (अविपरीत दस्सावी); वह अपने ज्ञान के नेत्र (पञ्ञाचक्खु) से उनके स्वरूप (सभाव) के अनुसार धर्म (धम्म) और अधर्म (अधम्म) को जानता है। अपसन्तञ्च का अर्थ यह है: वह पूरी तरह से (केवलं) नहीं देख रहा है; बल्कि वह वह भी देख रहा है जो कोई नहीं देख पाता; जो भी ज्ञान के नेत्र से रहित है, वह घटनाओं (धम्म) को उनके स्वरूप के अनुसार नहीं देख पाता; वह अपने ही ज्ञान के नेत्र से उस दृष्टिहीन सामान्य सांसारिक (पुथुज्जन) को भी देखता है और मन ही मन कहता है; "यह दृष्टिहीन प्राणी (अचक्खुको) वास्तव में अंधा है।" Apassanto apassantaṃ, passantañ ca na passati का अर्थ इस प्रकार है: — अंधा मूर्ख (अंधबाल) जो ज्ञान की दृष्टि से रहित है (paññā cakkhu), वह अपने जैसे अंधे को देखकर यह नहीं समझ पाता कि: "यह व्यक्ति सही (धम्म) और गलत (अधम्म) को उनके स्वरूप (सभाव) के अनुसार नहीं देख पाता"; इस प्रकार, जिस प्रकार वह अदृष्टिहीन को न तो देख पाता है और न ही जान पाता है, उसी प्रकार वह ज्ञानी व्यक्ति को भी न तो देख पाता है और न ही जान पाता है, और अपने मन में कहता है: "यह व्यक्ति इस प्रकार का है" और साथ ही अपने ज्ञान की दृष्टि से सही और गलत को उनके स्वरूप के अनुसार नहीं समझ पाता; अत: मैं भी, पहले

अंतर्दृष्टि (दस्सना) से रहित होने के कारण, उस भगवान को नहीं देख पाता था जो अपने हाथ की हथेली पर लगे हेरोबलन फल के समान ज्ञानी (नेय्या) को देखते हैं और प्रकृति के अनुसार पूर्णा (पूरण) आदि को भी नहीं देखते; परन्तु अब, बुद्ध की शक्ति से संपन्न होने के कारण, मैं दोनों को प्रकृति के अनुसार देख पाता हूँ; इस प्रकार, उन्होंने जो कुछ भी प्राप्त किया जा सकता है या नहीं, उसमें अपनी स्पष्ट उचित प्राप्ति (पतिपत्ति) को प्रकट किया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा वप्पा का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(62):वज्जि-पुट्टा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (62) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
62. वज्जी-पुत्त [1]
उनका जन्म बुद्ध युग में वैशाली में एक पार्षद के परिवार में हुआ था, [2] और उनका नाम वज्जी-पुत्र रखा गया था। उन्होंने परमेश्वर (बुद्ध) की महिमा को तब देखा जब वे वैशाली आए, विश्वास किया, भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और दीक्षा के बाद वैशाली के पास एक जंगल में रहने लगे। वैशाली में एक उत्सव चल रहा था, जिसमें नाच-गाना और पाठ हो रहा था, सभी लोग खुशी-खुशी उत्सव का आनंद ले रहे थे। उस शोर ने भिक्षु का ध्यान भंग कर दिया, जिससे उन्होंने अपना एकांत त्याग दिया, अभ्यास छोड़ दिया, और इस श्लोक में अपनी घृणा व्यक्त की:

हम सब जंगल में अकेले रहते हैं,
जैसे लकड़हारे के हाथों ठुकराए हुए लट्ठे।
दिन एक के बाद एक ऐसे ही बीतते जाते हैं,
हमसे ज्यादा बदनसीब कौन है?

अब एक वनदेवदूत ने उसकी बात सुनी और भिक्षु पर दया करके उसे फटकारा, 'हे भिक्षु, भले ही तुम वन जीवन की निंदा करते हो, एकांत चाहने वाले ज्ञानी लोग इसे बहुत महत्व देते हैं,' और उसे इसके लाभ बताने के लिए यह श्लोक कहा:

[62] एकाका [10] मयाṃ अरण्ये विहार॥
अपविद्धां वा वनस्मिं दारुकां॥
तस्स मे बाहुका पिहयन्ति॥
तेरयिका विया सग्गामिनन्ति॥ ॥

[62] हममें से प्रत्येक जंगल में अकेले रहते हैं,
जैसे लकड़हारे के शिल्प द्वारा ठुकराए गए लट्ठे।
और कई लोगों ने मेरी किस्मत से ईर्ष्या की,
जैसे नरक में जाने वाला भी स्वर्ग की ओर बढ़ता है।

तब भिक्षु, जैसे किसी तेज घोड़े को चाबुक से धक्का लगता है, वैसे ही ज्ञान के मार्ग पर चल पड़ा और शीघ्र ही परिश्रम से अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। तब उसने सोचा, 'परी का श्लोक ही तो मेरा प्रेरणास्रोत था!' और उसने स्वयं उसका पाठ किया।

[1] वज्जिअनों का पुत्र, या बस, वज्जिअन। देखें CXIX.

[2] वज्जियन एक गणतंत्र थे।

1.7-2 [62] श्लोक पर टिप्पणी

वज्जिपुत्त थेरा
एककामयं अरञ्ञे से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वज्जिपुत्त का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, उन्होंने इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय किया और आज से 91 युग (कप्पा) पहले, भगवान विपस्सी के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। ज्ञान प्राप्त करने पर, उन्होंने एक दिन भगवान विपस्सी को देखा, श्रद्धा से भर गए और उन्हें केसर जैसे पुष्पों का आदरपूर्वक अर्पण किया। इस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने जन्मों के चक्रों में विचरण करते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब एक मंत्री के परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ। उनका नाम वज्जिपुत्त था। भगवान बुद्ध के वैशाली आगमन पर उनकी शक्ति देखकर, उन्होंने उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों का पालन किया, मानसिक साधना (कम्मट्ठान) में लग गए और वैशाली से कुछ ही दूरी पर स्थित एक घने जंगल में निवास करने लगे। उस समय वैशाली में एक उत्सव चल रहा था। चारों ओर नृत्य, गायन और संगीत की धूम थी। प्रसन्न और आनंदित होकर, असंख्य लोग उत्सव के आनंद का भरपूर लुत्फ़ उठा रहे थे; यह सुनकर, उस भिक्षु ने अविवेकी रूप से स्वयं को उत्सव से बाहर निकाला, अपने एकांतवास से विमुख हो गए, अपनी मानसिक साधना (कम्मट्ठान) को त्याग दिया और अपनी नाराजगी व्यक्त करने के लिए एक श्लोक कहा:

हम जंगल में अकेले रहते हैं,

अस्वीकृत लकड़ी के लट्ठे जैसा दिखता है।

रात में केवल एक ही रात का जिक्र किया जा सकता है

(आदिसिका) जो, अर्थात्, इससे भी बदतर है

हम?"

उस श्लोक को सुनकर, घने जंगल में निवास करने वाले देवता ने उस भिक्षु के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुए, इस परिस्थिति को दर्शाने के लिए एक श्लोक कहा: — "हे भिक्षु! यदि तुम भी वनवास को तुच्छ समझते हो, तो भी एकांतवास की इच्छा रखने वाले ज्ञानी उस जीवन के बारे में बहुत आश्वस्त होते हैं।"

तुम जंगल में अकेले रहते हो,

अस्वीकृत लकड़ी के लट्ठे जैसा दिखता है।

आपमें से बहुत से लोग रुचि रखते हैं।

नरक-जनता के समान

जो लोग जा रहे हैं, उनसे प्रेम करना

स्वर्ग।

श्लोक का पाठ करने के बाद, देवता ने उन्हें विचलित और भयभीत करते हुए कहा:— "हे भिक्षु! सर्वथा आत्मजागृत बुद्ध के मार्ग में भिक्षु बनकर, जो तुम्हें संसार से मुक्ति (निय्यानिक) दिलाएगा, तुम ऐसे निरर्थक विचार क्यों रखते हो?" उस देवता द्वारा इस प्रकार विचलित होकर, वह भिक्षु, एक उत्कृष्ट नस्ल के घोड़े के समान, जिसे विशेष रूप से कोड़े मारे गए हों, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपश्यना) विकसित करने के लिए ध्यान के मार्ग पर चल पड़ा, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपश्यना) के विकास में लीन हो गया और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"लोहे के फूलों को इकट्ठा करने के बाद-

लकड़ी के पेड़ अपने परागों के साथ

मैंने इन्हें विशेष रूप से विपस्सी को अर्पित किया।

स्वर्ण रंगत वाला आत्मजागृत

बुद्ध जो सभी दिशाओं को प्रकाशित कर रहे थे-

सौ वर्षों के सूर्य के समान क्रियाएँ

किरणों के समान और पूर्णिमा के चंद्रमा जैसा दिखता है,

सितारों का संप्रभु, घिरा हुआ

उनके शिष्यों द्वारा पृथ्वी के समान

महासागरों से घिरा हुआ।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने भेंट चढ़ाई है

पराग कणों का। मुझे कुछ याद नहीं है।

बुरा अस्तित्व; यही फलदायी है

मेरे द्वारा श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाने का परिणाम

बुद्ध को।

आज से पैंतालीस युग पहले, मैं था

एक महान शक्ति संपन्न विश्व-राजा

सात रत्नों से युक्त, रेणु नाम से प्रसिद्ध।

खत्तिया वर्ग के शाही योद्धा।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने स्वयं के कथन के साथ-साथ उस देवत्व के कथन को भी समाहित किया और मन ही मन कहा: "यह श्लोक मेरे अरहंत पद की प्राप्ति के लिए प्रेरक शक्ति बन गया है," और श्लोक का पाठ किया:

62. हम जंगल में अकेले निवास करते हैं,

जंगल में पड़े लट्ठे की तरह ठुकरा दिया गया।

मुझे लेकर कई लोग स्नेही हैं, समान

नरक में जाने वाले लोग शौकीन होते हैं

जो स्वर्ग की ओर अग्रसर हैं।

उस श्लोक का अर्थ है:— जंगल में उपेक्षित टूटे हुए लट्ठे के समान, जिसकी कोई आवश्यकता नहीं है, मयं एकका का अर्थ है: बिल्कुल अकेला, बिना किसी साथी के, अरञ्ञे विहारम (हम इस जंगल में रहते हैं); इस प्रकार रहते हुए भी, तस्स मे बहुका पिहयन्ति (मुझसे बहुत प्रेम करते हैं): अच्छे कुल के अनेक पुत्र, जो मेरे कल्याण की कामना करते हैं, विशेष रूप से यह कामना करते हैं:— "यदि हम भी थेरा वज्जिपुत्त के समान गृहस्थी बंधनों का त्याग करके जंगल में रहते, तो यह वास्तव में अद्भुत होता।" ठीक कैसे? नेरायिका यिया सग्गगामिनं का अर्थ है: जिस प्रकार, अर्थात् नरक में जन्म लेने वाले लोग, अपने बुरे कर्मों के कारण नरक में जन्म लेने वाले प्राणी, स्वर्ग की ओर जाने वाले और स्वर्ग को प्राप्त करने वाले लोगों से ईर्ष्या करते हुए कहते हैं: "यदि हम भी नरक के कष्टों को त्यागकर स्वर्ग के आनंद का अनुभव करें तो यह कितना अद्भुत होगा।" इस प्रकार की सफलता यही है; यही अर्थ है। यहाँ फिर से अपने भीतर महत्वपूर्ण बहुल अभ्यास (पयोग) की वांछनीयता के कारण उन्होंने कहा: "एकका मयं विहारम (हम एकाकी रूप से निवास करते हैं);" अपने स्वयं के कल्याण की एकता का उल्लेख करते हुए उन्होंने एकवचन (एकवचन) साधन (पयोग) को इस प्रकार बनाया: "तस्स मे (उस मे का)।" दोनों अभिव्यक्तियाँ: 'तस्समे' और 'सग्गगामिनं (स्वर्ग जाने वालों के)' 'पिहयन्ती' (प्रेमी) शब्द की कामना (अपेक्खति) करती हैं और कर्म कारक (संपदान) के गुण (निद्देसा) को कर्म कारक (उपयोग) के अर्थ में देखा जाना चाहिए। 'तं अभिपत्तिन्ति (उन्होंने विशेष रूप से इसकी आकांक्षा की); इसी प्रकार 'वे बन जाते हैं, अर्थात्, वे जो विशेष रूप से वन में निवास आदि गुणों की कामना करते हैं;' ऐसा कहकर यह कहा गया है। 'तस्समे' का अर्थ है: दूसरे शब्दों में, मेरी उपस्थिति में मौजूद गुण; यही इसका अर्थ है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा वज्जीपुत्त का

तैयार है।

**********oOo*********
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(63):पक्खा (द क्रिप्पल)

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (63) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक

63. पक्खा (विकलांग)
बुद्ध युग में शाक्य वंश के देवदहा नगर में एक शाक्य राजा के परिवार में जन्मे, उनका नाम युवा सन्मोदा रखा गया। [1] चूंकि बचपन में उन्हें गठिया हो गया था, [2] और कभी-कभी वे लंगड़े की तरह चलते थे, इसलिए उन्हें पक्खा (= लंगड़ा) कहा जाने लगा और ठीक होने के बाद भी यह नाम उनके साथ बना रहा। जब भगवान बुद्ध उनके परिवार से मिलने आए, [3] तो वे वहां उपस्थित थे , जिससे बुद्धों का विश्वास उन पर कायम हुआ, उन्होंने भिक्षु दीक्षा ली और वन में रहने लगे। एक दिन भिक्षा मांगने के लिए गांव जाते समय वे एक पेड़ के नीचे बैठ गए। तभी एक चील ने कुछ मांस उठाकर आकाश में उड़ गई। कई चीलों ने उन पर हमला किया और मांस को उनसे छीन लिया। एक अन्य चील ने गिरे हुए मांस को उठा लिया और दूसरी चील ने उसे नोच डाला। और भिक्षु ने सोचा: 'जिस प्रकार मांस होता है, उसी प्रकार सांसारिक इच्छाएँ सभी के लिए समान हैं, दुख और पीड़ा से भरी हुई हैं।' इस पर विचार करते हुए, और यह समझते हुए कि वे क्षणभंगुर हैं, इत्यादि, उन्होंने अपना कार्य पूरा किया, दोपहर के विश्राम के लिए बैठ गए, और गहन अंतर्दृष्टि से अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, अपनी भावनाओं को आधार बनाकर, उन्होंने इस श्लोक में ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) की घोषणा की:

[63] कटा पतन्ति पतिता गिद्धा च पुनर्गता॥
कतौं किच्चै रतौ रम्मां सुखेननवगतं सुखन्ति॥ ॥

[63] वे गिरे हुए पर टूट पड़ते हैं, और जब वह पड़ा होता है, तो
लालच में झपट्टा मारते हुए बार-बार आते हैं। ...
लेकिन जो करना उचित था, वही मैंने किया है,
और जो वास्तव में आनंददायक है,
उसी में मेरा आनंद है: इस प्रकार खुशी से
सुख की खोज की गई और उसे प्राप्त किया गया। [4]

[1] कुमार, जिसका सीधा अर्थ है 'युवक', एक युवा कुलीन व्यक्ति की विशिष्ट उपाधि है, जैसे मानव एक युवा ब्राह्मण (पुजारी) की होती है। हमारे पास कोई उपयुक्त शब्द नहीं है। ग्रीक शब्द कौरोस से तुलना करें ।

[2] वातरोगो, शाब्दिक रूप से, 'वाष्प-रोग।' पर्यायवाची वातबाधो पर, मिलिंदा, i. 191, और नीचे, CLIII देखें ।

[3] देखें बड. जन्म कहानियां, पृ. 121 आगे.

[4] अर्थात्, टीका कहती है: 'फल प्राप्ति के सुख से निर्वाण प्राप्त हुआ है, जो सुख से परे है (या अत्यंत महान सुख है, अच्छन्त-सुखं) , और उस अंतर्दृष्टि के सुख से, जो एक सुखद कार्यप्रणाली बन गई है , फल प्राप्ति का आनंद, निर्वाण का आनंद प्राप्त हुआ है।' डॉ. न्यूमैन ने बताया है कि बाद की व्याख्या - सुख से सुख प्राप्त करना - मज्झिमा निकाय (i. 93 f.) में जैन दृष्टिकोण के विपरीत है: 'नहीं, मित्र गौतम (बुद्ध), सुख सुख से नहीं, बल्कि कष्ट से प्राप्त होता है' - तपस्वी दृष्टिकोण। तुलना करें CLXXI.

1.7-3[63] श्लोक पर टिप्पणी

पक्खा थेरा
कुतापतन्ति से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पक्ष का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी इस और उस जन्म में भक्तिपूर्ण सेवा कर्म करते हुए पुण्य कर्म किए और 91 युग (कप्पा) पहले एक राक्षस सेनापति बने। उन्होंने भगवान विपस्सी के दर्शन किए, श्रद्धावान हुए और उन्हें दिव्य वस्त्र भेंट किए। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका पुनर्जन्म देवदहा जिले (निगम) में शाक्य वंश के शाही परिवार में हुआ। उनका नाम "राजकुमार सम्मोदा" था। फिर जब वे युवा थे, तब वात रोग के कारण उनके पैर उनका भार नहीं उठा पाते थे। कुछ समय तक वे अपंग (पीठसप्पी) की तरह भटकते रहे। इसी कारण उनका नाम पक्ष पड़ा। बाद में, जब वे रोगमुक्त हो गए, तब भी लोग उन्हें पहचानते रहे। भगवान बुद्ध के परिजनों की सभा में चमत्कार देखकर, उन्होंने उचित श्रद्धा से दीक्षा ली, भिक्षु बन गए, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों का पालन किया, मानसिक साधना में लीन हो गए और वन में निवास करने लगे। फिर एक दिन, जब वे भिक्षा मांगने के लिए एक गाँव में जा रहे थे, तो रास्ते में वे एक वृक्ष के नीचे बैठ गए। उसी समय एक गिद्ध (कुलाला) आकाश में मांस का एक टुकड़ा लेकर जा रहा था; कई गिद्ध उस पर टूट पड़े और उस टुकड़े को नीचे गिरा दिया। एक अन्य गिद्ध ने गिरे हुए मांस के टुकड़े को उठा लिया। एक तीसरे गिद्ध ने उस मांस को काटकर अलग कर दिया और उसे अपने साथ ले गया। इसे देखकर थेरा ने मन ही मन कहा: “जिस प्रकार यह मांस का टुकड़ा है, उसी प्रकार इंद्रिय सुख जैसी वस्तुएँ भी सामान्य संपत्ति (साधारण) हैं, अत्यंत दुखद और अत्यंत कष्टदायी (उपायस) हैं।” इस प्रकार,

उन्होंने इंद्रिय सुखों की हानि और त्याग के लाभ पर विचार किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपश्यना) के विकास की ओर अग्रसर हुए, भिक्षा-भंडारण के लिए विचरण किया, “अनित्य (अस्थायी)” आदि का चिंतन करते हुए भोजन किया, अपने दिन के विश्राम स्थल (दिवठान) पर बैठ गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपश्यना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

“विपस्सिका नामक भगवान,

दुनिया का सबसे बुजुर्ग, बैल

उस समय पुरुषों में से प्रवेश किया

बंधुमा के साथ अड़सठ

हज़ार।

विशेष रूप से बाहर जाने के बाद

मैं जिस शहर में गया था, वहाँ के मंदिर में गया था।

द्वीप (dīpacetiya): मैंने देखा

स्टेनलेस बुद्ध, उपयुक्त प्राप्तकर्ता

बलि की भेंटों का।

मेरे चौरासी हजार राक्षस

उपस्थिति का आदरपूर्वक ध्यान रखा गया।

मुझे तीस लोगों की भीड़ के समान

इंदा, दिव्य राजा का।

अपने महल से बाहर निकलने के बाद, मैं

फिर उसने दिव्य वस्त्र को ऊपर उठाया,

और वही वस्त्र पेश किया।

महान संत को मेरा नमन।

उसके सामने मैं खुद को नीचे गिरा रहा था

सिर (सिरसा)।

वास्तव में बुद्ध, धर्म और

हमारे स्वामी की संपदा (संपदा)।

बुद्ध की शक्ति के कारण ही ऐसा हुआ था।

भूकंप। यह देखने के बाद

आश्चर्य भी, विचित्र और रोंगटे खड़े कर देने वाला।

मेरा मन श्रद्धापूर्वक प्रसन्न हो गया

ऐसा मनुष्य का संप्रभु (द्विपदिन्द)

बुद्ध के रूप में।

मेरे मन को धार्मिक रूप से प्रसन्न करके

और स्वामी को वस्त्र भेंट किया, कि

मैं अपने मंत्री और अपने दल के साथ

मैंने (गुरु को) अपना आश्रय भी बनाया।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, कि मैंने तब वह काम किया था।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह श्रद्धापूर्वक किए गए प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

पंद्रह युग (कप्पा) पहले, आज से,

सोलह महान शक्ति वाले विश्व-राजा

वहाँ सुवाहन (अच्छे) के नाम से जाने जाते थे

परिवहन), सात रत्नों से सुसज्जित।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "कुटा पटन्ति" से शुरू होने वाले श्लोक का उच्चारण किया, ताकि वे अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट कर सकें, उस बात की अच्छी तरह से घोषणा करके जो पश्चाताप (संवेग) का आधार (वत्थु) थी, जिसके अच्छे कार्य को करने के बाद उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व (अञ्ञा) प्राप्त किया।

63. यहाँ, 'चुटा' का अर्थ है नीचे गिरना (भट्ट)। 'पतन्ति' का अर्थ है अनुपतन्ति के बाद गिरना। 'पतिता' का अर्थ है मृत्यु के मार्ग से जमीन पर गिरना; या स्वतः ही आकाश में गिर जाना (संपटन)। 'गिद्धा' का अर्थ है लालची हो जाना (गधं आपन्ना)। 'पुनर्गता' का अर्थ है फिर से पास आना। व्याकरणिक 'च' को हर जगह संयोजित किया जाना चाहिए। यही कहा गया है:— यहाँ, गिद्ध गिरते भी हैं और पीछे भी गिरते हैं; मांस का टुकड़ा दूसरे के मुँह से भी गिर गया है; गिरने के बाद, वह जमीन पर भी गिर गया है; लालची होने के कारण, वे लोभ में गिर गए हैं; यहाँ तक कि सभी गिद्ध फिर से आ गए हैं। जिस प्रकार ये गिद्ध भी गिरते हैं, उसी प्रकार अच्छे कर्मों से विमुख हुए जीव पुनर्जन्मों के चक्र में घूमते रहते हैं; वे नरक में गिर जाते हैं इत्यादि; जो लोग इस प्रकार पतित हो गए हैं, और जो लोग समृद्ध अस्तित्व में रहे हैं, वहाँ इंद्रिय सुखों के आनंद में लीन होकर (अनुयोग करके) और ब्रह्मा के जगतों में, सजीव और निराकार (रूपारूप) दोनों में, अस्तित्व की लालसा के कारण, वे लोभी हो जाते हैं और पुनः उत्पन्न हो जाते हैं, क्योंकि वे अस्तित्व से पूर्णतः मुक्त नहीं हो पाए थे; आगे के अस्तित्व के लिए सहायक इस और उस कर्म के कारण, वे केवल व्यथित इस और उस अस्तित्व तक ही पहुँच गए हैं; ये जीव इस प्रकार हो गए हैं। कतं किच्चं का अर्थ है: मेरे द्वारा सोलह प्रकार (विध) में जो किया जाना चाहिए (किच्चा), जिसे समझ (परिज्ञा) आदि के रूप में वर्गीकृत (भेद) किया गया है; अब वह एक नहीं रह गया है (या, अब वह नहीं है जो किया जाना चाहिए)। रतंरम्मं का अर्थ है: निर्वाण, जो स्पष्ट रूप से मुक्त (विनिस्सट) है, वह सब कुछ जो अनेक कारणों के संयोजन (संखट) से उत्पन्न होता है, जिसका आनंद संतों को उठाना चाहिए (आरिया), जो आनंददायक (रम्मं) है, जिसके प्रति संत समर्पित (रतं) हैं और जिसमें संत विशेष रूप से प्रसन्न (अभिरतं) होते हैं। सुखेनवागतं का अर्थ है: इसी कारण निर्वाण शाश्वत सुख है, जिसका अनुसरण (अन्वागत) और प्राप्ति (उपगत) फल प्राप्ति के आनंद (फलसमापत्ति) के माध्यम से होती है; यह फल प्राप्ति का आनंद (फलसुख) होने के साथ-साथ निर्वाण का सुख भी है, जिसका अनुसरण सही मार्ग (मग्ग) के आनंद द्वारा किया जाता है, चाहे वह सुख के कारण हो या सुख का उचित अभ्यास (पटिपदा) बन जाने के कारण।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा पक्ष का

तैयार है।

*********oOo*********

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(64):विमला-कोंडन्ना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (64) ------>>>> अगला
अध्याय I.
एकल श्लोक
64. विमला-कोंडाञ्ञा
उनका पुनर्जन्म इस बुद्ध युग में अंबपाली के पुत्र के रूप में हुआ, उनके पिता राजा बिंबिसार थे। [1] उन्होंने बच्चे का नाम विमला रखा, लेकिन बाद में वे विमला-कोंडञ्ञ के नाम से जाने गए। [2] वे वैशाली में परम पूज्य बुद्ध के दर्शन से प्रभावित होकर संसार छोड़कर भिक्षु संघ में शामिल हो गए और अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। उन्होंने इस श्लोक में अपनी अन्न (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[64] दुमवहाय उप्पन्नो जातो पण्डराकेतुना॥
केतुहा केतुनैव महाकेतुऽपधाऽसयिति ॥॥

[64] चमकीले ध्वज द्वारा मैं यहाँ जन्म लेने आया,
उसकी (माँ) में जिसे वृक्ष (अंबा/आम) कहा जाता है। और केतु द्वारा [3]

इससे केतु का वध होता है, महान केतु का पराजय होता है। [4]

[1] तुलना करें बहनें, भजन संहिता lxvi., जहाँ कहा जाता है कि उन्होंने अपनी माँ को परिवर्तित किया था।

[2] विमला = निष्कलंक। कोंडन्ना के ब्राह्मण (पुजारी) वंश-नाम को प्राप्त करने का कोई स्पष्ट सुराग नहीं है। तुलना करें सीसीएक्सएलवीआई।

[3] केतु शब्द का अर्थ बुराई हो सकता है, क्योंकि उसकी माँ (अंबापाली/अम्रपाली) राजा बिम्बिसार की रखैल (उपपत्नी/वेश्या) थी। इसलिए श्लोक का अर्थ यह हो सकता है कि वह बुराई से पैदा हुआ था, लेकिन अब ज्ञान प्राप्त करके उसने जन्म की उस बुराई पर विजय प्राप्त कर ली है।

[4] यह श्लोक प्राचीन कवियों को प्रिय संकेत-पहेलियों में से एक है। एक शब्द केतु (झंडा, ध्वज) प्रतीकात्मक है (1) बिम्बिसार के राजत्व का; (2) धम्म का: 'क्योंकि पथ (धम्म) द्रष्टाओं का ध्वज है,' टीका उद्धृत करती है (अंग. ii. 51; iii. 150); (3) अहंकार के दोष का (मान : 'झंडा फहराना... आत्म-प्रचार के लिए हृदय की इच्छा') (धस्., 1116; बुड. साइम्, पृ. 298, n. 3); (4) बुराई की सेनाओं का। अतः केतु के चार गुना पुनरावर्तन को इस प्रकार व्याख्यायित किया जा सकता है: 'मेरे द्वारा, राजा के पुत्र (1), धम्म (2) की सहायता से, बुराई (4) का नाश करके, अहंकार (3), उसमें निहित सभी आत्म-भ्रमों के साथ, पराजित होता है।' वृक्ष आम (अंबा) है, जिसके नीचे, उनकी कथा के अनुसार, अंबपाली शिशु अवस्था में पाई गई थीं।

1.7-4 [64] श्लोक पर टिप्पणी

विमलकोण्डञ्ञा थेरा
दुमवहयाया उप्पन्नो से शुरू होने वाला श्लोक थेरा विमल कोण्डञ्ञ का है। इसका उद्‌गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा की और इस-उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय किया, और आज से 91 युग (कप्पा) पहले, प्रतापी वुपस्सी के समय में एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लिया। बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उन्होंने भगवान विपस्सी को एक विशाल सभा से घिरे हुए सत्य (धम्म) का उपदेश देते हुए देखा और श्रद्धापूर्वक उन्होंने उन्हें चार स्वर्ण पुष्प अर्पित किए। उनकी श्रद्धा को और बढ़ाने के लिए, प्रतापी ने अपनी मानसिक शक्ति का ऐसा प्रयोग किया कि स्वर्ण पुष्प उस पूरे क्षेत्र में फैल गए। इसे देखकर वे और भी अधिक धर्मपरायण हो गए, उन्होंने प्रतापी बुद्ध को प्रणाम किया, उस चिन्ह (निमित्तं) को धारण किया, अपने घर लौट आए, किसी रोग के कारण उनकी मृत्यु हो गई, लेकिन बुद्ध के प्रति उनका उत्साह (आरम्मण) बना रहा और वे तुषित देवताओं के बीच प्रकट हुए। समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे राजा बिम्बिसार की आश्रित (पटिच्च) अंबपाली के गर्भ में गर्भ धारण किए। वास्तव में, जब वे युवा थे, तब राजा बिम्बिसार ने अंबपाली की सुंदरता (रूपसम्पत्ती) के बारे में सुनकर, उनके प्रति उनकी लालसा प्रबल हो गई, और वे कुछ पुरुषों के साथ वेसाली के पास वेसाली गए और एक रात के लिए उनके साथ सहवास किया। उसी अवसर पर उन्होंने अंबपाली के गर्भ में गर्भ धारण किया। उसने राजा को अपनी गर्भावस्था की स्थिति भी बताई। राजा ने भी अपनी पहचान प्रकट की, उसे जो कुछ देना था वह दिया और विदा हो गया। गर्भावस्था के पूर्ण रूप से परिपक्व होने पर उसने एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम "विमला (पवित्र)" रखा गया। बाद में वह विमला कोण्डाञ्च के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वयस्क होने पर उसने बुद्ध की अलौकिक शक्ति देखी जब वे वैसाई गए थे, वे धर्मपरायण हो गए, भिक्षु बन गए, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों को पूरा किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में स्वयं को लगा दिया और कुछ ही समय में अर्हंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"विपस्सी नाम के भगवान,

दुनिया का सबसे बुजुर्ग, बैल

पुरुषों के बीच, भीड़ के बीच बैठे हुए

पुरुषों ने अमरता का मार्ग सिखाया

(अमाता)।

उनके धर्म को सुनकर, जिसने

वह ऐसा था मानो मनुष्यों का सम्राट हो।

(द्विपदिन्दा), मैंने विशेष भेंट चढ़ाई

बुद्ध को अर्पित किए गए चार सोने के फूल।

यह एक विस्तृत स्वर्ण चंदवा बन गया

उस समय सभा के रूप में। बुद्ध की किरणें

और सोना चमकने लगा और प्रचुर मात्रा में हो गया

प्रतिभा।

उत्साह से भरा और नेक दिल वाला,

मैं रोमांचित (वेदजाता) हो गया और

मैंने श्रद्धापूर्वक अपने हाथ जोड़ लिए!

उनकी समृद्ध खुशी की कल्पना

(वित्ती); वे प्रत्यक्ष आनंद धारण करते हैं।

चीजों का क्रम (diṭṭhadhammasukhāvaho).

स्वयं से विदा लेने के बाद-

मैंने जागृत बुद्ध को नमन अर्पित किया।

उसे अच्छे अभ्यास (वात) का।

यदि मेरी खुशी जागृत हो जाती, तो मैं अपने स्वयं के पास पहुँच जाता।

हवेली।

जब मैं अपने महल के अंदर प्रवेश कर चुका था,

मैंने खुद को सबसे पूर्व के बारे में जागरूक किया-

उत्कृष्ट बुद्ध। उस पवित्रता के कारण-

मानसिकता, मुझे (उपपज्जी) तुसिता मिल गया

स्वर्ग।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने अपना विशेष बनाया है

फूल चढ़ाना। मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

मेरी श्रद्धापूर्वक भेंट का परिणाम

बुद्ध।

उस समय तक सोलह संप्रभु शासक थे।

नेमी का सुप्रसिद्ध नाम, जो थे

महान शक्ति वाले विश्व-राजा, चालीस

आज से तीन युग (कप्पा) पहले।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "दुमव्ययाय" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने अरहंत पद के संकेत (पदेसा) के साथ अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट किया।

64. वहाँ दुमवयाया का अर्थ है जिसे आम का वृक्ष कहा जाना चाहिए; अंबपाली में; इस प्रकार इसका अर्थ है। यह स्थानवाचक शब्द है, जिसका अर्थ है आधार। उप्पन्नो का अर्थ है उत्पन्न होना और उसके गर्भ में उत्पन्न होना। जातो पाण्डरकेतुना का अर्थ है (वह) बिम्बिसार के कारण उत्पन्न हुआ, जिसे स्पष्ट रूप से "पाण्डरके तु (सफेद ध्वज)" के रूप में जाना जाता है, क्योंकि चमकदार सफेद (धवल) वस्त्र का ध्वज था; वह उस पर (राजा पर) आश्रित होकर उत्पन्न हुआ; इस प्रकार इसका अर्थ है। उप्पन्नो का अर्थ है प्रथम जन्म का प्रदर्शन (अभिमिब्बत्ति)। इसके बाद, वास्तव में, जातो का अर्थ है जन्म का प्रदर्शन। वास्तव में संसार में, जन्म देने (विजयना) के समय से ही जन्म (जात) की प्रथा (वोहर) शुरू होती है। यहाँ फिर से इस अभिव्यक्ति द्वारा: "दुमवयाया उप्पन्नो (तथाकथित वृक्ष से उत्पन्न होकर)," आत्म-प्रशंसा की अवस्था को दूर करता है (अपनेति); वह अनेक स्वामियों के पुत्रों के विशिष्ट जन्म (सब्भव) की अपनी उपलब्धि पर प्रकाश डालता है (दीपेति)। "जातो पाण्डरकेतुना (श्वेत ध्वज के कारण जन्म)" जैसी अभिव्यक्ति द्वारा वह यह दर्शाकर दूसरों की निंदा (परवम्भना) को दूर करता है कि उसके पिता सुप्रसिद्ध (विञ्ञात) हैं। केतुहा का अर्थ है अभिमान का त्याग। वास्तव में, अभिमान अपने अहंकार के कारण ध्वज के समान है; इस प्रकार, केतु (झंडे के समान) अभिमान। इसी प्रकार, वास्तव में, उस अभिमान को "केतुकम्यतापच्चुपट्ठानो (झंडे के लिए प्रयास करने की घटना)" कहा जाता है। केतुनायेव का अर्थ है ज्ञान (पञ्ञा) के माध्यम से भी। वास्तव में, ज्ञान (पञ्ञा) को पवित्र कुलीनों (आर्य) का ध्वज कहा जाता है, क्योंकि इसकी उच्च स्थिति (अच्चग्गतत्थ) है, क्योंकि इसने मारा की सेना को पराजित किया था और इसकी पूर्ववर्ती स्थिति है। इसी कारण बुद्ध ने कहा: "वास्तव में, सत्य (धम्म) संन्यासियों (इसि) का ध्वज है। महाकेतुं पदांशयि का अर्थ इस प्रकार है: — वे विशाल हैं क्योंकि वे क्षेत्र में अत्यंत विस्तृत हैं; उनमें कई प्रकार के अभिमान भी हैं, जैसे श्रेष्ठता का अभिमान, जन्मजात अभिमान आदि; और अन्य दुराचार (किलेसा) के कर्म (धम्म): क्योंकि वे ऊंचे (समुस्सितत्थ) स्थान पर हैं, इसलिए वे ध्वज का निर्माण करते हैं; इसका ध्वज; तुस महाकेतु (बड़ा ध्वज): दुष्ट मारा को उन्होंने परास्त किया और उसकी सेना को नष्ट करके और उसके क्षेत्र को पार करके उसे विनम्र बनाया। "महाकेतुं पदांशयी (उन्होंने बड़ा ध्वज नष्ट कर दिया)," इस प्रकार, उन्होंने अपनी अञ्ञा (प्राप्ति) के संकेत द्वारा अपने अरहंतत्व को प्रकट किया, स्वयं को इस प्रकार इंगित किया मानो वह कोई और हो।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा विमला कोंडान्या की

तैयार है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(65):उक्खेपकाटा-वाचा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (65) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
65. उक्खेपकटा-वच्च
उनका जन्म बुद्ध युग में सावत्थी में हुआ था, वे वच्छ परिवार के एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र थे। उन्होंने भगवान (बुद्ध) का उपदेश सुना, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और कोसल के एक गाँव में रहने चले गए। समय-समय पर वहाँ आने वाले भिक्षुओं के माध्यम से उन्होंने धर्मशास्त्र में महारत हासिल की, यद्यपि वे विनय, सुत्तंत और अभिधम्म में अंतर नहीं कर पाते थे। फिर भी, उन्होंने सारिपुत्त से प्रश्न पूछकर यह ज्ञान प्राप्त किया, जिससे जहाँ अन्य भिक्षु विनय या धर्मशास्त्र के किसी अन्य भाग में पारंगत थे, वहीं उन्होंने पिटकों को सभा के पाठ से पहले ही कंठस्थ कर लिया था। [1] और इस दक्षता को प्राप्त करने के शीघ्र ही उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इसके बाद वे एक शिक्षक बन गए, और एक दिन, किसी अन्य व्यक्ति के रूप में स्वयं को संबोधित करते हुए, उन्होंने यह श्लोक कहा:

[65] उक्खेपकाṭवच्चस्सा संकलिताṃ बहुहिव ससेही॥
तां भासति गहत्थानां सुनिसिंनो उदरापामोज्जोऽति ॥॥ ॥

[65] वह धन जो वाच्चा के परिश्रम से उत्पन्न हुआ [2] इन वर्षों में निरंतर वृद्धि से,
उसने आम लोगों को घोषित किया,
सम्मान में बैठे हुए, शानदार आनंद से परिपूर्ण।

[1] विनय ग्रंथ, iii. 373 आगे देखें । धम्मपाल (अन्य टीकाकारों के अनुसार) का यह एक निश्चित मत है कि उनके धर्म के सिद्धांत और अनुशासन अनंत काल से तीन पिटकों के रूप में विद्यमान थे, जिन्हें प्रत्येक बुद्ध के समय पुनर्जीवित किया गया था। परिषदों को केवल उस रूप में शामिल किए जाने वाले विषय-वस्तु पर निर्णय लेना होता था और उसके शब्दों का पाठ करना होता था। तुलना करें महावंस, गीगर का अनुवाद; पीटीएस, 1912, अध्याय iii.-v.

[2] उन्हें जिस उपनाम से पुकारा जाता है, उसका अर्थ है "उगाने वाला वच्छ", "ढेर बनाने वाला वच्छ", जो मौखिक रूप से सीखे गए उनके उत्कृष्ट ज्ञान पर ज़ोर देता है। वच्छ परिवार ने कई थेराओं का योगदान दिया; इसलिए, निस्संदेह, भेद करने की आवश्यकता है। तुलना करें: 9, XIII, LXXI, CXII, CXIII।

1.7-5 [65] श्लोक पर टिप्पणी

Ukkhepakatavacchattera
उक्खेपकतावच्छस से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उक्खेपकतावच्छ का है। इसका उद्गम क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए और आज से चौरानवे युग (कप्पा) पहले, प्रतापी सुद्धत्थ के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने उस स्तंभ का दान किया जो निगम के पास उपलब्ध नहीं था, जब वह गुरु को समर्पित एक मंडप का निर्माण कर रहा था, और एक सहयोगी के रूप में कर्तव्य निभाया। उस पुण्य कर्म के कारण उनका दिव्य लोक में पुनर्जन्म हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे अपने पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे

सावत्थी में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम वच्छा उनके कुल से आया था। उन्होंने गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) का श्रवण किया, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए और कोसल राज्य के एक गाँव के मठ में निवास करते हुए, उन्होंने भिक्षुओं की उपस्थिति में धम्म का अध्ययन करके उसमें महारत हासिल की। हालाँकि, वे "यह विनय है; यह सुत्तंत है; यह अविधान्म है" जैसे विभाजन (परिच्छेद) को नहीं समझते थे। तब एक दिन उन्होंने आदरणीय धम्म के सेनापति से पूछा और विभाजनों के अनुसार उचित रूप से चिह्नित किया। धम्मसंगीति से पहले भी, पिटक आदि जैसे पदनाम शास्त्रों (परियत्ति) की उत्कृष्ट सामग्री में अलग से निर्धारित थे, क्योंकि अनुशासन की पुस्तक के स्मरणकर्ता (विनयधर) जैसा एक शब्द था। बुद्ध की तीन पिटक शिक्षाओं का अध्ययन और विवेचना करते हुए, उन्होंने वहां वर्णित भौतिक और मानसिक घटनाओं (रूपारूपधम्म) को भली-भांति समझा, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि प्राप्त करने और उस पर ध्यान करने के मार्ग पर चले, और कुछ ही समय बाद अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"कॉर्पोरेशन में भारी भीड़ थी।"

भगवान सिद्धार्थ के लिए।

बुद्ध की शरण में भी गए थे और

वे तथागत में विश्वास रखते थे।

वे सब एक साथ आए और उन्होंने मिलकर

परामर्श के बाद, एक मंडप का निर्माण किया गया।

मास्टर। उन्हें खंभा नहीं मिल रहा है।

विशाल क्षेत्र में इसकी तलाश की (vicinanti)

जंगल।

मैं उनसे जंगल में मिला, और

फिर वह उपयुक्त रूप से भीड़ (गण) के पास पहुंचा।

भीड़ ने मेरी मुट्ठी ऊपर उठाते हुए पूछा।

हाथ।

उन गुणी भक्तों ने अपना

मेरे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है:— “हम हैं

एक मंडप बनाने की इच्छा रखते हुए, लेकिन

स्तंभ उपलब्ध नहीं है।

(उनके जवाब के जवाब में, मैंने)

उन्होंने उनसे इस प्रकार कहा:—) मुझे (वह) दे दो

उस एक स्तंभ की खरीद; मैं

मैं इसे स्वामी को अर्पित करूँगा। मैं करूँगा।

वह स्तंभ लाओ; तुम सब सफल हो जाओ

बेपरवाह (appossukka).

प्रसन्न और प्रसन्न (tuṭṭhamānasā)

उन्होंने मेरे (मेरे) पर (पवेच्चिंसु) प्रदान किया

स्तंभ को प्रस्तुत करने का अवसर।

वहाँ से उचित रूप से पीछे हटकर वापस चला गया

उनके (संबंधित) घर।

भीड़ के चले जाने के तुरंत बाद

फिर मैंने निगम से स्तंभ प्राप्त किया।

मैंने खुशी-खुशी और प्रसन्न हृदय से झंडा फहराया (ussāpesi)

पहले इसे।

उस धार्मिक भावना के कारण, मैं

(दिव्य) महल में पुनर्जन्म (उपपज्जिं)।

मेरा महल बहुत ऊंचा था जो ऊपर की ओर जाता था

सात मंजिलों तक।

जब ढोल बज रहे थे तब मेरे पास

मैं हमेशा घिरा रहता था और मेरी सेवा की जाती थी।

पचपन युग (कप्पा) पहले, मैं था

यशोधरा नामक एक राजा।

वहाँ भी मेरे महल का कुआँ ऊँचा हो गया।

सात मंजिलों तक, देखने में मनभावन

मन, एक ही स्तंभ पर टिका हुआ-

उत्कृष्ट शिखरयुक्त ऊपरी भाग से परिपूर्ण-

storey (kūṭāgāra).

इक्कीस युग (कप्पा) पहले मैं था

एक योद्धा-राजकुमार (खत्तिया) जिसका नाम है

उडेना। वहाँ भी मेरा महल था।

सात मंजिला तक ऊँचा।

मैं जिस भी रूप में पुनर्जन्म लेता, चाहे

चाहे दैवीय हो या मानवीय, मैंने हर प्रकार के आनंद का अनुभव किया;

यह (अर्पण करने का) फलदायी परिणाम है।

एक स्तंभ।

यह 94 युग (कप्पा) से था

अब, मैंने तब स्तंभ की पेशकश की।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह भेंट चढ़ाने का फलदायी परिणाम है।

एक स्तंभ।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, अपने कर्तव्यों को पूरा करने की स्थिति में वे सक्रिय हो गए और अपने समक्ष आने वाले भिक्षुओं और गृहस्थों के प्रति करुणावश उन्होंने बुद्ध की तीन पिटक शिक्षाओं का अध्ययन करते हुए सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। उपदेश देते समय, एक दिन उन्होंने स्वयं को एक अन्य व्यक्ति के रूप में प्रकट करने के लिए एक श्लोक कहा:

65. कई वर्षों से, ऐसा ही होता रहा था

स्मृति में समाहित (संकलित)

एक बछड़े द्वारा (वच्चा) जिसे फेंकने के लिए बनाया गया हो

ऊपर (उक्खेपा)। अच्छी तरह से बैठा हुआ और ऊपर-

आनंदित (uḷārapāmojjo) वह सिखाता है (bhāsati)

इसे आम लोगों (गहट्ठा) को दें।

वहाँ, उक्खेपकतवच्छ का अर्थ इस प्रकार है: बछड़े को ऊपर उछालने (कतौक्खेप) के द्वारा; उसी विनय, सूत्र और अभिधम्म को उनके विभाजनों के अनुसार ऊपर उछालने (खिपित्वा) के द्वारा, भिक्षुओं की उपस्थिति में अलग-अलग अध्ययन किए गए अनुशासन के क्षेत्र (विनय), सूत्र क्षेत्र और अभिधम्म क्षेत्र को ऊपर उछालने (खिपित्वा) के द्वारा, बछड़े द्वारा इधर-उधर पाठ करने (सज्जायन) के द्वारा, जो स्थिर हो गया था: यही अर्थ है। वास्तव में, यह शब्द संबंध कारक में अर्थ के लिए सहायक है। संकलितं बहुहिवस्सेहि का अर्थ है: कई वर्षों से हृदय में संयोजन (संपिण्डन) के द्वारा संचित। इसका एक अर्थ "संखलिता" भी है, जिसका अर्थ है: एक श्रृंखला की तरह बना हुआ; एक होकर बंधे होने के कारण सुस्पष्ट वाणी में परिवर्तित होना। बुद्ध द्वारा जो कुछ भी सिखाया जाता है (यं बुद्ध वचनं), वह यहाँ छूटा हुआ और कहा जाना बाकी है। तं का अर्थ है शास्त्र का सत्य (धम्म); भासति का अर्थ है वह बोलता है, वह सिखाता है। गहत्थानं का अर्थ है: उन्हें सामान्य रूप से कहकर। सुनिसिनो का अर्थ है; उस सत्य (धम्म) में सही ढंग से स्थिर होकर; वह स्वयं को पूर्णतः मुक्ति के क्षेत्र (विमुत्तायतन) के शीर्ष (सीस) पर स्थापित करके, लाभ और आतिथ्य (सक्कारा) की अपेक्षा किए बिना (अपच्चासीसंतो) सिखाता है; यही अर्थ है। इसी कारण उन्होंने कहा: "उलारापामोज्जो", जिसका अर्थ है: फल प्राप्ति (फलसमापत्ति) के उचित आनंद से उत्पन्न अपार प्रसन्नता, साथ ही सत्य (धम्म) के उपदेश से भी। वास्तव में, यही कहा गया है:—

"हे मित्र भिक्षु! चाहे जिस भी तरीके से

एक व्यक्ति दूसरों को व्यापक रूप से सिखाता है।

जिस सत्य (धम्म) के अनुसार है

सुना और याद किया गया (परियत्ता),

इस प्रकार, वह भी लाभ प्राप्त करता है।

उस क्षेत्र में कल्याण का ज्ञान

धम्म के माध्यम से, वह सत्य का ज्ञान प्राप्त करता है।

(धम्म), उसे आनंद प्राप्त होता है।

सत्य (धम्म) द्वारा; इस प्रकार, इत्यादि।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा उक्खेपकटावच्चा का

तैयार है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(66):मेघिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।

नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (66) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
66. मेघिया
इस बुद्ध युग में कपिलवस्तु में एक शाक्य राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम मेघिया रखा गया। [1] बड़े होकर उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और किमिकाला नदी के किनारे स्थित कालिका में निवास करते हुए भगवान (बुद्ध) की सेवा की। एक सुंदर आम के जंगल को देखकर उन्होंने वहाँ रहने की इच्छा व्यक्त की। भगवान (बुद्ध) ने दो बार मना किया, लेकिन उनके तीसरे अनुरोध पर उन्हें जाने दिया। लेकिन वहाँ वे मक्खियों की तरह बुरे विचारों से घिरे रहे और उनका ध्यान एकाग्र नहीं हो सका, इसलिए वे लौट आए और भगवान (बुद्ध) को बताया। भगवान ने कहा, 'जब मेघिया, हृदय निर्वाण के लिए परिपक्व नहीं होता है, तो पाँच चीजें निर्वाण में सहायक होती हैं,' और उन्हें संबोधित किया। [ed1] इस पर मेघिया ने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया और इस श्लोक में अपनी अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[66] अनुसासि महावीरो सब्बधम्मनापरागु॥
तस्सहं धम्मं सुत्वान् विहासिऽ संतिके सातो॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[66] महान साहसी भगवान (बुद्ध) ने मुझे अनुशासित किया, जो

उन्होंने सभी धम्मों को पार कर लिया है।
और मैंने, मार्ग (धम्म) को सुनकर,
प्रेमपूर्वक शिष्यत्व और श्रद्धा से उनका निकट अनुसरण किया। [2] मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध के सभी विधानों का पालन किया है।

[1] अर्थ 'बादलदार', 'बादल जैसा', भारत में अधिक आर्द्र जलवायु की तुलना में अधिक शुभ शगुन वाला नाम। उदाना, चतुर्थ, i में अधिक विस्तार से बताया गया है।

[2] अधिक शाब्दिक रूप से, 'उसके पास रहते हुए, उससे प्यार करते हुए, या उसके प्रति समर्पित होते हुए।' लेकिन मुहावरे, किसी शिक्षक के 'निकट' रहकर दुनिया छोड़ देना, शिष्यत्व के संबंध को दर्शाता है।

[ed1] एएन 9.3 1. धम्म मित्र; 2. नैतिक आचरण में निपुणता; 3. कम चाहत, संतोष, एकांत, प्रयास, नैतिक आचरण, शांति, ज्ञान, मुक्ति, विद्या और स्वतंत्रता पर चर्चा; 4. पूरे मन से एकाग्रचित्त होकर जागृति की प्राप्ति के लिए लीन रहना; 5. घटनाओं की उत्पत्ति और क्षय तथा अष्टांग मार्ग के ज्ञान में मर्मस्पर्शी होना।

1.7-6[66] श्लोक पर टिप्पणी

मेघियाथेरा
अनुसासी महावीर से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मेघिया का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए और इस-उस जन्म में अच्छे कर्मों के बीज बोते हुए, वे आज से 91 युग (कप्पा) पहले भगवान विपस्सी के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लेकर बुद्धि की आयु प्राप्त कर चुके थे। उस समय भी, भगवान विपस्सी ने बुद्ध जीवन के चरम (किच्च) पर पहुंचकर अपने जीवन तत्व (आयुसंखारं ओसज्जी) का उत्सर्जन किया। इसी कारण जब भूकंप आदि जैसी घटनाएँ घटीं, तो जनसमूह भय से कांप उठा। तब महान राजा वेसवन्न ने उस जनसमूह को यह बात स्पष्ट रूप से समझाई और उन्हें सांत्वना दी। उस (दुखद समाचार) को सुनकर अनेक लोग शोकग्रस्त हो गए। वहाँ, इस युवक (कुलपुत्तो) ने बुद्ध की शक्ति (अनुभव) के बारे में सुना, उनके प्रति श्रद्धा और आदर का भाव जागा और उन्हें अपार उत्साह और प्रसन्नता का अनुभव हुआ। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और कपिलवस्तु में शाक्य वंश में उनका पुनर्जन्म हुआ, जब बुद्ध प्रकट हुए। उनका नाम मेघिया था। वयस्क होने पर वे गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बन गए और जब भगवान जालिका में निवास कर रहे थे, तब उनकी सेवा की;

किमिकाला नदी के किनारे एक रमणीय आमों का बाग देखकर वे वहाँ रहने के लिए विवश हो गए; परन्तु भगवान ने उन्हें दो बार ऐसा करने से मना किया। तीसरी बार, मुक्ति (विस्साज्जितो) प्राप्त करने के बाद वे वहाँ गए, परन्तु मन की गलत धारणाओं (वितक्का) से ग्रस्त होने के कारण उन्हें एकाग्रता (समाधि) प्राप्त नहीं हुई; वे गुरु के समक्ष गए और उन्हें इस विषय में सूचित किया। तब भगवान ने उन्हें उपदेश दिया, जो इस प्रकार शुरू हुआ: "हे मेघीय! पाँच प्रकार की बातें (धम्म) उस व्यक्ति को पूर्ण रूप से प्राप्त होती हैं (परिपाक) जिसका मन पूर्णतः मुक्त नहीं हुआ है।" उन्होंने इस उपदेश का पालन किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

जब विश्व विपस्सी के प्रमुख

उसने अपने जीवन के घटक (आयु-) का उत्सर्जन किया।

वहाँ (संखारा) धरती कांप उठी,

समुद्र (जला) की कमरबंद (मेखला)।

जब बुद्ध ने अपना जीवनकाल समाप्त किया

जीवन (आयुषङ्खाये), वहाँ मेरा मन कांप उठा-

यह भी नीचे की ओर फैला और खिंचा हुआ था।

विभिन्न रंगों के मुकुट से सुसज्जित।

मेरी चिंता (तासो) अत्यधिक बढ़ गई जब

मेरा महल बुरी तरह हिल गया था। किसलिए?

इसका उद्देश्य क्या था?

प्रचुर मात्रा में प्रकाश हो। वेसवण आए।

यहां आकर भीड़ को शांत किया।

पुरुषों के लिए: कोई खतरा मौजूद नहीं है

जीवित प्राणी; आपको भी एक जीवित प्राणी होना चाहिए।

सटीक और आत्म-नियंत्रित।

मैं कहता हूँ! बिल्कुल! बुद्ध भी

धम्म! समृद्धि अद्भुत है!

हमारे स्वामी की (संपदा)। जब वह

अचानक हलचल मच जाती है, धरती स्वतः कांपने लगती है।

बुद्ध की शक्ति का ज्ञान कराते हुए,

मैंने युगों तक स्वर्ग में आनंद लिया।

(कप्पा)। शेष युगों में (कप्पा)

मेरे द्वारा एक अच्छा कर्म (कारिता) किया गया।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मुझे यह धारणा प्राप्त हुई है

तब, मुझे किसी बुराई के अस्तित्व की याद नहीं आती।

तनाव; यह इसका फलदायी परिणाम है

बुद्ध के प्रति मेरी धारणा (साञ्ञा)।

चौदह युग पहले, आज से, मैं था

एक संप्रभु, शक्ति का स्वामी,

समिता नाम से जानी जाने वाली, एक विश्व-

अत्यंत शक्तिशाली राजा।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी अज्ञा (प्राप्ति) को प्रकट करते हुए एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें उन्होंने कहा: "गुरु की उपस्थिति में शिक्षा प्राप्त करने के बाद मैंने अरहंत पद प्राप्त किया।"

66. महान भगवान, कुशल (पारागू)

मुझे सभी धर्मों का उपदेश दिया गया।

उनकी सत्य की शिक्षा सुनकर

(धम्म), मैं उनके निकट सचेत रूप से रहता था।

महाविज्ञान (विज्जा) के तीन रूप

तदनुसार, मुझे वह प्राप्त हो गया था;

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

वहाँ, अनुसासी का अर्थ इस प्रकार है:— उन्होंने सलाह और निर्देश दिए, जिनकी शुरुआत इस प्रकार हुई: “हे मेघीय! पाँच बातें पूर्णतः सिद्ध हो जाती हैं, उस व्यक्ति को जिसकी मुक्ति पूर्णतः परिपक्व नहीं होती।” महावीर का अर्थ है अत्यंत वीर (महाविक्कन्तो); परिश्रम की पूर्णता की पूर्ण प्राप्ति के लिए महान परिश्रम, और चार प्रकार के परिश्रम (पधान) की समृद्धि (संपत्ति) के लिए, जो दूसरों के समान नहीं है, ऐसे परिश्रम पर आत्म-संकल्प के माध्यम से, जो चार भागों (अंग) से युक्त है; यही अर्थ है। सब्बधम्मनपारागू का अर्थ है ज्ञान (ज्ञान) के माध्यम से दूसरे तट, सभी ज्ञात सत्यों (नीय्यधम्म) के चरम छोर तक पहुँच चुके हैं; इस प्रकार, सब्बधम्मनपारागू (सभी सत्यों (धम्म) में निपुण); सर्वज्ञ; यही अर्थ है। दूसरे शब्दों में: उसने स्वयं निर्मित (सयम्भु) ज्ञान (ज्ञान) के माध्यम से निर्वाण प्राप्त कर लिया है, जो कारणों के संयोजन से उत्पन्न समस्त धर्म का अंतिम किनारा बन गया था; इस प्रकार, सब्बधम्मनपारागू (सभी धम्मों में निपुण)। तस्साहं धम्मं सुत्वन का अर्थ है: स्वयं बुद्ध द्वारा प्रतिपादित चार आर्य सत्यों की शिक्षाओं को सुनकर, मैं बुद्ध के निकट ही रहा। विहासिं सन्तिके का अर्थ है आम के बाग में गलत चिंतन (वितक्का) से व्याकुल होकर, मैं कालिका मठ गया और बुद्ध के निकट ही रहा। सतो का अर्थ है सचेतनता से युक्त होना; शांत भाव (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में परिश्रमी होना; यही अर्थ है। अहं का अर्थ है: यह, "अनुसासि (निर्देशित)" के अनुसार; इस प्रकार, यहाँ "मं (मैं)" है; इस प्रकार "विज्जा अनुपत्ता, कतं बुद्धान शासनं (अतिज्ञान (विज्जा) प्राप्त हुआ था) तदनुसार प्राप्त किया गया; बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था; इस प्रकार, यहाँ “मया (मेरे द्वारा)” है, इसलिए इसे अपनाना चाहिए (परिणामेटब्बं)। “कतां बुद्धस्स शासनं” का अर्थ इस प्रकार लगाया जाना चाहिए: — इसके द्वारा, उन्होंने गुरु की सलाह का उचित पालन करते हुए, परियाय के अनुरूप, तीन प्रकार के महाविज्ञान (विज्जा) की उपयुक्त प्राप्ति को प्रकट किया। वास्तव में, नैतिक उपदेशों आदि का सर्वांगीण पालन भी गुरु के उपदेशों का पालन करना ही है।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा मेघिया की

तैयार है।

******** oOo ********
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(67): एकधम्म सवनिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (67) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
67. एकधम्म सवनीया
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सेताव्या में हुआ, [1] एक पार्षद के परिवार में। जब भगवान (बुद्ध) सेताव्या आए और सिंगसपा वन में ठहरे, तो वे उन्हें सुनने के लिए [68] प्रणाम करते हुए एक तरफ बैठ गए। भगवान (बुद्ध) ने उनके भावों का चिंतन किया और उन्हें इस श्लोक में धर्म का मार्ग सिखाया:

वास्तव में सभी सांसारिक वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं [2]

और उन्होंने अपने पिछले संकल्प (धर्म के पुनरुद्धार के समय संसार त्यागकर संन्यास ग्रहण करने के) से प्रेरित होकर सत्य को और अधिक स्पष्ट रूप से समझा, संसार त्यागकर संन्यास ग्रहण किया, और दु:ख तथा आत्महीनता की अवधारणाओं का अध्ययन करके अंतर्दृष्टि प्राप्त की तथा अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। और क्योंकि केवल एक बार धर्म का पाठ करने मात्र से ही उनका भाग्य पूर्ण हो गया, इसलिए उन्हें एक बार धर्म का पाठ सुनने वाला (एकधम्मसवणीय) नाम प्राप्त हुआ । उन्होंने अपनी सर्वोच्च उपलब्धि की घोषणा इस श्लोक में की है:

[67] किलेसा झपिता मयहाऽ भव सब्बे समुहता॥
विक्खिणो जातिसंसारो नत्थि दानि पुनब्भावो' ति.॥ ॥

[67] मुझमें वह सब जलकर राख हो गया जिसने अपवित्र किया,
और जीवन की निरंतरता को जड़ से उखाड़ फेंका;
पुनर्जन्म के चक्र को पूरी तरह से नष्ट कर दिया:
अब फिर से जन्म लेने का कोई रास्ता नहीं है। [3]

[1] कोशल में। सी एफ संवाद, ii. 349; सुत्त निपैता, श्लोक 1012; अंग., ii. 37.

[2] संवाद देखें , ii. 175: 'वे सभी क्षणभंगुर हैं,' आदि।

[3] पाली भाषा में यह वाक्यांश और 'जीवन की निरंतरता' दोनों ही भाव हैं, पहले बहुवचन, फिर एकवचन, जिसमें पुना उपसर्ग लगा है, 'पुनः'; शाब्दिक रूप से, 'जन्म लेना' और 'पुनः जन्म लेना'। बहुवचन रूप से पुनर्जन्म के तीन प्रमुख तरीके समझे जाते हैं - काम , रूप और अरूप भाव - साथ ही कर्म भाव, या क्रिया या चरित्र की वह निरंतरता जो भविष्य के भाव को निर्धारित करती है, और उपपत्ति भाव, या परिणामी पुनर्जन्म (जैसा कि टीका में कहा गया है)। इस सिद्धांत की व्याख्या दर्शन के संकलन में, विशेष रूप से पृष्ठ 262-264 पर की गई है।

1.7-7[67] श्लोक पर टिप्पणी

एकधम्मसवानीयत्थेरा
किलेसा झपिता मयं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा एकधम्मसवनीया का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि वे परम पूज्य पद्ममुत्तरा के समय में वृक्ष देवता के रूप में पुनर्जन्म लिए और कुछ भिक्षुओं को विशाल वन में भटकते हुए और रास्ता भटकते हुए देखकर, अपने निवास से नीचे आए, उन पर दया करके, उन्हें सांत्वना दी, भोजन कराया और उनकी इच्छा के अनुसार उन्हें उनके स्थान तक पहुँचाया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए और उस समय बनारस के राजा किकी बने जब भगवान कस्सपा ने संसार में अवतार लिया, अपने बुद्ध के कर्तव्यों को पूरा किया और पूर्णतः निर्वाण प्राप्त किया। उस राजा की मृत्यु के बाद, उनके पुत्र पुथुविन्द राजा बने। उनके पुत्र का नाम सुसामा था, जिनके पुत्र किकी ब्रह्मदत्त के नाम से जाने जाते थे। उन्होंने अपनी संप्रभुता का प्रयोग करते हुए, जब से शासन (सासेन) समाप्त हो गया था, सत्य (धम्म) सुनने का अवसर न प्राप्त किया, तो उन्होंने यह घोषणा करवाई: — "जो सत्य (धम्म) का उपदेश दे, उसे मैं एक हजार का पुरस्कार देता हूँ।" सत्य (धम्म) का एक भी शिक्षक न मिलने पर, उन्होंने मन ही मन कहा: — "मेरे पिता, दादा आदि के समय में सत्य (धम्म) का व्यापक प्रसार था; सत्य (धम्म) के शिक्षक आसानी से उपलब्ध थे; परन्तु अब तो चार चरणों (चतुप्पदिका) के एक श्लोक का उपदेश भी प्राप्त करना कठिन है।" जब तक सत्य (धम्म) की अनुभूति (संज्ञा) नष्ट नहीं होती, तब तक मैं भिक्षु बनूँगा," और अपना प्रभुत्व त्यागकर वे हिमवंत की ओर चल पड़े, तभी दिव्य राजा सक्का आए, उन्होंने "अनित्: वत संखारा (सभी सजीव और निर्जीव वस्तुएँ, जो कारणों से बद्ध हैं, वास्तव में अनित्य हैं)" श्लोक के माध्यम से सत्य (धम्म) का उपदेश दिया और वापस चले गए। वे लौटे, अनेक पुण्य कर्म किए, दिव्य और मानव प्राणियों के बीच अपने जन्म-जन्म चक्र में विचरण किया, और सेताब्य नगर में एक धनाढ्य परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। वयस्क होने पर, जब भगवान बुद्ध सेताब्य नगर के सिम्सपा वन में निवास कर रहे थे, वे गुरु के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक ओर बैठ गए। गुरु ने उनकी रुचि (अज्जासय) को देखकर उन्हें सत्य का उपदेश दिया। "अनिच्चा वत संखारा (सभी सजीव और अन्य कारण से बद्ध वस्तुएँ स्थिर नहीं हैं)" से शुरू होने वाले इस श्लोक के माध्यम से (धम्म) की व्याख्या की गई है। वहाँ भक्तिपूर्वक सेवा करते हुए, उन्हें अनित्यता का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त हुआ और बुद्ध की सेवा करते हुए, उन्होंने उचित पश्चाताप प्राप्त किया, भिक्षु बन गए, सत्य (धम्म) को ग्रहण करने में स्वयं को समर्पित कर दिया, दुःख (दुक्खा) और अनात्म (अनात्म) दोनों के प्रति सचेत हो गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में संलग्न हो गए और अर्हतत्व प्राप्त किया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"बुद्ध पदुमुत्तारा के शिष्य,

जो वन में भटकते हुए भटक गए थे

विशाल जंगल में थे और

तदनुसार सुना (अनुसुइयारे)

अंधे के समान। पुनः प्राप्त करने के बाद-

स्वयंजागृत बुद्ध का संग्रह किया।

नेता पदुमत्तरा, वे पुत्र

ऋषि जंगल में भटक गए थे।

मेरे महल से नीचे उतरने के बाद

मैं भिक्षुओं के समक्ष गया;

मैंने उन्हें न केवल यह बताया कि कैसे

लेकिन क्या मैंने उन्हें भोजन भी उपलब्ध कराया था?

उस कृत्य के कारण, हे सम्राट!

पुरुष! दुनिया के सबसे बुजुर्ग! बैल

पुरुषों के बीच! मैंने अरहंत पद प्राप्त किया।

मेरे जन्म के सातवें वर्ष में।

पांच सौ युग (कप्पा) पहले, से

अब, बारह विश्व-राजाओं को इस प्रकार जाना जाता है:

सच्चु नाम से संपन्न थे

सात रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

एक भी धम्म श्लोक सुनने मात्र से ही उनका व्यवसाय (किच्चा) सिद्ध हो गया, जिसके कारण उनका नाम एकधम्मसवनीया पड़ गया। अरहंत बनकर उन्होंने एक श्लोक का उच्चारण किया जिससे उनकी अज्ञा (प्राप्ति) प्रकट हुई।

67. मेरी दुष्टता जलकर भस्म हो गई थी;

सभी अस्तित्वों का नाश हो चुका था।

बार-बार पुनर्जन्म के चक्रों ने

स्पष्ट रूप से समाप्त हो गया है; ऐसा है

अब किसी भी नए अस्तित्व का कोई अस्तित्व नहीं है।"

वहाँ, 'किलेसा' का अर्थ है: जिस भी निरंतरता (सन्ताना) में वे उत्पन्न हुए हैं, उसी निरंतरता को वे या तो भ्रष्ट (किलेसेन्ती), हानि (विबाधेन्ती) या पीड़ा (उपतापेन्ती) पहुँचाते हैं, इस प्रकार, विकृति (किलेसा); रोग आदि। 'झापिता' का अर्थ है: दिव्य राजा (इन्द) की अग्नि के समान, वृक्ष, झाड़ियाँ, पौधे आदि अपनी जड़ों सहित पवित्र मार्ग (मग्ग) के ज्ञान की अग्नि से जल गए: 'मयः' का अर्थ है मेरे द्वारा (मया), दूसरे शब्दों में: मेरी निरंतरता (सन्ताना) की प्रणाली में। 'भव सब्बे समूहा' का अर्थ इस प्रकार है: — इंद्रियजन्य और कर्मजन्य अस्तित्वों से प्रारंभ होकर सभी अस्तित्व विकृत (किलेसा) के जल जाने के कारण समाप्त (समुग्घाति) हो गए। वास्तव में, यदि किसी प्रकार के दुराचार (किलेसा) के कारण पुनर्जन्मों (वट्ट) का चक्र चलता है, तो वह कर्म (कम्म) के पुनर्जन्मों (वट्ट) के चक्र के कारण ही होता है। कर्म (कम्म) से उत्पन्न अस्तित्वों के निष्फल होने के कारण, यहाँ तक कि उपपत्ति (उपपत्ति) से उत्पन्न होने वाले सहज अस्तित्व भी लुप्त हो जाते हैं। vikkhīṇo jātisaṃsāro का अर्थ इस प्रकार है:—

"संवेदी का क्रमिक क्रम

जीवन के समुच्चय (खंड), के

तत्व (धातु) और इंद्रियों के निवास स्थान

(आयतन), अस्तित्व में होना (वत्तामन)

निरंतर (अब्बोच्चिन्नम) कहा जाता है

पुनर्जन्मों का बार-बार होने वाला चक्र (संसार);

जन्म (जाति) से शुरू होने वाला और उक्त विशेषता (लक्खण) वाला बार-बार जन्म लेने का चक्र (संसार) स्पष्ट रूप से नष्ट (खीण) हो चुका है; अतः अब कोई नया अस्तित्व नहीं है। क्योंकि भविष्य में कोई नया अस्तित्व नहीं है, इसलिए बार-बार जन्म लेने का चक्र (जारिससंसारो) स्पष्ट रूप से नष्ट (विक्खीण) हो चुका है। अतः अब कोई नया अस्तित्व नहीं है, क्योंकि यह चक्र पूरा होने के बाद कहा जाना चाहिए, और क्योंकि सभी अस्तित्व समाप्त हो चुके हैं (समुहता)। दूसरे शब्दों में, बार-बार जन्म लेने का चक्र (जातिसंसार) स्पष्ट रूप से नष्ट हो चुका है; इसके बाद, अब कोई नया अस्तित्व नहीं है; इस प्रकार इसकी व्याख्या की जानी चाहिए।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा एकधम्मसवनीवा

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(68):एकुदानिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (68) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
68. एकुदानिया [1]

बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक धनी सलाहकार के पुत्र के रूप में हुआ। विवेक की आयु में आकर, वे जेतवन के प्रस्तुतीकरण के समय बुद्ध की महिमा से प्रभावित हुए और संसार त्याग कर संन्यास ग्रहण कर लिया। दीक्षा पूरी करके और वन में रहते हुए, वे भगवान (बुद्ध) के पास सीखने आए। उस समय भगवान (बुद्ध) ने सारिपुत्त को अपने पास ध्यान में लीन देखकर (69) यह कहा:

जो उच्चतम स्तर के विचार आदि पर निवास करता था। [2]

और भिक्षु ने उसे सुनकर, एक बार फिर दूर जाकर और लंबे समय तक जंगल में रहकर भी, उस कथन (गथा) को बार-बार दोहराया, जिससे उन्हें 'एकुदानिया', यानी 'एक ही कथन (गथा) दोहराने वाला' कहा जाने लगा।

एक दिन उन्हें मन की एकता और एकाग्रता प्राप्त हुई, और इस प्रकार, अंतर्दृष्टि का विस्तार करते हुए, उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। और निर्वाण के आनंद में रहते हुए, उन्हें एक बार धम्म के कोषाध्यक्ष [3] द्वारा व्याख्या में परीक्षा लेने के लिए आमंत्रित किया गया, और उन्होंने कहा: 'मित्र, मुझे सिद्धांत समझाओ।' और उस श्लोक पर लंबे समय तक मनन करने के बाद, उन्होंने उसे फिर से कहा:

[68] अधिचेतसो अप्पमज्जतो मुनिनो मोनपथेसु सिक्खतो॥
सोका न भवन्ति ताडिनो उपसंतस्सा सदा सतीमतोऽ ति.॥ ॥

[68] जो उच्चतम स्तर के विचार में निवास करता है,
अटूट उत्साह के साथ, ऋषि, अरहंत (प्रबुद्ध),
ज्ञान की शाखाओं में प्रशिक्षित : - जैसा वह है,
कोई भी दुख उसे विचलित नहीं कर सकता, जो मन से
शांत, निर्मल और स्पष्ट रहता है।

यह उनकी अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा बन गई ।

[1] इसलिए टीका; पाठ एकुद्दानिया में।

[2] उडाना में वर्णित , iv. 7. धम्मपद, श्लोक 259, है; टिप्पणीकार द्वारा, जिसका श्रेय बुद्ध को दिया जाता है, जो 'एकुद्दन' के एक श्लोक के सार्थक प्रयोग की सराहना कर रहे थे।

[3] आनाउदा को दी गई उपाधि। भजन संहिता CCLX देखें।

[4] टीका मुनि (ऋषि) और अरह की परस्पर समतुल्यता पर बल देती है। यह सैंतीस 'ज्ञान के पंख' (संकलन, पृष्ठ 179 देखें) और तीन शिक्षाओं, अर्थात् नैतिकता, ध्यान या मानसिक नियंत्रण, और अंतर्दृष्टि या सिद्धांत (अंग. i. 235) का भी उल्लेख करती है। विनय-पिटक के सुत्त-विभंग में यह कथन (गाथा) पंथक लघु के मुख से कहा गया है, जिन्हें वर्तमान ग्रंथ में भजन CCXXX6 समर्पित है। सावत्थी महाविद्यालय की साध्वियों को पंथक के शिक्षण के समय कोई प्रभावी पाठ की अपेक्षा न करते हुए दर्शाया गया है, क्योंकि वे हमेशा एक ही श्लोक दोहराते थे - अर्थात्, वह श्लोक जो यहाँ एकुदानीय को समर्पित है। थेरा को उनकी बातों का पता चलता है, और वह तुरंत अपनी जादुई शक्ति और बुद्ध-शब्द के अपने व्यापक ज्ञान का प्रदर्शन करता है। इसके फलस्वरूप, वह ननों की प्रशंसा प्राप्त करता है।

1.7-8 [68] श्लोक पर टिप्पणी

एकुदानियत्थेरा
'अधिचेतसो अप्पमज्जतो' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा एकुदानीय का है। इसका उद्गम क्या है? इस शिष्य ने भी पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म के चक्रों से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय किया और राक्षस सेना के सेनापति के रूप में पुनर्जन्म लिया। जब गुरु जी पूर्णतः निर्वाण प्राप्त कर गए, तो वे शोक और विलाप में लीन हो गए और कहने लगे, "सचमुच मेरा बहुत बड़ा नुकसान हुआ है; ऐसा लाभ पाना कितना कठिन है! मुझे गुरु जी के जीवनकाल में दान आदि जैसे पुण्य कर्म करने का अवसर नहीं मिला।" तब गुरु जी के शिष्य सागर ने उनकी चिंता दूर की और उन्हें गुरु जी के स्तूप में श्रद्धापूर्वक अर्पण करने के लिए प्रेरित

किया। उन्होंने पाँच वर्षों तक स्तूप में श्रद्धापूर्वक अर्पण किया, वहाँ से उनका देहांत हो गया और उस पुण्य कर्म के कारण वे जन्म-जन्म के चक्रों में भटकते रहे, अंत में भगवान बुद्ध के समय एक पारिवारिक घर में उनका पुनर्जन्म हुआ। कस्सपा ने जब ज्ञान की आयु प्राप्त की, तो वे बार-बार गुरु के समक्ष उपस्थित हुए (कालेना कालं)। उस समय भी गुरु ने अपने शिष्यों को "अधिचेतसो (या उच्च-विचार)" से शुरू होने वाले श्लोक के माध्यम से उपदेश दिया। उस शिक्षा को सुनकर वे पूर्ण श्रद्धा से भर गए और भिक्षु बन गए। भिक्षु बनने के बाद उन्होंने उसी श्लोक का बार-बार पाठ किया। बीस हजार वर्षों तक भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करते हुए भी वे अपने ज्ञान के पूर्ण परिपक्व न होने के कारण कोई विशिष्ट पद प्राप्त नहीं कर सके। वहाँ से देह त्यागने के बाद उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ और आगे चलकर, बार-बार पुनर्जन्मों के चक्रों में भटकते हुए, उत्तम देह धारण करते हुए, वे श्रावस्ती में एक धनी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। बुद्धि प्राप्त करने पर उन्होंने जेतवन (मठ) ग्रहण करते समय बुद्ध की शक्ति को देखा, उचित श्रद्धा से भर गए, भिक्षु बन गए और अपने प्रारंभिक कर्तव्यों का पालन करते हुए वन में निवास किया और गुरु के समक्ष उपस्थित हुए। उस विशेष अवसर पर, गुरु ने आनंदमयी वाणी इस प्रकार कही: "उच्च मनोभाव वाले अधिचित्तो ने अपने निकट ही पूज्य सारिपुत्त को 'उच्च विचार' (अधिचित्त) में लीन देखकर यह बात सुनी। जंगल में रहते हुए भी, जहाँ वे लंबे समय से मन की साधना कर रहे थे, उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक बार-बार उसी श्लोक का पाठ किया; इसी कारण उनका नाम एकुदानीय पड़ा। फिर एक दिन उन्होंने एकाग्रचित्तता प्राप्त की, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि का विकास किया और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"सुगत अत्थदस्सी के निधन (निब्बुत) के तुरंत बाद, मेरा पुनर्जन्म एक राक्षस (यक्ष) के गर्भ में हुआ; तब मुझे प्रसिद्धि भी प्राप्त हुई। वास्तव में यह मेरा दुर्भाग्य (दुल्लद्धं) था, चमकना (दुप्पभातं) और सक्रिय रहना (दुरुत्तितं) कठिन था; जब भी मेरी समृद्धि आई, चक्खुमा (आँखों का स्वामी) पूर्णतः परिनिब्बायी हो गया।"

मेरी मानसिक स्थिति (संकप्पा) जानकर सागर नामक शिष्य, मुझे ऊपर उठाने (उद्धरितुं) की इच्छा से मेरे पास आया। हे ज्ञानी! तुम दुखी (सोचति) क्यों हो? भयभीत (भायि) मत हो। धार्मिक (धम्मं) आचरण करो (चरा)। बुद्ध ने सभी के लिए सफलता (बीजसंपदा) का बीज (अनुपदिन्न) सौंपा है।

जो कोई भी स्वयंजागृत बुद्ध, जीवित (तिट्ठन्तं) मनुष्यों के नेता (लोक) के प्रति (अपने कर्तव्य) का पालन करना चाहे, उसे मृतक (निब्बुत) के अवशेष (धातु) को भी श्रद्धापूर्वक अर्पित करना चाहिए, भले ही वह सरसों के दाने (सासप) के आकार का ही क्यों न हो।

समान रूप से (समम्) पुण्य मन की भक्ति (चित्तपसाद) के अनुपात में बढ़ता है; इसलिए, एक ठोस मंदिर (थूप) बनाकर आपको विजेता के अवशेषों को श्रद्धापूर्वक भेंट (पूजेहि) अर्पित करनी चाहिए।

सागर का वचन (वाको) सुनकर मैंने बुद्ध का एक ठोस मंदिर (बुद्धथूप) बनवाया। पाँच वर्षों तक मैंने ऋषि के उस उत्कृष्ट ठोस मंदिर की देखभाल की। हे द्विपदिन्द, जगत के सबसे वरिष्ठ और मनुष्यों में श्रेष्ठ!

उस कर्म के फलस्वरूप मैंने समृद्धि प्राप्त की और अरहंत पद प्राप्त किया। सात सौ युगों (कप्पा) पूर्व, भूरिपञ्ञा (प्रचुर ज्ञान) नामक सात रत्नों से परिपूर्ण, महान शक्ति वाले चार विश्व-राजों ने मुझे अपने क्षुद्रता का नाश किया। बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे मुक्ति के आनंद में लीन थे, तभी एक दिन, जब उनसे (अज्जित्तो) यह अनुरोध किया गया: "मित्र! मुझे सत्य (धम्म) के आदरणीय कोषाध्यक्ष द्वारा सुनाओ, ताकि उनकी तत्परता (पटीभाण) की परीक्षा ली जा सके," तो उन्होंने यही श्लोक सुनाया, क्योंकि वे लंबे समय से इससे परिचित (परिचित) थे:—

68. उच्च विचारों वाले, असावधान, ज्ञान के मार्ग में सुशासित (मोन) ऋषि को कभी भी शीतलता से शांत (उपसन्त) और निरंतर सजग (भवन्ती) रहने वाले व्यक्ति का दुख (शोक) नहीं होता।

68,1. वहाँ, अधिचेतसो का अर्थ है: उच्च मन (अधिचित्त) धारण करने वाला; समस्त मनोन्दों से श्रेष्ठ और अरहंतत्व की प्राप्ति के मनोन्द से संपन्न; यही अर्थ है। अप्पमज्जतो का अर्थ है जो असावधान नहीं है; परिश्रम और निष्पाप कर्मों (धम्म) के निरंतर निर्वाह से संपन्न; यही कथन है। मुनिनो का अर्थ इस प्रकार है:— "यो मुनति उभोलोके, मुनि तेन पावुच्चति जो दोनों लोकों का मापन (मुनाति) करता है, इसी कारण वह ऋषि कहलाता है;" इस प्रकार दोनों लोकों के मापन द्वारा; वैकल्पिक रूप से, मोना को ज्ञान (ज्ञान) कहा जाता है; क्योंकि वह अरहंतत्व की सिद्धि के समान ज्ञान (पञ्ञा) से संपन्न है; दूसरे शब्दों में, दोष रहित (खीणासव) को ऋषि (मुनि) कहा जाता है; उस ऋषि (मुनिनो) का। मोना पथेसु सिक्खतो का अर्थ इस प्रकार है: अरहंतत्व के ज्ञान (ज्ञान) के समान ज्ञान (मोन) के मार्ग में

प्रशिक्षित, और ज्ञानोदय (बोधि) के विभाजन के सैंतीस घटनाओं (धम्म) में, या प्रशिक्षण के तीन पाठ्यक्रमों (सिक्खा) में प्रशिक्षित। यह भी कहा गया है कि उसने प्रारंभिक (पुब्बा) भाग (भाग) की प्रगति (पटिपदा) का मार्ग अपनाया है। वास्तव में, जिसका अनुशासनात्मक प्रशिक्षण (सिक्खा) सर्वांगीण रूप से पूर्ण हो चुका है, वह अरहंत है; अत: इस प्रकार से प्रशिक्षित होने से, उस ऋषि (मुनि) का अर्थ, जिसने इस अनुशासनात्मक प्रशिक्षण द्वारा ऋषि की अवस्था प्राप्त की थी; इस प्रकार, यहाँ अर्थ को इस प्रकार देखा जाना चाहिए। चूँकि यह भी इसी प्रकार है, अतः उच्च विचारों वाले ऋषि (मुनि) का, जो निम्न सही मार्गों और फलों (हेट्ठिममग्ग-फलचित्त) के मन से, जो चार आर्य सत्यों के उत्तम ज्ञान की उचित प्राप्ति (पटिपत्ति) में परिश्रमपूर्वक, सर्वोत्कृष्ट सही मार्ग (मग्ग) के ज्ञान से संपन्न होकर, लापरवाही न करने वाले हैं; अत: इस प्रकार, इन शब्दों का अर्थ पूर्णत: (युज्जति) होता है। दूसरे शब्दों में, मन की एकाग्रता (पधानहेतु) के कारणों को (अक्खात) इस प्रकार दिखाया गया है: “अप्पमज्जतो सिक्खतो, लापरवाही न करने के प्रशिक्षण से;” इस प्रकार, इसे देखा जाना चाहिए। अत: उच्च मन (अधिचेतसो) का अर्थ है लापरवाही न करने के कारण और प्रशिक्षण (सिक्खाना) के कारण।

68.2. सोका न भवन्ति तादिनो का अर्थ है: ऐसे दोष रहित ऋषि के भीतर (अभन्तरे) कोई चिंता नहीं होती जो सुखद चीजों से अलगाव (वियोग) आदि के कारण उत्पन्न हृदय-जलन (संतपा) का कारण बनती हो। दूसरे शब्दों में, ऐसे (तादि) गुणों (लक्खण) को प्राप्त कर चुके (असेक्खा) ऋषि को चिंता नहीं होती। उपसन्तस का अर्थ है: कामवासना (राग) आदि को निरंतर शांत करके शांत रहने वाले व्यक्ति का। सदा सतिमतो का अर्थ है: हर समय सचेतन रहने वाले व्यक्ति का; जागरूकता की प्रचुरता की प्राप्ति के लिए।

68.3. यहाँ फिर से, “अधिचित्तसो, उदात्त मन का;” इस प्रकार, इसके द्वारा उदात्त मन (अधिचित्त) का प्रशिक्षित अनुशासन (सिक्खा); “अप्पमज्जतो, (लापरवाह न होने का);” इस प्रकार, इसके द्वारा उदात्त नैतिक उपदेशों का प्रशिक्षित अनुशासन है: “मुनिनो नोमापथेसु सिक्खतो, उदात्त नैतिक उपदेशों का; “मुनिनो मोनपथेसु सिक्खतो, ज्ञान के मार्ग में प्रशिक्षित ऋषि का;” इस प्रकार, इनके द्वारा उदात्त ज्ञान (पञ्ञा) का प्रशिक्षित अनुशासन है। दूसरे शब्दों में, “मुनिनो (ऋषि का);” इस प्रकार, इसके द्वारा उदात्त ज्ञान (अधिपञ्ञा) का प्रशिक्षित अनुशासन है; “मोनपथेसु सिक्खतो (ज्ञान के मार्ग में प्रशिक्षित होने का);” इस प्रकार, प्रगति का उचित मार्ग (पटिपदा) निर्धारित होता है, जो उस दिव्य (लोकउत्तर) अनुशासित प्रशिक्षण का प्रारंभिक भाग (पुब्बभाग) है। “शोक न भवन्ति (चिंताएँ) उत्पन्न नहीं होतीं;” इस प्रकार आरंभ किए गए इस कथन से अनुशासित प्रशिक्षण को पूरा करने के लाभ प्रकट होते हैं; इसे इसी प्रकार समझा जाना चाहिए। यही श्लोक थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) की व्याख्या करता है।

थेरा एकुदानिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(69):चन्ना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (69) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
69. चन्ना
जब हमारे परम पूज्य बुद्ध जीवित थे, तब राजा सुद्धोदन के घर में उनका पुनर्जन्म हुआ। यह व्यक्ति चन्ना नामक एक दास था। भावी बुद्ध के समकालीन, उन्होंने भगवान (बुद्ध) में आस्था प्राप्त की जब वे अपने परिवार से मिलने लौटे। इसके बाद उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया। उनके प्रति स्नेह के कारण, 'हमारे बुद्ध, हमारा सिद्धांत' के प्रति अहंकारी अभिमान उत्पन्न हुआ, और वे इस लगाव को दूर नहीं कर सके, न ही एक नौसिखिया के रूप में अपने कर्तव्य का पालन कर सके। जब भगवान (बुद्ध) का देहांत हो गया, और चन्ना पर उच्चतर दंड लगाने का उनका आदेश पूरा किया गया, [1] तो चन्ना को पीड़ा हुई, उन्होंने अपने लगाव को त्याग दिया, और शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, अपने निर्वाण (मुक्ति) में आनंदित होकर, उन्होंने इस कथन (गाथा) में अपनी प्रसन्नता व्यक्त की:

[69] सुत्वना धम्मौ महतो महरासः॥
सब्बननुतान्ननवरेण देसिताṃ॥
मग्गाṃ पपज्जीअ अमतस्सा पत्तिया॥

सो योगक्खेमास्सा पथस्सा कोविदो' ति.॥ ॥

[69] मैंने उस महान व्यक्ति द्वारा सिखाए गए सत्य को सुना,
और उसके महान गुणों को महसूस किया,
जो उस परम ज्ञान से सर्वव्यापी रूप से ज्ञात थे। [2] मैंने अमृतमय वस्तुओं को प्राप्त करने का मार्ग
पाया। हे पूर्व-भगवान (बुद्ध) ने सत्यतः मुझे
आनंदमय सुरक्षा के मार्ग पर मार्गदर्शन किया।

[1] संवाद, ii. 171; विनय ग्रंथ, iii. 381-384.

[2] शाब्दिक रूप से, 'सर्वोच्च ज्ञान द्वारा जिसने सब कुछ समझ लिया है।'

1.7-9 [69] श्लोक पर टिप्पणी

चन्नाथेरा
सुत्वान धम्मं महातो महरसं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा चन्ना का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की भक्तिपूर्वक सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय किया और भगवान सिद्धार्थ के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्होंने भगवान सिद्धार्थ को एक वृक्ष की जड़ के पास जाते देखा। वे श्रद्धा से भर गए और एक कोमल पत्ती को फैलाकर उन्हें अर्पित किया। उन्होंने चारों ओर फूल भी बिखेर दिए और उन्हें भी श्रद्धापूर्वक अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ, और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में भटकते रहे, परन्तु उत्तम अवस्थाओं (सुगति) में, भगवान बुद्ध के समय में महान राजा सुद्धोदन के राजमहल में एक दासी के गर्भ से उनका पुनर्जन्म हुआ। उनकी जघन्य शंख थी; उनका जन्म बोधिसत्व के साथ ही हुआ (सहजता)। गुरु के सगे-संबंधियों के समागम में उचित श्रद्धा प्राप्त करने के बाद, उन्होंने भिक्षु का पद ग्रहण किया और भगवान बुद्ध के प्रति अपने प्रेम के कारण उन्होंने "हमारे बुद्ध, हमारे बुद्ध" कहकर अहंकार का भाव उत्पन्न किया और भिक्षु के कर्तव्य का पालन नहीं किया। जब गुरु बुद्ध पूर्णतः निर्वाण (परिनिभूत) हो गए, तो गुरु द्वारा विधिवत रूप से जारी किए गए आणत्त के अनुसार 'सर्वोच्च दंड' (ब्रह्मदण्ड) से भयभीत होकर वे पश्चाताप से ग्रस्त हो गए, उन्होंने अपना प्रेम त्याग दिया और जैसे ही उनमें आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित होने लगी, उन्होंने अर्हंतत्व प्राप्त कर लिया, लेकिन कुछ ही समय में। इसलिए, अपदान में ऐसा कहा गया है।

मैंने भगवान सुद्धत्थ को पत्तों का आवरण अर्पित किया; चारों ओर फूल बिखेरते हुए (उपहारंच) मैंने कुसुम भी बिखेरे। मैं अत्यंत उत्तम दिव्य महल में आनंदित हूँ; बहुमूल्य फूल मेरे पलंग पर बरसते हैं। मैं फूलों से सुशोभित इस बहुरंगी पलंग को साझा करता हूँ; सदा मेरे पलंग पर फूलों की वर्षा होती रहती है। आज से चौरानवे युग (कप्पा) पहले मैंने पत्तों का आवरण अर्पित किया था। मुझे किसी भी बुरे जन्म का स्मरण नहीं है; यह आवरण (आवेदन) का फल है। मनुष्य के शासक, तिनसंथारका नामक ये सात विश्वराज आज से पाँच युग (कप्पा) पहले उत्पन्न हुए थे। मेरे पाप जलकर भस्म हो गए थे। ... बुद्ध के उपदेशों का पालन हो चुका था।

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी आनंदमय अभिव्यक्ति के रूप में एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें उन्होंने मुक्ति के सुख से पूर्णतः संतुष्ट होकर अपने उत्साह की गति को व्यक्त किया।

69. "सर्वज्ञ ज्ञान से परिपूर्ण, महान से अत्यंत आनंदमय सत्य (धम्म) सुनकर, मैंने अमरत्व (अमता) की प्राप्ति के लिए सही मार्ग (मार्ग) पर चलना शुरू किया; वे बंधनों (योगक्खेम) से मुक्ति दिलाने वाले मार्ग में निपुण हैं। वहाँ, कान से सुनकर, ध्यानपूर्वक और कान के द्वार के अनुरूप अनुभव करके। धम्म का अर्थ है चार आर्य सत्यों का उपदेश (धम्म)। महातो का अर्थ है भगवान का। वास्तव में, भगवान को "महा (महान)" कहा जाता है क्योंकि वे नैतिक उपदेशों आदि जैसे महान, सर्वोच्च (उलारा) गुणों से संपन्न हैं, और साथ ही दिव्य जगत के साथ-साथ संसार द्वारा भी विशिष्ट रूप से स्तुति के योग्य हैं। महासमणो का अर्थ इस प्रकार है: उनके लिए जो भी पदनाम (समञ्ञा) उत्पन्न हुआ हो, यह उसी का एक शब्द है। अपादान कारक (निस्सक्का) "महातोधम्मं सुत्वान, महान से शिक्षा (धम्म) सुनकर।" महारसं का अर्थ है: मुक्ति का स्वाद प्रदान करने के कारण उच्च स्वाद। सब्बाञ्ञुताञावरेण देसितां का अर्थ इस प्रकार है:— वह सब कुछ जानता है; अतः वह सब्बाञ्ञु, सर्वज्ञ है; उस अवस्था को सब्बाञ्ञुता (सर्वज्ञ होने की अवस्था) कहते हैं। ज्ञान स्वयं उत्कृष्ट (वर) है; दूसरे शब्दों में: ज्ञान के प्रकारों में उत्कृष्ट (ज्ञानसु): अतः, ज्ञानवरं (उत्कृष्ट ज्ञान): उसे सर्वज्ञ होने का उत्कृष्ट ज्ञान प्राप्त है; अतः, सब्बाञ्ञुताञाण वरो (वह जिसे सर्वज्ञता का उत्कृष्ट ज्ञान प्राप्त है); भगवान। सर्वज्ञ ज्ञान के रूप में गिने जाने वाले उस सर्वोत्कृष्ट ज्ञान द्वारा या कर्म कारक (करण) बनकर, सत्य (धम्म) को सुनकर और इंगित करके। अतः, यही व्याख्या है। यहाँ जो कुछ भी कहा जाए, उसे इतिवुत्तक

(परमत्थदी-पानी) की टीका में वर्णित तरीके से समझा जाना चाहिए। मग्गां का अर्थ है अष्टांगिक मार्ग (अरिया मग्गा)। पापज्जिं का अर्थ है मैंने प्रवेश किया। अमतस्स पट्टिया का अर्थ है: मैंने उस मार्ग पर प्रवेश किया जो निर्वाण प्राप्ति का मार्ग (उपाय) बन गया था; अतः, यही व्याख्या है। सो का अर्थ है: वह भगवान। योगक्खेमस्सपथस्स कोविदो का अर्थ इस प्रकार है: निर्वाण का जो भी मार्ग है जहाँ व्यक्ति चार बंधनों (लालसा, अस्तित्व, भ्रामक विचार और अज्ञान) से ग्रस्त नहीं होता, वहाँ वह कुशल और प्रभावी है। वास्तव में, यहाँ यही अर्थ है: चार आर्य सत्यों की शिक्षा सुनकर, मैंने अमरत्व प्राप्ति के मार्ग पर प्रवेश किया; प्रवेश का मार्ग मेरे द्वारा बनाया गया था; वह भगवान एक व्यक्ति तो हर तरह से बंधनों से मुक्ति (योग) के मार्ग में निपुण था; वह या तो दूसरों की निरंतरता (परसंतान) में या दूसरों के मन में निपुण था; जिसकी व्यवस्था (संविधान) के कारण ही मैं भी सही मार्ग (मार्ग) पर चला। यही श्लोक थेरा द्वारा अपनी अज्ञा (प्राप्ति) की व्याख्या का सार था।

थेरा चन्ना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(70):पुन्ना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (70) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
70. पुन्ण
बुद्ध युग में, सुनापरंत देश में, सुप्पारका बंदरगाह पर, [1] एक कुलीन परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम पुन्ण रखा गया। परिपक्व होने पर, वे माल के एक बड़े कारवां के साथ सावत्थी गए, जहाँ [71] भगवान (बुद्ध) भी मौजूद थे। वे स्थानीय अनुयायियों के साथ विहार (मठ) में भगवान (बुद्ध) का प्रवचन सुनने गए। वहाँ उन्होंने विश्वास किया और संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण किया)। कुछ समय तक उन्होंने अपने तर्क-वितर्क कौशल से शिक्षकों और गुरुओं का अनुग्रह प्राप्त किया। फिर एक दिन वे भगवान (बुद्ध) के पास गए और उनसे एक पाठ मांगा, ताकि वे दो-दो प्रस्ताव सुनकर, उसके बाद सुनापरंत में रहने चले जाएं। उन्हें भगवान (बुद्ध) ने एक 'सिंह गर्जना' के समान उपदेश दिया, अर्थात्: 'अब, पुन्ण, आँख से ज्ञात वस्तुएँ हैं, इत्यादि।' [2] इसलिए पुन्ण प्रस्थान कर गया, और एकाग्रता और अंतर्दृष्टि का अध्ययन करके उच्च ज्ञान के तीन रूपों को प्राप्त किया।

जब उन्होंने अरहंत पद (ज्ञानोदय) प्राप्त किया, तो उन्होंने कई लोगों को धर्म की ओर आकर्षित किया, जिनमें 500 गृहस्थ भिक्षु और उतनी ही गृहस्थ ननें शामिल थीं।

और जब वे अंतिम मृत्यु के निकट थे, तब उन्होंने इस श्लोक में अन्ना (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[70] सिलमेव [11] इधा अग्गाṃ पन्नवा पण उत्तमो॥
मनुस्सेसु च देवे सु सिलापन्ननातो जयं' ति.॥ ॥

[70] यहाँ केवल सद्गुण ही सर्वोच्च है; परन्तु ज्ञानी पुरुष ही सर्वोच्च है।
जिसके पास ज्ञान और सद्गुण है,
वही मनुष्यों और देवताओं में विजयी है। [3]

[1] तुलना करें महावंश (गीगर का अनुवाद), 54, एन 8.

[2] यह पुन्ण के उपदेश पर सुत्त में बताया गया है (मज्झ., iii. 267 ff.; सांग्., iv. 60; दिव्यावदान, 37-39 भी देखें)। पाठ में 'जोड़ी-वार' यमक है। 'उपदेश' के संदर्भ को देखते हुए, यमकों (अभिधम्म-पिटक) की पूरी पुस्तक में प्रयुक्त विधि की तुलना में, इसका अर्थ है कि पहले मुख्य विचार प्रस्तुत किया जाता है, और फिर उसका विलोम या कोई अन्य तार्किक रूप से विपरीत रूप प्रस्तुत किया जाता है।

[3] यह शीलवा की कविता (CCXLI., श्लोक 619) में एक श्लोक है। इस श्लोक में भाषा और विचारों में अधिक सरलता है, मानो किसी ऐसे व्यक्ति की हो जिसने अपना जीवन कठोर ग्रामीण श्रोताओं को नैतिकता की सरल शिक्षा देने में व्यतीत किया हो, जैसा कि अनुमान लगाया जा सकता है कि वह सुनापरंत में ऐसे लोगों से मिलता था। भगवान (बुद्ध) ने उसे उनके हाथों कठोर व्यवहार की अपेक्षा करने के लिए प्रेरित किया (मज्ज., loc. cit.)। ऊपर की लय लगभग पाली के समान है: Sīlam eva idha aggan, paññavā pana uttamo, etc.

1.7-10 [70] पुन्णत्थेरा के श्लोक पर टीका
शिलामेव से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पुन्ण का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले अच्छे कर्मों का संचय किया और आज से 91 युग (कप्पा) पहले एक ऐसे संसार में ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया जहाँ कोई बुद्ध नहीं थे (बुद्धसुञ्ञ)। वयस्क होने पर उन्होंने सभी ब्राह्मण विद्याओं में सिद्धि प्राप्त की, इंद्रिय सुखों में हानि देखी, गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संसार का त्याग कर तपस्वी बन गए, हिमवंत क्षेत्र में पत्तों की कुटिया बनाई और वहाँ निवास करने लगे। जिस स्थान पर वे रह रहे थे, उससे कुछ ही दूरी पर एक पर्वतीय ढलान पर एक मौन बुद्ध रोगग्रस्त हो गए और पूर्णतः निर्वाण प्राप्त कर गए; उनके परिनिर्वाण के समय, एक तीव्र प्रकाश प्रकट हुआ। उसे देखकर वे इधर-उधर छानबीन करने लगे और मन ही मन कहने लगे, "यह प्रकाश वास्तव में कैसे प्रकट हुआ?" तभी उन्होंने पर्वत की ढलान पर परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके आत्म-जागृत मौन बुद्ध को देखा, जिन्होंने सुगंधित लकड़ियाँ एकत्रित कीं, उनके मृत शरीर का दाह संस्कार किया और राख पर सुगंधित जल छिड़का। वहाँ आकाश में एक युवा देवता खड़े होकर बोले: "हे भले मनुष्य! शाबाश, शाबाश; आपने श्रेष्ठ अस्तित्व की प्राप्ति के लिए बहुत पुण्य कर्म किया है और उसी का फल (पसवंता) दिया है; इसी कारण आप श्रेष्ठ जन्मों (सुगति) में ही जन्म लेंगे; आपका नाम भी "पुण्ण" होगा।" उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सुनापरना जिले के सुप्पारक बंदरगाह (पट्टाना) में एक धनी गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम पुण्ण था। वयस्क होने पर, उन्होंने एक व्यापारी का वेश धारण किया और एक बड़े कारवां (सत्था) के साथ सावत्थी गए। उस समय भी भगवान बुद्ध सावत्थी में ही निवास कर रहे थे। फिर, वे आगे बढ़े। सावत्थी के नागरिकों सहित भक्तों के साथ मठ में जाकर, उन्होंने गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और अपने शिक्षकों और गुरुओं का दिल जीतकर (आराधेन्तो) अपना जीवन व्यतीत किया, उन्हें सौंपे गए कर्तव्यों का उचित रूप से पालन किया। एक दिन वे गुरु के पास आए और बोले: "आदरणीय गुरुजी! मेरे लिए अच्छा होगा; भगवान मुझे संक्षिप्त उपदेश दें, जिसे सुनकर मैं सुनापरंत जिले में निवास करूंगा।" भगवान ने उन्हें ऐसा उपदेश दिया जो इस प्रकार शुरू होता है: "हे पुण्ण! "हाँ, वास्तव में, भौतिक रूप हैं, जिन्हें आँखों से पहचाना जा सकता है," यह सुनकर वह शेर की दहाड़ की तरह दहाड़ा और उसे छोड़ दिया। उसने भगवान बुद्ध को प्रणाम किया, सुनापरंत जिले में गया, और सुप्पारका बंदरगाह में रहते हुए,उन्होंने स्वयं को शांति (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में लीन कर लिया और तीन प्रकार के महाविज्ञान (वुज्जा) की कल्पना की। अतः अपदान में कहा गया है:—

शिखर की ढलान के आधार पर,

पहाड़ी के अंदर एक स्व-निवासी रहता था।

अजेय मौन बुद्ध बनाया; कि

बुद्ध एक बीमारी से पीड़ित हो गए।

वहाँ एक चीख सुनाई दी (पनाडा)

मेरे आस-पास के सभी समयों में

आश्रम। जब मौन बुद्ध

निर्वाण को प्राप्त हुआ, वहाँ उत्पन्न हुआ

एक चमकता हुआ प्रकाश (आलोक)।

घने जंगल में हर जगह भालू (अच्छा)

भेड़िये (कोका), लकड़बग्घा (ताराचका), द

बालों वाला (वळा) अयाल वाला शेर (केसरी) सभी

वे हर समय दहाड़ते रहते थे।

खतरे के उस अपशगुन को देखकर

(उप्पाता), मैं पहाड़ पर गया

ढलान, जहाँ मैंने आत्मजागृत व्यक्ति को देखा

मौन बुद्ध, अजेय, जो

निर्वाण प्राप्त कर लिया था।

दिवंगत अजेय व्यक्ति का रूप-रंग कुछ इस प्रकार था:

संप्रभु साल का पेड़ पूरी तरह से भरा हुआ है

फूल, उगते सूरज के समान

(सतरंसी), ज्वाला-मुक्त के समान

अंगारे।

पूरी मात्रा में शुष्क सामग्री एकत्र करने के बाद-

मैंने घास और लकड़ियों से चिता बनाई

वहाँ। अच्छी तरह से अंतिम संस्कार की चिता बनाकर,

मैंने शव का अंतिम संस्कार कर दिया।

शव का अंतिम संस्कार करने के बाद, मैंने उस पर छिड़काव किया।

मीठी सुगंध वाला पानी, कुआँ।

दिव्य प्राणी (यक्ष) वहाँ खड़ा था।

आकाश ने हमेशा इस नाम पर अपना अधिकार जमाए रखा।

स्वयं निर्मित महान व्यक्ति के प्रति जो भी कर्तव्य हो

ऋषि की पूर्ति आपने की थी, आपने।

हे ऋषि! हमेशा पहचाने जाने चाहिए

पुण्णक का नाम।

उस शरीर से विमुख होकर,

मैं दिव्य लोक में गया।

ईश्वर द्वारा निर्मित मीठी सुगंध की वर्षा हुई

आकाश से।

वहाँ भी मेरा नाम पुण्णक था।

चाहे वह दिव्य बन गया हो या मनुष्य,

मेरी इच्छाएं पूरी हो गईं।

यह मेरा आखिरी जन्म है; आखिरी पुनर्जन्म हो चुका है।

ऐसा हुआ। यहाँ भी मेरा नाम पुण्णक है;

नाम स्वयं ही प्रकट हो जाता है।

आत्मजागृत बुद्ध को प्राप्त करने के बाद,

साकियों में श्रेष्ठ माने जाने वाले गौतम

मुझे मुंहासों की कोई समस्या नहीं है क्योंकि मैंने सभी उपचार करवा लिए हैं।

कैंकर के बारे में संपूर्ण ज्ञान।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने वह काम कर दिया है,

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह उस निविदा का फलदायी परिणाम है।

शरीर के प्रति कर्तव्य (तनुकिक्का)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने कई पुरुषों (मनुष्यों) को विशेष रूप से अपने शासन (शासन) में धार्मिक बनाया। फलस्वरूप, पाँच सौ पुरुषों और पाँच सौ महिलाओं ने स्वयं को पुरुष और महिला भक्त के रूप में स्वीकार किया। वहाँ उन्होंने चंदनमाला नामक एक सुगंधित कक्ष (गंधकुटी) बनवाया, जो लाल चंदन की लकड़ी से निर्मित था, और पुष्प दूत (पुप्पदूत) के माध्यम से भगवान को इस प्रकार आमंत्रित किया: "हे गुरु, पाँच सौ भिक्षुओं के साथ इस कक्ष (माला) को स्वीकार करें।" भगवान ने अपनी जादुई शक्तियों से उतने ही भिक्षुओं के साथ वहाँ जाकर चंदन के कक्ष को स्वीकार किया और सूर्योदय से पहले ही लौट आए। इसके बाद, उनके पूर्ण निधन (परिनिब्बान) के समय उन्होंने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए एक श्लोक का उच्चारण किया।

70. "यहाँ, नैतिक उपदेश भी हैं,

सबसे आगे (अग्गा); का स्वामी

हालांकि, ज्ञान सबसे महत्वपूर्ण है।

उत्कृष्ट। मनुष्यों और

दिव्य प्राणियों की बदौलत ही विजय प्राप्त होती है।

नैतिक उपदेशों और स्पष्ट ज्ञान के लिए

(पञ्ञाण).

वहाँ, शीलम् का अर्थ इस प्रकार है: — नैतिकता में दृढ़ रहने से (शीला) नैतिक उपदेश (शीला) प्राप्त होता है; स्थापना की भावना और एकाग्रता की भावना (समाधान) से; यही अर्थ है। वास्तव में, नैतिक उपदेश (शीला) सभी गुणों (गुण) का आधार (पतिठा) है; इसी कारण बुद्ध ने कहा: — "शीले पतिठाया नरो सपञ्ञो (ज्ञान से सुसज्जित मनुष्य नैतिक उपदेश (शीला) पर आधारित होता है)।" वे समाधाति को भी जोड़ते हैं; वे उसे शरीर और वाणी से मुक्त (अविप्पकिण्ण) बनाते हैं; यही अर्थ है। अग्गम का अर्थ है: यह वही शील (नैतिक उपदेश) सभी गुणों में सर्वोपरि है, क्योंकि यह मूल (मूल) है और सर्वोपरि (पामुख) है।

तदनुसार (बुद्ध) ने कहा: "तस्मातिहा त्वं भिक्खु (भिक्षु) आदिमेव विसोधेहि कुसलेसु धम्मेसु। को कादि कुसलानं धम्मनं सीलां च सुविसुद्धन" ति, "पातिमोक्खन्ति मुखं एतं पामुखमेतं" ति आदि। "हे भिक्षु! अतः, यहाँ, आपको केवल अच्छे कर्मों के आरंभ को शुद्ध करना चाहिए। अच्छे कर्मों का आरंभ क्या है? यह सीला है, जो पूर्णतः शुद्ध है।" पातिमोक्ख, भिक्षुओं के नैतिक नियमों की संहिता (विनय पिटक में निहित अनुशासनात्मक नियमों का एक संक्षिप्त संग्रह); इस प्रकार, यह मुख (मुख) है, यह सर्वोपरि (पामुख) है, और साथ ही आरंभ (आदि) भी है। इधा का अर्थ है एक अविभाज्य व्यवहार (निपात)। पञ्ञवा का अर्थ है: ज्ञान से परिपूर्ण (ज्ञान)। उत्तमो का अर्थ है: वह सर्वश्रेष्ठ, उत्कृष्ट है; वह व्यक्तिगत (पुग्गला) निर्णय (अधिष्ठान) द्वारा भी सर्वोत्तम ज्ञान (पञ्ञा) की स्थिति प्रदर्शित करता है। वास्तव में, ज्ञान (पञ्ञा) अच्छे कर्मों से श्रेष्ठ है। अब वह परिस्थितिजन्य कारण (कारण) से प्राप्त नैतिकता (सीला) और ज्ञान (पञ्ञा) की सर्वोपरि और श्रेष्ठ अवस्था को इस प्रकार दर्शाता है: "मनुस्सेषु च देवेषु सीलापञ्ञाणतो जयं", जिसका अर्थ है: नैतिक उपदेश और स्पष्ट ज्ञान के कारण विपरीत पर विजय और कामिक विकृति (कामकिलेसा) पर विजय प्राप्त होती है; यही अर्थ है।

थेरा पुन्ण के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

सातवें अध्याय की टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(71):वच्चपाल

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (71) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
भाग 8
71. वच्छपाला
उनका जन्म बुद्ध युग में राजगृह में एक धनी ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में हुआ था और उनका नाम वच्छपाल (बछड़ा चराने वाला) रखा गया था। उन्होंने देखा कि जब भगवान (बुद्ध) बिम्बिसार से मिले, तो उन्होंने उरुवेला-कस्सपा को भगवान (बुद्ध) के प्रति समर्पित कर दिया, [1] और विश्वास करते हुए, भिक्षु संघ में प्रवेश किया। एक सप्ताह में ही उन्होंने इतनी अंतर्दृष्टि विकसित कर ली कि उन्हें छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्तियां) प्राप्त हो गईं।

अरहंत (प्रबुद्ध) के रूप में उन्होंने निर्वाण की प्राप्ति पर अपार प्रसन्नता व्यक्त करते हुए इस श्लोक में कहा:

[71] सुसुखमनिपुणत्तदस्सीना मतिकुसलेना निवातवुत्तिना॥
संसेविता वुद्धसिलिना निब्बाना न हि तेन दुल्लभन' ती॥॥

[71] क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो सत्य को पहचान सकता है,
चाहे वह कितना भी सूक्ष्म और परिष्कृत क्यों न हो?
जो आध्यात्मिक विकास को मापने में कुशल होते हुए
भी विनम्र और कोमल मन का हो,
जो जागृत लोगों के नियमों के अनुसार अपना जीवन ढालता हो? [2] उसके लिए निर्वाण पाना कठिन नहीं है।

और यह भिक्षु द्वारा अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा थी।

[1] देखें सीसीएक्स.; विनय ग्रंथ, i. 136 ff.; बुद्ध. जन्म कथाएँ, पृ. 114 ff.

[2] संसेवित-बुद्ध-सीलिना। 'आध्यात्मिक विकास' टीका से है। 'सत्य' या सच्चा अर्थ = अत्था।

1.8 अध्याय आठ

1.8-1[71] वाचापालथेरा के छंद पर टिप्पणी
सुसुखुमानिपनत्तदस्सिना से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वच्छपाला का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और बार-बार जन्म लेकर देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया, और आज से इक्यावन युग (कप्पा) पहले एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। ब्राह्मण विद्या के समस्त ज्ञान में सिद्धिप्राप्त होकर, वे यज्ञ की अग्नि की सेवा में लगे रहे और एक दिन बड़े ताम्रपाती पात्र में पायासा लेकर दान-दक्खिन्य के योग्य व्यक्ति की खोज में निकले। आकाश में विपस्सी बुद्ध को विचरण करते देख वे अत्यंत विचलित हो गए, उन्हें प्रणाम किया और दान देने की इच्छा प्रकट की। बुद्ध ने करुणावश उनका दान स्वीकार कर लिया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप वे जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते रहे, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे राजगृह में एक धनी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम वच्छेपाला था। बिम्बिसार के समागम में, थेरा उरुवेला कस्सपा द्वारा अपने गुरु के प्रति पूर्ण आज्ञाकारिता का पालन करते हुए जादुई शक्ति (इद्धि) द्वारा चमत्कार का प्रदर्शन देखने के बाद, उन्होंने उचित रूप से धार्मिक आस्थाएँ ग्रहण कीं, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अपने भिक्षुत्व के सात दिनों के भीतर ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा/आध्यात्मिक शक्तियों) से परिपूर्ण (अरहंत) हो गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"स्वर्ण रंग के आत्मजागृत बुद्ध"

बत्तीस उत्कृष्ट चरित्रों से संपन्न-

विशेषताएँ जंगल से ही निकलीं।

भिक्षुओं के पुरोहित वर्ग से घिरा हुआ।

मैंने दूध-चावल को लगातार बढ़ाते हुए

(vaḍḍhetvā pāyāsaṃ) तांबे के एक बड़े कटोरे में,

अपनी पवित्र बलि देने की इच्छा रखते हुए

मैंने दान के भोजन के लिए भेंट लाई।

(बाली)। धन्य पुरुष, सबसे बड़े

उस समय दुनिया में सबसे ताकतवर व्यक्ति वही था,

मठ के रास्ते पर अच्छी तरह से स्थापित

हवादार वातावरण के आकाश में (अनिला-

याना)।

उस अद्भुत दृश्य को देखकर, विचित्र

और रोंगटे खड़े हो गए, मैंने (अपना) एक तरफ रख दिया।

मैंने तांबे के पात्र में अपना सम्मान व्यक्त किया।

विपस्सी (बुद्ध) को।

हे सर्वज्ञ बुद्ध! आप ही हैं

दिव्य और मानवीय दोनों के स्वर्गीय स्वामी

प्राणियों; मुझ पर दया करके

हे महान ऋषि! कृपया मेरी भेंट स्वीकार कीजिए।

परम पूज्य, सर्वज्ञानी नेता

विश्व के महान ऋषि, गुरु

दुनिया में मेरे इरादे को जानने के बाद-

tion, स्वीकार किया (मेरी पेशकश)।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब, मैंने तब दान देने की पेशकश की।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह दूध-चावल की सफल उपज है।

आज से इकतालीस युगों बाद, एक शाही

योद्धा (खट्टिया), जिसका नाम बुद्ध था, एक था

महान शक्ति से संपन्न विश्व-राजा

सात रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने स्वयं ही सहजता से निर्वाण प्राप्त करने की अवस्था को प्रकट करने के लिए इस श्लोक का उच्चारण किया।

71. वास्तव में निर्वाण प्राप्त करना कठिन नहीं है।

उसे लाभ होगा, जो पूर्व को देखता है-

अत्यंत नाजुक और सूक्ष्म अर्थ,

जो विचार में चतुर (मती) है और

आचरण में आज्ञाकारी (निवातवुत्ति)।"

वहाँ, सुसुखुमानिपुनत्थादस्सिना का अर्थ इस प्रकार है:— वह सत्य (सच्च), आश्रित उत्पत्ति (पटिच्चसमुप्पाद) आदि जैसे उपदेशों के अर्थों को समझने के बाद देखता है, जो सूक्ष्म हैं, क्योंकि वे देखने में अत्यंत कठिन प्रतीत होते हैं, और सूक्ष्म हैं, क्योंकि वे अनित्य (अनिच्च) अवस्था के प्रति सौम्य (सन्हा) प्रतीत होते हैं, इत्यादि; इस प्रकार, वह अत्यंत सूक्ष्म और नाज़ुक अर्थों का द्रष्टा है; उसके द्वारा। मतिकुसलेना का अर्थ है; विचार और बुद्धि से चतुर और निपुण व्यक्ति द्वारा; सत्य (धम्म) की खोज जैसे ज्ञान के तत्व के ज्ञान के माध्यम से उत्पन्न (उप्पादने) में चतुर व्यक्ति द्वारा, इस प्रकार:— "इस प्रकार विद्यमान (पवत्तमान) ज्ञान बढ़ता है; इस प्रकार, यह नहीं बढ़ता।" निवातवुत्तिना का अर्थ है: जो विनम्रता का अभ्यास करता हो और ब्रह्मचारी जीवन के साथी नेताओं के बीच विनम्रतापूर्वक चलता हो; जो वरिष्ठों और कनिष्ठों के प्रति उचित व्यवहार करता हो। संसेवितवुद्धसीलिना का अर्थ है आदरणीय नैतिक उपदेश जिसका पालन किया जाता है और जिसमें लिप्त रहा जाता है। अतः: संसेवितवुद्धसीलं (वह नैतिक उपदेश जो आदरणीय, नियमित और पालन-पोषण योग्य है; जो भी इसका अस्तित्व रखता है; उस व्यक्ति द्वारा जिसने आदरणीय नैतिक उपदेश का नियमित पालन और अनुपालन किया। दूसरे शब्दों में, आदरणीय नैतिक उपदेशों का अनुपालन और सेवा इस व्यक्ति द्वारा की गई है; अतः, संसेवितवुद्धसीली (वह जिसने आदरणीय नैतिक उपदेशों की सेवा की है) उसके द्वारा। व्याकरणिक शब्द 'हि' का अर्थ है कारण (हेतु)। चूंकि जो भी (वुत्ति) विनम्र (निवात) होता है, आदरणीय नैतिक उपदेशों की अच्छी सेवा करता है, विचार में चतुर होता है, और अत्यंत सूक्ष्म और सूक्ष्म अर्थों का द्रष्टा होता है; इसलिए, उसके लिए निर्वाण प्राप्त करना कठिन नहीं है (दुल्लब्बा); यही अर्थ है। वास्तव में, विनम्र (निवारवुत्तिता) होने की स्थिति से और नैतिक उपदेशों की अच्छी सेवा करने के साधनों से भी निर्वाण प्राप्त होता है। नैतिक ज्ञान के पूजनीय व्यक्तियों और बुद्धिमान लोगों ने इसे सलाह और मार्गदर्शन के लिए उपयुक्त समझा (मञ्ञति); स्वयं भी उनकी सलाह का पालन करते हुए, और अपने चिंतनशील स्वभाव (मति) तथा अत्यंत सूक्ष्म और सूक्ष्म अर्थों को समझने की क्षमता के कारण, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना)

विकसित करने का कर्म करके, उन्होंने शीघ्र ही निर्वाण प्राप्त कर लिया। यही श्लोक थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने वाला श्लोक बन गया।

थेरा वच्छपाला के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(72):अतुमा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (72) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
72. आतुमा
अब उनका पुनर्जन्म बुद्ध युग में सावत्थी में एक पार्षद के पुत्र के रूप में हुआ और उनका नाम आतुमा रखा गया। जब वे किशोर थे, उनकी माता ने उनके लिए एक पत्नी खोजने का प्रस्ताव रखा और परिवार से परामर्श किया। लेकिन अनुकूल परिस्थितियों से प्रेरित होकर उन्होंने कहा: 'गृहस्थी के कामों से मेरा क्या लेना-देना? अब मैं संसार छोड़कर (भिक्षुत्व के लिए) जाऊंगा।' यद्यपि वे भिक्षुओं के पास गए और भिक्षुत्व में दीक्षित हुए, फिर भी उनकी माता ने उनकी इस पवित्र इच्छा को भ्रष्ट करने का प्रयास किया। तब उन्होंने इस श्लोक में अपनी इच्छा व्यक्त की:

[72] यथा कादिरो सुसु वदहताग्गो॥
दुनिक्खमो होति पसाखाजातो॥
एवं अहं भार्यायनिताय॥
अनुमाण्णा माऽ पब्बजीतोम्ही दानी' ती.॥ ॥

[72] जैसे नया बांस का तना,
अपनी पूरी गांठदार ऊंचाई तक बढ़ने पर भी, मुश्किल से ही निकल पाता है,
वैसे ही मैं भी इन सभी दुल्हनों को घर लाने के कारण -
मुझे अपनी अनुमति दीजिए! मैं अभी (भिक्षुत्व में) चला गया हूँ।

और जब वह अपनी माँ से बात कर रहा था, तब उसमें अंतर्दृष्टि विकसित हुई, और विकारों को त्यागकर, [1] वह एक अरहंत (प्रबुद्ध) बन गया।

[1] किलेसा। यह उतना ही सामान्य शब्द है, विशेष रूप से टीकाओं में, जितना कि ईसाई लेखन में 'पाप' शब्द है। देखें बुड. साइ., पृ. 327, एन.

1.8-2[72] आतुमत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
यथा कलिरो सुसु वड्ढितग्गो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा आतुमा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करके, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए और आज से 91 युग (कप्पा) पहले एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। ज्ञान की आयु प्राप्त करने पर उन्होंने भगवान विपस्सी को अंतरावती मार्ग पर चलते हुए देखा, वे श्रद्धावान हो गए और उन्हें सुगंधित जल और सुगंधित पाउडर का आदरपूर्वक अर्पण किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप उनका पुनर्जन्म हुआ और बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते हुए, उन्होंने उत्तम जन्म प्राप्त किए और भगवान कस्सपा के मार्गदर्शन में भिक्षु बन गए तथा भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया। उनके ज्ञान की अवस्था सर्वांगीण न होने के कारण वे कोई विशिष्ट पद प्राप्त नहीं कर सके। इसके बाद, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका पुनर्जन्म एक धनाढ्य के पुत्र के रूप में सावत्थी में हुआ। उनका नाम आतुमा था। जब वे वयस्क हुए, तो उनकी माता ने अपने रिश्तेदारों से परामर्श किया और कहा, “अपने पुत्र के लिए एक पत्नी लाएँ।” उन्होंने इस विषय पर विचार किया और कारण (हेतु) की समृद्धि (संपत्ति) से प्रेरित होकर मन ही मन कहा, “विवाहित गृहस्थ जीवन से मुझे क्या लाभ? अभी तो मैं भिक्षु बन जाऊँगा,” और भिक्षुओं के समक्ष जाकर भिक्षु बन गए। उनके भिक्षु

बनने के बाद भी, माता ने उन्हें भिक्षु संघ छोड़ने के लिए प्रेरित करने की इच्छा से अनेक प्रकार से प्रलोभन दिया। उन्होंने उनकी इच्छा के आगे घुटने नहीं टेके, बल्कि अपने अंतर्मन की इच्छा को प्रकट करते हुए एक श्लोक का उच्चारण किया।

72. ठीक उसी प्रकार जैसे छोटा (सुसु) अंकुर

(कल्लीरा) जिसे विकसित किया गया है

ऊपर की शाखाओं तक पहुंचना मुश्किल हो जाता है

इससे बाहर निकलने के लिए लेकिन लाता है

(जातो) कहीं अधिक शाखाएँ (पसाखा),

उसी प्रकार, मैं भी (बन जाऊंगा)

पत्नी को लाए जाने से;

मुझे इसके बारे में (स्वयं ही) पता चल गया।

मैं अब भिक्षु बन चुका हूँ।

वहाँ, kaḷīro का अर्थ अंकुर (aṅkura) है; लेकिन यहाँ, इसका अर्थ बांस का अंकुर (vaṃsaṅkura) है। Susu का अर्थ युवा (taruno) है। Vaḍḍhitaggo का अर्थ शाखाओं से भरा हुआ (pavaḍhitasākho) है। दूसरे शब्दों में, susuvaḍḍhitaggo का अर्थ है शाखाओं से अच्छी तरह विकसित, पत्तियों और शाखाओं से भरा हुआ। Dunnikkhamo का अर्थ है: कोई व्यक्ति बांस की झाड़ी से बाहर नहीं निकल पाएगा। Pasākhajāto विभिन्न शाखाओं के साथ एक हो गया है; शाखाओं के प्रत्येक जोड़ पर भी एक छोटी शाखा (anusākha) निकली है। एवं अहं भारियायनीताय का अर्थ है: जिस प्रकार अधिक शाखाओं से युक्त बांस, जिसमें शाखाएँ और छोटी शाखाएँ आपस में मिल जाती हैं, उसे बांस के झाड़ से निकालना कठिन हो जाता है, उसी प्रकार, पत्नी के आने से, पुत्रों, पुत्रियों आदि के कारण आसक्ति (आसत्ति) से मेरा आभास बढ़ जाने पर, मुझे भी गृहस्थ जीवन से अलग होना कठिन हो सकता है। दूसरी ओर, जिस प्रकार शाखाओं से बंधा न होने पर बांस का अंकुर (वंशलीर) आसानी से झाड़ से अलग हो जाता है, उसी प्रकार पुत्रों, पुत्रियों आदि से बंधा न होने के कारण मैं भी आसानी से अलग हो जाता हूँ; अतः, पत्नी के न आने पर भी, अनुमाना मम् का अर्थ है: मुझे स्वयं ही इस प्रकार ज्ञान प्राप्त हुआ; पब्बजितोऽम्हिऽदानि का अर्थ है; उन्होंने त्याग में अपनी विशेष प्रसन्नता को इस प्रकार प्रकट किया: "अब मैं भिक्षु बन गया हूँ; शाबाश! उत्कृष्ट!" दूसरे शब्दों में, उन्होंने अपनी माता से इस प्रकार कहा: "मुझे अनुमति दीजिए (अनुमञ्ञमम्), मैं अब भिक्षु बन गया हूँ।" वास्तव में, यहाँ यही अर्थ है: "यदि पहले भी आपने इसे स्वीकार नहीं किया (अमिनाता), तो अब मैं भिक्षु बन गया हूँ; इसलिए, कृपया स्वीकृति दीजिए और मुझे भिक्षु अवस्था में बने रहने की अनुमति दीजिए; मुझे आपसे विमुख नहीं होना चाहिए।" इस प्रकार बोलते हुए, उन्होंने स्वयं को स्थिर रखते हुए आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की, सही श्रेष्ठ मार्गों (मार्ग) का अभ्यास करके अपने दुराचार (किलेसा) का निवारण किया और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिञ्ञा) से युक्त अरहंत बन गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है।

"शानदार महल में बैठे हुए मैंने देखा

विजेता विपस्सी, सर्वज्ञ,

अंधकार का नाश करने वाला, मानो अन-

राजसी वस्त्रों की भव्यता को समेटना (ककुधं)

विलासन्तं)।

महल से कुछ ही दूरी पर नेता भी मौजूद थे।

लोक से होकर गया। उसकी किरणें फैल गईं (निद्धावते)।

सूर्य की चमक के समान (सतरंसी)।

मैंने सुगंधित पानी भी ऊपर उठाया, और

इसे अच्छी तरह से छिड़क दिया

उत्कृष्ट बुद्ध। बस, इसी के साथ मेरी मृत्यु हुई।

धार्मिक भावना।

यह इक्यावन युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने मीठी सुगंध छिड़की है

पानी; मुझे किसी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है;

यह श्रद्धापूर्वक किए गए प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

आज से इकत्तीस युग पहले, एक शाही परिवार

सुगंधा नामक योद्धा विश्वराज बन गया।

अत्यधिक शक्ति से युक्त, सात

रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

यद्यपि छह प्रकार के उच्च ज्ञान (चलाभिञ्ञ) से अर्हंतत्व प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी माता से विदा ली, और जब वह देख ही रही थीं, तब वे आकाश से विदा हो गए। अर्हंतत्व प्राप्त करने के बाद भी, वे बार-बार (अंतरंतरा) उसी श्लोक का उत्तर देते रहे (पच्चुदाहासी)।

वहाँ, "पब्बजितो'म्ही, मैं भिक्षु बन गया हूँ;" इस प्रकार, इस संकेत (पदेसा) के माध्यम से, यह श्लोक भी थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करता है, क्योंकि यह उनके स्वयं के निरंतर अस्तित्व (सन्ताना) में कामवासना (राग) आदि अशुद्धियों को दूर करने (पब्बजित) की स्थिति को उजागर करता है। इसी कारण भगवान बुद्ध ने कहा: "इसलिए, अपनी अशुद्धियों को दूर करने के कारण, उन्हें 'पब्बजितो (भिक्षु)' कहा जाता है।"

थेरा आतुमा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (73) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
73. मानव
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण (पुजारी) के घर हुआ। सात वर्ष तक उनका पालन-पोषण घर के परिसर में ही हुआ, और जब सात वर्ष की आयु में उन्हें जागीर में ले जाया गया, तो उन्होंने पहली बार एक वृद्ध व्यक्ति, एक बीमार व्यक्ति और एक शव को देखा। जब उन्हें इन बातों के बारे में बताया गया, तो वे भयभीत हो गए, विहार (मठ) गए, उपदेश सुने और अपने माता-पिता की सहमति से भिक्षु बन गए। इसके बाद उन्होंने अंतर्दृष्टि और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

उसके आने पर भिक्षुओं ने पूछा:

'इतनी कम उम्र में आप यहाँ आने के लिए कैसे प्रेरित हुए?' इस पर उन्होंने अपनी असीम उपलब्धि (अज्ञात योग्यता) को स्वीकार करते हुए, इस श्लोक में अपने आगमन का संकेत दिया:

[73] जिनाṃ च दिस्व दुखिताṃ च ब्याधिताṃ॥
मतौ च दिस्व गतामायुसंखय:॥
ततो अहं निक्खमितुना पब्बाजिṃ॥
पाहाय कामानि मनोरमानि ती.॥ ॥

[73] मैंने एक वृद्ध को देखा, और एक को रोगग्रस्त देखा,
और फिर मैंने एक मृत व्यक्ति को देखा, जिसका सारा जीवन समाप्त हो चुका था।
वहाँ से मैं संसार छोड़कर दूसरे जीवन (भिक्षु का जीवन) जीने चला गया,
और मैंने इंद्रिय-इच्छाओं के लुभावने सुखों को त्याग दिया।

अब, क्योंकि उन्होंने इतनी कम उम्र में संसार (भिक्षुत्व के लिए) छोड़ दिया था, इसलिए थेरा को हमेशा बालक (माणव) कहा जाता था। [1]

[1] यहाँ बुद्ध के अनुभवों को साझा करने वाले किसी व्यक्ति को नहीं, बल्कि जीवन की वास्तविकताओं से जकड़े हुए एक गंभीर युवा धार्मिक मन के प्रकार को देखने का प्रलोभन होता है।

1.8-3[73] मानवत्थेरा के छंद पर टिप्पणी
जिन्नां च दिस्वा दु:खितं ब्याधितं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मानव का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय किया और आज से इक्यावन युग (कप्पा) पहले एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, शारीरिक लक्षणों के व्याख्याकार (लक्खनाधर) बने, तेजस्वी विपस्सी के शारीरिक लक्षणों का विशेष उच्च कुल (अभिजाति) के लक्षण के रूप में परीक्षण (परिग्घेत्वा) किया, अशुभ संकेतों की घोषणा (पुब्बानिमित्तनि सावेत्वा) की और इस प्रकार भविष्यवाणी की: — "निश्चित रूप से, यह पुत्र बुद्ध बनेगा," अनेक प्रकार से उनकी स्तुति की, उन्हें प्रणाम किया, उनकी परिक्रमा की और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने अपने जन्मों के चक्र में घूमते हुए उत्तम जन्म प्राप्त किए और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक धनी और समृद्ध ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। सात वर्ष की आयु तक वे अपने घर में ही पले-बढ़े और सातवें वर्ष में उन्हें उपनयन के लिए उद्यान में ले जाया गया। रास्ते में उन्होंने एक वृद्ध, एक बीमार और एक मृत व्यक्ति को देखा और क्योंकि उन्होंने उन्हें पहले कभी नहीं देखा था, इसलिए उन्होंने अपने आस-पास के लोगों

से (परिजन) पूछा, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु के बारे में जाना, पश्चाताप किया (संजातसंवेगो), वहाँ से वापस नहीं लौटे, बल्कि मठ की ओर चल पड़े, गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, अपने माता-पिता से अनुमति ली, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े और कुछ ही समय में अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"विपस्सी के जन्म के समय मैंने भविष्यवाणी की थी।"

संकेत (निमित्त बयाकारिं)।

वह दुनिया में बुद्ध बनेंगे

असंख्य प्राणियों को भेजना

निब्बाना को।

वह परम पूज्य, वह गुरु, जिनके प्रति

दस हजार ब्रह्मांडों (चक्कवाल) की उत्पत्ति

आँख (चक्कुमा) के स्वामी को हिला दिया

यह अब सत्य (धम्म) की शिक्षा देता है।

वह धन्य, स्वामी और

जिसकी दृष्टि (चक्खुमा) हो

जन्म के समय भरपूर प्रकाश था,

अब वह सत्य (धम्म) का उपदेश दे रहा है।

वह परम पूज्य, स्वामी और स्वामी

जिस अंतर्दृष्टि (चक्खुमा) के जन्म के समय,

नदियाँ (सरिता) नहीं बहती थीं (संदयुं)।

अब वह सत्य (धम्म) का उपदेश दे रहा है।

वह धन्य, स्वामी और

दृष्टि का स्वामी (चक्खुमा), पर

जिसका जन्म, नरक की अग्नि (avīci)

जो आग की लपटों में नहीं था (पज्जली) अब पढ़ा रहा है

सत्य (धम्म)।

हे भगवान, हे स्वामी और

जिस पर आँख (चक्खुमा) हो

पक्षी झुंड (पंखित प्राणियों का झुंड-)

खीसंघ (khiSaṅgha) उड़ता नहीं था, अब

सत्य (धम्म) का उपदेश देना।

हे परम पूज्य, स्वामी और स्वामी

चक्खुमा (आंख) की, जिसके जन्म पर जनसमूह

हवा नहीं चली, अब पढ़ा रहा है

सत्य (धम्म)।

वह परम पूज्य, स्वामी, और

जिस पर आँख (चक्खुमा) हो

जन्म से ही सभी रत्न चमक रहे थे, अब शिक्षा दे रहे हैं।

सत्य (धम्म)।

वह परम पूज्य, स्वामी और स्वामी

आँख (चक्खुमा) का, जिसके जन्म के समय, जीवित

प्राणी बलवान पैरों वाले (पडविक्कम) बन गए।

अब वे धम्म का शिक्षण कर रहे हैं।

जन्म के तुरंत बाद आत्मजागृत बुद्ध

वह चारों दिशाओं में देखता है। वह बोलता है।

(उदीरेति) प्रभुत्वपूर्ण (आसभिं) शब्द (वाचा)।

यही बुद्धों का स्वभाव है।

बहुत से पुरुषों को बनाने के बाद

पश्चाताप करते हुए, और विशेष रूप से प्रशंसा करते हुए

मैंने स्वयं को बुद्ध के प्रति श्रद्धा अर्पित की।

जागृत बुद्ध को प्राप्त किया और प्रस्थान किया।

पूर्व दिशा।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है,

मैंने बुद्ध की विशेष प्रशंसा की।

किसी भी बुरी सत्ता को याद मत करो; यह

यह मेरी प्रशंसा का फलदायी परिणाम है।

नब्बे युग (कप्पा) पहले, एक विश्व-राजा

अत्यंत बलवान, जिसे सम्मुखाथविका कहा जाता है।

उसे सात रत्नों से सुशोभित किया गया था।

अस्सी नौ युग (कप्पा) पहले, एक विश्व-राजा

पथवदुन्दुभि नाम की महान शक्ति वाली

उसे सात रत्नों से सुशोभित किया गया था।

अस्सी आठ युग (कप्पा) पहले, एक राजकुमार

ओभास नाम का योद्धा (खट्टिया) बना

एक अत्यंत शक्तिशाली विश्व-राजा, सात शक्तियों से संपन्न

रत्न।

अस्सी सात युग (कप्पा) पहले, एक बहुत शक्तिशाली

सरितच्छ नामक विश्वराज को यह वरदान प्राप्त था।

सात रत्नों के साथ।

छियासी युग (कप्पा) पहले, एक बहुत शक्तिशाली

विश्व राजा अग्गिनीब्बापना को दान दिया गया था

सात रत्नों के साथ।

पचासी युग (कप्पा) पहले, एक बहुत शक्तिशाली

गतिपच्छेदन नामक विश्वराज का जन्म हुआ था।

सात रत्नों से जड़ा हुआ।

चौरासी युग (कप्पा) पहले, एक बहुत

वातसमा नामक शक्तिशाली विश्व-राजा था।

सात रत्नों से सुशोभित।

तिरासी युग पहले, एक बहुत शक्तिशाली

रतनपज्जल नामक विश्वराज था।

सात रत्नों से सुशोभित।

बयासी युग पहले, एक बहुत शक्तिशाली

पदाविक्कमना नामक विश्वराज था।

सात रत्नों से सुशोभित।

इक्यासी युग (कप्पा) पहले, एक बहुत

विलोकाना नामक शक्तिशाली विश्वराज था

सात रत्नों से सुशोभित।

अस्सी युग (कप्पा) पहले, एक बहुत

खत्तिया वंश का शक्तिशाली विश्व-राजा,

गिरस्सारा नामक व्यक्ति को इन गुणों से संपन्न किया गया था।

सात रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, भिक्षुओं द्वारा पूछे जाने पर उन्होंने एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें उन्होंने अपने अरहंत पद को प्रकट करते हुए, अपने भिक्षुत्व के निमित्त (चिह्न) की घोषणा की: “मित्र! किस प्रकार के पश्चाताप के कारण तुम अत्यंत कम आयु में ही भिक्षु बन गए हो?”

73. "वृद्धों को देखकर, बीमारी-

पीड़ित (दुखीता) और

मृतकों को भी देखने के बाद,

जीवनकाल पूरी तरह समाप्त हो गया

(आयुसंखय), मैंने अपना पुनः-

इसके परिणामस्वरूप घोषणा

और भिक्षु बन गए,

परित्यक्त रमणीय कामुक

सुख।

वहाँ, जुन्नम का अर्थ है वृद्धावस्था से ग्रस्त हो जाना; टूटे दांत, बालों का सफेद होना, झुर्रीदार त्वचा आदि जैसी अवस्थाओं से ग्रस्त हो जाना। दुखितम का अर्थ है पीड़ा (दुक्खा) से पीड़ित होना। ब्याधितम का अर्थ है रोग (गिलाना)। यहाँ, यद्यपि इसे "ब्याधितम (रोग से पीड़ित)" कहा गया है, पीड़ा की अवस्था (दुक्खपट्टभावो) ही इसका अंत (सिद्धो) है; "दुखीतम्" (पीड़ा से ग्रस्त होना) शब्द का प्रयोग गंभीर बीमारी की स्थिति को पूरी तरह से उजागर करने (दीपन) के लिए किया गया है। "मटम्" का अर्थ है मृत्यु (कालांकत); चूंकि मृत्यु को जीवन (आयु) के समाप्त, नष्ट और विलीन होने की अवस्था के रूप में जाना जाता है, इसलिए इसे "गतमायुसंखयम्" कहा गया है, जिसका अर्थ इस प्रकार है: — इसलिए, वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु को देखकर, मुझे पश्चाताप हुआ: — "वृद्धावस्था आदि जैसी अवस्थाएँ तो इन लोगों के लिए भी नहीं हैं, बल्कि ये सभी के लिए सामान्य हैं; इसलिए, मैं भी वृद्धावस्था आदि पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता।" निक्खमितुना का अर्थ है: त्याग करना; वैकल्पिक रूप से यह निक्खमित्व केवल पाठ है; भिक्षु बनने के अर्थ में घर से बाहर निकलना। पब्बजिं का अर्थ है गुरु के मार्गदर्शन में भिक्षुत्व के निकट आना। पहाय कामानी मनोरमानि का अर्थ है: — मनभावन, सुंदर आदि अवस्था के कारण, जो लोग कामवासना (राग) से रहित नहीं हैं, उनका मन इस प्रकार प्रसन्न होता है, मन को प्रसन्न करने वाले भौतिक इंद्रिय सुखों (वत्थुकाम) का त्याग करके, बिना किसी खोज की इच्छा के, पवित्र श्रेष्ठ मार्ग (अरियमग्ग) के माध्यम से उस उपयुक्त रूप से बंधी हुई कामवासना (चंदराग) को अच्छी तरह से काट कर; यही अर्थ है। इंद्रिय सुखों के त्याग की घोषणा के साथ-साथ, यह थेरा के उपदेशों का प्रकटीकरण (ब्याकरणं) भी बन गया। अरहंत पद (अञ्ञा)। क्योंकि वे युवावस्था में ही भिक्षु बन गए थे, इसलिए इस थेरा की उपाधि मात्र मानव हो गई।

थेरा मानव के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(74): सुयामना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (74) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
74. सुयामन
बुद्ध युग में साली में एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, वे तीनों वेदों में निपुण हुए। [1] गृहस्थ जीवन से विमुख होकर और ध्यान की ओर उन्मुख होकर, वे साली में भगवान (बुद्ध) से मिले, विश्वास किया, भिक्षुत्व में दीक्षा ली और जैसे ही उन्होंने अपना सिर मुंडवाया, उन्हें अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त हो गया।

इस पर उन्होंने बाधाओं को दूर करने का संकेत दिया और इस श्लोक में अन्ना (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[74] कामच्छन्दो च ब्यापदो थिनमिद्धौ च भिक्खुनो॥
उद्धाच्चै विचिकीच्चा च सब्बसोऽव न विज्जति' ति.॥ ॥

[74] कामुक (यौन आदि) इच्छाओं, शत्रुता,
मन की सुस्ती और शरीर की आलस्य से
भिक्षु का कोई संबंध नहीं होता, और उसके हृदय में
किसी भी प्रकार की हलचल और संदेह मर जाते हैं।

[1] यह उल्लेखनीय है कि जहाँ धम्मपाल के समय में चार वेद (बाद के अथर्ववेद सहित) थे, वहीं पूर्वी भारत के बौद्ध संप्रदायों - जैसे कि कोंजेवराम - को या तो ब्राह्मण (पुजारी) साहित्य में इस वृद्धि की जानकारी नहीं थी, या उन्होंने इन मूल थेरों को केवल तीन वेदों से जोड़ने के लिए पर्याप्त ऐतिहासिक सटीकता का पालन किया (संवाद, i. 109, n. 2 देखें)। साला, या सालाम्, कोसल में एक ब्राह्मण (पुजारी) गाँव, का उल्लेख मज्झिमा में बुद्ध द्वारा दो बार किया गया है (सूत्र 41, 62; तुलना करें सय्य., v. 144); लेकिन साली का उल्लेख अभी तक कहीं और नहीं मिला है।

1.8-4[74] सुयामनथेरा के श्लोक पर टीका
कामाच्छन्दो च ब्यापादो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुयामन का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्मों का संचय करते हुए, इनका पुनर्जन्म धन्नवटी नगर में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ, जो आज से इक्यावन युग (कप्पा) पहले भगवान विपस्सी के समय हुआ था। वयस्क होने पर, उन्होंने सभी ब्राह्मण विद्याओं में सिद्धि प्राप्त की और ब्राह्मण मंत्रों का उपदेश दिया। उसी अवसर पर भगवान विपस्सी, भिक्षुओं के एक बड़े समूह के साथ भिक्षा मांगने के लिए धन्नवटी नगर में आए थे। उन्हें देखकर ब्राह्मण धर्मपरायण हो गया और उन्हें अपने घर ले गया, आसन तैयार करवाया, उस पर फूल बिछाया और उसे अर्पित किया; जब गुरुजी वहाँ विराजमान हुए, तो उन्होंने उन्हें उत्तम भोजन से तृप्त किया; भोजन करने के बाद, उन्होंने आदरपूर्वक उन्हें सुगंधित पुष्प अर्पित किए। गुरुजी ने धन्यवाद किया और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप उनका पुनर्जन्म दिव्यलोक में हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे वैशाली में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ। उनका नाम सूर्यमान था। वयस्क होने पर उन्होंने तीनों वेदों में पारंगत (प्रशिक्षित) हो गए और परम साधना में लगे रहकर गृहस्थों द्वारा भोगे जाने वाले इंद्रिय सुखों का तिरस्कार करते हुए ध्यान में लीन हो गए, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भगवान बुद्ध के वैशाली पहुँचकर भिक्षु बन गए और जब उनके बाल खुरग्ग से मुंडवाने शुरू हुए, तब उन्होंने अतहतत्व प्राप्त किया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"धन्यवती नगर में, मैं उस समय था

एक ब्राह्मण। संकेतों को पढ़ने में।

इतिहासा में भी (लक्खना) साथ ही

निघंडु के साथ-साथ केतुभा।

मुझे शब्दों और स्पष्टीकरणों का ज्ञान था।

(वेय्याकरण), और संकेतों में चतुर

(निमित्त)। मैंने अपने छात्रों को यह सिखाया

मंत्रों में भी निपुणता प्राप्त करना।

(पारागू) तीनों वेदों में।

पांच मुट्ठी कमल के फूल थे

मुझे मेरी पीठ के बल लिटाया गया है, क्योंकि मैं

पवित्र भेंट चढ़ाने की इच्छा रखता था

यज्ञ वेदी पर (आहुतिं)

yitthukāmo) एक साथ इकट्ठा होने में

मेरे पिता और माता के।

उस मोड़ पर, महिमावान व्यक्ति

विपस्सी, अपने पुरोहितों से घिरे हुए

भिक्षु, पुरुषों में श्रेष्ठ, आए

सभी दिशाओं में प्रकाश फैलाते हुए।

एक सीट तैयार करने के बाद, मैंने आमंत्रित किया

महान ऋषि ने उन बातों का प्रसार किया।

फूलों के साथ, मैं उन्हें अपने घर ले गया।

मेरे घर में जो कुछ भी था

आनंद के लिए भोजन (आमिसा) मैंने रखा

उसके अधिकार में (पच्चुपठित) और

मैंने बुद्ध को जो कुछ भी अर्पित किया, वह सब कुछ था।

उनके हाथों से प्रसन्न (सेही पानीभी)।

समय का पता चलने पर

जब उसने खाना खत्म कर लिया, तो मैंने उसे एक और चीज़ दी।

मुट्ठी भर फूल। प्रदर्शन करने के बाद

सर्वज्ञानी बुद्ध को उनका धन्यवाद

उन्होंने उत्तर दिशा की ओर मुख करके प्रस्थान किया।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने तब फूल भेंट किए।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह फूल का फलदायी परिणाम है

पेशकश।

अनंत काल (कप्पा)

आज से कुछ समय पहले, मैं वारा नाम का एक राजा था।

दस्साना (उत्कृष्ट द्रष्टा), एक बहुत मजबूत

विश्वराज, सात रत्नों से सुशोभित।

मेरी सारी बुराइयाँ जलकर राख हो चुकी थीं...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी बाधाओं (निवाजेना) को दूर करने के लिए अपनी अरहंतता को प्रकट करने वाला एक श्लोक कहा (ब्याकरोंतो):

74. इंद्रिय सुखों की इच्छा,

दुर्भावना (ब्यापाद), आलस्य और

भिक्षु की उनींदापन; हलचल

(उद्धाच्च) साथ ही संदेह (विसी-

किच्चा); हर लिहाज से ऐसा होता है

अस्तित्व में नहीं हैं।

वहाँ कामच्छंदो का अर्थ है इंद्रिय सुख की इच्छा; इंद्रिय सुख और वह इच्छा दोनों मिलकर कामच्छंद, यानी इंद्रिय सुख की इच्छा, यानी कामरागो (कामुक वासना) का निर्माण करते हैं। हालाँकि, यहाँ समस्त वासना भी कामच्छंद, यानी इंद्रिय सुख की इच्छा है, क्योंकि यह अत्यंत उत्कृष्ट (अग्गनाग्ग) हत्या (वज्जा) के योग्य होने का भी संकेत देती है: इसलिए उन्होंने कहा: "सब्बासोवना विज्जति।" वास्तव में, तीनों प्रकार के लोकों (काम रूप, अरूप भूमि) से संबंधित सभी वस्तुएँ (धम्म) काम (इंद्रिय सुख) का निर्माण करती हैं, क्योंकि वहाँ उत्पन्न होने वाली इच्छा (कामानीयत्त) के कारण। इसी कारण बुद्ध ने कहा: "Āruppe kāmacchandanīvaranaṃ paṭicca thina middha nīvaranaṃ uddhacca nīvaranaṃ avijjā nīvaranaṃ uppajjati (निराकार (अरूप) में, इंद्रिय सुख की इच्छा के अवरोध से ग्रस्त होकर, आलस्य और उन्मत्तता का अवरोध, उच्छृंखलता का अवरोध और अज्ञान का अवरोध उत्पन्न होता है)। मन क्षुब्ध (byāpajjati) हो जाता है और सड़न की स्थिति में पहुँच जाता है; इसी कारण, उन्होंने कहा: byapādo. "उसने मेरे लिए हानि (anattha) का आचरण किया;" इस प्रकार आरंभ होने पर, द्वेष इस प्रकार उत्पन्न होता है। आलस्य (थिना) मन की अप्रियता (अकल्यता) है, जो ऊर्जा की कमी (उत्साह) को जोड़ती है; उन्मत्त (मिद्धा) शरीर की अप्रियता (अकल्यता) है, जो बिना शस्त्र (सत्ति) के विनाश (विघात) का कारण बनती है; ये दोनों आलस्य और उन्मत्त मिलकर थिनामिद्धं बनाते हैं। यह कथन कर्म (किच्चा) और पोषण (आहार) के विपरीत भावों की एकता को दर्शाते हुए किया गया है। उद्दच्च (विचलित) होने की अवस्था। जिस भी कर्म (धम्म) के कारण मन उत्तेजित और अशांत हो जाता है, वह मन की अशांति (विक्खेप) और व्याकुलता है। यहाँ भी, कर्म (किच्चा) और पोषण के विपरीत भावों की समानता

के कारण, व्याकुलता (उद्धा) का वही गहना (गहन) होना, चिंता (कुक्कुच्च) का कारण भी बनता है। इसे लिया गया है; इस प्रकार, इसे देखा जाना चाहिए। यह बाद के कष्ट (अनुताप) को दर्शाता है। वास्तव में, अच्छे और बुरे कर्मों के कर्मों (कटा) और चूक (अकाटा) के फलस्वरूप जो भी पश्चाताप (विप्पतिसार) होता है, वही कष्ट (कुक्कुच्च) है। विचिकिच्चा का अर्थ इस प्रकार है: — "क्या यह वास्तव में ऐसा है या निश्चित रूप से इस प्रकार नहीं?" इस प्रकार, संदेह उत्पन्न होता है; दूसरे शब्दों में, चीजों (धम्म) के स्वरूप की जांच करने में उसे कठिनाई और थकान होती है; इसी कारण, विकिचिच्चा (संदेह); बुद्ध आदि जैसे आधार (वत्थु) पर संदेह। सब्बासो का अर्थ है बिना किसी शेष (अवसेसा) के। न विज्जति का अर्थ है अस्तित्वहीन (नत्थि); सही मार्ग (मार्ग) द्वारा अच्छी तरह से अलग किए जाने के कारण, यह प्राप्त नहीं किया जा सकता है। इन दो शब्दों के समूह की भी अलग-अलग व्याख्या की जानी चाहिए। वास्तव में, यहाँ यही व्याख्या है: एक भिक्षु, जिसमें सभी प्रकार से, यहां तक कि कामुक सुख (कामच्छंद), मानसिक पीड़ा (ब्यापाद), आलस्य और सुस्ती (थिनामिद्ध) की इच्छा भी नहीं होती है।सही मार्ग (अरीयमग्ग) द्वारा पांचों बाधाओं के पूर्णतः दूर हो जाने के कारण उत्पन्न होने वाली बेचैनी, चिंता और संदेह (उद्धक्कुकुक्कुच्च) को कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है; दूसरे शब्दों में, यह किए गए कर्मों का संचय (पटिकय) है; इस प्रकार, उन्होंने अपनी अज्ञा (प्राप्ति) के संकेत के साथ अपने अरहंतत्व (अज्ञां) की व्याख्या की। वास्तव में, जब सही मार्ग (मग्ग) द्वारा पांचों बाधाओं का पूर्णतः निवारण हो जाता है, तो उस अट्ठता (अट्ठता) की स्थिति के कारण, सभी प्रकार के दुराचार (किलेसा) भी पूर्णतः दूर हो जाते हैं। इसी कारण उन्होंने कहा: "भगवान को, पांचों बाधाओं और मन के सभी दुराचार (उपक्किलेसा) का त्याग करने के बाद।"

थेरा सुयामन के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(75):सुसारदा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (75) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
75. सुसारदा
उनका पुनर्जन्म बुद्ध युग में सारिपुत्त के जन्मस्थान [1] पर एक ब्राह्मण परिवार में हुआ, और उन्हें सुसारदा [75] (मंदबुद्धि) कहा गया, क्योंकि उनका विकास धीमा था। [2] उन्होंने उस थेरा की शिक्षा से सोतापना (निर्वाण का प्रथम समाधि) प्राप्त किया और उचित समय पर, एक भिक्षु के रूप में, अरहंत (प्रबुद्ध) बन गए, और इस श्लोक में अपनी अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[75] साधु सुविहिताना दस्सानां कांखा चिज्जति बुद्धि वदहति॥
बलमपि करोंति पणादितं तस्मा साधु सातं समागमोऽ ति.॥॥

[75] हे सुसंस्कृत मनों का दर्शन कितना सुंदर है! [3] संशय दूर हो जाता है और ज्ञान तेजी से बढ़ता है।
वे मूर्ख को भी सक्षम बना देते हैं;
इसलिए संतों के साथ मेलजोल अच्छा है।

[1] मगध में नालक-गाँव।

[2] सुसारदा का अर्थ है 'बहुत पतझड़ी' - यानी, मानो 'अविकसित बीज या वृद्धि वाला', और इसलिए हमारी जलवायु में शुरुआती वसंत ऋतु के अनुरूप। तुलना करें जेपीटीएस, 1909, पृष्ठ 150; और इसके विपरीत, विसारदा, नीचे, सीसीआईआई, श्लोक 338।

[3] यह एक रोचक तथ्य है कि सुविहिताना शब्द पर , जिसका अनुवाद 'संस्कृत' (शाब्दिक रूप से, सुसंस्कृत, व्यवस्थित या अभ्यासी) के रूप में किया गया है, टीका में टिप्पणी है अनुस्वारलोपो कातो; अंतिम ŋ को हटा दिया गया है, गाथा-सुखत्थाŋ, छंद संबंधी कारणों से। पंक्ति 3 के साथ, सिटर्स, श्लोक 213 देखें ।

1.8-5[75] सुसारदत्तेरा के श्लोक पर टीका

साधु सुविहिताना दस्सनं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुसारद का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि उनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक ब्राह्मण परिवार में हुआ, उन्होंने ब्राह्मण विद्या (विज्जापाद) में निपुणता प्राप्त की, काम (इंद्रिय सुख) के अभाव को समझा, गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संन्यासी बन गए, हिमवंत क्षेत्र के एक वन में आश्रम बनवाया और वहीं रहने लगे। फिर उन्हें उत्थान देने के लिए, भगवान पद्ममुत्तरा भिक्षा मांगने के समय उनके पास गए। दूर से ही उन्होंने उन्हें देखा, श्रद्धा से भर गए, उनसे मिलने के लिए आगे बढ़े, उनका पात्र लिया, उसमें मीठे फल डाले और भेंट की। भगवान ने उस भेंट को स्वीकार किया, दाता को धन्यवाद दिया और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब उनका पुनर्जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ, जो धर्म के सेनापति का संबंधी था। अपनी अल्प बुद्धि के कारण उन्होंने अपना नाम सुसारदा रखा। इसके बाद, उन्होंने धर्म के सेनापति की उपस्थिति में धर्म का ज्ञान ग्रहण किया, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बने, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अर्हंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

मैं पाठ करने और याद करने वाला था

मंत्रों में निपुण, तीनों में निपुण

वेद। हिमालय से ज्यादा दूर नहीं।

मैं एक आश्रम में रहता था।

मेरे अंदर बलिदान की अग्नि भी थी।

सफेद कमल के फल; फेंके हुए

उन्हें टोकरी में नीचे रख दिया गया, उसे रखा गया

मेरे बगल में पेड़ की चोटी पर लटका हुआ।

वह पद्ममुत्तरा, जो सांसारिक मामलों में ज्ञानी है,

बलिदान के योग्य प्राप्तकर्ता

भेंट चढ़ाना, उत्थान की इच्छा रखना

वह मेरे पास आकर उनसे भीख मांगने लगा।

खाना।

मैं धर्मनिष्ठ और नेक हृदय वाला व्यक्ति हूँ।

बुद्ध को फल अर्पित किए। मेरे लिए

वहाँ प्रचार चल रहा था

समृद्धि (वित्तिसंजनाना), वाहक

आनंद को वस्तुओं के एक दृश्य क्रम के रूप में देखना

(दिट्ठधम्म).

स्वर्ण रंगत वाला आत्मजागृत

बुद्ध, योग्य प्राप्तकर्ता

बलिदान भेंट, स्वामी,

आकाश में खड़ा होकर इस छंद को लिख डाला।

फलों की इस भेंट के कारण

इच्छाशक्ति और संकल्प से, आप ऐसा नहीं कर पाएंगे

किसी भी दुष्ट अस्तित्व में पुनर्जन्म लेना (दुग्गती)

एक लाख युगों (कप्पा) के लिए।

उस उज्ज्वल आधार (सुक्कमूल) से भी

मुझे सफलता (संपदा) का आनंद मिला।

मैंने जो अविचल स्थान प्राप्त किया है

जीत और हार को त्यागने के बाद।

सात सौ युग (कप्पा) पहले, से

अब, मैं राजा सुमंगल बन गया, एक बहुत ही

शक्तिशाली विश्व-राजा, सात शक्तियों से संपन्न

रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी अज्ञा (प्राप्ति) को प्रकट करने के लिए एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें अच्छे व्यक्तियों पर भरोसा करने के लाभ (आनिसंस) की घोषणा (कित्तना) का संकेत (पदेसा) था।

75. "अच्छी तरह से सुसज्जित लोगों को देखना

अच्छा; संदेह दूर हो गया और ज्ञान प्राप्त हुआ।

सिलवटें। ये मूर्ख लोगों को भी सिलवटें बना देती हैं।

बुद्धिमान; इसलिए अच्छे लोगों की सभा

बडीया है।"

वहाँ, साधु का अर्थ है उत्कृष्ट, अच्छा; यही अर्थ है। सुविहिताना दस्सनां का अर्थ है; सुसज्जित को देखना। श्लोक रचना में सुगमता के लिए निग्घिता शब्द को हटा दिया गया है। पवित्र कुलीनों (आर्य) को देखना, जो दूसरों पर दया करने के कारण सत्य (धम्म) की शिक्षा से उत्कृष्ट रूप से सुसज्जित हैं, और जिन्होंने स्वयं को नैतिक उपदेशों आदि गुणों से उत्कृष्ट रूप से सुसज्जित (सुसंविहितत्त) कर लिया है; यही व्याख्या है। "दस्सनां (देखना);" इस प्रकार, स्वयं की प्रचुर अवस्था (कारत्त) के कारण, इंगित करने की सीमा को देखा जाना चाहिए। वास्तव में, भगवान बुद्ध ने यही कहा था:

"वे भिक्षु (भिक्षु), जो वरदानों से संपन्न हैं

नैतिक उपदेश (सीला), एकाग्रता,

(समाधि), ज्ञान (पञ्ञा), से संपन्न

मुक्ति (विमुक्ति), से युक्त

ज्ञान की अंतर्दृष्टि (दशाना)

मुक्ति (विमुत्तिनाना), जो हैं

सलाहकार, निर्देश देने में चतुर (विञ्ञा-

पका), जो प्रशिक्षक (संदसाका) हैं,

भड़काने वाले (समदपका), भड़काने वाले (समुत्ते-

जका), ग्लैडेनर्स (संपहंसका), निर्माता

अच्छे धम्म की शिक्षा पर्याप्त रूप से प्रदान करना

स्पष्ट (अलं समक्खतारा); हे भिक्षुओं! मैं

कहते हैं कि ऐसे भिक्षुओं को देखना भी

बहुत मददगार (बहुपकारा) होने के नाते;

सुनना (सवनम्); पास आना (उपसॅ-

कामनां), उपस्थित रहना (पयिरूपासन)

(अनुसरनम्) पर विचार करते हुए। मैं कहता हूँ,

हे भिक्षुओं! भिक्षुओं, प्रचुर मात्रा में होने के लिए

लाभकारी (बहुपकार)।"

दूसरे शब्दों में, क्योंकि देखना (दस्सना) आधार (मूलक) है, इसलिए यहाँ इसे दूसरों के लिए भी देखना (दस्सना) कहा गया है; कंखा चिज्जति, इस प्रकार, और इसी तरह, वहाँ साधनवाचक शब्द (करणवचनं) बनाते हैं। वास्तव में, जब ऐसे अच्छे मित्रों को देखकर (जैसा कहा गया है) एक अच्छे परिवार का पुत्र (कुलपुत्त) जन्मजात बुद्धिमान (विञ्ञुजाटिक) जो उनके लाभ की इच्छा रखता है (अत्था) उनके पास जाता है और उनकी सेवा करता है (पयिरुपासति); वह ऐसे प्रश्न पूछता है जैसे: "आदरणीय महोदय! अच्छा कर्म क्या है? बुरा कर्म क्या है?" इत्यादि। वे अपनी ओर से, संदेह की कई व्यवस्थित (विहित) स्थितियों (ठाणीय) में उसके संदेहों को दूर करते हैं; इसी कारण से, ऐसा कहा गया है; "कॅखॅचिज्जति, संदेह दूर हो जाता है।" क्योंकि वे सत्य (धम्म) का उपदेश देकर, उनके संदेह को उचित रूप से दूर करते हैं, प्रभावी (कम्मपथ) सही दृष्टिकोण (सम्मदित्ति) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के माध्यम से सही दृष्टिकोण को बढ़ावा देते हैं, इसलिए उनकी बुद्धि वद्धति (जागरूकता) बढ़ती है। जब वे आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को उत्तरोत्तर विकसित करते हुए, आर्य सत्यों (सच्चानि) में उचित रूप से प्रवेश करते हैं, तब सोलह और आठ क्षेत्रों पर आधारित संदेह दूर हो जाता है और पर्याप्त रूप से विच्छेदित (समुच्चिज्जति) हो जाता है; बिना प्रमाण (निपरीयायन) के, ज्ञान (पञ्ञा) और जागरूकता बढ़ती है। वे अपने शरीर से मूर्खता (बाल्य) से परे जाकर बुद्धिमान बन जाते हैं। उनके कारण, उनकी जागरूकता बढ़ती है; bālampi karonti paṇḍitaṃ, (वे मूर्ख व्यक्ति को भी बुद्धिमान बना देते हैं)। Tasmā (इस प्रकार), और इसी प्रकार आगे का अर्थ है (निगमना)। जैसा कि कहा गया है, भले लोगों को इस प्रकार देखने से संदेह दूर हो जाता है और ज्ञान बढ़ जाता है, वे मूर्ख व्यक्ति को बुद्धिमान बना देते हैं, इसलिए उस परिस्थिति में sādhu का अर्थ है उत्तम (सुंदरं); sataṃ का अर्थ है भले लोगों का, पवित्र कुलीनों का (अरियानं); samāgamo का अर्थ है उनके साथ जुड़ना (समोधान) और उचित रूप से बढ़ाना (सम्मा वढन); इस प्रकार, यही अर्थ है।

थेरा सुसारदा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(76):पियांजहा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (76) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
76. पियांजाहा
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म वैशाली में एक लिच्छवी कुलीन (राजा) परिवार में हुआ। बड़े होकर वे युद्ध के प्रति अत्यंत उत्साही और एक अजेय योद्धा बन गए, जो अपने प्रियजनों का त्याग करते थे, इसलिए वे प्रेम-त्यागी पियांजहा के नाम से प्रसिद्ध हुए। लेकिन जब भगवान (बुद्ध) वैशाली आए, तो पियांजहा ने उनमें आस्था पाई, भिक्षु संघ में प्रवेश किया, वन में निवास किया, अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। अरहंत (ज्ञानोदय प्राप्त) के रूप में उन्होंने विचार किया, 'सांसारिक सफलता आर्य सफलता से कितनी भिन्न है!' और इस अंतर्दृष्टि से ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार करते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:

[76] उप्पतंतेसु निपते निपातंतेसु उप्पते॥
वसे अवसामनेसु राममानेसु नि रमे' ति.॥ ॥

[76] जहाँ लोग अभिमानी हों, वहाँ तुम नीची रहो। [1] जहाँ वे मन से नीच हों, वहाँ हृदय को ऊपर उठाओ।
वहाँ रहो जहाँ दूसरे लोग रहना नहीं चाहते,
जहाँ लोग आनंद पाते हैं, वहाँ तुम्हें कोई आनंद नहीं मिलता।

[1] पाठ में प्रयुक्त विभक्ति पुराने इच्छावाचक का तीसरा व्यक्ति एकवचन है : उसे, एक को, नीचे लेटना चाहिए।

1.8-6[76] पियांजहत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
उप्पतन्तेसु निपाते से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पियांजहा का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों के प्रति भक्तिपूर्ण कर्म किए, पुण्य कर्मों का संचय किया जिससे उन्हें इस और उस जन्म में बार-बार पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति मिली। वे भगवान विपस्सी (बुद्ध) के समय हिमवंत (हिमालय) में वृक्ष देवता बन गए। एक पहाड़ी पर रहते हुए, अपनी सीमित शक्ति के कारण उन्हें दिव्य प्राणियों की सभा में सबसे दूर बैठना पड़ता था। उन्होंने सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से पवित्र आस्था प्राप्त की, गुरु के गुणों का चिंतन

किया। एक दिन गंगा नदी में उन्हें एक रमणीय और अत्यंत शुद्ध रेतीला तट मिला, जिसके बाद उन्होंने कहा: "इससे भी कहीं अधिक शुद्ध हैं गुरु के गुण, जो अनंत और सर्वव्यापी हैं।" इस प्रकार, गुरु के गुणों के अनुरूप, उन्होंने अपने मन को अत्यंत पवित्र (पसादेत्वा) बनाया और उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप वे जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका पुनर्जन्म वैशाली के लिच्छवा राजपरिवार में हुआ। वयस्क होने पर, वे युद्ध-युद्धों के प्रति आसक्त (सोंडो) हो गए और युद्धक्षेत्र में अजेय हो गए, तथा शत्रुओं के प्रति प्रेम (पियाहानी) त्यागने (करणे) के कारण वे पियांजहा के नाम से प्रसिद्ध हुए। गुरु के वैशाली आगमन पर, उन्होंने उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और वन में रहते हुए आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को लगातार विकसित करते हुए अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

मैं हिमवंता पहाड़ी पर रहता था।

पहाड़ी। वैभव को देखकर

रेत के बारे में सोचते हुए, मैंने सबसे पूर्व के बारे में विचार किया-

उत्कृष्ट बुद्ध। ज्ञान में, वहाँ

कोई तुलना नहीं; गुरु के लिए तो

कोई क्रिया प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं करती

(संखार)। विशेष रूप से जानने के बाद

(अभिञ्ञाय) सभी सत्य (धम्म),

वह अत्यंत मुक्त हो गया (अधि-

उनके ज्ञान से (मुक्काती)।

हे सुसंस्कृत, मेरी श्रद्धा आपके प्रति है।

हे परम पूज्य! मैं आपकी पूजा करता हूँ, हे सर्वोच्च।

बहुत बढ़िया! जहाँ तक आपके सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न का संबंध है।

उत्कृष्ट ज्ञान आपको चिंतित करता है

ज्ञान में उनका कोई समकक्ष नहीं है।

मैंने अपने मन को सुखद रूप से धार्मिक बना लिया है

उनके ज्ञान के प्रति, मैं परिपूर्ण था

युगों तक स्वर्ग में आनंद (कप्पा),

शेष युग (कप्पा), अच्छा कर्म

यह मैंने किया था।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है,

अब, मुझे यह समझ आ गई।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

उनके ज्ञान की धारणा।

आज से सत्तर युग (कप्पा) पहले,

मैं एक बहुत शक्तिशाली विश्व-राजा बन गया जिसका नाम था

पुलिना पुफिया (रेत का फूल), संपन्न

सात रत्नों के साथ। मेरी दुष्टता थी

जल गया। ... बुद्ध के उपदेश में था

संपन्न हो चुका है।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करते हुए इस लाभ (अत्था) को इस प्रकार दर्शाया: — "अंधे आम लोगों (पुथुज्जना) के उचित आचरण (पटिपत्ति) से लेकर दुखी दरिद्रों (विधुरा) के आचरण तक, पवित्र कुलीनों (आरिया) का आचरण।"

76. "किसी को भी अपने साथियों के बीच विनम्र रहना चाहिए-"

सम्मानित; किसी को उनके बीच ऊंचा स्थान प्राप्त करना चाहिए

अभिमानहीन लोगों के बीच रहना चाहिए।

जो लोग पवित्र जीवन जी रहे हैं; उनमें से एक को

उन लोगों के बीच खुद को भ्रमित न करें जो हैं

वे इंद्रिय सुखों में आनंदित होते थे।

वहाँ, उप्पतन्तेसु का अर्थ है: अभिमानी लोगों में; उन प्राणियों में जो अहंकार, उद्धच्च, हठ, सारम्भ आदि के कारण आत्म-प्रशंसा से व्याकुल (अनुपसन्त) हो जाते हैं। निपाते का अर्थ है झुकना (नामय्या): व्यक्ति उन बुरे कर्मों (धम्म) से पूर्णतः विरक्त होकर विनम्रता का अभ्यस्त हो जाएगा। निपातन्तेसु का अर्थ है: झुकने वालों में; उन लोगों में जो नीच प्रवृत्ति (हीन) में लीन होने के कारण आलस्य (कोषज्ज) से अच्छे गुणों से विमुख (निहीयामान) हो गए हैं। उप्पते का अर्थ है: वह अभिमानी (उन्नमय्या) होगा; वह श्रेष्ठ प्रवृत्ति और परिश्रम के कारण गुणों (गणतो) के दृष्टिकोण से प्रयास करेगा। दूसरे शब्दों में, उप्पतन्तेसु का अर्थ है; उन लोगों में जो परिश्रम करते हैं, उन लोगों में जो दुराचार के बीच आवेग में आकर अपना सिर उठाते हैं। निपाते का अर्थ है: उसे उचित चिंतन (पच्चवेक्खना) द्वारा अपने आप को इस प्रकार विनम्र करना चाहिए कि गणना (पटिसंखाना) की शक्ति के कारण दुराचार के वे रूप उत्पन्न न हों; उसे उन्हें पंगु (विक्खम्भेय्या) करना चाहिए और उन्हें पूरी तरह से काट देना चाहिए (समुच्चिन्देय्या)। निपत्तन्तेसु का अर्थ है: उन लोगों में जो गिर जाते हैं (परिपत्तन्ते); उन लोगों में जो परिश्रम की अल्प इच्छा (पयोग) के कारण बुद्धिमानी से सचेत (अयोनिसो) नहीं होते हैं। दूसरे शब्दों में, जब शांत स्वभाव (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के कर्म (धम्म), जो प्रारंभ में दृढ़ (यथारद्ध) हो गए थे, क्षीण

(हायमाना) होने लगते हैं। उप्पात का अर्थ है: उन समथा और विपस्सना को सफल (संपदा) परिश्रम (आरंभ) और विवेकपूर्ण जागरूकता के माध्यम से सहारा (उपाट्ठापेय्य), समर्थन (उप्पादेय्या) और विकसित (वड्ढेय्या) किया जाना चाहिए। वसे अवसमानेसु का अर्थ है: उसे स्वयं उन प्राणियों के बीच जीवन व्यतीत करना चाहिए जो सही मार्ग (मग्ग) और ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करते हैं, साथ ही एक पवित्र कुलीन (आर्य) का जीवन भी व्यतीत करते हैं। दूसरे शब्दों में, उसे स्वयं भी उन पवित्र श्रेष्ठों (अरियेसु) के बीच रहना चाहिए जो पतित जीवन (दुतियाक) नहीं जीते, यानी वे ऐसा जीवन नहीं जी रहे हैं। राममानेसु नोरामे का अर्थ है: उसे स्वयं भी उन प्राणियों के बीच आनंद नहीं लेना चाहिए जो इंद्रिय सुखों और दुराचार के उल्लास में मग्न हैं; दूसरे शब्दों में, उसे उन पवित्र श्रेष्ठों (अरियेसु) के बीच आनंद लेना चाहिए जो ध्यान आदि सुखों में मग्न हैं, जो बैत (आमिसा) से रहित हैं; इसके अलावा, उसे किसी भी अन्य नाम में कभी भी आनंद नहीं लेना चाहिए; दूसरे शब्दों में, उसे विशेष रूप से किसी अन्य प्रकार से आनंद नहीं लेना चाहिए; यही अर्थ है।

थेरा पियांझा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(77): हत्थारोहा-पुट्टा (हाथी-सवार का बेटा)

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (77) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
77. हत्थारोह-पुत्त (हाथी सवार का पुत्र)
बुद्ध युग में सावत्थी में एक हाथी-चालक के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, वे बड़े होते-होते हाथियों को संभालने में निपुण हो गए। एक दिन, नदी किनारे हाथी को प्रशिक्षण देते समय, उन्हें यह विचार आया: 'हाथी को वश में करने का क्या लाभ? इससे बेहतर है स्वयं को वश में करना।' अतः वे परम पूज्य बुद्ध के पास गए, धम्म का मार्ग सुना, उस पर विश्वास किया, भिक्षु बन गए और नैतिक ध्यान के आधार पर अंतर्दृष्टि का अभ्यास किया। और जिस प्रकार एक कुशल हाथी-चालक अपने हुक से हाथियों के उग्र स्वभाव को नियंत्रित करता है, उसी प्रकार उन्होंने ध्यान के द्वारा अपने विचारों को अभ्यास से भटकने नहीं दिया और यह श्लोक कहा:

[77] इदाṃ [12] शुद्ध चित्तमकारि कारिकाṃ॥
येनिच्चकां यथाकामां यथासुखं॥
तदज्जहौ निग्घेसामि योनिसो॥
हत्थिप्पभन्नं विया अंकुसग्गहो' ति.॥ ॥

[77] कभी यह हृदय एक मैदान की तरह विचरण करता था, एक घुमक्कड़
जहाँ भी इच्छा, सनक या आनंद उसे ले जाता था।
आज मैं उस हृदय को पूरी तरह से नियंत्रण में रखूँगा,
जैसे प्रशिक्षक का हुक जंगली हाथी को नियंत्रित करता है। [1]

और इस प्रकार अभ्यास करते हुए, उनकी अंतर्दृष्टि का विस्तार हुआ, और उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) को प्राप्त किया।

[1] यह तालपुट्टा (CCLXII, 1130) को समर्पित दिलचस्प कविता में एक श्लोक बनाता है। 'प्रशिक्षक का हुक,' अधिक सटीक रूप से 'हुक को पकड़ने वाला।'

1.8-7[77] हत्थारोहपुत्तत्तरा के श्लोक पर टीका
'इदं पुरे चित्तमचारी चानिकं' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा हत्थारोहपुत्त का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने भक्तिपूर्ण सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय किया और भगवान बुद्ध के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्होंने गुरु को भिक्षुओं से घिरे हुए अपने मठ से निकलते हुए देखा। वे श्रद्धा से भर गए, उन्हें पुष्प अर्पित किए, पांचों अंगों, अर्थात् माथा, दोनों हथेलियाँ और दोनों

घुटने पृथ्वी को स्पर्श करते हुए (पंचपतिठित) प्रणाम किया, उनकी परिक्रमा की और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे एक हाथी-सवार के परिवार में, सावत्थी में, पुनर्जन्म लिए। बुद्धि की आयु प्राप्त करने पर, उन्होंने हाथी-विज्ञान में निपुणता प्राप्त की। एक दिन जब वे एक हाथी को प्रशिक्षित करवा रहे थे, तब वे नदी के किनारे गए और अपने कर्मों की समृद्धि (हेतुसंपत्ति) से प्रेरित होकर उन्होंने सोचा, "हाथियों को वश में करने का क्या लाभ? इससे बेहतर तो स्वयं को वश में करना है।" उन्होंने भगवान बुद्ध के पास जाकर सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित श्रद्धा से प्रेरित होकर भिक्षु बन गए, अपने आचरण (चरियानुकूला) के अनुरूप मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) का अभ्यास किया, और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म करके वे उसमें दीर्घायु (चिरपरीचय) हो गए। अपने मन को, जो मानसिक अभ्यास से बाहर भाग रहा था, एक चतुर हाथी प्रशिक्षक (हत्थाचरिया) की तरह, जो अपने अंकुश से मदमस्त उत्कृष्ट हाथी को नियंत्रित करता है, अंकुश जैसी सावधानी (पटिसंखाना अंकुसा) से उसने "इदं पुरे चित्तमचारी चारिकं" से शुरू होने वाले श्लोक का उच्चारण किया।

77. वहाँ, idaṃ का अर्थ है: उस मन का कथन किया गया है जिसके बारे में कहा जा रहा है और जो स्वयंसिद्ध अवस्था (अत्तपच्चखता) में है। शुद्ध का अर्थ है पूर्व में, पकड़ने से पहले, अधीन रखने (निग्घ) से पहले। अचारी का अर्थ है इधर-उधर भटकना (विचारी); अस्थिर अवस्था (अनवट्ठितता) के कारण, यह विभिन्न इंद्रिय-विषयों (आरम्मन) में पूरी तरह से लोटपोट (परिभमि) हो गया। चारिकं का अर्थ है इच्छा के अनुसार आचरण (यथाकाम)। इसी कारण उन्होंने कहा:— "येनिच्चकंयत्थाकामं यथासुखं।" तं का अर्थ है वह मन। अज्जा का अर्थ है अभी, वर्तमान में (एतरहि)। निग्हेस्सामि का अर्थ है: मैं इसे पकड़ लूँगा, मैं इसे नम्र (निब्बिसेवन) बना दूँगा। योनिसो का अर्थ है: किसी उपाय (उपाय) के माध्यम से। ठीक कैसे? हत्थिप्पभिन्नं विय अंकुसग्गहो। यही कहा गया है:— "अर्थात मेरा मन, अब से, यदि वह दृश्य रूपों (रूप) आदि जैसे इंद्रिय-विषयों (आरम्मन) में किसी भी प्रकार से आनंद लेना चाहे, तो वह अपनी इच्छा के अनुसार ऐसा करता है; जहाँ कहीं भी और जो कुछ भी उसकी इच्छा हो, जहाँ कहीं भी इंद्रिय सुख हो; जिस भी प्रकार से उसके चारों ओर लंबे समय तक घूमने का आनंद हो; उस मन को मैं अब बुद्धिमानी से (योनिसोमनसिकारा) वश में करूँगा, जैसे एक कुशल हाथी प्रशिक्षक अपने अंकुश से करता है; मैं उसे उल्लंघन (विटिक्कमितुं) का अवसर नहीं दूँगा।" इस प्रकार बोलते हुए, थेरा ने धीरे-धीरे आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व की कल्पना की। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"स्वर्ण रंग वाले आत्मजागृत बुद्ध,

समर्पित दान के योग्य, घिरा हुआ

उनके शिष्यों द्वारा ही वे उनके भीतर से निकले थे

मठ।

परम श्रेष्ठ बुद्ध के दर्शन करने पर,

अंधकार का सर्वज्ञ नाश करने वाला, मैं

वह धर्मपरायण और अच्छे हृदय वाला हो गया और

उन्हें श्रद्धापूर्वक, उलझे हुए (गंठि) अर्पित किए।

फूल।

उस पवित्र भावना के साथ

द्विपदिन्दु के रूप में व्यक्तित्व,

मैंने खुशी-खुशी और प्रसन्न हृदय से भुगतान किया।

तथागत को मेरा एक बार फिर नमन।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब जबकि मैंने अपना उदार दान कर दिया है

फूल का; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

बुद्ध को मेरी श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई भेंट।

आज से इकतालीस युग (कप्पा) पहले,

खत्तिया वंश का एक अत्यंत शक्तिशाली विश्व-राजा

काराना नामक कबीले को संपन्न किया गया था

सात प्रकार के रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

यह वही श्लोक है जो थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करता है।

थेरा हत्तारोहपुत्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(78):मेंदासिरा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (78) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
78. मेण्डसीरा
उनका पुनर्जन्म इसी बुद्ध युग में साकेता में एक कुलीन परिवार में हुआ। उनका सिर मेढ़े के सिर जैसा था, इसलिए उन्हें मेण्डसीरा (= मेढ़े का सिर) उपनाम मिला। जब भगवान (बुद्ध) अंजन वन में साकेता में रह रहे थे, तब मेण्डसीरा ने उन पर विश्वास किया, भिक्षुओं के संघ में प्रवेश किया और शांत और अंतर्दृष्टि का अभ्यास करते हुए, [77] छह गुना अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त की। इस प्रकार वे अपने पूर्व जन्मों को याद कर सकते थे, और उनके विषय में उन्होंने यह श्लोक कहा:

[78] अनेकाजतिसाअसारं सनुधविस्साअ अनिबिसाm॥
तस्स मे दुक्खजातस्स दुक्खक्खन्धो अपरादधो' ति.॥ ॥

[78] मैंने अनेक बार पुनर्जन्म लिया है,

पर कोई सुराग नहीं मिला। [1] देखो! अब मुझसे, जिसने बहुत
कष्ट सहा है, दुख का बोझ हट गया है।

और यही उनकी अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा थी।

[1] पाठ में, 'मुझे नहीं मिला'; टिप्पणी, 'वापस मुड़ने या लुढ़कने का ज्ञान प्राप्त नहीं करना' (निवत्तकन्याणम्) - अर्थात्, पुनर्जन्म का अंतहीन क्रम।

1.8-8[78] मेंडसिरत्थेरा के श्लोक पर टीका
अनेकाजातिसंसार्म् से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मेंडसिरा का है। इसका उद्‌गम क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने पूर्व बुद्धों के प्रति भक्तिपूर्ण कर्म किए, इस और उस जन्म के चक्रों से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्म किए, और आज से इक्यावन युग (कप्पा) पहले एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। वयस्क होने पर उन्होंने सांसारिक सुखों का त्याग कर संसार त्याग दिया और संन्यासी बन गए। हिमवंत में अनेक संन्यासियों के साथ रहते हुए उन्होंने गुरु के दर्शन किए, धार्मिक भाव धारण किया, अपने संन्यासियों से कमल के फूल मंगवाए, गुरु को आदरपूर्वक पुष्प अर्पित किए, अपने शिष्यों को परिश्रम का अभ्यास करने का उपदेश दिया, प्राण त्याग कर दिव्य लोक में पुनर्जन्म लिया और बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते हुए साकेत में एक धनी गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनके सिर की आकृति मेढ़े जैसी होने के कारण उनका नाम (समाञ्ञा) मेढ़सिरा था। जब भगवान साकेत, अंजन वन में निवास कर रहे थे, तब उन्होंने गुरु से संपर्क किया, उचित श्रद्धा से दीक्षा ली, भिक्षु बन गए और शांत मन (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में परिश्रम करते हुए छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बन गए। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

“हिमवंता (हिमालय) से कुछ ही दूरी पर एक पहाड़ी थी,

गौतम नाम से जाना जाता है, विभिन्न प्रकार के पत्तों से ढका हुआ

वनस्पतियों का, एक बड़े समूह का निवास स्थान (आलय)

जीवित प्राणियों की संख्या।

उसके बीच में एक साधु था-

विशेष रूप से बनाया गया मंच। मैं रहता था

मेरे शिष्यों से घिरा हुआ आश्रम।

मेरे बहुत सारे विद्यार्थियों को आने दीजिए!

वे मेरे लिए कमल के फूल लाएँ!

मैं श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाऊंगा

बुद्ध को, जो एक ऐसे ही व्यक्तित्व हैं

मनुष्यों के सम्राट (द्विपदिन्द) के रूप में।

'हाँ' उत्तर देने के बाद, वे ले आए

मुझे कमल के फूल बहुत पसंद हैं। इसी प्रकार

मैंने निमित्तम् का चिन्ह किया है, मैंने विशेष रूप से

उन्होंने उन्हें बुद्ध को अर्पित किया।

फिर मैंने अपने विद्यार्थियों को एक साथ लाया।

और मैंने उन्हें अच्छे से निर्देश दिए। ऐसा मत करो,

वास्तव में, आप सभी लापरवाह हैं; परिश्रम,

आनंद का वाहक है। इस प्रकार

जिन विद्यार्थियों को अच्छी तरह से निर्देश दिए गए थे

बात सुनने के लिए तैयार (वचनक्खमा),

परिश्रम की गुणवत्ता के साथ-साथ,

तब मेरी मृत्यु हो गई।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से मैंने पुष्प अर्पित किए हैं;

मुझे किसी भी बुरी घटना की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

इक्यावन युग (कप्पा) पहले, मैं एक था

राजा, जलुत्तमा (सर्वोत्तम जल),

एक अत्यंत शक्तिशाली विश्व-राजा, जो इन गुणों से संपन्न है

सात प्रकार के रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

अपने पुराने निवास को याद करते हुए, उन्होंने एक छंद कहा।

78. मैं (सन्धाविस्सं) दौड़कर (संधाविस्सं)

अनेक जन्मों का संसार बिना

कुछ भी कमाना (अनिबिसम्);

उस व्यक्ति के दुखों का अंबार (दुक्खा)

जो जन्म से ही दुखी था (दुक्खजाता)

गड़बड़ हो गई थी (अपराद्धो)।

वहाँ अनेकजातिसंसारं का अर्थ है: यह संसार चक्र, जो कई लाख पुनर्जन्मों तक चलता है; क्योंकि यह एक निश्चित समयावधि के लिए है, इसलिए यह शब्द एकवचन में है, पूर्ण संरचना (अच्चंतसंयोग) में। संधाविस्सं का अर्थ है कि मैं कभी-कभी जन्म लेने और मृत्यु के चक्र में घूमता रहा। अनिब्बिसं का अर्थ है: इससे विमुख होने का ज्ञान (ज्ञान) प्राप्त न करना। तस्स मे का अर्थ है: जब मैं इस प्रकार बार-बार पुनर्जन्मों के चक्र में घूम रहा था। दुःखजातस्स का अर्थ है: पुनर्जन्म (जाति) आदि के कारण उत्पन्न दुःख (दुक्खा) का; दूसरे शब्दों में, तीन प्रकार के कष्टों (दुक्खता) के कारण होने वाले दुःख (दुक्खा) का। दुःखक्खन्धो का अर्थ है: कर्म, कुष्ठ और परिणाम के चक्र (वट्ट) के रूप में वर्गीकृत दुःखों का ढेर (दुक्खरासि)। अपराद्धो का अर्थ है: अरहतत्व के सही मार्ग (मग्ग) की प्राप्ति से आरंभ (पत्थाय) होने पर, परिणामस्वरूप (अभिनिब्बत्तिसति) कोई मंथन (परिभत्तो) और मृत्यु (चुट) नहीं होगी। वैकल्पिक रूप से, “अपराद्धो” इस प्रकार पढ़ा जाता है; इसका अर्थ है: अच्छी तरह से काटने की अवस्था के कारण, सफल (समिद्ति) होने के कारण (अपगत) दूर हो गया था; यही अर्थ है। यही श्लोक थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) का प्रकटीकरण (ब्याकरण) था।

थेरा मेण्डसिरा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(79):रक्खिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (79) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
79. रक्खिता
बुद्ध युग में देवदहा नगर में एक शाक्य राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम रक्खिता (संरक्षित) रखा गया। वे उन पाँच सौ युवा सरदारों में से एक थे, जिन्होंने संसार का त्याग कर दिया था और जिन्हें शाक्य और कोलियन राजाओं ने बुद्ध के साथ अंगरक्षक के रूप में भेजा था। बुद्ध ने इन युवकों को कुणालजातक [1] के उपदेश से सोतापना (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त कराई थी - यह उपदेश कामुकता के खतरे से आगाह करता है। इस उपदेश को अपने अभ्यासों से जोड़कर, उन्होंने अंतर्दृष्टि विकसित की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, अपने स्वयं के विकारों के त्याग पर चिंतन करते हुए, [2] उन्होंने अपने उस श्लोक का उच्चारण किया जिसमें उन्होंने अन्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार किया।

[79] सब्बो रागो पहिनो में सब्बो दोसो समुहातो॥
सब्बो मे विगतो मोहो सतीभूतोस्मि निब्बुतोऽ ति॥ ॥

[79] मैंने सभी वासनाओं को त्याग दिया है, और सभी
दुर्भावनाओं को हमेशा के लिए जड़ से उखाड़ फेंका है;
भ्रम पूरी तरह से मुझसे दूर हो गया है;
अब मैं शांत हूँ। भीतर की सारी आग बुझ गई है।

[1] जातक, खंड v, संख्या 536. प्रस्तावना में एस्कॉर्ट देने का वर्णन है।

[2] किलेसा। ऊपर देखें, LXXII., n. 1.

1.8-9 [79] रक्खिताथेरा के श्लोक पर टीका
सब्बो रागो पाहीनो मे से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा रक्खिता का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय में एक पारिवारिक घर में हुआ था। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, एक दिन उन्होंने गुरु से सत्य (धम्म) का उपदेश सुना, श्रद्धावान हुए और उपदेश के ज्ञान के संबंध में स्तुति की। गुरु ने उनकी श्रद्धा (चित्तपसाद) को देखकर भविष्यवाणी की: "यह एक लाख युगों (कप्पा) बाद आत्म-जागृत बुद्ध गौतम के शिष्य रद्धिता बनेंगे।" उस भविष्यवाणी को सुनकर, वे और भी अधिक धार्मिक हो गए, समय-समय पर पुण्य कर्म करते रहे (अपरापरं), और देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते हुए, देवदहा जिले के शाक्य वंश में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम रक्षित था। वे उन पाँच सौ राजकुमारों में से एक थे जिन्हें शाक्य और कोलियन राजाओं ने भगवान बुद्ध के अनुचर दल में शामिल करने के उद्देश्य से भेजा था और वे भिक्षु बन गए थे। परन्तु वे राजराज, पश्चात्ताप के कारण भिक्षु न बनने के कारण, पश्चाताप से ग्रस्त (उक्कन्ठा) हो गए, जब गुरु उन्हें कुनाला झील के तट पर ले गए, जहाँ उन्हें कुनाला की जन्म कथा (जातक) के उपदेश द्वारा स्त्रियों के दोषों का स्पष्टीकरण देकर इंद्रिय सुखों के अभावों को स्पष्ट रूप से समझाया गया (पकसेत्वा), और उन्हें मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) करने का कार्य सौंपा गया। तब, इस व्यक्ति ने भी मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) का अनुसरण करते हुए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर वृद्धि की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"पदुमुत्तरा (बुद्ध) नामक विजेता,"

दुनिया का सबसे बुजुर्ग, बैल

पुरुषों के बीच, मार्ग सिखाया

असंख्य लोगों के लिए अमरता (अमता)

पुरुषों के।

उनके वचन सुनकर, महान

(आसभिं) संदेश (वाचं) कहा गया

(उदीरितं), मैंने अपने हाथों को ऊपर उठाया

हाथ और फिर एकबिंदु वाले हो गए

(एकाग्गो)।

जिस प्रकार सागर मार्ग है

समुद्र, नेरु पर्वत (सिलुक्कायो) है

पहाड़ियों में सबसे ऊँची (पावतो); इसी प्रकार

यहां तक कि, जो लोग आगे बढ़ते हैं (वट्टारे)

उनके मन के प्रभाव को मत अपनाओ

पास में एक छोटे अंश (कला) में जाओ

बुद्ध का ज्ञान।

विधि बनाकर

सत्य (धम्म) पर कायम रहना, बुद्ध,

दयालु ऋषि बीच में बैठ गए

भिक्षुओं के पादरी वर्ग ने ये बातें कहीं

छंद।

जिसके पास ज्ञान है (ñānaṃ)

बुद्ध में घोषित (पकित्तेसी),

विश्व नेता नहीं जाएंगे

एक दुष्ट अस्तित्व (दुग्गति)

एक लाख युग (कप्पा)

उसकी सारी दुष्टता जलकर राख हो जाने के बाद,

एकाग्रचित्त (ekaggo) और अच्छी तरह से हो जाओ

रचित (सुसमाहितो), जिसे इस नाम से जाना जाता है

शोभिता के नाम पर, वह बनेगा

गुरु का शिष्य।

पचास हजार युगों (कप्पा) में,

वहाँ सात शासक हो गए

उच्च प्रतिष्ठा (यसुग्गता), बहुत

मजबूत किस्म के रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "सब्बो रागो" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने अपनी ही त्यागी हुई दुष्टता (किलेसा) पर चिंतन किया।

79. वहाँ, सब्बो रागो का अर्थ है: सभी प्रकार की कामवासनाएँ, जिन्हें इंद्रिय सुखों (कामराग) आदि के लिए वर्गीकृत किया गया है। पाहीनो का अर्थ है: त्याग (पहाना) की श्रेणी में अच्छी तरह से अलग किए गए (समुच्छेद) के कारण त्यागे गए। सब्बो दोसो का अर्थ है: सभी प्रकार की दुर्भावना (ब्यापादो), जो द्वेष आदि के कारण उत्पन्न होने वाली अवस्था (भाव) के कारण अनेक तरीकों से नष्ट हो गई। समुहतो का अर्थ है: सही मार्ग (मार्ग) के माध्यम से अच्छी तरह से समाप्त (समुग्घातितो)। सब्बों मे विगतो मोहो का अर्थ इस प्रकार है: — आठ प्रकार के मोहों (मोह) के चकनाचूर होने के कारण, जो भेद (भेद) के अनुसार विषय-दर-विषय (वत्थु) इस प्रकार वर्गीकृत किए गए हैं: "दुक्खे अनआनं (दु:ख (दुक्खा) में कोई ज्ञान नहीं) और जो अनेक विभाजनों (विभाग) से मिलकर बने हैं, आत्म-दुराचार (किलेसा) के आधार का विस्तृत वर्णन (विभाग) करके, सही मार्ग के माध्यम से, मेरा मोह दूर हो गया। सीतिभूतो' स्मि निब्बुतो का अर्थ है: दुष्टता की प्रज्वलित ऊष्मा (दाराथापरिलाह) के अभाव के कारण शीतल अवस्था (सीतिव्हावं) प्राप्त हो गई, जिससे कोई अवशेष (अनवसेसा) नहीं बचा, और उचित शांति (पतिपसद्दता) की स्थिति के कारण, यहाँ तक कि सही (समददेव) भी। इस प्रकार मूल (या बुनियादी) दुराचार (मूलकिलेसा) का त्याग करके एकाकी अवस्था (एकट्ठता) के कारण आत्म-दुराचार (संकिलेसा) हुआ; इसके बाद भी, दुराचार की आग पूरी तरह बुझ जाने (परिनिब्बान) के कारण मैं सर्वांगीण शांति (परिनिब्बुतो) प्राप्त कर गया; इस प्रकार, उसने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया।

थेरा रक्खिता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(80):उग्गा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (80) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
80. उग्गा
बुद्ध युग में कोसल के उग्गा नगर में एक पार्षद के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम उग्गा रखा गया। जब वे परिपक्व हुए, तो वे उस नगर में आए भगवान (बुद्ध) के प्रवचन सुनने गए, उन पर विश्वास किया, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अंततः अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने पुनर्जन्म के चक्र को त्यागने का निश्चय किया और इस श्लोक में अन्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार किया:

[80] याअ मया पकातं कम्माअ अप्पṃ वा यदि वा बहुṃ॥
सब्बमेतं परिक्खिनं नत्थि दानि पुनब्भावोऽ ति.॥॥

[80] समस्त कर्म मेरे कारण ही हुआ और जन्म हुआ,
चाहे वह महान शक्ति का हो या छोटी,
वह पूर्णतः चकनाचूर होकर समाप्त हो गया।
अब उसका कोई पुनर्जन्म नहीं है।

1.8-10 [80] उग्गथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
यं मया पकातं कम्मं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उग्गा का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म करते हुए, वे आज से इकत्तीस युग (कप्पा) पहले, भगवान सिखि के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म हुए। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, उन्होंने एक दिन भगवान सिखि के दर्शन किए, श्रद्धा से भर गए और उन्हें केतका पुष्प अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने दिव्य लोक में पुनर्जन्म लिया और बार-बार जन्म लेते हुए, उत्तम जन्मों (सुगति) में कभी-कभी (अपरापरं)

भटकते हुए, कोसल राज्य के उगा नामक बाजार नगर (निगमा) में एक धनाढ्य के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का उदय हुआ। उनका नाम भी उगा ही था। ज्ञान प्राप्ति के बाद, वे उस मठ में गए जहाँ भगवान बुद्ध उस बाजार नगर के भद्दाराम (अच्छे मठ) में निवास कर रहे थे, उन्होंने सत्य (धम्म) को सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म करके शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में कहा गया है:—

"विनता नदी के किनारे पर,

लहरदार पत्तियों वाला अंजीर का पेड़ (पिलक्खु)

फल मिला। उसकी तलाश में निकल पड़ा।

पेड़ के पास, संयोगवश मेरी मुलाकात नेता से हो गई।

दुनिया के।

केतका के फूलों को खिलते हुए देखकर,

फिर मैंने उन्हें टहनियों से काट दिया।

और विनम्रतापूर्वक उन्हें बुद्ध सिख धर्म को अर्पित कर दिया।

दुनिया का रिश्तेदार।

हे महान ऋषि, सर्वश्रेष्ठ बुद्ध! मैं आपको प्रणाम करता हूँ।

(अभिपूजेमि) वह ज्ञान (ज्ञान) द्वारा

जिससे आपने अमरता प्राप्त कर ली है

(अमता) मृत्यु रहित मार्ग (अक्कुता)।

आपके ज्ञान को सम्मान देने के बाद-

मैंने लहरों से ढकी पत्तियों वाली चट्टान को देखा

अंजीर के फल। मैंने उचित लाभ प्राप्त किया है, कि

ज्ञान (पञ्ञा); यही फलदायी परिणाम है।

ज्ञान का सम्मान करने का (पूजा)

तेरह युग (कप्पा) पहले, आज से

बारह अत्यंत शक्तिशाली विश्व-

राजा, फलुग्गता (ऊँचे फल),

सात प्रकार के रत्नों से परिपूर्ण।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को उजागर करने के लिए एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने अपने स्वयं के पुनर्जन्मों के चक्र (वट्ट) के विनाश (उपच्छेद) को प्रकाश में लाया।

80. मेरे द्वारा जो भी कर्म किया गया हो

चाहे वह अल्प हो या अधिक, जो कुछ भी था

पूरी तरह से नष्ट हो गया है।

अब कोई नया अस्तित्व नहीं है।

वहाँ, yaṃ mayā pakataṃ kammaṃ का अर्थ है: मेरे द्वारा कर्म के तीन द्वारों से, उत्पत्ति के छह द्वारों (द्वार) से, आठ अनियंत्रित द्वारों (असंयम) से और आठ नियंत्रित द्वारों (संयम) से, अनेक प्रकार से (पकारा), अर्थात् बुरे कर्मों आदि से, साथ ही दान-पुण्य आदि से, उन पुनर्जन्मों (संसार) के चक्रों में जिनका आरंभ अज्ञात है; किए गए, संचित (उपचित) और उत्पन्न (अभिनिब्बत्तित) प्रतिशोधात्मक कर्म। अप्पं वा यदि वा बहुं का अर्थ है: या तो यह अल्प (अप्पा) है, क्योंकि आधारभूत (वत्थु), संकल्प (चेतना), आग्रह (पयोग), भ्रष्टता (किलेसा) आदि अवस्थाओं की दुर्बलता (दुब्बला) है, या फिर यह अधिक (बहुं) है, क्योंकि इनमें बल (बलव) है और ये निरंतर (अभिन्ह) प्रचलन में हैं। सब्बमेतं परिक्खीनं का अर्थ है: यह सारा कर्म भी पूर्णतः नष्ट (परिक्खय) हो गया है, क्योंकि इसने कर्मों के विनाशक, प्रमुख मार्ग (मग्ग) को प्राप्त कर लिया है। वास्तव में, दुराचार (किलेसा) के चक्र (वट्ट) का त्याग (पाहन) करने से, केवल प्रतिफल (विपाक) के चक्र (वट्ट) का ही त्याग होता है। इसी कारण उन्होंने कहा: "नत्थिदानि पुनब्बवो", जिसका अर्थ है: मेरे लिए भविष्य में कोई नया जन्म नहीं है जिसमें पुनर्जन्म लेना हो; यही "सब्बमनेतं" का अर्थ है; यही पाठ (पाठो) भी है, इसका अर्थ यह सब भी है; यही शब्दों का विभाजन (पदविभाग) है।

थेरा उगा के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो गई है।

आठवें अध्याय की टीका पूरी हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(81):समितिगुट्टा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (81) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
81. समितिगुट्टा
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम समितिगुट्टा रखा गया। [1] भगवान (बुद्ध) का उपदेश सुनकर उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और पूर्ण पवित्र आचरण प्राप्त किया। पिछले जन्म के कर्मों के फलस्वरूप उन्हें कुष्ठ रोग हो गया और उनके अंग धीरे-धीरे क्षीण होने लगे। वे आश्रम में रहने लगे। [2] एक दिन धर्म के सेनापति (धम्म) ने बीमार भिक्षुओं का हालचाल जानने के लिए दौरा किया। समितिगुट्टा को देखकर उन्होंने उन्हें भाव-ध्यान का अभ्यास कराया और कहा, 'मेरे मित्र, जहाँ तक पंच तत्वों की प्रक्रिया का संबंध है, सारा दुख भाव से संबंधित है। परन्तु यदि केवल तत्व ही अनुपस्थित हों, तो दुख भी अनुपस्थित

है।' ऐसा कहकर वे आगे बढ़ गए; परन्तु इस पाठ से प्रेरित होकर रोगी ने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और षष्ठम अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) को प्राप्त किया। तब उसे पिछले जन्मों के उन बुरे कर्मों की याद आई, जिनके कारण वह अब रोगग्रस्त हो गया था। और यह बताते हुए कि अब सब कुछ समाप्त हो चुका है, उसने यह श्लोक कहा:

[81] यं मया पकातं पापां पुब्बे अणनासु जतिसु॥
इधेव तं वेदनीयं वत्थु अण्णां न विज्जति' ति.॥ ॥

बीते दिनों में, पिछले जन्मों में मेरे द्वारा जो भी बुराई की गई थी , ठीक इसी क्षण,
उसी के कारण मैं लेटा हुआ हूँ और बहुत कष्ट भोग रहा हूँ -
लेकिन दुख का कोई अन्य कारण अब मौजूद नहीं है!

[1] सामंजस्य या संघ द्वारा संरक्षित।'

[2] उन्हें मौन बुद्ध के बारे में यह कहते हुए दर्शाया गया है, 'मुझे लगता है कि यह कुष्ठ रोगग्रस्त मुंडा हुआ सिर कुछ छुपा रहा है,' और थूकते हुए; फिर, एक घुमक्कड़ के रूप में, वे एक गृहस्थ अनुयायी पर क्रोधित होकर कहते हैं, 'तुम कुष्ठ रोगी बन जाओ!' यह दिलचस्प है कि सावत्थी महाविद्यालय में एक औषधालय (गिलानाटाला) शामिल है , हालांकि यह अपेक्षित था। आगंतुक सारिपुत्त हैं। श्लोक 1054-1056 देखें ।

1.9 नौवां अध्याय

1.9-1[81] समितिगुट्टथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
यं मया पकातं पापं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा समितिगुत्त का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और भगवान विपस्सी के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो उन्हें भगवान बुद्ध के दर्शन हुए, वे श्रद्धावान हो गए और उन्हें प्राकृतिक (जाति) चमेली (सुमन) के फूल आदरपूर्वक अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के कारण, जिस भी जन्म में उनका पुनर्जन्म हुआ, वहाँ वे अपने परिवार, सौंदर्य और परिवार की समृद्धि से अन्य प्राणियों को प्रभावित करते रहे। एक जन्म में, संयोगवश उनकी मुलाकात एक मौन बुद्ध से हुई जो भिक्षा मांगते हुए घूम रहे थे। उन्होंने थूकते हुए कहा, "मुझे लगता है कि यह मुंडा हुआ व्यक्ति कुष्ठ रोगी (कुट्ठी) है; इसीलिए यह अपने आप को उचित रूप से ढक कर घूम रहा है," और वहां से चले गए। इस कर्म के कारण, उन्हें लंबे समय तक नरक में कष्ट भोगना पड़ा और भगवान कस्सपा के समय में उनका पुनर्जन्म हुआ। परिब्बाजक के रूप में एकांतवासी दार्शनिक बनकर, उनकी मुलाकात एक ऐसे भक्त से हुई जो नैतिक उपदेशों और अच्छे आचरण (आचार) से परिपूर्ण था। वे क्रोधित हो गए और उन्हें इस प्रकार अपशब्द कहे: "तुम्हें कुष्ठ रोग हो सकता है।" स्नान घाट पर भी, उन्होंने लोगों द्वारा रखे गए बहुत से स्नान पाउडर (न्हानाचुन्न) को दूषित (दुसेति) कर दिया। उस कर्म के फलस्वरूप उनका पुनर्जन्म नरक में हुआ, जहाँ उन्होंने अनेक वर्षों तक कष्ट भोगे और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम समितिगुत्त था। वयस्क होने पर उन्होंने गुरु के धर्म (धम्म) का उपदेश सुना, उचित श्रद्धा से पवित्र हुए, भिक्षु बन गए और अत्यंत शुद्ध नैतिक आचरण का पालन करते हुए जीवन व्यतीत किया। अपने पूर्व कर्म के फलस्वरूप उन्हें कुष्ठ रोग हो गया। इस कारण उनके शरीर के जो अंग क्षत-विक्षत हो गए थे, उनसे कुष्ठ रोग का द्रव रिसने लगा। उन्हें क्षुद्रों के कक्ष में रहना पड़ा। फिर एक दिन, धर्म के सेनापति बीमारों की खोज में निकले और इधर-उधर रोगियों से पूछते हुए उनकी मुलाकात उस भिक्षु से हुई, जिनसे थेरा ने वेदना पर चिंतन से संबंधित मानसिक अभ्यास के बारे में कहा था: "मित्र! जब तक इंद्रियों के समूह (खन्ध) मौजूद हैं, तब तक केवल पीड़ादायक संवेदना होती है। लेकिन जब इंद्रियों के समूह मौजूद नहीं होते, तब कोई पीड़ा नहीं होती।" यह कहकर वे चले गए। उन्होंने थेरा के निर्देशों का पालन किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित की और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा/आध्यात्मिक शक्ति) का दर्शन किया। अतः, अपदान में यह कहा गया है:—

"जब विपस्सी का जन्म हुआ, तब यह घटना घटी।"

प्रचुर (विपुलो) प्रकाश (आलोक)।

पृथ्वी अपने महासागरों और पहाड़ियों के साथ

भूकंप आया।

पैगंबरों (नेमित्त) ने भविष्यवाणी की (वियाकंसु:—

तब संसार में बुद्ध प्रकट होंगे।

वह सभी जीवित प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ भी है।

यह असंख्य लोगों को ऊपर उठाएगा।

भविष्यवक्ताओं की बातें सुनकर

उन्होंने कहा था कि मैंने श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाई थी।

उनके जन्म के सम्मान में। ऐसा करना

सम्मान को इसके समान मानना

बुद्ध के सम्मान में श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट

जन्म का अस्तित्व ही नहीं था।

अच्छा प्रदर्शन करने के बाद

मैंने अपने मन को धार्मिक रूप से प्रसन्न किया।

श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाने के बाद

बुद्ध के जन्म के सम्मान में, मैंने प्राण त्याग दिए।

वहाँ।

मैंने सभी जीवित प्राणियों से अधिक आनंद लिया, जो-

वे जब भी और जैसे भी थे, दिव्य या मानवीय थे।

मैं उनकी स्थिति पर आया; यही वह स्थिति है

मेरी श्रद्धापूर्वक की गई भेंट का फलदायी परिणाम-

बुद्ध के जन्म के सम्मान में।

मेरी सेवा में दूध पिलाने वाली दाइयाँ थीं;

अनुगा ने मेरी इच्छा और प्रसन्नता का अनुसरण किया।

(चित्तवसा)। उन्होंने साहस किया (सक्कोंति)।

मुझे क्रोधित मत करो (कोपेटुम्); यह है

मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम

के सम्मान में श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई भेंट

(बुद्ध का) जन्म।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, कि मैंने तब श्रद्धापूर्वक

बुद्ध के जन्म के सम्मान में अर्पित की जाने वाली भेंट;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध के सम्मान में अर्पित की जाने वाली श्रद्धापूर्ण भेंट

जन्म।

सुपारीकारिया नाम के चौंतीस शासकों में से

पुरुष, बहुत शक्तिशाली विश्व-राजा (आए)

तीसरे युग (कप्पा) में होने से

अब।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

यद्यपि छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बन जाने पर, उन्होंने अपने पूर्व जन्मों में किए गए उस पाप को याद किया, जो उन्हें वर्तमान में (एतरही) होने वाले रोग (अनुभुय्या) के रूप में प्राप्त हुआ था। उन्होंने अपने द्वारा त्यागे गए दुराचार (किलेसा) पर चिंतन करते हुए एक श्लोक कहा, ताकि वे अब हर तरह से अपने द्वारा त्यागे गए दुराचार की स्थिति को प्रकट कर सकें।

81. यहाँ भी, वह बुरा कर्म जो

यह काम मैंने किया था, पहले मेरे द्वारा।

अन्य पुनर्जन्म, बोधगम्य है

(वेदनीयं); अस्तित्व में नहीं है

एक और वस्तु (वत्थु)।

थेर, पापं का अर्थ है अगुण कर्म (अकुसलं कम्मं)। वास्तव में, पापमय (लामक) महत्व (अत्थ) के कारण इसे पाप कहा जाता है। पुब्बे का अर्थ है; पूर्व में, पहले। अञ्ञासु जातिसु का अर्थ है: इस जन्म के अलावा अन्य जन्म; दूसरों के जन्मों (अत्तभाव, शरीरों) में। वास्तव में, यहाँ यही अर्थ है। --- भले ही इस जन्म (अत्तभाव) में मेरे द्वारा किए गए किसी भी बुरे कर्म जैसा कोई कर्म न हो, फिर भी अब उसका कोई फल (संभव) नहीं है। हालांकि, इस जन्म के अलावा अन्य जन्मों में जो कुछ भी किया गया है, वह मौजूद है। इध'एव तं वेदनीयं का अर्थ है: वास्तव में, यही वह प्रतिफल है जिसे महसूस किया जाना चाहिए, लेकिन इस जन्म (अत्तभाव) में भी; क्यों? वत्थु अञ्ञं न विज्जति का अर्थ है कि कोई अन्य निरंतर (पबन्धो) इंद्रिय समूह (खंड) विद्यमान नहीं है जो उस कर्म (कम्म) के लिए परिपक्वता (विपच्चन) का अवसर (ओकासा) हो। यद्यपि ये इंद्रिय समूह (खंड), सभी प्रकार से आसक्तियों (उपादान) का त्याग (पहीनत्त) कर लेने के कारण, अंतिम चेतना अवस्था (चरिमकचित्तनिरोध) के समाप्त होने के कारण, आसक्ति (अनुपादान) से मुक्त वन अग्नि (जातवेद) के समान विलीन (निरुज्जन्ति) हो जाते हैं और पुनर्मिलन (अप्पतिसंधिका) के योग्य नहीं रह जाते; इस प्रकार उन्होंने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया।

थेरा समितिगुट्टा के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(82):कस्सापा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (82) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
82. कस्सपा
बुद्ध युग में सावत्थी में उत्तर-पश्चिमी मूल के एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ, [1] और उनका नाम कश्यप रखा गया। उनके पिता का निधन उनके बचपन में ही हो गया था और उनकी माता ने उनका पालन-पोषण किया। एक दिन जब उन्होंने जेतवन में भगवान बुद्ध का उपदेश सुना, तो वे वहीं पर परिपक्व परिस्थितियों से प्रेरित होकर प्रथम मार्ग (निर्वाण समाधि) में प्रवेश करने के लिए विवश हो गए। अपनी माता के पास जाकर उन्होंने भिक्षु दीक्षा के लिए उनसे अनुमति मांगी।

अब जब भगवान (बुद्ध) ने परिवार उत्सव के साथ वर्षा ऋतु समाप्त कर ली थी और अपने देश भ्रमण पर जा रहे थे, तो कश्यप उनके साथ जाने के लिए उत्सुक थे। सबसे पहले वे अपनी माता से विदा लेने गए। उनकी माता ने उन्हें यह उपदेश देकर जाने दिया:

[82] येन येन सुभिक्खानि सिवानि अभयानि च॥
तेन पुत्तका गच्छसु मा सोकापहातो भव' ति.॥॥

[82] जहाँ भीख आसानी से मिल जाए,
जहाँ भी सुरक्षित और खतरे से मुक्त हो, वहाँ
जाओ, मेरे लड़के; चिंता से अपना जीवन अस्त-व्यस्त मत करो।

तब थेरा ने सोचा: 'मेरी माता चाहती हैं कि मैं ऐसी जगह जाऊं जहां मैं चिंताओं से मुक्त हो सकूं। तो चलो, मेरे लिए यही उचित है कि मैं पूरी तरह से चिंताओं से मुक्त स्थान प्राप्त करूं।' और प्रयास करते हुए उन्होंने अंतर्दृष्टि स्थापित की और शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इस पर, चूंकि उनकी माता के शब्द ही उन्हें अरहंतत्व प्राप्त करने के लिए प्रेरित करते थे, उन्होंने उसी श्लोक को दोहराया।

[1] उडिच्च-ब्राह्मणस्स। सी एफ जाट., आई. 324; मिलिंडा, ii. 45, एन. 1.

1.9-2 [82] कस्सपट्टेरा के श्लोक पर टिप्पणी

येन येन सुभिक्खानि से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कस्सपा का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक ब्राह्मण परिवार में हुआ और इन्होंने तीनों वेदों के साथ-साथ अन्य ब्राह्मण विद्याओं में भी पारंगत हो गए। एक दिन संयोगवश इन्हें भगवान बुद्ध के दर्शन हुए, ये श्रद्धा से भर गए और इन्हें चमेली (सुमन) के फूल अर्पित किए। ऐसा करते हुए, उन्होंने मुट्ठी भर फूल भगवान बुद्ध के चारों ओर और ऊपर बिखेर दिए। बुद्ध की शक्ति से, फूल सात दिनों तक पुष्प-आसन के रूप में बने रहे। इस चमत्कार को देखकर वे और भी अधिक श्रद्धा से भर गए। समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे एक लाख युगों (कप्पा) तक अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, परन्तु उत्तम अस्तित्व (सुगति) में रहे, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे उत्तर-पश्चिमी मूल (उदिच्चा) के एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में सावत्थी में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम कस्सपा था। जब वे छोटे ही थे, तब उनके पिता का देहांत हो गया। उनकी माता ने उनका पालन-पोषण किया। एक दिन वे जेतवन पहुँचे, वहाँ उन्होंने भगवान बुद्ध के सत्य (धम्म) के उपदेश सुने और बुद्धि से संपन्न होने के कारण वे उसी स्थान पर सोतापन्न (धारा-प्रवर्तक) बन गए। वह अपनी माता के समक्ष गया, उनकी स्वीकृति से भिक्षु बन गया और जब गुरु ने उपवास समाप्त होने के बाद क्षमादान समारोह (पवारेत्वा) आयोजित करके विभिन्न क्षेत्रों के भ्रमण पर प्रस्थान किया, तो वह भी गुरु के साथ जाने की इच्छा से अपनी माता के समक्ष अनुमति मांगने गया। माता ने उसे जाने की अनुमति देते हुए उसे उपदेशात्मक श्लोक सुनाया।

82. हे पुत्र! तुम्हें वहाँ जाना चाहिए

जहां कहीं भीख-भोजन की भीख मांगी जाती है

आसान, सौभाग्यशाली (शिव) और

सुरक्षित (अभय)। पीड़ित न हों।

(पहता) चिंता (सोका) के साथ।

वहाँ, येना येना का अर्थ है कहाँ और कहाँ। यह शब्दार्थ वास्तव में स्थानवाचक (भूमत्थे) है; दिशा के जिस भी भाग में; यही अर्थ है। सुभिक्खानि का अर्थ है: प्रचुर मात्रा में भिक्षा-भोजन (पिंडानि) जो आसानी से उपलब्ध हो; शिवानि का अर्थ है सुरक्षित (खेमा) स्वस्थ (अरोग) स्थान। अभयानि का अर्थ है: ऐसे स्थान जो लुटेरों के खतरे आदि से मुक्त हों, जबकि रोग, आपदा और अकाल जैसी विपत्तियों के लिए दो शब्द एक ही हैं, अर्थात्: "सुभिक्खानि (आसानी से भीख में प्राप्त होने वाला भोजन), शिवानि (भाग्यशाली भोजन)।" तेना का अर्थ है: वहाँ; दिशा के उस और उस भाग में; यही अर्थ है। पुत्तक का अर्थ है: करुणा से प्रेरित होकर उसने उसे इस प्रकार संबोधित किया। मा का अर्थ निषेध के अर्थ में एक अविकारी कण (निपात) है। सोकापहतो का अर्थ है: उक्त गुणों से रहित राज्यों में जाकर, भव का अर्थ है; अकाल आदि जैसे खतरों से उत्पन्न चिंता से आप पीड़ित न हों; यही अर्थ है। अपनी माता की बात सुनकर थेरा ऊर्जावान (उस्साहजातो) हो गए और मन ही मन कहने लगे, "मेरी माता चाहती हैं (आसीसति) कि मैं चिंता मुक्त (सोकरहित) स्थानों पर जाऊं; आओ! मेरे लिए उस स्थान पर पहुंचना उचित है जहां चिंता का अभाव हो, बल्कि वह सर्वथा (अचन्तं) हो।" उन्होंने स्वयं को आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में लगा दिया और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—
-

"मंत्रों का पाठ करने वाला और उन्हें याद करने वाला

मैं, जो तीनों में निपुण था

वेदों के अनुसार, मैंने स्वयं को खुले में खड़ा रखा।

हवा चल रही थी और मैंने दुनिया के नेता को देखा,

महान ऋषि, शेर के समान

जंगल में घूमना, जैसा कि

टाइगर किंग कांपने से मुक्त, जैसे

मारंग प्रजाति के हाथी को

तीन स्थानों पर गड्ढा फट गया

(तिधापभिन्न).

फूलों को इकट्ठा करने के बाद

सेरेयाका पेड़, मैंने उन्हें ऊपर फेंक दिया

आकाश। उन्होंने चारों ओर से घेर लिया।

बुद्ध की शक्ति द्वारा आदर।

महान नायक, सर्वज्ञानी नेता

दुनिया के बारे में उन्होंने अपना संकल्प लिया;

फूलों की चादरें नीचे तक फैली हुई थीं

हर तरफ पुरुषों के बीच श्रेष्ठता का प्रतीक।

उसके बाद वह फूल आवरण (कां-

कुका), बाहर की ओर मुख करके (बहिमुख)

भीतर डंठलों के साथ (antovanta) बनाया गया

स्वयं सात लोगों के लिए एक छत (छदाना)

कुछ दिनों बाद वह गायब हो गई।

यह भी देखने के बाद अगली कड़ी।

आश्चर्य, विचित्र और रोंगटे खड़े कर देने वाला,

मेरा मन श्रद्धापूर्वक प्रसन्न था

बुद्ध, अच्छे वचन बोलने वाले (सुगता)

और विश्व के नेता।

उस मनभावन पवित्रता के कारण

मन, और उज्ज्वल आधार (सुक्कमूल) द्वारा प्रेरित

मुझे किसी बुराई में जन्म लेने की आवश्यकता नहीं थी।

एक लाख युगों तक अस्तित्व

(कप्पा)।

पंद्रह हजार युगों (कप्पा) में,

पच्चीस अत्यंत शक्तिशाली विश्व राजा

वे वीतमला नाम से जाने जाते थे।

शुद्ध।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने उत्तर में (पच्चुदहसी) उसी श्लोक का पाठ किया और मन ही मन कहा: "मेरी माता का यह शब्द भी (मेरे) अरहंत पद की प्राप्ति के लिए प्रेरणा (अंकुसम्) बन गया था।"

थेरा कस्सपा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(83):सिहा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (83) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
83. सीहा
बुद्ध युग में मल्ल देश में एक राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम सीहा (सिंह) रखा गया। भगवान (बुद्ध) को देखकर वे उनकी ओर आकर्षित हुए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। भगवान (बुद्ध) ने उनके मन की प्रवृत्ति को भांप लिया और उन्हें धम्म का मार्ग सिखाया, जिससे वे विश्वास करके भिक्षु बन गए और अभ्यास करते हुए वन में रहने लगे। उनके विचार अनेक वस्तुओं से विचलित होते रहे और वे एकाग्र नहीं हो सके। [1] भगवान (बुद्ध) ने यह देखकर उनके ऊपर खड़े होकर यह श्लोक कहा:

[83] सिहप्पामत्ता विहार रत्तीदिवामतंदितो॥
भवेहि कुसलं धम्मं जहा सिघां समुस्संयन्ति॥ ॥

[83] हे सिहा! दृढ़ संकल्पित रहो;
दिन-रात बिना विचलित हुए।

अपने हृदय में अच्छे मार्ग (धम्म) को जागृत होने दो।
जन्म के उस ढेर सारे मैल का शीघ्र त्याग करो। [2]

इसके द्वारा थेरा ने अंतर्दृष्टि का विस्तार किया और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। और, ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार करते हुए, उन्होंने श्लोक को दोहराया।

[1] शाब्दिक रूप से, 'उसके लिए एकाग्रता नहीं आती'; सामान्य मनोवैज्ञानिक शब्द, जिसके हम अपने 'एकाग्रता' में केवल अनुमान लगा सकते हैं। तुलना करें। संकलन, पृष्ठ 237, 240 f.

[2] समुस्सायो, शाब्दिक अर्थ, 'संचय।' व्याख्या = 'व्यक्तिगत अस्तित्व से बंधे हुए जुनून।' शरीर या संपूर्ण जीवित समूह के लिए प्रयुक्त। तुलना करें बहनें, श्लोक 22।

1.9-3[83] सीताथेरा के श्लोक पर टीका
सीहाप्पमतो विहार से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सीहा का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि पूर्व बुद्धों की समर्पित सेवा करने के बाद, अठारह सौ युग (कप्पा) पहले, भगवान अथदस्सी के समय, चंदाभागा नदी के तट पर, मनुष्य के सिर वाले पक्षी (किन्नर) के गर्भ में उनका पुनर्जन्म हुआ। पुष्पों से पोषित (भक्खे) और पुष्पों में निवास करते हुए, उन्होंने संयोगवश भगवान अथदस्सी को आकाश में विचरण करते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें श्रद्धापूर्वक भेंट (पूजेतुं) अर्पित करने की इच्छा से, हाथ जोड़कर खड़े हो गए। भगवान बुद्ध ने जब उनका इरादा जान लिया (अज्जासय), तो वे आकाश से अवतरित हुए और एक वृक्ष के चरणों में पालथी मारकर बैठ गए। मनुष्य के मुख वाले पक्षी (किन्नर) ने चंदन के सार को पीसकर (गम्हंसित्वा) उन्हें चंदन की सुगंध और पुष्प अर्पित किए, उनका प्रणाम किया, उनकी परिक्रमा की और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच जन्म-मृत्यु के चक्र में विचरण करते रहे और मल्ल वंश में पुनर्जन्म लेकर इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम सीहा था। भगवान बुद्ध के दर्शन से वे श्रद्धावान हो गए, उनका प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। गुरु ने उनकी प्रवृत्ति को देखकर उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। उन्होंने सत्य (धम्म) सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) में लग गए और वन में रहने लगे। उनका मन विभिन्न प्रकार के इंद्रिय-विषयों (आरम्मन) में विचरण करता रहा; उनमें एकाग्रता (एकग्ग) नहीं थी; वे अपने स्वयं के हित (अत्थ) को भी पूरा नहीं कर सके। यह देखकर गुरु आकाश में खड़े हो गए और एक श्लोक के माध्यम से उन्हें उपदेश दिया:

83. हे सीहा! तुम्हें लगन से जीवन यापन करना चाहिए।

मेहनती होने के कारण (atandito) दिन और

रात। अच्छे कर्म करो; छुटकारा पाओ

जटिल (समुस्सया) का शीघ्रता से।

श्लोक के अंत में, उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में उत्तरोत्तर वृद्धि की और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—--

“चंदाभागा नदी के तट पर,

फिर मैं मानव सिर वाला पक्षी बन गया।

(किन्नारा)। मैंने फूलों से अपना पेट भरा।

और वे भी फूलों के बीच रहते थे।

हे पूज्य अत्थादस्सी,

दुनिया में सबसे उम्रदराज, बैल

पुरुष लकड़ी के ऊपर (विपिना) चले गए।

हंस-संप्रभु के समान

आकाश।

'हे शुद्ध नस्ल के (आजञ्ञा) व्यक्ति!

मेरी श्रद्धा आपके साथ है! आपका मन

अच्छी तरह से शुद्ध किया गया है। आपके चेहरे का रंग

अत्यंत सुखद (पसन्ना) है;

आपकी मुखीय नियंत्रण इंद्रिय है

स्पष्ट रूप से शांत।

व्यापक रूप से बुद्धिमान (भूरिपञ्ञो),

सुमेधासो (सुमेधासो) जो अच्छी तरह से बुद्धिमान है, जो नीचे उतरा है

आकाश से, उन्होंने अपना दोहरा वस्त्र फैलाया

और वे क्रॉस-संसद में बैठ गए (उपविसि)।

टांगों वाला।

अपने साथ चिपकाकर ले जाना (विलीना)

चंदन की लकड़ी, मैं उपस्थिति में गया

विजेता; धर्मपरायण और नेक-

मैंने पूरे मन से अपनी भेंट चढ़ाई (अभिरोपयिं)

बुद्ध को।

स्वयंजागृत व्यक्ति को श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद

बुद्ध, जगत के सबसे वृद्ध, बैल

पुरुषों के बीच, मैंने आनंद (पामोज्जा) से जागृत किया था

मैंने उठकर उत्तर दिशा की ओर मुख करके प्रस्थान किया।

दिशा।

यह अठारह सौ युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की

चंदन। मुझे कोई बुराई याद नहीं है।

अस्तित्व (दुग्गति); यही फलदायी है

बुद्ध को अर्पित की गई मेरी श्रद्धा का परिणाम।

चौदह सौ युग (कप्पा) पहले, से

अब, वे तीन बहुत मजबूत थे

विश्व के राजा, जिन्हें रोहिणी के नाम से जाना जाता है।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी: :P

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

यह श्लोक, जो उपदेश के रूप में बोला गया था, इस प्रकार प्रारंभ होता है: "सीहा'प्पमत्तो विहार।" यहाँ, सीहा का अर्थ है उस थेरा को संबोधित किया जाने वाला संबोधन (आलपना)। अप्पमत्तो विहार का अर्थ है: आपको चारों आसनों (इरियापथ) में पूर्ण ध्यान (संपजान) और सती (सती) के साथ रहना चाहिए, लापरवाही से मुक्त होकर, अन्यमनस्कता (सती-अविप्पवास) से दूर रहकर। अब, उस लगनपूर्ण निवास और उसके फल को संक्षेप में दर्शाने के लिए "रत्तिन्दिव" आदि जैसे कथन किए गए हैं। इसका अर्थ है:— रात्रि और दिन दोनों समय, आपको शांत स्वभाव, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि और दिव्य सत्य के अच्छे कर्मों को विकसित (भावेहि), जागृत (उप्पादेहि) और बढ़ाना (वड्ढेहि) चाहिए, परिश्रमी (अतन्दितो) होकर, आलसी न होकर, और चार प्रकार के सही परिश्रम (सम्मप्पधान) द्वारा पूर्णतः ऊर्जावान (आरद्धवीरियो) होकर, इस प्रकार:— "चलते-फिरते (चंकम) और बैठे रहने से, उसका मन सर्वत्र शुद्ध और अवरोधों (आवरणीय) की स्थिति (धम्म) से मुक्त हो जाता है; इस प्रकार विकसित होकर, जह सीघं समुस्सयं का अर्थ है: "आपको अपने जटिल कर्मों का त्याग करना चाहिए।" (समुस्सया) सर्वप्रथम, अब शीघ्र ही, बिना विलंब किए, अपने देह-अस्तित्व (अत्तभाव) से छुटकारा पाओ (पहाना), उस कामुक इच्छा (चंदरगा) से जो इसका बंधन (पटिबद्ध) है; ऐसा करने के बाद, आप अंतिम (चरिमाक) चेतन अवस्था (चित्त) के विनाश (निरोध) द्वारा इससे पूर्णतः छुटकारा पा लेंगे। (हालांकि, अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, थेरा ने उत्तर में (पच्चुदहासि) उसी श्लोक का पाठ किया, जिसमें उन्होंने अपनी अञ्ञा (अरहंतत्व) का खुलासा किया।

थेरा सीहा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(84):नीता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (84) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक

84. नीता
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम नीत रखा गया। बड़े होकर उन्होंने सोचा, 'ये शाक्य भिक्षु बहुत भाग्यशाली हैं कि इन्हें सभी आवश्यक वस्तुएँ भली-भांति उपलब्ध हैं। भिक्षु संघ का जीवन सुखमय है।' अतः उन्होंने सुख भोगने के लिए इसमें प्रवेश किया, व्यायाम पर कम ध्यान दिया, भरपेट खाया, दिनभर व्यर्थ की बातें कीं और रातभर सोते रहे। परन्तु भगवान (बुद्ध) ने उनके पूर्वज कर्मों की परिपक्वता को भांप लिया और उन्हें यह श्लोक उपदेशात्मक रूप से दिया:

[84] सब्बरत्तींm [13] सुपित्वना संगानिके रतो,॥
कुदस्सु1 नाम दुम्मेधो दुक्खासन्तां करिस्सति' ति.॥ ॥

[84] तुम सारी रात सोने में लीन रहते हो,
जो दिन को बकबक करने वाली भीड़ के बीच बिताना पसंद करते हो: -
क्या तुम कभी इस तरह,
बेचारे मूर्ख, इसका अंत करोगे? [1]

भगवान (बुद्ध) के वचनों से विचलित होकर, उन्होंने अंतर्दृष्टि विकसित करने का निश्चय किया और कुछ ही समय बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। तब उन्होंने इस श्लोक को दोहराते हुए अन्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[1] दुम्मेधा दुक्खस्स'अंतां करिस्स्सिति पि पालि। साइ.

1.9-4 [84] नीतत्थर के श्लोक पर टीका
सब्बरत्तिं सुपित्वाना से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा नीत का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि यह श्लोक भगवान पद्ममुत्तरा के समय के एक ब्राह्मण सुनंदा का था। उन्होंने सैकड़ों ब्राह्मणों को मंत्रों का पाठ सिखाते हुए सोम अर्पण (वाजपेय्य) नामक एक पवित्र यज्ञ (यज्ञं यजी) किया। भगवान बुद्ध ने उस ब्राह्मण के प्रति सहानुभूति दिखाते हुए यज्ञ स्थल पर जाकर आकाश में चक्कर लगाए। गुरु के दर्शन करते ही ब्राह्मण का मन श्रद्धा से भर गया। उन्होंने अपने शिष्यों से फूल मंगवाए और उन्हें आकाश में प्रक्षेपित करके गुरु को आदरपूर्वक अर्पित किया। बुद्ध की शक्ति से वह स्थान और पूरा शहर फूलों की पंखुड़ियों की छत (पुप्पपता) जैसी किसी चीज से ढक गया। भीड़ ने गुरु के प्रति अपार उत्साह और आनंद का अनुभव किया। इसी पुण्य कर्म के फलस्वरूप ब्राह्मण सुनंदा ने जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते हुए देवताओं और मनुष्यों के बीच जीवन व्यतीत किया और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे एक ब्राह्मण के पुत्र बने। उनका नाम नीत था। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर उन्होंने मन ही मन कहा, "ये शाक्यवंशी भिक्षु सुखी और सहज आचरण वाले हैं; उत्तम भोजन करके वे वायु से सुरक्षित मठों में रहते हैं; इनके बीच भिक्षु बनकर सुखमय जीवन व्यतीत किया जा सकता है।" भिक्षु बनते ही, गुरु की उपस्थिति में सुख (सुखाभिकासा) की लालसा के कारण, उन्होंने मानसिक साधना (कम्मट्ठान) में लग गए, कुछ दिनों तक उसमें लीन रहे, फिर उसे त्याग दिया, अपनी इच्छा अनुसार भरपेट भोजन (उदरावादेहक) किया, दिनभर व्यर्थों (तिराच्चानकथा) में मग्न रहे और समाज में आनंद लेते रहे; रात्रि में भी आलस्य (थिना) और ऊंघ (मिद्धा) से ग्रस्त होकर वे पूरी रात सोते रहे। उनके सर्वांगीण व्यवहार को देखकर, गुरु ने उन्हें उपदेश देते हुए एक श्लोक कहा:

84. "पूरी रात सोने के बाद और

समाज में आनंदित होने के कारण

दिन के समय, कब (कुडस्सु) एक

मूर्ख व्यक्ति दुख का अंत करता है

(दुख)?

वहाँ, सब्बरत्तिं का अर्थ है पूरी रात। सुपित्वाना का अर्थ है सोना; पूरी रात के तीनों पहरों में बिना जागने (अनुयुंजित्वा) का अभ्यास किए सो जाना, जैसा कि कहा गया है: — "वह रात के पहले पहर में बैठकर और इधर-उधर चलकर अपने मन को सभी बाधाओं (आवरणीय) से पूरी तरह शुद्ध करता है," इत्यादि; यही अर्थ है। दिवा का अर्थ है: दिन में; दिन का पूरा भाग; यही अर्थ है। संगनिकेहि का अर्थ है: शारीरिक शक्ति से भरपूर व्यक्तियों के साथ बैठकर, जो विचित्र कहानियाँ सुनाते हैं, संगनिक (समाज) का निर्माण होता है; रतो का अर्थ

है: उसमें विशेष रूप से आनंदित होना; वहाँ की अविभाज्य इच्छा को "संगनिके रतो (समाज में आनंदित होना)" कहा गया है। इसका एक पाठ "सहगनिकरतो" भी है। कुदस्सु नाम का अर्थ है; कब, अर्थात् (कुदा नाम)। अस्सु का अर्थ है: केवल एक अविकारी कण (निपात); किस समय, अर्थात्; यही अर्थ है। दुम्मेधो का अर्थ है मूर्ख (निप्पञ्ञो)। दुक्खस का अर्थ है बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों का कष्ट (वट्ट)। अंतं का अर्थ है: सर्वांगीण अंत। कब, अर्थात्, वह अपरिपक्वता (अनुप्पाद) को पूर्णतः (अक्कन्तं) समाप्त करेगा; इस प्रकार दुःख (दुक्खा) का अंत होना संभव नहीं है; यही अर्थ है। "दुम्मेधा दुक्खसन्तं करिस्सति (हे मूर्ख! क्या तुम दुःख (दुक्खा) का अंत करोगे?"; यही पाठ है।

जब गुरु ने इस श्लोक का इस प्रकार उच्चारण किया, तो थेरा को पश्चाताप हुआ, उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का मार्ग अपनाया और कुछ ही समय बाद अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में कहा गया है:—-

"जादू-टोने में माहिर एक ब्राह्मण"

(मंतपारागु), एक समर्पित पाठक

उदारता (याकायोगो) के लिए, जिसे जाना जाता है

सुनंदा के नाम ने पवित्र स्थान को विख्यात कर दिया।

वाजपेय्य का बलिदान।

विश्व-ज्ञाता (लोकविदु) पदुमुत्तर (बुद्ध),

सबसे दयालु संत (इसी),

भीड़ के प्रति करुणा से भरा हुआ, चला

फिर आकाश में इधर-उधर।

आत्मजागृत व्यक्ति इधर-उधर चलता रहा

बुद्ध, सर्वज्ञ, नेता

संसार, इच्छा रहित (निरुपधि)

व्यक्तित्व असीम में व्याप्त था

उनके साथ असंख्य जीव-जंतु

प्रिय दयालुपना।

फूलों को डंठल से तोड़कर,

मंत्रों (मंत्रों) में विशेषज्ञ ब्राह्मण

उन्होंने अपने सभी छात्रों को एक साथ लाया और बनाया

उन्हें फूल फेंकते हुए।

जहां तक शहर का इलाका था, वहां

फिर वह फूलों की छत बन गई, जो

बुद्ध के कारण सात दिनों तक रुके रहे।

शक्ति।

उसी उज्ज्वल आधार के कारण

(सुक्कमूला) उसने समृद्धि का आनंद लिया;

सभी विकारों को अच्छी तरह से जान लें

(आसव) वह समुद्र पार चला गया था

संसार में आसक्ति।

ग्यारह सौ युग (कप्पा) पहले,

वहाँ पैंतीस बहुत शक्तिशाली विश्व-

योद्धा वंश (खत्तिया) के राजा; वे

वे अंबारंसा नाम से जाने जाते थे।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने उत्तर में उसी श्लोक का पाठ किया, जिसमें उनकी अञ्ञा (प्राप्ति) का खुलासा किया गया था।

थेरा नीता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(85): सुनगा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (85) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
85. सुनागा

बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म नालक गाँव में एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में हुआ और वे सारिपुत्त के संसार त्यागने (भिक्षुत्व ग्रहण करने) से पहले उनके मित्र थे। धर्मप्रधान (धम्म) के उपदेश सुनकर, वे भी अंतर्दृष्टि के तल पर स्थापित होकर संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करने) चले गए। [1] शीघ्र ही उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इसके बाद, भिक्षुओं को शिक्षा देते हुए, उन्होंने इस श्लोक में ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[85] चित्तनिमित्तस्स कोविदो पविवेकरसां विजानिया,॥
झायं निपको पतिस्सतो अधिगच्छेया सुखं निरामिसंति॥॥

[85] कल्पना की गई छवि को समझने में विशेषज्ञ, [2] अनासक्त जीवन के रहस्य में पारंगत,
ध्यान में अभ्यासी, मन में स्पष्ट: -
वह शुद्ध परमानंद को प्राप्त कर सकता है।

[1] दस्सानभूमियां पतिथितो, सामान्य वाक्यांशों से एक विचलन।

[2] ज्ञान के आत्म-सम्मोहन में। संकलन देखें, पृष्ठ 54।

1.9-5 [85] सुनागत्थेरा के श्लोक पर टीका
चित्तनिमित्तस्स कोविदो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुनागा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए, और आज से इकत्तीस युग (कप्पा) पहले भगवान सिख के समय में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। वयस्क होने पर उन्होंने तीनों वेदों में निपुणता प्राप्त की और एक आश्रम में रहकर तीन हजार ब्राह्मणों को मंत्रों का पाठ सिखाया। फिर एक दिन जब वे गुरु के दर्शन का चिंतन करते हुए हस्तरेखा शास्त्र (लक्खना) का अभ्यास कर रहे थे, तब उनके भीतर बुद्ध ज्ञान (ज्ञान) से संबंधित अत्यंत सुखद श्रद्धा (पासादो) उत्पन्न हुई, और उन्होंने कहा: "इन लक्षणों (लक्खना) से युक्त होकर, वे बुद्ध बनेंगे, जो अनंत ज्ञान के साथ अनंत विजेता होंगे।" उस श्रद्धा के कारण उनका जन्म दिव्य लोक में हुआ, और वे नालक गाँव में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में बार-बार जन्म लेते रहे, तभी बुद्ध प्रकट हुए। उनका नाम सुनागा था। धर्म के सेनापति के गृहस्थ सहयोगी होने के नाते, वे थेरा के समक्ष गए, धर्म को सुना, अंतर्दृष्टि (दस्सनाभूमि) के आधार पर स्थापित हुए, भिक्षु बने, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के मार्ग पर चले और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः, ऐसा हुआ है। अपदान में कहा गया है:—-

"हिमवंता (हिमालय) से कुछ ही दूरी पर, एक स्थान था।

वासभा नामक एक पहाड़ी, जो तलहटी में स्थित है।

जिसके अंतर्गत एक आश्रम बनाया गया था।

एक ब्राह्मण के रूप में, मैंने तीन लोगों को शिक्षा दी।

मैंने जिन हजार विद्यार्थियों को एक साथ लाया

और एक तरफ बैठ गया।

एक तरफ बैठ जाने के बाद, मैं,

मंत्रों में निपुण ब्राह्मण

इससे मेरा मन धार्मिक रूप से प्रसन्न हो गया जब मैंने ऐसा किया

मेरे ज्ञान (वेद) की खोज के संबंध में

बुद्ध, अपने ज्ञान (ज्ञान) में।

मेरे मन को धार्मिक रूप से प्रसन्न करके

वहाँ मैं एक पत्ते पर पालथी मारकर बैठ गया।

वह जगह फैल गई, जहां मेरी मृत्यु हुई।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, कि मैंने तब प्रति-

मुझे कुछ याद नहीं है।

बुरा अस्तित्व; यही फलदायी है

ज्ञान की प्राप्ति का परिणाम।

सत्ताईस युग (कप्पा) पहले, वहाँ

वह राजा सिरिधारा थे, जो विश्व के एक अत्यंत शक्तिशाली शासक थे।

सात रत्नों से सुशोभित राजा।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने एक श्लोक का पाठ किया, जिसमें उन्होंने अपनी अज्ञा (प्राप्ति) को प्रकट किया, और भिक्षुओं को सत्य (धम्म) का उपदेश देने का संकेत दिया।

85. जो व्यक्ति विशिष्ट गुणों में चतुर होता है

मन के संकेत, आने के बाद

एकांत के स्वाद को स्पष्ट रूप से जानने के लिए,

ध्यानमग्न होना (jhāyaṃ), परिपक्व होना (nipako)

और उचित रूप से सचेत (patissato), प्राप्त करेगा

इंद्रिय-सुख से मुक्त सुख

(निरामिसा).

वहाँ, चित्तनिमित्तस्स कोविदो का अर्थ है: मन के विकास (भावना) में निमित्त चिन्ह को ग्रहण करने में चतुर; मन के निमित्त चिन्ह को ग्रहण करने में निपुण, जिसमें इस प्रकार की युक्ति (योग्या) शामिल है: — "इस समय मन को ऊपर उठाना चाहिए; इस समय मन को प्रसन्न करना चाहिए; इस समय समभाव का विशेष अभ्यास करना चाहिए (अज्जुपेक्खितब्बं)," इस प्रकार ऊपर उठाना, आदि। पाविवेकरसं विजानिया का अर्थ है: जिसने शरीर के एकांत का अच्छा विकास किया हो, उसके मन के एकांत के रस को भली-भांति समझ लिया हो; एकांत के सुख का आनंद लिया हो; यही अर्थ है। वास्तव में, यह कथन इस प्रकार है: — "पाविवेकरसं पित्वा (एकांत का रस पीकर)।" झायं का अर्थ है: ध्यान में प्रवेश करना, सर्वप्रथम इंद्रिय-विषय (आरम्मन) पर चिंतन (उपनिझान) करना और बाद में विशिष्ट चिह्न (लक्खन) पर चिंतन (पच्चा) करना। निपाको का अर्थ है: मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठन) को बनाए रखने में कुशल (परिहरन)। पतिसत्तो का अर्थ है: सती (उपठित) जागरूकता। अधिगच्छेय्या सुखं निरामिसं का अर्थ है:— इंद्रिय सुखों (काम) और जन्म-जन्म के चक्र (वट्ट) के बैत (आमिसा) से मुक्त होकर, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के ध्यान में लीन होकर, सचेत (सतो) और विचारशील (संपजानो) बनकर, मन की एकांतता के आनंद में स्थिर होकर, जो शांत स्वभाव (समथा) आदि के विशिष्ट लक्षण (निमित्त) से प्राप्त हुआ है, वह निर्वाण के निब्बान सुख से भी बढ़कर फलदायी आनंद (फलसुख) को प्राप्त कर सकता है।

थेरा सुनागा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(86):नागिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (86) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
86. नागिता
उनका पुनर्जन्म इसी बुद्ध युग में कपिलवस्तु में एक शाक्य राजा के परिवार में हुआ और उनका नाम नागिता रखा गया। जब भगवान (बुद्ध) उस स्थान पर निवास कर रहे थे, तब उन्होंने मधुरता का उपदेश दिया। [1] इससे नागिता भिक्षु बनने के लिए प्रेरित हुए और उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। तब, भगवान (बुद्ध) की शिक्षा की सत्यता और धम्म के प्रभावी मार्गदर्शन से रोमांचित होकर, उन्होंने यह स्तुतिगान किया:

[86] इतो बहिद्धा पुथु अण्णवादिनां॥
मग्गो न निब्बानागमो यथा अयं,॥
इतिस्सु संघं भगवानुससति॥
सत्था सयं पणितलेव दस्सयां' ति.॥ ॥

[86] हमारे भिक्षु संघ के बाहर कई अन्य लोग हैं, जो सिखाते हैं, लेकिन
निर्वाण की ओर ले जाने वाला मार्ग कभी भी इस मार्ग जैसा नहीं होता।
लेकिन हम, परम पूज्य (बुद्ध), स्वयं भगवान (बुद्ध)
ही हथेली फैलाकर निर्देश देते हैं। [2]

[1] मज्झिमा निकाय, 18वां सूत्र, जिसकी रूपरेखा (कपिलवत्थु में) भगवान (बुद्ध) द्वारा दी गई है और महा-कच्चना (देखें भजन 289) द्वारा अरहंत (प्रबुद्ध) के आत्म-नियंत्रण पर व्याख्या की गई है। यह स्पष्ट रूप से कस्सपा वंश का भिक्षु (भिक्षु) नहीं है (संवाद, i. 193 ff.; अंग. iii. 81, 341; iv. 341)। शायद बाद वाले को भेद करने के लिए एन. कस्सपा के नाम से जाना जाता था।

Morrà = Mora. OED: इटली में एक लोकप्रिय खेल जिसमें एक खिलाड़ी दूसरे खिलाड़ी द्वारा एक साथ उठाई गई उंगलियों की संख्या का अनुमान लगाता है। यूरोपीय लोगों द्वारा चीन में इसी तरह के एक खेल के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है।

[2] टीका में लिखा है: 'हमारे प्रभु (बुद्ध) सायम्' - यानी सायंभू ज्ञानेन ञातम्, ज्ञान द्वारा 'स्वयंशिक्षित' ज्ञाता, या 'स्वयं' - महान करुणा से प्रेरित होकर, अपने ही सिद्धांत का उपदेश देते हैं, जैसे कोई खेल खेलने के लिए (? विलासपत्तिया) अपनी हथेली में आमलक का बीज दिखाता है। क्या यहाँ मोर्रा जैसे किसी प्राचीन खेल का उल्लेख है?

1.9-6[86] नागिरत्थेरा के श्लोक पर टीका

इतो बहिद्धा पुथु अञ्ञवा-दीनं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा नागिता का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि ये बुद्ध पद्ममुत्तरा के समय में नारद नामक एक ब्राह्मण थे। एक दिन अपने मालक में बैठे हुए, उन्होंने बुद्ध को भिक्षुओं के समूह में सबसे आगे जाते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और तीन श्लोकों में उनकी स्तुति की। इस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे, और अंत में कपिलवस्तु नगर में शाक्य परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ, जब बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम नागिता था। जब भगवान कपिलवस्तु में निवास कर रहे थे, तब संयोगवश उन्होंने मधुपिंडिका सूत्र सुना, उचित श्रद्धा से प्रेरित होकर भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर वृद्धि की और अर्हंतत्व प्राप्त किया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"अपने विशाल (विसाला) में बैठा हुआ

गोलाकार घेरे में, मैंने नेता को देखा

संसार का, रोगों (आसव) से मुक्त,

जोश से भरपूर (बालापट्टा) अग्रणी

भिक्षुओं का पुरोहित वर्ग।

एक लाख उच्च अरहंत

तीन जादुई शक्तियों से युक्त-

सुपर-साइंस (विज्जा) और छह को मोड़ें

एक प्रकार का उच्च ज्ञान घिरा हुआ

स्वयंजागृत बुद्ध। देखकर

वह कौन होगा जो श्रद्धापूर्वक प्रसन्न न हो?

इस दुनिया में ऐसा कुछ भी मौजूद नहीं है।

दिव्य जगत सहित, कोई भी कॉम-

उनके ज्ञान के साथ उपनिध।

स्वयंजागृत बुद्ध को देखकर

असीम ज्ञान (ज्ञान) का वह कौन है?

क्या धार्मिक रूप से प्रसन्न न होना (pasīdati) उचित है?

वे वर्णन करने में सक्षम नहीं हैं (विकप्पे-

सत्य (धम्म) का शरीर भी,

जो प्रकाश में लाया गया था (दीपेंटं),

पूरी तरह से रत्नों से निर्मित (रतनाकरं)।

अगर उसने भी ऐसा ही देखा है, तो वह धार्मिक क्यों न हो?

प्रसन्न?

स्नेही व्यक्तित्व (वचला)

जिसे नारद कहा जाता है, उसने अपनी प्रशंसा की

पद्ममुत्तरा, अजेय आत्मजागृत

इन तीन श्लोकों के माध्यम से बुद्ध।

उस धार्मिक भावना के कारण

साथ ही बुद्ध की प्रशंसा करने के कारण भी।

मेरा पुनर्जन्म किसी बुरी दुनिया में नहीं हुआ था।

एक लाख युगों (कप्पा) के लिए।

तीस सौ युग (कप्पा) पहले, से

अब, एक बहुत शक्तिशाली विश्व-राजा था

सुमित्ता नामक योद्धा वंश (खत्तिया) का।

सात रत्नों से सुशोभित।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा अपने गुरु की शिक्षा में सत्य (अवितथा) की स्थिति और धम्म की लाभकारी अवस्था (निय्यनिकतं) पर निर्भर करते हुए उत्साह और आनंद से भर गए, और उन्होंने उत्साह (पीतिवेग) की गति में प्रवेश करने (पविस्सा) के उद्देश्य से अपनी आनंदमय वाणी (उदानं उदानेन्तो) करते हुए एक श्लोक का पाठ किया।

86. "यहाँ से, बाहर, कई लोगों के बीच

अन्य विचारकों के लिए, कोई

निर्वाण तक पहुँचने का सही मार्ग (मग्गा)

इस प्रकार। इस प्रकार, महिमामय

स्वयं गुरु ने निर्देश दिया था।

भिक्षुओं का संघ, (चीजों को) प्रदर्शित करना

जैसे उनके खुले हाथ की हथेली पर (पाणि-

ताला)।

वहाँ, इतो बहिद्धा का अर्थ है: बुद्ध के इस शासन (शासन) से बाहर के सिद्धांत (समय) में। इसी कारण उन्होंने कहा: "पुथु अञ्ञवादिनं" जिसका अर्थ है: विभिन्न प्रकार के विधर्मियों (तित्तीय) में; यही अर्थ है। मग्गो न निब्बानगमो यथा अयं का अर्थ है; जिस प्रकार यह श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग निश्चित रूप से (एकंसेना) निर्वाण की ओर ले जाता है; उसी प्रकार, निब्बाना गमो (निर्वाण की ओर जाने वाला), उसी प्रकार, विधर्मियों (तित्तीय) के सिद्धांत में निर्वाण की ओर ले जाने वाला सही मार्ग (मग्ग) विद्यमान नहीं है; क्योंकि स्वयंजागृत बुद्ध ने विधर्मियों (तित्तीय) के मत को मानने वाले को वह मार्ग (पवेदिता) ज्ञात नहीं कराया है। अतः भगवान बुद्ध ने इस प्रकार कहा:

"हे भिक्षुओं! जो भिक्षु केवल यहीं है, एक

यहां मौजूद दूसरा भिक्षु,

तीसरा भिक्षु, जो यहाँ है, चौथा

जो भिक्षु यहाँ हैं, वे खाली हैं।

दूसरों के विचार और दूसरों से रहित

भिक्षुओं।"

इति का अर्थ है: इस प्रकार। अस्सु का अर्थ है: केवल एक अविभक्ति कण (निपारमत्त)। संघः का अर्थ है भिक्षुओं का संघ; यह एक संपूर्ण व्याख्या (या, उत्कृष्ट शब्द) है, जैसे उदाहरण के लिए "सत्था देवमनुस्सानम् (देव और मनुष्य प्राणियों के गुरु)"। दूसरे शब्दों में, संघः का अर्थ है समूह; ऐसे मनुष्यों का समूह (जन) जो अनुशासन (वेनेय्या) के अधीन हों और निर्वाण की ओर अग्रसर हों; इस प्रकार, इसका महत्व (अधिप्पाय) है। भगवा का अर्थ है: महिमा (भाग्य) आदि से युक्त भगवान; यहाँ, यह संक्षिप्त रूप (संखेप) है। हालाँकि, व्यापक रूप से, इसे परमत्थदीपनी में इतिवुत्तक की व्याख्या में वर्णित तरीके से समझा जाना चाहिए। सत्था का अर्थ है: वह योग्य (यथारहं) के अनुसार, प्रत्यक्ष (दित्तधम्मिका) और परलोक (संपरायिका) से संबंधित पूर्ण लाभों (परमत्था) के साथ उपदेश देते हैं; इस प्रकार, सत्था (गुरु)। सयं का अर्थ है: स्वयं, लेकिन व्यक्तिगत रूप से। वास्तव में, यहाँ यही अर्थ है। जिस प्रकार मेरे विधान में, निर्वाण की ओर ले जाने वाला श्रेष्ठ मार्ग (अरिया मार्ग) विद्यमान है, जो आठ प्रकार का है, जिसमें आठ अंग (अंग) जैसे सही दृष्टि आदि शामिल हैं, जो नैतिक उपदेशों (शील) आदि जैसे तीन स्कंधों (खंड) का संग्रह बनाते हैं, उसी प्रकार बाह्यक के सिद्धांतों में ऐसा मार्ग (मार्ग) नहीं है: "इस प्रकार, सिंह के समान गर्जना करते हुए, हमारे गुरु, भगवान बुद्ध ने स्वयं को स्वयं निर्मित ज्ञान (नाना) के माध्यम से समझा; दूसरे शब्दों में, वे भिक्षुओं के पुरोहितों के समूह (जनतं) को मायरोबलन फल के समान उपदेश और सलाह देते हैं।" (आमलक) उनकी हथेली पर (हत्थतले) उनकी स्वयं की शिक्षा (देसनविलास) की सुंदरता की समृद्धि (संपत्ति) के लिए, उनकी महान दया (महाकरुणा) द्वारा अच्छी तरह से प्रेरित होकर।

थेरा नागिता के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(87):पवित्था

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (87) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
87. पवित्र
बुद्ध युग में मगध राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, और स्वाभाविक रूप से संन्यासी जीवन की ओर झुकाव होने के कारण, वे एक घुमक्कड़ बन गए। उनका प्रशिक्षण समाप्त हुआ, वे घूमने निकले, और उन्होंने उपतिस्सा और कोलिता (सारिपुत्त और मोग्गलाना) के बुद्ध के भिक्षु संघ में शामिल होने के बारे में सुना। और उन्होंने सोचा: 'मुझे लगता है कि यह एक बेहतर संघ होना चाहिए क्योंकि ऐसे महान ऋषि इसमें प्रवेश करते हैं।' और वे गए और भगवान (बुद्ध) के वचन सुने, विश्वास किया, और भिक्षुत्व में दीक्षा ली। इसके तुरंत बाद उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया, और इस प्रकार अन्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[87] खंधा दिट्ठा यथाभूतौ भव सब्बे पदलिताा॥
विक्खिणो जातिसंसारो नत्थि दानि पुनब्भावो' ति.॥ ॥

[87] स्वयं के कारक पूरी तरह से देखे गए;
नए अस्तित्व के सभी आधार टूट गए।
पुनर्जन्म का चक्र पूरी तरह से समाप्त हो गया।
अब फिर से अस्तित्व में आना संभव नहीं है। [1]

[1] तुलना करें LXVII.

1.9-7 [87] पविट्ठथेरा के श्लोक पर टीका
खंड दिट्ठा यथाभूतं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पविट्ठा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्म संचित किए, और भगवान अठदस्सी के समय केशव नामक एक संन्यासी बन गए। एक दिन वे गुरु के पास गए, सत्य (धम्म) सुना, श्रद्धावान हुए, उन्हें प्रणाम किया, हाथ जोड़कर परिक्रमा की और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के कारण उनका जन्म दिव्य लोक में हुआ, और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे अपने जन्मों के चक्र में भटकते रहे, और मगध राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुए, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। समय आने पर जब वे बुद्धि की आयु प्राप्त कर चुके, तो उन्होंने त्याग की ओर झुके हुए (निन्न) स्वभाव (अज्जासय) के कारण भ्रमणशील दार्शनिकों (परिब्बाजक) के संघ में संन्यासी बन गए। वहाँ उन्होंने प्रशिक्षण प्राप्त किया और भ्रमण करते हुए उपतिस्सा और कोलिता के बुद्ध के संप्रदाय में भिक्षु बनने का समाचार सुना। उन्होंने मन ही मन कहा, "वे भी, अर्थात् महान ज्ञान वाले (पञ्ञा), वहाँ भिक्षु बन गए हैं; मुझे लगता है, यह और भी बेहतर होगा।" वे गुरु के समक्ष गए, सत्य (धम्म) को सुना, उचित रूप से श्रद्धा प्राप्त की और भिक्षु बन गए। गुरु ने उन्हें आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का तरीका बताया। उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करना शुरू किया और कुछ ही समय में अरहंत पद की कल्पना की। अतः, अपदान में यह कहा गया है:—

मेरा नाम नारद था; लोग मुझे इसी नाम से जानते थे।

केशव के रूप में। अच्छे कर्मों की खोज में (एसं)।

प्रमुख और गौण (कुसलाकुसलं), मैं गया था

बुद्ध की उपस्थिति।

महान ऋषि अत्थादस्सी, जो दयालु हैं,

अपनी प्रेममयी करुणा से,

अंतर्दृष्टि रखने वाला (चक्खुमा) सिखाया

सत्य (धम्म) जीवित प्राणियों को सांत्वना देता है

जीव।

अपने मन को धार्मिक रूप से प्रसन्न करते हुए, मैं

मैंने अपने जुड़े हुए हाथों को अपने सिर पर उठाया;

गुरु को नमन अर्पित करने के बाद, मैं

मैंने पूर्व दिशा की ओर मुख करके प्रस्थान किया।

सत्रह सौ युग (कप्पा) पहले

वह पृथ्वी का संप्रभु स्वामी बन गया, एक

अमिततापना नामक एक अत्यंत शक्तिशाली विश्वराज।

मेरी सारी बुराइयाँ जलकर राख हो चुकी थीं...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें उन्होंने अपनी अञ्ञा (प्राप्ति) को प्रकट किया।

87. "मेरी इंद्रियों का समूह (खंधा) था

वास्तविकता के अनुसार देखा गया (यथाभूतं);

सभी अस्तित्व खंडित हो गए थे

(पडालिता)। पुनर्जन्मों का बार-बार चक्र

(जातिसंसार) स्पष्ट रूप से समाप्त हो गया था

(विक्खाना); अब कोई नया अस्तित्व नहीं है।

वहाँ, खन्ध का अर्थ है पाँच आसक्त इंद्रियों का समूह (उपादानक्खन्ध); वास्तव में, उन्हें सर्वांगीण समझ (परिजानन) द्वारा, सुप्रसिद्ध (ज्ञात) बोध (परिञ्ञा) द्वारा, विवेक (उपलक्खन) के दृष्टिकोण से, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) द्वारा, और साथ ही सामान्य

(सामञ्ञ) विशिष्ट चिह्न (लक्खन) के दृष्टिकोण से स्पष्ट रूप से देखा जाना चाहिए (विपस्सितब्बा)। दिट्ठ यथाभूतं का अर्थ है; सही मार्ग के ज्ञान (मग्गपञ्ञा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के ज्ञान (पञ्ञा) के माध्यम से, इन्हें स्पष्ट रूप से (अविपरीततो) इस प्रकार देखा गया है: "इदं दुःखं (यह मेसरी है)" इत्यादि। भावा सब्बे पदालिता का अर्थ है: सभी सक्रिय-कार्यात्मक (कम्म) अस्तित्व (भव) और सहज फलित (उपपत्ति) अस्तित्व (भव), जैसे कि इंद्रिय सुख (काम) आदि, सही मार्ग के ज्ञान (ज्ञान) के तीव्र हथियार (सत्था) द्वारा टूट (भिन्ना) और चकनाचूर (विद्धांसिता) हो गए हैं। वास्तव में, दुराचार (किलेसा) के विनाश (पादालन) के साथ ही, सक्रिय क्रियाशील और स्वतःस्फूर्त फलदायी (कामोपपत्ति) दोनों प्रकार के अस्तित्व (भव) का विखंडन होता है। इसलिए उन्होंने कहा: "विक्खीनो जातिसंसारो, नत्थिदानि पुनब्भवो।" श्लोक के उस भाग का अर्थ तो पहले ही कहा जा चुका है (हेट्ठा)।

थेरा पवित्र के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(88):अज्जुना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (88) ------>>>> अगला

अध्याय 1।
88. अजजूना
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक पार्षद के परिवार में हुआ और उनका नाम अज्जुन रखा गया। बड़े होकर वे जैन धर्म के संपर्क में आए और बहुत कम उम्र में ही उनके संघ में प्रवेश कर गए, यह सोचकर कि उनके बीच उन्हें मोक्ष प्राप्त होगा। [1] परन्तु वहाँ उन्हें कुछ भी संतुष्टि नहीं मिली, [2] इसलिए वे भगवान (बुद्ध) से मिले, उन पर विश्वास किया, उनके संघ में प्रवेश किया और शीघ्र ही अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। फिर अपनी इस उपलब्धि से प्रसन्न होकर उन्होंने इस श्लोक का उच्चारण किया:

[88] असक्खिउ वात अत्तानाउ उद्धातुउ उदका जलौ॥
वुयहमानो महोघेव सच्चचनि पतिविज्जहां' ति.॥॥

[88]
हे आश्चर्य, मुझे जल से निकलकर सूखी भूमि पर आने की शक्ति मिली ।
भयानक बाढ़ में बहते हुए मैंने
सत्यों को जानना सीखा, उनके सत्य को समझना सीखा।

[1] लिट., एम्ब्रोसिया, अमाता, या निब्बाना।

[2] शाब्दिक रूप से, कोई सार या गूदा नहीं, सत्य या प्रामाणिकता न होने के लिए सामान्य रूपक।

1.9-8[88] अजुनत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
असक्खिं वत अत्तानं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अज्जुन का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, पुण्य कर्म संचित करते हुए, जो इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) के चक्र से मुक्ति दिलाने में सहायक थे, उन्होंने भगवान विपस्सी (बुद्ध) के समय में एक सिंह के गर्भ में पुनर्जन्म लिया। एक दिन उस सिंह ने जंगल में एक वृक्ष के चरणों में बैठे गुरु को देखा और श्रद्धापूर्वक मन ही मन कहा, "यद्यपि, इस अवसर पर, यह मनुष्य में श्रेष्ठ है, मनुष्यों में सिंह है," और उसने साल वृक्ष की एक खिली हुई शाखा तोड़कर गुरु को आदरपूर्वक अर्पित की। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वह सिंह जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करता रहा और सावत्थी में एक धनाढ्य परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम अज्जुन था। बुद्धि प्राप्त करने पर, वे जैनों के संपर्क में आए और बचपन में ही जैनों के बीच संन्यासी बन गए, क्योंकि वे जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति पाने के लिए दृढ़ संकल्पित थे और मन ही मन कहते थे, "इस प्रकार मैं अमरत्व प्राप्त करूँगा।" वहाँ सार प्राप्त न कर पाने और गुरु के यमकापतीहारिय चमत्कार को देखकर, उन्होंने उचित श्रद्धा प्राप्त की, शासन के अंतर्गत भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने लगे और कुछ ही समय में अरहंत बन गए। अतः, अपदान में ऐसा कहा गया है।

मैं उस समय पशुओं का राजा था, उच्च कुल का।

जैसे किसी उत्कृष्ट शेर की गर्दन पर। (चलते हुए)

पहाड़ियों पर, तलाश में जाना कठिन है (की)

शिकार) संयोगवश मेरी मुलाकात दुनिया से हुई-

नेता।

क्या वास्तव में यही महान नायक है?

जो इतने सारे लोगों को भेजता है

निब्बाण (निब्बापेटि महाजनम्)। सेर-

यदि मैं सेवा करूँ (उपासति होऊँ) तो निश्चित रूप से अच्छा होगा।

देवताओं का देवता, मनुष्यों में बैल।

साल के पेड़ की शाखा तोड़कर,

मैंने इसे इसकी संपत्ति के साथ इकट्ठा किया

फूलों का (सकोसं)। पास आने पर

मैंने आत्मजागृत बुद्ध को उन्हें अर्पित किया।

वह अत्यंत सुंदर फूल।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है,

मैंने फूलों की विशेष भेंट चढ़ाई;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह फूल का फलदायी परिणाम है

पेशकश।

इससे पहले के नौवें युग (कप्पा) में,

तीन शासक बन गए, जो बहुत शक्तिशाली थे।

विरोचना नाम के विश्व-राजा।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने एक श्लोक का उच्चारण किया, और अपनी आनंदमय अभिव्यक्ति (उदान) को उस उत्साह की गति से व्यक्त किया जो उस आनंद की प्राप्ति (अधिगम) के लिए उपयुक्त था जिसकी कोई तुलना नहीं है।

88. मुझे पूरा यकीन था (वात के अनुसार) कि मैं ऐसा कर पाऊंगा।

(asakkhiṃ) बाहर निकालना (uddhātuṃ)

पानी से सूखी ज़मीन तक, पर

बहक जाना (vuyhamāno) लेकिन

बड़ी बाढ़ में। मैंने ठीक से प्रवेश किया-

महान सत्य (सक्का) का अनुसरण करें।

वहाँ, असक्खिं का अर्थ है मैं सक्षम था (सक्कोसिं ं), वात एक अविघटनीय कण (निपाता) है जो विस्मय (विम्हये) में है। वास्तव में, यह अत्यंत आश्चर्यजनक है; यही सत्य की उचित अंतर्दृष्टि है। इसलिए, बुद्ध ने कहा:—

"हे भिक्षुओं! आप इसके बारे में क्या सोचते हैं?"

जो वास्तव में या तो अधिक कठिन है

क्या इसे करना अधिक कठिन है या इस पर काबू पाना अधिक कठिन है?

(अभिसंभव), (या अधिक परेशानी वाला?)?

यदि किसी को उपयुक्त रूप से छेदना पड़े तो

किसी अन्य के माध्यम से पूंछ के बाल के सिरे को

पूंछ का सिरा जो सात भागों में बंट गया था

बार-बार (सत्तधा)? और इसी प्रकार।

अत्तानं का अर्थ है: वह अपने अंतर्मन (अज्जत्त) के संदर्भ में कहता है (संध्याय); जो वास्तव में दूसरा नहीं है, वह स्वयं (अत्त) है। उद्धातुं का अर्थ है बाहर निकालना (उद्धरितुं); "उद्धतं (बाहर निकाला गया है);" यही इसका पाठ भी है। उदका का अर्थ है उस जल से जो पुनर्जन्मों के चक्रों की भयंकर बाढ़ (संसार) के रूप में गिना जाता है। थलं का अर्थ है निर्वाण की शुष्क भूमि। वुयहमानो महोगे वे का अर्थ है विशाल सागर में बह जाने के समान। यही कहा गया है: उदाहरण के लिए, जैसे कोई व्यक्ति किसी भयंकर बाढ़ में, जो गहरी और चौड़ी हो और जिसमें रुकने का कोई स्थान न हो (अपतित्त), तेजी से बहता चला जाए, तो उसे किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा पास लाई गई नाव (दाल्ह) मिल जाए जो उसका भला चाहता हो (अत्थ), तो वह आसानी से खुद को उस बाढ़ से बाहर निकाल कर दूसरे किनारे तक पहुँच जाएगा, ठीक उसी प्रकार, मैं भी बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों की भयंकर बाढ़ में, दुराचार की गति से बहता हुआ (वुयहमानो), मुझे शांत स्वभाव और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि से युक्त श्रेष्ठ मार्ग की नाव (उपेत) मिल गई, जो मेरे पास लाई गई। गुरु की कृपा से, मैं उस बाढ़ से निकलकर अद्भुत रूप से निर्वाण की सूखी भूमि पर पहुँच सका। उन्होंने जिस भी तरीके से संभव हुआ, उस मार्ग को दिखाने के लिए कहा: "सच्चानि पटिविज्झं।" क्योंकि मैंने दुख से शुरू होने वाले चार आर्य सत्यों को उचित रूप से बोध (परिज्ञा), त्याग (पहान), दृष्टि

(सच्चिकिरिया) और विकास (भावना) के माध्यम से ग्रहण किया और आर्य मार्ग के ज्ञान (ज्ञान) से समझा, इसलिए मैं निश्चित रूप से जल से निकलकर सूखी भूमि पर आ सका; यही व्याख्या है।

थेरा अजजुना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(89):देवसभा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (89) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
89. देवसभा [1]
इस बुद्ध युग में एक जिले के राजा के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, [2] उन्होंने कम उम्र में ही अपना पद ग्रहण कर लिया। लेकिन [84] जब वे जागृत (बुद्धो) होकर भगवान (बुद्ध) का उपदेश सुनने गए, तो उन्होंने अपना पद त्याग दिया, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। फिर जब उन्होंने उन भ्रष्ट चीजों पर विचार किया जिन्हें उन्होंने त्याग दिया था, तो उनमें आनंद उत्पन्न हुआ और वे इस प्रकार बोले:

[89] उत्तिना पञ्चपालिपा पाताल परिवज्जिता,॥
मुत्ता ओघा च गंथा च सब्बे मन विसंहता' ति.॥ ॥

[89] वासनाओं के दलदल से पार हो गया हूँ।
नरक के विनाश से सुरक्षित निकल आया हूँ,
बाढ़ और बंधनों से जो स्वतंत्रता के लिए हानिकारक हैं,
और आत्म-अभिमान के हर रूप को त्याग दिया है। [3]

[1] भजन संहिता सी. किसी अन्य देवसभा द्वारा रचित है।

[2] मंडलिका-राज। यह शब्द विनय ग्रंथों, iii. 47 में आता है। मेरे पास उपाधि से जुड़े तुलनात्मक पद का कोई प्रमाण नहीं है।

[3] माना. नौ रूपों को विभेदित किया गया है (विभ., पृ. 389)। तुलना करें बुद्ध. मनोविज्ञान, पृ. 299, जो केवल पहले तीन देता है।

1.9-9 [89] (पाठमा) देवसभट्टरा के श्लोक पर टीका
उत्तिन्नापंक पालिपा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा देवसभा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की भक्तिपूर्ण सेवा करते हुए, जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति पाने के लिए पुण्य कर्मों का संचय किया और इस-उस जन्म में कबूतर (पारावत) के गर्भ में पुनर्जन्म लिया। एक दिन, संयोगवश उन्होंने गुरु के दर्शन किए, श्रद्धा से भर गए और उन्हें पियाल के फल (पियालफल) अर्पित किए। गुरु ने उन फलों को खाकर कबूतर की श्रद्धा (पसाद) को और अधिक प्रसन्न किया। इस कारण कबूतर अत्यंत श्रद्धावान हो गया, बार-बार गुरु के पास आता, उन्हें प्रणाम करता और श्रद्धा से प्रसन्न होता रहा। उस पुण्य कर्म के कारण, वह कबूतर दिव्य लोक में पुनर्जन्म लेकर समय-समय पर पुण्य कर्म करता रहा और देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकता रहा। जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वह एक राजा के मंडलिका (प्रतिनिधि) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया। युवावस्था में ही वह एक छोटे से देश का शासक बन गया और राजसी सुख भोगते हुए बड़ा हुआ, तभी वह उस गुरु के पास पहुँचा जिसने उसे धर्म का उपदेश दिया। उसने धर्म को सुना, उचित श्रद्धा प्राप्त की, पश्चाताप किया, अपना प्रभुत्व त्याग दिया, भिक्षु बन गया और आध्यात्मिक विकास का कर्म किया।

आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) प्राप्त की, अरहंतत्व प्राप्त किया, लेकिन शीघ्र ही। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

“मैं तब एक कबूतर (पारवत) था।”

जो बाधक नहीं था (उपरोधक)

दूसरों के लिए। पहाड़ की ढलान पर मैंने बनाया

मेरा निवास स्थान, सिख धर्म, गुरु से अधिक दूर नहीं है।

सुबह (पाता) और शाम (सायां)

संयोगवश मुझे बुद्ध के दर्शन हुए, जो सबसे प्रमुख थे।

विश्व के नेता। ऐसे व्यक्ति के लिए-

पुत्रों का पुरुषों के सम्राट के रूप में शासन (द्विपदिन्दा)

मुझमें कोई पुण्य गुण (देय्यधम्म) नहीं था।

प्रस्ताव देना।

मैं अपने साथ पियाल फल लेकर आया था।

मैं बुद्ध के समक्ष गया।

हे भगवान, संसार के सबसे वृद्ध व्यक्ति,

पुरुषों में श्रेष्ठ, उसने (मेरी भेंट) स्वीकार की।

बाद में, तदनुसार (उपाध्याय) उसके बाद,

मैंने नेता की सेवा की (परिचारि)।

(विनायक)। उस मनभावन पवित्रता के साथ

ध्यान रहे, मैं वहीं मर गया था।

आज से इकत्तीस युग पहले की बात है।

मैंने फल चढ़ाए थे; मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

फल चढ़ाने का परिणाम।

पंद्रह युग (कप्पा) पहले, आज से,

तीन अत्यंत शक्तिशाली विश्व-

पियालिना नामक राजा, जो वरदानों से संपन्न थे

सात रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें उन्होंने अपने आनंदमय उच्चारण (उदान) को व्यक्त किया, जो उनके द्वारा अपने दुराचार (पहीनकिलेसा) से छुटकारा पाने के चिंतन से उत्पन्न हुई खुशी को दर्शाता है।

89. दलदली कीचड़ को पार कर लिया गया था;

पाताला (अथाह खाई) चारों ओर फैली हुई थी।

टाला (परिवज्जिता); जारी (am

I) बाढ़ (ओघा) के साथ-साथ शारीरिक

गांठें (गांठ); मेरा सारा अभिमान

हटा दिया गया है (visaṃhata)।

वहाँ उत्तिन्ना का अर्थ है; पार कर लिया था, आगे बढ़ गया था। पंकपलिपा का अर्थ है: कीचड़ और दलदल; पंक (कीचड़) को प्राकृतिक कीचड़ कहा जाता है: "पकिपा (दलदल)" एक विशाल, गहरा और चौड़ा (पुथुलो) कीचड़ है। हालाँकि, यहाँ यह कीचड़ (पंक) के समान अपवित्रता है; कामुक सुखों (कामराग) की लालसा, क्योंकि यह अशुद्धता की स्थिति उत्पन्न करके मन को दूषित करती है। विशाल कीचड़ के समान गंदगी; घनी (बहल) इच्छा (चंदा) की लालसा जो पुत्र, पुत्री, पत्नी आदि के ऐसे क्षेत्रों का निर्माण करती है, क्योंकि वे दूषित और पार करना कठिन हैं; अनागामी (अनागामी) के श्रेष्ठ मार्ग (मग्ग) के तीसरे चरण द्वारा मैंने उन पर सर्वथा विजय प्राप्त कर ली थी (अतिक्कंटा)। अत्तिन्न पंक पालिपा (कीचड़ और दलदल पार करना) है। पाताला का अर्थ है: गिरने के लिए पर्याप्त (अलं) एक चट्टानी खाई (पाताला) है; विशाल सागर में गहरे अवसाद (निन्नतारा) का एक स्थान (पदेसा)। हालाँकि, कुछ विद्वान (केची) नागों के निवास को "पातालां" कहते हैं। यहाँ, चट्टानी खाई (पाताला) के समान, क्योंकि यह अभेद्य (आगाह) है, जिसे समझना (दुरवग्गा) और पार करना कठिन है; इस प्रकार, पाताला (चट्टानी खाई); विधर्मी विचार (दिठ्ठियो)। मैंने उनसे भी परहेज (वज्जिता) किया था और उन्हें भली-भांति काट डाला था (समुच्चिन्न), परन्तु श्रेष्ठ मार्ग (मग्ग) के प्रथम चरण को धारा-प्रवर्तक के रूप में प्राप्त करके। अतः उन्होंने कहा: "पाताला परिवज्जिता।" मुत्तो ओघा च गंथा च का अर्थ है: इंद्रिय सुखों (काम) आदि की बाढ़ से, तथा शरीर के लोभ (अभिज्जा) आदि जैसे बंधनों (गंठ) से, सही मार्ग (मग्ग) के इस और उस चरण द्वारा मुक्त और सर्वांगीण रूप से मुक्त (परिमुत्तो); फिर से अभिभूत न होकर (अनभिकिरण) और उलझ न कर (अंगंथन) आगे बढ़ जाना (अत्तक्कन्तो), यही अर्थ है। सब्बेमाना विसम्भता का अर्थ है: नौ प्रकार के अहंकार (विधा) को स्पष्ट रूप से (विस्सेसातो) उत्पन्न करके नष्ट कर दिया गया (संघात) और विनाश कर दिया गया (विनासा) और उसे भली-भांति काट दिया गया (समुद्धिन्न)। कुछ विद्वान इसे "मनविधा हता (अहंकार की विभिन्न किस्में नष्ट कर दी गईं)" पढ़ते हैं; इसका अर्थ है: अहंकार का अंश (मानकोट्ठास); यही अर्थ है। अन्य विद्वान (अपरे) इसे "मानविसा (अहंकार-विष)" पढ़ते हैं; उनके अनुसार, यह अहंकार के कष्टदायक विष के फलदायी परिणाम के कारण अहंकार-विष है; यही अर्थ है जैसा कि समझा जाना चाहिए।

थेरा (पाथमा) देवसभा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(90):समिदत्त

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।

नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (90) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
90. सामिदत्ता
Puissance. OED: शक्ति, सामर्थ्य, बल, सामर्थ्य, प्रभाव।

बुद्ध युग में राजगृह में एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम सामिदत्त रखा गया। जब वे परिपक्व हुए, तब उन्होंने बुद्ध की शक्ति के बारे में सुना और गृहस्थों के साथ उन्हें सुनने के लिए विहार (मठ) गए। उन्होंने विश्वास किया और भिक्षु संघ में प्रवेश किया, लेकिन अपने ज्ञान की अपरिपक्वता के कारण वे कुछ समय तक अभ्यास नहीं कर पाए। अंततः, भगवान (बुद्ध) को फिर से उपदेश देते हुए सुनकर, वे समर्पित और एकाग्र हो गए और अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

बाद में भिक्षुओं ने उनसे पूछा: 'हे मित्र, अब आप कैसे चुने हुए लोगों की अवस्था तक पहुँच गए हैं?' [1] और उन्होंने सिद्धांत की मार्गदर्शक प्रभावकारिता और स्वयं धम्म और छोटे सिद्धांतों में अपनी सिद्धि को दर्शाते हुए , इस श्लोक में अन्ञा (सर्वोच्च सिद्धि) की घोषणा की:

[90] पंचकखंडा परिण्णाता तिथन्ति छिन्नमूलका,॥
विक्खिणो जातिसंसारो नत्थि दानि पुनब्भावो' ति.॥ ॥

[90] मेरे जीवन के कारक अच्छी तरह से समझे गए हैं,
फिर भी थोड़ी देर के लिए कटी हुई जड़ के साथ खड़े हैं।
जीवन का चक्र निश्चित रूप से नवीनीकृत हो गया है।
अब वापस आने का कोई रास्ता नहीं है। [2]

[1] उत्तरि-मनुस्साधम्मो, या, 'सुपरमैन' का।

[2] तुलना करें एल.एक्सएक्स और एल.एक्सएक्सवी.

1.9-10[90] सामिदत्तत्तेरा के श्लोक पर टीका
पंचक्खन्धा परिञ्ञता से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सामिदत्त का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने वाले इस व्यक्ति का पुनर्जन्म भगवान अट्ठदस्सी के समय एक पारिवारिक घर में हुआ। जब उन्होंने ज्ञान प्राप्त किया और गुरुदेव पूर्णतः निर्वाण (परिनिभूत) हो गए, तो उन्होंने उनके ठोस मंदिर (स्तूप) पर पुष्पों से छत्र की कई परतें बनाकर श्रद्धापूर्वक अर्पण किया। इस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने जन्म-जन्म चक्रों में विचरण करते रहे। और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका पुनर्जन्म राजगृह में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में हुआ। उनका नाम सामिदत्त था। समय आने पर जब वे बुद्धिवान हो गए, तो उन्होंने बुद्ध की शक्ति के बारे में सुना, भक्तों के साथ मठ गए, गुरु को सत्य (धम्म) का उपदेश देते हुए देखा, उनका मन श्रद्धा से भर गया और वे एक तरफ बैठ गए। गुरु ने उनकी प्रवृत्ति (अज्जासय) को देखकर उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश इस प्रकार दिया कि उन्होंने जन्म-जन्मांतर के चक्रों में उचित श्रद्धा और पश्चात्ताप दोनों प्राप्त कर लिए। उचित श्रद्धा प्राप्त करने और पश्चात्ताप करने पर वे भिक्षु बन गए, और अपने ज्ञान की पूर्ण परिपक्वता न होने के कारण वे कुछ समय तक आलसी जीवन व्यतीत करते रहे। फिर गुरु द्वारा दिए गए सत्य (धम्म) के उपदेश से प्रेरित होकर उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के लिए सहायक मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) किया और उस पर एकाग्रचित्त रहते हुए अर्हंतत्व प्राप्त किया, लेकिन कुछ ही समय बाद। अतः, अपदान में ऐसा कहा गया है।

"जब पूज्य अत्थादस्सी,

सबसे उत्कृष्ट व्यक्ति परियों की शरण में चले गए।

निब्बाना, मेरे पास एक बहुस्तरीय छाता था

इसे श्रद्धापूर्वक बनाया और स्थापित किया।

ठोस मंदिर (थूपा) पर।

बार-बार मंदिर में आने के बाद

उस समय, मैंने दुनिया के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की-

नेता।

फूलों की सजावट करने के बाद मैंने आदरपूर्वक

इसे छाते पर टिका दिया था।

सत्रह सौ युगों (कप्पा) के लिए

मैंने दिव्य संप्रभुता का प्रयोग किया;

मुझे मनुष्य नहीं होना था; यह

श्रद्धा भाव रखने का यही फलदायी परिणाम है।

मंदिर को दी जाने वाली पारंपरिक भेंट (थूपा)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी; सब कुछ अस्तित्व में था-

काल समाप्त कर दिए गए थे। जैसे

एक हाथी ने अपनी बेड़ियाँ काट दी हैं

(बंधनं) मैं दोषों से मुक्त रहता हूँ

(आसव).

मेरा यहाँ आना वाकई बहुत सार्थक रहा।

सर्वश्रेष्ठ (सेठ) बुद्ध की उपस्थिति।

तीन प्रकार के महाविज्ञान (विज्जा) थे

तदनुसार प्राप्त किया गया है; बुद्ध का

निर्देशों का पालन किया जा चुका है।

इसके बाद, भिक्षुओं द्वारा यह पूछे जाने पर कि “मित्र! आपने उत्तरिमनुस्सधम्म की दिव्य अवस्था क्यों प्राप्त की?” उन्होंने एक श्लोक का उच्चारण किया, जिससे उन्हें लाभकारी अवस्था (निय्यानिकभाव) और शिक्षा के अनुरूप अपने स्वयं के उचित अभ्यास (पटिपत्ति) को समझाते हुए, अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया।

90. "पांच संवेदी समूह (खंड)"

यह बात सर्वत्र समझ ली गई थी; वे

अपनी जड़ों को काटकर खड़े हैं। पुनः-

पुनर्जन्म के बार-बार दोहराए जाने वाले दौर थे

स्पष्ट रूप से थका हुआ; अब, वहाँ कुछ भी नहीं है

एक नया अस्तित्व।

वहाँ, pañcakkhandhā pariññātā का अर्थ है: इन पाँच आसक्त इंद्रिय-संबंधी समूहों (upādānakkhandhā) को मैंने तीन प्रकार की समझ (pariñña) के माध्यम से गहन विश्लेषण (parichinditvā) करने के बाद जान लिया, समझ लिया और उचित रूप से भेद दिया (paṭividdha) है; - “यही दुःख (dukkha) है: दुःख (dukkha) इतना ही है, इससे अधिक नहीं।” तिट्ठंति छिन्नमूलका का अर्थ है: इसी प्रकार, परन्तु दुख के मूल (समुदय) को, जो उसका मूल (मूल) था, सर्वथा त्याग देने (पाहीन) के पूर्ण ज्ञान (परिञ्ञा) के कारण, वे अंतिम चेतन अवस्था (चरिमक चित्त) के विनाश (निरोध) के कारण उखड़े हुए खड़े रहते हैं; परन्तु अंतिम चेतन अवस्था के विनाश के कारण, अवधारणाएँ समाप्त (निरुज्जंति) हो जाती हैं, और उनका पुनर्मिलन (पटिसंधि) नहीं होता। अतः उन्होंने कहा; “विक्खानो जातिसंसारो, नत्थिदानि पुनब्बवो।” इसका अर्थ पहले ही कहा जा चुका है (हेट्ठा)।

थेरा सामिदत्ता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

नौवें अध्याय की टीका पूरी हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(91):परिपुन्नका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (91) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
भाग X
91. परिपुण्णक
उनका पुनर्जन्म बन्ध युग में कपिलवस्तु में एक शाक्य राजा के परिवार में हुआ। अपनी अपार प्रतिभा और सौभाग्य के कारण वे परिपुणक के नाम से प्रसिद्ध हुए। [1] उनकी सामर्थ्य उन्हें सर्वथा सौ तत्वों का भोजन ग्रहण करने की अनुमति देती थी। परन्तु जब उन्होंने सुना कि भगवान (बुद्ध) मिश्रित भोजन ग्रहण करते हैं, तो उन्होंने कहा: 'यद्यपि वे उत्तम खानदान के हैं, फिर भी भगवान (बुद्ध) निर्वाण के आनंद का ध्यान करते हुए इस प्रकार जीवन व्यतीत करते हैं। हम अपने लोभ में क्यों भोगी बनें? हमें भी निर्वाण के उस आनंद की खोज करनी चाहिए!' व्यथित होकर उन्होंने अपना घर त्याग दिया, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और भगवान (बुद्ध) से शरीर ध्यान का अभ्यास लेकर समय के साथ अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इस पर उन्होंने यह गाथा कही: [2]

[91] न तथा' मतं सातारसां सुधन्नं यं मयाज्ज परिभुत्तं,॥

अपरिमिता दस्सीना गोतमेना बुद्धेन देसिटो धम्मो' ति.॥ ॥

[91] ऐसा कभी नहीं लगा मानो यह सौ तत्वों का कोई व्यंजन हो।
क्या मैं आज जो ग्रहण किया, उसे बढ़ा-चढ़ाकर बता सकता हूँ,
जब उन्होंने, सर्वदर्शी गौतम, [3] आनंदित बुद्ध ने
स्वयं मुझे पवित्र मार्ग (धम्म) प्रकट किया।

[1] 'पूर्ण' या 'परिपूर्ण' अर्थ, ka के साथ, एजेंट-संज्ञा प्रत्यय।

[2] यहाँ छंद सामान्य श्लोक के छंद जैसा नहीं है।

[3] ध्यान दें कि भगवान (बुद्ध) के नाम का उल्लेख स्पष्ट रूप से लेकिन बहुत कम होता है, जो बाद के बौद्धों में देखने को नहीं मिलता। इस ग्रंथ में यह आठ बार आता है, सिस्टर्स में दो बार (देखें विनय ग्रंथ, i. 228)। कई एपिस्कोपलियन ईसाइयों में इसी तरह की चुप्पी देखें ।

1.10 दसवाँ अध्याय

1.10-1 [91] परिपुन्नकत्थेरा के छंद पर टिप्पणी

ना तथा मतं सतरसं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा परिपुन्नक का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने के कारण, इनका पुनर्जन्म भगवान धम्मदस्सी के समय एक पारिवारिक घर में हुआ। वयस्क होने पर, जब गुरुजी परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके थे, तब इन्होंने गुरुजी के मंदिर में पुष्प आदि का विशाल अर्पण किया। इस पुण्य कर्म के कारण इनका पुनर्जन्म देवताओं के बीच हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए ये उत्तम जन्मों में विचरण करते रहे और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब इनका पुनर्जन्म शाक्य वंश के कपिलवस्तु में हुआ। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, सर्वांगीण धन-संपत्ति की स्थिति के कारण ये परिपुन्नक के नाम से प्रसिद्ध हुए। धनवान होने के कारण, वह सदा सौ स्वादों वाले (सतरसा) भोजन का आनंद लेता था और गुरु के मिश्रित भोजन के बारे में सुनकर, जिससे वे अपना जीवन निर्वाह करते थे, उसने मन ही मन कहा: "यद्यपि भगवान नाजुक (सुखुमाला) होते हुए भी निर्वाण के सुख को ध्यान में रखते हुए किसी न किसी प्रकार अपना जीवन निर्वाह करते हैं; तो हम, जो भोजन के लिए व्याकुल (गिद्ध) रहे हैं, अपने आहार में क्यों न्यायसंगत (शुद्धिका) हों; हमें तो केवल निर्वाण के सुख की ही खोज करनी चाहिए।" बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों से दुखी होकर, उसने गृहस्थ जीवन त्याग दिया, गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बन गया, और भगवान द्वारा शरीर के प्रति जागरूकता के मानसिक अभ्यास के लिए प्रेरित (नियोजितो) होकर, उसने स्वयं को वहीं स्थापित कर लिया। उन्होंने उचित रूप से प्राप्त ध्यान को अपना आधार (पादक) बनाया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म किया, जिसे उन्होंने उत्तरोत्तर विकसित किया और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—--

"जब लोकनाथ (जगत का स्वामी)

पुरुषों में श्रेष्ठ धम्मदस्सी का निधन हो गया।

निर्वाण में, मैंने एक ध्वज स्तंभ स्थापित किया

बुद्ध के मंदिर में सबसे अच्छा।

मैंने एक सीढ़ी बनाई और उसे अच्छी तरह से फिक्स कर दिया।

(समारुहिं) सबसे उत्तम तीर्थस्थल को।

प्राकृतिक फूल इकट्ठा करने के बाद मेरे पास

उन्हें ठोस पर स्थापित (अभिरोपयिं) किया गया

मंदिर (थूपा)।

बुद्ध अद्‌भुत हैं, धम्म अद्‌भुत है;

हमारी सफलता (संपदा) अद्‌भुत है

गुरुजी। मुझे किसी बुराई के अस्तित्व की याद नहीं है।

tence (duggati); यह फलदायी है

श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाने का परिणाम

मंदिर (थूपा)।

आज से चौरानवे युग (कप्पा) पहले,

वहाँ सोलह अत्यंत शक्तिशाली शासकों का शासन था।

विश्व-राजा, जिनका नाम थूपसिखा है

(मंदिर का प्रतीक चिन्ह)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "न तथा मतं सतरसं" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिसमें उन्होंने आनंदमय उच्चारण (उदान) किया, सत्य (धम्म) में आदर (गारव) के साथ अपने उत्साह (पीतिवेग) की गति को मुक्त (विस्साठं) किया।

91. वहां न तथा मतं सतारसं सुधन्नं यं मयाज्ज परिभुत्तं। तथाता का अर्थ है: उस तरीके से (पकारा)। मतं का अर्थ है: सुखद रूप से सहमत। सतरसः का अर्थ है: सौ स्वादों (रस) का भोजन (भोजन); वे इस प्रकार कहते हैं: - "सतारसा भोजनं नाम सतपकसप्पिधि अभिसंखतं भोजनं (सौ स्वादों वाला भोजन, अर्थात्, एक खाने योग्य भोजन (भोजन) है जिसे विशेष रूप से सौ बार पकाए गए (सतपक) घी (सप्पी) और इसी तरह की सामग्री के साथ पकाया जाता है)। दूसरे शब्दों में, व्याकरणिक शब्द 'सता' का अर्थ एक नहीं बल्कि एक से अधिक (अनेकत्था) होता है, जैसे कि "सतसो सहससो" आदि। इसलिए, जिस भी भोजन में एक से अधिक प्रकार के सूप और एक से अधिक प्रकार की करी होती है, उसे "सतरसा (अनेक स्वाद)" कहा जाता है, क्योंकि उसमें अनेक स्वाद होते हैं; यानी विविध स्वादों वाला भोजन। सुधन्नं का अर्थ है: अमृत (सुधा) स्वयं (एव) पका हुआ भोजन है जिसे खाया जाना है (अन्न), दिव्य पोषण, दिव्य व्यंजन। यं मया'ज्ज परिभुतं, जिसे मैंने आज खाया है। "यं मया परिभुतं, जो कुछ भी मैंने खाया है" और साथ ही यह "सतरसां सुधं (सौ स्वादों का अमृत);" अत: यहाँ भी व्याख्या (योजेतब्बं) की जानी चाहिए। यही कहा गया है; निर्वाण का जो भी शांतिपूर्ण (सन्तं), उच्चतर (पानित) सुख मुझे अभी, वर्तमान में (एतरहि) निरोध ध्यान (निरोध समापत्ति) में प्रवेश (समापज्जन) करके और फलदायी ध्यान (फल समापत्ति) से गुजरकर पूर्णतः (अच्चन्तं) प्राप्त हो रहा है; वह समझ (मतं) और सुखद (अभिमतं) के अनुसार अच्छी तरह विकसित (संभावितं) हो चुका है; इस प्रकार, जब मैं राजा था, तब मेरे द्वारा भोगा गया सौ स्वादों का भोजन और मेरे दिव्य स्वरूप (अत्तभाव) में भोगा गया अमृतमय भोजन (सुधन्ना) न तो समझ में आया और न ही सुखद (अभिमत) था। क्यों? क्योंकि यह (पहला) वास्तव में इंद्रिय-इच्छाओं से मुक्त (निरामिस) है, जिसमें पवित्र कुलीन (आर्य) लिप्त (निसेवित) होते हैं, और यह (भूत) किसी भी प्रकार के दुराचार (किलेसा) का विषय नहीं बना है: जबकि दूसरा, सामान्य लोगों (पुथुज्जन) द्वारा भोगा जाता है, जो इंद्रिय-इच्छाओं के अधीन होते हैं और प्रत्येक प्रकार के दुराचार का विषय बन गए हैं। वह (दूसरा) इस (पहले) का सोलहवाँ भाग (कला) या सोलहवें भाग का एक अंश (कलाभाग) ही है। वर्तमान में, अब, सिखाए गए सत्य (वत्तधम्म) को इस प्रकार इंगित करने के लिए: "आज मैंने जिसका पूर्णतः आनंद लिया है," उन्होंने

कहा: अपारिमितदस्सिना गोतमेना, बुद्धेन सुदेसीतो धम्मो। इसका अर्थ है: द्रष्टा (पसी) अपने स्वयं निर्मित (सयम्भु) ज्ञान (ज्ञान) के माध्यम से, जो असीम, असीमित और शांत है, क्योंकि प्रकट (उप्पाद) और लुप्त (वय) नहीं होते; असीम और असीमितता के ज्ञान (ञेय्य) की अंतर्दृष्टि (दस्सावी) रखने वाला: इस प्रकार, उनके द्वारा,अपरिमिता दासिना (अथाह का द्रष्टा), गोतम, कुल से, आत्म-जागृत बुद्ध, देसिटो धम्मो (सत्य (धम्म) को अच्छी तरह से (सुथु) इस तरह से सिखाया गया था; "खायं विरागं अमातं पनीताम् (अक्षय (खाय), वासनाहीनता (विरागा), अमरता (अमाता), श्रेष्ठ)," "मदनिम्मादानो पिपासविनयो (कामुक अति को कुचलने वाला और प्यास को दूर करने वाला," साथ ही "सब्बासंखारसमथो (सभी 'जीवन के अनुभवों' (संखरा) का समापन (समथ),)" और इसी तरह; निब्बाण का आनंद मैंने आज (अज्ज) लिया है; इस प्रकार, व्याख्या है।

थेरा परिपुन्नक के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(92):विजय

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (92) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
92. विजया
उनका पुनर्जन्म बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ और उनका नाम विजया रखा गया। जब उन्होंने ब्राह्मण (पुजारी) ज्ञान प्राप्त कर लिया, तो उन्होंने संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करके) एक तपस्वी के रूप में जीवन व्यतीत किया, [86] और वन में ध्यान का अभ्यास करते रहे। फिर उन्होंने बुद्ध के मिशन के बारे में सुना और प्रसन्न होकर उन्हें प्रणाम करने और उनका प्रवचन सुनने गए। इसके बाद वे भिक्षु संघ में प्रवेश कर गए और शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया, और इस श्लोक में अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) का अभिनंदन किया:

[92] यस्सासव [14] परिक्खिना अहारे च अनिसिटो,॥
सुन्नता अनिमितो च विमोक्खो यस्सा गोकारो,॥
अकासेवा सकुन्तनं पदं तस्स दुरन्नयन्ति॥ ॥

[92] जिसमें मादक पदार्थ (अशुद्धियाँ/इच्छाएँ) सूख गए हों;
जिसका सुख भोजन पर निर्भर न हो;
जिसका क्षेत्र शून्य और अचिह्नित
तथा स्वतंत्रता में हो: - जैसे हवा में पक्षियों की उड़ान,
वैसे ही उसका पता लगाना कठिन है। [1]

[1] मादक पदार्थ = आसवा (देखें भजन 147)। भोजन (आहारो) आम लोगों द्वारा प्रदान की जाने वाली सभी चार आवश्यक वस्तुओं (भोजन, वस्त्र, आवास, औषधि) का प्रतिनिधित्व करता है। टीका। 'स्वतंत्रता' 'लालसा से मुक्ति' या संतोष के तीसरे चिन्ह का प्रतिनिधित्व करती है। एक अरहंत (प्रबुद्ध) के रूप में, उसका मन केवल उन विचारों और इच्छाओं पर रहता है जो तीन लक्षणों - दु:ख, अनित्यता और आत्म-भ्रम - से रहित और अप्रभावित होते हैं। 'पथ' (पदा) से तात्पर्य नियति - अर्थात् पुनर्जन्म से है। इस गाथा का एक भाग, और लगभग वही टीका, धम्मपद के श्लोक 92 (टीका, ii. 171-173) में मिलता है, जिसे भगवान (बुद्ध) द्वारा बेलट्ठसीसा को संबोधित करते समय उद्धृत किया गया है {cf. भजन 16)। उद्धृत टीका पुनर्जन्म के सभी रूपों को सूचीबद्ध करती है; धम्मपाला केवल नरक में 'नियति' का वर्णन करते हैं, बाकी सब कुछ। दोनों का कहना है कि उसकी नियति का निर्धारण करना उतना ही असंभव है जितना यह बताना कि पक्षी कहाँ और कैसे उतरेंगे।

1.10-2[92] विजयथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
यस्सासवपरिक्खीना से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा विजय का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने के बाद, उन्होंने भगवान पियादस्सी के समय एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब गुरुजी परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके थे, तब उन्होंने

ज्ञान प्राप्ति पर उनके मंदिर के लिए रत्नजड़ित चौखट बनवाई और उनके सम्मान में एक भव्य चौखट उत्सव आयोजित किया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे रत्नमणि के प्रकाश में सैकड़ों जन्मों तक विचरण करते रहे। इस प्रकार देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते हुए, वे श्रावस्ती में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर आए, जब बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम विजय था। वयस्क होने पर उन्होंने ब्राह्मण विद्याओं में निपुणता प्राप्त की, संसार का त्याग किया, संन्यासी बन गए, वन क्षेत्र में ध्यान साधते हुए निवास किया, बुद्ध के प्रकट होने का वृत्तांत सुना, उनके प्रति श्रद्धा जागृत हुई, गुरु के समक्ष उपस्थित हुए, उन्हें प्रणाम किया और एक ओर बैठ गए। गुरु ने उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। उन्होंने सत्य (धम्म) को सुना, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

"जब संसार के रक्षक, पियादस्सी,

श्रेष्ठतम पुरुषों ने निर्वाण प्राप्त किया।

मैंने धार्मिक भावना से प्रेरित होकर मोतियों की रेलिंग बनाई।

और नेक दिल। मैंने एक बहुत ही उत्कृष्ट काम किया।

रेलिंग, जिसके चारों ओर रत्न जड़े हुए थे

(मणि)। सम्मान में उत्सव आयोजित करने के बाद

रेलिंग से गिरते ही मेरी मौत हो गई।

मैं जिस भी स्थिति में होता

पुनर्जन्म, चाहे दिव्य रूप में हो या मानव रूप में,

उनके पास आकाश में उत्पन्न होने वाले रत्न (मणि) थे।

(मेरे लिए); यह एक सार्थक परिणाम है

सराहनीय कार्य।

सोलह सौ युग (कप्पा) पहले, से

अब, छत्तीस शासक मौजूद थे।

मणिप्पभासा नामक अत्यंत शक्तिशाली विश्वराज

(रत्न की चमकती रोशनी)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने "यस्सावा परिक्खीना" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला, जिससे उनकी अञ्ञा (प्राप्ति) प्रकट हुई।

92. वहाँ, yassāsavā parikkhīnā का अर्थ है: — वे चार दोष जिनमें इंद्रिय सुख आदि का दोष शामिल है, जिनका सदा उत्तम व्यक्तित्व अपने श्रेष्ठ मार्ग (ariyamagga) के कारण सर्वथा समाप्त (khīnā) हो गया और त्याग दिया गया। Āhāre ca anissito का अर्थ है: जो भी आश्रित (anissito) नहीं है, भोग के बंधनों (agadhito) से मुक्त है, वह पोषण (āhāre) में निर्दोष (anajjhāpanno) हो गया है; यह केवल (matta) एक उदाहरण (nidassana) है; यहाँ, भोजन (āhāra) के शीर्ष (sīsa) के साथ चार धार्मिक आवश्यक तत्व (paccaya) भी लिए गए हैं (gahita); इस प्रकार, इसे देखा जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, यहाँ व्याकरणिक अभिव्यक्ति (सद्दा), अर्थात् आहार, को एक धार्मिक सार (पच्चय) के नामकरण (परियय) के रूप में समझा जाना चाहिए। "सुञ्ञतो अनिमित्तो च" का अर्थ है: यहाँ, उद्देश्यहीन (अप्पनिहित) मुक्ति (विमोक्खा) को भी लिया गया है; ये तीनों शब्द भी निर्वाण के नाम हैं। वास्तव में, निर्वाण शून्य (सुञ्ञ) है क्योंकि इसमें सूची (राता) आदि का अभाव है; स्पष्ट रूप से उनसे मुक्त (विमुता) (तेहि); इस प्रकार, शून्यताविमोक्खा (शून्यता मुक्ति); इसी प्रकार, यह चिन्हहीन (अनिमित्तं) भी है, क्योंकि इसमें कामवासना (राग) आदि के चिन्हों का अभाव है, साथ ही सृष्टि (संखार) के चिन्ह (निमित्त) का भी अभाव है। स्पष्ट रूप से उनसे मुक्त; अतः, अनिमित्त विमोक्खा (निशानहीन मुक्ति); काम (राग) आदि जैसी आकांक्षा (पनिधि, संकल्प) के अभाव के कारण, यह लक्ष्यहीन (अप्पनिहित) है; स्पष्ट रूप से उनसे मुक्त; अतः, अप्पनिहितविमोक्खो (लक्ष्यहीन मुक्ति); ऐसा कहा गया है। जो व्यक्ति फल प्राप्ति के माध्यम से इन तीन श्रेणियों (विधा) को अपना इंद्रिय विषय (आरम्मन) बनाकर जीवित रहता है, उसके लिए भी विमोक्खो यस्सा गोचरो (जिसका चारागाह (गोचरो) मुक्ति (विमोक्खो) है)। आकाशकेव सकुंतानं, पदं तस्स दुरन्नयं का अर्थ है: — जिस प्रकार आकाश में उड़ने वाले पक्षियों के बारे में यह जानना संभव नहीं है कि "इस क्षेत्र में वे पैरों से चलकर गए थे; वे इस क्षेत्र में अपने सीने (उरे) से प्रहार करते हुए गए थे; यह सिर (सीसा) से और यह पंखों (पक्खा) से"; ठीक उसी प्रकार, ऐसे भिक्षु के बारे में यह जानना संभव नहीं है कि "वह इस मार्ग (पद) से नरक (निरिया) आदि के मार्गों में गया था।"

थेरा विजय के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(93):एराका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (93) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
93. एराका
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के पुत्र के रूप में हुआ और उनका नाम एराका रखा गया। [1] वे सौंदर्य और आकर्षण से परिपूर्ण थे, इसलिए उन्हें जो भी कार्य करना होता था, उसमें वे सर्वोपरि स्थिति में होते थे। उनके माता-पिता ने उनका विवाह एक ऐसी कन्या से किया जो सौंदर्य, सद्‌गुण, आयु और योग्यताओं के मामले में उपयुक्त थी। लेकिन जल्द ही, क्योंकि यह उनका अंतिम जीवन था, वे निरंतर जीवन से व्याकुल हो गए और [87] भगवान (बुद्ध) की शरण ली। उनसे धम्म का उपदेश सुनने के बाद, एराका ने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया)। भगवान (बुद्ध) ने उन्हें अभ्यास कराया, लेकिन कुछ दिनों तक वे बुरे विचारों में लीन रहे। तब भगवान (बुद्ध), उनके विचारों की धारा को जानते हुए, उन्हें एक श्लोक में संबोधित किया। और इसे सुनकर उन्होंने सोचा: 'मैंने अनुचित कार्य किया है; मैं मूर्ख हूँ कि ऐसे भगवान (बुद्ध) से शिक्षा प्राप्त करते समय भी मैं बुरे विचारों में लीन रहा।' और दुःख में डूबे हुए उन्होंने आत्मज्ञान प्राप्त करने में स्वयं को समर्पित कर दिया, और शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इस पर उन्होंने उस श्लोक को दोहराते हुए अन्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[93] दुक्खा कामा एराका न सुखा कामा एराका,॥
यो कामे कामयति दुक्खं सो कामयति एरका,॥
यो कामे न कामयति एरका दुक्खं सो न कामयति एरका' ती॥ ॥

[93] हे एराका, सांसारिक इच्छाएँ दुखद हैं!
हे एराका, सांसारिक इच्छाओं में कोई कल्याण नहीं!
जो कोई इंद्रिय सुखों की इच्छा करता है, वह दुःख की इच्छा करता है।
जो कोई इंद्रिय सुखों की इच्छा नहीं करता, वह दुःख की इच्छा नहीं करता। [2]

[1] एराका एक प्रकार का पौधा प्रतीत होता है, शायद एक घास, जिसे कंबल या चटाई में बुना जाता था (विनय ग्रंथ, ii. 35, n. 8; जातक, iii. 91; सिटर्स, lxii. 435)। मज्झ., i. 87 = मिलिंदा , i. 276 में एक शहर को एराका-घास कहा गया है। तुलना करें धप. टिप्पणी, iii. 231 भी ।

[2] इस गाथा की संयमित और सरल भाषा काव्यमय नहीं है, और अनुवाद में भी इसका बारीकी से पालन किया गया है। काम (सांसारिक इच्छाएँ; इंद्रिय सुख) को समानार्थक नहीं माना जा सकता। बौद्ध धर्म जीवन के इस तल, पशु जीवन और निम्नतम लोकों को भी 'काम का क्षेत्र' मानता है। 'अपुष्ट इच्छा' शायद इसका सबसे सटीक अनुवाद है। केवल 'इच्छा' शब्द सही नहीं है, क्योंकि धम्म-चंदा, या उच्चतर चीजों की इच्छा भी कामावचर लोक के जीवन की विशेषता है। डॉ . न्यूमैन ने 'वासना' शब्द का प्रयोग किया है; हमारा शब्द 'वासना' विशेषीकरण के कारण विकृत हो गया है। 'सुख' को इस प्रकार विकृत नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि सुख (सुख) भी होता है जिसमें दुःख नहीं होता।

1.10-3 [93] एराकत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
दुक्खा कामा एरका से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा एरका का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, इनका पुनर्जन्म भगवान सिद्धार्थ के समय में एक पारिवारिक घर में हुआ। बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उन्हें गुरु के दर्शन हुए। वे श्रद्धा से भर गए, परन्तु गुरु को अर्पित करने योग्य कुछ न मिलने पर उन्होंने मन ही मन कहा, "अब मैं उत्तम कर्म (सार) करूंगा और शारीरिक रूप से (काय) गुरु के मार्ग को समतल (समं) कर दिया। गुरु ने उस मार्ग पर प्रवेश किया। वहाँ भगवान को देखकर वे श्रद्धा से भर गए, उन्हें प्रणाम किया, हाथ जोड़कर खड़े रहे और बुद्ध के ध्यान में लीन रहे, जब तक कि वे उनकी दृष्टि से ओझल नहीं हो गए। इस पुण्य कर्म के कारण उनका जन्म हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे जन्म-जन्म के चक्र में घूमते रहे, परन्तु उत्तम जीवन व्यतीत करते रहे। जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे (सुगति) सावत्थी में एक सम्मानित (संभवनीय) जागीरदार (कुटुम्बिया) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर आए। उनका नाम एराका था। वे अत्यंत सुंदर (अभिरूपो), आकर्षक (दस्सनीयो), सुरुचिपूर्ण (पासादिको) थे और जो भी कार्य किया जाता था, उसमें पूर्ण (परम) सिद्धि (वेय्यात्तिया) प्राप्त थे। उनके माता-पिता ने उनके समान पारिवारिक स्थिति (कुल), सुंदरता (रूप), आचरण (आचार), आयु (वय) और चतुराई (कोसल्ल) वाली एक उपयुक्त (अनुच्छविक) कन्या लाकर उनका विवाह कराया। घर में उनके साथ सहवास करते हुए, वे बार-बार जन्मों (संसार) के चक्रों से दुखी होकर, अपने अंतिम जन्म में होने के कारण पश्चाताप के किसी स्रोत (वत्थु) के माध्यम से गुरु के समक्ष गए। उन्होंने सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की और भिक्षु बन गए; उन्हें गुरु ने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) दिया। उन्होंने उस मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) को अपनाया और कुछ दिनों के भीतर पश्चाताप (उक्कन्ठ) से ग्रस्त होकर उनका निधन हो गया। तब गुरु ने उनके हृदय में घटी घटना को जानकर, उपदेश के रूप में "दुक्खा कामा एरका" से शुरू होने वाला एक श्लोक कहा। इसे सुनकर उन्होंने मन ही मन कहा, "मैंने जो अनुचित (आयुत्त) कार्य किया है, वह यह है कि मैं अनुचित (मिद्धा) विचारों (वितक्का) में लीन (बहुला) रहा, और गुरु के समक्ष उस मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) को प्राप्त करने के बाद उसे भूल गया (विषज्जंतो)। गुरु जैसे व्यक्तित्व के कारण, "उन्हें पश्चाताप हुआ, उन्होंने अपना मन आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में लगाया (युत्तपयुत्त) और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।"

"अंतर्दृष्टि (चक्खुमा) के स्वामी,"

एक छोटी नदी (नदीका) पार करने के बाद,

मैं जंगल में गया। संयोगवश मेरे पास

उस स्व-जागृत बुद्ध सुद्धत्थ को देखा,

जिनके विशिष्ट लक्षण (लक्खना) थे

बहुत बढ़िया। अपने साथ ले जाने के बाद

कुदाल और पिटक और

उस पथ को समतल कर दिया।

मैंने गुरु को नमन किया, और

मेरे मन को सुखद रूप से धार्मिक बना दिया, (pasā-

dayiṃ).

यह 94 युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने तब वह काम किया; मैं नहीं करता

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही है

सड़क (मग्गा) का फलदायी परिणाम

दान (दान)।

सत्तावन युग (कप्पा) पहले वहाँ

एक सम्राट ने असंख्य लोगों पर शासन किया

(जनाधिपा), सुप्पाबुद्ध नाम से; वे थे

एक नेता (नायक), मनुष्यों का सम्राट।

(नारिसारो).

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत बनने के बाद, उन्होंने उत्तर में (पच्चुदाहासी) भगवान बुद्ध द्वारा कहे गए उसी श्लोक का पाठ किया, जिससे उनकी अञ्ञा (प्राप्ति) (अरहंत पद) प्रकट हुई।

93. हे एराका! कष्टदायक (दुक्खा) कामुक होते हैं

सुख (काम)। हे एराका! कामुक

सुख (काम) आनंदमय (सुख) नहीं होते।

हे एराका! जो कोई भी (कामयति) इच्छा रखता है

वह कामुक सुखों (काम) का स्वागत करता है।

(कामायति) दर्द (दुक्खा)। हे एराका!

जो कोई इच्छा नहीं करता (कामयति)

वह कामुक सुखों (काम) का आनंद नहीं लेता।

स्वागत (कामयति) दर्द (दुक्खा)।"

वहाँ, दुःखा कामा का अर्थ है:— वास्तविकताओं (वत्थु) के लिए ये इच्छाएँ (कामा) और विकृतियों (किलेसा) की इच्छा पीड़ादायक (दुक्खा), पीड़ा से ग्रसित (दुक्खामा) और पीड़ा उत्पन्न करने वाली (निब्बत्तिका) हैं, क्योंकि ये पीड़ा (दुक्खा) का विषय (वत्थु) हैं, और पीड़ा के उतार-चढ़ाव (विपरीतनामदुक्खा) के कारण; और बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (संसार) की पीड़ा (दुक्खा)। वास्तव में, यह कहा गया है: "अप्पसादा कामा भुदुक्खा बहुपायासा, आदिनवो एत्थ भिय्यो (इंद्रिय सुख कष्टदायक होते हैं, जो बहुत पीड़ादायक और अत्यधिक निराशा से भरे होते हैं; यहाँ हानि बहुत अधिक है);" और इसी प्रकार। रेवता का अर्थ है; सबसे पहले, भगवान बुद्ध ने उन्हें संबोधित किया; बाद में, थेरा ने स्वयं से नाम लेकर बात की। ना सुखा कामा का अर्थ है: ये इंद्रिय सुख (कामा), अर्थात्, ज्ञानी व्यक्ति के लिए सुख नहीं हैं; लेकिन अज्ञानी व्यक्ति के लिए, ये सुखतो के रूप में उपस्थित होते हैं (उपठहन्ति)। तदनुसार बुद्ध ने कहा: "यो सुखं दुःखतो अड्डा, दुःखमदक्खी सल्लतो (जिसने सुख को दुःख और दुःख को काँटे के समान समझा)," इत्यादि। यो कामे कामयति, दुःखं सो कामयति का अर्थ है: - जो प्राणी कर्म के कारण कर्म की इच्छा रखता है, वह इच्छा कष्टदायी होती है क्योंकि वह वर्तमान में तीव्र बुखार के साथ होती है, और भविष्य में जन्म-मृत्यु के चक्र के कष्टों के कारण भी होती है; हालांकि, कर्म कष्ट पीड़ा के अधीन होते हैं; इसलिए, वह पीड़ा की इच्छा रखता है। अतः, वह दुःख (दुक्खा) के स्वभाव (सभाव), दुःख (दुक्खा) के विशिष्ट लक्षण (निमित्त) और कष्ट (दुक्खा) के आधार (वत्थु) की कामना करता है; ऐसा कहा गया है। दूसरे (इतरं) को उसके विपरीत (पटिपक्खा) के माध्यम से उसी अर्थ को प्रकट करने के लिए कहा गया है; अतः, इसका अर्थ कही गई बात के विपरीत (विपरीय) रूप से समझा जाना चाहिए।

थेरा एराका के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(94):मेटाजी

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (94) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
94. मेट्टाजी
बुद्ध युग में मगध राज्य में एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम मेट्टाजी रखा गया। [1] बड़े होकर उन्होंने सांसारिक इच्छाओं की बुराई को देखा और वन में रहने वाले एक तपस्वी बन गए। बुद्ध के आगमन की खबर सुनकर और पूर्ववर्ती कारणों से प्रेरित होकर, उन्होंने भगवान (बुद्ध) की शरण ली और उनसे अपनी प्रगति और पतन के बारे में पूछा। दिए गए उत्तर ने उन्हें आश्वस्त किया कि उन्हें भिक्षु संघ में प्रवेश करना चाहिए, जिसके बाद उन्होंने अर्हंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। और इस श्लोक में उन्होंने भगवान (बुद्ध) की स्तुति की:

[94] नाम हि तस्स भगवतो शाक्यपुत्तस्स सिरिमतो,॥
तेनायं अग्गप्पट्टेना एग्गो धम्मो सुदेसिटो' ति.॥ ॥

[94] हे परम पूज्य (बुद्ध),
हमारे तेजस्वी प्रभु, शाकियों के पुत्र, की जय हो!
क्योंकि उन्होंने सर्वोच्च शिखर प्राप्त किया है,
और उन्होंने सर्वोच्च मार्ग (धम्म) को भली-भांति प्रदर्शित किया है।

[1] स्नेह से विजेता.

1.10-4 [94] मेट्टाजिथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
नमो हि तस्स भगवतो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मेट्टाजी का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उनका पुनर्जन्म भगवान अनोमदस्सी के समय एक पारिवारिक घर में हुआ था। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, वे शासन के प्रति विशेष रूप से सजग हो गए और बोधि वृक्ष के लिए ईंटों से बाड़ बनवाई और उसे सीमेंट से पूरा करवाया। गुरु ने उनके लिए धन्यवाद-उपदेश दिया। उस पुण्य कर्म के कारण, उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे अपने बार-बार के जन्मों के चक्र में भटकते रहे और मगध राज्य में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, जब बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम मेट्टाजी था। वयस्क होने पर, उन्हें काम (इंद्रिय सुख) में हानि (आदिनवं) का पता चला, उन्होंने संसार त्याग कर संन्यासी बन गए और वन में निवास करने लगे। तभी उन्हें बुद्ध के प्रकट होने का वृत्तांत प्राप्त हुआ। अपने पूर्व (पुब्ब) कारण (हेतु) से प्रेरित होकर वे गुरु के समक्ष गए, घटना (पवत्ति) और वापसी (निवत्ति) से संबंधित प्रश्न पूछे, और जब गुरु ने उनके प्रश्न का उत्तर दिया, तो उन्होंने उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

मैंने बोधि वृक्ष के लिए एक रेलिंग बनाई

अनोमादस्सी का; जिसने एक टुकड़ा चढ़ाया था

मैंने सीमेंट (सुधा) का पिंड बनाया।

मेरा शारीरिक श्रम (पानिकम्मा)।

उस (राजमिस्त्री के) काम को देखकर

हम; हो गया, अनोमादस्सी, सबसे

गुरु पुरुषों में श्रेष्ठ थे।

भिक्षुओं के बीच में उन्होंने बात की

यह छंद। इस सीमेंट के कारण

इच्छाशक्ति (cetanā) के साथ मिलकर काम करना

और संकल्प (पनिधि) वह एक रखेगा

पीड़ा का अंत (दुक्खा)

खुशहाल समृद्धि।

मैं सुगठित रंगत वाला (वन्ना) हूँ।

प्रसन्न और पवित्र (पसन्ना) चेहरा (मुख)।

एकाग्रचित्त (एकग्गो) और सुव्यवस्थित

(susamāhito); मैं अपना अंतिम (antima) धारण करता हूँ

व्यवस्था (शासन) में शरीर (देह)

आत्मजागृत बुद्ध का।

यदि सभी तरफ से कम नहीं (अनुनका)

पूर्ण (परिपुन्न) सौ युग (कप्पा)

कुछ समय पहले, सब्बा नाम का एक शासक था-

मैं घाना का एक बहुत शक्तिशाली विश्व-राजा था।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने गुरु की प्रशंसा में एक श्लोक बोला।

94. “सचमुच! मेरी श्रद्धा उसी के प्रति है।”

हे ईश्वर, कृपालु साकियान पुत्र;

यह सर्वोपरि सत्य (धम्म) रहा है

जिसने यह उपलब्धि प्राप्त की थी, उससे अच्छी तरह से शिक्षित।

सबसे अग्रणी।"

वहाँ, नमो का अर्थ है: आराधना करना (नमक्कारा)। ही का अर्थ है; केवल एक अविघटनीय कण (निपात)। तस्स का अर्थ है: वह भगवान, जिन्होंने तीसों सिद्धियों को पूर्ण करके, सभी दोषों को चूर-चूर कर दिया (भंजित्वा), और सर्वोत्कृष्ट आत्मज्ञान प्राप्त करने के बाद विशेष रूप से आत्म-जागृत बुद्ध बन गए; वे शाक्य राजा के पुत्र हैं; अतः, शाक्यपुत्र (शाक्य पुत्र)। वह सिरिमा हैं क्योंकि वे अपने सुंदर शरीर (रूपकाय) की उत्तम सुंदरता (सिरी) और अपने आध्यात्मिक शरीर (धम्मकाय) की महिमा (सिरी) से परिपूर्ण हैं, जो कि ऐसे पुण्य कर्मों की समृद्धि (संपत्ति) के फलस्वरूप है जिनका दूसरों से कोई संबंध नहीं है (साधारण)। मेरी आराधना उस धन्य, शाक्य पुत्र, सुंदर महिमा के स्वामी को हो; मैं उन्हें नमामि प्रणाम करता हूँ। यही अर्थ है। तेन का अर्थ है: उस धन्य के द्वारा; अयं का अर्थ है: वह स्वयं उस सत्य (धम्म) का प्रत्यक्ष प्रमाण (पच्चाख) होकर बोलते हैं। अग्गप्पत्तेन (सर्वज्ञता प्राप्त करने वाले के द्वारा); दूसरे शब्दों में, सर्वगुणों से परिपूर्ण सर्वोच्च अवस्था को प्राप्त करने वाले। अग्गधम्मो का अर्थ है; सर्वोत्कृष्ट, सर्वश्रेष्ठ नौ प्रकार का (नवविध) पारलौकिक सत्य; दिसितो का अर्थ है; उत्कृष्ट (सुत्तुं) और स्पष्ट रूप से (अविपरितं) सिखाया गया (पवेदितो)।

थेरा मेट्टाजी के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(95):चक्खुपाला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (95) ------>>>> अगला
अध्याय I.
एकल श्लोक
95. चक्खुपाल

बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में महा-सुवञ्ञा नामक एक जमींदार के पुत्र के रूप में हुआ और उन्हें पाल नाम दिया गया। [1] उन्हें पाल मेजर भी कहा जाता था, क्योंकि उनके छोटे भाई को पाल माइनर कहा जाता था। माता-पिता ने पुत्रों को गृहस्थी के बंधन में बांध दिया। लेकिन भगवान (बुद्ध) जेतवन में आए, और वहाँ पाल मेजर ने उन्हें सुना, और अपने भाई को संपत्ति का प्रबंधन सौंपकर भिक्षु बन गए। पाँच वर्ष तक नौसिखिए के रूप में रहने के बाद, वे साठ भिक्षुओं के साथ अपनी पढ़ाई पूरी करने के लिए चले गए। उन्होंने एक सीमावर्ती गाँव के पास एक वन क्षेत्र चुना, जहाँ गाँव के लोग गृहस्थ अनुयायी थे, और वे पत्तों की कुटिया में रहकर एक संन्यासी भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करने लगे।

उन्हें नेत्र रोग हो गया और डॉक्टर ने उन्हें दवा दी। लेकिन उन्होंने सलाह नहीं मानी और बीमारी और बढ़ गई। उन्होंने सोचा, 'आँखों की बीमारी से राहत पाने से बेहतर है नैतिक पीड़ाओं (किलेसा) को दूर करना ।' इसलिए उन्होंने आँखों की पीड़ा को नज़रअंदाज़ कर अपनी अंतर्दृष्टि पर ध्यान दिया, जिससे उनकी आँखें और पीड़ाएँ एक साथ दूर हो गईं। और वे एक 'दृष्टिहीन' अरहंत (प्रबुद्ध) बन गए। [2]

अब ग्रामवासियों ने भिक्षुओं से थेरा के बारे में पूछा, और उनकी अंधता के बारे में सुनकर, वे [89] अपराधबोध से भरे हुए उनकी सेवा करने लगे। फिर उन भिक्षुओं ने भी अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त कर लिया, और उन्होंने गुरु को प्रणाम करने के लिए सावत्थि लौटने का प्रस्ताव रखा; लेकिन थेरा ने कहा: 'मैं दुर्बल और अंधा हूँ, और यात्रा जोखिम भरी है। मैं तुम्हें रोकूँगा। तुम पहले जाओ और मेरी ओर से भगवान (बुद्ध) और महान थेरों को प्रणाम करो, और पाल माइनर को मेरी स्थिति के बारे में बताओ ताकि वह मेरे पास एक सेवक भेज दे।' अंततः उन्होंने अपने संरक्षकों से विदा लेकर और उन्हें रहने की व्यवस्था करके जाने की सहमति दी। और उन्होंने उनके वचन का पालन किया, और पाल माइनर ने अपने भतीजे पालिका को भेजा। और भिक्षुओं ने पालिका को भिक्षु दीक्षा दी, क्योंकि एक अकेले गृहस्थ के लिए मार्ग सुरक्षित नहीं था। वह गया और थेरा से अपना परिचय दिया, और उनके साथ चल पड़ा। रास्ते में, जंगल में एक गाँव के पास, एक लकड़हारे की पत्नी गा रही थी। नौसिखिए को वह आवाज़ बहुत अच्छी लगी, और उसने अपने चाचा को रुकने के लिए कहकर उसके साथ जाकर गाने लगा। थेरा ने सोचा, 'मैंने एक स्त्री को गाते हुए सुना, और मेरा नौसिखिया यहाँ देर से रुका है। क्या यह किसी बुरे काम में लगा है?' युवक ने लौटकर कहा, 'चलिए, महाराज।' और थेरा ने कहा, 'क्या! क्या तुम बुरे काम में लगे हो?' नौसिखिए ने अंत में अपना गुनाह कबूल कर लिया, और थेरा ने कहा, 'इतना बुरा आदमी मेरे लिए काम नहीं करेगा। यहाँ से चले जाओ!' 'लेकिन रास्ता खतरनाक है, और तुम अंधे हो। कैसे जाओगे?' 'मूर्ख! अगर मैं लेट कर मर भी जाऊँ, तो भी मैं आगे बढ़ूँगा, लेकिन तुम्हारे जैसे लोगों के साथ नहीं।' फिर उसने यह श्लोक कहा:

[95] अंदोहाm̧ हटनेटोस्मि कंतारद्धानपक्कनतो,॥
सयमनोऽपि गच्छिस्साऽ न सहयेन पपेनाऽ ति.॥ ॥

[95] मैं पूरी तरह अंधा हूँ और मेरी आँखें नष्ट हो चुकी हैं
और मैं जंगल के वीरान इलाकों में भटकता रहता हूँ।
फिर भी मैं जाऊँगा, चाहे लेटना ही क्यों न हो,
लेकिन बुराई के बच्चे को अपना साथी बनाकर नहीं।

फिर दूसरा, अपने बुरे कर्म के प्रति सचेत होकर, बाहें फैलाकर रोते हुए जंगल में कूद गया। परन्तु थेरा के पुण्य के प्रभाव से सक्का (देवताओं के राजा, जिन्हें इंद्र भी कहा जाता है) का सिंहासन प्रज्वलित हो गया, और देवता, श्रावस्ती की यात्रा पर निकले एक मनुष्य के रूप में, अपना दंड लेकर उसी शाम उसे श्रावस्ती के जेतवन में ले आए। और पाल बालक ने जीवन भर उसकी सेवा की।

[1] पूरा नाम का अर्थ है नेत्र रक्षक, पिता का महान-स्वर्ण। यह कहानी धम्मपद की उस संकलन के आरंभिक श्लोकों पर टिप्पणी में कुछ अधिक विस्तृत रूप से और थोड़े भिन्न शब्दों में दी गई है। उच्चारण चक्खु-।

[2] संकलन देखें , पृष्ठ 75.

1.10-5 [95] चक्खुपालत्थेरा के श्लोक पर टीका

अन्धोऽहं हतनेत्तोऽस्मि से शुरू होने वाला श्लोक चक्खुपाल का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म करते हुए, भगवान सुद्धत्थ के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। जब उन्होंने बुद्धि प्राप्त की और भगवान सुद्धत्थ परिनिर्वाण में प्रवेश कर चुके थे, तब उन्होंने मंदिर उत्सव (महा) के दौरान सन (उमा) का फूल (असुर) एकत्र करके श्रद्धापूर्वक मंदिर में पूजा की। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने दिव्य लोक में पुनर्जन्म लिया और समय-समय पर पुण्य कर्म करते

हुए, अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण किया और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में महासुवन्न नामक एक जमींदार (कुटुम्बिका) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उन्होंने उसका नाम पाला रखा। जब वह दौड़ने-भागने लगा, तब उसकी माता को एक और पुत्र प्राप्त हुआ। उसके माता-पिता ने उसका नाम चूलपाल रखा और दूसरे का नाम महापाल रखा। बाद में, जब वे वयस्क हो गए, तो उनके माता-पिता ने उन्हें गृहस्थ जीवन के बंधन में बांध दिया। उस समय गुरु सावत्थी के जेतवन में निवास कर रहे थे। वहाँ, महापाल जेतवन जा रहे भक्तों के साथ मठ गए, गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, अपनी संपत्ति (कुटुम्ब) का दायित्व (भार) अपने छोटे भाई (कनिट्ठ) को सौंप दिया, स्वयं भिक्षु बन गए, संघ की पूर्ण दीक्षा (उपसंपदा) प्राप्त की, पाँच वर्ष तक अपने गुरुओं और उपदेशकों की उपस्थिति में रहे, और उपवास समाप्त करने के बाद, उन्होंने स्पष्ट क्षमा याचना की रस्म अदा की, अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठन) को एकत्रित किया, साठ साथी भिक्षुओं को प्राप्त किया, गहन ध्यान (भावना) के विकास के लिए अनुकूल (अनुकूल) निवास स्थान की खोज में लगे रहे, और उनके साथ एक में रहने लगे। वन क्षेत्र में स्थित एक पन्नस्साला नामक झोपड़ी में, जिसे गाँव में रहने वाले भक्तों ने बनवाया था और एक सीमावर्ती गाँव (पच्चन्तगामा) पर निर्भर (निस्साय) रहते हुए, एक भिक्षु (समनधम्म) के कर्तव्यों का पालन करता था। उसे आँखों की बीमारी हो गई थी। एक चिकित्सक ने औषधि तैयार करके उसे दी। उसने चिकित्सक द्वारा बताई गई औषधि का पालन नहीं किया (वत्त)। इसी कारण उसकी बीमारी और बढ़ गई। वह अपनी आंखों की बीमारी के प्रति धीरे-धीरे उदासीन (अज्जुपेक्खित्वा) हो गया और मन ही मन कहने लगा: "मेरे लिए तो आंखों की बीमारी को ठीक करने से बेहतर (वरं) तो इस बीमारी पर विजय पाना (वूपसमना) है।" और उसका ध्यान केवल आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने पर केंद्रित (युत्तपयुत्तो) हो गया। जब वह गहन ध्यान (भावना) में लीन (उसुक्कापेंत) था,उसकी आँखें और उसका दुराचार दोनों एक साथ नष्ट हो गए (भिज्जिंसु) (अपुब्बं अचरिमं)। वह शुष्क दृष्टि वाले अरहंत बन गया (सुक्खविपस्सक)। इसलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

जब विश्व-सम्मानित, योग्य

पवित्र बलिदान प्राप्तकर्ता,

भगवान सिद्धार्थ ने प्रवेश किया

निब्बाना, वहाँ एक महान आयोजन हुआ था

मंदिर-उत्सव।

जब त्योहार मनाया जा रहा था,

महान ऋषि सिद्धार्थ के लिए, मैंने संग्रह किया

सन (उमा) के (नीले) फूल और

विशेष रूप से (अभिरोपयिं) उन्हें अर्पित किया

मंदिर।

आज से चौरानवे युग (कप्पा) पहले,

मैंने विशेष रूप से फूल भेंट किए थे;

मुझे किसी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यह

श्रद्धापूर्वक किए गए इस कार्य का फलदायी परिणाम यही है।

मंदिर में चढ़ाया गया चढ़ावा।

नौवें युग (कप्पा) में इससे पहले

इस (ito) में पचासी उत्पन्न हुए

संप्रभु शासक, अत्यंत शक्तिशाली विश्व-राजा,

सोमदेव के नाम से।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

बाद में, जब थेरा अपनी आंखों की बीमारी के कारण मठ में ही रह गए (चीना), तो भक्तों ने भिक्षा मांगने के लिए गांव आए भिक्षुओं को देखकर पूछा, "थेरा क्यों नहीं आए?" यह सुनकर वे व्याकुल हो गए और थेरा के लिए भिक्षा लेकर आए और बोले, "आदरणीय गुरुदेव! चिंता न करें; अब हम भी आपके लिए भिक्षा लेकर आएंगे और आपकी सेवा करेंगे।" और उन्होंने वैसा ही किया। भिक्षुओं ने थेरा की सलाह मानी और अरहंत पद प्राप्त किया, लेकिन कुछ ही समय बाद उन्होंने उपवास रखा, अपने पापों का पश्चाताप किया और क्षमा याचना की रस्म अदा की और कहा, "आदरणीय गुरुदेव! हम गुरु को प्रणाम करने के लिए सावत्थी जाएंगे।" थेरा ने उत्तर दिया: "मेरी दृष्टि कमजोर है; यात्रा भी कष्टदायक है; मेरे साथ जाने में तुम्हें खतरा हो सकता है। तुम्हें पहले जाना चाहिए; वहाँ जाकर मेरी ओर से गुरु और वरिष्ठों (महाथेरा) को प्रणाम करना; चूलपाल से मेरे साथ घटी घटना के बारे में बात करने के बाद, किसी पुरुष को मेरे पास भेजना।" उन्होंने फिर से विनती की, लेकिन थेरा के जाने पर उन्होंने उत्तर दिया, "ठीक है," अपने पलंग और आसन समेट लिए (सेनासनं संसामेत्वा), अपने भक्तों को विदाई दी (आपुच्छित्वा), अंततः जेतवन पहुँचे, थेरा की ओर से गुरु और महाथेरों को प्रणाम किया, अगले दिन भिक्षा मांगने के लिए निकले (दुतियादिवसे), सावत्थी में चूलपाल से थेरा के बारे में पूछा (तं पवत्तिं), और जब चूलपाल ने उनसे कहा, "आदरणीय महोदय! यह मेरा भतीजा पालिता है; मैं इस युवक को भेजूँगा," तो उन्होंने उसे प्रेरित किया (पब्बाजेत्वा) और यह कहते हुए भेज दिया, "यात्रा जोखिम भरी है (सपरिसायो); एक गृहस्थ के लिए अकेले जाना संभव नहीं है (गहट्ठा); इसलिए उसे भेजा जाना चाहिए।" भिक्षु संघ में शामिल हो जाओ।" अंततः वह थेरा के समक्ष पहुंचा, थेरा को अपने बारे में बताया और थेरा को लेकर लौटते समय, एक गाँव के आसपास, वन क्षेत्र में, उसने एक महिला को जलाऊ लकड़ी इकट्ठा करते हुए गाते हुए सुना, उस पर मोहित हो गया, मार्गदर्शन करने वाले डंडे का सिरा छोड़ दिया और थेरा से इस प्रकार कहा: "आदरणीय महोदय! कृपया मेरे लौटने तक एक क्षण प्रतीक्षा करें," उसके पास गया और वहीं उसे नैतिक पतन का सामना करना पड़ा। थेरा ने इस प्रकार विचार किया: "लेकिन अभी-अभी एक महिला के गाने की आवाज सुनाई दी थी; नौसिखिए बहुत दूर चला गया था; निश्चय ही उसे नैतिक पतन का सामना करना पड़ा होगा।" वह ननद भी लौटकर बोला, "आदरणीय महोदय! चलिए चलें।" थेरा ने पूछा, "तुम पापी क्यों हो गए?" ननद चुप हो गया और दोबारा पूछे जाने पर भी एक शब्द भी नहीं बोला। थेरा ने उससे कहा:"तुम जैसे पापी के हाथ में मेरी (मार्गदर्शक) छड़ी होना उचित नहीं है; तुम्हें चले जाना चाहिए।" फिर जब उस नौसिखिए ने कहा, "यात्रा बहुत जोखिम भरी है, और तुम अंधे भी हो; तुम कैसे जाओगे?" तो थेरा ने उत्तर दिया, "हे मूर्ख! यहाँ भी, जब मैं लेटकर मर जाता हूँ और जब मैं गोल-गोल घूमता हूँ, तब भी तुम जैसे किसी के साथ जाना संभव नहीं है।" उन्होंने इस बात को समझाने के लिए एक श्लोक कहा।

95. "मेरी आंखें खराब हो गई हैं और मैं अंधा हो गया हूँ।"

कठिन मामलों पर बातचीत करना (पक्खंदो)

(कंटारा) लंबी यात्रा (अद्धाना)।

मैं लेटना पसंद करूंगा; वहाँ

मेरे लिए किसी के साथ कोई संगति (सहाय) नहीं है।

पाप करनेवाला।"

वहाँ, अंधो का अर्थ है दृष्टिहीन (चक्खु) होना (विकला)। हटनत्ते का अर्थ है दृष्टिहीन (विनाट्ठ चक्खुका): इस प्रकार उन्होंने अपने अंधत्व की स्थिति को परिभाषित किया है, जैसा कि कहा गया है: "मैं अपनी आँखों की स्थिति (मेट्टा) के बिगड़ जाने के कारण (उपहत) साधनों की विफलता (विपत्ति) से अंधा हूँ; जन्मजात (या जन्म से) अंधा नहीं हूँ। दूसरे शब्दों में, "अंधो (अंधा);" अत: यह मांसल आँख (मंसचक्खु) की कमी को उजागर करना (दीपनम्) है, जैसा कि ऐसे कथनों में उल्लेख किया गया है: "अंधे जिन्ने मातापितरो पोसेति (वह अपने अंधे बूढ़े माता-पिता की देखभाल करता है)", इत्यादि; जैसे कि "सब्बे पि'मे परिब्बाजका अंधा अचक्खुका (ये सभी भटकते दार्शनिक भी अंधे और दृष्टिहीन हैं)", "अंधो एक चक्खु द्विचक्खु (दोनों आँखों से अंधा), एक आँख से अंधा, और दो आँखों वाला व्यक्ति)", इत्यादि, यह ज्ञान की आँख (पञ्ञा) की कमी को उजागर करना (दीपनम्) नहीं है; अतः, यह दिखाने के लिए कहा गया है: — "हतनेत्तो'स्मि;" इससे वह अंधता की स्थिति की ओर इशारा करता है, लेकिन वास्तव में (मुख्य) कंतराद्धाना पक्खन्दो का अर्थ है: जंगल (विवना) में एक लंबी यात्रा पर निकल जाना, जो पार करना कठिन है (कंतरा); बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (संसार) के चक्रों की यात्रा, ऐसे कठिन मार्ग (गहन) जैसे कि पुनर्जन्मों (जाति) आदि के जंगल (गहन) में न जाना; यही इसका अर्थ (अधिप्पाय) है। वास्तव में, यह थेरा ऐसी कठिन यात्रा को पार कर चुका था; सयामानो पि का अर्थ लेटना भी है; मैं अपने सीने और घुटनों के बल जमीन पर चारों ओर घूमता रहूंगा (परिवत्तेनतो), बार-बार चक्कर लगाता रहूंगा (संसारन्तो), जब मेरे पैर मुझे नहीं ले जा पाएंगे। न सहायेन पापेना का अर्थ है: - मैं तुम्हारे जैसे पापी व्यक्ति के साथ साथी बनकर नहीं जाऊंगा; यही व्याख्या है। यह टिप्पणी सुनकर, दूसरे को पश्चाताप हुआ और उसने मन ही मन कहा, "निश्चित रूप से एक जघन्य पाप (साहसिक) किया गया है।" उसने अपनी भुजाएँ ऊपर उठाईं और घने जंगल (वनसन्द) से छलांग लगाते हुए रोता रहा। इसके बाद, थेरा के नैतिक बल (सीला) के कारण, हल्के पीले मखमली पत्थर के आसन (सक्का) में गर्मी के लक्षण दिखाई देने लगे। इसलिए, (ईश्वरीय संप्रभु) सक्का को जब इस बात का पता चला, तो वे थेरा के समक्ष गए और अपने आप को सावत्थी जा रहे एक व्यक्ति के रूप में प्रकट किया। उन्होंने थेरा के दंड का एक सिरा पकड़कर यात्रा को छोटा किया और उसी दिन शाम को थेरा को सावत्थी पहुँचाया। उन्होंने जेतवन में चूलपालित द्वारा निर्मित पत्तों की कुटिया में थेरा को एक तख्ते पर बैठाया, उन्हें बताया कि वे थेरा के साथी के वेश में आए हैं और फिर विदा हो गए। चूलपालित ने भी अपने जीवन भर श्रद्धापूर्वक थेरा की सेवा की।

थेरा चक्खुपाल के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(96): खंडसुमना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (96) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
96. खंडसुमन
बुद्ध युग में पावा में मल्ल (राजा) के परिवार में पुनर्जन्म लेकर , [1] उनका नाम खण्डसुमन (चमेली) रखा गया, क्योंकि उनके जन्मदिन पर चमेली खिली हुई थी। [2] उन्होंने पावा में चुंडा के आम के बाग में रहते हुए भगवान बुद्ध का प्रवचन सुना, [3] भिक्षु संघ में प्रवेश किया और छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त की। इस पर उन्हें अपने पिछले जन्म याद आए: कैसे उन्होंने कश्यप बुद्ध के शिखर पर चमेली का पौधा अर्पित किया था, जब तोड़े गए सभी फूल राजा की भेंट में शामिल हो गए थे; और यह समझकर कि इस कार्य ने उन्हें अब निर्वाण की ओर कैसे मार्गदर्शन किया, उन्होंने यह श्लोक कहा:

[96] एकापुप्पाm कजित्वना असितिओ वस्सा कोटिओ,॥
सग्गेसु परकारेत्वा सेसाकेनामहि निब्बुतो' ति.॥॥

[96] एक फूल जो पवित्र भेंट में लाया गया,
उसने मुझे वर्षों तक सुखद जीवन दिलाया,
स्वर्गिक लोकों में; शेष ने
मुझे पूर्ण शांति और पवित्रता प्रदान की। [4]

[1] पृष्ठ 10, नोट 8 देखें।

[2] सुमाना चमेली है; खंडा टूटा हुआ, खंडित है। चमेली को खंड-सक्करा, टूटी हुई चीनी कहा जाता है।

[3] संवाद देखें , ii. 137. उच्चारण चुंडा.

[4] शाब्दिक रूप से, 'शेष से मैं निब्बुतो हूँ ' - अर्थात्, 'मुझे क्लेशों (मानसिक पीड़ाओं) का परिनिर्वाण (निपटान) प्राप्त हुआ है", दस प्रकार के नैतिक भ्रष्टाचार या पीड़ा का पूर्ण रूप से शांत होना। ऊपर देखें, LXXII., n.

1.10-6[96] खंडसुमनथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
एकपुप्पं चजित्वाना से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा खंड सुमना का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि उनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक पारिवारिक घर में हुआ था। जब उन्होंने ज्ञान प्राप्त किया और गुरुजी परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके थे, तब उन्होंने उनके मंदिर को चारों ओर से चंदन की बाड़ से घेर लिया और इस प्रकार उन्हें अपनी महान श्रद्धा अर्पित की। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच अपार आनंद का अनुभव किया और भगवान कस्सपा के समय एक जमींदार के परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब गुरुजी परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके थे, तब उस पर सोने का एक ठोस मंदिर (कौका स्तूप) बनवाया गया था। जब भी पुष्प अर्पित किए जाते थे और पुष्प उपलब्ध नहीं होते थे, तो उनकी दृष्टि एक टूटे हुए (खंड) चमेली के फूल पर पड़ती थी, जिसे वे उच्च मूल्य पर खरीदकर अपने पास रखते थे और श्रद्धापूर्वक मंदिर में अर्पित करते थे। इसके फलस्वरूप उनमें अपार उत्साह और आनंद उत्पन्न हुआ। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने दिव्य लोक में पुनर्जन्म लिया, अस्सी करोड़ वर्षों तक स्वर्गिक आनंद का अनुभव किया और पावा में मल्ल राजा के परिवार में पुनर्जन्म लिया। उनके जन्म के समय उनके घर में चमेली के फूल और चीनी के टुकड़े उग आए थे। इसी कारण उनका नाम खंडसुमन रखा गया। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तब वे भगवान बुद्ध के पास पहुँचे, जब वे पावा में आम के बाग में निवास कर रहे थे। उन्होंने सत्य (धम्म) को सुना, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने का कर्म करके शीघ्र ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत बन गए। अतः अपदान में कहा गया है:—

"पदुमुत्तरा नामक विजेता,

दुनिया का सबसे बूढ़ा, बैल

पुरुषों में, स्वयंजागृत बुद्ध

चमकने के बाद परिनिर्वाण में प्रवेश किया

आग के गोले की तरह चमकदार।

जब महान वीर निर्वाण प्राप्त कर चुके थे,

वहाँ एक ठोस मंदिर (थूपा) था, जो व्यापक रूप से फैला हुआ था।

विख्यात (वित्थारिको)। दूर से भी

लोगों ने इसे सबसे बेहतर तरीके से करवाया।

उत्कृष्ट अवशेष निवास (धातुगेहा)।

धार्मिक और नेक दिल होने के कारण, मैंने यह किया।

चंदन की लकड़ी की रेलिंग; का द्रव्यमान

ठोस मंदिर के साथ-साथ (रेलिंग)

मंदिर के अनुरूप ही चीजें देखी गईं

तब।

उस अस्तित्व में, मेरा पुनर्जन्म हो रहा था।

चाहे दिव्य प्राणी के रूप में हो या मनुष्य के रूप में-

क्योंकि, मैंने कभी अपनी हीनता (ओमाट्टा) को नहीं देखा।

यह मेरे पूर्व प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

काम।

पंद्रह सौ युग (कप्पा) पहले, से

अब आठ लोग (जना) उठे;

उन सभी का नाम समात्ता था, जो

वे अत्यंत शक्तिशाली विश्वराज थे।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्हें अपना पिछला जन्म याद आता रहा, जहां उन्होंने चमेली के फूल की अपनी सर्वांगीण यज्ञ भेंट को स्वर्गीय समृद्धि के विशिष्ट चिह्न (निमित्त) और निर्वाण प्राप्ति के लिए पर्याप्त योग्यता की स्थिति के रूप में देखा था, और उन्होंने उस बात को स्पष्ट करते हुए, अपनी आनंदमय अभिव्यक्ति के रूप में एक श्लोक कहा।

96. "बलिदान चढ़ाने के बाद

एक फूल के बारे में सोचकर मैं स्वयं चकित हो गया (paricareti)

अस्सी करोड़ के लिए स्वर्ग (सग्गा) में

वर्षों का; जो बचा था (सेसकेना)

मैं निब्बाना (निब्बुतो) की ओर अग्रसर हो गया।

वहाँ, एकपुप्पं का अर्थ फूल (कुसुम) है; हालाँकि, यहाँ वह फूल चमेली के फूल को दर्शाता है। चजित्वान का अर्थ है: ठोस मंदिर (थूप) को संदर्भिक अर्पण करके सर्वांगीण यज्ञ करना, जो ठोस यज्ञ (पसिकग) का कारण बनता है। असितिवसकोतुयो का अर्थ है: मानवीय गणना के अनुसार, अस्सी करोड़ वर्षों तक; यह शब्द कर्म कारक (उपयोग) में पूर्ण (अच्छंत) संरचना (संयोग) में है। इसे पुनर्जन्म (उप्पति) के माध्यम से बार-बार (अपरापरा) और दूसरी बार (दुतिये) स्वर्ग के छह इंद्रिय लोकों (सग्ग) में भी कहा गया है; इस प्रकार, इसे

समझा जाना चाहिए। इसलिए, सग्गेसु का अर्थ है: — तावतिंस (तैंतीस का दिव्य निवास) के रूप में गिने जाने वाले स्वर्ग लोक में; वास्तव में, यहाँ शब्द बहुवचन (बहुवचन) में है, जिसका अर्थ है बार-बार पुनर्जन्म होना। परिकारेत्व का अर्थ है: छह इंद्रियों (इन्द्रिय) को ऐसे इंद्रिय विषयों (आरम्मन) जैसे (सुंदर) रूप (रूप) आदि पर केंद्रित करना (परिकारेति); दूसरे शब्दों में, स्वयं को दिव्य नृत्यांगनाओं द्वारा परिचारित (परिकारेति) और सेवा (उपट्ठापेति) करवाना। शेषकेनांहि निब्बुतो का अर्थ है: उन्होंने उस बात के संबंध में कहा, जो जन्म-जन्म के चक्र से मुक्ति (उपनिस्साय) के लिए पर्याप्त योग्यता (उपनिस्साय) बन गई थी, जिससे दाता के कर्म (दयाकक्कम्म) का वह अंश शेष रह गया था जिसने जन्मों में समृद्धि प्रदान की थी, जिसके परिणामस्वरूप सही इच्छाशक्ति (पवत्त कुसलचेतना) से पुष्पों का आदरपूर्वक अर्पण (वसेना) किया गया था। वास्तव में, पहले (पुब्बा) और बाद (परा) के दौरान उत्पन्न हुई (पवत्त) इच्छाशक्ति (चेतना) बहुत अधिक थी। दूसरे शब्दों में, सेसाकेना का अर्थ है: उसी कर्म (कम्म) के बचे हुए (अवसेसा) 'प्रतिफल' (विपाक) के कारण, उसके पूर्णतः समाप्त (परिक्खाना) होने से पहले ही मैंने उस कर्म के फल (विपाक) में निर्वाण (निब्बुतो) प्राप्त कर लिया था; मैं पाप (किलेसा) की अग्नि के पूर्णतः बुझ जाने (परिनिब्बाना) से पूर्णतः शीतल (परिनिब्बुतो) हो गया था। इससे उन्होंने यह दिखाया: "वह बाद का (चरिमा) आत्म-सत्ता (अत्तभाव) भी, जिसमें मैं खड़ा था और स्वयं अरहंतत्व का दर्शन किया था, उस कर्म (कम्म) का फल (विपाक) है। इसी प्रकार के एक मामले के संबंध में, अन्यत्र (अञ्ञत्थ) भी कहा गया है: "तस्सेव कम्मस्स विपाकवसेसेना, उसी कर्म के अवशिष्ट 'प्रतिफल' के कारण।"

थेरा खंडसुमाना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(97):तिस्सा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (97) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
97. टिस्सा
बुद्ध युग में रोगुवा नगर में एक राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर , अपने पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने उपाधि प्राप्त की। राजा बिम्बिसार के एक अनुपस्थित सहयोगी के रूप में, उन्होंने उन्हें रत्न, मोती और वस्त्र भेंट किए। राजा ने बदले में उन्हें चित्रित पैनल पर बुद्ध का जीवन और विशेष रूप से उत्कीर्ण स्वर्ण प्लेट पर सशर्त उत्पत्ति भेजी। [1]

जब उन्होंने ये सब देखा, तो पूर्व बुद्धों के अधीन संकल्प लेने और यह उनका अंतिम जन्म होने के कारण, वे आगे बढ़ने और पीछे मुड़ने के बारे में सोचने लगे, अपने हृदय में सिद्धांत की व्यवस्था स्थापित करने लगे और तब तक बेचैन होते रहे जब तक कि वे इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच गए: 'अब मैंने परम पूज्य (बुद्ध) का स्वरूप देख लिया है और साथ ही उनके सिद्धांत की व्यवस्था भी सीख ली है। सांसारिक इच्छाएँ दुःख से भरी हैं। मुझे गृहस्थ जीवन से क्या लेना-देना है?' और उन्होंने संन्यास त्याग दिया, भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और अपना मिट्टी का पात्र लेकर, राजकुमार पुक्कुसाती [2] की तरह , विलाप करते हुए लोगों के पीछे-पीछे नगर छोड़कर राजगृह चले गए। वहाँ वे सब्बसोंडिका गुफा में रहे और परम पूज्य (बुद्ध) के दर्शन किए। और उनसे ज्ञान प्राप्त करके उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। अपने अनुभवों का उल्लेख करते हुए उन्होंने यह कथन (गाथा) कहा:

[97] हित्वा सताफलौ कांसाṃ सोवणं सातराजिकाṃ,॥
अग्गहिं मत्तिकापट्टं इदां दुतियाभसेवणं ती.॥ ॥

[97] पीतल से बने कीमती बर्तनों का त्याग करके,
मैंने सोने से बना यह मिट्टी का कटोरा धारण किया।
तब मुझे दूसरी बार अभिषेक किया गया।

[1] प्रारंभिक इतिहासकारों ने अपने समय की सभ्यता को किसी पूर्ववर्ती युग से जोड़ने में कोई विशेष सावधानी नहीं बरती; फिर भी, प्रारंभिक बौद्ध काल में भारत में लेखन का ज्ञान निश्चित रूप से था, भले ही उपयुक्त पुस्तक सामग्री की कमी के कारण इसका उपयोग

केवल संक्षिप्त शिलालेखों तक ही सीमित रहा हो। लिखित सामग्री के संबंध में, इतिहासकार को यह ध्यान रखना चाहिए कि चालीस वर्षों तक सार्वजनिक सम्मान और सफलता में वृद्धि करने वाले एक मंत्रालय ने संभवतः मुद्रण यंत्र के बिना भी अपने संस्थापक के जीवन और प्रमुख सिद्धांतों को लिखा और प्रसारित किया होगा।

[2] तिस्सा की कहानी वास्तव में, बुद्धघोष द्वारा मज्झ पर टीका , iii. 237 ff. में दर्ज, तक्कसिला के राजा पुक्कुसती और बिम्बिसार के बीच मित्रता के पूर्ण और सुखद वृत्तांत का एक संक्षिप्त सारांश है, जिससे यह असंभव नहीं लगता कि दोनों वृत्तांत एक ही से निकले हों। पुक्कुसती को भिक्षु बनने की पूर्व संध्या पर एक उग्र गाय ने सींग मार दिया था, इसलिए उनका नाम थेरों में दर्ज नहीं है। बिम्बिसार के उपहार दोनों कहानियों में थोड़े भिन्न हैं। उन्होंने पुक्कुसती को 'तीन रत्नों' - बुद्ध, धम्म, संघ - का वर्णन भेजा और सोने की थाली पर उन्होंने विभिन्न सिद्धांत, सतिपट्ठान, अष्टांगिक मार्ग, सैंतीस ज्ञान कारक अंकित किए थे, लेकिन पटिच्च-समुप्पाद नहीं । भारतीय साहित्य में तिस्सा से अधिक प्रचलित नाम शायद ही कोई हो, लेकिन रोगुवा के इस पूर्व राजा की पहचान किसी अन्य ज्ञात तिस्सा से नहीं की जा सकती। यह श्लोक भजन संहिता 144 में पुनः मिलता है।

1.10-7[97] तिस्साथेरा के छंद पर टिप्पणी

हितवासतपलं कांसं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा तिस्सा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए और विपस्सी बुद्ध के समय में वाहन (यान) बनाने वाले परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्हें बुद्ध के दर्शन हुए। वे श्रद्धा से भर गए और चंदन के पेड़ की टूटी हुई शाखा से एक तख्ता (चंदनखंड) बनाकर बुद्ध को अर्पित किया। बुद्ध ने उसका भी उपयोग किया। उस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ, और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, और रोरुवा नगर के एक शाही परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। जब वह वयस्क हुआ, अपने पिता की मृत्यु के बाद, वह संप्रभुता (राज्जे) में स्थापित हुआ, और चूंकि राजा बिम्बिसार उसका सहयोगी था जिससे वह कभी नहीं मिला था, उसने उस राजा बिम्बिसार को रत्न, मोती, वस्त्र आदि उपहार भेजे। बिम्बिसार ने यह जानकर कि वह पुण्य (पुण्यवंत) है, अपना प्रतिफल (पटिपाभतं) भेजते हुए, बुद्ध के आचरण (बुद्धचरित) को एक बहुरंगी वस्त्र (चित्तपत्त) पर और आश्रित उत्पत्ति (पटिच्चसमुप्पाद) को एक स्वर्ण पट्टिका (सुवन्नपट्ट) पर लिखवाकर उसे भेज दिया। उस भेंट को देखकर, उन्होंने बुद्ध के उपदेशों के क्रम (सासनक्कम) को ध्यानपूर्वक देखने (सल्लक्खेत्वा) और आगे-पीछे की गति (पवत्तिनिवत्तियो) का अवलोकन करने के बाद, उस बहुरंगी वस्त्र पर चित्रित बुद्ध के आचरण (बुद्धचरित) तथा स्वर्ण पट्टिका पर अंकित आश्रित उत्पत्ति के क्रम (पटिच्चसमुप्पाद) को ध्यानपूर्वक देखने के बाद, पूर्व बुद्धों के प्रति समर्पित सेवा कर्म करने और अपने अंतिम जन्म में होने के कारण पश्चाताप से भर गए और उन्होंने अपने प्रभुत्व का त्याग करते हुए कहा; मैंने भगवान बुद्ध का वेश (वेसा) देखा है; उपदेशों का क्रम (सासनक्कम) भी थोड़ा-बहुत (एकपकेसा) समझा है; इंद्रिय सुख (काम) अत्यंत कष्टदायक (महादुक्खा) और अत्यधिक कष्टदायी (उपायसा) हैं; अब गृहस्थ जीवन से मुझे क्या लाभ है? अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, पीले वस्त्र धारण करके, उन्होंने परम पूज्य बुद्ध के प्रति समर्पित होकर भिक्षु का दीक्षा संस्कार ग्रहण किया, मिट्टी का कटोरा धारण किया और जनसमूह के विलाप करते समय भी नगर से बाहर निकल गए। पुक्कुसाती के समान, वे समय आने पर राजगृह पहुँचे, जहाँ उन्होंने सप्पसोंडिका पर्वत की ढलान पर विराजमान गौतम बुद्ध के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। गुरु ने उन्हें धर्म का उपदेश दिया। उन्होंने धर्म का उपदेश सुना, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के लिए मानसिक अभ्यास किया और उस पर ध्यान केंद्रित करते हुए जीवन व्यतीत किया।उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में स्वयं को व्यस्त रखा (उस्सुक्कापेति) और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

मैं पहले वाहन निर्माता था

(यानकारा), अच्छी तरह से प्रशिक्षित

लकड़ी के काम में (दारुकम्मा): बनाया हुआ

मैंने एक चंदन बोर्ड (फलका) भेंट किया।

संसार के रिश्तेदारों के लिए भी यही बात लागू होती है।

यह दिव्य महल (ब्यम्हं) चमकता है

चमकीला, सोने से अच्छी तरह निर्मित; हाथी

वाहन, घोड़े से चलने वाला वाहन, दिव्य

परिवहन के लिए, उन्होंने खुद को तैयार रखा।

(उपठित).

महल और पालकी (सिविका) उत्पन्न हुए

मेरी इच्छा के अनुसार; मेरा अनमोल रत्न-

रत्न (रतनम्) अविचलित (अक्खुब-) है

भां); यही फलदायी परिणाम है।

तख्ते की भेंट (फलका) का।

सत्तावन युग (कप्पा) पहले, चार

निम्मिता नामक अत्यंत शक्तिशाली विश्वराज

उन्हें सात रत्नों से संपन्न किया गया था।

मेरी सारी बुराइयाँ जलकर राख हो चुकी थीं...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी वास्तविक उपलब्धि (पतिपत्ति) को आनंदमय अभिव्यक्ति (उदान) के माध्यम से बताने के लिए एक श्लोक बोला।

97. "धातु की ट्रे को त्यागने के बाद..."

वजन में सौ कैरेट (पाला)

सोने का पात्र (सोवन्नम)

मैंने सौ परतें (राजिका) पकड़ीं

मिट्टी के कटोरे को पकड़ना (अग्गहिं);

यह मेरा दूसरा राज्याभिषेक है (अभि-

secanaṃ).

वहाँ, हित्वा का अर्थ है त्याग दिया हुआ (परिच्चजित्वा)। सतपालं का अर्थ है जिसमें सौ कैरेट (पाला) हों, जिसका कुल वज़न सौ कैरेट हो। कांसा का अर्थ है: सोने की बनी थाली। सतराजिकं का अर्थ है: दीवार (भित्ती) की सजावट (विचित्तता) के लिए और साथ ही सुंदर रेखाओं (राजी) से सजाने (चित्तता) के लिए अनेक आवरणों (लेख) से सुसज्जित (युत्त)। अग्गहिं मत्तिकापट्टं का अर्थ है: पहले इस प्रकार के अत्यंत महंगे (एवरूपे महराहे) बर्तनों (भजन) में भोजन करने के बाद, उन्होंने बुद्धों की सलाह (ओवादं) का पालन (करोंतो) किया और अपने प्रभुत्व के त्याग (रेज्जपरिच्चागं) और भिक्षुत्व की ओर अग्रसर होने (उपगमना) पर बधाई देते हुए, बर्तन (भजन) की घोषणा के संकेत (पदेसेना) के माध्यम से कहा: — "वर्तमान में, मैंने इसे त्याग दिया है (चड्डेत्वा) और मिट्टी का कटोरा धारण कर लिया है; मैंने अद्भुत (अहो) अच्छा (साधु) कार्य किया है; मैंने श्रेष्ठ वचन (अरियवतं) बोलने का अभ्यास (अनुट्ठितं) किया है। इसलिए, उन्होंने कहा: "इदं दुतियाभिषेकनम्।" प्रथम राजराज्याभिषेक (राज्जाभिषेकनं) के संदर्भ में, मेरे भिक्षुत्व की ओर यह प्रस्थान (उपगमना) मेरा द्वितीय राज्याभिषेक (अभिषेकन) है। वास्तव में, वह प्रथम राज्याभिषेक कामवासना (राग) आदि से दूषित (संकिलिट्ठं) था, संदेह (सासंक) से ग्रस्त था, शंका (ससंकल्प) से भरा था और संदेह (सपरिसंकं) से मिश्रित था; यह ऐसा कर्म (कम्मं) है जो हानि (अनत्तसंहितं) से जुड़ा है, पीड़ा (दुक्ख) से संबंधित है और नीच (निहीनं) है; परन्तु यह (भिक्षुत्व), इसके विपरीत होने के कारण, अत्यंत उत्कृष्ट और उच्च (पानितं) है; यही इसका महत्व है।

थेरा टिस्सा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(98):अभय2

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (98) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
98. अभय (2)
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम अभय रखा गया। भगवान (बुद्ध) के उपदेश सुनने और भिक्षु बनने के बाद, एक दिन वे भिक्षा मांगने के लिए गाँव गए [1] और वहाँ उन्होंने एक आकर्षक वस्त्रधारी स्त्री को देखा। इससे उनका मन विचलित हो गया और वे विहार (मठ) लौट आए और सोचने लगे: 'किसी दृश्य वस्तु को देखने से मेरा मन दूषित हो गया है। मैंने पाप किया है।' इस चेतना का त्याग करते हुए, उन्होंने ऐसी अंतर्दृष्टि विकसित की कि उन्हें अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त हुआ।

इसके बाद उन्होंने इस श्लोक में अपनी नैतिक चूक और उससे उबरने की समीक्षा की:

[98] रूपाṃ दिस्वा सती मुठहा पियानिमित्तṃ मानसिकारोतो,॥
सरत्तचित्तो वेदेति तां च अज्जोसा तिट्ठति,॥
तस्स वन्धन्ति आसव भवमूला भवगामिनोति॥ ॥

[98] सुंदर आकृति का दर्शन आत्म-नियंत्रण को विचलित कर देता है, [2] यदि कोई केवल उस मधुर और प्रिय छवि पर ध्यान दे, तो हृदय भावनाओं से भर उठता है
और आसक्ति बनी रहती है। इस प्रकार उसमें
घातक पाप पनपते हैं [3] जो नए जीवन को निकट लाते हैं।

[1] अतः XIX. और XXIX. यह स्पष्ट रूप से XXVI का अभय नहीं है।

[2] सती - सचेतनता, ध्यान, विचार पर नियंत्रण।

[3] आसवा. तुलना करें श्लोक 794 आगे; सय., iv. 78.

1.10-8[98] अभयत्थेरा के छंद पर टिप्पणी
रूपं दिस्वा सति मुट्ठा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अभय का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, जिससे उन्हें जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति मिली (वट्टा), और इस-उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, सुमेध बुद्ध के समय एक परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्हें सुमेध बुद्ध के दर्शन हुए, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें सुगंधित शळा पुष्प अर्पित किए। इस पुण्य कर्म के कारण, उनका जन्म देवताओं के बीच हुआ, और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे अपने जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते रहे, लेकिन उत्तम जन्मों में, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका जन्म एक ब्राह्मण परिवार में, सावत्थी में हुआ। उनका नाम अभया पड़ा। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो एक दिन अपनी समृद्धि (संपत्ति) (हेतु) से प्रेरित होकर वे मठ गए, गुरु द्वारा दिए गए सत्य (धम्म) को सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों (पुब्बकिच्चा) को पूरा किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के लिए कर्म किए और जीवन व्यतीत किया। फिर एक दिन जब वे भिक्षा मांगने के लिए गांव में गए, तो संयोगवश उनकी नजर एक सुसज्जित और आभूषणों से लदी हुई गांव की स्त्री पर पड़ी, और उनके मन में उस स्त्री की सुंदरता (रूप) के प्रति कामुक लालसा (चंदराग) उत्पन्न हो गई, जो उनके अज्ञानी (अयोनिसो) मन (मानसिकारा) के प्रभाव (वसेन) के कारण थी। उन्होंने मठ में प्रवेश किया और मन ही मन कहा, "मेरे अंदर शारीरिक सौंदर्य (रूप) के विषय (आरम्मन) में, चेतना (सति) को त्यागने के बाद दृष्टि डालने से, एक अनुचित कर्म (आयुत्तं) उत्पन्न हुआ है।" उन्होंने अपने मन को संयमित (निग्घ्नाति) किया, वहीं पर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

"अजेय (अपराजित) स्वयं बन गया

बुद्ध (सयम्भु), जिन्हें इस नाम से जाना जाता है

सुमेधा ने स्वयं को समर्पित करने के लिए

(anubrūhanto) विरक्तता (viveka)

गहराई में प्रवेश किया (अज्जोगही)

वन (महावनम)।

सालाला के पेड़ को खिलते हुए देखकर

मैंने एक सिर का आभूषण (वटांसक) बनाया।

फूलों को एक साथ बांधने के बाद

बुद्ध से आमने-सामने, जो नेता थे

दुनिया।

यह तीस हजार युग (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने पुष्प-अर्पण किया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें, यही वह स्थिति है।

श्रद्धापूर्वक बनाने का फलदायी परिणाम

बुद्ध को पूजा अर्पित करना।

उन्नीस (उनावीसा) सौ युग (कप्पा)

कुछ समय पहले, सोलह बहुत शक्तिशाली लोग उठे।

विश्व-राजा, (नाम) सुनुमित्त (सुंदर-

(निर्मित), सात रत्नों से सुशोभित।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने यह दिखाने के लिए एक श्लोक कहा: "जो व्यक्ति अपने आप को दुराचार (किलेसा) के आदेशों (अनुवत्तेनतस्सा) का पालन करने के लिए बाध्य करता है, उसके लिए पुनर्जन्म के चक्र के कष्ट (दुक्खा) से सिर उठाना (उक्खिपना) भी संभव नहीं है (न'अत्थिएव); इसलिए जहाँ तक मेरा सवाल है, मैंने उनके आदेशों का पालन नहीं किया," उन्होंने अपने स्वयं के दुराचार के उत्पन्न होने (उप्पत्ती) के उदाहरण (निदासन) के साथ यह बात कही।

98. शारीरिक सौंदर्य (रूपं) देखकर,

जागरूकता (सती) बच निकली (मुट्ठा)।

जो स्वयं को सचेत करता है (मानसिकरोतो)

सुखद (पिया) विशेषता चिह्न

(निमित्त), वह (वेदेति) अनुभव करता है-

भावुक (सारत्ता) मानसिकता (चित्तो);

वह उससे लिपटा हुआ भी खड़ा है (अज्जोसा)।

उस आदमी के घाव (आसव) जो जाता है

(उपगमिनो) की जड़ (मूला) की ओर

अस्तित्व (भाव) में वृद्धि।

वहाँ, रूप का अर्थ है शारीरिक सौंदर्य का सुखदायक निवास (रज्जनिया); हालाँकि, यहाँ इसका अर्थ सुंदर स्त्री रूप (इत्तिरूप) है। दिस्वा का अर्थ है — आँखों से देखकर; विशिष्ट लक्षणों (निमित्त) और पूरक चिह्नों (अनुभ्यंजन) के विवेक (सल्लक्खना) द्वारा, चक्खुद्वार (चक्खुद्वार) के अनुसार, उसे ग्रहण करना। इसी प्रकार उसे ग्रहण करने का कारण (हेतु); यही अर्थ है। सतिमुत्था का अर्थ है शरीर में स्वाभाविक रूप से अप्रिय (असुभासभाव) अवस्था में उत्पन्न होने वाली "असुभा" चेतना का बिगड़ जाना। हालांकि, शारीरिक सौंदर्य (रूपं) देखने के बाद चेतना दूषित हो गई है; इसे दर्शाने के लिए उन्होंने कहा: "पियं निमित्तं मनसिकरोतो। जो व्यक्ति अज्ञानी (अयोनिसो) मन से (मनसिकरोतो) अपने आप को (मनसिकरोतो) सचेत करता है, वह इंद्रिय-विषय (आरमनं) को उसके स्वरूप के अनुसार (यथा उपठितं) "सुभं सुखं, सुखद और आनंदमय," आदि कहकर सुखद (पिया) लक्षण (निमित्त) बना लेता है, तो उसकी चेतना लुप्त हो जाती

है; यही व्याख्या है। परन्तु उसी प्रकार का होकर, सारत्त चित्तो वेदेति का अर्थ है: अच्छी तरह से भावुक (रत्त) मन (चित्तो) होकर, वह उस शारीरिक सौंदर्य के इंद्रिय-विषय (रूपारम्मन) का अनुभव (अनुभवति) करता है, वह विशेष रूप से आनंदित (अभिनंदति) होता है; परन्तु विशेष रूप से आनंदित होते हुए भी, तंच अज्जोसा तिट्ठति का अर्थ है: उस इंद्रिय-विषय (आरम्मनं) से आसक्त (अज्जोसाया) होकर, वह उसे समाप्त करने के बाद भी निगल जाता है (गिलति) और आगे बढ़ जाता है; तस्सवढंति आसवा भावमूलोपगामिनो का अर्थ है: कामासव (कामासव) नामक इंद्रिय सुखों के क्षों से शुरू होने वाले चार दोष, जो इस प्रकार से उत्पन्न व्यक्ति के अस्तित्व (भव) और बार-बार जन्म-जन्म (संसार) के चक्रों का मूल कारण बनने की ओर अग्रसर (उपगमनसभाव) होते हैं, उस व्यक्ति से ऊपर और ऊपर बढ़ते जाते हैं (उपरूपरि); वे घटते नहीं हैं (हयंति); दूसरी ओर, जब मैं गहन ध्यान में खड़ा होकर, आर्य सत्यों में उचित रूप से मर्मस्पर्शी (सच्चानि पटिविझंता) हुआ, तब मैं (पटिसंखाना) और क्रमिक रूप से सही मार्ग (मग्ग पटिपाटी) के माध्यम से आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का उत्तरोत्तर विकास होने से, वे चारों दोष भी पूर्णतः त्याग दिए जाते हैं और सर्वांगीण रूप से समाप्त हो जाते हैं (परिक्खीना); यही इसका महत्व है।

थेरा अभय के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(99):उत्तिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (99) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
99. उत्तिया
बुद्ध युग में कपिलवस्तु में एक शाक्य राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम उत्तिया रखा गया। [1] जब वे समझदार हुए, तो उन्होंने बुद्ध की शक्ति को तब देखा जब वे उनके रिश्तेदारों से मिलने आए थे, [2] उन पर विश्वास किया और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। एक छात्र के रूप में वे एक दिन भिक्षा मांगने के लिए गाँव गए, और रास्ते में उन्होंने एक स्त्री को गाते हुए सुना, और उनकी एकाग्रता भंग हो गई, उनमें कामवासना और वासना उत्पन्न हो गई। चिंतन की शक्ति से स्वयं को नियंत्रित करते हुए, [93] वे बहुत व्याकुल होकर विहार (मठ) में प्रवेश कर गए, और दोपहर की नींद के लिए बैठते हुए, उन्होंने ऐसी अंतर्दृष्टि विकसित की कि उन्हें अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त हुआ। इस पर उन्होंने इस श्लोक में विकृतियों से घृणा के माध्यम से पुनर्जन्म के दुखों से अपनी मुक्ति का उल्लेख किया:

[99] सददाउ सुत्वा सति मुठहा पियानिमित्तm मानसिकारोतो,॥
सरत्तचित्तो वेदेति तां च अज्जोसा तिट्ठति,॥
तस्स वन्धन्ति आसव संसारमुपगामिनोऽति ॥ ॥

[99] मधुर स्वर की ध्वनि आत्म-नियंत्रण को विचलित कर देती है,
यदि कोई केवल उस प्रिय छवि पर विचार करे, तो
हृदय भावनाओं से भर उठता है
और आसक्ति बनी रहती है। इस प्रकार उसमें
घातक पाप पनपते हैं जो संसार [3] को निकट लाते हैं।

[1] भाष्य (ब्र.) में उत्तरीय और उत्तरीय दोनों हैं।

[2] ऊपर देखें, LXIII.

संसार। संसार = पर, अपना, साथ, अपना; सारति: जाना, बहना, दौड़ना, आगे बढ़ना। प्रवाह पर, अपना प्रवाह। एक और उदाहरण जहाँ संसार का अनुवाद 'अपना' के रूप में करना अधिक उपयुक्त होगा। अस्तित्व के निरंतर प्रवाह में किसी पहलू (जीवित प्राणी) के साथ एकात्मता।

[3] उच्चारित संगसारा, 'निरंतर जाना'; पुनर्जन्म, नया जीवन और मृत्यु की धारा या चक्र।

1.10-9 [99] उत्तियाथेरा के श्लोक पर टीका

saddaṃ sutvā sati muṭṭhā से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उत्तिया का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्म संचित किए, और सुमेध बुद्ध के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उन्हें गुरु के दर्शन हुए, वे श्रद्धावान हो गए, उन्होंने बुद्ध के योग्य एक आसन (पल्लंक) बनवाया, जिस पर ऊनी और लिंग ऊन से बना कालीन (गोनक) आदि बिछाया गया, साथ ही सुगंधित कक्ष (गंधकुटी) में एक चंदवा (उत्तराच्छद) भी बनवाया और उसे बुद्ध को अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका पुनर्जन्म कपिलवस्तु के शाही शाक्य परिवार में हुआ। उनका नाम उत्तिया था। वयस्क होने पर, उन्होंने गुरु के रिश्तेदारों की सभा में बुद्ध की शक्ति देखी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करते हुए, एक दिन भिक्षा मांगने के लिए गांव में गए, रास्ते में उन्हें एक गांव की महिला के गाने की आवाज सुनाई दी, और जब उनके मन में अज्ञानतापूर्ण मानसिकता (मानसिकारा) के प्रभाव (वास) से कामुक इच्छा उत्पन्न हुई, तो उन्होंने उचित चिंतन (पटीसंखाना) के बल (बल) से उसे दूर किया, मठ में प्रवेश किया, पश्चाताप किया, अपने दैनिक जीवन स्थल पर बैठ गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर वृद्धि की और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में ऐसा कहा गया है।

एक चबूतरा, साथ ही उसके ऊपर कुछ और।

(उत्तरा) और साथ में (कालीन) आवरण

(पच्चाडा) वास्तव में मेरे द्वारा दिया गया था

ऐसे व्यक्ति को जो सबसे बड़ा हो

विश्व, भगवान सुमेधा।

फिर उस चबूतरे को सुसज्जित किया गया

सात रत्न। यह जानकर (अञ्ञाय)

मेरा संकल्प (संकप्पा), यह उत्पन्न होता है

(निब्बत्तति) हमेशा मेरे लिए।

यह तीस हजार युग पहले की बात है।

फिर मैंने अपना आसन अर्पित किया।

किसी भी बुरी सत्ता को याद न करो; यह

यह आसन (अर्पण) का फलदायी परिणाम है।

बीस हजार युग (कप्पा) पहले, तीन

सुवन्नाभा (स्वर्ण-चमकदार) नाम के पुरुष थे

अत्यंत शक्तिशाली विश्व-राजा, संपन्न

सात रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने एक श्लोक कहा, ताकि यह दिखाया जा सके: — "पुनर्जन्मों के चक्र (वट्ट) के कष्ट (दुक्खा) से जो व्यक्ति दुराचार (किलेसा) का तिरस्कार नहीं करता, वह अपना सिर नहीं उठा पाता (सीसुक्खिपना); लेकिन मैंने तो उनका तिरस्कार किया," और उन्होंने अपने ही दुराचार (किलेसा) के उत्पन्न होने (उप्पति) का उदाहरण दिया।

99. "सद्दा की आवाज़ सुनकर,"

जागरूकता (सती) भाग गई (मुट्ठा);

जो स्वयं को मननशील बनाता है (मानसी-

करोतो)सुखद (पिया) लक्षण-

उसे निमित्त (टिक साइन) का अनुभव होता है।

(वेदेति)। भावुक मानसिकता (सारत्त-

वह चिपका हुआ खड़ा है (अज्जोसा)

यह भी; उस आदमी के नासूर जो जाता है

पुनर्जन्मों के चक्रों (संसार) की ओर वृद्धि होती है।

वहाँ, saddaṃ का अर्थ है; ध्वनि का सुखद इंद्रिय-विषय (saddārammanaṃ)। Saṃsāraupagāmino का अर्थ है:

"इंद्रियों का उत्तराधिकार (पटिपाटि)

स्कंध (कन्ध), धातु (धातु),

इंद्रियों के निवास स्थान (आयतन); उनके

निरंतर (अब्बोच्चिन्नम) चल रहा है

(वत्तमना), कहा जाता है (पवुक्कति)

पुनर्जन्मों का चक्र (संसार)।

पुनर्जन्मों के चक्र (वट्ट) का कारण (कारणं) होने के कारण, इस प्रकार कहा (वत्त), वे पास आते हैं (उपगमेंटि); इस प्रकार, संसारउपगामिनो, जो पुनर्जन्मों के चक्र (संसार) की ओर जाते हैं। दूसरे शब्दों में, "संसारूपगामिनो, जो संसार की ओर जाता है," यही पाठ है। शेष पाठ ठीक पिछले (अनंतरा) श्लोक में बताए गए तरीके से है।

थेरा उत्तिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(100):देवसभा2

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (100) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
100. देवसभा (2) [1]
बुद्ध युग में कपिलवस्तु में एक शाक्य राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम देवसभा रखा गया। बड़े होकर उन्होंने भगवान (बुद्ध) को शाक्यों और कोलियनों के बीच झगड़ा सुलझाते हुए देखकर विश्वास किया, [2] और शरणस्थल में स्थापित हो गए। फिर वे तब गए जब भगवान (बुद्ध) बरगद उद्यान में ठहरे हुए थे, इस बार उन्होंने भिक्षुओं का पंथ ग्रहण किया। उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया, और अपने निर्वाण के आनंद में रहते हुए, उन्होंने इस कथन (गाथा) के साथ परमानंद में उद्गार प्रकट किया:

[100] Sammappadhānasampanno satipaṭṭhānagocaro,‖
Vimuttikusumasañchanno parinibbissatyanāsavo' ti.‖ ‖

[100] जिसने भी सर्वोच्च प्रयास किया,
जिसकी सीमा चौगुनी सतर्कता में है, [3] वह स्वतंत्रता के सुंदर फूलों से लिपटा हुआ,
समझदार और निर्बल, पूर्ण शांति प्राप्त करेगा। [4]

इस प्रकार तबेरा ने अना (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[1] एल.एक्सएक्सएक्स देखें।

[2] कुणाल-जातक, प्रस्तावना, जातक, खंड 412 आगे और ऊपर, LXXIX देखें।

[3] देखें संकलन, पृ. 179; संवाद, ii. 327 ff.

[4] शाब्दिक रूप से, परिनिब्बान- आसव से रहित होगा। टीका कहती है, स-उपदिसेआ और अनुपदितेसा निब्बान दोनों द्वारा परिपूर्ण (तुलना करें संकलन, पृष्ठ 153, नोट 5)। इन सभी श्लोकों में 'समझदार और प्रतिरक्षित' शब्द का प्रयोग अटपटे शब्द अन-आसवो को व्यक्त करने के लिए किया गया है ।

1.10-10 [100] देवसभट्टरा (दुतिया) के श्लोक पर टीका
सम्मप्पधाना संपन्नो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा देवसभा का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित करने वाले इस देवसभा का पुनर्जन्म एक पारिवारिक घर में हुआ। ज्ञान प्राप्ति पर उन्होंने संयोगवश बुद्ध सिखों के दर्शन किए। एक दिन वे धर्मपरायण हो गए और बंधुजीवका पुष्पों का आदरपूर्वक अर्पण किया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने जन्म-जन्मों के चक्रों में विचरण करते रहे और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका पुनर्जन्म कपिलवस्तु के शाक्य परिवार में हुआ। उनका नाम देवसभा था। वयस्क होने पर, उन्होंने बुद्ध की शक्ति को तब देखा जब गुरु एक तकिये (चुंबट) को लेकर हुए झगड़े (कलह) को शांत करने (वूपसमा) के लिए आए थे। वे श्रद्धावान हो गए, शरणाश्रम में स्थापित हुए और फिर गुरु के पास गए, जब गुरु निग्रोध मठ में निवास कर रहे थे। उन्होंने उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों (पुब्बकिच्चा) को पूरा किया; आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के कर्म किए और कुछ ही समय में अरहंत पद प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में ऐसा कहा गया है।

“बंधन (लगेत्वा) बन्धुजीवक

धागे से बंधे फूल (सुत्तक),

मैंने विशेष रूप से बुद्ध को भी यही भेंट अर्पित की।

सिख धर्म, संसार का सगे भाई।

चन्द्रमा के समान बुद्ध सिक्खी थे

स्वच्छ (विमला) और शुद्ध (सुद्ध)।

स्पष्ट रूप से सुखद (विप्पासन्ना) और

शांत (अनाविला); सुखद (नंदी)

अस्तित्व (भाव) पूरी तरह से

थका हुआ; उसने (तिन्ना) पर काबू पा लिया था

संसार से आसक्ति (विसात्तिका)।

असंख्य पुरुषों को निर्वाण में प्रवेश कराना

(निब्बापयन्तं); पार कर जाने के बाद

निब्बाना (तिन्नम) का दूर का किनारा

वह संयोगवश श्रेष्ठ (वरं) था

जो पार कराने का कारण बनते हैं (संसार);

मैंने ऋषि को गहन ध्यान में लीन देखा।

(झायन्तं) जंगल में, किसी ने इशारा किया

और सुव्यवस्थित (susamāhitaṃ)।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने तब अपना कर्म किया था;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह बनाने का फलदायी परिणाम है

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

सातवें युग (कप्पा) में पहले

इससे भी अधिक प्रसिद्ध सम्राट

पुरुष (मनुनिंदो) एक बहुत शक्तिशाली विश्व-

समंतचक्खु नामक राजा।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने आनंदमय उद्घोषणा (उदान) करते हुए एक श्लोक कहा, क्योंकि उनके भीतर स्वयं द्वारा प्राप्त (अधिगत) मुक्ति (विमुक्तिसुख) के आनंद (निस्साय) पर आधारित उत्साह (पीति) और प्रसन्नता (सोमनसा) उत्पन्न हुई थी।

100. "जो सही प्रयासों से संपन्न है

(सम्मप्पधाना), स्थापना होना

जागरूकता (सतिपट्टाना) को अपने चरागाह के रूप में

(गोकारो), अच्छी तरह से ढका हुआ (सानेहान्नो)

मुक्ति के फूलों (कुसुमा) के साथ

(विमुत्ति), रोगमुक्त (अनासवो)

पूर्ण निर्वाण प्राप्त होगा।

वहाँ, सम्मप्पधाना सम्पन्नो का अर्थ है: वह जो चार प्रकार के सही प्रयासों (सम्मप्पधाना) से परिपूर्ण हो गया हो; वह जो उचित कर्तव्यों का पालन करके सिद्ध (संपदेत्वा) खड़ा हो; यही अर्थ है। सतिपट्ठानगोचरो का अर्थ है: इस व्यक्ति के पास वह स्थान (पचत्ति), वह चारागाह था, जिसमें चेतना के ऐसे आधार (पट्टाना) शामिल थे जैसे कि भौतिक शरीर (काया) पर चिंतन (अनुपस्सना) आदि; इस प्रकार, सतिपट्ठानगोचरो (जागरूकता के आधारों का चारागाह; वह व्यक्ति जिसका मन जागरूकता के चार आधारों में सुस्थापित है; यही अर्थ है। गुणोषोभ की कृपा से वही मुक्ति (विमुक्ति) पूर्णतः (परम) सुगंधित (सुगंधित) फूलों (कुसुम) का निर्माण करती है; अच्छी तरह से ढके हुए, अलंकृत और सुशोभित लेकिन उत्कृष्ट रूप से (सम्मा); इस प्रकार, विमुक्तिकुसुमसंचन्नो। परिनिब्बिसत्यनासावो का अर्थ है: एक भिक्षु, इस प्रकार अपने जीवन को सही ढंग से (सम्मा) विनियमित (पटिपन्नो) करके, दोष मुक्त (अनासवो) हो जाएगा, और निर्वाण के ऐसे तत्व (धातु) से परिनिर्वाण में प्रवेश करेगा, चाहे वह अस्तित्व के आधार (उपदिशेष) के साथ हो या उसके बिना; यही अर्थ है। यही श्लोक व्याख्या का सार प्रस्तुत करता है। थेरा की अञ्ञा (प्राप्ति)।

(द्वितीय) थेरा देवसभा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

दसवें अध्याय की टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(101):बेलत्थाकनि

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (101) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
भाग XI
101. बेलाट्ठकानी
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम बेलाठकानी रखा गया। भगवान (बुद्ध) के उपदेश सुनकर जब उन्होंने भिक्षु दीक्षा ली और कोसल के एक वन में शांति और अंतर्दृष्टि का अभ्यास कर रहे थे, तब वे बहुत आलसी हो गए और उनकी वाणी भी कर्कश हो गई। अतः वे अपने अभ्यासों के लिए उचित मन की अवस्था को जागृत नहीं कर सके। तब परम पूज्य (बुद्ध) ने उनकी बढ़ती अंतर्दृष्टि पर ध्यान दिया और इस उपदेशात्मक श्लोक से उनके हृदय को प्रेरित किया:

[101] हत्वा गिहित्ताअन अनावोसितात्तो॥
मुखानगालि ओदारिको कुसिटो,॥
महावाराहोऽव निवापापुत्थो॥
पुनप्पुनाऽ गभ्भमुपेति मांदो ॥॥ ॥

[101] यद्यपि आम आदमी का जीवन बचा रहे, फिर भी यदि कार्य
अधूरा रह जाए, तो मुँह कठोर हल चलाता रहे,
पेट भरा रहे, मन आलस्य से सुस्त रहे: -
जैसे बहुत सारा खाना खाने वाला एक विशाल सूअर,
वह बार-बार पुनर्जन्म लेता है। [1]

तब उन्होंने भगवान (बुद्ध) को अपने सामने बैठे हुए देखकर, उनके प्रवचन से परमानंदित हो गए और अंतर्दृष्टि प्राप्त करके शीघ्र ही अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। और गाथा की अनेक अभिव्यक्तियों के माध्यम से उन्होंने अपनी अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[1] सत्रहवीं देखें.

1.11 ग्यारहवाँ अध्याय

1.11-1 [101] बेलाठानिकत्तेरा के श्लोक पर टीका
Hitvā gihittaṃ anavositatto से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा बेलाठाकनी का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने के बाद, इनका पुनर्जन्म भगवान वेस्सभु (बुद्ध) के समय, आज से इकत्तीस युग (कप्पा) पहले, एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वयस्क होने पर उन्होंने ब्राह्मण विद्या (सिप्पा) में पारंगत होकर गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संसार का त्याग कर तपस्वी संन्यासी बन गए और तपस्वियों से घिरे हुए विचरण करते हुए एक दिन संयोगवश उन्हें भगवान वेस्साभू के दर्शन हुए। वे उत्साह और आनंद से भर उठे, गुरु के ज्ञान (ज्ञान) की समृद्धि (संपत्ति) पर निर्भर होकर (निस्साय) पुण्यमय हो गए और ज्ञान के प्रति श्रद्धापूर्वक पुष्प अर्पित किए। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप उन्होंने जन्म-मृत्यु के चक्र में देव-देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। उन्होंने बेलत्थाकनी नाम प्राप्त किया और बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने गुरु से सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, मानसिक साधना (कम्मत्थान) में लग गए, और कोसल राज्य के वन में रहते हुए, वे आलसी, शारीरिक शक्ति से भरपूर (कायदिहिबहुलो) और अपशब्दों से व्यथित हो गए; उन्होंने कभी भी भिक्षु कर्तव्यों (समनाधम्म) में अपना मन नहीं लगाया (उप्पादेसी)। तब भगवान ने उनके ज्ञान (ज्ञान) की सर्वांगीण परिपक्वता (परिपाक) को देखकर, इस प्रकाशमान (ओभास) श्लोक के माध्यम से उनके पश्चाताप को व्यक्त किया:

101. "किसी अवस्था को त्याग देने के बाद

गृहस्थ (गिहित्म्) उसने नहीं किया

खुद को सफल बनाना (anavo-

(सिटैटो); उसका मुँह हल जैसा था

(मुखानगली); वह पेटू था

(odariko) और आलसी (kusīto), जैसे एक

बड़ा सूअर (वराहो) अनाज खाता था

(निवापपुट्ठो); अज्ञानी मूर्ख

(mando) जन्म लेना होगा (gabbaṃ upeti)

बार - बार।"

उन्हें संयोगवश गुरु के दर्शन हो रहे थे मानो वे उनके सामने विराजमान हों, उन्होंने वह श्लोक भी सुना, पश्चात्ताप के कारण उन्होंने ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता प्राप्त कर ली थी और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े, तथा शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदाना में कहा गया है:—

"(मैंने बुद्ध वेस्साभू को) तेज चमकते हुए देखा"

पीले रंग के कनिकारा फूल की तरह,

पहाड़ी के अंदर बैठा हुआ, सब कुछ रोशन कर रहा है

निर्देश 'सुबह' के समान हैं

तारा' (ओसाधितारका)।

वहाँ तीन युवक थे जो स्वयं

उन्हें अपने-अपने विज्ञान में अच्छी तरह से शिक्षित किया गया था;

उनके कंधों के जुए को पकड़ लेने के बाद

(खरीभार), मेरे पीछे-पीछे आया।

फूल इकट्ठा करने के बाद, उन्हें नीचे फेंक दिया गया

संन्यासियों द्वारा बनाई गई सात टोकरियाँ (पुटक)

मैंने उन्हें विशेष रूप से आदरपूर्वक अर्पित किया।

वेस्साभू का ज्ञान।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब, मैंने अपनी विशेष भेंट चढ़ा दी है

फूल, मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित करने के लिए

ज्ञान (ñāna).

उन्नीस युग (कप्पा) पहले, मैं था

विपुलासभा नामक एक अत्यंत शक्तिशाली विश्वराज।

सात रत्नों से सुशोभित।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने गुरु के निर्देश का उचित सम्मान करने और एक अतिरिक्त कारक (मुखेना) द्वारा अपनी उपलब्धि (अज्ञात) प्रकट करने के लिए उत्तर में (पच्चुदाहासी) वही श्लोक बोला।

वहाँ, hitvā guhittaṃ का अर्थ है: गृहस्थ अवस्था का पूर्णतः त्याग कर (gahattha bhāvaṃ paricajitvā); भिक्षु बन जाना; यही अर्थ है। Anavositatto का अर्थ है: वह पर्याप्त रूप से (anurūpaṃ) संतुष्ट न होने (avositatta) की अवस्था में था; असंतुष्ट, अपूर्ण, अस्थिर (apariyosita) और जो करना चाहिए था वह न करने (akatakaranīyo) की अवस्था में था, क्योंकि वह तट तक नहीं पहुँचा था (atiritattā); यही अर्थ है। दूसरे शब्दों में, Anavositatto का अर्थ है: तदनुसार संतुष्ट न होने (anuavosita) का स्वभाव (sabhāvo) होना; शुद्ध व्यक्तियों द्वारा जीए जाने वाले जीवन का आरोहण न करने वाला, तथा श्रेष्ठ मार्ग (मग्ग) के चरणों में क्रमिक क्रम (अनुपटिपाटि) की प्राप्ति न करने वाला; वह जो पवित्र श्रेष्ठों (आरिया) के दस निवास स्थानों (वास) में निवास (अवुसिटवा) न करने वाला है; यही अर्थ है। इस व्यक्ति का मुख (मुख) हल (नहगला) के समान है; अतः मुखनंगली, हल के समान मुख; हल से पृथ्वी खोदने के समान, वह जो दूसरों के प्रति अपशब्दों के प्रयोग से स्वयं को खोदता रहता है; यही अर्थ है। उदरिको का अर्थ है: अपने पेट (उदरे) पर ध्यान केंद्रित (पसुतो), अपने पेट (उदरापोसना) को पोषित करने में पूर्णतः लीन (तप्परो)। कुसीतो का अर्थ है आलसी (आलस्यो); गहन ध्यान (भावना) के विकास में संलग्न न होने के कारण (अनुयुंजन्तो)। उन्होंने कहा; “महावराणो व निवापपुत्तो, पुनपुनं गभमुपेति मंदो,” ताकि वे इस प्रकार (एवं भूत) बनने की अपनी पूर्णता (निप्पत्तिं) को दर्शा सकें। इसका अर्थ पहले ही कहा जा चुका है (हेट्ठा)। यहाँ भी, जैसे कोई मूर्ख (मन्दो) अपनी प्रकृति (सभाव) के कारण, जिसमें उसने (अनवोसित) आदि पूर्ण नहीं किया है, भिक्षु बनकर बार-बार पुनर्जन्म लेता है (गभमुपेति); वैसे नहीं, मेरे जैसा बुद्धिमान व्यक्ति ऐसा नहीं करता; क्योंकि मेरा स्वभाव (सभाव) इसके विपरीत (तब्बीपरिता) है, और चूंकि मैंने उचित (सम्मा) उपयुक्त प्राप्ति (पटिपत्ति, उचित प्रदर्शन) के शिखर को प्राप्त कर लिया है, (मुझ जैसे बुद्धिमान व्यक्ति को) पूर्ण निर्वाण प्राप्त होता है; इस प्रकार, उन्होंने एक अतिरिक्त (ब्यतिरेक) कारक (मुख) के माध्यम से अपनी अज्ञा (प्राप्ति) प्रकट की: इस प्रकार, इसे देखा जाना चाहिए।

थेरा बेलाट्ठाकनी के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(102):सेतुचा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (102) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
102. सेतुच्चा
बुद्ध युग में एक जिले के राजा के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, [1] वे अपने देश की स्वतंत्रता बनाए रखने में असमर्थ रहे और अपना सिंहासन खो बैठे। दुखी होकर देश भर में भटकते हुए, उन्होंने परम पूज्य (बुद्ध) के दर्शन और वाणी का ज्ञान प्राप्त किया, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। और अपने प्रवचन (गाथा) में सांसारिकता का विरोध करते हुए, उन्होंने अनेक प्रकार से ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की :

[102] मानेना वंचितसे संखरेसु संकिलिस्समानसे,॥
लाभालाभेण मथिता समाधिं नाधिगच्छन्ति' ति.॥ ॥

[102]
व्यर्थ के अभिमानों से भ्रमित होकर, और इंद्रियों की विभिन्न चीजों से उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है;
अपने लाभों से उत्साहित होकर, उस उथल-पुथल की कमी से,
वे एकाग्र मन प्राप्त करने में विफल रहते हैं।

मंडल-राजा। 'घूमने-फिरने वाला राजा' उपाधि से मेरा अनुमान है कि यह एक अस्थायी शासन था, शायद समय-समय पर होने वाले चुनावों के अधीन, या किसी बड़े राजा की इच्छा के अधीन।

[1] मंडल-राजा . पृष्ठ 83, नोट 6 देखें. [यह संस्करण नोट 2]

1.11-2[102] सेतुच्छथेरा के श्लोक पर टीका
मानेन वंचितसे से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सेतुच्च का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय करते हुए, वे आत्म-जागृत बुद्ध के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म हुए। बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उन्होंने भगवान तिस्सा के दर्शन किए, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें उत्तम कटहल और विशेष रूप से तैयार नारियल का काढ़ा (सालव) अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण उनका जन्म दिव्य लोक में हुआ, और वे बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के चक्र में भटकते हुए, कभी-कभी देवताओं और मनुष्यों के बीच, एक छोटे से शासक (मंडलिकरणो) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म हुए, जब यह बुद्ध प्रकट हुए। उनका नाम सेतुच्चा था। अपने पिता के निधन के बाद, वे संप्रभु बन गए और अपने राजकर्तव्यों का निर्वाह करते हुए (राजकिच्चानि विराधेन्तो) उन्होंने अपने राजतंत्र को दूसरों के हाथों में सौंप दिया (गतं), जिससे वे दुःख में डूब गए, पश्चाताप करने लगे, संयोगवश उन्हें भगवान बुद्ध के दर्शन हुए जो विभिन्न क्षेत्रों में भ्रमण कर रहे थे, उन्होंने उनसे संपर्क किया, सत्य की शिक्षा सुनी, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए, अपने सर्वांगीण कर्तव्यों का पालन किया और उसी दिन अरहंत पद प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"जी हाँ! धन्य तिस्सा को,

मैंने पहले फल भेंट किए थे।

मैंने नारियल भेंट किया, एक विशेष

मीठा मिश्रण (खज्जकम्

abhisammatṃ).

बुद्ध को वह भेंट चढ़ाने के बाद,

मुझे महान ऋषि तिस्सा से प्रसन्नता हुई;

क्योंकि मैं कामुक इच्छाओं से ग्रस्त था

सुख (कामाकामी) में प्रायोजित था-

तानियसली पुनर्जन्म (उपपज्जिं) के अनुसार

जैसा मैंने (स्वर्ग में) चाहा था।

यह बानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब से, मैंने उन्हें दान दिया है।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह फल का फलदायी परिणाम है

पेशकश।

इससे तेरह युग (कप्पा) पहले,

मैं एक संप्रभु इंदसमा (सक्का-समान) बन गया।

एक अत्यंत शक्तिशाली विश्व-राजा, जो इन गुणों से संपन्न था

रत्नों की सात प्रजातियाँ।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी दुष्टता के लिए निंदा करते हुए एक श्लोक बोला (गराहंतो)।

102. "जो लोग अभिमान से धोखा खा चुके हैं,

जो इंद्रियों में दूषित हो रहे हैं

समूह (संखारा), जो रहे हैं

लाभ और हानि से परेशान (मथिता)

समाधि की एकाग्रता प्राप्त न कर पाना

दिमाग।

वहाँ, mānena vañcitāse का अर्थ है: वे लोग जो "सेय्योहोमस्मि (मैं श्रेष्ठ हूँ)" आदि जैसे अहंकार (मान) से भ्रमित (विप्पलद्धा) हो गए हैं, और स्वयं को श्रेष्ठ (अत्तुक्कंसन) और दूसरों को नीचा (वम्भन) करने आदि जैसे कर्मों से, और इस प्रकार अच्छे कर्मों के खजाने (भण्ड) को नष्ट कर रहे हैं। Saṅkhāresu saṃkilissamānāse का अर्थ है: वे लोग जो स्वयं द्वारा सृजित (संखत) कर्मों (धम्म) जैसे कि आँखों से शुरू होकर अन्य इंद्रियों और दृश्य वस्तुओं (रूप) आदि से शुरू होकर अन्य इंद्रियों के बीच स्वयं को मैला (संख्य) कर रहे हैं। भोग-विलास के द्वारा आत्म-दुराचार (संकिलेसं) प्रदर्शित करते हुए (आपज्जमाना), उस विशिष्ट चिन्ह (निमित्तं) को प्रकट करते हुए, यह कहते हुए: "एतम्मम; एसो' हंसस्मि; एसो मे अत्ता (यह मेरा है; यह मैं हूँ; यह मेरा स्व है)।" लाभालाभेन मतिता का अर्थ है मित्रवत प्रतिक्रिया (अनुनय) और कठोर घृणा (पटिघा) से व्याकुल (मतिता), कुचला जाना (मद्दिता) और अभिभूत (अभिभूत) होना, जो कुंड, वस्त्र आदि जैसे उपहारों की प्राप्ति और उन्हीं वस्तुओं की प्राप्ति न होने के कारण उत्पन्न होने वाले विशिष्ट लक्षण (निमित्तं) के कारण होता है। यह केवल एक उदाहरण (निदासन) है; यहाँ जीवन के शेष सभी उतार-चढ़ावों (लोकधम्मनं) का संग्रह (संग्रह) देखा जाना चाहिए। समाधिं नाधिगच्छन्ति का अर्थ है: ऐसे व्यक्ति जो शांत स्वभाव और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के माध्यम से एकाग्रता और मन की एकाग्रता (समाधिं) प्राप्त नहीं कर पाते (विन्दन्ति), उचित रूप से प्राप्त नहीं कर पाते (पटिलभन्ति), यहाँ तक कि कभी-कभार भी नहीं, क्योंकि एकाग्रता के लिए अनुकूल वातावरण (धम्मनं) का अभाव होता है और अन्य घटनाओं (इतरेसं) की उपस्थिति होती है। यहाँ भी, जिस प्रकार अहंकार से ग्रस्त अज्ञानी मूर्ख (अविद्दासुनो) एकाग्रता (समाधि) प्राप्त नहीं कर पाते, उसी प्रकार ज्ञानी लोग (विद्दासुनो) नहीं कर पाते। परन्तु जो मेरे समान हैं, वे उन (अभिमान आदि) से अभिभूत न होकर एकाग्रता (समाधि) प्राप्त करते हैं; इस प्रकार, एक अतिरिक्त (भ्यतिरेक) कारक (मुखेन) के माध्यम से अञ्ञा (प्राप्ति) का प्रकटीकरण होता है; इस प्रकार इसे समझा जाना चाहिए।

थेरा सेतुच्चा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(103): बन्धुरा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (103) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
103. बंधुरा
बुद्ध युग में शिलावती [1] नगर में एक पार्षद के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम बंधुरा [2] रखा गया। एक दिन किसी कार्य से वे सावत्थी गए, जहाँ वे आम लोगों के साथ विहार (मठ) गए, भगवान (बुद्ध) के प्रवचन सुने, विश्वास किया और भिक्षु बन गए, तथा समय आने पर उन्हें अर्हतत्व (ज्ञान) प्राप्त हुआ। अब अपने (राजा) की सेवा करने और उनकी सफलता के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए वे शिलावती गए और (राजा) को धम्म का उपदेश दिया , तथा उन्हें चार सत्यों की घोषणा की। (राजा) ने सोतापान (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त की, नगर में एक विशाल विहार का निर्माण कराया, जिसका नाम सुदस्सन रखा और थेरा को अनेक सम्मान और भेंट भेंट की। बाद में उन्होंने सब कुछ भिक्षु संघ को सौंप दिया और पहले की तरह अपने भ्रमण पर जाते हुए, सावत्थी जाने की इच्छा उत्पन्न की। भिक्षुओं ने कहा: 'महोदय, हमारे साथ ठहरिए। यदि आपको किसी चीज की कमी हो, तो हम उसकी व्यवस्था कर देंगे।' उन्होंने उत्तर दिया: 'मित्रों, मुझे किसी भी अतिरिक्त चीज की आवश्यकता नहीं है; मुझे जो कुछ भी मिलता है, मैं उसी से अपना जीवन व्यतीत करता हूँ। मैं धम्म के सार से संतुष्ट हूँ,' और यह कथन कहा:

[103] नहाओ एतेना अत्तिको सुखितो धम्मरासेना टैपिटो,॥
पीत्वान2 रसग्गमुत्तमं न च काहामि विसेन संथवन्' ति॥ ॥

नहीं, मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है, जो आनंद में रहते हैं,
धम्म के मार्ग के सबसे मधुर अमृत का आनंद लेते हैं।
क्या मैं उन अद्वितीय, सर्वोच्च बूंदों को पीकर
अपनी जीभ को विष से परिचित कराऊँ?

[1] साकियाओं का एक नगर (Saṃy., i 117 ff.)।

[2] बर्मी टीका उन्हें बंधन और संध्या कहती है। एक सिंघली एम.एस. उसे सैन्धव कहते हैं।

1.11-3[103] बन्धुरत्थेरा के छंद पर टिप्पणी

नाहं एतेन अत्थिको से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा बंधुरा का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने के बाद, उन्होंने भगवान सिद्धार्थ के समय में एक राजा के हरम (अंतपुरा) के पहरेदार (गोपाको) के रूप में कार्य किया। एक दिन, संयोगवश उनकी दृष्टि भगवान सिद्धार्थ को उनके अनुयायियों (सपरिसं) के साथ राजमहल (राजंगनेन) से गुजरते हुए देखने पर पड़ी। वे श्रद्धापूर्वक कनवेरा के फूल एकत्र करके उन्हें विश्व के मुखिया और उनके पुरोहितों को आदरपूर्वक अर्पित किया। इस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ, और वे समय-समय पर श्रेष्ठ जन्मों में विचरण करते हुए, सिलवती नगर में एक धनाढ्य के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म हुए, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम बंधुरा था। वयस्क होने पर, वे किसी कार्य के सिलसिले में सावत्थी पहुँचे (केनाचिदेव करणीयेन), भक्तों के साथ मठ गए, गुरु से सत्य की शिक्षा (धम्मदेशना) सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और अपने ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता के कारण, उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चलकर शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

"सिद्धार्थ नामक भगवान।"

दुनिया का सबसे बुजुर्ग, बैल

पुरुषों के बीच, उनके शिष्यों द्वारा अनुसरण किया गया,

शहर में प्रवेश किया (नगरपतिपज्जथा)।

मैं एक विशेष रूप से मान्यता प्राप्त (अभिसम्मातो) था।

भीतरी कमरों में संरक्षक (गोपाको)

(राजमहल के अग्रभाग का)। मैंने देखा

विश्व का वह नेता जो निकट आया (उपविट्ठो)

महल।

कनवरम (ओलिएंडर) के फूल तोड़कर,

मैंने उन्हें पादरियों के बीच अच्छी तरह से बिखेर दिया था।

भिक्षुओं का; अलग करके (visuṃ)

मैंने बुद्ध पर ठीक से अपना प्रकाश बिखेरा।

उससे कहीं अधिक।

यह 94 युग (कप्पा) पहले की बात है।

अब, जिसे मैंने विशेष रूप से श्रद्धापूर्वक बनाया है

फूल चढ़ाने की बात मुझे याद नहीं है।

दुष्ट अस्तित्व; यही इसका फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

अस्सी सात युग (कप्पा) पहले

इस प्रकार, चार बहुत शक्तिशाली विश्व-

महान जादुई शक्तियों वाले राजा, जो इन शक्तियों से संपन्न थे

सात रत्न।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी:...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

अरहंत पद प्राप्त करने पर, वे कृतज्ञता की अवस्था में (कटाञ्ञुभावे हत्वा) खड़े हुए और अपने ऊपर कृपा बरसाने वाले राजा के प्रति कृतज्ञता (पच्चुपकार) अर्पित करने के लिए शिलावती नगर गए। राजा को सत्य (धम्म) का उपदेश देते हुए, थेरा ने आर्य सत्यों को प्रकट किया। सत्यों के सर्वांगीण स्पष्टीकरण के अंत में, राजा ने मोक्ष प्राप्ति के प्रथम चरण (सोतापन्न) में धारा-विजेता का पद प्राप्त किया, अपने नगर में सुदस्सन नामक एक विशाल मठ का निर्माण करवाया और उसे थेरा को भेंट (निय्यतेसि) किया। इससे बहुत लाभ हुआ और व्यक्तिगत रूप से आदरपूर्वक भेंट (सक्कारा) अर्पित की गई। थेरा ने मठ और उससे प्राप्त सभी लाभ और व्यक्तिगत रूप से पुरोहितों (संघ) को समर्पित कर दिए, स्वयं भिक्षा मांगने के लिए भटकते रहे, लेकिन पहले की तरह ही, कुछ दिनों तक वहाँ रहे और सावत्थी जाने की इच्छा हुई। भिक्षुओं ने थेरा से कहा, "आदरणीय महोदय! कृपया यहीं रहें; यदि (चार) धार्मिक आवश्यक तत्वों (पच्चय) में कोई कमी हो, तो हम उसकी पूर्ति कर देंगे।" थेरा ने एक श्लोक कहा, ताकि यह दिखाया जा सके: — "मित्रों! मुझे विशाल (उलारा) धार्मिक आवश्यक पदार्थों (पच्चया) की कोई आवश्यकता नहीं है; मैं किसी न किसी प्रकार के (इतरितरेहि) धार्मिक आवश्यक पदार्थों (पच्चया) से ही अपना जीवन यापन करता हूँ; मैं सत्य (धम्म) के स्वाद (रस) से ही संतुष्ट हूँ।"

103. "मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है (अत्थिको);

मनोरंजन (लप्पिटो) द्वारा

स्वादिष्ट धम्म, मैं खुश हूँ।

सबसे उत्कृष्ट, सर्वोत्कृष्ट, स्वादिष्ट पेय पिया

मैं शराब के साथ कोई संबंध नहीं रखूंगा।

बिल्कुल भी जहर नहीं।

वहाँ, nāhaṃ etena atthiko का अर्थ है: मुझे भौतिक वस्तुओं (आमिसा) के लाभ से इस भौतिक (आमिसा) स्वाद (रस) की आवश्यकता नहीं है, जिसके संबंध में आप सभी ने मुझसे कहा था: "हम (कमी होने पर) उसकी भरपाई करेंगे" क्योंकि आप मुझे संतुष्ट करना चाहते थे; मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है; संतोष ही सर्वश्रेष्ठ आनंद है; इसलिए, मैं केवल किसी न किसी प्रकार की धार्मिक आवश्यक वस्तुओं से ही अपना जीवन यापन करता हूँ; यही अर्थ है। अब, आवश्यकता न होने की स्थिति में भी परिश्रम (पधानकारण)

के परिस्थितिजन्य कारण को दर्शाने के लिए, उन्होंने इस प्रकार कहा: "सुखितो धम्मरसेन तपितो।" ज्ञान के सैंतीस तत्वों (बोधिपक्खिया) और नौ प्रकार के पारलौकिक सत्यों (नवविधलोकोत्तरधम्मरस) के आध्यात्मिक स्वाद (धम्मरसेना) से तृप्त (तप्पितो), प्रसन्न (पीनितो) और सुखी (सुहितो) होकर; उत्कृष्टतम आनंद से संतुष्ट (सुहितो); यही अर्थ है। पित्वा रसग्गमुत्तमं का अर्थ है: धर्म के स्वादिष्ट पेय को पीकर खड़ा हुआ, जैसा कि कहा गया है, जो सर्वोत्कृष्ट (अग्गं), श्रेष्ठ (सेट्ठं) है, उससे भी कहीं अधिक उत्कृष्ट है; इसलिए, बुद्ध ने कहा: "सब्बारसं खम्मरसो जिनाति (धम्म का स्वाद सभी स्वादों से श्रेष्ठ है)। न च काहामि विसेन संथवं का अर्थ है; धम्म के स्वादिष्ट पेय को पीकर, जो सभी स्वादों में श्रेष्ठ है, मैं विष, विष से मिलती-जुलती किसी भी चीज या विष के स्वाद से कोई घनिष्ठ संबंध (संथवं) और संगति (संसग्ग) नहीं रखूंगा; ऐसा करने का कोई परिस्थितिजन्य कारण (करणं) नहीं है; यही इसका अर्थ है।"

थेरा बंधुरा के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(104):खिटका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (104) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
104. खितका
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, बड़े होने पर उन्होंने महान मोग्गलाना की अलौकिक शक्तियों के बारे में सुना। [1] और उन्होंने सोचा: 'मैं भी ऐसा ही वरदान प्राप्त करूँगा।' और पूर्व कारणों से प्रेरित होकर उन्होंने परम पूज्य (बुद्ध) के अधीन भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और शांत और अंतर्दृष्टि के प्रशिक्षण में स्वयं को लगाकर, समय के साथ छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त की। फिर उन्होंने विभिन्न प्रकार की अलौकिक गतिविधियों का आनंद लेते हुए, उन कार्यों के आश्चर्य और प्रशिक्षण के आश्चर्य से प्राणियों पर कृपा बरसाना जारी रखा। [2] जब भिक्षुओं ने उनसे पूछा: 'खितक, मित्र, क्या तुम अलौकिक शक्ति का प्रयोग करते हो?' तो उन्होंने यह श्लोक कहा:

[104] लहुको वात मे कायो फूट्हो च पितसुखेन विपुलेन॥
तुलमिव एरीतां मलुतेन पिलावतिव मे कायो' ति॥ ॥

[104] मेरा शरीर सत्य में हल्का है, हर धड़कन
अद्भुत आनंद और परमानंद में धड़क रही है।
जैसे रुई हवा में उड़ती है,
वैसे ही मेरा यह हल्का शरीर तैरता और मंडराता है।

[1] सी.एफ. मोग्गल्लाना की कविता, CCLXIII।

[2] ये तीन प्रकार के आश्चर्यों में से पहले और तीसरे हैं जिन्हें बुद्ध ने जानने का दावा किया था (संवाद, i. 277, cf. 88)। दूसरा 'अभिव्यक्ति का आश्चर्य' था - यानी विचार-पठन।

1.11-4[104] खितकत्थेरा के श्लोक पर टीका
लाहुको वता मे कायो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा खितक का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करके, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए और भगवान पद्ममुत्तरा (बुद्ध) के समय यक्षों की सेना के सेनापति के रूप में पुनर्जन्म लिया। एक दिन, राक्षस सभा में बैठे हुए, उन्होंने एक वृक्ष के चरणों में बैठे गुरु को देखा, उनके पास गए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। गुरु ने उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। उन्होंने सत्य (धम्म) को सुना और अपार आनंद और उमंग का अनुभव किया, अपनी कोहनियों को ताली बजाई, उठे, गुरु को प्रणाम किया, उनकी परिक्रमा की और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे अपने जन्म-जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम खितक था। बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने थेरा महामोग्गल्लाना की महान

जादुई शक्ति की अवस्था के बारे में सुना, और अपने पूर्व उद्देश्य (पुब्बहेतु) से प्रेरित होकर भिक्षु बन गए, मन ही मन यह कहते हुए: "मैं जादुई शक्ति से युक्त बनूंगा," उन्होंने भगवान बुद्ध की उपस्थिति में अपना मानसिक अभ्यास (कम्मत्थाना) किया, और शांत मन (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को बढ़ावा देने वाले कर्म करते हुए, शीघ्र ही छह प्रकार के विशेष ज्ञान (अभिज्ञा) से परिपूर्ण अरहंत बन गए। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

“मनुष्यों का सम्राट (द्विपदिन्दो),

पुरुषों में सांड, जिसे इस नाम से जाना जाता है

पद्म, दृष्टि का स्वामी

(चक्खुमा), से बाहर आने के बाद

घने जंगल ने सत्य सिखाया

(धम्म)। वहाँ एक सभा थी।

यक्षों का वह स्थान, जो महान ऋषि से अधिक दूर नहीं था;

जो लोग वहां एक साथ पहुंचे (संपत्ता)

जो भी व्यवसाय (yena kiccena) दिखता था

वहीं और उसी समय पूरी एकाग्रता से (अज्जापेक्खिंसु)

(तावदे).

बुद्ध की वाणी (गिरं) को जानकर,

और अमरता (अमता) की शिक्षा

मैं धर्मपरायण और दयालु बन गया।

और मैंने उनके बाद उनकी सेवा की (उपात्तहिं)

मैंने अपनी बाहों से ताली बजाई (apphoṭetvā)।

अच्छी सेहत के लाभकारी परिणाम देखें

अभ्यास किया (सुसिन्ना) और उपस्थित होने का

मुझे ऐसा करने की आवश्यकता नहीं थी।

किसी भी बुरे अस्तित्व में पुनर्जन्म (उपपज्जा) लेना

तीस हजार युगों में (कप्पा)।

उन्नीस सौ युग (कप्पा)

बहुत समय पहले, मैं समलंकटा नाम का एक विश्व-राजा था।

सात प्रकार के रत्नों से परिपूर्ण।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी:...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे अनेक व्यवस्थाओं (अनेकविहितं) के साथ अपनी विविध जादुई शक्तियों (इद्धिविध) का अनुभव करते हुए (पच्चानुभन्तो) जीवन व्यतीत करते रहे, क्योंकि वे जादुई शक्ति में पारंगत (वसीभावन) थे और अपनी विशिष्ट (सविशेषं) जादुई शक्तियों के चमत्कार (पाटिहारिय) और मन को वश में करने के चमत्कार (अनुसासनी) से प्राणियों का उत्थान (अनुग्गहं करन्तो) करते थे। जब भिक्षुओं ने उनसे पूछा, "प्रिय मित्र! आपने अपनी जादुई शक्तियाँ कैसे प्राप्त कीं?", तो उन्होंने एक श्लोक सुनाकर उन्हें इस विषय के बारे में बताया।

104. "मेरा शरीर सचमुच आश्चर्यजनक रूप से हल्का हो जाता है।"

(लाहुको), व्याप्त हो जाने पर

(फुट्थो) प्रचुर (विपुलेना) उत्साही

सुख (पीतिसुखेना)।

कपास की तरह (तुला) स्थानांतरित (एरिटा)

हवा (नालुता) से मेरा शरीर बस

तैरते हुए घूमना (पिलावती)।"

वे यह भी कहते हैं: "उदाहवासेना (उनकी आनंदमयी वाणी के माध्यम से)।"

वहाँ, lahuko vata me kāyo का अर्थ है: मेरे शरीर (रूपकाय) में अद्भुत (vata) हल्कापन (sallhuka) आ जाता है, क्योंकि मैं बाधाओं (nīvarana) को रोक देता हूँ (vikkhambana), इत्यादि। मैं चौदह विधियों से अपने मन को वश में कर लेता हूँ और जादुई शक्तियों के चार आधारों (iddhipāda) के विकास (bhāvanā) में उत्कृष्ट निपुणता (suṭṭhu cinnavasībhāva) प्राप्त कर लेता हूँ; जिसके द्वारा मैं इस सड़े हुए शरीर (karajakāya) का उचित उपयोग (perināmemi) करता हूँ, जो धीमा (dandha) है और चार महाभूतों (mahābhūta) पर आधारित (paccaya) भी माना जाता है; यही इसका महत्व है। Phuṭṭho ca pītisukhena vipulena का अर्थ है: मेरा शरीर अपार आनंद और उमंग से भर गया था, जो सर्वव्यापी था; यही व्याख्या है। शरीर के हल्का होने के कारण, इसे दर्शाने के उद्देश्य से कहा गया है। वास्तव में, आनंद की अनुभूति के साथ-साथ हल्कापन का भी अनुभव होता है। यहाँ, आनंद का प्रसार भौतिक रूप (रूप) से भी देखा जाना चाहिए, जो इससे उत्पन्न होता है (taṃsamuṭṭhāna)। परन्तु, उत्साह और आनंद का प्रसार चौथे ध्यान से कैसे जुड़ा है? वास्तव में, यह परमानंदमय आनंद (samatikkantapītisukha) है, इस प्रकार, यदि यह सत्य है; तो यह चौथे ध्यान के क्षण के संदर्भ में नहीं कहा गया है; वास्तव में (atha kho) यह पिछले (pubbabhāga) के संदर्भ में है। "पीतिसुखेन, उत्साहपूर्ण आनंद के साथ;" इस प्रकार, ऐसे आनंद के साथ जो उत्साह (पाति) से युक्त (सहिता) है। वास्तव में, यहाँ समभाव (उपेक्खा) विशिष्ट ज्ञान (ज्ञानविशेष) से जुड़ाव (योग) की दृष्टि से भी सुख (सुख) है, क्योंकि इसका स्वभाव शांतिपूर्ण है; यही इसका महत्व है। इसी प्रकार, वास्तव में, यह कहा गया है: — "सुखसाञ्ञाञ च लहुसाञ्ञाञ च ओक्कमति (वह सुख की अनुभूति और प्रकाश की अनुभूति तक पहुँचता है)।" वह सुख के विचार और प्रकाश की अनुभूति के निकट पहुँचता है, उसमें प्रवेश करता है, उसे स्पर्श करता है और भली-भांति उसे प्राप्त करता है। वह पास आता है। प्रवेश करता है, स्पर्श करता है और सुख के विचार के साथ-साथ प्रकाश की अनुभूति को भी अच्छी तरह से ग्रहण

करता है, जो जादुई शक्ति (इद्धिचत्त) के मन के साथ उत्पन्न होती है, चाहे वह मूल (पादक) ध्यान (आरम्मन) हो या भौतिक रूप (रूपकाय) शरीर (आरम्मन) हो; इस प्रकार, यही अर्थ भी है। इसी प्रकार टीकाकार ने अपनी टीका (अट्टकथायं) में कहा है: - "सुख (सुख) का विचार (संज्ञा), अर्थात्, समभाव (उपेक्खा) से अच्छी तरह से जुड़ा हुआ बोध (संज्ञा) है। वास्तव में, समभाव को शांतिपूर्ण (सन्तं) सुख (सुखं) कहा गया है।" उसी अनुभूति (सञ्ञा) को प्रकाश (लहुसञ्ञा) की अनुभूति के रूप में भी समझा जाना चाहिए, क्योंकि यह स्पष्ट रूप से बाधाओं (वीवरण) और जंगली विचारों (वितक्क) आदि जैसे शत्रुओं से मुक्त (विमुत्तत्त) है। हालाँकि, उनके लिए,जो अत्यंत हल्का (सल्लहुको) हो जाता है, रुई के समान (तूलपिकु)। इस प्रकार, हवा से उड़ते रुई के टुकड़े (वातखित्ततूल पिकु) के समान, वह अपने अत्यंत हल्के शरीर के साथ ब्रह्मा लोक में जाता है। इसलिए, उन्होंने कहा; "तूलमैव एरितं सालुतेन, पिलावती व मे कायो।" इसका अर्थ है — जब मैं अपनी जादुई शक्ति से ब्रह्मा लोक या किसी अन्य (स्वर्ग) में जाने की इच्छा रखता हूँ, तब मेरा शरीर रुई के समान आकाश पर उछलने (लंघन्तो) लगता है और मेरा मन (चित्तं) हवा से विचलित होता है।

थेरा खितका के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(105):मालितावम्भा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (105) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
105. मालितवम्भ
बुद्ध युग में कुरुक्च्छ नगर में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने महान थेरा पच्छभू के उपदेशों से सोतापाण (निर्वाण की पहली ध्यान समाधि) प्राप्त की, [1] और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। अंतर्दृष्टि के अभ्यास में लगे रहकर, वे ऐसे किसी भी स्थान पर निवास करते थे जहाँ जीवन की चार आवश्यक वस्तुओं में से, [2] केवल उपयुक्त भोजन मिलना कठिन होता था; परन्तु जहाँ ऐसा भोजन आसानी से मिल जाता था और [97] शेष वस्तुएँ मिलना कठिन होता था, वहाँ से वे चले जाते थे। इसी प्रकार, अपने पूर्ववृत्तों के कारण और महान पुरुषों के स्वभाव के कारण, [3] उन्होंने अंतर्दृष्टि का विस्तार किया और समय के साथ अरहंत (प्रबुद्ध) हो गए। इस पर, अपनी उपलब्धि पर विचार करते हुए, उन्होंने इस श्लोक में कहा:

[105] उक्कणहितोपि न वसे राममानोपि पक्कमे,॥
नत्वेवनत्थासंमितं वसे वासां विकक्खणो' ति.॥ ॥

[105] जहाँ मुझे प्रदान नहीं किया जाता, वहाँ मुझे कभी न रहना पड़े, [4] मुझे वहाँ से चले जाना चाहिए, यदि जीवन बहुत सुखद सिद्ध हो।
वह व्यक्ति कभी भी आँखों से नहीं देखेगा
जहाँ कुछ भी सर्वोच्च खोज में बाधा उत्पन्न कर सकता है।

[1] एक नाम जो कहीं और नहीं मिलता। यह घटना बाद की हो सकती है। नाम स्वयं - शाब्दिक रूप से, एपिगोनस - संभवतः महत्वपूर्ण है।

[2] भिक्षु के लिए चार आवश्यक वस्तुएँ (पच्चया) भोजन, वस्त्र, आवास और औषधि थीं। पवित्र जीवन के लिए न तो बहुत कम आराम और न ही बहुत अधिक सुख-सुविधा होना ही सिद्धांत है। जैसा कि डॉ. न्यूमैन हमें याद दिलाते हैं, इस विषय को मज्झ., 18वें सूत्र में विस्तार से समझाया गया है।

[3] महापुरिसजाटिकताया। यह एकमात्र उदाहरण है जहाँ यह अभिव्यक्ति आती है। मुझे मालितवम्भा के मामले में इसका कोई विशेष महत्व नहीं दिखता। एक 'महान व्यक्ति' या तो बुद्ध थे या एक महान सम्राट।

[4] पूरे में काल इच्छावाचक है। 'खोज,' या 'कल्याण' (अत्था) ।

1.11-5[105] मालितवम्भथेरा के श्लोक पर टीका
उक्कनठितो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मालितवम्भा का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि भगवान पद्ममुत्तरा के समय हिमवंत से कुछ ही दूरी पर स्थित एक प्राकृतिक झील (जातस्सर) में एक व्यक्ति पक्षी के रूप में पुनर्जन्म लिया। उस पक्षी की रक्षा (अनुग्गनहन्तो) करने के लिए भगवान वहां गए और झील के किनारे-किनारे चले। भगवान को देखकर पक्षी का मन श्रद्धा से भर गया, उसने झील से कमल (कुमुद) तोड़े और उन्हें भगवान को आदरपूर्वक अर्पित किया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वह पक्षी अपने जन्म-जन्म चक्रों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करता रहा और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब कुरुकच्छ नगर में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया। उनके अयाल का नाम मालितवम्भा था। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, उन्होंने महान थेरा पच्छाभू के पास जाकर, उनकी उपस्थिति में सत्य (धम्म) का प्रवचन सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म करते हुए जीवन व्यतीत किया। उनका स्वभाव (सभाव) यह था:— जहाँ भोजन के संदर्भ में उपयुक्त वस्तुएँ प्राप्त करना उनके लिए कठिन होता था, परन्तु अन्य वस्तुएँ आसानी से प्राप्त हो जाती थीं, वहाँ से वे प्रस्थान नहीं करते थे; जहाँ भोजन के संदर्भ में उपयुक्त वस्तुएँ प्राप्त करना उनके लिए आसान होता था, परन्तु अन्य वस्तुएँ प्राप्त करना कठिन होता था, वहाँ वे नहीं रहते थे; वे वहाँ से प्रस्थान कर जाते थे। इस प्रकार जीवन व्यतीत करते हुए, कारण से संपन्न होने के कारण, और महापुरीसजातिक जन्म के कारण, उन्होंने शीघ्र ही आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

“हिमवंता (हिमालय) से कुछ ही दूरी पर एक

बड़ी प्राकृतिक झील, अच्छी तरह से ढकी हुई (सांचानो)

पद्मा और उप्पला के कमल के फूलों के साथ

विविधता और हर जगह फैलाव (समोत्थाटो)

सफेद लिली (पुंडरिका) के साथ।

मैं तब वहाँ एक पक्षी था जिसे वहाँ के लोग जानते थे

कुकुत्था का नाम। मुझ पर इसका प्रभाव था।

नैतिक उपदेशों (सीला) से युक्त

बुद्धि और चतुर

गुण और दोष।

विश्व-ज्ञाता (लोकविदु) पदुमुत्तर (बुद्ध),

बलिदान के योग्य प्राप्तकर्ता

भेंट, महान ऋषि, अच्छी तरह से विचरण किया

प्राकृतिक झील से कुछ ही दूरी पर।

मैंने खिलते हुए कमल के फूल तोड़े।

मैंने पानी लिया और उसे अपनी भेंट चढ़ाई।

महान ऋषि, जिन्होंने इसे स्वीकार किया था

वह मेरा मकसद समझ गया।

वह भेंट देने के बाद

उज्ज्वल आधार (सुक्कमूल) द्वारा प्रेरित,

मुझे किसी भी तरह से उछल-कूद करने की जरूरत नहीं पड़ी।

सौ वर्षों तक दुष्ट अस्तित्व (दुग्गतिं)

हजार युग (कप्पा)।

सोलह सौ युग (कप्पा) पहले से

अब, ये आठ सम्राट थे

पुरुषों में से, अत्यंत शक्तिशाली विश्व-राजाओं, जिनका नाम है

वरुण।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी उचित उपलब्धि (पतिपत्ति) पर विचार किया और अपनी आनंदमय अभिव्यक्ति के लिए एक श्लोक बोला।

105. मैं इस पर ध्यान नहीं देता, यद्यपि मैं ऐसा कर चुका हूँ।

मुझे खेद है; फिर भी मैं प्रस्थान नहीं करता।

मैं हैरान हूँ। एक समझदार आदमी

किसी निवास स्थान (वासा) में नहीं रहना चाहिए।

जो बिल्कुल भी (संहिता) से रहित है।

लाभ (अत्था)।

वहाँ, ukkanṭhito pi na vase का अर्थ है: जब भी मैं किसी निवास स्थान (आवास) में रहता था, तो उच्च धार्मिक विषयों (अधिकुकसलेसु धम्मेसु) में उपयुक्त भोजन (भोजनसप्पाय) न मिलने के कारण मुझे असंतोष (अनाभिरति) होता था; मैं अपने खेद (उक्कन्ठित) के बावजूद वहीं रुका रहा। अन्य चीजों (इतरसप्पाय) के लिए उपयुक्त कुछ प्राप्त करने के कारण न तो मैं वहाँ से गया और न ही वहाँ से प्रस्थान किया। Na vase का अर्थ है: यहाँ, अक्षर ना के साथ शब्द पक्कमे को भी जोड़ना चाहिए (संबंधितब्बं)। राममानो पि पक्कमे का अर्थ है: मैं चाहे जब भी रहा, चाहे जिस भी निवास स्थान में रहा, मुझे धार्मिक आवश्यक तत्वों की कमी के कारण कोई खेद

नहीं हुआ, फिर भी मैं विशेष रूप से व्यथित रहा। इस प्रकार व्यथित रहते हुए भी, शेष बातों के अनुरूप उचित लाभ न मिलने के कारण मैं वहाँ से चला गया। इस प्रकार अपने जीवन को व्यवस्थित करते हुए मैंने अपने कल्याण को शीघ्र ही प्राप्त कर लिया। यहाँ यह भी अपने उचित लाभ पर चिंतन है, जो कि व्याख्या है। हालांकि, दूसरों को सलाह देते समय, इसे प्रक्रिया (विधाना) के रूप में इस प्रकार समझा जाना चाहिए: "जीना चाहिए, प्रस्थान नहीं करना चाहिए।" Na tvevānatthasaṃhitaṃ, vase vāsaṃ vicakkhano का अर्थ है: जिस भी निवास स्थान में धार्मिक अनिवार्यताओं को प्राप्त करना आसान हो, लेकिन भिक्षु का कर्तव्य पूर्ण रूप से सिद्ध न हो; और जिस भी निवास स्थान में धार्मिक अनिवार्यताओं को प्राप्त करना कठिन हो, भिक्षु का कर्तव्य भी पूर्ण रूप से सिद्ध न हो (पारिपूरी)। इस प्रकार का निवास स्थान (एवरूपो आवासो) यहाँ लाभकारी कल्याण के लिए अनुकूल नहीं माना जाता है, जो कि विकास (अवड्ढिसाहितो) से संबंधित नहीं है; इस प्रकार, ऐसा करके; विवेकशील (विख्यात), जन्मजात बुद्धिमान व्यक्ति, जो अपने सर्वांगीण कल्याण की कामना करता है, उसे इस प्रकार के निवास में नहीं रहना चाहिए। जहाँ कहीं भी पाँच विशेषताओं से परिपूर्ण निवास हो, वहाँ सात मूल तत्वों के अनुरूप उपयुक्त (सप्पाय) गुण भी प्राप्त होते हैं; उसे वहीं रहना चाहिए; यही अर्थ है।

थेरा मालितवम्भा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(106):सुहेमंत

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (106) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
106. सुहेमंता
बुद्ध युग में सीमावर्ती देश में एक धनी ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, वे संकस्सा नगर के हिरण उद्यान में परम पूज्य बुद्ध को धम्म का उपदेश देते हुए सुनने गए। [1] संसार त्यागकर उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और तीन पिटकों के पाठकर्ता बन गए, [2] और समय के साथ छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त कर ली। इस पर उन्होंने सोचा: 'मैंने वह सब कुछ प्राप्त कर लिया है जो एक शिष्य प्राप्त कर सकता है। अब यदि मैं भिक्षुओं की सेवा करूँ तो क्या होगा?' अतः उन्होंने भिक्षुओं को प्रवचन दिए और उनकी समस्याओं का समाधान किया। और एक दिन उन्होंने अपने विषय में इस श्लोक के माध्यम से भिक्षुओं और अन्य बुद्धिमान व्यक्तियों को संबोधित किया:

[106] सातलिङ्गस्सा अत्थस्सा सातलक्खनधारिनो,॥
एकांगदस्सी दुम्मेधो सतादस्सी च पण्डितो' ति.॥ ॥

[106] सौ संकेत दिखाते हैं, सौ निशान
धोखा देते हैं जिनमें छिपा अर्थ [3] निहित है।
जिसकी आँखें केवल एक को देख पाती हैं, वह मूर्ख है,
जो सौ को पहचान सकता है, वह बुद्धिमान है।

इस प्रकार थेरा ने भिक्षुओं के समक्ष अपने उत्कृष्ट विश्लेषणात्मक ज्ञान की उपलब्धि का बखान किया।

[1] फा-हिएन द्वारा एक समृद्ध बौद्ध केंद्र के रूप में उल्लेख किया गया है। यह नाम आज भी मौजूद है, गाँव कनुज से 45 मील उत्तर पूर्व में है (लेग्गे की फा-हिएन यात्राएँ, 1886)।

[2] तुलना करें एलएक्सवी., एन. 2.

[3] अत्था = ñeyya, Cy.

1.11-6[106] सुहेमंतत्थेरा के श्लोक पर टीका
सतलिंगस्स अत्थस्स से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुहेमंत का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, पुण्य कर्म संचित किए जिससे उन्हें इस और उस जन्म के चक्र से मुक्ति मिली। वे आज से बानवे युग (कप्पा) पहले, भगवान तिस्सा (बुद्ध) के समय में वनवासी बन गए और वन में रहने लगे। उनकी रक्षा करने के लिए भगवान बुद्ध वन में प्रवेश कर गए और उनके निकट एक वृक्ष की तलहटी में बैठ गए। भगवान बुद्ध को देखकर वे श्रद्धा से भर गए और सुगंधित पुन्नाग पुष्प तोड़कर उन्हें श्रद्धापूर्वक अर्पित कर दिया। उस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ, और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे और एक धनी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में सीमावर्ती क्षेत्र (परियंतदेश) में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम सुहेमंत था। बुद्धि प्राप्त करने पर वे संकस नगर के एक विगदाया (हिरण आश्रम) में निवास कर रहे भगवान बुद्ध के पास गए, धर्म का प्रवचन सुना, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए, तीनों पिटकों में विख्यात हुए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चले और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) और विश्लेषणात्मक ज्ञान (पटिसंभिदा) से परिपूर्ण अरहंत बन गए। अतः अपदान में कहा गया है:—

घने जंगल में प्रवेश करने के बाद,

मैं एक शिकारी (लुड्डाको) के रूप में रहता था।

मैंने पुन्नागा वृक्ष को फूलों से खिलते हुए देखा।

मैंने परम श्रेष्ठ ज्ञानी व्यक्ति के बारे में सोचा।

उन फूलों को तोड़ने के बाद, जिनकी सुगंध थी...

मीठा और देखने में सुखद (सुभं) था, मैंने रखा

रेत पर उनके साथ एक मंदिर बनाया, और

बुद्ध को मेरी भेंट।

यह बानवे युग पहले की बात है जब मैंने यह किया था।

श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट, विशेषकर फूल।

मुझे किसी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यह

यह मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

इक्यावन युग (कप्पा) पहले, मैं एक था

अत्यंत शक्तिशाली विश्व-राजा (जिसका नाम) तामोनुडा था

(अंधकार को दूर करने वाला) से संपन्न

सात प्रकार के रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने मन ही मन सोचा: "शिष्य के रूप में जो कुछ भी प्राप्त करना चाहिए था, वह मैंने प्राप्त कर लिया है; अब यदि मैं भिक्षुओं की रक्षा करूँ तो क्या होगा?" इस प्रकार विचार करने के बाद, वे अपने पास आने वाले भिक्षुओं को सौहार्दपूर्वक सलाह और शिक्षा देते रहे, उनके संदेह दूर करते रहे, उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश देते रहे, और विश्लेषणात्मक ज्ञान और अथक परिश्रम के कारण मानसिक अभ्यास के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने के तरीके बताते रहे। फिर एक दिन, अपने पास आए भिक्षुओं को व्यापक ज्ञान (विञ्ञा) वाले व्यक्तियों की श्रेष्ठता (विशेषा) से अवगत कराने के लिए उन्होंने एक श्लोक कहा:

106. एक बुद्धिहीन व्यक्ति केवल एक

एकल महत्व (एकांगदास्सी)

जबकि ज्ञानी व्यक्ति सौ देखता है

अर्थ (अत्था) के अपने हुन में-

विभिन्न प्रकार की उपस्थिति (लिंग)

इसके धारण (धारिनो) के संबंध में

सौ विशिष्ट लक्षण

(लक्खना)।

वहाँ, सतलिंगस्स का अर्थ है: वे लज्जा (लीना) की भावना (अत्था) की ओर जाते हैं; इस प्रकार, लिंगानि (लिंग): व्याकरणिक शब्द (सद्द) के अर्थों (अत्थेसु) में अभिव्यक्तियाँ (पवत्ति) और विशिष्ट चिह्न (निमित्तनि); इसके लिए, सौ से अधिक प्रकार की अभिव्यक्तियाँ (लिंगानि) हैं; इस प्रकार, सतलिंगो (यह जिसकी सौ अभिव्यक्तियाँ हैं)। वास्तव में, यहाँ सत शब्द का अर्थ एक नहीं बल्कि अनेक है; इसका अर्थ विशेष संख्या (सांख्यविशेष) नहीं है, जैसा कि "सतं सहस्सं (अनेक)" आदि कथनों में होता है; इतनी अनेक अभिव्यक्तियों (तस्स सतलिंगस्स) का। अत्थस्स का अर्थ है: परिस्थिति (नेय्या) का। वास्तव में, परिस्थिति (ñeyya) को "अत्थ (अर्थ)" कहा जाता है, क्योंकि यह ज्ञान (ñāna) के माध्यम से आग जलाने के लिए लकड़ी (arani) के समान हो जाना है। वह अर्थ (अत्थ) भी, यद्यपि एक ही है, अनेक रूपों (liṅga) में प्रकट होता है, जैसे कि "Sakko purindado maghavā (दिव्य राजा)" और paññā, vijjā, medhā, ñāna (बुद्धि)" जैसी अभिव्यक्तियों में। जिस भी विशिष्ट चिह्न (निमित्त) के प्रकट होने (लिंग) और अभिव्यक्ति (पवत्ति) से शब्द 'इंडा' (इंडासद्दो) तैंतीस के स्वर्गलोक (तावतिंसाधिपति) में प्रकट होता है, उससे नहीं, वहाँ 'सक्का' आदि शब्द प्रकट होते हैं (पवत्त); बल्कि किसी और कारण से। इसी प्रकार, 'विज्जा' आदि शब्द उस कारण से नहीं उत्पन्न होते जिससे सही दृष्टि (सम्मादित्ति) में 'पञ्ञा' शब्द उत्पन्न होता है। इसलिए, ऐसा कहा गया है: — "सतलिंगस अत्थस, जिसका अर्थ है सौ रूपों में प्रकट होने वाला।"

सतलक्खनाधारिनो का अर्थ है:— अनेक विशिष्ट लक्षणों से युक्त: इसकी विशेषता (लक्खियाति) यही है; वहाँ, लक्खनं (विशेषतापूर्ण); अपने स्वयं के फलदायी परिणाम (फल) पर निर्भर (पटिच्च) जो अर्थ (अत्थ) का कारण (भावी) बनने वाला है (पच्चय); इसी कारण (तेन), वास्तव में, यह इसका कारण (कारणं) है; इस प्रकार, यह चिह्नित (लक्खियाति) है। यह ज्ञात (उपलब्भति) है कि एक ही अर्थ (अत्थ) के अनेक विभाजन (पभेदो) होते हैं; इसलिए, उन्होंने कहा: "सटलक्खनधारिनो, सौ विशेषताओं वाले का।" दूसरे शब्दों में, वे चिह्नित हैं; इस प्रकार, लक्खनानि (चिह्न); इस और उस अर्थ के मिश्रित (संखत) होने के कारण, वे विशिष्ट (विशेष) रूप (पकार) हैं; हालाँकि, उन्हें लक्ष्यहीन (अवत्थ) विशेषताओं (विशेषा) के रूप में समझा जाना चाहिए। अर्थ (अत्थेतो)। वे अपने ऐसे साधारण (सामञ्ञ) गुणों जैसे कि अनित्यता आदि को भी प्रकट (ञ्ञेन्ति) करते हैं और प्रकट (लिञ्गेन्ति) करते हैं; इस प्रकार, उन्हें "लिंगानि, प्रकट रूप" कहा गया है। ये इसके गुण (आकार) हैं; क्योंकि एक ही अर्थ (अत्थ) के लिए भी एक से अधिक अर्थ मिल सकते हैं; इसलिए कहा गया है; "सतलिञ् ... बुद्ध के ज्ञान (ज्ञान) के मुख (मुख) पर, प्रत्येक प्रकार (आकार) में सत्य (धम्म) का ध्यान केंद्रित होता है (आपाथं)।"

एकंगदास्सी दुम्मेधो का अर्थ इस प्रकार है:— इस अर्थ (अत्थ) में, जिसके इस प्रकार अनेक रूप (लिंग) और अनेक विशिष्ट चिह्न (लक्खना) हैं, जो कोई भी संग्रह (अंग) के एक घटक भाग का द्रष्टा (दास्सी) है, वह केवल एक ही रूप (एकलिंगमत्तं) और केवल एक ही विशिष्ट चिह्न (एकलक्खनमत्तं) को देखकर, व्यापक ज्ञान (अपुथुपञ्ञता) के अभाव में, केवल अपने स्वयं के दृष्टिकोण (दिट्ठ) का पालन (अभिनिविस्सा) करता है और मन ही मन कहता है: "यही सत्य (सच्चं) है" और दूसरे को यह कहकर अस्वीकार करता है: "अन्य सब व्यर्थ (मोघं) हैं"; हाथी के एक अंधे द्रष्टा के समान, जिसने जानवर के एक ही अंग को पकड़ रखा है (एकंगगाही), दुम्मेधो (कम बुद्धि वाला व्यक्ति) जो वहाँ विद्यमान विशिष्ट भेदों (पकाराविशेष) को जानबूझकर नहीं समझ पाता (अजाननातो), और अपने विधर्म (मिच्छा) के प्रति आसक्ति के कारण। सतदस्सी च पंदितो का अर्थ है: दूसरी ओर, एक बुद्धिमान व्यक्ति अपनी बुद्धि की दृष्टि से वहाँ विद्यमान अनेक विशिष्ट भेदों (पकारा) को भी सर्वत्र देखता है। दूसरे शब्दों में, जो व्यक्ति न केवल स्वयं अपनी बुद्धि की दृष्टि से वहाँ मौजूद अनेक (विशेषताओं) को देखता है, बल्कि उन्हें दूसरों को भी दिखाता और प्रकट करता है, वह पंदितो (दूरदर्शी बुद्धिमान व्यक्ति) है और अर्थ में चतुर व्यक्ति कहलाता है। इस प्रकार, थेरा ने अपने स्वयं के विश्लेषणात्मक ज्ञान (पटिसंभिदा) की समृद्धि का स्पष्ट वर्णन किया, जो अपनी सर्वोच्च श्रेष्ठता तक पहुँच चुका था।

थेरा सुहेमंता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(107):धम्मसव

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (107) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
107. धम्मसव
मगध राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, और परिस्थितियों की परिपक्वता से प्रेरित होकर, उन्होंने गृहस्थ जीवन के बजाय धार्मिक जीवन को चुना। दक्षिण पहाड़ी पर परम पूज्य (बुद्ध) की खोज में, [1] उन्होंने उनसे धम्म का उपदेश सुना, जिसके बाद वे भिक्षु बन गए और समय के साथ अरहंत (प्रबुद्ध) हो गए। अपने जीवन पर प्रसन्नतापूर्वक विचार करते हुए, उन्होंने इस कथन (गथा) में अन्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार किया:

[107] पब्बाजीं तुलयत्वाण अग्रस्मानगरियं,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[107]
मैंने अच्छी तरह विचार किया, फिर गृहस्थ जीवन की दीवारों और बंधनों से परे जीवन की खोज की ।
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध के सभी विधानों का पालन किया है। [2]

[1] दक्षिणगिरि (विनय ग्रंथ, द्वितीय 207, एन. 2)।

[2] भजन संहिता 24.

1.11-7 [107] धम्मासवत्थेरा के श्लोक पर टीका
'पब्बजिं तुलयित्वाना' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा धम्मासव का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि ये बुद्ध पद्ममुत्तरा के समय सुवच्छ नामक एक ब्राह्मण थे। वे तीनों वेदों में पारंगत थे, उन्होंने गृहस्थ जीवन की कमियों को पहचानकर संसार त्याग दिया, संन्यासी बन गए, पर्वतों के बीच वन क्षेत्र में एक आश्रम बनवाया और कई संन्यासियों के साथ वहाँ निवास करने लगे। तब, उन्हें पुण्य कर्म का बीज बोने के लिए प्रेरित करने हेतु, बुद्ध पद्ममुत्तरा उनके आश्रम के निकट आकाश में खड़े हुए और उन्हें इद्धिपातिहारिय शक्ति का चमत्कार दिखाया। उस चमत्कार को देखकर वे धर्मपरायण हो गए और श्रद्धापूर्वक अर्पण करने की इच्छा से उन्होंने नाग पुष्प

तुड़वाए। गुरु ने यह कहकर प्रस्थान किया: "इस ऋषि के लिए इतना पुण्य बीज पर्याप्त है।" उस पुण्य ने पुष्पों को ग्रहण किया, गुरु के मार्ग पर बिखेर दिया और हाथ जोड़कर प्रसन्न मन से खड़े हो गए। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप उनका पुनर्जन्म हुआ और वे बार-बार जन्म लेते रहे, कभी-कभी उत्तम अवस्थाओं (सुगति) में (अपरापरं) रहते हुए, मगध राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। धम्मसव नाम प्राप्त करने के बाद, जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो उन्होंने अपनी समृद्धि (हेतु-संपत्ति) से प्रेरित होकर गृहस्थ जीवन में विमुखता और भिक्षु जीवन में लाभ को पहचाना और दक्षिणागिरि (दक्षिणी पहाड़ी) में निवास कर रहे भगवान बुद्ध के पास गए, उनके सत्य (धम्म) के उपदेश सुने, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्तव्य निभाया और शीघ्र ही अरहंत पद प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"एक ब्राह्मण जो (पारागू) में निपुण है

ब्राह्मण विद्या (मन्त), जिसे इस नाम से जाना जाता है

सुवच्छा नाम का एक व्यक्ति पहाड़ी पर रहता था।

अपने द्वारा घिरा हुआ (पुरक्खतो)

विद्यार्थी।

उस विजेता का नाम पद्मुत्तरा था,

बलिदान की भेंट के योग्य प्राप्तकर्ता-

आहुति (ings), खींचने की इच्छा रखना

मुझे ऊपर उठाओ (मंउद्धरित्यम्), मेरे पूर्व में आया-

समझ।

आकाश में, वह इधर-उधर विचरण करता रहा, और

उन्होंने स्वयं को प्रकाशमान और सुगंधित बना लिया

धुआं (धूपायति)। आने पर

मेरी प्रसन्नता (हासम्) को जानकर, वह

पूर्व दिशा की ओर प्रस्थान किया

(pācīnamukho).

उस आश्चर्य (आचार्य) पर ध्यान देने पर,

अजीब और रोंगटे खड़े कर देने वाला, मैंने इकट्ठा किया

नाटा के फूल बिखरे हुए थे और फिर नीचे की ओर फैल गए।

जिस मार्ग से वह आगे बढ़ा (गता)।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने फूल बिखेर दिए थे।

मेरी उस धार्मिक इच्छा के कारण

मुझे किसी भी तरह से अचानक उठने की जरूरत नहीं पड़ी।

दुष्ट अस्तित्व।

इकतीस सौ युग (कप्पा) पहले, मैं

महाराजा (अत्यंत योग्य) सम्राट बन गए।

एक अत्यंत शक्तिशाली विश्व-राजा, जो इन गुणों से संपन्न था

सात प्रकार के रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी उचित उपलब्धि (पतिपत्ति) पर विचार किया, आनंदित हुए और अपनी आनंदमय अभिव्यक्ति (उदान) के माध्यम से एक श्लोक बोला।

107. "मैंने वजन करने के बाद भिक्षु बनने का निश्चय किया

(तुलयति) और घर से बाहर आ जाओ-

जीवन धारण करते हैं। महाविज्ञान के तीन रूप

(tissovijjā) मैंने विधिवत रूप से प्राप्त कर लिया था;

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

वहाँ, पब्बजिं तुलयित्वाना का अर्थ है: उस ज्ञान के माध्यम से जाँच (विकारेत्वा) और परीक्षण (विमंसित्वा) करने के बाद, जो संतुलन (तुल) बन गया है, गृहस्थ जीवन में होने वाली हानि (आदिनवं) इस प्रकार है: "गृहस्थ जीवन में संकरा और धूल भरा मार्ग (राजपथो)" इत्यादि, और इंद्रिय सुखों (कामेसु) में होने वाली हानि (कामेसु) इस प्रकार है कि "इंद्रिय सुख आनंददायक नहीं (अप्पस्सादा), अत्यंत दुखद (बाबु दुक्खा) और अत्यंत कष्टदायक (बहुपायासा) हैं, और इसके विपरीत (तप्पटिपक्खतो) त्याग (नेक्खम्मे) में लाभ (आनिसंसं) भी है; इस प्रकार, यही अर्थ है। शेष तो पहले से ही बताए गए तरीके (हेट्ठा) में है। वही श्लोक थेरा की अञ्ञा (प्राप्ति) (अरहंतत्व) को भी प्रकट करता है।

थेरा धम्मासव के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (108): धम्मसव के पिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (108) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
108. धम्मसव के पिता
उन्होंने अपने पुत्र के उदाहरण का अनुसरण करते हुए कहा: 'मेरे पुत्र ने युवावस्था में ही संसार त्याग दिया (सन्यास ग्रहण कर लिया); तो मैं क्यों न इसे त्याग दूं?' अतः उन्होंने भी भगवान (बुद्ध) की शरण ली और समय आने पर अर्हत्व प्राप्त कर उनका वचन (गाथा) सुनाया।

[108] सा विसाऽवस्सासतिको पब्बाजीm अनागारियाऽ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[108] मैं सौ वर्ष का हो गया और बीस वर्ष तक कड़ी मेहनत की,
फिर मैं चला गया और अपने घर को नहीं पहचान पाया।
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध के सभी विधानों का पालन किया है।

1.11-8 [108] धम्मसवपितुत्तेरा के श्लोक पर टीका
सवीसवस्सासतिको से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा धम्मुआसवपितु का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने के कारण, जब लोक बुद्धों से रहित था, तब उनका पुनर्जन्म एक पारिवारिक घर में हुआ। भूतागना नामक पर्वत पर निवास कर रहे एक आत्मजागृत मौन बुद्ध को देखकर, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें तिनसूल प्रकार के चमेली के फूल अर्पित किए। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ और वे अपने बार-बार के जन्मों के चक्र में विचरण करते हुए, समय-समय पर उत्तम अवस्थाओं में रहते हुए, मगध राज्य के एक ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुए, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। ज्ञानोदय की आयु प्राप्त करने पर उन्होंने एक पत्नी से विवाह किया (दार परिग्हा), उन्हें धम्मासव नामक पुत्र प्राप्त हुआ और जब उनका पुत्र भिक्षु बन गया, तो स्वयं एक सौ बीस वर्ष की आयु में वे पश्चाताप करने लगे और मन ही मन कहने लगे, "मेरा पुत्र, जो अभी भी युवा है, भिक्षु बन गया है; तो फिर मैं क्यों न बनूँ?" वे गुरु के समक्ष गए, सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े और अरहंतत्व की कल्पना की, परन्तु शीघ्र ही। अतः अपदान में कहा गया है:—

"हिमवंता (हिमालय) से कुछ ही दूरी पर एक

भूतगना नामक पर्वत। वहाँ एक विजेता रहता था।

स्वयं निर्मित (सयम्भु), जो बच निकला था

दुनिया से, रहते थे। एकत्र करके

तिनासुला किस्म के चमेली के फूल

मैंने उन्हें मौन बुद्ध को अर्पित किया।

निन्यानवे हजार युग (कप्पा) मैं था

नरक में दंड के लिए उत्तरदायी नहीं

(vinipātiko).

ग्यारह युग (कप्पा) पहले, मैं एक बन गया

अत्यंत बलवान विश्व-राजा धरणीरुहा (पृथ्वी)।

पर्वतारोही) सात प्रकार के गुणों से संपन्न

जन.

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी उचित साधना (पटिपत्ति) पर विचार किया, प्रसन्न हुए और अपनी आनंदमय अभिव्यक्ति में एक श्लोक बोला।

108. "एक सौ बीस वर्ष की आयु में,

मैं भिक्षु बन गया और नेतृत्व करने लगा।

एक गृहस्थ जीवन। तदनुसार मैंने

तिगुना सुपर विज्ञान प्राप्त किया (टिसो)

विज्जा); बुद्ध का निर्देश था

किया गया।

वहाँ, सवीसवस्सतिको का अर्थ है: मैं जो एक सौ बीस वर्ष का था; मैं, एक व्यक्ति के रूप में, अपने जन्म से एक सौ बीस वर्ष बाद। पब्बजिं का अर्थ है: मैं भिक्षुत्व की ओर अग्रसर हुआ। शेष का अर्थ पहले ही बताया जा चुका है। यही श्लोक इस थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) का भी प्रकटीकरण था।

थेरा धम्मसवपितु के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(109):संघ-रक्खिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (109) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
109. संघ-रक्षित [1]

बुद्ध युग में सावत्थी के एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने आस्था प्राप्त की और भिक्षु बनने का निश्चय किया। वे एक अन्य भिक्षु के साथ वन में रहने लगे। उनके निवास स्थान से कुछ ही दूरी पर, झाड़ियों में एक हिरणी ने अपने बच्चे को जन्म दिया था। उसकी देखभाल करते हुए, उसका प्रेम उसे उससे दूर नहीं जाने देता था, और आस-पास घास और पानी न होने के कारण वह भूखी थी। उसे देखकर थेरा ने कहा: 'अरे, यह संसार भोग-विलास के बंधनों में जकड़ा हुआ है और उन्हें काट नहीं पा रहा है, इसलिए वह बहुत कष्ट भोग रहा है!' इस भावना को प्रेरणा मानकर उन्होंने अंतर्दृष्टि विकसित की और अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, यह जानकर कि उनके साथी कई गलत विचारों में लीन हैं, उन्होंने हिरणी की कहानी के माध्यम से उन्हें संबोधित किया और यह श्लोक कहा:

[109] ना [16] नुननायं परमहितानुकाम्पिनो॥
रहोगतो अनुविगणेति सासनं,॥
तथाहयं विहारति पाकतिन्द्रियो॥
मिगी यथा तरुणजातिका वने' ति.। ॥

[109] यद्यपि वह एकांतवास में रहता है, फिर भी उसने
उस व्यवस्था को पार नहीं किया है जिसे उस भगवान (बुद्ध) ने बनाया था
जिसने हमारे सर्वोच्च कल्याण के लिए करुणा दिखाई।
उसकी शक्तियाँ अभी भी शिथिल और अनियंत्रित हैं,
जैसे जंगल की हिरणी कोमल और कमजोर हो गई हो। [2]

ये शब्द सुनकर वह भिक्षु व्याकुल हो गया और अंतर्दृष्टि का विस्तार करते हुए, समय आने पर उसने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया।

[1] = आदेश द्वारा संरक्षित।

[2] यह श्लोक, टीका के अभाव में अनुवाद में आने वाली असाधारण कठिनाई का एक उल्लेखनीय उदाहरण है। सरल छोटी कथा के अभाव ने डॉ. न्यूमैन को एक बहुत ही अलग व्याख्या की ओर अग्रसर किया है, जिसमें पाकतिन्द्रियो शब्द का जटिल प्रयोग किया गया है। पाकत = असंगुता (टीका)। तुलना करें मिलिंदा, ii. 72.

1.11-9 [109] संघरक्षितथेरा के श्लोक पर टीका
'ना नूनायं परमहितानुकंम्पिनो' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा संघरक्षित का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी इस और उस जन्म में भक्तिमय कर्म किए और आज से चौरानवे युग (कप्पा) पहले एक गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, एक दिन उन्होंने एक पहाड़ी की तलहटी में निवास कर रहे सात आत्मजागृत मौन बुद्धों को देखा। वे श्रद्धा से भर गए, कदंब वृक्ष के (संतरे रंग के सुगंधित) फूल एकत्र किए और उन्हें आदरपूर्वक अर्पित किए। इस पुण्य कर्म के कारण वे दिव्य लोक में अवतरित हुए और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में घूमते रहे, लेकिन उत्तम जन्मों (सुगति) में, और जब ये बुद्ध प्रकट हुए, तब वे एक समृद्ध (इब्भ) परिवार में, सावत्थी में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम संघरक्षित था। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, उन्होंने उचित रूप से धार्मिक आस्था अपनाई, भिक्षु बन गए, मानसिक साधना (कम्मट्ठाना) में लग गए और एक भिक्षु को अपना साथी बनाकर वन में रहने लगे। थेरा के निवास स्थान से कुछ ही दूरी पर स्थित एक झाड़ी में, एक हिरणी ने अपने बच्चे को जन्म दिया। अपने बच्चे के प्रति स्नेह के कारण वह दूर चरने नहीं गई, यद्यपि वह भूखी थी; आस-पास घास और पानी न मिलने के कारण वह कमजोर हो गई। यह देखकर थेरा को बहुत पश्चाताप हुआ और उन्होंने मन ही मन कहा, “हाय! वास्तव में, यह संसार तृष्णा (तन्हा) के बंधन में जकड़ा हुआ है, इसलिए वह महादुक्खा है; वह उस तृष्णा को क्षत नहीं कर पा रही है।” उसी पदार्थ को अपना अंकुश बनाकर, उन्होंने विपस्सना का निरंतर विकास किया और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

हिमावंता (हिमालय) से कुछ ही दूरी पर था

कुक्कुटा (मुर्गा) नाम की एक पहाड़ी।

उस पहाड़ी की तलहटी में, एक निवासी रहता था

वे सात मौन बुद्ध।

कदंब के पेड़ को देखकर

एक ऊंचे (उग्गाटा) दीपक की तरह खिलता हुआ

-राजा (दीपराजा), अपने दोनों हाथों से

मैंने फूल तोड़े (पग्गेहा) और

सात मौन पर अच्छी तरह से बिखरा हुआ

बुद्ध।

यह चौरानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने अपनी विशेष भेंट दी

फूल; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व (दुग्गति); यही है

मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

बानवे युग (कप्पा) पहले

वर्तमान में, सात बहुत ही थे

पुप्पा नाम के शक्तिशाली विश्वराज, जो सात रत्नों से परिपूर्ण थे।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी:...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्हें यह पता चला (ञत्वा) कि उनका साथी भिक्षु अत्यंत गलत और जंगली विचारों (मिच्छावितक्कबहुल) में जी रहा था, और उन्होंने उस साथी को उपदेश देने के लिए एक श्लोक कहा, जिसमें उन्होंने उसी हिरणी को उदाहरण (उपमा) के रूप में प्रस्तुत किया।

109. "क्या यह निश्चित रूप से निर्देश नहीं है?"

(बुद्ध) का (सासनं) जो अभ्यस्त है

सहानुभूतिपूर्वक (शावर) पारलौकिक

(सभी जीवित प्राणियों का) कल्याण (परमहिता)

जीव), जिनके बारे में (मुझे लगता है) आपने नहीं सुना है

विचार किया (nānuvigane), बाद में

एकांतवास (राहोगटो) में चले गए। उसके अंतर्गत

वास्तव में, यही परिस्थिति है (तथाहि), यह

एक व्यक्ति अपने सामान्य (असामान्य) जीवन जी रहा है।

नियंत्रित इंद्रिय-शक्तियाँ (पाकतिन्द्रियो),

मादा हिरण के समान (उससे जुड़ी हुई)

जंगल में एक कोमल छोटा बच्चा।

वहाँ, Na nūnāyaṃ का अर्थ इस प्रकार है:— Na का अर्थ है: इस प्रकार, एक नकारात्मक कण (paṭisedhe nipāto)। Nūnā का अर्थ है विचार (parivitakka); nūna ayaṃ (इसके विचार में, इसके संबंध में), इस प्रकार, शब्द का पृथक्करण (padaccheda) है। Paramahitānukampino का अर्थ है: पूर्णतः (paramaṃ) पारलौकिक रूप से (ativiya), दूसरे शब्दों में, भगवान के पूर्ण (paramena) और पारलौकिक (anuttarena) कल्याण (hitena) के माध्यम से, जिनका स्वभाव (sīla) जीवों (satte) पर दया (anukampana, सहानुभूति) है। Rahogato का अर्थ है: एकांतवास में चले गए हैं (rahasi); एक खाली घर (suññāgāra) में चले गए हैं, शारीरिक एकांतवास (kāyaviveka) में लगे हुए हैं (yutto)। अतः, यही अर्थ है। अनुविगनेति का अर्थ इस प्रकार है: यहाँ (एत्था), दो शब्द (पडद्वयं) अर्थात् "नानूना" को लाकर (आनेत्वा) "नानूविगनेति नूना" के रूप में संयोजित (संबंधितब्बं) किया जाना चाहिए, जिसका अर्थ है; "तुम विचार नहीं करते (सिंतेसि), मैं सोचता (मञ्ञे), मेरा मत है (तक्केमि) कि वह तदनुसार इसमें लिप्त नहीं होता" (नानूयुञ्जति); अतः, यही अर्थ है। शासनं का अर्थ है उचित प्राप्ति का विधान (पटिपत्ति शासनं); चार आर्य सत्यों (चतुश्च) पर मानसिक अभ्यास (कम्मठ्ञा) का विकास (भावना); अतः, यही अर्थ (अधिप्पायो) है। तथा ही का अर्थ है: परन्तु उस कारण से (तेनएव कारनेन); यहाँ तक कि गुरु के निर्देशानुसार स्वयं को भोग न लगाने के कारण भी (सत्तु सासनस अननुयुञ्जनतो एव)। अयं का अर्थ है: यह भिक्षु। पाकतिन्द्रियो का अर्थ है: वह व्यक्ति जिसकी इंद्रियों (इन्द्रिय) को नियंत्रित करने की शक्तियाँ (भूत) स्वाभाविक (सभाव) हो गई हैं, क्योंकि उसने अपनी छह मानसिक अवस्थाओं (मनच्छठनं) वाली इंद्रियों (इन्द्रियानं) को उनके अपने-अपने क्षेत्र (विषयेषु) में निर्वाह (बिस्सज्जनतो) किया है; वह व्यक्ति जिसकी नेत्र खोलने (चक्खुद्वार) आदि इंद्रियों के द्वार अच्छी तरह से नियंत्रित (असं वतु) नहीं हैं; यही अर्थ है। वह भिक्षु अपनी सामान्य (पकति) इंद्रियों (इन्द्रियो) के साथ रहता था क्योंकि उसने अपनी आसक्ति (तन्हासंग) को नहीं काटा था (अच्चिन्नताय); उन्हें एक उदाहरण (उपमं) दिखाने के लिए उन्होंने इस प्रकार कहा: "मिगी यथा तरुणजातिका वने। जिस प्रकार यह हिरणी, स्वभाव से कोमल (तरुणसभाव) होने के कारण वन में अपने बच्चे के प्रति स्नेहपूर्ण लगाव को न छोड़ने (अच्चिन्नताय) के कारण दुःख (दुक्खं) भोगती है; वह उस दुःख से उबर नहीं पाती, उसी प्रकार यह भिक्षु भी, अपनी सामान्य इंद्रियों (पाकतिन्द्रियो) के साथ रहते हुए, अपने आसक्ति (संग) को न छोड़ने के कारण, बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) के चक्र से बाहर नहीं निकल पाता, जो दुःख (दुक्खं) का कारण बनता है; यही इसका अर्थ है। वैकल्पिक रूप से, इसका एक पाठ (पाठ) इस प्रकार भी है: "तरुण विजारिका"। एक युवा (बाल) बछड़ा (बछड़ा) हिरण (वच्छ) का जन्म (पसूता) अभी-अभी (अभिनव) हुआ है; यही अर्थ है। उस श्लोक को सुनकर वह भिक्षु पश्चाताप से भर गया।उन्होंने धीरे-धीरे आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंत पद प्राप्त किया, लेकिन जल्द ही।

थेरा संघहरक्षित के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(110):उषाभा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (110) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
110. उसभा
बुद्ध युग में कोसल राज्य के एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने भगवान (बुद्ध) में आस्था प्राप्त की जब उन्होंने जेतवन का उपहार स्वीकार किया। अपनी दीक्षा पूरी करके, वे पर्वत की तलहटी में स्थित जंगल में रहने लगे। अब वर्षा ऋतु में, बादल पहाड़ियों और वृक्षों की चोटियों पर छा गए थे; झाड़ियाँ और लताएँ घनी पत्तियों से भर गई थीं। तब एक दिन थेरा अपनी गुफा से बाहर निकले और उन्होंने वनों और पर्वतों की सुंदरता देखी, और गंभीरता से विचार किया: 'ये वृक्ष और लताएँ अचेतन हैं, फिर भी ऋतु की पूर्णता से इनमें वृद्धि हुई है। मैं, जिसने उपयुक्त ऋतु प्राप्त कर ली है, अच्छे गुणों से वृद्धि क्यों न प्राप्त करूँ?' [1] और उन्होंने यह श्लोक कहा, जो उनकी अञ्ञा (सर्वोच्च प्राप्ति) की घोषणा बन गया , क्योंकि उन्होंने तुरंत प्रयास किया और अर्हंत पद प्राप्त किया:

[110] नागा नागाग्गेसु सुसांविरूढ़ा॥
उदग्गमेघेन नवीन सिट्टा॥
विवेकाकामास अरणासान्निणो॥
जनेति भय्यो उषाभस्सा कल्यतन' ति.॥ ॥

[110] ऊंचे बादलों से ताज़गी पाकर नए वर्षा से ऊंचे वृक्ष
हरे-भरे हो उठे।
उसभा, जो वैराग्य की लालसा रखती है,
और जिसे वन का ज्ञान है, [2]
उसे [इस प्रतिक्रियाशील झरने से] प्रचुर लाभ प्राप्त हुआ ।

[1] केबल के इस मनोदशा के शरदकालीन समकक्ष की तुलना करें :

' फिर भी कुछ देर रुकिए और शांत पत्तियों को धीरे-धीरे तैरते हुए देखिए,
प्रत्येक पत्ती अपनी मूल छाया के नीचे विश्राम करती है,' इत्यादि।

[2] = araññasaññino.

1.11-10 [110] उसभत्थेरा के छंद पर टिप्पणी
नाग नागगेसु सुसंविरूल्का से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उसभा का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्म करते हुए, उन्होंने वर्तमान कल्प से इकत्तीस युग पहले, गौरवशाली ओन सिखी काल में एक युवा देवता के रूप में पुनर्जन्म लिया। एक दिन, उन्हें गुरु के दर्शन हुए, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें दिव्य पुष्प अर्पित किए। पुष्पों का वह आदरपूर्ण अर्पण सात दिनों तक मंडप की तरह प्रदर्शित रहा। वहाँ देवी-देवताओं और मनुष्यों का एक विशाल समूह एकत्रित हुआ। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने बार-बार जन्म-मृत्यु का चक्र पूरा किया और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे कोसल राज्य के एक समृद्ध (इब्भा) परिवार में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम उषभा था। ज्ञानोदय की आयु प्राप्त करने पर, उन्होंने जेतवन ग्रहण कर रहे गुरु में दिव्य प्रसन्नता पाई, भिक्षु बन गए, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों को पूरा किया और एक पहाड़ी की तलहटी में स्थित वन में निवास किया। उस अवसर पर भी, जब मौसमी वर्षा के बादल ने विशेष रूप से वर्षा की बौछारें बरसाईं, तो वृक्षों, जंगलों और पहाड़ियों की चोटियों पर लताओं (पब्बतसिखारेसु) पर पत्तों का घना समूह (घना) और असंख्य (संडिनो) उग आया। फिर एक दिन, थेरा अपनी पत्थर की कुटिया से बाहर निकले, जंगल की उस मनमोहकता और पहाड़ी की सुंदरता को देखकर उन्होंने बुद्धिमानी से सोचते हुए एक श्लोक कहा: "ये निर्जीव (अचेतना) वृक्ष आदि भी अनुकूल मौसम (उत्समपत्ती) के कारण विकसित होते हैं; तो मैं, अनुकूल जलवायु (उत्समपाय) प्राप्त करके, गुणों (गुणों) का निरंतर विकास क्यों न प्राप्त करूँ?"

110. "पेड़ों पर पानी छिड़कने के बाद

ताजा (नवा) ऊंचा (उदग्ग) बौछार

पहाड़ी (नागा) चोटियों (अग्गा) पर बारिश पूरी तरह से भरी हुई है

अच्छी तरह से विकसित, अपने ही पत्तों से ढके हुए।

कल्याता (सौम्यता) और भी अधिक महत्वपूर्ण है।

किसी पुरुष के बैल से उत्पन्न (जनेति)

जो अपने साथ एकांतवास की इच्छा रखता है

वन जीवन का विचार (araññasaññī)।

वहाँ, नाग का अर्थ वृक्ष (रुक्खा) है। कुछ लोग कहते हैं: "नागा" (नाग वृक्ष); यही अर्थ है। नागगेसु का अर्थ है पहाड़ियों की चोटियों पर (पब्बतसिखर)। सुसंविरूल्हा का अर्थ है: अपनी जड़ों पर चारों ओर अच्छी तरह विकसित होने के बाद, शाखाओं के शीर्षों और अंकुरित शाखाओं के साथ अच्छी तरह से विकसित हो गए हैं, जो व्यापक रूप से (परितो) और ऊपर (उपरी) लेकिन उचित रूप से (सम्मेदेव) फैले हुए हैं; यही अर्थ है। उदग्गमेघेना नवेना सित्ता का अर्थ है: वर्षा-बादल द्वारा विशेष रूप से बरसाया गया, जिसने अपने पहले अंकुरण (पठमुप्पन्नेन) के कारण अत्यधिक (उलारा) प्रचुर (महाता) वर्षा की बौछार की। विवेककामस का अर्थ है वह व्यक्ति जो दुराचार से रहित मानसिक एकांत चाहता है (किलेसा विवित्तं); वन में निवास करने से अब शारीरिक एकांत (कायविवेको) प्राप्त हो गया है; वर्तमान समय में मानसिक एकांत (चित्तविवेक), जो पुनर्जन्म के आसक्ति (उपाधि) से मुक्ति (विवेक) की प्राप्ति (निस्सायभूत) पर निर्भर (अधिगम) हो गया है, उसे प्राप्त करना चाहिए (लद्धब्बो), इस प्रकार, जो इसकी आकांक्षा रखता है (तंपत्तयमानासस); जो तदनुसार जागृति (जागरिया) में लिप्त रहता है, यही अर्थ है; अतः उन्होंने कहा:— "अरञ्ञसाञ्ञिनो।" अर्थात्, गुरु ने वन में निवास करने की बहुत प्रशंसा की है। वास्तव में, यह भी शांत स्वभाव (समथ) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के पूर्ण विकास (भावना) के लिए ही है; इसीलिए मेरे हाथों में प्राप्त हुई ऐसी उपलब्धि (हत्थगत) मुझे ही करनी चाहिए; इस प्रकार उस व्यक्ति के लिए जो वन में जाने का विचार रखता है, जो त्याग (नेक्खम्म) के लिए बहुत इच्छुक (संकप्प) है; यही अर्थ है। जनेति का अर्थ है: उत्पन्न करना (उप्पादेंति); यह एकवचन शब्द वास्तव में बहुवचन के अर्थ में है। हालांकि, कुछ विद्वान (केची) इसे "जनेंति" पढ़ते हैं। भिय्यो का अर्थ है: ऊपर (उपरूपरी)। उषभस का अर्थ है: वह अपने बारे में इस प्रकार कहता है मानो किसी और के बारे में कह रहा हो। कल्यातम् का अर्थ है: मनभावन अवस्था (कल्याभावम्), मन की अनुकूल अवस्था (कम्मञ्ञतम्), मन के विकास में लीन होने की अवस्था (योग्यता)। इसका अर्थ पहले ही बताया जा चुका है (हेट्ठा)। इस प्रकार, जैसे ही उन्होंने यह श्लोक बोला, थेरा स्वयं आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में लीन हो गए और अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इस प्रकार, अपदान में कहा गया है:—

"एक युवा देवत्व होने के नाते, मैं श्रद्धापूर्वक

मैंने सिख नेता को अपनी भेंट अर्पित की।

दिव्य मंदारव फूल, जो मैं

विशेष रूप से बुद्ध के लिए बनाया गया।

तथागत के पास यह एक दिव्य वस्तु बन गया।

मालायुक्त छत (डिब्बां मलं चदानं)

सात दिनों तक; पुरुषों की पूरी भीड़

एक साथ आए और अपनी श्रद्धा व्यक्त की

तथागत।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

इस कप्पा के प्रति, जिसके प्रति मैंने विशेष श्रद्धा व्यक्त की-

फूलों की पारंपरिक भेंट: मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

बुद्ध को अर्पित की गई मेरी श्रद्धा का परिणाम।

वर्तमान से दस युग (कप्पा) पहले

मैं राजा जुटिंधरा (वाहक) बन गया

प्रतिभा), एक बहुत शक्तिशाली विश्व-राजा,

सात रत्नों से जड़ा हुआ। मेरी दुष्टता ने

जल गया है।... बुद्ध का निर्देश

कार्य संपन्न हो चुका था।

यही श्लोक थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने वाला श्लोक बन गया।

थेरा उसभा के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।

ग्यारहवें अध्याय की टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(111):जेंटा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (111) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
111. जेंटा
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म मगध राज्य के जेंता गाँव में एक जिले के राजा के पुत्र के रूप में हुआ। [1] युवावस्था में ही, परिस्थितियों की परिपक्वता से प्रेरित होकर उनका मन संसार त्यागने की ओर झुक गया, और वे इस विषय पर विचार करने लगे कि उन्हें क्या करना चाहिए। संशय में रहते हुए उन्होंने भगवान (बुद्ध) का उपदेश सुना। उस दिन से वे धार्मिक जीवन के प्रति समर्पित हो गए और भिक्षु संघ में प्रवेश कर गए। प्रसन्नतापूर्वक परिश्रम करते हुए और तीव्र अंतर्दृष्टि से उन्होंने अर्हत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया; फिर अपनी उपलब्धि और अपनी दुविधा पर विचार करते हुए उन्होंने आनंदपूर्वक यह श्लोक कहा:

[111] डुप्पाबज्जाŋ वे,॥
दुरधिवास गेहा॥
धम्मो गंभीरो,॥

दुरधिगामा भोग,॥
किच्चा वुति नो इतरितरेनेव;॥
युत्तm सिन्तेतुm सततं अनिच्चतन ती.॥ ॥

[111] संसार का जीवन कठिन है, और
सत्यतः गृहस्थी संभालना भी कठिन है। धम्म का मार्ग गहरा है;
धन कमाना भी कठिन है। अतः
जीवन जीने का तरीका चुनना कठिन है।
मेरा कर्तव्य है कि मैं निरंतर
अनित्यता को ध्यान में रखूँ और सब कुछ देखूँ।

[1] माण्डलिकराजस्स। सी एफ पी। 83, एन. 5.

1.12 बारहवाँ अध्याय

1.12-1 [111] जेंतत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
दुप्पब्बज्जनवे दुराधिवासा गेहा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा जेंता का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित करने वाले इस व्यक्ति का पुनर्जन्म भगवान शिखा के समय एक युवा देवता के रूप में हुआ। एक दिन संयोगवश उन्होंने गुरु के दर्शन किए, श्रद्धा से भर गए और उन्हें स्वर्ण कछुआ-कंठ (किंकिरात) के फूल अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका पुनर्जन्म मगध राज्य के जेंता गाँव में एक क्षेत्रीय (मंडलिका) शासक (राजा) के पुत्र के रूप में हुआ। उनका नाम जेंता था। बुद्धि प्राप्त करने पर, कर्म की समृद्धि (हेतुसंपत्ति) से प्रेरित होकर, वे कम उम्र में ही संन्यासी बनने की ओर विवश हो गए और फिर सोचने लगे: "सन्यासी बनना कठिन है (दुक्करा); गृहस्थ जीवन भी कठिन है; सत्य (धम्म) भी गहरा है; धन प्राप्त करना भी कठिन है (दुरधिगम); तो फिर क्या किया जाए?" इस प्रकार बहुत चिंतित होकर, वे एक दिन घूमते-फिरते गुरु के पास गए और सत्य (धम्म) को सुना। सत्य का ज्ञान प्राप्त करने के बाद से ही वे भिक्षुत्व से विशेष रूप से प्रसन्न हुए, गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बन गए, अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) को एकत्रित किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को लगातार विकसित किया और उचित चरित्र (सुखायपटीपदाया) के सहज अभ्यास तथा उच्च ज्ञान (खीप्पभिञ्ञाया) की शीघ्र प्राप्ति के माध्यम से अरहंतत्व की कल्पना की। अतः अपदान में कहा गया है:—

"एक युवा देवदूत के रूप में, मैं

मैंने नेता को अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की।

सिख. स्वर्गीय (पग्गयहो) उखाड़कर

मैंने विशेष रूप से ये फूल (कक्कारुपुप्पम) मंगवाए थे।

बुद्ध के पास सवार (अभिरोपयिं) हुए। यह तीस था।

वर्तमान से एक युग (कप्पा) पहले जो

मैंने फूल चढ़ाए; मुझे याद नहीं है

किसी भी दुष्ट अस्तित्व का यही फलदायी परिणाम है।

मेरे द्वारा बुद्ध को श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित करने के बारे में।

वर्तमान से पहले के नौ युग (कप्पा) भी,

सात अत्यंत उत्कृष्ट सम्राट थे।

सात रत्नों से सुसज्जित अत्यंत शक्तिशाली विश्वराज।

मेरी दुष्टता जलकर भस्म हो गई थी: ... बुद्ध की

निर्देशों का पालन किया जा चुका है।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी उचित प्राप्ति (पटिपत्ति) पर विचार करते हुए कहा: "वास्तव में! मैं अपने उन अनियंत्रित विचारों (वितक्का) को काटने में सक्षम था जो आरंभ से ही उत्पन्न हुए थे (उप्पन्ना)।" वे प्रसन्न हुए और उन्होंने एक श्लोक कहा ताकि वे अपने अनियंत्रित विचारों (वितक्का) को उचित रूप से काटने (सम्मेदेव) की स्थिति और जिस प्रकार से वे (पूर्व में) उत्पन्न हुए थे (उप्पनाकारं) उसे दर्शा सकें।

111. "वास्तव में, भिक्षु जीवन कठिन है; गृहस्थ जीवन कठिन है।

कठिन जीवन (अधिवास) है; सत्य

(धम्म) गहरा है;

धन प्राप्त करना कठिन है (अधिगम)।

इस व्यवस्था (इधा) में हमारा जीवन (नोवुत्ति)

जो कुछ भी उपलब्ध है (इतरितारेना) वह दयनीय (किच्चा) है;

निरंतर (सततं) विचार करना उचित है

अस्थाई अवस्था।"

वहाँ, दुप्पब्बज्जं का अर्थ है: संन्यास करना कठिन है, संन्यास (पब्बजानं) दुखद (दुक्खं) है क्योंकि संन्यास (पब्बजान) कठिन (दुक्कारा) है, क्योंकि इस युग में अपने प्राणों का त्याग करने के बाद, न केवल अपने धन (खंड) को, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, बल्कि अपने सभी रिश्तेदारों को भी त्यागने के बाद, संन्यास करना कठिन (दुक्कारा) है। वे का अर्थ है: केवल एक अविघटनीय कण (किपात); दूसरे शब्दों में, यह अर्थ को दृढ़ (दल्ह) बनाता है, इस प्रकार: "पब्बज्जा दुक्खा (संन्यास दुखद है)।" घर भी रहने योग्य नहीं है, दुराधिवासा गेहा; इसका अर्थ है:— चूंकि घर में रहने वाले व्यक्ति का कुछ कर्तव्य (किच्चा) होता है, जैसे राजा द्वारा सौंपा गया राजकिक कर्तव्य (राजकिच्चा), प्रशासक द्वारा सौंपा गया प्रशासनिक कर्तव्य (इस्सरकिच्चा), और धनी गृहस्थ द्वारा सौंपा गया गृहस्थ कर्तव्य (गहपतिकिच्चा); इसके अतिरिक्त, भिक्षुओं और ब्राह्मणों की बहुलता (पारिजना) का भरण-पोषण (संगहेतब्बा) किया जाना चाहिए; जब भी जो कुछ किया जाना चाहिए वह किया जा रहा हो; फिर भी, गृहस्थ का भरण-पोषण करना कठिन (दुप्पारो) होता है, जैसे एक छलकता हुआ घड़ा (चिद्दघातो) और एक विशाल सागर; इसलिए ये घर, अर्थात्, दयनीय और रहने में कठिन (दुक्करा) होते हैं; इस प्रकार, जीवन और निवास करना कठिन विषय हैं। दूसरी ओर, यदि मैं तदनुसार भिक्षु जीवन व्यतीत करूँ (अनुतित्तेय्यां), धम्मोगम्भीरो; मेरे भिक्षु जीवन का जो भी उद्देश्य (यदत्त) हो, वह उद्देश्य मुझे भिक्षु के रूप में प्राप्त करना चाहिए; वह अच्छा धम्म (सद्धम्म) जिसमें उचित रूप से प्रवेश करना है (पटिवेध), गहरा है (गम्भीरो); गहन ज्ञान के क्षेत्र (गोचरा) की अवस्था के कारण इसे देखना कठिन है (दुद्दसो); धम्म की गहन अवस्था के कारण इसमें उचित प्रवेश करना कठिन है (दुप्पतिविज्जो)। यदि मैं अपने घर में अपने जीवन का आनंद उठाऊं (आवसेय्यं), तो दुरधिगमा भोगा (वे धन जिनके बिना घर में जीवन जीना संभव नहीं है, क्योंकि वे दुख और कठिनाई से प्राप्त होते हैं (अधिगन्तब्बा), इसलिए उन्हें प्राप्त करना कठिन है (दुरधिगमा)। अतः, ऐसी स्थिति में (एवं सन्ते), मैं गृहस्थ जीवन त्यागने के बाद भी भिक्षु जीवन को अपनाए रखूंगा (अनुतित्तेय्यं); इस प्रकार भी, किच्छा वुत्ति नो इतरीतरेन इधा (बुद्ध के इस युग में, हमारा नियमित जीवन (वुत्ति) जीवन (जीविका) जो कुछ भी धार्मिक रूप से आवश्यक (पच्चय) है, उसके अनुसार जीना आसान नहीं है, बल्कि कष्टदायी है; गृहस्थों के लिए क्योंकि घर में धन की प्राप्ति में कठिनाई के कारण निवास करना (दुरधिवासता) कठिन है; (दूसरी ओर) शासन (सासने)

में हमारी दिनचर्या (वुत्ति) आसान (किच्छा) नहीं बल्कि कठिन (कसिर) है, क्योंकि हमें उपलब्ध धार्मिक आवश्यक वस्तुओं से अपना भरण-पोषण करना पड़ता है ।उस परिस्थिति (तत्थ) में क्या करना उचित है? युत्तं चिन्तेतुं सततंनिच्चतं का अर्थ है; यह उचित और सही है कि हम इसे स्पष्ट रूप से देखें (विपस्सितुम्) कि यह "अनित्य (अस्थायी) है, जो इसके फलस्वरूप (ततो) है, अर्थात्: पूरे दिन और प्रत्येक रात्रि के आरंभ और पश्चात काल में जो कुछ भी तीन प्रकार के अस्तित्व (ते भूमक) से संबंधित घटना (धम्म) के रूप में उत्पन्न होता है, वह अनित्य (अनिनच्चतम्) अवस्था में होता है; इसके अतिरिक्त, (ततो) यह स्थायी भी नहीं है क्योंकि इसमें प्रकट होने (उप्पाद) और लुप्त होने (वय), आरंभ होने (आदि) और अंत होने (अंत) की प्रवृत्ति होती है, क्योंकि यह अस्थायी (तावकालिकतो) है। जब अनित्यता पर चिंतन (अनुपस्सना) सिद्ध हो जाता है, तो अन्य विषयों पर चिंतन (इतरा) आसानी से सिद्ध हो जाता है; इस प्रकार, यहाँ केवल अनित्यता पर चिंतन की बात की गई है। यह इसलिए भी है क्योंकि इसे समझना आसान है। (सुखघघनातो) बुद्ध की शिक्षा (सासनिका) क्योंकि दुख (दुक्ख) और गैर-स्वयं (अनत्ता) के स्पष्टीकरण (ब्याभिचरण) की कोई आवश्यकता नहीं है जो कि अनित्यता (अनिच्च) का गठन करते हैं। उस संबंध में, बुद्ध ने कहा: "यदानिच्चं तं दुक्खं; यमदुक्खं तदनत्त (जो अनित्य है वह दुख है; जो दुख है वह गैर-आत्म है);" "यं किंचि समुदय धम्मं सब्बं तं निरोधधम्मं (वह सब जिसमें उत्पत्ति की प्रकृति है, समाप्ति के अधीन है);" "वयधम्म संखरा (रचनाएं विनाश के अधीन हैं)।" वर्तमान क्षण में, अनित्यता के मुख पर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास (आरभित्वा) के साथ आरंभ (आरभित्वा) करने और समय-समय पर उत्पन्न होने वाले जंगली विचारों (वितक्के) को दबाने (निग्घेत्वा) के बाद, जो इस प्रकार परस्पर विपरीत (अञ्ञमञ्ञम्) होकर उत्पन्न हुए हैं, उनका पालन (अत्दमिना) करने के बाद, वह कर्तव्य उत्पन्न हुआ है (जातो); उन्होंने यह बताया। अतः यह कहा गया है: "अत्तनो पटिपत्ती (उनकी स्वयं की उचित प्राप्ति या अभ्यास); इत्यादि। यही श्लोक थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करता है (ब्याकरण)।अकेले अनित्यता पर चिंतन की बात कही गई थी। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि बुद्ध (सासनिका) की शिक्षा (सुखग्गहनतो) को पकड़ना आसान है क्योंकि इसमें दुख (दुक्ख) और गैर-स्वयं (अनत्ता) की व्याख्या (ब्याभिचरण) की कोई आवश्यकता नहीं है जो कि अनित्यता (अनिच्च) का गठन करते हैं। उस संबंध में, बुद्ध ने कहा: "यदानिच्चं तं दुक्खं; यमदुक्खं तदनत्त (जो अनित्य है वह दुख है; जो दुख है वह गैर-आत्म है);" "यं किंचि समुदय धम्मं सब्बं तं निरोधधम्मं (वह सब जिसमें उत्पत्ति की प्रकृति है, समाप्ति के अधीन है);" "वयधम्म संखरा (रचनाएं विनाश के अधीन हैं)।" वर्तमान क्षण में, अनित्यता के मुख पर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास (आरभित्वा) के साथ आरंभ (आरभित्वा) करने और समय-समय पर उत्पन्न होने वाले जंगली विचारों (वितक्के) को दबाने (निग्घेत्वा) के बाद, जो इस प्रकार परस्पर विपरीत (अञ्ञमञ्ञम्) होकर उत्पन्न हुए हैं, उनका पालन (अत्दमिना) करने के बाद, वह कर्तव्य उत्पन्न हुआ है (जातो); उन्होंने यह बताया। अतः यह कहा गया है: "अत्तनो पटिपत्ती (उनकी स्वयं की उचित प्राप्ति या अभ्यास); इत्यादि। यही श्लोक थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करता है (ब्याकरण)।अकेले अनित्यता पर चिंतन की बात कही गई थी। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि बुद्ध (सासनिका) की शिक्षा (सुखग्गहनतो) को पकड़ना आसान है क्योंकि इसमें दुख (दुक्ख) और गैर-स्वयं (अनत्ता) की व्याख्या (ब्याभिचरण) की कोई आवश्यकता नहीं है जो कि अनित्यता (अनिच्च) का गठन करते हैं। उस संबंध में, बुद्ध ने कहा: "यदानिच्चं तं दुक्खं; यमदुक्खं तदनत्त (जो अनित्य है वह दुख है; जो दुख है वह गैर-आत्म है);" "यं किंचि समुदय धम्मं सब्बं तं निरोधधम्मं (वह सब जिसमें उत्पत्ति की प्रकृति है, समाप्ति के अधीन है);" "वयधम्म संखरा (रचनाएं विनाश के अधीन हैं)।" वर्तमान क्षण में, अनित्यता के मुख पर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास (आरभित्वा) के साथ आरंभ (आरभित्वा) करने और समय-समय पर उत्पन्न होने वाले जंगली विचारों (वितक्के) को दबाने (निग्घेत्वा) के बाद, जो इस प्रकार परस्पर विपरीत (अञ्ञमञ्ञम्) होकर उत्पन्न हुए हैं, उनका पालन (अत्दमिना) करने के बाद, वह कर्तव्य उत्पन्न हुआ है (जातो); उन्होंने यह बताया। अतः यह कहा गया है: "अत्तनो पटिपत्ती (उनकी स्वयं की उचित प्राप्ति या अभ्यास); इत्यादि। यही श्लोक थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करता है (ब्याकरण)।

थेरा जेंटा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(112):वाचागोट्टा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (112) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
112. वच्छगोत्ता
बुद्ध युग में राजगृह में एक धनी ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ, और क्योंकि वच्छ नाम के चार थेरा थे, इसलिए उन्हें वच्छगोत्ता कहा गया। [1] परिपक्व होने पर, और ब्राह्मण (पुजारी) विद्या में निपुण होने पर, उन्होंने निर्वाण की खोज में उन

अध्ययनों में कोई सार नहीं पाया, और एक विचरण करने वाले संन्यासी बन गए। इस प्रकार वे भगवान (बुद्ध) से मिले और उनसे प्रश्न पूछे। उत्तरों से संतुष्ट होकर, उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और समय के साथ छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त की। [2] अपने जीवन पर प्रसन्नतापूर्वक विचार करते हुए, उन्होंने यह कथन (गाथा) कहा:

[112] तेविज्जोहाm महाझायि सेटोसमाथाकोविडो॥
सदात्तो मे अनुप्पत्तो कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥॥

[112] त्रिविध ज्ञान मेरा है, और मैं ध्यान
-परमानंद में निपुण हूँ , संतुलित मन की शांति में पारंगत हूँ । मैंने मोक्ष प्राप्त कर लिया है, और सभी बुद्ध-आदेश पूरे हो चुके हैं।

[1] अन्य को बुलाया गया, एक, पिलिंडा-वाचा (IX.) और दो, वाना-वाचा (XIV. और CXIII.)।

[2] ये दोनों संवाद मज्झ., i., 72वें और 73वें सूत्र में मिलते हैं। वच्छगोत्त के भिक्षु बनने की दीक्षा का भी उल्लेख है, और यह भी कि बुद्ध उन्हें शांति और अंतर्दृष्टि के अध्ययन की ओर बढ़ने के लिए कहते हैं, जिससे छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त की जा सकती है। देखें संकलन, भाग 9।

1.12-2 [112] वचागोट्टाथेरा के छंद पर टिप्पणी
तेविज्जोऽहं महाजिहायी से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वच्छगोत्त का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले अच्छे कर्मों के बीज बोते हुए, वे भगवान विपस्सी (बुद्ध) के समय बंधुमती नगर के एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म हुए। बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने एक दिन राजा और नागरिकों के साथ मिलकर बुद्ध को श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की और उसके बाद, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे राजगृह में एक धनी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म हुए। उनका नाम वच्छगोत्त था क्योंकि वे वच्च (बछड़ा) वंश से थे। बुद्धि प्राप्त करने पर उन्होंने ब्राह्मणों के अनेक ज्ञानों में निपुणता प्राप्त की और मोक्ष (विमुक्ति) की खोज में उन्होंने उन ज्ञानों में अपने सार का कोई अंश नहीं देखा, संसार का त्याग कर परिब्बाजक बन गए, विचरण करते हुए गुरु के पास पहुँचे, उनसे अपने प्रश्न पूछे, जिनका उत्तर गुरु ने दिया, वे धर्मपरायण हो गए, गुरु की उपस्थिति में भिक्षु संघ में शामिल हो गए और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म करके शीघ्र ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बन गए। अतः अपदान में कहा गया है:—

"सौ किरणों वाले उगते सूरज के समान, सुनहरी किरणों वाले सूर्य के समान, पंद्रह दिन के पूर्णिमा के समान, जगत के नेता अपने प्रस्थान (निय्यन्तं) पर थे। साठ हजार की संख्या में सभी दोषरहित अरहंत आत्म-जागृत बुद्ध, मनुष्यों के सम्राट (द्विपदिन्द), मनुष्यों में श्रेष्ठ बुद्ध के चारों ओर थे।

जिस सड़क से दुनिया का नेता जा रहा था, उसे पूरी तरह साफ करने के बाद,

मैंने वहां एक झंडा फहराया और मेरा मन श्रद्धापूर्वक प्रसन्न हुआ।

यह वर्तमान से इक्यावन युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने झंडा फहराया था; मुझे किसी भी बुरी घटना का जिक्र याद नहीं है;

ध्वजारोहण का यह एक सार्थक परिणाम है।

वर्तमान से पूर्व के चौथे युग (कप्पा) में,

मैं एक बहुत शक्तिशाली शासक बन गया।

सभी विशेषताओं से युक्त,

सुधजा (अच्छा ध्वज) के नाम से प्रसिद्ध।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बनने के बाद, उन्होंने अपनी उचित उपलब्धि (पटिपत्ति) पर विचार किया, प्रसन्न हुए और अपनी आनंदमय अभिव्यक्ति के रूप में एक श्लोक बोला।

112. "मैं त्रिगुणात्मक महाविज्ञान (तेविज्जो) का स्वामी हूँ।"

और एक महान ध्यानी (महाझयी)

मेरे मन को शांत और स्थिर रखने में चतुर (cetosamathakovido)।"

इस प्रकार मेरा अपना उद्देश्य पूरा हो गया था;

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

वहाँ, तेविज्जोऽहं का अर्थ है: यदि लोग मुझे पहले "ब्राह्मणो तेविज्जो (त्रिविध विज्ञान का ब्राह्मण)" के रूप में अच्छी तरह जानते थे, क्योंकि मैं तीन वेदों के सागर के दूसरे छोर पर चला गया था, तो वह नाम (समञ्ञामात्तं) केवल वेदों में ज्ञान के कर्तव्य (विज्जाकिच्च) के अभाव के कारण था; अब, मैं तीन प्रकार के महाविज्ञान (विज्जा) जैसे कि पूर्व निवासों का ज्ञान (पुब्बेनिवास ज्ञान) आदि प्राप्त करने के कारण परम महत्व (परमत्थतो) वाला त्रिविध विद्वान (तेविज्जो) हूँ। मैं महाझायी इसलिए भी हूँ क्योंकि मैंने सही मार्ग (मग्ग) और श्रेष्ठ फल (फल) के ध्यान के माध्यम से महान, विशाल (उलारा), उच्च (पनीत) निर्वाण पर ध्यान (झायन) किया है, और साथ ही दुख के मूल (समुदयपक्खुयस्स) का पक्ष लेने वाले दुराचार (किलेसगना) के घने समूह को पूरी तरह (अनवसेस) और प्रचुर मात्रा में (महन्तस्स) जलाकर (झापनतो) मैं महाझायी हूँ। चेतोसमथकोविदो का अर्थ है आत्म-दुराचार (संकिलेस) के कर्मों (धम्मनं) को दबाकर मन (चेतसो) को शांत (समादहने) करना, जो मानसिक अशांति का कारण बनते हैं: इसी के माध्यम से उन्होंने अपने तेविज्ज बनने के कारण की बात की। वास्तव में, एकाग्रता में चतुराई (समाधिकोसाल्ल) के साथ, दोषों के नाश (आसवक्खयेन) के माध्यम से, तेविज्ज की अवस्था प्राप्त होती है; यह केवल सर्वांगीण (नकेवलेना) नहीं है। सदात्थो का अर्थ है; अपना उद्देश्य या लाभ (सकत्थो); यह 'क' अक्षर के 'द' में परिवर्तित होने का उदाहरण है, जैसे: "अनुप्पत्तसदत्थो (अपना उद्देश्य पूरा नहीं हुआ)," इत्यादि। अभिव्यक्ति; "सदात्थो (अपना लाभ)," को अरहंतत्व के रूप में समझा जाना चाहिए। वास्तव में, इसे "सकत्थो (अपना लाभ)" कहा गया है, क्योंकि स्वयं से बंधे होने के कारण स्वयं के लाभ की अवस्था, स्वयं को न त्यागने का अर्थ और अपने परम लाभ (परमत्थ) का अर्थ इसमें निहित है। यह कि मेरा अपना लाभ अनुपत्टो (इस प्रकार) प्राप्त हुआ है (अधुगतो) मुझे (मेरे द्वारा) (मया)। इसके द्वारा उन्होंने बताया कि उन्होंने अपनी ध्यानमग्न अवस्था को चरम सीमा तक पहुँचा दिया है (महाज्झाई-भावं), जैसा कि कहा गया है। शेष भी इसी प्रकार है।

थेरा वच्छगोत्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(113):वनवाच्चा2

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (113) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक

113. वनवच्छ (2)
बुद्ध युग में राजगृह में एक धनी ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर वच्छ नाम से विराजमान हुए, उन्होंने राजा बिम्बिसार के भगवान (बुद्ध) से परामर्श करने पर आस्था प्राप्त की। भिक्षु संघ में प्रवेश करके उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। अरहंत (ज्ञानोदय प्राप्त) के रूप में वे वैराग्य में समर्पित होकर वनों में रहने लगे; इसलिए उन्हें वनवच्छ (वनवच्छ) कहा जाने लगा। अब ऐसा हुआ कि थेरा ने अपने परिवार पर कृपा करने के लिए राजगृह जाकर वहाँ कुछ समय के लिए निवास किया और उन्हें अपने जीवन के तरीके के बारे में बताया। उनके परिवार ने उनसे विनती करते हुए कहा, 'हे प्रभु, कृपया हमें निकटवर्ती विहार (मठ) में रहने की कृपा करें, और हम आपकी सेवा करेंगे।' थेरा ने इस श्लोक में उन्हें पर्वतों के प्रति अपना प्रेम और वैराग्यपूर्ण जीवन दोनों दिखाया:

[113] अचोदिका पुथुसिला गोनांगुलमिगायुत,॥
अंबुसेवलसंजन्ना ते सेला रामयंती मन' ती॥ ॥

[113] चट्टानें जहाँ स्वच्छ जल बहता है, एक पथरीली दुनिया,
काले चेहरे वाले बंदरों और डरपोक हिरणों से आबाद,
जहाँ चमकीले फूलों के नीचे चांदी की धाराएँ बहती हैं:
वे मेरे दिल के आनंद के उच्चभूमि हैं। [1]

यह श्लोक थेरा द्वारा अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा बन गया।

[1] दोनों वच्छों के बीच एकमात्र बंधन उनकी सामान्य ब्राह्मण (पुजारी) पृष्ठभूमि और प्रकृति के प्रति उनका प्रेम प्रतीत होता है। यह कविता सांकिच्च और महान कस्सपा (11वीं शताब्दी, 11वीं शताब्दी) से संबंधित कविताओं का पूरक है। तुलना करें वनों के कपिलवस्तु वच्छ (13वीं शताब्दी) की कविता से भी। यह संदेहजनक है कि क्या दोनों कथाएँ एक ही स्रोत से उत्पन्न नहीं हुई हैं। लेकिन तुलना करें 12वीं शताब्दी।

1.12-3 [113] वनवच्छथेरा के श्लोक पर टीका
अच्चोदिका पुथु सिला से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वनवच्छ का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले अच्छे कर्मों के बीज बोते हुए, उन्होंने भगवान विपस्सी के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। बुद्धि प्राप्त करने पर वह दूसरे व्यक्ति के लिए काम करते हुए अपना जीवन व्यतीत कर रहा था, जब उसने किसी दूसरे के प्रति अपराध किया, तो मृत्यु के खतरे से भयभीत होकर वह भाग गया, रास्ते में उसे एक बोधि वृक्ष दिखाई दिया, वह श्रद्धा से भर गया, उसने उसकी जड़ को साफ किया, अशोक पुष्पों के गुच्छे बनाकर श्रद्धापूर्वक अर्पित किए, उसे प्रणाम किया, पालथी मारकर बैठ गया और अपना मुख विशेष रूप से बोधि वृक्ष की ओर करके उसकी आराधना करने लगा, तभी उसने अपने शत्रुओं को उसे मारने के लिए आते देखा, लेकिन उसने उनके प्रति क्रोधित मन नहीं बनाया, केवल बोधि वृक्ष का ध्यान करता रहा और सौ पुरुषों की ऊँचाई वाली एक खाई में गिर पड़ा। उस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ, और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे राजगृह में एक धनी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम "वच्छा" था। वयस्क होने पर उन्होंने बिम्बिसार की राजसभा (समागम) में उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बने और अरहंत पद प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में ऐसा कहा गया है।

मैं दूसरों के लिए काम करने में लगा हुआ हूँ।

अपराध पर किया गया।

विशेष रूप से जंगल में भाग गया

अपराधबोध के भय से पीड़ित होना

(भयावेरा).

एक खिलते हुए पेड़ को देखकर, मैंने

अच्छी तरह से बंधे हुए गुलदस्ते बनाए;

तांबे के रंग का (ताम्बा) एकत्र किया गया

मैंने फूलों को नीचे बिखेर दिया।

बोधि वृक्ष।

उस बोधि वृक्ष को पूरी तरह साफ करने के बाद,

सबसे उत्कृष्ट पाटाली वृक्ष, मैं

मैंने अपनी जांघें पार कीं (pallaṅkaṃ ābhujitvā)

और बोधि वृक्ष के आधार की ओर बढ़े

पेड़।

जिस रास्ते से मैं भागा था, उसे खोजते हुए,

वे मेरे पास पहुँच गए; यह देखकर

वहाँ भी, मैंने इस पर विचार किया।

सबसे उत्कृष्ट बोधि वृक्ष।

मैंने बोधि वृक्ष को प्रणाम किया।

मेरा मन श्रद्धा से प्रसन्न था। मैं गिर पड़ा।

पहाड़ी में कई बार पिटाई हुई जो

यात्रा कठिन और भयावह थी।

यह इक्यावन युग (कप्पा) पहले की बात है।

जिस वर्तमान समय में मैंने अपना आदर व्यक्त किया है-

फूलों की भेंट; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही है

मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम

बोधि वृक्ष को अर्पित की जाने वाली भेंट।

तीसरे युग (कप्पा) में, इससे पहले

वर्तमान में, मैं काफी आत्म-नियंत्रित था।

(सुसान्याता) संप्रभु, एक बहुत शक्तिशाली विश्व-

सात रत्नों से सुशोभित राजा।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

अरहंत बनने के बाद, वे एकांतवास में विशेष आनंद के कारण वन में ही निवास करते थे; इसी कारण उन्हें वनवच्छ नाम दिया गया। फिर, कभी-कभी, थेरा अपने सगे-संबंधियों के उत्थान के उद्देश्य से राजगृह जाते थे, जहाँ वे अपने सगे-संबंधियों के साथ कुछ दिनों तक रहते थे और अपने जाने का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करते थे। उनके सगे-संबंधियों ने उनसे निवेदन किया, "आदरणीय गुरुदेव! हमारे उत्थान के उद्देश्य से, कृपया पास के किसी मठ में निवास करें; हम आपकी सेवा करेंगे।" थेरा ने एकांतवास में अपने गहरे आनंद को व्यक्त करने के लिए एक श्लोक का पाठ किया, जिसमें उन्होंने आनंदवर्धक पहाड़ियों की घोषणा का संकेत दिया।

113. "वे पथरीली पहाड़ियाँ (सेला) जो कोमल हैं

पानी, जो नरम पत्थरों से ढका हुआ है,

बंदरों और हिरणों के साथ मिश्रित, ढका हुआ

ठंडे काईयुक्त पानी (अंबुसेवाला) के साथ

मुझे प्रसन्न करो।

वहाँ, अच्छोदिका का अर्थ है: वे "अच्छोदिका, कोमल जल के स्थान" हैं, क्योंकि उनमें स्वच्छ, यह (अभला), उत्तम (सुखम) जल है। यद्यपि इसे (वत्तब्बा) अच्छोदका कहा जाना चाहिए, लिंग विकृति (लिंग विपल्लास) के कारण इसे 'अच्छोदिका' कहा गया है; इससे वह जल आपूर्ति की पर्याप्तता की ओर इशारा करता है। पुथुसिला का अर्थ है: इन (पहाड़ियों) में पत्थर (सिला) हैं, जो प्रचुर मात्रा में (पुथुला) फैले हुए हैं (विट्ठता) और कोमल होने के साथ-साथ संभालने में आसान (मुदुसुख) भी हैं (संपस्सा); इस प्रकार, पुथुसिला, कोमल पत्थरों से ढका हुआ; इससे वह बैठने के स्थानों की पर्याप्तता की ओर इशारा करता है। वे गोनांगुला हैं क्योंकि उनकी पूंछ बैलों जैसी है; काले बंदर; वे "पकतिमक्कट (सामान्य बंदर)" भी कहते हैं। बंदरों और चित्तीदार मृगों आदि के इधर-उधर घूमने से जुड़े (आयुता) और मिश्रित (मिसिता); इस प्रकार, गोणंगुलमिगायुता। इससे वे यह बताते हैं कि गैर-मानव प्राणियों (अमनुस्सा) द्वारा उपयोग किए जाने (उपचारिता) के कारण इनमें वन के लक्षण (लक्खना) मौजूद हैं (उपेता)। अंबुसेवालसंचन्ना का अर्थ है: जल के उत्पादन और निरंतर प्रवाह (पग्घरमनसलिलाता) के कारण यहाँ-वहाँ जल और काई (सेवला) से अच्छी तरह ढके (संचादिता) हैं (संचादिता)। Te selāramayanti maṃ का अर्थ है: वे पथरीली पहाड़ियाँ जहाँ मैं निवास करता हूँ, एकांत में आनंद लेने वाले मुझे प्रसन्न करती हैं; इसलिए मैं वहीं जाता हूँ; यही इसका अर्थ है। यही श्लोक थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) की व्याख्या भी बन गया।

थेरा वनवच्छ के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(114):अधिमुत्ता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (114) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
114. अधिमुत्त [1]
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर अधिमुत्त नाम से जन्मे अधिमुत्त ब्राह्मण (पुजारी) ज्ञान में सारहीन पाकर असंतुष्ट हो गए। अपने जीवन के अंतिम समय में पलायन की तलाश करते हुए उन्होंने जेतवन के प्रस्तुतीकरण के दौरान बुद्ध की महिमा देखी। भिक्षु संघ में प्रवेश करके उन्होंने समय के साथ अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने अपने साथ रहने वाले उन मोटे भिक्षुओं को इस श्लोक में संबोधित किया:

[114] कायदुत्हुल्लागरुणो ह्यमानमहि जीविते,॥
शरीररसुखगिद्धस्स कुतो समाना साधुता' ति.॥॥

[114] यदि तुम इस स्थूल शरीर पर इतना ध्यान दोगे,
इसके सुखों का लालच करोगे, जिससे
जीवन की ऊर्जाएँ क्षीण होती रहेंगी, तो हे
पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) में पूर्णता कहाँ से आएगी?

[1] सी.एफ. CCXLVIII., जिसे सावत्थी के अधिमुत्ता का भी श्रेय दिया जाता है।

1.12-4 [114] अधिमुत्तत्तरा के श्लोक पर टीका
कायदुत्तुल्ला गरुनो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अधिमुत्त का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि भगवान पद्ममुत्तरा के समय में उनका एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म हुआ था, और जब वे वयस्क हुए तो उन्होंने सभी ब्राह्मण विद्याओं (ब्राह्मणविज्जा) में निपुणता प्राप्त की, काम (इंद्रिय सुख) में हानि देखी, गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संसार का त्याग कर एक संन्यासी बन गए, वन में रहने लगे, बुद्ध के प्रकट होने के बारे में सुना, मानव बस्तियों के परिसर (उपचार) में गए, संयोगवश उन्हें भिक्षुओं के समूह से घिरे हुए गुरु के दर्शन हुए, वे श्रद्धा से भर गए और अपने सरकंडे के वस्त्र गुरु के चरणों में बिछा दिए। गुरु ने जब उनकी इस प्रवृत्ति (अज्जासय) का ज्ञान प्राप्त किया, तो वे उस (सरकंडे के वस्त्र) पर खड़े हो गए। उन्होंने वहाँ खड़े भगवान को सुगंधित कालनुसार भेंट किया और "समुद्धरसिऽ मं लोकं (आपने इस संसार को उत्पन्न किया)" से शुरू होने वाले दस श्लोकों में उनकी स्तुति (अभित्तवि) की। गुरु ने उनसे भविष्यवाणी करते हुए कहा, "आने वाले समय में, एक लाख युगों (कप्पा) के बाद, गौतम नामक सर्वथा आत्मज्ञानी बुद्ध के युग में, वे भिक्षु और छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनेंगे," और प्रस्थान कर गए। उस पुण्य कर्म के कारण उनका पुनर्जन्म दिव्य लोक में हुआ और उसके बाद, इस बुद्ध के प्रकट होने तक, वे लगातार जन्म-मृत्यु के चक्र में दिव्य और मानव प्राणियों के बीच विचरण करते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका जन्म सावत्ती में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। उन्हें अधिमुत्त नाम प्राप्त हुआ। बुद्धि की आयु प्राप्त करने पर, उन्होंने समस्त ब्राह्मण विद्या में निपुणता प्राप्त की और उसमें कोई सार न पाकर, अपने अंतिम अस्तित्व की स्थिति के कारण मुक्ति की खोज में जुट गए। जब बुद्ध ने जेतवन ग्रहण किया, तब उनकी शक्ति को देखकर उन्होंने उचित श्रद्धा प्राप्त की, गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास के मार्ग पर चल पड़े और कुछ ही समय में अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

पीले कनिकारा की तरह चमकीला

फूल, मोमबत्ती की तरह चमक रहे हैं

स्टिक (दीपरुक्खा), चमकदार समान

भोर के तारे के समान,

आकाश में बिजली की चमक, वह

वह निडर और भयभीत नहीं था, जैसे कि

सिंह, पशुओं का स्वामी (मिगाराज);

अपने ज्ञान के प्रकाश को प्रकट करते हुए, वह

विधर्मियों की भीड़ को कुचलते रहे। मैंने देखा

दुनिया का नेता जो ऊपर की ओर खींच रहा था

इस दुनिया में, सभी संदेहों को दूर करते हुए।

मैं गुंथी हुई बालों की लटें (जटा) पहनती थी।

और मृग की पिंडली (अजिमा); मैं ऊँचा था,

सीधा और वैभवशाली;

अपने सरकंडे के वस्त्र को पकड़कर, मैं

इसे उनके चरणों के तलवों पर भी फैला दें।

कालानुसारिया नामक मरहम एकत्र करने के बाद,

इसलिए मैंने तथागत पर लेप लगाया।

आत्मजागृत बुद्ध को कलंकित करने के बाद

मैंने विश्व के नेता की उचित प्रशंसा की।

हे महान ऋषि, जिन्होंने जलप्रलय पार किया!

आप इस दुनिया को बखूबी संभालते हैं; आप इसे बनाते हैं

इसे अपने ज्ञान के प्रकाश से रोशन करो

आपके उत्कृष्ट ज्ञान का अनावरण।

आप धर्म के पहिये को घुमाते हैं, कुचलते हैं-

अन्य मतों के धारकों (परतित्तिया) को शामिल करना;

युद्ध जीतने के बाद, तुम बैल हो।

(पुरुषों के बीच) ने धरती को हिला दिया।

विशाल महासागर में लहरें टूट जाती हैं

समुद्र तट के अंत में (वेलंता);

ठीक इसी प्रकार सभी विधर्म (दिट्ठि)

अपने ज्ञान में भंग हो जाना।

जब बारीक जाली वाले मछली पकड़ने के जाल के साथ अच्छी तरह से

गिरा दिया और लाया (संपतनिते)

(जलीय) जीव जो अंदर चले गए हैं

जाल वहां हैं और फिर (tāvade)

उत्पीड़ित (पीलित); ठीक उसी तरह,

दुनिया में विधर्मी (तित्तिया)

उनके व्यक्तिगत (पुथु) पर निर्भर

विधर्म, पलटना (परिवत्तंती)

मुझे (मारीसा) आपके उत्कृष्ट ज्ञान के भीतर-

चट्टान। बिल्कुल! आप ही रक्षक हैं।

(नाथो), उन लोगों के लिए जिनके कोई रिश्तेदार नहीं हैं;

आप उन लोगों के लिए शरणस्थल हैं जो बेसहारा हैं।

खतरे से घिरा हुआ; तुम ही हो

जो लोग संकट में हैं, उनके लिए राहत (परायण)

मुक्ति (मुत्ति) की आवश्यकता (अत्थीनम्)।

आप ही एकमात्र नायक (एकवीरो) हैं, अद्वितीय हैं।

(asdiso); आप संग्रह का गठन करते हैं

(सांचयो) प्रेम और दया का,

उनकी मात्रा में; आपका कोई सानी नहीं है, आप

वे अत्यंत शांत और निर्मल हैं (सुसामो)।

(संतो); आप ऐसे हैं जो परिचित हैं

(वसी) विजय के साथ (जितंजयो)।

आप दृढ़ बुद्धिमान (धीरो) हैं, आपमें कोई कमी नहीं है।

भ्रम (विगतसम्मोहो), कामवासना से मुक्त

लालसा (अनेजो), और संदेह। आप हैं-

अपने गुस्से से तंबू (तुसिटो) उल्टी कर दी

(वान्टाडोसो); आप शुद्ध (निम्मलो) स्वयं हैं-

नियंत्रित (सन्यतो) और स्वच्छ (सुचि)।

आप आसक्ति (संगतिगो) से परे जा चुके हैं;

आपने अपना अभिमान (हतामादो) नष्ट कर दिया है; आप

वे तीन प्रकार के महाविज्ञान के स्वामी हैं

(तेविज्जो); आप तीन के अंत तक पहुँच गए हैं

अस्तित्व; तुम सीमा पार कर चुके हो

(सीमातिगो); आप सत्य के शिक्षक हैं

(धम्मगरु); आपको अपना लाभ मिल गया है

(गटत्थो); आप अद्भुत कल्याणकारी हैं

(हितवभुतो).

तुम एक नाव की तरह हो जो तैरती हुई पार जा सकती है

(ताराको); तुम छिपे हुए खजाने के समान हो

(निधि), विश्वास का निर्माता (अस्ससकारको);

तुम शेर की तरह निडर हो; तुम कर सकते हो

अभिमानी होने का सामर्थ्य (dappito) के समान

हाथियों का स्वामी। प्रशंसा करते हुए

दस श्लोकों के माध्यम से, बुद्ध पदुमत्तरा

बहुत ख्याति प्राप्त व्यक्ति, और मैंने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की।

गुरु के चरणों में, मैं चुपचाप खड़ा रहा।

(tunhī aṭṭhāsi). पद्ममुत्तरा, संसार के ज्ञानी,

बलिदान की भेंट के योग्य प्राप्तकर्ता,

गुरु, अपने पुरोहितों के बीच खड़े होकर

भिक्षुओं ने ये श्लोक कहे। मैं घोषणा करूँगा।

उनके बारे में, जिन्होंने मेरे नैतिक उपदेशों की प्रशंसा की थी।

(सीला), ज्ञान के साथ-साथ मेरा अच्छा धर्म

साथ ही, जब मैं बोल रहा हूँ तो आप सभी मेरी बात ध्यान से सुनें।

वह स्वर्ग लोक में आनंदित होगा।

साठ हजार युगों (कप्पा) के लिए; होने के बाद

अन्य दिव्य प्राणियों पर हावी होकर, वह

संप्रभुता का प्रयोग करें।

बाद में, भिक्षु बनने के बाद, वह,

चमक के आधार द्वारा प्रेरित होना

(सुक्कमूला), वह भिक्षु बन जाएगा

भगवान गौतम की देन।

एक भिक्षु बनने के बाद वह स्पष्ट रूप से

शारीरिक रूप से बुरे कर्मों से दूर रहें;

सर्वांगीण समझ प्राप्त करने के बाद

वह सभी रोगों का परिणत हो जाएगा।

रोग मुक्त होकर निर्वाण में प्रवेश करें।

ठीक उसी प्रकार गर्जना (थानयं)

वर्षा इस धरती को सींचती है, उसमें

ठीक उसी तरह, हे महान वीर! आप

आपने मुझे अपनी शिक्षा से संतुष्ट किया।

सत्य (धम्म) की प्रशंसा करते हुए।

विश्व के नेता, उनका नैतिक उपदेश

(सीला), उनका ज्ञान (पञ्ञा) और साथ ही

धम्म, मैंने पूर्ण शांति प्राप्त कर ली है

(परमं सन्तिं), अमर (अच्चुतं)

निर्वाण का मार्ग (पदा)।

निःसंदेह (अहो), निश्चय ही (नूना) वह महिमामयी है

एक; चक्खुमा (आंख) का स्वामी

वह लंबे समय तक (ciraṃ) बना रहेगा (tiṭṭheyya); वह

अज्ञानियों को ज्ञान प्रदान करना (विजान्ययुम्)

वह पुरुषों को स्पर्श करवाता था (अन्नतां च);

(phuseyyuṃ) अमर (amataṃ) पथ (padaṃ).

यह मेरा अंतिम (पच्चिमा) जन्म (जाति) है।

अस्तित्व पूरी तरह से नष्ट हो गए थे (परिञ्ञाय)

सभी बीमारियों (सब्बासवे) के बावजूद, मैं बीमारियों से मुक्त रहता हूँ।

यह एक लाख युग (कप्पा) पूर्व था।

वर्तमान से पहले जब मैंने अपना विशेष बनाया था

बुद्ध की स्तुति। मुझे कोई बुराई याद नहीं है।

अस्तित्व; यही इसका फलदायी परिणाम है

मेरी घोषणा (कित्तनाया)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने भिक्षुओं को उपदेश देते हुए एक श्लोक सुनाया, जो उनके साथ रह रहे थे और जो शारीरिक रूप से बहुत बलवान थे (कायदालहीबहुले)।

114. "जो भारी (गरुनो) है

अपवित्रता (कायदुट्ठुल्ला), जब जीवन

त्यागा जा रहा है (हिय्यामान), कहाँ से

(कुतो) का कल्याण (साधुता) है

एक भिक्षु जो शारीरिक सुख की लालसा रखता है (गिद्धा)।

आनंद (सेरीरासुख)।"

वहाँ, Kāyaduṭṭullagaruno का अर्थ है: अप्रिय (asubhayogyatā) से जुड़े होने की अवस्था के कारण अपवित्रता (duṭṭhullaṃ) है; शरीर की अपवित्रता शारीरिक अपवित्रता (kāyaduṭṭhullaṃ) है; जिस व्यक्ति में शारीरिक अपवित्रता अच्छी तरह विकसित (sambhāvitaṃ) हो गई है, वह शारीरिक अपवित्रता (kāyaduṭṭhullagu) से भारी (garu) है; संसार (anissaranappaññā) से बचने के लिए बुद्धिहीन होकर, वह शारीरिक पोषण (kāyaposana) की खोज (pasuto) में लगा रहता है और शारीरिक दृढ़ता (kāyadaḷhībahulo) से एक हो जाता है; इस प्रकार, यही अर्थ है। जो शारीरिक व्यभिचार से बोझिल है (कायदुत्तुल्लगरुनो)। हिय्यमानंहि जीविते का अर्थ है; जब जीवन के आवश्यक तत्व (संखार) छोटी धाराओं के जल के समान शीघ्रता से बह जाते हैं (कुन्नदीनं)। सरीरसुकगिद्धस्स का अर्थ है: वह व्यक्ति जो अपने शारीरिक सुख के लिए उच्च कोटि के भोजन (पनीताहार) आदि से प्राप्त होने वाले लोभ (गेधं) तक पहुँच चुका हो। कुतो समनसाधुता का अर्थ है: किस कारण से, किस परिस्थिति में (केना कारणन) इस प्रकार के व्यक्ति को भिक्षु बनने से पुण्य (साधुता) और सुषुम्नाय (सुषुमनाता) प्राप्त हो सकता है। हालांकि, निश्चित रूप से (एकंसतो), एक भिक्षु का कल्याण (साधुता) उस व्यक्ति के लिए भी है जो अपने शरीर और जीवन की परवाह नहीं करता (निरापेक्खसस), जो जो कुछ भी प्राप्त होता है उससे संतुष्ट (संतुत्तसस) रहता है और जो केवल सक्रिय और कर्मठ (आरद्धवीरिय) रहता है; यही इसका महत्व है।

थेरा अधिमुत्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(115):महानामा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (115) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
115. महानामा
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, महानामा [1] नाम प्राप्त करने वाले उन्होंने परम पूज्य (बुद्ध) को धम्म का उपदेश देते हुए सुना और श्रद्धा प्राप्त करके भिक्षु संघ में प्रवेश किया। साधना करते हुए वे नेसादक नामक पर्वत पर रहने लगे। बुरे विचारों और इच्छाओं को उत्पन्न होने से रोकने में असमर्थ होकर उन्होंने कहा: 'इस भ्रष्ट मन के साथ मेरे जीवन का क्या मूल्य है?' और स्वयं से घृणा करते हुए वे पर्वत की एक खड़ी चट्टान पर चढ़ गए और ऐसा अभिनय किया मानो स्वयं को नीचे फेंक रहे हों, और स्वयं से किसी और से बात करते हुए इस श्लोक का उच्चारण किया:

[115] एसावहियासे पब्बतेन बहुकुताजसल्लाकिकेना,॥
नेसादेकेना गिरिना यसस्सिना परिच्छदेना' ति.।॥

[115]
देखो तुम! इस खड़ी चट्टान, इस प्रसिद्ध हंटर हिल,
जिसकी कई चोटियाँ साल के पेड़ों से घिरी हैं,
और इसकी सभी संकरी घाटियाँ घनी हरियाली से ढकी हैं, तुम सब कितने दयनीय अंत की ओर आ गए हो !

इस प्रकार स्वयं को फटकारते हुए, थेरा ने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। और यह श्लोक उनकी ज्ञान प्राप्ति (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा बन गया ।

[1] एक और उदाहरण जहाँ क्रॉनिकल उन बातों को स्पष्ट करता है जो अन्यथा अस्पष्ट हैं। ऐसा कोई संकेत नहीं दिया गया है कि यह थेरा (जिसका नाम 'महान-नाम' है) बुद्ध के पहले (गृहस्थ) शिष्यों में से एक, महा-नामा शाक्य, या अंग के लिच्छवी, iii. 76 के समान है। प्रश्नगत पहाड़ी का उल्लेख अभी तक अन्य ग्रंथों में नहीं मिला है, लेकिन टीका से अनुमान लगाया जा सकता है कि यह एक अत्यंत रमणीय स्थल रहा होगा, जहाँ छाया, पानी और औषधीय जड़ी-बूटियाँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध थीं। उनकी निराशाजनक मनोदशा के लिए, देखें वक्कली (CCV.), सप्पदास (CCXV.), और सिहा (सिटर्स, Ps. xi.)।

1.12-5 [115] महानामत्थेरा के श्लोक पर टीका
एसा'वहिय्यासे पब्बतेन से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा महानामा का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की भक्तिमय सेवा करने और इस-उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करने के बाद, सुमेध बुद्ध के समय एक ब्राह्मण परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ। उन्होंने सभी ब्राह्मण विद्याओं में निपुणता प्राप्त की, गृहस्थ जीवन त्याग दिया, एक नदी के किनारे अपना आश्रम बनवाया और वहाँ अनेक ब्राह्मणों को मंत्रों का उपदेश देते रहे। फिर एक दिन, बुद्ध उन्हें प्रेरित करने के लिए उनके आश्रम के पास गए। बुद्ध को देखकर वे श्रद्धा से भर गए, उनके लिए आसन तैयार करवाया और उन्हें अर्पित किया। जब बुद्ध बैठे तो उन्होंने उन्हें उत्तम मीठा शहद भेंट किया। भगवान बुद्ध ने इसका आनंद लिया (परिभुंजित्वा), थेरा अधिमुत्त की कथा में वर्णित तरीके से अपने भविष्य की भविष्यवाणी की (हेट्ठा) और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उनका दिव्य लोक में पुनर्जन्म हुआ और वे समय-समय पर उत्तम जन्मों में विचरण करते रहे (परिवत्तेनतो), जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका जन्म एक ब्राह्मण परिवार में, सावत्थी में हुआ और उन्होंने महानाम नाम प्राप्त किया। बुद्धि प्राप्त करने पर, वे भगवान बुद्ध के समक्ष उपस्थित हुए, सत्य (धम्म) को ध्यानपूर्वक सुना, श्रद्धावान आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, मानसिक साधना (कम्मट्ठान) में लग गए और नेसादक नामक पर्वत पर निवास करने लगे। जब वह अपने भीतर व्याप्त दुराचार (किलेसा) को अस्वीकार (विक्खम्भेतु) न कर पाने के कारण अपने शरीर से घृणा (अत्तभाव) करने लगा और मन ही मन कहने लगा, "इस दुराचारी मन (संकिलित्तचित्त) के जीवन से मेरा क्या लाभ?" तब वह पर्वत की शिखर चोटी (सिखरं) पर चढ़ गया और मन ही मन कहने लगा, "मैं इसे यहाँ से गिराकर मार डालूँगा," और फिर उसने स्वयं की ओर इशारा करते हुए एक श्लोक बोला, मानो वह किसी दूसरे व्यक्ति के बारे में बोल रहा हो:

115. इसे आप बिगाड़ते हैं (अवहिय-

(यासे) पहाड़ी के कारण, जहाँ

कई कांटेदार कुटज वृक्ष उगते हैं (जिनके

जड़ें औषधीय होती हैं), नेसादका के साथ

अपनी प्रतिष्ठा और सर्वांगीण विशेषताओं के साथ यह पहाड़ी

छत जैसी (वनस्पति की पत्तियाँ)।

वहाँ, Esā'vahiyyase का अर्थ है: हे महानामा! यह क्षीण और विकृत हो जाता है। Pabbatena का अर्थ है: इस पहाड़ी के कारण, जो (आपका) निवास स्थान बन गया है। Bahukuṭajasallakikena का अर्थ है: अनेक कुटज, इंदसाल और सल्लकी वृक्षों से युक्त: दूसरे शब्दों में, इंदसाल वृक्षों से संपन्न। Nesādakena का अर्थ है; ऐसे नाम के साथ। Girinā का अर्थ है: पहाड़ी (सेलेना) के साथ। वास्तव में, पहाड़ी (सेला) "पब्बता, पहाड़ी" है, क्योंकि यह जोड़ों (संधिसंखातेनि) के रूप में गिने जाने वाले खंडों (पब्बेहि) के साथ खड़ी है; इसे "गिरि (पहाड़ी)" कहा जाता है, क्योंकि यह औषधि आदि जैसे पदार्थों (वत्थूनं) का वर्णन (गिरिनातो) करता है जो सार (सारभूतनं) बन चुके हैं, और जल (जल) के प्रवाह (पसवना) आदि का वर्णन करता है। हालाँकि, यहाँ, क्योंकि यह दोनों अर्थों में उपयुक्त है (तदुभयत्थ

सम्भवतो), इसे “पब्बतेन” कहने के बाद “गिरिना” कहा गया है (वत्तं)। यसस्सिना का अर्थ है: स्पष्ट (पकासेना) और व्यापक रूप से प्रसिद्ध (विसुता) सभी गुणों (गुणों) से युक्त। परिच्छेदन का अर्थ है: चारों ओर से विभिन्न प्रकार के वृक्षों, झाड़ियों (गच्छ) और लताओं से ढका हुआ (छन्नेन)। दूसरे शब्दों में, आपके निवास क्षेत्र (वासनाट्टाना) के चारों ओर से छत (पफिच्छाद) होने के कारण। वास्तव में, यहाँ यही अर्थ (अधिप्पायो) है: — हे महानामा! यदि आप अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्टाना) को शिथिल करने (विस्साज्जेत्वा) के बाद जंगली विचारों (वितक्का) से भर जाते हैं, तो इस प्रकार आप इस नेसादक पर्वत से, जो आपके लिए अनुकूल (सप्पायेन) निवास क्षेत्र (निवासनाट्टाना) बन गया है और ठंडी छाया और जल से युक्त है, स्वयं को नष्ट कर देते हैं: अब, मैं आपको यहाँ से गिरा दूँगा और मार डालूँगा; इसलिए जंगली विचारों (वितक्का) से परिचित होना (वासिकेन) वर्जित (लब्भ) है। स्वयं को पूरी तरह से खतरे में डालते हुए, लेकिन इस प्रकार, थेरा ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में स्वयं को लीन किया और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में ऐसा कहा गया है।

सिंधु नदी के किनारे, मेरा

आश्रम अच्छी तरह से बना हुआ था। वहाँ मैंने पढ़ाया।

मेरे विद्यार्थियों को पारंपरिक पाठ (इतिहास)

हस्तरेखा शास्त्र (लक्खनम) के साथ।

जो लोग धर्म (सिद्धांत) के इच्छुक थे

और सुशासित (विनीरा) होकर, उसने इच्छा की

अच्छी शिक्षा सुनने के लिए (सुसासनम्); वे

छह के सेट में पूर्णता प्राप्त कर ली थी

वे वैदिक विज्ञान के विषयों का पालन करते थे और रहते थे।

सिंधु नदी के किनारे।

वे पाठ्यक्रम के विशेषज्ञ हैं

उप्पारागमना (विपदा), साथ ही

विशिष्ट चिह्नों में (लक्खनेसु);

वे तब जंगल में रहते थे (विपाइन)

उनकी सर्वोत्तम भलाई की कामना करते हुए

(अत्थं)। वहाँ और फिर (तावदे) वहाँ

संसार में आत्मजागृत बुद्ध का उदय हुआ।

सुमेधा नाम की। करुणावश

हम, विशिष्ट नेता (विनायक)

पास आया।

घास बिछाने के बाद, मैंने पेशकश की

दुनिया के सबसे बुजुर्ग व्यक्ति के लिए भी यही बात लागू होती है।

जब महान नायक, नेता

सुमेधा दुनिया के करीब आ गया था।

लकड़ी से शहद इकट्ठा करने के बाद

(विपिनातो) मैंने वही भेंट की

सर्वश्रेष्ठ बुद्ध। स्वयंजागृत बुद्ध

मुझे यह अच्छा लगा और मैंने यह बयान दिया।

(वचनं).

मैं उनके बारे में घोषणा करूंगा

जिसने नेक इरादे से मुझे वह शहद दिया

अपनी हथेलियों से; मेरी बात ध्यान से सुनो।

मैं बोलता हूँ। इस शहद की भेंट के कारण।

घास की भेंट के साथ-साथ, उसने

उसे दिव्य जगत में आनंद मिलेगा

तीस हजार युगों (कप्पा) के लिए।

तीस हजार युग (कप्पा) इसलिए वहाँ

वह संसार में गुरु बन जाएगा, जिसका नाम है

गौतम अपने कुल (कुल) में अपने वंश के अनुसार।

ओक्काका की उत्पत्ति (संभव)।

वह उनके कर्मों में उत्तराधिकारी होगा (धम्मेसु)।

एक बोसोन-पुत्र (ओरासो) द्वारा निर्मित (निमिटो)

धम्म; सभी बातों को पूरी तरह से समझने के बाद

वह अपने आसवों (कैंसर) को निर्वाण में प्रवेश कराएगा।

रोगमुक्त अरहंत के रूप में।

दिव्य लोक से यहाँ आकर,

जैसे ही उसने प्रवेश किया (अपगेट)

मां के गर्भ में, बारिश होती थी

शहद की वर्षा धरती को ढक रही है

शहद।

ठीक उसी क्षण जब मैं बाहर आया

मेरी माँ का गर्भ जो बहुत कठिन है

इससे बचने के लिए, शहद की बारिश भी हो रही थी।

बौछार, जो लगातार बरसती रहती थी

बार।

घर से विशेष रूप से बाहर आकर-

जीवन धारण करो (आगरा) मैं बेघर हो गया

भिक्षु; मुझे भोजन और पेय की प्रचुरता थी;

शहद का यही फलदायी परिणाम है-

पेशकश।

मेरी सभी इच्छाएं पूरी हुईं और मुझे सफलता मिली।

(समिद्धो), एक दिव्य प्राणी बन गया

और मनुष्य; क्योंकि उस आत्म-

मुझे शहद का वही अर्पण प्राप्त हुआ है।

आसवक्खयम् (कैंकर) का निवारण

जब बारिश हो चुकी हो और घास

यह चार उंगल मोटा है और जब पेड़

धरती पर उगने वाले पौधे अच्छी तरह से खिल गए हैं और

मैं उचित रूप से पत्तों से आच्छन्ने में निवास करता हूँ

खाली घर में खुश और रोगमुक्त रहना,

एक पंडाल (मंडप) जो पहाड़ी की तलहटी में स्थित है

पेड़।

मैं सभी अस्तित्वों से परे जा चुका था।

मध्यम (मज्जे), श्रेष्ठ (महंते)

और निम्न (hīne) भी। आज

मेरे घाव (आसवा) नष्ट हो गए हैं;

अब कोई नया अस्तित्व मौजूद नहीं है

(पुनब्भव)।

यह तीस हजार युग पहले की बात है।

तब मैंने अपनी भेंट चढ़ाई।

मुझे किसी भी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है:

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

शहद का अर्पण।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

यही श्लोक, थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने वाला श्लोक भी बन गया।

थेरा महानामा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(116):पापापरिया
श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (116) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
116. पापापरिया
बुद्ध युग में राजगृह में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने तीनों वेदों में निपुणता प्राप्त की। पारापर वंश के होने के कारण, उन्हें पारापरीयन [104] कहा जाता था , और वे मंत्रों का उपदेश देते थे। [1] उन्होंने राजगृह सम्मेलन में भगवान (बुद्ध) की बुद्धि और महिमा देखी और भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और समय के साथ अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। अपने जीवन पर विचार करते हुए, उन्होंने आनंद से यह कहा (गाथा):

[116] चा [17] फस्सायतेन हित्वा गुत्तदवारो सुसाऽवुतो,॥
अघमूलं वमित्वान पत्तो मे आसवक्खयोऽ ति.॥॥

[116] संपर्क के छह गुना क्षेत्र से व्यवहार से बचते हुए,
इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करते हुए, आत्मा के स्वामी (बुद्ध),
दुख की उल्टी का सामान्य मूल,
मैं हर विष-दाग (पाप) से प्रतिरक्षित हूँ।

यह श्लोक उनकी अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा बन गया।

[1] तुलना करें. सीसीएक्सएलआईसी., सीसीएलवीआईआई.

1.12-6[116] पारापरियत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
cha phassāyatene hitvā से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पारापरिया का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की भक्तिपूर्ण सेवा करके इस और उस जन्म में पुण्य कर्मों का संचय किया और भगवान पियादस्सी के समय एक शिकारी (नेसादा) के गर्भ में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके थे, तब भगवान पियादस्सी ने गहन ध्यान (निरोध समापत्ति) में प्रवेश करने के बाद, उन्हें उठाने के लिए एक घने जंगल में उनके भ्रमण स्थल पर बैठ गए। वह शिकारी भी हिरण की तलाश में उस क्षेत्र में गया और वहाँ उसने गुरु के दर्शन किए। वह श्रद्धा से भर गया, उसने भगवान को अपने भीतर रखने के लिए पत्तों से बना एक मंडप (साखमंडपम) बनवाया, जो कमलों से अच्छी तरह से ढका हुआ था, मानो एक शिखर वाले महल (कूटागार) का रूप हो। उसने अत्यंत उत्साह और आनंद का अनुभव करते हुए सात दिनों तक उनकी आराधना की। प्रतिदिन वह मुरझाए हुए फूलों को हटाकर उनकी जगह ताजे फूल लगाता रहा। सात दिन बीतने पर गुरु निरोध ध्यान से उठे और अपने भिक्षुओं के बारे में सोचने लगे। तभी लगभग अस्सी हजार भिक्षुओं ने गुरु को घेर लिया। दिव्य प्राणी आपस में यह कहते हुए एकत्रित हुए, "हम सत्य (धम्म) की मधुर शिक्षा सुनेंगे।" वहाँ एक विशाल सभा हुई। गुरु ने नौमोदन करते हुए उन्हें अपनी भविष्यवाणी सुनाई, जिसमें उन्होंने बुद्ध के उदय होने पर उनके दिव्य और मानव प्राणियों के बीच आने और शिष्य के रूप में ज्ञान प्राप्त करने की संभावना का संकेत दिया, और वे प्रस्थान कर गए। उस पुण्य कर्म के कारण, वे दिव्य और मानव प्राणियों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और बुद्ध के उदय होने पर राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। बुद्धि प्राप्त करने पर, वे तीनों वेदों में पारंगत हुए, अपने वंश की निरंतरता (पारापरगोत्तताय) के कारण पारापरिया नाम प्राप्त किया, कई ब्राह्मणों को मंत्रों का उपदेश देते रहे, जब गुरु राजगृह पहुँचे तो उन्हें बुद्ध की शक्ति के दर्शन हुए, उन्होंने उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए और कर्म किए। आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने और अरहंतत्व प्राप्त करने के कारण, कुछ ही समय बाद। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"विपस्सी (बुद्ध) नामक धन्य पुरुष,"

स्व-निर्मित (स्याम्भू), द

विश्व का नेता, स्वयं-

जागृत बुद्ध, बुद्धिमान ऋषि

एकाग्रता में (समाधिकुसालो),

एकांत की इच्छा होने के कारण,

महान ऋषि पियादस्सी, सबसे

पुरुषों में उत्कृष्ट, अच्छी तरह से प्रवेश किया हुआ

घने जंगल में, उसने अपना प्रसार किया

फटे-पुराने वस्त्र (पंसुकूल) पहने, और बैठ गया

नीचे।

मैं पहले हिरणों का शिकारी था।

घने जंगल में; की तलाश में

चित्तीदार मृग (पसाडामिगं),

फिर मैं इधर-उधर भटकने लगा (āhiṇḍāmi).

वहाँ मैंने आत्मजागृत बुद्ध को देखा।

जो रोग-मुक्त थे और पार कर चुके थे

बाढ़ (ओघा), जो इसके समान है

खिलता हुआ साल संप्रभु (पुप्पितं)

सालराजम्) और उदय के समान

सूर्य (सतरसिं वा उग्गतं)।

देवताओं के देवता (देवदेवं) के दर्शन करने पर

महान प्रतिष्ठा की पियादस्सी (महायसां)

मैं प्राकृतिक झील में काफी नीचे चला गया।

और फिर वे कमल के फूल लेकर आए।

कमल के फूल (पदुमा) लाकर

सौ पंखुड़ियों वाला, मन को भाने वाला।

(सतपट्टं मनोरमं), मैंने शिखरयुक्त भवन का निर्माण किया-

छत वाली संरचना को ढक दिया और उसे ढक दिया

कमल के फूल।

दयालु और करुणामय महान ऋषि पियादस्सी

विजेता बुद्ध वहीं रुके रहे।

सात लोगों के लिए शिखरनुमा छत वाली संरचना

रात-दिन।

पुराने को हटाने के बाद मैंने उन्हें बदल दिया।

ताजे फूलों से ढकी छत; ऊपर उठाकर

मैंने अपने हाथों को आपस में जोड़कर खुद को खड़ा रखा।

वहीं और उसी समय।

अपनी एकाग्रता से उठने के बाद

(समाधि), महान ऋषि पियादस्सी,

विश्व के नेता ने बैठकर सर्वेक्षण किया

(अनुविलोकेन्टो) दिशाएँ (दिसां)।

इसके बाद, सेवा करने वाले परिचारक ने

सुदस्सना नामक महान जादुई शक्ति,

गुरु के मन की बात जान ली।

बुद्ध पियादस्सी।

अस्सी हजार भिक्षुओं से घिरा हुआ।

उन्होंने दुनिया के नेता से संपर्क किया,

जो जंगल में आनंदपूर्वक बैठा था।

ऐसे दिव्य प्राणी जो निवास कर रहे थे

जंगल का घना क्षेत्र सब

तब वे एक साथ एकत्रित हुए, क्योंकि

बुद्ध के विचारों को जान पाया।

जब पृथ्वी के सभी देवता

यक्ष और कुंभ के प्रकार एक साथ

रक्खा के साथ-साथ पुरोहितों के साथ भी

भिक्षु अच्छी तरह से पहुँच चुके थे, विजेता

बोला (पब्याहारी)।

मैं उनके बारे में अपनी घोषणा करूंगा।

जिसने श्रद्धापूर्वक अपनी भेंटें अर्पित कीं

मुझे सात दिनों के लिए, और मेरे निवास

और हां, जब मैं बोल रहा हूं तो मेरी बात ध्यान से सुनें।

मैं अपने ज्ञान का प्रसार करूंगा।

वह गहरा सत्य (धम्म) जो कठिन है

विवेकशील, अत्यंत सूक्ष्म लेकिन कुशल

प्रकट हो गया; जब मैं हूँ तब मेरी बात सुनो

बोला जा रहा है।

चौदह युगों (कप्पा) तक वह धारण करेगा

दैवीय संप्रभुता; उसका शिखर महल

यह विशाल होगा और इसकी छत कमल के फूलों से ढकी होगी।

आकाश में इसे ले जाया जाएगा; यही है

फूलों की कारीगरी का फलदायी परिणाम।

वह अपने चक्करों में घूमता रहेगा

पुनर्जन्म अव्यवस्थित तरीके से (vo-

किन्नम बीस सौ युगों के लिए

(कप्पा)।

वहाँ उसका परियों का पुष्प-महल था

आकाश में ले जाया जाएगा। जैसे कि

कमल के पत्ते पर पानी नहीं लगेगा।

यहां तक कि, उसके ज्ञान में भी,

दुराचार (किलेसा) भिगोता नहीं है:

यह तो फिसलकर दूर चला जाता।

उसके मन से पांच बाधाएं दूर हो गईं।

अपना मन उसकी ओर मोड़ने के बाद

त्याग, वह दूर चला जाएगा

उन्होंने अपना परिवार त्याग दिया और भिक्षु बन गए।

इसके बाद, उन्हें एक महल में ले जाया गया।

फूलों से बना, वह त्याग देगा

दुनिया। जब वह इस पर विचार कर रहा होता है

पेड़ की तलहटी, परिपक्व मानसिकता वाला होना

और सचेतनता से युक्त, वहाँ,

उसके सिर के ऊपर एक महल बना होगा

फूलों से बना हुआ।

दान देने के बाद

वस्त्र, भिक्षा-भोजन और बैठने के लिए आश्रय।

और नींद (सयनासना) को धार्मिक अनुष्ठान के रूप में मानना

भिक्षुओं के पुरोहित वर्ग के लिए आवश्यक, वह

घावों से मुक्त होकर निर्वाण में प्रवेश करना

(आसव).

मैंने संसार का त्याग कर दिया और बन गया

एक भिक्षु मेरे साथ इधर-उधर भटक रहा था

शिखर वाला महल; भले ही मैं रहता हूँ

एक पेड़ के तल पर, शिखर वाला

महल का निर्माण हो रहा है।

मेरे वस्त्रों में और मेरे भिक्षा-भोजन में भी,

मेरी इच्छाशक्ति (चेतना) का कोई अस्तित्व नहीं है;

अपने पुण्य कर्म में पूरी तरह से संलग्न होकर, मैं लाभ प्राप्त करता हूँ

मेरी सर्वांगीण उपलब्धि।

संख्या में अगणनीय (asaṅkheyya)

(गणनातो), मेरे करोड़ों कप्पा हैं;

वे व्यर्थ ही घिस कर नष्ट हो गए थे (अटिक्कंटा)

(पामुत्ता) (कई) नेताओं को याद करते हुए

दुनिया।

उनकी सेवा करने के बाद,

प्रतिष्ठित नेता (विनायक) पियादस्सी

अठारह सौ युग (कप्पा) पहले, मैं

(अब) इस गर्भ के पास पहुँच गए हैं।

यहां मुझे आत्मजागृत बुद्ध दिखाई देते हैं।

अंतर्दृष्टि रखने वाला (चक्खुमा)

अनोमा (श्रेष्ठ) नाम दिया गया: जिसमें

मैंने उनसे संपर्क किया, मैंने स्वयं को

बेघर होकर भिक्षु बन जाना।

दुखों का निवारण करने वाले बुद्ध।

विजेता ने मुझे सही मार्ग दिखाया

(मग्गा); उनकी शिक्षा सुनने के बाद

मैंने सत्य (धम्म) को प्राप्त कर लिया है।

अविचल (अकलं) मार्ग।

स्वयं को संतुष्ट करके (तोसयित्वाण)

जागृत बुद्ध, गौतम, बैल के समान

मैं साकियान समुदाय के सभी लोगों को जान चुका हूँ।

आसव और जीवित (अब) घाव-

मुक्त (anāsavo).

यह अठारहवीं शताब्दी के युग में हुआ था।

(कप्पा) वर्तमान से पहले, कि मैं

मैंने अपनी विशेष श्रद्धापूर्ण भेंट अर्पित की

बुद्ध; मुझे विशेष रूप से किसी बुराई का ज्ञान नहीं है

अस्तित्व; यही इसका फलदायी परिणाम है

बुद्ध को मेरी श्रद्धापूर्ण भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी उचित प्राप्ति (पटिपत्तिं) पर विचार किया, प्रसन्न हुए और अपनी आनंदमय अभिव्यक्ति के रूप में एक श्लोक बोला:

116. "छह इंद्रियों को त्यागने के बाद-

मेरे पास संपर्क (फस्सायतना) थे

संवेदी द्वार की सुरक्षा की जाती है और इसे अच्छी तरह से नियंत्रित किया जाता है।

(वधित्वन) को समाप्त करने के बाद,

मैंने मुंहासों से मुक्ति प्राप्त कर ली है।

(आसवक्खया).

वहाँ, chaphassāyatane hitvā का अर्थ है: उन छह आंतरिक इंद्रियों, जैसे आँख आदि, जिन्हें "Phassāyatanāni (इंद्रिय संपर्क)" नाम दिया गया है, क्योंकि वे आँख आदि जैसे छह संपर्कों के उद्गम स्थल हैं, उन्हें उचित रूप से बांधने वाली बुराइयों का त्याग करके। Guttadvāro susaṃvuto का अर्थ है: वह अपने द्वारों की अच्छी तरह से रक्षा और नियंत्रण में था, क्योंकि आँख आदि जैसे द्वारों की रक्षा की गई थी; और वहाँ, ध्यान के द्वार (kavāṭa) के माध्यम से अच्छी तरह से बंद करके, लोभ (abhijjā) आदि जैसे बुरे विचारों (dhamma) के प्रवेश (pavesana) को रोककर, जो (pavattanaka) साबित होते हैं; दूसरे शब्दों में, उक्त विधि से छह मानसिक केंद्रों (मनच्छत्थानं) के छह द्वारों की रक्षा (रक्खितत्ता) करने के कारण वह एक (गुत्तद्वार) है; शारीरिक रूप से संयमित होने के कारण वह सुसम्बुतो है; इत्यादि; अतः, इस प्रकार अर्थ को समझना चाहिए। अघमूलं वमित्वाना का अर्थ है: बाहर रखा हुआ। (बहि) शारीरिक निरंतरता (सन्तानातो) से, उल्टी करने (उग्गिरित्वा) के बाद, वमन (पाण) पेय (योग) के प्रयोग (योग) से, श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्ग) के रूप में गिने जाने वाले सभी दुराचार दोषों (किलेसा दोष) का निवारण होता है: वैकल्पिक रूप से (वा), (उल्टी करने के बाद) अज्ञान (अविज्जा) और अस्तित्व की लालसा (भवतन्हा) के रूप में गिने जाने वाले दोष; दूसरे शब्दों में (वा) निष्कासन (बहिकरण) का कारण। पत्तो मे आसवक्खयो का अर्थ है; कामुक सुख आदि के ऐसे दोष (आसव) यहाँ नष्ट हो जाते हैं; दूसरे शब्दों में, उनके निवारण के माध्यम से इसे प्राप्त किया जाना चाहिए; इस प्रकार, आसवक्खय (दोषों का निवारण); निर्वाण और अरहंतत्व भी। उन्होंने आनंदमय उच्चारण (उदान) के माध्यम से अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करते हुए कहा: "मैंने आसवक्ख्य विकारों के नाश की अवस्था को प्राप्त कर लिया है।"

थेरा पारापरिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(117):यसा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (117) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
117. यासा
हमारे परम पूज्य (बुद्ध) के समय में बनारस के एक अत्यंत धनी सलाहकार के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उनका पालन-पोषण अत्यंत कोमल भाव से हुआ और उनके पास विभिन्न ऋतुओं के लिए तीन निवास स्थान थे, जिनका वर्णन खंडक में किया गया है। [1] पूर्ववर्ती परिस्थितियों से प्रेरित होकर, उन्होंने एक रात अपने सोते हुए सेवकों में पाप देखा और अत्यंत व्याकुल होकर, अपने सोने के चप्पल पहनकर घर और शहर दोनों छोड़ दिए; देवताओं ने उनके लिए द्वार खोल दिए। वे इसिपताना की ओर यह कहते हुए चले: 'हाय! कितना कष्ट! हाय! कितना खतरा!' उस समय परम पूज्य, जो उन पर कृपा करने के लिए इसिपताना में ठहरे हुए थे, बाहर टहल रहे थे और बोले: 'आओ, यासा, यहाँ न तो कोई कष्ट है और न ही कोई खतरा।' यासा प्रसन्न होकर अपने चप्पल उतारकर परम पूज्य के पास बैठ गए। भगवान (बुद्ध) ने उनसे क्रमिक प्रवचन द्वारा बात की, और सत्यों का उपदेश समाप्त होने पर, यासा ने सोतापाण (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त की। और जब परम पूज्य (बुद्ध) उनके पिता को सत्यों का उपदेश दे रहे थे, जो उनसे मिलने आए थे, तब यासा ने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

तब भगवान ने यासा की ओर अपना दाहिना हाथ बढ़ाते हुए कहा, 'आओ, भिक्षु!' और केवल ये शब्द कहते ही यासा के बाल दो उंगलियों की लंबाई तक कट गए, और उन्हें [105] आठ आवश्यक वस्तुएँ प्रदान की गईं। [2] अपने जीवन पर विचार करते हुए, उन्होंने उन शब्दों पर प्रसन्नता व्यक्त की, जिन्होंने उन्हें उनकी वर्तमान स्थिति में बुलाया था, 'आओ, भिक्षु!' [3] और यह कथन (गाथा) कहा:

[117] सुविलितो सुवासनो सब्बाभरणभानुसितो,॥
तिस्सो विज्ज अज्झागामीं कटं बुद्धस्स सासनं' ति.॥ ॥

[117] सुगंधित त्वचा और नाजुक वस्त्रों से सजे हुए,
और रत्नों से जगमगाते सिर के साथ, फिर भी

मैंने अपना मार्ग खोज लिया और त्रिविध ज्ञान को अपना बना लिया; [4] और अब बुद्ध-आदेश पूरा हो गया है।

[1] विनय ग्रंथ, i. 102 आगे.

[2] यह विनय में पुरानी कहानी का एक पौराणिक विस्तार है । इस क्रम में, शिक्षार्थी या शिष्य को अपने शिक्षक की प्रतीक्षा करते समय अपने जूते उतारने पड़ते थे (iremain., i. 66 (62), 154)।

[3] देखें भद्दा की इन शब्दों पर खुशी, एक उम्मीदवार के लिए एक विशेष सम्मान (सिस्टर्स, भजन xlvi., साथ ही CCXXVI. नीचे और अन्य)।

[4] मुद्दा एक आम आदमी के रूप में उनकी त्वरित उपलब्धि में निहित है।

1.12-7[117] यसत्थेरा के श्लोक पर टीका

सुविलित्तोसुवासनो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा यासा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करके, इस या उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय किया और महान शक्ति के अजगर राजा बने। सामधा बुद्ध के समय, उन्होंने बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षुओं के समूह को अपने निवास स्थान (भवनम्) में ले जाकर एक महान दान-पुण्य किया। उन्होंने बुद्ध को तीन बहुमूल्य वस्त्रों से आच्छादित किया। उन्होंने प्रत्येक भिक्षु को भी अत्यंत मूल्यवान अलग-अलग वस्त्रों (दुस्सायुग) और सभी धार्मिक आवश्यक वस्तुओं (परिक्खारा) से आच्छादित किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे जन्म-जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, सुद्धत्थ के समय में एक धनाढ्य के पुत्र बने और बोधि वृक्ष के मंडप (मंड) पर सात प्रकार के अनाज का आदरपूर्वक अर्पण किया। वे कस्सपा के समय में भिक्षु बने और भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया। इस प्रकार, जन्म-जन्मों के चक्र में विचरण करते हुए, उत्तम जन्मों (सुगति) में रहते हुए, वे हमारे इस प्रतापी के समय में बनारस में एक धनी धनाढ्य के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। यसा नाम से जाने जाने वाले वे अत्यंत कोमल (परम) थे। "तस्स तयो पासादा (उनके लिए तीन महल थे)," इस प्रकार, सब कुछ विनय पिटक के खंडक में वर्णित तरीके से समझा जाना चाहिए।

अपने पूर्व उद्देश्य (पुब्बाहेतु) से प्रेरित होकर (कोडियामानो), उसने रात के उस हिस्से (रत्तिभागे) में नींद से व्याकुल (अभिभूत) अपने आस-पास के लोगों (पारिजना) की (घृणित) अव्यवस्था (विप्पकारं) देखी, पश्चाताप हुआ, केवल अपनी सोने की चप्पलें पहनकर घर से बाहर आया, देवताओं द्वारा खोले गए नगर द्वार से निकलकर (निक्खमित्वा) इसिपतानों के पास गया और बोला: "हे! हाय! (मैं) पीड़ित हूँ; हे! हाय! (मैं) दुखी (उपसत्त्ठं) हूँ।" उस समय, जब भगवान बुद्ध, जो इसिपताना में निवास कर रहे थे और खुले में विचरण कर रहे थे, उनका उत्थान करने के उद्देश्य से, उनसे यह कहा गया: "हे यासा! आओ, यह उत्पीड़ित (अनुपद्दुतं) नहीं है; यह पीड़ित नहीं है," तो वे प्रसन्न हुए और मन ही मन कहने लगे: "मुझे बताया गया है कि ऐसा भी है जो उत्पीड़ित और पीड़ित नहीं है," उन्होंने अपनी सोने की चप्पल उतार दी (ओरुयह), भगवान बुद्ध के पास गए, एक तरफ बैठ गए, और पवित्रता के प्रथम चरण (सोतापन्न) में प्रवेश कर चुके, जो कि चार प्रकार के श्रेष्ठ सत्य के सर्वांगीण प्रसार का विषय था, जो कि गुरु द्वारा अपने क्रमिक प्रवचन को क्रम से (अनुपुब्बिकतं) देने के बाद सत्य के उपदेश (सच्चादेसना) के रूप में दिया गया था, और अरहंतत्व की कल्पना (सच्चाकासि) की। भगवान बुद्ध अपने पिता को सत्य (सच्चादेसना) बता रहे थे, जो उन्हें खोजने और पाने के उद्देश्य से आए थे। इसीलिए अपदान में कहा गया है:—

"गहराई में (oggayha) महान

सागर, वहीं मेरा घर (भवनम्) था।

अच्छी तरह से निर्मित; कमल का तालाब अच्छी तरह से बना हुआ था।

दुग (सुनिमिता), (गीतों के साथ) गाया

(pakūjitā) लाल हंसों द्वारा (cakkavāka)

(मेरा महल) अच्छी छत वाला था (संचन्ना)

दिव्य फूलों (मंडालाकेही) के साथ

साथ ही पद्मा और उप्पला कमल के साथ भी।

फूल। वहाँ एक जलधारा भी बह रही थी।

शानदार घाट के साथ रमणीय नदी

धब्बे।

(मेरा महल) अच्छी तरह से आबाद था (संचन्ना)

मछलियों और कछुओं द्वारा, और अच्छी तरह से बिखरे हुए

कई प्रकार के पक्षियों के साथ (dija)

वहां मोरों की दहाड़ गूंज रही थी।

और बगुले, और प्यारी (वग्गु) आवाज के साथ

कोयल आदि के बारे में।

कबूतर और फाख्ता (पारेवता) के साथ-साथ

सूर्य-हंस (रविहंस) और लालिमा लिए हुए

हंस जो नदी के किनारे घूमते हैं; यहाँ,

वहां दिंडीभा पक्षी और मैना भी थे।

उड़ने वाले गिरगिट (पम्पाका) और तीतर

(जीवजावका).

हंसों और बगुले ने अपनी आवाजें निकालीं (नदिता);

(इसी प्रकार) कई लाल-पीले (पिंगला) उल्लू भी।

सात प्रकार के रत्नों से संपन्न और

रेत के कण रत्नों और मोतियों के थे।

पेड़ पूरी तरह से सोने के बने थे और

तरह-तरह की मीठी सुगंधों से भरा हुआ।

उन सभी ने मेरे महल को रोशन कर दिया और

हर समय रात।

साठ हजार संगीत वाद्ययंत्र थे

हर शाम और सुबह पवज्जरे खेला जाता था।

सोलह हजार महिलाएं हमेशा घिरी रहती थीं

मुझे।

मैं विशेष रूप से अपने आलीशान घर से बाहर आया हूँ,

मैंने उस नेता को श्रद्धांजलि अर्पित की।

विश्व में सुमेहा की बहुत ख्याति थी,

धर्मपरायण और प्रसन्न।

स्वयंजागृत व्यक्ति को श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद

बुद्ध ने उन्हें उनके साथ आमंत्रित किया।

भिक्षुओं का पुरोहित वर्ग। वह बुद्धिमान सुमेधा,

विश्व के नेता ने अपनी सहमति दे दी।

धर्म (सत्य) का उपदेश देने के बाद

मुझे, महान ऋषि ने विदा किया (उय्योजेसी)।

स्वयं को श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद-

मैं जागृत बुद्ध बनकर लौटा (उपागमि)

मेरे आलीशान घर में।

मैंने अपने आस-पास के अपने दल (पारिजनम्) को इस प्रकार संबोधित किया:— "आप सभी एकत्रित हो जाओ; सूर्योदय के समय बुद्ध हमारे महल में आएंगे।

हमारे लिए, आपकी उपस्थिति में रहने से हमें अच्छा लाभ प्राप्त होगा; हम अपने सर्वश्रेष्ठ बुद्ध, गुरु को श्रद्धापूर्वक भेंट भी अर्पित करेंगे।

भोजन और पेय तैयार होने के बाद

(पट्ठुपेत्वा) मैंने भोजन का समय बताया;

एक लाख पर महारत हासिल करना (वसी),

विश्व का नेता आ गया (उपेसी)।

मैं उनसे मिलने और उनका स्वागत करने के लिए आगे बढ़ा।

पांच प्रकार के संगीत वाद्ययंत्रों के साथ:

पुरुषों में सबसे श्रेष्ठ व्यक्ति एक पर बैठ गया

पूर्णतः सोने से बना आसन (पाठे)

(सब्बासोना)।

फिर ऊपर एक छत (चदाना) थी

(उपारी) पूरी तरह सोने से बनी; पंखे उपलब्ध कराए गए

पुरोहितों के बीच ठंडी हवा (पवयन्ती)

भिक्षुओं का।

मैंने पुरोहितों को संतुष्ट किया (अतप्पयिं)

भिक्षुओं के पास भरपूर भोजन और पेय पदार्थ थे और

कपड़े भेंट किए (dussayugaḷe)

कैच (पच्चेका) भिक्षुओं के पुरोहितों के लिए।

लोगों ने कहा (वदंती): सुमेधा ऐसी थी

कि वह स्वीकार करने के योग्य थे

संसार की बलि भेंटें।

पुरोहितों के बीच बैठने के बाद

भिक्षुओं, उन्होंने ये श्लोक कहे।

मैं एक घोषणा करूँगा (किट्टा-

उसका (yissāmi) जिसने मुझे संतुष्ट किया और

इन सभी भिक्षुओं को भी भोजन और

पियो; जब मैं बोल रहा हूँ तो मेरी बात सुनो।

अठारह सौ युगों तक, वह आनंद उठाएगा

(स्वयं) (remissati) दिव्य जगत में;

वह हजार बार संप्रभु होगा

साथ ही एक विश्व-राजा भी।

चाहे गर्भ दिव्य हो या मानवीय,

वह हर समय एक पूर्ण स्वर्ण रंग के वस्त्र के पास जाता है।

छत (चदनं) ऊपर उठाई जाएगी

उसे)।

तीस हजार युगों (कप्पा) के बाद, एक

ओक्काका (इक्ष्वाकु) परिवार की संतान (संभव),

क्लैम के अनुसार गौतम नाम दिया गया,

गुरु प्रकट होंगे (भविस्सति)

दुनिया।

वह उसका उत्तराधिकारी (दयादो) बनेगा

शिक्षाएँ (धम्मेसु), एक घनिष्ठ पुत्र (ओरासो)

शिक्षा द्वारा निर्मित (धम्मनिम्मितो);

पूरी तरह से समझ लेने के बाद (परि-

सत्य को जानकर, वह निर्वाण में प्रवेश करेगा।

हर तरह के दोष से मुक्त (anāsavo)।

पुरोहितों के बीच बैठने के बाद

भिक्षुओं में से, वह सिंह की दहाड़ मारेगा;

उन्होंने उनके अंतिम संस्कार के दौरान एक छाता उठाया।

चिता (सीटाके); उसका अंतिम संस्कार किया जाएगा

(ḍayhatha) छाते के नीचे।

तदनुसार भिक्षुत्व (समन्नाम्) निर्धारित किया गया था।

मेरे द्वारा प्राप्त (अनुपत्तम्); मेरी दुष्टता

मेरे द्वारा जलाया गया था; या तो पंडाल में

या किसी पेड़ की तलहटी में, ऐसा नहीं होता

मुझमें कोई पीड़ा (संतापो) मौजूद है।

यह तीस हजार युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने अपना दान देने की पेशकश की। मैं करता हूँ।

मुझे किसी भी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यही है

मेरे संपूर्ण समर्पण का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

इसके बाद, भगवान बुद्ध ने अपना दाहिना हाथ फैलाकर पूज्य यासा से कहा: “हे भिक्षु! आइए। इन शब्दों (वचनसमनंतरं) के तुरंत बाद, वे दो उंगलियों की लंबाई के बाल और दाढ़ी (द्वंग-गुलामत्तकेसमस्सु) के साथ आठ धार्मिक वस्तुओं के धारक (धरो) बन गए, मानो वे साठ वर्ष के वरिष्ठ भिक्षु हों। अपनी उचित प्राप्ति (पटिपत्तिं) पर चिंतन करने के बाद, उन्होंने अपने आनंदमय वाणी (उदान) का उच्चारण करते हुए, एहिभिक्खु की अवस्था की प्राप्ति (पटितो) से पहले (पुरिमा) के अपने जीवन (आवत्थ) का वर्णन किया (पता करना)। (आइए, भिक्षु!)

117. “अच्छी तरह से रंगा हुआ, अच्छे से कपड़े पहने हुए (मैं था)”

सभी अलंकारों से सुशोभित।

मैंने तीन प्रकार की सुपर उपलब्धियां हासिल कीं-

विज्ञान (विज्जा); बुद्ध का उपदेश

इसे अंजाम दिया जा चुका था।

वहाँ, सुविलित्तो का अर्थ है: (मेरा) शरीर उत्तम केसर और चंदन के लेप से सुशोभित था (अनुलेपना)। सुवासनो का अर्थ है: (मैं वह था जिसने) बहुमूल्य काशी वस्त्र (महाग्घ) धारण किया था। सब्बाभरनभूषितो का अर्थ है: सभी आभूषणों से सुशोभित, सिर (सीसा) तक पहुँचने वाला (उपग) और इसी प्रकार। अज्जगमिं का अर्थ है: मैंने (अधिगच्छिं) प्राप्त किया। शेष इसी प्रकार है।

थेरा यासा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(118): किम्बिला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (118) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
118. किम्बिला
बुद्ध युग में कपिलवस्तु में एक शाक्य राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर किम्बिला नाम से जन्मे [1] किम्बिला को अपार धन-संपत्ति विरासत में मिली। अनुपिया में निवास करते समय भगवान (बुद्ध) ने उनकी अंतर्दृष्टि की परिपक्वता देखी और उन्हें प्रेरित करने के लिए एक सुंदर युवती को प्रकट किया और उन्हें वृद्धावस्था में प्रवेश करते हुए दिखाया। तब किम्बिला अत्यंत विचलित होकर यह श्लोक बोले:

[118] अभिसत्थोवा निपातति॥
वायो रूपं अण्णामिव तथैव सन्तं,॥
तस्सेव सातो अविप्पवसतो॥
अण्णससेवा सारमि अत्तनानं ति.॥ ॥

[118] किसी शक्ति द्वारा याद दिलाए जाने पर, उम्र उस पर हावी हो जाती है।
उसका रूप किसी और जैसा है, फिर भी वही है।
अब यह मेरा स्व, जिसने कभी स्वयं को नहीं छोड़ा,
उस स्व से भिन्न प्रतीत होता है जिसे मैं याद करता हूँ।

अत: अनित्यता के तथ्य को ध्यान में रखते हुए, वे और भी अधिक विचलित हो गए और भगवान (बुद्ध) के पास जाकर धम्म का मार्ग सुना, उस पर विश्वास किया, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और समय आने पर अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने श्लोक को दोहराते हुए इस बात पर बल दिया कि वे पहले चीजों को स्थायी मानते थे, और इस प्रकार उन्होंने ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) को स्वीकार किया।

[1] इसे (ब्रिटिश) किमिला और किम्मिला भी लिखा जाता है। विनय वृत्तांत के अनुसार, बुद्ध के मिशन के पहले सप्ताह में, पाँच अन्य युवा शाक्य कुलीनों के साथ उनका धर्मांतरण हुआ था। वहाँ उनके धर्मांतरण की विधि का उल्लेख नहीं है। मज्झिमा में किम्बिला को वरिष्ठ थेरा अनुरुद्ध के साथ अपनी प्रारंभिक मित्रता बनाए रखते हुए दर्शाया गया है। वह उनके साथ रहते थे, और एक तीसरे व्यक्ति, नंदिया (भजन संहिता XXV), कभी इस वन या उद्यान में, कभी उस वन या उद्यान में रहते थे (विनय ग्रंथ, 2:309, 3:228; मज्झिमा, 1:205, 3:155; देखें CXXXVIII)। अनुपिया मल्ल गणराज्य का एक नगर था (विनय ग्रंथ, 3:224)।

1.12-8 [118] किमिलाथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
अभिसात्तो वा निपातति से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा किमिला का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म करते हुए, वे भगवान ककुसंध के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म हुए। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके थे और गुरुजी परिनिर्वाण में प्रवेश कर चुके थे, तब उन्होंने उनके अवशेषों को समर्पित करते हुए शळा पुष्पों की मालाओं से मंडप के समान आदरपूर्वक अर्पण किया। उस पुण्य कर्म के कारण, उनका पुनर्जन्म तावतिंस स्वर्ग में हुआ, और वे समय-समय पर देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार जन्मों के चक्र में विचरण करते हुए, कपिलवस्तु नगर में शाक्य राजा के परिवार में उत्पन्न हुए, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम किमिला था। वयस्क होने पर, वह धन-संपन्न समृद्धि से संपन्न हो गया। उसके ज्ञान की पूर्ण परिपक्वता देखकर, अनुपॉय में निवास करने वाले गुरु ने, उसे पश्चाताप कराने के उद्देश्य से, विशेष रूप से एक सुंदर स्त्री (इत्तिरूपं) को, जो अपनी युवावस्था में थी, उसके सामने प्रकट किया। बाद में, उन्होंने उसे धीरे-धीरे वृद्धावस्था और रोग जैसी दुर्बलताओं से ग्रस्त होते हुए दिखाया। उसे देखकर, युवा राजकुमार किमिला ने अपने अत्यधिक पश्चाताप को प्रकट करने के लिए एक श्लोक कहा।

118. "मानो विशेष रूप से निर्देश दिया गया हो, उम्र

धीरे-धीरे लुप्त हो जाता है; ऐसी सुंदरता (रूपं)

लेकिन जैसे यह (तथ्येव) प्रकट होता है (सन्तं)

मेरे लिए एक अन्य (अन्नमिवा) के रूप में; क्योंकि

विचारशील होने के कारण, मैं संयोगवश

मैं उसका ध्यान भी रखता हूँ;

मानो यह किसी और (अन्नास्सा) का हो

(ईवा)।

वहाँ, abhisatto va का अर्थ है: मानो किसी दिव्य प्राणी द्वारा सलाह और निर्देश दिया गया हो: — "जल्दी जाओ; देर मत करो (tiṭṭha)। इसका एक पाठ "Abhisaṭṭho'va (मानो विशेष रूप से सलाह दी गई हो)" भी है; मानो किसी ने इस प्रकार कहा हो (abhilāsāpito): — "तेजी से जाओ (lahuṃ);" अतः, यही अर्थ है। निपातति का अर्थ है: आगे गिरना (अतिपातति), विशेष रूप से दौड़ना (अभिधावती), न ठहरना (न तिट्ठति); पल-पल क्षय और क्षीणता की ओर बढ़ना (खयवयं); अतः, यही अर्थ है। वयो का अर्थ है: शरीर की विभिन्न विशिष्ट अवस्थाएँ (विसेवा) जो युवावस्था (बाल्ययोब्बन) से शुरू होती हैं; यहाँ, उनकी युवावस्था (योब्बञ्ञं) का अर्थ है (अधिप्पेतं)। वास्तव में, वह युवावस्था उनके निकट खड़ी थी, जो विशेष रूप से पतित (अभिपातं) और क्षीण (खियंतं) हो गई थी। रूपं का अर्थ है कि वे सौंदर्य, शारीरिक समृद्धि (रूपसंपदा) की बात करते हैं। इस प्रकार, रूप शरीर है, जैसे कि ऐसे संदर्भों में: "अट्ठिंच पटिच्च" nhāruñca paṭicca maṃsañ ca paṭicca ākāso parivārito rūpaṃ tveva saṅkhaṃgacchati (हड्डी पर निर्भर, शिराओं पर निर्भर और मांस पर भी निर्भर, घिरा हुआ स्थान भौतिक शरीर के रूप में गणना की ओर ही जाता है)" इत्यादि। Aññamiva tatheva santaṃ का अर्थ है: मैं स्वयं उस सुंदर शरीर (rūpaṃ) के समान हूँ, जो वर्तमान में उसी रूप में विद्यमान (santaṃ vijjamānaṃ) है; फिर भी वह मेरे निकट ऐसे खड़ा है मानो मैं कोई और हूँ (aññaṃviya); यही इसका महत्व है। कुछ विद्वान पढ़ते हैं: "Tadeva santaṃ (यहाँ तक कि विद्यमान भी) "और Tass'eva sato का अर्थ है: उस स्वयं-स्वरूप मुझे, जो कोई और नहीं हूँ (अनञ्ञस्स) सचेत रहना। अविप्पवसतो का अर्थ है: जो अनुपस्थित नहीं है (विप्पवसन्त); वास्तव में, लंबे समय तक अनुपस्थित रहने से, जो दूसरा नहीं है वह भी उसके पास ऐसे खड़ा रहता है मानो वह कोई दूसरा व्यक्ति हो; यह भी यहाँ विद्यमान नहीं है; अतः, यही अर्थ है। अञ्ञस्स'एव सारमि अत्तानं (मैं अपने इस शरीर को किसी अन्य सजीव प्राणी के समान मानता हूँ, ध्यानपूर्वक अपने स्मरण में रखता हूँ (उपधारेमि) और भली-भांति समझता हूँ (संजानमि); त्य, यही अर्थ है। जब इस प्रकार वह अनित्यता की अवस्था के प्रति सचेत हो रहा था, तब पूर्व (दलहतरो) पश्चाताप उत्पन्न हुआ। पश्चाताप से ग्रस्त होकर वह गुरु के पास गया, सत्य (धम्म) सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बना, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास में स्वयं को स्थापित किया और कुछ ही समय में अरहंत पद प्राप्त कर लिया। अतः, ऐसा कहा गया है अपदान.--

"जब काकुसंधा, जो गाड़ी चलाकर चला गया था

उसके बुरे कर्मों (ब्राह्मण) और खर्च किए गए समय

उनका निष्पाप जीवन (वुसिमाती)

सालका फूलों की मालाएँ एकत्रित कीं

और एक पंडाल बनाया।

उस मुकाम तक पहुँचने वाले व्यक्ति बनकर

तावतिंसा स्वर्ग, मुझे सबसे अधिक लाभ हुआ।

शानदार हवेली। मैंने दूसरों को पीछे छोड़ दिया।

दिव्य प्राणियों: यही फलदायी है

मेरे पुण्य कर्म का परिणाम।

चाहे दिन हो या रात, मैं लगा रहता था

खड़े रहना और इधर-उधर चलना,

सालाला के फूलों से आच्छादित (चन्नो);

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

सराहनीय कार्य।

यह इसी युग (कप्पा) में हुआ था।

कि मैंने अपना काफी श्रद्धापूर्ण बना दिया

बुद्ध को अर्पित की गई वस्तु। मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

बुद्ध को अर्पित की गई मेरी श्रद्धा का परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने अपने पूर्व में उत्पन्न अनित्यता की चेतना को प्रकट करने के लिए उसी श्लोक को दोहराया (पच्चुदाहासि)। इसी कारण, यह श्लोक इस थेरा के अरहंत पद का वर्णन (ब्याकरण) था।

थेरा किमिला के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(119):वज्जि-पुत्त2 (द वज्जियन)

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (119) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
119. वज्जि-पुत्त (2)
(वज्जिअन)
बुद्ध युग में वैशाली में एक लिच्छवी (राजा) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, वे वज्जियन के पुत्र के रूप में जाने गए, क्योंकि उनके पिता वज्जियन थे। [1] युवावस्था में ही हाथियों को प्रशिक्षित करने में लगे रहने के दौरान, वे निर्वाण प्राप्त करने की इच्छा से प्रेरित होकर, उस समय विहार (मठ) गए जब भगवान (बुद्ध) उपदेश देने वाले थे, और सुनकर भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और समय के साथ छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त की।

कुछ समय बाद, भगवान (बुद्ध) के देहांत के कुछ समय बाद, वज्जीपुत्त ने प्रमुख थेरों के साथ धम्म को अक्षुण्ण रखने का समझौता किया और उनके साथ स्थान-स्थान की यात्रा की। एक दिन उन्होंने पूज्य आनंद को देखा, जो उस समय केवल एक छात्र थे (अरहंत नहीं), एक विशाल मंडली से घिरे हुए, उन्हें धम्म का मार्ग सिखा रहे थे। और उन्हें उच्चतर मार्गों तक पहुँचने के लिए प्रेरित करने हेतु उन्होंने यह श्लोक कहा:

[119] रुक्खमूलागहनm पसाक्किया॥
निब्बानां हदयास्मिं ओपिया॥
झाय गोतम मा च पमादो॥
किओ ते बिलिबिलिका करिसाति' ती॥ ॥

[119] आओ तुम और वृक्षों के हरे-भरे उपवन में गोता लगाओ,
निर्वाण को अपने हृदय में समाहित करो!
अध्ययन करो और आराम मत करो, हे गौतम वंश के!
इस झंझट का तुम्हारे लिए क्या अर्थ था? [2]

यह सब सुनकर और दूसरों के विषैली इच्छाओं को दूर करने वाले भाषण सुनकर आनंद व्याकुल हो गए और लगभग पूरी रात ध्यान करते हुए इधर-उधर घूमते रहे। फिर, अंतर्दृष्टि से प्रेरित होकर वे अपने कमरे में गए और पलंग पर लेटते ही उन्हें अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त हो गया।

[1] यह स्पष्ट रूप से LXII का वज्जी-पुत्त नहीं है, जो कुलीन पद का नहीं था।

[2] बुद्ध के प्रमुख सेवक आनंद द्वारा इस लक्ष्य की देर से प्राप्ति के लिए विनय ग्रंथ, iii. 373 देखें। यह श्लोक सन्य, i. 199 में भी मिलता है, जहाँ वन के अप्सराएँ आनंद की सांसारिक हितों में व्यस्तता का उल्लेख करती हैं - यह प्रवृत्ति अपने आप में पूरी तरह से मनभावन थी, और जो उनके बारे में बताई गई कई घटनाओं में स्पष्ट है। क्रॉनिकल इन अन्य संबोधितकर्ताओं का उल्लेख करता है। आनंद गौतम वंश के थे, जो बुद्ध के चचेरे भाई थे। विचित्र शब्द बिलिबिलिका को इस प्रकार विलिविलिक्रिया (शाब्दिक रूप से, चिपचिपा-चिपचिपा-कार्य?) के रूप में पुनर्कथन किया गया है, यह पुनरावृत्ति उनके स्वयं के आध्यात्मिक अवरोध के लिए कई लोगों के हितों में उनकी व्यस्तता की निंदा के रूप में अभिप्रेत है। आनंद के कथन (गथा) के लिए, CCLXX देखें; तुलना करें CLXXV भी।

1.12-9 [119] वज्जीपुत्तथेरा के श्लोक पर टीका
रुक्खमूलगहनं पसाक्किया से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वज्जिपुत्त का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों से मुक्ति पाने के लिए पुण्य कर्म संचित किए। संयोगवश, उन्होंने पिछले जन्म के चौरानवेवें युग में एक मौन आत्म-जागृत व्यक्ति को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे प्रसन्न हुए और उन्हें केले भेंट किए। उस पुण्य कर्म के फल स्वरूप, उनका जन्म दिव्य लोक में हुआ, उन्होंने समय-समय पर पुण्य कर्म किए, देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने जन्म-जन्म के चक्रों में विचरण किया और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे वैशाली में लिच्छवी राजा के पुत्र के रूप में प्रकट हुए। उनका नाम (समाञ्ञा) वज्जीपुत्त था, क्योंकि वे सम्राट वज्जी के पुत्र थे। युवावस्था में, कारणवश, उनमें संसार से मुक्ति (निसारण) की प्रबल इच्छा थी, यहाँ तक कि हाथी-सवारी (हत्थि-सिक्खा) आदि का प्रशिक्षण लेते समय भी। भटकते हुए, वे उस समय मठ पहुँचे जब गुरु द्वारा सत्य (धम्म) का उपदेश दिया जा रहा था, वे श्रोताओं के सर्वांगीण छोर पर बैठे, सत्य (धम्म) को ध्यान से सुना, उचित श्रद्धा प्राप्त की, गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बने, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने वाले कर्म किए और शीघ्र ही छह प्रकार के परम ज्ञान (चलाभिञ्ञ) से युक्त अरहंत बन गए। अतः, अपदान में यह कहा गया है:—

"हजारों में धन्य"

प्रकाश की किरणें (सहस्सरंसी),

अजेय (अपराजितो) स्वयं बनना

एक (सयामभू), जो उत्पन्न हुआ है

उनका एकांतवास विशेष रूप से सामने आया

उनके दान-भोजन से (गोचरायभिनिक-

हमी)।

मेरे हाथ में एक फल था और तभी मुझे यह घटना हुई।

उसे देखने के लिए मैं बैल के पास गया।

पुरुषों में (नरसभं)। धर्मपरायण मन वाला

और प्रसन्न होकर मैंने फल भेंट किए।

मेरे (मेरे) छेद (अवतां) में रखा हुआ

हाथ जोड़कर)

यह चौरानवेवाँ युग (कप्पा) था।

वर्तमान से पहले, कि मैं तब

मैंने इसे फलों की भेंट के रूप में अर्पित किया।

किसी भी बुरी सत्ता (दुग्गति) को याद न करना।

यह मेरे द्वारा किए गए बलिदान का फलदायी परिणाम है।

का फल।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान (चॢभिञ्ञ) से अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, एक दिन उनका सामना आदरणीय आनंद से हुआ, जो अभी भी एक विद्यार्थी थे, लेकिन अपूर्ण (सेख) थे, और सत्य (धम्म) का उपदेश देने वाली एक विशाल सभा (परिसा) से घिरे हुए थे, जब महान वरिष्ठ भिक्षु (महाथेरा) इधर-उधर निवास कर रहे थे, और गुरु के निधन (अचिरपरिनिब्बुते) के कुछ ही समय बाद बुद्ध के उपदेशों (धम्म) का एक साथ गायन (संगायितुम्) करने के लिए अपनी नियुक्तियाँ (कटवा) कर चुके थे, और उन्होंने (आनंद के) उच्चतर और सर्वोच्च सही मार्ग (मग्ग) की प्राप्ति के लिए उनके प्रयास (उस्साहं जनेंतो) को प्रेरित करने के लिए एक श्लोक कहा।

110. "जड़ के पास पहुँचने पर

वन वृक्ष (रुक्खमूलगहनं)

pasakkiya), अपना मन बना लेने के बाद

शांतिपूर्ण (निब्बाणं हदायस्मि ओपिया)

हे गौतम! झाना पर प्रवेश करो; ऐसा न करें

लेकिन लापरवाही बरतें। किस प्रकार का लाभ?

क्या आप अपने द्वारा इसे पूरा करेंगे (करिसाति)

babbling tittle tattle (biḷi biḷikā)?

वहाँ, रुक्खमूलागहनं का अर्थ है वृक्षों की जड़ों से उत्पन्न घना जंगल (गहन); वास्तव में वहाँ घना जंगल (गहन) विद्यमान है, वृक्ष की जड़ नहीं; वहाँ वृक्ष की जड़ भी विद्यमान है, घना जंगल नहीं; उनमें वह वायु, ऊष्मा और खतरे की अनुपस्थिति (अभावं) दर्शाता है; उस स्थान के घने जंगल के कारण (चुभने वाली) वायु से मुक्ति की स्थिति के कारण, वह वायु-खतरे के साथ-साथ भीड़भाड़ वाली स्थिति की अनुपस्थिति को भी दर्शाता है; इन दोनों (स्थितियों) के माध्यम से मन के विकास में संलग्न होने की सुविधा (भावनायोग्यतं) थी। पसाक्किया का अर्थ है पहुँच जाना (उपगन्त्वा)। निब्बानं हदयस्मिं ओपिया का अर्थ है: स्वयं से कहना: "एवं मया पटिपज्जित्वा निब्बानं अधिगन्तब्बं (इस प्रकार अपने कर्म पथ (पटिपज्जित्वा) का अनुसरण करने से निर्वाण प्राप्त होगा)"; इस प्रकार, हृदय में शांति (निब्बुति) स्थापित करना; मन (चित्ते) में करित्वा धारण करना। झाया का अर्थ है: इस भौतिक जगत के (तीन) गुणों (लक्खना) पर चिंतन (उपनिज्जाना) के साथ ध्यान (झाया) करना; आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास से जुड़े सही मार्ग (मग्ग) के विकास को बढ़ावा देना। गौतम का अर्थ है: वह अपने कुल के माध्यम से सत्य के संजोअर (धम्मभण्डा-गारिका) को संबोधित करते हैं। Mā ca pamādo का अर्थ है: अत्यंत उत्तम कर्मों (adhikusalesu dhammesu) के प्रति लापरवाही (āpajji) न बरतो। अब, इस प्रकार की लापरवाही को नकारते हुए (paṭikkhepa vasena), उन्होंने कहा: "Kiṃ te biḷibiḷikā karissati." वहाँ, biḷibiḷikā का अर्थ है: बड़बड़ाना viḷiviḷi (चुगली); biḷibiḷi ध्वनि का ऐसा निरर्थक उत्पादन है; इस प्रकार बहुत से लोगों का नामकरण biḷibiḷika (बड़बड़ाहट) के समान है। Kiṃ te karissati का अर्थ है: तुम किस प्रकार का लाभ प्राप्त करना चाहते हो? इसलिए, सामूहिक नामकरण (janapaññattiṃ) का त्याग करके तुम्हें अपने कल्याण (sadattha) के प्रति समर्पित (pasuto) होना चाहिए; इस प्रकार उन्होंने सलाह दी।

उस श्लोक को सुनकर (थेरा आनंद) दूसरों द्वारा बोले गए ऐसे शब्दों से पश्चाताप करने लगे जो (वायन) अपनी विषैली मीठी सुगंध बिखेरते थे, वे रात का अधिकांश समय इधर-उधर घूमते हुए बिताते रहे, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास में लीन रहे, अपने मठ में प्रवेश किया और अपने पलंग पर लेटते ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया।

थेरा वज्जीपुत्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(120):इसिदत्ता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (120) ------>>>> अगला

अध्याय I.
एकल श्लोक
120. इसिदत्ता

इस बुद्ध युग में वेलुगामा के अवंती राज्य में पुनर्जन्म लेकर, [1] एक कारवां मार्गदर्शक के पुत्र के रूप में, वे (पत्राचार द्वारा) मच्चिकासाण्ड के एक गृहस्थ चित्त के अगोचर मित्र बन गए। चित्त ने उन्हें बुद्ध की श्रेष्ठता के बारे में लिखा और उन्हें विधि की एक प्रति भेजी। इससे वे इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने महान थेरा कच्चान के अधीन भिक्षु बनने की दीक्षा ली। समय के साथ उन्होंने छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त की। इसके बाद उन्होंने बुद्ध से मिलने की इच्छा की और थेरा से विदा लेकर समय के साथ मध्य देश [2] आए और भगवान (बुद्ध) से मुलाकात की। बुद्ध ने उनसे पूछा, 'हे भिक्षु, तुम्हारा कैसा हाल है? क्या तुम समृद्ध हो रहे हो?' [108] और उन्होंने उत्तर दिया: 'हे महानुभाव, जिस क्षण से मैं आपके शासन में आया, मेरे सभी दुख और पीड़ा दूर हो गए, मेरे सभी भय और भय का अहसास शांत हो गया।' और उन्होंने यह घोषणा करते हुए अन्ना (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की , और यह श्लोक बोला:

[120] पंचकखंडा परिण्णाता तिथन्ति छिन्नमूलका,॥
दुक्खक्खयो अनुप्पट्टो पत्तो मे आसवक्खयो' ति.॥ ॥

[120] मेरे जीवन के कारक अच्छी तरह से समझे गए हैं,
फिर भी कुछ समय के लिए कटी हुई जड़ के साथ खड़े हैं। [3] दुःख मर गया! वह खोज मैंने जीत ली है, और जीत ली
है चौगुने विष के दाग से पवित्रता। [4]

[1] अवंती विंध्य पर्वतमाला के उत्तर में, बंबई के उत्तर-पूर्व में स्थित था। बौद्ध धर्म के उदय के समय यह भारत के चार प्रमुख राजतंत्रों में से एक था, और बाद में मोरीयन साम्राज्य में समाहित हो गया। इसकी राजधानी उज्जैन थी। वेलुगामा (बांस का गाँव) का उल्लेख अब तक अन्य ग्रंथों में नहीं मिलता (देखें बौद्ध भारत, पृष्ठ 1 आगे)। चित्त, जिसका घर सावत्थी के पास था, बुद्ध के सबसे प्रमुख गृहस्थ समर्थकों में से एक था। बाद की परंपरा में, लेखन द्वारा सिद्धांत के प्रचार के इस अन्य उदाहरण के लिए, देखें XCVII। कच्चमा के बारे में, देखें CXXIX। उच्चारण चित्त, कच्चाना।

[2] गंगा घाटी (रीस डेविड्स, 'द मिडिल कंट्री,' जे.आर.ए.एस., 1904, पृ. 83 आगे)।

[3] = श्लोक 90, पहला भाग.

[4] आसव.

1.12-10 [120] इसिदत्तत्तेरा के श्लोक पर टिप्पणी

पंचक्खन्ध परिञ्ञता से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा इसिदत्त का है। इसका उद्गम क्या है? इस एक व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, पुनर्जन्मों के चक्र से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्म संचित किए, और इस-उस जन्म में उनका पुनर्जन्म हुआ। जब भगवान बुद्ध रथयात्रा पर थे, तब उनका एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म हुआ। वे पुण्यमय हो गए और उन्हें सुगंधित, मीठे फल (आमोद) अर्पित किए। इस पुण्य कर्म के कारण वे दिव्य लोक में उत्पन्न हुए, और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, और अंत में अवंती राज्य के वढ गाँव में एक रथगामी के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ। उनका नाम इसिदत्त था। वयस्क होने पर, संयोगवश वे मच्चिकासंडा के धनी गृहस्थ चित्त के एक अगोचर मित्र बन गए, जिन्होंने उन्हें एक पत्र (शासनम्) भेजा, जिसमें बुद्ध के गुणों का वर्णन था। इस पत्र (शासन) से वे अत्यंत प्रसन्न हुए, थेरा महाकच्चाना की उपस्थिति में भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने लगे और शीघ्र ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान से परिपूर्ण अरहंत बन गए। अतः, अपदान में कहा गया है:—

मैंने सुगंधित फलों की भेंट चढ़ाई

स्वर्णिम आत्मजागृत बुद्ध को

रंगत, योग्य प्राप्तकर्ता

बलि चढ़ाने वाले, जो प्रवेश कर चुके थे

रथ मार्ग पर (रथियाम्)।

यह 91वें युग (कप्पा) में था।

वर्तमान से पहले, कि मैं तब

मैंने फल का चढ़ावा चढ़ाया। मैं नहीं।

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही है

फलदान का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिञ्ञा) से अर्हंत बनने के बाद, उन्होंने थेरा से अनुमति (उपुच्छित्वा) मांगते हुए कहा: "मैं बुद्ध की सेवा करने जाऊंगा" और मध्य क्षेत्र (मज्झिमदेश) में जाकर गुरु के पास पहुंचे, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए, और गुरु द्वारा उनसे वार्तालाप (कटपतिसन्थारा) करने के अंदाज़ में पूछे जाने पर, "हे भिक्षु! मुझे आशा है (कच्चि) कि आप शांत (खमनीयं) और पर्याप्त रूप से समर्थित (यापनीयं) हैं?" इत्यादि, उन्होंने एक श्लोक का उच्चारण करते हुए अपने अर्हंतत्व को प्रकट (ब्याकरोंतो) किया। (अञ्ञा) सूचित करते हुए (पवेदना वसेना) इस प्रकार: अपने उत्तर के दौरान (पटीवचन):— "हे भगवान! जब से मैंने आपकी कृपा (शासन) प्राप्त की है, तब से मेरे सभी दुख (दुक्खा) दूर हो गए हैं (अपगत); हर खतरा (परिसयो) समाप्त हो गया है (वुपसन्तो)।

120. "पांच इंद्रिय समुच्चय (खन्ध)

सभी लोग इसे समझ चुके थे (परिञ्ञता)।

उनकी जड़ें उखड़ गई हैं और वे खड़े हैं।

दु:ख के निवारण की अवस्था

तदनुसार प्राप्त किया गया था (अनुपत्तो);

मेरे द्वारा विनाश प्राप्त कर लिया गया था

कैंकर (आसवा) का।

वहाँ, pañcakkhandhā pariññātā का अर्थ है: मैंने सही मार्ग के ज्ञान और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के ज्ञान से पाँचों आसक्त इंद्रिय-संबंधी स्कंधों का सर्वांगीण विश्लेषण करके (परिच्छा करके) पाँचों उपादान स्कंधों को जाना है, इस प्रकार: — "यह दुख है, इतना दुख है, इससे अधिक नहीं; उनमें ऐसा कुछ भी नहीं है जिसे सर्वांगीण समझा जा सके; यही इसका अर्थ है। तिट्ठन्ति चिन्नमूलका का अर्थ है: वे आर्य मार्ग (आर्य-मग्ग) का त्याग करके और अपने अज्ञान (अविज्जा), लालसा (तन्हा) आदि के मूल को भलीभांति काट कर (समुच्चिन्नता) मन की शांति (चित्तनिरोध) की बाद की (चरिमा) अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं, क्योंकि वे सर्वांगीण रूप से पूर्णतः ज्ञात (परिञ्ञातत्ता) हो चुके हैं। दु:खक्खयो अनुप्पत्तो का अर्थ है: उनके मूलों के कट जाने के कारण दु:ख के चक्र (वट्ट दु:ख) का सर्वांगीण नाश और अंत हो गया है; निर्वाण प्राप्त हो गया है (अधिगतं)। Patto me āsavakkhayo का अर्थ है: "आसवेक्खया (अपराधों का निवारण)" नाम से प्रदत्त अरहंत पद इसलिए प्राप्त हुआ क्योंकि उन्होंने विशेष रूप से कामासव (इंद्रिय सुख का अपरा) से आरंभ होने वाले सभी अपराधों के निवारण (खयन्ते) की दिशा में प्रयास किया था; इस प्रकार, इसका यही अर्थ है। कुछ विद्वान (केसी) हालांकि पढ़ते हैं (पाठन्ति) "अंतिमायं समुस्सयो (यह जटिल रूप अंतिम है); लेकिन निर्वाण की प्राप्ति के कारण मेरा यह शरीर संचय (अत्तभावो)

अंतिम (अंतिमो) और सभी में अंतिम (सब्बप्पचिमको) है जो अब विद्यमान है। कोई नया अस्तित्व (पुनब्बभावो) नहीं है; यही अर्थ है। हालांकि, जो कुछ भी यहाँ-वहाँ नहीं कहा गया है (तत्थतत्थ अवत्तं) वह पहले कहे गए तरीके (हेट्ठा) के कारण स्पष्ट (उत्तनं) है।"

थेरा इसिदत्ता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

बारहवें अध्याय की टीका पूर्ण हो चुकी है।

परमत्थदीपनी में थेरागाथा की टीका की पुस्तक में वरिष्ठ भिक्षुओं द्वारा लिखे गए एक सौ बीस श्लोकों से सुसज्जित प्रथम खंड के अर्थ को स्पष्ट करने वाली टीका भी पूर्ण है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(121):उत्तर

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (121) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
121. उत्तरा
बुद्ध युग में राजगृह में एक प्रख्यात ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उत्तरा नाम प्राप्त करने वाले उत्तरा ने ब्राह्मण विद्या में स्नातक की उपाधि प्राप्त की और अपने संस्कार, सौंदर्य, ज्ञान और सद्गुणों के लिए ख्याति प्राप्त की। मगध के एक प्रमुख मंत्री वस्साकार ने उनकी उपलब्धियों को देखकर अपनी पुत्री से उनका विवाह कराने की इच्छा व्यक्त की। परन्तु मोक्ष की इच्छा से प्रेरित होकर उन्होंने यह प्रस्ताव ठुकरा दिया और धर्म के सेनापति (धम्म) से शिक्षा प्राप्त की। [1] आस्था प्राप्त करके उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और सारिपुत्त की सेवा करते हुए दीक्षा प्राप्त की।

अब थेरा बीमार पड़ गए, और उत्तरा सुबह वैद्य की तलाश में निकल पड़े। अपने चक्कर के दौरान उन्होंने एक झील के किनारे अपना कटोरा रख दिया और मुँह धोने के लिए पानी में चले गए। तभी एक चोर, जिसका पुलिस पीछा कर रही थी, शहर के मुख्य द्वार से भाग निकला और भागते हुए अपने चुराए हुए गहने नौसिखिए के कटोरे में डाल दिए और फरार हो गया। फिर, जब नौसिखिए अपने कटोरे के पास लौटे, तो राजा के आदमी उनका पीछा करते हुए वहाँ से गुजरे और कटोरा देखकर बोले, 'यही तो चोर है! इसी ने चोरी की है!' और उसके हाथ पीछे बाँधकर वे उसे ब्राह्मण (पुजारी) वस्सकार के सामने ले आए और उसे दंडित किया।

तब परम पूज्य बुद्ध, अपनी अंतर्दृष्टि की परिपक्वता पर ध्यान करते हुए, वहाँ गए और उत्तरा के सिर पर लाल सोने की बूँद के समान कोमल हाथ रखकर बोले, 'उत्तरा, यह पिछले कर्मों का फल है। यहाँ घटित होने के लिए आया है, इसे [110] तुम्हें चिंतन की शक्ति से स्वीकार करना है,' और इस प्रकार उन्होंने उत्तरा को उनकी आवश्यकता के अनुसार धम्म का मार्ग सिखाया। इस प्रकार भगवान (बुद्ध) के हाथ के स्पर्श से अमृतमय रूप से अभिषेकित उत्तरा आनंद और परमानंद से भर उठे और अपनी अंतर्दृष्टि की परिपक्वता और भगवान (बुद्ध) के उपदेश के आकर्षण से उन्होंने सभी अशुद्धियों को इस प्रकार त्याग दिया कि उन्होंने छह गुना अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त कर ली। सूली से उठकर [2] वे हवा में खड़े हो गए और दूसरों के प्रति करुणा से एक चमत्कार किया। सभी के आश्चर्य के लिए, उनका घाव ठीक हो गया। जब भिक्षुओं ने पूछा, 'भिक्षु, आप इतनी पीड़ा सहते हुए अंतर्दृष्टि कैसे प्राप्त कर पाए?' तो उन्होंने कहा, 'चूंकि मैंने स्पष्ट रूप से देखा, भिक्षुओं, पुनर्जन्म की बुराई और बद्धता की प्रकृति, इसलिए वर्तमान पीड़ा की कम बुराई मुझे अंतर्दृष्टि बढ़ाने और प्राप्ति से नहीं रोक सकी': [3]

[121] नत्थि कोसि भावो नक्को सोंखरा वा पि सस्साता,॥
उप्पज्जन्ति च ते खंडा रिक्ति अपरापारं॥ ॥

[122] एतमादीनवं णत्वाभावेनमहि अनत्थि को,॥
निस्सातो सब्बाकामेहि पत्तो मे आसवक्खयो' ति.॥ ॥

[121] ऐसा कोई जीवन नहीं है जो हमेशा के लिए बना रहे,
न ही ऐसी कोई चीज़ है जो कारणों से स्थायी हो।
वे पुनर्जन्म लेते हैं, हमारे जीवन के कारक,
उसके बाद वे विलीन होकर मर जाते हैं।

[122] चूंकि यह बुराई मेरे सभी विचारों पर हावी है,
वास्तव में मैं वह हूं जिसने ऐसा बनने की इच्छा नहीं की।
सांसारिक उद्देश्यों से विरक्त होकर,
मैंने मादक पदार्थों (अपवित्रताओं/इच्छाओं) का अंत कर दिया है। [4]

[1] सारिपुत्त, अपनी मृत्यु तक शिष्यों के प्रमुख।

[2] Sūlato uṭṭhahitvā. वह संभवतः बंधा हुआ था या सूली पर चढ़ाया गया था, या अन्यथा दंड भुगत रहा था।

[3] विसेसो.

[4] यानी, 'मैंने निर्वाण और अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त कर लिया है।' टीका = श्लोक 458.

2. दूसरा खंड

2.1 पहला अध्याय

2.1-1[121] उत्तराथेरा के श्लोक पर टीका

दूसरे खंड में 'नत्थि भावो निको' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उत्तरा का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए और जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्म संचित किए। इस जन्म और उस जन्म में, सुमेध बुद्ध के समय, वे मंत्रों के ज्ञाता (विज्जाधर) बन गए और आकाश में विचरण करने लगे। उस अवसर पर, गुरु ने उन्हें उत्थान देने के उद्देश्य से एक वन में एक वृक्ष के चरणों में बैठकर अपनी छह रंगों वाली प्रकाशमान बुद्ध किरणें प्रवाहित कीं। आकाश में विचरण करते हुए, उन्होंने बुद्ध को दर्शन दिए, श्रद्धा से भर गए, आकाश से अवतरित हुए और बुद्ध को प्रचुर मात्रा में उत्तम शुद्ध कनिकारा पुष्प अर्पित किए। बुद्ध की शक्ति से, पुष्पों ने गुरु के ऊपर छत्र के समान आकार धारण कर लिया। इसके बाद वे और भी अधिक धार्मिक हो गए, फिर उनकी मृत्यु हो गई, वे तावतिंस में उत्पन्न हुए, अपने जीवनकाल तक वहीं रहे, अपार दैवीय समृद्धि का आनंद लिया, फिर उनका निधन हो गया, और बार-बार जन्म लेकर, देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते हुए, राजगृह में एक महान धनी (महासाला) ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम उत्तरा था। बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने सभी ब्राह्मण विद्याओं में निपुणता प्राप्त की, और अपने जन्म, सौंदर्य (रूप), ज्ञान (विज्जा), आयु (वय), नैतिक उपदेश (शील) और आचरण (आचार) के कारण संसार में आदरणीय (संभवनियो) हो गए। उनकी समृद्धि देखकर मगध के महान मंत्री वस्सकारा ने अपनी पुत्री को उनसे देने की इच्छा की और उत्तरा को अपने इस इरादे की सूचना दी। बार-बार जन्म-जन्म के चक्र से बचने की इच्छा के कारण उन्होंने उस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने धर्म के सेनापति के समक्ष बार-बार प्रार्थना की, उनकी उपस्थिति में धर्म के सत्य उपदेश सुने, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए और कर्तव्यनिष्ठा से थेरा की सेवा की।

ऐसा हुआ कि थेरा को एक विशेष रोग हो गया। उनके लिए औषधि लाने के उद्देश्य से, नौसिखिए (सामनरा) ने सुबह-सुबह ही अपना भिक्षापात्र और वस्त्र लेकर मठ से बाहर निकले और रास्ते में एक झील (त�����क) के किनारे अपना भिक्षापात्र रखकर पानी के पास जाकर अपना चेहरा धोया। तभी एक दुर्भाग्यशाली (उमंग) चोर, जिसका पहरेदार पीछा कर रहे थे, शहर के मुख्य द्वार (अग्गद्वार) से निकला और भागते समय उसने अपने हाथ में पकड़े रत्नों का गट्ठा (रतनभंडिका) नौसिखिए (सामनरा) के भिक्षापात्र (पट्टा) में फेंक दिया और बच निकला। नौसिखिए (उपगतो) अपने भिक्षापात्र के पास (समीपं) चले गए। चोर का पीछा कर रहे राजपुरिसा को वह गठरी (भण्डिका) नौसिखिए के कटोरे में मिली। उन्होंने नौसिखिए (सामनेर) के हाथ पीछे बांधते हुए कहा, "यही चोर है; इसी ने चोरी की है।" और उसे ब्राह्मण वस्सकार के पास ले गए। उस समय वस्सकार न्याय कक्ष में पद पर थे और उन्होंने यातना और अंग-भंग करने के दंड

का आदेश दिया। क्योंकि उसने इस प्रकार द्वेष रखा: — "पहले उसने मेरी बात नहीं मानी; वह शुद्ध संप्रदायों में भिक्षु बन गया," उसने उस नौसिखिए को जीवित रहते हुए ही भाले से छेद दिया (सूले उत्तासेसि), बिना उस कृत्य की जाँच किए (असोधेत्वाव)।

उस समय, भगवान बुद्ध ने उनके ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता को देखकर, उस स्थान पर जाकर, उत्तरा के सिर पर अपना लंबा, कोमल और सुन्नतिपूर्ण हाथ रखा, जो जालीदार लंबे नाखूनों से ढका हुआ था और प्राकृतिक सिंदूरी स्वर्ण सार (सुवन्नरस) के रिसने (पग्घरंत) जैसा प्रतीत होता था, क्योंकि उनके हाथों और नाखूनों (मणि) के कंपन (विप्फुरंत) से प्रकाश की किरण (मयूख) निकल रही थी, और उन्होंने उनकी प्रवृत्ति (अज्जासय) के अनुरूप सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। इस प्रकार कहने के बाद:- "हे उत्तरा! तुम्हारे पूर्व कर्म (पुरिमकम्म) के फलस्वरूप यह फल (फलं) प्राप्त हुआ है, इसलिए तुम्हें चिंतनशील दृष्टि (पच्चवेक्खना) के बलपूर्वक धीरज (कातब्बा) रखना चाहिए। उत्तरा ने गुरु के हाथ के उत्तम स्पर्श से, जो अमृत (अमत) के समान है, पूर्णतः श्रद्धापूर्वक धार्मिक (पसादा) और प्रसन्न (सोमनस्स) होकर अपार उत्साह और उमंग (पीतिपामोज्जं) प्राप्त किया और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर अग्रसर (समारुळ्हो) हो गया, जो कि यथापरिचितं के अनुरूप है।" और ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता (परिपाकम्) प्राप्त करने (गतत्ता) के कारण, और गुरु द्वारा दी गई शिक्षा की सुंदरता (देशनाविलासेना) के कारण, उन्होंने उसी क्षण सही मार्ग (मग्ग) के क्रमिक चरणों (पटिपाटियी) के माध्यम से अपने सभी दोषों को त्याग दिया (खुपेत्वा) और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिञ्ञा) से युक्त अरहंत बन गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"स्वयं जागृत बुद्ध सुमेधा नाम के थे,

बत्तीस उत्कृष्ट अंकों (लक्खना) के साथ,

भगवान, जो इसकी इच्छा रखते हैं (कामो),

एकांत (विवेक) (उपगामी) की ओर चला गया

हिमवंत। परम दयालु ऋषि।

सबसे उत्कृष्ट पुरुष जिनके पास भेदक क्षमता है-

हिमवंता में अनुवादित (अज्जोघाहेत्वा),

वह अपने पैरों को मोड़कर बैठ गया।

(पल्लकं अभुजित्वना).

मैं तब एक जादूगर (विज्जाधारो) था, एक

वायुमंडल में भटकने वाला (अंतलिक्खा-)

(caro). पकड़ लिया (gayha)

तीन-खिड़की वाला अच्छा काम (tisūlaṃ sugataṃ),

फिर मैं आकाश में चला गया।

बुद्ध ने जंगल को आग की तरह रोशन कर दिया

एक पहाड़ी की चोटी पर, जो पूरी तरह से मिलती-जुलती है

चंद्रमा, और साल संप्रभु खिलने के समान

फूलों के साथ (फुल्लिटो)।

वन की चोटी (वनग्गा) से बाहर आकर,

बुद्ध की किरणें विकीर्ण हुईं और समान रूप से फैलीं

(संकासा) नरकट की आग के रंग का (न◌ँग्गी);

इसे देखकर मेरा मन श्रद्धा से भर गया।

प्रसन्न (pasādayiṃ)। जैसा मैंने चाहा (vicinaṃ)।

मुझे स्वर्गिक मधुरता का अनुभव हुआ (अद्दसम्)-

सुगंधित (देवगंधिकं) कनिकारा फूल।

तीन फूल लाकर मैंने अपना

सर्वश्रेष्ठ बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

बुद्ध की शक्ति के कारण, मेरे तीनों

फिर फूलों ने (स्वयं को) बना लिया

गुरु के लिए एक छाया, उनके डंठल

ऊपर पंखुड़ियाँ और नीचे पंखुड़ियाँ। इस कारण

उस कार्य के लिए, बहुत बढ़िया, साथ ही साथ

मेरी इच्छा (चेतना) और स्वयं के कारण-

संकल्प (पनिधी), मैं ऊपर गया

तावतिंसा, जब मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया।

वहाँ मेरा आलीशान घर अच्छी तरह से बना हुआ था और प्रसिद्ध था।

कनिकारी के रूप में, जो साठ लीग दूर थी।

(योजना) ऊंचाई में और तीस लीग

(योजना) पार (विट्ठतः)।

एक हजार खंड (कंड़म्), एक सौ

झंडों से सजे बुर्ज (भेंदु)

(धजलु) सोने से बना (हरितुमायम्);

एक लाख शिखर (निय्युहा)

मेरे में यह स्पष्ट हो गया (पातुभविंसु)

हवेली।

सोने और रत्नों से बने सिंहासन (पल्लंका)

और लोहितंक (माणिक) के साथ-साथ क्रिस्टल भी।

वे जहाँ भी और जब भी थे, वहाँ मौजूद थे।

वांछित।

बहुत ही महंगा बिस्तर, जिस पर चादर बिछी हो (युतं)

गद्दे का वर्गीकरण (विकति), (तुलिका),

कालीन के ऊपरी हिस्से पर बाल हैं

(उद्धलोमी) एक छोर पर (एकांतम्); कुंआ-

तकिया से सुसज्जित (समायुतं)

(बिम्बोहाना) भी वहाँ मौजूद थी।

अपने आलीशान घर से बाहर आने के बाद, मैं चलता रहा

एक दिव्य यात्रा पर विचरण करते हुए

(देवाचारिकं); जैसा मैं चाहता था

जाने के लिए, मैं मंडली से घिरा हुआ था-

दिव्य प्राणियों का कथन।

मैं उस फूल के नीचे खड़ा था जो बना था

मेरे ऊपर एक छत; चारों ओर एक

सौ मील (योजना) मुझे छाया दी गई थी

कनिकारा फूलों से ऊपर (चादितं)।

साठ हजार संगीत वाद्ययंत्र

सुबह से मेरा मनोरंजन किया (उपठहुं)

शाम तक (अयम्पातं); संगीतकार हमेशा

वे मुझे घेरे हुए थे; वे कभी थके नहीं।

(अतांडिता) रात और दिन।

वहाँ नृत्य, गायन और प्रहार के साथ

(तालेही) और पिटाई (वादितेही) मैं हैरान था

मैं स्वयं (रमामी) खेल भाव से (खिड्डा) और

मैं प्रसन्न था (रतिया);

kāmakāmahaṃ).

वहाँ भोजन और पेय प्राप्त करने के बाद मैंने

मैंने तीन लोगों के आवास में खूब आनंद लिया और

तीस; सुंदरियों के समूह के साथ

महिलाओं, मैंने खुद को सबसे शानदार तरीके से आनंदित किया।

हवेली।

पांच सौ बार (satānaṃpañcakkhattuṃ)

मैंने संप्रभुता को सुरक्षित किया (अकारयिं)

दिव्य प्राणी; तीन सौ बार

(सतानं तिनिक्खट्टुई) मैं विश्वराज था;

विशेष संप्रभुता (पदेसरज्जं) में

प्रचुरता (विपुलं) की गणना नहीं की जा सकती थी

संख्यात्मक रूप से (gananāto asaṅkhiyaṃ).

जैसे ही मैं अपने बार-बार के चक्करों में घूमता रहा

इस और उस अस्तित्व में पुनर्जन्म (भावे)

भावे), मैंने बहुत धन अर्जित किया; वहाँ था

मेरी संपत्ति में कोई कमी नहीं हुई;

यह मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम है-

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली विशेष भेंट।

मैं अपने नियमित चक्करों में इधर-उधर भटकता रहा।

दो प्रकार के अस्तित्वों में पुनर्जन्म,

पहले दैवीय और फिर मानवीय; मैं नहीं

किसी अन्य गंतव्य को याद रखना (जाहमी)

(गति); यह फलदायी परिणाम है

बुद्ध के प्रति मेरी श्रद्धापूर्ण भेंट।

मैं दो प्रकार के लोगों में पैदा हुआ (पजयामी) था

परिवार; शाही योद्धा (खत्तिया)

और ब्राह्मण; मुझे याद नहीं (जानामि)

निम्न सामाजिक वर्ग के परिवार में होना

स्थिति (nīce kule); यह फलदायी है

मेरी श्रद्धापूर्वक भेंट का परिणाम

बुद्ध।

हाथी परिवहन, घोड़े द्वारा परिवहन,

पालकी (सिविका) और रथ (संदमिका);

मुझे इन सभी चीजों का लाभ मिला; यही है

मेरी श्रद्धापूर्वक की गई भेंट का फलदायी परिणाम

बुद्ध को।

महिला दासों की भीड़, दासों के समूह

(दासगेना), सुसज्जित महिलाएं; मैंने प्राप्त किया

लेकिन ये सब; यही फलदायी है

मेरी श्रद्धापूर्वक भेंट का परिणाम

बुद्ध।

रेशम और ऊनी वस्त्र (कोसेयाकम्बलियानी),

लिनन (खोमा) और सूती कपड़े, मैंने प्राप्त किए

लेकिन इन सब के परिणामस्वरूप यही फलदायी परिणाम प्राप्त हुआ है।

बुद्ध को मेरी श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई भेंट।

नए कपड़े, ताजे फल, पौष्टिक भोजन

मुझे सर्वोत्तम स्वाद (नवग्गरसभोजनम्) प्राप्त हुआ।

लेकिन इन सबका यही फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को मेरी श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई भेंट।

इसे चबाओ; इसे खाओ; इस पर सो जाओ

यह बिस्तर; मुझे बस ये सब मिला; यह है

मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

मुझे हर जगह सम्मान प्राप्त था; मेरी प्रतिष्ठा

बहुत ऊपर चला गया; मेरा किनारा बहुत अच्छा था

(पक्खो) सदैव; कभी भी विभाजित नहीं (अभेज्जा)

मेरे श्रोता (पेरिसो) थे; मैं सबसे अधिक था

मेरे रिश्तेदारों में सबसे बेहतरीन; यही है

मेरी श्रद्धापूर्वक की गई भेंट का फलदायी परिणाम

बुद्ध को।

मुझे ठंड और गर्मी का ज्ञान नहीं था;

किसी प्रकार की तीव्र गर्मी (परलाहो) मौजूद नहीं थी;

इसके अलावा, मेरे दिल में ऐसा कुछ भी नहीं था

कोई भी मानसिक कष्ट (चेतसिकं दुक्खं)।

सुनहरे रंग का होकर मैं भटकने लगा।

मेरे बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के बारे में

लघु एवं वृहत्तर अस्तित्व (भवः)

मुझे त्वचा के रंग फीके पड़ने के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।

(वेवन्नियं); यही फलदायी परिणाम है

बुद्ध को मेरी श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई भेंट।

दिव्य लोक से विदा होने के बाद,

और मेरे उज्ज्वल द्वारा प्रेरित (codito) होने के कारण

आधार (सुक्कमूलेना) मेरा पुनर्जन्म शहर में हुआ

सावत्थी का, समृद्ध (सुअड्ढके)

धनी ब्राह्मण परिवार (महासाले)।

पांचों धागों का त्याग (हित्वा) कर लेने के बाद

(गुणे) कामुक सुखों (काम) के, मैं

मैं बेघर भिक्षु बन गया; मैं वहीं था

मेरे जन्म के सातवें वर्ष में जब मैंने यह आयु प्राप्त की

अरहंत पद।

बुद्ध, दृष्टिहीन,

मुझे मेरे गुणों (गुणों) का पता चला

पूर्ण दीक्षा (उपसम्पदयी); युवा और

कोमल (तरुनो), मैं वस्तु था

आदर (पूजानियो); यही फलदायी है

मेरी श्रद्धापूर्वक भेंट का परिणाम

बुद्ध।

मेरी दिव्य दृष्टि निर्मल (विशुद्ध) है;

मैं समाधि में निपुण हूँ;

मैंने उच्चतर स्तर पर पूर्णता प्राप्त कर ली है।

ज्ञान; यह इसका फलदायी परिणाम है

बुद्ध को मेरी श्रद्धापूर्ण भेंट।

तदनुसार मैंने विश्लेषणात्मक क्षमता प्राप्त कर ली है।

ज्ञान प्राप्त करें और उसमें निपुण बनें

जादुई शक्तियों की नींव (इद्धिपाद)।

मैंने अपने कर्मों में पूर्णता प्राप्त कर ली है।

(धोम्मेसु); यही फलदायी परिणाम है

बुद्ध को मेरी श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई भेंट।

यह तीस हजार युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने विशेष रूप से अपनी श्रद्धा व्यक्त की

बुद्ध को अर्पित की गई वस्तु; मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व (दुग्गति); यही है

मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी:...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान से परिपूर्ण अरहंत बनने के बाद, वे सूली पर चढ़ाए जाने के बाद उठे (सूलतो), आकाश में खड़े हुए और दूसरों के प्रति सहानुभूति (परानुदयाय) के कारण चमत्कार (पाटिहारियं) प्रदर्शित किया। असंख्य लोग चकित और आश्चर्यचकित हो गए (अच्चरियब्भूतचित्त)। वहीं उनका घाव (वनो) ठीक हो गया (सन्रूड़्हि)। जब भिक्षुओं ने उनसे पूछा, "मित्र! उस पीड़ा (दुक्खं) का अनुभव करते हुए, आप आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सनां) के विकास में कैसे लीन हो सके," तो उन्होंने यह दिखाने के लिए ये दो श्लोक कहे; "मित्रों! संसार रूपी सागर में मेरी हानि (आदिनवो) कितनी अधिक (पगवे) थी? मैंने संस्कारों (संखार) की प्रकृति को भली-भांति समझ लिया था; इस प्रकार मैं पीड़ा (दुक्खं) का अनुभव करते हुए भी आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि को उत्तरोत्तर विकसित करने और विशिष्टता (विशेष) प्राप्त करने में सक्षम रहा।"

121. “कोई अस्तित्व नहीं है”

जो स्थायी (निक्का) है; न ही

क्या ये मिठाइयाँ (संखारा) हैं?

स्थिर (सस्साटा); वे समूह

(खंडहा) अस्तित्व में आया (उप्पज्जन्ति)

और कभी-कभी मर जाते हैं (कैवांटी)

(अपरापरं).

122. इस हानि को समझने के बाद,

मैं किसी भी चीज की इच्छा से मुक्त हो गया हूँ।

अस्तित्व; मैं बच निकला हूँ (निस्साटो)

सभी इंद्रिय सुख (काम); मेरे द्वारा

आसवेक्खया (कैंकर) का विलुप्त होना

प्राप्त कर लिया गया है।

वहाँ, n'atthi koci bhavo nicco का अर्थ है: कर्म का अस्तित्व (कम्मभाव), स्वतः उत्पन्न होने का अस्तित्व (उपपत्तिभाव), कामुक सुख का अस्तित्व (कामभाव), रूप का अस्तित्व (रूपभाव), निराकार अस्तित्व (अरूपभाव), बोध का अस्तित्व (संज्ञा), अबोध का अस्तित्व (नेव संज्ञासंज्ञा), एक तत्व का अस्तित्व (एकवोकार), चार तत्वों का अस्तित्व (चतुवोकारे), पाँच तत्वों का अस्तित्व (पंचवोकार); इस प्रकार, वर्गीकरण (भेदो) इस प्रकार है; वहाँ निम्न (हीनो), मध्यम (मज्झिमो), उच्च (उक्कठो), दीर्घायु (दीघायुको), अत्यंत आनंदमय (सुखबहुलो), विविध रूप से सुखी और दुखी (सुखदुक्खो) भी हैं; इस प्रकार, इसका विस्तृत वर्णन (विभागो) इसी प्रकार है; कोई भी ऐसा नहीं है जो स्थायी (निक्को), स्थिर (धूवो), दृढ़ (थिरो) हो और सांसारिक पदार्थों के अधीन न हो (अपलोकियधम्मो), क्योंकि वह किसी न किसी परिस्थिति (कारणं) पर निर्भर (पटिच्च) होकर अच्छी तरह से उत्पन्न (समुप्पन्नता) हुआ है। अतः, इस प्रकार, संखारा वापि सस्सता न'अत्थि (न ही ये व्यंजन (संखारा) शाश्वत हैं); इस प्रकार, इसकी व्याख्या (उयोजना) है। वास्तव में, पाँच तत्वों (खंडे) से उत्पन्न (उपादाय) होकर, जिन्हें “संखारा (मिश्रण)” नाम प्राप्त हुआ, क्योंकि वे अस्तित्व (भव) के उद्देश्य (सामञ्ञाय) से कारणों (पच्चयेहि) द्वारा एक साथ गढ़े (संखत) गए थे, वे मात्र मिश्रण (संखारा) बन गए और इस प्रकार संभूत (संभूत) होने के कारण वृद्धावस्था और मृत्यु के कारण परिवर्तित (खराब) हो जाते हैं; इस प्रकार, वे शाश्वत न होने के कारण परिवर्तन (खराब) के अधीन (विपरीत) होते हैं। इसी प्रकार, वास्तव में, उन्हें “संखार” कहा जाता है। इसी कारण उन्होंने कहा:— uppajjanti ca te khandhā, cavanti aparāparaṃ. वे पाँच समुच्चय (खंडा), जिनका वर्णन अस्तित्व के गुण (भाव) और मिठाई के प्रकार (संखार) में किया गया है, अपने कारण (पच्चय) के अनुसार समय-समय पर (अपरापर) उत्पन्न (uppajjanti) होते हैं; उत्पन्न (uppanna) होकर, वृद्धावस्था के कारण वे सर्वव्यापी उत्पीड़क (परिपीलीता) हो जाते हैं और विलीन (परिभिज्जन्ति) हो जाते हैं; यही अर्थ है। इससे वे यह दर्शाते हैं कि वे पाँच समुच्चय जिन्हें “भाव और संखारा का स्वभाव उदय और अपराजय होता है। चूंकि तीनों अस्तित्वों को भी एक साथ रखा गया है, जो उस व्यक्ति के लिए प्रज्वलित होने के समान है जो तीनों विशेषताओं को ऊपर उठाने के बाद उनका ध्यान करता रहता है, इसलिए जो व्यक्ति आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के माध्यम से आदिनव दोष को समझ लेता है।संस्कारों (संस्कारा) ने अनित्यता (अनिच्चलक्खनेहि) के गुणों के माध्यम से

देखा है और वे उस एक (उपद्रुहंति) के प्रति दुख (दुक्खा) और अनात्म (अनत्त्व) के रूप में स्पष्ट दृष्टि (विभूततरा) से देखते हैं; इसी कारण भगवान ने कहा: "जो अनित्य है वह दुख (दुक्खा) है; जो दुखी (दुक्खं) है वह अनात्म (अनत्त्व) है।"

क्योंकि तीनों अस्तित्व उस व्यक्ति की ओर (उपत्तहन्ति) खड़े होते हैं जो तीन विशेषताओं (तिलक्खनं) तक ले जाने (आरोपेत्वा) के बाद, जलते हुए (आदित्तं) घर (अगारं) के समान, उचित खतरे (सप्पतिभया) के साथ, निरंतर ध्यान (सम्मसन्तस्स) करता है, इसलिए उन्होंने कहा: — "भवनंहि अनत्थिको।" इस प्रकार, हालांकि, हर तरह से अस्तित्वों से विलीन हो रहे (विनिवत्तियमानस्स) व्यक्ति के लिए कामुक सुखों (कामेसु) के प्रति किसी भी प्रकार का आदर (अपेक्खाया) भी उत्पन्न (संभवति) नहीं होता; इसलिए उन्होंने कहा: "निस्सातो सब्बकामेहि, यानी मैं ऐसा हूँ; यही व्याख्या (योजना) है। मैं दिव्य इंद्रिय सुखों के साथ-साथ मानवीय इंद्रिय सुखों से भी विमुख (निवत्तिचित्तो) हूँ: यही अर्थ है। पत्तो मे आसवखयो का अर्थ इस प्रकार है: — क्योंकि इस प्रकार मैंने अपने संस्कार (संस्कार) भलीभूत (सुपरिमज्जिता) कर लिए, जन्मों में सभी हानियों को भलीभूत कर लिया और इंद्रिय सुखों (कामेसु) से विरक्त (अनासत्तमानसो) हो गया, इसलिए मैंने सूली (सूली) के शीर्ष पर बैठने का विचार किया, और मुझे आसवक्षों (आसवक्खय), निर्वाण और अरहंतत्व की प्राप्ति हुई। उन्होंने मुझे सलाह दी। भिक्षुओं ने इस प्रकार कहा:— "प्रयास (उस्साहो) किया जाना चाहिए (करणीयो) न केवल मेरे साथी श्रेष्ठ जीवन के नेताओं (सब्रह्मचारीहि) द्वारा, जो अभी तक किसी भी प्रकार की उपलब्धि प्राप्त न करने के मन में हैं (अपत्तमनसेहि)।"

थेरा उत्तरा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(122):पिंडोला-भारद्वाज

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (122) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
122. पिण्डोला-भारद्वाज
बुद्ध युग में कोसंबी के राजा उदेना के पुजारी के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम भारद्वाज रखा गया। [1] [111] तीनों वेदों का ज्ञान प्राप्त करने और ब्राह्मण (पुजारी) युवकों के एक विद्यालय में भजनों का सफलतापूर्वक शिक्षण करने के बाद, उन्हें यह कार्य अरुचिकर लगने लगा। उन्हें छोड़कर वे राजगृह चले गए। वहाँ बुद्ध के भिक्षु संघ को प्राप्त उपहारों और अनुग्रहों को देखकर वे उसमें प्रवेश कर गए। उन्होंने गुरु की विधियों से आहार संबंधी असंयम पर विजय प्राप्त की और छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्तियाँ) प्राप्त कीं।

तब उन्होंने भगवान के समक्ष घोषणा की कि वे मार्ग या फल के संबंध में संदेह में पड़े किसी भी भिक्षु के प्रश्नों का उत्तर देंगे, इस प्रकार उन्होंने अपनी 'सिंह गर्जना' की। [2] इसी कारण भगवान ने उनके विषय में कहा: 'मेरे शिष्यों में जो सिंह गर्जना करने में श्रेष्ठ हैं, वे पिंडोल-भारद्वाज हैं।' अब उनके पास एक पूर्व मित्र, एक कंजूस स्वभाव का ब्राह्मण (पुजारी) आया। थेरा ने उसे दान देने के लिए राजी किया और दान भिक्षु संघ को सौंप दिया। और क्योंकि ब्राह्मण (पुजारी) का मानना था कि थेरा लालची और स्वार्थी हैं, इसलिए थेरा ने उन्हें धार्मिक दान के विशेषाधिकारों के बारे में उपदेश देना शुरू किया और कहा:

[123] नायिदौ अनायेन जीवितान् नाहारो हदयस्सा संतिको,॥
अहारथितिको समुस्सयो इति दिस्वन कैरामि एसानं॥॥

[124] पांकोटि हि नं पवेदयुṃ यायं वंदनपूजन कुलसु,॥
सुखुमं सब्बाṃ दारुल्लाहअ सक्करो कपूरिसेण दुज्जहो' ती॥॥

इत्थं सुदां अयस्मा पिण्डोलाभारद्वाजो थेरो गाथायो अभिसित्था' ति.।

[123] हमें नियम और विधि के बिना नहीं जीना चाहिए।
लेकिन भोजन अपने आप में मेरे दिल के करीब कभी नहीं होता।
'पोषण से शरीर का पोषण होता है': [3] यह मैं जानता हूँ, और इसीलिए मैं भिक्षा की तलाश करता हूँ।

[124] यह एक [धोखेबाज़] दलदल है: - बुद्धिमान लोग अच्छी तरह जानते हैं:
धनी लोगों से मिलने वाले ये धनुष, उपहार और दावतें,
मांस में धंसे हुए स्टील के टुकड़े की तरह हैं,
मूर्ख भिक्षुओं के लिए इससे निकलना मुश्किल है। [4]

[1] भारद्वाज ब्राह्मण (पुजारी) वंश का नाम प्रतीत होता है, यद्यपि यहाँ इसे व्यक्तिगत नाम के रूप में दिया गया है (एस. विभ., पृ. 6; सांग्यी., इ. 160)। अतः या तो पिण्डोल उनका व्यक्तिगत नाम है, या यह एक उपनाम है, जो हमारे 'चंक' के समान है, और उनकी पूर्व की लालची आदतों से जुड़ा है। उदाना 4.6 में उनके पूर्ण आत्म-संयम का वर्णन है। राजा उदेन द्वारा उपदेश देने के कारण उन्हें सताया जाता है (जाट., इ. 375), लेकिन बाद में राजा उनसे परामर्श करते हैं और उनके आचरण में सुधार करते हैं (सान्ज्य., इ. 110)। सस्ते में चमत्कार करने के लिए उन्हें फटकारा जाता है (विनय ग्रंथ, इ. 78)। उनके दो अज्ञात श्लोक उद्धृत किए गए हैं (मिलिंद, इ. 335, 345)।

[2] सक्षमता या कार्य करने की तत्परता की पुष्टि के लिए सामान्य मुहावरा (एंग. निक., i. 23)।

[3] रूढ़िवादी सिद्धांत में शामिल: 'सभी प्राणी पोषण द्वारा कायम हैं' (दीघा निक., iii. 211; खुद्दाका पाठ)।

[4] श्लोक 495, 1053 देखें। जातक, iv. 222 (पाठ) की तुलना करें।

2.1-2 [122] पिंडोलभारद्वाजत्थेरा के श्लोक पर टीका
'नयिदं अनय्येन' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पिंडोल भारद्वाज का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि भगवान पद्ममुत्तरा (बुद्ध) के समय इनका जन्म सिंह की कोख में हुआ था और ये एक पहाड़ी गुफा में रहते थे। भगवान बुद्ध ने इनका अनुग्रह करने के लिए, सिंह के चरने के लिए जाने के समय गुफा में स्थित सिंह की मांद में प्रवेश किया और निरोध ध्यान में लीन हो गए। शेर ने अपना चारागाह जीत लिया, घर लौट आया, गुफा के द्वार पर भगवान बुद्ध को देखा, प्रसन्न और आनंदित हुआ, जलीय और शुष्क भूमि के फूलों से उन्हें आदरपूर्वक भेंट की, उसका मन प्रसन्नतापूर्वक धार्मिक हो गया, और वह बुद्ध के शेर की दहाड़ से संबंधित जागरूकता के साथ रात के तीन पहरों (तिसु वेलासु) में जंगल में खतरनाक जानवरों (वाळमिगे अपनेतुं) को भगाने के लिए खड़ा रहा, ताकि भगवान बुद्ध की रक्षा कर सके। जिस प्रकार उसने पहले दिन किया था, उसी प्रकार शेर ने सात दिनों तक आदरपूर्वक भेंट की। सात दिन बीत जाने पर, भगवान बुद्ध निरोध ध्यान से उठे और बोले; "इस एक के लिए इतनी पर्याप्त योग्यता (उपनिषय्यो) सिद्ध होगी (वत्तिस्सति)," यह कहते हुए सिंह आकाश में विचरण करने लगा और अपने मठ तक पहुँच गया। पालिलेय्यक हाथी के समान, सिंह बुद्ध से वियोग (वियोग) के कष्ट (दुक्खा) को सहन न कर पाने के कारण मर गया और हंसवती नगर के एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लिया। वयस्क होने पर वह नगरवासियों के साथ मठ गया, सत्य की शिक्षा सुनी, सात दिनों तक महान दान किया, जीवन भर पुण्य कर्म किए, जन्म-मृत्यु के चक्र में समय-समय पर देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करता रहा और अंत में कोसंबी में राजा उतेना के निजी पुरोहित (पुरोहित) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया। वह भारद्वाज के नाम से जाना गया। वयस्क होने पर उन्होंने तीन वेदों का ज्ञान प्राप्त किया और पाँच सौ युवकों को मंत्र सिखा रहे थे; अपने उच्च नैतिक स्वभाव और अनुचित आचरण के कारण वे सभी युवकों द्वारा बहिष्कृत कर दिए गए। वे राजगृह गए, वहाँ उन्होंने भगवान बुद्ध और भिक्षुओं के वंश को मिलने वाले लाभ और सम्मान का ज्ञान प्राप्त किया, बुद्ध के मार्गदर्शन में भिक्षु बन गए, भोजन की उचित सीमा का ज्ञान न होने के कारण वे भटकते रहे। गुरु द्वारा अपने विशेष तरीके से उचित सीमा का ज्ञान प्राप्त करने पर उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास में स्वयं को लगा दिया और शीघ्र ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बन गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

मैं पहले हिरण (शेर) का शिकारी था।

फिर वे जंगल में इधर-उधर भटकने लगे;

मैंने बुद्ध को देखा, जो विरजं से मुक्त थे।

सभी सत्यों में निपुण (पारागुं)

(धम्म)।

पियाल का फल तोड़ने के बाद

पेड़, मैंने सबसे अच्छे को भी यही पेशकश की।

बुद्ध। मैं उनके प्रति श्रद्धापूर्वक प्रसन्न था।

पुण्य की खेती (पुण्खेत्त)।

यह इकत्तीसवें युग (कप्पा) में था।

वर्तमान से पहले, कि मैं तब

उसने फल पेश किए। मुझे याद नहीं है।

कोई भी दुष्ट अस्तित्व (दुग्गति); यही है

फल अर्पण का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनने के बाद, उन्होंने मन ही मन कहा: "भगवान बुद्ध की उपस्थिति से, शिष्यों को जो कुछ प्राप्त करना चाहिए था, वह मैंने प्राप्त कर लिया है," और भिक्षुओं के बीच उन्होंने सिंह की गर्जना करते हुए कहा: "जिस किसी को मार्ग (मार्ग) और उसके फल (फल) के बारे में संदेह हो, वह मुझसे पूछे।" इस कारण भगवान बुद्ध ने उन्हें इस प्रकार इस प्रमुख स्थान (एतदग्ग) पर स्थापित किया: "हे भिक्षु! यह मेरे शिष्यों में, सिंह की गर्जना करने वाले भिक्षुओं में, प्रधान (एतदग्गम्) है, अर्थात् यह पिंडोल भारद्वाज।" एक दिन, एक स्वार्थी (मच्छरिं) विधर्मी ब्राह्मण और उसके तत्कालीन साथी, जो एक गृहस्थ थे, के प्रति सहानुभूति होने पर, जो उनके समक्ष आए थे, उन्होंने उन्हें दान (दानकथां) का सिद्धांत सिखाया, और यद्यपि बाद वाले ने भौंहें चढ़ाईं (भाकुटिं कट्वापि), यह सोचते हुए कि: "यह मेरी संपत्ति को नष्ट करने की इच्छा रखता है;" और जब उनसे कहा गया: "मैं आपको भोजन अर्पित करता हूँ," तो उन्होंने उसे पुरोहितों (संघ) को अर्पित कर दिया और कहा: "इसे पुरोहितों को दीजिए, मुझे नहीं।" फिर, जब ब्राह्मण ने (यह सोचकर कि "यह मेरे द्वारा अधिक भेंट चढ़ाने का इच्छुक है," असंतोष प्रकट किया, तो दूसरे दिन थेरा ने उन्हें धर्म के स्वामी द्वारा पुरोहितों के प्रति किए गए प्रायश्चित भेंट के महान फल (महाप्पलभाव) को प्रकट करके प्रसन्न किया और मन ही मन दो श्लोक बोले: "यह ब्राह्मण सोचता है कि मैंने उसे भोजन के लालच के कारण भेंट चढ़ाने के लिए प्रेरित किया है।" लेकिन वह इस बात को नहीं समझता कि मुझे पोषण के हर पहलू का सर्वांगीण ज्ञान है; अब मैं उसे यह बताने जा रहा हूँ:

123. "यह जीवन इसके बिना नहीं जिया जाता है"

व्यवस्थित विधि (नया); पोषण-

यह किसी भी प्रकार का शांत करने वाला पदार्थ नहीं है।

हृदय; संचित शरीर

(समुस्सायो), पोषण पर निर्भर रहता है

(आहरट्टितिको); पता चलने पर

इसलिए, मैं खोज में निकल पड़ता हूँ (कारामी)।

भिक्षा-भोजन (एसाना) का।

124. यह श्रद्धांजलि (वंदना) और

श्रद्धापूर्वक भेंट (पूजा)

गृहस्थ (कुलेसु) वास्तव में हैं,

कहा जाता है कि यह (अवेकयुं) कीचड़ (प1का) है;

सुखुम काँटा है

निकालना कठिन (दुरुब्बाहं);

आदरपूर्वक भेंट (सक्कारो) करना कठिन है।

किसी बुरे व्यक्ति द्वारा त्याग दिया जाने वाला पंथ (दुज्जोहो)

man (kāpurisa).

वहाँ, Nayidaṃ anayena jīvitaṃ का अर्थ इस प्रकार है:— मेरे द्वारा जिया गया यह जीवन बिना विधि (anaya), बिना उचित आचरण (ñāya), और न ही बांस दान (veḷudāna), पुष्प अर्पण आदि की माँग (abhāvato) के कारण होता है, क्योंकि जीवन (jīvita) की लालसा (nikanti) का अभाव (abhāvato) है। Nāhāro hadayassa santiko का अर्थ है: लाया गया भोजन (āhāro) (āhariyamāno) हृदय और मन की शांति का स्रोत नहीं बनता, जैसे कि सही मार्ग (magga) और फल (phala) का ज्ञान; बल्कि यह केवल भूख (khuda) को शीघ्रता से (sajjukaṃ) दूर करता है (mattaṃ); यही इसका अर्थ है। दूसरे शब्दों में, नाहारो हदयस्स संतिको का अर्थ है: वह भोजन जो रस-लालसा का स्रोत है, मेरे हृदय में उपस्थित नहीं है और न ही उससे जुड़ा है, क्योंकि मुझमें स्वयं रस-लालसा का अभाव है। विद्वान इसे "संतिके" भी पढ़ते हैं। वास्तव में, जो कोई भोजन का लोभी होता है, वह लाभ और आदर-अर्पण की खोज में भटकता रहता है; उसका भोजन उसके हृदय में उपस्थित माना जाता है, क्योंकि वह सदा भोजन के प्रति सजग रहता है। दूसरी ओर, जिसने भोजन को सर्वथा समझ लिया है, उसकी इच्छा और आसक्ति (राग) उससे दूर हो जाती है; भोजन उसके हृदय में उपस्थित नहीं माना जाता, क्योंकि उसमें केवल यही सजगता रहती है कि "अरे, मुझे यह कैसे मिलेगा?" इत्यादि। यदि वास्तव में जीवन के लिए कोई लालसा (निकन्ति) और भोजन के लिए कोई तृप्ति नहीं है, तो फिर भिक्षा के लिए क्यों भटकते हो? इस प्रश्न पर विचार करते हुए (अनुयोगं) उन्होंने कहा: "आहारत्तितिको समुस्सयो; इति दिस्याना चरामि एशानं," जिसका अर्थ है: भोजन करना जीवन निर्वाह (ठिति) और इसके लिए साधन (पच्चय) की शर्त (ठाण) है; अतः, आहारत्तितिको (भोजन पर निर्भर रहना)। मैं भिक्षा की तलाश करता हूँ, मैं इसकी खोज में भटकता हूँ, इस उद्देश्य (अत्थं) को अपनी बुद्धि (बुद्धि) में स्थापित करके, इस प्रकार समझकर, इस प्रकार देखकर; "शरीर (कायो) संचय (समुस्सायो) है, जिसका व्यवहार (वुत्ति) भोजन पर निर्भर (पटिबद्ध) है;" इस प्रकार, इसका अर्थ है।

उन्होंने "पंको" से शुरू होने वाला एक श्लोक सुनाया, जिसका अर्थ यह था: "मुझ जैसे भिक्षुओं को इस प्रकार नहीं सोचना चाहिए: गृहस्थ परिवारों के पास जाकर धार्मिक आवश्यक बातों (पच्चया) के उद्देश्य से (निमित्तं) वे वहाँ प्रणाम करने, आदरपूर्वक भेंट चढ़ाने, लाभ प्राप्त करने और आदरपूर्ण भेंट (सक्कामा) देने में बंध जाते हैं (बज्जति)। उस श्लोक का अर्थ है: — या अयं का अर्थ है: जो भिक्षु धार्मिक

आवश्यक बातों (पच्चया) का संकेत देते हुए (निमित्तं) उनके पास आए हैं; कुलेसु का अर्थ है: घरों में रहने वालों के बीच (पवत्तिसति) स्तुति (गुण) और आदर (संभव) के साथ-साथ पूजा (आदरपूर्ण भेंट) भी होगी; क्योंकि बुद्ध और अन्य ऋषियों ने अवेदयुं (प्रकट) किया है। (अभञ्ञासुं) या सूचित (पवेदेसुं) के रूप में पंको, कीचड़ (कद्दमो) क्योंकि इसका अर्थ (अत्थ) डूबने (ओसीडापन) का कारण बनना है, साथ ही यह उन लोगों के लिए अपवित्रता की स्थिति पैदा करता है जिन्होंने अपने मन का विकास नहीं किया है (अभावितत्तनं)। इस कारण, (श्रद्धापूर्ण भेंट) अच्छे लोगों (सप्पुरिसानं) के लिए बंधन (बंध) नहीं बनती क्योंकि उन्होंने 'प्रारंभिकत:' (पगेवे) श्रद्धापूर्ण भेंट (सक्कार) की लालसा (आसा) को समाप्त (पाहीन) कर दिया था। दूसरी ओर, दुष्ट लोगों की श्रद्धापूर्ण भेंट (सक्कार) की लालसा (आसा), क्योंकि इसे स्पष्ट रूप से समझना कठिन है (दुविञ्ञेय्यसभावताय), क्योंकि यह उत्पन्न करती है (जननातो) पीड़ादायक उत्पीड़न (पील) के कारण, जो भीतर (अन्तो) चुभता (तुदानतो) है और जिसे निकालना (उद्धरितुं) संभव नहीं है, वह सुखुमं सल्लं दुरुब्बहं (एक महीन कांटा जिसे निकालना कठिन है) है। इसके बाद भी, इसी कारण से, सक्कारो कापुरिसेन दुज्जहो (दुष्ट व्यक्ति के लिए आदरपूर्वक भेंट करना कठिन है): क्योंकि उसने (अप्पटिपज्जनातो) इसके उचित निवारण (पटिपत्ति) के अभ्यास में प्रवेश नहीं किया है, इसलिए इसे निकालना कठिन है: आदरपूर्वक भेंट (सक्कारासा) की लालसा का त्याग करने से इसका निवारण (पाहीनो) होता है। यह सुनकर ब्राह्मण थेरा से अत्यंत प्रसन्न हुआ।

थेरा पिंडोला भारद्वाज के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(123):वल्लिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (123) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
123. वल्लिया [1]
बुद्ध युग में सावत्थी में एक प्रख्यात ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम वल्लिया रखा गया। किशोरावस्था में और इंद्रियों के वश में रहते हुए, उन्होंने पुण्य मित्रताएँ बनाईं, जिनके माध्यम से वे परम पूज्य (बुद्ध) के संपर्क में आए, आस्था प्राप्त की और भिक्षु संघ में प्रवेश किया, जिसके शीघ्र ही उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। अतीत, उसके सांसारिक वस्तुओं और इच्छाओं पर चिंतन करते हुए, और आर्य मार्ग द्वारा उन सभी से विमुख होने पर, उन्होंने इस प्रकार अन्ञा (सर्वोच्च प्राप्ति) की घोषणा की:

[125] मक्कतो पञ्चादवारायौ कुतिकायऽ पसाक्किया,॥
द्वारेण अनुपरियति घटयन्तो मुहुँ मुहुँ॥ ॥

[126] तिट्ठा मक्का मां धावि नहि ते तां यथा शुद्ध,॥
निग्घितोसि पन्नया नेवा1 दूरं गमिसासि' ति.॥ ॥

[125] छोटी पाँच दरवाज़ों वाली झोपड़ी के भीतर एक बंदर [2] घूमता था, और दरवाज़े से दरवाज़े तक गोल-गोल घूमता था, बार-बार वार करते हुए।

[126] रुको, बंदर! भागो मत! क्योंकि अब तुम्हारे लिए
यह वैसा नहीं है जैसा पहले हुआ करता था।
तर्क ने तुम्हें बंदी बना लिया है।
अब तुम कभी भी [पहले की तरह आज़ादी में] दूर तक नहीं भटकोगे।

[1] तुलना करें, एल.आई.आई., और सी.एक्स.एल.आई.वी.

[2] चित्त (चेतना) को साम्युत्त निकाय (ii.9) में वृक्ष-बंदर की बेचैन, बदलती छलांगों के रूप में चित्रित किया गया है। टीका इस उपमा को वर्तमान में नियंत्रित बंदर पर लागू करती है। तिब्बती जीवन के चरणों (भूतकाल, वर्तमान और भविष्य) के चित्रों में बंदर को विज्ञान के प्रतीक के रूप में पाया जाता है, जो चेतना या इंद्रिय-ज्ञान का पर्यायवाची है (देखें जे.आर.ए.एस., 1894, पृष्ठ 367 आगे)। जाहिर है, तिब्बती लामा परंपरा को भूल गए थे, या उन्होंने ऐसी व्याख्या दी थी जो उनके चिकित्सा वार्ताकार, मेजर वाडेल को रुचिकर लगेगी , या बाद वाले ने उनके अपूर्ण रूप से समझे गए विवरणों से एक पश्चिमी व्याख्या विकसित की। तुलना करें भजन 1111 में श्लोक 1111।

2.1-3 [123] वल्लियाथेरा के छंद पर टिप्पणी

मक्काटो पंचद्वरायं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वल्लिया का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए और वर्तमान से पूर्व इकत्तीसवें युग (कप्पा) में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। बुद्धि प्राप्त करने पर, वे एक दिन किसी कार्य से वन में गए। वहाँ उन्होंने एक वृक्ष के नीचे निवास करते हुए नारद नामक एक मौन बुद्ध को देखा। वे श्रद्धा से भर गए, उन्होंने सरकंडों (नाळ) से एक हॉल (साला) बनाया, उस पर घास (तिना) की छत (छदेतवा) डाली और उसे (उन्हें) अर्पित किया। उन्होंने चहलकदमी के लिए स्थान को भी साफ किया, उस पर रेत बिखेरी और उसे भी (उन्हें) अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे बार-बार जन्म लेते हुए देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक अत्यंत धनी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम वल्लिया था। वयस्क होने पर, उन्होंने यौवन (योब्बन) प्राप्त किया, अपनी इंद्रियों के वश में हो गए (इन्द्रियवासिको), और भटकते हुए, अपने मित्रों के साथ संगति (कल्याणमित्तसंसग्गेन) के कारण भगवान बुद्ध के पास पहुँचे, सत्य (धम्म) को सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास के मार्ग पर चल पड़े और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"हिमावंता से कुछ ही दूरी पर एक पहाड़ी थी

हारिता नाम का एक व्यक्ति; स्वयं मौन हो जाना

उस स्थान पर नारद नामक बुद्ध निवास करते थे।

पेड़ की तलहटी में बिताया गया समय।

मैंने सरकंडे का घर बनाया है

घास से छत डाली; झाड़ू लगाने के बाद

(सोधायित्वाना) एक मठ-मार्ग

(चंकमा) मैंने इसे स्वयं को अर्पित किया-

मौन बुद्ध बनो।

उस अच्छे कार्य के कारण

संकल्प (चेतना) और संकल्प (पानिद-

(हीही), मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया और चला गया

तावतिंसा स्वर्ग के लिए। वहाँ, मेरे लिए एक

हवेली अच्छी तरह से बनी थी, एक सरकंडे की झोपड़ी।

बनाया गया, साठ लीग (योजना) ऊँचा और

तीस लीग (वित्थतं) के पार।

चौदह युगों (कप्पा) तक मैंने आनंद लिया।

दिव्य जगत में। इकहत्तर बार

मैंने दैवीय संप्रभुता का प्रयोग किया।

मैं चौंतीस बार विश्व राजा रहा।

प्रचुर (विपुलं) मेरी क्षेत्रीय भाषा थी।

शासनकाल, जिसकी संख्यात्मक रूप से गणना करना असंभव है।

आध्यात्मिक महल में प्रवेश करने के बाद

(धम्मपासादा) से मिलता-जुलता (उपमं)

सभी प्रकार की उत्कृष्टता (वर)।

मैं वहां तब तक रहा जब तक मुझे अच्छा लगा।

साकियान पुत्र का विधान।

यह इकत्तीसवें युग (कप्पा) में था।

वर्तमान से पहले, कि मैं तब

मैंने यह काम किया। मुझे कोई बुराई याद नहीं है।

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

नरकट के निवास (नालाकुटी) का।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी। :P

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए दो श्लोक कहे, जिसमें उन्होंने यह बताया कि वर्तमान समय में उन्होंने श्रेष्ठ (आरिया) सही मार्ग (मग्गा) के माध्यम से अपनी इच्छाओं (यथाकाम) के अनुसार अपने मन में उत्पन्न होने वाली घटनाओं (पवत्तिया) को दबा दिया है, जैसे कि सौंदर्य (रूप) के भौतिक रूप आदि, उस समय जब वे आम लोगों में से एक थे।

125. यह बंदर बाहर निकल गया

(पसक्किया) पूरे पांचों पर-

दरवाजे वाली झोपड़ी (कुटिकायं), जाती है

तदनुसार (अनुपारीयेसी)

प्रभाव उत्पन्न करने वाला (घट्टयन्तो) क्षण

क्षण के बाद (मुहुं)।

126. स्थिर खड़े रहो (तिट्ठा) हे बंदर!

इधर-उधर मत भागो (धवी); वास्तव में,

आपके लिए, यह पहले जैसा नहीं है; आप

द्वारा (निघिटो) के अधीन रखा गया है

मेरी बुद्धि (पञ्ञा) का साधन; आप

वह भी ज्यादा दूर नहीं जाएगा।

वहाँ, गहट्टयन्तो का अर्थ है: फल खाने वाले बंदर की तरह, जो अपने अस्थिर लोभ (लोला) के कारण पेड़ को बार-बार हिलाता रहता है, एक शाखा को छोड़कर दूसरी को कई बार पकड़ता है, (मन) अपनी इच्छा के अनुसार भटकता रहता है, वह उसी इंद्रिय-विषय (आरम्मने) जैसे दृश्य रूपों (रूप) आदि के चारों ओर निरंतर (अभिक्खनं) घूमता रहता है, बिना रुके (अप्पदानेन) चेतना की निरंतरता (चित्तसंतान) प्राप्त करने के लिए, एक को छोड़ते और दूसरे को पकड़ते हुए, दृश्य रूपों (रूप) आदि जैसे इंद्रिय-विषयों से नेत्र द्वार आदि के माध्यम से। यहाँ वर्तमान काल का कथन है क्योंकि यह वर्तमान के निकट है (वत्तमान)। इस प्रकार चलते हुए (अनुपरियन्तो), तिट्ठ मक्काट माधवी (हे मन-बंदर! अब स्थिर खड़े रहो, दौड़ना मत); अब से दौड़ना संभव नहीं है; इसलिए, न हि ते तं यथा पुरे, का अर्थ है: क्योंकि उस शरीर-घर (अत्तभावगेहं) का उपयोग (सेवित) तुम्हारे द्वारा पहले की तरह नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह बंद है; क्यों? निग्हितोऽसि पञ्ञाय (तुम अपने पैरों को काटकर, जो दुराचार (किलेसा) का कर्म (अभिसंखार) माना जाता है, सही मार्ग (मग्ग) के ज्ञान से पूर्णतः नियंत्रित (अच्चन्तिकं) हो चुके हो; अतः, नेव दुरं गमिसादि) वह इस प्रकार दर्शाता है: - तुम्हारा जाना केवल मन की अंतिम अवस्था (चरिमाक) तक ही सीमित है; तुम इस जन्म (अत्तभाव) से आगे दूसरे जन्म में ही जाओगे, और इसी प्रकार आगे भी। “नेतो दुरं” का पाठ भी है; अर्थ वही है।

थेरा वल्लिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(124): गंगातिरिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (124) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
124. गंगातीरिया

बुद्ध युग में सावत्थी में एक नागरिक के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम दत्ता रखा गया। [1] अपने गृहस्थ [113] जीवन में जब उन्होंने अज्ञानता के कारण पाप किया और अपने अपराध का बोध हुआ, तो वे इतने व्यथित हुए कि उन्होंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया)। अपने कर्मों से दुखी होकर उन्होंने तपस्या का मार्ग अपनाया और गंगा के किनारे ताड़ के पत्तों का तम्बू बनाकर रहने लगे। अतः वे गंगा-तीरिया (गंगा-किनारे चलने वाले) के नाम से प्रसिद्ध हुए। उन्होंने किसी से बात न करने का संकल्प लिया। इस प्रकार वे पूरे एक वर्ष तक मौन रहे। दूसरे वर्ष, जिस गाँव में वे भिक्षा माँग रहे थे, वहाँ की एक स्त्री ने यह जानने की इच्छा से कि क्या वे गूंगे हैं, उनका कटोरा भरते समय दूध गिरा दिया। तब उन्होंने कहा, 'बस करो बहन।' परन्तु तीसरे वर्ष, अथक परिश्रम के बाद, उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इस पर उन्होंने मौखिक रूप से अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की, और इन छंदों में अपनी पिछली प्रक्रिया का वर्णन किया:

[127] तिअणै मे तलपट्टणं गंगातीरे कुटी काटा,॥
जवासित्टोवा मे पत्तो पसुकुलाṃ कै सिवाराṃ.॥॥

[128] द्विन्नै अन्तर्वासनां एका वाचा मे भासिता,॥
ततिये अन्तर्वासमहि तमोक्खन्धो पदालितो॥॥

[127] गंगा के किनारे मैंने ताड़ के तीन पत्ते लिए
और अपनी कुटिया बनाई; मेरा कटोरा कफ़न के बर्तन जैसा था
जिससे लोग शव पर दूध छिड़कते हैं;
मेरा वस्त्र कूड़े के ढेर के कचरे से काटा गया था। [2]

[128] दो साल, एक बरसाती से दूसरी बरसाती तक,
मैं [वहाँ रहा], और एक बार को छोड़कर एक शब्द भी नहीं बोला।
ऐसा ही तीसरे साल तक चलता रहा—तब
अंधकार की लंबी रात चीर कर प्रकाश में बदल गई।

[1] = डोनटस। उनकी कहानी—कि कैसे उन्होंने अपनी माँ और अपनी बहन को अपनी पत्नियों के रूप में स्वीकार किया, जबकि उन्हें दोनों से अपने रिश्ते का पता नहीं था—बहनों के कथनों (गाथा) के क्रॉनिकल में पृष्ठ 112, 115 पर बताई गई है। यहाँ उनके अनाचार का संकेत इतने नाजुक या अस्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया गया है कि इसे बहन-इतिहास द्वारा दी गई व्याख्या की आवश्यकता है। पाली इस प्रकार है: Gharāvāsaṃ vasanto agamaniyaṭṭhānabhāvaṃ ajānitvā vītikkamaṃ katvā puna āgamaniyaṭṭhānabhāvaṃ ñatvā.

[2] ऐसी तपस्याओं के लिए, विनय ग्रंथ, iii. 89 देखें। यहाँ कटोरा खोपड़ी (चवसीसाम्) नहीं है, बल्कि टीका में इसे मतानम् खिरासेकनकुंड सदिसो, 'मृतकों के लिए दूध छिड़कने वाले पात्र के समान' बताया गया है - एक प्रकार का मेमेंटो मोरी (देखें न्यूमैन)। यह संभव है कि मूल पाठ चवसीसेन मे पट्टो रहा हो, जैसा कि विनय में मुहावरा है, लेकिन इस प्रकार के खोपड़ी के कटोरे निषिद्ध थे। इस भारतीय ओडिपस की तपस्या में यूनानी राजा के क्रूर आत्म-विकृति की तुलना में अधिक संयम और गरिमा है।

2.1-4 [124] गंगातीरियत्थेरा के श्लोक पर टीका

तिन्नं मे तालपट्टानं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा गंगारिया का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक पारिवारिक घर में हुआ था। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, वे व्यवस्था से अत्यंत प्रसन्न हुए और भिक्षुओं को पीने का जल दान किया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे दिव्य लोक में अवतरित हुए, समय-समय पर पुण्य कर्म करते रहे, देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक धनी गृहस्वामी के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम "दत्ता" था। वयस्क होने पर, वे गृहस्थ जीवन व्यतीत कर रहे थे, तभी उन्हें उस स्थान की स्थिति का ज्ञान नहीं था जहाँ जाना निषिद्ध था (आगमनीयत्तनभावं), और उन्होंने पाप किया (वितिक्खम)। बाद में, जब उन्हें उस स्थान की स्थिति का ज्ञान हुआ जहाँ जाना निषिद्ध था, तो उन्हें पश्चाताप हुआ, और वे भिक्षु बन गए। उस कर्म से उन्हें घृणा हुई, और उन्होंने वस्त्रहीनता का उचित अभ्यास किया (लूखपटीपत्तिं अनुतित्तन्तो), धूल के ढेर से चिथड़ों का वस्त्र (पंसुकूल) और पानी के बर्तन के समान मिट्टी का कटोरा (चवसित्त) लेकर गंगा नदी के किनारे ताड़ के तीन पत्तों से एक कुटिया (कुटिका) बनाई और वहाँ रहने लगे। इसी कारण उनकी उपाधि गंगातिरिया हो गई। उन्होंने मन में यह संकल्प लिया कि अरहंतत्व प्राप्त करने से पहले वे किसी से कोई संवाद नहीं करेंगे और प्रथम वर्ष मौन रहकर अपने इस व्रत का उल्लंघन भी नहीं किया। दूसरे वर्ष, जब गाँव में वे भिक्षा माँगते हुए भटक रहे थे, तब एक

स्त्री ने उनके कटोरे में दूध छिड़का, क्योंकि वह यह जानना चाहती थी कि वे गूंगे हैं या नहीं। तब उन्होंने कहा, "आलं भगिनी (बस करो बहन)।" तीसरे वर्ष, अपने आत्म-साधन और परिश्रम से उन्होंने अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—-

"अत्यंत धर्मपरायण और प्रसन्न।"

मैंने जार में पीने का पानी भर दिया

बुद्ध के भिक्षुओं के अद्वितीय पुरोहित वर्ग

पदुमुत्तरा। चाहे पहाड़ी की चोटी पर हो या वृक्षों पर।

शीर्ष पर, चाहे आकाश में हो या जमीन पर,

जब भी मुझे पानी पीने की इच्छा होती है, यह आ जाता है

मेरे लिए अस्तित्व में लाना।

यह एक लाख युग पहले की बात है।

फिर मैंने अपनी भेंट दी; मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

जल अर्पण का परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी। :P

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

हालाँकि, अरहंत बनने के बाद, उन्होंने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए दो श्लोक कहे, ताकि वे पहले से ही अपने उचित अभ्यास (पटीनट्टी) को स्पष्ट (उभावनमुखेना) कर सकें।

127. "तीन ताड़ के पत्तों से एक झोपड़ी बनी थी

मेरे द्वारा बनाया गया; मेरा कटोरा मिलता-जुलता था

पानी का घड़ा और मेरा वस्त्र चिथड़े-चिट्टे थे।

कूड़े के ढेर (पंसुकूल) से।

128. दो वर्षों के भीतर (वस्सा) एक शब्द

(केवल) मेरे द्वारा बोला गया था; अंदर

तीसरे वर्ष (मेरा) अंधकार का समूह था

हटा दिया गया (padālito).

वहाँ, tinnaṃ me tālapattānaṃ Gaṅgātīre kuṭi katā का अर्थ है: ताड़ के पेड़ से गिरे तीन ताड़ के पत्तों से गंगा नदी के किनारे एक कुटिया बनाई गई थी ताकि वर्षा से मेरी रक्षा (परिहारन) हो सके। इसके द्वारा, वह निवास (सेनासना) के संबंध में अपनी संतुष्टि (सेनासना) प्रकट करता है। वास्तव में धर्म (धम्म) के सेनापति ने इस प्रकार कहा है:—

"घुटनों पर बारिश नहीं होती"

जो स्वयं क्रॉस-बैठ गया हो-

टांगों वाला। एक भिक्षु के लिए जिसका अपना मन

(निर्वाण की ओर) निर्देशित है

आरामदायक (phāsu) की कोई आवश्यकता नहीं (alaṃ)

जीवन (विहार)।

"ताळपट्टिनं" भी एक पाठ है; इसका अर्थ बस यही है। चवसित्तो व मे पत्तो का अर्थ है: मेरा भिक्षापात्र जलपात्र के समान है; मृतकों के दूध को छिड़कने के लिए इस्तेमाल होने वाली बाल्टी (कुंड) के समान; यही इसका अर्थ है। पंसुकूलं च चीवरं का अर्थ है: मेरा वस्त्र भी सड़क, कब्रिस्तान आदि स्थानों पर फेंके गए चिथड़ों (मंतक) से बना था, जिन्हें पसुकूल वस्त्र कहा जाता है। वह इन दो शब्दों के माध्यम से आवश्यकताओं (परिक्खारा) के प्रति अपनी संतुष्टि व्यक्त करता है।

Dvinnaṃ antaravāssānaṃ का अर्थ है: दो वर्षों के दौरान; उन वर्षों में जब उन्होंने भिक्षु बनने के बाद अभी तक अरहंत पद प्राप्त नहीं किया था। Ekāvācā me bhāsitā का अर्थ है: "बस करो बहन!" यह शब्द दूध के उचित त्याग (पटिक्खेप) का प्रतीक है, और यह मैंने ही कहा था; वहाँ मौन व्रत (वचीभेदो) का कोई और उल्लंघन नहीं हुआ था। इससे वह अपने शरीर और वाणी पर उत्कृष्ट नियंत्रण दिखाता है, जो अपने चरम पर पहुँच चुका था। Tatiye antaravassamhi का अर्थ है: तीसरे वर्ष के भीतर; जबकि वह वर्ष अभी पूरी तरह से संपन्न भी नहीं हुआ था। Tamokhandho padālito का अर्थ है: सर्वोत्कृष्ट मार्ग (मग्ग) के माध्यम से अंधकार का समूह टूट गया था; अज्ञान (अविज्जा) का पूर्वाग्रह (अनुसय) पूरी तरह से समाप्त हो गया था; यही इसका अर्थ है। इससे वह एकांतवास (एकठ्ठता) की अवस्था के माध्यम से सभी प्रकार के दुराचार (किलेसा) के पूर्ण त्याग की बात करता है।

थेरा गंगातीरिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(125):अजीना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (125) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
125. अजिना
बुद्ध युग में, सावत्थी में एक गरीब ब्राह्मण (पुजारी) के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, जन्म के समय उन्हें हिरण की खाल में लपेटा गया था, और इसीलिए उनका नाम हिरण (अजीना) रखा गया। गरीबी में पले-बढ़े उन्होंने जेतवन का दर्शन किया और बुद्ध की शक्ति और महिमा को देखा। आस्था प्राप्त करके उन्होंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण किया) और कुछ ही समय बाद अलौकिक चिंतन प्राप्त कर लिया। जब उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया, तब भी अपने पूर्व कर्मों के कारण वे अपमानित और अज्ञात रहे। कुछ सांसारिक भिक्षुओं ने इस कारण उनका तिरस्कार किया। तब थेरा ने इन श्लोकों से उन्हें विचलित किया:

[129] आपी सी होति तेविज्जो मक्कुहायी अनासावो,॥
अप्पन्नतोति नां बाला अवजानन्ति अजनाता॥ ॥

[130] यो [19] च खो अन्नपनास्सा लाभी होतिधा पुग्गलो,॥
पापधम्मोपि सी होति सो नेसां होति सक्कतो' ती॥ ॥

[129] भले ही किसी व्यक्ति ने त्रिविध ज्ञान प्राप्त कर लिया हो,
मृत्यु पर विजय प्राप्त कर ली हो और मादक पदार्थों (अशुद्धियों/इच्छाओं) को शुद्ध कर लिया हो,
फिर भी, चाहे वह प्रसिद्धि में अज्ञात ही क्यों न हो, बेचारे मूर्ख
अपनी अज्ञानता में उसे नीचा देख सकते हैं।

[130] परन्तु उसे इस संसार की अच्छी वस्तुएँ प्राप्त करने दो,
तो चाहे वह बुरे वंश का ही क्यों न हो, फिर भी
वे उसकी सेवा और सम्मान करेंगे।

2.1-5[125] अजीनाथेरा के छंद पर टिप्पणी
'अपि चे हेति तेविज्जो' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अजिना का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और संसार में एक ऐसे परिवार में पुनर्जन्म लिया जो किसी बुद्ध से रहित (सुञ्ञे) था। बुद्धि प्राप्त करने पर वे किसी कार्य से वन में गए। वहाँ उनकी मुलाकात सुचिंतित नामक एक मौन बुद्ध से हुई जो रोगग्रस्त बैठे थे। वे उनके पास गए, उन्हें प्रणाम किया, श्रद्धा भाव से प्रेरित हुए और औषधि के लिए घी (घटमंड) अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे दिव्य लोक में अवतरित हुए, समय-समय पर पुण्य कर्म करते रहे, अपने जन्म-मृत्यु के चक्र में घूमते रहे, परन्तु उत्तम अवस्थाओं (सुगति) में रहे और सावत्थी में एक दरिद्र ब्राह्मण के घर गर्भ धारण किया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। जन्म के समय उनका स्वागत हिरण की खाल से किया गया था, इसलिए उनका नाम अजिन रखा गया। निर्धन परिवार में जन्म लेने के कारण, वयस्क होने पर भी, उन्हें भोजन और पेय पदार्थों की कमी रही, क्योंकि उन्होंने धन अर्जित करने वाला कोई कार्य नहीं किया था। भटकते हुए, संयोगवश उन्होंने जेतवन के प्रवेश के समय बुद्ध की शक्ति को देखा, उचित श्रद्धा से प्रेरित हुए, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का अभ्यास किया और शीघ्र ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) के साथ अर्हत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

“महान मौन बुद्ध के दर्शन करने पर

सुसिनिटिटा, दुनिया की सबसे बड़ी, बैल

उन पुरुषों में से, जो घनी गहराई में प्रवेश कर चुके थे

जंगल में, हवा से होने वाली बीमारी से पीड़ित होकर मैं

वह अत्यंत धर्मनिष्ठ था और उसने उसे पेशकश की

घी की मलाई। क्योंकि ऐसा किया और बनाया गया है।

इस गंगा नदी के माध्यम से (पुण्य का) संचय होता है।

और भागीरता (साथ ही) चारों महान महासागर

यह मेरे लिए (संपज्जरे) घी बन गया। यह भयानक (घोरा)

पृथ्वी भी असीम और अगणनीय है।

मेरे इरादे (संकप्पा) को जानकर

वह मीठी चीनी (मधुसक्करा) बन गई।

चारों महान द्वीपों के वृक्षों में वनस्पति उग रही है

पृथ्वी पर, अपनी इच्छा को समझकर

(संकप्पा), ऐसे वृक्ष बन गए जो एक निश्चित समय तक टिके रहे।

युग (कप्पा)। पचास बार मैं दिव्य था-

वह संप्रभु, जिसने दैवीय संप्रभुता का प्रयोग किया।

मैं इक्यावन बार विश्व-राजा रहा।

मेरे क्षेत्र में शासन समृद्ध (विपुलं) था।

संख्यात्मक रूप से अगणनीय।

यह 94 युग (कप्पा) पहले की बात है।

फिर मैंने अपनी भेंट चढ़ाई। मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति (दुग्गती) को याद रखें;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

घी का सार (अर्पण) बनाना।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद भी, अपने पूर्व कर्म के फल (निस्सांडा) के कारण वे अल्प संपन्न और कम प्रसिद्ध रहे। यहाँ तक कि विशेष (उद्देसा) भोजन और टिकट द्वारा वितरित भोजन भी निम्न गुणवत्ता का ही निकला। उनके कर्म के फलस्वरूप ही सामान्य (पुथुज्जना) भिक्षुओं और नौसिखियों ने उन्हें "अप्पञ्ञातो (एक महत्वहीन व्यक्ति)" कहकर उपेक्षित (अवमन्नन्ति) किया। उन भिक्षुओं को पश्चाताप कराने के लिए, थेरा ने दो श्लोक कहे:

129. "भले ही वह कुष्ठ रोग रहित अरहंत होता

(अनासव), जिसने मृत्यु का निवारण किया था

(मच्चुहाइ), और तीन गुना गुणों से युक्त

अतिज्ञान (तेविज्जो), मूर्ख लोग

उसके प्रति विनम्रता (अवजानति) का भाव रखो क्योंकि

वे कम जाने जाते हैं क्योंकि वे समझते नहीं हैं-

खड़ा होना।"

130. “दूसरी ओर, वास्तव में जो कोई भी

एक व्यक्ति है, जो यहाँ लाभ प्राप्त करने वाला है।

वह उनके लिए भोजन और पेय पदार्थ उपलब्ध कराता है।

उसकी विधिवत सेवा की गई (सक्कातो) भले ही वह

वे स्वभाव से ही दुष्ट थे (पापधम्मो)।

वहाँ, अपि एक अविकारी कण है जो अनुमान को दर्शाता है। से का अर्थ है अनुमान। होति का अर्थ है होना। इस व्यक्ति को तीन प्रकार का उच्च्य ज्ञान (विज्जा) प्राप्त होता है; अतः वह तेविज्जो है। वह मृत्यु का त्याग करता है; अतः वह मच्चुकायी है। कामुक विकारों आदि के अभाव के कारण वह अनासवो (अपराध-मुक्त) है। यही कहा गया है: - आसव (अपराधों) के निवारण का ज्ञान, अतः इन तीन प्रकार के उच्च ज्ञान को प्राप्त करने के कारण वह तेविज्जो है; परन्तु उसके बाद, सभी प्रकार से कामुक विकारों आदि का पूर्णतया निवारण (सब्बासो) करने के कारण वह अनासवो (अपराध-मुक्त) है; भविष्य में नया जन्म (पुनब्भव) न लेने और मृत्यु से विरक्त होने के कारण वह मानो मच्चुकायी भी है; इसके बावजूद, appaññāto ti naṃ bālā avajānanti (यद्यपि उसने अपने लाभ के लिए वह अवस्था प्राप्त कर ली थी, जिसके लिए अच्छे परिवारों के पुत्र अपने घरों से निकलकर भिक्षु बन जाते हैं, फिर भी दुष्ट बुद्धि वाले मूर्ख लोग लाभ न होने के कारण उस पर ध्यान नहीं देते हैं) इस प्रकार: “वह तपस्या का प्रचारक (dhūtavādo), विद्वान (bahussuto) और सत्य का शिक्षक (dhammakathiko) है; और कहते हैं: “वह ज्ञात नहीं है; वह प्रसिद्ध नहीं है (pākaṭo)।” क्यों? अज्ञान के कारण; इसका कारण उसके गुणों का अज्ञान है; इस प्रकार वह इंगित करता है।

गुणों के ज्ञान के अभाव मात्र से ही मूर्ख लोग, अपने लाभ के महत्व (लाभगरु) के कारण, उन चीजों का भी अनादर (अवजानन्ति) कर देते हैं जिनका सम्मान किया जाना चाहिए (संभवनीयं); इसी प्रकार उन्होंने दूसरा श्लोक कहा, यह दर्शाने के लिए कि गुणों के ज्ञान के अभाव में वे उन लोगों का भी सम्मान करते हैं जिनका अनादर किया जाना चाहिए (अवजानितब्बं), लाभ के महत्व (ग) के कारण। यहाँ, यो शब्द अनिश्चितता को दर्शाता है। च शब्द अधिशेष को दर्शाता है; इसके द्वारा, इस व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति के बीच अंतर (विशेषं) स्पष्ट होता है, जो केवल कही गई बात (वच्चमानं) है। खो शब्द जोर को दर्शाता है। अन्नपानस का अर्थ है मात्र उदाहरण (निदासन)। लाभ का अर्थ है: लाभ का स्वामी। इध का अर्थ है: इस संसार में। वृद्धावस्था और मृत्यु के साथ जीवों के इस और उस निवास (आवास) की परिपूर्णता (पूर्णता) और पतन (गलना) के कारण पुग्गला (व्यक्ति) कहलाता है। पापधम्मो का अर्थ है निम्न (लामक) व्यक्तित्व (धम्मो)। वास्तव में, यहाँ यही अर्थ है: जो भी व्यक्ति केवल संन्यासी के वस्त्र आदि जैसी आवश्यक वस्तुओं का ही लाभ उठाता है, ध्यान आदि जैसी उपलब्धियों का नहीं, वह मूर्ख लोगों के बीच इस संसार में लाभ की गंभीरता के कारण व्यक्तिगत रूप से आदरणीय (सक्कतो) और सम्मानित (गरुकतो) है, यद्यपि वह अपने बुरे नैतिक उपदेशों (दुस्सीला) और बुरी इच्छाओं (पापिच्छ) के कारण निम्न व्यक्तित्व (हीनधम्मो) है।

थेरा अजिना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(126): मेलाजिना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (126) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
126. मेलाजिना
बुद्ध युग में बनारस में एक कुलीन परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम मेलजिना रखा गया। वे अपनी विद्वत्ता और उपलब्धियों के लिए प्रसिद्ध हुए और पूरे देश में ख्यातिप्राप्त हुए। जब परम पूज्य बुद्ध बनारस के इसिपताना में ठहरे, तो मेलजिना उनके उपदेश सुनने के लिए धम्म मार्ग पर गए; और श्रद्धा से प्रेरित होकर उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अर्हत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

[115] और जब भिक्षुओं ने पूछा कि उसने अलौकिक गुणों को किस हद तक प्राप्त कर लिया है, तो उसने 'शेर की दहाड़' लगाई:

[131] यदाहौ धम्ममसोसिṃ भासामानस्स सत्थुनो,॥
न कण्खमभिजानामि सब्बान्नु अपराजिते॥ ॥

[132] सातवाहे महावीरे सारथिनां वरुत्तमे,॥
मग्गे पतिपादायं वा कनखा मयहां न विज्जति' ती॥ ॥

[131] जब मैंने भगवान (बुद्ध) को धम्म का मार्ग उपदेश देते हुए सुना,
तब से मेरे मन में कोई संदेह नहीं रहा,
वे सर्वज्ञ और अजेय हैं।

[132] न तो उनके समान किसी शक्तिशाली प्रभु में,
कारवां के स्वामी, [1] मनुष्यों के चालक,
अद्वितीय और महान, न ही मार्ग में, नियम में, [2] विश्वास की कमी मुझे कभी विचलित कर सकती है।

[1] देखें संवाद, ii. 32. सत्थावाहे, जिसे वहाँ 'तीर्थयात्री दल का स्वामी' के रूप में प्रस्तुत किया गया है, यहाँ अधिक शाब्दिक रूप से पुनरुत्पादित किया गया है।

[2] Magge, paṭipadāyaṃ vā - यानी, 'आर्यन [आठ गुना] मार्ग, और उपदेश, इत्यादि' (टीका)। ये श्लोक शायद उपयुक्त उत्तर न लगें; लेकिन यदि दर्शनशास्त्र के संकलन (पृष्ठ 65, 210, 213) का अध्ययन किया जाए, तो यह देखा जाएगा कि सभी प्रकार के संदेहों का निवारण, धम्म के अनुभव से परे जाने के लिए एक अत्यंत आवश्यक पूर्व शर्त माना जाता था।

2.1-6 [126] मेलजिनथेरा के श्लोक पर टीका
यदाङ्हं धम्मं अस्ससिं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मेलजिना का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, सुमेध बुद्ध के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म हुआ। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो एक दिन संयोगवश उन्होंने बुद्ध को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे धर्मपरायण हो गए और उन्हें सुगंधित (अमोद) फल भेंट किए। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने अपने बार-बार के जन्मों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया, बनारस में क्षत्रिय (खत्तिया) वंश में पुनर्जन्म लिया, जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तो उन्होंने मेलजिना नाम प्राप्त किया, कला और विज्ञान में निपुणता प्राप्त की, बुद्धिमान और चतुर (ब्यात्तो) बन गए और सभी दिशाओं में लोकप्रिय हो गए। जब भगवान बनारस के इसिपताना में निवास कर रहे थे, तब वे मठ गए, गुरु के पास गए, सत्य (धम्म) को सुना, उचित श्रद्धा से पवित्र विश्वास प्राप्त किया, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े और उसी दिन अरहंत पद प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदाना में कहा गया है:—

हजार किरणों वाले भगवान जो बन गए

स्वयं बुद्ध, अजेय,

उनके एकांतवास से उत्पन्न होकर, विशेष रूप से आया

भिक्षा-भोजन (गोकाराया) संग्रह के लिए बाहर।

मेरे हाथ में फल थे, मैंने उन्हें देखा और

मैं पुरुषों में श्रेष्ठ बैल के पास पहुँचा। धर्मनिष्ठ-

प्रसन्न और भावपूर्ण होकर मैंने अपनी भेंट चढ़ाई।

फल का, मेरे हाथ के छेद में (अवतां)

यह 94 युग (कप्पा) पहले की बात है।

फिर मैंने फल का प्रसाद चढ़ाया।

मुझे किसी भी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यही है

मेरे द्वारा चढ़ाए गए फलों का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, भिक्षुओं द्वारा यह पूछे जाने पर कि: "मित्र! आपने पारलौकिक मानक (उत्तरिमनुस्सा धम्म) क्यों प्राप्त किया?" उन्होंने शेर की दहाड़ के साथ दो श्लोक कहे।

131. "जब मैंने सत्य (धम्म) सुना,

जब गुरुजी बोल रहे थे, तब मैंने ऐसा नहीं किया।

किसी भी संदेह के बारे में याद रखें।

"विजयी सर्वज्ञ बुद्ध।"

132. "मेरे लिए, इसमें कोई संदेह नहीं है

या तो काफिले के नेता में,

महान नायक, सबसे उत्कृष्ट

रथ चालकों या उचित अभ्यास में

सही मार्ग (मग्ग) का (पटिपदा)।

वहाँ, यदा का अर्थ है: किसी भी समय; अहं स्वयं को इंगित करता है। धम्म का अर्थ है: चार आर्य सत्यों का उपदेश (धम्म)। अस्सोसिं का अर्थ है: मैंने सुना। सत्थुनो का अर्थ है: गुरु का, क्योंकि इसका अर्थ है सक्षम प्राणियों (वेनेय्यानं) का मार्गदर्शन करने का उपदेश (सासनत्थेन), जिसमें वर्तमान जीवन से संबंधित लाभ (दित्तधम्मिका) आदि शामिल हैं। कंखं का अर्थ है संदेह। वह सृजित (संखत) और असृजित (असंखत) दोनों को पूर्णतः जानने (अनवसेसतो) के कारण सब्बाञ्ञु है। किसी भी स्थान से पराजित न होने के कारण वह अपराजित है। क्योंकि उनका अर्थ है कि वेणेय प्राणियों के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के कठिन सफर से उन्हें निर्वाण तक उचित रूप से ले जाना। जो कहा गया है वह यह है:— "जब गुरु ने सत्य (धम्म) का उपदेश दिया, तो मैंने चारों आर्य सत्यों का उपदेश सुना, ध्यानपूर्वक ग्रहण किया और उन्हें ग्रहण किया; उसके बाद, स्वयं द्वारा अर्जित ज्ञान (सयम्भुणान) के कारण, सृजित और असृजित (संखतसंखत) सभी सत्यों को बिना किसी शेष (अनवसेसा) के ज्ञात करने के कारण, वे सर्वज्ञ बुद्ध हैं, जो अबाधित दृष्टि (दस्सावी) रखते हैं; पाँचों मारों पर विजय प्राप्त करने और उनसे पराजित न होने के कारण, और सत्य के चक्र (धम्मचक्क) को निर्बाध रूप से घुमाने की अवस्था (अप्पतिहत) के कारण वे अपराजित (अजेय) हैं; लोभ के कठिन मार्ग आदि जैसी कठिन यात्राओं से भार वहन करने योग्य (वेनेय्या) प्राणियों के परिवहन के महत्व (अट्ठ) के कारण वे सत्त्ववाह (कारवां के नेता) हैं; अत्यंत वीर (विक्कन्त) होने के कारण वे महावीर हैं; दूसरों पर निर्भर न होने (पच्चय) की अवस्था (भाव) के कारण, कंखं माभिजानामि (मुझे कोई संदेह नहीं है) इस प्रकार: "क्या वे वास्तव में बुद्ध हैं; या नहीं?" उत्तम (सर्वोत्तम आत्म-जागृत बुद्धों) में, जो पूर्ण (अच्चंतिका) नियंत्रण (दमथा) द्वारा वशीकरण के कारण सर्वश्रेष्ठ (पवरा) सारथीनम् (रथियों में) बन गए थे, क्योंकि वे अन्य साधनों से मनुष्यों को वश में करने में कठिनाई के कारण उनके शरण (सरना) थे। न विज्जति, संदेह का कोई अस्तित्व नहीं है, इस प्रकार: "क्या वास्तव में यह संसार से मुक्ति दिलाने में सहायक है या नहीं?" ऐसे उचित अभ्यास में, पतिपादाय अच्छे नैतिक उपदेशों आदि के रूप में, साथ ही साथ श्रेष्ठ मार्ग (मग्ग) में, जो इससे जुड़ा हुआ था (तदुपादाय) और जिसे उसी रूप (तथारूप) में पवित्र सत्य (अरियाधम्म) में संदेह के अभाव की बात करते हुए सिखाया गया था। इसके अलावा, भिक्षुओं के पवित्र संघ में संदेह की अनुपस्थिति का भी उल्लेख किया गया है; इस प्रकार, यह देखा जाना चाहिए कि वहाँ अस्थिरता (अनञ्ञथा-भाव) नहीं है।जो स्थापित हो चुका था (पतित्तित)।

थेरा मेलजिना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(127):राधा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (127) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
127. राधा
हमारे परम पूज्य (बुद्ध) के समय में राजगृह में एक ब्राह्मण (पुजारी) के रूप में पुनर्जन्म लेकर , वृद्धावस्था में वे अपने विभिन्न कर्तव्यों का निर्वाह करने में असमर्थ हो गए। [1] उपेक्षित होकर, वे भगवान (बुद्ध) के पास गए और अपनी अपेक्षाएँ प्रकट कीं। भगवान (बुद्ध) ने उनकी आवश्यक योग्यताओं का ध्यान करते हुए, सारिपुत्त को उन्हें प्रवेश देने का आदेश दिया। इसके शीघ्र ही उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। और उसके बाद, भगवान (बुद्ध) के निकट रहकर, वे उन लोगों में अग्रणी हो गए जो भगवान (बुद्ध) की शिक्षाओं से प्रेरित होकर [2] बिना पूर्व सूचना के बोल सकते थे।

[116] अब एक दिन यह देखकर कि आत्म-प्रशिक्षण की कमी किस प्रकार वासनाओं के वश में होने का कारण बनती है, उन्होंने इस प्रकार व्यक्त किया:

[133] यथा अग्रं दुच्चन्नं वुऽहि समतिविज्जति,॥
एवं अभिवितां चित्तं रागो समतिविज्जति॥ ॥

[134] यथागारां सुच्चन्नं वुऽहि न समतिविज्जति,॥
एवं अभिवितां चित्तं रागो न समतिविज्जति॥ ॥

[133] जैसे किसी खराब छत वाले घर में बारिश

लगातार घुसती और प्रवेश करती है,
वैसे ही अप्रशिक्षित अभ्यास द्वारा मन में
जुनून हमेशा घुसता और प्रवेश करता है।

[134] और जैसे अच्छी छत वाले घर में बारिश
कभी भी प्रवेश नहीं कर पाती,
वैसे ही शांत और अंतर्दृष्टि से प्रशिक्षित मन में
वासना कभी प्रवेश नहीं कर पाती। [3]

[1] पतिखित्टो.

[2] उन्हें श्रेष्ठता प्रदान करने वाला अंश अंग., i. 25 से उद्धृत किया गया है। वंगीसा की समान, लेकिन एक जैसी नहीं, श्रेष्ठता से तुलना करें, भजन 114। यह थेरा संभवतः संयुत्त के कई छोटे प्रवचनों में संबोधित 'आदरणीय राधा' के समान है (iii. 79, 188 ff.; iv. 48 f.)।

[3] 'अभ्यास,' 'शांति और अंतर्दृष्टि' - पाठ में भावना - शिष्य के आत्म-प्रशिक्षण में व्यवस्थित प्रयास का सामूहिक नाम जो पूर्णता की तलाश करता है (बुद्ध मनोविज्ञान, पृ. 261, नोट 2)। टीका में 'शांति और अंतर्दृष्टि' के रूप में निर्दिष्ट। तुलना करें संकलन, पृ. 202 आगे।

2.1-7[127] राधात्थेरा के श्लोक पर टीका
यथा अगरं दुच्चन्नं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा राधा का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय हंसवती नगर के एक पारिवारिक घर में हुआ था। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, वे मठ गए, गुरु के पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ बैठ गए और देखा कि गुरु ने उत्तर देने के लिए तैयार भिक्षुओं में एक भिक्षु को सबसे आगे (पटिभानेय्यक) स्थान दिया है। उन्होंने स्वयं भी उस पद (ठानंतरा) की आकांक्षा (पत्तेत्वा) की और एक महान दान किया। उन्होंने गुरु को एक विशाल (उलारा) श्रद्धापूर्ण भेंट भी दी। इस प्रकार संकल्प लेकर वे वहां से चले गए और इस-उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, भगवान बुद्ध के समय में एक गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्होंने गुरु को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे धर्मपरायण हो गए और उन्होंने मीठे आम दान किए। उस पुण्य कर्म के कारण वे दिव्य लोक में उत्पन्न हुए और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और अंत में भगवान बुद्ध के समय में राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। उन्होंने राधा नाम प्राप्त किया और वयस्क होने पर गृहस्थ जीवन व्यतीत करने लगे। वृद्धावस्था में वे अपनी पत्नी और बच्चों से असंतुष्ट होकर मठ में चले गए; "गृहस्थ जीवन का मुझे क्या लाभ, मैं भिक्षु बनूँगा," एक वृद्ध भिक्षु ने भिक्षु बनने का निवेदन किया और जब उन्हें यह कहकर अस्वीकार कर दिया गया कि "यह ब्राह्मण वृद्ध है; यह सभी प्रकार के कर्तव्यों (वत्तपटीवत्तं) का निर्वाह करने में सक्षम नहीं है," तो वे गुरु के समक्ष गए और उन्हें अपने इरादे (अज्जासयं) से अवगत कराया। गुरु ने उनकी पर्याप्त योग्यता (उपनिषय) को देखकर धर्म के सेनापति को उन्हें भिक्षु बनाने का निर्देश दिया। भिक्षु बनने के बाद, उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर अपना मार्ग अपनाया और कुछ ही समय में अरहंतत्व प्राप्त कर लिया; इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

मैंने पादाफल (मूल फल) अर्पित किया

स्वर्ण रंगत वाले स्वयंजागृत बुद्ध,

बलिदान के योग्य प्राप्तकर्ता

भेंट चढ़ाना, प्रवेश करना (पणिपज्जंतं)

रथ-मार्ग। यह इक्यावन युग था।

(कप्पा) कुछ समय पहले मैंने अपना बनाया था

फल का अर्पण। मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यह

फल का फलदायी परिणाम है

मेरी दुराचारिता का प्रस्ताव था

जला हुआ।... बुद्ध का उपदेश

कार्य संपन्न हो चुका था।

लेकिन अरहंत बनने के बाद, वे गुरु के सहाबी (सन्तिकावचारो) बन गए और भ्रमण करते हुए, गुरु के सत्य उपदेशों (धम्मदेशना) के विषय में शीघ्र उत्तर देने वाले (पतिभान जाननक) प्रमुख बन गए। वास्तव में, थेरों के विचारों (दिट्ठी) से परिचित होने के कारण, दशबल को नए और ताजे उपदेश (धम्मदेशना) देने का विचार आया। इस कारण भगवान बुद्ध ने कहा: "हे भिक्षुओं! मेरे शिष्य भिक्षुओं में, जो प्रासंगिक और शीघ्र उत्तर देने वाले हैं, यह राधा हैं।" एक दिन उन्होंने दो श्लोक बोले, जिनकी शुरुआत "यथा अगरं" से हुई, जिसमें उन्होंने मानसिक विकास (भावना) की प्रशंसा करते हुए कहा:

"इन प्राणियों में मानसिक विकास (भावना) की कमी के कारण कामवासना (राग) हावी हो जाती है; यदि भावना हो तो कामवासना का अस्तित्व नहीं रहता।"

133-4. वहाँ, अगरं का अर्थ है कोई भी घर। दुच्छन्नं का अर्थ है: दुर्लभ, दरारों और छेदों से भरा हुआ। समतिविज्झति का अर्थ है: वर्षा भेदकर आर-पार हो जाती है। अभावितं का अर्थ है: अविकसित (अभावितं) मन, भावना से रहित होने के कारण, वर्षा भेदकर आर-पार हो जाता है। रागो समतिविज्झति का अर्थ है: यह पूरी तरह से (केवलं) नहीं है, बल्कि कामवासना (राग) है; घृणा (दोष), मोह (मोह), अहंकार (मान) आदि जैसी सभी विकृतियाँ उस मन (तथारूपं) को भी भेद देती हैं। सुभावितम् का अर्थ है: शांत भाव और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि जैसे विकासात्मक कर्मों (भावना) से उत्कृष्ट रूप से विकसित मन; राग आदि प्रकार की बुराइयाँ इस प्रकार के मन को भेद नहीं सकतीं, जैसे बारिश (जो छत वाले घर को भेद नहीं सकती)।

थेरा राधा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (128): सुरधा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (128) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
128. सुराधा
बुद्ध युग में उपर्युक्त राधा के छोटे भाई के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने अपने बड़े भाई के उदाहरण का अनुसरण किया और स्वयं भी अरहंत (प्रबुद्ध) बन गए। धर्म के उद्धारकारी मार्गदर्शन को दर्शाते हुए, उन्होंने इस प्रकार ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की :

[135] खिन्ना हि मयहा जाति वुसितां जिनसासणं,॥
पहिणो जलसंखतो भवनेति समुहता॥ ॥

[136] यस्साथया पब्बजितो अग्रस्मानगरियौ,॥
सो मे अत्थो अनुप्पत्तो सब्बासंयोजनक्खयो' ति.॥ ॥

[135] जन्म-पुनरावृत्ति अब नष्ट हो चुकी है।
विजेता के शासन ने मेरे सभी मार्गों का मार्गदर्शन किया है। [1] जिसे हम जाल कहते हैं, उसे मैंने त्याग दिया है; [2] जीवन की ओर ले जाने वाली वासना जड़ से उखाड़ दी गई है।

[136] और वह महान खोज, जिसके लिए मैंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व के लिए),
घर छोड़कर बेघर जीवन जीने के लिए,
मैंने वह खोज और उच्च पुरस्कार भी प्राप्त कर लिया है,
क्योंकि मैं वह हूँ जिसके बंधन दो भागों में टूट गए हैं। [3]

[1] 'मैंने मार्ग का पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) जीया है' (टीका)।

[2] धम्मपद , श्लोक 251; सांयुत्त, iii. 83 देखें। टीका, 'जाल = त्रुटि, अज्ञान।' आमतौर पर इसका अर्थ है लालसा या इंद्रिय। संभवतः सुराधा, सांयुत्त के एक प्रवचन (iii. 79) में श्रोता हैं।

[3] सीसीएक्स., 380.

2.1-8 [128] सुरादत्तेरा के श्लोक पर टीका
"खीना हि मयहं जाती" से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुराधा का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने भगवान सिख धर्म के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो एक दिन संयोगवश उन्होंने गुरु के दर्शन किए, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें एक नींबू (मातुलुंग) भेंट किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे दिव्य लोक में अवतरित हुए और समय-समय पर पुण्य कर्म करते हुए, उत्तम जन्मों में अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे थेरा राधा के सबसे छोटे भाई (अनंतरं) के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम सुराधा था। जब उनके बड़े भाई राधा ने संन्यासी का दीक्षा ली, तो उन्होंने भी संन्यासी का दीक्षा ली और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का अभ्यास करते हुए शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

मैंने दुनिया के नेता को चमकते हुए देखा

कनुकारा फूल के समान, उससे मिलता-जुलता

पूर्णिमा का चाँद भी उतना ही चमकीला होता है जितना कि

दीपक वृक्ष (दीपरुक्खा)। तोड़कर

मैंने नींबू के फल से एक टुकड़ा तोड़कर उसे भेंट किया।

स्वामी, उन लोगों से अत्यंत प्रसन्न होकर

वीर के हाथ, समर्पित होने के योग्य

भेंट (दक्खिनय्या)।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने फल का अर्पण किया।

मुझे किसी भी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है:

यह फल का फलदायी परिणाम है

पेशकश।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी अरहंतता (अञ्ञा) प्रकट करने के उद्देश्य से "खीना हि मयहं" से शुरू होने वाले दो श्लोक कहे, ताकि बुद्ध के शासन (सासन) के संसार (निय्यानिक) से मुक्ति के लिए अनुकूल अवस्था को दर्शाया जा सके।

135-6. वहाँ, खीना का अर्थ है: विलुप्ति, सर्वांगीण अंत हो गया था। जाति का अर्थ है अस्तित्व या अस्तित्व की उत्पत्ति (भवनिब्बत्ती)। वुसितं जिन-सासनं का अर्थ है: विजेता, सर्वांगीण आत्मजागृत बुद्ध का उपदेश (सासनं), पवित्र आचरण के सही मार्ग पर चलना, सर्वांगीण मार्गदर्शन करना। पाहीनेजालसंखुतो का अर्थ है: विधर्म (दिट्ठी) और अज्ञान (अविज्जा), जिसे "जाल संखात (जाल के रूप में माना जाता है)" नाम मिला था, क्योंकि यह प्राणी के अस्तित्व (सत्तसंतान) पर फैलता है और साथ ही यह बहुत कम (अप्पदान) को बचने देता है (निसारितं), सही मार्ग (मग्ग) का साधन था। भवनेत्ति समूहा का अर्थ है: तृष्णा (तन्हा), जिसे अस्तित्व का सूत्र (संध्या) और संशयपूर्ण अस्तित्व आदि का नेता (नयन) और प्रवर्तक (पवत्तना) कहा जाता है, का अंत (समुघातिता) हो गया है। यस्सत्थाय पब्बजितो का अर्थ है: चाहे जिस उद्देश्य से, चाहे जिस कारण से; (कोई भिक्षु बन गया था) अगरस्मा का अर्थ है: घर से; अनागारियं का अर्थ है: भिक्षुत्व; पब्बजितो का अर्थ है: पास आ गया था। सो का अर्थ है: पुनर्जन्म चक्र (संयोजन) के सभी बंधनों (बंधन) का अंत (खयभूतो), जिन्हें आरंभिक और अनुगामी संबंधों से संबंधित वर्गीकृत किया गया है; अत्थो का अर्थ है: पूर्ण लाभ (परमत्था) जिसे निर्भान माना जाता है और स्वयं का लाभ (सदत्थो) जिसे अरहंतत्व माना जाता है, अनुपत्टो मुझे प्राप्त हो गया है; यही इसका अर्थ है।

थेरा सुराधा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(129):गौतम

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (129) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
129. गौतम
बुद्ध युग में राजगृह में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर [1] गौतम नाम से विराजमान होकर, वे युवावस्था में ही बुरी संगति में पड़ गए और अपनी सारी संपत्ति एक वेश्या को दे दी। अपने बुरे कर्मों के लिए पश्चाताप करते हुए, उन्होंने बैठे हुए भगवान (बुद्ध) का दर्शन किया - जिन्होंने उनके मन की प्रगति और उनकी प्राप्ति को जान लिया था। वे दृढ़ निश्चय के साथ भगवान (बुद्ध) के पास गए, उनसे शिक्षा प्राप्त की और विश्वास किया। भिक्षु संघ में प्रवेश करते ही, जब उनके बालों पर उस्तरा लगा, तब उन्होंने अर्हत्व (ज्ञान) प्राप्त कर लिया। जब वे ध्यान और फल के आनंद पर चिंतन कर रहे थे, तब एक गृहस्थ साथी ने उनसे उनकी संपत्ति के बारे में पूछा। उन्होंने स्वीकार किया कि वे कैसे व्यभिचारी जीवन व्यतीत करते रहे थे, और अपनी वर्तमान वासना से मुक्ति के कारण ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) की घोषणा करते हुए कहा:

[137] सुखो सुपंती मुनायो ये इत्थिसु न बज्जहरे,॥
सदा वे रक्खितब्बासु यासु सच्चै सुदुल्लाभं॥ ॥

[138] वधाऽ कैरिम्हा ते काम अनाना दानी ते मयाऽ,॥
गच्छामा दानि निब्बाणं यथा गन्त्वा न सोसति' ति.॥ ॥

[137] वे आराम से सोते हैं, बुद्धिमान और पवित्र, जो कभी
स्त्री जाति से बंधे नहीं होते, क्योंकि इन्हें
निगरानी और संरक्षण में रखा जाना चाहिए, और उनके बीच
चीजों की सच्चाई जानना हमेशा कठिन होता है। [2]

[138] हे वासना, हमने तेरे साथ तलवार से युद्ध छेड़ा है।
अब हम मुक्त हो गए हैं और तेरे ऋण से मुक्त हैं।
अब हम उस प्रस्थान की ओर आगे बढ़ते हैं, [3] जहाँ हमारी यात्रा के अंत में हम और नहीं रोते।

[1] CLXXXIII., CCXXXIX के अन्य गोटामा थेरास के समान नहीं।

पूर्व।

[2] टीका की इस टिप्पणी में एक सूक्ष्म, विवेकपूर्ण स्पर्श है: 'अब उस [मित्र] को, जो अभी भी ऐसी स्त्रियों से बंधा हुआ है, थेरा, अपनी उस कामवासना के पूर्ण उन्मूलन को दर्शाने के लिए, दूसरा श्लोक कहता है।' प्रथम पुरुष बहुवचन का प्रयोग बौद्ध भजनों में एक दुर्लभ विशेषता है। यह मुक्त मन वाले एक समुदाय को संदर्भित करता है, न कि वक्ता और उसके पूर्व मित्र को, क्योंकि बाद वाले के अभी भी सांसारिक बंधन थे।

[3] मूल में निब्बाना । चूंकि थेरा एक अरहंत (प्रबुद्ध) हैं, इसलिए यह केवल उनके परिनिर्वाण, उनके जीवन के स्थानिक रूप से पूर्ण अंत - उनके अनुपादिस्च-निर्वाण को संदर्भित कर सकता है, टिप्पणी कहती है, चाहे वह किसी भी तरह से समझा गया हो।

2.1-9 [129] गौतमथेरा के श्लोक पर टीका
सुखं सुपन्ती से शुरू होने वाले श्लोक पूज्य थेरा गौतम के हैं। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, उन्होंने इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्म संचित किए और भगवान बुद्ध के विपस्सी काल में एक परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्हें संयोगवश भगवान बुद्ध के दर्शन हुए, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें सुगंधित फल (आमोदफल) भेंट किया। उस पुण्य कर्म के फल के कारण, वे दिव्य लोक में अवतरित हुए, पुण्य कर्म किए, समय-समय पर अपने जन्मों के चक्रों में विचरण करते रहे, और जब इस बुद्ध का उदय हुआ, तब वे राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर गौतम नाम प्राप्त किया। जब वह सात वर्ष का था, तब उसने उपनयन किया, रत्नों से सजे भिक्षापात्र भोजन की तलाश में भटका, एक हजार रत्न अर्जित किए, उन्हें उचित स्थान पर रखा और अपने धार्मिक अनुष्ठान का पालन करते हुए, सोलह या सत्रह वर्ष की आयु में, दुष्ट मित्रों द्वारा कामुक सुखों में लिप्त होकर, उसने एक हजार रत्नों का वह खजाना एक स्त्री को दे दिया, जो अपनी सुंदरता से जीविका कमाती थी। इस कारण उसका ब्रह्मचर्य विनाश हुआ, और उसके कारण उसे ब्रह्मचारी सौंदर्य का दर्शन हुआ। जब उसे (वुरत्तकार) दर्शन दिए गए, तो वह एक ही रात के प्रवास से ऊब गया (निब्बिन्नरूपो), उसे अपने ब्रह्मचर्य के पतन और धन की कमी का अहसास हुआ और वह पश्चाताप करते हुए बोला, "मैंने अनुचित कार्य किया है।" गुरु ने उसकी समृद्धि और मानसिक आचरण को जान लिया और उसके निकट ही उसे दर्शन दिए। गुरु को देखकर वह श्रद्धा से भर गया और उनके पास पहुंचा। भगवान ने उसे सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। उन्होंने धम्म को ध्यानपूर्वक सुना, धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बने और जब उनके बाल खुरा से मुंडवाए गए, तब उन्होंने अरहंत पद प्राप्त किया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

मैंने सुगंधित वस्तुओं की भेंट चढ़ाई

आत्मजागृत बुद्ध के लिए फल

सुनहरे रंगत वाले, योग्य प्राप्तकर्ता-

बलि चढ़ाने में विश्वास रखने वाला, प्रवेश करते हुए

रथ-मार्ग पर।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने फल का अर्पण किया। मैं करता हूँ।

किसी भी बुरी सत्ता को याद नहीं; यह

यह फलदान का फलदायी परिणाम है।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी; :P

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, एक गृहस्थ मित्र उनके पास आया, जो ध्यान के आनंद और फल प्राप्ति की खुशी में समय बिता रहा था, और उससे पूछा; "मित्र! भिक्षु बनकर, आपने रत्नों से सजे भिक्षापान (रतनभिक्खा) से जो कुछ अर्जित किया था, उसका क्या किया?" यह प्रश्न सुनकर, थेरा ने अपने मित्र को यह नहीं बताया कि उन्होंने क्या किया था, बल्कि स्त्री में दोष (दोष) (मातुगामे) प्रकट किया और कामवासना से मुक्त होकर अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करते हुए "सुखं सुपन्ति" से शुरू होने वाले दो श्लोक कहे।

137. वहाँ, सुखं सुपन्ती मुनयो, ये इत्थीसु न बज्जरे का अर्थ है: वे ऋषि, तपस्वी जो स्त्री या किसी भी विषय (विषय) या निमित्त (विशेषता) में कामवासना के बंधन से मुक्त हैं, जिनकी इंद्रियों पर पूर्ण नियंत्रण है, सुखी जीवन व्यतीत करते हैं; उनके लिए कोई कष्टदायी दुख नहीं है; यही इसका अर्थ है। वास्तव में, यह शब्द सुपन्ती (वे सोते हैं) मात्र एक संकेत है। सदावे रक्खितब्बासु का अर्थ है: जिनकी हर समय निश्चित रूप से देखभाल की जानी चाहिए। वास्तव में, स्त्री जाति के लिए विशेष रूप से निर्मित सात मंजिला आलीशान महल (निप्पुरिसे) में उन्हें रखने और उन्हें गर्भ में डालने के बाद भी उनकी देखभाल करना संभव नहीं है; इसलिए, उनकी देखभाल हमेशा उसी प्रकार की जानी चाहिए जैसे खेत में चरने वाली गायों (किट्ठा) आदि की। पति द्वारा दिए गए वस्त्रों और आभूषणों के अनेक उपहारों (अनप्पदान) के कारण उनकी अत्यधिक चिंता या चंचल मन (चित्तञ्ञथत्त) के कारण उनकी देखभाल हमेशा की जानी चाहिए। उनकी देखभाल इसलिए भी की जानी चाहिए क्योंकि उनके मन की स्थिति को शरीर की प्रकृति के अनुसार या मालाओं, इत्र आदि से उचित रूप से ढककर संरक्षित किया जाना चाहिए। यासु सच्चं सुदुल्लभं का अर्थ है: जिनमें सत्य की प्राप्ति संभव नहीं है; वास्तव में, स्त्रियाँ अग्नि में भी प्रवेश करती हैं; वे विष पीती हैं (खादन्ति); वे शस्त्र लाती हैं (सत्थं); वे स्वयं को गला घोंटकर मरती हैं (उब्बन्धित्वा); फिर भी वे सत्य पर स्थिर नहीं रह पातीं। इसलिए, इन जैसी महिलाओं से दूर रहकर स्थिर रहने वाले ऋषि निश्चित रूप से सुखी हैं; इस प्रकार, वह बताते हैं।

139. अब उन्होंने दूसरा श्लोक यह दर्शाने के लिए कहा कि उन्होंने उस कामुक इच्छा (काम) का पूर्णतः त्याग कर दिया है, जिसके कारण पुरुष स्त्री-पुरुषों के प्रति आसक्त रहते हैं। "वधं करिंह ते कामा" का अर्थ इस प्रकार है: — कामुक इच्छा! हम तुम्हारे विनाश और शाश्वत संहार के लिए श्रेष्ठ मार्ग (अरियमग्गेन) का अनुसरण करते हैं; इसका एक पाठ "वधं करिंहसे" भी है; हमने त्याग और संहार के लिए सही मार्ग (मग्गा) का अभ्यास किया; यही अर्थ है। अननादानी ते मयं का अर्थ है: अब, सर्वोत्कृष्ट मार्ग की प्राप्ति से आरंभ करके, हे कामुक इच्छा! हम तुम्हारे ऋणी नहीं हैं, क्योंकि हमने ऋण लेने का त्याग कर दिया है; इसलिए हम तुम्हारा ऋण नहीं वहन करते। वास्तव में, जो कामवासना से रहित नहीं है, वह मानो कामवासना का ऋण वहन कर रहा है; दूसरी ओर, जो कामवासना से मुक्त है, उससे परे जाकर, वह अपने मन पर पूर्ण प्रभुत्व प्राप्त कर लेता है। ऋणमुक्त होने मात्र से (अननत्ता) गच्चानादहि निब्बानं यत्थ गन्त्वा न शोचति का अर्थ है: हम जाते हैं और तदनुसार उसी निर्वाण को प्राप्त करते हैं, जिसका कोई आधार नहीं होता, जहाँ उस निर्वाण में जाने (या पहुँचने) के कारण हर तरह से चिंता के कारणों के अभाव के कारण दुख नहीं होता; यही अर्थ है।

थेरा गौतम के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(130):वसभा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।

आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (130) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
130. वासभा
बुद्ध युग में वैशाली में एक लिच्छवी राजा के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, [1] वे बुद्ध की महिमा से प्रभावित हुए जब बुद्ध वैशाली गए और उन्होंने संसार त्यागकर भिक्षु जीवन व्यतीत किया। समय आने पर उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया और उसके बाद अपने संरक्षकों के प्रति उदार रहते हुए, उन्होंने उनके द्वारा प्रदत्त आवश्यक वस्तुओं को अस्वीकार नहीं किया, बल्कि उनका आनंद लिया। सामान्य बुद्धि वाले लोग उन्हें आत्म-भोगी मानते थे, परन्तु वे उनकी परवाह नहीं करते रहे।

लेकिन उनके पास ही एक कपटी भिक्षु रहता था, जो सादगीपूर्ण जीवन जीने का दिखावा करके, कम में संतुष्ट रहकर लोगों को धोखा देता था और उनका आदर पाता था। तब देवताओं के स्वामी सक्का ने यह बात जान ली और वासभा थेरा के पास आकर पूछा, 'हे पूज्यवर, एक कपटी क्या करता है?' थेरा ने उस दुष्ट को फटकारते हुए उत्तर दिया:

[139] पुब्बे हन्ति अत्तानां पच्चा हन्ति सो पारे,॥
सुहातां हन्ति अत्तानां वितसनेव पक्खिमा॥ ॥

[140] न ब्राह्मणो बहिवाणो अन्तो वणो हि ब्राह्मणो,॥
यसुमीऽ पापनि कम्मनि स वे कान्हो सुजमपति' ति.॥ ॥

[139] उसने स्वयं ही विनाश किया;
उसके बाद उसने अन्य लोगों को भी बर्बाद किया।
वह अपने ही छल से अपने लिए सबसे अधिक हानि पहुँचाता है,
ठीक वैसे ही जैसे कोई छल-पक्षी [2] अपने छल से।

[140] वह ब्राह्मण (पुजारी) बाहरी रंग से नहीं पहचाना जाता।
भीतरी रंग से ही तुम ब्राह्मण (पुजारी) को पहचानोगे।
जिसके कर्म बुराई दर्शाते हैं, वह भी
सांवले चेहरे वाला होता है, हे सूजा की संगिनी। [3]

[1] ऊपर देखें, पृष्ठ 54, नोट 4.

[2] सी.एफ. वितंसा-कक्कारो, जाट में फंदा जंगल-मुर्गा , ii। 161.

[3] सुजमपति, सक्का को दी गई एक उपाधि, जिसकी पत्नी-देवी सुजा थी। आध्यात्मिक रंग पर, सी.एफ. दीघ-निकाय, सुत्तंतस iii., iv., और xxvii; सुत्त निपात, वसेठ-सुत्त।

2.1-10 [130] वासभत्थेरा के श्लोक पर टीका
pubbe hanati attānaṃ से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वासभा का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने बुद्धों से रहित संसार में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। वयस्क होने पर, उन्होंने ब्राह्मणों की कलाओं और विज्ञानों में निपुणता प्राप्त की, अपने संन्यासी स्वभाव के कारण गृहस्थ जीवन त्याग दिया, एक संन्यासी के रूप में विरक्त हो गए, उनके साथ चौदह हजार संन्यासियों का एक दल (परिवारो) था, और उन्होंने हिमवंत से कुछ ही दूरी पर स्थित समागगा नामक पर्वत पर अपना आश्रम बनवाया। वहाँ रहते हुए उन्हें ध्यान और उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) का ज्ञान प्राप्त हुआ और वे संन्यासियों को सलाह और मार्गदर्शन देते रहे। एक दिन उन्होंने सोचा, "सचमुच, अब तो मैं इन संन्यासियों द्वारा सम्मानित, आदरणीय और श्रद्धापूर्वक अर्पित किया जा रहा हूँ; मेरे द्वारा श्रद्धापूर्वक सम्मानित किए जाने योग्य कोई भी व्यक्ति मुझे प्राप्त नहीं हो रहा

है; वास्तव में, संसार में यह जीवन बड़ा दुख है, अर्थात् आदरणीय गुरु के बिना जीवन।" इस प्रकार विचार करने के बाद, उन्हें पूर्व बुद्धों के प्रति अपनी समर्पित सेवा के कारण पूर्व बुद्धों के मंदिरों में स्वयं द्वारा अर्पित की गई श्रद्धापूर्ण भेंट और व्यक्तिगत आदर (पूजासक्कारं) याद आया और उन्होंने मन ही मन कहा, "यदि मैं पूर्व बुद्धों को समर्पित एक रेत का मंदिर बनाऊँ और उसमें अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित करूँ तो क्या होगा?" वे प्रसन्न और संतुष्ट हो गए, अपनी जादुई शक्तियों से सोने का बना रेत का मंदिर बनाया, प्रतिदिन तीन हजार सोने के फूलों से आदरपूर्वक अर्पण किया, आदि। उन्होंने अपने जीवनकाल तक पुण्य कर्म किए, सर्वांगीण ध्यान में लीन होकर प्राण त्यागे और ब्रह्मा लोक में पुनर्जन्म लिया। वहाँ भी उन्होंने अपने जीवनकाल तक ब्रह्मा का जीवन व्यतीत किया और वहाँ से मृत्यु के बाद तावतिंसा में पुनर्जन्म लिया। बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते हुए, वे समय-समय पर वैशाली के लिच्छवी राजपरिवार में पुनर्जन्म लेकर इस बुद्ध के जन्म के समय वहाँ पहुँचे। उन्होंने वासभा नाम प्राप्त किया और वयस्क होने पर, उन्होंने बुद्ध की शक्ति को तब देखा जब भगवान बुद्ध वासाली गए थे। उन्होंने उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के मार्ग पर चले और शीघ्र ही अरहंत पद प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"हिमावंता से कुछ ही दूरी पर, एक था

समागगा नाम की एक पहाड़ी। एक आश्रम।

मेरे लिए यह अच्छी तरह से बना हुआ था, एक पत्तों से बना हॉल।

अच्छी तरह से बनाया गया।

नारदा नाम से जाना जाने वाला, मैंने पहना

मेरी गुंथी हुई बालियाँ थीं और वह एक शक्तिशाली आदमी था।

आत्म-यातना का। चौदह

हजार छात्र मेरी सेवा में उपस्थित थे।

अपनी एकांत और शांति में, तब मैं

इस प्रकार विचार किया गया।

पूरी भीड़ ने श्रद्धापूर्वक अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।

मुझे पेशकश की गई थी; मुझे ऐसा करने की आवश्यकता नहीं थी।

किसी को भी सम्मान देने की जरूरत नहीं थी। मुझे सलाह देने वाला कोई नहीं था।

मेरे कर्तव्यों का पालन करने के लिए कोई मौजूद ही नहीं था।

बिना किसी शिक्षक और गुरु के, मैं

मैंने जंगल में अपना निवास स्थान बना लिया। बैठे हुए

जिसके बारे में मैं चाहता था, उसके पास।

मैं अपने शिक्षक को अपनी सेवाएँ प्रदान करूँ;

मेरे लिए शिक्षक का कोई अस्तित्व नहीं था; मेरा जीवन

जंगल में रहने से मुझे कोई लाभ नहीं हुआ।

मैं एक योग्य प्रतिफल की तलाश में रहूंगा।

मेरी भेंट के प्रति श्रद्धावान, वैसे ही एक शिक्षक

आदरणीय होना (भवनियं); मेरे साथ

मैं शरण लूंगा; कोई नहीं

मुझे फटकारेंगे।

उथले ढलान वाले किनारों वाली छोटी नदियाँ,

उतरने के लिए अच्छी जगहें और साथ ही आनंददायक भी।

क्योंकि साफ-सुथरी शुद्ध रेत से बिखरे हुए नहीं थे

मेरे आश्रम से बहुत दूर। उस नदी की ओर जिसका नाम है

मैंने फिर अमरिका से संपर्क किया; अच्छी तरह से

मैंने रेत का ढेर लगाया और रेत का एक मंदिर बना दिया।

वे आत्मजागृत बुद्ध जो ऋषि थे,

अस्तित्व के अंत के निर्माता; इस तरह का ठोस

मैंने उनके मंदिर (थूपा) का वह चरित्र बनाया-

टेरिस्टिक (निमित्त)। रेत बनाकर

मैंने मंदिर बनाया, वह सोने का बना।

तीन हजार फूलों को श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई

सोने से बनी छोटी घंटियों के आकार की (किंकनी)

मैंने शाम और सुबह को प्यार किया, उन पर विजय प्राप्त की

मैंने श्रद्धा से अपने हाथ जोड़ लिए; जैसे कि

आत्मजागृत बुद्ध की उपस्थिति, मैं

मैंने रेत के मंदिर को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

जब भी और जिस समय भी हर प्रकार की विकृति उत्पन्न हुई।

(किलेसा) और जंगली विचार (विताक्का) con-

गृहस्थी के सांसारिक जीवन से जुड़ा हुआ, मैं

मुझे वह पैगोडा अच्छी तरह से बना हुआ याद था और वहाँ

और फिर इस पर विचार किया।

मेरे दोस्त! यह तुम्हारे लिए उचित नहीं है

कि तुम दुराचार के बीच सहवास करोगे

(किलेसा), पास में रहना (उपनिस्साय)

कारवां का नेता, स्पष्ट मार्गदर्शक

विश्व (विनायक)।

जब भी मंदिर का प्रतिबिंब दिखाई देता था

उस पर, तब मेरा सम्मान था; मैं

निश्चित रूप से दुष्ट को दूर किया (विनोदेसिं)

हाथी के बचने जैसी सोच

मार्गदर्शक अंकुश (tuttaṭṭito) की पीड़ा।

मृत्यु के राजा को विशेष रूप से रौंदा गया (अभिमद्दथा)

मैं, जो इस तरह से जी रहा था। जब मैं

मैं वहीं मर गया, मैं ब्रह्मा के लोक में चला गया।

अपनी जीवन अवधि तक जीने के बाद,

मैं तावतंस में उछल पड़ा। अस्सी बार,

मैं एक दिव्य राजा था जो दिव्य शक्तियों का प्रयोग करता था।

संप्रभुता।

तीन सौ बार भी, मैं एक विश्व बन गया-

राजा; क्षेत्रीय शासन प्रचुरता (विपुलं) में था।

संख्यात्मक रूप से अगणनीय (गणनातो असंखियां)।

मुझे इसके फलदायी परिणाम (विपाक) का आनंद मिला।

(मेरी भेंट) सोने के फूल जो इस प्रकार आकार के हैं

छोटी घंटियाँ। एक लाख धायियाँ।

(धाति) ने मुझे इस अस्तित्व में घेर रखा था।

क्योंकि मैंने हर तरह से सेवा की थी

मंदिर पर धूल और कीचड़ नहीं लगी थी।

मुझे; मेरे शरीर से पसीना नहीं निकला; मैं

वह सुंदरता से जगमगा उठा।

मेरे द्वारा स्थापित किया गया मंदिर बहुत ही शानदार था;

अमरिका नदी अच्छी तरह से पाई गई।

मैंने रेत का मंदिर बनाया। मुझे अस्तबल मिल गया।

(अकलं) पथ.

न तो कोई क्षेत्रयुक्त है और न ही क्षेत्रहीन।

(खेट्टं अखेत्तं) एक प्राणी के लिए (जंतुना)

जो नेक काम करने की इच्छा रखता है और जो

सार (सारगहिना) की खोज में प्रयास करता है; यह है

लेकिन उचित रूप से पूरा करना (साधका)

अभ्यास (पटीपत्ति)।

ठीक उसी प्रकार एक बलवान पुरुष,

पार करने का प्रयास करते हुए (उस्साना)

सागर (अन्नवम्) ने पकड़ लिया

(ādāya) एक छोटा सा टुकड़ा (parittaṃ)

लकड़ी (कट्ठं) और उछल जाएगी

आगे (पक्खान्देय्या) पार

बड़ी झील, जो इस लंच पर निर्भर करती है-

लकड़ी (कट्ठं) मैं पार जाऊँगा

बड़ा सागर (उदाधिं)। मनुष्य को चाहिए

अपने प्रयास से समुद्र पार करना और

परिश्रम।

इसी प्रकार, मेरे द्वारा किया गया यह कार्य भी

छोटा और कमज़ोर हो सकता है; निकट

उस कार्य के आधार पर, मैंने अच्छा किया।

संसार के सागर को पार करो। जब मेरा

अंतिम अस्तित्व अच्छी तरह से प्राप्त हो गया है,

मेरे उज्ज्वल आधार (सुक्कमूल) से प्रेरित होकर

मेरा जन्म सावत्थी शहर में हुआ था।

एक अत्यंत धनी और बेहद प्रतिभाशाली व्यक्ति-

छिद्रयुक्त (परिवार)।

मेरे माता-पिता अत्यंत धर्मनिष्ठ थे।

(सद्धा) और बुद्ध के पास गए थे

शरणस्थली। इन दोनों (माता-पिता) को मिल गई थी।

मार्ग से बाहर (दिट्ठपदा) निकलकर अनुसरण किया

बुद्ध के निर्देश। उन्हें प्राप्त हुए

बोधि के अंकुर (पापटिक) को पकड़ो

उन्होंने पेड़ पर सोने का मंदिर स्थापित किया।

मुझे यह शाम और सुबह दोनों समय बहुत पसंद था।

साकियान पुत्र की उपस्थिति।

सब्त के दिन, वे आदरपूर्वक

सोने का मंदिर निकाला (सोनथूपं)

विनीहारुम् ; उन्होंने तीन बिताए

रात की निगरानी करते हुए बिल्ली के बच्चे की प्रशंसा करना-

ता) बुद्ध की स्तुति (वन्नः)।

जब भी मैंने मंदिर को देखा, मुझे याद आ गया

(मेरी) रेत की वेदी। अकेले बैठकर

एक ही आसन पर बैठकर मैंने अरहंत पद प्राप्त किया।

उस हीरो की तलाश में, मैं उससे मिला

धर्म का सेनापति;

मैं अपने घरेलू जीवन से बाहर आ गया हूँ।

उनकी उपस्थिति में भिक्षु बन गया।

मेरे जन्म के सातवें वर्ष में, मैंने प्राप्त किया

अरहंत पद। बुद्ध, नेत्र धारक

(चक्खुमा) मेरे गुण को जानकर

मुझे पुरोहित पद पर नियुक्त किया गया। मेरे द्वारा, जो उस समय युवा था।

जो किया जाना चाहिए था वह पूरा हो चुका था।

आज साकियान युग में

पुत्र, जो कुछ किया जाना चाहिए था वह किया जा चुका है।

मेरे द्वारा किया।

हे तपस्वी, जो सभी शत्रुताओं से परे हो गए थे

और खतरों से पार पाकर वह सभी मोह-माया से परे चला गया था।

हे महान वीर! मैं आपका शिष्य हूँ; यह है

स्वर्ण मंदिर का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, दानदाताओं की सहानुभूतिपूर्वक रक्षा करने के लिए, उन्होंने दान के रूप में दिए गए संन्यासी के आवश्यक सामान को अस्वीकार नहीं किया; उन्होंने अपने लाभ के अनुसार उसका सेवन किया। साधारण भिक्षुओं और गृहस्थों ने यह सोचकर कि "यह व्यक्ति शारीरिक रूप से बहुत बलवान और लापरवाह है," उनका कोई आदर नहीं किया। थेरा वहाँ निवास करते रहे, लेकिन उन्होंने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। उनके पास ही एक कपटी भिक्षु रहता था, जो बुरी इच्छाओं से ग्रस्त होते हुए भी, स्वयं को कम आवश्यकताओं वाला और संतुष्ट व्यक्ति के रूप में प्रदर्शित करता था, लोगों को धोखा देता था। बहुत से लोग उसे अरहंत समझकर सम्मान देते थे। फिर, ऐसा हुआ (अस्सा), देवताओं के स्वामी सक्का को इस बात का पता चला (पवत्ति), वे थेरा के पास गए और इस प्रकार पूछा; "आदरणीय महोदय! एक कपटी व्यक्ति वास्तव में क्या करता है?" थेरा ने दो श्लोकों में बुरी इच्छा की निंदा करते हुए इस प्रकार कहा:—

139. "सबसे पहले वह आत्महत्या करता है; बाद में

वह दूसरों को मारता है। उसने खूब पैसा कमाया।

स्वयं का, शिकारी के समान

उसका छलावा पक्षी।

240. "ब्राह्मण की विशेषता बाहरी गुणों से नहीं होती है।"

वास्तव में, ब्राह्मण ही रंग है।

भीतर (antovanno)। हे सुजा के स्वामी! वह,

बुरे कर्म होते हैं।

वहाँ, pubbehanati attānaṃ का अर्थ है: एक कपटी व्यक्ति, अपने कपटपूर्ण आचरण से लोगों (लोकम्) को धोखा देते हुए, सबसे पहले बुरी इच्छाओं आदि जैसे बुरे कर्मों (धम्म) से स्वयं को नष्ट कर देता है; वह अपने अच्छे कर्मों के हिस्से को भी नष्ट कर देता है। Pacchā hanati so pare का अर्थ है: वह कपटी व्यक्ति, पहले तो उक्त विधि से स्वयं को नष्ट करके, बाद में संन्यासी की आवश्यकताओं (पच्चयविनासन) को नष्ट करके दूसरों को नष्ट कर देता है, उनके कर्मों (तेसं कारानी) को, जो उसने स्वयं किए थे, निष्फल बनाकर; वह उन्हें मार डालता है जिन्होंने या तो सम्मान के साथ कर्म किए थे या यह कहकर कि "यह भिक्षु कर्तव्यनिष्ठ (पेसालो) और श्रेष्ठ (अरियो) है।" जब कपटी व्यक्ति द्वारा दोनों प्रकार की हत्याएँ भी होती हैं, तो यह स्वयं की हत्या में विशिष्ट अंतर (विशेष) है; अतः, यह दर्शाने के लिए उन्होंने कहा; सुहतं हन्ति अत्तानं। वह छल करने वाला (कुहको), स्वयं को मारकर, प्रभावी हत्या (सुहतं) करने के बाद भी मारता और नष्ट करता है; जैसे कि? वीतं सेनेव पक्खिमा (उनका उत्तर है)। वीतंसो का अर्थ है क्षय पक्षी (दीपक सकुनो), जिसके द्वारा। पक्खिमा का अर्थ है: शिकारी (साकुनिको)। जिस प्रकार (एक शिकारी) अपने उस क्षय पक्षी के द्वारा अन्य पक्षियों को छल से मारने के बाद, इस लोक में भी स्वयं को मार डालता है, क्योंकि उसके स्वभाव आदि के कारण वह बुद्धिमानों द्वारा निंदा का पात्र होता है; परन्तु परलोक में (संपरायन), वह अपने दुष्ट अस्तित्व (दुग्गति) के सर्वांगीण दुराचार (किलेसा) के कारण स्वयं को ही मार डालता है; परन्तु परलोक में वह उन पक्षियों को नहीं मार पाता; इसी प्रकार, कुहको (शव) भी, लोगों (लोकं) को अपने छल (कोहञ्ञा) से धोखा देने के बाद, इस लोक में भी, ज्ञानी लोगों द्वारा पश्चाताप और निंदा आदि के कारण स्वयं को मार डालता है; परलोक में भी, वह दुष्ट जीवन में सर्वांगीण दुराचार (परिक्किलेसेहि) के कारण स्वयं को मार डालता है; दूसरी ओर, वह संन्यासी की आवश्यकताओं (पच्चयादायके) का दान करने वालों को नरक (अपायदुक्खा) के कष्टों तक नहीं पहुँचाता। फिर भी, छल करने वाला, समर्पित दान (दक्खिना) के लिए ऐसी स्थिति उत्पन्न करके, जिसका कोई फलदायी परिणाम नहीं होता, दानकर्ता को मार डालता है; इस प्रकार, भगवान बुद्ध ने कहा है: "बुरे नैतिक बोध वाले मनुष्य को दान देने से, समर्पित दान के हजार गुना फल की अपेक्षा की जानी चाहिए।" इसलिए उन्होंने कहा: "सुहतं हन्ती अत्तानं।"

इस प्रकार, जो व्यक्ति बाहरी रूप से सर्वांगीण शुद्ध हो चुके हैं, उन्हें शुद्ध नहीं कहा जा सकता; केवल आंतरिक शुद्धि से ही वे शुद्ध होते हैं; इसी बात को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने "न ब्राह्मणो" से शुरू होने वाला दूसरा श्लोक कहा। उस श्लोक का अर्थ है: — वह व्यक्ति केवल बाहरी समृद्धि, जैसे कि चाल-चलन (इरियापथ) और सामंजस्य (संथापन) आदि के कारण शुद्ध नहीं होता। वास्तव में, यहाँ समृद्धि (संपत्ति) के लिए प्रयुक्त शब्द वन्न है। वह व्यक्ति शुद्ध इसलिए होता है क्योंकि वह अच्छे नैतिक उपदेश आदि जैसे गुणों की आंतरिक समृद्धि से संपन्न होता है, और ऐसा करने के बाद ही शुद्ध होता है: — "बाहितपापो ब्राह्मणो (वह ब्राह्मण जिसने बुराई को दूर किया)।" अत: सूजप्पति (हे दिव्य शक्तियों के स्वामी!) आप इस प्रकार जान लें: "यस्मिं (जिसमें) पापनि कम्मानि (दुष्ट कर्म) विद्यमान हैं (संविज्जन्ति), वह निश्चय ही (एकंसेना) एक नीच (निहान) व्यक्ति है।" यह सुनकर सक्का ने उस कपटी भिक्षु को भयभीत किया और उसे सलाह देते हुए कहा: "तुम्हें धर्म (धम्म) में रहना चाहिए (वत्ताहि), और वह अपने निवास (सकट्ठाना) चला गया।

थेरा वासभा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

दूसरे खंड के पहले अध्याय पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(131): कुंडा द एल्डर

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (131) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
131. कुंडा महान
बुद्ध युग में मगध राज्य के नलका गाँव में ब्राह्मण रूपसारी के पुत्र [119] और सारिपुत्त के छोटे भाई [1] के रूप में पुनर्जन्म लेकर , उन्होंने सारिपुत्त का अनुसरण करते हुए भिक्षु संघ में प्रवेश किया और कठिन परिश्रम के बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। अपनी इस उपलब्धि का गुणगान करते हुए और एकांत जीवन में उन्होंने यह कथन (गाथा) कहा:

[141] सुस्सुसा [20] सुतवद्धनि सुतं पनन्या वद्धनां,॥ पनन्या अत्थं जानाति नातो अत्थो सुखावहो॥ ॥

[142] सेवेथा पंतानि सेनासनानी॥ कैरेया संयोजना विप्पमोक्खाँ,॥ ससे रतिओ नाधिगच्छेया तथात्॥ संगे वसे रक्खितत्तो सतिमा' ति.॥ ॥

[141] सीखने की इच्छा ज्ञान के विकास की ओर ले जाती है; सीखना [2] अंतर्दृष्टि को बढ़ाता है, और अंतर्दृष्टि से हम अच्छाई को जानते हैं; ज्ञात अच्छाई आनंद लाती है।

[142] मनुष्यों से दूर एकांत स्थानों की खोज करो। [3] बंधनों से मुक्त जीवन का अभ्यास करो। यदि वहाँ तुम अपने हृदय की इच्छा से न पहुँच सको, तो भिक्षुओं के साथ सजग और संयमित रहो।

[1] देखें सन्य., चतुर्थ. 251; श्लोक 161; कथन (गाथा), प्रथम, पृष्ठ 96. अपने भाई के साथ वह चन्ना की यात्रा करते हैं (मज्झ., तृतीय. 263; सन्य., चतुर्थ. 55)। वे नौ या दस प्रमुख थेरों में से एक थे। अंगुत्तरा निकाय में उनके तीन प्रवचन वर्णित हैं , जो भिक्षुओं को संबोधित हैं और विशेष रूप से विद्वानों और अधिक रहस्यवादी प्रवृत्ति वाले लोगों के बीच विनम्रता और पारस्परिक सहिष्णुता का उपदेश देते हैं (तृतीय. 355)।

[2] शाब्दिक रूप से, सुनना, मौखिक निर्देश और स्मरणीय रिकॉर्डिंग के युग का संकेत।

[3] भगवान (बुद्ध) की स्वयं की सलाह उसे (मज्झ., i. 46)।

2.2 दूसरा अध्याय

2.2-1 [131] महाकुंडथेरा के श्लोक पर टीका

सुस्सूसा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा महा-चुंडा का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, वे भगवान विपस्सी (बुद्ध) के समय एक कुम्हार के परिवार में पुनर्जन्म लिए। जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो वे मिट्टी के बर्तन बनाकर जीविका कमा रहे थे, तभी एक दिन संयोगवश उन्होंने गुरु के दर्शन किए, वे श्रद्धा से भर गए, उन्होंने एक विशेष रूप से सुंदर मिट्टी का कटोरा बनाया और उसे भगवान को अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने बार-बार जन्म लेकर देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और थेरा सारिपुत्त के सबसे छोटे भाई और ब्राह्मण स्त्री रूपसारी के पुत्र के रूप में मगध राज्य के नालद गाँव में पुनर्जन्म लिया, जब बुद्ध प्रकट हुए। उनका नाम चुंडा था। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने अपने बड़े भाई के धम्म के सेनापति बनने के बाद, एक भिक्षु का पद ग्रहण किया; उनके मार्गदर्शन में, उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चलते हुए, अथक परिश्रम किया और शीघ्र ही छह प्रकार के अलौकिक ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत बन गए। अतः, अपदान में कहा गया है:—

"हंसवाई नगर में मैं एक बर्तन था-

निर्माता। मैंने स्टेनलेस (विराजं) देखा।

बुद्ध, जो रोग-मुक्त थे और जिन्होंने पार कर लिया था

बाढ़ के ऊपर (ओघतिन्नम)।

मैंने एक सुंदर मिट्टी का कटोरा भेंट किया।

बुद्ध सर्वश्रेष्ठ हैं। मैंने अपना चढ़ावा चढ़ा दिया है।

उस परम पूज्य ईश्वर को कटोरे का प्रसाद अर्पित करना जो ऐसा था

एक ऋषि जो सीधे मार्ग पर चल पड़ा था, उससे मुझे लाभ हुआ।

जैसे ही मेरा किसी भी अस्तित्व में उदय हुआ, सोने की ट्रे मेरे सामने आ गईं।

चांदी, सोने और अन्य धातुओं से बनी चटाइयाँ (तट्टिके)

क्या मुझे रत्न भी मिले?

मैंने चांदी से बने बर्तनों का इस्तेमाल किया

और सोना); यह फलदायी परिणाम है।

मेरे पुण्य कर्म के कारण। मैं सर्वोपरि हो जाता हूँ।

(अग्गा) प्रतिष्ठा और धनवान पुरुषों के बीच।

जैसे किसी उपजाऊ खेत में

(खेत्ते), बीज बोया गया, भले ही वह कम मात्रा में हो,

जब मौसमी वर्षावाहक (सम्माधरं)

बारिश की बौछारें बरसती हैं, फसल को

फसल काटने (फलम्) से किसान संतुष्ट होता है।

(toseti kassakaṃ).

इसी प्रकार, यह उपयुक्त मार्ग भी

मेरे द्वारा बोया गया दान

बुद्ध का क्षेत्र, जब उत्साह का वाहक

(पीति) अपनी वर्षा बरसाता है, फलदायी

इसका परिणाम मुझे बेहद खुशी और संतुष्टि देगा।

जब तक खेत मौजूद रहेंगे, पादरी वर्ग

भिक्षुओं के साथ-साथ भिक्षुओं का समूह भी,

इस क्षेत्र के समान कोई और नहीं है

बुद्ध, सभी को सुख प्रदान करने वाले

जीवित प्राणियों।

हे सुसंस्कृत पुरुष! मेरी श्रद्धा आप पर बनी रहे।

हे परम पूज्य, मैं आपके समक्ष नतमस्तक हूँ!

बहुत बढ़िया आदमी! मैंने अपना दान दे दिया है।

एक ही कटोरे से, मैंने प्राप्त कर लिया है

अविचलित पथ (अकलं पदं)।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने एक कटोरा भेंट किया।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे कटोरे का फलदायी परिणाम है।

पेशकश।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिञ्ञा) से संपन्न अरहंत बनने के बाद, उन्होंने दो श्लोकों का उच्चारण किया ताकि वे यह बता सकें कि उनके द्वारा उचित रूप से प्राप्त समृद्धि (संपत्ति) का कारण क्या था और अपने गुरु (गरूपनिस्साय) पर उनकी निर्भरता और एकांतवास का कारण क्या था।

141. "आज्ञाकारी होने के कारण (सुस्सूसा)

इसमें वृद्धि (वढनी) हुई है

सीखना (सुता); जो कुछ भी सुना जाता है

इससे ज्ञान का विकास होता है।

एक व्यक्ति को इस मामले की जानकारी इसके माध्यम से होती है।

ज्ञान। ज्ञात विषय अधिक स्पष्ट है।

परमानंद का।

142. अपने आप को दूरस्थ रूप से संबद्ध करें

एकाकी (पंतानी) सिर और सीटें

(सेनासनानि)। व्यक्ति को एक आचरण करना चाहिए-

बंधनों से स्पष्ट स्वतंत्रता की ओर स्वयं

(सन्यजनविप्पमोक्खं)। यदि कोई न हो

वहाँ आनंद प्राप्त करने के लिए, एक

भिक्षुओं के बीच निवास करना चाहिए।

अपने आप से, देखभाल की गई और अधिकार में

जागरूकता का।"

वहाँ, सुस्सूसा का अर्थ है: पूर्ण ज्ञानी, सुनने योग्य (सोतब्बयुत्त) व्यक्ति को सुनने की इच्छा; साथ ही गुरु के साथ निवास करना। जब वास्तव में, किसी की सेवा करने से प्रसन्न होकर, अच्छे मित्रों के पास लाभकारी विषय (अत्थं) सुनने की इच्छा से जाने पर, जो तात्कालिक अस्तित्व से संबंधित (दित्तधम्मिका) आदि हैं, उनके निकट बैठने की इच्छा (उपनिसीदितुकामा) हो, तो उन्हें उनके पास बैठकर एकाग्रचित्त (ओहितसोतेन) से सुनना चाहिए। जब सुनने की इच्छा पूरी हो जाती है, तो इसे "सुस्सूसा, आज्ञाकारी" कहा गया है,

क्योंकि गुरु के साथ निवास करना भी आज्ञाकारिता का कारण है। वह आज्ञाकारिता (सुस्सुस) वास्तव में, सुतम् का श्रवण है जो श्रेष्ठ सत्यों (सच्च), आश्रित उत्पत्ति (पटिच्चसमुप्पाद) आदि से उपयुक्त रूप से जुड़ा हुआ है; उस ज्ञान (तम् सुतम्) से संपन्न व्यक्ति का ज्ञान बढ़ता और फलता-फूलता है; अतः, सुतवद्धनी; अत्यधिक ज्ञान का जनक; यही अर्थ है। Sutaṃ paññāya vaddhanaṃ का अर्थ है: वह ज्ञान (bāhusaccaṃ) जिसे "sutadharo sutasannicayo (ज्ञान का वाहक, संचित ज्ञान का भंडार)," Idh'ekaccassa bahukaṃ sutaṃ hoti suttaṃ geyyaṃ veyyākaranaṃ (यहाँ, किसी ने बहुत कुछ सुना है, सूत्रबद्ध प्रवचन (सुत्त), गद्य और पद्य का मिश्रण (गेय्या), व्याख्या (वेय्याकरण)) आदि; यह उस ज्ञान को बढ़ाता है, जो बुरे कर्मों से बचने और अच्छे कर्मों को प्राप्त करने का कारण बना है; इस प्रकार, जो सुना गया है (sutaṃ) वह ज्ञान के विकास का आधार है; वास्तव में, यह भगवान बुद्ध द्वारा कहा गया है।

"सुतावुधो खो भिक्खवे अरियासावको

अकुशलं पजहति, कुसलं भवेति,

सवज्जं पजहति, अनवज्जं भवेति,

सुद्धमत्तनं परिहारति (हे भिक्षुओं!

वह महान शिष्य, वास्तव में, अपने साथ

सुनी गई बातों का हथियार (सुतावुधो)

बुरे कर्मों को त्यागता है, अच्छे कर्मों को विकसित करता है

कर्मों से बचता है, पापपूर्ण कृत्यों से दूर रहता है, पाप से दूर रहता है।

वह कम कर्म करता है और अपने शुद्ध स्वरूप पर ध्यान देता है।

पञ्ञाय अत्थं जानाति का अर्थ है: वह विद्वान व्यक्ति, जो सुनी हुई बातों से प्राप्त ज्ञान में स्थापित है, सुनी हुई बातों के अनुसार उचित प्राप्ति (पटिपत्तिं) की ओर अग्रसर होता है (सुतानुसारण), अर्थ की खोज (अत्तूपपरिक्खाय) करता है, सत्य की समझ (धम्मनिज्जानेन) के विकास (भावनाय) के माध्यम से तर्कसंगत रूप से जानता (पञ्ञाति) और सत्य (यथाभूतं) के अनुसार अर्थ (अत्थं) में प्रवेश करता है (पटिविज्जति), सांसारिक (लोकीय) और उदात्त (लोकउत्तर) में वर्गीकरण (भेदं), और वस्तुओं के दृश्य क्रम (दित्तधम्म) में वितरण (विभागं)। इत्यादि, साथ ही इस प्रकार का विवरण (विभागा) भी दुख (दुक्खा) के रूप में; इसलिए भगवान ने कहा:

"सुतस्स (यथा परियत्तस्स) अत्तमन्नया

धम्ममन्याय धम्मनुधम्मप्पतिपन्नो बोति

(एक विद्वान व्यक्ति को (जैसा कि उसके पास है)

(रटकर याद किया हुआ) उचित अभ्यास है

धर्म का (पटिपन्न)

सत्य (धन्ना) के अनुसार

वह अर्थ समझ गया था (अञ्ञाय)

(अत्था) और समझा (अञ्ञाय)

सत्य (धम्म) “धतानं धम्मनं अत्थं

उपपरिक्खति, अत्थं उपपरिक्खति धम्म

निज्जानं खमन्ति; धम्मनिज्झाणक्खन्तिया

सति चंदो जयति; चंदजातो उस्सहाति;

उसहित्वा तुलेटी; तुलयित्वा पदहति;

पहितत्तो समानो कायेन सीएव परमसच्चं

sacchikaroti; पनन्या कैनं अतिविज्झा

passatīti ca (वह अर्थ की जांच करता है)

उन शिक्षाओं (धम्म) का जो वह जानता था

सुनवाई के माध्यम से; उनकी परीक्षा के परिणामस्वरूप

अर्थ के संदर्भ में, उसे आनंद मिलता है।

जब वह प्रसन्न होता है (धर्म की शिक्षाएँ);

शिक्षाओं के साथ (धम्मनिज्जानक्खंतिया)

सती होने पर, चंदा (इच्छा) उत्पन्न होती है; जब

इच्छा उत्पन्न हुई तो उसने प्रयास किया;

प्रयास करने के बाद, वह वजन करता है;

वजन करने के बाद वह प्रयास करता है; उसके बनने पर

आत्म-प्रयास से प्रेरित होकर, वह परम सत्य की कल्पना करता है।

लेकिन उसके शरीर से भी; वह इसे देखता है

अपनी बुद्धिमत्ता के माध्यम से अत्यधिक अंतर्दृष्टि प्राप्त करना।

Ñāto attho sukhāvaho का अर्थ है: ऐसा अर्थ जो प्रत्यक्ष व्यवस्था (दित्तधम्मिका) आदि से संबंधित हो, साथ ही ऐसा अर्थ जो पीड़ादायक कष्ट (दुक्खा) से शुरू होता हो, जैसा कि कहा गया है, अनियमित रूप से (यावतावतो) समझा और प्राप्त किया जाता है, जिससे सांसारिक और पारलौकिक (लोकीयलोकोत्तरभेदोम्) सुख प्राप्त होता है; यही अर्थ है।

यह स्थापित विकास ज्ञान (भावनापञ्ञाय) के माध्यम से मात्र सुनने मात्र से उचित रूप से सिद्ध (सिज्जति) नहीं होता; इसलिए, इसके लिए क्रियाविधि (पटिपज्जनाविधिं) दर्शाने के लिए उन्होंने कहा: “सेवेथा ... विप्पमोक्खं।” यहाँ, सेवेथा पंतनि सेनासनानी शारीरिक एकांतवास को दर्शाता है। यहाँ, अच्छे सामान्य उपदेश आदि जैसे आत्म-संयम को उनके सहज ज्ञान के रूप में, या स्पष्ट रूप से अभिभाषित किए बिना ही सिद्ध होने के रूप में (अवत्तसिद्धा), एकांतवास (विवेकवास) में रहने के रूप में समझा जाना चाहिए, जो बंधनों

(संयोजन-प्पहन) को त्यागने की अवस्था (वक्खमनता) के कारण एकांतवास के योग्य भी है। Cureyya saṃyojanavippamokkhaṃ का अर्थ है: जिस प्रकार मन बंधनों (saṃyojana) से स्पष्ट रूप से मुक्त (vippamuccati) हो जाता है, उसी प्रकार व्यक्ति को आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (vipassanā bhāvanaṃ) के विकास और मार्ग के प्रचार (magggabhāvanaṃ) का उचित आचरण और अभ्यास (paṭipajjeyya) करना चाहिए; यही इसका अर्थ है। Sace retiṃ nādhigaccheyya tattha का अर्थ है: - यदि प्रथम और अंत में (pubbenāparaṃ) विशिष्टता (visesa) प्राप्त न करने के कारण विशेष आनंद (abhiratiṃ) प्राप्त न हुआ हो, तो उन दूरस्थ मठों में प्राप्त आनंद, साथ ही 'उच्च धार्मिकता की वस्तुओं' (adhikusala-dhammesu) में भी आनंद प्राप्त होता है; saṃghe का अर्थ है भिक्षुओं का समूह; रक्खितत्तो का अर्थ है: मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) में निपुणता (परिगणहना) के कारण छह इंद्रियों पर सजग रहना (रक्खितचित्तो); सतिमा वसेय्या का अर्थ है: सजग जागरूकता (सतिआरक्खाय) द्वारा संचालित (उपठपानेन) होकर जीवन व्यतीत करना (विहारेय्य); इस प्रकार जीवन व्यतीत करने वाले को बंधनों (संयोजना) से पूर्ण स्वतंत्रता (विप्पमोक्खो) प्राप्त हो सकती है; यही इसका महत्व है।

थेरा महा-चुंडा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(132):जोतिदास

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (132) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
132. ज्योतिदास
बुद्ध युग में, पाडियात्था देश में एक धनी ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम ज्योतिदास रखा गया। [1] वयस्क होने पर, एक दिन उन्होंने महान कश्यप को भिक्षा मांगते हुए देखा और उन्हें अपने घर में आमंत्रित किया तथा उनका प्रवचन सुना। गाँव के पास की पहाड़ी पर उन्होंने स्वयं थेरा के लिए एक विशाल विहार (मठ) बनवाया और उन्हें चारों आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं। इसके बाद थेरा की शिक्षाओं से प्रेरित होकर उन्होंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण किया) और कुछ ही समय बाद उन्होंने छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त कर ली। दस वर्षों के बाद, जिसके दौरान उन्होंने [120] तीनों पिटकों का अध्ययन किया, विशेष रूप से विनय-पिटक में निपुणता प्राप्त की, [2] और भिक्षु समुदाय की सेवा की, वे कई भिक्षुओं के साथ श्रावस्ती में परम पूज्य (बुद्ध) को प्रणाम करने के लिए निकल पड़े। रास्ते में वे एक धर्मशास्त्री के उद्यान में प्रवेश कर गए, और एक ब्राह्मण (पुजारी) को पंच प्रकार की तपस्या करते हुए देखकर, [3] उन्होंने पूछा: 'हे ब्राह्मण (पुजारी), आप किसी अन्य प्रकार की ऊष्मा से क्यों नहीं जलते?' ब्राह्मण (पुजारी) नाराज होकर बोला: 'गुरुजी, मुंडा हुआ भिक्षु (मुंडक), और कौन सी ऊष्मा है?' थेरा ने उत्तर दिया:

क्रोध, ईर्ष्या, और सभी क्रूर कर्म,
और अभिमान, और अहंकार, और व्यर्थ का झगड़ा,
लालसा, और अज्ञान, और जीवन की लालसा:
ये सब जलकर भस्म हो जाएं और तुम्हारा शरीर शांत हो जाए! [4]

और उसके बाद उन्होंने उन्हें धम्म का मार्ग सिखाया। और उन सभी धर्मशास्त्रियों ने उनसे भिक्षु बनने की दीक्षा देने का आग्रह किया।

सावत्थी छोड़ने के बाद वह अपने पूर्व घर गया और अपने रिश्तेदारों को इन छंदों में संबोधित किया:

[143] ये खो ते वेघमिस्सेना ननत्थेना च कम्मुना॥
मनुस्से उपरुन्धन्ति फरुसुपक्कमा जना,॥
तेपि तत्थेव किरण्ति नहि कम्मं पनस्सति॥ ॥

[144] यं करोति नरो नम्मौ कल्याणं यदि पापकौ,॥
तस्स तस्सेवदायदो यं यं कम्मं पकुब्बति' ति.॥ ॥

[143] वे जो कई तरीकों से बल
और हिंसा के कृत्यों द्वारा, [5] असभ्य और कठोर व्यवहार वाले लोग,
अपने साथी प्राणियों को चोट पहुँचाते हैं,
इससे वे स्वयं भी पराजित हो जाते हैं, [6] क्योंकि कर्म का परिणाम कभी व्यर्थ नहीं जाता।

[144] मनुष्य ने जो कर्म किया, चाहे वह अच्छा हो या बुरा,
उसके सभी कर्मों का वही उत्तराधिकारी है।

[1] महा-कसेपा राजगृह (सीसीएलएक्सआई) के पास रहते थे, लेकिन अन्य ग्रंथों में न तो जोतिदास और न ही पादियत्थ-जन्नपदा का उल्लेख मिलता है।

[2] देखें पुन्णा, जिन्होंने इन्हें पिछले जन्म में सीखा था (सिस्टर्स, पृ. 116; ऊपर पुनः, LXV)। हम टीकाकार के कथन की विश्वसनीयता को इतना मान सकते हैं कि संस्थापक के लंबे कार्यकाल के दौरान सिद्धांतों का एक त्रिविध समूह आकार ले रहा होगा।

[3] यानी, चार आगों से घिरा हुआ, ऊपर से सूरज की तेज धूप पड़ रही है।

[4] मैंने इन रेखाओं का पता नहीं लगाया है।

[5] वेघामिस्सेना, आदि शब्द पर (तुलना करें संवाद, ii. 107, n. 3), टिप्पणी में है: 'लगाम, पट्टा, आदि द्वारा सिर खींचना, आदि; हाथ, पैर, आदि से दिए गए प्रहार।'

[6] किरंति। डॉ. न्यूमैन ने साईं, बोना, जैसे बीज बिखेरना, प्रयोग किया है। टीका में इस प्रकार के किसी भी रूपक को अनदेखा किया गया है और लिखा है: जैसे उन्होंने दूसरों के लिए कष्ट उत्पन्न किया है, वैसे ही दूसरों द्वारा उन्हें भी कष्ट सहना पड़ता है - तथ'एव अञ्ञेहि किरियंति दुक्खाम् पापीयंति। श्लोक 598 में अभिकीरंति देखें ।

2.2-2 [132] ज्योतिदासत्थेरा के श्लोक पर टीका
ये खो ते से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा ज्योतिदास का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने भगवान सिख (बुद्ध) के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्होंने गुरु को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें कासुमारिका फल भेंट किया। इस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म-जन्मांतर का भ्रमण किया और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे पदियात्था जिले के एक धनी ब्राह्मण परिवार के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम ज्योतिदास था। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए, एक दिन उन्होंने अपने ही गाँव में थेरा महाकस्सपा को भिक्षा मांगते हुए देखा। वे धर्मपरायण हो गए, उन्होंने थेरा का भोज कराया, उनके समक्ष धर्म की शिक्षा सुनी, अपने गाँव के निकट एक पहाड़ी पर एक विशाल मठ बनवाया, थेरा को वहाँ निवास कराया, उनकी चार आवश्यक वस्तुओं से सेवा की, थेरा द्वारा दिए गए धर्म के उपदेश से उचित पश्चाताप प्राप्त किया, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने का कर्म किया और छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बन गए। ऐसा अपदान में कहा गया है।

"मैंने स्टेनलेस (विराजं) बुद्ध को देखा,

पुरुषों में सबसे वृद्ध (लोकजेठं)

पुरुषों में श्रेष्ठ, तेजस्वी (जोतन्)

कनिकारा फूल के समान, जो बैठा हुआ था

पहाड़ों के बीच (pabbatantare).

मैं धार्मिक भाव से भर गया और प्रसन्न हो गया।

मैंने अपने जुड़े हुए हाथों को अपने ऊपर टिका दिया था

मैंने कासुमारिका फल एकत्र किए और

इसे परम श्रेष्ठ बुद्ध को अर्पित किया।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने फल का चढ़ावा चढ़ाया;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह फल का फलदायी परिणाम है

पेशकश।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बनने के बाद, उन्होंने तीन पिटकों का अध्ययन शुरू किया, विशेष रूप से विनय पिटक में अत्यंत निपुणता (विशेषातो) प्राप्त की, दस वर्ष की आयु में सर्वगुण संपन्न भिक्षु (परिसुपत्थाको) बन गए और कई भिक्षुओं के साथ भगवान बुद्ध को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए सावत्थी की ओर प्रस्थान किया; वहाँ जाते समय (अंतरामग्ग) वे विधर्मियों के आश्रम (आरामम्) में प्रवेश कर गए, ताकि यात्रा की थकान दूर कर सकें (विनोदन), एक तरफ बैठ गए, वहाँ उन्होंने एक ब्राह्मण को पंच धार्मिक तपस्या करते देखा और कहा, "हे ब्राह्मण! जब दूसरा चमक रहा है (तपनीयो), तो दूसरा क्यों चमक रहा है?" यह सुनकर ब्राह्मण क्रोधित हो गया और बोला, "हे गंजे! दूसरा क्यों चमक रहा है?" थेरा ने एक श्लोक के माध्यम से उन्हें सत्य (धम्म) समझाया, इस प्रकार:

क्रोध, दुर्भावना और दूसरों को परेशान करना,

अभिमान, झगड़ा, पागलपन (सारम्भमदो)

और लापरवाही, लालसा (तन्हा), अविज्जा

(अज्ञान) और अस्तित्व का संघ (संगति)

इसलिए, उन्हें जलाया जाना चाहिए (तप्पनाया);

वास्तव में, भौतिक समुच्चय नहीं।

(रूपखंडो)।"

उनकी बात सुनकर वह ब्राह्मण और उस आश्रम के सभी विधर्मी थेरा के समक्ष भिक्षु बन गए। थेरा उनके साथ सावत्थी गए, भगवान बुद्ध को प्रणाम किया, कुछ दिन वहाँ रहे (कटिपाहं) और फिर अपने जन्मस्थान (जातिभूमिं) लौट गए। उन्होंने अपने उन रिश्तेदारों को, जो उनसे मिलने आए थे, जो पारंपरिक यज्ञों से जुड़े थे (यज्ञसुद्धिक), और अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त करने वाले थे (नानालद्धिक), दो श्लोक सुनाए:

143. "वे जीवित प्राणी जो हमला करते हैं

निर्दयतापूर्वक (फरुसुपक्कमा) टूटना

(उपरुन्धन्ति) मनुष्य, जो

इसमें अन्य जीव शामिल हैं, जिनके साथ

मिक्स्ड रैप (वेथामिसेना) और साथ

कई तरह के कार्यक्रम, वे भी

उसी परिस्थिति में प्राप्त करें

प्रतिशोध (कीरन्ती); वास्तव में, एक

क्रिया गायब नहीं होती (पहले)

प्रतिक्रिया अवश्य होती है।

244. "मनुष्य जो भी कार्य करे, चाहे

अच्छा हो या बुरा; उसकी विरासत तो बस यही है।

उस प्रकार का, और वह कौन सा कार्य करता है

प्रदर्शन किया गया है" ।

यहाँ, 'ये' का अर्थ है: अनिश्चित संकेत (अनियमाउद्देसो)। 'ते' किसी विषय पर वापस आने का संकेत है (पटिनिद्देसो), लेकिन अनिश्चित (अनियमातो) से। इस शब्द "जना" से दोनों शब्दों का संबंध भी स्थापित होता है। 'खो' का अर्थ है केवल अविकारी कण (निपाता)। वेथेमिस्सेना का अर्थ है: सिर पर चमड़े की पट्टी से लपेटना (वेथादानेना) आदि। एक ऐसा पाठ भी है जिसे "वेदामिस्सेना" कहा जाता है; इसका अर्थ भी यही है। नानात्तेन च कम्मुना का अर्थ है: दूसरों को चोट पहुँचाने के विभिन्न प्रकार के कार्य जैसे प्रहार करना, वध करना, हाथ-पैर काटना, छोटे पत्थरों से मारना आदि (खुद्दकसेल्डाना दिना)। मनुस्से का अर्थ है मात्र संकेत (निदासनमत्त); अतः, जो भी सजीव प्राणी हैं; यही इसका अर्थ है। उपरुम्धंति का अर्थ है: वे हानि पहुँचाते हैं (विबाधेन्ति)। फरुसूपक्कम का अर्थ है: क्रूर (दारुन) कर्म (पयोग), रक्तरंजित (कुरूर) व्यवसाय (कम्मंत); यही इसका अर्थ है। जना का अर्थ है: सजीव प्राणी। तेपि तत्त्वेवा कारंति का अर्थ है उक्त श्रेणियों के व्यक्तियों ने दूसरों को अन्यायपूर्ण कर्मों से चोट पहुँचाई। चाहे उनका चरित्र कैसा भी हो; tattheva का अर्थ है: उन्हीं कर्मों में वे स्वयं भी (पीड़ा भोगते हैं) (Kīranti) और त्यागे जाते हैं (pakkhipiyanti); वे उसी रूप में (tathārūpaṃ) कष्ट भोगते हैं; यही अर्थ है। एक अन्य पाठ "Tath'eva kīranti" भी है; जिस प्रकार उन्होंने स्वयं दूसरों को कष्ट दिया, उसी प्रकार वे भी दूसरों द्वारा (पीड़ा भोगते हैं); उन्हें कष्टदायी बनाया जाता है; यही अर्थ है। क्यों? Na hi kammaṃ panassati का अर्थ है: वास्तव में, कर्म निश्चित और स्पष्ट (ekanta) संरक्षित (upacitaṃ) परिणाम (vipākaṃ) दिए बिना नहीं लुप्त होता; शेष (avasesa) कारण (passaya) का संयोजन (samavāya) उसके परिणाम (vipaccate va) को उत्पन्न करता है; यही अर्थ है।

अब, संक्षेप में (संखेपतो) वर्गीकृत (विभजित्वा) करते हुए, जो केवल कहा गया है (वुत्तमत्तं): “न हि कम्मं पणस्सति,” उन्होंने “यं करोति” से शुरू करते हुए एक श्लोक कहा, ताकि जीवों के कर्मों की अवस्था (कम्मसकतं) को स्पष्ट किया जा सके। इसका अर्थ है-- यं कम्मं कल्याणं का अर्थ है: अच्छा कर्म; यदि वा पापकं का अर्थ है: बुरा कर्म; करोति का अर्थ है जीव द्वारा किया गया कर्म; और कर्म करते समय भी, यं कम्मं का अर्थ है: फलदायी फल देने की क्षमता के अनुसार, उसी प्रकार वह फल अर्जित करता है। तस्स'एव दयादो का अर्थ है: वह इस और उस कर्म के फल (फल) को ग्रहण करने के कारण, इस और उस कर्म के फल (फल) से प्राप्त होने वाले परिणाम (विपाक) का भागीदार (भागी) है; यही इसका अर्थ है। अतः भगवान बुद्ध ने कहा: “कम्मसका मानवे सत्ता कम्मदायादा (हे युवक! जीव अपने कर्म के स्वामी (कम्मसका) और अपने कर्म के परिणामों (दयादा) के उत्तराधिकारी (दायादा) होते हैं” इत्यादि। इन श्लोकों को सुनकर थेरा के सगे-संबंधी अपने कर्म और प्रतिफल (कम्मसकाता) में विश्वास करने लगे।

थेरा ज्योतिदास के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(133):हेरनाकनि

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (133) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
133. हेराञ्ञकनी
बुद्ध युग में कोसल के राजा के मुख्य किरायेदार और डाकुओं के सरदार के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, [1] उन्होंने अपने पिता की मृत्यु के बाद उनका पद ग्रहण किया। बुद्ध को जेतवन ग्रहण करते देख उन्होंने सोतापना (निर्वाण का पहला ध्यान/समाधि) प्राप्त किया, अपने छोटे भाई को उनकी जगह पर बिठाया, संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण किया), और शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इसके बाद उन्होंने अपने भाई को बेहतर जीवन की ओर मोड़ने का प्रयास किया, और उसे इससे आसक्त देखकर, इन श्लोकों में उसे प्रेरित किया:

[145] अचयन्ति अहोरात्ता जीविताउ उपरुज्जति,॥
अयु खीयति मक्कणं कुन्नदीनं वा ओदकं॥ ॥

[146] अथ पापानि कम्मानि करौ बालो न बुझति,॥
पच्चस्सा कतुकां होति विपाको हिसा पापाको' ती॥ ॥

[145] दिन, रातें बीतती जाती हैं। जीवन रुक जाता है, और मनुष्यों को दिया गया
समय समाप्त हो जाता है और विफल हो जाता है, जैसे उथली पहाड़ी धाराओं में पानी।

[146] लेकिन मूर्ख अभी भी बुरे कर्म करता है,
और उसे पता नहीं चलता कि परिणाम कितना भयानक होगा,
जब तक कि कर्म के फल का कड़वा समय नहीं आ जाता।

थेरा का प्रवचन सुनकर, भाई ने राजा से अनुमति मांगी और संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया) तथा कुछ ही समय बाद मोक्ष प्राप्त कर लिया।

डकैत। ये लुटेरों के गिरोह थे जो धनी लोगों की जागीरों और कस्बों को लूटने और जलाने में माहिर थे। ये हमेशा किसी शक्तिशाली व्यक्ति से संरक्षण प्राप्त करते थे, उसकी सेवा करते थे और उसके आस-पास ही रहते थे।

[1] कोरा-वोसासाको, जिसके अधिकार क्षेत्र में लुटेरे या डाकू हों, चाहे उन्हें काम पर रखना हो या दबाना हो, यह संदिग्ध है।

2.2-3 [133] हेराञ्ञकनित्तेरा के श्लोक पर टीका

अचयंति अहोरात्ता से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा हेराञ्ञकानी का है। इसका उद्‌गम क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय हंसवती नगर में एक पारिवारिक घर में हुआ था। बुद्धि प्राप्त करने के बाद, वे अन्य लोगों के यहाँ काम करने वाले एक नौकर के रूप में अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे, तभी एक दिन उन्होंने अपने शिष्य सुजाता को, जो अपने वस्त्र की तलाश में कूड़े के ढेर में भटक रहा था, अपने आधे वस्त्र (उपढदुस्सा) का उपार्जन (परिच्चाजी) कर दिया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे तावतिंस स्वर्ग में दिव्य प्राणियों के बीच प्रकट हुए, और देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते हुए, जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे राजा कोसल के ग्राम प्रधान के चोर-जल्लाद (कोरवोसासक) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम हेराञ्चकानी था। अपने पिता के देहांत के बाद, जब वे वयस्क हुए, तो राजा ने उन्हें उसी ग्राम प्रधान के पद पर नियुक्त किया, और जेतवन ग्रहण समारोह में बुद्ध की शक्ति को देखकर, उन्होंने उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, अपना वह पद (थानंतरा) अपने सबसे छोटे भाई को दे दिया, राजा से अनुमति लेकर भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े और कुछ ही समय में अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—-

"परमेश्वर का एक शिष्य"

पदुमुतार, जिसका नाम सुजाता है, में है

फटे-पुराने कपड़ों के लिए सामग्री की खोज-

फिर भटक गया (पंसुकूल)।

कूड़े-कचरे (संकार) के बीच में।

हंसवती नगर में, मैं एक था

किसी अन्य व्यक्ति का किराए का नौकर।

मैंने अपने ऊपरी वस्त्र का आधा हिस्सा पेश किया

(उपद्ददुस्सा), मैंने अपना सम्मान व्यक्त किया

मेरा सिर। उस कृत्य के कारण,

बहुत बढ़िया, और मेरी इच्छा से।

(चेतना) और संकल्प (पनिधीहि),

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया और चला गया

तावतिंसा.

तैंतीस बार मैं दिव्य था

संप्रभु, और दैवीय संप्रभुता का प्रयोग किया-

इक्यावनता। सत्तरह बार भी,

मैं विश्व का राजा था।

क्षेत्रीय शासन मेरे लिए प्रचुर मात्रा में था।

संख्यात्मक रूप से इसकी गणना करना असंभव था।

मेरे द्वारा आधी राशि की पेशकश के कारण

मुझे अपने ऊपरी वस्त्र से खुश रहना होगा।

खतरे से मुक्त।

आज, मैं अपनी इच्छा व्यक्त कर रहा हूँ कि मैं इसे पूरा कर सकूँ।

(मैं) जंगलों और पहाड़ियों के साथ

लिनेन के कपड़े के साथ; यह फलदायी है

(मेरी भेंट का) आधा (मेरा) ऊपरी भाग

वस्त्र।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने दान देने की पेशकश की थी।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

(आधे ऊपरी भाग की भेंट चढ़ाना)

वस्त्र।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंतसिप प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने सबसे छोटे भाई को समझाने के लिए दो श्लोक बोले, क्योंकि वे अपने सबसे छोटे भाई को उस कार्य (अपने कर्तव्य) से पीछे हटने के लिए प्रेरित करना चाहते थे, जब उन्होंने देखा कि उनका भाई उसी कार्य में विशेष रूप से आनंदित था।

145. "दिन-रात वे बीतते हैं; जीवन

समाप्ति की ओर जाता है। जीवनकाल

मनुष्यों का अंत भी इसी तरह होता है

छोटी धाराओं के पानी की ओर।

146. “इस बीच, एक मूर्ख व्यक्ति,

बुरे कर्म करते हुए भी उसे इसका एहसास नहीं होता।

(उनका परिणाम)। बाद में, यह बन जाता है

उसके लिए कड़वा (कटुका); वास्तव में, बुरा

यह इसका परिणाम है।

वहाँ, accayaṃ का अर्थ है: वे आगे बढ़ते हैं; हल्के और फुर्ती से वे चले जाते हैं; यही अर्थ है। Ahorattā का अर्थ है: रात और दिन (rattindivā)। Jīvitaṃ uparujjhati का अर्थ है; जीवन की नियंत्रक शक्ति (jāvitindriyaṃ) भी क्षणिक रूप से समाप्त हो जाती है (nurujjhati)। वास्तव में, यह कहा गया है, “हे भिक्षु! पल-पल तुम जन्म लेते हो, वृद्ध होते हो, मरते हो और फिर से जन्म लेते हो (upapajjati ca) ।” Āyu Khīyati maccānaṃ का अर्थ है: मृत्यु के योग्य होने की प्रकृति की अवस्था; maccā (नश्वर); इस प्रकार, इन जीवों के प्राप्त नाम (nāmāni) हैं: āyu का अर्थ है; “जो भी दीर्घायु होता है, वह या तो सौ वर्ष से कम या उससे अधिक जीता है,” इस प्रकार, इस तरह, अधिकतम जीवन की एक सीमित अवधि (परिच्छिन्नकालपरमायु) होती है; खीयति का अर्थ है: यह विलुप्त होने के साथ-साथ पूर्ण पतन (संभेद) की ओर भी जाता है। किस प्रकार? कुन्नदीनं व ओदकं का अर्थ है: जैसे, पहाड़ियों से निकलने वाली छोटी धाराओं और नदियों का जल अधिक समय तक नहीं रहता, बल्कि सूख जाता है (खीयति) और शीघ्र ही विलुप्त हो जाता है (लाहुतरं); यहाँ, उदक शब्द को “ओदक (जल)” कहा गया है, उसी प्रकार जैसे मनो को मनसं (मन) कहा गया है।

अथा पापानि कम्मानि, कोरं बालो न बुझति का अर्थ है: यद्यपि वह अपने बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (संसार) में इस प्रकार अनित्य है, फिर भी एक मूर्ख व्यक्ति, लोभ या क्रोध के प्रभाव में आकर, बुरे कर्म करता है; ऐसा करते हुए भी, वह (उसके फल) को नहीं जानता; बुराई करने में भी, अज्ञान के कारण ऐसा कुछ नहीं होता कि वह कहे, “मैं बुरा कर्म करता हूँ।” “न बुझति (वह नहीं जानता)” का अर्थ है: अज्ञान के कारण, वह इस प्रकार कहता है: “इस कर्म का ऐसा फल है, एक भयानक पीड़ा (दुक्खो);” इस प्रकार कहा गया है। पच्छा'स कटुकं होति का अर्थ है: बुरे कर्म करने के प्रयास के क्षण में भी, वह यह नहीं जानता कि “इस कर्म का यह फल है।” इसके बाद, आगे चलकर, उस मूर्ख व्यक्ति के लिए अवांछनीय दुख (दुक्खा) ही रह जाता है, जो निरयण में फंस गया है, इत्यादि। विपाको हि'स्स पापको का अर्थ है: क्योंकि उस बुरे कर्म का परिणाम केवल बुरा, नीच और अवांछनीय ही है। यह सलाह सुनकर, थेरा के सबसे छोटे भाई ने राजा से अनुमति लेकर भिक्षु बन गए और जल्द ही अपना उद्देश्य पूरा कर लिया।

थेरा हेराञ्ञकानी के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(134):सोमामित्त

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (134) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
134. सोमामित्ता

बुद्ध युग में बनारस में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर सोममित्त नाम से जन्मे, वे तीनों वेदों के ज्ञाता बन गए, लेकिन थेरा विमला [1] द्वारा सोतापाण (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त कर भिक्षु बन गए। वे थेरा के निकट रहकर उनके कर्तव्यों का पालन करते थे। परन्तु थेरा आलस्य और सुस्ती में लिप्त थे। सोममित्त ने यह सोचकर कि 'आलसी के पास कौन सद्गुणी हो सकता है?' महान कश्यप [2] के पास जाकर उनके प्रवचनों में भाग लिया और अंतर्दृष्टि प्राप्त की, और शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इस पर उन्होंने विमला को इन श्लोकों में फटकारा:

[147] परित्तं दारुमारूय यथा सीदे महानवे,॥
एवं कुसीतमगम्मा साधुजीवि पि सीदति,॥
तस्मा तं परिवज्जेया नुसितां हिनाविरियौ॥ ॥

[148] पविवित्तेहि अरियहि पहितत्तेहि झायिहि,॥
निच्चैऽ अरद्धविरियेहि पण्डितेहि सहावसेऽ ति.॥ ॥

[147] जैसे कोई व्यक्ति एक छोटे तख्ते पर चढ़कर
समुद्र के बीच में लहरों के नीचे चला जाता है,
वैसे ही निर्दोष जीवन वाला भी डूब जाता है,
जब उसे आलसी व्यक्ति के साथ फेंक दिया जाता है;
इसलिए ऐसे व्यक्ति से
आलसी और ऊर्जाहीन व्यक्ति को अच्छी तरह से अलग रखो।

[148] तुम उनके साथ रहो जो एकांत में रहते हैं,
बुद्धिमानों के साथ, उन महान लोगों के साथ जिन्होंने त्याग कर दिया है,
जो हमेशा तल्लीन ध्यान में प्रयास करते हैं। [3]

उनकी बात सुनकर थेरा विमला अत्यंत भावुक हो गए और अंतर्दृष्टि प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त करने के लिए स्वयं को प्रेरित किया, जिसे वे भविष्य में प्राप्त करते हुए दिखाई देंगे।

[1] सीएलएक्सएक्सवी की विमला की तुलना करें , जो बनारस की भी थीं।

[2] अर्थात्, राजगृह (सीसीएलएक्सआई) को।

[3] सीएलXXXV में दोहराया गया।

2.2-4 [134] सोममित्तथेरा के श्लोक पर टीका
परित्तं दारुं से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा सोममित्त का है। इसका उद्गम क्या है? यह भी, पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, भगवान सिख धर्म के समय एक परिवार में पुनर्जन्म लिया। बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने बुद्ध के गुणों के बारे में सुना, धर्मपरायण हो गए, एक दिन संयोगवश किंशुक वृक्ष को फूलों से लदा देखा, उसके फूल एकत्र किए और उन्हें गुरु को समर्पित करते हुए आकाश में प्रज्वलित किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और बनारस में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब यह बुद्ध प्रकट हुए; उन्होंने सोममित्त नाम प्राप्त किया, तीनों वेदों में निपुण हुए, विमला नामक एक थेरा से परिचित हुए, जिनकी उपस्थिति में वे निरंतर जाते थे, थेरा की शिक्षा (धम्म) सुनी, शासन में अपनी सुखद आस्था (शासन) प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और पूर्ण रूप से सोममित्त ने पूर्ण दीक्षा प्राप्त कर ली और अपने सामान्य एवं पारस्परिक कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए विचरण करने लगे। दूसरी ओर, थेरा विमला दिन-रात आलस्य और अत्यधिक नींद में व्यतीत करते रहे। वे मन ही मन कहते थे, "एक आलसी व्यक्ति पर निर्भर रहने का क्या लाभ (गुण) है?" सोममित्त ने उस थेरा का त्याग कर थेरा महाकस्सपा के पास गए, जिनकी सलाह का उन्होंने पालन किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े और अर्हंत पद प्राप्त कर लिया, लेकिन कुछ ही समय बाद। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

किंसुका वृक्ष को खिलते हुए देखकर

मैंने अपने जुड़े हुए हाथों को ऊपर उठाया;

मुझे बुद्ध की याद आई, सबसे अच्छे, मैंने विशेष बनाया

आकाश में श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

उस कार्य के सफल निष्पादन के कारण,

मैंने अपनी इच्छाशक्ति और संकल्प से दिया

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया और तावतिंसा चला गया।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है,

फिर मैंने अपना काम किया; मुझे कुछ याद नहीं है।

दुष्ट अस्तित्व; यही इसका फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी विकृति जलकर राख हो गई थी; सभी अस्तित्व

इसे हटा दिया गया है। एली के समान-

जिस प्रेत ने अपने बंधन तोड़ दिए थे, मैं जीवित हूँ

कैंकर-मुक्त (अनासव)। बिल्कुल! मेरा जाना

बुद्ध की उपस्थिति में जाना एक अच्छा अनुभव था।

तदनुसार मैंने त्रिगुणात्मक प्राप्ति कर ली है।

विज्ञान (तिस्सो विज्जा); बुद्ध का उपदेश

इसे अंजाम दिया जा चुका था।

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने दो श्लोक कहे, जिससे थेरा विमला उनकी सलाह से भयभीत हो गईं, इस प्रकार:—

147. "लकड़ी के एक छोटे टुकड़े पर चढ़कर

किसी भी तरह से डूबते हुए बड़े

महासागर भी, उसी प्रकार, निर्भर करता है

एक आलसी व्यक्ति, यहाँ तक कि एक अच्छे जीवन का नेता भी

डूब जाता है। इसलिए, व्यक्ति को सर्वांगीण होना चाहिए।

अपने आप को आलसी और हीन लोगों से अलग कर लो

प्रयास।"

148. "बुद्धिमान और कुलीन लोगों के साथ रहना चाहिए।"

वे लोग (आरिया) जो शारीरिक रूप से एकांत में रहते हैं,

जिसका मन निर्वाण की ओर उन्मुख है

(पहितत्ता), जो ध्यानमग्न हैं (झायी)

और जो हमेशा सक्रिय और कार्यरत रहते हैं।

(आरद्धवीरीय).

वहाँ, parittaṃ dārumāruyha, yathā sīde mahannave का अर्थ है: अच्छे परिवार का पुत्र, भले ही वह अच्छे नैतिक उपदेशों का शौकीन हो (pesalo pi), एक आलसी व्यक्ति पर निर्भर होकर बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्र में फंस जाता है; वह निर्वाण, उसके अंतिम तट तक नहीं पहुँच पाता; क्योंकि यह नहीं है, tasmātaṃ का अर्थ है: उच्च धार्मिकता (adhikusaladhamma) के माध्यम से सिर उठाए बिना तिरस्कारपूर्वक (kucehitaṃ) डूबने (sīdanato) के कारण, kusitaṃ hīnavīriyaṃ का अर्थ है: प्रयास न करने के कारण, ऐसे व्यक्ति से बचना चाहिए; उसके चिंतन (diṭṭhānugatiṃ) के संकेत (āpajjeyya) से नहीं मिलना चाहिए; इस प्रकार, यही अर्थ है।

इस प्रकार आलस्य के नुकसान को व्यक्तिगत पूर्वाग्रह (अधिष्ठान) वाले श्लोक के माध्यम से इंगित करने के बाद, अब परिश्रम (वीर्यारम्भ) के लाभ को दर्शाने के लिए, "पविवित्तेहि" से शुरू होने वाले श्लोक का उल्लेख किया गया है। इसका अर्थ है- पविवित्त का अर्थ है: वे लोग जो शारीरिक एकांतवास को बढ़ावा देते हैं (संभव); अरिया का अर्थ है: उस शारीरिक एकांतवास के परिणामस्वरूप भी, क्योंकि वे विकृतियों से दूर रहते हैं (किलेसेहि आरकत्ता); पहितत्ता का अर्थ है: क्योंकि स्वयं को उचित रूप से निर्वाण की ओर भेजा गया है; झायिनो का अर्थ है: इंद्रिय-विषय (आरम्मन) पर ध्यान (उपनिज्जान) और विशिष्ट चिह्न (लक्खन) पर ध्यान (उपनिज्जान) दोनों के माध्यम से। āraddhavīriya cantes: हर समय परिश्रम को रोके रखने की स्थिति से; paṇḍitā का अर्थ है: सांसारिक (lokiya) और पारलौकिक (lokuttara) रूप में वर्गीकृत ज्ञान से संपन्न होने की अवस्था से; saha का अर्थ है: लेकिन उनके साथ; āvase का अर्थ है: जो अपना कल्याण (sadatthaṃ) करना चाहता है, उसे साथ रहना चाहिए। यह सुनकर थेरा विमिला पश्चाताप से भर गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े और अपना लाभ (sadatthaṃ) प्राप्त किया। यह अर्थ (svāyamattho) बाद में आएगा।

थेरा सोममित्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(135):सब्बमित्ता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (135) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
135. सब्बामिट्टा
बुद्ध युग में सावत्थी के एक ब्राह्मण (पुजारी) के परिवार में पुनर्जन्म लेकर सब्बामित्त नाम से विराजमान हुए, उन्होंने जेतवन के प्रस्तुतीकरण के समय बुद्ध की अद्भुत शक्ति देखी और भिक्षु संघ में प्रवेश करके अभ्यास का विषय प्राप्त किया तथा वन में रहने लगे। वर्षा ऋतु के बाद वे बुद्ध को प्रणाम करने सावत्थी गए और रास्ते में उन्हें एक हिरण का बच्चा शिकारी के जाल में फंसा हुआ मिला।

हिरणी, हालांकि जाल में नहीं थी, अपने बच्चे के प्रति प्रेम के कारण पास ही रही, फिर भी जाल के करीब आने का साहस नहीं कर रही थी। हिरण का बच्चा इधर-उधर घूमकर दया की भीख मांगते हुए मिमियाया। तब थेरा ने कहा, 'हाय! प्रेम प्राणियों को कितना कष्ट देता है!' आगे जाकर उन्होंने देखा कि कई डाकू एक जीवित पकड़े गए व्यक्ति को भूसे में लपेट रहे थे और उसे आग लगाने वाले थे । उसकी चीखें सुनकर, थेरा ने इन दोनों बातों से दुखी होकर डाकुओं के सामने एक श्लोक कहा।

[149] जानो जन्महि संबुद्धो जनमेवसितो जानो,॥
जानो जनेन हेठियाति हेथेति च जानो जनाउ.॥ ॥

[150] कोही [21] तस्सा जनेनत्तो जनेन जनितेन वा,॥
जनं ओहाय गच्छं तं हेठयित्वा बहुं जनन्ति॥ ॥

[149] लोग आपस में जुड़े होते हैं और एक दूसरे से चिपके रहते हैं।
लोग एक दूसरे से हानि सहते हैं और वही हानि पहुंचाते हैं।

[150] तो फिर इस जाति और इस जाति की संतान से तुम्हें क्या लाभ होता है?
इन लोगों को जाने दो और तुम भी उनसे दूर हो जाओ,
क्योंकि जाते समय ये लोग बहुतों को हानि पहुँचाते हैं। [1]

ऐसा कहकर उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) हासिल कर लिया। लेकिन लुटेरे, उनकी शिक्षा सुनकर हृदयविदारित हो गए और संसार का त्याग कर, सिद्धांत और विस्तार से धम्म मार्ग का अभ्यास करने लगे।

[1] मैंने गच्चनताṃ पढ़ा।

2.2-5 [135] सब्बामित्तथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
जनोजनमहि संबद्धो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सब्बामित्त का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, भगवान तिस्सा के समय, बानवे युग (कप्पा) पहले, एक शिकारी परिवार में पुनर्जन्म लिया और हिरण (मिगा) का वध करके मांस (मांसं) खाकर अपना जीवन व्यतीत किया। उस अवसर पर, उन्हें उत्थान के उद्देश्य से, भगवान ने उनके निवास स्थान के पास अपने पदचिह्नों के तीन मंदिर दिखाए और प्रस्थान किया। अतीत में सुशिक्षित बुद्धों के साथ घनिष्ठ संपर्क के कारण, उन्होंने वृत्तों से चिह्नित (पदचिह्नों) को देखा, श्रद्धा से भर गए और कोरंडा झाड़ी के फूलों से श्रद्धापूर्वक अर्पण किया; उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उनका जन्म तावतिंसा के महल में हुआ और वे बार-बार जन्म लेते रहे, फिर भी उत्तम जन्मों में ही कभी-कभी सावत्थी नगर के एक ब्राह्मण परिवार में जन्म लेते रहे, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम सब्बामित्त था। बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने जेतवन ग्रहण समारोह में बुद्ध की शक्ति को देखा, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) किया, वन में निवास किया, वर्षा ऋतु में विश्राम (वस्समुपगन्त्वा) किया, उपवास (वुट्ठवस्सो) पूरा किया, भगवान बुद्ध को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए सावत्थी गए, और रास्ते में उन्हें हिरण के शिकारियों द्वारा बिछाए गए जाल में फंसा हुआ एक हिरण का बच्चा (मिगापोतकं) दिखाई दिया। उसकी माँ, हिरणी, यद्यपि जाल में नहीं फंसी (अपविट्ठापि), अपने बच्चे के प्रति स्नेह के कारण दूर नहीं गई; मृत्यु के भय से वह जाल के पास भी नहीं गई; दूसरी ओर, हिरण का बच्चा भयभीत था, इधर-उधर लोट रहा था और दयनीय ढंग से रो रहा था; यह देखकर थेरा ने मन ही मन कहा, "हाय! प्राणियों के स्नेह (स्नेहहेतुकम्) के फलस्वरूप कितना कष्ट (दुक्खं) होता है।" जैसे-जैसे वह आगे बढ़ता गया (ततो परम्), उसने देखा कि कई लुटेरे एक आदमी को जिंदा पकड़कर जला रहे थे, उसके शरीर को बुनी हुई घास से लपेट रहे थे और वह पीड़ित भी जोर-जोर से रो रहा था। इन दोनों घटनाओं को देखकर थेरा को पश्चाताप हुआ और उसने उन लुटेरों से, जो केवल सुन रहे थे, दो श्लोक कहे:

149. "मनुष्य मनुष्य में अच्छी तरह से बंधा हुआ है; मनुष्य है

लेकिन एक आदमी से चिपक गया; आदमी घायल हो गया

एक आदमी दूसरे आदमी को चोट पहुँचाता है;

150. वास्तव में, मनुष्य को इससे क्या लाभ है?

उसे? या (समर्थन का) क्या लाभ है?

उत्पादित (जनिता) का उत्पादक; होना

अगर कई लोगों ने शपथ नहीं ली होती, तो मैं उसे छोड़ देता।

आदमी और जाओ।

वहाँ, जानो का अर्थ है: अंधे मूर्ख लोग। जनावि का अर्थ है दूसरे व्यक्ति में। सम्बद्धो का अर्थ है: तृष्णा के बंधन से बंधा हुआ; "यह मेरा पुत्र है, मेरी माता है" जैसे बंधनों से उचित रूप से बंधा हुआ। वैकल्पिक रूप से, इसका एक और अर्थ यह है: "इमे मम् पोसेन्ति, अहम् इमे निस्साय जीवामि (ये लोग मेरा पालन-पोषण करते हैं; मैं इन लोगों पर निर्भर रहता हूँ)" इस प्रकार, मन उचित रूप से आसक्त है; यही अर्थ है। जनमेवस्सितो जानो का अर्थ है: दूसरा व्यक्ति किसी दूसरे कथन पर निर्भर करता है; "यह मेरा पुत्र है, पुत्री है," इत्यादि; तृष्णा (तन्हा) से जकड़ा हुआ है और तन्हा के सर्वव्यापी शिकंजे में खड़ा रहता है। जानो जनेन हेठीयति, हेठीयति च जानो जमां का अर्थ है; जिस प्रकार एक व्यक्ति लोभ के प्रभाव में आकर, पर्याप्त समभाव (अज्जुपेक्खनं) का पालन किए बिना, गहन ज्ञान के अभाव में, और कर्म को अपना मानकर (कम्मसकतय) जो कुछ घटित हुआ है, उसी प्रकार क्रोध के प्रभाव में आकर एक व्यक्ति दूसरे को चोट पहुँचाता है। एक व्यक्ति दूसरे को भी चोट पहुँचाता है, यह जाने बिना कि “यह चोट मेरे द्वारा पहुँचाई गई चोट के दंड स्वरूप ही मुझ पर आ पड़ेगी।”

Ko hi tassa janena'ttho का अर्थ है: किसी दूसरे पुरुष द्वारा तृष्णा (तन्हा) के प्रभाव में आकर किसी दूसरे पुरुष से आसक्त होने का क्या लाभ है, और क्रोध के प्रभाव में आकर किसी दूसरे पुरुष द्वारा किसी दूसरे पुरुष को चोट पहुँचाने का क्या लाभ है? Janena janitena vā का अर्थ है: माता-पिता बनने के बाद, किसी दूसरे पुरुष द्वारा संतान उत्पन्न करने या किसी दूसरे पुरुष द्वारा संतान उत्पन्न होने का क्या लाभ है? Janaṃ ohāya gacchaṃtaṃ, heṭhayitvā bahuṃ janaṃ का अर्थ है: चूंकि ऐसा उचित सिद्धि (पटिपत्ति) है जो पुनर्जन्मों के चक्र में भटकने वाले मनुष्य के लिए भी समान है, इसलिए मैं उस मनुष्य का, उसके बंधन में जकड़े रहने वाली तृष्णा (तन्हा) का, और अनेक मनुष्यों को पीड़ा पहुँचाने के बाद भी स्थिर रहने वाले क्रोध का भी सर्वथा त्याग कर, सर्वस्व त्याग कर, नीचे उतरता हूँ; मैं उस स्थान पर पहुँचूँगा जहाँ कोई भी इनसे पीड़ित न हो; यही अर्थ है। इस प्रकार कहने के बाद, थेरा ने वहीं आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में तत्परता से लीन होकर अरहंत्सिप प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

“पहले मैं वनकर्मी था,

मेरे माता-पिता की मृत्यु।

मैंने अपना जीवन जानवरों को मारकर बिताया; मुझमें

कोई अच्छा कर्म नहीं हुआ था।

मेरे निवास स्थान के पड़ोस में, टिस्सा में,

विश्व का नेता, स्वामी

आँखों से, मुझ पर दया करके बनाया

उसके तीन पदचिह्न दिखाई दे रहे थे।

पैरों के निशान देखे।

मैंने तिस्सा नामक गुरु के बारे में मन बना लिया था।

पदचिह्न से श्रद्धापूर्वक प्रसन्न होकर

मेरा आनंदित हृदय प्रसन्न हो उठा।

कोरंडा झाड़ी को देखकर

ब्लूम, वह झाड़ी जो धरती पर उगती थी,

मैंने फूल तोड़कर इकट्ठा कर लिया।

अपने पात्र (सकोथका) के साथ और बनाया

सबसे प्रिय को मेरी श्रद्धापूर्ण भेंट-

उत्कृष्ट पदचिह्न।

उस कार्य के सफल निष्पादन के कारण

साथ ही मेरी इच्छाशक्ति और संकल्प भी,

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया और चला गया

तावतिंसा.

मैं जिसके भी पास गया, वह या तो दिव्य था

अवस्था या मानवीय स्थिति मेरे पास त्वचा थी

कोरांडा फूल का; मैं अच्छी तरह से तेजस्वी हो गया-

dent (suppabhāso).

यह बानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

फिर मैंने अपना काम कर दिया। मैं इसे दोहराता नहीं हूँ-

किसी भी बुरी शक्ति का सदस्य; यही है

मेरी श्रद्धापूर्वक की गई भेंट का फलदायी परिणाम

पदचिह्न (प्रिंट) तक।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

परन्तु उन लुटेरों ने थेरा की उपस्थिति में सत्य (धम्म) को सुनकर पश्चाताप किया, भिक्षु बन गए और शिक्षा के अनुरूप उचित अभ्यास किया (धम्मानुधम्मं पटिपज्जिंसु)।

थेरा सब्बामित्ता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(136):महाकाल

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (136) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
136. महाकाल
बुद्ध युग में सेतव्या नगर में एक व्यापारी के परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम महाकाल रखा गया। [1] वयस्क होने पर और घर पर रहते हुए, वे पाँच सौ गाड़ियों में माल लेकर सावत्थी व्यापार करने गए। शाम को अपने साथियों के साथ वहाँ विश्राम करते समय, उन्होंने गृहस्थों को इत्र और मालाएँ लेकर जेतवन जाते देखा और वे भी उनके साथ चल दिए। वहाँ उन्होंने भगवान (बुद्ध) को धम्म का उपदेश देते हुए सुना, विश्वास किया और भिक्षु बन गए। श्मशान भूमि में ध्यान करने का निश्चय करके वे श्मशान क्षेत्र में रहने लगे। और एक दिन काली नाम की एक महिला, जो शवदाह गृह में कार्यरत थी, [2] थेरा को अध्ययन के लिए एक वस्तु देने के उद्देश्य से, हाल ही में दाह संस्कार किए गए शरीर से दोनों जांघें और दोनों भुजाएँ काटकर, सिर को दूध के कटोरे के समान आकार में तोड़कर, सभी [124] अंगों को एक साथ व्यवस्थित किया, उन्हें उस स्थान पर रखा जहाँ थेरा अध्ययन कर रहे थे, और बगल में बैठ गई। यह देखकर थेरा ने स्वयं को इन श्लोकों में शिक्षित किया:

[151] काइ इत्थि ब्रहति धक्षरूपा॥
सत्थिmj च भेत्वा अपारु च सत्थिmj,॥
बाहाऽ च भेत्वा अपारं च बहुऽ॥
सीसाऽ च भेत्वा दधिथलकाऽ वा॥
एषा निसिन्ना अभिसद्दहित्वा॥ ॥

[152] यो वे अविद्वा उपधिं करोति॥
पुनप्पुनाऽ दुक्खमुपेति मांदो,॥
तस्मा पजानाउपधिं न कयिरा॥
महुऽ पुना भिन्नासिरो सैइस्संति.॥ ॥

[151] काली, चौड़ी और बड़ी स्त्री, काली चिड़िया के रंग की,
अब उसने एक जांघ की हड्डी तोड़ दी है, अब दूसरी;
अब उसने एक बांह तोड़ दी है, अब दूसरी;
अब खोपड़ी को ऐसे तोड़ दिया है जैसे वह दूध का कटोरा हो,
उन्हें तैयार किया और बैठ गई।

[152] जो बुद्धिहीन होकर नहीं समझता, परन्तु
जीवन के नवीनीकरण का कारण बनाता है, वह फिर से दुःख में लौट आता है।
इसीलिए जो जानता है, वह नए कारण नहीं बनाता।
काश मैं फिर कभी बिखरे अंगों के साथ ऐसे न लेटूँ! [3]

इस प्रकार पूर्णतः आत्म-नियंत्रित होकर, थेरा ने अंतर्दृष्टि उत्पन्न की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

[1] तो टीका; ṅkāla नहीं। इस प्रकार नाम का अर्थ है 'बड़ा काला' या, सुविधाजनक इतालवी नामकरण में, Neraccio। Kāḷī का अर्थ भी 'भूरा' है।

[2] जात., खंड 449 में , हमें इस व्यापार को आगे बढ़ाने वाले एक व्यक्ति से मुलाकात होती है।

[3] काली की गतिविधियों का वर्णन एक विचित्र अधूरी पंक्ति के साथ समाप्त होता है, मानो एक विराम द्वारा थेरा द्वारा उसकी भयानक सेवा पर किए गए आधे-मजाक भरे अवलोकन से लेकर उसके दुख के अंत की गंभीर खोज तक के अचानक संक्रमण को चिह्नित किया गया हो। यह एक ऐसी कविता का अच्छा उदाहरण है जिसे टीका की सहायता के बिना समझना मुश्किल है। टीका की सहायता से, अनुवाद जितना अधिक शाब्दिक होगा, कविता उतनी ही अधिक बोधगम्य होगी। इसके बिना, हमें केवल डॉ. न्यूमैन के अनुमान और जबरदस्ती किए गए अनुवाद को देखना होगा, जिसमें काली को व्यभिचारी और अच्छे भिक्षु को कामुक मानसिकता वाला व्यक्ति बताया गया है, जिससे यह पता चलता है कि एक विद्वतापूर्ण व्याख्या भी कितनी अपेक्षाकृत तर्कसंगत और सरल हो सकती है। असुभ-ज्ञान, यानी किसी अप्रिय वस्तु पर ध्यान केंद्रित करने की प्रथा , संघ के आरंभिक काल से ही अनुशंसित थी, और साथ में दिए गए श्रीलंकाई भिक्षु के चित्र से स्पष्ट है कि यह आज भी प्रचलित है। (देखें बुद्ध मनोविज्ञान, पृष्ठ 69, नोट 2)।

2.2-6 [136] महाकालत्थेरा के श्लोक पर टीका

काली इत्थी से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा महाकाल का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और इक्यावन युग (कप्पा) पहले एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, वे किसी कार्य से वन में गए, जहाँ उन्होंने एक वृक्ष की शाखा पर पुराने कपड़ों के ढेर से एक वस्त्र (पम्सुकूल) लटका हुआ देखा, और श्रद्धा से भरकर कहा; "एक श्रेष्ठ ध्वज (अरियद्धजो) नीचे लटका हुआ है।" उन्होंने किंकनी फूल एकत्र किए और उस वस्त्र (पम्सुकूल) को श्रद्धापूर्वक अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने अपने बार-बार के जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सेताब्य नगर में एक कारवां प्रमुख के परिवार में पुनर्जन्म लिए; उन्होंने महादाल नाम प्राप्त किया; बुद्धि प्राप्त करने पर, गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए, वे पाँच सौ रथों में माल एकत्रित करके व्यापार के मार्ग से सावत्थी गए; वहाँ पहुँचकर, उन्होंने अपने रथों के काफिले को एक कोने में रोका, जहाँ उनकी यात्रा की थकान दूर हो गई और वे अपने दल के साथ बैठ गए। शाम को संयोगवश उनकी नज़र कुछ भक्तों पर पड़ी, जिनके हाथों में इत्र और पुष्पमालाएँ थीं और वे जेतवन जा रहे थे। वे भी उनके साथ मठ गए, गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) सुना, उचित रूप से धर्मपरायणता प्राप्त की, भिक्षु बन गए और श्मशान में अपने कठोर नियमों का पालन करते हुए निवास किया। फिर एक दिन, काली नाम की एक महिला, जिसका कर्तव्य मृतकों का अंतिम संस्कार करना था, ने थेरा के मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) को सुगम बनाने के उद्देश्य से, एक हाल ही में मृत शरीर की दोनों जांघों, दोनों भुजाओं और सिर को दूध के दही से भरी थाली की तरह तोड़ दिया। उसने मृत शरीर के सभी प्रमुख और गौण अंगों को मिलाकर एक ऐसा संयोजन बनाया, जिसे थेरा के दर्शन के लिए अभ्यास स्थल पर रखा गया और वह एक तरफ बैठ गया। यह देखकर थेरा ने स्वयं को उपदेश देने के लिए दो श्लोक कहे:

151 "काली एक बड़ी काया वाली महिला है और

कौवे जैसा रंग; एक को तोड़कर

एक के बाद एक जांघ टूट गई

एक हाथ और फिर दूसरा, टूट जाने के बाद

सिर दूध के दही से भरी थाली के समान था,

वह बैठने के बाद बैठ गई है।

विशेष रूप से उन्होंने उन्हें एकजुट किया।

152 "जो कोई भी, वास्तव में, बुद्धिमान हुए बिना

(अविद्या) एक आधार (उपाधि) बनाता है,

वह कम बुद्धि वाला आदमी-

बार-बार पीड़ादायक कष्टों का सामना करता है।

इसलिए, आधार नहीं बनाना चाहिए

जीवित प्राणियों के लिए; क्या मैं सो नहीं सकता?

फिर से सिर चकरा गया।

वहाँ, काली का अर्थ उसका नाम है। वैकल्पिक रूप से, गहरे रंग के कारण भी ऐसा कहा गया है। ब्राहती का अर्थ है: बड़े शरीर वाली, ऊँची और गठीली महिला। दंकरूपा का अर्थ है: अपने काले रंग के कारण वह कौवे जैसी दिखती है। सत्थिंच भेत्वा का अर्थ है: घुटने को तोड़कर शव की जांघ तोड़ दी। अपरांच सत्थिं का अर्थ है: दूसरी जांघ भी तोड़ दी। बाहंच भेत्वा का अर्थ है: बांह की हड्डी भी तोड़ दी, लेकिन बांह के ऊपरी हिस्से पर। सीसंंच भत्वा दधि तलकं व का अर्थ है: शव का सिर तोड़ दिया; लेकिन टूटने के कारण यह दूध के दही की थाली की तरह दिखता है जो पत्थरों, लाठियों आदि से टकराने के कारण टपक रहा हो; मस्तिष्क को टपकने जैसा बना दिया हो। अतः, इसका अर्थ है, esānisinnā ahhisandahitvā का अर्थ है: वह इस प्रकार बैठी है मानो वह मांस बाजार में मांस का ढेर लगा रही हो, एक मिश्रित इकाई बनाकर, उन्हें इस प्रकार जोड़कर कि वे मृत शरीर के कटे और टूटे हुए अलग-अलग अंगों के विवरण के अनुसार ही खड़े हों।

Yo ve avidvā upadhiṃ karoti का अर्थ है: जो कोई भी, अज्ञानी और कुबुद्ध होकर भी, अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) को इससे लाभान्वित होते हुए देखकर, अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) को त्यागने के बाद अज्ञानी (अयोनिसो) ध्यान के कारण दुराचार (किलेसुपधिम्) का आधार उत्पन्न करता है; mando का अर्थ है: वह अल्प बुद्धि वाला व्यक्ति, अपने बार-बार के पुनर्जन्मों (संसार) से मुक्त न होने के कारण, punappunaṃ dukkhaṃ upeti का अर्थ है: समय-समय पर नरक में कष्ट भोगता है, इत्यादि। Tasmā pajānaṃ upadhiṃ na kayirā का अर्थ है: क्योंकि यह इस प्रकार भी है, इसलिए। पजानं उपाधिं का अर्थ है: मनुष्य को इस प्रकार तर्कसंगत रूप से यह जानकर कि "यहाँ जो कुछ भी उत्पन्न होता है वह दुखदायी होता है," और स्वयं को बुद्धिमानी से सचेत करके, न तो दुराचार का आधार उत्पन्न करना चाहिए और न ही उसका कारण बनना चाहिए। क्यों? माहं पुन भिन्नसिरो सयिसं का अर्थ है: जिस प्रकार यह मृत शरीर टूटे अंगों के साथ पड़ा है, उसी प्रकार मुझे भी बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्र में पुनर्जन्म लेने के कारण बार-बार श्मशान में दफन होने के बाद टूटे सिर के साथ सोने के लिए मजबूर न किया जाए। केवल इसी प्रकार कहते हुए, थेरा ने गहन आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:

"हिमावंता से कुछ ही दूरी पर एक पहाड़ी थी

उदंगना नाम का एक जीव। वहाँ मेरी नज़र एक जीव पर पड़ी।

एक फटा हुआ वस्त्र (पंसुकूल) जो स्पष्ट रूप से लटका हुआ है

एक पेड़ की चोटी पर। तीन किंकानी फूल खिले।

फिर मैं आनंदपूर्वक, प्रसन्न हृदय से, तुरही तोड़ता हूँ।

मैंने उस वस्त्र को श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की।

चूर्ण-चूर्ण कपड़ों (पंसुकूल) का।

उस कार्य के सफल निष्पादन के कारण,

अपनी इच्छा और संकल्प से भी, मैं

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया और तावतिंसा चला गया।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है,

फिर मैंने यह काम किया। मुझे याद नहीं है।

मेरे ऐसा करने के बाद किसी भी बुरी शक्ति का अस्तित्व

महान ध्वज के प्रति श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई भेंट

(अरहद्धज, पवित्र प्रतीक)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

थेरा महाकाल के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(137):तिसा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (137) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
137. टिस्सा [1]
बुद्ध युग में राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर तिस्सा नाम से विख्यात हुए। वे वेदों के ज्ञाता बने और पाँच सौ ब्राह्मण बालकों को मंत्रों का अध्यापन कराकर सर्वोच्च ख्याति और यश प्राप्त किया। जब भगवान (बुद्ध) राजगृह आए, तो तिस्सा ने बुद्ध के दर्शन किए और विश्वास के साथ भिक्षु संघ में प्रवेश किया। इसके बाद उन्होंने गहन अंतर्दृष्टि के माध्यम से अर्हत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इस प्रकार उन्होंने भी ख्याति और यश प्राप्त किया।

अब कुछ सांसारिक मन वाले भिक्षुओं ने थेरा पर दिए जा रहे ध्यान को देखकर इसे सहन नहीं कर सके। थेरा यह जानते थे, और उन्होंने ऐसे ध्यान में निहित बुराई और उससे अपने वैराग्य को इन श्लोकों में प्रकट किया:

[153] बाहु सप्ते लभाति मुनादो संघातिपरुतो,॥
लाभि अन्नस्सा पनास्सा वत्थस्सा सयानस्सा च॥ ॥

[154] एतमादिनावं णत्वा सक्करेसु महाभभयं,॥
अप्पलाभो 'नवसुतो सातो भिक्खु परिब्बाजे' ति.॥ ॥

[153] उसे अनेक शत्रु मिलते हैं, वह भिक्षु (भिक्षु) बाल मुंडवाए हुए,
अपने वस्त्र में लिपटा हुआ, जिसे संसार
भोजन और पेय, वस्त्र और रहने की जगह के उपहार देता है।

[154] तो वह, यहाँ से होने वाले सभी अभिशापों को जानते हुए,
संसार के प्रति भयानक खतरे को जानते हुए,
थोड़ा सा लेते हुए, कामवासना के दाग (पाप) से मुक्त होकर,
सतर्क और सचेत रहते हुए, अपना आगे का मार्ग बनाए रखे।

तब उन भिक्षुओं ने तुरंत थेरा से क्षमा मांगी।

[1] स्पष्ट रूप से उपरोक्त दोनों थेराओं से बिल्कुल अलग तिस्सा। तुलना करें भजन XXXIX, XCVII.

2.2-7 [137] तिस्साथेरा के छंद पर टिप्पणी
बहु सपत्ते लभति से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा तिस्सा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करके, जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति पाने के लिए पुण्य कर्म संचित किए, और इस-उस जन्म में एक ब्राह्मण परिवार में जन्म लिया, जो भगवान पियादस्सी के समय का था। ज्ञान प्राप्ति पर उन्होंने सभी ब्राह्मण विद्याओं में निपुणता प्राप्त की, इंद्रिय सुखों में हानि पाई, गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संन्यासी बनकर संसार का त्याग किया और वन क्षेत्र में साल के उपवन में एक आश्रम बनाकर उसमें निवास किया। अपने आश्रम से बाहर आकर, वे छोटे-बड़े फल लाने जा रहे थे, तभी उनकी मुलाकात भगवान बुद्ध से हुई। वे श्रद्धा से भर गए और चार लकड़ियाँ लगाकर, साल के वृक्ष की खिली हुई शाखाओं से एक मंडप (छतरी) बनाया, जो भगवान बुद्ध के ऊपर स्थापित हुआ, और सात दिनों तक निरंतर उत्साह के साथ भगवान बुद्ध को ताजे साल के फूल अर्पित करते रहे। सात दिनों की समाप्ति पर, गुरु बुद्ध निरोध समाधि से उठे और अपने भिक्षुओं के बारे में सोचने लगे। तभी एक लाख की संख्या में दोषरहित अरहंतों ने गुरु बुद्ध को घेर लिया। उनकी भावी समृद्धि को प्रकट करने के लिए, गुरु बुद्ध ने उन्हें धन्यवाद दिया और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप वे दिव्य लोक में अवतरित हुए और अपने बार-बार के जन्मों के चक्र में घूमते हुए, उत्तम जन्मों में, राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उन्होंने तिस्सा नाम प्राप्त किया। वयस्क होने पर, उन्होंने तीनों वेदों में निपुणता प्राप्त की और पाँच सौ युवकों को मंत्रों का उपदेश देकर सर्वोच्च यश और ख्याति प्राप्त की। जब गुरु बुद्ध राजगृह गए, तब उनकी शक्ति को देखकर उन्होंने उचित श्रद्धा धारण की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास के मार्ग पर चल पड़े और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—-

साल के पेड़ों के झुरमुट में प्रवेश करने के बाद,

मेरा आश्रम अच्छी तरह से बना हुआ था; अच्छी तरह से छायादार था।

साल के फूलों के पास, मैं फिर जंगल में रहने लगा।

हे भगवान पियादस्सी, स्वयं-

बनने वाला (सयम्भू), सबसे अग्रणी व्यक्ति,

आत्मजागृत बुद्ध, जो इच्छुक थे

एकांत का इलाका साल के पेड़ों के झुरमुट के पास आ गया।

विशेष रूप से आश्रम से बाहर आकर,

मैं जड़ों की तलाश में जंगल में गया और

फल। फिर मैं जंगल में घूमने निकल गया।

वहाँ मैंने आत्मजागृत बुद्ध को देखा।

महान प्रसिद्ध पियादस्सी अच्छी तरह से बैठे हुए

वे समाधि में प्रवेश कर गए (समापन्नम्), चमकते हुए

शानदार ढंग से (virocantaṃ)। स्थापित करने के बाद

लकड़ियों से, मैंने एक अच्छी तरह से बना हुआ हॉल बनवाया था और उसे

साल के फूलों से ढकी छत।

सात दिनों तक मेरे पास साल की छत वाला पंडाल (शेड) था।

धारण किया; मेरे मन को धार्मिक रूप से प्रसन्न कर दिया,

मैंने बुद्ध को सर्वोत्तम तरीके से श्रद्धांजलि अर्पित की।

उस समय भगवान जी उठे।

उनकी एकाग्रता (समाधि/तल्लीनता) से, सबसे अधिक

श्रेष्ठ पुरुष अपनी दृष्टि से बैठ गए

जुए के माप का।

गुरु के शिष्य वरुण का नाम बुद्ध के शिष्य के रूप में रखा गया था।

पियादास्सी, स्पष्ट नेता के पास पहुँचे

(विनायक) एक लाख के साथ

शक्तिशाली स्वामी (वासी)।

पूज्य पियादस्सी, जो सबसे बड़े हैं

दुनिया, पुरुषों में बैल, होने के कारण

भिक्षुओं के बीच बैठे हुए,

विजेता ने अपनी स्पष्ट मुस्कान जाहिर कर दी।

स्वामी के सेवक अनुरुद्ध

पियादस्सी ने अपना ऊपरी वस्त्र व्यवस्थित करते हुए

एक कंधे पर खड़े होकर, महान ऋषि से इसके बारे में पूछा।

हे भगवान! वास्तव में इसका कारण क्या है?

क्या गुरु के मुस्कुराने से? जब कोई कारण

वहाँ, गुरु अपनी मुस्कान स्पष्ट रूप से प्रकट करते हैं

प्रत्यक्ष।

उस युवक के कृत्य को याद करके

जिसने मेरे लिए साल का आश्रय (चदाना) सहा

सात दिनों तक मैंने अपनी मुस्कान को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया।

मुझे अवसरों की कोई कमी नजर नहीं आती।

(ओकासा) जहाँ (उसके) पुण्य से उसका परिणाम निकलता है

फलदायी परिणाम (विपच्चति); या तो

दिव्य या मानवीय जगत, इसका कोई अंत नहीं है (ना

अपने (सुनहरे) अवसर की भी (सममिति)

(okāso'va).

जब (इस प्रकार) उसे पुण्य गुणों से संपन्न किया गया

कर्म दिव्य जगत में रहता है, जहाँ तक

वहाँ उसका दल है, वहाँ सैल भी होगा।

आश्रय (चन्ना)।

पुण्य कर्मों से परिपूर्ण, वह

वहाँ हमेशा शांतिपूर्वक आश्चर्यचकित रहेंगे

दिव्य नृत्य, गायन और वादन के साथ

संगीत के रूप में भी।

जहां तक उसके दल का सवाल है, तब तक

वहाँ और उसी समय, मधुर सुगंध से भरपूर हो।

साल के फूलों की वर्षा होगी।

वहाँ से गुजर जाने के बाद, इस आदमी

मनुष्यत्व में वापस लौटेगा; यहाँ भी एक

सैल शेल्टर हर समय मौजूद रहेगा

उससे ऊपर।

यहां नृत्य और गायन, अच्छी तरह से संगत-

झांझों की थाप के साथ (सममाताळा-)

समाहितम्), हमेशा इसे घेरे रहेगा

(परिवारिसन्ति'मं); यह है

श्रद्धा करने का फलदायी परिणाम-

बुद्ध को दी जाने वाली विशेष भेंट।

जब सूरज उगेगा तब भी

साल के फूलों की बौछार बरसाओ।

पुण्य कर्मों से अच्छी तरह जुड़ा हुआ,

मौसमी बारिश की बौछार होती है

शाश्वत चरित्र। अठारह सौ

इसलिए, युग (कप्पा) प्रकट होंगे

संसार में गौतम नाम के गुरु हैं।

कुल से, परिवार में अच्छे परिवार में जन्मा।

ओक्काका(इक्ष्वाकु).

वह उनके धर्म का उत्तराधिकारी होगा, एक

धर्म द्वारा सृजित, घनिष्ठ पुत्र।

सभी प्रकार के रोगों (आसव) को पूरी तरह से समझा।

वह निर्वाण में प्रवेश करेगा, रोगमुक्त (अना-

सावो)।

जब वह धर्म को पूर्णतः समझ लेता है,

साल का आश्रय (चन्ना) होगा; जब

(उसके शव का) अंतिम संस्कार किया जा रहा है

अंत्येष्टि की चिता पर, वही (होगा)

वहाँ आश्रय (चदनं) लें।

सफल परिणाम की घोषणा करते हुए

(विपाक), महान ऋषि पियादस्सी

उन्होंने लोगों को सत्य (धम्म) सिखाया

श्रोताओं को संतुष्ट करना

धम्म की वर्षा के साथ।

तीस युगों (कप्पा) तक दिव्य-

मैंने दिव्य संप्रभुता का प्रयोग किया।

मैं 67 बार एक विश्व था-

राजा।

दिव्य लोक से यहाँ आकर,

मुझे अपार आनंद प्राप्त होता है; यही यहाँ है।

साथ ही साल आश्रय (सालाच्छदनं); यह

यह पंडाल का सफल परिणाम है।

यह मेरा आखिरी और अंतिम प्रयास साबित हुआ।

अस्तित्व। यहाँ भी साल है।

जो एक सर्वकालिक आश्रय स्थल होगा

मामला।

महान ऋषि गौतम को प्रसन्न करके,

साकियों में श्रेष्ठ, मैंने प्राप्त किया

अविचलित स्थान, त्याग दिया गया

विजय और पराजय।

यह अठारह सौ युग पहले की बात है।

कि मैंने विशेष रूप से अपनी श्रद्धा व्यक्त की

बुद्ध को अर्पित की गई वस्तु; मुझे याद नहीं है

किसी भी दुष्ट अस्तित्व का यही फल है।

मेरी श्रद्धापूर्वक की गई भेंट का पूर्ण परिणाम

बुद्ध को।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे इतने प्रतिष्ठित थेर बन गए कि उन्होंने यश और ख्याति की सर्वोच्च ऊँचाई प्राप्त कर ली। वहाँ कुछ सामान्य भिक्षुओं (पुथुज्जन) ने थेर के यश और प्रतिष्ठा को देखकर अपनी मूर्खता के कारण असहिष्णुता (आसहन) प्रकट की। यह जानकर, थेर ने दो श्लोकों में यश और प्रतिष्ठा में होने वाली हानि और उससे आसक्ति न रखने की स्थिति को स्पष्ट किया:

153. "एक गंजे सिर वाला पहनने वाला (पारुतो)

दोहरी लड़ी वाली पोशाक (संघति) लाभ

बहुत शत्रुता (सपत्त); इसी प्रकार

भोजन, पेय, वस्त्र और

बिस्तर।"

154. "इस हानि के बारे में जानने के बाद

और संसाधन प्राप्त करने में बड़ा खतरा है।

आदर और सम्मान (सक्कारेसु), एक भिक्षु

मन इधर-उधर भटकना चाहिए (परिब्बाजे)

पूर्णतः जागरूक (सतो) और मुक्त होना

कामुक रिसाव (anavassuto).

इसका अर्थ है:—- मुण्डो का अर्थ है मुंडाए और कटे हुए बालों की स्थिति (मुंडितकेसाता) जिसमें सिर का ऊपरी भाग भी न बचा हो; संघातिपारुतो का अर्थ है: कटे हुए बालों को बांधकर वस्त्र धारण करने के कारण; लाभी का अर्थ है: यदि कोई भिक्षु इस प्रकार जातिहीन

अवस्था (वेवन्नियं) प्राप्त कर लेता है और दूसरों के कल्याण के लिए आचरण करता है, तो उसे भोजन, पेय आदि का लाभ मिलता है; बहु सपत्ते लाभति का अर्थ है; उसे बहुत शत्रुता भी मिलती है; बहुत से लोग उससे ईर्ष्या करने लगते हैं। एतमादिनवं ञत्वा सक्कारेसु महाभयं का अर्थ है: अतः, ऐसे लाभ और सम्मान में निहित दोष और अत्यधिक खतरे को जानकर, उसने अपने हृदय में अल्प इच्छा और संतोष (संतोष) की स्थिति धारण कर ली है; अप्पलाभो का अर्थ है सभी प्रकार के लाभों से परहेज करके प्राप्त अल्प लाभ, यहाँ तक कि ऐसे लाभ से भी जो निष्पाप प्रतीत हुआ हो; अनवस्सुतो का अर्थ है: व्यथा के रिसाव के अभाव के कारण, लेकिन उसके परिणामस्वरूप, कामवासना के रिसाव से मुक्त होना; भिक्षु सतो परिब्बजे का अर्थ है: बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (संसार) में खतरे को भाँतकर या टूटे हुए दुराचार (किलेसा) के कारण, संतोष, सजगता और जागरूकता के प्रभाव में आकर, सदा सतर्क (सतो) होकर भिक्षु को विचरण करना चाहिए, अभ्यास करना चाहिए और जीवन यापन करना चाहिए। यह सुनकर उन भिक्षुओं ने वहीं थेरा से क्षमा (खमापेसुं) माँगी।

थेरा टिस्सा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(138): किम्बिला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (138) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
138. किम्बिला
बुद्ध से उनकी मुलाकात, उनकी भावना और संसार त्यागने का वर्णन अध्याय I में किया गया है, श्लोक की शुरुआत 'किसी शक्ति द्वारा याद दिलाए जाने पर' [1] यहाँ थेरा बताते हैं कि कैसे वे [126] अपने साथियों, आदरणीय अनुरुद्ध और आदरणीय भद्दिया, साकियन राजाओं (राजाओं) के साथ भाईचारे से रहते थे:

[155] पचिनावंसदयमहि शाक्यपुत्त सहायक,॥
पाहयानप्पाके भोगे उंचापत्तगते रता॥ ॥

[156] अरद्धविरिय पहितत्ता निच्चन दहापरक्कमा,॥
रमन्ति धम्मरतिया हित्वाना लोकियं रतिन्ति॥ ॥

[155] जहाँ पूर्वी बाँस का जंगल है, हम रहते हैं,
साकियान के पुत्रों, साथियों [सभी और सच्चे]।
इसके लिए हमने काफी धन का त्याग किया है,
जो कुछ भी हमारे कटोरे को भरता है, उसी से संतुष्ट हैं।

[156] हमारी ऊर्जा तीव्र और प्रखर है,
हमारा हृदय दृढ़ और संकल्पित है,
हम सदा साहसपूर्वक अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हैं।
धम्म के प्रति प्रेम हमारा एकमात्र आनंद है,
हमने समस्त सांसारिक प्रेमों का पूर्णतः त्याग कर दिया है।

[1] उनकी कहानी भजन संहिता सत्रहवीं में दी गई है, क्रॉनिकल गाथा के परिणामस्वरूप होने वाली परिस्थितियों से तुरंत शुरू होता है।

2.2-8 [138] किमिलाथेरा के श्लोक पर टिप्पणी।
पाचीनवंसदयाम्ही से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा किमिला का है। इसका उद्गम क्या है? उनके पूर्व संबंध (कर्म और प्रतिक्रिया), पश्चाताप की अनुभूति और संन्यास लेकर भिक्षु बनने का उल्लेख भी “अभिसात्तो” से शुरू होने वाले श्लोक की व्याख्या में प्रथम खंड

(निपात) में किया गया है। उस श्लोक के माध्यम से उनके स्वयं के विशेषण प्राप्ति का कारण भी बताया गया है। हालांकि, यहां यह दर्शाया गया है कि जब उन्होंने विशेषण प्राप्त किया, तब वे पूज्य अनुरुद्ध और पूज्य नंदीय के साथ एकांतवास में रह रहे थे; इसे इसी प्रकार समझा जाना चाहिए। उन्होंने तीन लोगों के एकांतवास को दर्शाने के लिए दो श्लोक कहे।

155. "पूर्व में (पाचीन) बांस (वंश)

वन, साकियान के पुत्र जो थे

अपने साथियों को त्यागने के बाद

अपार धन-दौलत के शौकीन थे

जो उनके संग्रह में आया था

कटोरा'।

156. "उनके प्रयासों की अच्छी शुरुआत के साथ,

उनका ध्यान पूरी तरह से इस ओर केंद्रित था-

wards nibbāna, with their permanently

वे अपने दृढ़ प्रयासों से प्रसन्न होते हैं।

धम्म (दिव्य कर्मों) का आनंद

सांसारिक सुखों का त्याग कर।

वहाँ, पाचीनवंसदयाम्ही का अर्थ है: पाचीनवंस नामक वन में, जो चारों ओर से परिच्छेद द्वारा संरक्षित और सुरक्षित है। इसे "पाचीनवंसदयो (पूर्व बाँस वन)" भी कहा गया है, क्योंकि वह वन वास्तव में गाँव के पूर्व दिशा में स्थित था और चारों ओर से बाँस की झाड़ियों से घिरा हुआ था: दूसरे शब्दों में, बाँस वन होने के कारण। शाक्यपुत्त का अर्थ है: थेरा अनुरुद्ध और अन्य जो शाही शाक्य युवक थे। सहायक का अर्थ है: साथी, क्योंकि वे पश्चाताप के उदय में एक साथ गए, भिक्षु बने, भिक्षुओं के कर्तव्यों का पालन किया और एक साथ रहे। पहायनप्पके भोगे का अर्थ है: उस विशाल धन का त्याग करना जो महान पुण्य के बल पर अर्जित किया गया था और पूर्वजों की पीढ़ियों से चला आ रहा था। इसका एक पाठ "सहायनप्पके" है। "उंचे पट्टागते रता" का अर्थ है: वे स्वयं को चकित कर लेते हैं और कटोरे में जो कुछ भी डाला गया है, उससे विशेष रूप से प्रसन्न होते हैं, क्योंकि वे संग्रहण पात्र में आए हैं, संग्रहण के आचरण के कारण; वे भिक्षा मांगने के आचरण से प्राप्त मिश्रित भोजन से ही संतुष्ट हैं, अपने पैरों की शक्ति पर निर्भर रहते हुए, पुरोहितों (संघभट्ट) आदि के भोजन के रूप में ऐसे अतिरिक्त (अतिरेको) लाभ को त्यागने के बाद। इस प्रकार, इसका अर्थ है।

Āraddhavīriyā का अर्थ है: आरंभ से ही, सर्वप्रथम सर्वोत्तम लाभ (अत्थ) की प्राप्ति हेतु किए गए निरंतर प्रयास (संपादितवीर्या) से प्रेरित होना। Pahitattā का अर्थ है: जिनके मन निर्वाण की ओर बार-बार प्रवृत्त होकर, उसमें प्रवेश करने से, उसकी ओर झुकाव और प्रवृत्त होकर, निर्वाण के प्रति उचित रूप से समर्पित हो गए। Niccaṃ daḷhaparakkamā का अर्थ है: प्रत्यक्ष भौतिक जगत (दित्तधम्म) के सुखमय जीवन के प्रति समर्पण और कर्तव्यों के उचित पालन (पटिपत्ति) से सदा निरंतर प्रयास करते रहना। रमन्ति धम्मरातिया, हित्वाना लोकीयं रतिं का अर्थ है: वे सांसारिक सुखों जैसे सुंदर रूपों आदि के इंद्रिय-विषयक सुखों का त्याग करके, निर्वाण के सर्वोच्च फल के आनंद में लीन हो जाते हैं और विशेष प्रसन्नता प्राप्त करते हैं, क्योंकि उन्होंने सांसारिक जगत में जो कुछ है उसे समझ लिया है और स्वयं भी सांसारिक जगत में समाहित हैं।

थेरा किमिला के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(139):नंदा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (139) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
139. नंदा
कपिलवस्तु में बुद्ध युग में पुनर्जन्म लेकर, राजा सुद्धोदन और महान प्रजापति के पुत्र के रूप में, [1] अपने कुल का आनंद बनकर, उनका नामकरण नंदा रखा गया। जब नंदा वयस्क हुए, तो भगवान (बुद्ध), धर्मचक्र (धम्म) को घुमाते हुए, करुणावश कपिलवस्तु आए। वर्षा का आयोजन करते हुए, उन्होंने वेस्सन्तरा जातक की कथा सुनाई। [2] दूसरे दिन, 'उठो' श्लोक द्वारा, उन्होंने उनके पिता को सोतापण (निर्वाण की पहली समाधि) के रूप में स्थापित किया; प्रजापति को भी 'संयममय जीवन का पालन करो' श्लोक द्वारा, और राजा को एक बार लौटकर आने वाले के रूप में स्थापित किया। तीसरे दिन, जब राजकुमार नंदा को उनके विवाह की बधाई दी जा रही थी, तब राज्याभिषेक कक्ष में भिक्षा मांगते समय, भगवान (बुद्ध) ने राजकुमार को अपना कुंड भेंट किया और उन्हें शुभकामनाएँ दीं। कुंड लेकर, राजकुमार भगवान (बुद्ध) के साथ विहार गए, जहाँ उन्हें भिक्षु दीक्षा दी गई, यद्यपि नंदा ऐसा नहीं चाहते थे।

उस समय से, यह जानते हुए कि नंदा अपनी अरुचि से पीड़ित हैं, भगवान (बुद्ध) ने उसे दूर किया, जिससे नंदा ने गहन ध्यान के द्वारा अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, मुक्ति के आनंद का अनुभव करते हुए, उन्होंने कहा: 'हे भगवान (बुद्ध) की उत्तम विधि, जिसके द्वारा मैं पुनर्जन्म के दलदल से निकलकर निर्वाण के मार्ग पर चला!' और अपने विचारों में मग्न होकर उन्होंने ये श्लोक कहे:

[157] अयेनिसो मानसिकारा मन्नानाअ अनुयुन्जिसाꞁꞁ,॥
उद्धतो कैपलो कैसीं कामरागेना एतितो.।॥

[158] उपयाकुसलेनहाꞁꞁ बुद्धेनादिच्चबन्धुना,॥
योनिसो पतिपज्जित्वा भवे चित्तं उदाबहिंति॥॥

[157] एक समय मेरे विचार लापरवाह और उथले थे,
बाहरी दिखावे की सारी धृष्टता पर केंद्रित थे;
मैं कमजोर और गैर-गंभीर था; मेरे सारे दिन
व्यभिचारी कामुकता में बीतते थे।

[158] लेकिन बुद्ध की कुशल दयालु कला से,
जो सूर्य के वंश से आते हैं, मुझे
गहरे विचार से जीने के लिए लाया गया, जिससे मेरा हृदय
(अनंत के महान दलदल) जीवन से [3] खींचा गया।

और परम पूज्य (बुद्ध), यह जानते हुए कि उन्हें आत्म-संयम में कितनी उत्कृष्ट रूप से प्रशिक्षित किया गया था, उन्होंने भिक्षु के आदेश के समक्ष उन्हें अपने शिष्यों में उस श्रेणी में श्रेष्ठ घोषित किया, [4] यहाँ तक कि उस विशिष्टता को प्रदान करने में भी जिसकी थेरा ने अतीत में आकांक्षा की थी।

[1] देखें भजन 1, पृष्ठ 6 एफ. नंदा को ऊपर नंदीय कहा गया है (भजन 25)। यह एकल श्लोक शायद भिक्खुनी-संयुत्त में पाए जाने वाले मार (मृत्युदेव/राक्षस) उपाख्यानों के किसी संग्रह से लिया गया हो।

[2] जाट., वि., संख्या 547; बौद्ध जन्म कथाएँ, पृ. 124.

[3] भव, बनना. Saŋsārapanke nimuggaŋ. Cy.

[4] वह एंग. निक., i. 25 में इतना विशिष्ट है।

2.2-9 [139] नंदथेरा के श्लोक पर टीका

अयोनिसो मनसिकारा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा नंदा का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय हंसवती नगर के एक पारिवारिक घर में हुआ था; जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके थे, तब वे भगवान की उपस्थिति में सत्य (धम्म) सुनते रहे, तभी उन्होंने देखा कि गुरु एक भिक्षु को उन भिक्षुओं में सबसे आगे बिठा रहे हैं जिनके विवेक के द्वार सुरक्षित हैं; स्वयं उस पद की आकांक्षा रखते हुए, उन्होंने भगवान और भिक्षुओं के प्रति प्रचुर श्रद्धा और आदर का महान दान किया और यह संकल्प लिया: — "मैं भी भविष्य में इस थेरा के समान, आप जैसे बुद्ध का शिष्य बनूँ।" उस समय से, वे बार-बार जन्म लेते हुए देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और परम पूज्य अत्थादस्सी के समय में विनता नामक नदी में एक विशाल कछुए के रूप में पुनर्जन्म लिया। एक दिन, गुरु को नदी के दूसरे किनारे पर खड़े देखकर, कछुआ गुरु के चरणों में लेट गया, क्योंकि वह स्वयं उन्हें नदी के दूसरे किनारे तक ले जाना चाहता था। गुरु ने कछुए की इच्छा को भांप लिया और उसकी पीठ पर सवार हो गए। प्रसन्न होकर कछुआ नदी के उस पार चला गया और गुरु को तेजी से दूसरे किनारे तक पहुँचा दिया। गुरु ने कछुए को धन्यवाद देते हुए, उसके भविष्य की समृद्धि के बारे में बताया और प्रस्थान कर दिया।

उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, कछुआ अपने जन्म-मृत्यु के चक्र में बार-बार भटकता रहा, परन्तु उत्तमतम जन्मों में ही, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वह महाप्रजापति गौतमी की कोख में पुनर्जन्म लेकर महान राजा सुद्धोदन का पुत्र बना। उसके नामकरण के दिन उसका नाम नंदा रखा गया और कहा गया कि उसका जन्म उसके परिजनों के हृदयों को प्रसन्न करने के लिए हुआ है। वयस्क होने पर, गुरु जी सत्य (धम्म) के उत्कृष्ट चक्र का संचालन करते हुए संसार के उत्थान में लगे रहे। वे कपिलवस्तु गए, जहाँ उन्होंने वेस्सन्तरा जातक का उपदेश दिया। अपने सगे-संबंधियों के मिलन समारोह में पक्खरवस्सा करने के बाद, दूसरे दिन भिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रवेश किया। उन्होंने अपने पिता को "उत्तित्थे नप्पमज्जेय्या (सक्रिय रहना चाहिए, पर लापरवाही नहीं करनी चाहिए)" श्लोक के माध्यम से सोतापत्ति की प्रथम अवस्था की सिद्धि प्राप्त करवाई। वे राजवास गए, जहाँ उन्होंने महाप्रजापति को "धम्मं चरे सुचरितं (अच्छी तरह से अभ्यास किए गए सत्य (धम्म) का अभ्यास करना चाहिए)" श्लोक के माध्यम से सकदागामी (एक बार लौटने वाले) की सिद्धि प्राप्त करवाई। तीसरे दिन, राज्याभिषेक, राजवास में प्रवेश और विवाह के शुभ समारोह संपन्न हुए। जब प्रार्थना सभाएँ चल रही थीं, तब वे भिक्षा मांगने के लिए प्रवेश किया, अपना कटोरा युवा राजकुमार नंदा के हाथ में दिया, उन्हें आशीर्वाद दिया (मंगलं), और राजकुमार के हाथ से कटोरा वापस लिए बिना ही मठ चले गए। उन्होंने उस राजकुमार को, जो कटोरा लेकर मठ आया था, उसकी इच्छा के विरुद्ध भी भिक्षु बना दिया। उन्हें यह भी पता चला कि इस प्रकार भिक्षु बनाए जाने पर राजकुमार को गहरी नाराजगी है, और उन्होंने एक युक्ति (उपायन) से उसकी नाराजगी दूर कर दी। उन्होंने बुद्धिमानी से चिंतन किया (योनिसो पटिसंखाय), आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के मार्ग पर चले और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में कहा गया है:—

"हे भगवान अत्थादस्सी,

आत्म निर्भर (स्याम्भू) नेता

संसार में तथागत आए

विनता नदी के किनारे के पास।

विशेष रूप से पानी से बाहर आने के बाद,

मैं, वह कछुआ जिसकी मुद्रा थी

पानी में, परिवहन की इच्छा रखते हुए-

बुद्ध की पूजा करते हुए, नेता के पास पहुँचा।

दुनिया के।

महान ऋषि, बुद्ध अत्थादस्सी

मुझ पर सवार हो जाओ। मैं तुम्हें पार भेज दूंगा;

आप ही विनाशक (अंतकारो) हैं

दुःख (दुक्खा)।

मेरी मंशा का पता चलने पर,

अत्यंत प्रतिष्ठित अत्थादस्सी,

दुनिया के नेता ने चढ़ाई की और

मेरी पीठ पर खड़ा हो गया।

जब से मुझे याद आया और जब से

मैं बुद्धि की आयु प्राप्त कर चुका था।

मुझमें ऐसी कोई भावना मौजूद ही नहीं थी

खुशी तब होती है जब उसके पैरों के तलवे

मेरे पैरों ने मुझे छुआ।

आत्मजागृत बुद्ध, अत्यधिक

प्रसिद्ध अत्थादस्सी, पार करने के बाद

वहाँ से आगे बढ़कर, नदी के किनारे खड़ा हो गया और

उन्होंने ये छंद बोले।

जहां तक मेरे मन में आया

मुझे बहते पानी को पार करना था

नदी का, कछुओं का यह बुद्धिमान राजा

मुझे पार भेजा। इस परिवहन द्वारा

बुद्ध और हृदय पर अधिकार

प्रेम और दया से भरा हुआ, (यह कछुआ)

यह दिव्य जगत में स्वयं को मोहित कर लेगा

अठारह सौ युगों तक।

दिव्य स्थान से वापस यहाँ आने के बाद

दुनिया, अपने उज्ज्वल आधार से प्रेरित होकर

(सुक्कमूला) वह एक ही स्थान पर बैठेगा

बैठने की मुद्रा (ईकासन) और क्रॉस

संदेह की धारा के ऊपर,

(कॅखासोटा).

जैसे उपजाऊ खेत में बीज होते हैं,

यद्यपि कम मात्रा में ही बीज बोए गए हों, तब

भारी बारिश से फसलें बर्बाद हो गईं।

फसलों की प्रचुरता किसान को संतुष्ट करती है।

लेकिन इसी तरह इस क्षेत्र में भी

बुद्ध की शिक्षाओं को साकार किया गया है।

आत्मजागृत बुद्ध द्वारा; जब

भारी बारिश हो रही है, फल मिल रहा है

इससे मुझे संतुष्टि मिलेगी।

मैंने स्वयं को कठिन परिश्रम की ओर निर्देशित किया है।

प्रयास (पधाना); मैं बहुत शांत हूँ और

सांसारिक लाभों से मुक्त (उपाधि);

सभी तरह की कमियों को समझ गया, मैं

संक्रमण से मुक्त जीवन जिएं।

यह अठारह सौ युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने अपना कर्म किया था। मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें, यही है

भेजने का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने परमानंद और सुख का आनंद लेते हुए उचित रूप से कहा: "अद्‌भुत! यह गुरु की चतुराई थी, जिसके द्वारा मुझे अस्तित्व के कीचड़ भरे दलदल से निकालकर निर्वाण की सूखी भूमि पर स्थापित किया गया;" (थेरा) ने अपने आनंद की गंभीर अभिव्यक्ति के रूप में दो श्लोक कहे, उनका प्रसन्न होना स्वाभाविक था।

157. "नासमझ मानसिकता के कारण

मैं तदनुसार समर्पित रहूंगा

स्वयं को सुधारना (मंदना); पीड़ित

कामराग (कामुक वासना) से मैं

अभिमानी (उद्धत) और चंचल, (कपाल)।

158. मुझे बुद्धिमान बनने के लिए उपयुक्त रूप से बनाया गया था (योनिसो)

(पटिपज्जित्वा) बुद्ध, रिश्तेदार द्वारा

सूर्य का, साधनों में चतुर, जिसने बनाया

मेरा मन अस्तित्व के कीचड़ से बाहर आ गया है।

रुख।

वहाँ, अयोनिसो मनसिकारा का अर्थ है: मेरे अनायास ध्यान लगाने के कारण (अनुपायमनसिकारातो), अप्रिय शरीर सुखद होने के दृष्टिकोण से ध्यान का कारण बन गया है (सुभतो), अप्रिय शरीर पर सुखदता की अनुभूति के साथ; यही अर्थ है। मंदनं का अर्थ है: हाथों में आभूषणों आदि से शरीर को सजाना, साथ ही फूलों और इत्रों की मालाओं से भी। अनुयुंजिसं का अर्थ है, मैं तदनुसार इसमें संलग्न हो गया (अनुयुंजि), मैं अपने शरीर को सजाने में लगा रहा; यही अर्थ है। उद्धतो का अर्थ है: जन्म, वंश, सुंदरता, युवावस्था आदि के कारण असंतुलित और असंतुलित मन। चपालो का अर्थ है: मन के स्थिर न रहने के कारण अस्थिर होना (लोलो), वन के बंदर के समान। या मैं भी चंचल था, क्योंकि मैं शरीर की मरम्मत, वस्त्रों को सजाने आदि जैसी चंचलता से जुड़ा हुआ था। आसिं का अर्थ है: मैं (अहोसिं) था। कामरागेन का अर्थ है: भौतिक सुख में वासना से ग्रस्त (वत्थुकाम); अत्तितो का अर्थ है: मैं पीड़ित (पीलितो) और आहत (विबाधितो) था; इस प्रकार, यह व्याख्या है।

उपायकुसलेना का अर्थ है, अनुशासन के अधीन रहने वालों को वश में करने में निपुण, चतुर (विनेय्यानम्); बुद्धेना का अर्थ है, उस भगवान द्वारा, जो इसके कारण थे। यह साधनवाचक शब्द (करणवचनं) वास्तव में कारण (हेतुअत्थे) के अर्थ में है। (थेरा) कामुक वासनाओं के भोज (आपनयन) के अपने लक्ष्य के संबंध में, सौदेबाजी (उपक्कितवादचोदनाय) की निंदा (या आलोचना) करते हुए, एक मादा बंदर (पलुट्ठा) और अप्सराओं का उदाहरण देते हैं। वास्तव में, भगवान बुद्ध ने पूज्य नंदा थेरा से जनपदकल्याणी के संबंध में

सर्वप्रथम इस प्रकार कहा: “जिस प्रकार यह मादा बंदर है, उसी प्रकार जनपदकल्याणी की तुलना कबूतरों के समान (सुंदर पैरों वाली अप्सराओं) से की जा सकती है,” मानो एक बड़े कांटे में से एक छोटा कांटा निकाला जा रहा हो, ठीक उसी प्रकार जैसे कोई चिकित्सक शरीर को गाढ़े तरल पदार्थ से नम करने के बाद उल्टी और दस्त (वमनविरेचनही) द्वारा दोष (दोष) निकालता है और कबूतरों के समान पेय पदार्थ पिलाकर मन को जनपदकल्याणी से विरक्त कर देता है और फिर सौदेबाजी की बातों से मन को उनसे विरक्त करके उसे स्थापित कर देता है। मैंने श्रेष्ठ मार्ग (अरीयमग्ग) पर उचित रूप से, लेकिन उत्कृष्ट (समददेव) और निरंतर भक्ति (अनुयोग) द्वारा शांत स्वभाव (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के माध्यम से, अपने श्रेष्ठ मार्ग (अरीयमग्ग) के हाथ से अपने मन को, जो जन्म-जन्म के चक्रों (संसार) में डूबा हुआ था, पार कराया और उसे निर्वाण की सूखी भूमि पर स्थापित किया।

इस आनंदमय उद्घोषणा (उदान) को पूर्णतया करने के बाद, थेरा अगले दिन भगवान बुद्ध के पास गए और इस प्रकार बोले: “आदरणीय! भगवान बुद्ध ने मुझे पाँच सौ कबूतर-पैर वाली अप्सराओं को उचित रूप से प्राप्त करने के लिए जो भी गारंटी (पटिभोगो) दी थी, आदरणीय! मैं भगवान बुद्ध को उस प्रतिबद्धता (पटिस्साव) से मुक्त करता हूँ।” भगवान बुद्ध ने यह भी कहा: “हे नन्द! जिस क्षण तुम्हारा मन संसार के प्रेम (अनुपादाय) से आसक्त होकर आसक्ति (आसव) से मुक्त हो गया, उसी क्षण मैं भी इस प्रतिबद्धता (पटिस्साव) से मुक्त हो गया।” तब भगवान बुद्ध ने जब उनकी इस स्थिति को जाना कि उनकी इंद्रियों के नियंत्रण द्वार सुरक्षित हैं और वे विशिष्ट हैं, तो उन्होंने उन्हें उन सभी सिद्ध पुरुषों में सर्वोच्च स्थान दिया, जिनके नियंत्रण द्वार सुरक्षित हैं, ताकि उनके इस गुण को इस प्रकार प्रकट किया जा सके: “हे भिक्षुओं! मेरे शिष्यों में, जिनके नियंत्रण द्वार सुरक्षित हैं, उनमें यह नंदा श्रेष्ठ है।” वास्तव में, थेरा ने अपने मन में इस प्रकार कहा: “अपने नियंत्रण की शक्तियों पर ऐसे आत्म-संयम के अभाव के कारण मैं इस दयनीय स्थिति (विप्पकार) में पहुँच गया हूँ, मैं इसे सख्ती से दबाऊँगा (सुत्तु),” वे प्रयास से परिपूर्ण (उस्साहजातो) हो गए, गंभीर लज्जा और भय (बलवहिरत्तप्पो) की भावना के साथ अत्यधिक सचेत (बहुप्रभु) हो गए, और वहाँ भी उन्होंने समर्पित कर्तव्यों (कताधिकारत्ता) के पालन के कारण नियंत्रण की शक्तियों (इन्द्रियसंवरे) के आत्म-संयम में पूर्णता (उक्कंसपारमिं) की सर्वोच्च ऊँचाई (उक्कंसपारमिं) प्राप्त की।

थेरा नंदा के श्लोक पर टीका

तैयार है।

*******oOo *******

' ' BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी

नंदा थेरा

नंदा राजा सुद्धोदन और रानी महा प्रजापति गौतमी के पुत्र थे। वे राजकुमार सिद्धार्थ के सौतेले भाई थे।

जिस दिन बुद्ध दोपहर के भोजन के लिए महल में आए थे, उस दिन नंदा तीन महत्वपूर्ण आयोजनों का जश्न मना रहे थे। वे सिंहासनारोहण, जनपद कल्याणी से विवाह और गृह प्रवेश समारोह का जश्न मना रहे थे।

भोजन के बाद बुद्ध ने अपना कटोरा नंदा को सौंप दिया और मठ लौटने के लिए महल से चले गए। बुद्ध के प्रति आदर के कारण, नंदा कटोरा हाथ में लिए उनके पीछे-पीछे चले और सोचने लगे, "निश्चित रूप से भगवान थोड़ी देर में मुझसे कटोरा ले लेंगे।"

लेकिन बुद्ध ने प्याला वापस नहीं लिया। नंदा, जो अपने बड़े भाई बुद्ध का आदर करते थे, उनके पीछे-पीछे मठ तक गए। उनकी मंगेतर ने उन्हें बुद्ध के पीछे जाते देख, रोते हुए उनके पीछे दौड़ी और बोली, "हे परम पूज्य, जल्दी लौट आइए।" इन स्नेह भरे शब्दों और अपनी प्रेमिका के आँसुओं ने नंदा को बहुत प्रभावित किया। लेकिन बुद्ध के प्रति उनका आदर इतना प्रबल था कि वे प्याला वापस नहीं कर सके।

मठ पहुँचने पर बुद्ध ने देखा कि नंदा में अरहंत बनने की क्षमता है, इसलिए उन्होंने नंदा से पूछा कि क्या वे भिक्षु बनना चाहेंगे। नंदा दुविधा में पड़ गए। वे अपनी मंगेतर के पास लौटना चाहते थे। लेकिन वे बुद्ध को कैसे मना कर सकते थे? अपने बड़े भाई, बुद्ध के प्रति उनका आदर इतना अधिक था कि उन्होंने अनिच्छा से ही सहमति दे दी।

भिक्षु नंदा प्रसन्न नहीं थे। वे अपनी होने वाली दुल्हन के बारे में सोचते रहते थे। अंततः हताशा में उन्होंने अपने साथी भिक्षुओं से संपर्क किया और उन्हें अपनी परेशानियाँ बताईं। नंदा ने उन्हें सूचित किया कि वे संन्यासी जीवन त्यागकर गृहस्थ जीवन में लौटना चाहते हैं।

नंदा के इस निर्णय की खबर जल्द ही बुद्ध तक पहुँच गई। नंदा के पास जाकर बुद्ध ने उनसे समस्या पूछी। नंदा ने बुद्ध को बताया कि वे विचलित और चिंतित थे क्योंकि उन्होंने अपनी सुंदर दुल्हन को शादी के दिन छोड़ दिया था। बुद्ध ने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा कि नंदा थोड़े से प्रयास से ही ज्ञान की परम प्राप्ति कर सकते हैं, इसलिए उन्होंने उनके वर्तमान मन की स्थिति के अनुरूप उन्हें पवित्र जीवन में बनाए रखने का एक उपाय सोचा।

अपनी मानसिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए बुद्ध ने नंदा को तावतिंसा स्वर्ग पहुँचाया। रास्ते में उन्होंने नंदा को एक झुलसी हुई मादा बंदर दिखाई, जिसके कान, नाक और पूंछ जंगल की आग में जल गए थे। अप्सराओं की ओर इशारा करते हुए बुद्ध ने नंदा से पूछा कि कौन अधिक सुंदर है, अप्सराएँ या उनकी होने वाली दुल्हन? अप्सराओं की असाधारण सुंदरता से मोहित होकर नंदा ने उत्तर दिया कि अप्सराओं की तुलना में उनकी होने वाली दुल्हन उस झुलसी हुई मादा बंदर जैसी है जिसे उन्होंने रास्ते में देखा था।

बुद्ध ने नंदा के अपरिपक्व मन को भांपते हुए कहा, "मैं तुम्हें आश्वासन देता हूँ कि यदि तुम दृढ़ संकल्प से मेरे निर्देशों का पालन करोगे तो तुम्हें अप्सराएँ अवश्य प्राप्त होंगी।" अप्सराओं की सुंदरता पर पूरी तरह मोहित नंदा ने बचकाने ढंग से सहमति दे दी।

तब नंदा ने अपने साथी भिक्षुओं को पवित्र संघ में बने रहने के अपने निर्णय और अपने मन परिवर्तन के कारण के बारे में बताया। जल्द ही सबको पता चल गया कि नंदा अप्सराओं को पाने की आशा में पवित्र संघ में शामिल हुए थे। युवा भिक्षुओं ने नंदा का मज़ाक उड़ाया और उन्हें अपशब्द कहे। उनके मज़ाक ने नंदा को उनकी गलती का एहसास दिलाया। अपने बुरे इरादों से शर्मिंदा होकर उन्होंने ज्ञान प्राप्ति का निश्चय किया। कुछ ही समय बाद, लगन से साधना करने पर नंदा ने अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। नंदा ने थेरागथा में अपने आसक्ति, अंतिम मुक्ति और कृतज्ञता का वर्णन किया है।

निर्वाण के असीम आनंद को अनुभव करते हुए, नंदा बुद्ध के पास गए और आदरपूर्वक धन्यवाद देते हुए कहा, "हे प्रभु, मैं आपको दिव्य आनंद की प्रतिज्ञा से मुक्त करता हूँ।" तब बुद्ध ने नंदा को बताया कि निर्वाण के परम आनंद को प्राप्त करते ही वे प्रतिज्ञा से मुक्त हो गए थे, क्योंकि निर्वाण का आनंद किसी भी दिव्य आनंद से कहीं अधिक महान और श्रेष्ठ है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(140):सिरीमत

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (140) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
140. सिरीमत
बुद्ध युग में सावत्थी में एक कुलीन परिवार में पुनर्जन्म लेकर, परिवार की सौभाग्यशाली स्थिति और निरंतर सफलता के कारण उनका नाम सिरिमत रखा गया। उनके छोटे भाई, जो उस सौभाग्य को और बढ़ाने वाले थे, का नाम सिरिवद्धा (भाग्य की वृद्धि) रखा गया। [1] दोनों ने जेतवन के प्रस्तुतीकरण के समय बुद्ध की महिमा देखी, उनके मार्ग पर विश्वास किया और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। सिरिवद्धा ने यद्यपि प्रारंभ में कोई असाधारण शक्तियाँ प्राप्त नहीं कीं, फिर भी गृहस्थों और [128] संन्यासियों द्वारा उनका सम्मान और सहायता की जाती रही। परन्तु सिरिमत को दोषपूर्ण (पूर्व) कर्मों के कारण कम सम्मान प्राप्त हुआ; फिर भी, शांति और अंतर्दृष्टि में स्वयं को लगाकर, उन्होंने शीघ्र ही छह गुना अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त कर ली।

अब साधारण भिक्षु और नौसिखिए, यह न जानते हुए कि सिरिमत आर्य थे, उनकी आलोचना करते रहे और उनके भाई का सम्मान करते रहे। तब थेरा ने उनके गलत निर्णय को दोषी ठहराते हुए कहा:

[159] पारे सीए न पसासंन्ति अट्टा सी असामहितो,॥
मोघां पारे पसासंन्ति अत्ता हि असामहितो॥ ॥

[160] पारे च नां गरहन्ति अत्ता सी सुसमाही,॥
मोघं पारे गरहंती अत्ता हि सुसामहितोऽ ति.॥ ॥

[159] दूसरे उसकी प्रशंसा और सम्मान कर सकते हैं
जिसका अहंकार अनियंत्रित है।
निःसंदेह उनकी प्रशंसा गलत है,
क्योंकि अहंकार अनियंत्रित है।

[160] दूसरे लोग उसकी निंदा और आलोचना कर सकते हैं
जिसका आत्म-नियंत्रण अच्छा है।
निःसंदेह उनका दोषारोपण गलत है,
क्योंकि आत्म-नियंत्रण अच्छा है।

तब सिरिवाद्धा ने उसकी बात सुनकर व्याकुल होकर, अंतर्दृष्टि प्राप्त कर, कुछ ही समय बाद अपना उद्धार भी प्राप्त कर लिया। और जिन्होंने थेरा की निंदा की थी, उन्होंने उससे क्षमा मांगी।

[1] स्पष्टतः भजन XLI का थेरा नहीं।

2.2-10 [140] सिरिमत्थेरा के श्लोक पर टीका

'परे चे नाम पसंसन्ति' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सिरिमा का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, वे ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर उस समय विराजमान हुए जब भगवान पद्ममुत्तरा ने सभी सिद्धियों को प्राप्त करने के बाद तुषिता स्वर्ग में विराजमान थे; बुद्धि की आयु प्राप्त करने पर, वे तीनों वेदों, निघंडु और केतुभ के साथ-साथ परंपराओं के ग्रंथ (इतिहास) के वर्णानुक्रमिक वर्गीकरण में भी निपुण हो गए; वेदों के पदपाठ में पारंगत, व्याख्या में कुशल व्याकरणविद्, लोक दर्शन और महान पुरुष के विशिष्ट लक्षणों में पूर्ण ज्ञान (अनवयो) के साथ, उन्होंने त्याग की प्रवृत्ति (अज्जासय) के कारण अपने इंद्रिय सुखों (काम) का त्याग कर दिया, संसार का त्याग कर एक संन्यासी बन गए और हिमवन्त (हिमालय) क्षेत्र में दिव्य प्राणियों द्वारा निर्मित एक आश्रम में निवास कर रहे थे, जो चौरासी हजार की संख्या में संन्यासियों की भीड़ से घिरा हुआ था, जिसने उनके लिए ध्यान (सम्मोहन) और उच्च ज्ञान (अभिज्ञा/आध्यात्मिक शक्तियां) को बढ़ावा दिया था; पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने के कारण, उन्होंने चिन्हों (लक्खना) के मंत्रों (मन्त) में वर्णित बुद्धों के गुणों को याद किया, एक नदी के मोड़ पर पूर्व बुद्धों को समर्पित (उद्दिसा) एक रेत का मंदिर बनवाया और उनके प्रति श्रद्धापूर्वक आदर और सम्मान व्यक्त करने में विशेष रूप से व्याकुल हो गए। इसे देखकर संन्यासियों ने उनसे पूछा, "यह श्रद्धापूर्वक आदर और सम्मान किसके प्रति समर्पित है?" उन्होंने उनके लिए चिन्हों (लक्खनामन्त) के मंत्र लाए, वहां आने वाले महान पुरुषों के चिन्हों का विश्लेषण (विब्बजित्वा) किया, स्वयं उसी के अनुरूप खड़े होकर बुद्धों के गुणों का वर्णन किया। यह वर्णन सुनकर वे संन्यासी भी श्रद्धा से भर गए और तब से उस मंदिर में श्रद्धापूर्वक आदर करते हुए, उस उत्कृष्ट आत्म-जागृत बुद्ध को समर्पित करते हुए निवास करने लगे।

उस समय भी बोधिसत्व पद्ममुत्तरा तुषिता के स्वर्गलोक से विदा होकर अपनी माता के गर्भ में अवतरित हो रहे थे। अपने अंतिम जन्म में उन्होंने बत्तीस अशुभ संकेत (पुब्बानिमित्तनि) प्रकट किए; वे सभी आश्चर्यजनक और विचित्र घटनाएँ (धम्म) थीं। ऋषि ने उन्हें अपने शिष्यों को दिखाया, जिससे आत्म-जागृत बुद्धों के प्रति उनकी श्रद्धा और भी बढ़ गई, फिर उनका प्राण त्याग गया, वे ब्रह्मा लोक में प्रकट हुए, और जब शिष्य उनके (मृत) शरीर को आदरपूर्वक अर्पण कर रहे थे, तब वे अपने प्रत्यक्ष रूप में (डिस्सेमानारूपो) वापस आए और उनसे कहा, "मैं तुम्हारा गुरु हूँ, जो ब्रह्मा लोक में प्रकट हुआ हूँ; तुम्हें निरंतर रेत के मंदिर को आदरपूर्वक अर्पण करते रहना चाहिए; तुम्हें आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (भावना) के विकास पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए," और फिर वे ब्रह्मा लोक में (वापस) चले गए।

इस प्रकार, बार-बार जन्म लेकर देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करने के बाद, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तो उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक धनी गृहस्थ परिवार में हुआ। उनका नाम केवल सिरिमा रखा गया, क्योंकि उनके जन्म के दिन से ही उस परिवार में समृद्धि और यश में वृद्धि हुई थी। जब वे चलने लगे, तो उनके छोटे भाई का जन्म हुआ। उनका नाम सिरिवद्धा रखा गया; "इस व्यक्ति का जन्म हुआ है, जो महिमा (सिरी) को बढ़ाता है। संयोगवश, दोनों ने जेतवन ग्रहण समारोह में बुद्ध की शक्ति देखी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की और भिक्षु बन गए। अब, इन दोनों में से एक ने पारलौकिक मानक (उत्तरिमनुस्सधम्म) को प्राप्त नहीं किया; वह चार संन्यासी आवश्यकताओं का प्राप्तकर्ता था, गृहस्थों और भिक्षुओं द्वारा व्यक्तिगत रूप से सम्मानित (सक्कतो) और आदर (गरुकतो) किया जाता था; दूसरी ओर, थेरा सिरीमा, भिक्षु बनने के समय से ही, अपने दोषपूर्ण कर्मों के कारण अल्प लाभ प्राप्त करने वाला था और कई लोगों द्वारा निंदा का पात्र था; शांत (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के लिए अपने कर्म करते हुए, वह छह प्रकार के अलौकिक शक्तियों के ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत बन गया, क्योंकि वह छह प्रकार के अलौकिक ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत था। इसलिए ऐसा कहा गया है।" अपदान में:—

"हिमावंता पहाड़ी में था

देवला नाम का एक साधु; वहाँ था

वहाँ मेरा मठ-मार्ग है, जिसे मैंने बनाया है

अमानवीय दिव्य प्राणी।

बुने हुए का बोझ उठाने के बाद

बालों के लिए, मैं हमेशा पानी का घड़ा साथ रखता था।

लंबी टोंटी के साथ; की तलाश में

सबसे उत्कृष्ट लाभ (उत्तमत्थं)

फिर मैं जंगल (विपिना) से बाहर आ गया।

चौरासी हजार विद्यार्थियों ने भाग लिया

मुझ पर; विशेष रूप से उनके प्रति समर्पित

फिर वे अपने कर्मों के आधार पर निवास करने लगे।

जंगल।

विशेष रूप से मेरी प्रेमिका से बाहर आने के बाद-

मैंने एक रेत का मंदिर बनाया;

कई प्रकार की चीजों को एक साथ लाया

मैंने फूल को अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की।

मंदिर की ओर।

मेरे मन को श्रद्धापूर्वक प्रसन्न करते हुए

उस रेत के मंदिर में, मैं अपने अंदर प्रवेश कर गया-

मिताज; मेरे सभी छात्र एक साथ आए

और उन्होंने मुझसे इस मामले के बारे में पूछा।

रेत की सहायता से एक मंदिर बनाया गया था

हे प्रभु, आपने जिस मंदिर का निर्माण किया है!

उपासना; हम भी जानने के इच्छुक हैं

इसके बारे में; पूछे जाने पर, आपको चाहिए

हमें सूचित करें ।

क्या इस बात को शब्द में नहीं बताया गया है?

आकर्षण (मंतपदा) के, वे स्वामी

दृष्टिहीन और उच्च प्रतिष्ठा वाले? उन्हें,

वास्तव में, मैं उन सर्वश्रेष्ठ बुद्ध प्रतिमाओं की पूजा करता हूँ।

पूरी तरह से प्रसिद्ध।

वे महान नायक किन लोगों से मिलते-जुलते हैं?

क्या ये दुनिया के सर्वज्ञानी नेता हैं?

उनका रंग कैसा है? उनके

नैतिक उपदेश और जिनके समान हैं

वे लोग जो पूरी तरह से प्रसिद्ध हैं?

बुद्धों पर बत्तीस चिह्न हैं

(लक्खना), साथ ही चालीस दांतों के साथ

(cattālīsadijā); उनकी आँखें

बछिया जैसी पलकें; वे

ये फल गुंजा झाड़ी के फल के समान होते हैं।

उनके आने-जाने के दौरान,

वे बुद्ध केवल एक कदम आगे की ओर देखते हैं

(युगमत्तम्); उनके घुटनों से कोई आवाज नहीं आती;

उसके शरीर के किसी भी जोड़ की आवाज सुनाई नहीं देती।

वे यात्रा में भी सफल रहे हैं;

वे बस अपने पैर ऊपर उठाकर चले जाते हैं;

पहले उनका दाहिना पैर; यही है

बुद्धों का आदरण (धम्मता)।

वे बुद्ध पूर्णतः निर्भय हैं।

अयाल वाला शेर, पशुओं का राजा; न ही

क्या वे स्वयं को ऊंचा उठाते हैं या नहीं?

जीवित प्राणियों को कम से कम करें।

वे अहंकार से मुक्त थे, चाहे वह ऊँच-नीच का हो या न हो।

सभी प्राणियों में समान हैं; बुद्ध

वे कभी अपनी प्रशंसा नहीं करते; यही बात है

बुद्धों का स्वभाव।

स्वयंजागृत लोगों का भी उदय हुआ।

बुद्ध प्रकाश दिखाते हैं; यह सब

वे धरती को छह प्रकार से हिला देते हैं।

शिष्टाचार का।

वे नरक भी देखते हैं, जो फिर

ठंडक आ गई; तेज बारिश

वर्षा होती है; यही बुद्धों का स्वभाव है।

ये विशालकाय हाथी हैं।

पुरुषों में अद्वितीय और सर्वप्रसिद्ध;

रंग-रूप में वे बेजोड़ हैं।

तथागत अतुलनीय हैं।

मेरे सभी विद्यार्थियों को उचित सम्मान के साथ स्वीकार किया गया।

मैंने जो कहा उसके लिए धन्यवाद; उन्होंने उचित रूप से कहा

इसी प्रकार अभ्यास भी किया गया

उनकी क्षमता और उसके अनुरूप

उनकी ऊर्जा।

जो लोग अपना कर्म करना चाहते हैं

उन्होंने स्वयं ही उचित रूप से अपनी श्रद्धा व्यक्त की

रेत के मंदिर में चढ़ाए गए प्रसाद; वे बन जाते हैं

बुद्ध के प्रति व्यक्तिगत सम्मान व्यक्त करने का मन

क्योंकि वे मेरी बात पर विश्वास करते हैं।

तुसिता से उनका निधन हो जाने के बाद

स्वर्ग, पूर्णतः प्रसिद्ध दिव्य युवक

वह अपनी माँ के गर्भ में ही उत्पन्न हुआ था;

दस हजार (विस्तृत पृथ्वी)

कांप उठा। मैं मठ के गलियारे पर खड़ा था।

मेरे आश्रम से ज्यादा दूर नहीं; मेरे सभी शिष्य

वे सब एकत्रित होकर मेरे समक्ष आए।

धरती बैल की तरह रंभाती है; वह दहाड़ती है

एक शेर की तरह चलता है और (सलती) है।

मगरमच्छ; इसका क्या परिणाम होगा?

वह आत्मजागृत बुद्ध, वह महिमामय

एक, वह गुरु, जिसके बारे में मैंने (तुम्हें) बताया था।

रेत के मंदिर के पास अब प्रवेश कर चुका था

माँ का गर्भ। सत्य का उपदेश देते हुए

(धम्म) उन्हें सुनाया और घोषणा की

महान ऋषि के बारे में, मैंने अपना संदेश भेज दिया।

मैंने विद्यार्थियों को देखा और खुद पालथी मारकर बैठ गया।

पूर्ण रोग के कारण वह शक्ति

मेरा सामान वास्तव में गायब हो गया और वहाँ

मेरी मृत्यु बुद्ध को याद करते हुए हुई, जो सबसे श्रेष्ठ थे।

मेरे सभी छात्र एक साथ इकट्ठा हुए और उन्होंने बनाया

फिर एक अंत्येष्टि चिता; पकड़ में आ गई

उन्होंने मेरे मृत शरीर को भी उठा लिया।

अंत्येष्टि की चिता।

अंतिम संस्कार की चिता को घेरने के बाद,

उन्होंने अपने जुड़े हुए हाथों को अपने हाथों पर रखा

सिर; दुःख के कांटों से छेदे हुए,

वे सब एक साथ आए और रोने लगे।

जब वे शोक मना रहे थे, मैं चला गया

फिर अंतिम संस्कार की चिता पर। मैं तुम्हारा हूँ।

शिक्षक; दुखी मत हो; अच्छे बनो

बुद्धिमत्ता। आपको प्रयास करना चाहिए

आपके स्वयं के कल्याण के लिए, दिन-रात

आलसी मत बनो। लापरवाही मत करो।

आप सभी! अपने-अपने पलों को नियंत्रित करें।

अपने छात्रों को पढ़ाने के बाद, मैं चला गया।

दिव्य जगत में वापसी; अठारह के लिए

युगों (कप्पा) में मैंने खूब आनंद लिया

दिव्य जगत।

मैं पांच सौ बार विश्व-राजा रहा;

मैंने सैकड़ों बार दिव्य शक्ति का अभ्यास किया।

संप्रभुता; शेष युगों में (कप्पा)

मैं अपने चक्करों में उलझकर इधर-उधर भटकता रहा।

बार-बार पुनर्जन्म; मुझे कोई याद नहीं है

दुष्ट अस्तित्व; यही इसका फलदायी परिणाम है।

मेरी शक्ल-सूरत की।

जैसा कि, कत्तिका माह में,

कई पेड़ खिलते हैं, लेकिन उसी तरह मैं भी।

महान ऋषि द्वारा समय पर फलीभूत किया गया।

मेरा प्रयास जुते हुए बैल के समान था।

सुरक्षित आवास तक पहुंचने के लिए बेहतरीन परिवहन

निब्बाण (योगक्खेना) का; पुनःसदृश करना

वह हाथी जिसने अपने बंधन तोड़ दिए थे

मैं रोगों से मुक्त रहता हूँ।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने एक विशेष घोषणा की थी।

बुद्ध के बारे में; मुझे कोई बुराई याद नहीं है।

अस्तित्व; यही इसका फलदायी परिणाम है

मेरी घोषणा।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

सामान्य श्रेणी के भिक्षु (पुथुज्जन) और नौसिखिए, यह न जानते हुए कि पूज्य थेरा सिरिमता एक श्रेष्ठ "आर्य" थे, यद्यपि वे वास्तव में छह प्रकार के उच्च ज्ञान से परिपूर्ण अरहंत थे, उन्होंने लोगों की दृष्टि में विशेष रूप से प्रगति न कर पाने और अल्प लाभ के कारण, कोई अनुमान न लगा पाने की स्थिति में, उन्हें धिक्कारते हुए इधर-उधर की बातें कहीं। दूसरी ओर, वे थेरा सिरिमता की प्रशंसा करते हैं, क्योंकि वे संन्यासी की आवश्यकताओं (पच्चय) के लाभार्थी होने के कारण लोगों द्वारा व्यक्तिगत रूप से सम्मानित (सक्कत) और पूजनीय (गरुकत) हैं। थेरा ने दो श्लोकों में सामान्य श्रेणी (पुथुज्जना) होने की स्थिति की निंदा करते हुए कहा: "किसी ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा करना, जो निंदनीय हो, और किसी ऐसे व्यक्ति की निंदा करना जो प्रशंसा के योग्य हो, नीच (पुथुज्जना) होने का अभिशाप होगा।"

159. "दूसरे लोग उसकी प्रशंसा करते हैं, अगर वह

वह स्वयं भी शांत स्वभाव का नहीं है।

दूसरों की प्रशंसा व्यर्थ ही होती है;

वास्तव में, स्वयं की स्थिति ठीक नहीं है।

शांत।

160. "दूसरी ओर अन्य लोग

अगर वह खुद ठीक है तो उसे दोष दें।

शांत। दूसरे लोग व्यर्थ ही करते हैं।

यदि कोई व्यक्ति स्वयं को दोष देता है, तो वास्तव में वह ठीक है।

शांत।

वहाँ, 'परे' का अर्थ है: अपने अलावा अन्य लोगों को 'अन्य लोग' कहा जाता है; लेकिन यहाँ, बुद्धिमान लोगों के अलावा मूर्ख लोगों को 'अन्य लोग' कहा गया है। वास्तव में, जब वे बिना जाने-समझे और गहराई से जाँचे-परखे बोलते हैं, तो उनकी प्रशंसा भी निंदा की तरह असीमित हो जाती है। 'नम्' का अर्थ है वह व्यक्ति। पसंसन्ति का अर्थ है: वे किसी अवास्तविक (अभूत) गुण (गुण) को उठाकर (रोपण द्वारा) उसकी घोषणा करते हैं और विशेष रूप से उसकी प्रशंसा करते हैं, या तो उस व्यक्ति की जो प्रामाणिक नहीं है, जैसे कि "अमुक भिक्षु ध्यान का लाभार्थी और श्रेष्ठ (आर्य) है", या अज्ञानता (अविद्देसु) के कारण या लालसा (तन्हाविपन्नताय) के प्रभाव में भटक जाने के कारण। च का अर्थ है: यहाँ च शब्द का अर्थ है स्वयं का समाहित होना। इस शब्द से वे यह अर्थ इस प्रकार प्रकट करते हैं: — अन्य लोग उस व्यक्ति की प्रशंसा करते हैं; इतना ही नहीं, वह प्रशंसा भी वास्तव में केवल उनकी प्रशंसा मात्र है; उस प्रशंसा में कोई आधार (वत्थु) नहीं है। अत्तो चे असामहितो का अर्थ है: अन्य लोग जिस भी व्यक्ति की प्रशंसा करते हैं, यदि वह स्वयं सही मार्ग (मार्ग) पर एकाग्रता (मार्ग) या सही फल (फल) पर एकाग्रता (मार्ग) या केवल पहुँच के कारण शांत नहीं है। यदि मन की एकाग्रता (समाधि) का उपचार और अनुप्रयोग (अप्पना) सुव्यवस्थित नहीं है; यदि वह अपने उन सभी दोषों को दूर न कर पाने के कारण भटकते मन से व्याकुल है जो एकाग्रता के विरोधी बन गए हैं; तो यही अर्थ है। इस शब्द "असमाहितो" से वह एकाग्रता (समाधि) के लक्षणों (निमित्त) के अभाव को दर्शाता है। मोघं का अर्थ है: नपुंसक लिंग की स्थिति का वर्णनात्मक विवरण, जैसे "विसमं चन्दिमसूरिया परिवत्तं (चंद्रमा और सूर्य का चारों ओर असमान घूर्णन)" आदि। परे पसंसन्ति का अर्थ है: जो कोई भी अव्यवस्थित व्यक्ति की प्रशंसा करता है, वह व्यर्थ और निरर्थक प्रशंसा करता है। क्यों? अत्ता हि असमाहितो, क्योंकि उस व्यक्ति का मन सुव्यवस्थित नहीं है; इसलिए यही अर्थ है।

दूसरे श्लोक में, गरहंति का अर्थ है: वे या तो निंदा करते हैं, दोषारोपण करते हैं या निंदा करते हैं, या तो उचित अभ्यास न करने की स्थिति को प्रकट करके या फिर एक श्रेष्ठ (आर्य) व्यक्ति के गुणों (गुणमरिधंसन) को नष्ट करके, भले ही वह ध्यान का लाभार्थी हो, अपने अज्ञान (अविद्दसु) होने के कारण या क्रोध सुनने (दोसंतारताय) के कारण। उदाहरण के लिए: — "अमुक भिक्षु गाय दुहने के लिए भी एक पल के लिए भी जागते नहीं हैं; वे पूरी तरह से शारीरिक शक्ति में व्यस्त रहते हैं, नींद में आनंद लेते हैं, वाणी में सुख पाते हैं और समाज में आनंदित रहते हैं," इत्यादि; यही अर्थ है। शेष का अर्थ पहले श्लोक में बताए गए तरीके से समझा जाना चाहिए। जब थेरा ने इस प्रकार इन श्लोकों के माध्यम से सिरिवाढ की स्वयं की अनैतिकता से मुक्ति (निक्किलेश) की स्थिति और सिरिवाढ की अनैतिकता (सकिलेष) की स्थिति को स्पष्ट कर दिया, तो यह सुनकर सिरिवाढ पश्चाताप से भर गया, उसने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का मार्ग अपनाया और सर्वथा अपना भला किया; परन्तु कुछ ही समय बाद, निंदा करने वाले व्यक्तियों ने भी थेरा से क्षमा मांगी।

थेरा सिरिमा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

दूसरे अध्याय पर टीका-टिप्पणी पूरी हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(141):उत्तर

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (141) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
141. उत्तरा
बुद्ध युग में साकेत में [1] एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम उत्तरा रखा गया। सावत्थी में कदंब वृक्ष पर हुए दोहरे चमत्कार से प्रभावित होकर, [2] जहाँ वे किसी काम से गए थे, उन्होंने संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करने के लिए) संन्यास लेने का निश्चय किया, जब भगवान (बुद्ध) ने साकेत में कालका उद्यान में प्रवचन दिया। [3] भगवान (बुद्ध) के साथ राजगृह जाकर, उन्होंने वहाँ

अंतर्दृष्टि प्राप्त की और छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) अर्जित की। बुद्ध की सेवा करने के लिए सावत्थी लौटकर, भिक्षुओं ने उनसे पूछा: 'हे भिक्षु, क्या आपने अपने [129] धार्मिक कर्तव्यों को पूरा कर लिया है?' उन्होंने अन्न (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा करते हुए इन श्लोकों में उत्तर दिया:

[161] खंडा माया परिण्णाता तन्हा मे सुसमुहता,॥
भविता मम बोजझांगा पत्तो मे आसवक्खयो॥ ॥

[162] सोहं खण्डे परिणय अब्बुहित्वाना1 जालिनीm,॥
भावयित्वाना बोजझान्गे निब्बायिस्सं अनासावो' ति.॥ ॥

[161] मैं पाँच कारकों को अच्छी तरह समझता हूँ,
और मेरे भीतर लालसा अच्छी तरह जड़ से उखड़ गई है,
सात ज्ञान-तार विकसित हो गए हैं,
और सभी विष-धुएँ कुछ भी नहीं रह गए हैं।

[162] और चूंकि अब कारक समझ में आ गए हैं,
मैं - देखो! [4] - शिकारी को बाहर फेंक दिया
[जो हर विचार के लिए अपना जाल बिछाती है], [5] और ज्ञान के सामंजस्य को विकसित करते हुए, [6] समझदार और निर्बल, शांति से गुजर जाएगा। [7]

[1] देखें XXVIII.

[2] बुद्ध द्वारा निर्मित (सुम. वी., 57)।

[3] अंग., ii. 24, तथागत (बुद्ध) के ज्ञान और सत्यनिष्ठा की स्पष्टता पर।

[4] सोहं, शाब्दिक अर्थ: 'यह [स्वयं-वही] मैं।'

[5] एक शब्द जूलिनी का विस्तार, 'वह जो जाल बिछाती है' - अर्थात्, लालसा - 'जिसके प्रसार से इंद्रियों का अनेक जाल जाल के समान हो जाता है' (अत्थसालिनी, पृ. 363; बुद्ध. मनोविज्ञान, पृ. 278, n. 2)। चित्तचित्तसंतानतो उद्धरित्वा (टीका)।

[6] बोज्झंगा, जैसा कि श्लोक 161 में है। तुलना करें संकलन, पृष्ठ 66, 180 f. टीका सात को 'धर्म (धम्म) का सामंजस्य' कहती है।

[7] निब्बायिस्सं अनासवो, 'चेतना के अंतिम (क्षण) की समाप्ति से, ईंधन के बिना आग की तरह, मैं (पुनर्जन्म के) खतरे के बिना परिनिब्बान- ते हो जाऊंगा' (टीका)।

2.3. तीसरा अध्याय

2.3-1 [141] उत्तराथेरा के श्लोक पर टीका

खंडा मया परिञ्ञता से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उत्तरा का है। क्या यही उत्पत्ति है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित करने वाले इस व्यक्ति का जन्म 94 युग (कप्पा) पहले भगवान सिद्धार्थ के समय में अपने पारिवारिक घर में हुआ था। बुद्धि प्राप्त करने पर, वे शासन में आनंदित हुए और उन्होंने अपने आप को एक भक्त घोषित किया। जब गुरु का परिनिर्वाण हो गया, तो उन्होंने अपने सगे संबंधियों को एकत्रित किया, बहुत श्रद्धापूर्वक भेंट और व्यक्तिगत आदर अर्पित किया और धर्म को अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट दी। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे बार-बार जन्म लेते हुए देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और साकेत में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उन्होंने उत्तरा नाम प्राप्त किया और वयस्क होने पर किसी कार्य से श्रावस्ती गए। वहाँ उन्होंने कंढ के आम के वृक्ष की तलहटी में बुद्ध द्वारा किए गए दोहरे चमत्कार को देखा, उससे अत्यंत प्रसन्न हुए, कालराम सूत्र की शिक्षा से उनकी श्रद्धा और भी बढ़ गई,

वे भिक्षु बन गए, गुरु के साथ राजगृह गए, उच्च दीक्षा ली, वहीं निवास किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के मार्ग पर चले, और कुछ ही समय में छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत बन गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"जब सिद्धार्थ, रक्षक

दुनिया निर्वाण में विलीन हो गई, मैं लाया

मैंने अपने रिश्तेदारों को साथ लिया और अपना

उनके अवशेषों को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

यह चौरानवे युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले मैंने विशेष रूप से अपनी श्रद्धा व्यक्त की थी

अवशेषों को अर्पित करना; मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

मेरे द्वारा श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाने का परिणाम

अवशेषों के लिए।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, गुरु के श्रावस्ती में निवास करते समय छह प्रकार के अलौकिक ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत बनने के बाद, वे राजगृह से श्रावस्ती गए और जब भिक्षुओं ने उनसे पूछा, "मित्र! क्या आपने भिक्षु के कर्तव्यों की सर्वोच्च ऊँचाई प्राप्त कर ली है?", तो थेरा ने अपने अरहंतत्व (अज्ञा) को प्रकट करने के लिए दो श्लोक कहे:—

161. "सभी समूह (खंडा) थे

मुझे समझ आ गया; मेरी लालसा

इच्छा (तण्हा) अच्छी तरह से दूर हो गई थी।

मेरे ज्ञानोदय के तत्वों में शामिल थे

विकसित हो चुका है; घावों से मुक्ति

मुझे यह प्राप्त हो चुका था।

162. "कि मैंने सब कुछ समझ लिया है

खंडा (समूहों) को प्राप्त करने के बाद

जालनुमा लालसा (जालिनी) को दूर कर दिया

और ज्ञानोदय के तत्वों का विकास किया।

मैं निर्वाण में दोषमुक्त होकर प्रवेश करूँगा।

वहां, खंधा का अर्थ है आसक्ति के पांच समूह (उपादान)। परिञ्ञता का अर्थ है: पूर्ण वर्गीकरण के बाद विकसित और समझा गया: — “यह पीड़ादायक कष्ट (दुक्खा) है; इससे अधिक कुछ नहीं है (इतो भिय्यो)।” इससे उन्होंने पीड़ादायक कष्ट (दुक्खा) के आर्य सत्य (अरियासच्च) के अपने सर्वांगीण ज्ञान (परिञ्ञा) और पूर्ण समझ (अभिसामयं) के बारे में बताया। तन्हा का अर्थ है प्यासा होना, चारों ओर लालसा करना, इस प्रकार इच्छा (तन्हा) की लालसा करना। सुसमुहता का अर्थ है: अच्छी तरह से वध किया हुआ। इससे वे दुःख के मूल (समुदयसच्च) के आर्य सत्य के त्याग की पूर्ण समझ की बात करते हैं। भाविता मम बोज्झंगा का अर्थ है: एक श्रेष्ठ (अरिया) व्यक्ति का गुण (अंग) जिसे ज्ञान (बोधि) माना जाता है, या तो जागरूकता जैसी घटनाओं (धम्म) के सामंजस्य (समग्गी) के लिए। और इसी प्रकार (सतीआदि) या इसके अधिकार के लिए (तं समांगिनो) को ज्ञान (बोधि) माना जाता है; इस प्रकार, ज्ञान का गुण (बोज्झंग)। सही मार्ग (मग्ग) में शामिल कर्म (धम्म) जिन्हें जागरूकता (सती), सत्य की खोज (धम्मविचय), परिश्रम (वीर्य), उत्साह (पीति), शांति (पसद्धि), एकाग्रता (समाधि) और समभाव (उपेक्खा) माना जाता है, विकसित (भाविता), जागृत (उप्पादिता) और बढ़े (वड्ढहिता) हैं। यहाँ भी, ज्ञान के गुणों को ग्रहण करने से, इसके साथ अभ्यास करने की अवस्था के कारण सही मार्ग (मग्ग) के सभी कर्म, साथ ही ज्ञान के तत्वों (बोधि-पक्खीयधम्म) के सभी कर्म भी विकसित (परियापन्न) हुए हैं। इसे ग्रहण किया गया है; अतः इसे देखा जाना चाहिए। लेकिन इसके माध्यम से भी, वह सही मार्ग (मग्गसच्च) के सत्य के विकास (भावना) की पूर्ण समझ को दर्शाता है। पट्टो मे आसवक्खयो का अर्थ है: यहाँ इंद्रिय दोष (कामासव) से शुरू होने वाले दोष (खीयंती) समाप्त हो जाते हैं; इस प्रकार, आसवक्खयो (दोषों का निवारण); इस प्रकार नाम प्राप्त करके, मैंने अजन्मे घटनाक्रम (असंखतधम्मो) को प्राप्त कर लिया है। इससे वह निरोध सत्य (निरोध सच्च) के अपने दर्शन की पूर्ण समझ (अभिसामय) की बात करता है। इस हद तक (एट्टावता) वह अस्तित्व के आधार (सौपादिसेष) के अवशेष के साथ निर्वाण प्राप्त करने की अपनी समृद्धि को दर्शाता है।

लेकिन, अस्तित्व के किसी आधार के बिना निर्वाण प्राप्त करने की अपनी समृद्धि को दर्शाने के लिए, उन्होंने “सोतं” से शुरू होने वाला दूसरा श्लोक कहा। इसका अर्थ है: — खंडे परिञ्ञाय का अर्थ है: इस प्रकार, उक्त विधि से, सभी तत्वों (खंड) को पूरी तरह से समझकर; जालिनी का अर्थ है: इसी प्रकार अच्छी तरह से जानकर। इसमें एक जाल विद्यमान है जो बार-बार घटित होता है (पवत्ति), जो अच्छी तरह से बुना हुआ है और इंद्रियों के आंतरिक और बाह्य निवासों (आयतन) में, अपने शरीर और दूसरों के शरीरों में, अतीत आदि में वर्गीकृत है; इस प्रकार, वह लालसा (तण्हा) जिसे जालिनी (जाल युक्त) नाम मिला। abbahitvāna bojjhaṅge bhāvayitvāna का अर्थ है: इसी प्रकार, परन्तु उसे भी बाहर निकालते हुए, ज्ञान के तत्वों के उक्त वर्गीकरणों (bojjhaṅga) को विकसित करने के बाद, उन्हें आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (bhāvanāpāripūriṃ) के सर्वांगीण विकास की पूर्णता प्राप्त कराकर; anāsavo का अर्थ है: दोषमुक्त होकर, परन्तु इसके फलस्वरूप; nibbāyissaṃ का अर्थ है: उत्पन्न ज्ञान (jātavedo) के साथ इस प्रकार विरक्त (anupādāno) होकर, अब, अंतिम और सर्वथा (carimaka) मन (citta) के निरोध (nirodha) होने पर, मैं पूर्णतः निर्वाण (parinibbāyissāmi) में प्रवेश करूँगा।

थेरा उत्तरा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(142):भद्दाजी

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (142) ------>>>> अगला
अध्याय II.
दो श्लोक
142. भद्दाजी

भद्दिया में इस बुद्ध युग में पुनर्जन्म लेकर, [1] एक पार्षद के इकलौते बच्चे के रूप में, जिसकी संपत्ति अस्सी करोड़ (x10 मिलियन) [2] थी , उसका नाम भद्दाजी रखा गया और उसे विलासिता में पाला-पोसा गया, जैसे कि बोधिसत्व के अंतिम पुनर्जन्म में। ... (टीका में आगे उनकी कहानी बताई गई है कि कैसे उन्होंने पहली बार बुद्ध का प्रवचन सुनते हुए अचानक [130] अरहंतत्व (ज्ञानोदय) का अनुभव किया; बुद्ध उन्हें खोजने के लिए विशेष रूप से सावत्थी से आए थे; और उसके एक सप्ताह बाद वे भगवान (बुद्ध) और उनके साथियों के साथ कोटिगामा गए और गंगा के किनारे ध्यान में लीन हो गए । वहाँ से वे तभी निकले जब भगवान (बुद्ध) वहाँ से गुज़रे, उन्होंने पहले आए प्रमुख थेरों की बात नहीं मानी। अपनी नई सर्वोच्च उपलब्धियों को सिद्ध करने के लिए, बुद्ध ने उन्हें अपनी नौका पर आमंत्रित किया और उन्हें एक चमत्कार करने को कहा। इसके बाद भद्दाजी ने उस डूबे हुए महल को ऊपर उठाया जिसमें वे राजा पनाड के रूप में रहते थे, यह सब 'महा-पनाड-जातक' द्वितीय, क्रमांक 264 में वर्णित है।) फिर थेरा ने उस स्वर्ण महल का वर्णन किया जिसमें वे कभी रहते थे, अपने बारे में बात करते हुए, उस आत्मा के गुज़र जाने के बाद। दूर, [3] जैसे किसी और का:

[163] पनादो नाम सो राजा यस्सा युपो सुवन्नयो,॥
तिरियं सोषास्पाब्धेधो उद्दाहु सहस्सधा॥॥

[164] सहस्सकंदो शतभेन्दु धजलु हरितामयो,॥
अनाक्कुं तथा गंधब्बा चासहसानि सत्तधा' ति.॥॥

[163] पनादा नाम का वह राजा था
जिसका महल सोने का था;
वह सोलह कमरों वाला था,
और हज़ार गुना ऊँचा था।

[164.] यह एक हजार सीढ़ियाँ ऊँचा उठा,
इसकी दीवारें नक्काशी से सजी थीं,
कई शानदार झंडे लटके हुए थे,
जिनमें पन्ना चमक रहे थे।
वहीं वे नाचे, गंधर्व नाचे,
छह हजार सात टोलियों में।

[1] अंगों के देश में, मगध के पूर्व में। कोटिगामा पटना के पास था। बोधिसत्व, निश्चित रूप से, गौतम हैं, बुद्ध बनने से पहले। टीका जातक संस्करण (अगले पृष्ठ पर देखें) से केवल कुछ छोटे विवरणों में भिन्न है, और स्वतंत्र शब्दावली का उपयोग करती है।

[3] इस पौराणिक राजा के बारे में दीघा, iii. 76; जाट., iv., क्रमांक 489; दीपवंश, iii. 7; महावंश (अनुवाद), xxxi. 7 आदि भी देखें। जाट. क्रमांक 264 में भद्दाजी के प्रदर्शन का विस्तृत विवरण दिया गया है। पाठ संस्करणों में कुछ वर्णनात्मक शब्दों को लेकर अनिश्चितता है, और टीका के स्रोत भी समान रूप से विभाजित हैं। इसलिए ऊपर दिए गए गाथागीत रूप में अनुवाद का प्रयास पूर्णतः सही अनुवाद का दावा नहीं करता है। अंतिम दो पंक्तियाँ पाणाद के पिता द्वारा राजकुमार को हंसाने के लिए एकत्रित किए गए मूक कलाकारों या संगीतकारों के व्यर्थ प्रयासों को संदर्भित करती हैं। वह, दिव्य कला की याद दिलाते हुए, केवल तभी थोड़ा मुस्कुराया जब देवता (देवताओं के राजा) सक्का ने एक दिव्य विदूषक भेजा (जाट., उपर्युक्त)। तुलना करें मिल. 130।

2.3-2 [142] भद्दाजिथेरा के छंद पर टिप्पणी

Panādo nāma so rājā से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा भद्दाजी का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म ब्राह्मण परिवार में, भगवान पद्ममुत्तरा के समय हुआ था; ज्ञान प्राप्ति पर, इन्होंने ब्राह्मणों के विज्ञान और कलाओं के सागर में पराक्रम का अंत किया, इंद्रिय सुखों का त्याग किया, संसार त्याग दिया, संन्यासी बन गए, वन क्षेत्र में एक आश्रम बनवाया और वहाँ निवास कर रहे थे, तभी एक दिन उन्होंने गुरु को आकाश में जाते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और हाथ जोड़कर खड़े हो गए। जब गुरु को उनका इरादा पता चला, तो वे आकाश से अवतरित हुए। जब भगवान अवतरित हुए, तो उन्होंने शहद, कमल के अंकुर (भीसा), कमल की डंठल (मूलाला), घी और दूध अर्पित किया। उन पर दया करके भगवान बुद्ध ने उनकी भेंट स्वीकार की, धन्यवाद कहा और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप वे तुषिता (स्वर्ग) में अवतरित हुए, जहाँ वे अपने जीवनकाल तक रहे और बार-बार पुनर्जन्म लेते हुए, समय-समय पर उत्तम जन्मों में विचरण करते हुए, भगवान बुद्ध के समय में अपार धन के धनी बन गए, और उन्होंने अड़सठ हजार भिक्षुओं को भोजन कराया और प्रत्येक को तीन वस्त्र पहनाए।

इस प्रकार, अनेक पुण्य कर्म करके वे दिव्य लोक में अवतरित हुए, जहाँ वे अपने जीवनकाल तक रहे, फिर वहाँ से उनका निधन हो गया और वे बुद्धों से रहित संसार में मनुष्यों के बीच जन्म लेकर पाँच सौ मौन बुद्धों और चार संन्यासी की आवश्यकताओं (पच्चय) के साथ रहे, फिर वहाँ से उनका निधन हो गया, एक राजपरिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ, उन्होंने अपना प्रभुत्व स्थापित किया, अपने पुत्र की सेवा की, जिन्होंने मौन बुद्धत्व प्राप्त कर लिया था, उनके निधन के बाद उनके अवशेषों को एकत्रित किया, एक मंदिर की स्थापना की और उसमें अपनी श्रद्धा अर्पित की। इस प्रकार, इधर-उधर अनेक पुण्य कर्म करके, उनका पुनर्जन्म भद्दिया नगर में अस्सी करोड़ की संपत्ति वाले धनाढ्य भद्दिया के इकलौते पुत्र के रूप में हुआ, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम भद्दजी था। कहा जाता है कि उनके अंतिम जन्म में उनकी समृद्धि, जिसमें आधिपत्य (इस्रिया), धन, अनुचर आदि शामिल थे, बोधिसत्व के समान थी।

उस समय, गुरुजी ने अपना उपवास सावत्थी में बिताया और भिक्षुओं के एक बड़े समूह के साथ भद्दिया नगर गए ताकि वे युवक भद्दजी का उत्थान कर सकें। वे जातिया वन में उनके ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता (ज्ञानपरिपाक) की प्रतीक्षा में रहे। उन्होंने अपने महल की ऊँची इमारत पर बैठकर सिंह-पिंजरे जैसी खिड़की खोली और देखा कि बहुत से लोग भगवान बुद्ध के समक्ष सत्य (धम्म) सुनने जा रहे हैं। उन्होंने पूछा कि इतनी बड़ी भीड़ कहाँ जा रही है, इस बात का पता चलने पर वे स्वयं भी अपने एक बड़े दल के साथ गुरुजी के समक्ष गए और सत्य (धम्म) सुनते-सुनते उन्होंने अपने सभी दोषों का त्याग कर दिया, और सभी आभूषणों से सुशोभित होकर अर्हंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:

"ऐसे कमल में उतरकर

यह तालाब विभिन्न लोगों के लिए एक पसंदीदा स्थान था।

मैंने हाथियों की कई किस्में निकालीं

वहाँ कमल के अंकुर (भीसा) उगते हैं,

अपनी भूख मिटाने के लिए (घासहेतु),

तब।

वास्तव में, उस मोड़ पर, गौरवशाली

एक जिसे पद्ममुत्तरा, बुद्ध कहा जाता है,

लाल बादल का वाहक (रेट्टाम्बराधारो)

आकाश से होकर गुजरा (anilañjase)

अपने चिथड़े-चिथड़े वस्त्र को झाड़ते हुए (पम्सुकुलानि),

फिर मुझे उसकी आवाज सुनाई दी। प्रतिबिम्बित-

उत्सुकता से ऊपर की ओर देखते हुए मुझे वह दिखाई दिया

विश्व का नेता। खुद को बचाए रखते हुए

लेकिन वहीं खड़े-खड़े ही मैंने अपना अनुरोध किया।

विश्व के नेता को; बुद्ध की कृपा से,

दृष्टि रखने वाला (चक्खुमा)

मुझ पर दया करो, मेरी भेंट स्वीकार करो।

शहद में कमल के अंकुर मिलाए गए हों (सहितं)

(भिसेहि), दूध, मक्खन और कमल के डंठलों का

(मुलालिकं)। इसके बाद, दयालु स्वामी,

पूर्णतः प्रसिद्ध, दृष्टि का स्वामी

(चक्खुमा) अवतरित हुए और मेरा प्रस्ताव स्वीकार किया-

उन्होंने मुझ पर दया करके मुझे भोजन दिया।

आत्मजागृत बुद्ध, जिन्होंने (मेरी) स्वीकार कर लिया है

उन्होंने अपना आभार व्यक्त किया (अनुमोदन):

हे गुणवान पुरुष, आप सुखी रहें।

आपका करियर (गति) समृद्ध हो; द्वारा

कमल के अंकुर (भीसा) की इस भेंट का साधन

आपको अपार आनंद प्राप्त हो।

स्वयंजागृत बुद्ध, जिनका नाम जलजुत्तमा था,

सबसे उत्कृष्ट जलप्रपात, स्वयं-

प्रबुद्ध विजेता आकाश में विचरण करता हुआ चला गया।

मैं अपना भोजन प्रसाद (भिक्खम) ग्रहण कर रहा हूँ।

इसके बाद, कमल एकत्र करने के बाद

मैं अपने आश्रम में वापस आ गया।

मैंने कमल के अंकुर को पेड़ पर लटका दिया, मैंने अपना

मेरे दान की स्मृति में।

तेज हवा चलने लगी और

तब जंगल हिल गया; खासकर आकाश

तेज आवाज सुनाई दी और बिजली चमक उठी।

(फली) तब।

परिणामस्वरूप, मुझ पर बिजली गिरी;

फिर वह मेरे सिर पर गिर गया। मैं वहीं रह गया।

बैठे-बैठे ही उनकी मृत्यु हो गई। मेरे 'से अच्छी तरह से जुड़ा हुआ है।

पुण्य कर्म के फलस्वरूप, मैं स्वतः ही जागृत हो गया।

तुषिता का स्वर्ग; मेरा मृत शरीर (कालेवारा)

मुझे गिरा दिया गया था (पतितं); मुझे आनंद आया

स्वयं को दिव्य जगत में। छियासी

हजारों सजी-धजी महिलाओं ने सेवा की।

मुझे शाम और सुबह; यही फलदायी है

मेरे द्वारा अर्पित किए गए कमल के अंकुर का परिणाम।

मानव गर्भ में आने के बाद, मैं बन गया

तो खुश हूं। मेरी आय में कोई कमी नहीं आई है।

धन। यह इसका फलदायी परिणाम है।

मैं कमल के अंकुर का अर्पण कर रहा हूँ।

उस व्यक्ति द्वारा करुणापूर्वक देखभाल की गई

जैसे व्यक्तित्व (तादी) के परमात्मा के रूप में

मेरे सभी दिव्य प्राणियों (देवदेव)

कैंकर पूरी तरह से थक चुके हैं

(परिक्खाण), अब कोई नया अस्तित्व नहीं है-

तनाव (मेरे लिए)।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

मैंने कुछ समय पहले कमल का अर्पण किया था।

अंकुर। मुझे कोई बुराई याद नहीं है।

अस्तित्व, यही फलदायी परिणाम है

कमल के अंकुर का अर्पण करने के बारे में।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

जब उन्होंने अरहंतत्व प्राप्त कर लिया, तो गुरु ने धनाढ्य भद्दिया को संबोधित करते हुए कहा: "आभूषणों से सुशोभित होकर, आपके पुत्र ने सत्य (धम्म) का निरंतर श्रवण करके अरहंतत्व प्राप्त कर लिया है; अतः अब उनका भिक्षु बनना आवश्यक है; यदि वे भिक्षु नहीं बनेंगे, तो वे परिनिर्वाण में लीन हो जाएँगे।" धनाढ्य ने उत्तर दिया, "जब तक मेरा पुत्र छोटा है, उसके परिनिर्वाण में लीन होने की कोई आवश्यकता नहीं है; कृपया उन्हें भिक्षु बना दें।" गुरु ने उन्हें भिक्षु बनाया, उन्हें पूर्ण दीक्षा (उपसंबदेत्व) दी, वहाँ सात दिन निवास किया और कोटि गाँव पहुँचे: वह गाँव गंगा नदी के तट पर स्थित था। कोटि गाँव के निवासियों ने बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षुओं के समूह को विशाल दान दिया। गुरु द्वारा किए गए धन्यवाद (अनुमोदनय) से प्रेरित होकर थेरा भद्दाजी गाँव से बाहर गए और समाधि में लीन होकर बैठ गए। वे मन ही मन कहने लगे, "गंगा नदी के किनारे, सड़क के पास, गुरु के आगमन पर मैं समाधि से उठूँगा।" यद्यपि महान थेरा उनके पास आ रहे थे, फिर भी वे समाधि से नहीं उठे, बल्कि गुरु के आगमन पर ही उठे। सामान्य भिक्षु (पुथुज्जन) इस प्रकार बड़बड़ाने लगे, "यह तो अभी-अभी भिक्षु बना है, लेकिन जब महान थेरा उसके पास आ रहे थे, तब भी नहीं उठा, क्योंकि यह अहंकार से कठोर हो गया है।" कोटि गाँव के निवासियों ने गुरु और भिक्षुओं के समूह के लिए अनेक नौकाएँ एकत्र कीं। गुरुदेव नौकाओं के संयुक्त समूह पर खड़े होकर मन ही मन कहने लगे, "अब मुझे उनकी शक्ति प्रकट करनी होगी," और फिर उन्होंने पूछा, "भद्दाजी कहाँ हैं?" थेरा भद्दाजी गुरुदेव के पास आए और हाथ जोड़कर खड़े हो गए, "आदरणीय गुरुदेव! मैं ही हूँ।" गुरुदेव ने उनसे कहा, "हे भद्दाजी! आइए, हमारे साथ एक ही नौका पर चढ़िए।" वे उछलकर उस नौका पर खड़े हो गए जिस पर गुरुदेव सवार थे। जब गंगा नदी के मध्य में पहुँचे, तब गुरुदेव ने पूछा, "हे भद्दाजी! महापनाद राजा के रूप में आपके निवास के समय आपका रत्नजड़ित महल (अज्जावुत्था) कहाँ है?" "वह अभी भी उसी स्थान पर डूबा हुआ है।" बुद्ध ने कहा, "तो फिर, हे भद्दाजी! अपने साथी साधुओं (सब्रह्मचारी) के संदेह को दूर कीजिए।" उस समय, थेरा ने गुरु को प्रणाम किया, अपनी जादुई शक्ति से बलपूर्वक आगे बढ़े, महल के गुंबद को अपने पैर की उंगलियों के बीच दबाकर (पादंगुलंतरेना सन्निरुम्भित्वा), महल को पच्चीस दीर्घा (योजन) की दूरी तक फैलाकर आकाश में ऊपर उठा दिया (उप्पति): ऊपर उठाते समय (उप्पतन्तो) उन्होंने महल को जल की सतह से पचास दीर्घा ऊपर फेंक दिया। इसके बाद, महल के प्रति लालच के कारण उनके पूर्वज के रिश्तेदार मछलियों, कछुओं और मेंढकों के रूप में पुनर्जन्म लेकर, जब वह महल ऊपर उठा (उठहन्ते), तो चारों ओर लुढ़कते हुए (परिवत्तित्वा) जल में गिर गए।उन्हें गिरते देख गुरु ने कहा: "हे भद्दाजी! आपके रिश्तेदार थक गए हैं (किललमंती)। गुरु के वचन से थेरा ने महल को मुक्त कर दिया। महल अपनी मूल स्थिति में वापस आ गया। भिक्षुओं द्वारा पूछे जाने पर, "आदरणीय गुरुजी! थेरा भद्दाजी ने इस महल को कब अपना निवास स्थान बनाया था?" दूर तट पर पहुँच चुके गुरु ने महापनादजातक का उपदेश दिया और असंख्य भिक्षुओं को सत्य (धम्म) का अमर पेय पिलाया। थेरा ने अपने उस स्वर्ण महल को दिखाया, जहाँ वे पहले निवास करते थे, और दो श्लोकों के माध्यम से उसकी प्रशंसा करते हुए अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) का प्रकटीकरण किया।

163. "उस राजा, जिसका नाम पनादा था, का

सोने से बना महल; यह सोलह वर्ष पुराना था।

प्रत्येक तीर के निशाने आधे लीग के थे

(उब्बेधा) चौड़ाई में और

हजार बार (तीर के चलने से)

ऊंचाई (या उससे ऊपर)।

164. “एक हजार कहानियां (कंडा) थीं”

और सौ शिखर (गंडू);

इसे सुशोभित करने वाले प्रचुर बैनर थे

सोने से बना। वहाँ, छह हजार

नर्तकियों ने सात स्थानों (सत्तधा) पर नृत्य किया।

वहाँ, Panādo nāma so rājā का अर्थ है: बहुत समय पहले पनादा नाम का एक राजा था; उसने अपने आप को किसी और व्यक्ति के रूप में प्रकट किया, क्योंकि उसमें आत्म-अस्तित्व (अत्तभाव) का अभाव था। वास्तव में, जब से वह संप्रभु बना, तब से वह "राजा महापनाद" के नाम से प्रसिद्ध हो गया, क्योंकि वह निरंतर परिश्रम से समृद्ध था, साथ ही उसकी ख्याति भी प्रबल थी। Yassa yūpo suvaṇṇayo का अर्थ है: इस राजा का महल सोने का बना था। Tiriyaṃ soḷasubbedho का अर्थ है: चौड़ाई में यह सोलह तीरों के बराबर है। हालाँकि, यह आधा मील (योजन) तक फैला हुआ है। उभमहु सहस्सधा का अर्थ है:— इस प्रकार, उस महल की ऊँचाई हजार तीरों के आकार से हजार गुना थी। हालाँकि, योजन के संदर्भ में यह पच्चीस योजन ऊँचा है। यहाँ, कुछ विद्वानों ने श्लोक रचना में सुगमता के लिए इसे “आहु” के रूप में विस्तारित किया है। वे इस प्रकार कहते हैं: “आहु इस अहोसी (यह था)।”

सहस्सकण्डो का अर्थ है: हजार मंजिला (भूमिको)। सतगेण्डु का अर्थ है: सौ शिखरों वाला (निय्युहको)। धजालू का अर्थ है: स्तंभों, ध्वजों आदि जैसे झंडों से सुसज्जित, जो शिखरों, शिखरों आदि पर सुशोभित हैं। हरितामयो का अर्थ है: उत्तम रंग के सोने से बना (चामीकरसुवण)। हालांकि, कुछ विद्वान कहते हैं, "नरितजातिमणिसरिक्खतो" जिसका अर्थ है: हरे (हेरित) प्राकृतिक (जाति) जीन (मणि) के समान (सरिक्खतो)। गंधबला का अर्थ है: नर्तक (नटा)। च सहस्सानी सत्ताधा का अर्थ है: उस महल के सात स्थानों पर सात बार लगभग छह हजार नर्तकियों ने राजा को विशेष रूप से प्रसन्न करने के उद्देश्य से नृत्य किया। इस प्रकार नृत्य करने के बावजूद वे राजा को हंसाने में सफल नहीं हुए। तब दिव्य सम्राट सक्का ने दिव्य नर्तकियों को भेजा और एक उत्सव का आयोजन करवाया। तब राजा हँसे।

थेरा भद्दाजी के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(143):शोभिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (143) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
143. शोभिता
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम शोभिता रखा गया। भगवान (बुद्ध) के उपदेश सुनने के बाद, उन्होंने संसार त्यागकर (भिक्षुता ग्रहण करके) छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त की और अपने पूर्व जन्मों को याद करने का अभ्यास इतनी सफलता से किया कि भगवान (बुद्ध) ने उन्हें स्मरण करने वालों में सर्वोपरि स्थान दिया। [1] अपनी इस श्रेष्ठ उपलब्धि पर विचार करते हुए वे आनंद से भर उठे और उन्होंने यह वाणी (गाथा) कही:

[165] सतीमा पन्नवा भिक्खु अरद्धबलवीरियो,॥
पञ्चकप्पसतानाहाऽ एकरातिṃ अनुसारिṃ॥ ॥

[166] कत्तारो सतिपठाणे सत्ताअथ च भावयौ,॥
पञ्चकप्पसतानाहं एकरत्तीं अनुसारिन्ति॥॥

[165] एक भिक्षु (भिक्षु) सचेत, अंतर्दृष्टि से संपन्न,
कठोर प्रयास से दृढ़तापूर्वक काम में लगा हुआ,
मैंने [अनंत अतीत] को याद किया है:
एक ही रात में पाँच सौ युग।

[166] हे ध्यान के चार आरंभ [2] मेरा अध्ययन हो, सात, [3] (महान) आठ! [4] क्योंकि मैंने [अनंत अतीत] को याद किया है:
एक ही रात में पाँच सौ युग।

[1] अंग., i. 25. बहन भद्दा कपिलानी भी इसी प्रकार विशिष्ट थीं (बहनें, पृ. 47)। शोभिता थेरा (संभवतः यही व्यक्ति) तेरह अभिधम्मिकों की धर्मप्रचार परंपरा में तीसरे थे, जिन्होंने इस शिक्षा को महिंदा द्वारा सीलोन तक पहुँचाने तक आगे बढ़ाया। भद्दाजी थेरा दूसरे थे। (अत्थासालिनी, पृ. 32)।

[2] संवाद देखें , ii. 327 ff.; संकलन, पृ. 179. भावयं = भावना होतु (टीका)।

[3] ज्ञानोदय के कारक, ज्ञान के पंख (संकलन, पृ. 180)।

[4] अष्टांगिक मार्ग.

2.3-3 [143] शोभितत्थेरा के श्लोक पर टीका
सतिना पञ्जवा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा शोभिता का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और भगवान पद्ममुत्तरा के समय हंसवती नगर में एक परिवार में पुनर्जन्म लिया। वयस्क होने पर, जब वे गुरु से सत्य (धम्म) की शिक्षा सुन रहे थे, तो उन्होंने देखा कि गुरु ने पूर्व जन्मों के ज्ञान प्राप्त करने वाले भिक्षुओं में एक भिक्षु को सर्वोच्च स्थान दिया है। उन्होंने स्वयं उस पद की आकांक्षा (उद्दिसा) की, पुण्य कर्म किए, उत्तम जन्मों में ही अपने जन्मों का चक्र पूरा किया और भगवान सुमेधा के समय एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर उन्होंने ब्राह्मणों की कलाओं और विज्ञानों में निपुणता प्राप्त की, वैराग्य से विशेष रूप से मुक्त हुए, गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संन्यासी बन गए, हिमवंता पर्वत के निकट एक वन क्षेत्र में एक आश्रम बनवाया, वन की जड़ों और फलों (बड़े और छोटे) से अपना पोषण करते रहे (यापेंतो), बुद्ध के प्रकट होने के बारे में सुना, भद्दावती नगर में गुरु के पास गए, हर जगह केवल एक रात ही ठहरे, धार्मिक भाव से प्रेरित हुए और विशेष रूप से छह श्लोकों में उनकी स्तुति की, जिसकी शुरुआत "तुवं सत्ता च केतु च (आप ही गुरु और ध्वज हैं):" से होती है। गुरु ने उनके भविष्य की समृद्धि का भी खुलासा किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे जन्म-जन्म के चक्रों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। उन्होंने उनका नाम शोभिता रखा। इसके बाद, उन्होंने गुरु द्वारा सिखाए गए सत्य (धम्म) को सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर विकास किया और छह प्रकार के उच्च ज्ञान से युक्त अरहंत बन गए। वे पूर्वलोकों के ज्ञान में भी निपुणता (चिन्नवसी) प्राप्त कर चुके थे। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

हिमावंता के दक्षिणी भाग में, मेरा

आश्रम अच्छी तरह से बनाया गया था। खोज में

मैंने उस समय अत्यंत उत्कृष्ट कल्याणकारी जीवन व्यतीत किया।

जंगल में।

लाभ और हानि दोनों के साथ मैं था

जड़ों और फलों से संतुष्ट।

शिक्षक की निरंतर खोज में, मैं निवास करता रहा।

सभी अकेले।

वहीं और उसी समय, दुनिया में उत्पन्न हुआ

स्वयंजागृत बुद्ध सुमेधा; खींचना

भीड़ में से उसने चार गुना प्रकट किया

महान सत्य।

मैंने स्वयंजागृत बुद्ध के बारे में नहीं सुना था;

किसी ने मेरी ओर इशारा भी नहीं किया;

जब आठ साल बीत गए, तब मैंने सुना

विश्व के नेता का।

लकड़ियाँ निकालकर और झाड़ू लगाने के बाद

मैंने अपने आश्रम की सफाई की, और एक टोकरी भर ली।

बोझ से लदा हुआ (खरीभारं) और चला गया

जंगल से।

गांवों और बाजारों में एक रात बिताना

फिर मैं धीरे-धीरे उन कस्बों की ओर बढ़ा।

चंदवती.

उस अवसर पर, भगवान ने

विश्व के नेता सुमेधा थे।

अमर मार्ग को दर्शाते हुए बाहर निकलना

अनेक जीव।

लोगों के विशाल समूह से आगे निकल जाने के बाद,

मैंने विजेताओं के सागर को नमन किया;

मैंने अपने एक कंधे को खुला रखा था।

मैंने अपनी मृग की खाल पहनकर अपनी अच्छी प्रशंसा की।

विश्व के नेता के। आप स्वामी हैं।

साथ ही बैनर, झंडा और महल (युपो)

आप ही जीव-जंतुओं के लिए राहत (पराया) हैं।

(न) और समर्थन (पतिट्ठा) के साथ-साथ

द्वीप, दो पैरों वाले प्राणियों में सबसे उत्कृष्ट। तुम,

अनुभवी (नेपुन्नो), अंतर्दृष्टि में नायक

(dassanevīro) भीड़ को पार भेजना

पुरुष। कोई अन्य परिवहनकर्ता (ताराको) मौजूद नहीं है।

विश्व में; हे ऋषि! आप सर्वश्रेष्ठ अनुवादक हैं।

पोर्टर (उत्तरितारो)।

मापना संभव है (pametuṃ)

कुसा घास की नोक वाला सबसे बड़ा महासागर,

बूंद-बूंद करके (थेव); यह बिल्कुल असंभव है

आपके सर्वज्ञ ज्ञान को मापने के लिए (पामेटावे)।

वजन वाली छड़ी पर रखने के बाद

तराजू (तुलदण्ड) सहारा देना संभव है

(धरेतवे)। हे दृष्टिवान!

आपकी बुद्धिमत्ता का कोई माप नहीं है।

आकाश का मापन कराना संभव है।

रस्सी से या उंगली से; हे सर्वज्ञानी

बुद्ध! इसे मापना तो बिलकुल असंभव है।

आपका नैतिक उपदेश (सीला)।

विशाल महासागर का पानी, आकाश भी

पृथ्वी की तरह; ये पूरी तरह से मापने योग्य हैं;

हे दृष्टि के स्वामी! आप अतुलनीय हैं।

पूरी तरह से प्रसिद्ध घोषित करने के बाद

सर्वज्ञ बुद्ध छह के माध्यम से

छंदों को पढ़ने के बाद, मैं चुपचाप खड़ा रहा।

मैंने अपने जुड़े हुए हाथों को ऊपर उठा लिया था।

बुद्ध सुमेधा ऐसे थे कि लोग

उन्हें व्यापक रूप से बुद्धिमान (भूरिपञ्ञ) के रूप में वर्णित करें।

और बहुत बुद्धिमान (सुमेधसा)। वह बैठे थे।

स्वयं भिक्षुओं के बीच में

और उन्होंने ये छंद कहे:

मैं उसके बारे में घोषणा करूंगा जो समर्थक है-

उसने अपने दिमाग से मेरे ज्ञान पर दावा किया

स्पष्ट रूप से धार्मिकता से प्रसन्न; जब

मैं जो कह रहा हूँ, आप सब ध्यान से सुनें।

वह दिव्य आनंद में डूबा रहेगा।

सत्तरह युगों के लिए दुनिया (कप्पा)।

वह हजार बार दिव्य होगा

राजा बनें और दिव्य संप्रभुता का प्रयोग करें।

कई सौ बार, वह विश्व-

राजा; उसका क्षेत्रीय शासन ऐसा होगा

प्रचुर मात्रा में कि उनके अवसर होंगे

संख्यात्मक रूप से अगणनीय।

चाहे वह दिव्य प्राणी हो या

एक इंसान होने के नाते, वह शांत स्वभाव का होगा।

पुण्य कर्मों के साथ, बिना किसी कमी के

अपनी मानसिक योजनाओं (संकप्पो) में और

तीव्र बुद्धि (तिक्खपणो)। तीस हजार

युग (कप्पा) इसलिए, वहाँ होगा

विश्व में स्वामी, परिवार में जन्मा

ओक्काका (संस्कृत इक्ष्वाकु) के वंशज और कुल के अनुसार गौतम कहलाते थे।

वह विशेष रूप से अपना घर छोड़कर जाएगा।

और कुछ भी न होते हुए भिक्षु बन जाओ

(अकिंचानो); वह हासिल करेगा (फुसिसाती)

सात वर्षों के भीतर अरहंत पद प्राप्त करने के बाद

उसका जन्म।

जब से मुझे याद है,

जिस समय मैं उस स्थान पर पहुँचा,

(सासनं), इस अवधि के दौरान, मैं करता हूँ

मेरी इच्छा (चेतनम्) से न जानना कि

यह मुझे आनंददायक नहीं लगता।

अपने चक्करों में घूमने के बाद

सभी जन्मों में बार-बार पुनर्जन्म होता है।

मैंने समृद्धि (संपत्ति) का आनंद लिया।

मेरी संपत्ति में कोई कमी नहीं आई थी;

यह मेरी प्रशंसा का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध के ज्ञान का।

मेरी तीनों आग बुझ चुकी थीं;

सभी अस्तित्व का मिट जाना।

मेरे सारे घाव पूरी तरह से साफ हो चुके थे।

थक चुके हैं, अब कुछ नया नहीं बचा है।

अस्तित्व।

यह तीस हजार युग पहले की बात है।

मैंने (बुद्ध के) ज्ञान की प्रशंसा की, मैंने

किसी भी बुरी सत्ता को याद मत करो; यह

प्रशंसा करने का फलदायी परिणाम यही है।

(बुद्ध के) ज्ञान।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

लेकिन अरहंत बनने के बाद, अपने पूर्व निवासों को क्रमानुसार याद करते हुए, उन्होंने अपनी बुद्धिहीन कल्पना के अनुसार ब्रह्मा के अस्तित्व को अचेतन (असञ्ञ) अवस्था में पाया। इसके बाद, पाँच सौ युगों (कप्पा) तक मन की उत्पत्ति न देखने और केवल शेष ज्ञान प्राप्त करने पर, उन्होंने इस पर विचार करते हुए, विधि (नय) द्वारा यह निष्कर्ष (नित्त) निकाला: "यह अचेतन (असञ्ञ) अवस्था का अस्तित्व होना चाहिए।" इस कारण भगवान बुद्ध ने कहा: "हे भिक्षुओं! एक दीर्घायु दिव्य-प्राणियों का निवास है जिसे असञ्ञत्त कहा जाता है, जो अचेतन अवस्था है; वहाँ से प्रस्थान करके शोभिता यहाँ उत्पन्न हुए; वे इस अस्तित्व को जानते हैं; शोभिता को यह याद है।" जब उसने विधि (नय) द्वारा इस प्रकार स्मरण किया, तो गुरु ने उसकी स्मरण शक्ति देखकर उसे अपने पूर्व जन्मों को याद करने वालों में सर्वोच्च स्थान दिया। इसके बाद, इस आदरणीय थेरा ने अपने पूर्व जन्म और उसके उचित फल (पत्तिपत्ती) के स्मरण के ज्ञान पर विचार किया, जो उसका आश्रित मूल (पच्चय) बन गया था। वह प्रसन्न हुए और दो श्लोक बोलकर अपने आनंदमय कथन को गंभीरतापूर्वक व्यक्त किया और उसके अर्थ को स्पष्ट किया (तदत्त दीपं)।

165. "मैं, भिक्षु, जो सचेतनता से परिपूर्ण था

(सती) और ज्ञान, जोरदार प्रयास के साथ

अच्छी शुरुआत (आरोद्धा) याद किया

एक ही रात में पाँच सौ युग

(कप्पा)।

166. "चार आधारों का विकास करना"

जागरूकता, सात (तत्वों के)

ज्ञानोदय) और आठ (तत्व)

सही रास्ते का), मुझे याद आया

एक रात पांच सौ युग (कप्पा)।

वहाँ, सतिमा का अर्थ है: स्वयं के प्रति सजग होना ताकि जागरूकता के आधारभूत सिद्धांतों के विकास और जागरूकता की प्रचुरता (सतिवेपुल्ला) की प्राप्ति के लिए सर्वांगीण पूर्णता (समुदागमना) हो सके। पञ्ञवा का अर्थ है: छह प्रकार के उच्च ज्ञान की सर्वांगीण पूर्णता और ज्ञान की प्रचुरता की प्राप्ति के लिए ज्ञान का स्वामी। भिक्षु का अर्थ है भिक्षु, क्योंकि उसकी पतित अवस्था का नाश हो चुका है। आरच्छबलवीर्यो का अर्थ है सुगठित सिद्धि और श्रद्धा आदि जैसी शक्ति की सर्वांगीण पूर्णता, साथ ही चार प्रकार के उचित प्रयासों (सम्मप्पधान) के प्रयास के लिए। वास्तव में, यहाँ आस्था का ग्रहण (गहनं) और बल का आलिंगन (बलग्गणेन) होता है, यद्यपि जब सती (सती) और बल की प्रबल अवस्था (बलभाव) विद्यमान होती है; जैसा कि: "गोबलिबद्धा पुण्याणासुम्भारा (बैल और सांड, पुण्य और ज्ञान का संयोजन)।" पंचकप्पसतनहं एकरत्तिं अनुस्सरं का अर्थ है: मुझे ऐसा याद आया मानो एक ही रात बीती हो। यहाँ व्याकरणिक शब्द 'विय' को लोप (लुत्तनिद्दित्तो) के रूप में दर्शाया गया है; इसके माध्यम से वह अपने पूर्व निवासों को याद करने के ज्ञान में अपने उत्कृष्ट ज्ञान की अवस्था को प्रकाशित करता है।

अब उन्होंने दूसरा श्लोक बोला, जिसकी शुरुआत "चट्टारो" से हुई, ताकि यह दिखाया जा सके कि उचित अभ्यास (पटिपत्ति) जिसके द्वारा उनकी स्वयं की सिद्धि हुई है, साथ ही पूर्व लोकों के ज्ञान में उत्कृष्टता (सातिसयं) भी प्राप्त हुई है, जागरूकता (सति) प्राप्त होने के बाद भी, इत्यादि। वहाँ, चट्टारो सतिपट्ठने का अर्थ है: शरीर (काय) आदि पर चिंतन करते हुए, और सांसारिक और अलौकिक प्रकृति के चार विभिन्न मिश्रित पदार्थों पर ध्यान केंद्रित करते हुए, जिन्हें अपने स्वयं के क्षेत्र (विषयभेद) के वर्गीकरण द्वारा जागरूकता माना जाता है, ऐसी जागरूकता की स्थापना में। सत्ता का अर्थ है: ज्ञान के सात तत्व (बोज्झंग)। अट्ठ का अर्थ है: पथ के आठ तत्व (मग्गंग); वास्तव में, ज्ञान के सात तत्व (बोज्झंग) हैं, लेकिन जागरूकता (सतिपट्टाना) की स्थापना में अच्छी तरह से स्थापित मन के सर्वांगीण पूर्ण विकास तक पहुँच गए हैं; इसी प्रकार, आर्य अष्टांगिक मार्ग (अरियो अट्ठंगिको मग्गो)। इसी कारण, सत्य (धम्म) के सेनापति ने कहा; "चतुसु satipaṭṭhānesu suppatiṭṭhitacutta sattabojjhaṅge yathābhūtaṃ bhāvetvā (वे लोग जो चेतना के चार आधारों (satipaṭṭhāna) में अच्छी तरह से स्थापित हैं, सत्य (yathābhūtaṃ) के अनुसार ज्ञान के सात तत्वों (bojjhaṅga) को विकसित कर चुके हैं)" इत्यादि: जब विकास (bhāvanā) की सर्वांगीण पूर्ति (pāripūriṃ) सात खरगोशों के एक भाग (koṭṭhāsa) में या ज्ञान में योगदान देने वाले सैंतीस गुणों (bodhipakkhiyadhamma) में प्राप्त हो जाती है, तो अन्य भागों (itare) तक न पहुँचने जैसी कोई बात नहीं है। Bhāvayaṃ का अर्थ है: विकास का कारण (hetu)। (भावना)। बाकी तो बस कहने के तरीके से ही है।

थेरा शोभिता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(144):वल्लिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (144) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
144. वल्लिया
बुद्ध युग में वैशाली में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम काण्मित्त रखा गया। वयस्क होने पर, उन्होंने बुद्ध की महिमा देखी जब वे वैशाली आए, [132] और विश्वास करते हुए, उन्होंने महा-कच्चना के अधीन दीक्षा ली। अंतर्दृष्टि में मंद और प्रयास शुरू करते हुए, वे अपने सहधर्मियों के ज्ञान पर इतने लंबे समय तक निर्भर रहे कि उन्होंने उन्हें वल्लिया (लता-शाखा) कहा, यह कहते हुए, 'जैसे आइवी और ऐसे पौधे जो बिना सहारे के नहीं बढ़ सकते, वैसे ही वह किसी बुद्धिमान व्यक्ति के सहारे के बिना आगे नहीं बढ़ सकता।' [1]

और ऐसा हुआ कि वह थेरा वेणुदत्त का प्रवचन सुनने गया, और उससे सचेत, बुद्धिमान और ज्ञान में परिपक्व होकर उसने उस कुशल शिक्षक से पूछा:

[167] याṃ किक्काṃ सहाविरियो याṃ कक्काṃ बोधुमिचता,॥
करिसाṃ नवारुज्जहस्सां पासा विरियं परक्कमाṃ॥ ॥

[168] त्वाṃ सीए मे मग्गमक्खाहि अंजसअ अमातोगधाṃ,॥
अहं मोनेना मोनिस्सां गंगगासोतोव सगारन्ति॥ ॥

[167] वह सब कुछ जो लगन से किया जाना है,
वह सब कुछ जो सत्य के प्रति जागृत होने के लिए स्वेच्छा से करना चाहिए।
वह सब कुछ मेरा काम होगा और मैं असफल नहीं होऊंगा।
हे देखो, ऊर्जा से भरे मेरे आगे के कदम!

[168] और क्या आप मुझे दिखाएंगे कि कैसे और कहाँ जाना है -
वह मार्ग जो अमृत पर आधारित है - [2] इसलिए मैं मौन अध्ययन में चिंतन करते हुए
ऋषियों के मौन को प्राप्त करूँगा,
जैसे महान गंगा नदी मुख्य धारा में बहती है। [3]

तब वेणुदत्त ने उन्हें अध्ययन के लिए एक अभ्यास दिया, और उन्होंने उस पर काम करते हुए कुछ ही समय बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। सर्वोच्च उपलब्धि की घोषणा करते हुए उन्होंने उन्हीं श्लोकों का उच्चारण किया।

[1] जाहिर तौर पर LIII के वल्लियास से एक अलग थेरा। और CXXIII., जिसके मामले में वलिया कोई उपनाम नहीं होगा। मैंने वल्ली (क्रीपर) को 'आइवी' कहा है, क्योंकि यह आमतौर पर हमारे लिए ऐसे चरित्र का प्रतिनिधित्व करता है। महा-कक्काना पर, CCXXIX देखें। वेणुदत्त अन्यत्र नहीं मिलता।

[2] निब्बाणे पतिथित्ता (टिप्पणी)।

[3] चौथाई श्लोक 'अहम् मोनेना मोनिस्साम्' का शायद अनावश्यक विस्तार किया गया है, लेकिन यह शास्त्रीय भारतीय साहित्य में द्रष्टा या ऋषि (मुनि) और मौन के बीच के संबंध को उचित ठहराने के लिए था (देखें छान्दोग्य उपनिषद, 8:5, 2)। गंगा की उपमा मौन प्रगति और प्राप्ति दोनों को दर्शाती है। फिर भी, टीका मौन से कोई संबंध नहीं रखती; क्योंकि इसमें, मोनेना का अर्थ है 'ज्ञान या अंतर्दृष्टि से' और मोनिस्साम् का अर्थ है 'मैं जानूंगा या पहचानूंगा (निर्वाण)।'

2.3-4 [144] वल्लियाथेरा के छंद पर टिप्पणी
यं किच्चं दल्हवीरियेन से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वल्लिया का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, सुमेध बुद्ध के समय एक ब्राह्मण परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ; बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने कला और विज्ञान में निपुणता प्राप्त की, अपनी अस्सी करोड़ की संपत्ति त्याग दी, संसार त्याग दिया, संन्यासी बन गए, एक नदी के किनारे, वन क्षेत्र में, एक पहाड़ी की तलहटी में एक आश्रम बनवाया और वहाँ निवास कर रहे थे, जब उनकी मुलाकात गुरु से हुई जो उनका उत्थान करने के उद्देश्य से उनके पास आए थे; वे धर्मपरायण हो गए, उन्होंने अपनी हिरण की खाल बिछाई और उन्हें अर्पित कर दी। उन्होंने श्रद्धापूर्वक फूल और चंदन अर्पित किए, आम चढ़ाए और पंचपतित्तित (पंचपतित्तित) पांच आसनों में बैठकर प्रणाम किया। भगवान बुद्ध ने अपने 'बैठे हुए आसन' की सुखदायकता (संपत्ति) प्रकट करते हुए उन्हें धन्यवाद कहा और प्रस्थान किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे वैशाली में एक ब्राह्मण परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ। उन्हें "कण्मित्त" नाम प्राप्त हुआ। वयस्क होने पर, उन्होंने गुरु की शक्ति को तब देखा जब वे वैशाली गए थे, उन्होंने उचित श्रद्धा प्राप्त की और थेरा महाकच्चाना की उपस्थिति में भिक्षु बन गए। वे अल्प बुद्धि और धीमी गति से साधना करने वाले थे, फिर भी उन्होंने अपने बुद्धिमान साथी गुरु पर निर्भर रहते हुए दीर्घकाल तक आध्यात्मिक जीवन व्यतीत किया। भिक्षु उन्हें केवल वल्लिया कहकर पुकारते थे और कहते थे: "जिस प्रकार लता वृक्षों के सहारे ही बढ़ सकती है, उसी प्रकार यह भी किसी ज्ञानी व्यक्ति के मार्गदर्शन के बिना विकसित नहीं हो सकता।" बाद में, उन्होंने थेरा वेणुदत्त से संपर्क किया, उनकी सलाह

मानी, स्वयं को सचेत और पूर्णतः जागरूक (संपजानो) बनाया, और दो श्लोकों का चिंतन करते हुए थेरा से उचित साधना के क्रम (पटिपत्तिक्कम) के बारे में पूछा, क्योंकि वे ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता (ज्ञान) प्राप्त कर चुके थे।

167. "जो कुछ भी दृढ़ता से किया जाना चाहिए

प्रयास, और जो कुछ भी होना चाहिए

यह कार्य उस व्यक्ति द्वारा किया जाता है जो ज्ञान प्राप्त करना चाहता है।

मैं अवश्य करूंगा; मैं लापरवाही नहीं करूंगा।

मेरी मेहनत और प्रयास को जरूर देखें।

168. "आप महोदय! कृपया मुझसे बात करें"

सही रास्ता (मग्गा), सीधा

निब्बाण (अमातोगधम्) में गोता लगाना;

मैं उचित रूप से निर्वाण प्राप्त करूँगा।

सही मार्ग का ज्ञान (मोनेना)

नदी की धारा के समान

गंगा सागर तक पहुँचती है।

वहाँ, yaṃ kiccaṃ daḷhavīriyena का अर्थ है: दृढ़ परिश्रम और निरंतर प्रयास (थिरा परक्कम) द्वारा जो भी कर्तव्य उचित रूप से किया जाना चाहिए; दूसरे शब्दों में, दृढ़ परिश्रम और पौरुषपूर्ण सहनशक्ति (दोरायह) के साथ। Yaṃ kiccaṃboddhumicchatā का अर्थ है: जो भी कर्तव्य चार आर्य सत्यों, या यहाँ तक कि निर्वाण में उचित रूप से प्रवेश करना चाहता है, उसे करना चाहिए। Karissaṃ nāvarrajjhissati का अर्थ है: मैं अब वह करूँगा, मैं चूक नहीं करूँगा: मैं निर्देशानुसार उचित रूप से अभ्यास करूँगा। Passa vīrivaṃ parakkamaṃ का अर्थ है: जब कोई व्यक्ति अपने जीवन को धर्म (धम्म) के अनुसार व्यवस्थित करता है और उसे विधिपूर्वक (विधि) निभाता है, तो वह vīriyaṃ (प्रयास) कहलाता है; और जब वह किसी दूसरे और दूर के स्थान पर कदम रखता है, तो वह "परक्कम (प्रयास)" कहलाता है; यदि विश्वास न हो, तो मेरे उस उचित प्रयास को देखो जिसने vīriya और parakkama नाम प्राप्त किया है: इस प्रकार, वह अपने कर्म करने की इच्छा की अवस्था को दर्शाता है।

त्वंच का अर्थ है: वह अपने अच्छे मित्र, मानसिक अभ्यास दाता (कम्मट्ठान) को संबोधित करता है। मे का अर्थ है मेरा। मग्गमक्खाहि का अर्थ है: श्रेष्ठ मार्ग (मग्ग) का वर्णन करें; कृपया चार प्रकार के आर्य सत्यों का मानसिक अभ्यास सिखाएँ जो मुझे पारलौकिक मार्ग (लोकुत्तमग्ग) प्राप्त करने में सहायक होगा; यही इसका अर्थ है। अंजसं का अर्थ है: मध्य मार्ग (पटिपदा) की अवस्था के कारण दो चरम सीमाओं (अंत) का अनुसरण न करने (अनुपगमना) से सीधा (उजुकं)। आमतगधं का अर्थ है: प्राप्ति को सुगम बनाने की स्थिति के माध्यम से अमर निर्वाण में स्थापित होने की अवस्था। मोनेना का अर्थ है सही मार्ग (मग्ग) के ज्ञान के माध्यम से। मोनिस्सां का अर्थ है: मैं समझूंगा, मैं उचित रूप से प्रवेश करूंगा और प्राप्त करूंगा। चंगासोतो व सागरं का अर्थ है: जिस प्रकार गंगा नदी की धारा निःसंदेह सागर में प्रवेश करती है, उसी प्रकार मैं थेरा से अपने मानसिक अभ्यास के लिए प्रार्थना करता हूँ: "मानसिक अभ्यास में स्वयं को समर्पित करके, मैं सही मार्ग के ज्ञान के माध्यम से निर्वाण प्राप्त करूँगा; अतः मुझे उस मानसिक अभ्यास के बारे में बताइए।"

यह निवेदन सुनकर थेरा वेणुदत्त ने उन्हें मानसिक अभ्यास दिया। उन्होंने भी इस मानसिक अभ्यास में लीन होकर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने की तीव्र इच्छा उत्पन्न की और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में कहा गया है:—

“पांचों धागों को त्यागने के बाद

मनमोहक सुंदरता के कामुक सुख,

दिल को बहुत खुशी हुई। मैं बेघर हो गया।

भिक्षु ने धन का त्याग कर दिया।

अस्सी करोड़ रुपये का।

भिक्षु बनने के बाद, मैंने इस पर ध्यान केंद्रित किया।

नदी के किनारे पर किसी भी कार्य से परहेज करना

मेरे शरीर के माध्यम से किए गए बुरे कर्म और

बुरे कर्मों से बचना।

मेरे पास सर्वश्रेष्ठ बुद्ध आए जो थे

मैं बिल्कुल अकेला रहता था। मुझे पता नहीं था।

वह बुद्ध थे जिनके साथ मैंने अपना हाथ रखा था

वार्तालाप (पटीसंथारा)।

मैंने अपनी सामान्य अभिवादन क्रिया कर ली है।

मैंने उनके नाम और गोत्र के बारे में पूछताछ की।

क्या आप कोई देवता हैं या कोई दिव्य प्राणी?

संगीतकार हो या फिर तुम सक्का हो,

अग्रणी दाता (पुरिंददा)?

तुम कौन हो? या तुम किसके बेटे हो?

महान ब्रह्मा अवश्य ही यहाँ आए होंगे।

आप सभी दिशाओं को प्रकाशित करते हैं जो मिलती-जुलती हैं

उगते सूरज।

हे मेरे प्रिय मित्र! हजार तीलियों वाला

आपके जूतों के तलवों पर पहिए दिखाई देते हैं (पैडे)।

तुम कौन हो? या तुम किसके बेटे हो?

हम आपको कैसे जानेंगे?

कृपया मुझे अपना नाम और गोत्र बता दें;

कृपया मेरे संदेह दूर करें। मैं कोई देवता नहीं हूं।

मैं सक्का नहीं हूँ, जो अग्रणी दानदाता हैं।

मुझमें ब्रह्मा की कोई अवस्था नहीं है।

मैं इन सबमें सबसे उत्तम हूँ। मैं चला गया था।

उनके क्षेत्र (विषया) से परे; मेरे पास था

कामुकता के बंधन टूट गए

आनंद। अपनी सारी विकृतियों को पूरा करने के बाद

जलकर, मैंने सर्वोच्च उत्कृष्टता प्राप्त कर ली थी।

आत्मज्ञान। उन्होंने जो सुना, उसे सुनकर।

मैंने कहा, मैंने यह बयान दिया।

हे महान बुद्ध, यदि आप सर्वज्ञ हैं

ऋषि! कृपया बैठ जाइए।

आप ही दुखों का अंत करने वाले हैं।

(दुक्खा): मैं श्रद्धापूर्वक धूम्रपान करूँगा

आपको भेंट।

मैंने अपनी मृग की खाल फैला दी,

मैंने इसे स्वामी को अर्पित किया। महिमावान

वह व्यक्ति शेर की तरह वहाँ बैठ गया।

पर्वतीय घाटी (गिरिगाभारे) में।

मैं तेजी से पहाड़ी पर चढ़ गया और इकट्ठा किया

आम के फल, उत्कृष्ट साल के फूल

साथ ही चंदन की बहुत ही मनमोहक खुशबू भी।

उन सभी को जल्दी से रोककर,

मैंने दुनिया के नेता से संपर्क किया;

उन सभी को जल्दी से रोककर,

मैंने दुनिया के नेता से संपर्क किया;

बुद्ध को फल अर्पित करने के बाद मैंने

साला में श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाई।

फूल।

बुद्ध के शरीर पर लेप लगाने के बाद

चंदन की खुशबू, मैंने उसे अपना सम्मान अर्पित किया।

हे गुरु, मैं धर्मपरायण और अच्छा बन गया।

भरपूर उत्साह के साथ हार्दिक

(पीटी).

मेरे हिरण पर अपना आसन ग्रहण करने के बाद

त्वचा, सुमेधा, विश्व की नेता,

मेरे इस काम की घोषणा ने मुझे प्रसन्न कर दिया।

(hāsayanto) then.

फल चढ़ाने के कारण

फूलों की माला और मिठाई दोनों के साथ

खुशबू से उसे आनंद मिलेगा।

पच्चीस सौ के लिए दिव्य दुनिया

युग (कप्पा)।

वह अपनी सर्वोच्च शक्ति का प्रयोग करेगा।

(वासवत्ती), उसके

मानसिक इरादे (अनुना मनसंकप्पो);

वह एक इंसान बनने के लिए जाएगा

छब्बीस युग (कप्पा)।

वह शक्तिशाली लोगों का विश्व-राजा बनेगा

जादुई शक्तियां चारों दिशाओं में फैली हुई थीं

(समुद्रों के किनारे) वेभारा नामक नगर में,

दिव्य वास्तुकार द्वारा निर्मित (विस्सा-

(कम्मा)।

(उनका महल) पूरी तरह सोने से सजा होगा।

विभिन्न प्रकार के रत्नों के साथ; यहाँ तक कि इससे भी

इसका मतलब है कि वह अपने चक्करों में इधर-उधर घूमेगा।

प्रत्येक जीवन में बार-बार पुनर्जन्म लेने की प्रक्रिया।

हर जगह उनका सम्मान किया जाएगा (पुजिटो)

अपनी दिव्य अवस्था में और फिर मानवीय अवस्था में

स्थिति। जब उनका अंतिम अस्तित्व विधिवत

जब वह आएगा तो वह ब्रह्मा का रिश्तेदार बन जाएगा।

अपने घर से विशेष रूप से बाहर आकर,

वह बेघर हो जाएगा; बेघर होने के कारण

जो दूसरे छोर तक जा चुका है

उच्च ज्ञान प्राप्त करने पर वह निर्वाण में प्रवेश करेगा।

रोगमुक्त।

ऐसा कहने के बाद, आत्मजागृत

विश्व के नेता बुद्ध सुमेधा

उन्होंने आकाश की ओर प्रस्थान किया (anilañjase)

जब मैं आत्मचिंतन कर रहा था।

उस उत्तम कार्य के फलस्वरूप,

मैंने दृढ़ संकल्प और दृढ़ता के साथ हार मान ली।

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया और तावतिंसा चला गया।

तुसिता से गुजर जाने के बाद मैं उछल पड़ा

मेरी माँ के गर्भ में; वहाँ कोई नहीं है

मेरी संपत्ति में कमी, चाहे किसी भी रूप में हो

मैं गर्भ में निवास करती हूँ।

जब मैं अपनी माँ के घर गया था

गर्भ में, जब भी और जहाँ भी था, उत्पन्न हुआ।

पोषण के लिए भोजन और पेय पदार्थ चाहिए।

मेरी माँ की इच्छा से।

मेरे जन्म के पाँचवें वर्ष तक, मैं

बेघर जीवन जीने वाला भिक्षु बन गया; जब

मेरे बाल मुंडवाए जा रहे थे, मैंने प्राप्त किया

अरहंत पद।

पूर्व कर्मों की खोज में, मुझे कुछ नहीं मिला

मेरी छाती (ओरेना) के साथ। मुझे याद आया

मेरा कर्म तीस हजार युग (कप्पा)

पहले।

हे शुद्ध नस्ल के व्यक्ति, मैं आपको नमन करता हूँ।

हे मनुष्य! हे परम श्रेष्ठ, आपकी आराधना हो!

हे भगवान! तुम्हारे विधान में आकर, मैं

उन्होंने अविचल मार्ग प्राप्त कर लिया है।

यह तीस हजार युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले मैंने अपनी विशेष श्रद्धा व्यक्त की थी

बुद्ध को अर्पित की गई वस्तु। मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

मेरी श्रद्धापूर्वक भेंट का परिणाम

बुद्ध।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने इन्हीं श्लोकों का उच्चारण किया, जिससे उनके अरहंत पद (अञ्ञा) का प्रकटीकरण हुआ।

थेरा वल्लिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(145):वितासोका
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(146):पुन्नमसा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (146) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
146. पुन्णमासा [1]
बुद्ध युग में सावत्थी में एक जमींदार के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने अपने प्रथम पुत्र के जन्म के बाद संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण किया)। एक गाँव के पास रहकर, उन्होंने परिश्रम किया और परिश्रम करते हुए छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त की। इसके बाद सावत्थी जाकर, उन्होंने भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और एक श्मशान में निवास किया। अब उनके पुत्र की मृत्यु हो गई, और उनकी पत्नी, यह सोचकर कि उनकी संपत्ति, जिसके कोई उत्तराधिकारी नहीं थे, राजाओं द्वारा न ले ली जाए , अपने पति से मिलने और उन्हें धार्मिक जीवन छोड़ने के लिए प्रेरित करने हेतु अपने अनुयायियों के साथ गईं। परन्तु थेरा ने अपनी भावहीनता को दर्शाते हुए और अपनी उपलब्धि को प्रमाणित करते हुए, वायु में खड़े होकर कहा:

[171] पञ्चनिवरण हित्वा योगक्खेमस्सा पत्तियाया,॥
धम्मदासं गहेत्वाना नानादासनमत्तनो॥ ॥

[172] पक्कवेकाखीṃ इमाṃ कायाṃ सब्बाṃ संतराबहिराṃ,॥
अज्झट्टां च बहिद्धा च तुच्चो कायो आदिसत्था' ति॥ ॥

[171] मार्ग में आने वाली सभी पाँच बाधाएँ [2] सुरक्षित, निश्चित शांति के विरुद्ध [3] मैंने त्याग दीं।
मैंने पवित्र मार्ग (धम्म) के दर्पण को ग्रहण किया: - [4] यह जानना और देखना कि हम क्या हैं -

[172] इसलिए मैंने इस समूहीकृत फ्रेम [5] पर विचार किया , भीतर और बाहर कड़ी मेहनत की, और मैंने देखा
कि कैसे, चाहे वह मेरा हो या नहीं,
"शरीर खाली [है और व्यर्थता].

[1] X में दूसरा संस्करण देखें। टिप्पणी किसी पहचान को नहीं मानती।

[2] इंद्रिय, द्वेष, आलस्य, विचलितता, उलझन की इच्छाएँ - इन्हें 'अलग रखना' फलदायी बौद्धिक प्रयास के लिए शांति और वैराग्य प्राप्त करने की आवश्यक प्रारंभिक अवस्था थी (संवाद, i. 82 84)।

[3] योगक्खेमा। देखें XXXII.

[4] बहनें, श्लोक 222.

[5] कायो शरीर (शरीर) और, सामान्यतः, एक समूह, या जीव दोनों है।

2.3-6 [146] पुन्णमासत्थेरा के श्लोक पर टीका
पंचनीवरणे हित्वा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पुण्णमास का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने भगवान तिस्सा के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि की अवस्था प्राप्त करने पर, एक दिन जब गुरु ने अपने चिथड़े वस्त्र (पम्सुकूलचीवरं) को एक वृक्ष की शाखा पर टांगकर अपने सुगंधित पवित्र स्थान में प्रवेश किया, तो वे हाथ में धनुष लिए जंगल में गए, संयोगवश गुरु के चिथड़े वस्त्र (पम्सुकूल) पर उनकी दृष्टि पड़ी, वे श्रद्धा से भर गए, उन्होंने अपना धनुष नीचे फेंक दिया, बुद्ध के गुणों को याद किया और चिथड़े वस्त्र (पम्सुकूल) को प्रणाम किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक जमींदार (कुटुंबी) के परिवार में हुआ। कहा जाता है कि उनके जन्म के दिन उस घर के सभी बर्तन सोने और रत्नों से बने सेमों से भर गए थे। इसी कारण उनका नाम पुण्णमासा रखा गया। वयस्क होने पर उन्होंने विवाह किया, और जब उन्हें पुत्र हुआ, तो उन्होंने गृहस्थ जीवन त्यागकर भिक्षु बन गए, एक ग्राम-मठ में निवास किया, परिश्रम किया और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बन गए। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"तिस्सा नाम के धन्य व्यक्ति थे

एक आत्मनिर्भर सर्वोपरि व्यक्ति;

उन्होंने अपने चिथड़े-पिटे वस्त्र (पंसु-) को रख दिया।

(कुला), विजेता ने अपने में प्रवेश किया

मठ।

झुककर (विनाटा) प्रणाम करने के बाद मैं

मैं अपने उद्देश्य से इधर-उधर भटकता रहा

भोजन (भक्खा); एक घेरा जब्त कर लिया-

मैं तलवार लेकर जंगल में दाखिल हुआ।

वहाँ मेरी नज़र एक चोगा पर पड़ी।

पेड़ पर लटके हुए चिथड़े (पंसुकूलं)-

फिर शीर्ष पर। अपना नीचे फेंकने के बाद

लेकिन तभी मैंने अपने हाथ ऊपर उठाए

मैंने अपने हाथ अपने सिर पर रख लिए।

पवित्र मन और नेक दिल वाला, और

मैंने अत्यंत उत्साह के साथ अपना सम्मान व्यक्त किया।

चिथड़े-चिथड़े वस्त्र (पंसुकूल)

बुद्ध को सबसे अच्छे तरीके से याद करते हुए।

यह बानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

मुझे चिथड़ों का वह वस्त्र बहुत प्रिय था।

(पंसुकूल); मुझे कुछ याद नहीं है

बुरा अस्तित्व; यही फलदायी है

मेरी श्रद्धा का परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बनने के बाद, वे सावत्थी गए, गुरु को प्रणाम किया और एक श्मशान में निवास किया; उनके वहाँ पहुँचने के कुछ ही समय बाद उनके पुत्र का निधन हो गया। बालक की माता ने थेरा के आगमन की खबर सुनकर मन ही मन कहा, "राजा इस निःसंतान संपत्ति (सापतेय्यं) को न ले जाएँ।" वह अपने पुत्र को वस्त्रहीन करने की इच्छा से (उप्पब्बजेतुकामा) अपने बड़े दल के साथ थेरा के समक्ष गई, उनसे बातचीत की और उन्हें रिझाने (पालोभेतुं) लगी। थेरा आकाश में खड़े होकर दो श्लोक बोले ताकि उन्हें अपने कामवासना रहित (राग) स्वरूप का ज्ञान करा सकें और उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश दे सकें, साथ ही अपने उचित अभ्यास (पेटिपत्ती) की घोषणा भी कर सकें:

171. "पांच बाधाओं से बचकर

निर्वाण की प्राप्ति के लिए,

बंधनों से मुक्त सुरक्षित आश्रय

(योगक्खेमा), मैंने उसे पकड़ लिया

सत्य का दर्पण (धम्मादास), मेरा

स्वयं की ज्ञान की अंतर्दृष्टि (ज्ञानदस्सना)...

172. "मैंने इस शरीर पर पूरी तरह से विचार किया।"

बाहर और अंदर एक साथ। मुझे मिला

मुझे पता चला कि मेरा शरीर दोनों आंतरिक रूप से खाली था-

आंतरिक और बाह्य रूप से।

वहाँ, pañca nīvaraṇe hitvā का अर्थ है: इंद्रिय सुख की इच्छा से शुरू होने वाले पाँचों अवरोधों को त्यागकर, ध्यान की प्राप्ति के द्वारा उन्हें नष्ट करना (विद्धंसत्वा)। Yogakkhemassa pattiyā का अर्थ है: निर्वाण की प्राप्ति के लिए, जो इंद्रिय सुख के बंधन से शुरू होने वाले चार बंधनों (योग) से मुक्त है। Dhammādāsaṃ का अर्थ है वह दर्पण जो सत्य (धम्म) बन गया है; वास्तव में, क्योंकि दर्पण प्रतिबिंब (आदमसेति) द्वारा मानसिक शरीर (नामकाय) के गुण को स्पष्ट रूप से दर्शाता है, आत्म-दुराचार (संकिलेषधम्म) के कर्मों के शुद्धिकरण (वोदाह) को प्रकट (विभावनेन) करता है, साथ ही आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सन्तस) से देखने वाले को इसके त्याग का प्रमाण भी देता है। इसलिए उन्होंने कहा:—--

"Dhammādasaṃ gahetvāna,

ñāṇadassanāmattano;

पचवेक्खिं इमं कायं,

sabbaṃsantarabāhiraṃ"

(आध्यात्मिक को पकड़ लेने के बाद)

दर्पण, ज्ञान के प्रति मेरी अपनी अंतर्दृष्टि,

मैंने इस शरीर पर पूरी तरह से विचार किया।

अंदर और बाहर दोनों तरफ।

धम्म दर्पण को धारण करके, मैंने अपने ज्ञान की दृष्टि से इस शरीर, कर्मों के संग्रह (धम्मसमुहं), अपने इस आत्म-सत्ता का उचित प्रतिबिंब देखा और अवलोकन किया, जो आंतरिक और बाह्य इंद्रियों (आयतन) के क्षेत्र होने के कारण पूर्णतः बाह्य और आंतरिक है, और इसमें "अनित्यता (अनिच्चं)," "दुःख (दुक्खं)" और "अनात्म" (अनात्म) जैसी कोई भी बात नहीं है। इस प्रकार अवलोकन करने वाले मेरे द्वारा, अज्जत्तं च बहिद्धा च अपनी उस निरंतर सत्ता (अत्तनोसन्ताने) में संलग्न होता है जो सार (सार) आदि से सदा रहित है, जो खाली है और मेरे ज्ञान की दृष्टि से पाँच स्कंधों (खंधापंचक) के रूप में गिनी जाती है। वास्तव में, संपूर्ण पाँचों स्कंधों को "काया (शरीर)" कहा गया है, जैसे कि: "अविज्जानिवुतस्स भिक्खवे बादस्सतन्हासंयुत्तस्स एवमयं कायो समुदागतो (हे भिक्षुओं! अज्ञान (अविज्जानिवुत) से घिरे और भोग (तन्हाससंयुत्त) में अच्छी तरह से बंधे इस मूर्ख व्यक्ति के शरीर का परिणाम (समुदागतो) यह हुआ है)," इत्यादि। "अदिस्साथ" का अर्थ है: इसके द्वारा, "परन्तु जो कुछ भी समझा जाना चाहिए, वह देखा जा चुका है; अब ऐसा कुछ भी नहीं है जिसे मैं देख सकूँ;" इस प्रकार, उन्होंने अपने अर्हतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया ताकि यह दिखाया जा सके कि उन्होंने वह कर लिया है जो किया जाना चाहिए। इस प्रकार, थेरा ने अपनी पूर्व पत्नी को सत्य (धम्म) की शिक्षा दी, उसे (तीन) शरणों (सरणों) और नैतिक उपदेशों में सुस्थापित किया और उसे विदा कर दिया।

थेरा पुण्णमास के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(147):नंदका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (147) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
147. नंदका
बुद्ध युग में चंपा में [1] एक कुलीन परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम नंदक रखा गया। वे भरत के छोटे [135] भाई थे, जिनकी कहानी आगे बताई जाएगी। जब दोनों वयस्क हुए, तो उन्होंने सुना कि सोन-कोलिविसा [2] ने संसार त्याग दिया है (सन्यास ग्रहण कर लिया है)। यह कहते हुए कि, 'सोन जो इतना कोमल है, वह भी (सन्यास ग्रहण कर लिया है); अब हमारा क्या?' वे भी संसार त्याग कर (सन्यास ग्रहण कर लिया)। भरत ने शीघ्र ही छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त कर ली, लेकिन नंदक, विकारों के प्रबल प्रभाव के कारण, अंतर्दृष्टि प्राप्त करने में असमर्थ रहे और केवल उसका अभ्यास ही कर सके। तब भरत ने उनकी सहायता करने की इच्छा से उन्हें अपना सेवक बना लिया और विहार से बाहर चले गए। सड़क के किनारे बैठकर उन्होंने उन्हें अंतर्दृष्टि के विषय में उपदेश दिया।

एक कारवां गुजर रहा था, तभी एक बैल दलदल में गाड़ी खींचते-खींचते गिर पड़ा। कारवां के सरदार ने उसे गाड़ी से उतारा और घास-पानी पिलाया। थकान दूर होने पर, बैल को फिर से जोतकर और ताकतवर बनाकर उसने गाड़ी को दलदल से बाहर खींच लिया। तब भरत ने कहा, 'क्या तुमने वह घटना देखी, भाई नंदक?' 'हाँ।' 'इसका अर्थ समझो।' नंदक ने कहा, 'उस तरोताजा बैल की तरह, मुझे भी संसार के दलदल से खुद को निकालना होगा।' और इसी को अपना अभ्यास बनाकर उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। फिर उन्होंने अपने भाई को इन श्लोकों में ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[173] यथापि भद्दो अजञ्ञो खलित्वा पतितिथति,॥
भिय्यो लद्धना सवेगं आदिनो वहते धुराँ॥ ॥

[174] इवं दस्सानसम्पन्नं सम्मासंबुद्धसावकाऽ,॥
अजनियां मण धारेथा पुत्तं बुद्धस्स ओरासन्ति॥ ॥

[173] भले ही वह ठोकर खाकर गिर जाए,
महान नस्ल का वह साहसी जानवर एक बार फिर दृढ़ता से खड़ा होगा।
नए प्रयास के लिए फिर से प्रेरित होकर,
अब नष्ट नहीं हुआ, अपना बोझ खींचता हुआ आगे बढ़ता है।

[174]
अतः मुझे उस व्यक्ति के रूप में देखो जिसने सर्वप्रबुद्ध ईश्वर से सीखकर और
सच्ची अंतर्दृष्टि प्राप्त करके श्रेष्ठ वंश का हो गया है,
और वास्तव में बुद्ध का पुत्र है।

[1] अंगो की राजधानी, अब बागुलपुर। उच्चारण चंपा.

[2] सीसीएक्सएलआईआई देखें। निम्नलिखित उदाहरण रमणीय-विहारिन के मामले में मिलता है, जैसा कि टीका हमें याद दिलाती है (एक्सएलवी)।

2.3-7 [147] नंदकत्थेरा के श्लोक पर टीका

यथा पि भद्दो आजाञ्ञो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा नंदक का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, वे भगवान सिख धर्म के समय सीमावर्ती क्षेत्र में उत्पन्न हुए; ज्ञान प्राप्ति पर वे वनवासी बन गए और भटकते रहे, जब एक दिन संयोगवश उनकी नज़र गुरु के आश्रम के मार्ग पर पड़ी, वे धर्मपरायण हो गए और उन्होंने रेत के कण बिखेर दिए। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे, और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे चंपा में एक धनी गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम नंदक रखा गया। उनके बड़े भाई का नाम भरत था। उनका 'पूर्व संबंध' (पुब्बयोग) अगली कथा (अनंतरा) में स्पष्ट हो जाएगा। दोनों ने भी, जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर ली, तो सुसंस्कृत परिवार के पूजनीय सोन के बारे में सुना, जो भिक्षु बन गए थे। उन्होंने आपस में कहा, "सोन जैसा इतना कोमल और सजग व्यक्ति भी भिक्षु बन गया है; हम क्यों न बनें?" और वे भी भिक्षु बन गए। दोनों में से, भरत ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि को तेजी से विकसित किया और शीघ्र ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बन गए। दूसरी ओर, नंदक अपने अत्यधिक दुराचार के कारण आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को पूरी तरह से विकसित नहीं कर पाए; उन्होंने केवल आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म किया। तब थेरा भरत को जब उनकी प्रवृत्ति (आसय) का पता चला, तो उन्होंने अपने छोटे भाई को अपना परिचारक (पच्चासमण) बना लिया, क्योंकि वे अपने छोटे भाई की सहायता (अवसयो) करने के इच्छुक थे, इसलिए वे मठ से बाहर आए, सड़क के किनारे बैठ गए और (अपने छोटे भाई को) आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने पर प्रवचन दिया।

उस समय, जब बैलगाड़ियों का एक काफिला यात्रा पर था, एक बैल जो गाड़ी से जुता हुआ था, दलदली जगह पर गाड़ी को खींचने में असमर्थ होकर ठोकर खाकर गिर पड़ा (परिपटी)। इसके परिणामस्वरूप, काफिले के सरदार ने बैल को गाड़ी से अलग किया, उसे पानी पिलाया और घास खिलाई, उसकी थकान दूर की और फिर उसे बोझ उठाने के लिए जुता दिया (धुरे योजेसी)। इसके बाद, थकान दूर हो चुकी (वूपसंतपरिसम्मो), बैल ने अपनी शक्ति वापस पाकर गाड़ी को दलदली जगह से बाहर निकाला और उसे सूखी भूमि पर स्थापित किया (थला)। तब थेरा भरत ने नंदक से पूछा, "मित्र नंदक! क्या तुमने इस (बैल) द्वारा किए गए कार्य को देखा?" उसे यह दिखाने के बाद, थेरा भरत ने अपने छोटे भाई द्वारा यह बताए जाने पर कि उन्होंने इसे देखा है, कहा, "तुम्हें इस बात पर ध्यान देना चाहिए।" दूसरे ने मन ही मन कहा, "जिस प्रकार थकावट दूर होने पर बैल दलदल से अपना बोझ निकाल लेता है, उसी प्रकार मैं भी संसार रूपी दलदल से बाहर निकल आऊं।" उसने इसी घटना को अपने चिंतन का विषय बनाया और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का अभ्यास करते हुए शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में कहा गया है:—

मैं पहले हिरण का शिकारी था,

घने जंगल में; घूमना-फिरना

उड़ने वाले हिरणों की खोज (vātamiga),

मैं मठ के गलियारे पर पहुँच गया।

(चंकमा)। रेत लाने के बाद

मैंने इसे अपनी गोद (उच्चांग) पर फैला दिया।

वक्ता के मठ के मार्ग पर

अच्छे शब्दों (सुगाता) का, धारक

सुंदर महिमा (सिरिमा) का होना

धर्मपरायण और नेक हृदय वाला।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने रेत बिछा दी; मैं करता हूँ

किसी भी बुरी घटना का जिक्र याद नहीं;

यह रेत का फलदायी परिणाम है

(फैल रहा है)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने सबसे बड़े भाई थेरा भरत की उपस्थिति में अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करते हुए दो श्लोक कहे।

173. "एक उत्कृष्ट संपूर्ण के अनुसार-

रोटी ठोकर खाकर फिर खड़ी हो गई;

मुझे और भी अधिक पछतावा हुआ; बिना

दुखी (अदीनो) होने के कारण इसने बोझ उठाया।

174. "इसी प्रकार कृपया पहचानें

(धारेथा) मुझे एक शुद्ध नस्ल का होने के लिए,

अंतर्दृष्टि से संपन्न, शिष्य

सर्वथा आत्मजागृत बुद्ध का,

बुद्ध के सगे पुत्र।

वहाँ, bhiyyo laddhāna saṃvegaṃ, adīno vahate dhuraṃ का अर्थ है: पश्चाताप करते हुए, "यह मेरी जन्मजात शक्ति और परिश्रम (जातिबलवीरिय) के अनुरूप नहीं है, अर्थात्, जो बोझ मुझ पर आया है उसे न सह पाना," अब मैं दुखी (adīno) नहीं हूँ, न ही मेरा मन उदास (adīnamānaso) है, बल्कि मैं अनासक्त (alīnacitto) हूँ। वैकल्पिक रूप से, वहाँ इस प्रकार पढ़ने पर: "Alīno;" का अर्थ है: "अनासक्त"। इससे भी अधिक, बार-बार, वह अपना भारी बोझ स्वयं सहता है और बह जाता है (ubbahati)। शेष उसी प्रकार है जैसा कि थेरा रमणीयविहारी के श्लोक की पूर्व व्याख्या (heṭṭhā) में कहा गया है।

थेरा नंदक के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(148):भरत

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (148) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक

148. भरत
अब जब उनके छोटे भाई नंदका ने घोषणा की कि उन्हें अञ्ञा प्राप्त हो गया है (जैसा कि पिछले थेरागथा में था), तो भरत के मन में यह विचार आया: [136] 'चलो हम दोनों तुरंत भगवान (बुद्ध) के पास चलें और उन्हें बताएं कि हमने किस प्रकार पवित्र जीवन व्यतीत किया है।' और उन्होंने नंदका से ये श्लोक कहे:

[175] एहि नन्दका गच्चमा उपज्झायस्सा सन्तिकाऽ,॥
सिहानादां नदिस्सामा बुद्धसेठस्स सम्मुखा॥ ॥

[176] याया नो अनुकम्पाय अम्हे पब्बाजयी मुनि,॥
सो नो अत्थो अनुप्पत्तो सब्बसाऽयोजनकखायोऽ ति.॥ ॥

[175] आओ, नंदक, अब हम उनके पास चलें
जिनकी धन्य शिक्षा ने हमें वह सब सिखाया जो हम जानते हैं;
और जागृत, प्रधान की उपस्थिति में,
आइए हम अपने हृदयों के सिंह के स्तुतिगान का आनंद लें।

[176] वह खोज जिसके लिए पवित्र ऋषि ने [प्रेम
और महान] करुणा में हमें [1] दोनों को आगे बढ़ाया -
वह परम अच्छाई हम दोनों ने जीत ली है,
और हर बंधन जो हमें रोक रहा था, चला गया है।

[1] Pabbajayi pabbajesi. Cy.

2.3-8 [148] भरतथेरा के श्लोक पर टिप्पणी।
'एहि नंदक गच्छामा' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा भरत का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि इनका पुनर्जन्म भगवान अनोमदस्सी के समय एक गृहस्थ परिवार में हुआ था। एक दिन जब वे ज्ञानोदय की आयु प्राप्त कर चुके थे, तो वे दो चप्पलें (उपाहनद्वयं) लेकर जा रहे थे, जो पहनने में कोमल और सुखदायक (मुदुसुखसम्फसं) थीं और देखने में भी सुंदर थीं। तभी उन्होंने गुरु को आते-जाते देखा और पुण्य भाव से वे चप्पलें भेंट करते हुए बोले, "भगवान इन्हें पहन लें, इससे मुझे दीर्घकाल सुख और कल्याण प्राप्त होगा।" भगवान ने उन्हें उत्थान के उद्देश्य से चप्पलें पहना दीं। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच जन्म-मृत्यु के चक्र में विचरण करते रहे और अंत में चंपा नगर के एक धनी गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया, तभी इस बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम भरत था। ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, उन्होंने यह समाचार सुना कि थेरा सोन ने संन्यासी बन गए हैं, और स्वयं संन्यासी संघ में शामिल हो गए, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों (कटपुब्बकिच्चो) को पूरा किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कार्य जारी रखा और शीघ्र ही छह प्रकार के अलौकिक ज्ञान से युक्त अरहंत बन गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"धन्य अनोमादस्सी,

दुनिया में सबसे उम्रदराज, बैल

पुरुषों में से, दृष्टि रखने वाला व्यक्ति आया

अपने दिन के प्रवास से बाहर और आया

पथ। धारण करके (गयाहा)

अच्छी तरह से बनी चप्पलों का जोड़ा (पानाधिम्)

मैंने एक यात्रा शुरू की जहाँ मेरी मुलाकात हुई

स्वयंजागृत बुद्ध, सुंदर-

पैदल यात्री जैसा दिख रहा है।

मेरा मन अत्यंत धार्मिक भावों से भरा हुआ था,

मैंने अपनी चप्पलें उतार दीं (पानाधिं),

उन्हें उनके चरणों के तलवे पर रख दिया।

और उन्होंने यह बयान दिया।

हे महान वीर! हे सुगाता के राजा!

हे विनायक (प्रमुख शिष्य)!

मुझे यहीं से सफलता मिलेगी;

ताकि मेरा हित पूरा हो सके।

परम पूज्य अनोमादस्सी, सबसे बड़े

दुनिया में, पुरुषों में बैल ने

चप्पलों के जोड़े (पानाधिं) पर और

यह शब्द बोला।

मैं उस व्यक्ति की घोषणा करूंगा जो

धार्मिक रूप से प्रसन्न होकर उसने पेशकश की

मुझे अपनी हथेलियों से उसकी चप्पलें (पानाधिं);

जब मैं बोल रहा हूँ तो कृपया मेरी बात ध्यान से सुनें।

बुद्ध को जो कुछ पता चला था, उसे जानकर

आवाज उठाई गई, सभी दिव्य प्राणी एक साथ आ गए

प्रसन्न मन और अच्छे हृदय से भरे हुए

उत्साह (वेदजाता) के साथ और उन्होंने

हाथ जोड़े। यह व्यक्ति खुश हो जाएगा।

चप्पलें भेंट करके (पानाधिनम्)।

वह पचपन बार व्यायाम भी करेगा

ईश्वरीय संप्रभुता।

हजार बार, वह विश्व बन जाएगा-

राजा; उसका क्षेत्रीय शासन समृद्ध होगा

और संख्यात्मक रूप से अकल्पनीय।

इसलिए, अनगिनत युगों (कप्पा) के बाद, वहाँ

वह विश्व का गुरु बन जाएगा।

कुल द्वारा गौतम नाम दिया गया, संतान

ओक्काका परिवार के। उनकी शिक्षाओं में

(धम्मेसु) वह एक वारिस होगा, एक अभिभावक होगा

धर्म द्वारा सृजित पुत्र; सर्वांगीण गुणों से परिपूर्ण

वह सभी दोषों को समझ गया होगा-

दोषों से मुक्त होकर निर्वाण में प्रवेश करें।

यह गुणवान व्यक्ति उभर कर आएगा

दिव्य जगत में हो या मानवीय जगत में।

दुनिया; वह उपयुक्त रूप से समानता प्राप्त कर लेगा

आकाशीय परिवहन का।

मुझे तो हमेशा ही वे दिखावटी महल जैसे लगने लगते हैं।

पालकी, पोर्टेबल बिस्तर, अच्छी तरह से सजाए गए

हाथी, और यहाँ तक कि रथ भी अच्छी तरह से जुते हुए

शुद्ध नस्ल के।

अपने घर से बाहर निकलते समय, मैंने ऐसा किया,

एक रथ; जब भी मेरे बाल काटे जाते थे

और, मैंने अरहंत पद प्राप्त कर लिया।

मुझे अपने लाभ अच्छे लगे थे;

मेरा व्यापार अच्छी तरह से चल रहा था;

चप्पलों की एक जोड़ी भेंट करने के बाद (pāna-

(धिं) मैंने अविचल मार्ग प्राप्त कर लिया था

(इन्बाना का)।

यह असंख्य युगों (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने चप्पल का चढ़ावा चढ़ाया;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

चप्पलों का अर्पण (पानाधी)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के अलौकिक ज्ञान (अभिज्ञा) से अर्हंत बनने के बाद, उन्होंने थेरा नंदक से अपने मन में उठे विचार को व्यक्त करने के लिए दो श्लोक कहे: "अब, नंदक भी अर्हंत बन गए हैं; तो फिर, हम दोनों गुरु के समक्ष जाकर उन्हें अपने अत्यंत पवित्र जीवन के बारे में सूचित करेंगे," जब उनके सबसे छोटे भाई, थेरा नंदक द्वारा पहले बताए गए तरीके (हेट्ठा) से अर्हत्व (अज्ञा) प्राप्त करने का रहस्योद्घाटन हुआ था।

175 "आओ, हे नंदक! हम चलें

हमारे गुरु की उपस्थिति

(उपज्जाया); हम गर्जना करें

शेर की उपस्थिति में ही

बुद्ध, सर्वश्रेष्ठ।

176 "ऋषि ने चाहे जिस उद्देश्य से ऐसा किया हो

करुणावश उन्होंने हमें भिक्षु बना दिया

हमारे लिए, वह उद्देश्य तदनुसार था

हमने हासिल कर लिया है: हमारी सारी बेड़ियाँ

वह नष्ट हो गया था।

वहाँ, नंदका का अर्थ है: संबोधन। एहि का अर्थ है: उसे अपने निकट लाना। गच्छामा का अर्थ है: स्वयं के समान स्थान (एकज्जं) पर रहने के लिए उसके द्वारा किए जाने वाले कार्यों का कथन। उपज्जायस का अर्थ है: पूर्णतः आत्मजागृत बुद्ध को; वास्तव में, पूर्णतः आत्मजागृत बुद्ध विशिष्ट रूप से एक उपदेशक हैं, इस प्रकार: 'अपनी सार्वभौमिक दृष्टि और बुद्ध की दृष्टि से, प्राणियों की प्रवृत्तियों, स्वभाव आदि के अनुसार अपने स्पष्ट अवलोकन से, वे दिव्य जगत के साथ-साथ संसार की पापमयता और पापरहितता पर विचार करते हैं; इस प्रकार, वे उस बात के योग्य हैं जो कही जानी चाहिए। यह दर्शाने के लिए कि वे कहाँ जाना चाहते थे, उन्होंने कहा: "सीहनादं नदिस्सामा, बुद्धसेट्ठसम्मुखा।" इसका अर्थ है: आइए हम सभी जीवित प्राणियों में श्रेष्ठ होने के कारण, सर्वथान्वित बुद्धों या बुद्ध के जागृत शिष्यों आदि के समक्ष और उनकी उपस्थिति में, निर्भीक सिंह की गर्जना करें; ऐसा इसलिए क्योंकि हम विशेष उच्चारण (अभिभ्याहार) कर रहे हैं या अपने गुणों के अनुरूप (यथाभुच्च) गर्जना कर रहे हैं।

उन्होंने दूसरे श्लोक की शुरुआत "याया" से की, ताकि वे सिंह की दहाड़ की इच्छा प्रकट कर सकें। यहाँ, याया का अर्थ है: जो भी उद्देश्य हो; किसी भी उद्देश्य की उत्पत्ति के लिए; यही अर्थ है। नहीं का अर्थ है: हमारे लिए। अनुकम्पाय का अर्थ है: शाब्दिक रूप से; हम दोनों के उत्थान के साथ, हम दोनों के उत्थान के लिए; पब्बाजयी का अर्थ है: उन्होंने हमें भिक्षु बनाया। मुनि का अर्थ है: भगवान। सो अत्थो अनुप्पत्तो का अर्थ है: वह उद्देश्य, अरहंतत्व की प्राप्ति, सभी सांसारिक बंधनों का नाश होना, हमारे द्वारा प्राप्त किया गया है; यही अर्थ है।

थेरा भरत के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(149):भारद्वाज

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (149) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
149. भारद्वाज
बुद्ध युग में राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्हें उनके कुल का नाम भारद्वाज दिया गया। [1] गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए, उन्हें एक पुत्र हुआ, जिसका नाम उन्होंने कण्हदिन्ना रखा। जब बालक वयस्क हुआ, तो उसके पिता ने कहा, 'आओ, प्रिय पुत्र, और फलाँ गुरु के अधीन अध्ययन करो,' और उसे तक्कशिला भेज दिया। [2] रास्ते में उनकी मुलाकात एक महान थेरा, भगवान (बुद्ध) के शिष्य से हुई, उन्होंने उनसे धम्म का पाठ सुना, भिक्षु बन गए और उचित प्रशिक्षण के बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

अब उनके पिता भारद्वाज ने बाँस के विहार (मठ) में भगवान (बुद्ध) को धम्म का उपदेश देते हुए सुना, और उन्होंने भी संसार त्यागकर (सन्यास ग्रहण कर) अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। लेकिन कण्हदिन्ना राजगृह में भगवान (बुद्ध) को प्रणाम करने आए, और अपने पिता को उनके पास बैठे देखकर प्रसन्न हुए। और उन्होंने अपने मन से पूछा: 'मेरे पिता भी (सन्यास ग्रहण कर) चले गए हैं। क्या उन्होंने, मुझे आश्चर्य है, धार्मिक जीवन का अंतिम लक्ष्य प्राप्त कर लिया है?' तब उन्होंने यह जान लिया कि उनके पिता अर्हंत (ज्ञानी) हैं, और उन्हें सिंह की गर्जना करने के लिए प्रेरित करने की इच्छा से, उन्होंने उनसे पूछा: 'क्या आप उस लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुए हैं जिसके लिए हम संसार त्यागकर (सन्यास ग्रहण करते हैं) जाते हैं?' तब भारद्वाज ने इन श्लोकों में अपनी उपलब्धि प्रकट की:

[177] नदन्ति एवं सप्पन्न सिहाव गिरिगबभारे,॥
वीर विजितसंगमा चेत्वा मारण सवाहिनि, ॥ ॥

[178] सत्था च परिसीनो मे धम्मो सोंघो च पूजितो,॥
अहं च विट्टो सुमनो पुत्तं दिस्व अनासवंती॥ ॥

[177] इस प्रकार प्रबुद्ध लोग अपना विजयगीत गाते हैं,

जैसे शेर पहाड़ी घाटी में दहाड़ते हैं, [3] वे वीर जिन्होंने पवित्र युद्ध में जीत हासिल की है,
और बुराई, मारा (मृत्युदेव/शैतान) और उसकी सेना पर विजय प्राप्त की है।

[178] मैं, भगवान (बुद्ध) का सेवक,
धम्म का अनुयायी और भिक्षु संघ का अनुयायी; और अपने पुत्र को विषों से मुक्त, स्वस्थ और रोगमुक्त
देखकर मेरा हृदय प्रसन्न और तृप्त है ।

[1] एक बड़ी पीढ़ी, लेकिन उच्च पद के बारे में ज्ञात नहीं (विनय ग्रंथ, iv. 6)। पिटक में इस उपनाम के कम से कम बीस व्यक्ति मिलते हैं।

[2] यूनानी इतिहासकारों का तक्षशिला, जो अब इस्लामाबाद के पास है, कश्मीर में एक प्रसिद्ध प्राचीन शिक्षा केंद्र है। जातक में कई संदर्भ देखें।

[3] परिचयात्मक श्लोकों की तुलना करें ।

2.3-9 [149] भारद्वाजथेरा के श्लोक पर टीका
nadanti evaṃ sappaññā से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा भारद्वाज का है। इसका उद्गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और इकत्तीस युग (कप्पा) पहले एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, संयोगवश उनकी दृष्टि सुमन नामक एक मौन बुद्ध पर पड़ी, जो भिक्षा मांगते हुए भटक रहे थे। एक दिन वे पुण्य भाव से प्रेरित हुए और उन्हें एक पूर्ण पका हुआ वल्लिकार फल भेंट किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए; वे अपने कुल के नाम से भारद्वाज के नाम से ही जाने जाते थे। वयस्क होने पर उन्होंने गृहस्थ जीवन व्यतीत किया और एक पुत्र प्राप्त किया जिसका नाम उन्होंने "कण्हदिन्ना" रखा। जब पुत्र ने बुद्धि प्राप्त की, तो उन्होंने उसे तक्कशिला भेजते हुए कहा: "मेरे प्रिय पुत्र! अमुक गुरु की उपस्थिति में कला और विज्ञान (सिप्पं) सीखो और वापस आओ।" वहाँ जाकर, उन्हें रास्ते में गुरु के एक शिष्य, एक महान थेरा से मित्रता प्राप्त हुई, उनकी उपस्थिति में उन्होंने सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, अपने प्रारंभिक कर्तव्यों को पूरा किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कार्य करते रहे और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"स्वयं जागृत बुद्ध सुमना थे

तब उसका स्वामी (takkarāyaṃ)

वासी); वल्लिकारा फल एकत्रित करने के बाद,

मैंने इसे स्वयं-निर्भर बुद्ध को अर्पित किया।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है,

मैंने तब फलों का प्रसाद चढ़ाया। मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही वह बात है

फल अर्पण करने का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

तब उनके पिता भारद्वाज, वेलुवन में निवास कर रहे भगवान बुद्ध के पास गए, धर्म का ज्ञान प्राप्त किया, भिक्षु बन गए और शीघ्र ही अरहंत बनने का दर्शन किया। फिर उनके पुत्र राजगृह में गुरु को प्रणाम करने आए और उन्हें गुरु के समक्ष बैठे देखकर प्रसन्न हुए और यह प्रश्न करने लगे, "सचमुच, मेरे पिता भी भिक्षु बन गए हैं; यह कैसे संभव है कि उन्होंने भिक्षु के कर्तव्य की सर्वोच्च अवस्था प्राप्त कर ली है?" और जब उन्हें अपने पिता के रोगों से मुक्त होने का ज्ञान हुआ, तो वे अपने पिता को सिंह के समान दहाड़ते हुए देखना चाहते थे और उन्होंने पूछा, "यह तो उत्तम है कि तुम लोगों ने भिक्षुत्व प्राप्त कर लिया है; परन्तु क्या भिक्षु के कर्तव्य की सर्वोच्च अवस्था प्राप्त कर ली गई है?" भारद्वाज ने अपने पुत्र को अपनी उपलब्धि का प्रकाश देते हुए दो श्लोक कहे।

177. "बुद्धिमान पुरुष इस प्रकार गर्जना करते हैं,

जैसे पर्वत की गोद में शेर। नायक।

युद्धक्षेत्रों में विजयी होने के बाद

उसने अपने हाथियों के साथ मारा पर विजय प्राप्त की।

वाहन (vāhana).

178. "गुरु की पूजा की जाती थी (परि-

(चॅ ...

और भिक्षुओं के पुरोहितों को सम्मानित किया गया था।

(pājito); मुझे प्रसन्नता हुई है (vitto)

और अच्छे हृदय से, अपने बेटे को मुक्त पाकर

कैंकर से।

वहाँ, नादन्ति का अर्थ है: वे गर्जना और अपनी निर्भीक गर्जना करते हैं, विशेष रूप से अपने गुणों का वर्णन करते हुए, जैसा कि वे बन चुके हैं (यथाभुच्चं)। एवं का अर्थ है: वर्तमान क्षण में कही जाने वाली बात को दर्शाना। स्वप्ना का अर्थ है: वे जिन्होंने सर्वप्रथम मार्ग (मग्ग) के ज्ञान को प्राप्त करके और सभी प्रकार के ज्ञान से परिपूर्ण होकर सर्वज्ञान की प्रचुरता प्राप्त कर ली है। वीर का अर्थ है: वीर, क्योंकि वे चौगुने सही प्रयास और परिश्रम से संपन्न हैं; इससे भी बढ़कर, अपने ही दुराचार (संकिलेसा) के पूर्ण कृषिना (निम्मतन) द्वारा। savāhanaṃ Māraṃjetvā का अर्थ है: दुराचार (किलेसा) के मार, कर्मों के संचय (अभिसंखार) के मार और साथ ही युवा देवपुत्त (देवेपुत्त) मार पर हर तरह से विजय प्राप्त करने वाले; vijitasaṅgāmā का अर्थ है: युद्ध के मैदान में विजय प्राप्त करने वाले, जो ज्ञानी हैं, गर्जना करते हैं; इस प्रकार, संबंध है।

इस प्रकार सिंह की दहाड़ दिखाते हुए, स्पष्ट रूप से जीती जाने वाली विजय (विजेतब्बा) के द्वारा, उन्होंने "सत्था च परिचिणो मे" से शुरू होने वाला दूसरा श्लोक बोला, ताकि उस समृद्धि को दिखाया जा सके जिसकी इच्छा आत्म-पूर्ति (समाराधनेन) के साथ की जानी चाहिए। यहाँ, "सत्था च परिचिणो मे" का अर्थ है: मैंने गुरु, पूर्णतः आत्म-जागृत बुद्ध की सेवा की, मुझे दिए गए परामर्श और निर्देशों का पालन करते हुए; सत्य (धम्माधिकारण) का कोई प्रश्न न क्षीण (विसोसितो) हुआ; यही इसका महत्व है। धाम्मो संघो च पूजितो का अर्थ है: नौ प्रकार के पारलौकिक सत्य (लोकउत्तरधम्म) और उत्तम नैतिक उपदेशों और सही दृष्टिकोण (दिट्ठी) के पालन से भिक्षु बनने वाले श्रेष्ठ पुरोहित (अरियासंघ) जो उचित अभ्यास (पटिपत्ति) से प्राप्त सही मार्ग (मग्ग) की उचित प्राप्ति (अनुपत्ति) के लिए हैं, तदनुसार, मेरे द्वारा सम्मानित और आदरित किए गए हैं। अहं च वित्तो सुमानो, पुत्तं दिस्वा अनासवं का अर्थ है: मैं भी प्रसन्न (वित्तो) हुआ हूँ, निःसंकोच

(निरामिसाय पितिया) उत्साह से संतुष्ट (तुट्ठो) हुआ हूँ, और इससे भी बढ़कर, इंद्रिय सुखों से मुक्त (निरामिसेना) प्रसन्नता से भरा हुआ हूँ; यही अर्थ है।

थेरा भारद्वाज के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(150): कान्हादिन्ना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (150) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
150. कंहदिन्ना
बुद्ध युग में राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम कण्हदिन्ना रखा गया। वयस्क होने पर और प्रभावी कारण के चरमोत्कर्ष से प्रेरित होकर वे धम्म के सेनापति के पास आए, [1] धम्म के बारे में सुना, विश्वास किया, संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण किया), और अंतर्दृष्टि विकसित करके अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने इस प्रकार अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की :

[179] उपासिता सप्पुरिसा सुता धम्म अभिनहासो,॥
सुत्तन पतिपज्जिस्सं अञ्जसअअमतोगधौ.॥ ॥

[180] भवराघातस्स मे सातो भवरागो पुना मे न विज्जति,॥
न चाहु न च मे भविष्यसति न च मे एतराहिपि विज्जति' ति॥ ॥

[179] मैंने संत पुरुषों की प्रतीक्षा की है और
उनके द्वारा सिखाई गई मुक्तिदायक सच्चाइयों को अनेक बार सुना है।
सुनकर मुझे पता चला कि मैं उस मार्ग को प्राप्त करूँगा
जो वृद्ध और नश्वर चीजों से दूर ले जाता है। [2]

[180] [138] और इसलिए मुझमें फिर से जीने की सारी लालसा
इस प्रकार पूरी तरह से बाहर निकाल दी गई है, तब से
मुझमें यह अब और नहीं पाई जाती, न थी, न कभी
वापस आएगी, न इस समय मुझमें उठी। [3]

[1] सारिपुत्त। हमें इस बात पर संदेह है कि क्या कान्हदिन्ना पिछली कहानी में वर्णित पुत्र है या नहीं। यदि वह है, तो जिस 'महान थेरा' से वह मिला था, वह सारिपुत्त था; लेकिन उस स्थिति में यह विचित्र है कि कहानियों को स्पष्ट रूप से जोड़ा नहीं गया है।

[2] शाब्दिक रूप से, अमृतमय मार्ग; टीका के अनुसार - अष्टांगिक मार्ग। 'मुझे पता था कि मुझे करना चाहिए' का शाब्दिक अर्थ है, 'मैं [प्राप्त करूँगा]।' वह पहले ही प्राप्त कर चुका था।

[3] या तो व्याख्याएँ आ गई हैं, या बाद वाली गाथा में अतिरिक्त पद जानबूझकर हैं, ताकि जोर दिया जा सके।

2.3-10 [150] कान्हदिन्नत्थेरा के श्लोक पर टीका

उपासिता सप्पुरिसा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कंहदिन्ना का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने चौरानवे युग (कप्पा) पूर्व एक गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन संयोगवश उनकी मुलाकात शोभिता नामक एक मौन बुद्ध से हुई, वे श्रद्धावान हो गए और उनके द्वारा पुन्नाग पुष्पों का आदरपूर्वक अर्पण किया। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्रों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब यह बुद्ध प्रकट हुए; उन्होंने कंहदिन्ना नाम प्राप्त किया। वयस्क होने पर, अपनी पर्याप्त योग्यता (उपनिषयसंपत्ति) से प्रेरित होकर, उन्होंने धर्म के सेनापति (धम्म) से संपर्क किया, उनकी शिक्षाओं को सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को लगातार विकसित किया और अरहंत पद प्राप्त किया। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"स्वयंजागृत मौन बुद्ध,

शोभिता नामक एक व्यक्ति चित्तकूला में निवास करता था;

पहाड़ी पुन्नागा फूल एकत्र करने के बाद,

मैंने विशेष रूप से श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाई।

आत्मनिर्भर मौन बुद्ध को।

यह चौरानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की।

मौन बुद्ध को; मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

मेरे द्वारा श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाने का परिणाम

मौन बुद्ध को।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने दो श्लोक कहे जिनमें उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट किया।

179 "अच्छे लोगों की सेवा की गई थी

(उपसिता); सुना था कि सत्य यही था

(धम्म) निरंतर। सुनकर

मैंने उचित अभ्यास किया (पटिपज्जिस्सम्),

सीधे-सीधे गोता लगाना

अमृत।

180 “जब मैंने अपनी वासना को नष्ट कर दिया (हता)

अस्तित्व के लिए, अस्तित्व नहीं है

फिर से मेरे अस्तित्व के प्रति किसी भी लालसा में।

ऐसा कुछ भी नहीं था; ऐसा कुछ होगा भी नहीं।

मेरे लिए ऐसा हो और उसका अस्तित्व न हो

अब मेरे भीतर।

वहाँ, उपासिता का अर्थ है: सेवा करना, उचित अभ्यास (पटिपत्ति) द्वारा सेवा करना। सप्पुरीसा का अर्थ है वे लोग जो अच्छे नैतिक उपदेशों आदि जैसे अच्छे गुणों से संपन्न हों। थेरा सारिपुत्त आदि जैसे श्रेष्ठ (आर्य) व्यक्ति। इसके माध्यम से, वह पूर्व क्षेत्र (पुरिमचक्क) की समृद्धि के अपने दो रूपों को दर्शाता है। वास्तव में, उपयुक्त स्थान (पतिरूपदेशवास) में निवास किए बिना अच्छे लोगों पर कोई घनिष्ठ निर्भरता (सप्पुरीसूपनिस्सय) संभव नहीं हो सकती (संभवति)। सुता धम्मा का अर्थ है: सत्य (धम्म) की शिक्षाएँ जो (चार प्रकार के श्रेष्ठ) सत्यों और आश्रित उत्पत्ति (पटिच्चसमुप्पाद) आदि से उचित रूप से जुड़ी हुई हैं, कान के द्वार (अनुसारण) के अनुसार निकटता से धारण की गई हैं। इसके माध्यम से, वह बाद के दो क्षेत्रों (पच्चिमच्चक्कद्वयसंपत्ति) की समृद्धि को दर्शाता है, और साथ ही अपनी विद्वत्ता की स्थिति को भी इंगित करता है। अभिण्हसो का अर्थ है: प्रचुर मात्रा में; उचित समय पर नहीं। यह शब्द “उपासिता सप्पुरिसा (अच्छे लोगों की सेवा की गई थी),” को भी यहाँ जोड़ा जाना चाहिए (योजेतब्बं)। Sutvāna paṭipajjissaṃ, añjasaṃ amatogadhaṃ का अर्थ है: उन शिक्षाओं (dhamme) को सुनकर, मैंने वहाँ वर्णित भौतिक और मानसिक घटनाओं (rūpārūpadhamme) का उनके विशिष्ट लक्षणों आदि के दृष्टिकोण से अध्ययन (pariggahetvā) किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (vipassanā) में उत्तरोत्तर वृद्धि की और अष्टांगिक मार्ग (ariyaṃ atthaṅgikaṃ maggaṃ) पर उचित रूप से प्रवेश करने के बाद, उस अमृत में लीन होकर जिसने मुझे निर्वाण के विश्राम स्थल तक पहुँचाया (amatogadhaṃ nibbānapatiṭṭhaṃ taṃ sampāpakaṃ)।

Bhavarāgahatassa me sato का अर्थ है: जब मैं जन्म-मृत्यु के चक्रों में, जिनका कोई आरंभ नहीं था, अपनी जीवन-वासना से पीड़ित और सताया जा रहा था; दूसरे शब्दों में, जब मेरे सर्वोत्कृष्ट मार्ग (अग्गमग्ग) द्वारा मेरी जीवन-वासना नष्ट हो गई। Bhavarāgo puna me navvijjati का अर्थ है: इसके परिणामस्वरूप, अब मुझमें जीवन-वासना का कोई अस्तित्व नहीं है। Na cāhu na me bhavissati, na ca me etarahi vijjati का अर्थ है: भले ही पहले जब मैं सामान्य श्रेणी का भिक्षु (पुथुज्जन काले) था और जब मैं विद्यार्थी (सेक्खा) बना, तब भी मेरी जीवन-वासना रही हो, सर्वोत्कृष्ट मार्ग (अग्गमग्ग) प्राप्त करने के समय से, वह कभी नहीं थी और न कभी हुई; भविष्य में भी वह मुझमें नहीं आएगी। अब, वर्तमान समय में भी, यह मुझमें विद्यमान नहीं है और न ही मेरे द्वारा इसे निकट से प्राप्त किया जा सकता है (उपलब्भति); इसका त्याग कर दिया गया है; यही अर्थ है। वे सांसारिक बंधनों के सर्वांगीण विनाश (परिक्खीणसंवोजनतं) की स्थिति को इस प्रकार दर्शाते हैं: यहाँ तक कि 'अस्तित्व की लालसा' शब्द से भी, एक ही स्थान पर एक साथ खड़े होने की स्थिति के कारण, अहंकार आदि के अभाव का उल्लेख किया गया है।

थेरा कान्हदिन्ना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

तीसरे अध्याय की टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(151): मिगासिरा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (151) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
भाग IV
151. मिगासिरा

बुद्ध युग में कोसल के एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम मिगासिरा [1] रखा गया, जो उस नक्षत्र के नाम पर था जिसके अंतर्गत उनका जन्म हुआ था। ब्राह्मण (पुजारी) संस्कृति को ग्रहण करने के बाद, उन्होंने खोपड़ी मंत्र [2] का अभ्यास किया , जिससे मंत्र का जाप करने और खोपड़ी पर नाखून से थपथपाने पर वे घोषणा करते थे, 'यह व्यक्ति इस लोक में पुनर्जन्म लेगा,' यहाँ तक कि उन लोगों के संबंध में भी जो तीन वर्ष पहले मर चुके थे। गृहस्थ जीवन से विमुख होकर, वे एक घुमंतू बन गए [3] और अपने कार्यों से उन्होंने कृपा और सम्मान प्राप्त किया। सावत्थी आकर और भगवान (बुद्ध) के समक्ष जाकर, उन्होंने अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हुए कहा: 'मैं, भगवान (बुद्ध) गौतम, मृतकों का भाग्य बता सकता हूँ।' 'आप यह कैसे बताते हैं?' उन्होंने एक खोपड़ी लाने को कहा, और अपने मंत्र का जाप करते हुए और नाखून से थपथपाते हुए, उन्होंने नरक या किसी अन्य लोक को पुनर्जन्म का स्थान बताया।

तब परम पूज्य बुद्ध ने एक भिक्षु (भिक्षु) की खोपड़ी मंगवाई, जिसने पूर्ण परिनिर्वाण प्राप्त कर लिया था , और कहा: 'अब उस भिक्षु का भाग्य बताओ जिसकी यह खोपड़ी थी!' मिगासिरा बुदबुदाया और पैर थपथपाया, पर उसे न तो शुरुआत दिखाई दी और न ही अंत। तब भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'हे यात्री, क्या तुम नहीं बता सकते?' उसने उत्तर दिया, 'मुझे पहले सुनिश्चित करना होगा,' और खोपड़ी को बार-बार घुमाते हुए - क्योंकि वह एक अरहंत के बारे में कैसे जान सकता है? [4] - शर्मिंदा होकर, पसीना बहाते हुए, चुप खड़ा रहा । [139] 'हे यात्री, क्या तुम थक गए हो?' 'हाँ, मैं थक गया हूँ; मैं इसका भाग्य नहीं जान सकता। क्या तुम इसे बता सकते हो?' 'मैं जानता हूँ, और इससे भी अधिक। वह निर्वाण प्राप्त कर चुका है।' [5] तब यात्री ने कहा: 'मुझे यह गुप्त ज्ञान दो!' 'तो तुम भिक्षु बन जाओ।' अतः मिगासिरा को भिक्षु दीक्षा दी गई और उन्हें शांत रहने के अभ्यास कराए गए। ध्यान और अभिज्ञा (उच्चतर ज्ञान) में पारंगत होकर उन्होंने अंतर्दृष्टि का अभ्यास किया और कुछ ही समय बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। तब उन्होंने इस प्रकार अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की :

[181] यतो [24] अहं पब्बजितो सम्मासंबुद्धसासने,॥
विमुच्चमानो उग्गच्छिं कामधातुं उपच्चगां॥ ॥

[182] ब्रह्मुणो पेक्खमानस्सा ततो चित्तो विमुची मे,॥
अकुप्पा मे विमुत्तति सब्बासंयोजनक्खया' ति.॥ ॥

[181] जब से मैं (भिक्षुत्व के लिए) निकला और
परम प्रबुद्ध द्वारा भिक्षुत्व में दीक्षित नियम में प्रवेश किया,
मैं मुक्त होकर
इन सभी इंद्रिय-इच्छाओं से ऊपर उठ गया।

[182] जब उस महान ब्राह्मण (पुजारी) ने [6] मेरी ओर देखा,
तब मेरा हृदय मुक्त हो गया! [7] हाँ, क्योंकि सभी बंधन सदा के लिए टूट गए हैं,
मेरे लिए मुक्ति (निर्वाण) निश्चित और पक्की है!

[1] हिरण का सिर = मकर राशि.

[2] तुलना करें वंगीसा की कथा, सीसीएलएक्सवी.

[3] राइस डेविड्स, बुद्धिस्ट इंडिया, पृ. 141-143 देखें।

[4] श्लोक 92 देखें.

[5] निब्बानाम् गतो सो, जो कि सामान्य अनुवाद 'निर्वाण में प्रवेश किया' का एकमात्र पाली अनुमान है, जो मुझे अभी तक मिला है।

[6] प्रमुख, सर्वश्रेष्ठ के अर्थ में (टिप्पणी); एक जेनेटिव एब्सोल्यूट।

[7] सिस्टर्स, श्लोक 17, 81, 116 देखें ।

2.4 चौथा अध्याय

2.4-1 [151] मिगासिरत्थेरा के श्लोक पर टीका
यतो अहं पब्बजितो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मिगसिरा का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, भगवान कश्यप के समय एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म हुआ; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उनका गुरु से मिलन हुआ, वे श्रद्धापूर्वक प्रसन्न हुए और उन्होंने कुश घास की आठ पत्तियां (कुसठक) अर्पित कीं। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिया और कोसल राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में जन्म लिया, जब बुद्ध का उदय हुआ; मिगसिरा नक्षत्र में जन्म लेने के कारण उन्हें मिगसिरा नाम प्राप्त हुआ। वयस्क होने पर उसने ब्राह्मणों की कलाओं और विज्ञानों में निपुणता प्राप्त की और शव के सिर के मंत्र (चवसीसमंत) में पारंगत हो गया। उसने तीन वर्ष पूर्व मृत व्यक्ति के सिर पर अपने कवच से प्रहार करके और मंत्रों का उच्चारण करके यह जाना: "यह प्राणी फलाँ स्थान में जन्मा था।"

गृहस्थ जीवन न चाहते हुए, उन्होंने संसार का त्याग कर परिब्बाजक दर्शनशास्त्री बन गए और उस विज्ञान (विज्जा) पर निर्भर संसार के लोगों द्वारा आदरणीय और पूजनीय भेंट (लाभी) प्राप्त करने के बाद विचरण करते रहे। जब वे सावत्थी पहुँचे, तो वहाँ वे गुरु के समक्ष गए और उनसे कहा: "हे गौतम! मैं मृतकों के जन्मस्थान को जानता हूँ," और इस प्रकार उन्होंने अपनी शक्ति का प्रकटीकरण किया। पूछे जाने पर, "लेकिन आपको कैसे पता?", उन्होंने कहा, "मैंने शवों के सिरों पर मंत्र पढ़े और उन्हें अपने नाखूनों से ठोककर, मुझे उनके जन्मस्थान, जैसे कि नरकलोक आदि का पता चला। तब भगवान बुद्ध ने उन्हें परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके एक भिक्षु की खोपड़ी दी और उनसे कहा, "अब मुझे इस खोपड़ी के स्वामी का पता (गति) बताओ?" उन्होंने मंत्र पढ़ा, उस खोपड़ी को अपने नाखून से ठोका, लेकिन न तो उसका अंत दिखाई दिया और न ही कोई निशान (कोटि)। तब, जब गुरु ने उनसे पूछा, "हे विचरणशील दार्शनिक! क्या तुम पता नहीं लगा पा रहे हो?" उसने उत्तर दिया, "अब मैं पता लगाऊंगा (उपपरिक्खिस्सामि)," लेकिन बार-बार मंत्र पढ़ने और उसे घुमाने के बावजूद वह पता नहीं लगा सका। भला वह अपवित्र मंत्र (बहिरक मंत्र) के द्वारा कैसे जान पाएगा, जो दोषों से मुक्त अरहंत का पता लगा सकता है? तब उसके सिर और बगल से पसीना बहने लगा। वह लज्जित होकर चुप खड़ा रहा। गुरु ने पूछा, "हे विचरणशील दार्शनिक! क्या तुम थक गए हो?" उसने उत्तर दिया, "हाँ, मैं थक गया हूँ; मुझे इसका पता नहीं है; क्या तुम्हें पता है?" उत्तर था, "मुझे इसके बारे में पता है और इससे आगे भी पता है।" ऐसा कहकर गुरु ने निष्कर्ष निकाला, "वह निर्वाण प्राप्त कर चुका है।" विचरणशील दार्शनिक ने कहा, "कृपया मुझे यह ज्ञान दीजिए।" यह कहकर कि "तो फिर तुम्हें भिक्षु बन जाना चाहिए", उन्होंने पहले उन्हें भिक्षु बनाया और उन्हें शांत मन से स्थिर रहने के मानसिक अभ्यास में लगाया, और जब वे ध्यान और उच्चतर ज्ञान में स्थापित हो गए, तो उन्हें आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने का कर्म दिखाया गया। आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने का कर्म करने पर, उन्होंने शीघ्र ही अर्हत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"परम पूज्य कस्सपा को, जो

उन्होंने अपने पवित्र जीवन को 'पूर्ण' कर लिया था।

(ब्राह्मणस), मैं, धर्मनिष्ठ और

नेक दिल ने 'आठ ब्लेड' की पेशकश की

कुसा घास का।

लेकिन इसी युग (कप्पा) में मैं

मैंने 'आठ ब्लेड' की अपनी भेंट चढ़ाई।

कुसा घास का। मुझे याद नहीं है।

कोई भी बुरी सत्ता; यही है

मेरे द्वारा किए गए प्रस्ताव का फलदायी परिणाम

कुसा घास की आठ पत्तियाँ

(कुसठक)

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने (ब्याकरोंतो) के लिए दो श्लोक कहे।

181. "जब से मैं भिक्षु बना हूँ

अच्छी तरह से स्व-व्यवस्था का वितरण

जागृत बुद्ध, मैं जागृत प्राणी

मुझे मुक्ति मिल गई थी। मैंने विजय प्राप्त कर ली थी।

(उपच्चगं), का तत्व

कामुक सुख (कामधातुं)।

182. "जब महान भगवान थे

मेरे मन पर नज़र रखते हुए (pekkhamāna)

परिणामस्वरूप मुक्त हो गया

वह। मेरी मुक्ति अटल है।

(विमुक्ति) मेरे द्वारा ऐसा करने के कारण-

मैंने अपने सभी सांसारिक बंधनों को तोड़ दिया।

(संयोजन).

वहाँ, यतो अहं पब्बजितो, सम्मासंबुद्धसासने का अर्थ है: मेरे भिक्षु बनने के समय से, भगवान बुद्ध के मार्गदर्शन में; भिक्षु बनने के समय से। विमुच्चमानो उग्गच्चिं का अर्थ है: आत्म-दुराचार (संकिलेसा) के बंधन से मुक्त होकर, मैंने सर्वप्रथम सत्य (धम्म) के शुद्ध श्रवण से

जागृत होकर, अब शांत (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के माध्यम से जागृत हुआ। कामधातुं उपच्चगं का अर्थ है: इस प्रकार जागृत होकर, मैंने इंद्रिय सुख के तत्व पर विजय प्राप्त की, लेकिन निश्चित रूप से अनागम्य (अप्रत्यावश्यक) मार्ग के माध्यम से।

ब्रह्मुनो पेक्खमानस्स, ततो चित्तं विमुच्चि मे का अर्थ है: भगवान बुद्ध, ब्रह्मा, जो सर्वश्रेष्ठ होने के कारण, जगत और दिव्य जगत में श्रेष्ठ होने के कारण, अपनी महान दया से देख रहे थे और मन ही मन कह रहे थे: "मेरे युग में भिक्षु बनने के बाद इस अच्छे कुल के पुत्र का क्या हाल है (पटिपज्जति)?" फलस्वरूप, अनागामी मार्ग की प्राप्ति के बाद, मेरा मन सर्वथा आत्म-दुराचार से मुक्त हो गया (संकिलेसतो), क्योंकि मैंने सर्वोत्कृष्ट सही मार्ग (अग्गमग्ग) प्राप्त कर लिया था। अकुप्पा मे विमुत्ति, सब्बासंयोजनक्खया का अर्थ है: मेरी मुक्ति इस प्रकार स्थिर है, क्योंकि मेरे मन की मुक्ति के कारण सभी सांसारिक बंधनों (संयोजन) का नाश और सर्वांगीण निवारण हो गया है; इस प्रकार, उन्होंने अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया।

थेरा मिगासिरा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(152):शिवका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (152) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
152. शिवका
बुद्ध युग में राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम शिवक रखा गया। पूर्ण शिक्षा प्राप्त करने के बाद उन्होंने संसार त्यागकर संन्यास लेने का निश्चय किया। भगवान (बुद्ध) से धम्म का उपदेश सुनने के लिए एक यात्री के रूप में आकर, उन्होंने आस्था प्राप्त की, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अंततः अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। तब उन्होंने इस प्रकार अन्आ (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[183] अनिच्चनि गहकानि तत्थ पुनप्पुना,॥
गहकारं गवेसंतो दुक्खा जाति पुनप्पुन:॥ ॥

[184] गहकारका दिथोसि पुना गेहाm न कहासि,॥
सब्बा ते फासुका भगगा थुनिका च विदादिता,॥
विमारियादिकतां चित्तं इधेव विधमिस्सति' ति.॥ ॥

[183] क्षणभंगुर हैं हमारे जीवन के छोटे-छोटे घर,
यहाँ बने, वहाँ बने, बार-बार।
घर बनाने वाले की तलाश में [मैं यहाँ तक आ गया हूँ];
जन्म तो बस दुख है, बार-बार।

[184] [140] हे गृह निर्माता, तुम मिल गए, अंततः तुम दिखाई दिए!
अब तुम मेरे लिए कभी घर नहीं बनाओगे:
तुम्हारी सारी दीवारें टूट गई हैं, तुम्हारी छतें चकनाचूर हो गई हैं।
चेतना का आगे बढ़ना रुक गया है;
यह यहाँ भी शून्यता में विलीन हो जाएगा। [1]

[1] किंवदंती के अनुसार, ये प्रसिद्ध श्लोक बुद्ध के बुद्धत्व प्राप्ति के बाद कहे गए उनके पहले वचन हैं (बुद्ध घोष, पृष्ठ 103 आगे; सूम. वी., 1.16); लेकिन ये उस घटना के प्रामाणिक वर्णनों में नहीं मिलते (देखें थोड़ा भिन्न गाथाएँ, धम्मपाल, 153, 154; एसबीई, x.

42, n.)। धम्मपाल सामान्य से संक्षिप्त हैं, जाहिरा तौर पर बुद्धघोष में दी गई परंपरा से अनभिज्ञ हैं। वे इसका कोई उल्लेख नहीं करते। वे बताते हैं कि गृह निर्माता लालसा कर रहा है, तन्हा वद्धकी। देखें धम्मपाल, कॉमी, iii. 127।

2.4-2 [152] शिवकत्थेरा के श्लोक पर टीका
अनिच्चानि गहकानि से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा शिवक का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने विपस्सी बुद्ध के समय एक परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्होंने बुद्ध को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए, उनका पात्र ग्रहण किया, उसे कुम्मासा से भर दिया और उन्हें अर्पित कर दिया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने जन्म-मृत्यु के चक्र में देव-मनुष्यों के बीच विचरण किया और राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम शिवक था। वयस्क होने पर उन्होंने कला और विज्ञान में निपुणता प्राप्त की, वैराग्य की प्रवृत्ति के कारण सांसारिक सुखों का त्याग किया, संसार का त्याग कर परिब्बाजक बन गए और विचरण करते हुए गुरु के पास पहुँचे, उनके उपदेश (धम्म) सुने, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म करके अल्पकाल में ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

"खाली कटोरा देखकर"

महान ऋषि का (रित्तकं पट्टां)

(mahesino) Vipassī, मैंने इसे भर दिया

उबले हुए चावल (कुम्मासा)।

यह इक्यावन युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने भिक्षा में भोजन दिया;

किसी भी बुरी सत्ता को याद मत करो।

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

उबले हुए चावल (कुम्मासा) का अर्पण।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी। :P

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने दो श्लोक कहे, जिससे उनके अरहंत होने का पता चलता है (अञ्ञा)।

183. "घर जैसे अपने स्वयं के अस्थायी हैं"

अस्तित्व (गहकानि), बार-बार

इधर-उधर; निर्माता की तलाश में

मेरे घर का (gahakāraṃ gavesanto),

मुझे बहुत कष्ट सहना पड़ा (दुक्खा)

बार-बार पुनर्जन्म लेना (जाति)।

184. "हे घर बनाने वाले! तुम मिल गए हो;

आप दोबारा घर नहीं बना पाएंगे।

आपकी सारी छत की कड़ियां टूट गई हैं;

(आपके) छज्जे (थुणिका) बन गए थे

विभाजित; मेरा मन असंतुलित हो गया था।

पूरी तरह से मुफ्त; यहां भी, यह होगा

विधामिसति (गिर जाना)।

वहाँ, aniccāni gahakāni, tattha tattha punappunaṃ का अर्थ है: इस और उस जन्म में, घर, शारीरिक संरचनाएँ (attabhāvagehāni), बार-बार उत्पन्न होती हैं, वे स्थायी नहीं हैं, टिकाऊ नहीं हैं (avaṭṭhita), अस्थिर हैं (ittara) और क्षणभंगुर हैं (parittakāla)। Gahakāraṃ gavesanto का अर्थ है: मैं इतने लंबे समय तक चारों ओर भटकता रहा, उस तृष्णा-निर्माता (taṇhāvaḍḍhakī) की खोज में; मेरे इस शरीर-घर (attabhāvagaha) के निर्माता की; यही इसका महत्व है। Dukkhā jāti punappunaṃ का अर्थ है: यह कथन घर-निर्माता (gahakāraka) की खोज का कारण बनता है; यह, अर्थात् पुनर्जन्म, क्योंकि यह वृद्धावस्था, रोगों और मृत्यु से जुड़ा हुआ है, इसलिए बार-बार इसके पास जाना कष्टदायक (दुक्खा) है; और यह अदृश्य होने पर भी लुप्त (निवात्तति) नहीं होता; इसी कारण मैं इसकी खोज में भटकता रहा; यही इसका अर्थ है।

Gahakāraka diṭṭho si का अर्थ है: हे गृहस्थ! अब तुम श्रेष्ठ मार्ग के ज्ञान की दृष्टि (ariyamaggañāṇaccakkhunā) से उस माध्यम से पाए गए हो जिससे उसे पाया जा सकता है (daṭṭhuṃ)। Puna gehaṃ का अर्थ है: मेरा घर, जो इस पुनर्जन्म के चक्र (saṃsāravaṭṭo) में मेरे शरीर (attabhāva) के समान गिना जाता है, फिर से, na kāhasi का अर्थ है: तुम नहीं बनाओगे। Sabba� te phāsukā bhaggā का अर्थ है: तुम्हारे सभी दुराचार (kilesa) के स्तंभ (bhaggā) मेरे द्वारा पूरी तरह (anavasesa) तोड़ दिए गए हैं। Thūṇikā ca vidālitā का अर्थ है: अब, शरीर (attabhāva) के घर की छतें (kaṇikā), जिन्हें आपके द्वारा बनाया जाना था, टूट गई हैं (bhinnā)। Vimariyādikataṃ cittaṃ का अर्थ है; मेरा मन अंततः विगतंतं समाप्त हो गया है (vigatantaṃ); यह भविष्य में (āyatiṃ) उत्पन्न न होने (anuppatti) की स्वाभाविक स्थिति में पहुँच गया है (dhammataṃ)। Idh'eva vidhamissati का अर्थ है: इसके परिणामस्वरूप भी, यह इसी जन्म में (viddhaṃsissati) गिर जाएगा (viddhaṃsissati); यह अंतिम मन के समाप्त होने के साथ ही समाप्त हो जाएगा (carimaka cittanirodhena nirujjhissati)।

थेरा शिवक के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(153): उपवन

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (153) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
153. उपवान

बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम उपवान रखा गया। उन्होंने जेतवन में बुद्ध की महिमा का दर्शन किया और भिक्षु संघ में प्रवेश करके अंतर्दृष्टि के लिए अभ्यास किया तथा छह प्रकार के अभिन्न (उच्च ज्ञान) को प्राप्त किया।

अब उपवान बुद्ध के सेवक बन गए। [1] उस समय बुद्ध को ऐंठन हो गई। और सावत्थी में रहने वाले थेरा के एक ब्राह्मण (पुजारी) मित्र देवहित, उन्हें चारों आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध करा रहे थे। उपवान को कटोरा और वस्त्र लेकर आते देख देवहित समझ गए कि उन्हें कुछ और चाहिए और उन्होंने कहा: 'हे प्रभु, आपकी आवश्यकता पूरी हो। आपको क्या चाहिए?' उपवान ने उत्तर दिया:

[185] अराहं सुगतो लोके वतेहाबाधितो मुनि,॥
ससे उन्हादकां अत्थि मुनिनो देहि ब्राह्मण॥॥

[186] पूजितो पूजनीयानां सक्करेयण सक्कतो,॥
अपासिटोपकानियानं तस्सा इच्छामि हतावे' ति.॥॥

[185] हे अरहंत (प्रबुद्ध), समस्त मनुष्यों के तथागत (अर्थात बुद्ध),
हे पवित्र ऋषि, वे वायु से बहुत पीड़ित हैं।
यदि यहाँ कोई जल गर्म हो,
तो हे ब्राह्मण (पुजारी), मुझे ऋषि के लिए दे दीजिए।

[186] जिनके प्रति हम आदर रखते हैं,
उनके द्वारा आदरणीय, जो हमारी धार्मिक देखभाल के पात्र हैं,
उनके द्वारा पोषित, जिनके
प्रति सम्मान उचित है, उनके द्वारा सम्मानित, मैं उनसे विनती करता हूँ कि इसे लाया जाए।

इसके कारण ब्राह्मण (पुजारी) ने गर्म जल और उपयुक्त औषधि अर्पित की। इससे भगवान (बुद्ध) की बीमारी ठीक हो गई और भगवान ने उन्हें धन्यवाद दिया।

[1] सी.सी.एल.एक्स. देखें। बीमारी पर , मिलिंदा आई., 194, एन. 4.

2.4-3 [153] उपवाणथेरा के श्लोक पर टीका
अरहं सुगतो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उपावन का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि उनका जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक निर्धन परिवार में हुआ था; जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके थे और भगवान भगवान परिनिर्वाण में प्रवेश कर चुके थे, तब उन्होंने अपने द्वारा अच्छी तरह से धोए गए ऊपरी वस्त्र को बांस के शिखर पर बांधकर एक ध्वज बनाया और उसे सात टापों (योजनिका) के ठोस मंदिर में अर्पित किया। उस मंदिर का निर्माण सात प्रकार के रत्नों से मनुष्यों, देवताओं, नागों, गरुड़ों, कुम्भंडों, यक्षों और गंधर्बों ने भगवान के अवशेषों को एकत्रित करने के बाद किया था। राक्षसों के सेनापति अभिसम्मतक, जिन्हें देवताओं द्वारा मंदिर में अर्पित की जाने वाली भेंटों की देखरेख के लिए नियुक्त किया गया था (ठपितो), जिनका शरीर अदृश्य था, ने उस ध्वज को पकड़ लिया, उसे आकाश में उठाया और मंदिर की तीन परिक्रमाएँ कीं। इसे देखकर वे अत्यंत धर्मपरायण हो गए। उस पुण्य कर्म के कारण वे अपने बार-बार के जन्मों के चक्र में भटकते रहे और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब वे सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए; उन्होंने उपवन नाम प्राप्त किया; वयस्क होने पर, जेतवन के ग्रहण समारोह में उन्होंने बुद्ध की शक्ति को देखा, उचित रूप से धर्मपरायणता प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कार्य करते रहे, अर्हतत्व प्राप्त किया और छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न हुए। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"पदुमुत्तरा नामक विजेता,

सभी सत्यों (धर्म) में निपुण

किसी पिंड की तरह चमकने के बाद

अग्नि, बुद्ध जागृत होकर प्रवेश कर गए

परिनिब्बान.

बहुत सारे लोग इकट्ठा हो गए,

तथागत को श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की।

अच्छी तरह से अंतिम संस्कार की चिता (चितम) बनाई

समाप्त (सुगतं) और शरीर प्राप्त किया

विशेष रूप से (उस पर) लगाया गया।

मृतक के प्रति अपना कर्तव्य निभाने के बाद

उन्होंने वहां अवशेषों को एकत्रित किया।

उन सभी दिव्य और मानवीय प्राणियों ने निर्माण किया

बुद्ध का एक मंदिर।

सर्वप्रथम यह मंदिर सोने का बना था;

दूसरे, यह पन्ना (मणि) से बना था;

तीसरी बात, यह चमकदार चांदी से बना था।

(रूपिया), चौथा यह क्रिस्टल से बना था;

पांचवीं बात यह भी थी कि यह लाल माणिक्य से बना था;

छठी बात यह थी कि यह बिल्ली की आंख के कीमती पत्थर से बना था।

पत्थर (मसारागल्ला); उपरोक्त सभी का निर्माण किया गया था

रत्नों का।

मंदिर का निचला भाग (जंघा)

पन्ना (मणि) से बना था; रेलिंग

रत्नों से बने थे; मंदिर बना था

पूरी तरह से सोने का; यह एक मील (योजना) तक फैला हुआ था।

अप अबोव।

वहां दिव्य प्राणी एकत्रित हुए और...

तब हम सबने मिलकर (ekato) निर्णय लिया; हमने भी

ऐसे महान व्यक्ति के लिए एक मंदिर स्थापित करेंगे

विश्व के रक्षक के रूप में व्यक्तित्व।

कोई विशेष अवशेष मौजूद नहीं है; शरीर

अवशेषों का एक ही पिंड बन गया था;

हम बुद्ध के इस मंदिर का निर्माण करेंगे।

आवरण (kañcuka).

सात प्रकार के रत्नों के साथ, दिव्य प्राणी

मंदिर का आकार एक और लीग तक बढ़ा दिया गया।

(योजना); मंदिर दो लिग लंबा हो गया

(योजना) ऊँचाई में; वह मंदिर दूर हो गया

(ब्यापहांति) अंधकार (तिमिरं)

वहां ड्रैगन इकट्ठा हुए और उन्होंने विचार-विमर्श किया।

तब एकजुट होकर; मानवीय और दिव्य दोनों

उन प्राणियों ने बुद्ध का एक मंदिर स्थापित किया।

हमें लापरवाह नहीं होना चाहिए; दुनिया

दिव्य जगत के साथ मिलकर,

हम परिश्रमी हैं। हम एक मंदिर भी स्थापित करेंगे।

ऐसे ऋषि को रक्षक के रूप में स्वीकार करना

दुनिया। दिव्य संप्रभु के होने के कारण

नीलम (इंडानिला), शक्तिशाली नीलम

(महानीला), चमकते हुए पन्ना के अलावा

सार (जोतिरेसमाणी) एक साथ एकत्रित

उन्होंने बुद्ध के मंदिर को घेर लिया।

जहां तक बुद्ध का मंदिर था

पूरी तरह से पन्ना (मणि) से बना हुआ, यह अच्छी तरह से

तीन लीग (योजना) ऊँचा हो गया,

प्रकाश का निर्माता। गरुड़ पक्षी भी।

तब वे सब एक साथ आए और एकजुट होकर विचार-विमर्श किया;

वे मनुष्य, दिव्य प्राणी और

ड्रैगनों ने श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाई

बुद्ध।

हमें लापरवाह नहीं होना चाहिए; दुनिया

दिव्य जगत के साथ-साथ

हम परिश्रमी हैं। हम एक मंदिर भी स्थापित करेंगे।

ऐसे ऋषि के लिए जो रक्षक हो

दुनिया। उन्होंने एक आवरण भी बनाया;

एक ऐसा मंदिर जो पूरी तरह से पन्ना से बना हो;

उन्होंने फैलाव भी बढ़ा दिया

(आयतं) बुद्ध का मंदिर

चार लीग (योजना)

ऊंचाई में, बुद्ध का मंदिर चमक रहा था।

आगे (विरोकाटी); इसने सभी को प्रकाशित किया

सूर्य के समान दिशाएँ जो

उठ खड़ा हुआ है (sataraṃsīva uggato).

दिव्य प्राणी (कुंभण्ड) भी

एक साथ आए और एकजुट होकर परामर्श किया।

तब; मनुष्य और दिव्य प्राणी

साथ ही, अजगर और इसी प्रकार गरुड़ पक्षी

साथ ही, क्रमशः सबसे अधिक निर्मित

उत्कृष्ट तीर्थस्थल, बुद्ध के लिए सर्वश्रेष्ठ;

हमें लापरवाह नहीं होना चाहिए; दुनिया

दिव्य जगत के साथ, था

लगन से काम किया है।

हम उनके लिए एक मंदिर भी स्थापित करेंगे।

एक ऋषि को विश्व के रक्षक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

मंदिर को फैलाते हुए (आयतं)

बुद्ध, हम इसे रत्नों से जड़ देंगे।

बुद्ध के मंदिर का विस्तार करते हुए

उन्होंने इसे एक लीग से भी बढ़ा दिया।

(योजना)। पाँच मील ऊँचाई में,

तब मंदिर ने अपना प्रकाश बिखेर दिया था।

वहाँ राक्षस इकट्ठा हुए, और...

तब मानव और दिव्य दोनों ने मिलकर परिणाम भुगते।

प्राणी, ड्रैगन, गरुड़ और दिव्य

राक्षसों, क्रमशः (paccekaṃ) सेट

सबसे उत्कृष्ट मंदिर की ओर; आइए हम

लापरवाही न करें; दुनिया एक साथ

दिव्य जगत के प्रति वह लगनशील रहा था।

हम भी इस प्रकार का एक मंदिर स्थापित करेंगे।

ऋषि को संसार के रक्षक के रूप में;

हम इसे क्रिस्टल (फालिका) में बंद कर देते हैं।

बुद्ध के मंदिर का विस्तार करते हुए।

वे मंदिर का विस्तार करने में भी लगे हुए थे।

इसे एक लीग (योजना) से बढ़ा दिया। छह

ऊंचाई में लीग (योजना), मंदिर

तब वह चमक उठा।

दिव्य संगीतकार (गधब्बा) आये

एक साथ मिलकर परामर्श करने के बाद एकजुट होकर;

मनुष्य, दिव्य प्राणी, ड्रैगन

दिव्य राक्षस और इसी प्रकार गरुड़,

उन सभी ने बुद्ध का मंदिर बनवाया था;

यहां हम निष्कर्मक हैं; हम भी ऐसा ही करेंगे

ऐसे ऋषि का मंदिर स्थापित करो,

दुनिया का रक्षक।

सात रेलिंग (वेदियो) बनाकर,

उन्होंने एक झंडा और एक छाता बनाया;

दिव्य संगीतकारों ने तब बनाया

यह मंदिर पूरी तरह से सोने का बना है।

सात दीर्घ (योजना) ऊँचाई वाला,

तब मंदिर चमक उठा। लोगों ने

दिन और रात के बारे में नहीं जानते;

हर समय प्रकाश रहता था (सब्बादा)।

सूर्य और चंद्रमा, तारों के साथ

उस प्रकाश को बुझा नहीं पाया

मंदिर। एक संघ (योजना) के लिए सभी

गोल आकार का होने के बावजूद, लैंप की रोशनी भी कम थी।

उस समय, वे मनुष्य जो

श्रद्धापूर्वक भेंटें अर्पित कीं

मंदिर में प्रवेश नहीं किया;

उन्होंने अपनी भेंटें ऊपर फेंक दीं

आकाश।

अभिसम्मता नाम की राक्षसी ने पोस्ट किया

दिव्य प्राणियों द्वारा, विशेष रूप से सवार

या तो झंडा या फूलों की माला-

उन्हें ऊपर।

दानदाताओं ने उस राक्षस को नहीं देखा;

लेकिन उन्होंने अपना फूल देखा-

पुष्पमाला ऊपर जा रही है; जो लोग गए

उनकी भेंट देखने के बाद चले गए

इस प्रकार, सभी लोग चले गए

उत्कृष्ट अस्तित्व (सगाती)।

वे मनुष्य जो शत्रुतापूर्ण थे

(विरुद्ध) बुद्ध की शिक्षाओं के लिए

(पावचन) और वे मनुष्य (जो)

वे इस बात से अत्यंत प्रसन्न थे।

प्रायश्चित (सासन), जो इच्छुक थे

चमत्कार (पाटिहीरं) को देखने का

उनके द्वारा अर्पित श्रद्धापूर्वक दी गई भेंटें

हंसवती नगर में स्थित तीर्थस्थल।

मैं उस समय दिहाड़ी मजदूर था; यह देखकर

भीड़ चकित थी (āmoditaṃ)

तो इस तरह से विचार किया जाए।

यह (एसो) धन्य व्यक्ति जिसके लिए

यह एक ऐसा ही प्राचीन निवास (धातुघर) है।

क्योंकि यह (īdisa) उत्कृष्ट ही हो सकता है

(na uḷāro); पुरुषों का यह समूह

आनंदित भी; वे तृप्त नहीं होते

वे उपासना के कार्य करते हैं

(करं कुब्बं न टप्पारे)। मैं भी

मैं अपनी उपासना (कारं) करूंगा।

ऐसे ऋषि को रक्षक के रूप में

दुनिया। आने वाले समय में मैं

उनकी शिक्षाओं के उत्तराधिकारी बनो

सत्य (धम्मेसु)।

मेरे पास मेरा ऊपरी वस्त्र (उत्तरेय्यं) था

pataṃ) अच्छी तरह से धोया और रंगा हुआ (sudhotaṃ)

राजकेना), इसे लटका दिया गया था (अलाग्गत्वा)

मैंने बांस के शिखर (वेलागे) पर लटकाया

आकाश में झंडा फहराना, अभिसम-

मतका ने मेरा झंडा पकड़ा और उसे लेकर चला गया।

इसे आकाश में। मेरा झंडा देखकर

हवा के झोंकों से हिलकर मेरी खुशी और भी बढ़ गई।

अधिक।

मेरे मन को धार्मिक रूप से प्रसन्न करके

उस घटना के बाद, मैंने एक भिक्षु से संपर्क किया;

उस भिक्षु को नमन अर्पित करने के बाद, मैं

मैंने उनसे परिणाम (विपाक) के बारे में पूछा।

वह झंडा (अर्पण)।

उन्होंने मुझसे आनंदमय शब्द कहे।

मेरी उमंग जगाते हुए (पीतिसंजननम्); 'तुम

हमेशा अच्छे परिणाम का आनंद मिलेगा

उस झंडे का।

एक चौगुनी (चतुरंगिनी) सेना (जिसमें शामिल हैं)

हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सैनिक

सैनिक आपके अनुचर दल (पारिवारेसन्ती) होंगे।

सदा; यही ध्वज अर्पण का फल है।

साठ हजार संगीतकार और अच्छी तरह से सुसज्जित

ढोल की आवाज़ हमेशा आपके चारों ओर रहेगी; यही है

आपके ध्वजदान का फलदायी परिणाम।

छियासी हजार सुशोभित महिलाएं,

रंग-बिरंगे कपड़े और गहने पहने हुए,

पन्ना की बालियों से सजी हुई, साथ में

घनी पलकें (अलारपमहा) के साथ

'मुस्कुराती हुई वाणी' (हसुला), होना

अच्छी समझ (सुसान्या), साथ

कोमल कमर (तनुमाज्जिमा), होगा

हमेशा आपको घेरे रहें; यही है

आपके ध्वजदान का फलदायी परिणाम।

तीस हजार युगों (कप्पा) के लिए

आप दिव्य वातावरण में आनंदित होंगे

दुनिया; अस्सी बार तुम एक बनोगे

दिव्य शासक और दिव्य इच्छा का प्रयोग करेगा

संप्रभुता।

हजार बार, तुम विश्व बनोगे-

राजा; आपका राज भरपूर होगा

शासनकाल, जिसकी संख्यात्मक रूप से गणना करना असंभव है।

एक लाख युगों (कप्पा) बाद,

गुरु, जिसे कुल में गौतम नाम दिया गया था, एक

ओक्काका परिवार की संतानें प्रकट होंगी

इस दुनिया में।

दिव्य शक्ति से विदा होने के बाद

दुनिया, तुम एक रिश्तेदार बन जाओगे

ब्रह्मा की प्रेरणा आपके उज्ज्वल आधार से प्रेरित है

(सुक्कामुलेना कोडिटो), से जुड़ा हुआ

आपका सराहनीय कार्य।

आपके अस्सी करोड़ रुपये त्यागने के बाद

(धन का) और कई गुलाम और नौकर-

वांट्स, तुम भिक्षु बन जाओगे

महिमावान का विधान (सासाने)

एक गौतम।

हृदय जीतकर (आराधयित्वा)

स्वयंजागृत बुद्ध गौतम के बारे में,

साकियान वंश का श्रेष्ठ पुरुष,

तुम उसके शिष्य बन जाओगे

गुरु, जो उपवन के नाम से जाने जाते हैं।

मेरे द्वारा किया गया कार्य एक लाख

(युगों पहले) ने अपना फलदायी परिणाम दिखाया।

मेरे लिए यहाँ; एक की गति के समान

तीर सही ढंग से चला, मैंने अपना जला दिया था

दुराचार (किलेसा)।

जब मैं विश्व-राजा था, तब मैंने अपने अधिकार का प्रयोग किया।

चारों द्वीपों पर संप्रभुता,

वहाँ हमेशा झंडे लगे रहते थे

तीनों लीगों (योजना) में सर्वांगीण प्रतिस्पर्धा होगी।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

मैंने अपना कर्म तब किया था; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही है

मेरे ध्वजदान का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

आदरणीय उपावन भगवान बुद्ध के परिचारक (उपट्ठक) बन गए। उस अवसर पर भी, भगवान बुद्ध को वातबाध (वाताबाध) हो गया, यानी आंतरिक पीड़ा होने लगी। थेरा के एक गृहस्थ सहयोगी, देवहित नामक एक ब्राह्मण, जो सावत्थी में निवास करते थे, ने स्वयं को थेरा के चार संन्यासियों की आवश्यकताओं का आपूर्तिकर्ता (पवेदी) घोषित किया। आदरणीय उपावन ने अपना लबादा धारण किया, कुंड और वस्त्र लेकर उस ब्राह्मण के निवास पर गए। यह जानकर कि थेरा किसी उद्देश्य से उनके पास आए हैं (केनाचि अञ्ञेन पयोजनेन), ब्राह्मण ने इस प्रकार पूछा: "आदरणीय महोदय! कृपया मुझे बताएं कि आपको क्या चाहिए?" थेरा ने ब्राह्मण को अपने उद्देश्य की जानकारी देते हुए दो श्लोक कहे:

185. “सम्मानित ऋषि सुगत ने

दुनिया आंतरिक संकट से जूझ रही है

दर्द (वातेहाबाधिको); हे ब्राह्मण!

अगर आपके पास गर्म पानी है, तो उसे दें।

ऋषि को।

186. “मैं उसे भेंट चढ़ाना चाहता हूँ,

जिन्हें उन लोगों द्वारा सम्मानित किया गया था

सम्मान के योग्य, आदरणीय व्यक्ति-

व्यक्तिगत रूप से उन लोगों द्वारा जिन्हें होना चाहिए

व्यक्तिगत रूप से सम्मानित, और रहा है

जिनके साथ शिष्टाचारपूर्वक व्यवहार किया गया

उनके साथ विनम्रतापूर्वक व्यवहार किया जाना चाहिए।

(apacito'paceyyānaṃ).

उस भाषण का अर्थ है: लोके पूजनेय्यानं पूजितो का अर्थ है: इस संसार में जिसे भी ऐसे दिव्य प्राणियों आदि द्वारा सम्मानित किया गया हो, जो सम्मान के पात्र हों; सक्करेय्यानं सक्कतो का अर्थ है: जिसे बिम्बिसार और कोसल जैसे राजाओं द्वारा व्यक्तिगत रूप से सम्मान दिया गया हो, जो व्यक्तिगत रूप से सम्मान के पात्र हों; अपसेय्यानं अपचितो का अर्थ है: जिसे अरहंत जैसे महान ऋषियों द्वारा शिष्टाचारपूर्वक व्यवहार किया गया हो, जो दोषों से मुक्त हों और जिनके साथ शिष्टाचारपूर्वक व्यवहार किया जाना चाहिए; वह सभी प्रकार की बुराइयों से दूर रहकर अरहंत है; वह अच्छे आचरण आदि से सुगत है। हे मेरे स्वामी, सर्वज्ञ होने के कारण वे मुनि (ऋषि) हैं; वे परम दिव्य, परम सक्क, परम ब्रह्मा हैं। वातः आबाधिको का अर्थ है: वे वायु जनित रोग से पीड़ित हैं और उनका मन व्याकुल है (वातक्खोभनिमित्तं)। हे ब्राह्मण, क्या गर्म जल उपलब्ध है? तास्स का अर्थ है: उनके वायु रोग को दूर करने के लिए, हारावे इच्छामि का अर्थ है: मैं चाहता हूँ कि आप उन्हें गर्म जल अर्पित करें। यह सुनकर ब्राह्मण ने भगवान बुद्ध को गर्म जल और वायु रोग को दूर करने के योग्य औषधि अर्पित की। इससे भी गुरु बुद्ध का रोग ठीक हो गया। भगवान बुद्ध ने उनका आभार व्यक्त किया।

थेरा उपावन के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(154):इसिडिना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (154) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
154. इसिदिन्ना

बुद्ध युग में सुनापरंतों के देश में [1] एक पार्षद के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम इसिदिन्ना रखा गया। बड़े होकर उन्होंने चंदन मंडप के प्रस्तुतीकरण के समय दोहरे चमत्कार को देखा [2] और संतुष्ट मन से भगवान (बुद्ध) के पास आकर उन्होंने धम्म का मार्ग सुना और निर्वाण की पहली समाधि (सोतापना) प्राप्त की। गृहस्थ जीवन जीते हुए ही, एक करुणामयी आत्मा ने उन्हें प्रेरित किया और कहा:

[187] दीठ माया धम्मधर उपासका॥
काम अनिच्च इति भस्माना,॥
सारत्तारत्ता मणिकुंडलेसु॥
पुत्तेसु दारेसु च ते अपेक्खा॥ ॥

[188] अद्धा न जानन्ति यथाव6 धम्मौ॥
काम अनिच्च इति कपि आहु,॥
रागं च तेसां न बलत्थि चेट्टुm॥
तस्मा सीता पुत्तदारं धनञ्च ति.॥ ॥

[187] मैं उन धर्मनिष्ठ गृहस्थों को देखता हूँ जो अपने होठों पर धम्म का मार्ग धारण करते हैं;
आप उन्हें अक्सर यह कहते हुए सुन सकते हैं: 'इस संसार की सभी इच्छाएँ क्षणभंगुर हैं!'
परन्तु उनके हृदय में अनुचित तरीके से अर्जित धन, कीमती पत्थरों और रत्नजड़ित अंगूठियों का प्रेम होता है,
और उनके विचारों में पुत्रों, पुत्रियों और पत्नियों की चिंता व्याप्त रहती है।

[188] नहीं, वास्तव में, वे धम्म के आंतरिक अर्थ को नहीं जानते;
हालाँकि आप उन्हें अक्सर यह कहते हुए सुनते हैं: 'इस संसार की सभी इच्छाएँ क्षणभंगुर हैं!'
अपने आप को वासनाओं से मुक्त करने के लिए, उनमें आध्यात्मिक स्वास्थ्य की कमी है,
और इसलिए उनका हृदय पत्नी और बच्चों और धन से दृढ़ता से जुड़ा रहता है।

जब उस आम आदमी ने यह सुना, तो वह भावविभोर हो गया और संसार छोड़कर कुछ ही समय बाद उसने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) का स्वीकार करते हुए उसने इन श्लोकों को दोहराया।

[1] तुलना करें LXX.

[2] मैं इस पौराणिक घटना का पता कहीं और नहीं लगा सकता।

2.4-4 [154] इसिदिन्नाथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
दिट्ठा मया से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा इसिदिन्ना का है। उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संपन्न किए, और भगवान विपस्सी के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर उन्होंने पंखा उठाया और उसे बोधि वृक्ष को श्रद्धापूर्वक अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, अंत में सुनापरंत जिले के एक धनाढ्य परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ। इसी समय इस बुद्ध का उदय हुआ, उन्होंने इसिदिन्ना नाम प्राप्त किया, और वयस्क होने पर उन्होंने उस चमत्कार को देखा जब गुरु ने औपचारिक रूप से चंदन के महल (चंदनमाला) को स्वीकार किया। वे धर्मपरायण हो गए, गुरु के पास गए, उनके सत्य उपदेश (धम्म) को सुना, सोतापन्न बन गए और एक घर में निवास करने लगे। उनके कल्याण के प्रति सहानुभूति रखने वाले एक देवता ने उन्हें प्रेरित करते हुए दो श्लोक कहे:

187. "सत्य के वाहक भक्त

(धम्मधरा) और जो बता रहे हैं

इंद्रिय सुखों के बारे में

मैं क्षणभंगुर हूँ, मैंने इन्हें देखा है।

पन्ना रंग में मुग्ध और उत्साहित

बेटों और पत्नियों में भी बालियां

वे उनके लिए तरसते हैं (अपेक्खा)।

188. "निश्चित रूप से वे नहीं जानते कि यह कहाँ से आया है"

वे कहते हैं कि यहाँ सत्य (धम्म) है;

साथ ही इंद्रिय सुखों के बारे में भी।

क्षणभंगुर होने के कारण। उनका कोई अस्तित्व नहीं है।

कामवासना (राग) को काटने की शक्ति;

इसीलिए वे आसक्त (सिता) हैं।

पुत्र और पत्नी के साथ-साथ संपत्ति भी।

वहाँ, diṭṭhā mayā dhammadharā upāsakā, kāmā aniccā iti bhāsamānā का अर्थ है: यहाँ, कुछ भक्तों को, जो शास्त्रों के वाहक (अपनी स्मृति में) हैं (pariyattidhammadharā), मैंने देखा है; तीनों पिटकों को कंठस्थ करने के बावजूद, वे सत्य (धम्म) का वर्णन करते हुए इंद्रिय सुखों के नुकसान से उचित रूप से इस प्रकार संवाद स्थापित कर रहे हैं: "ये, अर्थात्, इंद्रिय सुख क्षणभंगुर, पीड़ादायक (दुक्खा) और विकृत (धम्म) होने के अधीन हैं; सारत्तरत्ता मणिकुंदकेसु, पुत्तेसु दारेसु च ते अपेक्खा का अर्थ है: पन्ना और बालियों (या पन्ना जड़ी बालियों) में मोहित होकर वे कामवासना (रागरत्ता) से बहुत दूषित हो गए। उन्होंने पुत्रों, पुत्रियों और पत्नियों में स्नेह उत्पन्न किया; मैंने देखा है कि वे कहते कुछ हैं और करते कुछ और हैं; यही इसका अर्थ है।"

यतो का अर्थ है, इसलिए, वे भक्त जो पन्ना की बालियों में मोहित और उत्तेजित हैं, और जो पुत्र और पत्नियों की लालसा रखते हैं; अतः, इधा का अर्थ है: बुद्ध के इस युग में, धम्म का अर्थ है: इस प्रकार होने के बाद, वे वे थे जो ऐसा भी कहते थे: "इंद्रिय सुख क्षणभंगुर हैं;" जीव की स्वाभाविक स्थिति (सत्तपकति) विविध प्रकृति (विचित्तसभाव) की होती है; इस प्रकार, इसका महत्व है। रागाञ्च तेसं न बला'त्थि चेत्तुं का अर्थ है: चूंकि उन भक्तों के समान ज्ञान की शक्ति नहीं है जो कामवासना (राग) को काट कर भ्रंश कर सकें, तस्मा: उस परिस्थिति में; सीता का अर्थ है: उस परिस्थिति में आसक्त हो गए; सीता का अर्थ है: तृष्णा (तन्हा) के प्रभाव में आसक्त हो जाना, पुत्तदारं धम्ञ्च का अर्थ है: पुत्रों, पत्नियों और धन के आसक्ति से मुक्त न होना; इस प्रकार, देवता ने उसी भक्त के संदर्भ में अरहंतत्व (अञ्ञा) का संकेत देते हुए ये सब कहा। देवता की कही हुई बातें सुनकर भक्त को पश्चाताप हुआ, वह भिक्षु बन गया और कुछ ही समय में अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"सर्वोत्तम बोधि वृक्ष पर

भगवान विपस्सी का (पादप)

मैंने एक पंखा पकड़ा और उससे हवा की।

(अबिजिम) सबसे उत्कृष्ट बोधि

वृक्ष को ईश्वरीय भाव से।

यह इक्यावन युग (कप्पा) पहले की बात है।

जिसे मैंने सबसे उत्कृष्ट तरीके से हवा दी

बोधि वृक्ष। मुझे कुछ याद नहीं है।

बुरा अस्तित्व; यही फलदायी है

मेरे पंखा चलाने का परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद भी, उन्होंने अपनी अरहंतता (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए इन्हीं श्लोकों का उच्चारण किया।

थेरा इसिडिन्ना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(155): संबुला-कक्काना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (155) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
155. संबुला-कच्चाना
मगध राज्य में बुद्ध युग में पुनर्जन्म लेकर, कच्चन वंश के एक कुलीन व्यक्ति के पुत्र के रूप में, उनका नाम संबुला रखा गया, लेकिन वे संबुला-कच्चन के नाम से जाने जाते थे। [1] भगवान (बुद्ध) द्वारा धम्म का उपदेश सुनने और भिक्षु संघ में प्रवेश करने के बाद, वे हिमालय के आसपास के क्षेत्र में गए और भेरा-वायाना ('भयानक मार्ग') नामक गुफा में अपने अंतर्दृष्टि अभ्यासों का अभ्यास किया।

एक दिन अचानक असमय ही एक विशाल तूफ़ानी बादल आसमान में छा गया, जो गरज, बिजली और तेज़ शोर से गूंज रहा था। फिर बारिश होने लगी और बिजली कड़कने लगी। सभी जीव-जंतु - भालू, लकड़बग्घे, भैंस, हाथी - भय और कंपकंपी से चीखने लगे। लेकिन थेरा ने अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली थी और अपने शरीर और जीवन की परवाह न करते हुए शोर पर ध्यान नहीं दिया, बल्कि तूफ़ान से शांत होकर अपने मन को इतना स्थिर कर लिया कि उन्हें अंतर्दृष्टि की तीव्र प्राप्ति हुई और उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञान) के साथ-साथ अभिज्ञा (उच्चतर ज्ञान) भी प्राप्त कर लिया।

अपनी इस उपलब्धि पर विचार करते हुए वे आनंद से भर उठे और एक कथन (गथा) में उन्होंने अन्ना (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[187] दीठ माया धम्मधर उपासका॥
काम अनिच्च इति भस्माना,॥
सारत्तारत्ता मणिकुंडलेसु॥
पुत्तेसु दारेसु च ते अपेक्खा॥॥

[188] अद्धा न जानन्ति यथाव6 धम्मौ॥

काम अनिच्च इति कपि आहु,॥
रागं च तेसां न बलत्थि चेट्ठुm॥
तस्मा सीता पुत्तदारं धनञ्च ति.॥ ॥

[189] ईश्वर की वर्षा बरसती है, हाँ, और ईश्वर की वर्षा गरजती है,
और मैं अकेला ही भयानक खोखले में रहता हूँ।
फिर भी उस भयानक चट्टानी खाई में रहते हुए भी
मुझे कोई डर नहीं लगता, कोई रेंगता हुआ भय नहीं, मैं
[अपने लिए] भयभीत नहीं हूँ।

[190]
ऐसे लोगों के लिए , पवित्र मार्ग (धम्म) में ऐसा नियम है कि इस प्रकार जीने
से मुझे कोई भय निकट नहीं आता, कोई रेंगता हुआ डर नहीं,
मुझे अकेले ही [अपने लिए] डर नहीं लगता। [2]

[1] उसे अन्य कच्चानों से अलग करने की आवश्यकता थी - जैसे, CCXXIX. फाईरे एमएस. और ब्र. सी.वाई., संपहुला-.

[2] इन सुंदर गाथाओं के छंद को मैं पाठ्यपुस्तकों में दिए गए किसी भी प्रकार के अंतर्गत वर्गीकृत नहीं कर सकता। 'ऐसे ... पथ (धम्म)' शब्द सुत्तंत शब्द धम्मता (मम') एस्सा- 'यह मेरे लिए पथ (धम्म) है' का विस्तार है (देखें संवाद, ii. 8, n. 3; मेरा बौद्ध धर्म, पृ. 119)। टीका में, पहले की तरह, देव (ईश्वर) का अर्थ मेघ (बादल) से लगाया गया है।

2.4-5 [155] संबुलकच्चानत्थेरा के श्लोक पर टीका

देवो च से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा संबुलकच्चाना का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में भक्तिभाव से भरे इस और उस जन्म में पुण्य कर्म करने वाले इस व्यक्ति का जन्म चौरानवे युग (कप्पा) पहले एक गृहस्थ परिवार में हुआ था। बुद्धि प्राप्त करने पर एक दिन उनकी मुलाकात मौन बुद्ध सतरंसी से हुई, जो भिक्षा मांगते हुए भटक रहे थे। निरोध की समाधि से उठने के बाद वे पुण्यभाव से प्रेरित हुए और उन्हें ताड़ का फल भेंट किया। इस पुण्य कर्म के फल के कारण वे जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते रहे और अंत में मगध राज्य के एक धनी गृहस्थ परिवार में जन्म लिया। जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तो उनका नाम संबुला पड़ा और कच्चान वंश के होने के कारण वे संबुला कच्चाना के नाम से प्रसिद्ध हुए।

वयस्क होने पर, उन्होंने गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए और हिमवंता के पास भेरवाया नामक एक पर्वतीय गुफा में आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के लिए निवास करने लगे। फिर, एक दिन, सैकड़ों और हजारों पाटलों के साथ गर्जना करते हुए एक विशाल, बेमौसम वर्षा करने वाला बादल बरसने लगा, बिजली की लपटें बिखेरते हुए, एक भयंकर तूफान (गणगणायन्तो) के रूप में; वज्रपात हुआ। उस ध्वनि को सुनकर भालू, लकड़बग्घे, जंगली भैंसें, हाथी आदि भयभीत होकर डर के मारे चिल्लाने लगे। परन्तु थेरा ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित कर ली थी, इसलिए उन्हें अपने शरीर और जीवन की कोई लालसा नहीं रही, उनके रोंगटे खड़े नहीं होते थे, उन्हें उस मूसलाधार बारिश की भी कोई चिंता नहीं थी, वे आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने वाले कर्मों में लगे रहते थे, गर्मी कम होने से अनुकूल जलवायु प्राप्त होने के कारण उनका मन शांत हो गया, और वहीं निरंतर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने में लीन होकर उन्होंने छह प्रकार के उच्च ज्ञान के साथ अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—-

“महान मौन बुद्ध, नाम

सतरंसी, आत्मनिर्भर और

अजेय, अपने से उठ खड़ा हुआ

एकांतवास, विशेष रूप से इसके लिए बाहर आया

उसका भिक्षा-भोजन (गोकाराया) एकत्र करना।

मैंने उसे हाथ में फल लिए देखा।

और मनुष्यों में सबसे श्रेष्ठ बैल के पास पहुंचा;

मैं धर्मपरायण और नेक हृदय वाला हूँ।

उसने ताड़ का फल भेंट किया।

यह चौरानवे युग पहले की बात है।

फिर मैंने फल का अर्पण किया; मैंने किया

किसी भी बुरी घटना का जिक्र याद नहीं;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

फल का प्रसाद।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने उचित अभ्यास (पटिपत्ति) पर विचार किया, प्रसन्न हुए और अपने आनंदमय उच्चारण के माध्यम से दो श्लोक बोले, जिससे उनका अरहंत पद (अञ्ञा) प्रकट हुआ।

189. "बारिश हुई, बारिश हुई

गर्जना और गड़गड़ाहट हुई। बिलकुल अकेला

क्या मैंने पित्त को दूर करने में समय बिताया?

खतरों के साथ (भेरवे); जब वह

मैं अकेले रहकर टूट रहा था

(पित्त) खतरे, मौजूद थे

न भय (भय) न कांपना

(चैम्बिटट्टा) न ही बाल खड़े होना।

190. "यही मेरा स्वभाव (धम्मता) था।"

जिसमें मेरा अकेले रहना शामिल था

खतरों को दूर करना; मेरे लिए

इस प्रकार निवास करने पर, वहाँ न तो कोई था

न डर, न कांपना, न रोंगटे खड़े होना-

कांटेदार।

वहाँ, devo ca vassati devo ca galagaḷāyati का अर्थ है: वर्षा का बादल बरसता है; जिससे “ग ... n'atthi bhayaṃ vā chambhitattaṃ vā Iomahaṃso vā का अर्थ है: न तो मन के कांपने (सञ्जितम्) से जुड़ा भय था, न ही शरीर का कांपना जो इसकी विशेषता थी (तं निमित्तकम्), और न ही रोंगटे खड़े होने की हद तक।

क्यों? “धम्मता ममेसा” का अर्थ है: उन्होंने वहाँ अपना कारण बताया। वास्तव में, भय आदि जैसी भावनाएँ वहाँ उस व्यक्ति में उत्पन्न होनी चाहिए जिसने सर्वांगीण ज्ञान के अभाव (अपरिञ्ञातवत्थुक) के कारण अपनी कामुक इच्छा (चंदरागत) का त्याग नहीं किया है; परन्तु मेरे द्वारा वहाँ सब कुछ (सब्बासो तत्था) सर्वांगीण रूप से समझ लिया गया था; वहाँ भी मेरी कामुक इच्छा का पूर्णतः निवारण हो गया था; अतः भय आदि का अभाव, धम्मता ममेसा (यही मेरा स्वभाव है) सत्य (धम्म) के अनुसार; इस प्रकार, (थेरा ने) अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया।

थेरा संबुलकच्चाना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(156):खिटका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (156) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
156. खितका
बुद्ध युग में कोसल राज्य में एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, खितक नाम से, [1] उन्होंने भगवान (बुद्ध) से धम्म का मार्ग सुना और भिक्षु संघ में प्रवेश करके एक वन में तब तक रहे जब तक उन्हें अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त नहीं हो गया। उस फल के आनंद में निरंतर रहते हुए, निर्वाण की प्राप्ति के लिए तत्पर, एक थेरा जो प्रयास के लिए उत्साही थे, वे उस वन में रहने वाले भिक्षुओं के पास उनमें उत्साह जगाने के लिए गए। पहले उनकी कुशलक्षेम पूछते हुए, उन्होंने उस स्वीकारोक्तिपूर्ण ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) में ये श्लोक कहे:

[191] कासा [25] सेलुपामाṃ चित्ताṃ हिताṃ नानूपकम्पति,॥
विराटतौ रजनियेसु कुप्पनिये न कुप्पति,॥
यस्सेवं भवितां चित्तं कुतो तां दुक्खमेस्सति.॥ ॥

[192] मामा सेलूपमाṃ चित्ताṃ हिताṃ नानूपकम्पति,॥
विराटतौ रजनियेसु कुप्पनिये न कुप्पति,॥
मामेवऽ भविताऽ चित्ताऽ कुतो माऽ दुक्खमेसाति' ति.॥ ॥

[191] जिसका हृदय चट्टान की तरह स्थिर है, और डगमगाता नहीं,
वासना से उत्पन्न होने वाली सभी चीजों के प्रति वासना से रहित,
और इस परिवर्तनशील संसार में अविचल है? [2] इस प्रकार प्रशिक्षित हृदय में, दुःख कहाँ से आएगा?

[192] मेरा हृदय चट्टान की तरह स्थिर है, और अविचलित है,
वासना से उत्पन्न होने वाली किसी भी चीज़ के प्रति वासना से रहित है,
और इस परिवर्तनशील संसार में अविचल है।
मेरा हृदय इस प्रकार प्रशिक्षित है - मुझे दुःख कहाँ से आएगा?

[1] क्या यह CIV के लेखक के समान है?

[2] शाब्दिक रूप से, जो हिलने की प्रवृत्ति रखता है उसमें नहीं हिलता।

2.4-6 [156] खितकत्थेरा के श्लोक पर टीका
“कस्सा सेलूपमं चित्तं” से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा खितक का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म करते हुए, वे भगवान विपस्सी के समय बंधुमती नगर में एक मठ के संरक्षक (आरामगोपक) के रूप में जीवन व्यतीत कर रहे थे, जब एक दिन संयोगवश उनकी दृष्टि आकाश में विचरण करते हुए भगवान के दर्शन हुई, वे श्रद्धा से भर गए और नारियल (नालिकेराफल) अर्पित करने की इच्छा व्यक्त की। उन्हें प्रसन्न करने के लिए, गुरु आकाश में ही ठहर गए और नारियल स्वीकार कर लिया। नारियल अर्पित करने के बाद, उन्होंने अपार उत्साह और आनंद का अनुभव किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और कोसल राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ; उन्होंने खितक नाम प्राप्त किया; बुद्धि प्राप्त करने पर उन्होंने गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बने, मानसिक साधना (कम्मट्ठान) में लगे रहे, वन में निवास किया और परिश्रम (घटेंतो) करते हुए अरहंत पद प्राप्त किया। अतः अपदाना में कहा गया है:—

“मैं उस समय बंधुमती नगर में था।”

एक मठवासी। मैंने उसे संयोगवश देखा था।

विशुद्ध रूप से शुद्ध (विरजं) बुद्ध

सीधे आकाश में जा रहा है (anilañjase)।

एक नारियल इकट्ठा करने के बाद, मैंने

इसे सर्वश्रेष्ठ बुद्ध को अर्पित किया।

सर्वप्रसिद्ध बुद्ध ने इसे स्वीकार किया।

वह अब भी आकाश में खड़ा था।

समृद्धि (वित्तीय समृद्धि) उचित रूप से प्राप्त हुई थी।

मेरे लिए प्रचारित किया गया, इसने यह सब लाया

तत्काल सुख (दिट्ठममसुखवाहो),

फल अर्पित करने के बाद, मैंने अपने

बुद्ध के प्रति अत्यंत श्रद्धापूर्ण मन।

तब मुझे उत्साह के साथ-साथ प्रचुर मात्रा में भी प्राप्त हुआ।

मुझे, जो यहाँ पैदा हुआ था, परम आनंद प्राप्त हुआ।

वहाँ, रत्न अचानक प्रकट हो गया।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने फल का चढ़ावा चढ़ाया;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

फल-अर्पण।

मेरी दिव्य दृष्टि स्पष्ट रूप से शुद्ध है; मैं हूँ

एकाग्रता में चतुर (समाधिकुसलो)।

मैंने अपने उच्चतर स्तर पर पूर्णता प्राप्त कर ली है।

ज्ञान; यही फलदायी परिणाम है

मेरे फल प्रसाद का।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने "कस्सा सेलूपमं" से शुरू होने वाले पहले श्लोक का उच्चारण किया, जिसका उद्देश्य वन क्षेत्र में निवास करने वाले भिक्षुओं की रक्षा (परिग्गणनत्थं) करना था, जब वे स्वयं निर्वाण के फल और सुख के आनंद में लीन थे और अपने दृढ़ प्रयास (पधानपरिग्गाहको) को बढ़ावा दे रहे थे।

191. वहाँ, कस्स सेलूपमं चित्तं; ठितं नानूपकमपति का अर्थ है: इस वन क्षेत्र में रहने वाले भिक्षुओं में से, जिस भिक्षु का मन सांसारिक सभी उतार-चढ़ावों के कारण न तो डगमगाता है और न ही थरथराता है (लोकधम्मेहि), क्योंकि वह निर्बलता (इंजन) के अभाव में, एक ठोस पत्थर से बने पहाड़ के समान, सर्वोच्च फल (अग्गफलाधिगमेन) की प्राप्ति के कारण, निपुणता (वसीब्बावप्पति) की प्राप्ति का पालन करता है (ठितं)। अब, उनके इस कथन की शुरुआत "विरत्तं" से की गई है, ताकि उनके न डगमगाने के तरीके और उसके कारण को दर्शाया जा सके। वहाँ, virattaṃ rajanīyesu का अर्थ है: (मेरा मन) तीन मुख्य अस्तित्व स्तरों (tebhūmakadhammā) से संबंधित सभी मामलों से विरक्त (virettaṃ) हो गया है, जो कामवासना (rāguppatti) के उत्पन्न होने का कारण थे और जो अत्यंत मनमोहक (rajanīyesu) हैं, कामवासना रहित (virāga) माने जाने वाले श्रेष्ठ मार्ग (ariyamagga) के माध्यम से; वहाँ, कामवासना हर तरह से (sabbaso) समाप्त हो गई है; यही अर्थ है। Kuppanīya का अर्थ है: क्रोध (paṭigha) के कारण उत्पन्न होने वाली (ṭhānīye) बातों में; दुर्भावना (āghātavatvatthu) के सभी अवसरों पर; na kuppati का अर्थ है: नाराज नहीं होता, परेशान नहीं करता (vikāraṃ āpajjati)। यस्सेवं भावितं चित्तं का अर्थ है: एक श्रेष्ठ व्यक्ति (अरियपुग्गला) का 'मानसिक' विकास (भावितं) इस प्रकार से हुआ है; कुतो तं दुखमेस्सति का अर्थ है: जहाँ से, या तो जीव (सत्ततो) से या परिस्थितियों (संखारतो) से, उस व्यक्ति के निकट दुख (दुक्खं) आता है; ऐसे व्यक्ति को दुख (दुक्खं) अवश्य होता है; यही अर्थ है।

192. इस प्रकार, थेरा खितक ने “नामा सेलूपमं चित्तं (मेरा पत्थर के समान मन)” से शुरू होने वाले दूसरे श्लोक के माध्यम से अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया, जिसमें उन्होंने पूछे गए प्रश्न का उत्तर अनिश्चित रूप से (अनियमवसेना) स्वयं का संदर्भ देते हुए (अत्तूपनायिकं) दिया। उस अर्थ का केवल उल्लेख किया गया है।

थेरा खितका के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(157):सोना-पोतिरियापुत्त

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (157) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
157. सोना-पोटिरियापुत्त
इस बुद्ध युग में कपिलवस्तु में, जमींदार (जमींदार) [1] पोटिरिया के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर , उनका नाम सोन रखा गया। वयस्क होने पर, वे शाक्य राजा भद्दिया की सेनाओं के प्रमुख सेनापति बने। अब भद्दिया ने संसार त्याग दिया (संन्यास ग्रहण कर लिया), जैसा कि नीचे वर्णित किया जाएगा, सोन ने सोचा: 'यदि राजा भी संसार त्यागकर संन्यास ग्रहण कर चुके हैं, तो मुझे गृहस्थ जीवन से क्या लेना-देना है?' [144] इसलिए उन्होंने संन्यास ग्रहण किया, लेकिन वे आलसी बने रहे और ध्यान अभ्यास में लीन नहीं रहे। अनुपिया के आम के बाग में निवास करने वाले भगवान (बुद्ध) ने उन पर अपनी महिमामय दिव्य छवि भेजी, और उन्हें सचेत करते हुए संबोधन श्लोक कहे:

[193] न तव सुपितुं होति रत्ती नक्खत्तमालिनी,॥
पतिजग्गितुमेवेसा रति होति विजानाता॥ ॥

[193] नहीं, इसलिए नहीं कि तुम देर तक सो सको,
रात तारों की मालाओं से सजी आती है।
बुद्धिमानों द्वारा जागरण के लिए यह रात आई है।

उनकी बात सुनकर सोन अत्यंत व्याकुल हो गए और अपनी कमियों को ध्यान में रखते हुए, उन्होंने खुले में साधना शुरू की और आत्मज्ञान प्राप्त करने का अभ्यास किया। और उन्होंने यह श्लोक कहा:

[194] हत्थिक्खंडहवापतितां कुंजरो सी अनुक्कमे,॥
सङ्गमे मे मतं सेय्यो यँ सी जिवे परजीतो' ति.॥ ॥

[194] अगर लड़ाई में मेरा योद्धा-हाथी
आगे बढ़ता, तो बेहतर होता, उसकी पीठ से गिरकर, [2] मैदान में मृत [और कुचला हुआ पड़ा रहता],
बजाय इसके कि दुश्मन के हाथों जीवित बंदी बनकर पीटा जाऊं।

ऐसा कहकर उन्होंने अंतर्दृष्टि को जागृत किया और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया, और उसके बाद उन्होंने भगवान (बुद्ध) के शब्दों और अपने स्वयं के शब्दों को अपनी अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा के रूप में दोहराया।

[1] जागीर में भूमि धारण करने वाले भोजक की स्थिति पर , संवाद, i. 108, n. 1 देखें; भद्दिया पर, CCLIV देखें। मल्लों के क्षेत्र में अनुपिया, कपिलवस्तु के पूर्व में स्थित था। दर्शन पर, पहली बहनों के कई कथनों (गाथा) की तुलना करें ।

[2] टीका अवपतितm̩ (न्यूमैन देखें) पाठ की पुष्टि करती है। यह रूपक एक भारतीय सैनिक के लिए बहुत स्वाभाविक है, और इसका प्रयोग आसान है। युद्ध से संबंधित रूपक बौद्ध साहित्य में ईसाई साहित्य की तुलना में कम बार आते हैं, और इस कृति में निहित कुछ रूपक लगभग उन्हें समाप्त कर देते हैं। 'कुचला गया' (हाथी द्वारा) टीका की व्याख्या है।

2.4-7 [157] सोनपतिरियापुत्तथेरा के श्लोक पर टीका
'ना ताव सुपितुं होति' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पोटिरियापुत्त का है, जो सोन के वृत्तांत हैं। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने के बाद, वे भगवान सिख धर्म के समय में वनवासी के रूप में जीवन व्यतीत कर रहे थे, जब एक दिन संयोगवश उनकी मुलाकात गुरु से हुई, वे धर्मपरायण हो गए और उन्होंने गुरु को कुरांजिया फल अर्पित किया। इस पुण्य कर्म के फल के कारण, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए और कपिलवस्तु में पोटिरिया नामक एक ग्राम प्रधान के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, जब बुद्ध प्रकट हुए। उनका नाम सोन था। वयस्क होने पर वे शाक्य सम्राट भद्दिया की सेना के सेनापति बने। फिर, जब राजा भद्दिया ने पूर्वोक्त तरीके से (हेट्ठा) संन्यासी बन गए, तो सेनापति भी संन्यासी बन गया और बोला, "जब राजा स्वयं संन्यासी बन गए, तो मुझे गृहस्थ जीवन से क्या लाभ?" संन्यासी बनने के बाद, वह विश्राम करते हुए नींद में मग्न रहा; उसने अपने मन के विकास (भावना) में कोई ध्यान नहीं दिया। अनुपिया में आम के बाग में निवास करने वाले प्रतापी भगवान ने अपना प्रकाश उस पर फैलाया (फरपेत्वा), उस प्रकाश से उसकी चेतना जागृत हुई और इस श्लोक के माध्यम से उसे सलाह देने के लिए दो श्लोक कहे।

193. अब सोने का समय नहीं है; रात है

चंद्र नक्षत्रों से सुशोभित

(नक्खत्तमालिनी); वह रात है

लेकिन देखभाल के लिए (paṭijaggituṃ)

बुद्धिमान लोग।

194. यदि हाथी पीछा करे

(अनुक्कामे) मैं जो गिर गया था

हाथी के शरीर से, मेरा

युद्ध के मैदान में मरना बेहतर है

पराजित होने के बाद जीने से बेहतर है।

वहाँ, na tāva supitaṃ hoti, ratti nakkhattamālinī का अर्थ है: नौवें क्षण को प्राप्त करने के बाद, जिसे आठ अनुपयुक्त क्षणों (अक्खण) द्वारा टाला गया था (वज्जिता), जन्मजात बुद्धिमान व्यक्ति उसका पालन करता है; उस बुद्धिमान व्यक्ति के लिए, जब तक उसे अरहतत्व प्राप्त नहीं हो जाता, तब तक, चंद्र नक्षत्रों से सजी इस रात में लेटना और सोना नहीं है; सोने का समय नहीं है। वास्तव में, दूसरी ओर, paṭijaggituṃ av'essa, retti hoti vijānatā; यह रात, विशेष रूप से (विशेषातो) एक ध्वनि मुक्त अवसर (निद्दवेला) बन गई है, जिसमें मनुष्य, पशु और पक्षी सो जाते हैं (निद्दुपगमना), और एक स्पष्ट रूप से जानकार बुद्धिमान व्यक्ति को इसकी आवश्यकता होती है, केवल अपने भीतर उचित अभ्यास (पटिपत्ति) को पोषित करने और जागृति के प्रति अपनी भक्ति में संलग्न होने के लिए।

उस श्लोक को सुनकर सोन और भी अधिक पश्चाताप से भर गए, उनकी लज्जा (हिरी) और भय (ओत्तप्पं) प्रबल हो गए, उन्होंने खुले में रहने (अभोकासिकंगं) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के कठोर अभ्यास का संकल्प (अधित्तय) लिया और "हत्थिक्खंडावपतितं" से शुरू होने वाला दूसरा श्लोक बोला। यहाँ, अवपतितं का अर्थ है: चेहरा नीचे की ओर करके गिरना, पैर ऊपर और चेहरा नीचे करके गिरना। कुंजरो चे अनुक्कमे का अर्थ है: यदि हाथी पीछे जाए (अनुक्कमेय्या)। यह कहा गया है:— जब मैं अपने हाथी पर सवार होकर युद्धक्षेत्र में प्रवेश कर गया (पविट्ठो) और हाथी की पीठ से गिर गया (हत्थिक्खन्धतो पतितो), तो यदि मैं उस हाथी के पैरों तले कुचलकर मर जाऊं (मद्दितो), तो युद्धक्षेत्र में वह मृत्यु मेरे लिए (मेरी) सेय्यो (बेहतर) है; यञ्चे जिवे पराजितो (अब मैं सभी

प्रकार के दुराचारों से पराजित होकर जीवित रहूं; यह बेहतर नहीं है)। जब थेरा इस श्लोक का पाठ कर रहे थे, तब उन्होंने स्वयं आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में लीन होकर अरहंतत्व प्राप्त कर लिया था। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

मैं पहले हिरण का शिकारी था;

मैं जंगल में घूमता रहा।

निर्मल बुद्ध प्रतिमा देखी, निपुण

सभी धर्मों में।

कुरांजिया फल एकत्र करने के बाद,

मैंने इसे सर्वश्रेष्ठ बुद्ध को अर्पित किया, जो

वह ऐसा ऋषि था जैसा कि वह क्षेत्र था

पुण्य कमाते हुए; मैंने श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाई

मेरे अपने हाथों (pñṇibhi).

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

फिर मैंने फल भेंट किया।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह फल का फलदायी परिणाम है

पेशकश।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने गुरु और स्वयं द्वारा बोले गए दोनों श्लोकों को दोहराया (पच्चुदाहासी), जो कि "हत्थिक्खन्धा'वपतितं" से शुरू होने वाला श्लोक था। उस श्लोक के माध्यम से, यह भी उनके अरहंत पद का रहस्योद्घाटन (अञ्ञा) बन गया।

थेरा सोनपोतिरियापुत्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(158): निसाभा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (158) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
158. निसाभा
बुद्ध युग में कोल्लियन देश में [1] एक कुल के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम निसाभा रखा गया। वयस्क होने पर, उन्होंने शाकियन और कोल्लियन के बीच युद्ध में बुद्ध की बुद्धि और शक्ति देखी, और विश्वास करते हुए, भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और जल्द ही अरहंत पद (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

एक साथी भिक्षु (भिक्षु) को लापरवाही से अपना समय व्यतीत करते देखकर [145] उन्होंने उसे संबोधित किया, और यह दिखाने के लिए एक और श्लोक जोड़ा कि वह वही करता था जिसका वह उपदेश देता था:

[195] पंचकामागुने हित्वा पियारूपे मनोरमे,॥
सद्धया अभिनिक्खम्म दुक्खस्सन्तकारो भवे॥ ॥

[196] नाभिनंदामि मरणं नभानंदामि जीविता,॥
कलौं च पतिकोखामि संपजाणो पतिस्सतोऽ ति.॥ ॥

[195] उन पाँच प्रकार की इंद्रियों को त्याग दो,
वे वस्तुएँ जो मन को मोहित और आकर्षित करती हैं।
हे, जिन्होंने विश्वास के द्वारा घर और संसार का त्याग किया,
इसके दु:ख और पीड़ा के अंतकर्ता बनो।

[196] मृत्यु के विचार से मैं न तो सहज होता हूँ, न ही
जीवन में आनंदित होता हूँ। मैं
विवेकशील मन और पूर्ण ध्यानमग्नता के साथ उस घड़ी की प्रतीक्षा करता हूँ। [2]

[1] रोहिणी नदी द्वारा शाकियों से अलग किया गया एक कबीला। सी एफ सी., CCXXXIII.

[2] तुलना करें XX., और संस्करण 607.

2.4-8 [158] निसाभत्थेरा के श्लोक पर टीका
पंच कामगुणे हित्वा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा निसाभा का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, वे भगवान विपस्सी के समय एक परिवार में पुनर्जन्म हुए; जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्होंने गुरु को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें बेल भेंट की। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने अपने जन्मों के चक्रों में घूमते हुए उत्तम जन्म प्राप्त किए और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे कोलिया जिले के एक परिवार में पुनर्जन्म हुए; निसाभा नाम प्राप्त करके, वे वयस्क हुए और शाक्य और कोलिया के युद्धक्षेत्र में बुद्ध की शक्ति के दर्शन किए, उचित श्रद्धा से प्रेरित हुए, भिक्षु बने और उसी दिन अरहंत पद प्राप्त किया। अत:, अपदान में यह कहा गया है:—

मैंने बेल का फल भेंट किया

सुनहरे रंग वाले स्वयं के लिए फल-

जागृत बुद्ध, प्राप्तकर्ता

बलि चढ़ाने वाले, जो प्रवेश कर रहे थे

रथ मार्ग पर।

यह इक्यावन युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने फल का चढ़ावा चढ़ाया;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

फल-अर्पण।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने साथी भिक्षुओं को उपदेश देने के उद्देश्य से, यह देखकर कि वे अपना समय लापरवाहीपूर्ण जीवन व्यतीत करके बिता रहे थे, पहली पंक्ति का पाठ किया।

195. पाँच प्यारे सुंदर लोगों को त्यागने के बाद

और मानसिक रूप से आनंददायक कामुकता के पहलू

सुख-सुविधाओं के लिए तुम अपने घरों से बाहर आ गए हो

अपनी पवित्र आस्था के साथ; आपको बनना चाहिए

जो कष्टदायक पीड़ा का अंत करता है

(दुख)।

इसका अर्थ है:— पियारूपे का अर्थ है: अपने ऐसे स्वभाव के कारण जो प्रेमयोग्य है, अज्ञानी आम लोगों (पुथुज्जन) को प्रेमपूर्वक सुंदर लगना; मनो रमे का अर्थ है: मनभावन स्वभाव के कारण मन को प्रसन्न करने वाला; पांचकामागुणे का अर्थ है: सुंदर रूप (रूप) से शुरू होने वाले पांच प्रकार के (कोट्ठासा); हित्वा का अर्थ है: सभी कर्मों का त्याग कर, सद्धाय का अर्थ है कर्मफल और तीन रत्नों (रतनत्तय) में पवित्र आस्था के प्रभाव में आना; घरा का अर्थ है: संन्यास लेकर भिक्षु बनना; जन्म से ही बुद्धिमान (विञ्ञुजातिको) होकर, भिक्षु बनने के समय से ही प्रयास करना; दुःखस अंतकारो भावे का अर्थ है: ऐसा बनना जो बार-बार जन्म-जन्म के कष्टदायक चक्र को समाप्त कर दे। इस प्रकार उन भिक्षुओं को सलाह देने के बाद, उन्होंने दूसरे श्लोक के माध्यम से अपनी अरहतता (अञ्ञा) प्रकट की, ताकि उन्हें अपनी स्वयं की उचित प्राप्ति (पटिपन्न) की स्थिति स्पष्ट हो सके: "इस दृष्टिकोण से मत समझो: 'यह व्यक्ति केवल दूसरों को सलाह (सञ्ञापेन्तो) देता है; वह स्वयं कर्ता नहीं है'।"

196. "मैं मृत्यु का स्वागत नहीं करता; न ही कोई और करता है।"

मैं जीवन का स्वागत करता हूँ; सचेत और विचारशील होकर।

मुझे समय की बहुत याद आती है।

वहाँ, नाभिनंदामि मरणं का अर्थ है: मैं विशेष रूप से मृत्यु की कामना नहीं करता। नाभिनंधामि जीवितं का अर्थ है: यह तो इसके कारण (कारण) का कथन है; क्योंकि मैं जीवन का स्वागत नहीं करता, इसलिए मृत्यु का भी स्वागत नहीं करता। वास्तव में, जो कोई भी जन्म, वृद्धावस्था और भविष्य में मृत्यु के विशेष दुराचार (किलेसा-भिसंखारे) का संचय करता है, वह अंतराल न होने के कारण नए अस्तित्व (पुनब्भव) के विशेष उद्‌भव (अभिनिब्बत्तिं) का स्वागत करते हुए, अपनी मृत्यु का भी स्वागत करता है; क्योंकि उसने कारण (कारणस्स अप्पहीनत्ता) का त्याग नहीं किया है। दोष रहित अरहंत, संचय की ओर ले जाने वाले कर्मों (धम्मे) का पूर्णतः त्याग करके और पुनर्जन्म की संभावना को कम करने वाले कर्मो (धम्मे) में सुस्थापित होकर, सर्वांगीण ज्ञान पर आधारित होकर, जीवन का हर तरह से स्वागत न करते हुए, मृत्यु का भी स्वागत न करने वाला कहा जाता है, क्योंकि उसने मृत्यु के कारण का पूर्णतः त्याग कर दिया है। अतः उन्होंने कहा: "नाभिनंदामि मरणं, नाभिनंदामि जीवनं (मैं मृत्यु का स्वागत नहीं करता। मैं जीवन का स्वागत नहीं करता)।" यदि इस प्रकार दोष रहित अरहंत की निर्वाण में प्रवेश करने की विशेष इच्छा हो, तो निर्वाण में पूर्ण रूप से विलीन होने तक उसकी स्थिति क्या होगी? अत: उन्होंने कहा: "कालं च पटिकंखामि, संपजानो पटिसत्तो" का अर्थ है: जब सभी प्रकार के दुराचारों का सर्वांगीण शमन (सिद्धे) हो जाता है, तो मैं जागरूकता और ज्ञान की प्रचुरता की प्राप्ति के लिए सचेत (सतो) और चिंतनशील (संपजानो) हो जाता हूँ और उस समय की प्रतीक्षा (पटिकंखानि) करता हूँ जब सभी तत्वों का पूर्ण निर्वाण (खन्ध) हो जाएगा; मैं उस घटना की प्रतीक्षा (उदिक्कनमानो) और प्रतीक्षा (आगमयमानो) करता रहता हूँ; परन्तु मेरे प्राण-मृत्यु में मेरा कोई सुख (अभिनंदना) नहीं है, क्योंकि अरहंतत्व के उसी मार्ग से उसका भी अंत (समुग्घातित) हो चुका है।

थेरा निसाबा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(159):उषाभा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (159) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
159. उसभा
बुद्ध युग में कपिलवस्तु में एक शाक्य राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम उषाभा रखा गया। जब भगवान (बुद्ध) अपने लोगों से मिलने आए, [1] उषाभा ने उनकी शक्ति और ज्ञान को देखा, उन पर विश्वास किया और भिक्षु बन गए। उस समय से उन्होंने कोई धार्मिक कर्तव्य नहीं निभाया, बल्कि सारा दिन समाज में और सारी रात नींद में व्यतीत किया।

एक दिन, मन में उलझन लिए और आलस्य से नींद में डूबते हुए, उन्होंने सपना देखा कि उन्होंने दाढ़ी बनाई, लाल रंग का वस्त्र पहना और हाथी पर बैठकर भिक्षा मांगने के लिए नगर में प्रवेश किया। वहाँ लोगों की भीड़ देखकर वे लज्जा से भर उठे। यह सोचकर वे जाग उठे: 'अरे, यह तो सपना था! मन में उलझन और अविवेकी अवस्था में मैंने स्वयं को सपने में देखा।' और व्यथित होकर उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और समय आने पर उन्हें अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त हुआ।

इस प्रकार, सपने को अपना प्रेरणास्रोत बनाकर, उन्होंने अपनी सर्वोच्च उपलब्धि (अञ्ञा) को स्वीकार करते हुए इसका जश्न मनाया और कहा:

[197] अंबपल्लव संकासां असे कटवना सिवारा,॥
निसिन्नो हत्थि गिवय गमं: पिंडाय पविसीं॥ ॥

[198] हत्थिक्खंडहतो ओरुयहा सवेगअ अलभिm तदा,॥
सोहाऽ दित्तो तदा संतो पत्तो मे आसवक्खयोऽ ति.॥ ॥

[197] बैंगनी आम की कलियों के रंग का एक वस्त्र
मेरे कंधे पर लिपटा हुआ था, मैं

हाथी की पीठ पर
सवार होकर गाँव की गली में भीख मांगने के लिए निकल पड़ा।

[198] [146] उसकी पीठ से नीचे [अत्यंत शर्म से] मैं फिसल गया -
[तभी देखो! मैं जागा और] पीड़ा ने मुझे जकड़ लिया।
यह अभिमानी स्व तब नम्र और सौम्य हो गया,
मेरे मन को दूषित करने वाले विषों को शुद्ध किया गया। [2]

[1] तुलना करें. सीसीXXXIII.

[2] एक और उदाहरण जहाँ कथा गाथा की उलझन को सुलझाती है, जिसे अलग से लिया गया है। उदाहरण के लिए, हाथी सवार का 'भिक्षा मांगने' से क्या लेना-देना था? डॉ. न्यूमैन को यह वाक्यांश हटाना पड़ा। एक स्वप्न की विसंगति के रूप में, यह छोटी कविता बिल्कुल स्पष्ट है। 'फिर... फिर' पाठ से लिया गया एक दोहराव है।

2.4-9 [159] उसभट्टथेरा के छंद पर टीका
अंबपल्लवासंकासं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उसबना का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म करते हुए, उन्होंने भगवान सिखि (बुद्ध) के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उन्होंने गुरु को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे धर्मपरायण हो गए और उन्हें कोसंब फल अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने अपने बार-बार के पुनर्जन्मों को देवताओं और मनुष्यों के बीच घूमते हुए बिताया, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे कपिलवस्तु में शाक्य वंश में पुनर्जन्म लिए; उसभा नाम प्राप्त करने और वयस्क होने पर, उन्होंने गुरु के रिश्तेदारों के मिलन समारोह में बुद्ध की शक्ति को देखा, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की और भिक्षु बन गए। उन्होंने अपने भिक्षु कर्तव्यों (धम्म) का पालन नहीं किया और दिन में समाज में मौज-मस्ती (संगणिकाराम) करते हुए और रात भर सोते हुए अपना समय व्यतीत किया। एक दिन, बिना सोचे-समझे (असंपजानो) सोते समय, उन्होंने सपने में स्वयं को एक हाथी की पीठ से लज्जित होकर उतरते हुए देखा, जहाँ उन्होंने देखा कि एक व्यक्ति वहाँ अच्छी तरह से पहुँचा है, जहाँ वह भी भिक्षा मांगने के लिए हाथी की गर्दन पर बैठा था, आम के अंकुर के रंग का ऊपरी वस्त्र पहने हुए, अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, उचित रूप से प्रबुद्ध (पतिबुद्धो) हो गया, और स्वयं से कहा; "मुझे सोते समय अनजाने में और बिना सोचे-समझे ऐसा सपना आया," पश्चाताप से ग्रस्त होकर, उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने का मार्ग अपनाया और शीघ्र ही अर्हत्व प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"राजकीय पोशाक की तरह खुलते हुए"

वैभव (ककुधं विलासंतं)

वह दिव्यों का भी दिव्य था (देव-

देवम्) और मनुष्यों में श्रेष्ठ।

तब मैंने उन्हें कोसाम्बा फल अर्पित किया।

जब उन्होंने रथ यात्रा शुरू की।

यह इकत्तीस युग पहले की बात है, जब मैंने

फिर फल पेश किया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही है

मेरे द्वारा किए गए प्रयासों का फलदायी परिणाम यह हुआ कि

फल का प्रसाद।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

तब, थेरा ने अपने द्वारा देखे गए स्वप्न को अपना प्रेरणास्रोत (अंकुसा) बनाकर, अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए दो श्लोक कहे, और उसी स्वप्न की घोषणा की, क्योंकि वही स्वप्न उनके अरहंतत्व की प्राप्ति का कारण था।

197. अपना वस्त्र धारण करके (कट्वाना),

मेरे चेहरे पर आम के अंकुर जैसा दिख रहा है

कंधे पर, मैं गांव में दाखिल हुआ

भिक्षा-भोजन के लिए, गर्दन पर बैठा हुआ

हाथी का।

198. पीछे से उतरने के बाद

हाथी को देखकर मुझे पछतावा हुआ।

कि तब मैं, (यद्यपि)

गर्वित (वही), रोग-मुक्त

मुझे अरहंत पद प्राप्त हो चुका था।

वहाँ, ambapallavasaṅkāsaṃ, aṃse katvā cīvaraṃ का अर्थ है: अपने शरीर (खंडे) पर मूंगे के रंग का वस्त्र, जिसमें आम के अंकुर (ambapallava) की विशेषता (आकार) थी, धारण (करित्वा) करने के बाद, मैंने उसका एक ऊपरी वस्त्र बनाया। Gāmaṃ का अर्थ है: उसका अपना राज्य; hatthigīvāyaṃ nisinno piṇḍāya pāvisiṃ का अर्थ है: हाथी की पीठ (खंडे) पर बैठकर, मैं भिक्षा मांगने के लिए प्रवेश किया: hathikkhandhato oruyha का अर्थ है: जिस क्षण मैंने (गाँव में) प्रवेश किया, उसी क्षण मुझे बहुत से लोगों द्वारा देखा जा रहा था, (और इसलिए मैं) हाथी की पीठ से उतरा, खड़ा हुआ और उचित रूप से नींद से जाग गया (paṭibojjhiṃ); संवेगं अलभिं तदा का अर्थ है: जैसे ही मैं जागा (पबुद्धो वा), मुझे पश्चाताप हुआ, इस प्रकार: "यह अनजाने में और बिना सोचे-समझे सो जाने के कारण हुआ है।" हालांकि, अन्य विद्वान इस प्रकार कहते हैं: "राजा बनते ही, रात के एक हिस्से में उसने ऐसा सपना देखा, भोर में अपने हाथी की पीठ पर सवार हुआ, अपने शहर की गलियों में घूमते हुए उसे अपना सपना याद आया, वह हाथी की पीठ से उतरा, उसे पश्चाताप हुआ, गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बन गया, अरहंत पद प्राप्त किया और इन श्लोकों का पाठ करते हुए, गंभीर भाव से अपनी प्रसन्नतापूर्ण अभिव्यक्ति (उदान) की। इसका अर्थ यह है: मुझे पश्चाताप इसलिए नहीं हुआ क्योंकि मैं अपने वंश और धन के घमंड आदि के कारण हर तरह से अहंकारी था; यही व्याख्या है।"

थेरा उसभा के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(160):कप्पटा-कुरा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।

नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (160) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
160. कप्पटा-कुरा
बुद्ध युग में सावत्थी में दरिद्र परिस्थितियों में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने अपना भरण-पोषण करने का एकमात्र तरीका यही जाना कि वे फटे-पुराने वस्त्रों में लिपटे, हाथ में पान लिए, चावल के दाने इकट्ठा करने के लिए इधर-उधर भटकते थे। [1] इसलिए वे कप्पटा-कुरा - 'फटे-पुराने वस्त्र और चावल' के नाम से जाने गए। बड़े होकर उन्होंने घास बेचकर अपना जीवन यापन किया। एक दिन जंगल में घास काटते समय, उन्होंने एक थेरा को देखा। प्रणाम करके वे उनके पास बैठ गए और उनसे धर्म का उपदेश (धम्म) सुना। तब उन्होंने विश्वास किया और यह कहते हुए कि 'मेरे लिए यह दयनीय जीवन शैली क्या है?' उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अपने फटे-पुराने वस्त्र एक विशेष स्थान पर रख दिए। जब उन्हें अपने नए जीवन से अरुचि हुई, तो वे जाकर उन फटे-पुराने वस्त्रों को देखते और बेचैन हो जाते। ऐसा करते हुए, उन्होंने सात बार भिक्षु संघ छोड़ दिया। तब भिक्षुओं ने इस बात की सूचना भगवान बुद्ध को दी। और एक दिन जब कप्पटा-कुरा, भिक्षु के रूप में, सभा के किनारे प्रवचन कक्ष में ऊंघ रहे थे, तब उन्होंने उनसे इन छंदों में बात की:

[199] अयामिति कप्पातो कप्पातकुरो अच्चया अतिभृताय॥
अमतघटिकायं धम्मकतमट्टो कटपादं झानानि ओसेटुं॥ ॥

[200] मा [26] खो त्वा कप्पा पकालेसी॥
मा तं उपाकाणाकम्हि तदेस्सं,॥
नहं त्वं कप्पट्ट मत्तमन्नसि॥
सङ्घमज्झामहि पचालयमानोऽ ति.॥ ॥

[199] 'ये,' वह कहता है, 'राग-चावल के चिथड़े हैं!
जो वस्त्र मैंने पहन रखे हैं, वे बहुत भारी हैं।'
उसने अमृतमयी वर्षा में धम्म का पूर्ण सार ग्रहण किया है ; फिर भी वह ध्यान साधना का अभ्यास करने के लिए
कोई कदम नहीं उठाता ।

[200] हे कप्पता, तुम्हें हिलना-डुलना और सिर हिलाना नहीं चाहिए,
न ही मुझे तुम्हारे कान में शब्द ठूंसने पर मजबूर करना चाहिए।
कप्पता, तुमने ज़रा भी नहीं सीखा,
यहाँ श्रोताओं के बीच नींद में झूमते हुए। [2]

इस प्रकार परमेश्वर ने उन्हें इतनी कठोर फटकार लगाई मानो उनकी हड्डियों को भेद दिया हो, मानो कोई भयंकर हाथी उनके मार्ग में आ उतर आया हो। वे अत्यंत व्याकुल होकर अंतर्दृष्टि प्राप्त कर शीघ्र ही अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। इसके बाद उन्होंने उन श्लोकों का पुनरावलोकन किया जो उन्हें लक्ष्य तक ले जाने वाले प्रेरक थे, और वे श्लोक उनकी ज्ञान प्राप्ति की घोषणा बन गए।

[1] कुरा, टीका में एक बार kūra के रूप में आता है (= चाइल्डर्स और बोहट्लिंगक और रोथ में, 'उबला हुआ चावल'), संभवतः किसी न किसी रूप में जंगली चावल है। तुलना करें: विनय के सुत्त-विभंग में sukkha-kūra , ओल्डेनबर्ग संस्करण, iv., पाक. 38, 1.

[2] डॉ. न्यूमैन द्वारा वर्णित 'अस्पष्ट कहावतों' के ठीक विपरीत ये छंद, किंवदंती की सहायता के बावजूद भी, उतने स्पष्ट नहीं हैं। दोनों संस्करणों में टीका सामान्यतः जितनी स्पष्ट नहीं है; फिर भी, जो व्याख्या यह देती है, वह हमेशा की तरह एक सरल और संभावित स्थिति को दर्शाती है - फटी हुई लंगोटी, अपने आवारापन से जुड़े भावों के साथ, एक बोहेमियन और मूर्तिपूजक आकर्षण प्रदान करती है, जिससे अधिक शालीन पीले रोबोस बोझिल और अनुशासन कष्टदायक प्रतीत होते हैं। किंवदंती ऑर्डोर की परंपराओं के 'मानवीय दस्तावेजों' में एक विशिष्ट योगदान है।

2.4-10 [160] कप्पट्टकुरथेरा के श्लोक पर टीका
अयम इति कप्पट्टो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कप्पट्टकुरा का है। इसका उद्गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और विपस्सी (बुद्धों) के समय एक परिवार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन संयोगवश उन्हें विनता नामक नदी के किनारे एक वृक्ष के नीचे बैठे भगवान बुद्ध के दर्शन हुए, वे श्रद्धा से भर गए और केतका पुष्प अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे, और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब वे सावती में एक दरिद्र परिवार में पुनर्जन्म लिए; जब तक वह वयस्क नहीं हो गया, आजीविका का कोई अन्य साधन न जानते हुए, वह एक फटे पुराने वस्त्र (कप्पटखंड निवासनो) में लिपटा रहता था और हाथ में प्याला (सेराव) लिए उबले हुए चावल की तलाश में इधर-उधर भटकता रहता था; इसी कारण वह कप्पटकुरा के नाम से जाना जाता था। वयस्क होने पर वह घास बेचकर अपना जीवन यापन करता था। एक दिन घास काटने के उद्देश्य से वह जंगल गया, जहाँ उसकी मुलाकात एक अरहंत से हुई, जो रोगों से मुक्त था। उसने उनके पास जाकर उन्हें प्रणाम किया और बैठ गया। थेरा ने उसे धर्म का उपदेश दिया। धर्म का उपदेश सुनकर उसने उचित श्रद्धा प्राप्त की और भिक्षु बन गया। उसने कहा, "इस कठिन आजीविका से मुझे क्या लाभ है?" और उसने अपने गंदे वस्त्र को एक स्थान पर फेंक दिया। जब भी उसे कोई क्रोध आता, तो उस पुराने वस्त्र को देखकर उसका क्रोध दूर हो जाता था। उन्हें उचित पश्चाताप हुआ। इस प्रकार करने के कारण वे सात बार भिक्षु-बहुल हो गए: भिक्षुओं ने उनके बारे में यह बात भगवान बुद्ध को बताई। फिर एक दिन, भिक्षु कप्पटकुरा धर्म की चर्चा के लिए सभाघर में श्रोताओं के सबसे दूर वाले छोर पर बैठे थे; भगवान बुद्ध ने उन्हें प्रेरित करने के लिए दो श्लोक कहे:

199. "यह भिक्षु कप्पटकुरा, पीड़ादायक

(अच्छय) और अतिभारित (अतिभारितय)

कहती है: 'यह मेरी गंदी पोशाक है'। मेरी

अमृत का जार (अमातागाहिका), वह है

अच्छे सत्य के प्रति लापरवाह (matto)

(धम्म), ध्यान विकसित करने के लिए (ओचेतुं)

प्रक्रिया (कटपदम्) पूरी करने के बाद।

200. "सचमुच, हे गंदे वस्त्र! तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए

अस्थिर रहो; मुझे तुम्हें पास से हराने मत दो

आपका कान। वास्तव में, हे कप्पटा, आपने ऐसा नहीं किया।

माप (मत्ता) को समझना, गतिमान

पादरी वर्ग के बीच में

भिक्षुओं।"

वहाँ ayamiti kappaṭo kappaṭakuro का अर्थ है: भिक्षु कप्पटकुरा इस प्रकार जंगली गलत विचारों से ग्रस्त हैं: "यह मेरा गंदा वस्त्र है; इसे चारों ओर पहनकर मैं किसी न किसी तरह अपना जीवन यापन करता हूँ;" acchāya atibharitāya amataghaṭikāyaṃ का अर्थ है: जब मेरा अमृत का घड़ा (amataghaṭe) इधर-उधर वर्षा करता है, तो इसके द्वारा: "मैं तुम्हें अमरत्व (अमता) प्राप्त करना सिखाता हूँ; मैं सत्य (धम्म) सिखाता हूँ," "इस संसार में जो घोर अंधकार से भर गया है, मैं अमरत्व (अमता) का ढोल (दुंदुभी) बजाता हूँ," इत्यादि; इस प्रकार घोषणा (घोषेत्वा) करने के बाद और जब मेरे द्वारा अमर सत्य (धम्ममते) की वर्षा हो रही होती है; katapadaṃ jhānāni ocetuṃ का अर्थ है: लोकीय और अलौकिक ध्यान को संचित (upacetuṃ) और विकसित करने के लिए, सिद्ध मार्ग (katapadaṃ), उचित मार्ग

(magga) के विकास (bhāvanā) के लिए, यही मेरा विधान (sāsanaṃ) है; धम्मकटमत्तो का अर्थ है: इसी प्रकार कप्पटकुरा भी मेरे उपदेशात्मक (शासन) शिक्षा (धम्म) से ऊबकर अपना होश खो बैठा है (अपगतमानसो)। इसलिए, उसे प्रेरित (कोदत्वा) करके, बुद्ध ने "मा खो त्वं कप्पट पचलेनि" से शुरू होने वाला श्लोक कहा, ताकि उसे लापरवाही से उसके निवास स्थान को फिर से दिखाया जा सके, ठीक उसी तरह जैसे किसी चोर को उसकी चोरी की संपत्ति के साथ पकड़ लिया जाता है।

वहाँ, mā kho tvaṃ kappaṭa pacālesi का अर्थ है: हे कप्पटकुरा! मेरे सत्य (धम्म) के उपदेश को सुनने का निश्चय करके बैठ जाने पर, तुम ऊंघना (pacālesi) मत करो, विचलित मत हो, सो मत जाओ। Mā tvaṃ upakaṇṇambi tāḷessaṃ का अर्थ है: मुझे सोते हुए तुम्हारे कान के पास अपने उपदेश (desanāhattha) से तुम्हें चोट पहुँचाने पर मजबूर मत करो। क्योंकि आगे मुझे तुम्हें दुराचार से बचने के लिए सलाह नहीं देनी पड़ेगी, इसलिए तुम्हें उसी प्रकार उचित अभ्यास (paṭipajjāhi) करना चाहिए; यही इसका अर्थ है। Na hi tvaṃ kappaṭa mattamaññāsi Saṅghamajjhambi pacalayamāno का अर्थ है: हे कप्पट! भिक्षुओं के बीच विचरण करते हुए न तो आपने इसकी सीमा और मात्रा पर विचार किया और न ही इतना भी समझा: "यह क्षण, जिसे प्राप्त करना अत्यंत कठिन है, उचित रूप से प्राप्त हुआ है; इस क्षण को व्यर्थ न जाने दें; देखो, अब तुमने क्या खोया है (ते अपराद्धं); इस प्रकार बुद्ध ने आग्रह किया।

जब भगवान बुद्ध ने इन दो श्लोकों के माध्यम से उन्हें कड़ी निंदा करने के बाद प्रेरित किया, तो वे ऐसे पश्चाताप से व्याकुल हो गए जैसे उनकी हड्डियाँ तक छिन्न-भिन्न हो गई हों और जैसे कोई उग्र हाथी सड़क पर उतर रहा हो। उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने का निश्चय किया और शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—-

"सर्वोत्तम पुरुषों ने इस पर विचार किया

विनता नदी का किनारा। मैंने देखा

निर्मल बुद्ध, एकमुखी और

अच्छी तरह से रचित।

मैं धर्मनिष्ठ और नेक हृदय वाला था, इसलिए मैंने तब

मैंने श्रद्धापूर्वक मिठाई का अर्पण किया-

बुद्ध को अर्पित किए जाने वाले सुगंधित केतका फूल सर्वोत्तम हैं।

मैंने इसे 91 युग पहले बनाया था।

मेरी श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई पुष्प; मैं करता हूँ

मुझे किसी भी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यही है

मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने गुरु द्वारा कहे गए उन्हीं दो श्लोकों को दोहराया, जो उनके स्वयं के अरहंत पद की प्राप्ति के लिए प्रेरणा (अंकुसा) बने थे। इसी कारण वह दोहराव उनके अरहंत पद का प्रकटीकरण (अञ्ञा) बन गया।

थेरा कप्पटकुरा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

चौथे अध्याय की टीका पूरी हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(161):कुमार-कस्साप

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (161) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
भाग V
161. कुमार-कस्सपा
बुद्ध युग में राजगृह में पुनर्जन्म लेने वाली उनकी माता एक सलाहकार की पुत्री थीं। कुंवारी रहते हुए संसार त्यागने (भिक्षुता ग्रहण करने) के लिए माता-पिता की सहमति न मिलने पर उनका विवाह हो गया और उन्होंने अपने पति से भी भिक्षु दीक्षा लेने की सहमति प्राप्त कर ली, उस समय उन्हें यह ज्ञात नहीं था कि वे गर्भवती हैं। बाद में जब भिक्षुणियों ने उनकी यह स्थिति देखी, तो उन्होंने देवदत्त से परामर्श लिया, जिन्होंने उत्तर दिया: 'वह सच्ची भिक्षुणी नहीं हैं!' तब उन्होंने दस शक्तियों के स्वामी से परामर्श लिया। उन्होंने यह मामला थेरा उपाली को सौंपा, जिन्होंने सावत्थी में कुछ निवासियों को, जिनमें गृहस्थ संरक्षिका विशाखा भी शामिल थीं, एकत्रित किया और राजा की उपस्थिति में पूर्ण सभा में यह घोषणा की कि भिक्षुणी ने भिक्षु दीक्षा लेते समय गर्भ धारण किया था। भगवान (बुद्ध) ने उनके निर्णय को स्वीकार कर लिया। इसलिए उसने विहार (मठ) में अपने बच्चे को जन्म दिया, जो सोने की मूर्ति के समान एक बालक था। राजा ने उसका पालन-पोषण किया और बाद में उसे भिक्षु संघ में शामिल होने के लिए भगवान (बुद्ध) के पास ले आया। क्योंकि वह युवावस्था में ही शामिल हो गया था, [1] और जब भगवान (बुद्ध) कहते थे, 'कस्सपा को बुलाओ,' या 'कस्सपा को यह फल या बिस्कुट दो,' तो लोग पूछते थे, 'कौन सा कस्सपा?' और अपने शाही पालन-पोषण के कारण, वयस्क होने के बाद भी वह कुमार-कस्सपा के नाम से जाना जाने लगा।

अब जब वे अंतर्दृष्टि प्राप्त करने और बुद्ध के वचन सीखने में लगे थे, तब वे अंधकार वन में निवास कर रहे थे। [2] तब एक देव, जिन्होंने उनके साथ केवल पर्वतीय तपस्वी का मार्ग अपनाया था और अनागामी (अनगमी) बनकर शुद्ध लोक में महाब्रह्म (प्रधान देवदूत) के रूप में पुनर्जन्म लिया था, और कुमार कस्सपा को मार्ग और फल प्राप्त करने की विधि बताने का निश्चय किया था। वे अंधकार वन में आए और उन्हें पंद्रह प्रश्न दिखाए जिनका उत्तर केवल भगवान (बुद्ध) ही दे सकते थे। अतः उन्होंने ये प्रश्न भगवान के समक्ष पूछे और उनका उत्तर प्राप्त किया; जिसके बाद अंतर्दृष्टि प्राप्त करके [3] उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

इस पर, भगवान (बुद्ध) द्वारा विविध और बहुमुखी प्रवचन के वरदान प्राप्त लोगों में सर्वोपरि स्थान दिए जाने पर, उन्होंने अपने जीवन की समीक्षा की, और [149] त्रिरत्न (रत्न) के गुणों की प्रशंसा करते हुए, अपनी अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[201] अहो बुद्ध अहो धम्म अहो नो सत्थु सम्पदा,॥
यत्थ एतादिसैं धम्मं सावको सच्चिकाहिसी॥ ॥

[202] असान्खयेमु कप्पेसु सक्कयाधिगता आहु॥
Tesamayaŋ pacchiko carimo' yaŋ samussayo,ǁ
जातिमरणासंसरो नत्थि दानि पुनभभावो ति.॥ ॥

[201] बुद्धों की जय हो, और धम्मों के मार्ग की जय हो। [4] हमारे भगवान (बुद्ध) द्वारा सृजित आनंदमय मार्ग की जय हो,

जिसमें सुनने वाला [नामांकित हो सकता है
और] हमारे जैसे धम्म मार्ग को जान सकता है।

[202] अनगिनत युगों से इसके सदस्य आते रहे हैं,
कभी इस भौतिक शरीर में, कभी उस भौतिक शरीर में पुनर्जन्म लेते रहे हैं।
लेकिन अब उनके लिए यही अंतिम है,
[पांच कारकों का] अंतिम संगम, [5]
पुनर्जन्म और मृत्यु के प्रवाह में।
अब वे फिर कभी अस्तित्व में नहीं आएंगे।

[1] उनके बीसवें वर्ष में (विनय ग्रंथ, i. 229)।

[2] सावत्थी में। इससे बहनों के तीन कथन (गाथा) जुड़े हुए हैं। अगले वाक्य में प्रयुक्त तकनीकी अभिव्यक्तियों के लिए, संकलन, पृष्ठ 91 देखें।

[3] मातृत्व से संबंधित शब्दों से लिया गया एक असाधारण और विचित्र वाक्यांश: विपस्सनाम् गब्बम् गण्हापेत्वा - संभवतः ऊपर वर्णित उनकी माता की पीड़ा के वर्णन की प्रतिध्वनि। थेरा की कहानी अंगुत्तरा निकाय की टीका, i. 24; जातक, i. 148 आदि; और धम्मपद की टीका, iii. 144 आदि में भी बताई गई है। देव के आगमन से उत्पन्न प्रश्न मज्झ., i. 143, 'वम्मीक-सूत्र' में हैं। टीका की एक रोचक विशेषता इसके लेखक धनिमापाल द्वारा अंगुत्तरा निकाय की टीका का संदर्भ है । जहाँ धनिमापाल ' गेहे' लिखते हैं, वहाँ वे आगे कहते हैं: ' अंगुत्तरात्थकथा ' कुलगेहे ' कहती है ' - जैसा कि वास्तव में है। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि बुद्धघोष ने धम्मपाल से पहले लिखा था।

[4] देखें मज्झ., ii. 98, जहाँ संबोधन एकवचन में है। पथ (धम्म) के लिए प्रयुक्त बहुवचन धम्म संभवतः अद्वितीय है। टीका में लिखा है - 'सिद्धांत, नौ लोकुत्तरा धम्मों के साथ।' इनकी गणना पटिसंभिदा (ii. 166) में सात समूहों के रूप में की गई है, जो संकलन , पृष्ठ 179-181 (ag) में दिए गए हैं, साथ ही पथ और फल, और निर्वाण मिलाकर दस हैं।

[5] समुस्सायो। पाँच खंधों का यौगिक, शारीरिक और मानसिक। देखें पृष्ठ 80, नोट 2।

2.5 पांचवां अध्याय

2.5-1 [161] कुमारकसपत्थर के श्लोक पर टीका

अहो बुद्ध अहो धम्म से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कुमारकस्सपा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और भगवान पद्ममुत्तरा के समय में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया और बुद्धि की आयु प्राप्त की। हालाँकि, अंगुत्तरा निकाय की टीका में इसे इस प्रकार कहा गया है: "कुलगेहे (एक पारिवारिक घर में)।" वह गुरु के समक्ष उपस्थित हुए और जब वे सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनते रहे, तो उन्होंने देखा कि गुरु एक भिक्षु को प्रतिभाशाली शिक्षकों में सबसे आगे स्थान दे रहे हैं। उन्होंने उसी पद के लिए स्वयं को प्रेरित करने का संकल्प लिया, अपनी आकांक्षा के अनुरूप पुण्य कर्म किए, भगवान कस्सपा के समय में भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया, अपने बार-बार के जन्मों में उत्कृष्ट जीवन व्यतीत किया और राजगृह में एक धनाढ्य की पुत्री के गर्भ में जन्म लिया, जब यह बुद्ध प्रकट हुए थे। कहा जाता है कि उस समय भी, जब वह एक युवती थी, वह भिक्षुणी बनने की इच्छुक थी, उसने अपने माता-पिता से अनुमति मांगी, जो उसे नहीं मिली। यद्यपि वह अपने पति के घर (कुलघरं) पहुँच चुकी थी, फिर भी उसे यह ज्ञात नहीं था कि वह गर्भवती हो गई है (गब्भासंठितं), उसने अपने पति को भी वश में कर लिया और उसकी अनुमति से वह भिक्षुणियों में शामिल हो गई। उसकी गर्भावस्था की स्थिति देखकर भिक्षुणियों ने देवदत्त से परामर्श किया (पुच्छिंसु), जिन्होंने उन्हें बताया कि यह एक भिक्षुणी के लिए उचित नहीं है (असमणी)। बाद में उन्होंने यह मामला दशबल के समक्ष रखा (पुच्छिंसु)। गुरु ने तीन उपालि को उचित जाँच करने का आदेश दिया (पटिपुच्छापेसि)। थेरा ने सावत्थी नगर के निवासियों के परिवारों और महिला भक्त विशाखा को बुलवाया (पक्कोसपेट्वा) और राजा सहित उपस्थित लोगों के सामने जाँच करते हुए कहा: “गर्भधारण पूर्ववत था: भिक्षुणी के रूप में उनका त्याग निष्कलंक है (अगोगा)।” गुरु ने थेरा को बधाई देते हुए कहा: “विवाद का उचित निर्णय हो चुका है (सुविनिचितं) (अधिकरणं)।”

उस भिक्षुणी ने एक ऐसे पुत्र को जन्म दिया जो सोने की प्रतिमा (बिम्बा) के समान था। राजा पसेनादी कोसल ने उसके पालन-पोषण का ध्यान रखा; उन्होंने उसका नाम "कस्सपा" रखा। बाद में, उसे वस्त्र पहनाए गए और सजाया गया, गुरु के समक्ष ले जाया गया और उसे भिक्षु बनाया गया (पब्बाजेसी)। क्योंकि उसे कम उम्र में ही गुरु द्वारा भिक्षु बनाया गया था, इसलिए जब उनसे कहा गया: "कस्सपा को बुलाओ; कस्सपा को या तो यह फल दो या कठोर भोजन दो," (तो प्रश्न उठा): "किस कस्सपा को?" उत्तर था: "युवा कस्सपा को।" इस प्रकार रखे गए नाम के कारण और राजा द्वारा पाले-पोसे जाने के कारण, बड़े होने पर भी उसे कुमारकस्सपा के नाम से ही जाना जाने लगा।

भिक्षु संघ में शामिल होने के समय से ही उन्होंने केवल आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के कर्म किए; उन्होंने बुद्ध के वचन भी सीखे। फिर एक थेरा, जो उनके साथ एक पहाड़ी की चोटी पर भिक्षु के कर्तव्यों का पालन कर रहे थे, अनागामी (अनागामी) बन गए, और ब्रह्माओं के पवित्र निवास शुद्धवास में एक महान ब्रह्मा के रूप में प्रकट हुए। उन्होंने विशेष रूप से पंद्रह प्रश्न तैयार किए और मन ही मन कहा, "मैंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास का द्वार (मुख) दिखा दिया है, और मैं (उनके लिए) मार्ग (मग्गफल) की प्राप्ति का साधन बनाऊंगा।" उन्होंने उस थेरा को, जो उस समय अंधवन में निवास कर रहे थे, यह बताया, "आपको ये प्रश्न गुरु से पूछने चाहिए," और चले गए। उन्होंने भगवान बुद्ध से वे प्रश्न पूछे। भगवान बुद्ध ने उन्हें व्याख्यात्मक उत्तर भी दिए। थेरा ने उन्हें सीखा, लेकिन गुरु द्वारा सिखाई गई विधि से, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास के लिए कक्ष (गब्बम) में प्रवेश किया और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"लाखों युग पहले एक उत्पत्ति हुई थी

पदुमुत्तरा नामक नेता, जो एक

नायक, संपूर्ण विश्व का कल्याणकारी।

मैं उस समय एक ब्राह्मण था, लोकप्रिय था, और कुशल था।

वेदों में: मैं दुनिया के नेता से मिला

अपने दिनों में भटकते हुए, प्रकट करते हुए

चार आर्य सत्य, जो ज्ञान प्रदान करते हैं

विश्व के साथ-साथ दिव्य जगत। (मैंने देखा)

इसके अलावा) बहुत से लोग सबसे आगे वाले की प्रशंसा कर रहे हैं

सभी विविध शिक्षकों (vicittakathikānaggaṃ) के।

तब प्रसन्न मन से मैंने तथागत को आमंत्रित किया।

पंडाल को टुकड़ों से सजाने के बाद

विभिन्न रंगों से रंगे हुए कपड़े।

उस समय, वहाँ मैंने स्वामी जी का सत्कार किया।

अपने भिक्षु पुरोहितों के साथ भोजन लेकर,

अनेक रत्नों से जगमगाता हुआ।

सात दिनों तक विभिन्न प्रकार के बेहतरीन भोजन परोसे गए।

स्वादों के लिए, मैंने अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की।

फूल, बुद्ध के साथ विभिन्न प्रकार से रंगीन

उनके शिष्यों के साथ और स्वयं गिर जाने के बाद

मैंने अपने गुरु के चरणों में (पादमूल में) अपने प्राण त्याग दिए।

उस पद के लिए आकांक्षा।

तब, उस श्रेष्ठ ऋषि ने, अपने निवास स्थान पर,

अद्वितीय दया (करुणेकरसासयो) ने कहा: देखो

यह उत्कृष्ट ब्राह्मण (दीजा), कमल के साथ-

जैसे मुख (आनना) और आँख (लोचना), बहुत अधिक

अपने पतले कमर वाले शरीर के साथ जोश और उल्लास से भरपूर।

उचित ऊंचाई तक उठना (समुग्गततनुरुहं),

विस्तृत आँखों (visālakkhaṃ) से जुड़ा हुआ

खुशी से, अपनी तीव्र इच्छा से (लालासा),

जो मेरे चरणों में गिर पड़ा है, जो

अच्छे विचारों वाला, एक ही वस्त्र पहने हुए; यह

हर कोई मुखिया के उस पद की आकांक्षा रखता है।

अपने लिए विभिन्न प्रकार के शिक्षक,

एक लाख युगों (कप्पा) बाद,

दुनिया में ऐसा हो जाएगा

गोतमा नाम के गुरु, कुल-

ओक्काका परिवार का वसंत।

वह शिक्षाओं का उत्तराधिकारी होगा।

(धम्मेसु दयादो), एक प्रिय पुत्र, बनाया गया

धम्म द्वारा, गुरु के एक शिष्य द्वारा

कुमारकस्सपा नाम दिया गया।

वह मुखिया का पद प्राप्त करेगा

विविध शिक्षकों और पहनने वालों

विभिन्न प्रकार के फूलों से बने वस्त्र, इस कारण

रत्नों का भी (रतननांचवहेसा)।

उस कार्य के लिए, बहुत बढ़िया!

अपनी इच्छाशक्ति और संकल्प से, मैं गया

तावतिंसा (स्वर्ग) में त्याग करने के बाद

मानव शरीर।

मैंने बड़े और छोटे, हर तरह के जीवन के उतार-चढ़ाव देखे।

उसके केंद्र में एक नर्तक के समान

रंगमंच (रंग)। मैं का पुत्र बन गया।

सखलीर गर्भ में अवतरित होकर

एक मादा हिरण का।

जिस समय मैं अपनी माँ के पास पहुँचा था

गर्भ, वज्झवारो (जिसकी मृत्यु होने की बारी हो)

उपेक्षित (upaṭṭhito)।

मेरी माता साखा शरण लेने के लिए निग्रोधा पहुंचीं।

उस हिरण-राजा के कारण, वह पूरी तरह से

हिरण-राजा मृत्यु से बच गया

उन्होंने अपना जीवन पूरी तरह से बलिदान कर दिया; (मेरी माँ)

फिर उन्होंने मुझे इस प्रकार सलाह दी।

निग्रोधा की ही सेवा करनी चाहिए;

साखा के पास एक साथ नहीं रहना चाहिए;

(उपस्थिति में) मरना बेहतर है

निग्रोधा में रहने की तुलना में (निग्रोधा में) रहना बेहतर है।

(साखा की उपस्थिति)

उस नेता द्वारा निर्देशित (अनुसिट्ठा)

हिरणों के झुंड में से, मेरी माँ और मैं,

इसी प्रकार अन्य हिरण भी वहां रहने आ गए थे।

आनंदमय दिव्य तुसिता में भी मानो

अपने घर से दूर चले जाना।

फिर जब होरोइक काल की व्यवस्था

बुद्ध कस्पा गायब हो रहे थे (अत्थमेति)

मैं एक पहाड़ी (सेला) की चोटी पर चढ़ गया और

मैंने स्वयं को शासन (सासन) में लगा दिया।

मैं एक बैंकर के परिवार में पैदा हुआ था।

राजगृह। यद्यपि वह गर्भवती थी (आपन्नसत्ता),

मेरी माँ बेघरों के संगठन में शामिल हो गईं।

भिक्षुणी। जब भिक्षुणियां (भिक्खुनी) आईं

उसे गर्भावस्था के बारे में जानने के लिए, उन्होंने नेतृत्व किया

उसे देवदत्ता के सामने ले जाया गया, जिसने उसे सलाह दी।

उन्हें यह कहकर उसे बर्बाद करने के लिए कहा: "यह एक दुष्ट

नन।"

अब, संप्रभु द्वारा सहानुभूति प्राप्त करना भी एक समस्या है।

ऋषियों में से, विजेता, मेरी माता ने जन्म दिया

मुझे भिक्षुणी आश्रम में रहना बहुत अच्छा लगता है।

पृथ्वी के शासक कोसल ने आकर

इसके बारे में जानने से मेरा पालन-पोषण हुआ; मैं कस्सपा हूँ।

नाम से क्योंकि उसकी देखभाल की जाती थी

एक राजकुमार।

महाकस्सप को धन्यवाद, मैं कुमारकस्सप हूं।

मेरे शरीर के समान होने के बारे में सुनकर

मेरे मन में, बुद्ध द्वारा बताए गए अनुसार, चींटियों का टीला है।

मुक्त हो गया, हर चीज से अनासक्त हो गया

इसके परिणामस्वरूप सम्मान।

मेरी उम्मीद की शुरुआत को दबा दिया।

(पायासिं) मैंने यह सर्वोपरि प्राप्ति की

स्थिति (etadagga).

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंतत्व प्राप्त करने और एक बहुमुखी शिक्षक होने के कारण गुरु द्वारा सर्वोच्च स्थान पर रखे जाने के बाद, उन्होंने दो श्लोक कहे, जिसमें उन्होंने तीन रत्नों के गुणों को प्रकट करने के तरीके (मुखेना) से अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया।

201. "बुद्ध अद्भुत हैं! अद्भुत हैं!

उनका उपदेश (धम्म) अद्भुत है!

हमारे स्वामी की समृद्धि, जहाँ

एक शिष्य ने इस प्रकार की कल्पना की।

पारलौकिक प्राप्ति (धम्म)।

202. "युगों की असंख्य श्रृंखलाओं में

(कप्पा) मुझे मेरा शरीर दिया गया था

अस्तित्व में (सक्काया); यह अंतिम है

(पच्चिमाको) उनमें से; यह अंतिम है

(कारिमो) जटिल (समुसायो); गोल

बार-बार जन्म और मृत्यु के रूप में

अब किसी नए अस्तित्व का अस्तित्व नहीं है।"

वहाँ, अहो का अर्थ है: विस्मय के भाव में एक अविभक्ति कण। बुद्ध का अर्थ है: सर्वज्ञ बुद्ध: सम्मान के प्रतीक के रूप में बहुवचन में कहा गया है; आत्मजागृत बुद्ध अद्भुत और विस्मयकारी होते हैं; यही अर्थ है। धम्म का अर्थ है नौ पारलौकिक सत्य (धम्म) और साथ ही तीन प्रामाणिक पिटक (परियत्ति धम्म)। अहो नो सत्थुसम्पदा का अर्थ है: हमारे गुरु, दशाबल की समृद्धि (संपत्तियो) अद्भुत है। यत्थ का अर्थ है: उस गुरु की उपस्थिति में पवित्र जीवन (ब्रह्मचरियवास) के माध्यम से। एतादिसं धम्मं, सावको सच्चिकाहिति का अर्थ है: शिष्य भी, अर्थात्, शांतिपूर्ण, उच्च कोटि के पारलौकिक सत्य (धम्म) का दर्शन करेगा, जो दुराचार के पूर्ण विनाश का प्रवर्तक है; अतः, क्योंकि वे इस प्रकार वर्गीकृत (एवंविध) विशिष्ट गुण (गुणविशेष) की प्राप्ति का कारण बने हैं, बुद्ध, भगवान, अद्भुत हैं; सत्य (धम्म) के गुण अद्भुत हैं; हमारे गुरु की अपार समृद्धि अद्भुत है; इस प्रकार, उन्होंने तीन रत्नों के उच्चतर मुक्ति (गुणधिमुक्ति) के गुण को प्रकट किया। वास्तव में, सत्य (धम्म) की समृद्धि की घोषणा के माध्यम से भिक्षुओं के उचित अभ्यास (पटिपत्ति) की घोषणा हो जाती है (कित्तिता)।

इस प्रकार, सत्य (धम्म) के दृश्य-दर्शन का सामान्य रूप से उल्लेख किया गया है और अब स्वयं को संदर्भित करते हुए, उन्होंने "असंखेय्येषु" से शुरू होने वाला एक श्लोक बोला। यहाँ असंखेय्येषु का अर्थ है वे महान युग (महाकप्प) जो संख्यात्मक गणना के मार्ग से गुजरे। सक्काया का अर्थ है पाँच आसक्त समुच्चय (उपादानखंड)। वास्तव में, इन्हें 'सक्काया (वर्तमान शरीर)' कहा जाता है, क्योंकि ये परम अर्थ के दृष्टिकोण से वर्तमान अवस्था (धम्म) का संग्रह (समुह) हैं। आहूत का अर्थ है: बिना विदा हुए ही अस्तित्व में आ जाना, क्योंकि उन्होंने पीछे हटने के साधन (निवत्तनूपाया) प्राप्त नहीं किए हैं। तेसामयं पच्चिमको, करिमोऽयं समुस्सयो का अर्थ है: क्योंकि यह सब का अंतिम है, इसलिए इसके बाद भी यही अंतिम है; अतः जातिमरण संसारो का अर्थ है: जन्म और मृत्यु के साथ बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों का चक्र, जिसे सन्नितो (कन्ध) से शुरू होने वाली उपयुक्त श्रृंखला कहा जा सकता है; पुनाबवो नत्थि का अर्थ है: अब, भविष्य में किसी नए अस्तित्व के अभाव के कारण, यह अंतिम जन्म है; इस प्रकार, यही अर्थ है।

थेरा कुमार कस्सपा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(162):धम्मपाल

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (162) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
162. धम्मपाल
भगवान (बुद्ध) के निधन के बाद, इस बुद्ध युग में, अवंती राज्य में [1] एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम धम्मपाल रखा गया। जब वे तक्कासिला से लौट रहे थे, जहाँ उनकी स्कूली शिक्षा समाप्त हो गई थी, तो उन्होंने रास्ते में एक थेरा को एक कुटिया में देखा, [2] और उनसे धम्म के मार्ग के बारे में सुनकर, उन्होंने विश्वास किया और संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण किया) छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त की।

अब, जब वह अपनी उपलब्धि के आनंद में लीन थे, तभी दो नौसिखिए विहार में एक पेड़ पर फूल तोड़ने चढ़े और एक शाखा टूटकर वे गिरने लगे। उन्हें देखकर थेरा ने उन्हें अपने हाथ से पकड़ लिया और अपनी [150] इद्धि-शक्ति [3] से उन्हें बिना किसी चोट के जमीन पर उतार दिया। और उन्होंने उन्हें उपदेश देते हुए कहा:

[203] यो हवे दाहरो भिक्खु युञ्जति बुद्धसासने,॥
जागारो पतिसुत्तेसु अमाघं तस्स जीविता:॥ ॥

[204] तस्मा सद्धाञ्च सिलाञ्च पसादं धम्मदस्सनं,॥
अनुयुन्जेथा मेधावी सरं बुद्धं ससानं' ति.॥ ॥

[203] वह भिक्षु जिसने युवावस्था में ही स्वयं को
बुद्ध की योजना को पूर्णतः पूरा करने के लिए समर्पित कर दिया है,
जो सोई हुई दुनिया में जागता रहता है,
वह व्यर्थ में नहीं, व्यर्थ में अपने दिन व्यतीत नहीं करता।

[204] अतः ज्ञानी पुरुष, जो
बुद्धों के उपदेशों को याद रखता है,
अपने आप को आस्था और धर्म के प्रति समर्पित करे,
ताकि वह उस आशीर्वाद को जान सके जो वे हमारे लिए लाए हैं,
और पवित्र मार्ग (धम्म) के सच्चे दर्शन को जान सके। [4]

[1] बंबई के ठीक पूर्व या उत्तर पूर्व का देश। देखें बुड. भारत, पृ. 28.

[2] एकस्मि" विहारे। सी एफ संवाद, ii. 4, एन. 1.

[3] संकलन, पृ. 60 आगे, '209.

[4] इन दो पंक्तियों का शाब्दिक पाली दो बहुत ही अर्थपूर्ण शब्द हैं pasādaṃ (राहत, संतुष्टि, विश्वास व्यक्त करना) और dhammadassanaṃ (धम्म में या उसके माध्यम से अंतर्दृष्टि)।

2.5-2 [162] धम्मपालत्थेरा के श्लोक पर टीका
यो हवे दहारो भिक्खु (भिक्षु) से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा धम्मपाल का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, भगवान अत्थदस्सी के समय एक परिवार में पुनर्जन्म हुआ; बुद्धि प्राप्त करने पर, वे किसी कार्य से वन की ओर गए, संयोगवश उनकी मुलाकात गुरु से हुई, वे धर्मपरायण हो गए और उन्हें लहरदार पत्तों वाले अंजीर के फल अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और इस वर्तमान बुद्ध के प्रकट होने के बाद, जब गुरु परिनिर्वाण में प्रवेश कर गए, तब अवंती राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म हुआ; धम्मपाल नाम प्राप्त करने के बाद, वे तक्कासिला गए। वयस्क होने पर, उन्होंने कलाओं की शिक्षा प्राप्त की और घर लौटते समय, रास्ते में एक मठ में, एक थेरा से मिले। उन्होंने थेरा की उपस्थिति में उनके सत्य (धम्म) के उपदेश सुने, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर विकास किया और छह प्रकार के उच्च ज्ञान से युक्त अरहंत बन गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"बुद्ध अत्थादस्सी को देखने वाले ने

मैंने पूरी तरह से प्रसिद्ध अंजीर का फल पेश किया,

धर्मपरायण और नेक हृदय वाला।

यह अठारह सौ युग (कप्पा) था।

बहुत पहले, जब से मैंने अपना चढ़ावा चढ़ाया था

फल; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

मेरे द्वारा चढ़ाए गए फलों में से।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनने के बाद, वे ध्यान की प्राप्ति के आनंद में लीन रहते थे, तभी एक दिन उन्होंने उस मठ में दो नौसिखियों (सामणर) को फूल तोड़ने के लिए पेड़ की चोटी पर चढ़ते समय उसकी एक शाखा टूटने से गिरते हुए देखा। थेरा ने अपनी जादुई शक्ति से उन्हें अपने हाथ से पकड़ लिया, उन्हें बिना किसी चोट के जमीन पर रख दिया और उन नौसिखियों (सामणर) को सत्य (धम्म) का उपदेश देते हुए ये श्लोक कहे:—

203. "जो भी युवा भिक्षु ऐसा करता है, निश्चित रूप से,

स्वयं को व्यवस्था में संलग्न करना

बुद्ध का (शासन); वह जागृत भिक्षु,

वास्तव में, जो सो रहे हैं उनमें से

(सुत्तेसु), उसका जीवन व्यर्थ नहीं है।

204. अतः, हे बुद्धिमान लोगो! स्मरण करते हुए

बुद्धों का उपदेश (सासनम्)

आपको अपने आप को धार्मिक वस्तुओं से सुसज्जित करना चाहिए

विश्वास, नैतिक उपदेश और स्पष्ट दृष्टि

सत्य (धम्म)।

यहाँ, यो का अर्थ है अनिश्चित कथन। हैव का अर्थ है दृढ़ता (दलहत्था) के अर्थ में एक अविकारी कण। दहारो का अर्थ है कोमल (तरुणो)। वह भिक्षा मांगता है; इस प्रकार, वह भिक्षु है। युंजति का अर्थ है: वह प्रयास करता है, वह मेहनत करता है। जागरो का अर्थ है: जागृति के कर्म (धम्म) से युक्त होना; सुत्तेषु का अर्थ है जो सो रहे लोगों के बीच है। यह कहा गया है:— यो भिक्खु (भिक्षु) दहारो का अर्थ है: वह भिक्षु जो कोमल (तरुणो) है और इस प्रकार नहीं सोचता: "इसी प्रकार मैं बाद में बड़ा होकर जान जाऊँगा।" sāsane yuñjati का अर्थ है: वह स्वयं को बुद्धों के शासन (शासन) में उचित अभ्यास (पटिपत्ति) के लिए शांत (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास (भावना) के लिए समर्पित (योगं करोति) करता है। Suttesujāgaro का अर्थ है: जो लोग अज्ञान (अविज्जानिद्दा) की नींद में सो रहे हैं, उनमें वह सद्धा (धर्म) आदि जैसे जागृति (जागरा) के कर्मों (धम्म) से संपन्न होकर जागृत होता है। amoghaṃ tassa jīvitaṃ का अर्थ है: उसका जीवन निष्फल (avañjhaṃ) नहीं है, बल्कि उस (जागरूकता) के फलस्वरूप वह अपने और दूसरों के

सर्वांगीण कल्याण के लिए है। Tasmā saddhañ ca sīlañ ca का अर्थ है: क्योंकि यह इस प्रकार है, इसलिए कर्मफल (kammaphala) में पवित्र विश्वास, इस प्रकार घटित होने का तरीका (nayapavattaṃ) इस प्रकार है: "कर्म है, कर्म का फल है," इत्यादि; नैतिक उपदेश (sīla) का उस पर आधारित पवित्र विश्वास (saddhā) से घनिष्ठ संबंध होने के कारण ही चार सर्वांगीण शुद्ध उपदेश हैं। Pasādaṃ का अर्थ है; "परमेश्वर पूर्णतः आत्म-जागृत बुद्ध (सम्मासंबुद्धो) हैं, सत्य (धम्म) का पूर्णतः उपदेश (स्वखातो) दिया गया है, पुरोहित उचित अभ्यास (सुप्पतिपन्नो) से परिपूर्ण हैं, इस प्रकार तीनों रत्नों का स्पष्ट दर्शन हुआ है; धम्मदस्सनं का अर्थ है: सर्वांगीण ज्ञान (परिञ्ञा) के माध्यम से चार आर्य सत्यों का दर्शन, इत्यादि, जो आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) से जुड़े मार्ग के ज्ञान (मग्गपञ्ञा) के माध्यम से होता है। मेधावा का अर्थ है: सत्य के सार (धमोजा) के ज्ञान से संपन्न भिक्षु; बुद्धानं शासनं का अर्थ है: बुद्धों की सलाह और शिक्षाओं को निरंतर स्मरण करना और जलने पर भी अपने सिर पर समभाव बनाए रखना; अनुयुञ्जेत का अर्थ है निरंतर भक्ति करना। (अनुयोगम्) और वहाँ कठोर प्रयास; यही अर्थ है।

थेरा धम्मपाल के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(163):ब्रह्माली

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (163) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
163. ब्रह्माली
बुद्ध युग में कोसल राज्य में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम ब्रह्माली रखा गया। वयस्क होने पर, जन्म की शर्तों की पूर्ति से प्रेरित होकर, निरंतर चक्र के कारण उन्हें व्यथा कष्ट हुआ और आध्यात्मिक मित्रों के साथ संगति करने से उन्होंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण किया) और वन में साधना करने चले गए। अपने ज्ञान की परिपक्वता से उन्होंने शीघ्र ही अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली और छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्चतर ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) अर्जित की।

इसके बाद, मार्ग के आनंद में लीन होकर, सर्वव्यापी प्रयास में पारंगत थेरा ने एक दिन उस जंगल में स्थित भिक्षुओं की ओर से प्रयास के प्रति समर्पण के विषय में ये श्लोक कहे:

[205] कसिन्द्रियानि समथाङ्गतानि॥
अस्स यथा सारथिना सुदंता॥
पाहिनामनस्सा अनासवस्सा॥
देवापि मयहं पिहयंति तादिनो ति.॥ ॥

[206] महिन्द्रियाणि समथाङ्गतानि॥
अस्स यथा सारथिना सुदंता॥
पाहिनामनस्सा अनासवस्सा॥
देवापि मयहं पिहयंति तादिनो ति.॥ ॥

[205] जिनमें इंद्रियों को शांत कर दिया गया है,
जैसे सारथी द्वारा अच्छी तरह से वश में किए गए घोड़े,
जिनमें कोई व्यर्थ अभिमान नहीं पाया जाता है, और न ही
विषैले धुएं का कोई अंश शेष रहता है, ऐसा व्यक्ति
देवताओं में भी ईर्ष्या उत्पन्न कर सकता है।

[206] [151] मुझमें इंद्रियाँ शांत हो गई हैं,
जैसे सारथी द्वारा अच्छी तरह से वश में किए गए घोड़े,

मुझमें कोई व्यर्थ अभिमान नहीं पाया जाता, न ही
विषैले धुएं का कोई अंश शेष रहता है; - मुझ जैसा व्यक्ति
देवताओं में भी ईर्ष्या उत्पन्न कर सकता है। [1]

[1] पहली गाथा धम्मपद, छंद 94 में पाई जाती है, जो बुद्ध द्वारा महा कक्का[या]ना के संबंध में टिप्पणी (ii 176 एफ.) के अनुसार बोली गई है। सी.एफ. नीचे। CCXXIX.

2.5-3 [163] ब्रह्मलित्तेर के श्लोकों पर टीका
कसिंद्रियानी समथांगतानी स अथांगतानी से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा ब्रह्माली का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म के चक्रों से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए, और विपस्सी (बुद्ध) के समय एक परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्होंने गुरु को भिक्षा मांगते हुए देखा। वे श्रद्धा से भर गए, उन्हें प्रणाम किया और पादफल अर्पित किए। गुरु ने धन्यवाद कहा और चले गए। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच जन्म-मृत्यु के चक्रों में विचरण किया, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे कोसल राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। ब्रह्ममाली नाम प्राप्त करने और बुद्धि की आयु प्राप्त करने के बाद, अपने कर्मों की समृद्धि (हेतुसंपत्ति) से प्रेरित होकर, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों (संसार) के कारण पश्चाताप करने लगे, बुद्ध के मार्ग पर चलने वाले भिक्षु बन गए, अपने जैसे अच्छे मित्रों (सन्निस्सय) से अच्छे संबंध होने के कारण, उन्होंने उपयुक्त मानसिक अभ्यास (पतिरूपकम्मट्ठान) को अपनाया, वन में निवास करते रहे, अपने ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता प्राप्त करने के कारण आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर वृद्धि करते रहे और शीघ्र ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान वाले अरहंत बन गए। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

"मैंने पाड़ा फल (पदफला) अर्पित किया

स्वर्ण रंगत वाले आत्मजागृत व्यक्ति के लिए

बुद्ध, योग्य प्राप्तकर्ता

बलि चढ़ाना, प्रवेश करना

रथ मार्ग।

यह इक्यावन युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने फल का चढ़ावा चढ़ाया;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह फल का फलदायी परिणाम है

पेशकश।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनने के बाद, वे सही मार्ग (मग्ग) के आनंद और फल (फल) की प्रसन्नता में समय व्यतीत कर रहे थे, तभी एक दिन उन्होंने दो श्लोक कहे, जिसमें उन्होंने उस वन क्षेत्र में भिक्षुओं के संदर्भ में एक थेरा द्वारा कहे गए कठिन परिश्रम (पधाना) के निमंत्रण (पधानानुयोगं परिग्गणहन्तो) को स्वीकार किया, जो स्वयं कठिन परिश्रम (पधाना) में लीन थे:—-

205. “नियंत्रण करने वाली क्षमताएँ किसकी थीं?”

(इन्द्रियानी) जो शांत हो गया था

घोड़ों के समान संयम (समथा)

जिसे अच्छी तरह से वश में कर लिया गया था

सारथी? ऐसा कौन है जिसके पास

जिसने अहंकार त्याग दिया हो, जो घावों से मुक्त हो, जिसे

क्या देवी-देवता भी प्रिय होते हैं?

206. मेरी नियंत्रण क्षमताएँ (इन्द्रियानी)

शांत अवस्था (समथा) में पहुँच गया था

अच्छी तरह से पालतू बनाए गए घोड़ों के समान

सारथी। यहां तक कि दिव्य प्राणी भी प्यार करते हैं।

मुझ जैसा व्यक्ति, जिसका अभिमान

दूर हो गया और जो मुक्त हो गया

घाव।

इसका अर्थ:—- वन क्षेत्र में रहने वाले भिक्षुओं में, कस्स: जिसका, चाहे वह थेरा हो, वरिष्ठ हो, नव-नवजात कनिष्ठ हो या मध्य श्रेणी का हो, सारथिना अस्स यथा का अर्थ है: एक चतुर सारथी द्वारा अच्छी तरह से प्रशिक्षित घोड़ों के समान; इंद्रियानि समथं गतानि का अर्थ है: मन को छठी इंद्रिय मानकर छह इंद्रियों (मनच्छत्थानि) को वश में कर लिया गया है और वे नम्रतापूर्वक सौम्य हो गई हैं; पहीनमणस्स का अर्थ है: जिसका नौ प्रकार का अभिमान (विधा) त्याग दिया गया था और जिसके कारण वह इस प्रकार खड़ा था: अनासवस्स का अर्थ है: चार प्रकार के दोषों की अनुपस्थिति के कारण दोषों से मुक्त। tādino devāpi pihayanti का अर्थ है: जिसने वांछनीय गुणों को प्राप्त किया है, और इसी प्रकार (iṭṭhādīsu tādilakkhaṇappattiyā), मनुष्य और दिव्य प्राणी भी उससे प्रेम करते हैं और आदरपूर्वक (ādarenapatthenti) उसकी उचित साधना को दर्शाने वाले हाव-भावों के माध्यम से उसकी कामना करते हैं (paṭipatti)।

वहाँ, श्लोक में, पूर्व भाग के माध्यम से अनागामी मार्ग (अनगामीमग्गीधिगमो) की प्राप्ति का प्रश्न किया गया है; वास्तव में, अनागामी (अनगामी) की इंद्रियाँ (इन्द्रियानी) भी कामुक सुख (कामराग) और द्वेष (ब्यापाद) का त्याग करने के कारण शांत और सौम्य हो जाती हैं; पश्चात (भाग) के माध्यम से, अरहंत पद (अरहन्तमग्गपटिलाभो) की प्राप्ति का उचित मार्ग होता है; वास्तव में, अरहंत को “पहीनमनो अनासवो तादि (ऐसा दोषरहित जिसने अहंकार का त्याग कर दिया हो)” कहा गया है।

तब पूज्य ब्रह्मली ने उस बात के उत्तर में एक श्लोक कहा, जो थेरा द्वारा कही गई थी: “कस्सिंद्रियानि (जिनकी इंद्रियाँ)”, जो परिश्रमपूर्वक साधना कर रहे थे। उन्होंने दूसरे श्लोक के माध्यम से, जो “मयहिन्द्रियानि” से शुरू होता है, अपने अर्हतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया, जिसमें उन्होंने स्वयं का उल्लेख करते हुए उस प्रश्न का उत्तर दिया। यहाँ, मयहिन्द्रियाहि का अर्थ है: मेरी ऐसी इंद्रियाँ (इन्द्रिय) जैसे आँखें इत्यादि। शेष उसी प्रकार है जैसा कहा गया है।

थेरा ब्रह्माली के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(164):मोगराजन

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (164) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
164. मोगराजन
बुद्ध युग में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, मोगराजन [1] नाम से जाने जाने वाले , उन्होंने ब्राह्मण (पुजारी) बावरिया के अधीन अध्ययन किया। दुखी होकर वे तपस्वी बन गए। वे सोलह शिष्यों में से एक थे, जिनमें अजित और अन्य शामिल थे, जिन्हें बावरिया ने भगवान (बुद्ध) से मिलने के लिए भेजा था। [2] जब मोगराजन ने अपना प्रश्न पूछा और उसका उत्तर प्राप्त किया, तो उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

इसके बाद उन्होंने कारवां वालों, दर्ज़ियों और रंगसाज़ों द्वारा फेंके गए खुरदुरे कपड़े पहनकर ख्याति प्राप्त की। इसी कारण भगवान (बुद्ध) ने उन्हें ऐसे खुरदुरे कपड़े पहनने वालों में प्रथम स्थान दिया [उन्होंने इस प्रकार अपनी उस आकांक्षा को पूरा किया जो उन्होंने कई युग पहले की थी]। [3]

एक बार, लापरवाही और पूर्व कर्मों के फलस्वरूप, उसके शरीर पर फुंसी और इसी तरह की समस्याएँ उभर आईं और बढ़ने लगीं। यह समझते हुए कि उसका आवास संक्रमित हो गया है, उसने मगध के खेतों में पुआल का पलंग बिछाया और वहाँ, यद्यपि वह शीत ऋतु थी, उसने निवास किया। एक दिन [152] भगवान (बुद्ध) की सेवा करते हुए और उन्हें प्रणाम करते हुए, बुद्ध ने शिष्टाचारवश निम्नलिखित श्लोक में उनसे पूछा:

[207] चविपापक [27] चित्तभड्डका॥
मोघराजा सतातं समाहितो,॥
हेमन्तिकासीतकलारत्तियो॥
भिक्खु त्वअसि कथां करिस्सासि॥ ॥

[208] सम्पनसस्सा मगध केवला इति मे सुताm,॥
पल्लाच्चन्नको सेय्यं यथान्ने सुखजीविनो ति.॥ ॥

[207] हे मोगराजन, हे त्वचा-पीड़ित,
हे धन्य हृदय वाले और सदा शांत रहने वाले,
जब सर्दियों की रातें ठंडी होती हैं,
और तुम एक गरीब भिक्षु हो, तो तुम कैसे गुजारा करोगे?

[208] इस प्रकार पूछे जाने पर, थेरा ने भगवान (बुद्ध) को मामला समझाया:
मगधियों के अनाज के खेत समृद्ध हैं, [4] और मैंने सुना है कि वे सभी फल-फूल रहे हैं।
मेरी छोटी सी घास-फूस से बनी छतरी
दूसरों के आराम पाने के तरीके से बेहतर थी।

[1] यह विचित्र नाम (= निरर्थक राजा) कहीं भी स्पष्ट नहीं किया गया है। साम्य. निक., i. 23 में इस नाम से वर्णित व्यक्ति एक देव प्रतीत होता है , लेकिन मिलिंदा, ii. 359 में मोगराज-थेरा द्वारा रचित एक श्लोक इस कैनन में शामिल नहीं किया गया है।

[2] देखें सुत्त-निपाता, श्लोक 976 1031, 1116-1119। सी एफ XX (अजिता), और विविध 'बावरी,' 'बावरिया-ब्राह्मणो' भी।

[3] एंग. निक., आई. 25.

[4] मगध के बड़े मैदानों पर मेरी 'उत्तरी भारत में प्रारंभिक आर्थिक स्थितियाँ,' जे.आर.ए.एस., 1901, पृष्ठ 860 देखें। खेत्ता, सामूहिक एकवचन, यहाँ खेत्तानी हो गया है, लेकिन पृष्ठ 153 देखें ।

2.5-4 [164] मोगराजथेरा के श्लोक पर टीका

चविपापकचित्तभद्दका से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मोगराज का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने के बाद, उनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक पारिवारिक घर में हुआ; बुद्धि प्राप्त करने पर, वे सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनते रहे, एक दिन, गुरु की उपस्थिति में, उन्होंने देखा कि गुरु एक भिक्षु को फटे-पुराने वस्त्र (लूख चीवर) धारण करने वालों में सबसे आगे स्थान दे रहे हैं; उस पद की कामना करते हुए, उन्होंने संकल्प लिया, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म करते रहे, ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, भगवान अथदस्सी के समय में, ब्राह्मणों की कलाओं और विज्ञानों में निपुणता प्राप्त की, और ब्राह्मण युवाओं को कलाओं और विज्ञानों की शिक्षा दे रहे थे, तभी एक दिन उन्होंने भगवान अथदस्सी को भिक्षुओं से घिरे हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए, पांच पृथ्वी स्पर्श (पंचपतिठित) की मुद्रा में प्रणाम किया, अपने जुड़े हुए हाथों को अपने सिर पर रखा, विशेष रूप से "यावतारूपिनो सत्था" से शुरू होने वाले छह श्लोकों के माध्यम से गुरु की स्तुति की, कटोरा (भजन) भरा और उन्हें शहद अर्पित किया।

उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्रों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और भगवान कस्सपा के समय में कट्थवाहन नामक राजा के मंत्री बने; उस राजा द्वारा एक हजार पुरुषों के साथ गुरु को लाने के लिए भेजे जाने पर, वे गुरु के समक्ष गए, सत्य (धम्म) को सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, बीस हजार वर्षों तक भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया, वहां से चले गए, अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्रों में उत्कृष्ट अस्तित्व में विचरण किया, एक बुद्ध और दूसरे बुद्ध के बीच की अवधि (बुद्धंतर) के लिए, और एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का उदय हुआ; मोगराज नाम प्राप्त करने के बाद, उन्होंने ब्राह्मण बावरी की उपस्थिति में ब्राह्मण विद्या (उग्घितसिप्पो) का ज्ञान प्राप्त किया, पश्चाताप से ग्रस्त होकर संसार त्याग कर संन्यासी बन गए, और अजित आदि के साथ गुरु के समक्ष भेजे जाने पर, एक हजार संन्यासियों से घिरे हुए, उन्होंने उनमें से पंद्रहवें संन्यासी के रूप में प्रश्न पूछे और सभी प्रश्नों के उत्तर देकर अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

“हे भगवान अत्थादस्सी, स्वयं-

आश्रित और अजेय, चारों ओर से घिरा हुआ

(परिब्युल्हो) भिक्षुओं का पुरोहित वर्ग, प्रवेश किया

रथ मार्ग पर।

मैं, अपने विद्यार्थियों से घिरा हुआ,

विशेष रूप से मेरे घर से बाहर आया;

वहाँ से बाहर आने के बाद, मैंने देखा कि

विश्व का नेता।

स्वयं को श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद-

जागृत बुद्ध, मैंने अपनी मुट्ठी रखी

मैंने अपने सिर पर हाथ रखे; मैंने अपना मन बना लिया था

श्रद्धापूर्वक प्रसन्न होकर, मैंने अपनी प्रशंसा व्यक्त की

विश्व का नेता।

सभी जीवित प्राणी, संख्या में और

इनमें विविधता है क्योंकि इनमें ऐसे जीव शामिल हैं जिनके

रूप से (रूपी) या बिना रूप के (अरूपी) या

बिना बोध (asaññī) के अच्छी तरह से

भीतर विलय (समगधा) (अन्तो)

आपका ज्ञान। चाहे आपके आसपास कोई भी हो।

बारीक जाली वाले (सुखुमच्चिका) पानी

जाल, चाहे उसमें कोई भी जलीय जीव हो

वे सब तुम्हारे जाल में फंस जाएंगे।

जिसके पास भी जागरूकता (चेतना) हो, चाहे

वे रूपयुक्त (रूपिनो) या निराकार होते हैं।

(arūpino), वे सभी अच्छी तरह से विलय हो गए

(समगधा) आपके ज्ञान के भीतर।

आप इसे (समुद्धरसी) अच्छी तरह से खींच लेंगे

दुनिया, अच्छी तरह से परेशान (समाकुलं)

अंधकार; सत्य को सुनने के बाद

आपके द्वारा सिखाए गए (धर्म) का वे पालन करते हैं।

संदेह की धारा के ऊपर।

जब आपका ज्ञान चमकता है

वह संसार जो अज्ञान से घिरा हुआ है

और अंधकार से छिपा हुआ (otthaṭe),

घोर अंधकार छंट जाता है।

आप ही सब कुछ देखने वाले हैं, आप ही सारी समस्याओं को दूर करने वाले हैं।

घोर अंधकार का; आपकी बात सुनकर

सत्य (धम्म) की शिक्षा,

हे पुरुषों के समूह, निर्वाण में प्रवेश करो।

एक छोटे बर्तन को भरकर

इतना साफ शहद, मैंने इसे उठा लिया

मैंने अपने दोनों हाथ आगे बढ़ाए और वही पेशकश की

महान ऋषि को।

महान वीर ऋषि ने मेरी भेंट स्वीकार कर ली।

अपने हाथों से; सर्वज्ञ बुद्ध

मुझे वह शहद पसंद आया और मैं ऊपर चला गया।

हवा को आकाश में।

मास्टर अत्थादस्सी, बैल के बीच

आकाश में खड़े होकर पुरुषों ने ये बातें कहीं।

वे छंद मेरे मन को श्रद्धापूर्वक प्रसन्न करते हैं।

वह व्यक्ति जिसने मेरे ज्ञान की प्रशंसा की थी

और बुद्ध, जो सर्वश्रेष्ठ हैं, जिनकी प्रशंसा की जाती है, कभी नहीं जाते।

उस धार्मिकता के कारण दुष्ट अस्तित्व की ओर

उसका मन प्रसन्न हुआ।

वह चौदह बार दिव्य शक्ति का प्रयोग करेगा।

संप्रभुता; आठ सौ गुना के रूप में

पृथ्वी का सम्राट, वह निवास करेगा

पृथ्वी (वसुधं अवसिस्सति)।

वह पांच सौ बार बनेगा

वह विश्व-राजा बनेगा और स्वयं को स्थापित करेगा।

पृथ्वी असंख्य लोगों के लिए एक क्षेत्रीय शासक है

अवसर।

मंत्रों का पाठ करने वाले और उन्हें धारण करने वाले के रूप में

तीनों वेदों में पारंगत होने के कारण, वह

भिक्षु बनो

भगवान गौतम।

वह अपने ज्ञान के माध्यम से,

गहन जांच-पड़ताल करना (vicinissati)

सूक्ष्म अर्थ को समझें और शिष्य बनें

उस गुरु का जिसे इस नाम से जाना जाता है

मोघनाजा.

गौतम, प्रमुख कारवां-नेता,

उसे, सबसे आगे के स्थान पर,

तीन गुना महाविज्ञान से संपन्न

(विज्जा), एक अरहंत जो रोगों से मुक्त हो

अपना कर्तव्य पूरा करने के बाद।

मानवीय बंधनों का त्याग करके (योग)

और जीवन के बंधनों को तोड़ दो,

मैं दोषों (anāsavo) से मुक्त रहता हूँ।

सभी बातों को अच्छी तरह समझने के बाद

घाव।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

अरहंत बनने के बाद, उन्होंने राग (पंसुकूल) से बने वस्त्र धारण किए, जिनमें तीन प्रकार की कमियाँ थीं: कमज़ोर चाकू (सत्था), कमज़ोर धागा (सुत्त) और कमज़ोर रंग (राजना)। इसी कारण गुरु ने उन्हें कमज़ोर वस्त्र धारण करने वालों में सर्वोच्च स्थान दिया। बाद में, पूर्व में किए जाने वाले कर्मों (पूरिमा) के कारण, थेरा के शरीर पर फोड़े-फुंसी आदि हो गए, क्योंकि उन्होंने अपने शरीर की देखभाल नहीं की थी। मन ही मन यह कहते हुए कि "मठ का अपमान हो रहा है (दुस्सति), वे ठंड के मौसम में भी मगध के खेतों में पुआल बिछाने के बाद सो गए (सेति)। एक दिन गुरु ने, "चविपापक" आदि से शुरू होने वाले पहले श्लोक के माध्यम से, स्वागत वार्ता (पटिसंथारेवसेना) के रूप में, उससे पूछा, जो एक तरफ बैठा था, उनके पास आने और उन्हें प्रणाम करने के बाद, उनकी सेवा करने के लिए।

207. वहाँ, चविपापक का अर्थ है: हे दूषित त्वचा वाले भिक्षु (दुट्ठचविका), घृणित त्वचा वाले, क्योंकि दलदली फुंसियों, फोड़ों आदि से त्वचा फट गई है। चित्तभद्दक का अर्थ है: हे अच्छे मन और अच्छे हृदय वाले! पूर्णतः दुराचार का त्याग करके। मोगराज का अर्थ है उन्हें संबोधित किया गया शब्द। सततममाहितो का अर्थ है: अपने मन को शांत रखते हुए, सर्वदा और निरंतर, सर्वोपरि फल (अग्गफल) पर एकाग्रता (समाधि) बनाए रखकर। हेमंतिकसीतकालारत्तियो का अर्थ है शीत ऋतु में ठंडी रातों के समय; यह कर्म कारक (उपयोगवचनं) में पूर्ण (उच्चारण) संरचना (संयोग) में प्रयुक्त शब्द है। एक ऐसी परीक्षा (पालि) भी है, जैसे: "हेमंतिका सीताकालारत्तियो"। यहाँ हेमंतिका का अर्थ है; शीत ऋतु में विलीन होना, शीत ऋतु में समाहित होना; यही अर्थ है। भिक्खु (भिक्षु) त्वं'सि का अर्थ है: हे भिक्षु! तुम कौन हो? इस प्रकार तुम कैसे बन गए, जबकि अन्य लोगों ने मठ बनाकर तुम्हें भेंट नहीं की और तुम भिक्षुओं के सामान्य मठ (संघिकं सेनासनं) में प्रवेश नहीं कर रहे थे। कथां करिस्ससि का अर्थ है: तुमने अपने शरीर को इतनी ठंडी जलवायु में कैसे जीवित रखा, जैसा कि कहा गया है? गुरु ने यह प्रश्न पूछा। इस प्रकार पूछे जाने पर, थेरा ने गुरु से इस विषय पर चर्चा करने के लिए यह श्लोक कहा:

208. "मगध के सभी लोग पूरी तरह से

फसलों से भरपूर; इस प्रकार मैंने

सुना; मैं भूसे से ढककर सोता हूँ।

अन्य लोगों की तरह ही सुखी जीवन जीने के लिए।

वहाँ, संपन्नसस्सा का अर्थ है: फसलें पूरी कर चुके लोग। मगध का अर्थ है: वह मगध राज्य के बारे में कह रहे हैं; मगध नामक जिले में रहने वाले राजराज; यद्यपि उनका निवास एक ही जिला है, परंपरा (रुल्ह) के अनुसार इसे बहुवचन में केवल "मगध" कहा गया है। केवल का अर्थ है: शेष नहीं। इति मे सुतं का अर्थ है: मैंने इसे इस प्रकार सुना है। वहाँ, जो भी क्षेत्र नहीं देखा गया है, उसके माध्यम से इसे सुना गया है; इस प्रकार कहा गया है। इस कथन से थेरा यह दर्शाते हैं: "मैं इस समय में कहीं भी और हर जगह निवास करने में सक्षम हूँ।" Pelālacehannako seyyaṃ, yathaññe sukhajīvuno का अर्थ है: जिस प्रकार अन्य भिक्षु सुखमय जीवन व्यतीत करते हुए (sukhajīvino), उपयुक्त मठ प्राप्त करके (senā sanasappāya) उत्तम चादरों और लबादों में आनंदपूर्वक सोते थे; उसी प्रकार, मैंने भी पुआल से ढककर लेटकर सोया, क्योंकि मेरे शरीर को ऊपर और चारों ओर पुआल की चादर से ही ढका गया था, नीचे पुआल बिछाने के बाद; मैंने सोने के लिए अपना बिस्तर बनाया; इस प्रकार, उन्होंने जो कुछ भी प्राप्त हुआ, उसमें अपनी संतुष्टि प्रकट की।

थेरा मोगराजा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (165): पंचाली का पुत्र विशाखा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (165) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
165. पंचाली का पुत्र विशाखा

मगध राज्य में इस बुद्ध युग में पुनर्जन्म लेकर, एक जिला राजा के पुत्र के रूप में, उनका नाम विशाखा रखा गया। लेकिन क्योंकि वे पंचालों के राजा की पुत्री के पुत्र थे, [1] इसलिए वे बाद में पंचाली के पुत्र के रूप में जाने गए।

अपने पिता की मृत्यु के बाद उन्हें उनका पद विरासत में मिला, लेकिन जब भगवान (बुद्ध) उनके पड़ोस में आए तो वे उन्हें सुनने गए, विश्वास किया और संसार त्यागकर संन्यास ग्रहण कर लिया। उनके पीछे-पीछे सावत्थी जाकर उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) अर्जित की।

इसके बाद, अपने लोगों के प्रति दयालुता दिखाते हुए, उन्होंने अपने पैतृक स्थान का दौरा किया। और जैसे-जैसे लोग उन्हें सुनने आते रहे, एक दिन उनसे पूछा गया: 'हे पूज्यवर, धर्म (धम्म) का उपदेशक बनने के लिए एक व्यक्ति को कितने गुण प्राप्त करने चाहिए?' [153] थेरा ने उन्हें ऐसे व्यक्ति की आवश्यक विशेषता इस प्रकार सिखाई: [2]

[209] ना उक्खीपे नो सीए परिक्खीपे परे॥
न ओक्खिपे परगतां न एराये,।
न चत्तवनं परिसासु ब्याहारे॥
अनुद्धतो सम्मिताभानि सुब्बतो.। ॥

[210] सुसुखुमनिपुणत्थदस्सीना॥
मतिकुसलेना निवतवुत्तिना,॥
संसेविताबुद्धसिलिना॥
निब्बाणं न हि तेन दुल्लभन्ति॥ ॥

[209] उसे घमंड नहीं करना चाहिए, न ही दूसरों को
नीचा दिखाना चाहिए, न ही उसका तिरस्कार करना चाहिए और न ही
दुनिया पर विजय प्राप्त करने वाले विजेता को परेशान करना चाहिए। [3]
न ही उसे जनता के सामने अपनी प्रशंसा बढ़ानी चाहिए ; उसे [4] संयमी, विनम्र
और वाणी में संयमी और गुणी होना चाहिए।

[210] क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो सत्य को पहचान सके,
चाहे वह कितना भी सूक्ष्म और परिष्कृत क्यों न हो?
जो आध्यात्मिक विकास को मापने में कुशल हो,
फिर भी विनम्र और कोमल मन का हो।
जो जागृत लोगों के नियमों के अनुसार अपना जीवन ढालता हो:
उसके लिए निर्वाण पाना कठिन नहीं है। [5]

[1] एक प्राचीन राज्य, जो कुरुओं के पूर्व में स्थित था, जिसकी राजधानी वह स्थान था जहाँ दिल्ली स्थित है (बहुवचन भारत)। उच्चारण पंचाल।

[2] बुद्ध ने धम्मकथिका में पहला स्थान भिक्षुओं में पुन्ण (IV.), बहनों में धम्मदिन्ना (बहनें, पृ. 17), और गृहस्थों में चित्त को दिया था; फिर भी, उन्होंने विशेष रूप से इस थेरा की शिक्षा की प्रशंसा की (साम. निक., ii. 280; अंग. निक., ii. 51)।

[3] शाब्दिक रूप से, वह जो आगे बढ़ गया है।

[4] टीका लिखती है कि यहाँ सियाति को क्रिया-पद के रूप में जोड़ा जाना चाहिए।

[5] यह वच्छपाला का कथन (गाथा) है (LXXI.); यह भी ध्यान दिया जाए कि यह मगधियों का कथन है।

2.5-5 [165] विशाखापंचालपुत्तथेरा के श्लोक पर टीका

'ना उक्खिपे नो च परिक्खिपे परे' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा विशाखा पंचालपुत्त का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्म संचित किए, और चौदह युग (कप्पा) पहले एक सीमावर्ती गाँव के एक दरिद्र परिवार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, वे उस गाँव के लोगों के साथ, जो फलों की खोज में भटक रहे थे, जंगल में गए; वहाँ उन्होंने एक मौन बुद्ध को देखा, श्रद्धा से भर गए और एक लता (वल्लीफल) अर्पित की। उस पुण्य के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे और मगध राज्य में एक राजा के प्रतिनिधि (मण्डलिका) के शाही परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का उदय हुआ; विशाखा नाम प्राप्त करने के बाद, वे पंचाल राजा की पुत्री होने के कारण पंचालपुत्त के नाम से जाने गए। अपने पिता की मृत्यु के बाद, जब वे शासन कर रहे थे, तब गुरु उनके गाँव के पास पहुँचे, वे गुरु के समक्ष गए, सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, गुरु के साथ सावत्थी गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चले और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत बन गए। इसलिए अपदान में कहा गया है:—--

सभी लोग एक साथ आ गए

और फिर वे जंगल में चले गए; तदनुसार

फलों की खोज में उन्हें तब प्राप्त हुआ

फल।

वहाँ मैंने आत्मजागृत बुद्ध को देखा।

आत्मनिर्भर, अजेय;

मैं धर्मपरायण और नेक हृदय वाला व्यक्ति था, इसलिए मैंने पेशकश की।

उसे लता का फल अर्पित करो।

चौदह युग (कप्पा) पहले की बात है,

फिर मैंने फल का चढ़ावा चढ़ाया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही वह बात है

मेरे द्वारा की गई भेंट का फलदायी परिणाम

फल।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनने के बाद, थेरा अपने सगे-संबंधियों के प्रति करुणावश उनके देश गए। वहाँ लोग थेरा के पास आते और बार-बार उनसे धर्म की शिक्षाएँ सुनते। एक दिन उन्होंने उनसे धर्म के शिक्षक के विशिष्ट गुणों के बारे में पूछा, “आदरणीय महोदय! वास्तव में, किन गुणों से युक्त व्यक्ति धर्म का शिक्षक बनता है?” थेरा ने दो श्लोकों में धर्म के शिक्षक के गुणों का वर्णन किया।

209. “मनुष्य को (स्वयं को) ऊंचा नहीं उठाना चाहिए;

और न ही किसी को दूसरों की निंदा करनी चाहिए।

किसी को भी नीचा नहीं देखना चाहिए और न ही

अरहंतों के साथ संघर्ष हुआ था

दूर के तट (पारगतं) पर पहुँच गया।

किसी को प्रशंसा में नहीं बोलना चाहिए

स्वयं श्रोताओं के बीच (परिसासु);

किसी को भी अभिमानी नहीं होना चाहिए (अनुद्धतो)।

लेकिन संयमित शब्दों का प्रयोग करें और ऐसा करना चाहिए।

अच्छे नैतिक आचरण का पालन करें।

210. वास्तव में, निर्वाण प्राप्त करना कठिन नहीं है।

जो अत्यंत सूक्ष्म दृष्टि रखता है, उसके द्वारा प्राप्त की गई उपलब्धि

नाजुक और सूक्ष्म अर्थ, चतुर है

ज्ञान में, व्यवहार में विनम्र, और

बुजुर्गों की सेवा करने की आदत है

लोगों को अच्छी तरह से।

वहाँ, ना उक्खिपे का अर्थ है: स्वयं को ऊँचा नहीं उठाना चाहिए; जन्म, वंश, ज्ञान आदि गुणों से स्वयं को श्रेष्ठ नहीं समझना चाहिए। नो च परिक्खिपे परे का अर्थ है: न तो दूसरों को चारों ओर से घेरना चाहिए, न ही जन्म आदि गुणों से उन्हें पूरी तरह से काटकर फेंकना चाहिए, न ही गुणों को नष्ट करने के उद्देश्य से फेंकना चाहिए; दूसरों को नीचा नहीं दिखाना चाहिए; इस प्रकार, यह संबंध है। ना इक्खिपे का अर्थ है: दूसरों को जलाकर (ओज्जापन) नीचा करके (हेट्ठतो कत्वा) दूसरों को देखना नहीं चाहिए; उन्हें जलाकर नष्ट नहीं करना चाहिए; इस प्रकार, यह अर्थ है। कुछ विद्वान इसे "ना उक्खिपे" पढ़ते हैं; यही इसका अर्थ है। पारगतं का अर्थ है: या तो अरहंत, जो दोषों से मुक्त हो, या त्रिगुणात्मक महाज्ञान (तेविज्जा) से युक्त हो, या छह प्रकार के उच्च ज्ञान से युक्त हो, जो अपने महाज्ञान (विज्जा) के माध्यम से पुनर्जन्मों के चक्रों के पार के तट पर जा चुका हो; न एरेये का अर्थ है: किसी को अपराध (घट्टय) नहीं करना चाहिए और न ही अपमान (आसादेय) करना चाहिए। न च' अत्तवण्णं परिसासु ब्याहरे का अर्थ है: योद्धा राजकुमारों आदि की सभा में लाभ, व्यक्तिगत सम्मान (सक्काक) और प्रतिष्ठा (शिलोक) की लालसा के कारण अपनी प्रशंसा और गुणों का बखान नहीं करना चाहिए; अनुद्धतो का अर्थ है: शोरगुल से मुक्त; वास्तव में, वे ऊंचे स्वर में बात नहीं करते। सम्मितभाणी का अर्थ है: संयमित लेकिन सुविचारित वक्ता (सम्मदव) जो समयोचित (कालन), तर्कसंगत (सापदेशं), विवेकपूर्ण (परियंतवतिं) और लाभकारी (अत्थसंहितमेव) शब्दों का प्रयोग करने का अभ्यस्त हो; यही इसका अर्थ है। जो व्यक्ति इससे भिन्न तरीके से बोलता है, उसका वचन स्वीकार्य नहीं (अघणीयं) है। सुब्बतो का अर्थ है: वह सुचारु आचरण वाला (सुन्द्रवतो) है, नैतिक उपदेशों से युक्त है। क्रियापद (किरियापदं) “सिया (होना चाहिए)” को शामिल किया जाना चाहिए और इस प्रकार इसकी व्याख्या की जानी चाहिए।

सत्य (धम्म) के शिक्षक के विशिष्ट गुणों का संक्षिप्त रूप में वर्णन करने के बाद, थेरा ने "सुसुखुमनिपुणत्थ-दस्सिना" से शुरू होने वाले दूसरे श्लोक का प्रवचन देते हुए कहा: "इस प्रकार वर्गीकृत (विध) और स्वतंत्रता (विमुत्तायतन) के क्षेत्र से जुड़े (सन्निसिता) सत्य (धम्म) के शिक्षक के लिए निर्वाण प्राप्त करना कठिन नहीं है; बल्कि, इसके विपरीत, (उसके लिए) निर्वाण प्राप्त करना अत्यंत सरल है," यह जानकर कि जनसमूह अपने भीतर उन गुणों (गुण) को प्राप्त करने की क्षमता (लब्भमानतं) के बारे में स्पष्ट (अधिमुच्चित्वा) होने के बाद अधिक श्रद्धापूर्वक प्रसन्न हो गया था। इसका अर्थ पहले ही कहा जा चुका है (हेट्ठा)।

थेरा विसाखपंचालपुत्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(166):कुलका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (166) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
166. चूलाका
बुद्ध युग में राजगृह में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम चूलक रखा गया। जब उन्होंने भगवान (बुद्ध) को हाथी धनपाल को वश में करते देखा, [1] तो वे आस्तिक हो गए और संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया)। अपने साधना-प्रबंध में लगे रहते हुए वे इंद्र-साल वृक्ष की गुफा में निवास करते थे। [2] एक दिन जब वे गुफा के प्रवेश द्वार पर बैठे मगध के मैदान को देख रहे थे, तभी एक विशाल तूफानी बादल आकाश में घने बादलों से भर गया और गहरी, मधुर गर्जना के बीच बारिश बरसने लगी। गरज सुनकर मोरों का झुंड आनंद से के-का की आवाज निकाल रहा था, [3] और [154] चारों ओर नाच रहा था। तूफानी हवा के स्पर्श से गुफा में बैठे थेरा को ठंडक और आराम मिला, जिससे उचित तापमान पर उनका मन एकाग्र हो गया। वह अपने अभ्यास के मार्ग में प्रवेश कर गया, और अनुकूल समय आ जाने का अहसास करते हुए, उसने अपने अभ्यास की प्रशंसा करते हुए इन छंदों का उच्चारण किया:

[211] नदन्ति मोरा सुसिखा सुपेखुना॥
सुनिलगिवा सुमुखा सुगज्जिनो,॥
सुसद्दला कपि महामहि अयं॥
सुब्यपिताम्बु सुवलाहकान् नभाऽ॥ ॥

[212] सुकल्लारूपो सुमनस्स झाया ताṃ॥
सुनिक्खमो साधु सुबुद्धसासने,॥
सुसुक्कसुक्कṃ निपाणं सुदुद्दसṃ॥
फुसामि तं उत्तममक्कुतां पदन्ति॥ ॥

[211] सुनो! कैसे मोरों की पुकार से बादल (आकाश) गूंज उठते हैं,
सुंदर कलगी वाले, उनके पंख सुंदर और गला नीला,
आकृति में आकर्षक और उनकी पुकार मधुर।
और देखो कैसे यह विशाल भूभाग, अच्छी तरह से सिंचित
, छितरे हुए आकाश के नीचे हरियाली से ढका हुआ है!

[212] अपने शरीर को स्वस्थ और तंदुरुस्त रखो,
बुद्ध के नियमों में अच्छी प्रगति करो।
आओ और संत के मग्न विचार को ग्रहण करो, [4] और उस उज्ज्वल क्रिस्टल को स्पर्श करो, उस सूक्ष्म गहराई को,
उस मायावी रहस्य को - यहाँ तक कि उस मार्ग को भी
जहाँ मृत्यु नहीं आती, जो व्यक्त करने के लिए बहुत महान है।

और इस प्रकार थेरा ने स्वयं को संबोधित करते हुए, उचित समय पर मानसिक एकाग्रता प्राप्त की और अंतर्दृष्टि का आह्वान करते हुए अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। अपने द्वारा किए गए कार्य की समीक्षा करते हुए, उन्होंने उत्साह और आनंद के साथ उन पंक्तियों को आञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा के रूप में दोहराया।

[1] मिलिंदा, i. 298 f., nn. विनय ग्रंथों पर , iii. 247 f. देखें ।

[2] संवाद देखें , ii. 299.

[3] देखें XXII., n. 2.

[4] सुमनस्स, सुन्दरामनस्स योगावकरस्स द्वारा भावार्थित । 'आओ', 'पकड़ो', 'छूओ' पाली फुसाहि के विस्तार हैं, जो तीनों क्रियाओं में से अंतिम है। दो गाथाओं का लंबा जगती छंद गहन प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए अनुकूलनीय उपसर्ग सु (ग्रीक यू) - अच्छा, उचित, उत्तम - की पुनरावृत्ति पर निर्भर करता है।

2.5-6 [166] चूलकत्थेरा के श्लोक पर टीका

nadanti morā susikhā supekhuṇā से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा चूलक का है। इसका उद्गम क्या है? इस जन्म और उस जन्म के चक्रों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले भक्तिपूर्ण कर्म करने के कारण, उन्होंने इकत्तीस युग (कप्पा) पूर्व, भगवान सिख के समय में एक परिवार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उनकी मुलाकात गुरु से हुई, वे धर्मपरायण हो गए और उन्हें चट्टपण्णी फल अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने जन्मों के चक्रों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे राजगृह में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। चूलक नाम प्राप्त करने के बाद, वह वयस्क हो गया, उसने धनपाल हाथी को वश में करने के दौरान गुरु के दर्शन से दिव्य प्रसन्नता प्राप्त की, भिक्षु बन गया और इंद्रासला गुफा में निवास करते हुए अपने भिक्षु कर्तव्यों का पालन करने लगा। एक दिन, गुफा के द्वार पर बैठे हुए, उसने मगध के मैदान पर एक नजर डाली। उसी क्षण, गहरे और मधुर ध्वनि वाले मौसमी वर्षा के बादल, सौ-हजार परतों में, काजल की चोटी (अंजनसिखारा) के समान, आकाश में छा गए और वर्षा बरसाने लगे; वर्षा के बादल की गर्जना सुनकर मोरों के झुंड प्रसन्नता और आनंद से भर गए, अपनी कूक-कूक करते हुए इधर-उधर नाचने लगे। अपने निवास कक्ष में भी थेरा का मन एकाग्र हो गया था, क्योंकि उन्हें अनुकूल जलवायु (उत्सप्पाय) प्राप्त हो गई थी। जब उनका शांत (पासद्ध) अशुद्ध (करज) शरीर वर्षा-बादल की हवा के संपर्क (फस्सा) से ऊष्मा दूर होने के कारण तैयार (कल्लतं) अवस्था में पहुँच गया था, तब उनका मन मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) के मार्ग पर उतर गया। यह जानकर उन्होंने दो श्लोक कहे, जिनमें उन्होंने उपयुक्त समय (कालसंपदा) आदि जैसी सुविधाओं (कित्तनमुखेना) के बावजूद आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (भावना) के विकास के लिए प्रयास करने का वर्णन किया।

211. “सुंदर कलगी वाले मोर”

पंख अपनी मधुर आवाज निकालते हैं; वे

उनके गले अच्छे नीलमणि के बने हैं

रंग, सुंदर चेहरे और उत्कृष्ट आवाज

(सुगाज्जिनो); महान पृथ्वी अच्छी है

घास का मैदान है और आसमान में हरियाली छाई हुई है।

बारिश के बादलों और रंगीन बादलों के साथ।

212. उत्कृष्ट पूर्व-रूप में होने के कारण

जब किसी व्यक्ति का स्वभाव अच्छा हो

ध्यान में प्रवेश करते हुए, एक अच्छा आदमी

व्यवस्था में अच्छी तरह से आत्म-प्रयास करना

(शासन) उत्तम बुद्ध का। आप

उसे सबसे ज्यादा संपर्क में आना चाहिए

उत्कृष्ट अमर मार्ग जो विशुद्ध रूप से

और बेहद उज्ज्वल, सूक्ष्म और

देखना बेहद मुश्किल है।

वहाँ, nadanti morā susikhā supekhuṇā, sunīlagīvā sumukhā sugajjino का अर्थ है: ये सुसिखा (सुंदर मुकुट वाले) हैं क्योंकि इनके सिर पर उत्कृष्ट मुकुट हैं जो स्वयं ही उठे हुए हैं (उट्ठिता); ये सुपेखुणा हैं।

(सुंदर पंखों वाला, क्योंकि इसमें अनेक बहुरंगी, सुंदर और उत्कृष्ट पूंछ के पंख हैं; सुनिलगीवा (अच्छा नीलम जैसा गला) क्योंकि इसमें रंग की धारियों के समान उत्कृष्ट नीलम रंग का गला है; सुमुखा (सुंदर मुख वाला), क्योंकि इसका चेहरा सुंदर है; सुगज्जिनो (सुरीली आवाज वाला) क्योंकि इसकी आवाज मधुर (मनुञ्ञ) है; मोरा नादन्ति का अर्थ है: सुरीली आवाज वाले (छज्जसंवदी) मोर केका की ध्वनि निकालते हुए चिल्लाते हैं। सुसक्कला चा पि महामही अयं का अर्थ है: यह महान पृथ्वी भी उत्कृष्ट हरी घास से भरी हुई है। सुब्यापितंबु का अर्थ है: बाढ़ आने की स्थिति के कारण वर्षा जल से अच्छी तरह से व्याप्त और फैला हुआ है) (विसंदामान) यहाँ-वहाँ जल का प्रवाह, जो तत्काल हुई वर्षा (अभिनववुट्ठी) के कारण है। इसका एक पाठ यह भी है: "सुसुक्कतम्बु" (शुद्ध वर्षा जल); इस प्रकार इसका अर्थ है। सुवलककं नभं का अर्थ है: यह आकाश अच्छे गरजते बादलों और वर्षा बादलों से भलीभूत है, जो नीले कमल की पंखुड़ियों के रंग के समान बादलों से चारों ओर आकाश को भर देने के बाद बने हैं।

Sukellarūpo sumanassa jhāyataṃ का अर्थ है: अब, अनुकूल जलवायु (utusappāya) के लाभ से आप तैयार (kallarūpo) होने की अच्छी स्थिति में हैं और अपने कर्म (kammaniyasabhāyo) करने के लिए स्वाभाविक रूप से अनुकूल स्थिति में हैं; जब आध्यात्मिक अभ्यासों का एक नेक मन वाला गंभीर विद्यार्थी (yogāvacara) अपने मन की स्थिति के कारण, जो बाधाओं (nīvaraṇa) से ऊपर (ajjhārūḷha) नहीं है, इंद्रियों के विषयों (ārammaṇūpanijjhāna) और विशिष्ट लक्षणों (lakkhaṇa) पर ध्यान (ajjhāyataṃ) के माध्यम से ध्यान (jhāyataṃ) में प्रवेश कर रहा है। Sunikkamo ... accutaṃ padaṃ का अर्थ है: इस प्रकार भी ध्यान में प्रवेश करना; साधु सुबुद्धस्स सासाने का अर्थ है: सर्वथा आत्मजागृत बुद्ध के युग में; सुसुक्कं का अर्थ है: सर्वांगीण शुद्ध नैतिक उपदेशों की अवस्था के कारण उत्तम रूप से प्रकाशमान, उत्कृष्ट रूप से प्रकट हुए व्यक्ति के रूप में; सुक्कं का अर्थ है: स्पष्ट रूप से शुद्ध होने की स्वाभाविक स्थिति के कारण प्रकाशमान, सभी प्रकार के आत्म-दुराचार (संकिलेसा) के चरागाह (गोचरभाव) की अवस्था के निकट न जाने के कारण; निपुणं का अर्थ है: सूक्ष्म ज्ञान के क्षेत्र की अवस्था के कारण सूक्ष्म; सुदुद्दसं का अर्थ है: परम गहनता के कारण अत्यंत कठिन दृष्टि; उत्तमं का अर्थ है: उच्च और सर्वश्रेष्ठ होने के कारण सबसे उत्कृष्ट। accutaṃ padaṃ taṃ phusāhi का अर्थ है: आपको उस अमर निर्वाण की कल्पना करनी चाहिए, जो स्थायित्व की स्थिति के कारण मृत्यु से मुक्त है, उचित और उपयुक्त अभ्यास (sammāpaṭipatti) के माध्यम से और इसे स्वयं बनाकर (attapaccakha)।

इस प्रकार, थेरा ने जैसे ही स्वयं को ज्ञान प्राप्त किया, उनका मन शांत (संशिता) हो गया, अनुकूल वातावरण प्राप्त होने पर उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास में स्वयं को लीन कर लिया और अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में कहा गया है:—

मैंने दुनिया के नेता को चमकते हुए देखा

पीले कणिकारा फूल की तरह चमकीला,

पूर्णिमा के चंद्रमा के समान, उसी तरह चमकता हुआ

जलते हुए दीपों के वृक्ष की ओर।

मैंने केले का फल ऊपर उठाकर उसे पेश किया।

गुरु के प्रति: धर्मपरायण और अच्छे

मैंने पूरे हृदय से उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की और ग्रहण किया।

उनकी अनुमति।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है,

मैंने फलों का अपना चढ़ावा चढ़ाया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें, यही वह स्थिति है।

मेरे द्वारा चढ़ाए गए फलों का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने "नदन्ति मोरा" से शुरू होने वाले उन्हीं दो श्लोकों को दोहराया, अपने स्वयं के उचित अभ्यास (पटिपत्ति) पर चिंतन करने के बाद उत्साह और आनंद से परिपूर्ण हो गए।

थेरा चूलक के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(167):अनुपमा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (167) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
167. अनुपमा
बुद्ध युग में कोसला के एक धनी परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनकी सुंदरता ने उन्हें अनुपमा - 'अतुलनीय' नाम दिलाया। वयस्क होने पर, उन्होंने कर्म के प्रभाव को महसूस किया, संसार का त्याग किया और वन में रहने लगे, [155] अंतर्दृष्टि के लिए अभ्यास करते रहे। लेकिन उनका मन बाहरी वस्तुओं के इर्द-गिर्द घूमता रहा, अपने ध्यान के विषय पर केंद्रित रहा, जिससे उन्होंने स्वयं को फटकारा:

[213] नन्दमनागतं चित्तं सुलामारोपमणकऽ,॥
तेन तेनेवा वजसि येना सुलाṃ कलिनगरं॥ ॥

[214] ताहाṃ चिट्टाकलीṃ ब्रूमी ताṃ ब्रूमी चित्तदुब्भकाṃ,॥
सत्था ते दुल्लभो लद्धो मनत्थे माऽ नियोजयिति॥ ॥

[213] हे चित्त (मन)! प्रसन्न करने वाली चीजों की खोज में भटकते हुए,
हे विनाश के अनेक स्तंभों को आकार देने वाले,
तुम वहीं और केवल वहीं विचरण करते हो
जहाँ अंत में ब्लॉक और खूंटा उठते हैं।

[214] हे हृदय, मैं तुम्हें अपने भाग्य का नाश करने वाला कहता हूँ! हे
हृदय, मैं तुम्हें अपने भाग्य का बिगाड़ने वाला कहता हूँ!
देखो! जिसे तुम युगों तक नहीं पा सके,
भगवान (बुद्ध) अब आ गए हैं - ऐसा न हो
कि मैं विनाश और बर्बादी के हवाले कर दिया जाऊँ। [1]

इस प्रकार अपनी चेतना को संबोधित करते हुए, थेरा ने अंतर्दृष्टि विकसित की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

[1] यह वाक्पटु कविता, तालपुट द्वारा अपने चित्त (CCLXII) को दिए गए लंबे संबोधन का संक्षिप्त रूप है । टीका में कलिम् को दुर्भाग्य की देवी कालकण्णी के रूप में पहचाना गया है। पाठ के अंतिम शब्दों को, निश्चित रूप से, मा अनत्थे आदि के रूप में समझा जाना चाहिए।

2.5-7 [167] अनुपमत्थेरा के श्लोक पर टीका
नंदमानाऽगतं चित्तं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अनुपमा का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, उन्होंने इस और उस जन्म के चक्र से मुक्ति पाने के लिए पुण्य कर्म संचित किए और इकत्तीस युग (कप्पा) पहले एक परिवार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन रथ यात्रा के दौरान भिक्षा मांगते हुए भटक रहे पद्मा नामक एक मौन बुद्ध से उनकी मुलाकात हुई। वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें आदरपूर्वक अंकोला पुष्प अर्पित किए। इस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने जन्म-जन्म के चक्रों में विचरण करते रहे और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब कोसल राज्य के एक समृद्ध परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ; सौंदर्य की इस उत्तम उपलब्धि (संपत्ति) के कारण उन्हें अनुपमा नाम प्राप्त हुआ। (रूप); वयस्क होने पर, उन्होंने अरहंत बनने के लिए पर्याप्त योग्यता प्राप्त कर ली थी, इसलिए उन्होंने काम (इंद्रिय सुख) का त्याग कर दिया, भिक्षु बन गए और वन में रहकर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का अभ्यास करने लगे। उनका मन दृश्य रूपों आदि इंद्रिय-विषयों में भटकता रहा। उनका मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) विकृत (परिवट्टति) हो गया। थेरा ने दो श्लोकों के माध्यम से अपने भटकते मन को नियंत्रित (निग्गण्हन्तो) करने का उपदेश दिया।

213. "हे मन! तुम आनंदित होकर आए हो,

ऐसा प्रतीत होता है जैसे किसी नुकीली चीज पर जड़ा हुआ हो।

सूली पर चढ़ाया जाना; तुम बस यहीं जाओ

और वह जगह जहां स्पाइक है,

सूली पर चढ़ाने के लिए लकड़ी का एक टुकड़ा।

214. मैं मन की दुर्भाग्य की बात कर रहा हूँ;

मैं तुम्हें विश्वासघात के बारे में बताता हूँ

मेरा मन। गुरु, कठिन

आपको लाभ प्राप्त हुआ है।

मुझे वह करने के लिए उकसाओ मत जो उचित नहीं है।

लाभदायक।

वहाँ, नंदमानागतं चित्त का अर्थ है: हे आनंदित, विशेष रूप से आनंदित मन! तुम आनंदपूर्वक आए और उठे हो। सूलामारोपमानकं का अर्थ है: दुराचार कर्मों द्वारा लंबे समय तक इस और उस प्राणी को सूली पर चढ़ाने के लिए सूली पर चढ़ाया गया है, क्योंकि एक प्राणी दुख (दुक्खा) का उद्गम स्थान होने के कारण सूली पर चढ़ाने के समान है। तेन तेनएव वजसि, येन सूलं कलिंगरं का अर्थ है: हे दुष्ट मन! तुम केवल इस और उस स्थान पर जाते हो, जहाँ सूली पर चढ़ाने के समान प्राणी (भव) हैं और जहाँ कामगुण हैं, जो जल्लाद के तख्ते के समान लकड़ी के टुकड़े हैं; हे मन, तुम उसी स्थान पर जाते हो। आप अपनी हानि (अनत्थं) को ध्यान में नहीं रखते (सल्लक्खेसी)।

Tāhaṃ cittakaliṃ brūmi का अर्थ है: अतः, मैं तुम्हें मन की लापरवाही के कारण होने वाले दुर्भाग्य (kaliṃ) और विपत्ति के बारे में बताता हूँ। Taṃ brūmi का अर्थ है: मैं तुम्हें फिर से बताता हूँ; Cittadubbhakaṃ का अर्थ है: कपटी मन, क्योंकि यह मन के रूप में गिने जाने वाले अनेक कर्मों की निरंतरता में हानि पहुँचाता है। विद्वान इसे "cittadubbhāgā" भी पढ़ते हैं; अल्प पुण्य जिसे मन के रूप में नहीं गिना जाता; यही इसका अर्थ है। यदि पूछा जाए कि ऐसा क्यों कहते हो? तो उन्होंने कहा: "Satthā te dullabho laddho, mānatthemaṃ niyojayi" का अर्थ है: असंख्य युगों (कप्पा) तक बुद्ध के बिना संसार जैसी घटना विद्यमान है; गुरु प्रकट होने पर भी, मनुष्य की अवस्था, सद्धा का उचित लाभ आदि जैसी घटनाएँ प्राप्त करना कठिन होता है; इन्हें प्राप्त करने पर भी गुरु प्राप्त करना कठिन हो जाता है; इस प्रकार, जो गुरु प्राप्त करना कठिन था, अब आपने प्राप्त कर लिया है। अब भी (संपतिपि), जब गुरु प्राप्त हो गया है, तो भविष्य में मुझे ऐसे कार्यों में न लगाएँ जो हानिपूर्ण, अलाभकारी हों, और न ही ऐसे कार्यों में जो हानि, दुख और पाप उत्पन्न करते हों। इस प्रकार, थेरा ने अपने मन को उपदेश देते हुए, अपनी आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को तुरंत विकसित किया और अरहंतशिप प्राप्त की। इसलिए अपदान में कहा गया है:—--
"स्वयंजागृत मौन बुद्ध,
पद्मा नाम से जाने जाने वाले इस व्यक्ति ने फिर चित्त में निवास किया।
कूटा; उस मौन बुद्ध को देखकर,
आत्मनिर्भर और अजेय,
मैंने संयोगवश अंकोला को देखा।
पेड़ खिल रहा है; फिर, तोड़ लिया गया
मैं फूलों के पास पहुंचा
जागृत मौन बुद्ध पद्म,
विजेता।
मैंने इसे इकत्तीस युग पहले बनाया था।
मेरी श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई पुष्प;
किसी भी बुरी सत्ता को याद मत करो।
यह बनाने का फलदायी परिणाम है
मौन के प्रति मेरी श्रद्धापूर्ण भेंट
बुद्ध।
मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।
बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।
थेरा अनुपमा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(168):वज्जिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (168) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
168. वज्जिता
ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) लोक से मृत्यु के बाद, बुद्ध युग में एक धनी कोसलन परिवार में पुनर्जन्म लेकर, वे अपनी माता की गोद में सदा रोते रहे। और क्योंकि वे स्त्री के स्पर्श को सहन नहीं कर सकते थे, इसलिए उन्हें वज्जिता - 'संयमित' कहा जाने लगा। वयस्क होने पर, उन्होंने भगवान (बुद्ध) को दो चमत्कार करते देखा, [1] और विश्वास करके, उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त की। अपने पूर्व जन्म को याद करके, वे पवित्र भाव से भर उठे और बोले:

[215] सस्सरं दीघमद्धानां गतिसु परिवत्तिसैं,॥
अपासाअ अरियासक्कानि अंधभूतो पुथुज्जनो॥ ॥

[216] तस्सा [28] मे अप्पमत्तस्सा ससार विनलिकता,॥
गति1 सब्बा समुच्चिन्ना नत्थि दानि पुनब्भवोऽ ति.॥ ॥

[215] मैं बहुत लंबे युगों पहले एक यात्री था,
और जीवन के क्षेत्रों में घूमता रहा;
कई लोगों में से एक और उनकी तरह अंधा,
मेरे पास आर्यों के सत्यों को देखने की शक्ति नहीं थी।

[216] [156] लेकिन मैंने प्रकाश और शांति के लिए पूरी लगन से प्रयास किया;
और अब अंतहीन मार्ग पूरी तरह से चकनाचूर हो गया है।
भविष्य की सभी सीमाएँ पूरी तरह से समाप्त हो गई हैं,
अब मेरे लिए कभी पुनर्जन्म नहीं होगा।

और यही थेरा की अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा बन गई।

[1] देखें पृष्ठ 36, नोट 1.

2.5-8 [168] वज्जितत्थेरा के श्लोक पर टीका
संसारं दीघमद्धानं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वज्जिता का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और पैंसठ युग (कप्पा) पहले एक सीमावर्ती गाँव में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर वे वनवासी बन गए और भटकते हुए एक दिन उन्होंने उपासंत नामक एक मौन बुद्ध को एक पहाड़ी गुफा में निवास करते देखा। उस मौन बुद्ध की शांति देखकर वे धर्मपरायण हो गए और उन्होंने चंपक वृक्ष के पुष्पों का आदरपूर्वक अर्पण किया। उस पुण्य कर्म के कारण वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे कोसल राज्य में एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लिए; जन्म से ही वे स्त्री के हाथ में पहुँचते ही रोने लगते थे। कहा जाता है कि वे ब्रह्मालोक से विदा होकर यहाँ आए थे; क्योंकि वे स्त्रियों के संपर्क को सहन नहीं कर पाते थे, इसलिए स्त्री स्पर्श से बचने के कारण उनका नाम वज्जिता पड़ा। वयस्क होने पर उन्होंने गुरु के जुड़वां चमत्कार देखे, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (भावना) विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े और उसी दिन छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बन गए। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"स्वयंजागृत मौन बुद्ध,

उपसंता एक पहाड़ी के भीतर निवास करते थे;

मैं अपने साथ चंपा का फूल ले जा रहा हूँ।

मैंने सबसे उत्कृष्ट के पास संपर्क किया

पुरुष।

मैं धर्मनिष्ठ और नेक हृदय वाला व्यक्ति हूँ।

मैंने फूल को अपने दोनों हाथों से ऊपर उठाया

मैंने अपने हाथों से श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाई।

अजेय, परम उत्कृष्ट को

मौन ऋषि।

यह पैंसठ युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की।

फूलों का; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

मेरे द्वारा श्रद्धापूर्वक भेंट चढ़ाने के बारे में

मौन बुद्ध।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनने के बाद, उन्होंने अपने पूर्व निवासों को याद करने के बाद आध्यात्मिक (धम्म) पश्चाताप के साथ दो श्लोक कहे।

215. "बार-बार किए जाने वाले अपने चक्करों में भटकते हुए

लंबे समय तक पुनर्जन्म होते रहे, मैं

मैंने स्वयं को इधर-उधर घुमाया (परिवत्तिसं)

अस्तित्व (गतीसु)। मैं उनमें से एक था।

सामान्य श्रेणी (पुथुज्जना), जिनके पास था

अंधा हो जाना (अंधभूतो), न देख पाना

महान सत्य।

216. उन लोगों के लिए जो परिश्रमी हो गए हैं,

पुनर्जन्मों का चक्र (संसार)

सब नष्ट हो गया था (विनालीकटा);

अस्तित्व (गति) अच्छी तरह से तराशा गया था

समाप्त; अब कोई नया अस्तित्व नहीं है।

वहाँ, संसारं का अर्थ है बार-बार जन्मों के चक्रों में भटकना; इस और उस जन्म में कभी-कभी अच्छा प्रदर्शन करना, ग्रहण करने और त्यागने (निकखेप) के द्वारा। दीघमद्धानं का अर्थ है: लंबे समय तक, उस जन्मों के चक्र में, जिसका आरंभ अकल्पनीय (अनादिमति) है, एक अनंत काल तक। गतिसु का अर्थ है अच्छे और बुरे कर्मों के फलस्वरूप उत्तम और बुरे जन्मों में रहना। परिवत्तिसं का अर्थ है: मैं कभी-कभी अपने आप को गतिमान (परिवत्ति) करता हूँ, देहान्त (चवन) और उपपज्जन (उत्पन्न) होकर, कुम्हार के चाक (घटीयन्त) की तरह घूमता हूँ। हालाँकि, उस घूर्णन (परिभमन्तो) के कारण के बारे में उन्होंने इस प्रकार कहा: "अपस्सं अरियासच्चानि, अन्धभूतो पुथुज्जनो।" दुख (दुक्खा) से शुरू होने वाले चारों आर्य सत्यों को न देख पाने और न ही उन्हें ठीक से समझ पाने के कारण, मैं अज्ञान के अंधकार से अंधा हो गया, और व्यक्तियों की ऐसी रचनाओं (जननादीहि) के कारण सामान्य श्रेणी का मनुष्य (पुथुज्जनो) होने के कारण, मैं गति में विचरण करता रहा; यही व्याख्या है। इसी कारण भगवान बुद्ध ने कहा:

"चतुन्नं भिक्खवे अरियासच्चानं

ananubodhā appativedhā evamidaṃ

दीघमद्धानं संधावितं संपरितम्

मामन सीएव तुम्हाकन् च (के कारण)

न जानना और उचित प्रवेश

हे भिक्षुओं! चार आर्य सत्यों में से!

इस प्रकार यह चल रहा है

बार-बार पुनर्जन्म के दौर के बारे में

मुझे और आपको लंबे समय तक

समय का)।

तस्स का अर्थ है: जब मैं पहले साधारण भिक्षु (पुथुज्जन) था, जैसा कि कहा गया है, अब गुरु द्वारा दी गई विधि से, अप्पमत्तस का अर्थ है: जब मैंने शांत भाव और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास (भावना) के शिखर पर पहुंचकर, परिश्रम के उचित अभ्यास (पटिपत्ति) के लिए स्वयं को स्थापित कर लिया है। संसारा विनालीकता का अर्थ है: कर्मों की वह विकृति (कम्मकिलेसा), जिसे "संसार (पुनर्जन्मों का चक्र)" नाम मिला है, क्योंकि इनके कारण प्राणी इधर-उधर भटकते रहते हैं (संसारन्ति), उसे सर्वोत्कृष्ट मार्ग (मेग्गा) द्वारा अच्छी तरह से काट दिया गया है, सरकंडे को हटा दिया गया है (विगतनाला) और जड़विहीन (निम्मूला) कर दिया गया है। सब्बा गति समुच्चिन्ना का अर्थ है कि नरक और इसी प्रकार के सभी अस्तित्व (गति) कर्मों और दुराचारों के कारण बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के चक्र से मुक्त होने के कारण समाप्त और नष्ट हो गए हैं; परन्तु फलस्वरूप न'अत्थि दानि पुनब्बवो का अर्थ है: अब भविष्य में कोई नया अस्तित्व नहीं है; यही थेरा द्वारा अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) का रहस्योद्घाटन था।

थेरा वज्जिता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (169) ------>>>> अगला

अध्याय II.
दो श्लोक
169. संधिता
बुद्ध युग में कोसला के एक धनी परिवार में पुनर्जन्म लेकर संधिता नाम से जन्मे उन्होंने वयस्क होने पर अनित्यता पर एक उपदेश सुना, जिससे वे भयभीत हो गए और भिक्षु संघ में प्रवेश कर गए। अपने ज्ञान की परिपक्वता के माध्यम से उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) अर्जित की। अपने पूर्व जीवन को याद करते हुए, कि सिख बुद्ध के देहांत के बाद उन्होंने बोधि वृक्ष (पीपल) की पूजा की थी और अनित्यता का बोध प्राप्त किया था, [1] उन्होंने उस प्रभावी कारण से अपने लक्ष्य की प्राप्ति की घोषणा इन श्लोकों में की:

[217] असत्थे हरितोकासे सविरूऽहमपि पदपे,॥
एकं बुद्धगतां संनां अलभित्थं पतिस्सतो.।॥

[218] एकतिसे इतो कप्पे याm̩ सनमलाभिm̩ तदा,॥
तस्स सान्याय वाहसा पत्तो मे आसवक्खयो' ति.॥॥

[217] वृक्ष के नीचे—पवित्र बोधि वृक्ष—
अपने वसंत ऋतु के हरे रंग की महिमा से सुशोभित,
मुझे ध्यान और सचेत अवस्था में एक विचार आया—
एक बुद्ध-भारित विचार।

[218] इसे आए हुए इक्कीस युग हो गए हैं।
फिर भी मेरे मन में यह विचार इतना फलदायी सिद्ध हुआ
कि मादक पदार्थों (विकृतियों/इच्छाओं) पर
विजय प्राप्त हुई!

[1] इस बात पर शोक व्यक्त करते हुए कि उन्हें उस बुद्ध के निधन के ठीक बाद ही उनके बारे में पता चला। सिख धर्म पर, संवाद, ii. 6 देखें। 'बोधि वृक्ष' असत्थे है, या अंजीर के पेड़ की वह प्रजाति जो गौतम बुद्ध का बोधि वृक्ष (पीपल) था। सिख धर्म में यह एक प्रकार का आम था (चाइल्डर्स की 'पुंडरीका' देखें), और टीका में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि असत्थे शब्द का प्रयोग सामान्यतः बोधि वृक्षों के संदर्भ में किया जाने लगा था। पाठ में 'विचार' - सन्ञ्ञा, अपेर्चु - तीन बार दोहराया गया है।

2.5-9 [169] संधितथेरा के श्लोक पर टीका
असत्थे हरितोभासे से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा संधिता का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और इकत्तीस युग (कप्पा) पहले भगवान सिख धर्म के समय ग्वाले बन गए। जब गुरु परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके थे, तब वे एक थेरा के पास गए, उनकी उपस्थिति में बुद्ध के गुणों से उचित रूप से संबंधित सत्य (धम्म) को सुना, श्रद्धा से भर गए, भगवान बुद्ध के बारे में पूछा, परिनिर्वाण प्राप्त करने की अवस्था के बारे में सुना, और इस प्रकार अनित्यता (अनिकसञ्ज्ञान) का ज्ञान प्राप्त किया: "इस प्रकार इतने शक्तिशाली बुद्ध को अनित्यता के प्रभाव में आना पड़ा; हाय! संस्कार (संस्कार) शाश्वत नहीं होते।" थेरा ने उन्हें बोधि वृक्ष का सम्मान करने के लिए प्रेरित किया। वे बार-बार बोधि वृक्ष के पास जाते, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के मार्ग पर चलते और बुद्ध के गुणों का चिंतन करते हुए बोधि वृक्ष को प्रणाम करते। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और अंत में कोसल राज्य के एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ; संधिता नाम प्राप्त करके, वे वयस्क हुए और अनित्यता से संबंधित सत्य (धम्म) की शिक्षा को

सुनकर, उन्हें पश्चाताप हुआ, वे भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चले और छह प्रकार के महाज्ञान (जादुई) से युक्त अरहंत बन गए, लेकिन शीघ्र ही उन्होंने सर्वांगीण ज्ञान (ज्ञान) प्राप्त कर लिया। अपने पूर्व निवासों पर विचार करते हुए, उन्होंने बोधि वृक्ष को प्रणाम करने, बुद्ध पर चिंतन करने और भगवान बुद्ध के समय अनित्यता की अनुभूति प्राप्त करने को याद किया। सिख धर्म में, अपनी विशिष्टता (विशेषा) को प्रकट करने के लिए, उन्होंने दो श्लोक कहे:—-

217. पवित्र अंजीर के वृक्ष (असत्था) पर

हरे रंग की चमकदार चमक, कुएं पर-

उगा हुआ पेड़, इस बात से भलीभांति अवगत होते हुए, मैं

के संबंध में एक धारणा प्राप्त हुई

(गता) बुद्ध।

218. यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि तब मुझे यह धारणा प्राप्त हुई

(सन्ना); उस बोध द्वारा वहन किया जा रहा है-

मैंने अरहंत पद प्राप्त कर लिया है।

संक्रमण रहित (आसवा)।

वहाँ, असत्थे का अर्थ है: पवित्र अंजीर के वृक्ष के स्थान पर; क्योंकि वर्तमान में हमारे भगवान बुद्ध का बोधि वृक्ष ही बोधि वृक्ष है, इस बोधि वृक्ष के स्थान पर, उस समय भगवान बुद्ध सिख का पुण्डरीक बोधि वृक्ष स्थित था; इस प्रकार, सुखदायक प्रोत्साहन का स्थान होने के कारण इसे "असत्था (प्रोत्साहित)" कहा गया है, दूसरे शब्दों में, क्योंकि यह प्राणियों के विश्वास (अस्सासा) को जगाता है। हालाँकि, अन्य विद्वान इस प्रकार कहते हैं: "स्वयं बोधि (असत्था) वृक्ष के चरणों में बैठकर, बुद्ध पर अपना चिंतन करते हुए, थेरा ने इसे 'असत्था' कहा।" हरितोभासे का अर्थ है: हरे रंग के पन्ना (सारमणी) के सार से चमकता हुआ। संविरूलहमहि का अर्थ है अच्छी तरह से विकसित और उत्कृष्ट रूप से स्थापित (वृक्ष) पर; वे यह भी कहते हैं; स्पष्ट रूप से विकसित और घनी पत्तियों, तनों और अंकुरों से आच्छादित (सुघना) वृक्ष। पादपे का अर्थ है वृक्ष। एकं बुद्धगतं सन्ञ्ञं, अलभित्तं पतिसत्तो का अर्थ है: बुद्ध के गुणों के उचित और उपयुक्त स्मरण के कारण, मुझे बुद्ध पर चिंतन के साथ-साथ एक ही रूप में यह अनुभूति (सञ्ञा) प्राप्त हुई, जो इस प्रकार प्रकट हुई: "इति पि सो भगवा" (वह भगवान ऐसे भी हैं), क्योंकि बुद्ध पर चिंतन जैसे चिंतन का एक ही रूप में जन्म (एकजातियत्ता) हुआ था।

परन्तु यह बोध कब प्राप्त हुआ? यह सिद्धि कब हुई? (इन दो प्रश्नों के उत्तर में) थेरा ने कहा: "एकतिंसे इतो कप्पे" इत्यादि। वर्तमान से इकत्तीस युग पूर्व के इस उत्तम (बुद्ध) युग से ऊपर उठकर। यं सन्ञ्ञं का अर्थ है: बुद्ध के चिंतन के साथ प्राप्त यह बोध; तब मैंने समस्त संस्कारों में अनित्यता का बोध प्राप्त किया, जो मैंने बुद्धों की अनित्यता के अनुरूप देखा। तस्स सन्ञ्ञाय वाहसा का अर्थ है: इस बोध (सञ्ञा) को प्राप्त करने की शर्त पर, जैसा कि कहा गया है, मैंने इसे अरहंत पद (उपनिषय) की प्राप्ति के लिए पर्याप्त योग्यता बना लिया। Patto me āsavakkhayo का अर्थ है: मैंने दोषों से मुक्त अरहंतत्व प्राप्त कर लिया था; अब मैंने दोषों के निवारण (निरोध) का सत्य प्राप्त कर लिया है। यही श्लोक इस थेरा के अपदान श्लोक भी हैं। जैसा कि उन्होंने कहा:—

"हरे रंग के बोधि वृक्ष पर;..."

रोग-मुक्त स्थिति प्राप्त कर ली गई।

मेरे द्वारा।

तेरह युग (कप्पा) पहले, मैं एक दुनिया था

योद्धा वंश (खत्तिया) के राजा का नाम

धिन्ठ, महान शक्ति से परिपूर्ण,

सात रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

थेरा संधिता के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।

पांचवें अध्याय की टीका पूरी हो चुकी है।

दूसरे खंड पर टिप्पणी भी पूर्ण है।
टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(170): अंगनिका-भारद्वाज

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (170) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
170. अंगणिका-भारद्वाज
हिमालय के निकट, उक्कट्ठ नगर में, बुद्ध युग में पुनर्जन्म लेकर, [1] एक अत्यंत धनी ब्राह्मण (पुजारी) के परिवार में उनका नाम अंगणिक-भारद्वाज रखा गया। [2] जब उन्होंने सभी वैदिक ज्ञान और कला का अध्ययन कर लिया, तो वैराग्य की भावना ने उन्हें संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करने के लिए) मोक्ष की तपस्या करने के लिए प्रेरित किया। [3] इधर-उधर भटकते हुए, एक यात्रा के दौरान उनकी मुलाकात परम बुद्ध से हुई और उन्होंने तृप्त मन से उनका उपदेश सुना। अपने झूठे तपस्वियों को छोड़कर, उन्होंने भिक्षु दीक्षा ली और अंतर्दृष्टि के लिए अभ्यास करते हुए, समय के साथ छह गुना अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त की।

इसके बाद स्वतंत्रता के आनंद में रहते हुए, उन्होंने अपने परिवार पर दया की, और उनसे मिलने गए और उन्हें शरण और उपदेशों में शिक्षा दी; फिर उन्हें छोड़कर, वे कुरुओं के कुण्डिया गाँव के पास एक जंगल में रहने चले गए। [4]

[158] किसी उद्देश्य से उग्गायामा जाते समय, उनके कुछ ब्राह्मण (पुजारी) परिचितों ने उनसे संपर्क किया और कहा: 'हे भगवान (बुद्ध) भारद्वाज, आपने ऐसा क्या देखा है कि आपने ब्राह्मण (पुजारी) समुदाय को छोड़कर इस समुदाय में प्रवेश किया है?' और उन्होंने यह दर्शाते हुए कि बुद्ध के गिरजाघर के बाहर कोई शुद्ध नियम नहीं है, कहा:

[219] अयोनि [29] सुद्धिमानवेसाṃ अग्गीṃ परिकारिṃ वेन,॥

सुद्धिमग्गाऽ अजानन्तो आकाशीऽ अमराऽ तपः॥ ॥

[220] ताṃ सुखेन सुखाṃ लडधाṃ पास धम्मसुधम्मतṃ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससाणं॥ ॥

[221] ब्रह्मबंधु शुद्ध असिṃ इदानी खोमहि ब्राह्मणो,॥
तेविज्जो नाहतको कैम्ही सेठियो कैम्ही वेदगु' ती॥ ॥

[219] सिद्धांतहीन पवित्रता मेरी खोज थी,
जब मैंने उपवन में पवित्र अग्नि को पोषित किया।
स्वर्ग तक पहुँचने के लिए मैंने कष्टदायक तपस्याएँ कीं,
पवित्रता के सच्चे मार्ग से पूरी तरह अनभिज्ञ।

[220] यह सुख सुखमय मार्गों से प्राप्त होता है [5] -
हे देखो, धर्म (धम्म) के उचित भिक्षु का क्रम! [6] अब मुझे त्रिविध ज्ञान प्राप्त हो गया है,
और बुद्ध के सभी विधान पूरे हो गए हैं।

[221] मैं एक बार ब्राह्मणों (पुजारियों) का पुत्र था; [7] आज मैं वास्तव में ब्राह्मण (पुजारी) हूँ,
त्रिविध ज्ञान में पारंगत और स्नातक, [8] संस्कारिक स्नान द्वारा पवित्रीकृत।

तब उन ब्राह्मणों (पुजारियों) ने उनकी बात सुनकर शासन की अत्यधिक प्रशंसा व्यक्त की।

[1] इस ऊंचे शहर (= 'ऊंचा') पर, संवाद देखें, i. 108. एक सड़क इसे सेतव्या (उप., पृ. 67; अंग., ii. 37) और वैशाली (जात., ii. 259, पाठ) से जोड़ती थी।

[2] पिटकों में लगभग उन्नीस भारद्वाज (एक वंश का नाम) का उल्लेख है । यह कहीं और नहीं मिलता।

[3] पाठ में जिसे अमरा तपम ('स्वर्ग के लिए तपस्या') कहा गया है, उसे टीका में अमाततपम, अमात तपम के रूप में अनुवादित किया गया है। व्युत्पत्ति के अनुसार, अंतर 'अमर' और 'मृत नहीं' के बीच है। दोनों संभवतः देवताओं के साथ पुनर्मिलन को संदर्भित करते हैं, जो पांच अग्नियों आदि की तपस्या द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। देखें उप- पृष्ठ 120 और संवाद, 1 211।

[4] यह कोल्लियों का कुण्डिया नहीं होगा (उदना, ii. 8; जाट., i. संख्या 100)। उग्गायामा संभवतः LXXX का स्थान उग्गा है।

[5] तुलना करें LXIII.

[6] देखें XXIV. टीका कहती है कि वह या तो धम्म को संबोधित कर रहा है या स्वयं को, अधिक संभावित 'या ब्राह्मणों (पुजारियों)' को छोड़कर।

[7] देखें पृष्ठ 222; साथ ही बहुत समान पंक्तियाँ, बहनें, श्लोक 251 और टिप्पणी।

[8] टीका वैदिक परंपरा के इन सभी शब्दों के लिए शासन-समतुल्य शब्द ढूंढती है।

3. तीसरा खंड

3.1[170] अंगणिकभारद्वाजथेरा के श्लोक पर टीका

तीसरे खंड (tikanipāte) में ayoni suddhimanvesaṃ से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अंगणिकभारद्वाज का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, पुण्य कर्म संचित किए, जो इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों से मुक्ति दिलाने में सहायक थे। वे इकत्तीस युग (कप्पा) पूर्व, भगवान सिख धर्म के समय में, एक परिवार में पुनर्जन्म लेकर जन्म लिए; जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो एक दिन संयोगवश उनकी मुलाकात गुरु से हुई, जो भिक्षा मांगते हुए भोजन की तलाश में भटक रहे थे। वे श्रद्धावान हो गए, पंचपत्रित्तित्त से उन्हें प्रणाम किया और अपने हाथ जोड़कर प्रणाम किया। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और हिमवंता के निकट उक्कट्ठ नामक नगर में एक धनी ब्राह्मण के घर में उनका पुनर्जन्म हुआ, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ; अंगणिकभारद्वाज नाम प्राप्त करने के बाद, उन्होंने कला और विज्ञान में निपुणता प्राप्त की; वयस्क होने पर, उन्होंने संन्यास की प्रवृत्ति के कारण संसार त्याग कर एक भ्रमणशील संन्यासी बन गए; संयोगवश, उनका दर्शन सर्वथा आत्मजागृत बुद्ध से हुआ, जो विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण कर रहे थे; जब वे इधर-उधर भटकते हुए अमर तपस्या का अभ्यास कर रहे थे, तो वे धर्मपरायण हो गए; गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी; उन्होंने तपस्या के उस कुटिल अभ्यास को त्याग दिया; वे शासन (सासन) में भिक्षु बन गए और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म करते हुए, शीघ्र ही छह प्रकार के उच्च ज्ञान से युक्त अरहंत बन गए; अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

“पवित्र मन और नेक दिल,

मैंने बुद्ध को नमन किया,

सर्वश्रेष्ठ, पुरुषों में श्रेष्ठ, सबसे श्रेष्ठ

उत्कृष्ट नायक, विजेता

विजय वस्सभु।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

फिर मैंने अपना काम किया। मैं नहीं।

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यह

यह मेरे भुगतान का फलदायी परिणाम है।

श्रद्धांजलि।

चौबीस युग (कप्पा) पहले, मैं था

विकतनंद नामक एक विश्व-राजा,

महान शक्ति, सात गुणों से संपन्न

तरह-तरह के रत्न।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

यद्यपि छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनने के बाद, उन्होंने अपने सगे-संबंधियों पर दया करते हुए अपनी जन्मभूमि (जातिभूमि) की ओर प्रस्थान किया। मुक्ति के आनंद में लीन रहते हुए, उन्होंने अपने अनेक सगे-संबंधियों को तीन शरणों (शरण) और नैतिक उपदेशों में स्थापित किया, फिर वहाँ से निवत्तित्व (निवत्तित्व) करते हुए कुरु राज्य के कुण्डिया नामक नगर (निगम) के निकट वन में निवास किया और किसी कार्य के लिए उगाराम गए। जब उनसे पूछा गया, "हे भारद्वाज! क्या देखकर आपने ब्राह्मणों के सिद्धांत को त्यागने के बाद इस सिद्धांत (समय) को अपनाया?" उत्तरपथ से आए अपने मित्र ब्राह्मणों (समदित्त) के समक्ष एकत्रित होकर उन्होंने अपना पहला श्लोक सुनाया, ताकि उन्हें यह दिखाया जा सके कि बुद्ध के इस शासन (सासन) के बाहर कोई पवित्रता (सुदाणी) नहीं है।

219. "मैंने आग बुझाने में मदद की

जंगल में, पवित्रता की खोज में नासमझी से

(अयोनि); मार्ग का ज्ञान न होना

मैंने पवित्रता के लिए अमर तपस्या की।

वहाँ, अयोनि का अर्थ है: नासमझी से, उचित साधनों के बिना (अनुपायेन)। शुद्धिं का अर्थ है: बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के चक्र (संसार) से मुक्ति, अस्तित्वों से छुटकारा। अन्वेषं का अर्थ है: खोज। अग्गिं परिचारिं वेन का अर्थ है: मैंने वेदों में वर्णित अनुष्ठानों के अनुसार श्रद्धापूर्वक अर्पण किया और अग्नि देवता की सेवा की, यज्ञ को बढ़ावा दिया (पग्गणहन्तो), वन क्षेत्र में अग्नि-यज्ञ कक्ष (अग्गीहुत) में अग्नि कक्ष (अग्यागारं) बनाया, जिसका अर्थ है: "यही शुद्ध मार्ग है।" शुद्धिमग्गं अजानन्तो, अकासिं अमरं तपं का अर्थ है: निर्वाण, यानी शुद्ध मार्ग को न जानते हुए, मैंने अग्नि की सेवा (अग्गिपरीचरण) के समान पाँच प्रकार की धार्मिक तपस्या से तृप्त होने जैसी आत्म-संतोष (किलमथा) का अभ्यास किया और उसमें प्रवेश किया, इसे शुद्ध मार्ग (शुद्धि-मग्ग) समझकर।

इस प्रकार, अग्नि की सेवा आदि जैसे अनुष्ठानों का पालन करके, वेदों में निर्धारित विधि (औपचारिकता) के अनुसार एक आश्रम से दूसरे आश्रम जाने के समान, शुद्धता प्राप्त न करने की स्थिति के माध्यम से बाहरी शुद्धता के अभाव को दर्शाते हुए, थेरा ने दूसरा श्लोक कहा, ताकि यह दिखाया जा सके कि अब शुद्धता केवल इसी व्यवस्था (शासन) में है और मैंने शुद्धता प्राप्त कर ली है (मया)।

220. "वह सुख प्राप्त हो गया था"

आसानी से (सुखेना); अच्छाई देखो

सत्य का स्वरूप (सुधम्मता)

(धम्म); त्रिगुणात्मक अति-

विज्ञान (विज्जा) तदनुसार

प्राप्त किया; बुद्ध के उपदेश प्राप्त हुए थे

कार्य संपन्न हो चुका है।

वहाँ, taṃ का अर्थ है: जिस पवित्रता के मार्ग की मैं खोज कर रहा हूँ, उसे न जानते हुए, मैंने अग्नि की सेवा की और अमर तपस्या का अभ्यास किया; sukhaṃ sukhena का अर्थ है: निर्वाण का वह सुख, शांत भाव (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के आनंद के उचित अभ्यास (पटिपदा) के माध्यम से, आत्म-प्रयास (अत्तकिलमथा) का सहारा लिए बिना (अनुपगम्म); laddhaṃ का अर्थ है: मैंने प्राप्त किया है। Passa dhamma Sudhammataṃ का अर्थ है: गुरु के शासन (शासन) के सत्य (धम्म) के पलायन (निय्यानिक) और सहनशीलता (अविपरिता) के कर्म (धम्म) के अच्छे स्वभाव और चरित्र (सभावं) को देखो और समझो; इस प्रकार, थेरा सत्य (धम्म) को संबोधित करते हुए बोलते हैं। दूसरे शब्दों में, वह स्वयं को संबोधित करता है। इसे प्राप्त करने की स्थिति को दर्शाने के लिए थेरा ने कहा:

"तिस्सो विज्जा अनुपत्ता, कटं बुद्धासनं।"

इसका अर्थ बताया जा चुका है। थेरा ने तीसरे श्लोक का उच्चारण इस प्रकार किया: “इसलिए, मैं पूर्ण अर्थों में (परमत्थतो) ब्राह्मण (पवित्र) हूँ, क्योंकि मुझमें इस प्रकार की पवित्रता है।”

221. “मैं पूर्व में ब्रह्मा का रिश्तेदार था;

अब, वास्तव में, मैं एक ब्राह्मण हूँ।

(पवित्र)। मैं तीन बार विद्वान हूँ

(तेविज्जो) जिसने स्नान कर लिया था

(nhātako). मैं इसमें विद्वान था

ज्ञानवान (सत्तियो) और वेदों में पारंगत

(वेदागू).

उस श्लोक का अर्थ:— ब्रह्मबंधु आसिं का अर्थ है: - वर्तमान समय से पहले, मात्र जन्म से ही, ब्राह्मण होने के कारण, मैं ब्राह्मणों के नाम (सेमञ्ञा) के अनुसार ब्रह्मा का संबंधी (ब्रह्मबंधु) कहलाता था। इदानि खो ब्राह्मणो अम्हि का अर्थ है: क्योंकि बुराई का नाश हो गया था, इसलिए मैं अरहंतत्व की प्राप्ति के साथ पूर्ण अर्थ में (परमत्थ) ब्राह्मण हूँ। तेविज्जोच अम्हि का अर्थ है: वर्तमान समय से पहले, मैं मात्र (मत्तेन) नाम (समञ्ञा) से ही तेविज्ज (तीन बार विद्वान) कहलाता था, क्योंकि मैं तीन वेदों का पाठ (अज्जायन) करता था, जो पूर्व में अस्तित्वों के संचय (भवसंचय) के निर्माता (कर) थे; अब मैं पूर्ण अर्थ में तेविज्ज (परमत्थतो) हूँ, क्योंकि मैंने अस्तित्व के उन्मूलन के माध्यम से तीनों विज्जाओं को प्राप्त कर लिया है। न्हातको च अम्हि का अर्थ है: इसी प्रकार, इससे पहले, मैं केवल धार्मिक स्नान की विधि पूरी करने के कारण स्नानित (न्हातक) कहलाता था, क्योंकि मैं पहले अस्तित्व की मिठास (अस्सादा) से जकड़ा हुआ था, लेकिन अब मैं पूर्ण अर्थ में (परमत्थ) स्नानित (न्हातक) हूँ, क्योंकि मैंने आठ गुना श्रेष्ठ मार्ग (अत्थांगिक मार्ग) के जल (जल) से दुराचार (किलेसा) की अशुद्धता को अच्छी तरह धो डाला है। सोथियो च'अम्ही का अर्थ है कि वर्तमान से पहले, मैं केवल शब्दावली (वोनरामत्त) के आधार पर विद्वान (सोत्तिया) कहलाता था, क्योंकि मैं मंत्रों (मन्तज्जान) का पाठ कर सकता था जो पहले अस्तित्व की मिठास से स्पष्ट रूप से मुक्त नहीं थे, लेकिन अब मैं सत्य (धम्म) के अपने ध्यान के कारण पूर्ण अर्थ में विद्वान (सोत्तिया) हूँ, जो अस्तित्व की मिठास (आकर्षण) से पूरी तरह मुक्त है। वेदागू का अर्थ है: वर्तमान से पूर्व, मैं केवल वेदों के अध्ययन के कारण ही वेदागू कहलाता था, जिन्होंने पहले बुरे कर्मों का त्याग नहीं किया था (अप्पतिनिस्साठपापधम्म)। अब मैं पूर्ण अर्थ में वेदागू हो गया हूँ, क्योंकि मैंने चार आर्य सत्यों, यानी पुनर्जन्मों के चक्रों के ज्ञान (वेद) को जान लिया है, प्राप्त कर लिया है और उसके पार तक पहुँच गया हूँ, जो कि वेद के रूप में माने जाने वाले सही मार्ग (मार्ग) के ज्ञान के माध्यम से प्राप्त हुआ है। इस श्लोक को सुनकर ब्राह्मण इस व्यवस्था (शासन) में अपनी अपार (उलारा) पुण्य प्रसन्नता (पसाद) का अभिनंदन करते हैं।

थेरा अंगणिकभारद्वाज के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(171):पकाया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (171) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
171. पकाया

इस बुद्ध युग में रोही नगर में एक कुलीन परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम पचया रखा गया। [1] अपने पिता की मृत्यु पर संपत्ति विरासत में मिलने पर, उन्होंने एक महान औपचारिक अर्पण आयोजित करने का फरमान जारी किया, और एक बड़ी सभा एकत्रित हुई।

[159] उस सभा में, भगवान (बुद्ध), अपने पूर्वज वेसवना द्वारा निर्मित रत्नजड़ित मंडप में सिंहासन पर विराजमान होकर, [2] धर्म का उपदेश दे रहे थे, जबकि सभी लोग उन्हें निहार रहे थे। विशाल जनसमूह भी सिद्धांत को समझ गया, परन्तु राजा पचया ने उससे भी आगे बढ़कर कार्य किया। पूर्व कारणों से प्रेरित होकर, उन्होंने अपना सत्व त्याग दिया और संसार छोड़कर (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया)। और जिस प्रकार उन्होंने कश्यप बुद्ध के समय प्रतिज्ञा की थी, उसी प्रकार अब, अपनी कुटिया में प्रवेश करते हुए, उन्होंने पुनः निकलने से पहले ज्ञान प्राप्त करने की प्रतिज्ञा की। और अंत में, अंतर्दृष्टि में वृद्धि और ज्ञान की पूर्ण परिपक्वता के साथ, उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

इसके बाद, अपनी उपलब्धि का जश्न मनाते हुए, उन्होंने इस प्रकार अन्ना (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[222] पञ्चाहाऽ पब्बजितो सेखो अप्पत्तमानसो,॥
विहारं मे पवित्रस्स चेतासो पणिधि आहु॥ ॥

[223] नासिस्सां न पिविस्सामि विहारतो न निक्खमे,॥
नापि पस्सं निपातेस्सं तन्हासल्ले अनुहते॥ ॥

[224] तस्सा सेवाm̩ विहारतो पासा वीर्यपराक्कमाm̩,॥
तिस्सो विज्जा अनुपुपत्त कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[222] मुझे (भिक्षु बनने के लिए) निकले पाँच दिन बीत चुके हैं, मैं
एक विद्यार्थी हूँ और मेरा मन अभी पूर्ण नहीं हुआ है। [3] तब मेरे हृदय में, मेरी कोठरी में,
अडिग संकल्प जागा:

[223] मैं न खाऊँगा, न पीऊँगा,
न इस कमरे से बाहर निकलूँगा,
न ही करवट लेकर लेटूँगा,
जब तक लालसा का तीर अभी तक नहीं निकला है। [4]

[224] इस प्रकार मैं दृढ़ रहता हूँ - हे देखो
और ऊर्जा की आगे की चाल पर ध्यान दो:
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना बना लिया है,
और बुद्ध के सभी कार्य पूरे हो चुके हैं!

[1] न तो (राजा)राज और न ही शहर कहीं और पाया जाता है। पच्चया (इस प्रकार उच्चारण करें) शाकीय पूर्वज वेस्संतरा के हाथी का नाम था (जाट., vi. 485, पाठ)।

[2] सी.एफ. पी। 189, एन. 1 जाट., वि. 265 एफएफ। (मूलपाठ)।

[3] निकायों का एक वाक्यांश (मज्ह., i. 4; साम., i. 121, v. 145)।

[4] शिक्षार्थियों पर एक संकल्प लगाया गया (मज्ह., i. 480; अंग., i. 50; साम. , ii. 28)।

3.2 [171] पच्चयत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी

पंचाहाहं पव्वजितो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा पच्चया का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने भगवान विपस्सी के समय, 91 युग (कप्पा) पूर्व, एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन संयोगवश उन्होंने गुरु को विनता नदी के किनारे जाते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए, सुंदर

दिखने वाले बड़े अंजीर तोड़े और उन्हें अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने उत्तम जन्मों के चक्रों में विचरण किया, और जब इस उत्तम युग (भद्दा कल्प) में भगवान कस्सपा संसार में अवतरित हुए, उन्होंने धर्म के उत्तम चक्र का संचालन किया और वेणेयजना के जनसमूह का उत्थान कर रहे थे, तब उन्होंने उनके मार्गदर्शन में संन्यासी बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास के मार्ग पर चल पड़े और भावना में लीन रहते हुए एक दिन उन्हें जन्मों के चक्रों के कष्ट (दु:ख) का विचार आया, वे अत्यंत दुखी हुए, मठ में बैठ गए और यह संकल्प लिया: "मैं अरहंतत्व प्राप्त किए बिना यहाँ से नहीं जाऊँगा।" उन्होंने निरंतर प्रयास किया, लेकिन ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता के अभाव में वे आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास में तत्परता से संलग्न नहीं हो सके। उनकी मृत्यु हो गई और वे बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते हुए, देवताओं और मनुष्यों के बीच रहे, और अंत में रोहित नगर के एक कुलीन योद्धा (खत्तीय) परिवार में पुनर्जन्म लिया, तभी बुद्ध प्रकट हुए; पच्चया नाम प्राप्त करने के बाद, अपने पिता के देहांत के बाद वयस्क होने पर, उन्होंने संप्रभुता प्राप्त की और एक दिन एक महान राजसी आहुति (बलि) देने लगे। वहाँ असंख्य लोग एकत्रित हुए। गुरु ने उस सभा में अपनी पुण्य प्रसन्नता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से, असंख्य लोगों के देखते ही, आकाश में वेस्सवण द्वारा निर्मित रत्नों से सजे शिखर-छत वाले कुटागार में स्थित सिंह सिंहासन पर विराजमान होकर सत्य (धम्म) का उपदेश दिया। असंख्य लोगों को सत्य (धम्म) का ज्ञान प्राप्त हुआ। सत्य की उस शिक्षा (धम्म) को सुनने के बाद, राजा पच्चया ने भी अपने पूर्व उद्देश्य (पुरिमहेतु) से प्रेरित होकर अपना राज्य त्याग दिया और भिक्षु बन गए। उन्होंने उस समय भगवान कस्सपा के प्रति जो प्रतिज्ञा (पटिञ्ञा) की थी, उसी प्रकार प्रतिज्ञा (पटिञ्ञा) की; इस प्रकार प्रतिज्ञा करने के बाद, वे मठ में प्रवेश कर गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर वृद्धि करते रहे और सर्वांगीण ज्ञान प्राप्त करने के कारण वहीं अरहंतत्व (तावदेव) प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"विनता नदी के किनारे पर,

वहाँ सबसे उत्कृष्ट निवास करता था

पुरुषों; मैंने निर्मल बुद्ध को देखा, एक

सटीक (एकग्गं) और सुव्यवस्थित।

उसके प्रति श्रद्धा भाव रखना जो

दुराचार की अशुद्धता को धो डाला,

मैंने अंजीर के फल एकत्र किए और उन्हें भेंट किया।

उन्हें बुद्ध के लिए सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने फल का चढ़ावा चढ़ाया;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह इसका फलदायी परिणाम है

फल का प्रसाद।

(इस उत्कृष्ट युग में (भद्दके

कप्पे), पश्चाताप से ग्रस्त होना,

मैं उस धर्मविधि में भिक्षु बन गया

भगवान कस्सपा के।

क्योंकि मैं भिक्षु बन गया था,

मैंने अपने मानसिक विकास में खुद को व्यस्त रखा।

विकास (भावना); मैं नहीं करूँगा

मेरे मठ को छोड़ दो; मैंने अपना फैसला कर लिया है

इस प्रकार ध्यान रखें। अच्छी तरह से प्राप्त न कर पाने के कारण

मुझे सबसे अधिक लाभ नहीं मिला।

जिन्होंने सभी के लिए उपलब्धि हासिल की थी

बार (तावड़े)। अब, हालांकि, मेरा

आग बुझा दी जाती है (निब्बुतो)

मेरी सर्वांगीण परिपक्वता के साथ

ज्ञान। अपना संपर्क स्थापित करने के बाद।

अमर मार्ग से मैंने प्राप्ति की है

निर्वाण का अविचल स्थल।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने तीन श्लोक कहे, जिसमें उन्होंने अपने उचित अभ्यास (पटिपत्ति) की घोषणा करते हुए अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट किया।

222. "पांचवें दिन के बाद मैं था

भिक्षु बनना, एक विद्यार्थी (सेखा) जो

मैंने अरहंत पद प्राप्त नहीं किया था। जब मैं

मठ में प्रवेश कर चुका था, वहाँ था

मेरा मानसिक संकल्प।

223. "न तो मैं बैठकर पीऊँगा और न ही

क्या मैं अपना मठ छोड़ दूँ, और न ही

मैं करवट लेकर लेट जाता हूँ (passaṃ nipātessaṃ)

तृप्ति के काँटे के बिना (तण्हासल्ल)

हटा दिया गया था (ūhata)।

224. "जब मैं इस प्रकार निवास कर रहा था,

मेरी मेहनत और प्रयास देखो। तिगुना

तदनुसार ज्ञान (विज्जा) था

प्राप्त हुआ; बुद्ध का उपदेश था

किया गया।"

वहाँ, pañcānāhaṃ pabbajito का अर्थ है: मैं पाँच दिन का हूँ; भिक्षु बनने के पाँच दिन बाद; भिक्षु बनने के दिन से पाँचवाँ दिन समाप्त हो गया (niṭṭhito); यही अर्थ है। Sekho apattamānaso का अर्थ है: उच्च नैतिक उपदेशों (adhisīla), आचरण (sikkhā) आदि जैसे अनुशासनों में प्रशिक्षित होने के कारण एक शिक्षार्थी (sekha); अहंकार पूरी तरह से (anavasesato) कम (siyati) और कट (samucchindati) गया है; इस प्रकार; mānaso (परिविधा रहित); प्रमुख मार्ग (magga); सक्रिय मन (mānasa) से जिसने (nibbattaita) इरादा (mānasaṃ) और अर्हतत्व उत्पन्न किया; इस व्यक्ति ने वह अर्हतत्व प्राप्त नहीं किया है। विहारं मे पविट्ठस्स, चेतसो पणिधी अहु का अर्थ है: जब मैं, जो इस प्रकार एक विद्यार्थी (सेख) था, अपने निवास मठ के भीतरी कक्ष (ओवरक) में प्रवेश कर गया और वहीं (सतो) रहा, तब मेरा ऐसा ही मानसिक संकल्प था जैसा कि अभी कहा जा रहा है। इस प्रकार, मैंने अपना मन बना लिया था; यही इसका अर्थ है।

नासिस्सं: इस शब्द से शुरू करते हुए, वे अपना दृढ़ संकल्प प्रकट करते हैं। यहाँ, नासिस्सं का अर्थ है: जो कुछ भी खाने को हो (भोजनं) (मैं नहीं खाऊँगा), उसका आनंद नहीं लूँगा; तन्हासल्ले अनुहते का अर्थ है: जब तक मेरे हृदय में चुभा हुआ लालसा का काँटा नहीं निकाला गया था; इस प्रकार, सभी शब्दों का अर्थ इसी प्रकार लगाया जाना चाहिए। न पिविस्सामि का अर्थ है: जो कुछ भी पीने को हो, मैं नहीं पीऊँगा। विहारतो ने निक्खमे का अर्थ है: मैं इस कक्ष से बाहर नहीं जाऊँगा जहाँ मैं अभी बैठा हूँ। न पि पस्सं निपटेस्सं का अर्थ है: शारीरिक थकान दूर करने के लिए मैं अपने शरीर के दोनों कोणों में से एक भी कोना नीचे नहीं गिराऊँगा; मैं एक भी करवट नहीं लेटूँगा; यही अर्थ है।

तिस्सां म'अवं विहारतो का अर्थ है: जब मैंने दृढ़ संकल्प लेकर और मन बना कर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास के लिए भक्तिपूर्वक निवास किया। पस्सा वीरिय परक्कमं का अर्थ है: उस प्रयास को देखो और समझो जो दूसरे स्थान पर पहुँचने के कारण "परक्कम" (प्रयास) और विधिपूर्वक गति करने के कारण "वीरिय" (प्रयास) बन गया था। तिस्सो विज्जा अनुपत्ता, कतं बुद्धस्स शासनम् का अर्थ है: जिस शक्ति से मुझे त्रिविध ज्ञान (विज्जा) प्राप्त हुआ; बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया; बस इतना ही कहा गया था।

थेरा पचया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(172):बकुला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (172) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
172. बाकुला

हमारे परम पूज्य (बुद्ध) के प्रकट होने से पहले, कोसंबी में एक पार्षद परिवार में जन्मे, जब उन्हें यमुना नदी में स्वास्थ्य लाभ के लिए स्नान कराया जा रहा था, [1] तभी एक मछली ने उन्हें [160] दाई के हाथों से निगल लिया। मछली को एक मछुआरे ने पकड़ा और बनारस के एक पार्षद की पत्नी को बेच दिया। जब उसे चीरा गया, तो अपने पुण्य के बल पर बच्चा अचंभित निकला। पत्नी ने उसे अपने बेटे की तरह प्यार किया और जब उसने उसकी कहानी सुनी, तो उसने उसके माता-पिता के बारे में पूछा। राजा ने निर्णय लिया कि उन्हें उसे संयुक्त रूप से रखना चाहिए, इसलिए उसका नाम बा-कुल ('दो परिवार', द्वि-वंशज) रखा गया।

एक समृद्ध जीवन के बाद उन्होंने भगवान (बुद्ध) का उपदेश सुना और अस्सी वर्ष की आयु में संसार त्यागकर (सन्यास के लिए) चले गए। सात दिनों तक वे अज्ञानी रहे, परन्तु आठवें दिन के प्रारंभ होते ही उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया, साथ ही सिद्धांत के अक्षर और भाव पर पूर्ण महारत हासिल कर ली। [2]

एक दिन भगवान (बुद्ध) ने अपने शिष्यों को अनेक प्रकार की श्रेष्ठता प्रदान करते हुए, अच्छे स्वास्थ्य के लिए बकुला को सर्वोपरि स्थान दिया। [3] इसके बाद, जब वे परलोक जाने वाले थे, तो उन्होंने भिक्षुओं के बीच इस प्रकार अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[225] यो पुब्बे करणियानि पच्च सो कतुमिच्छति,॥
सुखा सो धंसते ठाना पच्च च मनुतप्ति॥ ॥

[226] याṃ ही कयिरा ताṃ ही वदे याṃ न कयिरा न तां वदे,॥
अकरोंतं भस्मानां परिजानन्ति पणदिता॥ ॥

[227] सुसुखं वात निब्बाणं सम्मासंबुद्धदेसीतां,॥
असोकं विरजां खेमं यथा दुक्खं निरुज्जति' ति.॥ ॥

[225] जो व्यक्ति कल
उन कामों को करने में प्रसन्न होता है जो उसे कल ही करने चाहिए थे, वह
सुखद अवसर खो देता है, और
उसे शीघ्र ही इसका घोर पश्चाताप होगा। [4]

[226] उसे केवल वही बात करने दो जो की जानी चाहिए;
उसे वह बात न करने दो जो नहीं की जानी चाहिए!
जो बहुत बोलता है, परन्तु करता नहीं,
बुद्धिमान लोग उसका मूल्यांकन करते हैं और उसकी योग्यता के अनुसार उसका आकलन करते हैं। [5]

[227] [161] हे महान, हे अद्भुत है निर्वाण का आनंद,
जो पूर्णतः जागृत (भगवान बुद्ध) द्वारा प्रकट हुआ है!
वहाँ कोई दुःख नहीं, कोई वासना नहीं, निश्चित आश्रय है,
जहाँ दुःख और पीड़ा हमेशा के लिए नष्ट हो जाते हैं!

[1] यमुना नदी। कोसंबी यमुना और गंगा के संगम (इलाहाबाद में) के पास रहते थे। बकुला या बक्कुला की कहानी अंगुत्तरा-निकाय टीका और मिलिंदा की सिंहली टीका (ii. 10, n. 2) में दी गई है। उनकी कथा के अनुसार उन्होंने अपने पूर्व जन्मों में दो बुद्धों का उपचार किया था। मॉरिस की बक्कुला पर अन्य संदर्भ में की गई चर्चा (जेपीटीएस, 1886, पृ. 95 आगे) इस शब्द को एक उचित नाम के रूप में पौराणिक कथा से बेहतर ढंग से नहीं समझाती है।

[2] सिस्टर्स देखें , पृ. 17 एन. कविता दोहराई गई है (सीएलएक्सएक्सआईवी)।

[3] आंग. निक., i. 26; वहाँ बक्कुला कहा जाता है। संभवतः उनकी बड़ी उम्र ने भेद को महत्व दिया।

[4] अनुतप्पति, शाब्दिक रूप से, गर्म होने के लिए आगे बढ़ें। हमारा रूपक काटना (पछतावा) या चुभन (अंतरात्मा की चुभन) है।

[5] दो शब्दों parijānanti paṇḍitā से विस्तारित, बुद्धिमान समझते हैं। टीका का विस्तार है 'वे [उसे] सटीक रूप से जानते हैं, उच्च सम्मान नहीं देते।'

3.3 [172] बाकुलथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
यो पब्बे करणीयानी से शुरू होने वाला श्लोक यह पूज्य थेरा बाकुला का है। इसका उद्गम क्या है? कहा जाता है कि यह भी बहुत समय पहले, भगवान अनोमदस्सी (बुद्ध) के प्रकट होने से भी पहले, एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर आए थे, जो अनगिनत युगों के एक लाख युगों (कप्पा) के बाद का समय है; वयस्क होने पर उन्होंने तीनों वेदों का अध्ययन किया, जहाँ सार का कोई अंश न देखकर उन्होंने संसार त्याग दिया और संन्यासी बन गए। उन्होंने मन ही मन कहा, "मैं भविष्य के लाभ की तलाश करूँगा।" वे एक पहाड़ी की तलहटी में निवास करते रहे, पाँच गुना उच्च ज्ञान (अभिज्ञा/अलौकिक) और ध्यान की आठ अवस्थाओं (समापत्ति) को प्राप्त किया। उन्होंने बुद्ध के प्रकट होने के बारे में सुना, गुरु के समक्ष गए, सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, शरणस्थलों में स्थापित हुए, और जब गुरु को पेट दर्द हुआ, तो वे जंगल से औषधि लाए, जिससे रोग दूर हुआ। वहाँ उन्होंने रोग मुक्ति (आरोग्य) के लिए अर्पण किया, वहाँ से चले गए, ब्रह्मा लोक में उत्पन्न हुए, और असंख्य युगों (असंख्येय्या) तक दिव्य लोकों में अपने बार-बार जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे। और मनुष्यों के बीच, और बुद्ध पद्ममुत्तरा के समय में, हंसवती नगर में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; उन्होंने देखा कि गुरु स्वस्थ भिक्षुओं में एक भिक्षु को सबसे आगे स्थान दे रहे हैं, और स्वयं उस पद की इच्छा रखते हुए, उन्होंने संकल्प लिया (पाणिधान), जीवन भर अच्छे कर्म संचित किए, अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्रों में घूमते रहे लेकिन उत्तम अस्तित्व में, और भगवान विपस्सी के उदय से पहले ही बंधुमती नगर में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया; उन्होंने पूर्वोक्त तरीके से भी एक तपस्वी संन्यासी बनकर संसार का त्याग किया, ध्यान और उच्च ज्ञान (अभिज्ञा/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त किया और एक पहाड़ी की तलहटी में निवास किया, बुद्ध के प्रकट होने के बारे में सुना, गुरु के समक्ष गए, गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, शरण में स्थापित हुए, और जब भिक्षुओं में घास-फूल का रोग (तिणपुप्पक रोग) फैल गया, तो उन्होंने उस रोग का निवारण (तंवुपसमेत्वा) किया, अपने जीवनकाल तक वहीं रहे, फिर वहां से उनका निधन हो गया, वे ब्रह्मा लोक में उत्पन्न हुए, और देवताओं और मनुष्यों के बीच 91 युगों (कप्पा) तक बार-बार जन्म-मृत्यु का चक्र पूरा करने के बाद, भगवान कस्सपा के समय बनारस के एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया, और गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए, उन्हें एक जीर्ण-शीर्ण अवस्था में एक पुराना विशाल मठ मिला, उन्होंने वहां सभा कक्ष (उपोसथागार) आदि सभी आवास बनवाए, वहां भिक्षुओं के लिए सभी प्रकार की औषधियों की व्यवस्था की, अपने जीवनकाल तक अच्छे कर्म किए, एक बुद्ध काल (बुद्धंतरं) तक देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म-मृत्यु का चक्र पूरा किया, और एक बैंकर के घर में पुनर्जन्म लिया। हमारे प्रभु यीशु के उदय से पहले भी कोसंबी के बारे में यही बात कही जाती थी।रोगमुक्त होने के कारण, जब उन्हें यमुना नदी में स्नान कराया जा रहा था, तभी एक धाय के हाथों से मछली उन्हें निगल गई। जब मछली एक मछुआरे के हाथ लगी और बनारस के धनाढ्य की पत्नी ने उसे खरीदकर चीर दिया, तो संयोगवश वे अपने पुण्य कर्मों के कारण रोगमुक्त थे। जब उनकी पत्नी ने उन्हें अपना पुत्र मानकर उनका पालन-पोषण किया, तो उनके माता-पिता, जिन्होंने उन्हें जन्म दिया था, ने इस घटना के बारे में सुना और अपना दावा करते हुए कहा, "यह हमारा पुत्र है; हमें हमारा पुत्र दे दो।" इस पर राजा ने निर्णय लिया और उन्हें दोनों परिवारों का उत्तराधिकारी घोषित करते हुए कहा, "इसे दोनों का साझा पुत्र बना दो।" इस प्रकार रखे जाने के कारण उन्हें यह नाम प्राप्त हुआ। बाकुला, वयस्क होने पर अस्सी करोड़ की संपत्ति के स्वामी बन गए और अपार समृद्धि का अनुभव किया; गुरु की उपस्थिति में धम्म का उपदेश सुनकर उन्होंने उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए और केवल सात दिनों तक साधारण भिक्षु रहे; आठवें दिन सूर्योदय के समय उन्होंने विश्लेषणात्मक ज्ञान के चार रूपों के साथ अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

"हिमावंता से कुछ ही दूरी पर था

शोभिता नाम की एक पहाड़ी, जहाँ मेरा एक

मेरे द्वारा निर्मित उत्तम दर्जे का आश्रम।

विद्यार्थी। कई पंडाल लगे हुए थे:

सिंधुवारक के पेड़ खिल रहे थे।

फूलों और लकड़ी के पेड़ों की संख्या बहुत थी

वहाँ; तीतर पक्षी जैसे फूल

खिल रहे थे।

निग्गुंडी की कई झाड़ियाँ थीं

वहाँ; साथ ही बेर और अमरूद भी।

(मलकानी); फरसाका फल और

फूल और साथ ही लंबे सफेद लौकी;

पुंडरिका कमल भी खिल उठा।

वहाँ अंगूर की बेलें उगती थीं (आलका)

विल्वा के पेड़, केले और नींबू के पेड़

अच्छा। वहाँ कई महानामा पौधे थे।

और अजजुना और पियांगुला के पेड़ भी।

वहाँ कोसम्बा के पेड़ थे, मीठे

सुगंधित सलाला के पेड़, नीम के पेड़, बरगद

पेड़ और साथ ही जंगली सेब के पेड़ भी;

इस प्रकार, मेरा आश्रम था; मैं वहीं रहता था।

मैं वहां अपने छात्रों के साथ हूं।

हे ईश्वर अनोमादस्सी, स्वयं-

विश्व का आश्रित नेता, तलाश कर रहा है

एकांत (पटीसल्लानम्) करीब आ गया

मेरा आश्रम।

जब महान नायक अनोमादस्सी, परिपूर्ण

प्रसिद्धि निकट आ गई थी, वहाँ शीघ्र ही (खाणेना)

रक्षक को वायु-रोग हो गया

दुनिया।

जंगल में घूमते हुए मैंने देखा

विश्व का नेता; पास पहुँचकर

स्वयंजागृत बुद्ध, जो इसके स्वामी हैं

दृष्टि (चक्खुमा) प्रसिद्धि से परिपूर्ण, और

उनके आचरण (इरिया) को देखकर

इसके अलावा, मैंने (उपलक्खिं) उस पर ध्यान दिया

वास्तव में, निस्संदेह बीमारी अवश्य ही

हमारे बुद्ध के प्रति जागृत हुए।

मैं शीघ्र ही अपने आश्रम लौट आया।

मेरे विद्यार्थियों की उपस्थिति में; फिर मैं

मैंने अपने विद्यार्थियों को संबोधित किया और उनसे कहा कि मैं

वह दवा बनाना चाहता था।

उन्होंने मेरी कही बात को स्वीकार कर लिया है।

मेरे सभी विद्यार्थी सम्मानपूर्वक एकत्रित हुए

उनके सम्मान के कारण एक साथ (एकज्जं)

मेरे लिए, उनके शिक्षक के रूप में।

तेजी से पहाड़ी पर चढ़ने के बाद, मैंने

हर अत्यंत स्थायी दवा, मिश्रित

पीने के पानी के साथ, और उसे पेश किया

बुद्ध, सर्वश्रेष्ठ।

जब महान नायक, सर्वज्ञानी

विश्व के नेता ने इसमें भाग लिया

दवा, महान की हवा की समस्या

ऋषि सुगत शीघ्र ही शांत हो गए (वूपसमति)।

यह पता चलने पर कि उनकी बीमारी

अनोमादस्सी, प्रसिद्धि से परिपूर्ण, शांत हो गया।

अपनी सीट पर बैठकर उन्होंने कहा

ये छंद।

मैं उस व्यक्ति के बारे में निर्णय दूंगा जिसने पेशकश की थी

मुझे दवा दी गई, और मेरी बीमारी ठीक हो गई।

शांत हो जाओ; जब मैं बोल रहा हूँ तो सुनो।

एक लाख युगों (कप्पा) के लिए

वह दिव्य आनंद में डूबा रहेगा

दुनिया। यह हमेशा विस्मित करता रहेगा।

वह स्वयं संगीत की धुन के बीच वहां मौजूद था।

मानव जगत में आने के बाद, वह

इच्छा, उज्ज्वल आधार द्वारा प्रेरित होकर

(सुक्कमूला), विश्वराज बनना,

हजार बार।

पचपन युगों (कप्पा) के बाद, हम

जम्बू द्वीप (मंडला) का स्वामी बनें,

चार महासागरों (कटुरांटो) से घिरा हुआ और

कई विजय प्राप्त करेगा (विजितवी);

कुल से योद्धा-राजकुमार (खत्तिया) और

क्या उसे अनोमा नाम से जाना जाएगा?

महान शक्ति से संपन्न विश्व राजा बनें

सात प्रकार के रत्नों के साथ; वह अभ्यास करेगा

उसकी संप्रभुता चौंकाने वाली (खोभेत्वा)

यहां तक कि तावतिंस स्वर्ग भी।

चाहे वह दिव्य प्राणी बन जाए या

वह मनुष्य से मुक्त हो जाएगा

बीमारी।

पत्नी से परहेज करते हुए (परिग्गहा) उसने

यह बीमारी फैल जाएगी

दुनिया।

इसलिए, असीम युगों (कप्पा)

दुनिया में एक गुरु होगा।

कुल द्वारा गौतम नाम दिया गया, की संतान

ओक्काका का परिवार,

वह उनकी शिक्षाओं का उत्तराधिकारी होगा।

(धम्मेसु), एक ऐसा पुत्र जिसे जन्म से ही संतान के रूप में बनाया गया हो।

सत्य (धम्म); वह निर्वाण में प्रवेश करेगा।

सभी तरह से उपचार के बाद संक्रमण मुक्त

सभी बातों को समझ गया।

अपनी सारी बुराइयों को जलाकर वह

लालसा की धारा को पार करो (तण्हा)

sotaṃ); वह गुरु का शिष्य होगा

बाकुला नाम से जाना जाता है।

यह सब विशेष रूप से जानते हुए, गौतम ने कहा,

साकियान लोगों में बैल, बन जाने के बाद

भिक्षुओं के बीच बैठे हुए

उन्हें सर्वोच्च स्थान पर नियुक्त करें।

हे ईश्वर अनोमादस्सी, स्वयं-

विश्व का आश्रित नेता, तलाश कर रहा है

(अनुविलोकेंटो) उनका एकांत (विवेक)

मेरे आश्रम के पास आ गया।

मैंने महान वीर को संतुष्ट किया (तप्पेसिं)

विश्व का सर्वज्ञानी नेता जो

मैं धार्मिक रूप से प्रसन्न था इसलिए पास आया था।

अपनी हथेलियों से।

मेरा वह कार्य सफल रहा;

खेत उपजाऊ था और बीज भी उपजाऊ था।

समृद्ध (संपदा); मैं लेकिन असमर्थ था

इसे फेंक देना (खेपेटुं);

वास्तव में, उस समय मेरा काम अच्छा हुआ था।

मुझे इससे काफी लाभ हुआ।

मैं नेता से मिला; बचे हुए हिस्से के साथ

उस कर्म से मैंने अविचलितता प्राप्त कर ली है।

पथ (अकलं पदं)।

यह सब विशेष रूप से जानते हुए,

साकियों के बैल गौतम को स्थान दिया गया

मुझे सबसे आगे (etadagga) पर।

यह असंख्य युगों (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने तब अपना कर्म किया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही है

औषधि (अर्पण) का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, जब उन्हें रोगमुक्त लोगों में सबसे आगे रखा गया, तो एक दिन, गुरु द्वारा, जो अपने शिष्यों को उनके संबंधित पदक्रम में क्रमानुसार स्थापित कर रहे थे, उन्होंने परिनिर्वाण में प्रवेश करने के अवसर पर पुरोहितों (संघ) के बीच भिक्षुओं को निर्देश देने के प्रकाश (मुखेन) में अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए तीन श्लोक कहे।

255. "यदि वह बाद में ऐसा करना चाहे तो

उसे पहले जो कुछ भी करना चाहिए था,

वह सुखमय स्थानों से गिर जाता है (धंसते);

बाद में उसे पछतावा भी होता है।

226. "किसी को अपनी क्षमताओं के बारे में बात करनी चाहिए;

जिस चीज का अनुभव न हो, उसके बारे में बात नहीं करनी चाहिए।

जो किया है या कर सकता है; बुद्धिमान लोग उन्हें जानते हैं।

जो बोलते तो हैं लेकिन करते नहीं।

227. "निब्बान वास्तव में अत्यंत सुखी है;

यह बात कुएं द्वारा इंगित की गई है

स्वयंजागृत बुद्ध। यह इससे मुक्त है।

चिंता रहित, कामवासना रहित (विरजं) और है

सुरक्षित; यह वह स्थान है जहाँ पीड़ादायक कष्ट होता है।

(दुक्खा) समाप्त हो जाता है (निरुज्जति)।

वहाँ, yo pubbe karaṇiyāni, pacchā so kātumicchati का अर्थ है: वह व्यक्ति जो लापरवाही के प्रभाव में आकर ऐसे कर्म नहीं करना चाहता जो उसके स्वयं के कल्याण और सुख के लिए लाभकारी हों, और जिन्हें पहले केवल वृद्धावस्था और रोग आदि से पीड़ित होने से पहले ही किया जाना चाहिए था, परन्तु वह उस समय के बाद भी उन्हें करना चाहता है जब उसे उन्हें कर लेना चाहिए था। ' सो' का अर्थ केवल एक शब्द (निपाता) है। परन्तु फिर, वृद्धावस्था और रोग आदि से ग्रस्त होने के कारण वह उन्हें करने में असमर्थ है। सुख सो धंसते ठाना, पच्छा च मनुतप्पति का अर्थ है: सक्षम न होने पर, वह व्यक्ति सुखी स्थानों, स्वर्ग और निर्वाण से विमुख होकर, उनके लिए साधन न प्राप्त करने के कारण, पश्चात्पन्न हो जाता है और पश्चाताप करता है, और बाद में अपने मन में कहता है: "यदि मैंने अच्छा

कर्म न किया होता।” अक्षर म शब्दों को जोड़ता है। दूसरी ओर, मैंने अच्छा कर्म किया है, इसलिए मैं तुमसे इस प्रकार कहता हूँ: ऐसा कहते हुए, उन्होंने “यां हि कायिरा” से शुरू होने वाला दूसरा श्लोक बोला।

वहाँ, परिजानन्ति का अर्थ है: वे विश्लेषण (परिच्छिज्जा) के बाद इस प्रकार जानते हैं; “यह इतना है; वे इस पर अधिक ध्यान नहीं देते;” यही अर्थ है। वास्तव में, अच्छे और उचित अभ्यास (सम्मापटीपत्ति) के माध्यम से, जो कोई भी उसके कहे अनुसार कर्ता है, वह उत्कृष्ट (शोभति) है; इसके अलावा किसी अन्य तरीके से नहीं। उन्होंने “ सुसुखं वत ” से शुरू होने वाले तीसरे श्लोक को यह दिखाने के लिए कहा कि अब समान रूप (सरूपतो) होने के दृष्टिकोण से, कही गई बात का अर्थ (साधारणतो) और किए जाने वाले कार्यों के साधन (साधारणतो) को दर्शाया जा सकता है। इसका अर्थ है:— सम्मासंबुद्धेन देसीतं का अर्थ है: भगवान द्वारा सभी सत्यों (धम्म) के अपने जागृत ज्ञान के कारण स्वयं ही सही ढंग से सिखाया गया; अशोकं का अर्थ है; सभी प्रकार से चिंता के कारणों के अभाव के कारण चिंता से मुक्त; विराजं का अर्थ है; निर्मल, क्योंकि यह कामवासना आदि जैसे दागों से मुक्त है; खेमां का अर्थ है: सुरक्षित, क्योंकि यह योग के चार बंधनों से मुक्त है; सुखं वत का अर्थ है: वास्तव में सुखी, निर्वाण की श्रेष्ठता; क्यों? यत्थ का अर्थ है: जिसमें निर्वाण; वत्त दु:खं निरुज्जति का अर्थ है बार-बार जन्मों के चक्र का संपूर्ण कष्ट, जो निश्चित रूप से समाप्त हो जाता है (वूपसमति)।

थेरा बाकुला के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी

बक्कुला थेरा

गौतम बुद्ध के समय में, कोसंभी नगर में एक धनी, उच्च जाति का व्यापारी और उसकी पत्नी रहते थे। कुछ समय बाद पत्नी गर्भवती हुई और दंपति को एक सुंदर पुत्र हुआ, जिस पर उन्होंने अपना सारा प्यार और स्नेह लुटाया। चूंकि वे यमुना नदी के पास रहते थे, इसलिए बच्चे को उसकी दाई द्वारा प्रतिदिन स्नान के लिए नदी पर ले जाया जाता था।

यमुना नदी गहरी और चौड़ी थी, जिसके किनारे उथले थे और पानी तेज़ी से बह रहा था। दाई एक छोटे बच्चे को नहला रही थी तभी एक बड़ी मछली उसकी ओर तैरती हुई आई और वह डर गई। पानी से बाहर निकलने की हड़बड़ी में उसने बच्चे को खो दिया। नदी में उतरकर उसने उस प्यारे बच्चे को बचाने की कोशिश की। लेकिन पानी का बहाव बहुत तेज़ था। वह डर के मारे देखती रही कि बच्चा उससे दूर, उस बड़ी मछली की ओर बहता चला जा रहा है।

नदी के किनारे कई मील दूर एक मछुआरों का गाँव था। यमुना नदी में मछली पकड़ने वाले लोग बहुत उत्साहित थे, क्योंकि उनके जालों में एक बहुत बड़ी मछली फँसी थी। बड़ी मुश्किल से जाल खींचकर वे उस छटपटाती हुई मछली को गाँव के सबसे धनी व्यक्ति के घर ले गए, जिसके घर में बहुत सारे नौकर-चाकर थे। यह जानते हुए कि इतनी बड़ी मछली केवल अमीर ही खरीद सकते हैं, उन्होंने उसे उस व्यापारी को बेच दिया, जिसके कोई बच्चे नहीं थे। मछली को रसोई में ले जाया गया, लेकिन रसोइया इतनी बड़ी और सुंदर मछली को काटने से हिचकिचा रहा था। उसे पूरा परोसने का फैसला करके, उसने सावधानी से चाकू को उसके किनारे से काटकर मछली को खोला। रसोइया मछली के पेट में एक जीवित शिशु को देखकर बहुत आश्चर्यचकित हुआ। दौड़कर अपनी मालकिन के पास गया और उस सुंदर शिशु को उसे सौंप दिया। निःसंतान वह महिला शिशु को देखकर अत्यंत प्रसन्न हुई और उसने उसे अपने बच्चे की तरह पालने का फैसला किया।

बच्चे के जन्म की अनोखी कहानी जल्द ही पूरे गाँव में फैल गई। कई लोग उस सुंदर बच्चे को देखने आए, जिसे चमत्कारिक बच्चा माना जाता था। कुछ ही समय में यह खबर नदी के उस पार शोक संतप्त माता-पिता तक पहुँच गई, जो अपने बेटे की मृत्यु के कारण गहरे शोक में डूबे हुए थे। उन्हें संदेह हुआ कि यह उनका ही बच्चा हो सकता है, इसलिए वे बच्चे को देखने के लिए उस मछुआरे गाँव गए। बच्चे को अपना मानकर, जन्म देने वाली माँ ने बच्चे की अभिरक्षा माँगी। हालाँकि, नई माँ, जिसने बच्चे को प्यार से पाला था, बच्चे से इतनी आसक्त थी कि वह उसे छोड़ना नहीं चाहती थी। विवाद को स्वयं सुलझाने में असमर्थ, दोनों परिवार अपनी शिकायत राजा के पास ले गए। राजा ने दोनों पक्षों की बात सुनी और दोनों परिवारों को बच्चे की संयुक्त अभिरक्षा दे दी, जिसका नाम बदलकर बक्कुला रखा गया, जिसका अर्थ है 'दो जातियाँ'। बक्कुला को दो अत्यंत धनी, उच्च जाति के ब्राह्मण परिवारों से वंशज होने का अनूठा सौभाग्य प्राप्त था। वह दोनों परिवारों के स्नेह और विलासिता के बीच पला-बढ़ा। उसे सर्वोत्तम शिक्षा मिली और वह बारी-बारी से दोनों परिवारों के साथ रहता था। जब वह बालिग हुआ तो उसके माता-पिता ने एक खूबसूरत लड़की से उसकी शादी तय कर दी।

सदियों पहले की गई उस इच्छा को पूरा करना ही था। जैसे-जैसे बक्कुला बड़े होते गए, वे गौतम बुद्ध की शिक्षाओं से प्रेरित हुए। उन्होंने बुद्ध के संप्रदाय में शामिल होने का निर्णय लिया। आठ दिन बाद उन्होंने निर्वाण की परम अनुभूति प्राप्त की।

भिक्षुओं ने जल्द ही बक्कुला के बारे में एक विचित्र घटना देखी। वे न केवल किसी चिकित्सक के समान ज्ञानी थे, बल्कि असाधारण रूप से स्वस्थ भी थे; बीमार भिक्षुओं की देखभाल करने के बावजूद वे कभी बीमार नहीं पड़ते थे। बक्कुला अपनी अद्भुत स्मृति के लिए भी प्रसिद्ध थे। बुद्ध के प्रमुख शिष्यों, सारिपुत्त और मोग्गलाना तथा उनकी पूर्व पत्नी यशोदरा की तरह, बक्कुला अनंत काल तक अपने पिछले जन्मों को याद रख सकते थे।

बुद्ध ने बक्कुला को सर्वोत्तम स्वास्थ्य और दीर्घायु के लिए सर्वोत्कृष्ट भिक्षु नियुक्त किया। बक्कुला ने अस्सी वर्ष की आयु में भिक्षु जीवन व्यतीत किया और अस्सी वर्षों तक गृहस्थ तथा अस्सी वर्षों तक भिक्षु का जीवन भोगा। उनकी असाधारण स्मृति और दीर्घायु के कारण को समझने के लिए हमें कई वर्षों के अतीत में जाना होगा।

एक लाख विश्व चक्र और अनंत काल पूर्व, अनोमदस्सी नामक एक परम बुद्ध भारत पर विराजमान थे। शाश्वत चार आर्य सत्यों और प्रतीत्यसमुत्पाद के सिद्धांत को जानकर, अनोमदस्सी बुद्ध ने अपने प्रमुख शिष्यों, निसाभा और अनोमा के साथ मिलकर, मानव जाति और देवताओं के कल्याण के लिए बुद्ध धम्म का उपदेश दिया। अनोमदस्सी बुद्ध, जो गांवों और शहरों में धम्म का प्रचार करते हुए यात्रा कर रहे थे, सोभिता नामक विशाल चट्टान के पास पुष्प वृक्षों के एक सुंदर उपवन में स्थित एक मठ में थे, तभी वे एक गंभीर बीमारी से ग्रसित हो गए। अपने मन की शक्ति से अपने दर्द और कष्ट को सहन करते हुए, अनोमदस्सी बुद्ध ने मानव जाति को मुक्ति का मार्ग दिखाकर सभी दुखों को दूर करने के अपने महान मिशन को जारी रखा।

उस समय एक कुशल युवक अपनी शिक्षा से संतुष्ट न होकर सत्य की खोज में जुट गया। उसने गृहस्थ जीवन त्यागकर तपस्वी जीवन व्यतीत करना शुरू कर दिया। शीघ्र ही उसने ध्यान की अवस्था (झान) प्राप्त कर ली। अनोमादस्सी बुद्ध की शिक्षाओं से प्रेरित होकर उसने भिक्षु संघ में प्रवेश किया। यद्यपि अपने प्रयासों के बावजूद वह ज्ञान प्राप्त नहीं कर सका। अनोमादस्सी बुद्ध के दर्शन करके और उनकी बीमारी का निदान करके, उस युवक ने उनके उपचार की अनुमति मांगी। उसने क्षेत्र की छानबीन की, आवश्यक जड़ी-बूटियाँ और जड़ें प्राप्त कीं और उपचार के लिए आवश्यक औषधि तैयार की। उसने श्रद्धा और करुणा से अनोमादस्सी बुद्ध को औषधि अर्पित की और उनकी देखभाल करके उन्हें स्वस्थ कर दिया। इसके बाद उसने संसार (जन्म-मृत्यु के चक्र) में अपने सभी जन्मों में दीर्घायु और अच्छे स्वास्थ्य की कामना की। यह जानकर कि मोक्ष प्राप्त करने के लिए उसे और अधिक प्रयास और पुण्य कर्मों की आवश्यकता है, उसने पुण्य कर्म करना जारी रखा।

अनोमादस्सी बुद्ध ने भविष्य देखकर भविष्यवाणी की कि युवा भिक्षु कई जन्मों तक ब्रह्म लोकों में पुनर्जन्म लेगा, जिसके बाद वह एक राजा के रूप में मानव लोक में लौटेगा। तब वह कई जन्मों तक राजा के सुख-सुविधाओं का आनंद लेगा। स्वर्ग और मानव लोकों में अपने जन्म-जन्म के दौरान उसे दीर्घायु और असाधारण रूप से स्वस्थ रहने का आशीर्वाद प्राप्त होगा।

बक्कुला का अगला प्रलेखित जन्म पद्ममुत्तरा बुद्ध के शासनकाल में हुआ था। वे एक ऐसे भिक्षु से प्रेरित थे जिन्हें पद्ममुत्तरा बुद्ध ने दीर्घायु और स्वस्थता में श्रेष्ठ भिक्षु की उपाधि प्रदान की थी। उन्होंने अनेक पुण्य कर्म किए और भविष्य के किसी बुद्ध के अधीन दीर्घायु और स्वस्थता में श्रेष्ठ बनने की आकांक्षा रखी। पद्ममुत्तरा बुद्ध ने भविष्यवाणी की थी कि अनेक युगों बाद शाक्य वंश के गौतम नामक एक सर्वोच्च बुद्ध का शासन होगा। उस समय, बक्कुला एक धनी ब्राह्मण परिवार में जन्म लेंगे, निर्वाण की परम प्राप्ति करेंगे और स्वस्थता और दीर्घायु में श्रेष्ठ भिक्षु घोषित किए जाएंगे।

अगला प्रलेखित जन्म वृत्तांत विपस्सी बुद्ध के समय का है, जब बक्कुला का जन्म बंदुमती नगर में हुआ था। अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने संघ में शामिल होने का निर्णय लिया। शीघ्र ही उन्होंने मानसिक परमानंद की अनुभूति की। इसी दौरान विपस्सी बुद्ध के संघ में एक संक्रामक रोग फैल गया। अपनी अलौकिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए बक्कुला ने आवश्यक जड़ी-बूटियाँ और जड़ें एकत्रित कीं और ऐसी औषधि तैयार की जिससे संघ के सदस्य ठीक हो गए। इसके बाद उन्होंने अपनी आकांक्षा को पुनः जागृत किया। मृत्यु के समय उनका ब्रह्मलोक में पुनर्जन्म हुआ और उन्हें दीर्घकाल तक दिव्य आनंद का अनुभव करने का अवसर मिला।

अगला प्रलेखित जन्म वृत्तांत कश्यप बुद्ध के समय का है। एक जीर्ण-शीर्ण मठ को देखकर उन्होंने उसका जीर्णोद्धार किया और उसे संघ को समर्पित कर दिया। कश्यप बुद्ध की शरण में आकर उन्होंने मोक्ष प्राप्ति के अपने प्रयास जारी रखे। मृत्यु के बाद उनका स्वर्ग में पुनर्जन्म हुआ।
भविष्यवाणी के अनुसार, पद्ममुत्तरा बुद्ध के समय की गई आकांक्षा गौतम बुद्ध के शासनकाल में पूरी हुई। बक्कुला, अपनी असाधारण स्मृति और प्रथम संघ परिषद में भाग लेने से प्राप्त अनुभव के साथ, संघ को शिक्षा देने और बुद्ध के वचन को संरक्षित करने में अमूल्य योगदान दिया।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(173):धनिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (173) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
173. धनिया
बुद्ध युग में राजगृह में एक कुम्हार परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम धानिया रखा गया। उन्होंने कुम्हार का काम सीखा। उन्हीं के घर पर भगवान (बुद्ध) ने पुक्कुसती को तत्व-व्यवस्था का सूत्र सिखाया। [1] धानिया ने उसी रात पुक्कुसती के अरहंत (ज्ञान प्राप्त) के रूप में निधन की खबर सुनकर सोचा, 'बुद्ध-शासन वास्तव में मार्गदर्शन करने में शक्तिशाली है, जिसमें एक रात ही मनुष्य को पुनर्जन्म के दुखों से मुक्ति दिला सकती है!' इसलिए उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया। लेकिन वे छतों के लिए टाइलें बनाने का काम करते रहे। [2] बुद्ध द्वारा मिट्टी की झोपड़ी बनाने के लिए फटकार लगाए जाने पर, उन्होंने एक भिक्षु के आवास में निवास किया और वहीं अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया।

इसके बाद, आत्म-संयम के कारण स्वयं को दूसरों से श्रेष्ठ समझने वाले भिक्षुओं को संबोधित करते हुए, उन्होंने अन्न (प्राप्ति) की घोषणा इस प्रकार की:

[228] सुखान्से [30] जीवितुṃ इच्चे समानास्मिṃ अपेक्खवा,॥
साङ्िघकां नातिमान्येया शिवरां पानभोजन:॥ ॥

[229] सुखाँसे जीवितुइ इच्चे समानास्मिअ अपेक्खवा,॥
अहि संगीतशोभं वा सेवेथा सयानासनं॥ ॥

[230] सुखाँसे जीवितुइ इच्चे समानास्मिअ अपेक्खवा,॥
इतरितरेण तुस्सेय एकधम्मञ्च भवायति.॥ ॥

[228] यदि कोई भिक्षु के अनुशासन में
यह सोचे कि वह सुखमय आराम से कैसे रह सकता है, तो
उसे भिक्षु के वस्त्र का तिरस्कार नहीं करना चाहिए,
न ही उसके भोजन और पेय का अनादर करना चाहिए।

[229] यदि कोई भिक्षु के अनुशासन में
यह विचार करे कि वह सुखमय आराम से कैसे रह सकता है, तो उसे जलसाँप या चूहे
जैसे आश्रय में बार-बार जाना चाहिए [आदिम, नग्न]। [3]

[230] यदि कोई भिक्षु के अनुशासन में
यह सोचे कि वह सुखमय आराम से कैसे रह सकता है,
तो उसे प्रसन्न रहना चाहिए, चाहे दिन कुछ भी लाए, [4] और उसे एक मुख्य बात पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। [5]

[1] 'धातु-विभंग-सुत्त,' मज्झ. निक., iii. 237 ff., जहाँ कुम्हार का नाम उल्लेखित नहीं है। तुलना करें उपरोक्त XCVII., और मेरा बौद्ध धर्म, 1912

[2] धानिया की ईंट बनाने की कुशलता: मिट्टी का काम इंडिगोपाका (श्लोक 13 देखें) की तरह लाल होता है, और थपथपाने पर घंटी जैसी ध्वनि देता है, इस संदर्भ में विनय, iii. 41 f में वर्णित है।

[3] टिप्पणी: 'क्षण का छेद, जहाँ वह अपनी इच्छा से अंदर और बाहर जा सकता है।'

[4] शाब्दिक रूप से, किसी न किसी बात पर प्रसन्न।

[5] अर्थात, उसके अध्ययन का एक-धम्मṃ जो भी हो, उसे ईमानदारी से रहने दें (टिप्पणी) ।

3.4 [173] धानियाथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
सुखांचे जीवितुं इच्चे से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा धानिया का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने भगवान सिखि के समय एक परिवार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उन्हें गुरु के दर्शन हुए, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें सरकंडे की माला (नङ्मला) अर्पित की। उस पुण्य कर्म के कारण, वे बार-बार जन्म लेते हुए देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे राजगृह में एक कुम्हार के परिवार में पुनर्जन्म लिए; धानिया नाम प्राप्त करके, वयस्क होने पर उन्होंने कुम्हार का काम करके जीविका अर्जित की। उस अवसर पर, गुरु ने कुम्हार के कक्ष में बैठकर पुक्कुसती नामक युवक (कुलपुत्र) को चधातुविभंग सूत्र का उपदेश दिया। उस उपदेश को सुनकर वह अरहंत बनकर अपने कर्तव्य का निर्वाह करने वाला बन गया। धानिया ने जब उनके परिनिर्वाण प्राप्त करने की स्थिति के बारे में सुना, तो उन्होंने उचित श्रद्धा से भरकर मन ही मन कहा, "वास्तव में, बुद्ध का उपदेश लाभदायक (निय्यनिक) है, क्योंकि इससे व्यक्ति जन्म-जन्म के चक्र (वट्ट) के कष्टदायक दुख (दुक्खा) से केवल एक रात के लिए परिचित होने (परिचय) से मुक्त हो जाता है।" वे भिक्षु बन गए और अपने निवास स्थान (जुटी) को सजाने-संवारने में सदा लगे रहने (अनुयुत्तो) के कारण भगवान बुद्ध द्वारा फटकारे (गरहितो) गए। बाद में पुरोहितों के मठ (सांधिक) में निवास करते हुए, उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर वृद्धि की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है ।

मैंने सुनहरे रंग वाले स्वयं को देखा-

जागृत बुद्ध, नेता

विश्व, इसके योग्य प्राप्तकर्ता

बलि चढ़ाने की भेंटें ऊपर जा रही हैं

लकड़ी का ऊपरी भाग।

लाल रंग की माला एकत्र करने के बाद,

मैं तुरंत बाहर आया, और

वहाँ मेरी मुलाकात आत्मजागृत बुद्ध से हुई।

जब वह पार कर चुका था तो वह घावों से मुक्त था।

बाढ़ के ऊपर (ओघाटिण्ण)।

धार्मिक और नेक दिल होने के कारण, मैंने यह किया।

मेरी श्रद्धापूर्वक अर्पित की गई सरकंडे की माला

महान नायक को, योग्य प्राप्तकर्ता को

समर्पित दान के, सहानुभूति रखने वाले

दुनिया के।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने विशेष रूप से अपनी पुष्पांजलि अर्पित की थी;

मुझे किसी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यह

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने अरहंत पद को प्रकट करने के लिए तीन श्लोक कहे, ताकि उन भिक्षुओं को सलाह दी जा सके, जिन्होंने तपस्या में एकाग्रता (समाधान) के द्वारा स्वयं को ऊंचा उठाकर पुरोहितों के लिए बने भोजन का आनंद लेने वाले अन्य भिक्षुओं का अपमान किया था। आदि।

228. "यदि कोई सुखी जीवन जीना चाहता है,

(अपेक्खवा) साधुत्व की लालसा

(सामञ्ञा), किसी को कम नहीं आंकना चाहिए

इससे जुड़ी कोई भी ऐसी चीज

बाथरोब, पेय और भोजन का ऑर्डर दें।

229. "यदि कोई सुखी जीवन जीना चाहता है,

भिक्षु जीवन की लालसा,

किसी को उसके मठ का उपयोग करना चाहिए

जैसा कोई व्यक्ति व्यवहार करेगा

किसी सांप या चूहे के बिल की ओर।

230. "यदि कोई सुखी जीवन जीना चाहता है

और भिक्षु जीवन की कामना करता है, एक

उसे इसी से संतुष्ट रहना चाहिए;

हमें एकमात्र सत्य का ही पोषण करना चाहिए।

(धम्म)।

वहाँ, सुखन चे जीवितुं इच्चे, सामञ्ञस्मिं अपेक्खवा का अर्थ है: यदि कोई जीना चाहता है, तो उसे भिक्षुत्व के सुख की कामना करनी चाहिए, अनुचित व्यवहार (अनेसनं) का त्याग (पहया) करके, भिक्षु की स्थिति के लिए तरसते हुए, और अनुशासित आचरण (सिक्खाया) के प्रति तीव्र आदर (तिब्बगारवो) रखते हुए; यही अर्थ है।

संघिकं नातिमञ्ञेय्य, चीवरं पानभोजनं का अर्थ है: भिक्षु संघ से प्राप्त वस्त्र और भोजन को कम महत्व नहीं देना चाहिए; भिक्षु संघ को जो लाभ प्राप्त होता है, वह सर्वांगीण शुद्धि है; अत:, जो इन्हें धारण और ग्रहण करता है (परिभुञ्जन्तस्स), उसे आजीविका की सर्वांगीण शुद्धता के फलस्वरूप प्राप्त होने से भिक्षुत्व का सुख प्राप्त हो जाता है; यही इसका महत्व है। अहिमुसिकासोभं वा का अर्थ है : चूहे द्वारा खोदा गया एक बिल जो सांप जैसा दिखता है; सेवेथा का अर्थ है: मठ की सेवा करनी चाहिए। जिस प्रकार एक साँप स्वयं अपना घर (आसय) बनाए बिना, चूहे या किसी अन्य प्राणी द्वारा बनाए गए आश्रय में रहकर जहाँ चाहे वहाँ से चला जाता है (येन कामं), ठीक उसी प्रकार एक भिक्षु, मठ के कारण स्वयं को भ्रष्ट किए बिना, यहाँ-वहाँ रहकर भी वहाँ से चला जाता है; यही अर्थ है।

अब, यह दिखाने के लिए कि "सन्यास का सुख केवल संन्यासी की आवश्यकताओं की प्राप्ति से ही प्राप्त होता है, चाहे वे कही गई हों या अनकही; किसी अन्य तरीके से नहीं", उन्होंने कहा: "इतरीतरेना तुस्सेय्या।" व्यक्ति को किसी भी प्रकार से प्राप्त आवश्यकताओं से संतुष्ट रहना चाहिए, चाहे वे निम्न हों या उच्च; यही अर्थ है। एकधम्मं का अर्थ है परिश्रम की अवस्था; वास्तव में, जो व्यक्ति इसमें लगा रहता है, उसे समस्त दोषरहित सांसारिक सुख और दिव्य सुख प्राप्त हो जाते हैं। इसलिए भगवान बुद्ध ने कहा: "अप्पमत्तो हि झायन्तो, पप्पति विपुलं सुखं (वास्तव में, परिश्रमी व्यक्ति ध्यान में प्रवेश करके प्रचुर सुख प्राप्त करता है)।"

थेरा धानिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (174): मतंग का पुत्र

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (174) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
174. मातंगा का पुत्र
बुद्ध युग में कोसल में मातंग नामक एक जमींदार के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम उनके पिता के नाम पर रखा गया। वे आलस्य में पले-बढ़े और जब उनके लोगों ने उन्हें फटकारा, तो उन्होंने भिक्षुओं से मेल-जोल किया और देखा कि शाकिया पुत्र भिक्षु कितने सुखी जीवन व्यतीत करते हैं। लेकिन जब उन्होंने भगवान (बुद्ध) को धम्म का उपदेश देते हुए सुना, तो उन्होंने विश्वास किया और भिक्षु बन गए। भिक्षुओं द्वारा धारण की गई इद्धि की शक्ति को देखकर, उन्होंने भी वैसी ही शक्ति प्राप्त करने की इच्छा की। अभ्यास करते हुए, उन्होंने छह गुना अभिज्ञा (उच्चतर ज्ञान/आध्यात्मिक शक्ति) प्राप्त की।

इस पर उन्होंने आलस्य की निंदा करते हुए, इन छंदों में अपनी ऊर्जा का प्रवाह व्यक्त किया:

[231] अतिसीताṃ अतिउṇहाṃ अतिसायमिदौ आहु,॥
इति विशत्थकम्मन्ते खाना एक्सेंटि मनावे ॥॥ ॥

[232] यो च सीतां च उन्हांच तिना भय्यो न मन्नति,॥
करं पुरिसकिक्कानि सो सुखा न विहायति॥ ॥

[233] डब्बाṃ कुसाṃ पोआकिलाṃ उसिराṃ मुन्जाबब्बाजाṃ॥
उरसा पनुदिस्सामि विवेकमनुब्रुहयन्ति॥ ॥

[231] बहुत ठंड! बहुत गर्मी! बहुत देर हो गई! यही पुकार है।
और इसलिए, जो लोग काम को टालते हैं [जो
उनका इंतज़ार कर रहा है], उनके लिए भाग्य के क्षण बीत जाते हैं। [1]

[232] परन्तु जो शीत और ताप को
तिनकों से भी कम समझता है, मनुष्य के समान अपने कर्तव्यों का पालन करता है,
वह सुख का निर्दोश सिद्ध नहीं होता।

[163] [233] डब्बा- और कुसा-घास और चुभने वाले तने,
और वह सब जो झाड़ियों और घने जंगलों में चुभता है।
मैं अपने सीने से धकेल कर दूर कर दूँगा, और वहाँ जाऊँगा जहाँ मैं हृदय के वैराग्य, अकेले और पृथक
विकास को पोषित कर सकूँ । [2]

[1] 'भाग्यपूर्ण' शब्द को उस तात्कालिकता को बल देने के लिए जोड़ा गया है जिसके साथ गंभीर भिक्षु के जीवन में, विशेष रूप से 'बुद्ध युग' में, अवसर का संयोग इस वर्तमान जीवन से जुड़ा होता है। इसलिए यहाँ टीका में, और देखें सिस्टर्स, पृष्ठ 12, नोट 4। ये दो श्लोक दीघा 3, 'सिगालोवाद सुत्तंत' में आते हैं, लेकिन 'क्षण' को 'अत्था' , 'लाभ' या 'अच्छा' से प्रतिस्थापित किया गया है - बहुवचन रूप का एक दुर्लभ प्रयोग।

[2] = XXVII.; cf. XXIII. ऊर्जा एक मामले में शारीरिक कोमलता को चुनौती देती है, दूसरे में स्त्रीत्व को।

3.5 [174] मातंगपुत्तथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
अतिसितं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मातंग का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि भगवान पद्ममुत्तरा के समय में, हिमवंता के पास एक विशाल प्राकृतिक झील के नीचे स्थित एक बड़े नाग-भवन में, वे एक शक्तिशाली नाग-राजकुमार के रूप में पुनर्जन्म लिए थे। एक दिन, अपने नाग-भवन से बाहर आकर, वे भटक रहे थे जब उन्होंने भगवान को आकाश में विचरण करते देखा। वे श्रद्धा से भर गए और अपने सिर के रत्न से उन्हें आदरपूर्वक भेंट अर्पित की। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए और कोसल राज्य में मातंग नामक एक जमींदार के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, और मातंगपुत्र के नाम से भी जाने गए। वयस्क होने पर, वे जन्मजात आलसी होने के कारण कोई काम नहीं कर रहे थे। रिश्तेदारों और अन्य लोगों द्वारा निंदा किए जाने पर, उन्होंने मन ही मन कहा: "सुखद और सरल जीवन के नेता, ये भिक्षु, शाकियान के पुत्र," और सरल जीवन जीने की इच्छा से उन्होंने भिक्षुओं से परिचय प्राप्त किया, गुरु के पास गए, सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, धार्मिक आस्था प्राप्त की, अन्य भिक्षुओं को जादुई शक्तियों से युक्त पाया, जादू की शक्ति की आकांक्षा की, गुरु की उपस्थिति से अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) को एकत्रित किया, ध्यान (भावना) के विकास में संलग्न हुए और छह प्रकार के (जादुई) महाज्ञान से युक्त अरहंत बन गए। इसलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"पदुमुत्तरा (बुद्ध) नामक विजेता

सभी सत्यों में अत्यंत निपुण

(धम्म), स्वयंजागृत बुद्ध,

एकांत की इच्छा होने के कारण, वह चला गया।

सीधे आकाश के आर-पार।

वहाँ एक विशाल प्राकृतिक झील थी

हिमावंता से दूर; वहीं मेरा महल है

यह सराहनीय कार्यों से अच्छी तरह से जुड़ा हुआ था।

मैं विशेष रूप से अपने आलीशान घर से बाहर आया हूँ,

मुझे दुनिया के नेता की झलक दिखाई दी,

नीले कमल की तरह चमकता हुआ और दमकता हुआ

जैसे यज्ञ की अग्नि (होतासनं)।

जांच करना (vicinaṃ) और न देखना

(अद्दसम्) वे किसी भी फूल का सम्मान करेंगे।

नेता; मैंने अपना मन श्रद्धापूर्वक बना लिया है

प्रसन्न होकर मैंने गुरु को नमन किया।

मेरे सिर पर लगे रत्न को पकड़ते हुए,

मैंने इसे आदरपूर्वक नेता को अर्पित किया।

दुनिया का कहना है: "के माध्यम से

मेरे रत्न की श्रद्धापूर्वक भेंट, आशा है कि

अच्छा परिणाम मिलेगा!

पद्ममुत्तरा, संसार के ज्ञानी, योग्य

बलिदान भेंट का प्राप्तकर्ता,

गुरु, आकाश में खड़े होकर उन्होंने यह कहा

श्लोक।

आपका वह इरादा पूरा हो जाए;

आपको अपार आनंद प्राप्त हो!

इस अनमोल रत्न को श्रद्धापूर्वक अर्पित करने के लिए धन्यवाद।

आपको प्रसिद्धि का भरपूर आनंद लेना चाहिए।

यह कहने के बाद, भगवान ने कहा कि

हे परम उत्कृष्ट कमल, हे बुद्ध, सर्वश्रेष्ठ,

वह उस स्थान पर चला गया जहाँ उसका मन था

जाने का निश्चय कर लिया।

साठ युगों (कप्पा) तक, मैं दिव्य था

संप्रभु और मैंने दैवीय संप्रभुता का प्रयोग किया;

कई सौ बार मैं एक दुनिया था

राजा।

जब मुझे अपने पूर्व की याद आती रही

कर्म, जबकि मैं एक दिव्य बन गया था

वहाँ मेरी पीढ़ी का उदय हुआ।

मेरे लिए प्रकाश का स्रोत।

छियासी हजार महिलाएं, विभिन्न रूपों में

सजे-धजे, अलंकृत

मेरे ऊपर पन्ना के झुमके आ गए।

घनी पलकों वाली महिलाएं (अलारा-

(पम्हा), मुस्कुराते हुए वाणी (हसुला) के साथ,

अच्छी समझ (सुसाञ्ञा) के साथ और

कोमल कमर के साथ (तनुमाज्जिमा)

मुझे हमेशा घेरे रहता था; यही फलदायी था

मेरी श्रद्धापूर्वक भेंट का परिणाम

पन्ना रत्न का।

जब भी मुझे गहनों की आवश्यकता होती थी

मेरी सजावट, मेरे गहने

(भण्डा) अच्छी तरह से निर्मित, सोने से बना हुआ,

पन्ना से बना और इसी प्रकार से बना

रूबी.

मनमोहक शिखर वाले घर, अत्यधिक

जब मैं

मेरी मंशा को जानते हुए, वे चाहते थे। लाभ

जो लोग लाभ कमाते हैं, उनके लिए यह अच्छा लाभ है।

ध्यान (उपसुति); वे गठन करते हैं

मानव जाति के लिए एक उपजाऊ क्षेत्र,

और सभी जीवित प्राणियों के लिए औषधि,

मेरा काम भी अच्छे से संपन्न हुआ था।

मेरी मुलाकात नेता से हुई; मैं बच निकला

मैंने नरक और नरक को प्राप्त कर लिया है

अडिग मार्ग।

मैं चाहे जहाँ कहीं से भी उत्पन्न हुआ होऊं,

चाहे दैवीय अवस्था में हो या मानवीय अवस्था में।

उस स्थिति में, मेरे लिए रोशनी थी

हमेशा दिन के साथ-साथ रात में भी।

उस अत्यंत श्रद्धापूर्ण माध्यम से

मैंने अपने पन्ना का जो अर्पण किया था, उसका मैंने आनंद लिया था।

समृद्धि (संपदा); प्रकाश

मुझे ज्ञान प्राप्त हो चुका था;

अविचल मार्ग प्राप्त कर लिया है

यह एक लाख युगों का समय था।

(कप्पा) पहले, जो मैंने विशेष रूप से पेश किया था

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यह

यह मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम है।

पन्ना का अर्पण।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनने के बाद, उन्होंने तीन श्लोकों में अपने स्वयं के प्रयास की घोषणा की और व्यक्तिगत दृढ़ संकल्प (पुग्गलधिष्ठान) के माध्यम से आलस्य की निंदा की।

231. "बहुत ठंड है; बहुत गर्मी है;

यह सिलसिला काफी देर शाम तक चलता रहा;

इस प्रकार, युवाओं ने क्षणों को बीतने दिया।

उनके व्यवसायों (कम्मन्त) को त्यागते हुए।

232. "जो ठंड और गर्मी के बारे में नहीं सोचता"

घास से भी ज्यादा, खारिज नहीं किया जाता

(विहायति) खुशी से, करते हुए

एक पुरुष के रूप में उसके कर्तव्य।

233. "मैं डब्बा घास, कुसा घास को जड़ से उखाड़ दूंगा,

पोटाकिला घास, सुगंधित उसिरा जड़,

मुंजा घास और सरकंडा (पब्बाजा)

अपने हृदय से, स्वयं को समर्पित करते हुए

अलगाव।

वहाँ, atisītaṃ का अर्थ है: ओस की बूँदों और मूसलाधार बारिश के साथ अत्यधिक ठंड; idaṃahu का अर्थ है: यह; इस अभिव्यक्ति के बाद, Atiuṇhaṃ का अर्थ है: अत्यधिक गर्मी और चारों ओर जलन आदि; उन्होंने दोनों प्रकार के मौसमों के माध्यम से आलस्य के आधार के बारे में बात की। Atisāyaṃ का अर्थ है: शाम को बहुत देर हो चुकी होती है, जब दिन पूरी तरह ढल चुका होता है (pariṇati); यहाँ, शाम के साथ-साथ सुबह (pato) भी हो रही होती है (saṅgayhati); उन्होंने इन दोनों स्थितियों के माध्यम से आलस्य के आधार के बारे में बताया। Iti का अर्थ है: इस प्रकार। इसके माध्यम से, वह आलस्य के मूल तत्व को एकत्रित करता है (संगण्हाति), जैसा कि कहा गया है: “इधा भिक्खबे भिक्खुना कम्मं कट्टब्बं होति (हे भिक्षुओं! यहाँ काम एक भिक्षु द्वारा किया जाना चाहिए)।” विसत्तकम्मन्ते का अर्थ है: व्यवसाय के प्रति भक्ति का पूर्णतः त्याग। खण का अर्थ है: पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्यवास) जीने का अवसर और बुद्ध का प्रकट होना, आदि। अचेन्ती का अर्थ है: वे गुजर जाते हैं। मानवे का अर्थ है: सजीव प्राणी। तिण भिय्यो न मान्ञति का अर्थ है: वह स्वयं वह करता है जो किया जाना चाहिए। करं का अर्थ है: करना (करन्तो)। पुरिसकिच्चानि का अर्थ है: स्वयं का और दूसरों का कल्याण जो एक वीर पुरुष द्वारा किया जाना चाहिए। सुखा का अर्थ है: निर्वाण के आनंद से सुख। अतः इसका महत्व है। तीसरे श्लोक का अर्थ पहले ही बताया जा चुका है (हेट्ठा)।

थेरा मातंगपुत्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(175):खुज्जा-शोभिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (175) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
175. खुज्जा-सोभिता
बुद्ध युग में पाटलिपुत्त [1] में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम शोभिता रखा गया। लेकिन थोड़ा कुबड़ा होने के कारण उन्हें कुबड़ा शोभिता कहा जाता था। भगवान (बुद्ध) के निधन के समय वयस्क होने पर, उन्हें आनंद द्वारा भिक्षु दीक्षा दी गई और उन्होंने छह प्रकार की अभिज्ञा (आध्यात्मिक शक्तियों का उच्च ज्ञान) प्राप्त की।

अब, सत्तपण्णी गुफा में आयोजित प्रथम महान सभा में, उन्हें आनंद थेरा को सभा में लाने के लिए कहा गया। [2] उस समय, देवों के समूह ने मार (मृत्यु के देवता/राक्षस) के कार्य का प्रतिकार करने के लिए गुफा के प्रवेश द्वार पर एक देवदूत को भेजा। और खुज्जा-शोभिता ने इस श्लोक में देवदूत को अपने आगमन की सूचना दी:

[234] ये चित्तकथि बहुसुता॥
समाना पाटलिपुत्तवासिनो,॥
तेसान्नत्रोयामायुमा॥
द्वारे तिथति खुज्जसोभितो.॥ ॥

[235] ये चित्तकथि बहुसुता॥
समाना पाटलिपुत्तवासिनो,॥
तेसान्नत्रोयामायुवा॥
द्वारे तिथति मालुतेरिटो॥ ॥

[236] सुयुद्देन सुयिष्ठेन संगमविजयेन च,॥
ब्रह्मचर्यानुचैन एवायं सुखमेधति' ति.॥ ॥

[234] पटना में रहने वाले भिक्षुओं में से एक,
विद्वान और ज्ञानी, देखो! द्वार पर,

वृद्ध, कुबड़ा शोभिता खड़ा है।

तब देवदूत ने संघ को थेराए के आगमन की सूचना दी:

[235] पटना में रहने वाले भिक्षुओं में से एक,
विद्वान और वाक्पटु, देखो! द्वार पर,
वृद्धावस्था में, वह हवाओं द्वारा ले जाया जा रहा है। [3]

तब संघ द्वारा अवसर दिए जाने पर, थेरा ने उनके पास जाकर अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[236] उसने अच्छी लड़ाई लड़ी, और अच्छा बलिदान दिया, [4] और युद्ध में जीत हासिल की: - अब ऐसे युद्ध से,
पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) का उत्साहपूर्वक पालन करते हुए,
वह सुख में विश्राम करता है [हमेशा के लिए]।

[1] पटना; सी.सी. सिस्टर्स, पृ. 157 एन.

[2] आनंद के बाद के प्रकट होने के लिए विनय ग्रंथ, iii. 373; विनय, iii. 259 देखें। वहाँ, टीकाकार कथा के अनुसार, आनंद का गुफा तक पृथ्वी या वायु के माध्यम से प्रवेश हमारे थेरा को समर्पित है। आश्चर्यजनक रूप से, विनय ग्रंथ स्वयं वैशाली की सभा तक, जो एक शताब्दी बाद हुई, खुज्जा-शोभिता का उल्लेख नहीं करता (विनय ग्रंथ, iii. 407)। विनय ग्रंथ में यह उल्लेख नहीं है कि सभा इसी गुफा में आयोजित की गई थी , जिसमें केवल वेलुवन (बांस के जंगल) में स्थित कलंदक-निवाप (गिलहरियों का चारागाह) का नाम लिया गया है। 'देवदूत' का शाब्दिक अर्थ है देवता ।

[3] आनंद से संघ में उनकी हवाई वापसी।

[4] सुयिट्ठेना (जो मार्शल विशेषणों की तुलना में पतित ब्राह्मण (पुजारी) से अधिक स्वाभाविक रूप से आता है) टीका 'सद्‌गुणी मित्रों से धार्मिक उपहार' के रूप में व्याख्या करती है। कविता का छंद दो व्याख्याओं समाना और द्वारे से बाधित है।

3.6[175] खुज्जसोभितत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
ये चित्तकुथी बहुस्सुता से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा खुज्जसोभिता का है। क्या यही उनकी उत्पत्ति है? कहा जाता है कि उनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा (बुद्ध) के समय एक पारिवारिक घर में हुआ था; जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके थे, तब एक दिन उन्होंने संयोगवश भगवान को भिक्षुओं के एक बड़े समूह के साथ घूमते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और दस श्लोकों में उनकी स्तुति की। इस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए और अंत में पाटलिपुत्त नगर के एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब बुद्ध का जन्म हुआ। उनका नाम "सोभिता" था। हालांकि, वे स्वभाव से कुबड़ा होने के कारण खुज्जसोभिता के नाम से प्रसिद्ध हुए। वयस्क होने पर, जब गुरु का देहांत हो गया और वे परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके, तब उन्होंने थेरा आनंद की उपस्थिति में भिक्षु दीक्षा ली और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बन गए। इसीलिए अपदाना में कहा गया है:—

इसके बाद कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

दिव्य के दिव्य को देखकर,

पुरुषों में श्रेष्ठ, मोती के समान (ककुधं)

अपनी भव्यता प्रदर्शित करते हुए (विलासन्तं)

कौन रथ यात्रा के मार्ग पर प्रवेश कर रहा था?

इसके बाद कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

उस एक को उज्ज्वल रूप से चमकते हुए देखकर

उनके ज्ञान के प्रकाश ने, दूर कर दिया

अच्छी तरह से भेजने के बाद गहरा अंधेरा

कई पुरुष?

कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

दुनिया के नेता को देखने के बाद

उनके एक लाख स्वामियों के साथ

उनकी वश में होकर, उनके द्वारा निर्देशित होकर, उन्हें खींचते हुए इंद्रियां (वसी)

कई जीवित प्राणियों को (समुद्र से)

saṃsāra)?

कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

उसे पीटते हुए देखने के बाद

धर्म का ढोल, भीड़ को कुचलते हुए

विधर्मी और शेर की दहाड़?

कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

ब्रह्मा के साथ दिव्य प्राणियों को देखकर

जो दुनिया के दूर-दूर से आए हैं

क्या ब्रह्मा सूक्ष्म प्रश्न पूछ रहे हैं?

कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

दिव्य प्राणियों को देखने के बाद

जिन्होंने अपने हाथों को आपस में जोड़कर ऐसा किया,

वे अपनी प्रार्थना करें ताकि वे आनंद उठा सकें

उनकी योग्यता का फल मिलने के कारण

वह?

कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

उन सभी असंख्य लोगों को देखने के बाद

पुरुषों के एक साथ आने और व्यक्तिगत रूप से

दृष्टिवान बुद्ध को आमंत्रित करो।

जो आमंत्रित किए जाने पर भी विचलित नहीं होता

(अज्जित्तो)?

कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

कई ढोलों की गूंज देखने के बाद

(रवंती) और हाथी तुरही बजाते हैं

जब वह प्रवेश करता है तो मत में रोना (मत्ता)।

शहर?

कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

उनकी सभी किरणों को देखने के बाद हमेशा

जब वह साथ चलता है तो वह चमकता रहता है

सड़क; वे समान रूप से उछल-कूद करने लगे हैं

ऊपर (abbhunnatā)?

कौन धार्मिक रूप से प्रसन्न नहीं होगा?

यह देखने के बाद कि जब बुद्ध

बोलता है (ब्याहरंतस्सा), ब्रह्मांड

उसे सुनने के लिए बनाया जाता है और जब वह सब कुछ करता है

क्या जीव-जंतु समझते हैं (विञ्ञापेटि)?

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने विशेष प्रशंसा की थी

बुद्ध; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

मेरी स्तुति (कित्तनाया) करने के लिए।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

यद्यपि छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बनने के बाद, प्रथम महान संगीति के समय राजगृह स्थित सत्तपण्णी गुफा में एकत्रित भिक्षु संघ ने उन्हें आदेश दिया: "जाओ और पूज्य आनंद को बुलाओ।" उन्होंने स्वयं को पृथ्वी में समाहित कर लिया, थेरा के सामने प्रकट हुए, जिन्हें उन्होंने संघ का संदेश दिया, स्वयं आकाश में विचरण करते हुए सत्तपण्णी गुफा के द्वार पर स्वयं पहुंचे, जहां दिव्य समूह द्वारा मार और मार की सेना को रोकने के उद्देश्य से एक विशेष देवता को भेजा गया था; उस देवता को अपने आगमन की सूचना देने के लिए, खुज्जसोभिता ने प्रथम श्लोक का उच्चारण किया।

234. "यह खुज्जसोभिता उन लोगों में से एक है

आयुवान भिक्षु, जो दीर्घायु होते हैं (आयुवा भिक्षु), जो शिक्षा देते हैं

विविध उपदेश, जो बहुत अधिक हैं

विद्वान और जो नागरिक हैं

पाटलिपुत्त द्वार पर खड़े हैं।

वहाँ, चित्तकथी का अर्थ है: विविध प्रकार के सत्य (धम्म) के शिक्षक; वे दूसरों की रुचि (अज्जासय) के अनुरूप सत्य (धम्म) का शिक्षण करने के अभ्यस्त हैं, जैसे संक्षेपण, विस्तार (वित्थारनं), गहनता, सरलीकरण, संदेह निवारण और सत्य (धम्म) की स्थापना जैसी विभिन्न विधियों का प्रयोग करते हैं; इस प्रकार, बहुस्सुता का अर्थ है: बहुत विद्वान, क्योंकि वे प्रामाणिक ग्रंथों (परियत्ति) के ज्ञान और सत्य (पटिवेध) में उचित अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण हैं। समण का अर्थ है भिक्षु, क्योंकि उन्होंने हर तरह से (सब्बासो) बुराइयों का निवारण (समिता) किया है। पाटलिपुत्तवासिनो, तेसाञ्ञतरो का अर्थ है: पाटलिपुत्त के नागरिक, क्योंकि वे पाटलिपुत्त नगर में निवास करते हैं। उनमें से एक; eyaṃ āyuvā का अर्थ है: यह एक दीर्घायु पूजनीय व्यक्ति है। Dvāre tiṭṭhati का अर्थ है: वह सत्तपण्णी गुफा के द्वार पर खड़ा है; भिक्षु संघ की स्वीकृति (अनुमति) के अनुसार प्रवेश करने के लिए। उस श्लोक को सुनकर, उस देवता ने संघ में थेरा के आगमन की सूचना देने के लिए दूसरा श्लोक कहा:—

235. "वे विविध प्रकार के शिक्षक..."

हवा के रास्ते आने के बाद, वह खड़ा है

दरवाजे पर।"

वहाँ, मालुतेरितो का अर्थ है: मन द्वारा प्रेरित (एरितो), जादुई शक्तियों के मन की उपज के साथ (इद्धिचित्तजनितेन); वह जादुई शक्ति के बल के साथ आया था: इस प्रकार, इसका अर्थ है।

उस देवता द्वारा इस प्रकार सूचित किए जाने पर संघ में प्रवेश (कटोकासो) दिए जाने पर, थेरा ने संघ में जाकर इस तीसरे श्लोक के माध्यम से अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया:

236. "मेरे द्वारा अच्छी लड़ाई लड़ने के माध्यम से,

मेरी अच्छी भेंट के माध्यम से, के माध्यम से

युद्ध के मैदान में मेरी जीत के द्वारा

पवित्र मार्ग पर निरंतर चलने का साधन

इस प्रकार, इस प्रकार, पवित्रता का जीवन

व्यक्ति परमानंद का अनुभव करता है।

वहाँ, सुयुद्धेन का अर्थ है: पूर्व में (पुब्बभागे) क्षणिक (तदंग) और स्थायी त्याग जैसे त्यागों के प्रभाव में अनेक प्रकार के दुराचारों (किलेसा) से अच्छी तरह लड़कर, ध्यान (विक्खम्भन) की अवधि के दौरान। सुयिट्ठेन का अर्थ है: अच्छे मित्रों द्वारा नियमित अंतरालों पर (अंतरंतरा) उचित रूप से दिए गए सत्य (धम्म) के अर्पण के माध्यम से। संगाम विजयेन च का अर्थ है: युद्ध के मैदान में विजय प्राप्त करके, दुराचार (किलेसा) द्वारा निर्मित सृष्टि (अभिसंखार) को हर तरह से कुचलकर (निम्मतन) और पूर्णतः काट कर (समुच्छेद) विजय प्राप्त करके। ब्रह्मचरियनुचिण्नेन का अर्थ है: सर्वोत्कृष्ट मार्ग (अग्गमग्ग) के पवित्र जीवन के माध्यम से निरंतर अभ्यास (अनुचिण) द्वारा। एवायं सुखमेधति का अर्थ है: इस संसार में यह थेरा खुज्जसोभिता निर्वाण के आनंद का अनुभव करते हैं, साथ ही उक्त तरीके से उचित फल प्राप्ति की खुशी का भी आनंद लेते हैं; यही इसका अर्थ है।

थेरा खुज्जसोभिता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(176):वाराण

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (176) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
176. वारण
बुद्ध युग में कोसल में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम वारण रखा गया। वयस्क होने पर उन्होंने एक वन में एक थेर को धम्म का उपदेश देते हुए सुना और विश्वास करके भिक्षु संघ में प्रवेश किया। एक दिन बुद्ध से मिलने जाते समय उन्होंने रास्ते में एक पारिवारिक झगड़ा देखा, जिसमें कुछ लोग मारे गए। व्यथित होकर वे शीघ्र ही बुद्ध के पास गए और उन्हें सब कुछ बताया। बुद्ध ने उनके मन की प्रगति को जानकर उन्हें उपदेश देते हुए कहा:

[237] योधा कोसि मनुस्सेसु परापनानि ह्यंसति,॥
अस्मा लोक परमह च उभय धंसते नरो॥ ॥

[238] यो च मेट्टेना सिट्टेना सब्बापानानुकमपति,॥
बहु1 सो पसवति पुन्नं तेन तदिसाको2 नरो॥ ॥

[239] सुभासितस्स सिक्खेथा समनुपासनास च,॥
एकासनस्स रहो चित्तवुपासमस्स चति ॥ ॥

[237] जो कोई भी यहाँ साथी प्राणियों को पीड़ा पहुँचाता है,
इस लोक से और परलोक से, दोनों से,
यह व्यक्ति उन सभी अच्छाइयों को खो सकता है जो वे देते हैं। [1]

[238] जो कोई प्रेमपूर्ण हृदय से
प्रत्येक प्राणी पर दया भाव रखता है, ऐसा व्यक्ति
पुण्य का प्रचुर भंडार उत्पन्न करता है।

[239] [165] अपने आप को धार्मिक उच्चारण में प्रशिक्षित करो,
हमेशा बुद्धिमान और अच्छे लोगों की प्रतीक्षा में,
गुप्त एकांत स्थान की खोज में,
और शांत और एकाग्र मन में।

इन श्लोकों के समाप्त होने पर, वारण ने अंतर्दृष्टि विकसित करते हुए अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

[1] टीका का अंतिम वाक्यांश, 'दोनों लोकों में समाहित अच्छाई और सुख।'

3.7 [176] वारणत्थेरा के श्लोक पर टीका
योऽधा कोचि मनुस्सेसु से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वारण का है। इसका उद्गम क्या है? इन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस या उस जन्म में पुण्य कर्म संपन्न किए, और भगवान तिस्सा के जन्म से भी पूर्व, बानवे युग (कप्पा) पूर्व, एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, ब्राह्मणों की कलाओं और विज्ञानों में निपुण (पारागू) हुए, संसार का त्याग कर तपस्वी बन गए और अपने चौवन हजार शिष्यों को मंत्रों का उपदेश देते हुए निवास किया। उस अवसर पर भी, भगवान तिस्सा के तुषिता शरीर से बोधिसत्व रूप में अपने अंतिम जन्म में उनकी माता के गर्भ में अवतरित होने के कारण एक भयंकर भूकंप आया था। यह देखकर भीड़ भयभीत और उत्तेजित हो गई, और उस तपस्वी के पास जाकर भूकंप का कारण जानने लगी। उन्होंने भीड़ को यह कहकर सांत्वना दी कि यह बुद्ध के आगमन का पूर्वाभास है: "महान बोधिसत्व अपनी माता के गर्भ में अवतरित हुए; इसी कारण यह भूकंप आया; इसलिए आपको डरने की आवश्यकता नहीं है।" उन्होंने बुद्ध को अपने ध्यान का विषय बनाकर उनके प्रति श्रद्धा (पीटि) का भाव भलीभांति अनुभव किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे, और जब बुद्ध का उदय हुआ, तब वे कोसल राज्य के एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। वारण नाम प्राप्त करने के बाद , वयस्क होने पर उन्होंने वन में रहने वाले एक थेरा के समक्ष सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उनका पुण्य (पसाद) प्राप्त किया, भिक्षु बन गए और भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया। एक दिन, वे बुद्ध की सेवा में जा रहे थे, तभी रास्ते में उन्होंने देखा कि उच्च कुल के लोग (अहीनकुले) आपस में झगड़ा करने के बाद मर गए हैं। उन्हें पश्चाताप हुआ और उन्होंने मन ही मन कहा, "इन प्राणियों ने परस्पर शत्रुता के कारण अपने प्राणों का विनाश कर लिया है।" वे भगवान बुद्ध के समक्ष गए, जिन्होंने उनके मन के भाव को समझकर उन्हें उचित उपदेश देने के लिए तीन श्लोक कहे।

237. "यहाँ मनुष्यों में से जो कोई भी,

इससे अन्य प्राणियों को परेशान करता है

इस दुनिया से और साथ ही दूसरी दुनिया से भी,

वह व्यक्ति दोनों से गिर जाता है (धंसते)।

238. "दूसरी ओर जो कोई भी सहानुभूति रखता है

अपने हृदय से सभी जीवित प्राणियों को

दयालु प्रेम, ऐसा व्यक्ति,

वास्तव में, इससे बहुत लाभ होता है।

239. “अच्छे भाषण का प्रशिक्षण प्राप्त करें,

साथ ही भिक्षुओं की सेवा करना; प्रशिक्षण देना

खुद को अकेले बैठने के लिए

एकांत के साथ-साथ शांति भी

आपके मन का (चित्तवुपसमा)।

वहाँ, योऽधा कोचि मनुस्सेसु का अर्थ है: यहाँ, मनुष्यों में से कोई भी, चाहे वह क्षत्रिय योद्धा हो, ब्राह्मण हो, व्यापारी हो, शुद्ध श्रमिक हो, गृहस्थ हो या भिक्षु हो, यहाँ मनुष्य का वध करना सर्वोच्च प्राणी को दर्शाता है; इस प्रकार, इसे समझना चाहिए। परपाणानि हिंसति का अर्थ है: वह अन्य प्राणियों को हानि पहुँचाता है और उनकी हत्या करता है। अस्मा लोका का अर्थ है: इस लोक से; परम्हा का अर्थ है: दूसरे लोक से। उभया धंसते का अर्थ है: वह दोनों लोकों से विमुख हो जाता है; वह दोनों लोकों से संबंधित कल्याण और सुख से विमुख हो जाता है; यही इसका अर्थ है।

दूसरों पर अत्याचार करने के गुणधर्म (धम्म) को दर्शाने के बाद, अब दूसरों पर अत्याचार न करने के गुणधर्म (धम्म) को समझाने के लिए, बुद्ध ने “यो च मेत्तेना” से शुरू होने वाला दूसरा श्लोक कहा। यहाँ, मेत्तेना चित्तेना का अर्थ है: प्रेम और करुणा से परिपूर्ण मन; दूसरे शब्दों में, किसी न किसी प्रकार की अनुभूति (अप्पना) की प्राप्ति। सब्बपाणौकम्पति का अर्थ है: सभी प्राणियों के प्रति प्रेम और करुणा से परिपूर्ण, मानो अपने सगे पुत्र के प्रति। बहुं हि सो पसावती पुण्यं तादिसाको नरो का अर्थ है: जो व्यक्ति इस प्रकार प्रेम और करुणा से भरा रहता है, वह उचित रूप से बहुत से पुण्य कर्मों का फल प्राप्त करता है।

अब, बुद्ध ने तीसरे श्लोक का आरंभ सुभाषितस से किया, ताकि उन्हें शांत भाव (समत्था) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) तथा उनके घटकों (संभारा) के अभ्यास का निर्देश दिया जा सके। वहाँ, सुभाषितस सिक्खेथा का अर्थ है: सुविचारित परियत्ति सत्य (धम्म) को, जो कुछ इच्छाओं (अपिचा) आदि पर शिक्षा (कथा) के रूप में वर्गीकृत (भेद) है, श्रवण, स्मरण और सर्वव्यापी प्रश्नोत्तर आदि के माध्यम से सीखना चाहिए। समणूपासनस्स च का अर्थ है: बार-बार (कालें कालं) उन भिक्षुओं के पास जाकर जिन्होंने बुरे कर्मों का अंत (समिता) कर दिया है, अच्छे मित्रों और भक्तों के पास जाकर, उनकी सेवा करने और उचित अभ्यास (पटिपत्ति) के लिए उनके निकट रहना सीखना चाहिए। एकासनस च रहो चित्तवूपसमस्स च का अर्थ है: जब निरंतर अभ्यास (अनुब्रुहन्तस्स) अकेले, बिना किसी साथी के, शारीरिक एकांत में करते हुए, व्यक्ति को एकांत में मानसिक अभ्यास में निरंतर लगे रहकर अपनी सीट पर बैठना सीखना चाहिए; इस प्रकार, निरंतर मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) में संलग्न होकर और ध्यान (भावना) की साधना के शिखर (मत्तक) तक पहुँचकर, व्यक्ति को अपने मन को विभिन्न प्रकार के दुराचार (किलेसा) से मुक्त करना सीखना चाहिए। वास्तव में, जो भी दुराचार था, वह अनुशासित आचरण, जैसे उच्च नैतिकता (अधिशील), के माध्यम से शांत और दूर हो गया। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सही मार्ग और फल प्राप्ति (मग्ग फलसिक्खा) में अनुशासित आचरण ने निश्चित रूप से विद्यार्थी के मन को शांत किया है। श्लोकों के अंत में, थेरा ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर विकास किया और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः, अपदान में कहा गया है:—

“हिमव में प्रवेश करने के बाद,

फिर मैंने मंत्र (मंटे) सिखाए। पचास

चार हजार विद्यार्थियों ने भाग लिया

मुझे।

वे सभी अत्यंत उन्नत (अधिता) थे।

वेदों के ज्ञाता; वे पहुँच चुके थे

छह घटकों में पूर्णता

क्षेत्र (चळांग); द्वारा समर्थित

वे अपने ही विज्ञान में निवास करते थे।

हिमावन्त।

शरीर से विमुख होकर

तुषिता, सर्वप्रसिद्ध दिव्य युवक,

विचारशील और सचेत का उदय हुआ

उसकी मां का गर्भ।

जब आत्मजागृत बुद्ध आए तो

उठो, दस हजार संसारों

कांप उठा। अंधों को उनकी आंखें वापस मिल गईं।

वह दृश्य, जब नेता प्रकट हो रहे थे।

इस पूरी पृथ्वी में हर तरह से कंपन हुआ;

घोषणा की आवाज सुनने के बाद

(निग्घोसा), मनुष्य की भीड़ बन गई

उत्साहित।

सभी पुरुष एक साथ आए और मेरे पास पहुँच गए

उपस्थिति (और कहा); धरती कांप उठी

इसका क्या परिणाम होगा?

तब मैंने उनसे कहा: 'डरो मत;

आपको कोई खतरा नहीं है। आप सभी को

चिंता न करें; यह घटना शुभ है।

लाभ (सुवत्थिको)।

आत्मजागृत बुद्धों के आठ कारणों के साथ,

यह धरती पहले कांपती थी; इसी प्रकार संकेत मिलते थे।

दिखाई देते हैं; प्रकाश अत्यंत महान है।

निःसंदेह, बुद्ध सर्वश्रेष्ठ स्वामी हैं।

दृष्टि की हानि उत्पन्न होगी;

अधिकांश लोग यह बात अच्छी तरह जानते हैं, मैंने उनसे बात की थी।

पांच सिद्धांत।

पाँच उपदेशों को सुनने के बाद और लगभग

बुद्ध का प्रकट होना भी जो कि

हासिल करना मुश्किल था, वे उत्साहित हो गए।

और अच्छे मन वाले; प्रसन्न और आनंदित, वे

कहा:

यह बानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने अपनी व्याख्यात्मक व्याख्या प्रस्तुत की।

(बुद्ध के प्रकट होने के) चिन्ह का;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;
यह मेरे व्याख्यात्मक कार्य का फलदायी परिणाम है।
स्पष्टीकरण।
मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।
बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।
बाहर।"
थेरा वारण के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(177):पासिका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (177) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
177. पासिका

इस बुद्ध युग में कोसलन ब्राह्मण (पुजारी) के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने भगवान (बुद्ध) को दो चमत्कार करते देखा, [1] और विश्वास किया। भिक्षु संघ में प्रवेश करने के बाद, भिक्षु अध्ययन करते समय वे बीमार पड़ गए। उनके अपने लोगों ने उनकी देखभाल की और उन्हें स्वस्थ किया। लेकिन अपनी स्वस्थता से अत्यधिक प्रेरित होकर, उन्होंने अपना अध्ययन जारी रखा और छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त की। इसके बाद वे वायुमार्ग से अपने लोगों के पास गए और उन्हें शरण और उपदेशों में स्थापित किया। और उनके कुछ रिश्तेदार, इस प्रकार स्थापित होकर, स्वर्ग में पुनर्जन्म लेकर मर गए। जब पासिका ने भगवान (बुद्ध) से मुलाकात की, तो उन्होंने उनके रिश्तेदारों के स्वास्थ्य के बारे में पूछा। और पासिका ने इस प्रकार उत्तर दिया:

[240] एकोपि साधो मेधावी अस्सद्धनिधा नातिनाऽ,॥
धम्मत्थो सिलसम्पन्नो होति अत्थया बन्धुनान्, ॥ ॥

[241] निग्ग-अयहा अनुकंपाय कोडितो अनातयो मया,॥
सतीबंधवपेमेन करं कत्वान् भिक्खुसु॥ ॥

[242] ते अभतीता कालांकटा पट्ट ते तिविधाऽ सुखं,॥
भतरो मयुहं माता च मोदन्ति कामाकिमिनो ति ॥ ॥

[240] यद्यपि अविश्वासी रिश्तेदारों में से केवल मैं ही था,
जिसके पास पर्याप्त विश्वास और बुद्धि थी, जिसने धम्म के मार्ग को समझा
और सद्गुण के साथ, यह उनके भले के लिए था।

[241] देखो! मेरे अपने लोग, जिन्हें मैंने दयावश
फटकारा, मेरे द्वारा प्रेरित और शिक्षित किए गए,
उनके स्नेह और उनकी भक्ति के कारण
, भिक्षुओं के प्रति अच्छे कार्य किए।

[242] जो अब इस दुनिया से चले गए हैं, इस काल को समाप्त करते हुए,
वे देवताओं के बीच बहुत सुख पाते हैं।
मेरे भाई वहाँ हैं, मेरी माँ भी,
उन सुखों के लिए प्रसन्न हैं जिनका वे अब आनंद लेते हैं।

[1] पृष्ठ 36, नोट 1 देखें।

3.8 [177] वस्सिकाथेरा के श्लोक पर टिप्पणी

एको पि सद्धो मेधावी से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वस्सिका का है। इसका उद्गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संपन्न किए, और एक परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे बुद्धि प्राप्त कर चुके, तो एक दिन संयोगवश उनकी मुलाकात गुरु से हुई, वे धर्मपरायण हो गए और उन्हें लहरदार पत्तों वाले अंजीर के फल अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने अपने बार-बार के जन्मों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया, और जब इस बुद्ध का उदय हुआ, तब वे कोसल राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए; वस्सिका नाम प्राप्त करने के बाद, जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने, जैसा कि गुरु के दो चमत्कारों में कहा जाता है, उचित रूप से धर्मपरायणता प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करते हुए वे बीमार पड़ गए। तब उनके रिश्तेदारों ने चिकित्सक द्वारा बताई गई दवा से उनका इलाज किया, जिन्होंने उनकी संपूर्ण जांच (परिदिष्ठा) की थी, और उन्हें रोगमुक्त कर दिया। रोग से ठीक होने के बाद, वे पश्चाताप से भर गए, गहन ध्यान (भावना) में लीन हो गए और छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बन गए। इसलिए, अपदान में ऐसा कहा गया है ।

"जंगल के बीच देखने के बाद,

बुद्ध अत्थादस्सी, प्रसिद्धि से परिपूर्ण, मैं

वह धर्मपरायण और नेक हृदय वाला हो गया।

और उन्होंने उसे अंजीर भेंट की।

अठारह युग (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने फल दिए थे; मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

फल चढ़ाने का परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

यद्यपि छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बनने के बाद, वे अपने सगे-संबंधियों के पास गए, आकाश में खड़े होकर सत्य (धम्म) का उपदेश दिया और उन्हें (तीन) शरणों और नैतिक उपदेशों में दृढ़ किया। उनमें से कुछ शरणों और नैतिक उपदेशों में दृढ़ होने के कारण स्वर्ग (सग्ग) में पुनर्जन्म लेकर मर गए। तब गुरु ने बुद्ध की सेवा करने के लिए उनके निकट आए हुए उनसे पूछा, "हे वस्सिका! आपके सगे-संबंधियों का स्वास्थ्य कैसा है?" उन्होंने अपने सगे-संबंधियों के लिए किए गए उपकार के बारे में गुरु को बताने के लिए तीन श्लोक कहे:

240. यहाँ तक कि एक अकेला बुद्धिमान व्यक्ति भी जो

पवित्र आस्था (सद्धो), में खड़ा था

सत्य (धम्म), नैतिक गुणों से युक्त

उपदेश उसके संबंधित लोगों के लिए लाभदायक है

जो रिश्तेदार यहाँ कमी महसूस कर रहे हैं

पवित्र आस्था।

241. "उन पर दया करके, मेरा

रिश्तेदारों को (निग्गा) के अधीन रखा गया था।

और मेरे द्वारा आग्रह किया गया (कोडिटा), के कारण

मेरे सगे-संबंधियों के प्रति मेरा प्रेम (पेमा)

उन्हें सम्मानजनक बनाना

भिक्षु। जब उनकी मृत्यु हुई और वे गुजर गए

वे दूर (अभतीत) पहुँच चुके हैं

परम आनंदमय तावतिंसा को; मेरी माता

और भाई खुश हैं क्योंकि वे

उन्हें वही मिल गया जो वे चाहते थे।

वहाँ, प्रथम श्लोक का अर्थ है: सद्धो का अर्थ है: वह व्यक्ति जो कर्मों के फल और तीन रत्नों में आस्था के कारण पवित्र आस्था रखता है; मेधावी का अर्थ है: एक बुद्धिमान व्यक्ति जो अपने कर्मों के ज्ञान आदि जैसे ज्ञान से जुड़ा होने के कारण बुद्धिमान है; धम्मत्तो का अर्थ है: गुरु के उपदेश के कर्म (धम्म) में, साथ ही पारलौकिक सत्यों (धम्म) में रहने की स्थिति के कारण; शीलसंपन्नो का अर्थ है: अच्छे नैतिक आचरण (आचार), मार्ग के नैतिक अभ्यास और फल के माध्यम से नैतिक उपदेशों से संपन्न; एको पि का अर्थ है: वह अकेला है; असद्धानं का अर्थ है: अविश्वासी का, जैसा कि कहा गया है, पवित्र आस्था के अभाव के कारण; इधा का अर्थ है: इस संसार में। ñātīnaṃ का अर्थ है: संबंधियों का, क्योंकि इसका अर्थ है "ये हमारे हैं"; bandhu का अर्थ है: इसी प्रकार, वे रिश्तेदार हैं, क्योंकि इसमें प्रेम के बंधन का भाव निहित है; atthāya hoti का अर्थ है: उन संबंधित रिश्तेदारों के कल्याण के लिए है जिन्होंने "बंधु" नाम प्राप्त किया है ।

उक्त अर्थ को दर्शाने के लिए, एक और श्लोक "निग्ग-अयह" से शुरू होता है, जिससे यह सामान्य (साधारणतो) होने के बजाय स्वयं को संदर्भित करता है। वहाँ, निग्ग-अयह अनुकम्पाय, कोदितो ञातयो मया का अर्थ है: मैंने अपने रिश्तेदारों को अपने अधीन (निग्ग-अहेत्वा) रखने के बाद इस प्रकार सलाह दी: — अब भी तुम दरिद्र हो, कोई अच्छा कर्म नहीं किया; भविष्य में फिर कभी किसी प्रकार के सर्वांगीण दुराचार (किलेसा) में लिप्त मत होना। ञ्तिबंधवपेमेना का अर्थ है: इस प्रकार हुए प्रेम (पवत्त) के कारण: "ये हमारे रिश्तेदार हैं;" कारं कट्वान भिक्खुसु का अर्थ है; मेरे अनुशासन का उल्लंघन न कर पाने के कारण (अतिक्कमितुं), वे धर्मपरायण हो गए हैं और उन्होंने भिक्षुओं को वस्त्र आदि जैसी आवश्यक वस्तुएँ भेंट करके तथा उनकी सेवा करके सम्मान और आतिथ्य सत्कार किया है; अब्भतीता कालंकता का अर्थ है: मृत्यु के बाद, वे इस संसार से परे चले गए हैं। ते का अर्थ है: फिर से एक मात्र कण (निपातनत्त)। तिदवं सुखं का अर्थ है: दिव्य जगत से संबंधित आनंद; दूसरे शब्दों में, उन्होंने तावतिंस स्वर्ग प्राप्त कर लिया है जिसकी उन्हें चाह थी (इत्तं)। परन्तु वे कौन थे? उन्होंने कहा: “भातरो मयहं माता च, मोदन्ति कामकामिनो,” का अर्थ है: वे अपनी इच्छा के अनुसार भौतिक प्रकृति के इंद्रिय सुखों से संपन्न होकर विशेष रूप से प्रसन्न होते हैं, यही इसका अर्थ है।

थेरा वस्सिका के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(178):यासोजा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (178) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
178. यासोजा
बुद्ध युग में सावत्थी नगर के द्वार पर एक मछुआरे के गाँव में, 500 मछुआरे परिवारों के मुखिया के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम यशोजा रखा गया। एक दिन वयस्क होने पर वे मछुआरों के पुत्रों के साथ अचिरवती नदी में मछली पकड़ रहे थे। जाल डालते ही उन्हें एक बड़ी सुनहरे रंग की मछली मिली। उन्होंने उसे राजा पसेनदी (प्रसेनजित) को दिखाया, जिन्होंने कहा: 'परमेश्वर (बुद्ध) मछली के रंग का कारण जानते हैं।' और परमेश्वर (बुद्ध) ने उन्हें बताया कि कस्सपा बुद्ध के समय में यह मछली एक दुष्ट भिक्षु थी, जो तब से नरक में कष्ट भोग रहा था; उसकी बहनें अभी भी वहीं थीं, लेकिन उसके भाई ने थेरा के रूप में जीवन को सिद्ध कर लिया था; और फिर उनके कल्याण के लिए उन्होंने कपिल सूत्र का उपदेश दिया। [1]

तब यशोजा ने गहन भाव से संसार का त्याग कर दिया, और अपने साथियों का भी। उनके साथ जेतवन में भगवान (बुद्ध) की सेवा करने जाने और उनके आगमन पर शोर मचाने के कारण उन्हें विदा किए जाने का वृत्तांत उदाना में मिलता है। [2] विदा होने के बाद, वग्गुमुदा

नदी के तट पर निवास करते हुए, यशोजा ने एक उच्च नस्ल के घोड़े की तरह अपने साहस को जगाया, प्रयास किया और परिश्रम किया जब तक कि उन्होंने छह प्रकार का अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त नहीं कर लिया। इसके बाद भगवान ने उन्हें बुलवाया। और वे सभी विशेष तपस्याओं का अभ्यास करने के कारण [3] दुबले-पतले और बदसूरत हो गए थे। तब भगवान ने उनके आत्म-त्याग की इस श्लोक में प्रशंसा की:

[243] कापापब्बांगसांककासो किसो धमनिसंथातो,॥
मत्तान्नु अन्नपानमहि आदिनामनसो नरो॥ ॥

[244] फुṭṭहो [31] ḍaṃsehi makasehi araññasmiṃ ब्रहावणे,॥
नागो संगमसीसेवा सतो तत्राधिवासये॥ ॥

[245] यथा ब्रह्मा तथा एको यथा देवो तथा दुवे,॥
यथा गामो तथा तयो कोल्हालां ततुत्तरिन्ति॥ ॥

[243] देखो! यहाँ एक आदमी है जिसका शरीर इतना पीला और कमजोर है;
उसके जोड़ बेंत की गांठदार टहनियों की तरह हैं, और
उसकी नसों का पतला जाल तीखा है।
भोजन और पेय में संयमी,
उसकी आत्मा न तो कुचली हुई है और न ही उदास।

[167] और यशोजा ने एकांत प्रेम की इतनी प्रशंसा की, और इस प्रकार सिद्धांत का उपदेश दिया:

[244] विशाल जंगल में, विशाल वनों में,
भले ही मैं मक्खी और मच्छर से प्रभावित हो जाऊं, फिर भी मैं योद्धा-हाथी की तरह युद्ध के अग्रभाग में, सचेत और सतर्क होकर घूमूंगा । [4]

[245] अकेला मनुष्य ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) के समान है।
और यदि उसका एक साथी हो तो वह देवदूतों के समान है।
तीन लोगों का समूह गाँव के समान है।
एक से अधिक लोगों के होने पर शोरगुल वाली भीड़ के समान है।

[1] मैं इस सूत्र की पहचान नहीं कर सकता।

[2] उदाना, iii., Ī 8. उस कृति में, थेरा की कथा के मद्देनजर, यह दिलचस्प है कि भगवान (बुद्ध), यशोजा के अनुयायियों को फटकारते हुए, उनकी तुलना शोर मचाने वाले मछुआरों से करते हैं।

[3] ये भारतीय तपस्वियों द्वारा स्वयं को दी जाने वाली यातनाएँ नहीं थीं, बल्कि धुतंग थे, जिनमें से सभी मिलिंद, द्वितीय, खंड 6 में दिए गए हैं।

[4] = XXXI.

3.9 [178] यशोजत्थेरा के श्लोक पर टीका

कालपब्बंगसंकासो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा यशोजा का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, वे विपस्सी बुद्ध के समय में एक मठ के संरक्षक (आरमगोपका) के परिवार में पुनर्जन्म हुए; जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्होंने विपस्सी बुद्ध को आकाश में विचरण करते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें रोटी फल (लाबुजफल) अर्पित किया।

उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने बार-बार जन्म लेकर देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और सावत्थी नगर के द्वार पर स्थित एक मछुआरे के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, जो पाँच सौ परिवारों में सबसे बड़ा था; उनका नाम योषज रखा गया। वयस्क होने पर उन्होंने अपने साथी मछुआरों के पुत्रों के साथ अचिरवती नदी में मछली पकड़ने के लिए जाल डाला। तभी एक सुनहरे रंग की बड़ी मछली जाल में आ गई। उन्होंने उसे राजा पसेनदी को दिखाया। राजा ने मन ही मन कहा, "भगवान ही इस सुनहरे रंग की मछली के रंग का कारण जानते हैं," और मछली को पकड़कर भगवान को दिखाया। भगवान बुद्ध ने इस प्रकार कहा: "यह व्यक्ति, आत्मज्ञानी बुद्ध कस्सपा के युग के पतन के समय (ओसक्कमहा) भिक्षु बनकर, अपने जीवन को गलत ढंग से (मिच्छा) व्यवस्थित (पटिपज्जंतो) करके, उस युग को (सासन) पीछे धकेल (ओसक्कपेटि) दिया, और नरक में पुनर्जन्म लिया। एक बुद्ध के काल तक (एकं बुद्धन्तरं) नरक में रहने के बाद, वह वहाँ से निकलकर अचिरवती नदी में मछली के रूप में पुनर्जन्म लिया।" इस मछली ने अपनी बहन के नरक में उत्पन्न होने और अपने भाई की स्थिति का वर्णन किया। थेरा ने परिनिर्वाण प्राप्त किया और कपिलसुत्त को इस व्यक्ति की एक कहानी के लिए उपदेश दिया।

गुरु की शिक्षा सुनकर यशोजा पश्चाताप से भर गए, अपने साथियों के साथ गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बन गए और एक उपयुक्त स्थान पर निवास करते हुए एक दिन अपने समूह के साथ भगवान बुद्ध को प्रणाम करने के लिए जेतवन गए। उनके आगमन पर मठ में जोर-शोर से शोरगुल मच गया, बैठने-बिस्तर आदि की व्यवस्था की जा रही थी। यह सुनकर भगवान बुद्ध ने यशोजा और उनके समूह को विदा कर दिया (पम्नामेशी); इस प्रकार, इसका पूरा वर्णन उदाना में वर्णित तरीके से समझा जाना चाहिए। हालाँकि, विदा किए जाने के बाद, पूज्य यशोजा पश्चाताप से भर गए, एक उत्तम नस्ल के घोड़े के समान, जिसे विशेष रूप से कोड़े मारे गए हों, अपने समूह के साथ वग्गुमुदाय नदी के किनारे रहने लगे, परिश्रम करते हुए आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर वृद्धि करते रहे और व्रत (वस्सा) के दौरान छह प्रकार के अलौकिक ज्ञान से युक्त अरहंत बन गए। अतः, क्या अपदान में ऐसा कहा गया है :

"बंधुमती नगर में, मैं था

फिर आश्रम का संरक्षक (आरामिका)।

मैंने स्टेनलेस स्टील से बनी बुद्ध प्रतिमा को उड़ते हुए देखा।

सीधे आकाश की ओर।

मैं अपने साथ ब्रेड फ्रूट लेकर आया था।

मैंने इसे सर्वश्रेष्ठ बुद्ध को अर्पित किया।

प्रसिद्धि से परिपूर्ण, जिसने इसे स्वीकार कर लिया जबकि अभी भी

आकाश में खड़े रहने के अलावा और कुछ नहीं।

मुझे तो इसका अच्छा प्रचार लगा।

समृद्धि (विटिसं जनानो) लाना

तत्काल आनंद (diṭṭhadhammasukhavāho),

बुद्ध को फल अर्पित करने के बाद

स्पष्ट रूप से धर्मनिष्ठ हृदय से।

तब मुझे भरपूर उत्साह प्राप्त हुआ और

मेरे लिए सबसे उत्तम सुख

क्योंकि मेरा जन्म यहाँ-वहाँ हुआ था, रत्न

गहना लेकिन अचानक प्रकट हो गया।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने फल अर्पित किया; मैं करता हूँ

किसी भी बुरी सत्ता को याद नहीं; यह

फलदान का फलदायी परिणाम यही है।

(फलदान)

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

गुरु ने पूज्य योसोजा को उनके अनुयायियों सहित बुलवाया, क्योंकि वे छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत थे। उन्होंने उनसे ध्यान की ऐसी उचित प्राप्ति (समापत्ति) के विषय में वार्तालाप किया जो स्थिर (आनेंज) रहती है। उन्होंने सभी प्रकार के तपस्या (धुतंग धम्म) का भी पालन किया। इसी कारण उनका शरीर दुबला-पतला, जर्जर और कुरूप था। भगवान बुद्ध ने उनकी उस परम इच्छाहीनता की प्रशंसा करते हुए प्रथम श्लोक कहा।

213. "शरीर के अंगों के कुछ हिस्से काले दिखाई देते हैं,

पतली और नसों से भरी हुई;

मनुष्य अपने खाने की सीमा को समझता है

और शराब पीना और आलस्य से मुक्त होना-

मन वाला।"

वहाँ, कालपब्बंग संकासो का अर्थ है: उसके अंग (अंग) दंत लता (लता) के जोड़ों (पब्ब) के समान हैं, क्योंकि उसके शरीर के पतले, विकृत (दुसंठित) भाग (अवयव) हैं, मांस के एकीकरण (उपचय) के लुप्त (विगमना) होने के कारण; इसलिए, उसने कहा; "किसो धमानी समथतो।" किसो का अर्थ है: धनिक तपस्या के उचित अभ्यास के कारण शरीर पतला; धमानीसंथतो का अर्थ है: उसका शरीर फैला हुआ (वितत), मांस और रक्त की कमी के कारण प्रमुख (पाकटी) स्नायु (कंढर) और शिरा (सिरा) हैं; उसका शरीर (गत्त) शिराओं से फैला हुआ है। मत्तञ्ञा का अर्थ है: प्राप्त करने, ग्रहण करने, उपयोग करने और देने में अपनी मात्रा (पमाणञ्ञु) को जानता है। अदीनमणसो का अर्थ है: अनासक्त मन और सजग व्यवहार वाला व्यक्ति। नारो का अर्थ है पुरुष; धीरज रखने वाला पुरुष, जो मनुष्य के बोझ (धुरा) को उठाने के कारण पुरुषत्व के लक्षणों (लक्खण) से युक्त है; यही इसका महत्व है।

गुरु द्वारा इस प्रकार प्रशंसा किए जाने पर, थेरा ने भिक्षुओं को सत्य (धम्म) सिखाने के उद्देश्य से दो श्लोक कहे, और इस प्रकार (मुखेना) उन्हें अपनी धीरज (अधिवासन), सहनशीलता (खन्ती), परिश्रम और एकांत में अपने विशेष आनंद के बारे में बताया, जो प्रशंसा की स्थिति के अनुरूप था।

244. “मच्छरों और मक्खियों द्वारा काटा गया”

घने जंगल में, मैं ठीक था

मुझे पता है कि मैं वहां अपना धैर्य बनाए रख रहा हूं।

जैसे किसी हाथी का सिर

युद्धस्थल।

245. “जिस प्रकार ब्रह्मा का नियम है, उसी प्रकार”

अकेले; एक दिव्य प्राणी के अनुसार

इसी प्रकार हम भिक्षुओं में से दो;

जैसे गाँव (मठ) भी

हम भिक्षुओं में से तीन थे; मैं उससे परे था।

झगड़ा (कोलाहला, कोलाहल)।

वहाँ, Nāgo saṅgāmasīse va का अर्थ है: जिस प्रकार एक सुसंस्कृत (ājāneyyo) हाथी युद्ध के मैदान (yuddhammaṇḍala) में तलवारों, भालों (satti), बरछी (tomara) आदि के प्रहारों को सहने के बाद शत्रु (parasenaṃ) की सेना को कुचल देता है (viddhaṃseti); araññasmiṃ brahāvane का अर्थ है: उसी प्रकार, एक भिक्षु जंगल में मच्छरों आदि के खतरों को दूर करता है; Sato का अर्थ है: चिंतनशील (sampajāno) होकर सहन करना चाहिए; इस प्रकार सहन करने के बाद, ध्यान (bhābanā) की शक्ति से मार की सेना को कुचल देना चाहिए।

यथा ब्रह्मा का अर्थ है: वह आनंदमयी जीवन व्यतीत करता है, सदा ध्यान के आनंद में डूबा रहता है, मानसिक क्रोध से मुक्त (रहितो), ब्रह्मा के समान एकांत में रहता है; तथा एको का अर्थ है: एक भिक्षु भी इसी प्रकार बिना किसी साथी के एकांत में सुखमयी जीवन व्यतीत करता है, एकांत के आनंद में डूबा रहता है। वास्तव में, यह कहा गया है कि “एकल भिक्षु का भिक्षुत्व सुख श्रेष्ठ (पणित) है।” इसके द्वारा वह इस प्रकार उपदेश देता है कि एकांत में रहने वाला भिक्षु “ब्रह्मसमो (ब्रह्मा के समान)” है। यथा देवो तथा द्वे का अर्थ है: जिस प्रकार दिव्य प्राणियों के बीच मानसिक क्रोध (अंतरन्तरा) हो सकता है, उसी प्रकार दो भिक्षुओं के एक साथ रहने में भी टकराव हो सकता है; अतः यह कहा गया है कि एक भिक्षु अपने साथी के साथ रहने से “देवसमो” (दिव्य प्राणी के समान) हो जाता है। यथा गामो तथा तयो का अर्थ है: एकांतवास नहीं; तीन भिक्षुओं का एक साथ रहना गाँव में रहने के समान है, जैसा कि उसी पाठ (पाठ) में वर्णित है; यही इसका महत्व है। कोलाहलनततुत्तरिं का अर्थ है: उन तीन से अधिक अनेक लोगों का एक साथ रहना, शोरगुल मचाने वाले लोगों की भीड़ (कोलाहलन) के समान है; इसलिए, एकांतवास करना ही उचित है; यही इसका महत्व है।

थेरा यशोजा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(179):सतिमत्तिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (179) ------>>>> अगला

अध्याय III.

तीन श्लोक

179. सातिमत्तिया

बुद्ध युग में मगध राज्य में एक ब्राह्मण पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने आवश्यक योग्यताएँ [1] धारण करते हुए वनवासी भिक्षुओं के बीच भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अध्ययन एवं अभ्यास के माध्यम से छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त की। इसके बाद उन्होंने भिक्षुओं को शिक्षा दी और कई लोगों को शरणाश्रम और उपदेशों का प्रचार किया। विशेष रूप से एक परिवार को उन्होंने आस्था और विश्वास में परिवर्तित किया; और उस घर में उनका बहुत स्वागत किया गया, जहाँ उनकी इकलौती पुत्री, एक सुंदर, प्यारी लड़की ने आदरपूर्वक उन्हें भोजन कराया।

एक दिन मारा (मृत्यु का देवता/राक्षस), उसे परेशान करने और अपमानित करने की योजना बनाते हुए, उसका रूप धारण कर लिया और उस युवती के पास जाकर उसका हाथ पकड़ लिया। लेकिन युवती ने महसूस किया कि यह मानवीय स्पर्श नहीं है, इसलिए उसने अपना हाथ छुड़ा लिया। लेकिन घर के अन्य लोगों ने यह देख लिया और थेरा पर से उनका विश्वास उठ गया। थेरा को कुछ भी पता नहीं था, लेकिन अगले दिन उसने उनके बदले हुए व्यवहार को देखा। और यह समझते हुए कि मारा ने कुछ किया है, उसने उनके गले से मरे हुए कुत्ते को छुड़ाने की प्रतिज्ञा की और उनसे पूछा कि क्या हुआ था। और घर वालों ने उसका स्पष्टीकरण सुनकर उससे क्षमा मांगी, [168] और घोषणा की कि वह स्वयं उसकी सेवा करेगा। थेरा ने इस मामले को इन छंदों में बताया:

[246] अहुतुयहाṃ शुद्ध सद्धा सा ते अज न विज्जति,॥
याṃ तुयहाṃ तुयहमेवेताṃ नत्थी डुकारिताṃ मामा.॥ ॥

[247] अनिच्चा हि कैला सधा इवं दिट्ठा हि सा माया,॥
रज्जन्तिपि विरज्जनिति तथा कियं जियते मुनि॥ ॥

[248] पकाती मुनिनो भट्टाṃ थेका थोकाṃ कुले कुले,॥
पिण्डिकाया कैरिसामि अत्थि जंघाबलं मम' ति.॥ ॥

[246] जो भरोसा तुमने मुझ पर रखा था,
आज वो कायम नहीं है। जो तुम्हारा है, वही तुम्हारा है;
लेकिन इस घर में मैंने कोई बुराई नहीं की है।

[247] आम आदमी का विश्वास क्षणभंगुर और अस्थिर होता है: -
मैंने ऐसा ही देखा है। लोग प्रेम करते हैं और फिर उदासीन हो जाते हैं।
इसके लिए एक पवित्र भिक्षु को क्यों मरना चाहिए?

[248] ऋषि का भोजन थोड़ा-थोड़ा यहाँ,
थोड़ा-थोड़ा वहाँ, एक कुल या दूसरे कुल में पका हुआ रखा है।
मैं अपनी थोड़ी-सी भिक्षा माँगने के लिए घूमूँगा;
मेरे पैर इसके लिए काफी मजबूत हैं। [2]

[1] अर्थात्, चरित्र में विकास की परिपक्वता।

[2] टीका द्वारा इतनी सरलता से समझाई गई यह छोटी कविता, टीका के अभाव में, दो भिक्षुओं (भिक्षुओं) के बीच कर्म आदि पर एक लंगड़े संवाद में विकृत हो गई है। न्यूमैन देखें, उसी स्थान पर।

3.10 [179] सातिमत्तीयत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी

आहु तुयहं पुरे सद्धा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सातिमत्तीय का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और भगवान सिद्धार्थ के समय एक परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके, तो एक दिन उन्होंने गुरु को देखा, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें ताड़ का पंखा (तालवण्टं) भेंट किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और मगध राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। सातिमत्तीय नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर उन्होंने वनवासी

भिक्षुओं की उपस्थिति में भिक्षु दीक्षा ली, क्योंकि हेतु (संतो) से संपन्न होने और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के कर्म के कारण वे छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत बन गए। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है ।

मैंने ताड़ के पत्तों का एक पंखा भेंट किया

हे भगवान सिद्धार्थ, मैंने इसे उठाया था।

अत्यंत योग्य व्यक्ति को, उपयुक्त रूप से ढका हुआ

चमेली (फूल)।

यह चौरानवे युग (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने ताड़ के पंखे का अपना चढ़ावा चढ़ाया;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह ताड़ के पंखे का फलदायी परिणाम है।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्चतर (जादुई) ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बनकर, उन्होंने भिक्षुओं को सलाह और शिक्षा दी; अनेक प्राणियों को सत्य (धम्म) का उपदेश देकर उन्होंने उन्हें शरण और नैतिक उपदेशों में स्थापित किया। उन्होंने एक अन्य परिवार को भी, जो अपात्र था, परम श्रद्धा और भक्ति से परिपूर्ण किया। इसी कारण उस परिवार के लोग थेरा के प्रति विशेष रूप से समर्पित थे। वहाँ, एक विशेष रूप से सुंदर और आकर्षक कन्या ने भिक्षा मांगने आए थेरा का आदरपूर्वक भोजन कराया। फिर एक दिन, मारा ने यह सोचकर कि "इस प्रकार इसकी बदनामी होगी; यह निर्धन हो जाएगा," थेरा का वेश धारण करके गया और कन्या का हाथ पकड़ लिया। लड़की को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि "यह मानवीय स्पर्श नहीं है" और उसने अपना हाथ छुड़ा लिया। यह देखकर घरवालों ने थेरा के प्रति अपनी अनादर (अपसादम्) प्रकट किया। अगले दिन, थेरा ने इस मामले पर बिना कोई विचार किए (अनवज्जेन्तो) उस घर में गए। वहाँ लोगों ने उनका अनादर (अनादरा) किया। उस परिस्थिति पर विचार करने पर (कारणम्) थेरा को मारा की साजिश का पता चला और उन्होंने यह संकल्प लिया (अधित्तहित्वा) कि "कुत्ते के शव को उसके गले में बाँध दिया जाए।" उन्होंने पिछले दिन किए गए उस कृत्य के बारे में स्वयं मारा से पूछा था, जो शव से मुक्ति पाने के उद्देश्य से उनके पास आया था, और उसे डराकर उस मारा को मुक्त कर दिया। यह देखकर घर के स्वामी ने क्षमा मांगते हुए कहा, "आदरणीय महोदय! कृपया मेरी गलती के लिए मुझे क्षमा करें।" उन्होंने आगे कहा, "आदरणीय महोदय! आज से मैं ही आपकी सेवा करूंगा।" थेरा ने उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश देते हुए तीन श्लोक कहे:

246. "पहले तुममें श्रद्धा (सद्धा) थी;

आज वह आस्था मौजूद नहीं है।

जो कुछ भी तुम्हारा है, वह भी तुम्हारा ही है।

यहां तक कि, मेरा कोई बुरा आचरण भी नहीं है।

247. "वास्तव में धार्मिक आस्था अस्थिर होती है और

अस्थाई; इस प्रकार, कि

वास्तव में, पवित्र आस्था देखी गई थी

मेरे द्वारा। वे आसक्त हो जाते हैं (रेज्जंति)।

और अलग भी; वहाँ, क्या होता है

क्या कोई ऋषि हार गया?

248. “ऋषि के लिए भोजन धीरे-धीरे पकाया जाता है”

एक के बाद एक परिवार में थोड़ा-थोड़ा; मैं

भिक्षा के लिए भटकूँगा; मेरे पास है

मेरे पैरों की ताकत।

वहाँ ahu tuyhaṃ pure saddhā, sa te ajja na vijjati का अर्थ है: हे भक्त! इससे पहले, मुझमें आपकी श्रद्धा थी, अर्थात्: "धर्मी आचरण और समभाव वाले स्वामी (समाचारी)" इत्यादि; आज आपको अपनी उस श्रद्धा को प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है। Yaṃ tuyhaṃ tuyhamevetaṃ का अर्थ है: चारों संन्यासियों की आवश्यकताओं का जो भी दान (किया गया है) वह आपका ही हो; मुझे उसकी आवश्यकता नहीं है; वास्तव में, दान प्रसन्न मन से ही किया जाना चाहिए; यही इसका अर्थ है। दूसरे शब्दों में: yaṃ tuyhaṃ tuyhamev'ataṃ का अर्थ है: आज आपने मेरे प्रति जो भी अनादर किया है, वह भी आपका ही है; उसका फल आपको ही भुगतना चाहिए (paccānubhavitabbaṃ); अतः, यही अर्थ है। N'atthi duccaritaṃ mama का अर्थ है: मेरे लिए, दुष्ट आचरण के कारणों का निर्माण करने वाली सभी प्रकार की बुराइयों को अच्छी तरह से काट देने की स्थिति के कारण कोई बुरा आचरण नहीं है, बल्कि सही मार्ग (मग्ग) के माध्यम से है।

अनिच्चा हि चाला सद्धा का अर्थ है: क्योंकि सामान्य लोगों (पुथुज्जन) की धार्मिक आस्था (सद्धा) क्षणभंगुर और अनिश्चित (एकान्तिका) होती है, इसलिए वह घोड़े की पीठ पर रखे लौकी (कम्भण्ड) के समान अस्थिर (चाला) होती है, और भूसे (थुसा) के ढेर पर उखड़े हुए पेड़ के तने के समान अस्थिर (निकात) होती है। एवं दिट्ठा हि समया का अर्थ है: इस प्रकार उत्पन्न हुई वह धार्मिक आस्था तुममें देखी गई है और प्रत्यक्ष रूप से ज्ञात है (पच्चाक्खतो)। राज्जन्ति पिविराज्जन्ति का अर्थ है: इस प्रकार अस्थिरता की स्थिति के कारण, ये प्राणी कभी-कभी एक-दूसरे से जुड़ जाते हैं और मित्रों के साथ संगति के माध्यम से एक-दूसरे के प्रति स्नेह उत्पन्न करते हैं; कभी-कभी वे एक-दूसरे से विरक्त और वैराग्यप्रिय हो जाते हैं। Ta'ttha kiṃ jiyyate muni का अर्थ है: साधारण लोगों के उस आसक्ति और वैराग्य में (पुथुज्जन), ऋषि, भिक्षु को क्या हानि होती है (जिय्यति)? उसका क्या अंश कम हो जाता है (हानी)? यही अर्थ है।

यह दिखाने के लिए कि उसे इस तरह से नहीं सोचना चाहिए: "यदि तुम मेरे द्वारा दी गई आवश्यकताओं को स्वीकार नहीं करोगे, तो तुम अपना जीवन यापन कैसे करोगे (यापेथा)," उसने "पच्चति" से शुरू होने वाला श्लोक बोला। इसका अर्थ है:— मुनिनो का अर्थ है: मिंक का; भट्टं का अर्थ है: पका हुआ भोजन; कुले कुले का अर्थ है एक घर के बाद दूसरे घर में, दिन-प्रतिदिन; थोकं थोकं का अर्थ है: थोड़ा-थोड़ा करके पकाया जाता है; केवल आपके घर में ही नहीं। पिण्डिकाय कारिसामि, अत्थि जंघबलं मम का अर्थ है: मेरे पैरों में शक्ति है; मैं लंगड़ा नहीं हूँ (ओभग्गजंघो); मैं अपंग नहीं हूँ (खंजो) और न ही मुझे पैरों की कोई बीमारी है; इसलिए, मैं भिक्षा और मिश्रित भोजन के लिए घूमूँगा; भिक्षा के लिए घूमने के बाद मैं गुरु के कहे अनुसार इस प्रकार चलता रहूँगा (यापेसामि): “यथा पि भामरो पुप्पं (जैसे मधुमक्खी फूल के अनुसार),” इत्यादि।

थेरा सातिमत्तिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(180):उपाली

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।

आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (180) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
180. उपाली

बुद्ध युग में एक नाई के परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम उपाली रखा गया। वयस्क होने पर उन्होंने अनुरुद्ध और अन्य पाँच भिक्षुओं का अनुसरण करते हुए संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण कर लिया), जब भगवान (बुद्ध) पाली भाषा में वर्णित अनुसार अनुपिया वन में निवास कर रहे थे। [1] अब जब वे भगवान (बुद्ध) से अभ्यास के लिए एक विषय ले रहे थे, तो उन्होंने कहा: 'हे प्रभु, मुझे वन में रहने के लिए मत भेजिए।' 'भिक्षु, वन में रहकर तुम केवल एक ही विषय का अभ्यास करोगे [2] ; यदि तुम हमारे साथ रहोगे, तो तुम पुस्तक ज्ञान [3] और अंतर्दृष्टि दोनों में निपुण हो जाओगे ।' थेरा ने भगवान (बुद्ध) के वचन को स्वीकार करते हुए अंतर्दृष्टि का अभ्यास किया और उचित समय पर अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

[169] इसके अलावा, स्वयं भगवान (बुद्ध) ने उन्हें संपूर्ण विनय-पिटक की शिक्षा दी । और बाद में, उपाली ने अज्जुक, कुरुकच्छक भिक्षु और कुमार-कस्सपा के तीन मामलों में अपने निर्णय के लिए भगवान (बुद्ध) की प्रशंसा प्राप्त करने के बाद, उन्हें विनय जानने वालों में प्रथम स्थान दिया गया। [4]

एक पर्व के दिन, जब वह पातिमोक्खा का पाठ कर रहे थे, [5] उन्होंने भिक्षुओं को इस प्रकार संबोधित किया:

[249] सद्धया अभिनिक्खम्म नवपब्बजितो नवो,॥
मत्ते भजेय कल्याणे शुद्धजीवे अतंदिते॥ ॥

[250] सद्ध्या अभिनिक्खम्म नवपब्बजितो नवो,॥
सङघस्मिं विहारं भिक्खु सिक्खेथा विनयं बुधो॥ ॥

[251] सद्धया अभिनिक्खम्म नवपब्बजितो नवो,॥
कप्पाकप्पेसु कुसालो विहारेया अपुरक्खतो॥ ॥

[249] जिसने आस्था के लिए [6] संसार का त्याग किया है,
और भिक्षु संघ में नवदीक्षित है,
मित्रों, उसे नेक चरित्र वाले,
अपने जीवन में शुद्ध, अटूट उत्साह वाले लोगों को चुनना चाहिए।

[250] जिसने आस्था के लिए संसार का त्याग किया है,
और भिक्षु संघ में नवदीक्षित है,
वह भिक्षु संघ में रहे,
और बुद्धिमानी से [7] उसके अनुशासन के नियमों को सीखे।

[251] जो आस्था के लिए संसार का त्याग कर चुका है,
और भिक्षु संघ में नवदीक्षित है,
जो करना चाहिए या नहीं करना चाहिए, उसमें निपुण है,
उसे अकेले ही अपने मार्ग पर चलना चाहिए।

[1] मनमोहक प्रसंग देखें, विनय ग्रंथ, iii. 224-230.

[2] धुरम.

[3] गंथा-, ब्र. गंध-धुरम्। इसके साथ तुलना करें दीघा निकाय, iii. 94 : गन्थे करोन्ता। धम्मपाल के मन में ताड़ के पत्तों की पांडुलिपियाँ और लिखित विनय था, जबकि उपाली के मामले में, भगवान (बुद्ध) संभवतः उन्हें मौखिक रूप से (उग्घपेसी) सिखाते थे , हालाँकि शीर्ष या विषय-शब्दों को लिखित रूप में दर्ज किया जा सकता था।

[4] विनय, iii. 66; 39, और ऊपर CLXI. क्रमशः देखें । ये इस प्रख्यात डीन द्वारा निपटाए गए मामलों का केवल एक छोटा सा हिस्सा हैं। तुलना करें XLV., पृष्ठ 50, नोट 2.

[5] यह- 'मुक्ति के नियम' - एक पाक्षिक अनुष्ठान का गठन करते थे, और अभी भी करते हैं (विनय ग्रंथ . i. 1-69)।

[6] टिप्पणी: अर्थात्, या तो जीविका कमाने के उद्देश्य से नहीं, या कर्म के फल और रत्न-त्रिमूर्ति (बुद्ध, धर्म, व्यवस्था) की श्रेष्ठता में विश्वास रखते हुए। उपाली की शुरुआत इतनी एकनिष्ठ नहीं थी, उसने तो अपनी जान बचाने के लिए ही उपाली को अपने साथ लिया था। युवा सरदारों ने उसे अपना सामान घर ले जाने के लिए दे दिया, और उसे डर था कि शाकियन उस पर हत्या का संदेह कर सकते हैं, इसलिए उसने सामान का गट्ठा एक पेड़ पर लटका दिया और उनके पीछे चल दिया।

[7] बुधो. टीका व्याख्या करती है: बुद्धा ति च पथन ति; सो एव'अत्थो. पाठ में पुनरावृत्ति 'नौसिखिया ... नया' है।

3.11 [180] उपलित्तेरा के श्लोक पर टीका
सद्धाय अभिनिक्खम्मा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उपालि का है। इसका उद्गम क्या है? इनका जन्म भी हंसवती नगर में एक पारिवारिक परिवार में, भगवान पद्ममुत्तरा के समय हुआ था। गुरु के सत्य (धम्म) को सुनते हुए, एक दिन उन्होंने गुरु को विनय के धारकों (धरों) में एक भिक्षु को सर्वोच्च स्थान देते हुए देखा, और उन्होंने भक्तिपूर्ण कर्म (अधिकारकम्म) किए और उस पद की आकांक्षा की। जीवन भर अच्छे कर्म करते हुए, वे जन्म-जन्म के चक्र में भटकते रहे, देवताओं और मनुष्यों के बीच रहे, और एक नाई के घर में गर्भ धारण किया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। उन्होंने उनका नाम उपालि रखा । वयस्क होने पर वे अनुरुद्ध आदि जैसे छह कुलीन व्यक्तियों के प्रिय मित्र (पासादको) थे, और जब तथागत अनुपिया के आम के बाग में निवास कर रहे थे, तब उन्होंने संसार का त्याग कर भिक्षु बन गए, और उनके साथ छह अन्य कुलीन व्यक्ति भी भिक्षु बन गए। पाली ग्रंथ में उनके भिक्षु बनने की प्रक्रिया का वर्णन अभी शुरू ही हुआ है।

भिक्षु बनने के बाद, उन्होंने पूर्ण दीक्षा ली, गुरु की उपस्थिति में अपना मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) एकत्रित किया और इस प्रकार निवेदन किया: “आदरणीय गुरुदेव! कृपया वन में मेरे निवास को स्वीकृति दें।” बुद्ध ने उत्तर दिया: “हे भिक्षु! जब तुम वन में निवास करोगे, तब तुम केवल एक ही कर्तव्य (धुरं) निभाओगे; दूसरी ओर, जब तुम हमारी उपस्थिति में निवास करोगे, तब तुम ग्रंथों (गंथ) के अध्ययन के कर्तव्य के साथ-साथ आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के कर्तव्य को भी पूर्णतः निभाओगे।” थेरा ने गुरु का वचन स्वीकार किया और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म करके शीघ्र ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

“हंसवती नगर में,

सुजाता नामक एक ब्राह्मण, जिसने संचित धन का संचय किया था

(मिकायो) अस्सी करोड़ रुपये नकद; वह

उनके पास प्रचुर धन और अनाज था

धान का।

वह एक वाचक और ज्ञान का भंडार थे।

आकर्षण (मंटा), कुशल (परागु)

तीनों रेडा में और साथ ही एक जो

हस्तरेखा शास्त्र में निपुणता प्राप्त कर ली थी

(लक्खण) और परंपरा के साथ

धर्म (धर्म)।

उस समय, विचरण करने वाले तपस्वियों,

(परिब्बाज), एकल चोटी वाले संन्यासी,

गौतम बुद्ध के शिष्य, और विचरण करते हुए

संन्यासी भी पृथ्वी पर विचरण करते थे।

उन्होंने मुझे घेर लिया; इस प्रकार, मैं

एक प्रसिद्ध (vissuto) ब्राह्मण।

कई लोगों ने मेरा सम्मान किया; मैंने किसी का सम्मान नहीं किया।

कोई भी।

मुझे कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं दिखा जो इसे स्वीकार करने योग्य हो।

मेरी श्रद्धापूर्ण भेंट; मैं तब था

अभिमान से हठी (थड्डो); वहाँ

बुद्ध नाम का कोई शब्द अस्तित्व में नहीं था;

उस समय तक, विजेता ने ऐसा नहीं किया था

उत्पन्न हुआ।

दिन और रात के बीतने के साथ-साथ, वहाँ

संसार में उत्पन्न हुआ, जिसके पास है

नेत्र-दृष्टि (चक्कुमा) जिसका नाम पदुमुत्तारा है,

सभी अंधकार को दूर करने के बाद।

जब जनसमूहों के गुण (बाहिजञ्ञ)

हे बुद्ध, उदार (पुथु) बनो।

वह हंसा नामक नगर के निकट आया।

वह बुद्ध, जिनके पास दृष्टि थी

उन्होंने सत्य (धम्म) का उपदेश दिया

अपने पिता के लाभ के लिए। श्रोतागण,

उस समय तक एक लीग (योजना) को कवर कर लिया गया था।

फिर सब तरफ।

सुनंदा नामक वह ऋषि, जो प्रसिद्ध थे

(सम्मत) मनुष्यों के बीच, फिर

फूलों से ढका हुआ क्षेत्र

बुद्ध के श्रोतागण (विस्तारित)।

जब चार आर्य सत्य थे

सबसे उत्कृष्ट रूप में प्रकट हुआ

निचले पंडाल में , यह अहसास हुआ

एक लाख के सत्य (धम्म) का

करोड़ों (श्रोताओं)

बुद्ध ने सात दिन और सात रात तक जल बरसाया।

सत्य की वर्षा (धम्म-)

(vuṭṭhiyo). जब आठवां दिन आया,

विजेता ने प्रशंसा में बात की (कित्तयी)

सुनंदा की।

चाहे दिव्य जगत हो या मानवीय जगत।

यह दुनिया, अपने आस-पास भटकती हुई

बार-बार पुनर्जन्म के चक्र,

सभी में उत्कृष्ट (पवारो) बनो और

(इस प्रकार) वह विभिन्न अस्तित्वों में भटकता रहेगा

(भवेसु संसारिसति). एक सौ

हजार युगों (कप्पा) के बाद, वहाँ

वह संसार में गुरु बन जाएगा।

कुल द्वारा गौतम नाम दिया गया, संतान

ओक्काका परिवार का।

वह उनकी शिक्षाओं का उत्तराधिकारी होगा।

सत्य (धम्म) का, एक प्रिय पुत्र बनाया गया

सत्य (धम्म) के द्वारा वह एक बन जाएगा

पुण्ण नाम से जाने जाने वाले गुरु के शिष्य,

मंताणी का पुत्र।

इस प्रकार, आत्मजागृत

बुद्ध ने (कित्तायी) भविष्यवाणी की

साधु सुनंदा, फिर जयकार करते हुए (हासयंतो)

सभी लोगों को और अपना स्वयं का प्रदर्शन करते हुए

ताकत।

फिर लोगों ने अपने हाथ जोड़ लिए।

उन्होंने सुनंदा के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की।

उन्होंने बुद्ध के प्रति अपना कर्तव्य (दारं) पूरा कर लिया है।

प्रत्येक ने अपनी नियति (गति) को शुद्ध किया।

वहाँ, मेरी योजना पूरी हुई;

मैंने ऋषि के वचन सुने। मैंने भी

मैं अपना कर्तव्य (करं) उचित ढंग से निभाऊंगा।

मुझे बुद्ध गौतम के दर्शन हुए।

इस प्रकार विचार करने के बाद,

मैंने सोचा कि क्या किया जाना चाहिए

(किरियं). मैं किसके लिए यह कर्म करूँ?

योग्यता के क्षेत्र में अद्वितीय?

यह भिक्षु पाठ में निपुण (पाठिका) है।

सभी पाठकों के वितरण में

(sabbapāṭhissa sāsane) शीर्ष पर था-

विनय में सबसे बड़ा भंडार; मेरी आकांक्षा थी

उस पद के लिए। मेरे पास यह था

असीम धन, अविचलित

समुद्र के समान; उस धन के साथ

मैंने बुद्ध के लिए एक मठ बनाया।

पूर्व दिशा में स्थित शोभना नामक मठ

शहर का; (कीमत पर) खरीदा हुआ

मैंने एक लाख लोगों का संघाराम बनाया।

पुरोहितों का मठ।

शिखर संरचनाओं के होने के कारण और

महल, पंडाल, सपाट छत वाली हवेली

और गुफाएँ, साथ ही मठ के रास्ते

मैंने अच्छी तरह से निर्मित एक मठ बनाया

पादरी वर्ग।

मेरे पास भाप स्नान (जंताघरं) के लिए एक घर था।

एक अग्निशमन कक्ष, साथ ही एक गोलाकार जल

उदकामालाका (बाड़ा) और स्नानघर

(nhānaghara) ने इनका निर्माण किया और इन्हें भेंट किया

भिक्षुओं का पुरोहित वर्ग।

इस प्रकार का फर्नीचर (परिभोगे) जैसे लंबी कुर्सियाँ,

(आसंदी), स्टूल (पीठक), बर्तन और कड़ाही

(भजन) साथ ही साथ दवा के लिए

मठ; ये सब मैंने अर्पित किए।

मैंने कड़ी सुरक्षा व्यवस्था कर रखी थी,

इस विचार से दीवार को मजबूत बनाया गया;

"किसी को भी ऐसे लोगों को परेशान नहीं करना चाहिए (विहेठेसी)

ऋषियों का हृदय शांत था।

मैंने पुरोहितों के लिए मठ का निर्माण करवाया था।

भिक्षुओं के लिए एक लाख की लागत से।

निवास करने के लिए; इसे समृद्ध बनाकर मैंने भेंट की

इसे आत्मजागृत बुद्ध को समर्पित करें।

मठ को पूर्ण रूप से बनाया गया था

मेरे द्वारा; हे ऋषि! आप इसे स्वीकार करते हैं। हे वीर!

मैं इसे आपको सौंप दूँगा, हे स्वामी!

दृष्टि! कृपया अपनी सहमति दें (अधिवासेहि)

मेरे इरादे का पता चलने पर।

स्वीकृति के बारे में पता चलने पर

मैंने सर्वज्ञ महान ऋषि का भोजन किया।

उन्होंने तैयारी की और उन्हें (आगमन के बारे में) सूचित किया।

भोजन का समय।

समय की सूचना मिलने पर, नेता

पदुमुत्तरा मेरे मठ में एक लेकर आए थे।

हजार अरहंत रोगमुक्त।

जब मुझे वह समय पता चल जाए जब वह बैठे थे,

मैंने उन्हें भोजन और पेय से तृप्त किया; जब

मुझे पता चला कि उन्होंने खाना खा लिया था।

मैंने उसके भोजन के दौरान यह शब्द बोला।

एक लाख रुपये में खरीदा गया।

और उसी लागत पर निर्मित भी,

मठ का नाम शोभना है; हे ऋषि! आप ऐसा करें

इसे स्वीकार करो। इस भेंट के माध्यम से।

अपनी इच्छा और स्वेच्छा से मठ का।

इस संकल्प से, मुझे वह मिल गया जो मैं चाहता था और

जब मेरा किसी भी रूप में उदय हुआ।

सुनिर्मित मठ को स्वीकार करने के बाद,

आत्मजागृत बुद्ध, बैठे हुए

भिक्षुओं के बीच, इस राज्य का निर्माण हुआ-

मैं उनके बारे में घोषणा कर रहा हूँ।

जिसने अपने सुगठित शरीर की भेंट चढ़ाई

भिक्षुओं के पुरोहितों के लिए मठ

बुद्ध, जब मैं बोल रहा हूँ तो मेरी बात सुनो।

हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सैनिक-

सैनिक, और चौगुनी सेना

हमेशा उसे घेरे रहो; यही फलदायी है।

पुरोहितों के लिए मठ की पेशकश का परिणाम

(संघराम)। साठ हजार संगीतकार

और सजे-धजे ढोल बजाने वाले हमेशा रहेंगे

उनकी संगति में; यही फलदायी है

संघराम के अर्पण का परिणाम।

छियासी हजार सुशोभित महिलाएं

विभिन्न रंगों से सजे और अलंकृत,

पन्ना की बालियां पहनने से हमेशा फायदा होगा।

उसकी सेवा करो; यही फलदायी है।

संघाराम का परिणाम। (महिलाएं) मोटी-

भौहें, पलकें और मनमोहक मुस्कान,

अच्छी समझ और पतली कमर हमेशा

उसकी सेवा करो; यही फलदायी परिणाम है।

संघाराम अर्पित करने का।

तीस हजार युगों (कप्पा) तक वह

दिव्य जगत में आनंद लें। एक हजार

कई बार, वह एक दिव्य राजा के रूप में शासन करेगा।

ईश्वरीय संप्रभुता। वह उचित रूप से सब कुछ प्राप्त करेगा।

जिसे दिव्य राजा को प्राप्त करना चाहिए;

एक बन जाने के बाद, जिसका धन कभी नहीं

कम होने पर, वह स्वर्गीय कार्य करेगा

संप्रभुता।

हजार बार, वह बन जाएगा

अपने राज्य में विश्व-राजा; संप्रभुता

पृथ्वी पर प्रचुर मात्रा में, अगणनीय मात्रा में मौजूद है।

संख्यात्मक रूप से।

एक लाख युगों (कप्पा) बाद,

दुनिया में गुरु अवश्य होंगे

कुल के अनुसार गौतम नाम दिया गया, परिवार में जन्म हुआ

ओक्काका (इक्ष्वाकु) का।

वह उनकी शिक्षाओं का उत्तराधिकारी होगा।

सत्य (धम्म), एक प्रिय पुत्र जिसे बनाया गया है

सत्य (धम्म); वह एक शिष्य होगा

उस गुरु का, जिसे उपालि नाम से जाना जाता है।

विनय में सिद्धि प्राप्त करने के बाद,

वह तार्किक मामलों में चतुर होगा और

अतार्किक; वह रोगों से मुक्त होकर रहेगा।

(आसव) स्वयं को उत्तरदायी ठहराना

विजेता की व्यवस्था।

विशेष रूप से इसके बारे में पता चलने पर,

साकियनों में श्रेष्ठ माने जाने वाले गौतम बैठे हुए हैं।

भिक्षुओं के बीच में, रखा जाएगा

उन्हें सबसे आगे के पद पर।

(उपाद्य) असीम पदार्थ का संदर्भ

(sparimeyya) मेरी इच्छा है (patthemi)

आपके प्रावधान (सासनम्) के लिए; कि

मेरी इच्छा पूरी हो गई है,

बंधनों का नाश (संयोजन)।

जैसे कोई व्यक्ति खंभे पर अटक जाता है (सुलावुतो)

शाही दंड की धमकी दी गई (तज्जितो),

फीकेपन में आनंद न मिलना (सातं)

(सूला) उसकी पूर्ण स्वतंत्रता की इच्छा करता है;

हे महान हृदय! इसी प्रकार,

अस्तित्व के दंड से ग्रस्त होने का खतरा

मैं (अपने ही) दायरे में फंसा हुआ हूँ।

कर्म (कर्म), भयभीत (अट्टितो)

प्यास का एहसास, तीन आगों से झुलसा हुआ,

किसी भी जीवन में आनंद प्राप्त न करना;

शाही पक्ष के अनुरूप

मुझे सजा मिली है, मैं पूर्ण स्वतंत्रता चाहता हूं।

एक ऐसे व्यक्ति के अनुसार जिसने निगल लिया था

विष (विसाडो), होने पर

जहर से पूरी तरह पीड़ित थे

रक्षा करने वाली औषधि (अगादा) की तलाश करना

जहर को नष्ट करके (घाटा) उसका जीवन,

और अपनी खोज में, उसे वह दवा मिल जाती है

जो जहर को नष्ट कर सकता है, और जिसमें

अगर वह इसे पी ले, तो वह आनंदित हो जाएगा।

क्योंकि वह पूरी तरह से मुक्त हो गया था

विष से, लेकिन उसी प्रकार, हे महान वीर!

मैं उस व्यक्ति के अनुसार हूँ जो इससे पीड़ित है।

जहर। अज्ञानता से बुरी तरह पीड़ित, मैं

मैं अच्छे स्वास्थ्य की दवा की तलाश में हूँ

सत्य (सद्धम्म)।

सत्य (धम्म) की औषधि की खोज करना

मुझे शाक्य की व्यवस्था मिली

(सक्यसासनम्); यह सभी में सर्वोच्च है

औषधियाँ, सभी तीरों को दूर भगाने वाली

(सल्ला)।

धम्म की औषधि का सेवन करके, मैं

सभी जहर को मिटा दिया था। मैं आया था।

निर्वाण के संपर्क में, शीतलता के साथ

ऐसी स्थिति जिसमें वृद्धावस्था और मृत्यु नहीं होती।

एक ऐसे व्यक्ति के अनुसार जो किसी चीज़ से पीड़ित है

पीड़ित राक्षस (भूत)

किसी राक्षस (भूत) द्वारा कब्जा कर लिए जाने पर

भूतवेज्जन की तलाश करेगा

भूत-प्रेत से पूर्ण मुक्ति के लिए

और खोजबीन करने पर, एक विशेषज्ञ मिल जाए

(कोविदं) जादू टोने के विज्ञान में

(भूता विज्जासु), और बाद वाले थे

उसके भूत (राक्षस) को हटाकर

इसके स्रोत (समूल) सहित नष्ट कर दो।

और इसी प्रकार, हे महान वीर! मैं,

अंधकार के चंगुल से पीड़ित रहा हूँ,

मैं ज्ञान के प्रकाश की खोज में हूँ।

अंधकार से पूर्ण मुक्ति के लिए

इसके बाद, मुझे साकियान भाषा के बारे में पता चला।

ऋषि (शाक्यमुनि), जिन्होंने विपत्तियों का निवारण किया

दुराचार के अंधकार से उसने मुझे मुक्त किया।

तांत्रिक के समान अंधकार

भूतकम् के जादू को दूर करना।

मैंने संसार की धारा को पूरी तरह से काट दिया था।

और लालसा की धारा को प्रतिबंधित किया

(तण्हासोतं)। मैंने सभी प्राणियों का नाश कर दिया था।

अपने मूल स्रोत से दानव चिकित्सक के समान

(मूला).

गरुड़ पक्षी के झपट्टा मारने के अनुसार

अपने भोजन के लिए एक सर्प को खाने से परेशानी होती है

चारों ओर फैली विशाल झील सौ किलोमीटर तक फैली हुई है।

योजनाएँ; वह गरुड़, जिसके पास

उसने सांप को पकड़ा और उसे विदा किया।

सांप को परेशान करते हुए उसे दूर ले जाना

सिर नीचे की ओर झुका हुआ था और ऊपर की ओर उड़ गया।

आकाश अपने इच्छित गंतव्य के लिए (येना)

कामम्)।

इसी प्रकार, हे महान वीर! मैं, इसके अनुसार

शक्तिशाली गरुड़ पक्षी, खोज रहा है

अजन्मा (अङ्खता) धो देना (मेरा)

दोष (दोसा)।

उत्कृष्ट सत्य (धम्म) था

मेरे द्वारा खोजा गया, अद्वितीय मार्ग

शांति। मैं उसमें निवास करता हूँ, उसे अपने साथ लिए फिरता हूँ।

मेरे साथ, गरुड़ के अनुसार

वह सांप को अपने साथ ले जा रहा था।

आसावती नाम की लता आती है

चित्तलता के उपवन में होने के कारण;

उस लता पर फल उग आते हैं (पर)

एक हजार वर्षों का अंतराल;

दिव्य प्राणी उस लता की सेवा करते हैं

उस समय तक जब दूर का फल

अस्तित्व में आता है; वह सबसे उत्कृष्ट

आसावती लता है; इस प्रकार,

देवताओं को प्रिय।

एक लाख के साथ (उपाद्य)

(वर्षों) तक मैंने सेवा की (paricare)

ऋषि; मैं सुबह और शाम को

ईश्वरीय प्राणियों के समान उनकी आराधना करो।

आसावती के साथ ऐसा ही किया जाएगा।

मेरी सेवा व्यर्थ नहीं गई है;

मेरी श्रद्धा व्यर्थ नहीं गई है।

हालांकि उस क्षण ने मुझे नहीं चूका (विराधायी)

मैं शायद बहुत दूर चला गया था। बारीकी से जाँच करना

अस्तित्व, मुझे अब और नहीं दिखते

गर्भाधान (पटीसंधि)। मैं इधर-उधर भटकता हूँ।

शांति (उपसंतो) के साथ

स्पष्ट रूप से पुनर्जन्म के आधार से मुक्त

(उपाधि)।

कमल के फूल के अनुसार, जिसका नाम है

पद्मा, सूर्य की किरणों के साथ खिलता है।

लेकिन हे महान वीर! मैं भी बन गया हूँ

बुद्धों की किरणों से खिल उठा।

सारस के गर्भ के समान

कोई निर्माण कभी नहीं होता; जब बारिश-

बादल गरजते हैं, वे हमेशा गर्भवती हो जाते हैं;

वे लंबे समय तक अपना सामान ढोते रहते हैं।

गर्भावस्था जब तक बारिश का बादल

बिजली नहीं कड़कती। जब भी बारिश होती है

बादल बारिश बरसाते हैं, वे बन जाते हैं

अंडे देने से पूरी तरह बोझ से मुक्त हो जाना।

जब बुद्ध पद्ममुत्तरा ने गर्जना की

मैंने धर्म के वर्षा-बादल को पकड़ लिया।

आध्यात्मिक गर्भावस्था (धम्मगब्भा)

सत्य (धम्म) के वर्षा-बादल के साथ

(मेरी) पवित्र आस्था (सद्धा)।

साथ-साथ (उपाध्या) एक लाख

मैंने पुण्य की गर्भावस्था को धारण किया है।

(पुण्णगब्भा); (जब तक) आध्यात्मिक

(धम्म) वर्षा-बादल गरजता नहीं है, मैं

बोझ से मुक्त नहीं हुआ।

हे शाक्यमुनि! तब आप गर्जना करते हैं

आध्यात्मिक (धम्म) वर्षा-बादल में

मैं आनंदमय कपिलवस्तु बन गया हूँ।

मैं अपने बोझ से पूरी तरह मुक्त हो गया हूँ।

शून्य (सञ्ञत), चिह्नहीन (अनिमित्त)

इसी प्रकार गुप्त (अपणिहित) भी,

और इस फल में चारों फल (फल)

जिस तरह से मैंने बात की, मुझे सच्चाई स्पष्ट रूप से समझ आ गई थी।

(धम्म)।

असीम के साथ (उपाध्याय),

मैं आपके विधान की प्रतीक्षा करता/करती हूँ (पत्थेमी)।

(सासनं); मेरा वह उद्देश्य (अत्थो)

तदनुसार प्राप्त किया गया था (अनुपत्तो);

अर्थात्; शांति का अद्वितीय मार्ग

(संती)।

मैंने विनय में पूर्णता प्राप्त कर ली थी;

पाठ करने वाले के अनुसार (pāṭhiko)

तपस्वी। उनके समान कोई नहीं है।

(समासामो) मुझे; मैं इस विशेषाधिकार को धारण करता हूँ

(जिम्मेदारी के साथ)।

विनय के खंडक भागों में,

साथ ही त्रयी अनुभाग में और

पंचक (tikacchede ca pañcake); यहाँ, मेरा

वर्णमाला में भी कोई संदेह नहीं है।

या विशेषता में।

मैंने हर क्षेत्र में पूर्णता प्राप्त कर ली थी;

फटकार में (निग्ग-अहा) और निवारण में (पाटी-)

मैं (कम्मा) इस बात में विशेषज्ञ (कोविडो) हूँ कि मैं

सही और गलत निष्कर्षों को समझें

(थानाथन), बहाली में (ओसाराना)

और किसी अपराध की क्षमा की गई स्थिति

(वुट्ठापन)

चाहे विनय (वास्तविक रूप से) में हो या उसके

खंड (खंडा) मैं एक को हटा सकता हूँ

शब्द (निक्खीपित्वा पदम्); सुलझाकर

(viniveṭheti) दोनों तरफ से (ubhato) मैं

(ओसरती) को दृष्टि से हटा देगा-

मैं स्वाद की गुणवत्ता (रसातो) का बिंदु हूँ

व्याकरण में बहुत निपुण और विशेषज्ञ

सार्थक और निरर्थक में

(अत्थानत्थ); ऐसा कोई नहीं है जो अत्थानत्थ न हो

मैं इसे जानता हूँ; मैं इसमें सबसे आगे हूँ।

गुरु की कृपा। अब मैं चतुर हूँ।

रूपों में (रूपाक्खा) व्यवस्था में

शाक्य पुत्र (साक्यपुत्त) का शासन (शासन)।

मैं सभी शंकाओं को दूर करता हूँ और सभी बाधाओं को काट देता हूँ।

संदेह।

मैं प्रस्तावना में हर जगह विशेषज्ञ हूं

(निदान) और अंत में (सहित)

यह शब्द और इसका अनुक्रम (अनुपदा)

वर्णमाला के साथ-साथ विशेषता भी

(ब्यांजना).

एक राजा के अनुसार, एक मजबूत के स्वामी

सेना ने दूसरे राजा को रोक रखा था

(परंतपा) ने युद्ध जीता और

वहां एक शहर बसाओ;

शहर में वह कई तरह के काम करता था।

अर्थात्; शहर की दीवार, खाई, स्तंभ,

प्रवेश द्वार-अनाज भंडार और निगरानी मीनारें

(अट्टालक),

चारों चौराहों पर स्थित चौक (सिंहाटा-

का), आंगन (ककारा), कुआँ-

संगठित आंतरिक बाजार (सुविभट्टंतरा-

पणम्); वह वहाँ एक हॉल बनवा सकता है

किसी मामले के लाभकारी होने या न होने के संबंध में निर्णय लेना

या नहीं (अत्थानात्थाविनिचयं)।

वह एक सेनापति की भी नियुक्ति करता है।

(सेनापच्चं) देखभाल करने के लिए

सेना का निकाय, इस उद्देश्य के लिए

दुश्मनों को मारने और उनकी कमियों को जानने के बारे में या

दोषरहितता।

वह खजाने के संरक्षक की भी नियुक्ति करता है।

खजाने की रक्षा के उद्देश्य से

और वे लोग जो अपने अच्छे कर्मों को महत्व देते हैं

यह कहते हुए कि, 'मेरी संपत्ति विनाश से बची रहे।'

वह एक निजी पुरोहित नियुक्त करता है।

जो मंत्रों का पाठ करने वाला और उनका भंडार हो

(मंत) जो चतुर है (उप्पत)

संकेत (निमित्त) और हस्तरेखा शास्त्र (लक्खाना),

जो अपना पर्यवेक्षण (अधिकरण) प्रदान करता है,

ताकि उसका राजा उसके जीवन को नियंत्रित कर सके

अपने सहयोगी को, और जो देखना चाहता है

उसके राजा की समृद्धि (वद्धि) जब

उसका राजा अहंकारी (ममात्तो) हो जाता है।

जो इन योग्यताओं से संपन्न हो-

कहा जाता है कि वह एक योद्धा राजकुमार है।

(खत्तिया); वे राजा की देखभाल करते हैं

हर समय एक लाल हंस के समान

संकट में फंसे किसी भी व्यक्ति की देखभाल करना

(दुक्खिता)।

लेकिन इसी प्रकार, हे महान वीर!

वह योद्धा राजकुमार (खट्टिया) जिसके पास

आपने शत्रु को पराजित किया (hatāmitto)

उन्हें आध्यात्मिक संप्रभु कहा जाता है

(धम्मराजा) दुनिया सहित

दिव्य जगत।

विधर्मियों को मार गिराने के बाद और

मारा भी अपनी सेना के साथ, तुम,

घोर अंधकार को दूर किया, बनाया

आध्यात्मिक (धम्म) नगर।

वहाँ, नैतिक उपदेश (सीला) का गठन होता है

दीवार; आपका ज्ञान ही इसका आधार है।

द्वारकोट्ठक; हे वीर!

आपकी आस्था (सद्धा) ही आधार स्तंभ है।

(एसिका); आपका आत्मसंयम (संवर)

द्वारपाल (द्वारपाल) का गठन करता है।

(आपकी) जागरूकता की स्थापना (सती-

पट्ठना (paṭṭhāna) निगरानी मीनार का निर्माण करता है

(अट्टाला); हे ऋषि! आपकी बुद्धिमत्ता (पञ्ञा)

आंगन (ककारा) का गठन करता है;

आपकी चमत्कारी शक्ति की नींव

चौराहे पर स्थित वर्ग का निर्माण करें

(सिंहात्); आध्यात्मिक मार्ग (धम्म-

वीथी का निर्माण अच्छी तरह से किया गया था।

सुत्त, विनय और अभिधम्म, नौ-

बुद्ध के शरीर के अंगों (अंग) को मोड़ना

वचन (वचन); यह आपका आध्यात्मिक वचन है।

हल (धम्मसभा)।

शून्य (सुञ्ञाता), चिह्नहीन (अनिमित्त)

और सभी इच्छाओं से मुक्ति (अप्पणीहित)

अपने मठ का गठन करें; अचलता

(अनञ्जा) और समाप्ति (निरोध); इन

अपनी आध्यात्मिक कुटिया (धम्म-) का निर्माण करें।

कुटी)।

आपके सेनापति को इस नाम से जाना जाता है

सारिपुत्त का, जो सबसे बड़ा भंडार है

(आपकी शिक्षाओं के कारण) उनकी बुद्धिमत्ता के कारण

और वह अपने उत्तरों में विशेषज्ञ है।

(paṭibhāṇa) उत्तर में।

हे ऋषि! आपका निजी पुरोहित

कोलिता नाम से जानी जाती है, जो कि

जीवन और मृत्यु के मामलों में चतुर

(cutūpapāta) और पूर्णता प्राप्त कर ली थी

जादू का प्रदर्शन करते हुए।

हे ऋषि! आपका न्यायाधीश (अक्खड़स्सो) यह है

प्रतिपादन की गुणवत्ता में सर्वोपरि।

तपस्या (धूता), पालनकर्ता (धरो)

प्राचीन परंपरा (वंश) का, उच्च

रैंकिंग शक्ति (उग्गेटजा) और कठिनाई

टूट पड़ना।

हे ऋषि! सत्य (धर्म) के आपके संरक्षक,

आनंद नाम से जाना जाता है, वह बहुत कुछ है।

विद्वान (बहुस्सुतो), वाहक

सत्य (धम्म) की स्मृति और पाठकर्ता

प्रत्येक परीक्षा (सब्बापाठी) में

मुआवजा (सासनं)।

इन सब से आगे बढ़कर,

भगवान ने अपना आकलन (पामेसी) किया।

मुझे और प्रदान किया (पादासी)

टिंक्टिव निर्णय (विनिच्चयं) में

विनय, जो (देसीता) द्वारा सिखाया जाता है

बुद्धिमान (विञ्ञा)।

यदि बुद्ध का कोई शिष्य मुझसे पूछे

विनय में प्रश्न, मैं बोलता हूँ

उस अर्थ (अत्था) का उत्तर बिना

मुझे इस बारे में सोचने की आवश्यकता है

पदार्थ (तत्थ)।

हे महान ऋषि! आपको छोड़कर (ṭha-

(petvā taṃ), मेरे जैसा कोई नहीं है

विनय में बुद्ध के क्षेत्र तक

आवरण (यावता बुद्धखेत्तमहि); जहाँ

क्या मैं श्रेष्ठ साबित होऊंगा?

बीच में बैठे होने के कारण

गौतम बुद्ध ने गरजते हुए भिक्षुओं के पुरोहितों से कहा।

(गज्जति) इस प्रकार: कोई नहीं है

विनय में उपालि के समान और

खंडका (इसके कुछ भाग)।

जैसा कि बुद्ध ने कहा था,

शरीर के नौ गुना अंग (अंग)

बुद्ध की शिक्षाएँ (सासनं), वह सब कुछ

विनय में विलय (अगध) होता है: एक

जो विनय के मूल कारण को देख पाता है।

अपने कर्म को याद करके,

साकियों में श्रेष्ठ माने जाने वाले गौतम

वे पुरोहितों के बीच बैठ गए।

भिक्षुओं ने मुझे सबसे आगे नियुक्त किया

स्थिति (etadagga).

एक लाख के साथ (उपाध्याय),

मुझे इस पद की आकांक्षा थी;

मेरा वह उद्देश्य तदनुसार यही था

मैंने सफलता प्राप्त की; मैंने विनय में पूर्णता प्राप्त कर ली।

पहले मैं हेयरड्रेसर (कप्पाका) था।

साकियान समुदाय के आनंद का संवर्धक;

उस व्यवसाय (जाति) को त्यागकर, मैं

महान के पुत्र बन गए हैं (जातो)

समझदार।

दूसरे युग (कप्पा) में, इससे पहले

इस प्रकार, एक खत्तिया (राजा) था जिसका नाम था

अंजासा, पृथ्वी के एक शासक, जो अपार धन से परिपूर्ण थे।

असीम शक्ति और अपार प्रसिद्धि का।

मैं उस सम्राट का पुत्र था, एक योद्धा।

कैंडाना नामक राजकुमार, जिसे समर्थन प्राप्त था

जन्म का अहंकार और प्रसिद्धि का गर्व और

संपत्ति।

एक लाख हाथी, सजे-धजे

मातंग प्रजाति के सभी आभूषणों सहित,

तीन स्रोतों से उग्रता से भरा हुआ

(तिधापभिन्ना), हमेशा मुझे घेरे रहती थी

(मेरी सेवा करने के लिए)।

(पैरेटो) से सुसज्जित, मेरी अपनी मजबूत

सरणी, और जाने की इच्छा रखते हुए

बगीचे में, मैं हाथी सिरिका पर सवार हो गया।

और शहर से बाहर निकल आए।

स्वयंजागृत मौन बुद्ध, नाम

देवला, (नेक) आचरण से संपन्न,

उसकी इंद्रियों के द्वार सुरक्षित थे, और अच्छी तरह से

नियंत्रित व्यक्ति मेरे सामने आ गया।

हाथी सिरिका को भेजने के बाद, मैंने

मौन बुद्ध पर हमला किया (आसादयिं)

तब; इसके परिणामस्वरूप (tato) कि

हाथी क्रोधित हो गया (संजताकोपो) और

उसने अपना पैर नहीं उठाया (उद्धरति)।

मेरे हाथी को रोते हुए देखकर-

मन से (रुण्णमन), (क्रोधित हो गया)

मौन बुद्ध; मौन धारण किए हुए

बुद्ध ने मुझे परेशान किया, मैं उसकी ओर बढ़ गया।

बगीचा।

वहाँ मुझे कोई आनंद (सात) नहीं मिला; मेरा

मेरा सिर मानो आग की लपटों में जल रहा था। मैं बुरी तरह झुलस गया था।

गर्मी से, मछली के समान, जो

मछली का काँटा (बालिसा) खाया (अडाको)।

मुझे ऐसा लगा मानो पृथ्वी एक साथ

समुद्रों की सीमा के साथ-साथ इसे जलाया जा रहा था

(आदित्त); उपस्थिति के पास पहुँचकर

मैंने अपने पिता के बारे में यह बयान दिया था।

उसे।

मैंने आत्मनिर्भर मौन पर आक्रमण किया

बुद्ध जो विषैले पदार्थ की तरह क्रोधित थे

साँप (आसीविसा), जो एक समूह जैसा दिखता है

आग जो भयंकर रूप से भड़क उठी थी, और इसी तरह

संभोग के मौसम में सूंड वाले हाथी को।

मौन बुद्ध, प्रचंड विजेता,

अत्यंत कठोर, जिस पर मैंने हमला किया था।

इससे पहले कि हम सब बर्बाद हो जाएं, चलो

हम उस ऋषि से माफी मांगते हैं।

यदि हम स्वयं उसे प्रसन्न नहीं करते

आत्मसंयमित और संयमित, हमारा

इस दौरान राज्य नष्ट हो जाएगा

सात दिनों के भीतर।

जिनके अपने-अपने राज्य थे, अर्थात्;

सुमेखला, कोसिया, सिगगावा, और सट्टाका

इसके अलावा, तपस्वियों पर हमला करने के बाद,

दरिद्र हो गया (दुग्गता)।

फिर वे तपस्वी जो संयमी हैं

(सन्याता) प्रमुख कुलीन लोग क्रोधित हो जाते हैं,

यह संसार, दिव्य संसार के साथ मिलकर

महासागरों और पहाड़ों के साथ-साथ बन जाते हैं

तबाह।

पुरुषों की भीड़ (किसी क्षेत्र को कवर करते हुए)

तीन हजार लीग (योजना) एकत्रित

साथ मिलकर आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हुए

मौन बुद्ध अपने अपराध को स्वीकार करते हैं।

अपने साफ कपड़ों और साफ दिमाग के साथ,

सभी ने अपने हाथ बराबर से जोड़ लिए थे।

मौन बुद्ध के चरणों में गिर पड़ा और

उन्होंने ये शब्द कहे।

हे महान वीर! कृपया हमें क्षमा करें;

अनेक पुरुष आपसे यह निवेदन करते हैं;

कृपया जलती हुई (परिलाहा) को हटा दें (विनोदेही);

कृपया हमारे राज्य को नष्ट न करें।

सभी मनुष्यों के साथ

दिव्य प्राणी, टाइटन्स के साथ

(दानव) और राक्षस (रक्खासा) हमेशा हो सकते हैं

मेरे सिर को हथौड़े से तोड़ दो

लोहा।

पानी में आग अच्छी तरह से नहीं टिकती;

पत्थर पर बीज अंकुरित होकर नहीं उगता;

इस दवा में कोई भी कीड़ा जीवित नहीं रह पाता;

शांत बुद्ध में क्रोध उत्पन्न नहीं होता।

क्योंकि पृथ्वी कांपती नहीं है,

सागर असीम है, आकाश

अनंत, उसी प्रकार मौन

बुद्ध अविचलित होते हैं।

महान नायक सदा धैर्यवान होते हैं; संन्यासी

जिसे शांत किया जा सकता है (खमिता); कि

धैर्य से विमुख होना (गमना) और

शांत होने से (खमितानं)

अस्तित्व में नहीं हैं।

यह सब कहने के बाद, आत्मजागृत

मौन बुद्ध ने जलती हुई आग को बुझा दिया।

पुरुषों की भीड़ के सामने और

फिर वह आसमान में उड़ गया।

हे वीर बुद्ध! उस कारण

(हमले का) कृत्य मुझे यहाँ आना पड़ा

हीनता की अवस्था (हीना);

उस पुनर्जन्म से आगे बढ़कर मैंने प्रवेश किया।

ऐसा शहर जो खतरे से मुक्त हो।

हे महान नायक! अब मुझे भी इसका खामियाजा भुगतना पड़ रहा था।

तीन अग्नियों द्वारा; मेरे पास तीन अग्नियाँ थीं

बुझ गया और मैंने खुद को स्थानांतरित करवा लिया।

शीतलता की अवस्था तक।

हे, जिनके कान सजग हैं (सोतावधान),

जब मैं बोल रहा हूँ तो मेरी बात ध्यान से सुनो। मैं सिखाता हूँ।

आपके लाभ के लिए (अत्थं)

क्योंकि मैंने वह मार्ग (पडं) देख लिया है।

आत्मनिर्भरों का अनादर करने के कारण

मौन बुद्ध, शांत मन वाले और

अच्छी तरह से रचित, मैं एक में पुनर्जन्म लेने आया था

उस क्रिया के कारण अब गर्भाशय की स्थिति कमजोर हो गई है।

(कर्म)। आपको कोई भी क्षण नहीं चूकना चाहिए;

वास्तव में, जो लोग क्षणों को बीतने देते हैं, वे महसूस करते हैं

क्षमा करें; आपको इसके लिए प्रयास करना चाहिए

आपका अपना कल्याण, आपका क्षण बीत चुका है

उपयुक्त रूप से उपयोग किया गया (paṭipādito).

कुछ लोगों के लिए उल्टी की दवा (वामना) दी जाती है;

अन्य लोगों के लिए विरेच्य (विरेचना);

कुछ लोगों के लिए विषैला बैनोम दवा है।

दूसरों के लिए।

उल्टी की खुराक उन लोगों के लिए है जिन्हें

उन्होंने अपना उचित प्रदर्शन किया (पाटी-

पन्नानम्); रेचक के स्थान पर

फल प्राप्ति; लाभ प्राप्त करने वालों के लिए औषधि

फल प्राप्ति की तलाश में, जो उपजाऊ भूमि की खोज में हैं

योग्यता का क्षेत्र।

घातक विष के अनुसार

जो व्यवस्था में बाधा डालते हैं

(सासनं), उसी प्रकार,

स्पष्ट रूप से विषैला (दिट्ठवीसो) साँप

उस आदमी को जला दिया गया (झापेटी)।

घातक विष जो शराब के नशे में टूट जाता है

उप (उपरुंधति) जीवन केवल एक बार;

उसने व्यवस्था में बाधा डाली, वह जल गया

एक करोड़ (koṭi) युगों (kappa) के लिए।

धैर्य और क्रूरता के अभाव के माध्यम से,

और प्रेममय हृदय के अधिकार से

वह अपनी दयालुता से दुनिया को सुगम बनाता है

दिव्य दुनिया को पार करने के लिए (समुद्र)

संसार का); इसलिए, उसे नहीं होना चाहिए

आपकी वजह से बाधा उत्पन्न हुई।

वे छोटे-बड़े लाभों से चिपके नहीं रहते।

(लाभालाभे), अच्छा आदर और अनादर

(सम्मनविमानने); बुद्ध समान हैं

इसलिए, वे पृथ्वी के लिए नहीं हैं।

अशांत होना।

हत्यारे देवदत्त में, लुटेरे में

अंगुलिमाला, राहुल में और (हाथी में)

धनपाला, उन सभी के लिए ऋषि हैं

समान।

किसी के प्रति कोई दुर्भावना (पिटिगा) नहीं है

उनमें; न ही उनके प्रति वासना का भाव है;

बुद्ध उन सभी के समान हैं, चाहे

वह उसका या उसके प्रिय पुत्र का हत्यारा है।

सड़क पर (पंथे) एक पीला देखकर

वस्त्र त्याग दिया गया, मल से सना हुआ।

(मील्हा), तपस्वी का ध्वज (इसिद्धहा)

हाथों को आपस में जोड़कर रखना पूजनीय है।

अपने सिर पर, (मैंने तदनुसार अपना सम्मान व्यक्त किया)।

बुद्ध, जो विशेष रूप से अतीत के थे,

जो वर्तमान में (चालू) हैं और जो होंगे

भविष्य में, स्वयं को शुद्ध करें

इसलिए यह ध्वज (धजा) उनके वस्त्र हैं।

वे पूजनीय हैं। मैं उन्हें अपने हृदय में संजो कर रखता हूँ।

अच्छा विनय जो गुरु के समान हो;

मैं विनय की आराधना करते हुए, हर जगह निवास करूंगा।

बार।

विनय मेरा निवास स्थान है; विनय ही मेरा निवास स्थान है

वह स्थान जहाँ मैं खड़ा होकर टहलता हूँ;

मैं विनय में निवास करता हूँ; विनय

यह मेरा चरागाह क्षेत्र है। मैंने इसे प्राप्त कर लिया था।

विनय में पूर्णता; मैं इसमें चतुर हूँ

समभाव (समाथा) भी। हे महान!

हीरो! मैं आपको नमन करता हूँ; वह आपकी पूजा करता है।

गुरु उनके चरणों में।

मैं गाँव से इधर-उधर भटकूँगा

गांव से, शहर से शहर, प्रशंसा करते हुए

स्वयंजागृत बुद्ध और सद्‌गुण

(सत्य (धम्म) की (सुधम्मता)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

वहाँ गुरु ने स्वयं उन्हें संपूर्ण विनय पिटक का उपदेश दिया। इसके बाद उन्होंने भारकच्छ, अज्जुक और कुमार कस्सप की कथा का विस्तृत विश्लेषण किया। गुरु ने प्रत्येक निर्णय के लिए अपनी प्रशंसा व्यक्त की, तीनों विचार-विमर्शों का वर्णन किया और थेरा को विनय के संवाहकों में सर्वोपरि स्थान दिया। इसके बाद, उपोस्त के एक दिन उन्होंने भिक्षुओं को अनुशासन के बाध्यकारी नियमों का उपदेश देते हुए तीन श्लोक कहे:

249. "विशेष रूप से संसार का त्याग करके

श्रद्धापूर्वक (सद्धा के साथ), एक नवयुवक

(नवो) जो हाल ही में भिक्षु बना था

(नवपब्बाजितो) सेवा करनी चाहिए (भजेय्य)

अच्छे दोस्त, जो बिना किसी बंधन के शुद्ध जीवन जीते हैं

आलसी होना।

250. "विशेष रूप से संसार का त्याग करके

पवित्र आस्था के साथ, एक नवसिखिए, जिसके पास

नवशिक्षित भिक्षु, भिक्षु के रूप में निवास कर रहे हैं

पुरोहितों (संघ) में, बुद्धिमान

(बुद्धो) भिक्षु को सीखना चाहिए

विनय।

251. "विशेष रूप से संसार का त्याग करके

पवित्र आस्था के साथ, एक नवसिखिए छात्र जिसने

नवनिर्मित भिक्षु, अपने क्षेत्र में चतुर

उपयुक्त रूप से उपयुक्त (कप्पा) या अन्यथा

(अकप्पा) को बिना किसी

सबसे आगे रहने के लिए मजबूर किया जा रहा है

(पुराक्खतो).

वहाँ, सद्धाय का अर्थ है: निमित्तम् (पवित्र आस्था) से चिह्नित; जीविका के उद्देश्य से नहीं; यही अर्थ है। दूसरे शब्दों में, सद्धाय का अर्थ है: कर्मफल (कम्मफल) और तीन रत्नों के गुणों में विश्वास रखने वाला। अभिनिक्खम्म का अर्थ है: गृहस्थ जीवन से बाहर आया हुआ। नवपब्बजितो का अर्थ है: जीवन के प्रथम चरण (वय) में ही भिक्षु बन जाना। नव का अर्थ है, विशेष रूप से शासन (सासन) में अनुशासन के लिए नया, युवा। मित्ते भजेय्या कल्याणे, शुद्धाजीवे अतंदिते का अर्थ है: अच्छे मित्र जिनमें "सौम्य, आदरजनक (गरु-भावनियो)" आदि जैसे गुण (लखण) हों; जो गलत और दुष्ट जीवन शैली (मिच्छाजीव) से दूर रहकर शुद्ध जीवन जीते हों। परिश्रम शुरू करने की स्थिति के कारण आलसी नहीं होना चाहिए; व्यक्ति को आगे बढ़कर सेवा करनी चाहिए; व्यक्ति को उनकी सलाह और निर्देश स्वीकार करके सेवा करनी चाहिए। संघस्मिं विहारं का अर्थ है; भिक्षुओं, पुरोहितों के समूह में सभी प्रकार के कर्तव्यों (वत्तपतिवत्त) का पालन करते हुए निवास करना। सिक्खेथा विनयं बुधो का अर्थ है कि व्यक्ति को ज्ञान (बोधाणा) के कारण उत्कृष्ट रूप से चतुर होने के बाद विनय ग्रंथ (परियत्ती) का अध्ययन करना चाहिए; वास्तव में, विनय ही धर्म का जीवन है; जब वह विनय कायम रहता है, तो धर्म कायम रहता है। विद्वान इसे "बुद्धो" भी पढ़ते हैं; यही इसका अर्थ है। कप्पकप्पेसु का अर्थ है उपयुक्त या अनुपयुक्त मामलों में चतुर; नियम (सूत्र) और उसके अनुकूलन (सूत्रानुलोम) के माध्यम से सूक्ष्म विशेषज्ञ। अपुरक्खतो का अर्थ है; किसी को भी कहीं से भी सम्मान (पुरेक्खारा) की कोई आशा नहीं रखनी चाहिए और न ही लालसा (तन्हा) आदि से प्रेरित या घिरे रहना चाहिए।

वि. 228. बुधो विद्वा विभावी च संतो सप्पन्न कोविदा धीमा सुधि कविब्यत्तो विकक्खना विशारदा।

वी. 229. मेधावी मतिमा पणनो, विनाच विदुरो विदु, धीरो विपसि दोसन्नु बुद्धो च दब्बा विद्दसु।

थेरा उपाली के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(181): उत्तरपाल

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (181) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
181. उत्तरपाल

बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम उत्तरपाल रखा गया। [1] उन्होंने जुड़वां चमत्कार देखा, [2] और विश्वास करके भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अपनी पढ़ाई जारी रखी। एक दिन, अव्यवस्थित स्मृतियों के बीच, कामुक इच्छाएँ उन पर हावी हो गईं, लेकिन एक तीव्र मानसिक संघर्ष के बाद, उन्होंने भ्रष्ट करने वाले भावों (किलेसा) को वश में कर लिया और गंभीर ध्यान में अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

अपनी जीत पर विचार करते हुए, उसने 'शेर जैसी दहाड़' लगाई:

[252] पादिताṃ वात माṃ संताअ अलमत्थविसिंताकाṃ,॥
पञ्चकामागुणा लोके सम्मोहा पतयिंसु माऽ॥ ॥

[253] पक्खन्नो मारविसाये दहसल्लसमप्पितो,॥
असक्खी मैक्कुराजस्सा अहं पास पामुच्चुइतुं॥ ॥

[254] सब्बे काम पहिना मे भव सब्बे विदादिता,॥
चिक्खिणो जातिसंसारो नत्थि दानि पुनभभावो' ति.॥ ॥

[252] मैं वास्तव में बुद्धिमान प्रतीत होता हूँ, और
अच्छे के लिए आवश्यक चीजों पर पर्याप्त चिंतन करने में व्यतीत करता हूँ,
मैंने इंद्रियों की पाँच प्रकार की इच्छाओं को पराजित किया,
जो संसार के [तर्क के] भ्रमित करने वाले हैं।

[253] यद्यपि मारा (मृत्यु के देवता/शैतान) की पहुँच में फंसा हुआ था, शक्तिशाली बाण से
हमला किया गया था, फिर भी मेरी शक्ति
मृत्यु के राजा द्वारा बिछाए गए जाल से मुक्ति पाने के लिए पर्याप्त थी।

[254] अब सभी इंद्रिय-इच्छाएँ दूर हो गई हैं!
अब सभी पुनर्जन्म हमेशा के लिए चकनाचूर हो गए हैं!
जन्म-मृत्यु का शाश्वत चक्र नष्ट हो गया है!
अब मेरे लिए कोई पुनर्जन्म नहीं होगा!

[1] = उत्तर का संरक्षक.

[2] पृष्ठ 36, नोट 1 देखें।

3.12 [181] उत्तरपालत्थेरा के श्लोक पर टीका
पंडितं वत मं संतं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उत्तरपाल का है। इसका उद्‌गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और भगवान विपस्सी की यात्रा के मार्ग पर एक पुल बनवाया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के जन्मों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब वे सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए; उत्तरपाल नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर उन्होंने जुड़वां चमत्कार देखा, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए और अपने भिक्षु कर्तव्यों का पालन किया। एक दिन, जब वे उस इंद्रिय-विषय (आरम्मणु) पर चिंतन कर रहे थे जिसका उन्होंने अनुचित ध्यान (वास) के प्रभाव (अनुभूत) में आनंद लिया था, तब उनके मन में कामुक सुख (कामराग) की लालसा उत्पन्न हुई। उन्होंने उसी क्षण अपने मन को उसी प्रकार वश में किया जैसे किसी चोर को उसकी लूटी हुई संपत्ति सहित पकड़ लिया जाता है, उन्हें पश्चाताप हुआ, उन्होंने विपरीत ध्यान (पटिपक्खमंसिकार) के माध्यम से सभी दुराचारों का त्याग किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के लिए उत्सुकतापूर्वक ध्यान (भावना) में लीन हो गए और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है :—-

“जब भगवान विपस्सी थे

मेरी उपस्थिति में टहलते हुए मैं बन गया

पवित्र मन और अच्छे हृदय वाला और

उनके लिए बनाया गया एक पुल।

इक्यावन युग (कप्पा) पहले, यह था,

जब मैंने पुल बनाया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही है

ब्रिज ऑफरिंग का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने उचित कर्म (पतिपत्ता) पर विचार करने के बाद, शेर की दहाड़ की तरह तीन श्लोक बोले।

252. "यद्यपि मैं निश्चित रूप से एक बुद्धिमान व्यक्ति था,

कल्याण पर विचार करने में सक्षम (अलं)

(अत्था) पाँच धागों के संबंध में

संसार के इंद्रिय सुख, मेरा स्वयं-

मेरे भ्रम ने मुझे निराश किया।

253. मारा के क्षेत्र में प्रवेश करने के बाद, मैं

संयोगवश उसके द्वारा छेद दिया गया था

दृढ़ तीर; लेकिन मैं खुद को संभालने में सक्षम हो गया

स्पष्ट रूप से जाल से मुक्त हो गया

मृत्यु का राजा (मैकू संस. मृत्यु)।

254. सभी इंद्रिय सुख (काम) और (अब)

मैंने सभी अस्तित्वों को त्याग दिया था;

टुकड़े-टुकड़े कर दिया गया; बार-बार के दौर

पुनर्जन्म का उन्मूलन हो चुका था;

अब कोई नया अस्तित्व नहीं रहा।

वहाँ, paṇḍitaṃ vata maṃ santaṃ का अर्थ है: यद्यपि मुझे सुनी-सुनी बातों और चिंतनशील ज्ञान से प्राप्त बुद्धि से ही ज्ञान संपन्न हुआ है। Alamattha vicintakaṃ का अर्थ है: स्वयं और दूसरों के लाभ और कल्याण का स्पष्ट रूप से विचार करने में सक्षम; दूसरे शब्दों में, पर्याप्त ज्ञान (pariyata), लाभ का विचारक; दूसरे शब्दों में, लाभ देखने वाले के लिए दुराचार का नाश करने में सक्षम; थेरा ने यह सब इसलिए कहा क्योंकि वे अंतिम जन्म की अवस्था में थे। Pañca Kāmaguṇā का अर्थ है: शारीरिक सौंदर्य से शुरू होकर आगे तक पाँच प्रकार के इंद्रिय सुख। Loke का अर्थ है: उनके घटित होने के स्थान का संकेत। Sammohā का अर्थ है: आत्म-भ्रम (sammoha) से चिह्नित अज्ञानी ध्यान का कारण। दूसरे शब्दों में, सम्मोह का अर्थ है: स्वयं को भ्रमित करना, आत्म-भ्रम उत्पन्न करने वाला। पातयिंसु का अर्थ है: दृढ़ता की अवस्था से गिराया जाना; दूसरे शब्दों में, उन्होंने मुझे संसार में गिरा दिया, मुझे जो सांसारिक दुनिया से परे जाने की इच्छा रखता था; यही इसका अर्थ है।

पक्खंदो का अर्थ है: तदनुसार प्रवेश करना। मारविसये का अर्थ है; दुराचार का क्षेत्र (किलेसा), वह स्थान जहाँ दुराचार का मार प्रकट होता था; मैं उसके प्रभाव में आ गया था; यही इसका अर्थ है; दूसरे शब्दों में, मैं तदनुसार प्रवेश करके, युवा देवपुत्र (देवपुत्त) मार के अधिकार क्षेत्र (इसरिया) में खड़ा था। दलहसल्लसमप्पितो का अर्थ है: दृढ़, स्थिर; दूसरे शब्दों में, दृढ़ बाण से अभिभूत (समप्पितो); कामवासना के बाण से भेदा हुआ, हृदय पर प्रहार (हदयं आहच्च)। Asakkhiṃ maccurājessa, ahaṃ, pāsā pamuccituṃ का अर्थ है: जब मैं कामवासना (राग) आदि जैसे कांटों को प्रमुख मार्ग (मग्ग) के चिमटे से निकाल रहा था, तब मैं अपने आप को कामवासना (राग) के बंधन (बंधन) के रूप में गिने जाने वाले मृत्यु के राजाओं (मच्चु) के जाल से पूरी तरह मुक्त करने में सक्षम था।

सब्बे कामा पाहिना मे, भवा सब्बे पदालिता का अर्थ है: इसके परिणामस्वरूप, वास्तविकता (वत्थु) और दृष्टि (आरम्मण) आदि जैसी विशिष्टताओं द्वारा विभिन्न श्रेणियों में विभाजित सभी इंद्रिय-संबंधी विकृतियों (किलेषकामा) को मैंने श्रेष्ठ मार्ग (मग्ग) के माध्यम से सुचारु विच्छेदन (समुच्छेद) के प्रभाव से दूर कर दिया है। वास्तव में, जब इंद्रिय-संबंधी विकृतियाँ दूर हो जाती हैं, तो वास्तविकताओं के इंद्रिय सुख (वत्थु कामा) भी त्याग दिए जाते हैं। इसी प्रकार, इंद्रियजन्य (काम) और कर्मजन्य (कम्म) जैसे सभी अस्तित्व मार्ग के ज्ञान (ज्ञान) की तलवार (असि) से कटकर नष्ट (विद्धंसिता) हो गए हैं। वास्तव में, जब इंद्रियजन्य अस्तित्व कट गए, तो स्वतः उत्पन्न होने वाले (उपपत्ति) अस्तित्व भी कटकर नष्ट हो गए। इस प्रकार इंद्रियजन्य अस्तित्वों के कट जाने के कारण, विक्खीणो जातिसंसारो, नत्थि दानिपुनब्भवो। इसका अर्थ पहले ही बताया जा चुका है। यही थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) का स्पष्टीकरण है।

थेरा उत्तरपाल के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(182):अभिभूत

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (182) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
182. अभिभूत
बुद्ध युग में वेट्ठपुरा नगर में एक राजा के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, अभिभूत का नाम अभिभूत रखा गया और पिता की मृत्यु के बाद उन्हें संपत्ति विरासत में मिली। जब बुद्ध उनके नगर में भ्रमण पर आए, तो अभिभूत उनसे मिलने गए और अगले दिन उनका आतिथ्य सत्कार किया। बुद्ध ने कृतज्ञता व्यक्त की और उन्हें धम्म का विस्तृत उपदेश दिया। तब राजा को आस्था प्राप्त हुई, उन्होंने अपनी संपत्ति त्यागकर भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

जब वे निर्वाण के आनंद में लीन थे, तब उनके रिश्तेदार, सलाहकार और सेवक उनके पास विलाप करते हुए आए कि उन्होंने उन्हें बिना मुखिया के छोड़ दिया है। तब उन्होंने उन्हें धर्म का मार्ग सिखाते हुए और अपने त्याग का कारण बताते हुए कहा:

[255] सुनथ नातायो सब्बे यावंतेत्था समागता,॥
धम्मौ वो देसयिस्सामि दुक्ख जाति पुनप्पुना॥॥

[256] अरभथा निक्खमथा युञ्जथा बुद्धसासने,॥
धनाथ मैक्कुनो सेनं नागागारां वा कुंजरो॥॥

[257] यो इमस्मिṃ धम्मविनाये अप्पमत्तो विहेस्सति,॥
पहाय जातिसंसारं दुक्खससंतं करिस्सति' ति.॥॥

[255] हे मेरे सगे-संबंधियों, मेरी बात सुनो,
यहाँ एकत्रित सभी लोगों!
वह मार्ग (धम्म) जो तुम मुझसे सीखोगे: -
बार-बार जन्म लेना कष्टदायी है!

[256] जागृत हो, उठो, त्याग करो और आओ,
और अपने हृदयों को बुद्ध के नियम के अधीन करो।
मृत्यु के राजा की सेनाओं को
वैसे ही झटक दो जैसे हाथी ने भूसे की झोपड़ी को झटक दिया था। [2]

[257] जो कोई भी इस धार्मिक अनुशासन के भीतर,
लगन से समझने आएगा।
पुनर्जन्म के शाश्वत चक्र को दूर कर देगा।
वह सभी दर्द और पीड़ा को हमेशा के लिए समाप्त कर देगा। [3]

[1] स्थान या (राजा)राजा का कोई अन्य उल्लेख अभी तक नहीं मिला है, लेकिन मध्य की चार पंक्तियाँ, साय. निक., i. 156 में, एक अभिभू के मुख से कही गई हैं, जो गौतम बुद्ध द्वारा बताई गई एक कहानी के अनुसार सिख बुद्ध के युग में एक भिक्षु (भिक्षु) थे।

[2] श्लोक 1147 देखें।

[3] ये अंतिम आठ पंक्तियाँ अन्यत्र बुद्ध को सौंपी गई हैं, चार नागसेन (मिलिंदा, ii. 60) द्वारा, और चार महान मृत्यु की पुस्तक (संवाद, ii. 128) में। पूर्व को कथा वत्थु, ii. 3, और दिव्यावदान, पृष्ठ 300 में भी ऐसा ही सौंपा गया है, लेकिन देवताओं (इरेमेन, पृष्ठ 569) और भिक्षु अभिभू को साम्य. निक., i. 156/ में।

3.13 [182] अभिभूतत्थेरा के छंद पर टिप्पणी

सनाथा ञातयो सब्बे से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा अभिभूत का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, वे भगवान वेस्सभु के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म हुए; बुद्धि प्राप्त करने पर, वे अपने जैसे अच्छे मित्रों पर अपनी अच्छी निर्भरता (सन्निस्सय) के कारण विशेष रूप से धर्मपरायण और शासन (सासन) के प्रति समर्पित हो गए। जब गुरु परिनिर्वाण में प्रवेश कर गए, तो उन्होंने स्वयं सबसे पहले चिता की आग को सुगंधित जल से बुझाया, जब बहुत से लोग उनके अवशेषों को इकट्ठा करने का प्रयास कर रहे थे। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और वेथापुरा नगर में एक शाही परिवार में पुनर्जन्म हुए, जब इस बुद्ध का उदय हुआ; अपने पिता के निधन के बाद, अभिभूत नाम प्राप्त करके उन्होंने अपने संप्रभु कर्तव्य का निर्वाह किया। उसी समय, भगवान बुद्ध अपने क्षेत्रों का भ्रमण करते हुए धीरे-धीरे उस नगर में पहुँचे। इसके बाद, उस राजा ने यह सुनकर कि "भगवान बुद्ध मेरे नगर में आ गए हैं," गुरु के समक्ष जाकर सत्य (धम्म) का उपदेश सुना और दूसरे दिन उन्होंने एक विशाल दान किया। भोजन करने के बाद, भगवान बुद्ध ने राजा की इच्छा के अनुरूप कृतज्ञता व्यक्त करते हुए सत्य (धम्म) का विस्तृत उपदेश दिया। सत्य (धम्म) को सुनकर उन्हें पुण्य (पसाद) प्राप्त हुआ, उन्होंने अपना संप्रभुता त्याग दी, भिक्षु बन गए और अरहंतत्व की कल्पना की। इसलिए अपदान में कहा गया है :

"जब महान ऋषि वेस्साभू का शरीर

जल रहा था, मैंने मिठाई पकड़ ली-

सुगंधित पानी से आग बुझाई

अंत्येष्टि की चिता का।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने अंतिम संस्कार की आग बुझा दी।

मुझे किसी भी बुरी घटना का स्मरण नहीं है;

यह मेरी सुगंधित मेहनत का फलदायी परिणाम है।

पानी।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे मुक्ति (विमुक्ति) के आनंद में लीन थे; उनके रिश्तेदार, मंत्री, सलाहकार (पारिसाज्जा), नागरिक और विभिन्न क्षेत्रों के लोग वहाँ एकत्रित होकर विलाप करने लगे; "आदरणीय गुरुदेव! हमें संरक्षण से वंचित करके आपने भिक्षु क्यों बन गए?" अपने रिश्तेदारों के नेतृत्व में उन लोगों को विलाप करते देख, थेरा ने तीन श्लोक कहे, ताकि वे उन्हें अपने भिक्षु बनने के कारण को मुखेन के माध्यम से प्रकट करते हुए सत्य (धम्म) का उपदेश दे सकें।

255. "हे सभी रिश्तेदारों, जितने भी हों

यहाँ सब एकत्रित हैं! सुनो; मैं तुम्हें सिखाऊँगा

आपको सत्य (धम्म) का ज्ञान है। पुनर्जन्म (जाति)

बार-बार दुख सहना कष्टदायक होता है (दुक्खा)।

256. "प्रयास करो (आरम्भत); छोड़ दो"

आपकी वासना पीछे (निक्कमथा); सहयोगी

आप स्वयं (युंजथा) इस व्यवस्था के साथ

बुद्ध की सेना को नष्ट कर दो (धुनाथ)।

मृत्यु का (मैकू), हाथी के समान

(नष्ट करना) सरकंडे के निवास (नालागारा) को।

257. "जो कोई भी लगन से निवास करेगा (विहस्सति)

सत्य (धम्म) की इस शिक्षा में और

वह अनुशासन (विनय) का अंत कर देगा।

त्याग करने के बाद होने वाला दर्द (दुक्खा)

पुनर्जन्मों का चक्र (जातिसंसार)।

वहाँ, 'सुणाथा' का अर्थ है: चुपचाप सुनो (निसामेथा); अब, मेरे द्वारा बोले जा रहे शब्दों को ध्यानपूर्वक सुनो (उपधारेथा); यही इसका अर्थ है। ' नातयो' का अर्थ है: अपने सभी रिश्तेदारों को मुख्य (पामुख) बताते हुए उन्हें संबोधित करना; इसी कारण उन्होंने कहा: "सब्बेयवंत'एत्था समागता। " इसका अर्थ है: जितने भी (यावन्तो यत्थका) यहाँ एकत्रित हैं; दूसरे शब्दों में, जो मेरे इस संन्यास के कारण एकत्रित हुए हैं; यही इसका अर्थ है।

अब, इस संदर्भ में जो भी शब्द कहे गए हैं, जो उसे सुनने का आदेश देते हैं (आणत्तिका), इस प्रकार (संध्याय): "सुनो," और इस प्रकार वचनबद्ध करते हैं (पटिजानित्वा): "धम्मं वो देसयिस्सामि ," और इस प्रकार उपदेश देना शुरू करते हैं: "दुक्खा जाती पुनप्पुनं" इत्यादि। यहाँ, दुक्खा जाती पुनप्पुनं का अर्थ है: यह, अर्थात्, पुनर्जन्म (जाति) कष्टदायी (दुक्खा) है क्योंकि यह विशेष रूप से (अधिष्ठान) अनेक प्रकार के (विहित) कष्टों (दुक्खा) का निवास स्थान है, जिनमें गर्भ में उतरने से उत्पन्न (मूलक) होने वाले कष्ट (मूलक) और वृद्धावस्था आदि शामिल हैं, जो एक अन्य (भेदक) श्रेणी है। बार-बार जन्म लेने से अत्यधिक पीड़ादायक कष्ट (दुक्खा) उत्पन्न होता है।

इस प्रकार यह बताने के लिए कि "पुनर्जन्मों (जाति) से कहीं आगे जाने के उद्देश्य से प्रयास करना चाहिए", उन्होंने कहा; " आरेम्भत " इत्यादि। यहाँ, आरेम्भत का अर्थ है: आपको अपने प्रयास (वीर्य) को प्रयास तत्व (धातु) के रूप में गिनना चाहिए। निक्कमत का अर्थ है: आपको आलस्य के किनारे से बाहर निकलने की स्थिति के कारण बाहर जाने के तत्व के रूप में गिने जाने वाले प्रयास से श्रेष्ठ प्रयास करना चाहिए। युंजथा बुद्धसासने का अर्थ है: चूंकि आत्म-संयम (नैतिक उपदेशों द्वारा), इंद्रियों के द्वार को अच्छी तरह से सुरक्षित रखने (गुत्त), भोजन की उचित सीमा जानने (भोजने मत्ञुता), सजगता और विचारशीलता (संपजञ्ञं) जैसे गुणों में स्थापित (पतित्तितनं) व्यक्तियों की जागृति (जागरियानुयोग) के पालन से प्रयासों (आरम्भ) और परिश्रम (निक्कम) के तत्व (धातुयो) फलते-फूलते (संपज्जन्ति) हैं; इसलिए, आपको भगवान बुद्ध के उपदेशों (सासने) पर ध्यान केंद्रित (युत्तपयुत्त) करना चाहिए, जिन्हें शांत संयम (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के रूप में माना जाता है। (विपस्सना), या उच्च नैतिक उपदेश (अधिशील) और आचरण (सिक्खा) जो समान रूप से (तथाभूता) हो गया है। धुनाथा मच्चुनो सेनां, नाआगारं व कुंजरो का अर्थ है; आपको भ्रष्टता (किलेसा) के समूह (गण) को ठीक उसी प्रकार हिलाना (धुनाथा), 'तोड़ना' (विमेथा) और नष्ट करना (विद्धंसेथा) चाहिए, जैसे बलवान (उपपन्नो) हाथी एक ही क्षण में सरकंडों से बने घर और मृत्यु के राजा को नष्ट कर देता है, जो उन तत्वों (धातु) पर अपना नियंत्रण रखता है और अपनी कमजोर और दुर्बल सेना को, जिसे उसकी सेना माना जाता है और जो जीवित प्राणियों को मृत्यु के प्रभाव क्षेत्र (वसं) में ले जाती है, इस प्रकार विधिवत प्रदर्शन करने के बाद (पटिपज्जंता); अतः, यही अर्थ है।

उन्होंने "यो इमस्मिं" से शुरू होने वाले तीसरे श्लोक का उच्चारण इस प्रकार किया: बुद्ध के विधान में, जो व्यक्ति इस प्रकार प्रयास करता है, उसे दुखदायी पुनर्जन्मों (जातिदुक्खा) से मुक्ति और निश्चित सुख प्राप्त होता है। यह श्लोक आसानी से समझ में आ जाना चाहिए।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा अभिभूत

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(183):गौतम

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (183) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
183. गौतम
इस बुद्ध युग में शाक्य वंश में पुनर्जन्म लेकर, वे केवल अपने वंश के नाम से ही जाने जाने लगे। जब भगवान (बुद्ध) उनके परिवार में आए, तब उन्हें आस्था प्राप्त हुई और भिक्षु संघ में प्रवेश करके और अंतर्दृष्टि के लिए अध्ययन करके उन्होंने छह प्रकार की अभिज्ञा (आध्यात्मिक शक्तियों का उच्चतर ज्ञान) प्राप्त की। अब, जब वे [172] निर्वाण के आनंद में जी रहे थे, तो एक दिन उनके परिवार ने उनसे पूछा कि उन्होंने उन्हें क्यों त्याग दिया और भिक्षु बन गए। तब उन्होंने संसार में सहे गए दु:ख और निर्वाण के सुख, जो उन्हें तब प्राप्त हुआ था, दोनों को दर्शाने के लिए कहा:

[258] सअसारꞑ [32] हाय निरायꞑ अगाचिसाꞑ॥
पेटालोकमगमाꞑ पुनप्पुनाꞑ,॥
दुक्खममहि पि तिरच्चनयोनियं॥
नेकधा हि वुसितां सिराण माया.।॥

[259] मानुषो च भावोभिराधितो॥
सग्गकायमगमाꞑ साकीꞑ साकीꞑ,॥
रूपधातुसु अरूपधातुसु॥
नेवासानिसु असानिसुथितां॥॥

[260] संभव सुविद्ता असारका॥
सोंखता पचलिता सदेरिता,॥
तं विदित्वा महामत्तसम्भवाऽ,॥
सन्तिमेव सतिमा समज्झागन' ति.॥॥

[258] देखो! जैसे-जैसे मैं प्राणियों के बीच (पुनर्जन्मों में) घूमता रहा, मैं नरकलोक में आया,
और अनगिनत बार प्रेतों (भूतों) के दुखद लोक में भी।
बुराई [1] ने मुझे पशु-जगत के अनेक रूपों में फिर से जकड़ लिया।

[259] मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म पाकर मैं काफी प्रसन्न हूँ, स्वर्ग तक मैं शायद ही कभी पहुँच पाया हूँ।
हाँ, दृष्टि के क्षेत्र में, उन क्षेत्रों में जहाँ सभी इंद्रियाँ समाप्त हो गई हैं
, मुझे रखा गया है, और चेतना और अचेतन के बीच के क्षेत्रों में। [2]

[260] यह सब कुछ मेरे सामने स्पष्ट रूप से वास्तविक मूल्य से रहित है,
पूर्ववर्ती परिस्थितियों से उत्पन्न, अस्थिर और निरंतर बहता हुआ।
इसलिए अपने इस आत्म के अस्तित्व में आने को समझते हुए, सजग होकर,
अंततः मुझे शांति प्राप्त हुई, हाँ, वह शांति [जिसमें मैं विश्राम कर रहा हूँ]।

[1] टीका में श्लोक में दिया गया अजीबोगरीब अनावश्यक दुक्खमम्ही , लेकिन व्याख्या में दुक्खम्ही के रूप में पुनः व्यक्त किया गया है।

[2] अस्तित्व के इन तलों पर देखें संकलन, पृष्ठ 137 आगे।

3.14 [183] गौतमथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
संसारं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा गौतम का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करने वाले, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म करने वाले इस व्यक्ति ने दिवंगत बुद्ध की चिता (चितकं) पर आठ चंपक पुष्पों का आदरपूर्वक अर्पण किया, जब भगवान सिख परिनिर्वाण में प्रवेश कर रहे थे और जब देवता और मनुष्य उस बुद्ध के पार्थिव अवशेषों को आदरपूर्वक अर्पण कर रहे थे। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्रों में विचरण करते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे शाक्य वंश में पुनर्जन्म हुए। उन्हें गौतम के रूप में दीक्षा दी गई , लेकिन उनके कुल के माध्यम से, और वयस्क होने पर, उन्होंने गुरु के रिश्तेदारों के मिलन में उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म करके, छह प्रकार के उच्च ज्ञान से युक्त अरहंत बन गए। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

मैंने आठ चंपक के फूल अर्पित किए।

सिख धर्म के लिए, जो दुनिया का रिश्तेदार है, जब

भगवान का अंतिम संस्कार किया जा रहा था।

इकत्तीस युग (कप्पा) पहले जो मैंने बनाया था

मैंने फूल चढ़ाए थे; मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

मेरी श्रद्धापूर्वक भेंट का परिणाम

अंत्येष्टि की चिता।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के निर्देशों का पालन किया जा चुका था।

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से संपन्न अरहंत बनने के बाद, वे मुक्ति के आनंद में लीन थे, तभी एक दिन उनके रिश्तेदारों ने उनसे पूछा, "आदरणीय महोदय! हमें त्यागने के बाद आपने भिक्षु क्यों बन गए?" इस पर उन्होंने तीन श्लोकों में सत्य (धम्म) का उपदेश दिया, ताकि वे अपने द्वारा बार-बार जन्म-जन्मों के चक्रों में भोगे गए कष्ट (दुक्खा) और अब प्राप्त निर्वाण के सुख को प्रकट कर सकें।

258. "सचमुच! चारों ओर घूमते हुए

बार-बार पुनर्जन्म लेने पर, मैं नरक की अवस्था में पहुँच जाऊँगा।

और बार-बार पेटा की दुनिया में जाएं;

जानवरों के गर्भ में मैंने दर्दनाक कष्ट सहे।

दुःख (दुक्खा); वास्तव में, कई बार ऐसा हुआ था

मैं लंबे समय से इस जीवन को जी रहा हूँ।

259. "मानव अस्तित्व साझा किया गया था (अभिराधितो)

इसके अलावा, मैं बार-बार वहाँ जाता रहा।

स्वर्ग के शरीर (सग्गकाय) के साथ-साथ

ब्रह्मा का रूप और निराकार जगत

तत्व (धातु); मैं ऐसे ब्रह्मा में रहा था

संसार तो बोध भी नहीं है (nevasaññīsu)

और धारणा (asaññīsu) के रूप में।

260. "अस्तित्वों को अच्छी तरह से समझा गया था; वे

उनमें कोई सार (सार) नहीं है। वे

निर्भर सामग्रियों से बना, अस्थिर और

हमेशा नाजुक (अरिता); समझने के बाद

अपने अस्तित्व के संदर्भ में, मैंने इसे प्राप्त कर लिया है।

ध्यानमग्न रहने से ही शांति (सन्ती) प्राप्त होती है।

वहाँ, संसारं का अर्थ है: कर्मों के दुराचार (कम्मकिलेसा) के कारण बार-बार जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकना (चवन) और पाँचों प्रकार के जीवन चक्रों (गति) में स्वतः उत्पन्न होना; यही इसका अर्थ है। 'ही' मात्र एक कण है। निरयं अगच्छिसं का अर्थ है: मैं गर्भाधान के द्वारा संजीव से आरंभ होने वाले आठ प्रकार के नरकों और कुक्कुल से आरंभ होने वाले सोलह प्रकार के प्रमुख नरकों में पहुँचा। "पुनप्पुनं" का उल्लेख भी यहाँ किया जाना चाहिए।

पेटलोकं का अर्थ है: पेटों का क्षेत्र (दुःखद दिवंगत आत्माएँ); पेट के शरीर का अस्तित्व, जिसे भूख, प्यास आदि के रूप में वर्गीकृत किया गया है; यही इसका अर्थ है। आगमं का अर्थ है: मैं गर्भ धारण करके पहुंचा। पुनप्पुनं का अर्थ है: कभी-कभी (अपरापरं)। दुक्खमंहिपि का अर्थ है: विशेष रूप से चोट पहुँचाने वाले (अभिघिता) तेज (तीखी) चाबुक से एक दूसरे को हांकने जैसी पीड़ादायक पीड़ा के साथ बुरा संबंध (दुस्साहय पि); वास्तव में, लिंगविपल्लास ने इसे "दुक्खमंहिपि" कहकर लिंग विकृति पैदा की है। तिरच्छानयोनियं का अर्थ है: पशु, पक्षी आदि के गर्भ में। नेकाधा ही का अर्थ है: कई प्रकार से, जैसे ऊँट, गाय, गधे, कौवे, सारस, चील आदि; चिरं का अर्थ है लंबे समय तक; मया वुसिटं का अर्थ है निरंतर भयभीत रहने के कारण मुझे कष्ट भोगना पड़ा आदि। यहाँ "चिरं" का प्रयोग यह दर्शाने के लिए किया गया है कि "एक प्राणी जो किसी पशु के गर्भ में जन्मा, चारों ओर से अत्यधिक भ्रमित होने के कारण वहाँ कभी-कभी लंबे समय तक रहता था।"

मानुसोपि च भावोऽभिराधितो का अर्थ है: ऐसे पुण्य कर्मों के संयोजन (समवय) से मैंने भी मनुष्य अस्तित्व प्राप्त किया (अभिराधितो), पहुंचा (साधितो) और हासिल किया (अधिगतो)। यहां एक आंख वाले कछुए के दृष्टांत पर सूत्र का उल्लेख किया जाना चाहिए (उदाहरितब्बं)। सग्गकाय' मगमं सकिं सकिं का अर्थ है: मैं एक बार फिर, किसी न किसी समय, स्वतः उत्पन्न होकर (उपपज्जनवसेना) इंद्रिय जगत के दिव्य शरीर (कामावचरदेवकायं) में प्रवेश करता हूं, जिसे स्वर्गीय मार्ग (सग्गगति) माना जाता है। रूपधातुसु का अर्थ है; सजीव (ब्रह्मा) के अस्तित्व में, जो सामान्य लोगों (पुथुज्जन) के लिए सर्वांगीण अस्तित्व का सार है। अरूपधातुसु का अर्थ है: निराकार (ब्रह्मा के) अस्तित्व में। नेवसञ्ञीसु असञ्ञासु ṭhitaṃ का अर्थ है; सजीव और निराकार तत्वों (धातु) के बीच भी, उन (ब्रह्माओं) में जो पूर्णतः बोध से रहित (सञ्ञासु) हैं; वास्तव में, मैं तब (ṭhitaṃ) स्वतः उत्पन्न होकर ब्रह्मा के उन निवासों में रहा था जहाँ न तो चेतना है और न ही अचेतना, तथा जहाँ कोई बोध नहीं है (असञ्ञा); अतः, संदर्भ को ध्यान में रखते हुए इसकी व्याख्या की जानी चाहिए। वास्तव में, यहाँ, बोधहीन (नेवसञ्ञी) होकर भी, बोधहीन और अबोधहीन ब्रह्मा के अस्तित्व को एकत्रित किया गया है (नेवसञ्ञीना सञ्ञीभवो

गहितो)। यदि इन दोनों अस्तित्वों को भी मान लिया जाए (गयहंती) परन्तु सजीव और निराकार तत्वों (रूपारूपधातु) के अधिग्रहण (गहनेन) से, जो कुछ भी इससे बाहर है, वह वहाँ है, अर्थात्; वे जो स्थायित्व की धारणा रखते हैं (निच्चसन्निनो) और वे जो अस्तित्व से मुक्ति की धारणा रखते हैं (भवविमोक्खसन्निनो), उनके लिए वह धारणा गलत होने की स्थिति (मिच्छा) को दर्शाने के उद्देश्य से अलग-अलग ली गई है; इस प्रकार, इसे देखा जाना चाहिए।

इस प्रकार, उन्होंने दो श्लोकों के माध्यम से, जन्म-जन्म के चक्र (वट्टदुक्खा) में स्वयं द्वारा भोगे गए कष्ट (अनुभवम्) को दर्शाया, जो कि अनादिम (अनादिमति) के कारण अस्तित्व के मूल को पूर्णतः न काट पाने (अनुपच्छिन्नता) की स्थिति के कारण होता है। अब उन्होंने तीसरे श्लोक का आरंभ "संभव" से किया, ताकि वे उस (अस्तित्व के मूल) को पूर्णतः काट पाने के कारण जन्म-जन्म के चक्र (विवट्ट) से मुक्त होने के सुख का आनंद ले सकें। यहाँ, संभव का अर्थ है: अस्तित्व; वास्तव में, कारण-निर्भरता (हेतुपच्चय) के संयोजन (समवाय) से ऐसे अस्तित्व उत्पन्न होते हैं जैसे कि इंद्रिय-संबंधी अस्तित्व (कामभव) आदि। अतः इसे संभव (सह-अस्तित्व) कहा गया है। सुविदित का अर्थ है: आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के साथ जुड़े सही मार्ग (मग्ग) के ज्ञान द्वारा उत्कृष्ट रूप से समझा गया। असारका आदि अभिव्यक्तियाँ उनके समझने के तरीके को दर्शाती हैं। यहाँ, असारका का अर्थ है: स्थायित्व के सार (सार) से रहित (रहित)। संखत का अर्थ है: एकत्रित (समेच्च) होकर, आश्रित कारणों (पच्चयेहि) के साथ मिलकर (संभूय्या) निर्मित होना। पचलिता का अर्थ है: उप्पदा और जरा आदि विभिन्नताओं (पकारा) के कारण, तथा एक साथ निर्मित होने (संखत) की अवस्था के कारण, अस्थिर (अनवट्ठिता)। सद' एरिता का अर्थ है: हमेशा विघटन (भंग) से विचलित (एरिता) होने के कारण; वे अस्थिर (इत्तरा) हैं, विघटन (भंगगामिनो) की ओर अग्रसर हैं, और नाशवान (पभंगुनो) हैं; यही अर्थ है। तं विदित्वा महामत्तसंभवं का अर्थ है: जैसा कहा गया है, उसे समझकर, संबद्ध होने (संखत) की प्रकृति, आत्मा का अस्तित्व (अत्तसंभवं), स्वयं में जो कुछ हुआ है (सम्भूतं), प्रशासन (इस्सर) द्वारा स्वयं की अवस्था (अत्तयत्तं) इत्यादि, सर्वांगीण ज्ञान (परिञ्ञा) की प्राप्ति (अभिसामय) द्वारा दूसरों की अवस्था (अपरायत्तं), समज्झगं का अर्थ है: मैंने श्रेष्ठ मार्ग (अरीयमग्ग) पर ध्यान (भावना) विकसित करके तदनुसार प्राप्त किया, शांतिमव का अर्थ है निर्वाण जो उसका विपरीत (पटिपक्खा) हो गया था, सतिमा का अर्थ है मार्ग (मग्ग) के ज्ञान की जागरूकता के माध्यम से, प्राप्त करने के बाद ध्यानमग्न। इस प्रकार, थेरा ने अपने रिश्तेदारों को सत्य (धम्म) का उपदेश देकर (मुखेन) अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया।

थेरा गौतम के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(184): हरिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (184) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
184. हारिता
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, जन्म के अहंकार से प्रेरित होकर, वे अन्य पुरुषों को नीच कुल का कहने की आदत में पड़ गए। धम्म का पाठ सुनने, विश्वास करने और भिक्षु संघ में प्रवेश करने के बाद भी, इस आदत के संचयी बल के कारण वे इस पर अडिग रहे । [173] लेकिन एक दिन, भगवान (बुद्ध) का उपदेश सुनने के बाद, उन्होंने अपनी मानसिक प्रक्रिया की समीक्षा की और अहंकार और घमंड के प्रति समर्पण देखकर व्यथित हुए। इन सबको त्यागकर, उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, निर्वाण के आनंद में रहते हुए, उन्होंने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की गवाही दी: [1]

[261] यो पुब्बे करणियानि पच्च सो कतुमिच्छति,॥
सुखा सो धंसते ठाना पच्च च मनुतप्ति॥ ॥

[262] यंहि कयिरा तांहि वदे यं न कयिरा न तां वदे,॥
अकरोंतं भस्मानां परिजानन्ति पंडिता॥ ॥

[263] सुसुखं वात निब्बाणं सम्ममबुद्धदेसितां,॥
असोकं विरजां खेमं यथा दुक्खं निरुज्जति' ति.॥ ॥

[261] जो व्यक्ति कल
उन कामों को करने में प्रसन्न होता है जो उसे कल ही करने चाहिए थे, वह
सुखद अवसर खो देता है,
उसे शीघ्र ही भयंकर पश्चाताप होगा।

[262] उसे केवल वही बात करने दो जो की जानी चाहिए;
उसे वह बात नहीं करनी चाहिए जो नहीं की जानी चाहिए!
जो बहुत बोलता है परन्तु करता नहीं,
बुद्धिमान लोग उसका मूल्यांकन करते हैं और उसकी योग्यता के अनुसार उसका आकलन करते हैं।

[263] हे महान, हे अद्‌भुत है निर्वाण का आनंद,
जो पूर्णतः जागृत (भगवान बुद्ध) द्वारा प्रकट हुआ है!
वहाँ कोई दुःख नहीं, कोई वासना नहीं, निश्चित आश्रय है,
जहाँ दुःख और पीड़ा हमेशा के लिए नष्ट हो जाते हैं!

[1] हरिता की कहावत (गाथा) बकुला की (CLXXII) के समान है। सी एफ XXIX का हारीत भी, सावत्थी का एक ब्राह्मण (पुजारी) भी।

3.15 [184] हरित्तथेरा के श्लोक पर टीका
यो पुब्बे करणीयानी से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा हारित का है। इसका उद्‌गम क्या है? इनका भी जन्म भगवान पद्ममुत्तरा (बुद्ध) के समय एक पारिवारिक घर में हुआ था; बुद्धि प्राप्त करने पर, जब गुरु जी परिनिर्वाण हुए और उनकी चिता पर आदरपूर्वक आहुति दी जा रही थी, तब इन्होंने आदरपूर्वक इत्र का अर्पण किया। इस पुण्य कर्म के कारण, इन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब इनका जन्म श्रावस्ती में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ; हारित नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर, इन्होंने जन्म के अहंकार (जातिमान) के कारण दूसरों के साथ अपशब्दों का प्रयोग किया। वह भिक्षुओं के समक्ष गए, उनके सत्य (धम्म) के उपदेश सुने, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की और यद्यपि वे भिक्षु बन गए थे, फिर भी उन्होंने अपने निम्नतर (वसलसमुदाचार) व्यवहार को नहीं छोड़ा (विस्साज्जी), क्योंकि वे लंबे समय से इससे परिचित थे (परिचित)। फिर, एक दिन, सत्य (धम्म/मार्ग) को सुनकर, उन्हें पश्चाताप हुआ और उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े, अपने मन में जो कुछ हुआ था उसका अन्वेषण किया (उपपरिक्खन्तो), अहंकार और विचलित (उद्धच्च) द्वारा बहकाए जाने की स्थिति का पता लगाया, उसे त्याग दिया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के विकास में तल्लीन हो गए और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए अपदान में कहा गया है :

“जब अंत्येष्टि की चिताओं के ढेर लगे हुए थे

विभिन्न प्रकार के इत्र बनाए जाते हैं

जब उन्हें एक साथ लाया जा रहा था, तो मैं धार्मिक हो गया।

अच्छे मन और अच्छे हृदय वाले और उन्होंने मेरी श्रद्धा को साकार किया

मुट्ठी भर मिठाई का अर्पण (मुट्ठी)

सुगंध।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने अपनी श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित की थी।

अंतिम संस्कार की चिता तक; मुझे याद नहीं है

कोई भी दुष्ट अस्तित्व; यही फलदायी है

मेरी श्रद्धापूर्वक भेंट का परिणाम

अंत्येष्टि की चिता।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत बनने के बाद, उन्होंने मोक्ष के आनंद का अनुभव करते हुए, भिक्षुओं को उपदेश देते हुए तीन श्लोकों के माध्यम से अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट किया, जो " यो पुब्बे करणीयानी " से शुरू होते हैं। इनका अर्थ पहले ही बताया जा चुका है (हेट्ठा)।

थेरा हारिता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(185):विमला2

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (185) ------>>>> अगला

अध्याय III.
तीन श्लोक
185. विमला2
बुद्ध युग में बनारस में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने थेरा अमित्ता के अधीन भिक्षु संघ में प्रवेश किया, [1] और उनकी प्रेरणा से अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने अपने एक साथी भिक्षु को इस प्रकार संबोधित किया:

[264] पापमित्ते विवज्जेत्वा भजेयुत्तमपुग्गले॥
ओवाडे कासा तिट्ठेया पत्थेंटो अकलां सुखां॥॥

[265] परित्तं दारुमारूय यथा सीदे महानवे,॥
एवं कुसीतमगम्मा साधुजीविपि सीदति,॥॥

[266] पविवित्तेहि अरियहि पहितत्तेहि झायिहि॥
निच्चैऽ अरद्धवीर्येहि पण्डितेहि सहावसेऽ ति.॥॥

[264] बुरे विचारों वाले मित्रों से दूर रहो,
और सर्वश्रेष्ठ पुरुषों में से अपना चुनाव करो। [174] उसकी सलाह को दृढ़ता से मानो, और अपने हृदय को
अपरिवर्तनीय सुख की आकांक्षा करने दो।

[265] जैसे [2] कोई व्यक्ति, एक छोटे से तख्ते पर सवार होकर,

मध्य-महासागर में लहरों के नीचे डूब जाता है,
वैसे ही निर्दोष जीवन वाला भी डूब गया,
जब उसे आलस्य के आदमी के साथ फेंक दिया गया।

[266] ऐसे व्यक्ति से भला क्यों दूर रहो,
आलसी और ऊर्जाहीन लोगों से?
तुम उनके साथ रहो जो एकांत में रहते हैं,
बुद्धिमानों के साथ, उन महान लोगों के साथ जिन्होंने त्याग कर दिया है,
जो हमेशा तल्लीन ध्यान में लगे रहते हैं।

[1] इस विचित्र नाम (? अमिता) पर जाट ., vi. 271.

[2] ऊपर देखें, CXXXIV. यह थेरा कहीं और नहीं मिलता, न ही विमला, सेइंग(गाथा) एल के लेखक के समान है।

3.16 [185] विमलथेरा के श्लोक पर टीका
पापमित्ते से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा विमला का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, पुनर्जन्मों के चक्र से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्मों का संचय करते हुए, इस और उस जन्म में, भगवान पद्ममुत्तरा (बुद्ध) के समय एक पारिवारिक घर में उनका पुनर्जन्म हुआ। बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने गुरु के गुणों का चिंतन किया, पवित्र मन के हो गए, और गुरु के परिनिर्वाण होने पर चमेली के फूल अर्पित किए, जबकि भक्त पवित्र उत्सवों (साधुकीलन) के दिनों के बाद गुरु के पार्थिव अवशेषों को लेकर श्मशान घाट गए। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे बनारस के एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए; विमल नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर, वे थेरा सोमनित्त के मार्गदर्शन में भिक्षु बन गए, और उसी थेरा के आग्रह पर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर चल पड़े, और कुछ ही समय में अरहंत पद प्राप्त कर लिया। इसलिए अपदान में कहा गया है :

“पवित्र और नेक दिल बनकर-

जब शारीरिक अवशेष (के)

बुद्ध को ले जाया जा रहा था और

ढोल बजाए जा रहे थे (वज्जमानासु)।

मैंने लाओ-रेड का अपना श्रद्धापूर्वक अर्पण किया।

फूल (पट्टिपुप्फहा)

एक लाख युग (कप्पा) पहले,

मैंने विशेष रूप से यही किया था।

फूलों का आदरपूर्वक अर्पण; मैं करता हूँ

किसी भी बुरी सत्ता को याद नहीं; यह

यह मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध के शरीर को अर्पित करना।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने सहयोगी भिक्षु को उपदेश देने के उद्देश्य से तीन श्लोक कहे।

264. "दुष्ट मित्रों से बचकर, एक

सबसे उत्कृष्ट सेवा प्रदान करनी चाहिए

व्यक्तिगत; व्यक्ति को उसके नियमों का पालन करना चाहिए

सलाह; अविचल आनंद की आकांक्षा

(अकला-सुख).

265. "एक के अनुसार, पर सवार होकर

लकड़ी का छोटा टुकड़ा (दारू), डूब जाता है

उसी प्रकार, विशाल गहरे महासागर में भी यही स्थिति है।

यहां तक कि एक अच्छा जीवन नेता (साधुजीवी) भी

उसके साथ मिलने के कारण डूब जाता है

एक आलसी व्यक्ति (कुसित); इसलिए, एक

आलसी आदमी से हर तरह से बचना चाहिए।

हीन परिश्रम (हीनवीरिया)।

266. "बुद्धिमानों के साथ रहना चाहिए"

जो हमेशा अच्छी शुरुआत करते हैं

उनका प्रयास (आरद्धवीर्य), जो हैं

कुलीन (आरिया) अपने एकांतवास (पविवित्त) में

और जिनका ध्यान इस ओर केंद्रित था

निब्बाण (पहितत्ता) और कौन प्रवेश कर सकता है

ध्यान पर।

वहाँ, पापमित्ते का अर्थ है: अच्छे मित्र नहीं, निम्न स्तर के बुरे लोग (हीनवीरिया)। विवज्जेत्वा का अर्थ है: सेवा न करके दूर से बचना। भजेय्यात्तमपुग्गलं का अर्थ है: किसी अच्छे, बुद्धिमान और अच्छे मित्र की सेवा करना, उससे सलाह और शिक्षा प्राप्त करना (अनुसानी)। ओवादे च'अस्सा तिट्ठेय्या का अर्थ है: अपने अच्छे मित्र की सलाह और शिक्षा का पालन करना (ओवाद) और उसके अनुसार उचित कर्म करना (पटिपज्जन)। पत्थेंतो का अर्थ है: इच्छा करना (आकम्भंतो)। अचलं सुखं का अर्थ है: निर्वाण का आनंद और फल प्राप्ति का सुख। वास्तव में, इसे भी अविचल (अविचल) कहा गया है, क्योंकि यह अविचल अवस्था (स्कुप्पभावतो) में है। बाकी बातें तो कही ही जा चुकी हैं।

थेरा विमला के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

तीसरे खंड पर टिप्पणी पूरी हो चुकी है।

पहला भाग पूरा हो गया है। छोटा खंड

(खुद्दक निकाय)

थेरागाथा पर टीका

दूसरा हिस्सा
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(186):नागसामाला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (186) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
186. नागासमाला
इस बुद्ध युग में शाक्य राजा वंश में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने जीवन की नश्वरता को अपना सिद्धांत बनाया और अंतर्दृष्टि जागृत करके अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने अपने स्वयं के अनुभव में घटित ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) की गवाही इस प्रकार दी:

[267] अलंक्ता सुवासना मालिनी चंदानुसदा,॥
मज्झे महापथे नारी तुरिये नच्चन्ति नाटकी॥ ॥

[268] Piṇḍikāya paviṭṭhohaṃ gacchanto naṃ udikkhisaṃ,‖
Alaṃkataṃ savasanaṃ maccupāsaṃva oḍḍitaṃ.‖ ‖

[269] ततो मे मनसिकारो योनिसो उदपज्जथा,॥
आदिनावो पतुराहु निब्बिदा समतिथथा॥ ॥

[270] ततो चित्तāŋ विमुची मे पासा धम्मसुधम्मताŋ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[267] गहनों और सुंदर फ्रॉक से सजी,
फूलों की माला से सजी, चंदन की लकड़ी से लदी,
मुख्य सड़क पर, भीड़ के सामने
एक नर्तकी संगीत की पांच गुना ध्वनि पर नाच रही थी। [1]

[268] मैं भिक्षा मांगने शहर गया था,
और वहाँ से गुजरते हुए मैंने नर्तकी को देखा जो
वीर वेशभूषा में सजी हुई थी, मानो मारा (मृत्युदेव/शैतान) का जाल बिछाया गया हो।

[269] इसी कारण मेरे मन में गहरा विचार आया: [2] तथ्य और कारण पर ध्यान।
सारी पीड़ा स्पष्ट थी;
मन में अरुचि और उदासीनता थी।

[270] [176] और इस प्रकार मेरा हृदय मुक्त हो गया।
हे देखो, धम्म के मार्ग (धार्म) के योग्य भिक्षु का क्रम!
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध ने मुझे जो कुछ भी सिखाया है, वह सब कर लिया है। [3]

[1] तुरिया के रूप में आमतौर पर वर्गीकृत पाँच वाद्ययंत्र तीन प्रकार के टॉम-टॉम, झांझ (?) और पाइप या बांसुरी हैं। 'नटच गर्ल' नारी- शाब्दिक रूप से, महिला - और नट्टकी, नर्तकी है।

[2] योनिसो मनसिकरो। टिप्पणी उस दृश्य का विश्लेषण करके व्याख्या करती है जो इंद्रिय और भावना 'अरुचि,' आदि को आकर्षित करने के लिए अभिप्रेत था: Cy. has sampatiṭṭha'hāti ... hadayaŋ saŋhāsi.

[3] यह निश्चित रूप से कहना संभव नहीं है कि यह नागसमाला वही थेरा है जिसका नाम ऐसा है और जो कभी-कभी बुद्ध के साथ उनकी सैर पर जाता था। तुलना करें सीसीएलएक्स.; मज्झ. निक., i. 43; उदाना, viii. 7; जात., iv. 95.

(दुतिया भागो)

मेरी श्रद्धा उस परम पूज्य, उस योग्य और सर्वथा आत्मजागृत व्यक्ति के प्रति है।

4. चौथा खंड (निपाता)

4.1 [186] नागसमलात्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
अलङ्कता से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा नागसमाला का है। इसका उद्गम क्या है? इनका भी जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक पारिवारिक घर में हुआ था; जब वे वयस्क हुए, तो संयोगवश उनकी मुलाकात भगवान से हुई जो ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की गर्मी से तपती हुई जमीन पर चल रहे थे। वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें एक छत्र भेंट किया। इस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने अपने जन्म-जन्म चक्रों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका जन्म शाही शाकियान परिवार में हुआ। नागसमाला नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर उन्होंने अपने सगे-संबंधियों के मिलन में उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए और कुछ समय तक भगवान की सेवा की (किंचिकलम)। एक दिन, भिक्षा मांगने के लिए नगर में प्रवेश करते समय, उन्होंने राजमार्ग पर एक नर्तकी को वाद्ययंत्रों की थाप पर नृत्य करते देखा और मन ही मन कहा, "यह स्त्री वायु तत्व (वायो धातु) के कंपन (विप्फार) के प्रभाव में अपने अशुद्ध शरीर को मन (चित्तकिरिया) के अनुसार इधर-उधर (तथा) घुमा रही है; हाय! ये सौंदर्य (संस्कार) क्षणभंगुर हैं।" उन्होंने अपने आप को खया और वय के चिंतन के मार्ग पर लगाया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में तल्लीन रहे और अर्हतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"जमीन जलते हुए कोयले में बदल गई थी;

पृथ्वी तदनुसार पहुँच गई थी

गर्म राख (कुक्कूला) की अवस्था

भगवान खुले आसमान के नीचे टहल रहे थे।

अपने साथ एक पीले रंग का

(पण्डरा) छाता, मैं अंदर प्रवेश कर गया

मेरी यात्रा। वहाँ, मिलने के बाद

स्वयंजागृत बुद्ध, आनंद (विट्टी) उत्पन्न हुआ

(उपपज्जी) फिर मुझमें।

जमीन पर फैला हुआ था

मृगतृष्णा और यह धरती अंगारों के समान प्रतीत होती थी;

तेज हवाएं कर रही थीं घायल (उपहंती)

और शारीरिक सुख-सुविधाओं को त्याग देना

(sarīrassāsukhepanā).

कृपया इस छाते को स्वीकार करें।

सर्दी और गर्मी को दूर करने और बचाव करने के लिए

गर्म हवा (वातातापनिवराणं),

मैं प्राप्त करना चाहूंगा (phassayissāmi)

निब्बाना (निब्बुति) की शांति।

दयालु, कृपालु और

सर्वप्रसिद्ध पद्ममुत्तरा, विजेता,

मेरी मंशा को समझने के बाद,

फिर उन्होंने (मेरी भेंट) स्वीकार कर ली।

तीस युगों (कप्पा) तक मैं ही था

दिव्य शासक और दिव्य शक्तियों का प्रयोग करने वाला

संप्रभुता। पाँच सौ बार

मैं विश्व का राजा था।

मुझे क्षेत्रीय शासन का भरपूर लाभ मिला।

संख्यात्मक रूप से अगणनीय। मुझे आनंद आया।

मेरे स्वयं के अच्छे कर्म का फल

जो काम मैंने पहले किया था।

यह मेरा आखिरी जन्म है जो हुआ है

यही मेरा अंतिम अस्तित्व होगा; अब भी मैं

हमेशा एक सफेद छाता अपने पास रखें

मुझ पर।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने उसे छाता दिया था;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

अंब्रेला ऑफरिंग।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी;...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

हालाँकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपनी उपलब्धि (अञ्ञा) को चार श्लोकों के माध्यम से प्रकट किया, जिसमें उन्होंने अपने उचित प्रदर्शन (पटिपत्ति) की प्रशंसा की।

267. "सजाए-संवारे और अच्छे वस्त्र पहने हुए,

फूलों की मालाओं से सुसज्जित और अभिषेक किया हुआ

चंदन की खुशबू, एक महिला नर्तकी ने प्रदर्शन किया

ऊंचे पहाड़ों के बीच उसका नृत्य

संगीत की धुन पर चलती सड़क।"

268. "मैं, जो भिक्षा मांगने आया था,

रास्ते में मैंने उसे देखा, जो सजी-धजी थी।

और अच्छी तरह से कपड़े पहने हुए, फंदे के समान।

मृत्यु द्वारा निर्धारित (मैकू)।

269. "तब ऐसा हुआ कि

मेरी सचेतनता का निर्माण और वहाँ

तब मेरी बुद्धिमानी भरी सोच (योनिसो) उत्पन्न हुई;

हानि स्पष्ट हो गई (pāturahu);

घृणा (निब्बिडा) के कारण वह फिर अच्छी तरह खड़ा हो गया।

270. इसके बाद मेरा मन मुक्त हो गया;

सुधम्मत की अच्छी प्रकृति को देखो

सत्य (धम्म); त्रिगुणात्मक अति

विधिवत ज्ञान (विज्जा) प्राप्त कर लिया गया था;

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

वहाँ, अलंकता का अर्थ है: उसके शरीर को हाथों, भुजाओं आदि के आभूषणों से सजाया गया था। सुवासना का अर्थ है: उत्तम वस्त्र धारण किए हुए, अच्छे वस्त्र पहने हुए। मालिनी का अर्थ है: फूलों की माला धारण करने वाली, फूलों की मालाओं से सुशोभित। चंदनुस्सदा का अर्थ है: उसके शरीर पर विधिपूर्वक पिसे हुए चंदन का इत्र लगाया गया था। मज्झे महापथे नारी, तुरिये नच्चति नट्टकी का अर्थ है: जैसा कहा गया है, उस स्थान पर, जब शहर की सड़क के बीचोंबीच पाँच प्रकार के संगीत (वज्जन्ते) बजने लगे, तो एक नर्तकी ने नृत्य किया; उसने अपनी स्थिति के अनुसार नृत्य किया।

पिण्डिकाय का अर्थ है: भिक्षा-भोजन (भिक्खाय) के लिए। पविट्ठो 'हं का अर्थ है: मैं नगर में प्रवेश कर चुका था। गच्छन्तो न उदिक्खिसं नगर की सड़क पर चलते हुए, मैंने उस नर्तकी को देखा जब मैं चारों ओर खतरे से बचने के उद्देश्य से सड़क पर नज़र रख रहा था (परिश्यपरिहरण)। किसके समान? Maccupāsaṃ va oḍḍit का अर्थ है: जिस प्रकार सुंदर रूप वाला ऐसा जाल, जो मृत्यु के राजा के लिए मृत्यु का जाल बन गया था और जो संसार में निरंतर विचरण (anuvicaritvā) करने के बाद भी स्थिर रहा, वह निश्चित रूप से जीवों के लिए हानि का कारण (ekaṃsena) है, उसी प्रकार वह उन अंधे आम लोगों (puthujana) के लिए भी निश्चित रूप से हानि का कारण (ekaṃsato) है जो विवेकहीन (appaṭisankhāne) होने पर उसका अनुसरण (ṭhitānaṃ) करते हैं; इस प्रकार, यह कहा गया है कि वह मृत्यु के जाल के समान है।

तातो का अर्थ है, इसलिए, मृत्यु के जाल से मिलती-जुलती स्थिति के कारण। मे का अर्थ है; मेरा, मुझे (मयः)। मनसिकरो योनिसो उदपज्जत का अर्थ है: इस प्रकार बुद्धिमानी से (योनिसो) सचेतनता उत्पन्न हुई; "यह हड्डियों का एक संग्रह है, जो मांस से लगातार लिपटे प्राणियों की नसों से जुड़ा हुआ है, त्वचा से ठीक से ढका हुआ है, दुर्गंधयुक्त अशुद्धियों से घृणित और निंदनीय है, अनित्यता के योग्य है, आवरण से ढका हुआ है, चारों ओर से रौंदा हुआ है, विघटन और विनाश के लिए उत्तरदायी है; वह इस प्रकार के विकृत रूप दिखाती है; इस प्रकार, मैंने इस प्रकार बुद्धिमानी से ध्यान का अभ्यास किया। आदिनवो पातुरहु का अर्थ है: मुझे कई प्रकार से दोष और हानियाँ स्पष्ट हो गईं, जब उनके पास राक्षसों और शैतानों आदि के समान खतरे के कोण से जाया जाता है, क्योंकि मैंने मन के प्रकट होने और गायब होने के आवश्यक गुण (सरसपभंगुता) और मानसिक गुणांकों (चेतसिका) पर ध्यान केंद्रित किया है, जो गणना के लिए इस पर निर्भर करते हैं। शरीर की प्रकृति (उपधारण) का ज्ञान है; इसके विपरीत, निर्वाण में लाभ (आनिसंस) है। निब्बिदा समतित्त का अर्थ है: घृणा का ज्ञान (निब्बिदानाण) जो घृणित है और हानि (आदिनव) पर चिंतन करने की शक्ति (अनुभाव) की सिद्धि (सिद्धं) मेरे हृदय में अच्छी तरह से स्थापित (संथासि) थी; कुछ समय के लिए भी मेरा मन उन भौतिक (रूप) और मानसिक (अरूप) घटनाओं (धम्म) में नहीं लगा; वास्तव में (अञ्ञदत्तु) वहाँ घटना घटी (जात) लेकिन मेरी उदासीनता (उदासीन) वहाँ से बचने की इच्छा (मुञ्चितुकामता) के कारण थी, इत्यादि; इस प्रकार, अर्थ।

तातो का अर्थ है: आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के ज्ञान के अतिरिक्त। चित्तंविमुच्चि मे का अर्थ है: सही मार्ग (मग्ग) के क्रमिक चरणों के माध्यम से मेरा मन सभी प्रकार के दुराचार (किलेष) से मुक्त हो गया, जब लोकउत्तरा भावना (दिव्य ध्यान) उपस्थित थी। इसके माध्यम से, वह फल प्राप्ति (फलप्पति) को दर्शाता है। वास्तव में, सही मार्ग (मग्ग) प्राप्त करने के क्षण में, दुराचार (किलेष) से मुक्ति (विमुच्चन्ति) प्राप्त हो जाती है; फल प्राप्ति (फल) के क्षण में मुक्ति प्राप्त हो जाती है। शेष का वर्णन पहले ही किया जा चुका है।

थेरा नागसमाला के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(187):भगु

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (187) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
187. भागू
इस बुद्ध युग में शाक्य राजा वंश में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने अपने कुलवासियों अनुराद्ध और किंबिला के साथ संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण किया) बालाकलोणा गाँव के पास निवास किया। [1] एक दिन, जब वे आलस्य और सुस्ती की प्रवृत्ति को नियंत्रित करने के लिए अपनी कुटिया से बाहर निकले, तो छत पर चढ़ते समय वे गिर पड़े। इसे प्रेरणा मानकर, [2] उन्होंने आत्म-नियंत्रण प्राप्त किया और अंतर्दृष्टि विकसित करते हुए अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, जब वे निर्वाण के आनंद में लीन थे, तब भगवान (बुद्ध) उन्हें उनके एकांतवास पर बधाई देने आए और उनसे पूछा: 'हे भिक्षु, अब आप गंभीरता से कैसे आगे बढ़ते हैं?' उन्होंने सहमति जताते हुए उत्तर दिया:

[271] अहं मिधेन पकतो विहार उपनिक्खमिṃ,॥
चाङ्कामाऽ अभिरुहंतो तत्त्व पापतिऽ चमा.॥ ॥

[272] गट्टानि परिमाज्जित्वा पुनापार्युह चाङ्कमṃ,॥
कैṇकामे चाकामिṃ सोहाऽ अज्झट्टṃ सुसामहितो॥ ॥

[273] ततो मे मनसिकारो योनिसो उदपज्जथा,॥
आदिनावो पतुराहु निब्बिदा समतिथथा॥ ॥

[274] ततो चित्ताṃ विमुची मे पासा धम्मसुधम्मताṃ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[271] नींद से व्याकुल होकर मैं व्यायाम के लिए अपनी कोठरी से उठा
और छत की सीढ़ियाँ चढ़ गया,
और उसी नींद से व्याकुल होकर धरती पर गिर पड़ा।

[272] अपने अंगों को रगड़ते हुए, मैं एक बार फिर ऊपर गया;
और जब मैं छत पर इधर-उधर घूम रहा था,
तब भीतर सब सतर्क, शांत और एकाग्र था।

[273] इसी कारण मेरे मन में गहरा विचार उत्पन्न हुआ:
तथ्य और कारण पर ध्यान देना। [177] इस सब की पीड़ा स्पष्ट थी;
मन में अरुचि और उदासीनता थी;

[274] और इस प्रकार मेरा हृदय मुक्त हो गया।
हे देखो, धर्म (धम्म) के इस सुशोभनीय भिक्षु क्रम को!
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध ने मुझसे जो कुछ करने को कहा है, वह सब कर लिया है।

यह थेरा द्वारा अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा थी।

[1] इनके बारे में ऊपर (CXVIII.,n. 4) और नीचे (CCLVI.) देखें। बुद्ध की यात्रा, जिसमें गिरने की घटना का उल्लेख नहीं है, मज्झ. निक., iii. 154; विनय ग्रंथ, ii. 308 में दर्ज है, जहाँ गाँव के नाम में -कारा जोड़ा गया है। तुलना करें जात., i., संख्या 10; मिलिंदा, i. 163। यह गाँव यमुना नदी पर स्थित कोसंबी का एक उपनगर था।

[2] तुलना करें. सिस्टर्स, xvii.

4.2 [187] भगुत्तेरा के श्लोक पर टीका

अहं मिद्धेना से शुरू होने वाला श्लोक थेरा भागु का श्लोक है। इसकी उत्पत्ति क्या है? ऐसा कहा जाता है कि उनका पुनर्जन्म भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक पारिवारिक घर में हुआ था, और बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने उस बुद्ध के अवशेषों को पुष्प अर्पित किए, जब गुरु का परिनिर्वाण हुआ। उस पुण्य कर्म के कारण, वे निम्मानारति के दिव्य प्राणियों में उत्पन्न हुए, देवताओं और मनुष्यों के बीच निरंतर विचरण करते रहे और इस बुद्ध के उदय के समय शाही शाक्य परिवार में पुनर्जन्म लिया; भगु नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर उन्होंने अनुरुद्ध और किमिला के साथ संसार का त्याग कर दिया, भिक्षु बन गए और बालक लोनाका गाँव में रहने लगे। एक दिन, आलस्य (थिना) और नींद (मिद्धा) से ग्रस्त होने की स्थिति को दूर करने के लिए, वे अपने मठ से बाहर निकले, मठ के मार्ग पर चढ़े, और पापतीत्व (अंकुसा) के समान ही गिर पड़े, जिससे उनका आलस्य और नींद दूर हो गई, उनकी आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) लगातार विकसित हुई और उन्होंने अरहंतत्व प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में कहा गया है:—

"जब भगवान पद्ममुत्तरा,

प्रसिद्धि से परिपूर्ण होकर परिनिर्वाण में प्रवेश कर चुका था।

मैंने माथे पर फूलों की माला बनाई, और

इसे शारीरिक अवशेषों पर स्थापित किया गया था

(बुद्ध के बारे में)। अपना मन बना लेने के बाद

वहाँ श्रद्धापूर्वक प्रसन्न होकर, मैं वहाँ पहुँच गया।

निम्मानारति की दिव्य दुनिया।

वहाँ पहुँचकर मुझे याद आया

मेरा सराहनीय कार्य।

मेरे लिए तो फूलों की वर्षा हो रही थी।

आकाश से (जो बरसा)

हर समय। क्या ऐसा होना चाहिए कि मैं था

मेरे चक्करों में एक इंसान के रूप में पुनर्जन्म हुआ

बार-बार पुनर्जन्म लेने से मैं राजा बन गया

बहुत प्रसिद्धि प्राप्त।

वहाँ, हर समय विशेष रूप से

मेरे लिए फूलों की वर्षा करो (कुसुमा)।

के धारण (वाहा) के माध्यम से

उस अत्यंत श्रद्धापूर्ण भेंट का

सर्वद्रष्टा (सब्बदस्सी) को फूल।

यह मेरी आखिरी इकाई (पच्चिमाको) है;

यह मेरा अंतिम अस्तित्व है।

वर्तमान में भी, फूलों की वर्षा हो रही है

वह हमेशा मेरे लिए स्नान करेगा।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

मैंने कुछ समय पहले ही फूलों का चढ़ावा चढ़ाया था;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरे प्रयासों का फलदायी परिणाम है।

शरीर को श्रद्धापूर्वक अर्पित करना

अवशेष (देहा)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने स्वयं के लगन से निवास करने के बारे में जानकारी देने के लिए ये चार श्लोक कहे, जब एक मठ के समर्पण के संबंध में धन्यवाद देने आए गुरु ने उनसे पूछा: "हे भिक्षु! कैसा है? क्या आप लगन से निवास करते हैं?" जबकि वे फल प्राप्ति के आनंद और निर्वाण की खुशी में अपना समय व्यतीत कर रहे थे।

271. "नींद आने की आदत (पकातो)

मैं मठ से बाहर आया और आगे

मठ के गलियारे पर चढ़ते हुए, मैं

जमीन पर गिर पड़ा लेकिन वहीं पर।

272. "अपने अंगों की मालिश करने के बाद (गट्टानी)

(परिमज्जित्वा) मैं सैरगाह पर चढ़ गया

फिर से। मैं इधर-उधर चलता रहा।

मठ-मार्ग, अच्छी तरह से परिचित हो जाने के बाद-

आंतरिक रूप से प्रस्तुत किया गया।

273. "इसके बाद, मेरी रचना का विचार उत्पन्न हुआ

सचेतनता का बुद्धिमानी से प्रयोग करना (yonīso);

नुकसान स्पष्ट हो गया;

घृणा (निब्बिडा) फिर ठीक हो जाना

स्थापित (समतिथि)।"

274. "इसके बाद मेरा मन मुक्त हो जाता है;

के अच्छे स्वभाव (धम्मता) को देखो

सत्य (धम्म)। त्रिगुणात्मक अति

तदनुसार ज्ञान (विज्जा) था

प्राप्त किया; बुद्ध के उपदेश प्राप्त हुए थे

कार्य संपन्न हो चुका है।

वहाँ, मिद्धेनापकतो का अर्थ है: उनींदापन से अभिभूत हो जाना, जिसका स्वभाव (सभाव) शारीरिक आलस्य (अलसिया) के रूप में माने जाने वाले वैराग्य (असत्ति) को नष्ट करना (विघात) है। विहारा का अर्थ है मठ से। उपनिक्खमिं का अर्थ है: मैं इधर-उधर टहलने के लिए बाहर आया। तत्त्वे पापतिंचमा का अर्थ है: मैं गिर गया, लेकिन वहीं मठ की सीढ़ियों पर, नींद से अभिभूत होने के कारण। वत्थानी परिमज्जित्वा का अर्थ है: जमीन पर गिरने के कारण धूल से सने अपने शरीर के विभिन्न भागों को पीटकर साफ करना। पुनपरयः संकमं का अर्थ है: बिना किसी नाराजगी (संकोचं) को दिखाए (अनपज्जित्वा) सैरगाह पर चढ़ जाना, यह कहते हुए कि "मैं अब गिर गया हूँ।" अज्झत्तं सुसमाहितो का अर्थ है; मैं अपने अंतर्मन (गोचराज्झत्त) से संबंधित मानसिक अभ्यास (कम्मत्तन) में बाधाओं को दूर करके (विक्खम्भन) पूर्णतः शांत (समाहितो) और एकाग्रचित्त (एकग्गचित्तो) होकर इधर-उधर विचरण करता था; यही व्याख्या है। शेष का अर्थ पहले ही बताया जा चुका है। यही थेरा द्वारा अपने अरहंतत्व (अन्ना) का प्रकटीकरण था।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा भगू का

तैयार है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(188):सभिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (188) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
188. सभ्यिया
हमारे परम पूज्य बुद्ध के समय में, उन्होंने एक कुलीन व्यक्ति की पुत्री के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया, जिसके माता-पिता ने उसे अन्य धर्मों और रीति-रिवाजों को सीखने के लिए एक भिक्षु के संरक्षण में सौंप दिया था। बड़े होकर, सबिया भी भिक्षु बन गए और विभिन्न मंत्रों का अध्ययन करके एक महान तर्कशास्त्री बन गए, और उन्हें कोई भी उनके बराबर नहीं मिला। नगर द्वार के पास अपना आश्रम बनाकर, उन्होंने कुलीन व्यक्तियों और अन्य लोगों के बच्चों को शिक्षा दी और बीस प्रश्न तैयार किए, जो उन्होंने भिक्षुओं और ब्राह्मणों (पुजारियों) से पूछे। सबिया-सूत्र की कथा में यह वर्णित है कि शुद्ध लोक से आए ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) ने ये प्रश्न तैयार किए थे। [1] वहाँ भी यह बताया गया है कि जब भगवान (बुद्ध) राजगृह में बाँस के जंगल में आए, तो उन्होंने प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार दिए कि सबिया ने उन पर विश्वास किया और भिक्षु संघ में प्रवेश करके अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

लेकिन इसके बाद, देवदत्त का साथ देने वाले भिक्षुओं को संबोधित करते हुए उन्होंने ये श्लोक कहे:

[275] पारे च न विजानन्ति मायामेत्था यममसे,॥
ये च तत्थ विजानन्ति ततो सम्मन्ति मेधागा॥ ॥

[276] यदा च अविजानंता इरियंत्यमारा विय,॥
विजान्ति च ये ममं आतुरेसु अनातुरा॥ ॥

[277] याṃ किन्सी सिथिलाṃ कम्माṃ साओकिलिṭṭहाṃ सीए याṃ वातṃ,॥
सङ्कास्सरौ ब्रह्मचर्यं न तां होति महपफल॥ ॥

[278] यस्सा सब्रह्मचारिसु गारवो नुपलभति,॥
अरका होति सद्धम्मा नभां पुथुविया यथा' ति.॥ ॥

[275] लोग कभी भी वास्तव में यह नहीं समझ सकते कि हम यहाँ थोड़े समय के लिए ही हैं। [2] [178] लेकिन जो लोग इस सत्य को समझते हैं,
वे सभी कलह और झगड़े को दूर कर देते हैं।

[276] और जबकि जो समझ नहीं सकते, वे
स्वयं को अमर के समान व्यवहार करते हैं।
जो वास्तव में धम्म को समझ सकते हैं,
वे रोगग्रस्त संसार में स्वस्थ के समान हैं। [3]

[277] सभी शिथिल कर्म, सभी भ्रष्ट अनुष्ठान,
धार्मिक जीवन में संदिग्ध आचरण:
ऐसे सभी कार्यों पर कोई उच्च पुरस्कार नहीं मिलता।

[278] जो अपने साथी भिक्षुओं के बीच
आदर नहीं पाता, वह अच्छे मार्ग (धम्म) से उतना ही दूर है,
जितना आकाश पृथ्वी से दूर है।

[1] सुत्त-निपाता, श्लोक 510-547 देखें। यहाँ सबिया को समर्पित श्लोकों में से, 275, 277 = धम्मपद, श्लोक 6, 312, श्लोक 6 वहाँ है, जैसा कि विन. ग्रंथों, ii. 306 f. में है, झगड़ालू कोसंबी भिक्षुओं को संबोधित करते हुए बुद्ध के मुख से कहा गया है।

[2] 'लोग': 'बुद्धिमानों को छोड़कर सभी।' साइ. पंक्ति 2: हम लगातार मृत्यु के निकट चलते हैं।' (साइ.) यह पाठ विपरीत द्वारा पुष्ट किया गया है: 'जैसे वे अमर थे,' अगला श्लोक।

[3] यह पंक्ति = धम्मपद, श्लोक 198 (श्लोक का आधा भाग)। यह ध्यान देने योग्य है कि धम्म-पद के श्लोक 6 पर टिप्पणी धम्मपाल द्वारा की गई टिप्पणी के समान ही है, जबकि श्लोक 312 पर टिप्पणी लगभग समान है।

4.3 [188] सबियाथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
परे च से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा सबिया का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और तेजस्वी काकुसंध के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन वे अपने दिन के विश्राम के लिए जाते हुए गुरु से मिले, श्रद्धा से भर गए और उन्हें चप्पल भेंट की। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे। जब भगवान कस्सपा परिनिर्वाण को प्राप्त हुए और एक स्वर्ण मंदिर स्थापित किया गया, तो उन्होंने अपने छह पुत्रों (जो स्वयं सातवें थे) के साथ सासन का मार्ग अपनाया, मानसिक साधना में लीन हो गए, वन में निवास किया और विशेषण प्राप्त न कर पाने पर उन्होंने अन्य भिक्षुओं से कहा: "भिक्षा मांगने जाते समय हमें अपने प्राणों की चिंता सताती है; इसी कारण हम धम्म को भी नहीं जान पाते; साधारण भिक्षु के रूप में मृत्यु दुखदायी होती है; आओ! हम एक सीढ़ी चढ़कर पहाड़ी पर चढ़ें और अपने शरीर और प्राणों की परवाह किए बिना भिक्षु के कर्तव्य निभाएं।" उन्होंने भी वैसा ही किया।

फिर, उनमें से एक महान वरिष्ठ भिक्षु, जो अरहंत पद की प्राप्ति के लिए पर्याप्त योग्यता (उपनिषय) से संपन्न होने के कारण उसी दिन छह प्रकार के उच्च ज्ञान से युक्त अरहंत बन गए, ने अपने साथी भिक्षुओं को उत्तराकुरा द्वीप से भिक्षा दी। अन्य भिक्षुओं ने यह कहकर भिक्षा ग्रहण करने से इनकार कर दिया: "आदरणीय महोदय! आपने अपने कर्तव्य का पूर्ण निर्वाह कर लिया है; परन्तु आपसे वार्तालाप करना हमारे कर्तव्य निर्वाह में बाधक है; हम तो केवल अपने भिक्षु धर्म का पालन करेंगे; आप अपने सुखमय निवास (दित्तधम्म) में संलग्न रहें।" उन्हें अपने दान से संतुष्ट न कर पाने के कारण, थेरा वहाँ से चले गए।

इसके बाद, उनमें से एक ने दो-तीन दिन बीतने के बाद, अनागामी (तत्काल लौट आने वाले) अवस्था की प्राप्ति का दर्शन किया, जो उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से भी परिपूर्ण थी। उसने कहा, "लेकिन ऐसा ही है," और उनके द्वारा अस्वीकृत किए जाने पर वह चला गया। उनमें से, दोष रहित (खीणसव) थेरा परिनिर्वाण में प्रवेश कर गया; और शुद्ध जीवन जीने वाले ब्रह्माओं (शुद्धवसा) में अनागामी (तत्काल लौट आने वाले) थेरा का उदय हुआ। बाकी सभी साधारण भिक्षुओं (पुथुज्जन) के रूप में मृत्यु को प्राप्त हुए, उन्होंने छह इंद्रियजन्य दिव्य लोकों (कामसग्ग) में प्रत्यक्ष और विपरीत क्रम में दिव्य समृद्धि का आनंद लिया, और उनमें से एक ने दिव्य लोक से विदा होने के बाद, हमारे भगवान बुद्ध के समय में मल्ल राजा के शाही परिवार में गर्भ धारण किया; दूसरे ने गांधार परिवार में, तीसरे ने बहीरा राज्य में; चौथे ने राजगृह में एक अच्छे परिवार की पुत्री (कुलदारिका) के गर्भ में गर्भ धारण किया; पाँचवें ने एक महिला तपस्वी-भ्रमणिका (परिब्बाजक) के गर्भ में गर्भ धारण किया। कहा जाता है कि वह एक कुलीन योद्धा (खत्तीय) की पुत्री थी। उसके माता-पिता ने उसे एक भ्रमणशील तपस्वी-दार्शनिक (परिब्बाजक) की देखरेख में यह कहते हुए रखा, “हमारी पुत्री को विभिन्न सिद्धांतों (समयंतर) का ज्ञान हो।” इसके बाद एक परिब्बाजक (घूमने वाला दार्शनिक) उसके साथ भटक गया (विप्पटिपज्जी)। वह गर्भवती हो गई। जब उन्होंने उसे गर्भवती देखा तो उसे बाहर खींच लिया। कहीं और जाते समय उसने रास्ते में एक सभा (हॉल) में एक पुत्र को जन्म दिया। इसी कारण उसका नाम सभाह रखा गया। बड़े होकर उसने संसार त्याग दिया, एक घुमंतू तपस्वी बन गया, विभिन्न ग्रंथों का ज्ञान प्राप्त किया (सत्थानी), एक महान विवादकर्ता (महावादी) बन गया और विवादों की खोज में भटकते हुए उसने अपने समान किसी को नहीं देखा; परिणामस्वरूप, उन्होंने नगर द्वार पर एक आश्रम बनवाया और वहाँ निवास करते हुए युवा राजकुमार योद्धाओं (खत्तिया) आदि को अपना दर्शन (सिप्पं) सिखाते रहे। तभी उन्होंने अपनी माता द्वारा तैयार किए गए बीस प्रश्न एकत्र किए, जो अपने स्त्रीत्व से विरक्त होकर ध्यान लगाकर ब्रह्मालोक में विलीन हो गईं और विभिन्न ब्राह्मणों से उनके उत्तर माँगती रहीं। वे उनके प्रश्नों का अर्थ समझाने में असमर्थ रहे। हालाँकि, सभ्यसूत्र की टीका में यह लिखा है: “शुद्धवास के ब्रह्माओं ने वे प्रश्न तैयार किए और दिए।”

जब भगवान बुद्ध ने अपने उत्कृष्ट सत्य चक्र (धम्म) को घुमाते हुए उचित समय पर राजगृह पहुँचकर वेलुवन (बांस के वन) में निवास किया, तब सबिया वहाँ गए, गुरुदेव के पास पहुँचे और उनसे वे प्रश्न पूछे। गुरुदेव ने उनके प्रश्नों का उत्तर दिया; इस प्रकार सब कुछ उसी प्रकार समझा जाना चाहिए जैसा कि सबिया सूत्र में बताया गया है। जब भगवान बुद्ध ने उन प्रश्नों का उत्तर दिया, तो सबिया ने उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, उनकी आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) स्थापित हुई और उन्होंने अर्हतत्व प्राप्त किया। इसलिए अपदान में कहा गया है:—

“जब ऋषि काकुसंध, जिन्होंने

अपना पवित्र जीवन व्यतीत किया (ब्राह्मणस्स)

vusimato) उसके पास जा रहा था

दिन भर के विश्राम (सिस्टा) के लिए, मैंने एक प्रस्ताव दिया।

चलने के लिए चप्पलों का जोड़ा (अक्कमाना)

यह तो इसी युग (कप्पा) में हुआ था कि

मैंने दान में अपनी भेंट दी; मैं ऐसा करता हूँ

किसी भी बुरी सत्ता को याद नहीं; यह

यह (मेरे द्वारा की गई भेंट का) फलदायी परिणाम है।

चप्पलें (अक्कमाना)

मेरी दुष्टता (किलेसा) जलकर भस्म हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत बनने के बाद, उन्होंने चार श्लोकों के माध्यम से सत्य (धम्म) का उपदेश दिया, ताकि उन भिक्षुओं को सलाह दी जा सके जिन्होंने देवदत्त का पक्ष लिया था जब बाद वाले ने संघ को विभाजित करने का प्रयास किया था।

275. "अन्य लोग स्पष्ट रूप से नहीं जानते कि वे

उन्हें यहीं मरना होगा। जिनके पास स्पष्ट जानकारी है

वहाँ ज्ञान है, उनके झगड़े होते हैं।

परिणामस्वरूप समाप्त हो जाना।

276. "जब लोगों को स्पष्ट रूप से पता नहीं होता,

वे ऐसा व्यवहार करते हैं मानो वे

मृत्युदंड के पात्र नहीं हैं; जो कोई भी जानता है

वे स्पष्ट रूप से सत्य (धम्म) हैं।

बुखार से मुक्त (आतुरा) लोगों में

बुखार से पीड़ित।

277. "जो भी कार्य लापरवाही से किया गया हो,

जो भी आचरण भ्रष्ट है, और

संशयपूर्ण चिंतन का पवित्र जीवन,

वह सब कुछ जो महानता के लिए अनुकूल नहीं है

सकारात्मक परिणाम।

278. "जो व्यक्ति लोगों के बीच सम्मान प्राप्त नहीं करता

उनके साथी पवित्र जीवन के नेता हैं,

उत्कृष्ट सत्य से बहुत दूर,

(धम्म) ऊपर आकाश के समान

पृथ्वी।

वहाँ, परे का अर्थ है: बुद्धिमानों को अलग रखते हुए, उसके बाद अन्य लोग; जो "जो सत्य नहीं है वह सत्य है" और "जो सत्य है वह सत्य नहीं है" आदि जैसे मतभेदों के आधार को स्पष्ट करने के लिए विवादों में लगे रहते हैं, उन्हें अन्य लोग (पदे) कहा जाता है। वहाँ विवाद करने वाले लोग यह नहीं जानते कि "हम मृत्यु की ओर बढ़ते हैं, हमारा अंत होता है, हम विनाश की ओर जाते हैं, हम स्थायी रूप से मृत्यु

के निकट जाते हैं।” ये च तत्थ विजानन्ति का अर्थ है: वहाँ जो बुद्धिमान हैं वे स्पष्ट रूप से जानते हैं कि “हम मृत्यु के निकट जाते हैं।” ततो सम्मन्ति मेधगा का अर्थ है: वास्तव में, जो इस प्रकार जानते हैं, वे बुद्धिमान चेतना को जागृत करके, विवादों और झगड़ों के निवारण के लिए अपने जीवन को व्यवस्थित करते हैं। तब, उनके उचित पालन (पटिपत्ति) के कारण, वे झगड़े समाप्त (सममंती) हो जाते हैं। दूसरे शब्दों में, परे च का अर्थ है: जो गुरु की सलाह और निर्देश न मानने के कारण व्यवस्था (सासनतो) से बाहर होने के कारण भिन्न हैं; जब तक वे स्पष्ट रूप से यह नहीं समझते कि: "हमने गलत पकड़ रखी है, इसलिए इस संसार में व्यवस्था (सासनस) को उचित रूप से फटकार (पटिनिग्हा) लगाकर संयम बरतें और प्रयास करें," तब तक विवाद समाप्त नहीं होते (वूपसम्मंती); लेकिन, जो कोई भी सत्य के अनुसार सत्य (धम्म), असत्य (अधम्म) आदि को स्पष्ट रूप से समझता है, सत्य, असत्य आदि के दृष्टिकोण से, वहाँ विवादों में उलझे रहने वालों के बीच, उस गहा (पकड़) से मुक्ति के प्रभाव से, परिणामस्वरूप, उनके द्वारा उन बुद्धिमान गुरुओं पर निर्भरता के कारण, उनके बीच होने वाले झगड़े (विवाद) समाप्त हो जाते हैं; अतः, यहाँ अर्थ को इस प्रकार समझा जाना चाहिए।

यदा का अर्थ है किसी भी समय। अविजानंता का अर्थ है: वे लोग जो विवादों के निवारण (वूपसमा) या सत्य और असत्य (धम्मधम्म) को अपने वास्तविक स्वरूप (याथावतो) के परिप्रेक्ष्य से नहीं जानते। इरियन्त्य' मरा विय का अर्थ है: वे उत्तेजित (उद्धत), अहंकारी (उन्नल), चंचल (चपल), शोरगुल करने वाले (मुखर), अपशब्दों से घिरे हुए (विप्पकिन्नवच) हो जाते हैं, मानो वे वृद्धावस्था और मृत्यु से परे चले गए हों और नश्वर (अमरा) हों; तब विवाद कभी समाप्त नहीं होगा (वूपसम्मति)। Vijānanti ca ye dhammaṃ, āturesu anāturā का अर्थ है: जो कोई भी सत्य के अनुसार (yathābhūtaṃ) जानता है, वह दोषरहित, अधर्म और रोग से मुक्त (anīghā) उन लोगों के बीच रहता है जो दोष (kilesa) से पीड़ित हैं; उनके प्रभाव में, विवाद निश्चित रूप से समाप्त (vūpasammati) हो जाता है; यही इसका अर्थ है।

यं किंची सिथिलं कम्मं का अर्थ है: शिथिलता (साथली) से किया गया कोई भी अच्छा कर्म, पालन करने के बाद ढीली पकड़ बनाकर (करणेन)। संकिलिट्ठं का अर्थ है: वेश्या (वेसी) की तरह अनुचित चरागाह (गोचरा) में भटकने या धोखाधड़ी आदि जैसी गलत आजीविका के माध्यम से स्वयं को भ्रष्ट आचरण का पालन (समादान) करने का दायित्व लेना। संकस्सरं का अर्थ है: स्वयं के बारे में इस प्रकार संदेह (असांक) करना, याद करना, संदेह करना और शंका करना: "निश्चित रूप से, इन भिक्षुओं को मेरे आचरण (चरिया) के बारे में पता चलने पर, वे मुझे निलंबित करने की इच्छा से एकत्रित हुए होंगे" भिक्षुओं के समूह को देखने के बाद, हालांकि वे उपोसथ कर्तव्यों आदि जैसे किसी अन्य कार्य के लिए एकत्रित हुए थे; इसका अर्थ है: संदेह के साथ याद रखना चाहिए; मठ में कुछ भी अनुचित (असारूपं) सुनकर, दूसरों को यह संदेह नहीं करना चाहिए कि: “निश्चित रूप से, यह अमुक भिक्षु (असक) द्वारा किया गया होगा।” न तं होति का अर्थ है: उस व्यक्ति का पवित्र आचरण (ब्रह्मचरिया) और भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करना महान फलदायी नहीं है; लेकिन उसके महान फल न देने की स्थिति के कारण, उसके संन्यासी आवश्यकताओं के दाताओं को भी कोई महान फल नहीं मिलता; इसलिए, भिक्षु को तपस्या (सल्लेख) का अभ्यस्त (वुत्ति) हो जाना चाहिए; जो तपस्या का अभ्यस्त हो जाता है, उसके लिए विवाद का अस्तित्व भी नहीं रहता; यही इसका महत्व है।

गारवो नूपलभति का अर्थ है: पवित्र जीवन के साथी नेताओं में से, जिन व्यक्तियों के साथ आदरपूर्वक व्यवहार किया जाना चाहिए, उनके प्रति आदर और श्रद्धा का भाव नहीं है, क्योंकि वे शिक्षा के कारण समर्पित दान (पादक्खिण) ग्रहण नहीं करते। आरका होति सद्धम्मा का अर्थ है: इस प्रकार का व्यक्ति उचित कर्म (पटिपत्ति) और उचित अंतर्मन (पटिवेध) के अच्छे जीवन (सद्धम्म) से दूर हो जाता है; वास्तव में, शिक्षक उसे शिक्षा नहीं देते; शिक्षा न मिलने और किसी भी धार्मिक अनुष्ठान (अनादियन्तो) का पालन न करने के कारण वह अपने जीवन को (सही ढंग से) नियंत्रित नहीं करता; अपने जीवन को (सही ढंग से) नियंत्रित न करके वह (महान) सत्यों (सच्चानि) में कैसे उचित रूप से अंतर्मन कर सकता है? इसलिए, उन्होंने कहा; “आरका होति सद्धम्मा, वह अच्छे सत्य से दूर है।” किस आधार पर? “निभं पुथविया यथा का अर्थ है: जिस प्रकार आकाश पृथ्वी से, पृथ्वी तत्व से स्वाभाविक रूप से दूर है, उसी कारण वे कभी आपस में मिल नहीं सकते (सममिस्सा)। इसी कारण उन्होंने कहा:

आकाश बहुत दूर है और धरती भी बहुत दूर है:

समुद्र का वह दूर वाला किनारा बहुत दूर है।

हे राजा! उससे भी कहीं अधिक दूर,

वास्तव में, यही अच्छाई का सत्य (धम्म) है।

दुष्ट लोगों में से।

थेरा सबिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(189):नंदका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (189) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
189. नंदका
हमारे परम पूज्य (बुद्ध) के समय में, सावत्थी में एक कुलवासी परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम नंदक रखा गया। उन्होंने भगवान (बुद्ध) से धम्म का उपदेश सुनकर भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अंतर्दृष्टि विकसित करके अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, निर्वाण के आनंद में रहते हुए, उन्होंने एक पर्व के दिन भगवान (बुद्ध) के आदेश से भिक्षुणियों को उपदेश दिया और उनमें से 500 को अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कराया। इसी कारण परम पूज्य ने उन्हें भिक्षुओं और भिक्षुणियों के गुरुओं में सर्वोच्च स्थान दिया। [1]

अब, एक दिन, जब वह सावत्थी में भिक्षा मांग रहा था, तो एक स्त्री, जिससे उसका विवाह हुआ था, ने उसे देखा और पापी हृदय से हँस पड़ी । [179] थेरा ने उसका यह कार्य देखकर उसे शरीर के प्रति घृणा पर बल देते हुए धम्म का मार्ग सिखाया, इस प्रकार:

[279] धीरत्थु शुद्ध दुग्गंधे मरापक्खे अवसुते,॥
नवसोतानि ते काये यानि संदन्ति सब्बदा॥ ॥

[280] मपुराणाm̄ [34] अमान्नित्थो मासा देसी तथागते,॥
सग्गे'पि ते न रज्जन्ति किमाङ्गा पना मानुसे ॥॥ ॥

[281] ये च खो बाला दुम्मेधा दुम्मंती मोहपरुता,॥
तदिसा तथा राज्जन्ति मरखित्महि बंधते ॥॥ ॥

[282] येसा रागो सीए दोसो सीए अविज्जा च विराजिता,॥
तदित्तत्था न रज्जन्ति1 छिन्नसुत्ता बंधना' ति.॥ ॥

[279] बुरी बदबूदार चीज़ों पर बुरा!
मारा (मृत्युदेव/शैतान) का एक उपकरण, यहाँ तक कि यह भी,
तुम्हारा शरीर, जहाँ से वे अनेक धाराएँ रिस रही हैं,
संख्या में नौ प्रकार की, जो कभी अपना प्रवाह नहीं रोकतीं।

[280] पूर्व के अंशों से कोई अभिमान न पालें।
तथागत (जो परलोक से लौटे हैं) को लुभाने का प्रयास न करें। [2] स्वयं स्वर्ग भी उन्हें प्रसन्न नहीं करता, तो फिर
सांसारिक वस्तुएँ उन्हें कैसे प्रसन्न कर सकती हैं? [3]

[281] वे मूर्ख जिनमें विवेक का अभाव है, जिनका मन
मैला है, और जिनका हृदय सुस्ती से ढका हुआ है,
ऐसे लोग शरीर के आकर्षण में आनंद लेते हैं,
क्योंकि वे मारा (मृत्युदेव/राक्षस) द्वारा जकड़े हुए हैं।

[282] जो लोग कामवासना, घृणा, या अज्ञानता से अछूते हैं, उनके लिए

ये बातें सुखदायी नहीं हैं।
उनके बंधन टूट चुके हैं; वे सभी बंधनों से मुक्त हैं।

[1] अंग. i. 25. सफल पाठ नंदकोवाद सूत्र (मज्झ., iii 270) में बताया गया है। अंगुत्तरा टीका उस सूत्र तक ले जाती है, लेकिन इन श्लोकों का विस्तृत वर्णन बुद्ध के सौतेले भाई नंदा की कहानी में मिलता है (CXXXIX.)। एक सुंदर स्त्री पर मोहित होकर, भगवान (बुद्ध) उसे सक्का (देवताओं के राजा) के स्वर्ग में अप्सराओं को दिखाते हैं, और वह उसे उनके मुकाबले बंदर के समान साधारण पाता है।

[2] तथागत, यहाँ टीका द्वारा सभी बुद्ध-सवकों, या आर्य-सवकों को शामिल करने के लिए बनाया गया है, जो संतत्व की शर्तों के साथ 'आए' हैं, या उच्चतम को प्राप्त कर चुके हैं, अवबुद्धा हैं।

[3] मैं यहाँ डॉ. न्यूमैन के वाक्यविन्यास का अनुसरण नहीं कर रहा हूँ। मनुष्य को प्रसन्न करने की स्त्री की शक्ति खतरे का स्रोत थी। वह केवल तथागतों, या संतों को ही प्रभावित करने में असमर्थ थी, जिन्होंने इतने महान सुख प्राप्त कर लिए थे कि उन्हें व्यक्त करना असंभव था।

4.4 [189] नंदकत्थेरा के श्लोक पर टीका
धीरत्थु से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा नंदक का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि भगवान पद्ममुत्तरा के समय में, वे हंसवती नगर में एक अत्यंत धनी धनाढ्य व्यक्ति बन गए; संयोगवश उन्होंने गुरु को देखा, जिनकी उपस्थिति में उन्होंने सत्य (धम्म) का प्रवचन सुना, और उन्होंने भिक्षुओं को सलाह देने वालों में एक भिक्षु को सर्वोच्च स्थान दिया। उन्होंने उस पद की आकांक्षा की, भगवान को एक लाख रुपये का वस्त्र आदरपूर्वक भेंट किया और अपना संकल्प लिया। उन्होंने गुरु के बोधि वृक्ष पर प्रज्वलित दीपक भी अर्पित किए। तब से, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और भगवान ककुसंध के समय में एक करविका पक्षी बन गए; पक्षी ने गुरु के चारों ओर मधुर गीत गाते हुए परिक्रमा की। इसके बाद, वे एक मोर बन गए और प्रतिदिन तीन बार मधुर गीत गाते हुए, एक मौन बुद्ध के निवास स्थान की गुफा के द्वार पर श्रद्धापूर्वक विराजमान रहे। इस प्रकार स्थान-स्थान पुण्य कर्म करते हुए, उनका पुनर्जन्म हमारे प्रतापी बुद्ध के समय में सावत्थी के एक पारिवारिक घर में हुआ; नंदक नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर उन्होंने गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) का अध्ययन किया, उचित रूप से श्रद्धावान आस्था प्राप्त की; भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर वृद्धि की और अर्हतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—-

“सर्वोत्तम बोधि वृक्ष पर

बुद्ध पद्ममुत्तरा के, धर्मपरायण मन वाले

और मैंने उदारतापूर्वक (अधारयिं) भेंट की।

तीन जलती हुई मशालें।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने अपनी भेंट (अधारयिं) अर्पित की थी।

मशालों का; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

मशाल अर्पित करने का।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

अरहंत बनने के बाद, वे मोक्ष के आनंद में लीन थे। तभी गुरु ने उन्हें भिक्षुणियों को सलाह देने का आदेश दिया। एक विशेष उपोसथ दिवस पर उन्होंने केवल एक ही सलाह से पाँच सौ भिक्षुणियों को अरहंत बना दिया। इसी कारण भगवान बुद्ध ने उन्हें भिक्षुओं के सलाहकारों में सर्वोच्च स्थान दिया। फिर एक दिन, उनकी पूर्व पत्नी, एक स्त्री ने श्रावस्ती में भिक्षा मांगते हुए थेरा को देखकर मुस्कुरा दिया। उस स्त्री को मुस्कुराते देख थेरा ने श्लोक सुनाकर शरीर की घृणास्पदता का उदाहरण देते हुए उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश दिया।

270. "तुम्हें शर्म आनी चाहिए! यहाँ

तुम्हारा शरीर जो गंदगी से भरा हुआ है

गंध, मारा का पक्ष लेना (पक्खे),

जिसमें रिसाव हो रहा है (अवसौता)

नौ धाराएँ (सोटा) जो हैं

बिल्कुल भी बह रहा है (सैंडंती)

बार।

280. "अतीत के बारे में मत सोचो; मत सोचो"

आश्चर्यचकित करना (सादसी) शिष्य

बुद्ध। यहां तक कि स्वर्गिक आनंद तक।

वे आसक्त नहीं हैं (राज्जंती)

हालांकि, यह कहना उचित नहीं है (किमंगा)

मानव (आनंद)।

281. "वास्तव में, वे मूर्ख लोग जो हैं

बुद्धिहीन, जो बुरी बातें सोचते हैं

और जो भ्रम में डूबे हुए हैं, वे

जैसे लोग उससे जुड़ जाते हैं

वह स्थान जहाँ मारा ने अपना जाल बिछाया था।

282. "ऐसे लोग जो विरक्त हैं

कामवासना, क्रोध और अज्ञान से दूर मत रहो

वे वहां खुद को संलग्न कर लेते हैं, क्योंकि

अब उनके लिए कोई जाल नहीं बचा, न ही उसके धागे।

बाहर।

वहाँ, धी शब्द घृणा के भाव को व्यक्त करता है; रत्थु का अर्थ है: अक्षर 'र' शब्द का मिलन (पादसंधिकारो) करता है; लज्जा हो (धी अत्थु), मैं तुमसे घृणा करता हूँ; तुम्हें लज्जा हो (धिक्कारो); इस प्रकार, इसका अर्थ है। 'पूरे' से शुरू होने वाले भाव संबोधन के वे शब्द हैं जो उस स्थिति को स्पष्ट करते हैं जिसमें उसे लज्जित किया जाना चाहिए। 'पूरे' का अर्थ है: विभिन्न प्रकार के मृत शरीरों और अशुद्धियों से भरा हुआ, जो अत्यंत घृणित हैं। दुग्गन्ध का अर्थ है: स्वाभाविक रूप से दुर्गंधयुक्त, लेकिन शवों से भरे होने के कारण। मारपक्खा का अर्थ है: अज्ञानी अंध (पुथुज्जन) लोगों की विशिष्ट स्थिति (निमित्तता) के कारण असामान्य वास्तविकता (विषभगवत्थु) दुराचार (किलेसा) के मार को विकसित (वड्ढेति) करती है और युवा देवता मार को प्रवेश (ओतारं पवित्रम्) का अवसर प्रदान करती है, इसलिए वह मार का साथी (पक्खो) बन जाता है; इसी कारण कहा गया है: "मारपक्खे (मार के पंख पर)।" अवस्सुते का अर्थ है: हर समय दुराचार (किलेसावस्सवन) के रिसाव से रिसता हुआ और अशुद्धियों से इधर-उधर बहता हुआ। अब वह उसे रिसाव (अवसवना) का स्थान इस प्रकार दिखाता है: "नवसोटानी ते काये, यानि संदन्ति सब्बदा का अर्थ है: यह "अक्खिम्हा अक्खिगूथको (आँख से निकलने वाला मल)" से शुरू होकर कहा गया है।"

सत्य के अनुसार, इस प्रकार जानते हुए, (तुम्हारा) शरीर जो (भरित) अशुद्धियों से भरा है, नौ छिद्रों (छिद्द) से निरंतर रिसता रहता है, मा पुराणं अमाञ्छित्थो, का अर्थ है: अपने पुराने (पुराणं) अमिलिंग (हसित), बात करने (लपित) और क्रीलित (कीलित) के बारे में मत सोचो जो अज्ञान (अजानंस) के समय में हुआ था; "अब भी मैं इसी प्रकार स्वयं को नियंत्रित करूँगा;" अतः विचार मत करो। मा' सादेसी तथागते का अर्थ है: जिस प्रकार बुद्ध के शिष्य अरहंत पद (उपनिषय) की प्राप्ति के लिए पर्याप्त योग्यता के भूतकाल (पुरिमक) से संबंधित समृद्धि प्राप्त करते हैं, दूसरे शब्दों में, जिस प्रकार वे उचित कर्म (सम्मापटिपत्ति) के माध्यम से पहुंचे और उचित रूप से प्राप्त (पटिपन्ना) हुए हैं, जिस प्रकार वे निश्चित (तथा) सत्य (धम्म) और सजीव (रूप) तथा निराकार (अरूप) घटनाओं (धम्म) के सच्चे (लक्खना) गुणों तक पहुंचे (आगत), उन्हें प्राप्त (अधिगत) किया और समझा है, उसी प्रकार वे भी हैं; भ्रष्टता (किलेसा) के प्रभाव में आकर उनका अपमान (आसादेसी) न करें, और उन श्रेष्ठ (आरिया) शिष्यों (सावक) को कम न आंकें जो इसी प्रकार (तथागते) लाभ (अत्था) के लिए आए थे, मानो वे सामान्य (पकति) जीव हों। उन्होंने ऐसी स्थिति के कारण के बारे में कहा जिसका अपमान नहीं किया जाना चाहिए: "सग्गे पि ते न रज्जन्ति, किमंगं पाना मानुसे का अर्थ है: बुद्ध के वे शिष्य स्वर्गिक आनंद (सग्ग) से भी आसक्त (रज्जन्ति) नहीं होते, जो कि एक ऐसा सुख है जिसका पूर्ण मूल्यांकन सर्वज्ञ बुद्ध जैसे व्यक्ति द्वारा किए गए वर्णन (अक्खानेन परियोसापेटुम) से भी नहीं किया जा सकता; उन्होंने मिठाइयों (संखार) के नुकसान को भली-भांति देख लिया था, इसलिए उन्होंने कामवासना (राग) उत्पन्न नहीं की; फिर भी, गोबर के ढेर के समान मनुष्यों से संबंधित इंद्रिय सुख के धागों पर क्यों ध्यान दें (किमंगं)?"

ये च खो बाला का अर्थ है: वे लोग जो मूर्खता से प्रेरित होकर मूर्ख बन जाते हैं; दुम्मेधा का अर्थ है: सत्य (धम्म) के सार का निर्माण करने वाले ज्ञान के अभाव के कारण मूर्ख; दुम्मन्ति का अर्थ है: अप्रिय वस्तु में लगातार सुखद घटना को देखने के कारण बुरे विचार रखने वाला; मोहपारुता का अर्थ है: ज्ञान के भ्रमपूर्ण अभाव से पूरी तरह से ढके हुए मन की स्थिति के कारण भ्रम में लिपटा हुआ; तदिसा का अर्थ है: उस रूप (रूप) के समान अंधे आम लोग; तत्थ का अर्थ है: स्त्री की उस धारणा (इत्तिसाञ्ञिता) में; मारखित्तम्हि बंधने का अर्थ है: मार द्वारा बिछाए गए जाल में फंसा हुआ। राज्जंती का अर्थ है: वे कामवासना (राग) से चिपके (तिट्ठंती), लोभी (गिद्धा), गुलाम (गधिता), आसक्त (मुच्चिता) और लीन (अज्जोपञ्ञा) रहते हैं।

विराजिता का अर्थ है: इस प्रकार; येसं का अर्थ है: दोषमुक्त अरहंतों के लिए; हालांकि, रागो का अर्थ है: वासना जिसका स्वभाव तेल के लेप के रंग (राग) के समान है और जिससे निकलना कठिन है; दोसो का अर्थ है: क्रोध जिसका स्वभाव अवसर मिलने पर आक्रामक (दुस्सान) होने का है, जो शत्रुतापूर्ण (सपत्तो) होने के समान है; अविज्जा च का अर्थ है: स्वभाव से ज्ञान का अभाव; विराजिता का अर्थ है: श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्ग) के वैराग (विराग) द्वारा सभी प्रकार से त्यागे और अच्छी तरह से अलग किए गए; छिन्न का अर्थ है: उस प्रकार के प्रमुख मार्ग (मग्ग) की छुरी से काटे गए; सुत्त का अर्थ है अस्तित्वों को जोड़ने वाले धागे; अबंधना तत्त का अर्थ है: वहाँ बंधे न होने के कारण, परिणामस्वरूप, बंधन के अभाव के कारण, बल्कि हर जगह; न रज्जन्ति का अर्थ है: वे मार के उस जाल से जुड़े नहीं हैं, जैसा कि कहा गया है। इस प्रकार, थेरा ने उस महिला को सत्य (धम्म) का उपदेश दिया और चले गए।

थेरा नंदक के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(190): जंबुका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (190) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
190. जंबुका
इस बुद्ध युग में एक अत्यंत गरीब परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने पिछले जन्म की तरह ही मल-मूत्र भोजन करना स्वीकार किया और संसार त्यागकर नग्न तपस्वी बन गए। अनेक तपस्याएँ करते हुए और तिनके के सहारे एक-एक करके सेम खाते हुए, जब वे पचपन वर्ष के हुए, तब भगवान (बुद्ध) ने उनके हृदय में अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) की संभावनाओं को एक दीपक की तरह चमकते हुए देखकर स्वयं उनके पास जाकर उन्हें धम्म का मार्ग सिखाकर उन्हें सोतापाण (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त करवाई। तब उन्होंने कहा: 'आओ, भिक्षु!' और इस प्रकार उन्हें भिक्षु दीक्षा दी। [1] और जंबुका ने अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली, तो भगवान (बुद्ध) ने उन्हें अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) में स्थापित कर दिया। यह संक्षेप में है, लेकिन इसका पूरा विवरण धम्मपद श्लोक की टीका में दिया गया है:

एक-एक करके तिनके के सिरे से एक-एक बीन। ... [2]

अपने परलोकवास के समय उन्होंने यह दिखाया कि यद्यपि वे एक समय गलत मार्ग पर चल रहे थे, फिर भी उन्होंने परम बुद्ध का सहारा लेकर वह मुकाम हासिल कर लिया था जहाँ एक शिष्य को पहुँचना चाहिए, इस प्रकार:

[283] पंचापन्नसवास्सनि राजोज्जल्लमधारयि,॥
भुञ्जन्तो मासिकां भट्टं केसमासुऽ अलोकैयि॥॥

[284] एकापदेन अथासिṃ आसनो परिवज्जयिṃ,॥
सुक्खागुठानि च खदिं उदादासं च न सादियिं॥॥

[285] एतादिसैं करित्वाना बहुṃ दुग्गतिगामिनाऽ,॥
वुयहमानो महोघेन बुद्धं शरणं अगमः॥॥

[286] सारनागमना पास पासा धम्मसुधम्मतṃ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥॥

[283] पचपन वर्षों तक धूल
और गंदगी से ढका हुआ, महीने में एक बार खाना खाता हुआ, [3] और अपने सिर और चेहरे से बाल नोचता हुआ,

[284] मैं एक पैर पर खड़ा होता, मैं कोई सोफा इस्तेमाल नहीं करता,
सूखा गोबर खाता, और न ही बचे हुए को स्वीकार करता।

[285] इसलिए मैंने ऐसे कर्म किए जिनसे बहुत दुख
और विनाश हुआ, मैं भयंकर बाढ़ में बह गया,
जब तक कि मुझे बुद्ध की शरण नहीं मिली: -

[286] हे देखो, मैं उस शरण में कैसे आया हूँ!
हे देखो, धर्म (धम्म) के उचित भिक्षु क्रम को!
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध ने मुझे जो कुछ सिखाया है, वह सब कर लिया है।

[1] पृष्ठ 106, नोट 2 देखें।

[2] श्लोक 70 (टीका, ii. 52-63)। साहित्यिक संदर्भ रुचिकर है, लेकिन इससे हम यह नहीं कह सकते कि संदर्भित धम्मपद टीका वही है जो अब हमारे पास पाली में है। जंबुका का उल्लेख मिलिंद, ii. 249 में किया गया है।

[3] दीघा-निकाय में एक से अधिक बार आने वाली तपस्याओं की सूची में दिया गया चरम अंतराल महीने में दो बार है - उदाहरण के लिए, संवाद, i. 229.

4.5 [190] जंबुकत्थेरा के छंद पर टीका

पंचपञ्ञास से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा जंबुका का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने भगवान तिस्सा के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, उन्होंने गुरु के उत्कृष्ट आत्मज्ञान में विश्वास करते हुए, आदरपूर्वक बोधि वृक्ष को पंखा अर्पित किया, जिसकी वे पूजा करते थे। उस पुण्य कर्म के कारण, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए और भगवान कस्सपा के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; ज्ञानोदय प्राप्त करने पर, वे उनके शासनकाल (शासन) में एक भिक्षु बन गए, जो एक ऐसे भक्त द्वारा निर्मित मठ में निवास करते थे जो उनकी (भिक्षु की) सेवा करता था। फिर एक दिन, जीर्ण-शीर्ण वस्त्र धारण किए हुए, रोगमुक्त अरहंत थेरा अपने लंबे बाल मुंडवाने के उद्देश्य से जंगल से गाँव की ओर आए; उस अरहंत को देखकर, वह भक्त थेरा के कार्य से प्रसन्न हुआ, नाई से थेरा के बाल और दाढ़ी मुंडवाए, उन्हें उत्तम भोजन कराया, उत्तम वस्त्र दान किए और थेरा को अपने मठ में निवास करने के लिए कहा: "आदरणीय महोदय! कृपया यहाँ निवास करें।" उस थेरा को देखकर, वहाँ रहने वाले भिक्षु, जो स्वभाव से ईर्ष्यालु और द्वेषपूर्ण थे, ने दोषरहित थेरा से कहा: "हे भिक्षु! जब आप इस प्रकार यहाँ निवास कर रहे हैं और इस दुष्ट भक्त की सेवा में हैं, तो नंगे व्यक्ति का जीवन, जो गोबर और मूत्र खाकर, उंगलियों से बाल नोचकर अपना पोषण करता है, उससे बेहतर (वरं) है।" ऐसा कहने के बाद भी, वह वहीं (तावदेव) शौचालय में घुस गया, अपने हाथ से मल को फुलाया, मानो वह दूध-चावल में व्यस्त (वढन्तो) हो, और अपनी आवश्यकता के अनुसार खाया; उसने मूत्र भी पिया। अपने पोषण की इस नियमित (नियम) दिनचर्या के अनुसार वह अपने जीवनकाल तक रहा, मर गया, नरक में पका, फिर गोबर खाकर और मूत्र पीकर पुन: जीवित हुआ; उस कर्म के फल के अवशेष के कारण, यद्यपि वह मनुष्यों के बीच उत्पन्न हुआ था, फिर भी उसे पाँच सौ जन्मों तक जैन (निगंठ) रहना पड़ा और मल (गूठबक्खा) का भोजन करना पड़ा।

फिर, यद्यपि वह मनुष्य के गर्भ में जल रहा था, फिर भी एक दरिद्र परिवार में उसका जन्म हुआ, क्योंकि उसने एक कुलीन व्यक्ति का अपमान किया था। जब उसे (बचपन में) माँ का दूध, दूध या घी पिलाया गया, तो उसने उसे त्याग दिया और केवल मूत्र पिया; जब उसे पका हुआ चावल खिलाया गया, तो उसने उसे भी त्याग दिया और केवल मल खाया; इस प्रकार, गोबर और मूत्र से पोषण प्राप्त करते हुए वह वयस्क होने के बाद भी ऐसा ही करता रहा। उसे ऐसा करने से रोकने में असमर्थ होने पर उसके लोगों ने उसे पूरी तरह से त्याग दिया। अपने रिश्तेदारों द्वारा त्याग दिए जाने पर, उसने नग्न तपस्वी बनकर संसार का त्याग कर दिया और कभी स्नान नहीं किया; अपने शरीर पर धूल और पसीना लिए, उसने अपने बाल और दाढ़ी मुंडवा ली, अन्य आसनों (इरियापत्थ) को त्याग दिया और एक पैर पर खड़ा रहा। उन्हें कोई भी निमंत्रण पसंद नहीं था। उन्होंने एक महीने का उपवास करने का संकल्प लिया था। दिन के समय, वे जरूरतमंद लोगों द्वारा दान में दिए गए भोजन को कुश घास की एक ही नोक से ग्रहण करते थे और उसे जीभ से चाटते थे। रात में वे केवल सूखा गोबर खाते थे और गीले मल को यह कहकर त्याग देते थे कि उसमें जीव (जीवित प्राणी) होते हैं। जब वे पचपन वर्षों तक इसी प्रकार उपवास करते रहे, तो उस अवधि के समाप्त होने पर, बहुत से लोग उनकी ओर आकर्षित हुए और उनके बारे में सोचने लगे: "वे अत्यंत तपस्वी और अपनी इच्छाओं में पूर्णतः विरक्त हैं।"

तब भगवान बुद्ध ने उनके हृदय के भीतर (गब्बह) अर्हंत बनने के लिए आवश्यक योग्यता को एक कलश में जलते दीपक की तरह चमकते हुए पाया। वे स्वयं वहाँ गए, सत्य (धम्म) का उपदेश दिया, उन्हें सोतापत्ति के प्रथम चरण की सिद्धि दिलाई, उनका स्वागत करते हुए उन्हें पूर्ण भिक्षु दीक्षा दिलाई; "आओ, भिक्षु!" उन्हें आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में तल्लीन किया और उन्हें अर्हंत पद पर स्थापित किया। यहाँ यह संक्षेप में (संखेप) है; विस्तार से, इसे धम्मपद में "मासे मासे कुसग्गेन" से शुरू होने वाले श्लोक की व्याख्या में बताए गए तरीके से समझा जाना चाहिए।

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, परिनिर्वाण में प्रवेश करने के अवसर पर उन्होंने ये चार श्लोक कहे: "यद्यपि मैंने आरंभ से ही अपने जीवन को गलत तरीके से व्यवस्थित किया, फिर भी एक शिष्य को जो कुछ प्राप्त करना चाहिए था, वह मैंने आत्म-जागृत बुद्ध के दयालु सहयोग (निस्साय) से प्राप्त कर लिया था।"

283. "पचपन वर्षों तक मैंने बोझ उठाया

मेरा शरीर धूल से सना हुआ था, पसीने से तर था;

मैं महीने में सिर्फ एक बार ही खाना खाता हूँ।

मैंने अपने बाल और दाढ़ी हटवा ली थी।

(मेरी उंगलियों से)।

284. "मैंने एक पैर पर खड़े होकर अपना रुख अपनाया।

और मैंने सेवन से पूरी तरह परहेज किया।

मेरी सीट। मैंने सूखा गोबर भी खाया; मैं

उन्होंने भोजन के लिए कोई निमंत्रण स्वीकार नहीं किया।

285. "इतनी अधिक मात्रा में ऐसे कार्य करने के बाद

जो दुष्ट अस्तित्व की ओर सहायक थे

(दुग्गती), द्वारा बहते हुए

बड़ी बाढ़ आने पर मैंने बुद्ध की शरण ली।

285. "इतनी अधिक मात्रा में ऐसे कार्य करने के बाद

जो दुष्ट अस्तित्व की ओर सहायक थे

(दुग्गती), द्वारा बहते हुए

बड़ी बाढ़ आने पर मैंने बुद्ध की शरण ली।

286. "देखो, जाने के बाद मेरा आश्रय।"

(बुद्ध से); सत्य के अच्छे स्वरूप को देखो

(धम्म); त्रिविध महाविज्ञान

तदनुसार (विज्जा) प्राप्त हो गई थी

(मेरे द्वारा); बुद्ध का निर्देश था

किया गया।"

वहाँ, paṅcapaññāsavassāni, rajo jallamadhārayiṃ का अर्थ है: मैंने पचपन वर्षों तक अपने शरीर पर आकस्मिक धूल (आजेंटुक) और पसीने (रेणु) को धारण किया, जो शरीर से चिपका हुआ था। स्नान न करने के कारण, मैंने नग्न संन्यासी का जीवन अपनाया। Bhunjanto māsikaṃ bhattaṃ का अर्थ है: महीने में एक बार, पुण्य कमाने के लिए जरूरतमंदों द्वारा दान किए गए भोजन को जीभ के सिरे पर रखकर खाना, क्योंकि मैं संसार के लोगों को धोखा देने के उद्देश्य से महीने भर उपवास करने वाला (मासोपवासिको) बन गया था और रात में गोबर खाता था। अलोकयिं का अर्थ है: मैंने अपने बाल और दाढ़ी, जिनकी जड़ें कोमल थीं, को अपनी उंगलियों से चुटकी भर (अच्चारिका) पानी (आपा) के त्याग (खेपेना) के साथ उखाड़ दिया।

Ekapādena atthāsim, āsanaṃ parivajjayiṃ का अर्थ है: मैं खड़े रहते हुए अपने दोनों हाथ ऊपर उठाकर केवल एक पैर के सहारे खड़ा रहा; मैंने किसी भी हालत में आसन पर बैठने से पूरी तरह परहेज किया। Uddesaṃ का अर्थ है: निमंत्रण (nimantanaṃ)। कुछ विद्वान कहते हैं: 'uddissakataṃ'। Na sādiyiṃ का अर्थ है: मैंने स्वीकार नहीं किया; मैंने अस्वीकार किया; यही इसका अर्थ है।

Etādisaṃ karitvāna, bahuṃ duggatigāminaṃ का अर्थ है: इतने अधिक बुरे कर्म करना और उत्पन्न करना, जो ऐसे ही परिणामों के लिए सहायक थे, जैसे कि इस जन्म में और पिछले जन्मों में भी बुरे कर्मों के लिए सहायक थे। Vuyhamāno mahoghena का अर्थ है: काम (इंद्रिय सुख) आदि की बाढ़, विशेष रूप से गलत विचारों की बाढ़, द्वारा नरक के सागर में खींच लिया जाना। Buddhaṃ saraṇamāgamaṃ का अर्थ है: मैंने अपने पुण्य कर्मों के बल पर बुद्ध को 'अपना आश्रय' बनाया। अब, अपने पुण्य कर्मों में आई कमियों के कारण कठिनाई से मनुष्य जीवन प्राप्त करने के बाद, मैं अपने अटूट विश्वास के साथ गुरु से अत्यंत प्रसन्न होकर कहता हूँ: "परमेश्वर पूर्णतः आत्मजागृत बुद्ध हैं।" सरणगमनं पस्सा, पस्सा धम्मसुधम्मतं का अर्थ है: देखो, मैं शरण में जा रहा हूँ जो मेरे इंद्रियलोक (आयतन) तक पहुँच गया है; देखो, इस व्यवस्था (शासन) के सत्य (धम्म) का अच्छा स्वरूप भी इस प्रकार है कि यद्यपि मैंने अपने जीवन को इस प्रकार गलत ढंग से व्यवस्थित किया था, फिर भी गुरु के एक ही उपदेश से मुझे इस प्रकार की समृद्धि प्राप्त हुई। उन्होंने "तिस्सौ विजय" आदि के माध्यम से उस समृद्धि को दिखाया। इसी कारण उन्होंने कहा:—

"वहां एक पंखे को उठाकर और भेंट देकर"

अजेय (अबीजहं) सिंह सिंहासन,

मैंने बोधि वृक्ष को प्रणाम किया।

धन्य हो तिस्सा।

यह बानवे युग (कप्पा) पहले की बात है,

मैंने अजेय शेर को अपनी भेंट अर्पित की।

सिंहासन; मुझे किसी भी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है;

यह मेरे प्रशंसक का फलदायी परिणाम है

(दान)।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

थेरा जंबुका के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(191):सेनाका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (191) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
191. सेनाका
बुद्ध युग में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में, उरुवेला के थेरा कस्सपा की बहन के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम सेनाक रखा गया। [1] जब उन्होंने ब्राह्मणों (पुजारियों) की वैदिक [181] संस्कृति सीख ली, तो वे अपने परिवार के साथ रहने लगे। उस समय लोग मार्च के पूर्वार्ध (फग्गुना) में हर साल एक उत्सव मनाते थे, [2] और नदी किनारे एक पूजा (तीत्त-अभिषेकम) करते थे, जिसे गया - फग्गुना कहा जाता था ।

तब परम पूज्य बुद्ध ने, जो लोग मार्गदर्शित हो सकते थे, उन पर दया करके नदी के किनारे ठहर गए। जब लोग एकत्रित हुए, तो सेनाक भी वहाँ आए और भगवान (बुद्ध) को धम्म का उपदेश देते हुए सुनकर सोतापाण (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त की, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और समय आने पर अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, अपनी विजय पर विचार करते हुए, वे आनंद से भर गए और उन्होंने यह वाणी (गाथा) कही:

[287] स्वगतौ वात मे असि गययाय गयफगुय,॥
यm̐ अद्दससिm̐ सम्बुद्धौ देसेन्टं धम्ममुत्तमm̐॥ ॥

[288] महप्पभाm̐ गणचरियm̐ अग्गप्पाट्टm̐ विनायककm̐,॥
सदेवकस्सा लेकासा जिनाअतुलदस्सानाm̐॥ ॥

[289] महानागं महावीरं महाजुतिमानसवं,॥
सब्बासवपरिक्खिनं सत्थारमकुतोभ्यं॥ ॥

[290] सिरासांकिलीहाm̐ वात माm̐ दिशिसंदानासंदिताm̐,॥
विमोचनै सो भगव सब्बागण्तेहि सेनाकं ती.॥ ॥

[287] हे वसंत ऋतु के उस दिन मेरा कितना स्वागत हुआ,
जब गया में, गया के नदी-उत्सव में,
मैंने बुद्ध को सर्वोच्च मार्ग (धम्म) का उपदेश देते हुए देखा,

[288] महान प्रकाश को देखा, असंख्य लोगों के शिक्षक,
जिसने सर्वोच्च को जीता है, सभी के मार्गदर्शक,
मनुष्यों और देवताओं के विजेता, अद्वितीय द्रष्टा।

[289] हे शक्तिशाली जादूगर, हे महिमावान भगवान,
दूरगामी वैभव, शुद्ध, निर्मल मन, [4] हे भगवान (बुद्ध) जिन्होंने सभी आसवों का वध किया है, और उस अवस्था को प्राप्त किया है जहाँ भय नहीं आ सकता। [5]

[290] मैं लंबे समय तक संप्रदाय और हठधर्मिता के बंधनों से बंधा और सताया रहा

- आह! लेकिन अब यह
भगवान (बुद्ध) हैं जिन्होंने सेनाक को
हर बंधन से मुक्त कर दिया है।

[1] इस नाम के ब्राह्मण (पुजारी) जाट., iii., संख्या 401; vi., संख्या 546 में हैं। चाचा के कथन (गाथा) के लिए, CCX देखें।

[2] फाग्गुना, या फाल्गुन, आधा फरवरी में, आधा मार्च में गिरता है।

[3] तित्थाभिषेक। किस प्रकार का 'बपतिस्मा' - शाब्दिक रूप से, छिड़काव - होता था, चाहे वह शिशुओं का हो, विद्वानों का हो, या धार्मिक स्वीकारोक्ति का हो, यह अनुमान लगाना आसान नहीं है। बोहट्लिंगक और रोथ के शब्दकोश के अनुसार, नदी (नेरांजारा) स्वयं फल्गु के नाम से जानी जाती थी। डॉ. न्यूमैन कहते हैं कि गया शहर को भी इसी नाम से पुकारा जाता है (मज्ह-निक., अनुवाद, x. 271. सिस्टर्स में पृष्ठ 134 पर दिया में एक आधुनिक नदी किनारे की सभा की बहुत ही विचारोत्तेजक तस्वीर देखें ।

[4] अनासाव। थेरा यहाँ थोड़ा दोहराते हैं।

[5] निर्वाण की एक सामान्य उपाधि।

4.6 [191] सेनाकत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
स्वागतं वत से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य सेनाक का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने सिख धर्मगुरु के समय एक गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे वयस्क हुए, तो एक दिन संयोगवश उन्हें गुरु के दर्शन हुए, वे श्रद्धा से भर गए और उन्होंने भगवान बुद्ध को एक मोर का हाथ (मारहन्त्थेना) आदरपूर्वक अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे एक ब्राह्मण परिवार में थेरा उरुवेला कस्सपा की बहन के गर्भ में उत्पन्न हुए। उनका नाम सेनाक था। वयस्क होने पर, उन्होंने ब्राह्मण विद्याओं और विज्ञानों में सिद्धि प्राप्त की और गृहस्थ जीवन व्यतीत किया। उस समय भी, मार्च (फग्गुन) माह में उत्तराफग्गुन चंद्र नक्षत्र के समय वार्षिक रूप से मनाए जाने वाले भोज में, बहुत से लोग गया में एक स्थान का अभिषेक करते थे; इसी कारण उस भोज को "गयाफग्गु" कहा जाता है। फिर भगवान बुद्ध उस भोज के दिन, अपने उपदेशों के पात्र (वेणेय) लोगों पर दया करके गया के उस स्थान के पास निवास करते थे। बहुत से लोग उस स्थान का अभिषेक करने के उद्देश्य से इधर-उधर से उस ओर जाते थे। उसी समय सेनाक भी उस स्थान का अभिषेक करने के लिए वहाँ पहुँचे, उन्होंने धर्म का उपदेश दे रहे गुरु को देखा, उनके पास गए, धर्म को सुना, उचित श्रद्धा प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के अपने कर्तव्य का पालन करते हुए अर्हतत्व प्राप्त कर लिया, लेकिन शीघ्र ही। इसलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"एक मोर को पकड़ लेने के बाद

दूसरी ओर, मैंने नेता से संपर्क किया।

विश्व। धर्मपरायण और नेक हृदय।

मैंने उन्हें मोर का हाथ भेंट किया।

इस मोर के हाथ के माध्यम से, जैसे

साथ ही मेरी इच्छा (चेतना) के कारण भी

और आत्म-संकल्प, तीनों आग

बुझ गया; मुझे भरपूर लाभ हुआ

परम आनंद।

बुद्ध और धर्म अद्‌भुत हैं; अद्‌भुत

मेरे लिए तो यही स्वामी की समृद्धि है;

उसे मोर का हाथ देकर,

मुझे अपार आनंद प्राप्त हुआ।

मेरी तीनों आग बुझ चुकी थीं।

मेरे सभी अस्तित्व समाप्त हो गए थे;

मेरे सारे घाव चारों ओर फैल गए थे।

नष्ट हो गया; अब कुछ भी अस्तित्व में नहीं है

नया अस्तित्व।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने तब दान दिया; मैं नहीं

किसी भी बुरी शक्ति को याद रखें; यही वह बात है

मोर के हाथों का फलदायी परिणाम।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने उचित कर्मों (पटिपत्ति) पर विचार किया, अत्यंत प्रसन्न हुए और आनंदमय वाणी के रूप में चार श्लोक बोले।

287. "वास्तव में, यह मेरा अच्छा आचरण (स्वागत) था;

यह गया के तटबंध के निकट था।

गयाफाग्गु के समय में मैंने स्वयं को देखा-

जागृत बुद्ध ने सर्वश्रेष्ठ शिक्षा प्रदान की।

सत्य (धम्म)।

288. "वह अत्यंत तेजस्वी (पभा) था,

भिक्षुओं की भीड़ भरी सभा के शिक्षक, जो

अपनी सर्वोच्च ऊँचाई प्राप्त कर चुके थे,

अनुशासक, विजेता और अद्वितीय

दिव्य दृष्टि के साथ-साथ संसार का दर्शन

दुनिया।

289. "वह (अरहंतों में) एक महान हाथी था।"

महान नायक, महान गौरवशाली और रोगों से मुक्त:

वह ऐसा व्यक्ति था जिसके सारे घाव पूरी तरह से ठीक हो चुके थे।

नष्ट हो गया, स्वामी को कोई खतरा नहीं था

कहीं भी।

290. "उस भगवान ने मुझे, सेनाका को, बचा लिया।"

सभी बंधनों से मुक्त, मैं, जो वास्तव में बहुत लंबे समय से

स्वयं पतित और बंधनों से बंधे हुए

(गलत) विचार।

वहाँ, Svāgataṃ vata me āsi का अर्थ है: वास्तव में, मैं वहाँ अच्छी तरह पहुँचा; दूसरे शब्दों में, वास्तव में, मेरा आगमन उत्तम था। Gayayaṃ का अर्थ है: गया के उतरने के स्थान के निकट। Gayaphagguyā का अर्थ है: मार्च (फग्गुन) माह के उत्तराफग्गुया चंद्र नक्षत्र के उत्सव में, जिसे "गयाफग्गु" के रूप में जाना जाता है। "Yaṃ" से शुरू होने वाला वाक्यांश, अच्छी तरह से जाने की स्थिति का कारण दर्शाता है। वहाँ Yam का अर्थ है (यस्मा) क्योंकि। Addasāsiṃ का अर्थ है: मैंने देखा। Sambuddham का अर्थ है: स्वयं को सभी सत्यों (धम्म) के ज्ञान की अवस्था के कारण उत्कृष्ट रूप से आत्मजागृत बुद्ध। देसेनतं धम्ममुत्तमं का अर्थ है: जो सर्वोत्कृष्ट, सर्वोत्कृष्ट, सर्वोत्कृष्ट सत्य (धम्म) का कथन कर रहे थे, जो निश्चय ही (एकन्त) लाभकारी (निय्यनिक) है, और अनुशासन के प्रति उत्तरदायी (वेनेय्या) लोगों के आशय के अनुरूप है।

महाप्पभं का अर्थ है: अपने शरीर और ज्ञान की अपार चमक से युक्त। गणचर्यं का अर्थ है: सुचारु आचरण (आचार) द्वारा सुसंस्कृत, भिक्षुओं की सभा आदि जैसे गण समूहों को उत्कृष्ट रूप से नियंत्रित करने वाले गण मंडल के गुरु। अग्गपट्टं का अर्थ है: नैतिक उपदेश आदि सर्वोपरि गुणों की प्राप्ति द्वारा सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने वाले। विनायकं का अर्थ है: अनुशासक, क्योंकि स्वयं के लिए कोई नेता नहीं है; परम अनुशासन के माध्यम से दिव्य, मानव आदि प्राणियों का नेतृत्व और अनुशासन करने के कारण। सदेवकस्स लोकस्स जिनं का अर्थ है: जगत के विजेता, जगत और दिव्य जगत में अग्रणी विजेता; अतुलदस्सनं का अर्थ है: अतुलदस्सन की अद्वितीय दृष्टि के कारण, असीम दृष्टि की स्थिति के कारण, जगत और दिव्य जगत के लोगों द्वारा, उनके शारीरिक सौंदर्य की स्थिति के कारण, जो बत्तीस उत्कृष्ट प्रमुख चिह्नों (लक्खण) और अस्सी लघु चिह्नों (अनुभ्यंजन) आदि से सुशोभित है, और उनके आध्यात्मिक (धम्म) शरीर (काया) की स्थिति के कारण, जो दस प्रकार की शक्ति (बल), चार प्रकार के आत्मविश्वास (वेसाराज) जैसे गुणों से सुशोभित है।

महानागम् का अर्थ है: महान हाथी, क्योंकि वे अपनी महान शक्ति के कारण दोषरहित अरहंतों में विख्यात हैं, जो स्वयं हाथी के समान हैं, और क्योंकि वे गति, बल, परिश्रम आदि गुणों से परिपूर्ण समृद्धि के कारण एक विशाल हाथी के समान हैं। महावीरम् का अर्थ है: महान वीर, क्योंकि वे मार की सेना द्वारा स्पष्ट रूप से कुचले नहीं गए (अविमथन), जिसके कारण वे अत्यंत वीर हैं। महाजुतिम् का अर्थ है:

महान तेज और महान गौरव। अनासवम् का अर्थ है: दोषों से मुक्त, इस एक में चारों प्रकार के दोष नहीं हैं। सब्बासवपरिक्खिणम् का अर्थ है: इस एक के सभी दोष और उनके सभी प्रकार (वासना) पूरी तरह से नष्ट हो गए हैं। वास्तव में (कामं), बुद्ध के शिष्य और मौन बुद्ध तो दोषरहित (खील्नासाव) अरहंत होते हैं; परन्तु सर्वज्ञ बुद्धों के दोष और उनकी प्रवृत्तियाँ दोनों ही दूर हो जाती हैं; अतः, "अनासवं, दोषरहित" कहने के बाद, फिर से यह कथन किया गया है: "सब्बासाव परिक्खिनां, सभी दोष पूर्णतः नष्ट हो गए हैं," ताकि (स्पष्ट अंतर) दिखाया जा सके। इसी कारण उक्त कथन इस प्रकार है: "सब्बे आसवा सवासना परिक्खिना एतस्सा ति सब्बासाव-परिक्खीणां।" सत्थरं का अर्थ है: स्वामी, क्योंकि उन्होंने अनुशासन के योग्य प्राणियों को, उनकी योग्यता के अनुसार संसार से बाहर निकलने (वेनेय्यानं) का उपदेश दिया, जिसमें वर्तमान और भविष्य के लिए परम लाभ (अत्थ) का अर्थ निहित था। अकुतोभयं का अर्थ है: खतरे से मुक्त, क्योंकि हर जगह से कोई खतरा नहीं था और उनके आत्मविश्वास की अवस्था के कारण, जिसे आत्मविश्वास की चार अवस्थाओं (वेसरज्जा) में गिनाया गया है; चूंकि मैंने ऐसे व्यक्ति को, जो पूर्णतः आत्म-जागृत बुद्ध थे, देखा, इसलिए वास्तव में, मेरे लिए यह सौभाग्य की स्थिति थी; यही व्याख्या है।

अब, उन्होंने गुरु के दर्शन से प्राप्त अपने गुण को दर्शाने के लिए चौथा श्लोक बोला। उस श्लोक का अर्थ है: — चिरासंकिलित्थं का अर्थ है: लंबे समय से पतित, बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों में उलझा हुआ, जिसका न कोई आरंभ है और न कोई अंत (अनामतग्ग), आत्म-पतितता की वास्तविकताओं (वत्थु) के कारण, जो खट्टे चावल के दलिया (कंजिया) से भरे लौकी (लाबु) के खोल के समान है, छाछ (तक्का) से भरे पात्र के समान है, और चिकनाई (वास) से लथपथ (पीत) चिथड़े (पिलोटिका) के समान है। दिट्ठिसन्दानेण बंधितं का अर्थ है: अहंकार (सक्काया) के स्तंभ (तम्भ) पर गलत दृष्टिकोण (दिट्ठि) के बंधन में बंधा हुआ, चमड़े की पट्टियों (गद्दुला) से बंधे कुत्ते (सारमेया) के समान। सब्बगन्थेहि मं सेनाकं विमोचयी वत सो भगव का अर्थ है: भगवान में अपनी अपार प्रसन्नता और पवित्रता को स्वीकार करते हुए वे कहते हैं; हे मेरे स्वामी, अपने श्रेष्ठ मार्ग (मग्ग) के हाथों से मुझे अनुचित लोभ (अभिज्जा) जैसे बंधन से मुक्त किया है।

थेरा सेनाक के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (192): संभुता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (192) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
192. सम्भूता
बुद्ध युग में एक कुलवासी परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने धम्म के कोषाध्यक्ष द्वारा परम पूज्य बुद्ध के निधन के बाद सोतापना (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त की। [1] भिक्षु संघ में प्रवेश करके, उन्होंने अंतर्दृष्टि विकसित की और अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। इस प्रकार वे निर्वाण के आनंद में तब तक रहे, जब तक कि परम पूज्य बुद्ध के परिनिर्वाण के एक शताब्दी बाद, वैशाली के वज्जियन भिक्षुओं ने दस सिद्धांत प्रस्तुत नहीं किए, जिनका थेरा नियासा [2] और काकंदकन भिक्षुओं ने विरोध किया, और 700 अरहंतों (प्रबुद्धों) द्वारा धम्म और विनय का एक संशोधित संस्करण तैयार किया गया। तब थेरा, धम्म और विनय के प्रस्तावित विकृति से प्रेरित होकर, अज्ञा को इसकी गवाही देते हुए, इन श्लोकों का उच्चारण किया :

[291] यो दंडकाले तारति तरणिये च दंडये॥
अयोनि1 सविधानेन बालो दुक्खं निगच्छति॥ ॥

[292] तस्सत्था परिहयन्ति कापापक्खेव कैंडिमा॥
अयसास्याञ्च पप्पोति मित्तेहि च विरुज्जति ॥॥ ॥

[293] यो दंडकाले दंडेति तारणिये च तारये॥
योनिसो संविधानेन सुखां पप्पोति पंडितो॥ ॥

[294] तस्सत्था परिपुरेन्ति सुक्खपक्खेवा कैंडिमा॥
यसो कित्तिन्च पप्पोति मित्तेहि न विरुज्जति' ति.॥ ॥

[291] जो उचित समय पर निर्णय लेता है, उसे विराम लेना चाहिए,
और जो निर्णय लेने के समय लापरवाह हो जाता है, [3] योजना और सिद्धांत के अभाव में इस मूर्ख ने
अनेक कष्ट सहने के लिए यात्रा की। [292] जो पुरस्कार उसके होने चाहिए थे, वे उसी प्रकार लुप्त हो जाते हैं,
जैसे अंधकारमय सप्ताहों में घटता हुआ चंद्रमा पिघल जाता है।
वह अपने मित्रों से मतभेद के कारण अपमान का पात्र बनता है।

[293] जो समय पर रुकने के लिए धीमा है,
जो गलत समय पर भी आगे बढ़ता है,
इस बुद्धिमान व्यक्ति ने अपनी योजना और सिद्धांत से
निश्चित रूप से सुख का मार्ग पाया। [294] उसके लाभ पक कर परिपूर्ण हो जाते हैं,
जैसे उज्ज्वल सप्ताहों में अर्धचंद्र बढ़ता है।
वह मित्रों के साथ मिलकर सम्मान और प्रसिद्धि प्राप्त करता है।

[1] थेरा आनंद को प्रदान की गई एक उपाधि।

[2] वैशाली की परिषद पर (विनय ग्रंथ, खंड iii, अध्याय xii)। थेरा संभूत 'भांग के वस्त्रधारी' (सानावासी) - सुधार के इस कठिन और नाजुक अभियान के आयोजकों में से एक थे।

[3] शाब्दिक रूप से, क्रॉस। नीचे देखें।

4.7 [192] संभूतथेरा के श्लोक पर टीका
यो दंडकाले से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा सम्भूता का है। क्या यही उत्पत्ति है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संपन्न किए, और चंदाभागा नदी के तट पर एक अर्धमानव पक्षी (किन्नर) के गर्भ में पुनर्जन्म लिया, उस संसार में जब कोई बुद्ध प्रकट नहीं हुए थे (बुद्ध सुन्नत); एक दिन संयोगवश उन्होंने एक मौन बुद्ध को देखा, श्रद्धा से भर गए, उन्हें प्रणाम किया, हाथ जोड़े और सफेद चांदी के अज्जुन फूल अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया, जब यह बुद्ध प्रकट हुए; संभूता नाम प्राप्त करने पर, वयस्क होने पर, उन्होंने भगवान बुद्ध के परनिर्वाण के बाद सत्य के संरक्षक (धम्मभण्डगारिका) की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बने, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर विकास किया और अरहंत पद प्राप्त किया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

"मैं तब आधा इंसान-आधा पक्षी (किन्नारा) था;

मैंने निर्मल (विरज) बुद्ध को देखा।

आत्म निर्भर (सयम्भू), द

अजेय।

"पवित्र मन और अच्छे हृदय वाले,

श्रद्धा के साथ आओ (vadajāto) मैंने अपने हाथ पकड़े

हाथों में। सफेद अजजूना को इकट्ठा करने के बाद

मैंने फूल को विशेष श्रद्धापूर्वक अर्पित किया।

इसका कुछ हिस्सा आत्मनिर्भर बुद्ध को समर्पित है।

उस कार्य के लिए, शाबाश!

इच्छाशक्ति और आत्म-संकल्प के साथ

(पणिधि), मैंने शरीर त्याग दिया

आधा इंसान पक्षी (किन्नारा) और अच्छी तरह से

तावतिंसा पहुंचे।

मैं छत्तीस बार दिव्य राजा बना और

उसने दिव्य संप्रभुता का प्रयोग किया।

दस बार, विश्व राजा के रूप में मैंने इसे वहन किया

महान संप्रभुता को बाहर निकालो।

मेरे लिए क्षेत्रीय शासन का अनुभव भरपूर रहा।

संख्यात्मक रूप से अगणनीय; बीज

उपजाऊ खेत में ऐसा ही था,

आत्मनिर्भर बुद्ध ने अद्‌भुत ढंग से

मेरे लिए।

मेरे अच्छे कर्म का फल मिला; मैं एक बन गया

बेघर भिक्षु। आज मैं योग्य हूँ।

श्रद्धापूर्वक भेंट ग्रहण करने का

साकियान पुत्र के शासनकाल में।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे मुक्ति के आनंद में लीन थे। थेरा ने इन (चार) श्लोकों का पाठ करते हुए अपने अरहंत पद का प्रकटीकरण किया, जब उन्हें आध्यात्मिक पश्चाताप (धम्मसंक्वेग) हुआ, क्योंकि वज्जीपुत्तकों (वज्जी के युवा पुत्रों) के गलत सिद्धांत (उद्धम्म) और झूठे अनुशासन (उब्बिनय) का पर्दाफाश (दीपने) किया गया था, जब धर्म और विनय का संपादन (संगह) उन लोगों द्वारा

किया गया था जिन्होंने अच्छे सत्य (सद्धम्म) का समर्थन किया था, और सात सौ दोषमुक्त अरहंतों द्वारा उस गलत दृष्टिकोण (दिट्ठिम) को तोड़ दिया गया था, जिन्हें काकंडक के पुत्र थेरा यासा द्वारा प्रेरित (उस्साहित) किया गया था, जबकि वैशाली से संबंधित वज्जीपुत्तक परिनिर्वाण के सौ वर्ष बाद दस भोगों (वत्थु) का समर्थन (पग्गयह) कर रहे थे। भगवान का।

291. "जो व्यक्ति उचित समय पर शीघ्रता से कार्य करता है

धीरे चलो, और जब उसे धीरे चलना चाहिए तब वह धीरे चलता है।

तेजी से आगे बढ़ो; अपनी ही नासमझी के कारण

(अयोनि) निष्पादन (संविधान), द

मूर्ख को कष्टदायी पीड़ा सहनी पड़ती है

(दुख)।

292. "उनके लाभ इसी प्रकार कम होते जाते हैं

घटता हुआ चंद्रमा; वह मंच पर पहुँचता है

निंदा किए जाने के कारण; वह विरोध करने लगा।

अपने दोस्तों को।

293. "जो व्यक्ति उचित समय पर धीमे चलता है

जब उसे तेजी से चलना चाहिए, तब वह तेजी से चलता है।

अपनी बुद्धिमत्तापूर्ण निष्पादन के कारण,

बुद्धिमान व्यक्ति सुख प्राप्त करता है।

294. "उसके लाभ इतने अधिक हो जाते हैं कि वे लबालब भर जाते हैं जैसे कि

बढ़ता हुआ चंद्रमा; वह प्रसिद्धि प्राप्त करता है और

वह प्रतिष्ठा का विरोधी नहीं है; उसे दोस्तों से कोई आपत्ति नहीं है।

वहाँ, यो दंड काले तरति का अर्थ है: अनुशासन के संबंध में कोई संशय (विनयकुक्कुच्चा) उत्पन्न होने पर, वह अतिक्रमण (वितिक्कमा) करता है, जब वह किसी पर पैर रख चुका होता है (मद्दित्वा), इस प्रकार: "क्या यह वास्तव में उचित (कप्पति) है या वास्तव में अनुचित (कप्पति) है?" जब तक वह अनुशासन नियमों के जानकार (विनयधर) से यह अनिश्चितता (कुक्कुच्चा) दूर नहीं कर लेता कि उसे कब धीमा होना चाहिए, उस समय जब उस काम (किच्चा) को धीमा किया जाना चाहिए, वह तेजी से आगे बढ़ता है (तरति) और अतिक्रमण करता है। Taraṇiye ca dandhaye का अर्थ है: गृहस्थ (गहट्ठ) के लिए, जो शरण (शरण) और नैतिक उपदेशों (शील) के पालन (सन्दन) में लगा हुआ है; भिक्षुओं के लिए, बड़े और छोटे कर्तव्यों (वत्तपतिवत्त) के पालन और शांत संयम और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (समथ विपस्सना) में लगे रहने के दौरान, जब कोई काम तेजी से होना चाहिए, तो वह आ जाता है। यदि वह उस काम में उचित रूप से संलग्न हुए बिना (किच्चा) धीरे चलता है, यह कहते हुए कि "मैं इसे अगले महीने (आतमनमास) या पखवाड़े (पक्खा) में करूँगा", तो समय उस काम को किए बिना ही बीत जाएगा। Ayonisaṃvidhānena का अर्थ है: बिना किसी संसाधन के व्यवस्था करने और संसाधन के साथ व्यवस्था न होने के कारण, जब उसे धीरे चलना चाहिए तब वह तेजी से चलता है और जब उसे तेजी से चलना चाहिए

तब वह धीरे चलता है; balo का अर्थ है अल्प बुद्धि वाला व्यक्ति; dukkham मतलब: वह वर्तमान में और भविष्य में भी अपनी हानि (अनत्था) की स्थिति में पहुँच जाता है।

तस्सत्था का अर्थ है: ऐसे व्यक्ति के तात्कालिक वर्तमान (दित्तधम्मिका) आदि लाभों का वर्गीकरण, जो उस मूर्ख के अनुरूप व्यवहार करता है; कालापक्खे व चन्दिमा का अर्थ है: कृष्ण पक्ष के चंद्रमा के समान; परिहायन्ती का अर्थ है: वे दिन-प्रतिदिन समाप्त और पूर्ण होते जाते हैं। आयस्क्यं का अर्थ है: वह अवस्था जिसमें बुद्धिमानों द्वारा उसकी इस प्रकार निंदा (गरहितब्बा) की जानी चाहिए: "अमुक व्यक्ति में श्रद्धा (सद्धा) नहीं है, वह प्रसन्न करने वाली श्रद्धा (पसन्ना) से रहित है, आलसी (कुसीत) है और हीनवी*** का कम परिश्रम करता है", इत्यादि; पप्पति का अर्थ है: वह अच्छे मित्रों का विरोधी बन जाता है जो उसे सलाह देते हैं, "अपने जीवन को इस प्रकार व्यवस्थित करो; इस प्रकार व्यवहार मत करो," लेकिन सलाह को इस हद तक न मानने के कारण उसके मित्र कहने लगते हैं: "हमें अब उससे बात नहीं करनी चाहिए।"

शेष दो श्लोकों का अर्थ ऊपर कही गई बात के विपरीत समझा जाना चाहिए। हालाँकि, यहाँ कुछ विद्वानों ने "ताराति दंडये (वह वहाँ तेज़ी से चलता है जहाँ उसे धीरे चलना चाहिए)" शब्दों के लाभ के साथ विकसित मन की प्रशंसा और निंदा को उजागर किया है, जो (उनका दृष्टिकोण) बाद के (दो) श्लोकों में (अच्छी तरह) फिट बैठता है। वास्तव में, पूर्व के दो श्लोक थेरा द्वारा वज्जिपुत्तक भिक्षुओं के संदर्भ में कहे गए हैं, जिन्हें संघ द्वारा दस क्षमादानों (वत्थु) का ज्ञान देकर (दीपेत्वा) नीचे गिरा दिया गया था, क्योंकि उस व्यक्ति ने अपनी स्वाभाविक (पकता) अनिश्चितता (कुक्कुच्च) के कारण भिक्षु बनने के समय से ही अपने उन कर्तव्यों का पालन नहीं किया था जो उसे भक्तिपूर्वक करने चाहिए थे; दूसरी ओर, बाद के दो छंदों में, यह कहा गया है कि जब उनके जैसा एक भिक्षु अपने लाभों को प्राप्त कर चुका था, जब उसने अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित कर लिया था।

थेरा संभूत के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(193):राहुला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (193) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
193. राहुल
हमारे बोधिसत्व के माध्यम से इस बुद्ध युग में राजकुमारी यशोदरा के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उनका पालन-पोषण कुलीन वर्ग के एक महान सेवकों के साथ हुआ। उनके भिक्षु संघ में प्रवेश करने की परिस्थितियाँ खंडक में दर्ज हैं। [1] और उन्होंने, अनेक सूत्र अंशों में अनुग्रहपूर्ण शब्दों द्वारा अपने ज्ञान को परिपक्व करते हुए, [2] अंतर्दृष्टि प्राप्त की, और इस प्रकार अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। उस पर, अपनी विजय पर विचार करते हुए, उन्होंने अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की :

[295] उभयनेवा [35] संपन्नो राहुलभद्दो' ती माṃ विदु॥
यांचामहि पुत्तो बुद्धस्स यां च धम्मेसु चक्खुमा॥ ॥

[296] यं च आसव खींणा यं नत्थि पुनब्भवो॥
अराहा दक्खिनीयोमहि तेविज्जो अमातद्दसो॥ ॥

[297] कामान्ध जलापच्चन्न तन्चाचदनाचादिता॥
पमत्तबन्धुना बधा मच्छव कुमिनामुखे॥ ॥

[298] तां कामां अहमुज्जत्वा चेत्वा मारस्सा बंधना॥
समुळान् तंहमब्बुयः सतीभूतोस्मि निब्बुतोऽ ति.॥ ॥

[295] मैं सौभाग्य से दुगुना धन्य हूँ, जिसे मेरे मित्र
'भाग्यशाली राहुल' कहते हैं। क्योंकि मैं
बुद्ध का पुत्र और सत्यों का द्रष्टा हूँ; [296] हाँ, और मादक पदार्थ (विकृतियाँ/इच्छाएँ) मुझसे दूर हो गए हैं;
हाँ, और अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा।
मैं अर्हंत हूँ, योग्य पुरुषों की भेंट;
मेरी समझ अमृतमय चीजों में 'त्रिगुणी' है।

[297] मनुष्य अपनी इंद्रिय-इच्छाओं से अंधे हो गए हैं,
जो उन पर जाल की तरह फैली हुई हैं; वे
लालसा के आवरण से ढके हुए हैं; अपनी लापरवाह आदतों के कारण
वे कीप के मुंह में फंसी मछली की तरह हैं, [3] [298] परन्तु मैंने, उस इंद्रिय-आवाज को त्यागकर,
शैतान के प्रलोभन के बंधन काट दिए हैं।
लालसा को उसकी जड़ से ही नष्ट करके;
मैं अब शांत हो गया हूँ; बुखार की आग बुझ गई है। [4]

[1] विनय ग्रंथ, i. 208 f.

[2] जैसे, मज्झिमा, संख्या 62; 147; सयुत्ता, iii. 135 इत्यादि।

[3] कुमिनामुखे। कुमिना, पासिब्बाका द्वारा वर्णित, एक फ़नल के आकार का जाल जो संभवतः हमारे वीयर-ट्रैप जैसा दिखता है।

[4] निब्बुतो। यह सिस्टर्स, पृष्ठ 19 में इस पंक्ति को दिए गए अनुवाद की तुलना में बौद्ध विचार के अधिक निकट है ; देखें एन. 4.

4.8 [193] राहुलथेरा के श्लोक पर टीका
उभयेन से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा राहुल का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्ध की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने भगवान पद्ममत्तरा के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने गुरु को एक भिक्षु को अच्छे आचरण (सिक्खा) के प्रति सजग भिक्षुओं में अग्रणी स्थान पर रखते हुए देखा, स्वयं भी उस पद की आकांक्षा की, मठ की सफाई और सुशोभन (विज्जोतना) आदि जैसे अनेक पुण्य कर्म किए और संकल्प लिया। वहाँ से देह त्यागने के बाद, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे, और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब वे हमारी बोधिसत्व पर आश्रित रानी यशोदरा के गर्भ में पुनर्जन्म लिए; राहुल नाम प्राप्त करने के बाद, वे अपने विशाल शाही दल, जिसमें श्रेष्ठ योद्धा (क्षत्रिय) शामिल थे, के साथ पले-बढ़े; उनके त्याग का विचार विनय पिटक के खंड (खंडक) में वर्णित है। गुरु की उपस्थिति में, अनेक सूत्रों के माध्यम से, वे ज्ञान में सर्वांगीण परिपक्व हुए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में तत्पर रहे और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

सात मंजिला महल में, मैंने (प्रस्ताव दिया)

दर्पण और ऐसे ऋषि तक फैला हुआ है

हे परम पूज्य पद्ममुत्तरा (बुद्ध), जो अपने पिताओं में सबसे बड़े हैं

दुनिया।

महान ऋषि, हजार से घिरे हुए

रोग-मुक्त अरहंत, मनुष्यों के शासक और

पुरुषों में श्रेष्ठ बैल उनके सुगंधित कक्ष में आया।

सुगंधित कक्ष को जगमगाता हुआ बनाते हुए,

दिव्य प्राणियों में भी दिव्य, बैल

मनुष्य के बीच, गुरु, जिसने स्वयं को स्थापित किया था

भिक्षुओं के बीच धर्मगुरुओं द्वारा इन छंदों का उच्चारण किया जाता था।

मैं उनके बारे में घोषणा करूंगा और बोलूंगा।

जिसने मुझे एक शानदार चमकीला उपहार दिया

बिस्तर (सेय्या) अच्छी तरह से बिछा हुआ, जैसे कि

दर्पण; मेरी बात ध्यान से सुनो, जब मैं बोल रहा हूँ।

उसके लिए महल बनेंगे

सोने से निर्मित, चांदी से तैयार किया गया।

और फिर बेरिल से बना हुआ, जो भी हो।

उसके दिल के करीब रहो।

चौंसठ बार वह दिव्य राजा होगा।

और वे दिव्य संप्रभुता का प्रयोग करेंगे।

बिना किसी अंतराल के वह विश्व-

राजा हजार बार।

इक्कीस युगों (कप्पा) के बाद, वह

राजसी योद्धा का विश्व राजा बनो

(खटिया) वंश, नाम, विमला, होने के बाद

पृथ्वी पर विजय प्राप्त की और चार सीमाओं में समाप्त हुई

(कटुरांटो).

उनके नगर का नाम रेणुवती होगा।

ईंटों से अच्छी तरह से बनाया गया है; इसकी लंबाई होगी

तीन सौ संयुक्त (समायुत) के साथ

चार 'शॉर्ट' (रस्सा)।

दिव्य वास्तुकार द्वारा निर्मित उनका महल

(विस्साकम्मा) सुदस्सना नाम धारण करेगी।

उत्कृष्ट शिखर-छत के साथ पूर्ण

घरों को सात प्रकार की चीजों से सजाया गया है।

रत्न।

वह शहर सात प्रकार के जीवों से भरा होगा।

ध्वनियों का और अच्छी तरह से बसा हुआ (समाकुल)

ताबीज़ धारण करने वालों (विज्जाधर) द्वारा और

यह स्वर्गीय नगर के समान हो जाएगा

सुदसना का।

इसकी चमकती हुई प्रदर्शनी (निग-अच्चता)

वैभव बढ़ते हुए के समान होगा

सूर्य, यह हमेशा चमकता रहेगा आठ

चारों ओर लीग (येजुना) हैं।

एक लाख युगों (कप्पा) बाद,

संसार में गुरु अवश्य होंगे।

कुल द्वारा गौतम नाम दिया गया, की संतान

ओक्काका का परिवार।

तुसिता से देहांत होने के बाद, वह,

अपने उज्ज्वल आधार से प्रेरित होकर

(सुक्कमूला) का पुत्र बनेगा

हे भगवान!

यदि वह गृहस्थ जीवन व्यतीत करे, तो वह

विश्व-राजा बनो। ऐसी कोई बात।

कि वह घर के सुख का आनंद उठाएगा।

जीवन बेतरतीब हो जाएगा। सब ठीक है।

आचरण के मामले में, वह अपने घर से बाहर आएगा और

भिक्षु बनो; वह एक प्रसिद्ध भिक्षु बनेगा

राहुल नाम से।

नीली जय चिड़िया की तरह दिखने वाली मादा चिड़िया

उसके अंडों के बाद, वह याक (चामारी) से मिलती-जुलती है।

उसकी पूंछ, महान ऋषि, ज्ञान में परिपक्व

और नैतिक उपदेशों से संपन्न, देखभाल की गई

मुझे।

उनके दसवें (धर्म) को समझकर,

मैंने उस व्यवस्था में बड़े आनंद से निवास किया।

सभी खामियों को पूरी तरह से समझ लेने के बाद, मैं

संक्रमण से मुक्त रहें।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी।... बुद्ध का

निर्देशों का पालन किया जा चुका है।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने उचित कर्म (पटिपत्ति) पर विचार करने के बाद अपने अरहंत पद को प्रकट करने के लिए तीन श्लोक कहे।

295. "दोनों प्रकार के गुणों से संपन्न"

मेरे साथी भिक्षुओं, समृद्धि के लिए मुझे जानते हैं।

क्योंकि मैं राहुलबद्ध हूं, इसलिए मैं उनका पुत्र हूं।

बुद्ध, और चूंकि मेरे पास अंतर्दृष्टि है

उनके सत्य (धम्म) के उपदेशों में।

296. “चूंकि मेरे घाव नष्ट हो गए थे,

क्योंकि अब किसी नए अस्तित्व का अस्तित्व नहीं है,

मैं समर्पित प्रयासों का एक योग्य प्राप्तकर्ता हूँ

दान, तिगुने सुपर से संपन्न-

ज्ञान (तेविज्जो), और मैं ही हूँ

अमर अवस्था का द्रष्टा (अमाता-)

ddaso).

297. “इंद्रिय सुखों से अंधा होकर,

पूरी तरह से उलझा हुआ (पचन्ना)।

जाल (जाला), पर्दे से घिरा हुआ

(चंदन) लालसा (तण्हा) और बंधे हुए

मारा (पनात्तबन्धु) द्वारा, जीवित प्राणी

प्रवेश द्वार (मुख) पर मछलियों के समान दिखते हैं

मछली पकड़ने के जाल (कुमिना) का।

298. “उस कामुक सुख को त्यागकर

और बंधन तोड़ दो

मारा, और साथ ही बाहर निकाल लिया

इसकी मूल जड़ के साथ लालसा (तण्हा), मैं

वे कूल बन गए हैं और उस रास्ते पर पहुंच गए हैं।

parinibbāna (nibbuto).

वहाँ, ubhayen'eva sampanno का अर्थ है: जन्म की समृद्धि और उचित कर्मों (paṭipatti) की समृद्धि, दोनों प्रकार की समृद्धि से संपन्न। Rāhulabhaddo ti maṃ vīdū का अर्थ है: मेरे साथी-पवित्र जीवन के नेता मुझे “Rāhulabhadda” (शुभ राहुल) के रूप में भली-भांति जानते हैं।” वास्तव में, उनके जन्म की खबर (sāsenā) सुनकर, बोधिसत्व की प्रतिक्रिया थी “Rāhu jāto, bandhanaṃ

jātaṃ (राहु का जन्म हुआ है, बंधन उत्पन्न हुआ है);" इस कथन के संदर्भ में महान राजा सुद्धोदन ने "राहुल" नाम धारण किया। वहीं से आरंभ करते हुए, अपने पिता द्वारा कहे गए तरीके (pariyāya) को भी अपनाते हुए उन्होंने कहा; "Rāhulabhaddo 'ti maṃvidū." भद्धो का अर्थ है: यह स्तुति का शब्द (पसमसा) है।

अब समृद्धि के दोनों रूपों को दर्शाने के लिए, "येन च'म्ही" कथन का प्रयोग किया गया है। यहाँ यं का अर्थ है: जब से (यस्मा)। च शब्द का अर्थ है संग्रह (समुच्चय)। अम्ही पुत्तो बुद्धुस्स का अर्थ है: मैं आत्म-जागृत बुद्ध का पुत्र हूँ। धम्मेसु का अर्थ है: सांसारिक और पारलौकिक मामलों (धम्म) में; धम्म के चार आर्य सत्यों में; इस प्रकार इसका अर्थ है। चक्खुमा का अर्थ है: मैं सही मार्ग (मग्ग) के ज्ञान के नेत्र से प्राप्त दृष्टि का स्वामी हूँ; इस प्रकार इसकी व्याख्या की जानी चाहिए।

फिर, अपने भीतर समृद्धि के दोनों रूपों को अनेक अन्य तरीकों से प्रदर्शित करने के लिए उन्होंने "Yañ ca me āsavā khīṇā" से शुरू होने वाला श्लोक बोला। यहाँ, dakkhiṇeyyo का अर्थ है: समर्पित दान के योग्य (dakkhiṇāraho)। Amataddaso का अर्थ है: निर्वाण का द्रष्टा (dassāvī)। शेष भाग आसानी से समझ में आ जाता है।

अब, ज्ञान (विज्जा) और मुक्ति (विमुक्ति) की समृद्धि के अभाव में, असंख्य प्राणी बार-बार जन्म-जन्म के चक्र में उसी प्रकार घूमते रहते हैं जैसे मछली पकड़ने के जाल (कुमीना) में बंधी मछलियाँ। अपने भीतर इन दोनों प्रकार की समृद्धि को दर्शाने के लिए उन्होंने "कामंधा" से शुरू होने वाले दो श्लोक कहे। यहाँ कामंधा का अर्थ है: वे जो इंद्रिय सुखों में या उनके कारण अंधे हो गए हैं; वे जो वास्तविकता (वत्थु) के ऐसे सुखों में निहित हानि को न देख पाने के कारण अंधे हो गए हैं, जैसे कि रूप (सृप) आदि, और "छन्दो रागो (इच्छा)" जैसे विकृत इंद्रिय सुखों के कारण अंधे हो गए हैं। जालाप्पच्चन्ना का अर्थ है: 'तीनों अस्तित्वों पर फैले हुए आसक्ति (विसात्तिक) जाल से किसी भी प्रकार से ढका और लिपटा हुआ (पालिगुंठित)।' तन्हाचदनाचादिता का अर्थ है: लालसा (तन्हा) के रूप में माने जाने वाले आवरण से पूरी तरह से ढका, अवरुद्ध और उचित रूप से बंद, जो उसी का परिणाम है। पमत्त-बंधुना बद्धा, मच्छा व कुमुना मुखे का अर्थ है: ये जीव, क्योंकि वे इंद्रिय सुखों के बंधन से बंधे हुए हैं, जो लापरवाही के सगे मार के बंधन का हिस्सा हैं, मछली पकड़ने के जाल (कुमिना) के मुख (मुख) पर मछली पकड़ने वाले बंधन (बंध) के थैले (पसिब्बक) के प्रवेश द्वार पर बंधी मछलियों के समान हैं; इसके बाद वे उस जाल से बाहर नहीं निकल पाते; वे जाल (बंधन) के अंदर ही रह जाते हैं।

तं का अर्थ है: उस रूप जैसा (तथारूपं); कामं का अर्थ है: जो बंधन बन गया था (बंधनभूतं); उज्जित्वा का अर्थ है: प्रारंभिक (पुब्बभाग) उचित कर्म (पटिपत्ति) द्वारा त्याग दिया गया (पहाय); मारस्स बंधनं चेत्वा का अर्थ है: श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्ग) के छुरे (सत्थ) द्वारा मार के दुराचार (किलेसा) को पूरी तरह से काट कर रख दिया; समूलं का अर्थ है: उस अज्ञान (अविज्जा) के रूप में मानी जाने वाली जड़ के साथ; अब्बुयह का अर्थ है: कामुक सुखों (कामतण्हा) की लालसा को उखाड़ फेंका (उद्धरित्वा) इत्यादि। सीतिभूतो का अर्थ है, भ्रष्टता की जलन और गर्मी के अभाव के कारण शीतल हो जाना; निब्बुतो का अर्थ है: अस्तित्व के अवशिष्ट आधार (सौपादिसस) में निहित निर्वाण के तत्व के माध्यम से निर्वाण प्राप्त करना; इस प्रकार, यही अर्थ है।

थेरा राहुल के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।

BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी

राहुल

राहुल राजकुमार सिद्धार्थ और राजकुमारी यशोदरा के इकलौते पुत्र थे। उनके दादा ने उनका नाम राहुल रखा था क्योंकि पुत्र के जन्म की खबर सुनकर राजकुमार सिद्धार्थ के मुंह से निकला पहला शब्द राहु था, जिसका अर्थ है बाधा। उनके वैराग्य में एक बाधा उत्पन्न हो गई थी। जिस दिन राजकुमार राहुल का जन्म हुआ, उसी दिन राजकुमार सिद्धार्थ ने महान वैराग्य का निश्चय किया। भारी मन से राजकुमार

सिद्धार्थ ने अपनी प्रिय पत्नी और नवजात पुत्र को छोड़कर मानव जाति और देवताओं के कल्याण के लिए दुखों को समाप्त करने का मार्ग खोज निकाला।

राजकुमार राहुल ने अपने पिता को पहली बार सात वर्ष की आयु में देखा। राजकुमारी यशोधरा ने महल की बालकनी से राहुल को भिक्षुओं के साथ भव्य बुद्ध प्रतिमा दिखाई। फिर उन्होंने "पुरुषों का सिंह" नामक सूत्र में उनके पिता, बुद्ध का वर्णन किया। बुद्ध की प्रशंसा और वर्णन करने के बाद, राजकुमारी ने अपने पुत्र से अपने पिता के पास जाकर अपनी विरासत मांगने का अनुरोध किया।

निर्देशानुसार, राहुल अपने पिता के पास गए और अपनी विरासत माँगी। फिर उन्होंने अपने पिता की ओर देखकर कहा, "हे प्रभु, आपकी परछाई भी मुझे प्रिय है।" इसके बाद राहुल बुद्ध के साथ निग्रोधरमा मठ गए जहाँ वे निवास कर रहे थे। बुद्ध ने सोचा, "छोटा राहुल अपनी विरासत माँग रहा है। परन्तु सांसारिक धन-संपत्ति दुःख का कारण है। मैं उसे संसार का सबसे अनमोल खजाना दूँगा। मैं उसे धम्म दूँगा।" उन्होंने अपने प्रमुख शिष्य पूज्य सारिपुत्त को बुलाया और उनसे छोटे राहुल को दीक्षा देने का अनुरोध किया।

अपने प्रिय पोते के दीक्षा संस्कार के बारे में सुनकर राजा सुद्धोदन अत्यंत दुखी हुए। उन्होंने कहा, "जब भगवान ने संसार त्यागा, तब मुझे बहुत पीड़ा हुई। नंदा को संसार त्यागते देखना मेरे लिए अत्यंत दुखदायी था। परन्तु जब नन्हा राहुल संन्यास लेता है, तो और भी अधिक पीड़ा होती है। पिता का पुत्र के प्रति प्रेम गहरा होता है, जो शरीर, मांस, नस, हड्डी और मज्जा तक को भेद देता है। हे प्रभु, कृपा कीजिए कि श्रेष्ठ पुरुष अपने माता-पिता की अनुमति के बिना पुत्रों को दीक्षा न दें।" बुद्ध ने सहर्ष इस निवेदन को स्वीकार कर लिया और इसे श्रेष्ठ संप्रदाय का एक नियम (विनय) बना दिया।

सारिपुत्त और मोग्गलाना छोटे राहुल के गुरु थे। सारिपुत्त ने राहुल को धम्म का ज्ञान दिया, जबकि मोग्गलाना ने उनके आचरण पर ध्यान केंद्रित किया। यद्यपि राहुल केवल सात वर्ष की आयु में ही भिक्षु बने, फिर भी वे शिक्षा ग्रहण करने के लिए अत्यंत उत्सुक थे और असाधारण रूप से सुसंस्कृत और आज्ञाकारी थे। प्रत्येक सुबह वे उठकर मुट्ठी भर रेत लेकर हवा में उछालते हुए कहते, "आज मुझे अपने गुरुओं से इन रेत के कणों के समान ही सलाह और शिक्षा प्राप्त हो।"

राहुल के दीक्षा लेने के कुछ ही समय बाद बुद्ध ने उन्हें सत्य बोलने का महत्व सिखाया। यह प्रवचन राहुलवाद सूत्र के नाम से जाना जाता है। बुद्ध ने सत्य को सभी सद्गुणों में सर्वोच्च स्थान दिया। सत्य के साधकों (जिनका लक्ष्य निर्वाण है) को सत्य के नियम का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। बुद्ध ने इसे एक छोटे बच्चे को भी समझ आने वाले तरीके से समझाने के लिए निम्नलिखित उदाहरण का प्रयोग किया।

राहुल ने अभी-अभी भगवान के चरण धोए थे और उनके लिए आसन तैयार किया था। बुद्ध ने उस पात्र को, जिसमें तल में थोड़ा सा पानी बचा था, राहुल को दिखाते हुए कहा: "राहुल, क्या तुम इस पात्र में बचे हुए थोड़े से पानी को देख रहे हो? इसी प्रकार, राहुल, झूठ बोलने में शर्म न करने वालों का चरित्र भी तुच्छ (कम महत्व का) होता है।"

तब बुद्ध ने उस थोड़े से पानी को त्याग दिया और कहा, "राहुल, क्या तुम देखते हो कि मैंने इस पात्र में से उस थोड़े से पानी को कैसे त्याग दिया? इसी प्रकार, झूठ बोलने में शर्म न करने वालों का स्वभाव भी ऐसा ही होता है (उन्हें त्याग दिया जाता है और अनदेखा कर दिया जाता है)।"

फिर उसने पानी से भरे बर्तन को उलट दिया और कहा, "राहुला, क्या तुम देखते हो कि मैं इस बर्तन को कितनी आसानी से उलट देता हूँ? इसी प्रकार, झूठ बोलने में शर्म न करने वालों का स्वभाव भी आसानी से उलट जाने वाला (आसानी से प्रभावित और परिवर्तित होने वाला) होता है।"

अंत में, बुद्ध ने घड़े को सीधा खड़ा किया, उसे राहुल को दिखाया और कहा, "राहुल, क्या तुम इस खाली बर्तन को देखते हो जिसमें पानी बिल्कुल नहीं है? इसी प्रकार झूठ बोलने में शर्म न करने वालों का स्वभाव भी खाली और खोखला होता है।"

बुद्ध ने कहा कि सत्य का उपदेश सभी उपदेशों में सबसे महत्वपूर्ण है, क्योंकि झूठ बोलने वाला व्यक्ति आसानी से अन्य उपदेशों का उल्लंघन कर देता है और झूठ बोलकर अपने दुराचार को छुपाने की कोशिश करता है। जो व्यक्ति हमेशा सच बोलता है, वह कभी ऐसा कार्य नहीं करेगा जिसे स्वीकार करने में उसे बाद में शर्मिंदगी हो।

बुद्ध ने राहुल को यह भी निर्देश दिया कि वह कोई भी कार्य करने से पहले चिंतन-मनन करे ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि उसके कार्य नैतिक हों और दूसरों और स्वयं के कल्याण के लिए अनुकूल हों, और इसके लिए उन्होंने ऐसे उदाहरणों और भाषा का प्रयोग किया जो एक छोटा बच्चा भी समझ सके।

बुद्ध ने राहुल को दर्पण दिखाते हुए पूछा कि दर्पण का उपयोग किस लिए होता है। राहुल ने उत्तर दिया कि यह प्रतिबिंब के लिए होता है। तब बुद्ध ने कहा, "इसी प्रकार, राहुल, कुछ भी बोलने या करने से पहले विचार करो। सोचो कि क्या यह बात या कार्य दूसरों और स्वयं के लिए लाभकारी होगा। यदि विचार करने पर तुम्हें लगे कि यह दूसरों और स्वयं के लिए लाभकारी नहीं है, तो इसे बोलने और करने से बचो। यदि विचार करने पर तुम्हें लगे कि यह तुम्हारे और दूसरों के लिए लाभकारी है, कि ऐसा कार्य किसी को हानि नहीं पहुँचाएगा, बल्कि दूसरों के लिए लाभकारी है, तो ही यह कार्य करो। फिर तुम्हें यह कार्य बार-बार करना चाहिए।"

इस सरल लेकिन आसानी से समझ में आने वाले उदाहरण के माध्यम से बुद्ध ने छोटे राहुल को सचेतनता और कर्म से पहले मन के अनुशासन से परिचित कराया ताकि उसके विचार, वाणी और कर्म नैतिक और स्वास्थ्यप्रद हों।

राहुल अपनी आज्ञाकारिता और सत्यनिष्ठा के लिए प्रसिद्ध थे। बुद्ध के पुत्र होने के कारण और अपने मनभावन स्वभाव और कम उम्र के कारण वे सभी के प्रिय थे। जब राहुल अठारह वर्ष के हुए, तब बुद्ध ने उन्हें इंद्रिय-इच्छाओं पर गहन प्रवचन दिया। उन्होंने राहुल को, जो अपने सुंदर रूप से प्रसन्न थे, अभिमान के खतरों को समझने में मदद की।

बुद्ध, राहुल के साथ भिक्षा मांग रहे थे। वे दोनों अत्यंत सुंदर दिख रहे थे, मानो कोई राजसी हाथी और उसका बच्चा, या कोई सुंदर हंस अपने बच्चे के साथ हो। बुद्ध के अत्यंत सुंदर रूप को देखकर राहुल ने सोचा, "मैं भी अपने माता-पिता, परम पूज्य बुद्ध के समान हूँ। बुद्ध का रूप सुंदर है और मेरा भी उनके समान है।"

बुद्ध ने तुरंत राहुल के मन की बात जान ली और कहा, "राहुल, जो भी रूप है, उसे इस प्रकार देखना चाहिए: 'यह मेरा नहीं है; यह मैं नहीं हूँ; यह मेरी आत्मा नहीं है।' तब राहुल ने पूछा कि क्या केवल रूप को ही इस प्रकार देखना चाहिए? तब बुद्ध ने कहा कि सभी पाँचों तत्वों को इसी प्रकार देखना चाहिए। इस प्रकार बुद्ध ने राहुल को अनात्म (स्थायी आत्मा का अभाव) की अत्यंत गहन और कठिन अवधारणा से परिचित कराया।"

तब राहुल ने भिक्षा मांगने का विकल्प नहीं चुना और इसके बजाय वापस जाकर बुद्ध के वचनों पर ध्यान लगाकर उनके सत्य को समझने और आत्मसात करने का प्रयास किया। कुछ समय बाद, चूला राहुलवाद सूत्र को सुनकर, उन्होंने अरहंत पद प्राप्त किया।

राहुल बुद्ध, सारिपुत्त और मोग्गलाना से पहले ही परलोक विदा हो गए थे। बुद्ध ने घोषणा की कि राहुल अपने उच्च अनुशासन और आज्ञाकारिता के कारण भिक्षुओं में श्रेष्ठ थे। सात वर्ष की कम उम्र में ही संघ में प्रवेश करने वाले राहुल अपनी आज्ञाकारिता और मनभावन स्वभाव के कारण संघ के युवा सदस्यों के लिए आदर्श थे।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (194): कैंडाना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (194) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
194. कनाडा
बुद्ध युग में सावत्थी में एक समृद्ध कुल में पुनर्जन्म लेकर चंदन नाम से जन्मे उन्होंने गृहस्थ जीवन व्यतीत किया, जब तक कि उन्होंने [184] भगवान (बुद्ध) को धम्म का उपदेश देते हुए नहीं सुना; और उसी से वे धारा-प्रवर्तक बन गए। [1] जब उनके एक पुत्र का जन्म हुआ, तो उन्होंने भिक्षु बनने के लिए अपना घर छोड़ दिया और अंतर्दृष्टि साधना करते हुए वन में रहने लगे। भगवान (बुद्ध) को प्रणाम करने के लिए सावत्थी आकर वे एक श्मशान में ठहरे। उनकी पत्नी ने उनके आने की सूचना सुनकर स्वयं को सजाया-संवारा और अपने बच्चे और कई परिचारिकाओं को लेकर उनके पास गईं, यह सोचकर कि अपने आकर्षण से वे उन्हें भिक्षु बनने के लिए प्रेरित कर सकती हैं। दूर से उन्हें आते देख उन्होंने सोचा: 'अब मैं उनकी पहुँच से बाहर हो जाऊँगा!' और उन्होंने ऐसी अंतर्दृष्टि प्राप्त की कि उन्हें छह गुना अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त हो गई। इसके बाद वे ऊपर उठे और उन्हें धम्म का मार्ग सिखाया, और उन्हें शरण और उपदेशों में स्थापित किया। फिर वे अपने पूर्व स्थान पर लौट आए। और जब उनके भिक्षु साथियों ने उनसे पूछा, 'हे भिक्षु, आप कितने शांत दिख रहे हैं; आपने किन सत्यों को जाना है?' [2] तो उन्होंने अपनी उपलब्धि के बारे में बताया और इन श्लोकों में ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) की गवाही दी :

[299] जटारूपेण पच्चन्ना दासिगंपुरक्खता॥
अनेकेन पुत्तमादाय भार्या माऽ उपागामी॥ ॥

[300] तां च दिवना अयान्तिm̐ सकपुत्तस्सा मातरौ॥

अलंकतं सुवासनं मैक्कुपासाऽव ओङिटाṃ.॥ ॥

[301] ततो मे मनसिकारो योनिसो उदपज्जथा॥
आदिनावो पतुराहु निब्बिदा समतिथथा॥ ॥

[302] ततो चित्ताṃ विमुची मे पासा धम्मसुधम्मतṃ॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससनन्ति॥ ॥

[299] सुनहरे वस्त्रों से सजी, दासियों की एक टोली के साथ
, और अपनी कमर पर बच्चे को लिए
, मेरी पत्नी मेरे पास आई।

[300] मैंने उसके आने का संकेत दिया, मेरे बच्चे की माँ,
बहादुरी से भरी हुई, जैसे मारा (मृत्युदेव/शैतान) द्वारा बिछाया गया जाल।

[301] इसी कारण मेरे मन में गहरा विचार उत्पन्न हुआ: [3] तथ्य और कारण पर ध्यान।
सारी पीड़ा स्पष्ट थी;
मन में अरुचि और उदासीनता थी;

[302] और इस प्रकार मेरा हृदय मुक्त हो गया।
हे देखो, धम्म के मार्ग पर चलने वाले इस सुशोभित भिक्षु का क्रम!
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध ने मुझे जो कुछ सिखाया है, वह सब कर लिया है।

[1] या सोतापना, निर्वाण की पहली समाधि।

संत जीवनी। ओईडी: वह साहित्य जो संतों के जीवन और किंवदंतियों से संबंधित है।

[2] Kacci tayā saccāni paṭividdhānīti? मैं तुलनात्मक संत जीवनी के छात्रों के ध्यान में इस महान प्रश्न की अनुशंसा करता हूँ।

[3] श्लोक 269, 270 को दोहराते हुए।

4.9 [194] चंदनथेरा के श्लोक पर टिप्पणी

जतरूपेण से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा चंदन का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए और इकत्तीस युग (कप्पा) पहले बुद्ध रहित लोक में वृक्ष देवता के रूप में पुनर्जन्म लिया; संयोगवश उन्होंने पहाड़ियों में निवास कर रहे एक मौन बुद्ध को देखा, वे श्रद्धा से भर गए और कुटज औषधीय पुष्पों से उन्हें आदरपूर्वक अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के जन्मों के चक्र में भटकते रहे और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे सावत्थी में एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लिए; संदना नाम प्राप्त करके, वयस्क होने पर वे गृहस्थ जीवन व्यतीत कर रहे थे, जब गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनकर वे सोतापन्न बन गए। पुत्र प्राप्ति के बाद, उन्होंने गृहस्थ जीवन त्याग दिया, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के लिए मानसिक साधना (कम्मट्ठाना) एकत्रित की और वन में निवास करने लगे। गुरु को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए वे सावत्थी पहुँचे और श्मशान में रहने लगे। उनके आगमन की सूचना पाकर, उनकी पूर्व पत्नी, जो सज-धज कर आई थीं, अपने छोटे पुत्र को साथ लेकर अपने बड़े दल के साथ थेरा के पास गईं और मन ही मन कहने लगीं, "मैं अपने स्त्रीत्व के प्रलोभन (पालोभेत्वा) से उसे निर्वस्त्र कर दूँगी।" दूर से ही उन्हें आते देख, थेरा ने अपने द्वारा आरंभ की गई विपस्सना को ध्यानपूर्वक विकसित करने में लीन होकर मन ही मन कहा, "अब मैं उसके विषय से परे हो जाऊँगा" और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत बनूँगा। इसी प्रकार, अपदान में कहा गया है।

"हिमावंता से कुछ ही दूरी पर, एक था

वासला नामक एक पहाड़ी; एक मौन बुद्ध,

सुदस्सना नामक एक व्यक्ति पहाड़ी के अंदर रहता था।

हिमावंता को पकड़ लेने के बाद

फूल, मैं आकाश में ऊपर गया जहाँ मैं मिला

स्वयंजागृत मौन बुद्ध,

जो रोगमुक्त थे और बाढ़ पार कर चुके थे।

कुटजा औषधीय फूल का सेवन

मैंने अपने हाथों को आपस में जोड़कर रखा।

मैंने अपना सिर झुकाया और उसे भेंट अर्पित की।

मौन बुद्ध, आत्मनिर्भर

महान ऋषि।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

कि मैंने अपनी विशेष श्रद्धा बनाई

मौन बुद्ध को अर्पित; मैं करता हूँ

किसी भी बुरी सत्ता को याद नहीं; यह

यह मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम है।

मौन बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी सारी बुराइयाँ जलकर राख हो चुकी थीं...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, छह प्रकार के उच्च ज्ञान से संपन्न अरहंत बनने के बाद, थेरा आकाश में खड़े होकर उन्हें सत्य (धम्म) का उपदेश दिया, उन्हें शरण (शरण) और नैतिक उपदेशों (शील) में स्थापित किया, और स्वयं उसी स्थान पर लौट गए जहाँ वे निवास करते थे। जब उनके साथी भिक्षुओं ने उनसे पूछा, "हे मित्र! आपकी इंद्रियाँ (इन्द्रियानि) अत्यंत प्रसन्न (विप्पसन्नानि) हैं; ऐसा कैसे? क्या आपने (महान) सत्यों को उचित रूप से आत्मसात (पटिविद्धानि) किया है?", तो उन्होंने अपने स्वयं के उचित कर्मों के वर्णन के लिए इन श्लोकों के माध्यम से अपने अरहंत होने का खुलासा किया।

299. "सोने से सुशोभित (संचन्ना), घिरा हुआ

दासी महिलाओं की भीड़ द्वारा, अपने बेटे को गोद में लिए हुए।

अपनी कमर (अंका) पर, (मेरी बूढ़ी) पत्नी पास आई

मुझे।

300. "उसे देखकर, मेरी अपनी माँ

पुत्र, सजे-धजे और सुसज्जित होकर आ रहा है

(आयन्ति) द्वारा बिछाए गए जाल के समान

मृत्यु (मैकू)।

301. "इसके परिणामस्वरूप जो उत्पन्न हुआ, उससे

बुद्धिमान (योनिसो) जागरूकता का निर्माण;

हानि स्पष्ट हो गई (pāturahu)

और घृणा की भावना भी काफी प्रबल रही।

302. "परिणामस्वरूप मेरा मन मुक्त हो गया;

देखो, धम्मता का अच्छा स्वभाव

मैंने तदनुसार सत्य (धम्म) प्राप्त कर लिया है।

त्रिगुणात्मक उच्च ज्ञान (विज्जा); बुद्ध का

निर्देशों का पालन किया जा चुका है।

वहाँ, जातरूपेण संचन्ना का अर्थ है: सिर तक पहुँचने वाले आभूषणों से सुशोभित शरीर, जो सभी आभूषणों से सुशोभित हो; यही अर्थ है। दासीगणपुरक्खता का अर्थ है: अपने सामने खड़ी और अपने ही दासों की भीड़ से घिरी हुई, जो अपने मूल्य के अनुरूप सजी-धजी हों; यही अर्थ है। अंकेन पुत्तमादाय का अर्थ है: अपने बेटे को गोद में लेकर मन ही मन सोच रही थी: "शायद बेटे को देखकर पिता घर पर सहज रूप से निर्भर हो जाए।"

आयंतिं का अर्थ है: आना (आगच्छन्तिं)। सकपुत्तस्स मातारं का अर्थ है: मेरे प्रिय पुत्र की माता (जननी); इस प्रकार, मेरी पूर्व पत्नी का अर्थ है। योनिसो उदपज्जत का अर्थ है: "ऐसी समृद्धि वृद्धावस्था, रोग और मृत्यु से क्षीण हो जाती है; वास्तव में, संस्कार (संस्कार) क्षणभंगुर, अस्थिर और सुखदायी (न अस्सासिका) नहीं होते, इसलिए इस प्रकार, सचेतनता का बुद्धिमान (योनिसो) सृजन हुआ। शेष पहले बताए गए तरीके (हेट्ट) के अनुसार है।

थेरा चंदना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(195):धम्मिका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (195) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
195. धम्मिका
बुद्ध युग में कोसलन ब्राह्मणों (पुजारियों) के परिवार में पुनर्जन्म लेकर धम्मिका नाम से विराजमान हुए, उन्होंने जेतवन के दर्शन से आस्था प्राप्त की और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। एक ग्राम विहार (मठ) में निवास करते हुए, वे आने वाले भिक्षुओं के कर्तव्यों को लेकर अधीर और चिड़चिड़े हो गए, [1] जिसके कारण बाद वाले विहार छोड़कर चले गए। इस प्रकार वे विहार के एकमात्र स्वामी बन गए। और एक गृहस्थ ने इसकी सूचना भगवान (बुद्ध) को दी। भगवान (बुद्ध) ने धम्मिका को बुलवाया और उनसे स्पष्टीकरण मांगा। इस पर उन्होंने कहा: 'न केवल अब तुम अधीर हो; तुम पहले भी ऐसे ही थे'; और भिक्षुओं के अनुरोध पर उन्होंने धम्म के मार्ग पर वृक्ष-प्रधान प्रवचन दिया, जिसमें अतिरिक्त शिक्षा भी शामिल थी, जो इस प्रकार है:

[303] धम्मो हवे रकिखाति धम्मचारीm॥
धम्मो सुचिनो सुखमावहति,॥
एसानीसंसो धम्मे सुचिने॥
न दुग्गतिं गच्छति धम्मचारि.॥ ॥

[304] न हि धम्मो अधम्मो च उभो समाविपकिनो,॥
अधम्मो निरायौ नेति धम्मो पपेति सुग्गतिm॥ ॥

[305] तस्मा हि धम्मेसु करेया 'नदाm॥
इति मोदामानो सुगतेन तादिना,॥
धम्मे यथा सुगतवरस्स सावका॥
नियंति धीरा सरणवरग्गगामिनो॥ ॥

[306] विप्पोहितो गंडमुलो॥
तन्हाजालो समुहतो,॥
सो खिणसांसरो न चट्ठि निञ्चणो॥
कैंडो यथा दोसिना पुन्नमासीयति॥ ॥

[303] जो धम्म का अनुसरण करता है, उसे धम्म का मार्ग भली-भांति सुरक्षित रखता है।
धम्म के मार्ग का भली-भांति अभ्यास करने वाला सुख को अपने साथ लाता है।
धम्म के मार्ग का भली-भांति अभ्यास करने वाले को यही प्रतिफल मिलता है:
जो धम्म के मार्ग का अनुसरण करता है, वह कभी दुःख में नहीं जाता।

[304] क्योंकि सही और गलत का परिणाम एक जैसा नहीं होता:
गलत से बुरा होता है, सही से सुखद विनाश होता है।

[305] इसलिए हम जो कुछ जानते हैं, उसे [भगवान (बुद्ध)] पर लागू करें।
अतः वह इस तरह के स्वागत योग्य आशीर्वाद का आनंदपूर्वक स्वागत करे। [2] [186] स्वागत के मार्ग (धम्म) पर दृढ़ रहते हुए शिष्य आगे बढ़ते हैं,

अपने परम शरण, उनका वीरतापूर्वक अनुसरण करते हुए।

[306] इस सारे कैंसरयुक्त गांठ की जड़ उखाड़ दी, [3] लालसा का जाल पूरी तरह से टूट गया,
जीवन का नवगठित चक्र समाप्त हो गया,
और आसक्ति का कुछ भी शेष नहीं रहा,
ठीक वैसे ही जैसे पंद्रहवें दिन चंद्रमा
बिना किसी दाग के साफ आकाश में चलता है।

जब भगवान (बुद्ध) ने तीन श्लोकों का उपदेश दिया, तो धम्मिका ने उन्हें ध्यान में रखते हुए बैठे-बैठे ही अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली और अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। अपने भीतर हुए इस परिवर्तन को भगवान (बुद्ध) को दिखाने के लिए, उन्होंने अंतिम श्लोक के द्वारा ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[1] यहाँ से उत्पन्न होने वाली छोटी-मोटी परेशानियों के अनेक स्रोतों के विवरण के लिए, विनय ग्रंथ, iii. 272 ff. देखें।

[2] अर्थात्, टीका के अनुसार, बुद्ध की शिक्षा का विशेषाधिकार। इस गाथा में श्लोक (11.5 , 6; 11, 12) का दोहरा पुनरावर्तन , जो अनियमित त्रिष्टुभ छंद में है, ऊपर संबंधित परिवर्तनों द्वारा इंगित किया गया है। वास्तव में, चारों गाथाएँ धम्मिका के अपराध से इतनी कम संबंधित हैं और छंद में इतनी भिन्नता है कि वे एक खंडित संकलन का संकेत देती हैं।

[3] 'गांठ' - पांच खंध (शरीर और मन) - 'जड़' अज्ञान है (टीका)।

4.10 [195] धम्मिकत्थेरा पर छंद पर टिप्पणी
धम्मो से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा धम्मिका का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने भगवान सिख धर्मगुरु के समय में हिरण शिकारी का काम शुरू किया; एक दिन, जब गुरु वन क्षेत्र में अपने दिव्य श्रोताओं को सत्य (धम्म) का उपदेश दे रहे थे, तो उन्होंने उपदेश के चिह्न (निमित्त) को धारण करते हुए मन ही मन कहा: "यही सत्य (धम्म) है।" उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के जन्मों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और कोसल राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ। धम्मिका नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर, उन्होंने जेतवन (मठ) के समर्पण समारोह (पटिग्गहना) में मनभावन भक्ति (पसादा) प्राप्त की, भिक्षु बन गए और एक गाँव के मठ में निवासी भिक्षु के रूप में रहते हुए, अतिथि भिक्षुओं के प्रति अपने छोटे-बड़े कर्तव्यों (वत्तवत्त) में अत्यधिक सावधानी (उज्जना) से ऊब गए (अक्खमो)। इसी कारण भिक्षुओं ने उस मठ को छोड़कर प्रस्थान किया; वे एकाकी रह गए। मठ के स्वामी, जो कि वे भक्त थे, ने इस बात को सुनकर भगवान बुद्ध को सूचित किया। गुरु ने उस भिक्षु को बुलवाया, इस बारे में पूछताछ की और जब उस भिक्षु ने बताया कि यह सच है, तो उन्होंने कहा; "यह न केवल अब धैर्यहीन (अक्खमो) है, बल्कि पहले भी यह अधीर था।" भिक्षुओं के अनुरोध पर, गुरु ने वृक्ष (रुक्खा) के बारे में सत्य (धम्म) का उपदेश दिया और सर्वप्रथम (उपरी) उन्हें शिक्षा देने के लिए चार श्लोक कहे।

303. "निःसंदेह, एक उत्तम कर्म (धम्म)

कर्म करने वाले की देखभाल करता है

(धम्म)। वह कर्म (धम्म) अच्छा है।

निष्पादित (सुचिण्णो) से आनंद प्राप्त होता है।

जब कर्म (धर्म) का सही ढंग से पालन किया जाता है

(सचिण्ण) यही लाभ है;

कर्म करने वाला (धम्मचारी) ऐसा नहीं करता है

दुष्ट अस्तित्व (दुग्गती) में जाओ

304. "निःसंदेह, दोनों अच्छे कर्म (धम्म)

और बुरे कर्म (अधम) फल नहीं देते।

एक ही परिणाम; बुरा कर्म (अधम)

इससे नरक की ओर ले जाता है और अच्छे कर्मों से मुक्ति मिलती है

उत्कृष्ट जीवन की ओर अग्रसर।

305. "इसलिए वास्तव में, इच्छा होनी चाहिए

अच्छे कर्म (धम्म) करने के लिए बनाया गया।

इस प्रकार प्रसन्न होकर और बधाई प्राप्त करके

सुगत जैसे ऋषि, जो उनके शिष्य थे

उत्कृष्ट सुगाता, जो दृढ़ता से

बुद्धिमान, और जो सबसे उत्कृष्ट की ओर जाते हैं

शरण (सरणवरग्ग), जिन्होंने निवास किया है

अच्छे कर्म (धम्म) में बाहर जाओ (से)

पुनर्जन्मों के चक्र)।

306. "शेकन ही समुच्चय का मूल रहा है"

(गण्ड); तृष्णा का अभाव (तण्ह) है

अच्छी तरह से अलग कर दिया गया है; जिसने नष्ट किया है

पुनर्जन्म के चक्रों में, और कुछ भी नहीं है

(बाएं); वह दोषरहित पूर्णिमा के चंद्रमा के समान दिखता है।

वहाँ, धम्मो का अर्थ है: उत्तम कर्म (धम्म), जो सांसारिक और अलौकिक दोनों प्रकार का हो। रक्खति का अर्थ है: नरक के कष्टों से रक्षा करना; यह बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों के दुख से रक्षा करता है और बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों से मुक्ति (वट्ट) के लिए पर्याप्त योग्यता प्राप्त करने में सहायक होता है। धम्मचारिं का अर्थ है: वह व्यक्ति जो अपने जीवन को नियमित रखता है और धार्मिक आचरण करता है (धम्मं)। सुचिण्णो का अर्थ है: कर्म के फल (कम्म) में विश्वास रखते हुए उत्कृष्ट अभ्यास करना; आदरपूर्वक (सक्कच्च) सम्मान (चित्तिकत्व) करते हुए संरक्षण (उपचितो) करना। सुखं का अर्थ है: सांसारिक और अलौकिक सुख। वहाँ, योग्य सांसारिक एक

ऐसी घटना (धम्म) है जो इंद्रिय-संबंधी क्षेत्र (कामावकार) आदि के रूप में वर्गीकृत की गई है, जो स्वयं के आनंद के अनुसार या तो इस अस्तित्व में स्वतः उत्पन्न होती है (उपपज्जे) या किसी अन्य माध्यम से (परियय)। आवहति का अर्थ है: दूसरे को संकलित करना (निप्पादेतो), यद्यपि, पुनर्जन्म के चक्रों से मुक्ति के लिए पर्याप्त योग्यता का पालन करते हुए (वट्ट) और आचरण करते हुए (चिण्णो) परंपरा (परंपरा) को जन्म देता है, इसलिए पर्याप्त योग्यता की कमी के अभाव के कारण (उपनिस्सेय) बोलना उचित है (वट्टं वट्टति)। Esānisaṃ so dhamme suciṇṇe, na duggatiṃ gacchati dhammacāri का अर्थ है: जो व्यक्ति अच्छे कर्म करता है (dhammacārī), जब वह उन कर्मों (dhamma) का अच्छी तरह अभ्यास करता है, तो उसके फलस्वरूप (nimitta) वह बुरे कर्मों की ओर नहीं जाता; अतः, जब कर्म (dhamma) अच्छी तरह से किए जाते हैं (suciṇṇe), तो यह लाभकारी (ānisaṃsa) परिणाम (udreya) होता है; यही इसका अर्थ है।

क्योंकि अच्छे कर्म केवल उत्तम जीवन की ओर ले जाते हैं, जबकि बुरे कर्म बुरे जीवन की ओर ले जाते हैं, इसलिए उन्होंने दूसरे श्लोक की शुरुआत "न हि धम्मो" से की, ताकि यह दिखाया जा सके कि "धम्मो अधम्मो (अच्छे कर्म और बुरे कर्म) परस्पर एक समान फल देते हैं। यहाँ अधम्मो का अर्थ है: अच्छे कर्म (धम्म) और बुरे आचरण (दुच्चरित) का विपरीत। समविपाकिनो का अर्थ है: समान फल, समान फल।

तस्मा का अर्थ है: जैसा कि कहा गया है, अच्छे और बुरे कर्मों के फल में यह अंतर है, इसलिए। चंदं का अर्थ है: कर्म करने की इच्छा (कट्टुकम्यता)। इति मोदमाने सुगतेन तादिना का अर्थ है: सुगत द्वारा दिए गए इस प्रकार के विविध उपदेशों से प्रसन्न होकर, अच्छे कर्मों (धम्मेसु) में इच्छा उत्पन्न करना चाहिए, जैसा कि सुगत ने अपने सही मार्ग पर चलकर, अपने जीवन को सही ढंग से व्यवस्थित करके, वांछनीय (इत्त) चीजों में ऐसे ऋषि (तादि) की अवस्था प्राप्त करके, तादि नाम से, जो कारण (हेतु) बन गए थे; यही व्याख्या है। अब तक उन्होंने जन्म-मृत्यु के चक्रों (वट्ट) का वर्णन किया, और अब उन्होंने "धम्मे स्थित" से आरंभ करते हुए जन्म-मृत्यु के चक्रों (विवट्ट) से मुक्ति का वर्णन किया। इसका अर्थ है: सावका का अर्थ है: सुगतों में श्रेष्ठ, सर्वथा आत्मजागृत बुद्ध सुगत के शिष्य; धम्मे स्थित धीरा का अर्थ है: उस सुगत के दृढ़ और बुद्धिमान शिष्य, जिन्होंने धर्म में बने रहने के कारण शरण ली थी, जो शरण लेने के समान मानी जाती है; नीयन्ति का अर्थ है: वे जन्म-मृत्यु के चक्रों (वट्ट) के संपूर्ण दुःख (दुक्खा) से बच जाते हैं; अतः वास्तव में, अच्छे कर्मों (धम्मेसु) में इच्छा उत्पन्न करनी चाहिए।

इस प्रकार, तीन श्लोकों के माध्यम से गुरु (थेरा) ने सत्य (धम्म) का उपदेश दिया; वे बैठे-बैठे ही उत्तरोत्तर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करते हुए अर्हतत्व प्राप्त कर चुके। अतः अपदान में यह कहा गया है।

मैं पहले हिरण का शिकारी था।

घना जंगल। मैंने निर्मल बुद्ध प्रतिमा देखी।

दिव्य प्राणियों की भीड़ से घिरा हुआ,

चारों प्रकार के सत्यों (सक्का) को प्रकट करते हुए,

अमरता के मार्ग को दर्शाते हुए।

मैंने मधुर शिक्षा (धम्म) सुनी।

सिख धर्म, जो संसार का सगे-संबंधी है।

अद्वितीय की वाणी में, के बराबर

मैंने वहां अपने मन को धार्मिक रूप से संतुष्ट कर लिया।

और मैंने अस्तित्व की कीमत पर यह पार किया,

इसे पार करना कठिन है।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मुझे यह बोध (सन्या) प्राप्त हुआ; मैं करता हूँ

किसी भी बुरी सत्ता को याद नहीं; यही है

बुद्ध के प्रति मेरी धारणा का फलदायी परिणाम।

आवाज़।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी।... बुद्ध का

निर्देशों का पालन किया जा चुका है।

इसी प्रकार, उन्होंने अरहंत पद प्राप्त किया। अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अंतिम श्लोक के माध्यम से अपनी इस उपलब्धि (अञ्ञा) का खुलासा किया ताकि वे गुरु को अपने द्वारा प्राप्त विशिष्टता (विशेषा) के बारे में सूचित कर सकें।

वहाँ, विपफोटितो का अर्थ है त्याग दिया (विधुतो); मार्ग के ज्ञान (मग्ग) के माध्यम से त्याग दिया (पटिनिसत्तो); इस प्रकार, यही अर्थ है। गण्डमूलो का अर्थ है: अज्ञान (अविज्जा); वास्तव में, वह अज्ञान बढ़ता (गण्डति) और बहता (सवती); पांच आसक्ति (उपादान) समूहों (खन्ध) का मूल कारण (अभिधान) सूजन (गड्ड) है, जो इसके फूलने (उद्धुमात), पकने (पक्का) और फूटने (पभिज्जन) के कारण होता है, जो कि उप्पदा (उप्पाद), वृद्ध होने (जरा) और अशुद्ध द्रव के रिसाव (पग्घरण) के कारण विघटन (भंग) की प्रक्रिया से होता है, जो दुख (दुक्खा) के मूल (मूल) से जुड़ा है, जिसका वर्णन गुरु ने इस प्रकार किया है:

हे भिक्षु! यह सूजन वाला घाव (गण्ड) वास्तव में पाँच आसक्ति (उपादान) के समूह (खन्ध) का नाम (अधिवचन) है। ऋषियों के समूह (खन्ध) का अर्थ है: तृष्णा (तन्ध) के रूप में गिना जाने वाला जाल सही मार्ग (मग्ग) द्वारा भली-भांति काट दिया गया है। इसलिए, मैं भी सत्य (खम्म) का सर्वांगीण भागीदार (कोट्ठास) बन गया हूँ, जिसने कामवासना जैसी हर चीज का त्याग कर दिया है। (राग) आदि, अरहंतत्व की प्राप्ति (अधिगम) द्वारा, चंद्रमा के अनुसार, जो महीने की पूर्णिमा के दिन, जब वह सर्वांगीण रूप से पूर्ण हो, बादल, कोहरे (महिका) आदि दोषों से रहित हो।

थेरा धम्मिका के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(196):सब्बाका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (196) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
196. सब्बाका
बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर सब्बक नाम से जन्मे उन्होंने परम पूज्य बुद्ध को धम्म का उपदेश देते हुए सुना और विश्वास करके भिक्षु बन गए। साधना करते हुए वे अजकारणी नदी के किनारे स्थित लोणगिरि विहार गए और वहाँ समय आने पर उन्हें अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त हुआ। सावत्थी में भगवान (बुद्ध) को प्रणाम करने के लिए वे कुछ समय अपने परिवार के साथ रहे। शरण और उपदेशों में उन्हें दीक्षित करने के बाद वे अपने जीवन-यापन के लिए उत्सुक हो गए। परिवार ने उनसे रुकने और उनका भरण-पोषण करने का अनुरोध किया। लेकिन उन्होंने अपने आने का कारण बताते हुए और अपने निवास स्थान की प्रशंसा करते हुए एकांतवास के प्रति अपनी प्रेम की घोषणा करते हुए कहा:

[307] यदा [36] बलाका सुचिपंडारच्चदा॥
कासास्सा मेघस्सा भयेन तज्जिता,॥
पलेहिति अलयामालयेसिनि॥
तदा नादि अजकरणी रामेति माm॥ ॥

[308] यदा बलाका सुविसुद्धपनदारा॥
कासास्सा मेघस्सा भयेन तज्जिता,॥
परियेसति लेणामलेनदास्सिनि॥
तदा नादि अजकरणी रामेति माm॥ ॥

[309] कां नु तत्थ न रमेंटी जम्बुयो उभातो ताहिm,॥
सोभेंति अपागाकुलं ममा लेनसा पचातो ॥॥ ॥

[310] ता मतमदसंघसुप्पहिना॥
भेका मांदावती पनादयन्ति,॥
नज्ज गिरिणादिहि विप्पवाससमायो॥
खेमा अजकरणी शिव सुरम्मा' ति.॥ ॥

[307] जब भी मैं सारस को देखता हूँ, उसके साफ़ चमकीले पंख
काले तूफ़ानी बादल से भागने के लिए भय से फैले हुए,
आश्रय की तलाश में, सुरक्षित आश्रय की ओर ले जाए जाते हैं,
तब अजकारणी नदी मुझे आनंद देती है।

[187][308] जब भी मैं सारस को देखता हूँ, उसके पंख पीले
और चांदी जैसे सफेद, डर से भागते हुए,
काले तूफानी बादल से, पास में कोई शरण न देखकर,
चट्टानी गुफा की शरण लेते हुए,
तब अजकारणी नदी मुझे आनंद देती है।

[309]
दोनों किनारों पर सुंदर ढंग से सजे हुए गुलाब-सेब के पेड़ किसे नहीं पसंद थे,
मेरी कुटिया की बड़ी गुफा के पीछे [1]

[310] या मेंढकों की कोमल टर्राहट सुनो, जो
अपने अमर नश्वर शत्रुओं से छुटकारा पाकर घोषणा करते हैं:
'पहाड़ी झरनों से आज

जाने का समय नहीं है। अजकारणी सुरक्षित है।
वह हमारे लिए सौभाग्य लाती है। यहाँ रहना अच्छा है।' [2]

तब रिश्तेदारों ने उसे विदा कर दिया। और क्योंकि उसने इसमें एकांत स्थानों में अपनी प्रसन्नता प्रकट की, इसलिए यह थेरा की अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा बन गई।

[1] जांबू का पेड़ सदाबहार है; इसकी शाखाएँ फलों से झुकी हुई हैं; इसके चमकदार पत्ते छाया प्रदान करते हैं (टिप्पणी)।

[2] मुझे इस छोटी नदी का उल्लेख कहीं और नहीं मिलता। यह संभवतः सावत्थी से होकर बहने वाली अचिरवती नदी की एक सहायक नदी का नाम रहा होगा (देखें CLXXII)। मेंढकों की टर्राहट के भार से पहले वाली पंक्ति में, पाठ और टीका के दोनों संस्करणों में भिन्नता है, और मैं यह दावा नहीं करता कि मैंने इसे सुलझा लिया है, जिस पर टीका के एक संस्करण में अधिक उपयुक्त रूप से चर्चा की जाएगी। सटीक अर्थ उस कविता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण नहीं है जिसमें मूल आकर्षण उसके सौम्य मूर्तिपूजा में निहित है। संघ का प्रयोग सारसों के झुंड के लिए किया जा सकता है, देखें मिलिंदपन्हा, पृष्ठ 403।

4.12 [196] सप्पकत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
यदा बलका से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा सप्पक का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और इकत्तीस युग (कप्पा) पहले एक सामर्थ्यवान नागराज के रूप में पुनर्जन्म लिया। एक विशाल कमल का फूल तोड़कर, नाग ने उसे अपने सिर के ऊपर (उपरिमुद्धनि) उठाया और खुले आकाश में ध्यान (समापत्ति) में लीन बैठे संभव बुद्ध को श्रद्धापूर्वक अर्पित किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे श्रावस्ती में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। सप्पक नाम प्राप्त करने के बाद, उन्होंने बुद्धि प्राप्त करने पर भगवान बुद्ध की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) एकत्रित किया, और अजकारणी नामक नदी के किनारे लेणगिरि मठ में निवास करते हुए अरहंत पद प्राप्त किया, लेकिन शीघ्र ही, इसलिए अपदान में कहा गया है:—

“हिमावंता से ज्यादा दूर नहीं, वहाँ

रोमासा नाम की एक पहाड़ी थी। उस समय,

खुले वातावरण में एक शांत जीव निवास करता था

बुद्ध, जिनका नाम संभवा है।

अपने महल से बाहर आकर, मैंने उसे उठाया

कमल का फूल (मौन बुद्ध के ऊपर)

एक दिन तक (कमल के फूल को) पकड़े रहने के बाद,

मैं वापस अपने आलीशान घर में आ गया।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने विशेष रूप से अपनी श्रद्धापूर्ण भेंट अर्पित की;

मुझे किसी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यह

यह मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, वे गुरु को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए सावत्थी आए थे। अपने रिश्तेदारों के साथ, वे कुछ दिनों तक वहाँ रहे, धर्म का उपदेश दिया, अपने सगे-संबंधियों को आश्रमों और नैतिक उपदेशों में स्थापित किया और उक्त स्थान पर जाने की इच्छा व्यक्त की। थेरा के रिश्तेदारों ने उनसे निवेदन किया: "आदरणीय महोदय! आप यहीं निवास करें; हम आपकी देखभाल करेंगे।" प्रस्थान का संकेत देने के बाद वे खड़े हुए और चार श्लोकों का प्रवचन देकर एकांत में अपने विशेष आनंद को प्रकट किया और अपने निवास स्थान की घोषणा की।

307. "जब भी सारस (बलाका)

अपने शुद्ध पीले पंखों के साथ, भयभीत

काले बादलों के खतरे से होकर गुजरेगा

अपने चरागाह से उड़कर दूर खोज में

घोंसलों के बारे में और विश्राम करने के लिए उतरने की इच्छा रखते हुए,

तो फिर अजकारणी नदी ही वह सब कुछ देती है जो वह देती है।

मुझे खुशी हुई।

308. "जब भी उत्कृष्ट रूप से शुद्ध पीले सारस दिखाई दें,

काले बारिश के बादलों के खतरे से भयभीत होकर,

अपने निवास स्थान को न देख पाने के कारण, वे घोंसले बनाते हैं।

उनके स्थायी निवास स्थान पर; फिर, यह

अजकारानी नदी मुझे आनंद देती है।

309. "सुगेनिया (जाम्बू) के पेड़ किसे नहीं देते?"

वहाँ के वे पेड़ आनंद देते हैं, जो इसे बनाते हैं।

नदी के दोनों किनारों पर सुंदर स्थान स्थित हैं।

मेरे विश्राम निवास (लेण) के पीछे?

310. "मेरा वह निवास स्थान तो पूरी तरह से वीरान पड़ा है।"

साँपों के झुंडों द्वारा (अमतमादा); मेंढकों से भरा हुआ

मधुर ध्वनि (मंडावती) की गूंज उनके साथ गूंजती है

उनकी बारिश के लिए पुकारने वाली चीखों की बौछार

(पनादयन्ति);

फिलहाल मेरे लिए कोई अवसर नहीं है

पहाड़ियों से विपवास (विविपवास)

और नदियाँ; अजकारणी नदी सुरक्षित है।

और इसके रेतीले किनारे के साथ बेहद आनंददायक है।

(सिवा).

वहाँ, वदा का अर्थ है किसी भी समय। बलाका का अर्थ है: सारस पक्षी। सुचिपण्डरच्छदा का अर्थ है: जिनके पंख शुद्ध, शुद्ध और हल्के रंग के हों। कालस्सा मेघस्सा भयेन तज्जिता का अर्थ है वर्षा के खतरे से उत्तेजित और भयभीत, वर्षा के बादलों की गड़गड़ाहट के कारण, जो काजल के पहाड़ (अंजनगिरि) की तरह दिखते हैं, जो वर्षा के पानी से लदे होने के कारण काले हैं। पलेहिती का अर्थ है: अपने चरागाह (गोचरभूमि) से उड़कर (उप्पतित्वा) चले जाएँगे। आलयं का अर्थ है: निवास (नीलय), उनका अपना घोंसला। आलयसिनी का अर्थ है: वहाँ वे केवल अपना मांद (आलयनं) और अपना विश्राम (नीलियनं) चाहते हैं। Tadā nadī Ajakaraṇī rameti maṃ का अर्थ है: जब वर्षा होने वाली होती है, तब अजकारणी नामक नदी, ताजे पानी से लबालब भरी हुई (नवोदक), सब कुछ अपने साथ ले जाती है (हाराहारिनी), ढलानदार किनारे (कूला) से चिह्नित (अंकसा) होकर मुझे आनंदित करती है; मेरा दिल जीत लेती है (चित्तमाराधेति); इस प्रकार, उन्होंने अपने एकांतवास (विवेक) में अपने विशेष आनंद को प्रकट किया।

सुविशुद्धपण्डर का अर्थ है: अत्यंत शुद्ध हल्का रंग; बिना मिलावट वाला रंग (असम्मिसवण्णा), पूर्णतः सफेद; यही इसका अर्थ है। परियेसेति का अर्थ है: यह खोजता है, पीछा करता है (या मग्गती का शिकार करता है)। लेनाम् का अर्थ है: निवास स्थान, घर (वसनाट्टाना)। अलेणदास्सिनी का अर्थ है: अपना निवास स्थान न पाना; पक्षी को पहले स्थायी निवास स्थान न होने के कारण अपना विश्रामस्थल नहीं मिल पा रहा है; परियेसन्ति लेनाम् का अर्थ है: अब, बारिश के बादल की गड़गड़ाहट से उत्पन्न गर्भ धारण करने के बाद, यह अपना स्थायी निवास स्थान और घोंसला बनाता है; यही इसका अर्थ है।

Kaṃ nu tattha, ... Pacchato, इस प्रकार; mama का अर्थ है: मेरे विशाल विश्राम निवास (laṇa) का, जहाँ मैं निवास करता था; pacchato का अर्थ है: पिछले भाग में; āpagākūlaṃ का अर्थ है: अजकारणी नदी के दोनों किनारों पर; tahiṃ tahiṃ का अर्थ है: यहाँ और वहाँ भी (दोनों किनारे) फलदार वृक्षों की शाखाओं से लदे हुए, फलों के भार से झुके हुए और मनमोहक (siniddha) पत्तों से ढके होने के कारण, वे सदा सुशोभित (sobhenitiyo) रहते हैं; jambuyo tatthapu का अर्थ है: उस स्थान पर; kaṃ का अर्थ है: किसे, अर्थात् किस जीव को; na ramenti nu का अर्थ है: वे सब केवल आनंद (ramenti) प्रदान करते हैं?

ते'मतमदा संघसुप्पहीना का अर्थ है: आमत को अगदा (औषधीय औषधि) कहा जाता है, वे इससे मदहोश हो जाते हैं; इस प्रकार, औषधि (अमतमदा) से पागल होकर, सर्प (सप्पा); उनका संग्रह सर्पो (अमतमदसंघो) का समूह (या झुंड) है; उस स्थान को अच्छी तरह से त्यागकर, वे वहाँ से चले गए थे। भीका का अर्थ है: मादा मेंढक (मण्डुकियो); मंदावती का अर्थ है: आवाज से युक्त (सरवती); पनादयन्ति का अर्थ है: वे उस स्थान को अपनी मधुर आवाजों से गूंजाते हैं। नाज्जा गिरिनदीहि विप्पवासस्सम्यो का अर्थ है: अब, वर्तमान में, अन्य पर्वतीय (पब्बतेय्या) नदियों से विपवास (विप्पवास) का कोई अवसर नहीं है; खेमा अजकारणीनदी का अर्थ है: विशेष रूप से, अजकारणी नदी सुरक्षित है, क्योंकि इसमें जंगली जानवर (वाल), भयंकर मछलियाँ, मगरमच्छ आदि नहीं पाए जाते। शिव का अर्थ है: शांत सतह (सुंदरतल), सुगम तट (तित्थ) और चांदी जैसी रेत (पुलिना) की समृद्धि; सुरम्मा का अर्थ है: अत्यंत आनंदमय और रमणीय; इसलिए मेरा मन आनंदित (रमाति) है; यही इसका महत्व है।

इस प्रकार कहने के बाद, उन्होंने अपने रिश्तेदारों को विदा किया और अपने निवास स्थान पर लौट गए। यह श्लोक भी, एक खाली घर में उनकी विशेष प्रसन्नता को उजागर करते हुए, थेरा के अरहंतत्व (आञ्ञा) का स्पष्टीकरण बन गया।

थेरा सप्पक के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(197):मुदिता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (197) ------>>>> अगला

अध्याय IV.
चार श्लोक
197. मुदिता
बुद्ध युग में कोसलन के एक साधारण परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम मुदिता रखा गया। जब वे वयस्क हुए, तो किसी कारणवश उनका कुल राजा को अप्रिय लगने लगा। राजा से भयभीत होकर मुदिता भाग गए, [1] और [188] जंगल में प्रवेश करके एक अरहंत (प्रबुद्ध) थेरा के निवास स्थान पर पहुँचे। थेरा ने उनकी घबराहट देखकर उन्हें भयभीत न होने के लिए कहा और उन्हें आश्वस्त किया। मुदिता ने पूछा, "हे पूज्य, मुझे खतरे से मुक्त होने में कितना समय लगेगा?" थेरा ने उत्तर दिया, "सात या आठ महीने बीत जाने पर।" मुदिता ने आगे कहा, "मैं इतना लंबा इंतजार नहीं कर सकता; मैं संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करके) भिक्षु बन जाऊँगा, हे पूज्य, मुझे भिक्षु दीक्षा दीजिए!" उन्होंने अपने जीवन की रक्षा के लिए यह विनती की। थेरा ने उन्हें भिक्षु दीक्षा दी। और जब उन्होंने इस सिद्धांत में विश्वास किया, तो उनका भय दूर हो गया और उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त करने के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया। अरहंत पद (ज्ञानोदय) प्राप्त करने में असफल रहने पर उन्होंने प्रतिज्ञा की कि जब तक उन्हें यह प्राप्त नहीं हो जाता, तब तक वे अपना आश्रम नहीं छोड़ेंगे, और इस पर वे सफल हुए। इसके बाद, निर्वाण के आनंद का अनुभव करने पर, उनके साथी भिक्षुओं ने उनसे उनकी सफलता के बारे में पूछा। उन्होंने उन्हें बताया कि उन्हें सफलता कैसे मिली, इस प्रकार:

[311] पब्बाजीṃ जीविकत्थोऽहाṃ लधना उपसम्पदाṃ,॥
ततो सद्धाऽ पहिलाभिṃ दःहविरियो परक्कमिṃ॥ ॥

[312] कामाऽभिज्जतुऽयं कायो माऽसापेसि विस्यारुऽ,॥
उभो जानुकसंधिहि जंघायो पापातंतु मे॥ ॥

[313] नासिस्सां न पिविसामि विहार च न निक्खमे,॥
न'पि पस्सं निपतेस्सं तनहसल्ले अनुहते॥ ॥

[314] तस्सा मेवṃ विहारतो पासा वीर्यपराक्कमाṃ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[311] मैंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व के लिए) ताकि मैं अपना जीवन बचा सकूँ,
और, एक बार भिक्षुत्व में दीक्षित होने के बाद, मैंने विश्वास और आशा को पुनः प्राप्त कर लिया;
वीर ऊर्जा के साथ मैं आगे बढ़ता रहा।

[312] अब ऐसा होना ही है, इस शरीर को टूटने दो
और नष्ट होने दो और इसके मांस को गलने दो,
मेरे अंगों को घुटने पर लड़खड़ाने दो और विफल होने दो;

[313] मैं [2] न खाऊँगा और न ही फिर से पीऊँगा,
न ही इस आवास से बाहर निकलूँगा,

और न ही मैं अपनी करवट लेटूँगा,
जबकि लालसा का तीर अभी तक नहीं खींचा गया है!

[314] इस प्रकार मैं दृढ़ रहता हूँ - हे देखो
और ऊर्जा की आगे की चाल पर ध्यान दो:
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना बना लिया है,
और बुद्ध के सभी कार्य पूरे हो चुके हैं!

[1] सी.एफ. सीसीएक्सआई. मुदिता का अर्थ है आत्मसंतुष्ट, प्रसन्न। सी एफ कली. साई., पी. 65, एन. 1.

[2] = श्लोक 223, 224 (पकाया, CLXXI.)।

4.12 [197] मुदितत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी

पब्बजिं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मुदिता का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, वे भगवान विपस्सी के समय एक गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म हुए; जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके थे, एक दिन संयोगवश उन्होंने गुरु के दर्शन किए, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें अपने पलंग (मंच) पर लेटाया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे बार-बार जन्म लेते रहे, देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे कोसल राज्य में एक धनी गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म हुए; मुदिता नाम धारण करके उन्होंने ज्ञान प्राप्त किया। उस अवसर पर, राजा ने किसी कार्य के कारण उस परिवार को रोक लिया (पालिबुद्ध)। इस बात की सूचना पाकर वह शाही खतरे से भयभीत हो गया, भागकर जंगल में प्रवेश किया और एक थेरा के निवास पर पहुँचा जिसने उसके घावों को नष्ट कर दिया था। थेरा ने उसकी भयभीत अवस्था को जानकर उसे दिलासा देते हुए कहा, "डरो मत।" उसने पूछा, "हे पूज्यवर! वास्तव में, मेरा यह खतरा कितने समय में समाप्त हो जाएगा?" यह सुनकर कि "सात-आठ महीने बीतने के बाद," उसने कहा, "हे पूज्यवर! मैं इतने लंबे समय तक धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा नहीं कर सकता; मैं भिक्षु बन जाऊँगा; कृपया मुझे भिक्षु बना दीजिए।" अत: उन्होंने अपने जीवन की रक्षा के लिए भिक्षुत्व का अनुरोध किया; थेरा ने उन्हें भिक्षु बना दिया। वे भिक्षु बने, विधि में उचित रूप से श्रद्धापूर्वक विश्वास धारण किया, और यद्यपि उनके लिए खतरा टल गया था (वुपसन्त), फिर भी वे भिक्षु के कर्तव्यों में आनंदित रहे, मानसिक अभ्यास में लगे रहे, और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने का कार्य करते हुए उन्होंने यह प्रतिज्ञा की: "अरहंतत्व प्राप्त किए बिना मैं इस निवास कक्ष से बाहर नहीं जाऊंगा;" उन्होंने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने में गहनता से लीन होकर अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः, अपदान में कहा गया है:—

"धन्य विपस्सी को, जो थे

ऐसा ऋषि जो लोगों में सबसे बुजुर्ग हो

दुनिया में, एक सोफा पेश किया गया था

मेरे द्वारा, मेरी प्रसन्नतापूर्ण भक्ति और मेरे द्वारा

अपने हाथों (पाणिना) से, मुझे अच्छी तरह से आपूर्ति की गई थी।

हाथी परिवहन, घोड़ा परिवहन के साथ

और दैवीय परिवहन, मेरे कारण

उस सोफे की पेशकश। मैंने प्राप्त कर लिया है

अरहंत पद ने मेरे सभी दोषों को नष्ट कर दिया।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है,

फिर मैंने सोफे का प्रस्ताव रखा, मैंने ऐसा किया।

मुझे किसी भी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यही है

मेरे द्वारा सोफे की पेशकश का फलदायी परिणाम।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी।... बुद्ध का

निर्देश का पालन किया जा चुका था।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने साथी भिक्षुओं द्वारा अपनी उपलब्धि (अधिगत) के बारे में पूछे जाने पर अपने स्वयं के उचित प्रदर्शन (पुतिपन्न) के तरीके (आकार) के बारे में बताने के लिए चार श्लोक कहे, क्योंकि वे मुक्ति के सुख का उचित रूप से अनुभव करते रहे।

311. "मैं भिक्षु बना ताकि..."

जीवित रहना और मैंने पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया

दीक्षा समारोह। इसके बाद, मैंने उचित रूप से

मुझे धार्मिक आस्था प्राप्त हुई; मैं अपनी ऊर्जा में दृढ़ हूं।

मैंने अपना पूरा प्रयास किया।

312. "मेरा यह शरीर टूट जाए,

मेरे मांस के टुकड़े घुल जाएं; मेरे अग्रभाग को...

मेरे दोनों घुटनों से टांगें अलग हो जाती हैं;

313. "मैं नहीं खाऊंगा, मैं नहीं पीऊंगा;

मैं अपने पक्ष में पूरी तरह से झुकने भी नहीं दूंगा

मेरी लालसा का कांटा अभी तक नहीं निकला है।

314. "तब मैं इस प्रकार निवास कर रहा था,

अतः मेरा परिश्रम और प्रयास, तीन गुना

तदनुसार ज्ञान (तिस्सौ विज्जा) प्राप्त हुआ था

प्राप्त किया; बुद्ध का उपदेश प्राप्त हुआ था

किया गया।"

वहाँ, जीविकत्थो का अर्थ है: वह व्यक्ति जो जीवन जीने की इच्छा रखता है; जीवन का उद्देश्य (जीविकप्पयोजनो)। मैंने स्वयं को जीवित रखने के उद्देश्य से भिक्षु का रूप धारण किया और स्वयं से कहा: "यहाँ भिक्षु बनकर मैं बिना थके जीवित रहूँगा;" यही इसका अर्थ है। लद्धाना उपसंपदा का अर्थ है: सर्वप्रथम एक नवोदित भिक्षु (सामणेर) के रूप में त्याग में रहकर, संघ अध्याय के चौथे अध्याय के माध्यम से पूर्ण दीक्षा (उपसंपदा) प्राप्त करना। ततो सद्धं पटिलाभिम् का अर्थ है: मैंने तीन रत्नों में उचित श्रद्धा इस प्रकार प्राप्त की: "भगवान पूर्णतः आत्म-जागृत हैं; सत्य (धम्म) ऐसा है जिसका अच्छी तरह से उपदेश दिया गया है; भिक्षुओं का पुरोहित वर्ग ऐसा है जिसने उसका उचित पालन किया है (पटिपन्नो)", बुद्ध की महान शक्ति आदि को देखने के बाद, कुछ सूत्रों का ज्ञान, शांत मनन (समथा) के लिए मानसिक अभ्यास और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने की विधि (विधि), साथ ही दो सारणीबद्ध सारांश (माटिका) और तीन प्रकार के धन्यवाद (अनुमोदना) प्राप्त करने के बाद, जैसा कि मैंने अपने पूर्ण दीक्षा के समय से अच्छे मित्रों की सेवा करना जारी रखा। दल्हवीरियो परक्कमिं का अर्थ है: सत्यों (सच्च) में उचित प्रवेश के लिए दृढ़ और स्थिर परिश्रम करने वाला बनने के बाद मैंने प्रयास किया, लेकिन शीघ्र ही इस प्रकार उचित रूप से धार्मिक विश्वास प्राप्त करने के बाद आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म किया; मैंने प्रयास (पादहिं) किया, लेकिन उचित रूप से बुरे कर्मों (धम्म) के त्याग और कर्मों (धम्म) की समृद्धि (उपसम्मादा) के लिए।

"कामं" से शुरू होने वाले श्लोक का अर्थ यह दर्शाना है कि (घटना) उसके प्रयास के अनुसार घटित हुई। यहाँ, कामं का अर्थ है: इच्छा के अनुसार; भिज्जतु का अर्थ है: यह निश्चित रूप से टूट जाए। अयं कायो का अर्थ है: मेरा यह सड़ा हुआ शरीर; यदि (मेरा शरीर) इस परिश्रम (पटाप) से टूट जाए, तो यह बिखरकर टुकड़े-टुकड़े हो जाए। मम्सेपेसी विसीयरुं का अर्थ है: यदि मेरे मांस का यह पिंड इस दृढ़ प्रयास के कारण इस शरीर से विलीन हो जाए, तो ऐसा ही हो; यह इधर-उधर चकनाचूर हो जाए। Ubho jaṇṇukasandhīhi, jaṅghāyo papatantu me का अर्थ है: मेरे दोनों अग्रपाद (ज्घ) और अंडकोष (सत्थि) तथा दोनों घुटने के जोड़ (जukasandhi) मेरी जांघों के बंधन (उरुबन्ध) से टूटकर जमीन पर गिर पड़ें। इसका एक पाठ "म" भी है; इसका अर्थ केवल यही है। शेष का अर्थ पहले बताए गए तरीके से ही है (हेट्ठ)।

थेरा मुदिता के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(198):राजदत्त

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (198) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
198. राजदत्त
बुद्ध युग में सावत्थी में एक कारवां-नेताओं के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनके माता-पिता ने उनका नाम (राजा)राजदत्त ('राजा द्वारा दिया गया') रखा, क्योंकि उन्होंने महान आकाश देवता वेसवना से प्रार्थना करके उन्हें प्राप्त किया था। [1] वयस्क होने पर, उन्होंने एक बार 500 गाड़ियों का माल लेकर राजगृह गए। वहाँ उन्होंने अपना सारा धन लुटा दिया, एक सुंदर वेश्या पर प्रतिदिन एक हजार खर्च कर दिए, जिससे वे कंगाल हो गए और उनके पास खाने के लिए पर्याप्त नहीं था, और वे दयनीय स्थिति में भटकते रहे। इसलिए वे अन्य गृहस्थों के साथ बाँस के वन में आए, जहाँ भगवान (बुद्ध) एक विशाल सभा को धर्म (धम्म) का उपदेश दे रहे थे। और (राजा)राजदत्त, सभा के किनारे पर बैठे हुए, उन्होंने सुना और विश्वास किया, और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। धुतंगों का पालन करते हुए, [2] वे एक श्मशान क्षेत्र में रहने लगे।

अब एक और कारवां-नेता ने भी वेश्या पर अपना हज़ार खर्च कर दिया, और अपने हाथ में एक कीमती अंगूठी पहन रखी थी, जिस पर वह ललचाती थी। उसने आदमियों को उसे चुराने के लिए उकसाया, लेकिन मालिक के नौकरों ने पुलिस को बता दिया, [3] और उन्होंने उसके घर पर छापा मारा, उसकी हत्या कर दी, और उसके शरीर को श्मशान में फेंक दिया।

ध्यान के लिए किसी दुखद विषय की तलाश में घूमते हुए थेरा (राजा) राजदत्त ने इस शव को देखा। कुछ देर तक [190] उन्होंने अपना ध्यान केंद्रित किया, लेकिन कुत्तों और सियार द्वारा कुतर-बितर न किए गए शरीर के हिस्सों ने उनका ध्यान भटका दिया और उन्हें लगभग वश में कर लिया। बहुत व्याकुल होकर उन्होंने अपने मन को शांत किया और कुछ समय के लिए चले गए; फिर लौटकर उन्होंने ध्यान लगाया, अपनी अंतर्दृष्टि को पुष्ट किया और इस प्रकार अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

इस पर अपनी सफलता पर विचार करते हुए और उत्साह और खुशी से भरते हुए उन्होंने कहा:

[315] भिक्खु [37] सिवाथिकाṃ गन्त्वा अडसअइ इत्थिमुज्जतṃ,॥
अपविद्धां सुसानस्मिं खजजन्तीं किमिहि फूटाṃ॥ ॥

[316] याṃ हाय एके जिगुच्चन्ति मताṃ दिस्वना पपाकाṃ,॥
कामरागो पतुराहु अन्धोऽव वसति अहṃ॥ ॥

[317] ओरं ओडनपाकम्हा तम्हा ठाना अपक्कमिṃ,॥
सतीमा संपजानोहं एकमंतं उपाविसीं॥ ॥

[318] ततो मे वनासिकारो योनिसो उदपज्जथा,॥
आदिनावो पतुराहु निब्बिदा समतिथथा॥ ॥

[319] ततो चित्ताṃ विमुची मे पासा धम्मसुधम्मताṃ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[315] एक भिक्षु (भिक्षु) श्मशान क्षेत्र (कब्रिस्तान) गया था,
और वहाँ उसने एक स्त्री का शरीर
मृतकों के बीच लावारिस पड़ा देखा, जो कीड़ों का भोजन था।

[316] अधिकांश पुरुषों को शव को देखकर घृणा हुई
, उस बेचारे मृत दुष्ट प्राणी को देखकर।
मुझमें कामुक वासना प्रकट हुई,
और मैं अंधा हो गया और अपना नियंत्रण खो बैठा।

[317] लेकिन उस जगह से उबलते चावल से भी तेज़
, मैं मुड़कर भाग गया; [4] कहीं और मैं पालथी मारकर बैठ गया,
सजग और विवेकपूर्ण मनोदशा में।

[318] इस पर मेरे मन में गहरा विचार आया: [5] तथ्य और कारण पर ध्यान।
सारी पीड़ा स्पष्ट थी।
मन में अरुचि, उदासीनता थी;

[319] और इस प्रकार मेरा हृदय मुक्त हो गया।
हे देखो, धम्म के मार्ग पर चलने वाले इस सुशोभनीय भिक्षु का क्रम!
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध के सभी कार्य जो हमें करने बाकी हैं, वे पूरे हो चुके हैं।

[1] चार तथाकथित महान राजाओं में से एक, जिनमें से प्रत्येक दृश्यमान दुनिया के एक चौथाई भाग पर शासन करता है; कुबेर भी कहलाते हैं, वे उत्तरी भाग पर शासन करते थे [संवाद, ii. 287 f.)।

[2] अतिरिक्त तपस्या (मिलिंदा, द्वितीय, पुस्तक 6)।

[3] अवकारकमनुसा (?). मुझे यह शब्द कहीं और नहीं मिला है, और मैं केवल अर्थ का अनुमान लगाता हूँ।

[4] टीका इस प्रकार बताती है: यावता कालेना सुपारिधोतिनतातंदुलनलिया ओदानं पच्चति, ततो, ओरम इव कलां, ततो लहुकातेन रागं विनोदेनतो।

[5] = श्लोक 269, 270.

5. पांचवां खंड

5.1 [198] राजदत्तथेरा के श्लोक पर टीका
पांचवें खंड में 'भिक्खु (भिक्षु) सीवत्थिकं गन्त्वा' से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा राजदत्त का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में बार-बार पुनर्जन्म (वट्ट) के चक्र से मुक्ति पाने के लिए पुण्य कर्म संचित किए, और चौदह युग (कप्पा) पहले एक परिवार में बिना किसी बुद्ध (बुद्धसुञ्ञ) के संसार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन वे किसी कार्य से जंगल के अंत के पास जा रहे थे और वहाँ उन्होंने एक वृक्ष के चरणों में एक मौन बुद्ध को बैठे हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें एक पूर्णतः शुद्ध बेर का फल भेंट किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लिए और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे सावत्थी में एक कारवां-नेता के परिवार में पुनर्जन्म लिए। उनके माता-पिता ने उनका नाम राजदत्त रखा क्योंकि उन्होंने महान वेस्सवण को प्रसन्न करने के बाद यह नाम प्राप्त किया था। वयस्क होने पर, वे एक व्यापारी के रूप में राजगृह गए और अपने साथ पाँच सौ बैलगाड़ियाँ माल ले गए। उसी अवसर पर, राजगृह में, एक अत्यंत सुंदर और आकर्षक गणिका अपने सुडौल शरीर (परमसोबग्गयोग) के कारण प्रतिदिन एक हजार रुपये कमाती थी। तब उस कारवां-प्रमुख के पुत्र ने एक हजार रुपये देकर उस वेश्या के साथ प्रतिदिन सहवास किया, जिससे उसकी सारी संपत्ति समाप्त हो गई। कुछ ही समय बाद वह निर्धन हो गया और भोजन-वस्त्र तक प्राप्त न कर पाने के कारण पश्चाताप से व्याकुल होकर इधर-उधर भटकने लगा। एक दिन वह भक्तों के साथ वेलुवन मठ गया।

उस अवसर पर, गुरु एक विशाल श्रोतासमूह से घिरे हुए सत्य (धम्म) का उपदेश दे रहे थे। उन्होंने श्रोताओं के एक छोर पर अपना स्थान ग्रहण किया, गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) को सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, कठोर साधना (धुतंग) के कर्तव्यों का पालन करने का दायित्व ग्रहण किया और एक श्मशान में निवास किया। उसी समय, एक अन्य कारवां-प्रमुख का पुत्र उस वेश्या के साथ प्रतिदिन सौ रुपये देकर रहता था। उस वेश्या ने उसके पास एक बहुमूल्य रत्न देखकर लोभ उत्पन्न किया और अन्य दुष्ट पुरुषों से उसकी हत्या करवाकर रत्न छीन लिया। इसके बाद, उस कारवां-प्रमुख के पुत्र के लोगों ने यह घटना सुनकर अपने आदमियों को जासूस (ओकारक) बनाकर भेजा। वे रात में उस वेश्या के घर में घुस गए, उसकी खाल को बिना नुकसान पहुंचाए ही उसकी हत्या कर दी और शव को श्मशान में फेंक दिया। थेरा राजदत्त, श्मशान में घूमते हुए, एक अप्रिय संकेत (असुभानिमित्तम्) प्राप्त करने के लिए, उस वेश्या के मृत शरीर (क◌़ेवर) के पास गए ताकि घृणास्पद दृष्टि से उसका ध्यान आकर्षित कर सकें; कुछ समय तक बुद्धिमानी से ध्यान लगाने के बाद, उन्होंने उस मृत शरीर में कामुक सुखों के लिए अपनी वासना (राग) को जागृत किया, और कुछ समय पहले हुई मृत्यु के कारण, कुत्तों, सियार आदि द्वारा क्षतिग्रस्त न हुई उसकी त्वचा के कारण, और उसके मृत शरीर के विचित्र पदार्थ (वत्थु) होने के कारण, उन्होंने अज्ञानता से ध्यान लगाया। वह बहुत अधिक उत्तेजित (सम्बिगत्तरा) हो गया (मानसो), अपने मन को कोसने लगा (परिभासित्वा), कुछ देर के लिए एक तरफ चला गया (अपसक्कित्वा), उस अत्यंत अप्रिय (लसुभ) संकेत (निमित्त) को पकड़ लिया, जो शुरू से ही उस पर छाया हुआ था (उपठितम्), और बुद्धिमानी से (योनिसो) सचेत होकर उसने ध्यान उत्पन्न किया, उस ध्यान को अपना आधार बनाया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में स्वयं को स्थापित किया और वहीं अरहंत पद प्राप्त किया। अतः, अपदान में ऐसा कहा गया है।

"मौन बुद्ध को देखने के बाद,

स्वयं पर निर्भर (स्वयंभूम) और

अजेय, (अपराजितं), मैंने एकत्रित किया

एक हॉग-प्लम आम का फल लिया और उसे भेंट किया

आत्मनिर्भर मौन बुद्ध।

यह इकत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने फल का अपना चढ़ावा चढ़ाया।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह फल का फलदायी परिणाम है

पेशकश।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने उचित कर्म (पटिपत्ति) पर विचार किया, उत्साह और प्रसन्नता से भर गए और ये पाँच श्लोक कहे:—

315. "भिक्षु (साधु), वहाँ जाकर

कब्रिस्तान में, फेंका हुआ (उज्झिता) देखा।

कब्रिस्तान में एक महिला, अस्वीकृति में

(अपविद्धं), व्याप्त होकर (फुटं)

और कीड़े (किमी) द्वारा खा लिया गया।

316. वास्तव में, कुछ लोगों ने ऐसे मृत व्यक्ति को देखकर-

इस तरह का शरीर घृणा उत्पन्न करेगा;

(मुझमें) स्पष्ट रूप से (पातु) उत्पन्न हुआ;

(अशुद्धियों को) रिसते हुए न देखना

उसके नौ बोलों से), मैं था (अहुं)

जैसे कोई अंधा व्यक्ति।

317. "के इस तरफ (अर्थात में)

चावल को लगने वाले समय से कम समय में

पकाया जा (ओरं अदानपाकम्हा), मैंने लिया

उस स्थान से मेरा प्रस्थान (उस स्थान का)

मृत शरीर); जागरूकता से युक्त

(सतीमा) और विचारशील होना (संपजानो)

मैं एक तरफ बैठ गया (एकमंतम उपविशिं)।

318. "इसके बाद, मुझमें यह उत्पन्न हुआ

मेरी जागरूकता का बुद्धिमान (योनिसो) निर्माण;

हानि स्पष्ट हो गई (pāturahu);

उस महिला के प्रति घृणा अच्छी तरह स्थापित हो गई।

319. "इसके बाद मेरा मन मुक्त हो गया;

सत्य (धम्म) के अच्छे स्वरूप को देखो।

तीन प्रकार का ज्ञान (विज्जा) प्राप्त हो चुका था।

तदनुसार, बुद्ध के निर्देशों का पालन किया गया था।

वहाँ, भिक्कु शिवत्तिकम् गन्त्वा का अर्थ है: एक भिक्षु 'कच्चे मांस के कब्रिस्तान' (आमकसुसाहा) में गया, अप्रिय (असुभ) पर अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) के उद्देश्य से; क्योंकि उसे बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (संसार) में आने वाले खतरे का पूर्वाभास (इक्खना) था। यह अभिव्यक्ति "भिक्खु," स्वयं थेरा ने अपने संदर्भ में (संध्याय) कही थी। इत्तम का अर्थ है: वह यहाँ हठी (थीयति) है; प्राणी होने की निरंतरता (सत्तसंतान) के कारण उसका श्वेत (सुक्क) रक्त (सोणित) दबा हुआ (संहञ्जति) है; इस प्रकार, वह एक स्त्री (मातुगाम) है। इस प्रकार भी, स्वाभाविक (सभाव) व्याकरणिक विश्लेषण (निरुत्ति) के आधार पर उसे "इत्थी" (स्त्री) कहा जाता है। बांझ स्त्रियों आदि के मामले में, उनकी परस्पर समानता और उस प्रकृति (सभाव) से परे न जाने के कारण, वही प्रयोग (वोहारो) किया जाता है। "इत्थी" शब्द किसी स्त्री के शव को भी दर्शाता है। उज्जितं का अर्थ है: पूरी तरह से फेंक दिया गया (परिच्चत्तं)। अपविद्धं का अर्थ है: फेंका हुआ; अनादर की स्थिति में फेंका गया (अनपेक्खा)। खज्जंतिम किमिहि फुतं का अर्थ है: कीड़ों से भर जाने के बाद चबाया गया (खज्जमान)।

Yaṃ hi eke jigucchanti, mataṃ disvāna pāpakaṃ का अर्थ है: कुछ जन्मजात शुद्ध (चोक्ख) लोग भी प्राण, ऊष्मा (उस्मा) और चेतना के चले जाने के कारण मृत शरीर से घृणा करते हैं, जो कि बुरा, नीच (निहीन) और हीन है, और उसे देखना भी नहीं चाहते। Kāmarāgo pāturahū का अर्थ है: उस शव में अज्ञानता (अयोनिसो) की अधिकता के कारण मुझमें कामुक सुख की वासना उत्पन्न हुई और स्पष्ट हो गई। Andho va savati ahuṃ का अर्थ है: मैं उस शव की अपवित्रता की स्थिति को न देख पाने के कारण अंधा हो गया, जब वह शव अपने नौ द्वारों (द्वार) से अशुद्धता का रिसाव कर रहा था। इस कारण (बुद्ध) ने कहा:—-

"रत्तो अत्थं नजानाति, रति धम्मं अना पस्सति।

अंधतमं तदा होति, यं रागो सहते नारां।"

"कामुक (रत्तो) होकर वह करता है

समझ नहीं पाना; भर जाने के कारण

वासना के कारण वह सत्य को नहीं देख पाता।

तब घोर अंधकार छा जाता है; उस अंधकार में वासना मनुष्य को वश में कर लेती है।

"कामाच्छन्दो खो ब्राह्मण और हकरणो, अचक्खुकरणो, हे ब्राह्मण; वास्तव में, इंद्रिय सुख की इच्छा अंधकार और अंधत्व (अचक्खु) का कारण है" इत्यादि। कुछ विद्वान यहाँ अक्षर के आने पर उसका अर्थ इस प्रकार बताते हैं: "कुल भ्रष्टता (किलेसा) के कारण वह या तो नियंत्रण में नहीं है या भ्रष्टता (किलेसा) के नियंत्रण में है।" अन्य विद्वान पाली पाठ को "अन्धोऽवा असति अहं, मैं अंधे के समान अचेत (असति) हो गया," कहकर उसका अर्थ इस प्रकार बताते हैं: "कामारगेन अन्धो एव हुत्वा सतिरहितो अहोसिन, इंद्रिय सुख की लालसा से अंधे के समान होकर मैं चेतना से रहित हो गया।" हालांकि, ये दोनों ही पिटक ग्रंथों (पाली) में मौजूद नहीं हैं।

ओरं ओदनापाकम्हा का अर्थ है: पके हुए चावल (ओदनापाक) का आगे का भाग; जब तक कोई नारियल के खोल के माप (णाली) के गीले (तिन्त) चावल (तण्डुला) को अच्छी तरह से धोकर (सुपरिधोत) पकाता है, तब तक का समय भी; तम्ह ठना अपक्कमिं का अर्थ है: उस समय से भी तेज़ (लहु) समय में वासना से बचने (विनोदन्तो) के लिए, मैंने स्वयं को उस स्थान से दूर कर लिया और प्रस्थान किया जहाँ रहने के दौरान मुझमें वासना उत्पन्न हुई थी। Satimā sampajāno'haṃ का अर्थ है: मैं सजग होकर (vasa के प्रभाव में) एक उपयुक्त स्थान (ekamantaṃ) पर पहुँचा, स्वयं को सजग रखने का ध्यान रखते हुए (satipaṭṭhāna), भिक्षु का बोध प्राप्त करके (upaṭṭhapetvā), और सत्य (dhamma) के स्वरूप को पहचानकर (jānana) चिंतनशील होकर (sampajāno), और फिर पालथी मारकर (pallaṅkaṃ ābhujitvā) बैठ गया। Tato me manasikāro, yoniso udapajjatha का अर्थ है: जो बैठ गया था, उसके लिए इत्यादि। सब कुछ पहले बताए गए तरीके से है (heṭṭha)।

थेरा राजदत्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(199): सुभुता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (199) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
199. सुभूत
बुद्ध युग में मगध के एक साधारण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, सुभूत नाम से, पलायन की प्रवृत्ति के कारण उन्होंने गृहस्थ जीवन त्याग दिया और संप्रदायिक तपस्वियों के साथ जुड़ गए। उनमें कुछ भी वास्तविक न पाकर और उपतिस्सा, कोलिता, सेला [1] और अन्य लोगों को भिक्षु संघ में प्रवेश करने के बाद प्राप्त सुख को देखकर , उन्होंने हमारे सिद्धांत में विश्वास किया और स्वयं भी प्रवेश कर लिया। अपने शिक्षकों और गुरुओं का अनुग्रह प्राप्त करने के बाद, वे एकांतवास में अभ्यास करने चले गए। अंतर्दृष्टि विकसित करके उन्होंने अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

इसके बाद उन्होंने आत्म-यातना से भोगे गए कष्टों और उसके बाद ध्यान आदि में प्राप्त सुख का स्मरण करते हुए अन्ञा (सर्वोच्च प्राप्ति) की घोषणा की।

[320] अयोगे युञ्जमत्तानां पुरिसो किक्कामिच्चतो,॥
कैराṃ सी नाधिगच्छेया तां मे दुग्गलक्खणं॥ ॥

[321] अब्बुहाṃ अघगाताṃ विजिताṃ॥
एकाṃ सीई ओस्साजेया कलिव सिया,॥
सब्बानिपि सी ओस्साजेया अंधोव सिया॥
समविसमास्सा अडस्सनातो.॥ ॥

[322] याṃ ही कयिरा ताṃ ही वदे याṃ न कयिरा न तां वदे,॥
अकरोंतं भस्मानां परिजानन्ति पंडिता॥ ॥

[323] यथाअपि रुचिरौ पुप्फाṃ वनवंताअगन्धकाṃ,॥
एवं सुभासिता वाचा अफला होति अकुब्बतो॥ ॥

[324] यथाअपि रुचिरौ पुप्फाṃ वनवंता सगन्धकाṃ,॥
एवं सुभासिता वाचा सफला होति पकुब्बतोऽति॥ ॥

[320] जो व्यक्ति अपने आप को अनुपयुक्त चीजों से जोड़ता है, उसमें काम पूरा करने की
इच्छा रखता है , यदि वह खोज में सफल नहीं हुआ, तो उसकी खोज में दुर्भाग्य के आंतरिक चिह्न आ जाते हैं।

[321]
यदि वह दुख के स्रोत से निकाले गए और उस पर विजय प्राप्त किए गए एक [दृष्टिकोण] को भी त्याग दे ,
तो उसकी स्थिति दुर्भाग्यपूर्ण पासे की चाल जैसी हो सकती है।
लेकिन यदि वह अपना सब कुछ त्याग दे, तो
वह अंधे आदमी से बेहतर नहीं है,
जो यह नहीं देख पाता कि रास्ता चिकना है या ऊबड़-खाबड़। [3]

[322] जो बहुत बोलता है, पर कुछ करता नहीं,
बुद्धिमान लोग उसका मूल्यांकन करते हैं और उसके गुण के अनुसार उसका आकलन करते हैं।

[323] [192] जैसे सुंदर रंग का सुंदर फूल,
लेकिन सुगंध रहित, वैसे ही बोले गए शब्द होते हैं
जो बांझ साबित होते हैं, कर्म से अच्छे नहीं बनते।

[324] जैसे सुंदर रंग
और सुगंधित खुशबू वाला खूबसूरत फूल, वैसे ही बोले गए शब्द
फलदायी सिद्ध होते हैं, कर्म में अच्छे होते हैं। [4]

[1] उपतिस्सा सारिपुत्त है, कोलिता मोग्गल्लाना है। CCLIX., CCLXIII., CCLIII देखें। पहले वाले दोनों उसके ही देश के थे; सेला मगध के उत्तर में स्थित देश से था।

[2] टीका के अनुसार हमें icchato को = icckante के रूप में पढ़ना है । डॉ. ओल्डेनबर्ग सिस्टर्ट, श्लोक 240 से समानताओं द्वारा इसका समर्थन करते हैं:

अज्ञानियों के प्रति अज्ञानी (ajānato) ने तुम्हें यह बात किसने बताई है?

अजानन्तो के लिए (सम्यी., इ. 11; दीपवम्सा, 21., श्लोक 2)।

अघानी। पीड़ाएँ।

[3] इस गाथा का छंद अत्यंत विचित्र और अनियमित है, और टीका भी इसके मूल वाक्यांशों पर अधिक प्रकाश नहीं डाल पाती। टीका के अनुसार, अघत तीन अघानी (दुःखों) को दर्शाता है - अर्थात् लोभ, घृणा और भ्रम। ब्र. पांडुलिपि इस शब्द को मूल्य (अग्घ) के संदर्भों से सुधारने का प्रयास नहीं करती, जैसा कि एस. पांडुलिपि करती है। फिर भी, यह गाथा कथा के साथ बाद के कथनों (श्लोक 226) की तुलना में अधिक मेल खाती है। यह उस व्यक्ति की भाषा है जिसने जीतने के लिए अपना सब कुछ बलिदान कर दिया है।

[4] = धम्मपद, श्लोक 51, 52.

5.2 [199] सुभूतथेरा के श्लोक पर टीका

अयोगे से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुभूत का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस या उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और बनारस में, भगवान कस्सपा के समय में, एक समृद्ध गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया; ज्ञान प्राप्ति पर, उन्होंने एक दिन गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, धार्मिक भाव धारण किया, शरण और नैतिक उपदेशों में दृढ़ हुए, और गुरु के गंधकुटी को महीने में आठ बार चार प्रकार के प्राकृतिक इत्रों से भरवाया। उस पुण्य कर्म के कारण, जहाँ भी उनका पुनर्जन्म हुआ, उनका शरीर सुगंधित हो गया और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे मगध राज्य में एक धनी गृहस्थ (गृहपति) के परिवार में उत्पन्न हुए। सुभूत नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर उन्होंने अपने गृहस्थ जीवन का त्याग कर मोक्ष की प्राप्ति के लिए (अज्जासय) संसार त्याग दिया, विधर्मियों के बीच संन्यासी बन गए, जहाँ सार प्राप्त न होने के कारण उन्होंने उपतिस्सा, कोलिता आदि अनेक भिक्षुओं और ब्राह्मणों को देखा, जो गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बनकर संन्यास के आनंद का अनुभव कर रहे थे। उन्होंने भी इस विधान में उचित श्रद्धा धारण की, भिक्षु बने, अपने गुरुओं और गुरु का हृदय जीता, अपने मानसिक अभ्यास को एकत्रित किया और एकांतवास में रहकर आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि का निरंतर विकास किया और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

"इस उत्कृष्ट युग (भद्दकप्पा) में,

वहाँ सबसे उत्कृष्ट (वरो) का उदय हुआ।

कस्पाप नाम के शिक्षकों (वदतं) के,

कुल से, ब्रह्मा का संबंधी, यश से परिपूर्ण।

उसमें कई छोटे-छोटे निशान थे।

(अनुभ्यंजन), बत्तीस से परिपूर्ण

उत्कृष्ट प्रमुख अंक (लक्खाणो),

उनकी एक घात लंबाई की विकिरण किरणों (पभा) से घिरे हुए, जो चारों ओर फैली हुई हैं (समोत्थाटो)।

वह एक सांत्वनादाता (असासेटा) था।

चंद्रमा को, प्रकाश उत्पन्न करने वाले की तरह

सूर्य, अग्निशामक (निब्बापेट) समान

वर्षा करने वाला, और गुणों का निर्माता (गुण)

समुद्र के समान।

उनके नैतिक उपदेशों (सीला) के साथ, जैसे

पृथ्वी (धारणी), एकाग्रता

हिमवा के समान, समान ज्ञान से युक्त

आकाश के लिए, अलगाव (असांगो) आकाश (एनिलो) के समान।

उस समय, मैं एक महान

प्रचुर मात्रा में नकदी और अनाज वाले परिवार के साथ,

इसमें विभिन्न प्रकार के रत्नों का अच्छा संग्रह है।

नेता के पास पहुँचकर (उपेक्का)

संसार का वह व्यक्ति जो उसके साथ बैठा था

बड़े दल के साथ, मैंने सुना

सत्य (धम्म) की शिक्षा जो

अमर अवस्था से मिलता जुलता था (का

(निब्बाना) जो मनभावन (मंचराम) है।

वह बत्तीस प्रमुख उपाधियों का धारक था।

चंद्रमा के समान दिखने वाले चिह्न (लक्खण)

अपने चंद्र नक्षत्रों (नक्खत्ता) के साथ;

उनमें लघु दोष (अनुभ्यांजन) थे।

संप्रभु सत वृक्ष के समान जो

खिल उठा था।

प्रकाशमान जाल से घिरा हुआ

किरणें (रंसी), वह सोने के समान चमकता था

उनके द्वारा घिरा हुआ पर्वत (कनाकाचलो)

एक फ़ैदम माप की किरणें विकीर्ण करना

(ब्यामप्पभा) सूर्य के समान (दिवाकरा)

सौ तेजस्वी किरणों (रंसी) का

स्वर्ण चेहरे का उत्कृष्ट विजेता

(आनन) एक पर्वत (सिलुकाया) की तरह था

महिला संन्यासिनियों (समाणी) का; उनका हृदय

वह दया और अपने गुणों से परिपूर्ण था।

यह समुद्र जैसा दिखता था।

वह विश्वव्यापी (लिकाविस्सुता) में से एक थे।

प्रतिष्ठा (किट्टी) सिनेरू के समान,

पर्वतों का स्वामी। वह था

वह नायक जिसने स्वयं को व्यापक रूप से फैला दिया था

यश (यसा), आकाश के समान ऋषि।

उसका मन हर जगह विरक्त था,

नेता आकाश के समान था; ऋषि

सबसे अच्छा (सट्टामो) पृथ्वी के समान।

सांसारिक चीजों से अछूता (अनुपालित)

मामले (लोकेना) लुटस के समान

वह जल जलाने वाला (दहानी) था

बुरी धारणाओं (कुवादा) की झाड़ी (गच्छा);

वह आग के एक विशाल पिंड की तरह चमक रहा था।

हर जगह औषधि के समान, वह था

वह दुराचार (किलेसा) का नाश करने वाला है।

उसे अभिषेक किया गया (विभूसितो)

गुणगंध की मीठी सुगंध

गंधमा की पत्थर की पहाड़ी के समान-

दाना.

नायक गुणों का भंडार (आकारो) था।

(गुण); वह रत्नों के सागर के समान था-

रत्न। सिंधु नदी की तरह।

घने जंगल की रेखा, वह था

अशुद्धता और दुराचार को दूर ले जाने वाला

(किलेसा).

वह तो केवल मारा का विजेता था।

विजयी महान युद्ध के समान सेना

योद्धा; वह तत्कालीन शासक था।

ज्ञानोदय के तत्वों (बोझझंग) में से,

वह रत्न (रत्न) जो उससे मिलता-जुलता हो

विश्व-राजा।

वह एक चिकित्सक थे जो घृणा का इलाज करते थे।

(डोसा) और रोग (ब्याधि) के समान

एक महान चिकित्सक। वे एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने

घाव (गण्ड) को फाड़ देना (विफालको)

गलत दृष्टिकोण (दिट्ठी) के समान

सर्जन डॉक्टर (sallakattovejjo)

वह विजेता, जो प्रकाशमान दीपक है

लोकपज्जोत (विश्व), मनुष्यों द्वारा सम्मानित

और दिव्य प्राणी (सनारमरसक्कतो),

सभी श्रोताओं के बीच मनुष्य-योग, सिखाया गया

सत्य (धम्म)।

उन्होंने इस प्रकार निर्देश दिया: रथ भेंट करने के बाद

व्यक्ति अत्यंत धनी हो जाता है; साधनों के द्वारा

नैतिक उपदेश के मार्ग पर चलकर व्यक्ति उत्कृष्टता की ओर अग्रसर होता है।

अस्तित्व; व्यक्ति शांत और स्थिर हो जाता है

(निब्बाति) ध्यान (भावना) विकसित करके।

(सभी श्रोताओं ने वह सुना)

शिक्षण जो संतोषजनक रूप से मधुर था

(अस्सादा), आरंभ में सुंदर, मध्य में

और अंत जो अमर के समान था

ambroisia (mahārasam).

उस अत्यंत मधुर सत्य को सुनकर

(धम्म) मैं इससे अत्यंत प्रसन्न हुआ

विजेता का विधान; चले जाने के बाद

मैंने सुगत को अपना आश्रय (सरणं) बनाया।

मैंने अपनी शरण (सरनं) बनाई, और उसी में मैंने अपनी आराधना की।

मैं जीवन भर उसी का भक्त रहूंगा।

फिर मैंने भूमि (महिं) को ढेर कर दिया

ऋषि के सुगंधित कक्ष में ढेर लग गया

चार प्रकार के प्राकृतिक परफ्यूम के साथ

मैंने महीने में आठ दिन का संकल्प लिया।

मीठी सुगंध होने की स्थिति के कारण,

मेरे शरीर को सुगंधित करने के लिए।

फिर विजेता ने मेरे बारे में भविष्यवाणी की।

सुगंधित शरीर का लाभ।

क्योंकि उसने सुगंधित भूमि को ढेर कर दिया था

एक बार इत्र से भरे कक्ष के परिणामस्वरूप

वह कर्म, उत्पन्न होने पर

इधर-उधर, यह आदमी बन जाएगा

उसके पूरे शरीर से मीठी सुगंध फैली हुई थी;

इससे जुड़ जाने के कारण

वह मधुर सुगंध के गुण से निर्वाण में प्रवेश करेगा

संक्रमण रहित (आसवा)।

उस अच्छे कार्य के कारण और

इच्छाशक्ति और स्वयं के संकल्पों के कारण,

मैंने अपना मानव शरीर त्याग दिया और चला गया

तावतिमसा.

अब (मेरे) अंतिम जन्म में, मेरा जन्म हुआ।

एक ब्राह्मण (विप्पा) परिवार में; जब मैं रह रहा था

मेरी माँ के गर्भ में, उसका शरीर मधुर हो गया

सुगंधित।

जब मैं दोबारा अपनी माँ के गर्भ से बाहर आया,

तब सावत्थी नगर में हवा बहने लगी।

मानो सभी प्रकार की चीजों से व्याप्त हो

इत्र।

फूलों की वर्षा सुगंधित थी (सुरभि)।

दिव्य सुगंध से भरपूर और हृदय को आनंदित करने वाला।

अत्यधिक महंगी धूपबत्ती की हवा

लगातार हवा चलती रही (तवादे)।

जिस घर में मेरा जन्म हुआ, वहाँ दिव्य प्राणी मौजूद थे।

इसे मीठी सुगंध से भर दिया; उनमें वह बात थी।

घर में तरह-तरह के परफ्यूम की मीठी खुशबू आ रही थी।

और फूलों की अगरबत्ती।

जब मैं अपनी युवावस्था के पहले दिनों में एक नन्हे बच्चे के रूप में खड़ा था

अच्छा बालक, तो फिर, मनुष्यों का सारथी।

ब्राह्मण को वश में करके और अनुशासित करके

सेला और उसके साथी शहर में आए।

सावत्थी उन सभी से घिरी हुई थी।

बुद्ध की शक्ति को देखने के बाद,

मैं भिक्षु बन गया।

इस प्रकार के चार प्रकार विकसित करने के बाद

कर्म (धम्म) नैतिक उपदेशों (सीला) के रूप में

एकाग्रता (समाधि) और ज्ञान (पन्ना)

साथ ही अतुलनीय मुक्ति

(विमुक्ति), मैंने अरहंत पद प्राप्त किया

घाव समाप्त हो गए।

जब मैं भिक्षु बना, और जब मैं बना

एक अरहंत के साथ-साथ जब मुझे प्रवेश करना था

निब्बाना, फिर वहाँ मीठी सुगंध थी

बारिश की बौछार।

मेरे शरीर की मीठी खुशबू हमेशा से ही

यह अत्यंत उत्कृष्ट (atiseti) था।

अत्यधिक योग्य चंदन की लकड़ी, चंपक (कैंपका)

और सफेद कमल (उप्पला); लेकिन इसी प्रकार थे

अन्य परफ्यूम भी हर लिहाज से बेहतर हैं।

वह जगह इस ओर और वह जगह मैं

मेरी (सुगंधित) हवा बहने लगी

(vāyāmi) जबरदस्ती (pasayha).

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी।... बुद्ध का

निर्देशों का पालन किया जा चुका है।

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने विधर्मियों के बीच संन्यासी बनने के बाद आत्म-यातना (अत्तकिलमथा) के अभ्यास (अनुयोग) से जुड़े कष्टों और भिक्षु बनने के बाद प्राप्त ध्यान आदि के आनंद पर विचार किया और अपने स्वयं के उचित कर्मों पर चिंतन (मुखेन) के माध्यम से अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए इन पांच श्लोकों का कथन किया।

320. "एक आदमी, जो वह करना चाहता है जो उचित है

काम पूरा हो गया, उसने अभ्यास में खुद को लगा दिया

जिसे उसे समर्पित नहीं करना चाहिए (अयोगे)।

यदि वह (इस प्रकार) आचरण करता है, तो

कोई उपलब्धि हासिल नहीं की; यह भिक्षु का काम है

मेरे दोष (दुब्भाग) का।

321. कामवासना आदि जैसी बुराइयों से ग्रसित होने के कारण

(अघा) ने (अब्बुल्हा) को हटाया और पराजित किया

(विजिता), यदि कोई (पूरी तरह से) त्याग दे

(ओस्साजेय्या) एक (लगन) क्योंकि

अकेले रहने पर, कोई बदकिस्मत जैसा होगा।

मन (कली); यदि कोई सब कुछ त्याग दे तो भी

ऐसा करने से व्यक्ति अंधे व्यक्ति के समान हो जाएगा।

यह न देख पाना कि क्या समतल है और क्या नहीं।

नहीं (समाविसमा)।

322. "वास्तव में, व्यक्ति को वही कहना चाहिए जो वह करना चाहेगा;

जो काम हम नहीं करेंगे, उसे नहीं कहना चाहिए।

बुद्धिमान लोग यह बात पूरी तरह समझते हैं कि किसी को क्या कहना चाहिए।

नहीं कर रहा है।

323. "जैसे एक जीवंत (रुचिरं) फूल,

रंग से युक्त लेकिन मिठास से रहित

गंध, उसी प्रकार शब्द भी हैं-

कही गई बातें, करने वाले के लिए व्यर्थ हैं।

उन्हें व्यवहार में न लाएं (अकुब्बातो)।

324. "एक सुंदर फूल के अनुसार,

रंग और मीठी सुगंध का, उसी में

शिष्टाचार अच्छे से बोले गए शब्द हैं; वे

जो व्यक्ति इन्हें व्यवहार में लाता है, उसे लाभ होता है।

वहाँ, 'अयोगे' का अर्थ है: दो चरम सीमाएँ (अन्त) जिनमें संलग्न नहीं होना चाहिए, जिनकी सेवा नहीं करनी चाहिए; हालाँकि, इसका अर्थ आत्म-यातना (अत्तकिलमथा) में संलग्न होने (अनुयोग) के रूप में समझा जाना चाहिए। 'युञ्जं' का अर्थ है: स्वयं को उसमें बांधना और उसमें प्रवेश करना (पटिपज्जन्तो)। 'किच्चमिच्चको' का अर्थ है: कल्याण (हित) लाने के लिए जो किया जाना चाहिए उसे करने की इच्छा रखना (वहं); 'चरं' का अर्थ है: ऐसे लोगों का होना जो इसके विपरीत (तप्पटिपक्खतो) उन कार्यों में संलग्न होते हैं जिनमें संलग्न नहीं होना चाहिए (अयोगे); 'नाधिगच्छेय्या' का अर्थ है: व्यक्ति अपने इरादे के अनुसार कल्याण और सुख प्राप्त नहीं करेगा (अधिप्पेतं); इस प्रकार, इसे समझा जाना चाहिए (नायो)। इसलिए, विधर्मियों के मत (मता) से भ्रमित होकर मैंने जो कुछ भी किया, वह मेरे लिए अयोग (अतिरिक्त कार्यों) का विषय था; taṃ me dubhagalakkhaṇaṃ का अर्थ है: यही मेरे दोष (अपुञ्ञसभावो) का स्वरूप है। वह इस प्रकार समझाते हैं: "अपने पूर्व कर्म (कम्म) से भ्रमित होकर, मैंने उन कार्यों में स्वयं को संलग्न किया जो अयोग (अतिरिक्त कार्यों) के लिए समर्पित नहीं होने चाहिए।"

अब्बूल्हं अघगतं विजितं का अर्थ है: कामवासना (राग) और इसी प्रकार के अन्य दोष, जो हानि पहुँचाने वाले स्वभाव (विबाधन) के कारण पीड़ादायक कष्ट (अघा) कहलाते हैं; पीड़ादायक कष्ट (अघानी) स्वयं दुर्भाग्य (अघा) की स्थिति में पहुँचने का कारण बनते हैं; दुर्भाग्य (अघा) की स्थिति में पहुँच चुके लोगों का बार-बार पुनर्जन्म (संसार) में घटित होना (पवत्ति); इन पर विजय (विजयो) अच्छे कर्मों (कुसलधम्म) द्वारा प्रबल (अभिभावो) होना है। इसे "अघगतं विजितं" कहा गया है, बिना संबंधित अनुनासिकलोपं के लोप के; जिसके द्वारा इसे दूर (अब्बूल्हं) और वश में (अनुद्धतं) किया गया था; इस प्रकार, पीड़ादायक कष्ट (अघा) को दूर करने वाली इस पर विजय प्राप्त करने के बाद। स्वयं को दुराचार (किलेसा) के रूपों से मुक्त किए बिना (असमुच्चिन्दित्वा); यही अर्थ है। एकाञ्चे ओसज्जेय्या का अर्थ है: यदि वह साथी न होने (दुतिया) और कठिन परिश्रम (पधाना) के कारण परिश्रम या उचित प्रयास (सम्मापयोग) को पूरी तरह से त्याग दे (परिच्चजेय्या), तो वह व्यक्ति काले कान वाले अपशगुन के समान हो सकता है। सब्बानी पि चे ओस्सजेय्या का अर्थ है: यदि वह सभी के उद्धार (विमुक्ति) के लिए परिपक्वता (परिपाचक) लाने वाले सत्त्व, परिश्रम (विरिया), सति, एकाग्रता (समाधि) और ज्ञान

(पञ्चिन्द्रियानी) का त्याग कर दे। अंधो व सिया समविसमस्स अदस्सनतो का अर्थ है: यदि वह भावना के विकास के अभाव में इनका त्याग (चड्डेय्य) कर दे, तो वह मार्ग के समतल और असमान भागों को न देख पाने के कारण अंधे के समान हो जाएगा।

यथा शब्द का प्रयोग उचित प्रस्तुतिकरण (संपटिपादन) के अर्थ में किया जाता है। रुचिरं का अर्थ है सुंदर (शोभनं)। वण्णवंतं का अर्थ है: गंधहीन (गंधरहिता), जिसे अत्यंत शुभ पाली भद्दक फूल, गिरिकण्णिका और जयसूमन फूल आदि के रूप में वर्गीकृत किया गया है। एवं सुभासिता वाचा का अर्थ है: बुद्ध की शिक्षाओं के तीन पिटक (वचन), जो अच्छे रंग और आकार वाले फूल (संथन) के समान हैं, सुविचारित वचन कहलाते हैं: जिस प्रकार गंधहीन फूल अपने धारणकर्ता के शरीर पर अपनी सुगंध नहीं फैलाता, उसी प्रकार जो व्यक्ति आदरपूर्वक (सक्कच्च) सुनी हुई बातों के अनुरूप स्वयं को (समाचरति) नहीं ढालता, वह भी ऐसा ही करता है। जब वह स्वयं वहाँ आदरपूर्वक (सक्कच्चं) अपेक्षित आचरण के अनुरूप कार्य नहीं करता; ऐसा न करने के कारण वह विद्या की मधुर सुगंध (सुत) और उचित कर्म (पटिपत्ति) की गंध (गन्ध) धारण नहीं कर पाता; यह निष्फल हो जाता है। अतः कहा गया है: "एवं सुभासितावाचा स्फला होति अकुब्बतो (इस प्रकार, कर्म न करने वाले के लिए सुविचारित वचन भी निष्फल हो जाता है)।

सुगंधकम् का अर्थ है: चमेली (सुमन), चंपक (चंपक), नीला कमल (नीलुप्पल) आदि जैसे विभिन्न प्रकार के फूल। एवं का अर्थ है: जिस प्रकार उस फूल को धारण करने वाले व्यक्ति के शरीर पर मधुर सुगंध फैलती है, उसी प्रकार जो कोई भी वहाँ उचित कार्य करता है, जो उसने आदरपूर्वक सुना है, और इसी प्रकार बुद्ध के वचनों के तीन पिटक माने जाने वाले सुगठित शब्दों का पालन करता है, उस व्यक्ति के लिए (सुगठित शब्द) फलदायी होते हैं; यह प्रचुर मात्रा में फलदायी और अत्यंत लाभकारी होता है, क्योंकि इसमें ज्ञान (सुत) की मधुर सुगंध और उचित कर्म के सुगंध का समावेश होता है। इसलिए, व्यक्ति को अपने जीवन को निर्देशानुसार व्यवस्थित करना चाहिए और जो कहा गया है उसके अनुरूप कर्ता बनना चाहिए। शेष बातें तो बस इसी प्रकार हैं जैसा कहा गया है।

थेरा सुभूत के श्लोक पर की गई टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(200):गिरिमानंद

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (200) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
200. गिरिमानंद
बुद्ध युग में राजगृह में राजा बिम्बिसार के पुरोहित के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम गिरिमानंद रखा गया। उन्होंने राजगृह में आयोजित सभा में भगवान बुद्ध की शक्ति और महिमा को देखा और भिक्षु बन गए। अपनी पढ़ाई के दौरान वे कुछ समय एक गाँव में रहे, फिर भगवान बुद्ध को प्रणाम करने के लिए वापस गाँव आए। महाराजा बिम्बिसार को उनके आने की सूचना मिली और वे उनके पास जाकर बोले: 'हे पूज्यवर, आप यहीं निवास करें; मैं आपकी आवश्यकताओं की पूर्ति करूँगा।' लेकिन अपने व्यस्त कार्य में व्यस्त होने के कारण वे भूल गए, इसलिए थेरा खुले में रहने लगे। मौसम के देवताओं ने थेरा को भीगने के डर से वर्षा रोक दी। तब राजा ने सूखे को देखते हुए उनके लिए एक आश्रम बनवाया। और थेरा अपनी कुटिया में आश्रय लेकर, अपनी पूरी शक्ति और शांति का संयोजन करते हुए, अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। फिर, इसके आगमन से प्रसन्न होकर, उसने ऊपर से वर्षा होते हुए 'अञ्ञा' (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[325] वस्सति [38] देवो यथा सुगीताm॥
चन्ना मे कुतिका सुख निवाता,॥
तस्सं विहारमि वुपासन्तो॥
अथ वे पथयसि पवस्सा देवा॥ ॥

[326] वस्सति देवो यथा सुगीतौ॥
चन्ना मे कुतिका सुख निवाता,॥
तस्सं विहारमि संतचित्तो॥

अथ वे पथयसि पवस्सा देवा॥ ॥

[327] वस्सति देवो यथा सुगीताm॥
चन्ना मे कुतिका सुख निवाता,॥
तस्सं विहारमि वीतरागो॥
अथ वे पथयसि पवस्सा देवा॥ ॥

[328] वस्सति देवो यथा सुगीतौ॥
चन्ना मे कुतिका सुख निवाता,॥
तस्सं विहारमि वीतदोसो॥
अथ वे पथयसि पवस्सा देवा॥ ॥

[329] वस्सति देवो यथा सुगीतौ॥
चन्ना मे कुतिका सुख निवाता,॥
तस्सं विहारामि वीतमोहो॥
अथ वे पथयसि पवस्सा देवा॥ ॥

[325] हे ईश्वर, मधुर संगीत की तरह वर्षा करो।
मेरी छोटी सी झोपड़ी आरामदायक, सुरक्षित और अच्छी छत वाली है।
उसमें मैं शांत और स्थिर हृदय से रहता हूँ।
हे ईश्वर, यदि आपको वर्षा करना अच्छा लगे, तो वर्षा करो!

[326] ईश्वर ऐसी वर्षा करता है मानो कोई मधुर धुन हो।
मेरी छोटी सी झोपड़ी आरामदायक, सुरक्षित और अच्छी छत वाली है।
मैं उसमें रहता हूँ और मेरे हृदय में शांति है।
अब, इत्यादि।

[327] [193] मैं उसमें रहता हूँ, सारी वासनाएँ दूर हो जाती हैं
।

[328] मैं जिस जीवन में रहता हूँ, उसमें सारी घृणा दूर हो जाती है
।

[329] मैं उसमें रहता हूँ, सारी त्रुटियाँ दूर हो गईं।
अब हे ईश्वर, यदि आपको वर्षा करना अच्छा लगे, तो वर्षा करो! [1]

[1] तुलना करें I. और LI.-LIV. एक लापरवाह परोपकारी संरक्षक के इन संदर्भों में इतनी एकरूपता है कि छह कविताएँ और उनकी किंवदंतियाँ व्यक्तिगत वैधता खो देती हैं।

5.3 [200] गिरिमानन्दथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
वस्सती देवो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा गिरिमानंद का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, सुमेधा बुद्ध के समय में एक गृहस्थ परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ; वयस्क होने पर, वे गृहस्थ जीवन व्यतीत कर रहे थे, जब अपनी पत्नी और पुत्र की मृत्यु पर वे शोक के बाण (शोकसल्ला) से क्षत-विक्षत हो गए, वन में प्रवेश किया, और वहाँ जब गुरु ने सत्य (धम्म) का उपदेश देने के बाद उनके शोक के बाण (अब्बूढ़े) को निकाला, तो वे श्रद्धापूर्वक उन्हें सुगंधित फूल अर्पित किए, पाँच प्रकार से पृथ्वी को स्पर्श करके (पंचपतिठित) उन्हें प्रणाम किया, अपने हाथों को सिर पर रखकर उनकी स्तुति की।

उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने अपने बार-बार के जन्मों में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और राजा बिम्बिसार के पुरोहित (पुरोहित) के पुत्र के रूप में राजगृह में पुनर्जन्म लिया, जब बुद्ध प्रकट हुए। उनका नाम गिरिमानद था। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके थे, तब उन्होंने बुद्ध की शक्ति के दर्शन किए, जब गुरु राजगृह पहुँचे थे। उन्होंने उचित श्रद्धा धारण की, भिक्षु बन गए और अपने भिक्षु कर्तव्यों का पालन करते हुए कुछ दिनों तक एक गाँव के मठ में निवास किया और गुरु को प्रणाम करने के लिए राजगृह गए। महान राजा बिम्बिसार ने उनके आगमन की सूचना पाकर थेरा के पास जाकर उन्हें इस प्रकार आमंत्रित किया: "आदरणीय महोदय! यहीं निवास कीजिए; मैं संन्यासी के चार आवश्यक कार्य करके आपकी सेवा करूँगा।" वे चले गए और अत्यधिक व्यस्तता के कारण अपना वादा भूल गए। मन ही मन यह कहते हुए कि "थेरा खुले आकाश में निवास करते हैं," देवताओं ने वर्षा को रोक दिया, ताकि थेरा के भीगने का कोई खतरा न रहे। राजा ने वर्षा न होने का कारण जानकर (सल्लक्खेत्वा) थेरा के लिए एक कुटिया बनवाई। कुटिया में निवास करते हुए थेरा को निवास की अनुकूलता (सप्पाय) प्राप्त हुई, जिससे उन्हें स्थिरता (समाधान) मिली। उन्होंने सीधा (समा) प्रयास किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने में तत्परता से लगे रहे और अरहंतत्व प्राप्त किया। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"मेरी पत्नी मर चुकी थी; मेरा बेटा चला गया था।"

कब्रिस्तान तक; मेरी माँ, पिता

और भाई की मृत्यु हो गई थी; वे

एक ही चिता पर अंतिम संस्कार किया गया।

उस शोक से पीड़ित (संतात्तो)

मैं दुबला-पतला और पीला पड़ गया।

मेरा दिमाग मनोविक्षिप्त (खेपा) हो गया था,

उस दुख से पीड़ित रहा हूँ।

तीर से भेदा गया (parato)

दु:ख में डूबकर, मैं भीतरी भाग की ओर बढ़ा।

वन (वनंतम्); निर्वाह करने वाला

(भुंजित्वा) गिरे हुए (पवत्ता) फलों पर

मैं एक पेड़ की तलहटी में रहता था।

स्वयंजागृत उस बुद्ध का नाम

सुमेधा, वह विजेता जो सबको हरा सकता था

कष्टदायक पीड़ा (दुक्खा) का अंत;

मुझे ऊपर खींचने की इच्छा रखते हुए

(उद्धरितुकामो), मेरे समक्ष आया।

आवाज सुनकर

महान ऋषि के पदचिह्न (पाद)

सुमेधा, मैंने ऊपर उठाया (पग्गहेत्वना)

मैंने अपना सिर ऊपर उठाया और महान की ओर देखा

समझदार।

जब महान नायक मेरे पास पहुंचा

(उपागेट), मेरे भीतर उत्साह (पिति) उत्पन्न हुआ;

उसके बाद मेरा मन एकाग्रचित्त हो गया।

उस विश्व नेता से मुलाकात करने के बाद।

मुझे उचित रूप से इस बात की जानकारी हो जाने के बाद,

मैंने मुट्ठी भर मुट्ठी (मुट्ठी) भेंट की।

पत्तों का (पॗ ...

भगवान, आंखों के स्वामी-

दृष्टि करुणावश बैठ गई (के लिए

मुझे)।

विश्व के नेता बुद्ध सुमेधा

वहाँ बैठने के बाद मुझे यह सिखाया गया

वह सत्य (धम्म) जिसने (विनोदन) को दूर किया

मेरे दुख का तीर।

वे बिना बुलाए (अनावहिता) वहाँ से आए थे;

बिना किसी अनुमति के (ananuññātā) वे

वे यहाँ से चले गए थे; उनके पहुँचने के अनुसार,

इसी प्रकार वे चले गए थे (गता); क्या

क्या विलाप करना चाहिए?

और साथ ही राहगीरों (पथिका) के अनुसार

जब बारिश मूसलाधार होती है, तो जीवित प्राणी

इसकी बौछारें, उनके सामान के साथ (भंडा)

उस आश्रय स्थल की ओर बढ़ें जहाँ बारिश न हो।

बौछार: हालाँकि, जब बारिश नहीं होती

लंबी बौछार (ओरामाइट), वे आगे बढ़ते हैं

(अपनी यात्रा के साथ) जैसे और जब चाहें;

इसी प्रकार, अपनी माँ और

पिताजी; फिर विलाप करने की क्या आवश्यकता है?

आने वाले (आगंटुका) मेहमान अस्थिर होते हैं

अस्थिर और कांपते हुए; उसी तरह, हैं

तुम्हारे माता-पिता; कितना विलाप!

क्या वहां होना चाहिए?

जैसे ही एक साँप अपने पंख फैलाता है

इसकी पुरानी, घिसी-पिटी, पपड़ीदार त्वचा (टाका) में

इसी प्रकार अपने माता-पिता से भी करवाएं;

वे अपने शरीर (तनु) को यहीं त्याग देते हैं।

यह समझने के बाद (अञ्ञाय) कि

बुद्ध ने शिक्षा दी (गिरा), मैंने उससे परहेज किया।

मेरे दुःख के तीर से;

इससे (जनायित्वाना) प्रसन्नता उत्पन्न हुई,

मैंने सर्वश्रेष्ठ बुद्ध को नमन अर्पित किया।

महान व्यक्ति को श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद

मैंने अपना श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया।

शाखाओं वाले पुष्प डंठल की भेंट

(मंजरी) पर्वत (गिरि) की, सुगंधित

दिव्य सुगंध, नेता सुमेधा के लिए

दुनिया के।

मैंने श्रद्धापूर्वक भेंट अर्पित कर दी है

आत्मजागृत बुद्ध, और मैंने अपना

मैंने अपने हाथों को अपने सिर पर रखकर, अपना

विश्व के नेता की प्रशंसा,

उनके सर्वोत्कृष्ट गुणों पर चिंतन करते हुए।

हे महान वीर! हे सर्वज्ञ नेता!

हे महान ऋषि! आपने संसार को बदल दिया है!

(संसार के सागर को) पार किया; तुम खींचते हो

सभी जीवित प्राणियों को (उद्धरसी)

संसार के सागर) के माध्यम से

ज्ञान। हे महान ऋषि! आप प्रभावी रूप से

मेरे संदेह और दुविधा (द्वेलहक) को दूर करो;

आपने मुझे सही रास्ते पर चलने के लिए प्रेरित किया।

(मग्गा) आपके ज्ञान के माध्यम से,

हे दृष्टिवान (चक्खुमा);

अरहंत वे योग्य व्यक्ति हैं जिन्होंने प्राप्ति की है।

अत्यधिक शक्तिशाली स्वामी (वासी)

(इद्धिका) छह प्रकार के सुपर के साथ-

ज्ञान (अभिञ्ञा), दृढ़ बुद्धिमान

जो आकाश में विचरण करते हैं

आप निरंतर (तावड़े)। शिक्षार्थी

(सेखा) जिनके कार्य उचित हों

(पटिपन्ना), वे शिष्य जो पालन करते हैं

उनकी सफलता आपके साथ है। जैसे

सूर्योदय के समय कमल (सूर्योदय), आपका

शिष्य सचमुच फलते-फूलते हैं।

हे दृष्टिवान (चक्खुमा),

अविचलित (अक्खोभो) हैं, जो समान हैं।

विशाल महासागर, अद्वितीय होने के साथ-साथ

अतुलनीय; से संपन्न होना

इस प्रकार ज्ञान प्राप्त करने से, आप

अतुलनीय। अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद

विश्व के विजेता को,

अच्छी दृष्टि वाला, प्रसिद्धि से परिपूर्ण,

मैं विपरीत दिशा में चला गया

सुगंधित कक्ष (paṭikuṭito) का

विभिन्न (पुथु) दिशाओं की आराधना करना।

दिव्य शक्ति से विदा होने के बाद

मैं अपनी माँ की दुनिया में उतर गया।

गर्भ, सोच-समझकर (संपजानो) और उपयुक्त रूप से

जागरूक (patissato), अच्छी तरह से चल रहा है

ये और वो, छोटे-बड़े सभी प्रकार के अस्तित्व।

घर से बाहर निकलते ही मैं

एक बेघर भिक्षु; उत्साही (अतापी) परिपक्व

(निपाको) और ध्यानमग्न (झायी) मैंने समर्पित किया

मैं स्वयं (गोकारो) एकांतवास (पटीसल्लाना) में।

मैंने अपना अथक प्रयास किया (पधानां)

पदहित्वान) और महान ऋषि को संतुष्ट किया।

मैं हमेशा इधर-उधर भटकता रहता था जैसे

चंद्रमा बादलों के समूह से मुक्त।

मुझे लगातार एकांतवास में रखा गया था।

शांत (उपसंतो) और नियंत्रित (निरुपधि);

सभी दोषों को पूरी तरह से समझ लेने के बाद, मैं

आसव (कैंसर) से मुक्त रहना। यह था

तीस हजार युग पहले, मैंने ऐसा किया था

मैंने श्रद्धापूर्वक बुद्ध को अपनी भेंट अर्पित की;

मुझे किसी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यह

यह मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम है।

पेशकश।

मेरी दुष्टता जलकर राख हो गई थी।... बुद्ध का

निर्देशों का पालन किया जा चुका है।

फिर, जब बारिश इतनी ज़ोर से बरसने लगी मानो वह थेरा के अरहंत पद प्राप्त करने से प्रसन्न और आनंदित हो रही हो, तो उन्होंने अपनी अरहंतता को प्रकट करने के लिए पाँच श्लोक कहे, ताकि बारिश को और अधिक बरसने के लिए प्रेरित किया जा सके (उपरी)।

325. "बारिश अपनी बौछारें बरसा रही है

सुगीतम् (अच्छी तरह से गाया गया)। मेरी कुटिया है

छत से ढका होने के कारण यह आनंददायक और हवा से मुक्त है।

(निवेट); शांत भाव से संयमित (वुपासन्त)

मैं वहीं निवास करता हूँ, हे वर्षा! क्या तुम

इच्छा, अपनी बौछार को बहने दो।

326. बारिश अपनी बौछारें बरसा रही है

सुगीतम् (अच्छी तरह से गाया गया)। मेरी कुटिया है

छत से ढका हुआ; यह आनंदमय और मुक्त है

हवा; शांत मन से, मैं वहाँ निवास करता हूँ।

तो, हे वर्षा! यदि तुम ऐसा चाहो तो...

इससे आपका शॉवर नीचे गिर सकता है।

327. "बारिश अपनी बौछारें बरसा रही है;..."

मैं कामवासना से मुक्त (राग) होकर वहाँ निवास करता हूँ;

...

328. बारिश अपनी बौछारें बरसा रही है;...

मैं क्रोध और घृणा से मुक्त होकर वहां निवास करता हूं;

...

329. बारिश मूसलाधार बरस रही है;...

मैं वहां भ्रम से मुक्त होकर निवास करता हूं;

ओ बारिश! अपनी बौछार बरसाओ

यदि आप ऐसा चाहें।

वहाँ यथासुगीतं का अर्थ है: अच्छे गायन (सुगीता) के अनुरूप (अनुरूपं); यहाँ तक कि उत्कृष्ट वर्षा के गीत के अनुरूप (अनुरूपं); यही अर्थ है। वास्तव में, बादल से भरा आकाश सुंदर (शोभति) नहीं लगता, जब तक कि वह बिना गरज के लगातार वर्षा करता रहता है; इस प्रकार, यद्यपि बादल सौ-हजार परतों (पटल) में उत्पन्न हुआ हो, चाहे वह गरज और दहाड़ रहा हो, और यद्यपि लतानुमा बिजली चमक रही हो, फिर भी वर्षा के बिना वह सुंदर नहीं लगता; वर्षा अपने वास्तविक स्वरूप के अनुरूप हो गई है; यद्यपि वर्षा बलशाली है; इसलिए कहा गया है: "वस्सति देवो यथा सुगीतं।" अतः उन्होंने कहा: "अबित्थनय पज्जुन्न (हे वर्षा! गरज हो);" और "गज्जिका च'एव वस्सिता च (गरज के साथ-साथ वर्षा भी हुई)।" तस्संविहारमि का अर्थ है: मैं उस कुटिया में श्रेष्ठ (आरिया) जीवन (विहार) के आभास (गब्बेण) में निवास करता हूँ और उचित मुद्राओं (इरियापथ) के जीवन का आनंद लेता हूँ। वूपसन्तचित्तो का अर्थ है: शांत मन से, लेकिन सर्वोच्च फल की एकाग्रता (समाधि) के साथ।

बादलों से घिरे आकाश के युवा देवता ने, अपना वचन देते हुए, थेरा द्वारा इस प्रकार कई बार किए गए आग्रह (उय्योजना) को अपने सिर के माध्यम से स्वीकार करते हुए, अपनी प्रचुर वर्षा को बरसाया जिससे निचली भूमि और शुष्क भूभाग भर गया।

थेरा गिरिमानंद के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(201):सुमना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (201) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
201. सुमाना
बुद्ध युग में कोसल के एक साधारण परिवार में पुनर्जन्म लेकर सुमना नाम से उनका पालन-पोषण सुखमय परिस्थितियों में हुआ। उनकी माता के भाई अरहंत (ज्ञानी) बन गए और वन में रहने लगे। जब सुमना वयस्क हुए, तो उनके चाचा ने उन्हें भिक्षु दीक्षा दी और नैतिक आचरण का अभ्यास कराया। अंततः, जब उन्होंने चार ध्यान और पंचगुणी अभिज्ञा (आध्यात्मिक शक्तियों का उच्चतर ज्ञान) प्राप्त कर लिया, तो थेरा ने उन्हें अंतर्दृष्टि का मार्ग दिखाया, जिससे उन्होंने शीघ्र ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। जब वे अपने चाचा के पास गए और उनसे उनकी सफलता के बारे में पूछा गया, तो उन्होंने इस प्रकार घोषणा की:

[330] यं पत्थयानो धम्मेसु उपज्झायो अनुग्गहि,॥
अमाताऽ अभिकौंखंताऽ कटेऽ कट्टब्बाकाऽ मया.॥ ॥

[331] अनुप्पत्तो सच्चिकतो सयं धम्मो अनितिहो,॥
विशुद्धाणो निक्काण्खो व्यकारोमि तावंतिके॥ ॥

[332] पुब्बेनिवासः जानामि दिब्बाचक्खु विसोधितां,॥
सदत्तो मे अनुप्पत्तो कटं बुद्धस्स ससनं॥ ॥

[333] अप्पमत्तस्सा मे सिक्खा सुसुता तव सासने,॥
सब्बे मे असवा खीना नत्थि दानी पुनभभावो॥ ॥

[334] अनुसासि माऽ अरियावता अनुकंपि अनुग्गहि,॥
अमोघो तुयहमोवदो अन्तेवासिम्हि सिखितो' ति.॥ ॥

[330] जो मेरे शिक्षक चाहते थे कि मैं अच्छे सिद्धांतों में जानूँ
, और अपनी दया से
मुझे सिखाया, जो अमृत की लालसा रखता था:
अब, निर्धारित कार्य भी पूरा हो गया है।

[331] हाँ, धम्म मार्ग (मार्ग) को जीत लिया गया है और अनुभव किया गया है।
यहाँ तक कि मैंने स्वयं भी इसे 'इस प्रकार' नहीं सीखा है: [2] [194] शुद्ध ज्ञान मेरा है, हर संदेह दूर हो गया है।
मुझे आपके निकट खड़े होकर गवाही देने दीजिए:

[332] मैं पूर्व जन्मों के स्थान और समय को जानता हूँ,
और दिव्य दृष्टि स्पष्ट रूप से चमकती है;
मैंने परम अच्छाई, अर्हतत्व को जीत लिया है, [3] और बुद्ध हमें जो करने के लिए कहते हैं वह हो चुका है।

[333] मैंने अच्छी तरह से सीखा है, जिसने पूरी लगन से काम किया,
आपके शासन में विधि और प्रशिक्षण;
क्योंकि सभी मादक पदार्थ (अशुद्धियाँ/इच्छाएँ) दूर हो गए हैं;
अब कभी भी नया जीवन नहीं आता।

[334] हे महान पंथ, तूने मेरा मार्गदर्शन किया है।
हे दयालु, तूने मुझ पर कृपा की है।
तेरी शिक्षाएँ व्यर्थ सिद्ध नहीं हुईं।
कभी शिष्य था, अब निपुण हूँ।

[1] पृष्ठ 32, नोट 1 देखें। उनमें केवल आसवक्खया की कमी थी।

[2] धम्मो अनितीहो, सुत्त निपाता में एक पसंदीदा अभिव्यक्ति । फाउसबॉल के अनुवाद और टिप्पणियाँ देखें, श्लोक 934, 1052, 1065, 1080, 1083, 1134; तुलना करें मिज्जी., i. 520.

[3] सदात्तो ती अरहंत्ताṃ (टिप्पणी)।

5.4 [201] सुमनत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
यंपट्टयानो से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा सुमन का है। इसका उद्गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और पचानवे युग (कप्पा) पहले, बिना किसी बुद्ध वाले संसार में, एक गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने एक रोगग्रस्त मौन बुद्ध को देखा और उन्हें पीला हरितक भेंट किया। उस पुण्य कर्म के कारण, वे अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और जब यह बुद्ध प्रकट हुए, तब कोसल राज्य में एक धनी गृहस्थ परिवार (गहपतिकुल) में उनका पुनर्जन्म हुआ; सुमन नाम प्राप्त करके वे आनंदमय रूप से पले-बढ़े। उनके चाचा; हालांकि, भिक्षु बनने और अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, जब सुमना वयस्क हो गया, तो उन्होंने उसे भिक्षु बनाया और उसके आचरण के अनुरूप मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) (चरितानुकूला) दिया, जिससे उसकी उस कर्म के प्रति भक्ति (योगकम्मम्) विकसित हुई और उसे चार ध्यान और पांच गुना उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) प्राप्त हुआ। तब थेरा ने उसे आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने की विधि बताई; उसने भी धीरे-धीरे आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित की और कुछ ही समय में अरहंत पद प्राप्त कर लिया। इसलिए, अपदान में ऐसा कहा गया है।

मैंने स्वयं पीले मायरोबालन की व्यवस्था की।

एम्ब्लिक हरड़ (अमलका), आम,

यूजेनिया (जम्बू), बेलेरिक मायरोबालन;

(विभीतक), बेर फल (कोला),

भल्लातक (निशान लगाने वाला अखरोट) और फल

बिल्वा वृक्ष का।

वहाँ पहुँचने पर, मैंने देखा कि...

पर्वतीय ढलान पर ध्यानमग्न (झायी)

ध्यान में आनंद लेने वाले महान ऋषि

बिना किसी साथी के ऋषि, पीड़ित

बीमारी के साथ;

पीले मायरोबालन को अपने साथ ले जाने के बाद

मैंने इसे आत्मनिर्भर मौन व्यक्ति को अर्पित किया।

बुद्ध; ठीक उसी क्षण जब वे चबा रहे थे

उस औषधीय फल के सेवन से उसकी बीमारी ठीक हो गई।

(पासम्भी) वहीं और उसी समय (तावदे)।

वह मौन बुद्ध जिसने छुटकारा पा लिया था

उसकी जलन की बीमारी (दारथा) ने उसे

मुझे यह कहने के लिए धन्यवाद।

औषधीय फल का अर्पण, उसकी बीमारी

वह आशंका दूर हो गई थी।

चाहे आप दिव्य प्राणी बन गए हों

या कोई मनुष्य हो या किसी अन्य रूप में जन्मा हो

जन्म, आप हर जगह खुश रहें;

आपको कोई बीमारी न आए

यह सब कहने के बाद, आत्मनिर्भर

अजेय, स्वयंजागृत मौन

बुद्ध, दृढ़ बुद्धिमान, भयभीत होकर

आकाश, हंस सम्राट के समान

आकाश में।

क्योंकि पीले मायरोबालन की पेशकश की गई थी

मेरे द्वारा आत्मनिर्भर महान ऋषि को,

इस जन्म के बाद से आगे कोई और संतान उत्पन्न नहीं हुई।

मुझे इससे परेशानी होती है।

यह मेरा आखिरी जन्म है; यह मेरा अंतिम जन्म है।

अस्तित्व; त्रिविध ज्ञान (विज्जा)

कल्पना की जा चुकी थी; बुद्ध का निर्देश

कार्य संपन्न हो चुका था।

यह चौरानवे युग पहले की बात है, जब मैंने

फिर मैंने औषधि का अर्पण किया;

किसी भी बुरी सत्ता को याद मत करो; यह

यह चिकित्सा का एक सार्थक परिणाम है।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, एक दिन वे अपने मामा थेरा की सेवा करने के लिए उनके पास गए। थेरा ने उनसे उनकी उपलब्धि के बारे में पूछा। उस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने सिंह की गर्जना करते हुए इन पाँच श्लोकों के माध्यम से अपने अरहंत पद (अञ्ञा) का प्रकटीकरण किया।

330. "मेरे गुरु (उपज्जायो) ने मुझे एक

सत्यों में सहायक हाथ (अनुगही)

(धम्म) जो मैं चाहूँ (पत्थयानो);

अमरता प्राप्त करने की तीव्र इच्छा रखने वाला (अमता),

जो कुछ किया जाना चाहिए था वह किया जा चुका था।

मुझे।"

331. "सत्य (धम्म), जो आधारित नहीं है

सुनी-सुनाई बातों को विधिवत रूप से स्वीकार कर लिया गया था और

मैंने स्वयं इसकी कल्पना की है; मेरा ज्ञान है

मैं पूरी तरह से शुद्ध हूँ और मैं इससे मुक्त हूँ।

संदेह; मैं आपके सामने (स्वयं को) प्रकट करता हूँ

उपस्थिति।

332. "मैं अपने पूर्व निवासों को जानता हूँ, अपने दिव्य निवासों को जानता हूँ

आँख पूरी तरह से शुद्ध हो गई है; मेरी

मेरी अपनी इच्छा विधिवत रूप से साकार हो गई थी;

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

333. "उच्च नैतिक आचरण (सिक्खा)

मेरे उन लोगों में से जो मेहनती थे, उन्होंने

मुझे आपके विधान में ज्ञान प्राप्त हुआ (सुस्सुता)।

मेरे सारे घाव ठीक हो चुके थे;

अब कोई नया अस्तित्व नहीं है।

334. "आपने मुझे नियमों का पालन करने के लिए अनुशासित किया।"

उच्च नैतिक सिद्धांतों और व्यवहारों का;

मेरे प्रति सहानुभूति दिखाते हुए तुमने मुझे एक चीज़ दी।

मददगार हाथ। आपकी सलाह काम नहीं आई।

व्यर्थ ही रहा; आपके निवासी छात्र के रूप में

मैंने निम्नलिखित के पालन के साथ प्रशिक्षण लिया था:

उच्च नैतिक सिद्धांत और व्यवहार।

वहाँ, yaṃpatthayāno dhammesu, upajjhāyo anuggahi; amataṃ abhikankhaṃ का अर्थ है: मेरे गुरु ने मुझे सलाह देने के बहाने मेरी सहायता की, क्योंकि मैं अमर निर्वाण की तीव्र इच्छा रखता था; उन्होंने मेरी सहायता की, जो सत्य (धम्म) की कामना और चाह रखता था, जिसमें शांत भाव और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) जैसे निष्पाप कर्म (धम्म) शामिल थे। Kataṃ kattabbaṃ maya का अर्थ है: पूर्ण ज्ञान (परिज्ञा) आदि जैसी विभिन्न प्रकार की विधाओं में जो भी कर्म किए जाने चाहिए, उन्हें मैंने पूर्ण कर लिया है।

अनुपत्टो सच्चिकतो का अर्थ है: इसके बाद भी, सही मार्ग (मग्गधम्म) का चार गुना सत्य भी प्राप्त और अनुभव किया गया था। सयंधम्मो अनितिहो का अर्थ है: फल प्राप्ति के लिए किया गया कर्म (धम्म) और निर्वाण के लिए किया गया कर्म (धम्म) सुनी-सुनाई बातों पर आधारित नहीं है, न ही अस्पष्ट है, बल्कि स्वयं अपनी आँखों से देखा गया है; श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्ग) प्रकट हुआ, लेकिन संदेह को अच्छी तरह से दूर करने पर, "इतिहा, इति किता (ऐसा कहा गया है, ऐसा कहा गया है)" जैसे भावों के कारण ऐसा माना गया। इसी कारण उन्होंने कहा: "विशुद्धज्ञानो निक्कंखो" इत्यादि। यहाँ, विशुद्धज्ञानो का अर्थ है: वह पूर्णतः शुद्ध ज्ञान से युक्त थे, क्योंकि वे सभी दोषों से मुक्त थे। तावंतिके का अर्थ है: आपके निकट।

सदात्थो का अर्थ है: अरहंत पद। सिक्खा का अर्थ है: उच्च नैतिक उपदेशों आदि के अनुरूप अनुशासित आचरण। सुस्सुता का अर्थ है: प्रामाणिक ग्रंथों (परियत्ति) में पूर्ण ज्ञान और सही मार्ग में प्रवेश करने के ज्ञान से परिपूर्ण, उत्कृष्ट विद्वान। तव सासाने का अर्थ है: (जिसने) आपकी सलाह और निर्देश का पालन किया।

अरियावता का अर्थ है, अपने ऊपर उचित रूप से ऐसे कर्तव्यों (वात) का पालन करना, जो पूर्णतः शुद्ध नैतिक उपदेश हैं, इत्यादि। अंतेवासिम्हि सोक्खितो का अर्थ है: आपके निकट रहकर व्यावहारिक (चिण) पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) व्यतीत करने के कारण, मैं ऐसे अनुशासित आचरण वाला (सिक्खिता) उच्च नैतिक उपदेशों का पालन करने वाला (सिक्खितावा) शिष्य था।

थेरा सुमना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(202):वड्डा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (202) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
202. वड्डा
बुद्ध युग में भरुकच्छ नगर में एक साधारण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम वड्ड रखा गया और वे समय के साथ बड़े हुए। [1] अब उनकी माता, पुनर्जन्म और मृत्यु की निरंतरता से व्याकुल होकर, अपने पुत्र को अपने परिवार को सौंपकर, भिक्षुणियों के बीच भिक्षुणी बन गईं। इसके बाद उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। उनके पुत्र ने भी थेरा वेलुदंत के अधीन भिक्षुणी बन गए और बुद्ध-शब्दों का अध्ययन करके, वे विद्वान और उपदेशक बन गए। एक दिन, अपने पद की जिम्मेदारी को महसूस करते हुए, उन्होंने सोचा: 'मैं अकेले अपनी माता से मिलने जाऊंगा, और भिक्षु का वस्त्र नहीं पहनूंगा।' इसलिए वे भिक्षुणियों के आवास पर गए। [195] उनकी माता ने उन्हें देखकर फटकारा: 'तुम यहाँ अकेले और भिक्षु का वस्त्र पहने बिना क्यों आए हो?' और अनुचित कार्य करने के दोषी पाए जाने पर, वह अपने विहार (मठ) लौट आया, और दिन के कमरे में बैठकर, वहाँ अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया, और अपनी इस उपलब्धि का श्रेय अपनी माता की नसीहत को देते हुए अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) का प्रमाण दिया।

[335] साधु हि कीरा में माता पतोदां उपादौंसयि,॥
यस्साहं वचनं सुत्वा अनुसिट्ठो जनेत्तिया,॥
अरद्धवीरियो पहितत्तो पत्तो संबोधिमुत्तमṃ॥ ॥

[336] अराहा दक्खिनेयोम्ही तेविज्जो अमतद्दसो,॥
जेत्वा1 नमुचानो सेनां विहारामि अनासावो॥ ॥

[337] अज्झट्टṃ च बहिद्ध च ये मे विज्जीसु आसव,॥
सब्बे अस्सो उच्चिन्ना न च उप्पज्जरे पुना॥ ॥

[338] विसारदा खो भगिनी एतम् अत्थाऽ आभासयी,॥
अपिहा नुना मयिपि वनथो ते न विज्जति॥ ॥

[339] परियंतकाटाṃ दुक्खाṃ एंटीमो'ताṃ समुस्सायो,॥
जातिमरणासंसरो नत्थि दानि पुनभभावो ति.॥ ॥

[335] हे सत्य, मेरी माता ने अंकुश का प्रयोग भली-भांति किया!
मैंने उनकी बात मानी, और अपने माता-पिता द्वारा सिखाई गई शिक्षाओं से प्रेरित होकर,
मैंने प्रयास किया, अपनी सारी शक्ति लगा दी,
और लक्ष्य, सर्वोच्च ज्ञान प्राप्त कर लिया।

[336] मैं अरहंत हूँ, मनुष्यों की भेंटों के योग्य। [2] तीन गुना बुद्धिमान, मैं अमृतमय दर्शन देखता हूँ;
नामुची (मृत्युदेव/मारा) और उसकी सारी सेना पराजित हो गई है, [3] और अब मैं आगे से स्वस्थ और प्रतिरक्षा से मुक्त रहता हूँ।

[337] हाँ, वे मादक पदार्थ (अपवित्रताएँ/इच्छाएँ) जो कभी मेरे
भीतर, मेरे बाहर, मौजूद थे, [4] पूरी तरह से निकाल दिए गए हैं;
कुछ भी शेष नहीं रहा और न ही वे पुनः प्रकट हो सकते हैं।

[338] देखो! बुद्धिमान और अनुग्रह में परिपक्व बहन [5] थी,
जिसने मुझसे यह गुप्त भलाई का वचन कहा:
अब तुम्हारे लिए भी, मेरे लिए, [मेरे बेटे]
मन के किसी जंगल ने मार्ग में बाधा नहीं डाली।

[339] दुःख के लिए एक अंतिम अवरोध बनाया गया है।
यह अंतिम नश्वर शरीर है, जिससे
जन्म और मृत्यु के अंतहीन संसार का संबंध है,
और तुम्हारे लिए कभी पुनर्जन्म नहीं होगा।

[1] अनुपुब्बेना वड्धति। यह (यहाँ) असामान्य वाक्यांश निस्संदेह उनके नाम को संदर्भित करता है, जिसका अर्थ है 'विकास', 'वृद्धि'। माता की कहानी सिस्टर्स, lxii. ff में दी गई है। वह भी उनके लिए बोलती हैं, लेकिन 'प्रेरक' - शाब्दिक रूप से, 'उकसाने वाला' - उद्देश्य और 'जंगल' को छोड़कर, वह उनके मुख से एक अलग कथन (गाथा) प्रस्तुत करती हैं, जो रचनाकार के अंतर का एक अप्रत्यक्ष प्रमाण है (परिचय देखें)। अंतर्वस्त्रों को बाहरी वस्त्रों के रूप में पहनना - अर्थात्, चीवर को पीछे छोड़ना - विनय अनुशासन (विनय, iv. 281) में टिप्पणी की गई है। संभवतः थेरा ने इसमें अपने पुत्रत्व को अपने पद से ऊपर रखा।

[2] = श्लोक 296, 516.

[3] नामूसी, मारा (मृत्यु के देवता/शैतान) का एक नाम है

[4] अर्थात्, बहिद्धवत्थुका, 'बाहरी आधार या कारण रखने वाला' - जैसे, इंद्रियों के विषय, गुमराह शिक्षक, स्वर्ग आदि।

[5] भगिना, शाब्दिक अर्थ, बहन।

5.5 [202] वड्ढत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
साधुही से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वड्ध का है। इसका उद्गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म के चक्र से मुक्ति पाने के लिए पुण्य कर्म संचित किए, और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब भरुकच्छ नगर में एक धनी गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया; वड्ध नाम प्राप्त करके, वह समय के साथ परिपक्व हुआ। फिर, उनकी माता, बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों (संसार) में पश्चाताप से ग्रस्त होकर, अपने पुत्र को अपने रिश्तेदारों को सौंपकर, अन्य भिक्षुणियों की उपस्थिति में भिक्षुणी बन गईं और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपश्यना) का अभ्यास करके अरहंतत्व प्राप्त किया। एक बार उन्होंने अपने पुत्र को, जो बुद्धिवान हो चुका था, थेरा वेलुदंत की उपस्थिति में भिक्षु बना दिया। भिक्षु बनने के बाद, उन्होंने बुद्ध की शिक्षाओं (वचन) का ज्ञान प्राप्त किया, सत्य (धम्म) के एक प्रख्यात शिक्षक बने और शास्त्रों (गंथ) के अध्ययन का भार (धुरा) वहन करते हुए एक दिन भिक्षुणियों के मठ में यह कहते हुए गए, “मैं केवल भीतर और बाहर (संतरुत्तरो) अपनी माता को देखूंगा।” उसे देखकर उसकी माता ने उससे पूछा: “तुम यहाँ केवल आंतरिक और बाह्य (अंतरुत्तरो) रूप में ही क्यों आए हो?” माता के इस प्रश्न से विचलित होकर उसने पश्चाताप व्यक्त करते हुए कहा: “मुझसे एक अनुचित कार्य हो गया है।” वह अपने मठ लौट गया, अपने दिन के विश्राम कक्ष में बैठा, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सित्वा) प्राप्त की, अरहंतत्व प्राप्त किया और अपनी माता की सलाह की समृद्धि को प्रकट करते हुए, अपने अरहंतत्व को दर्शाते हुए इन श्लोकों का पाठ किया।

335. “वास्तव में, यह कहा जा सकता है कि मेरी माँ

उसने मुझे उकसाने में अच्छा काम किया था

उकसाते हुए। सुनने के बाद

मेरी माँ द्वारा दी गई चेतावनी के अनुसार, उसका वचन।

(janettiyā), मैंने अपना प्रयास अच्छी तरह से किया

शुरू हो गया, मेरा मन अच्छी तरह से निर्देशित था (की ओर)

(निब्बाना), और मैंने अरहंत पद प्राप्त किया।

ज्ञानोदय की सर्वोच्च चोटी।

336. "मैं अरहंत बन गया, योग्य प्राप्तकर्ता।"

समर्पित दान का, जिसके पास है

त्रिगुण ज्ञान (तेविज्जो) जो

निर्वाण की कल्पना की; विजय प्राप्त कर ली

मैं मारा की सेना से मुक्त होकर रहता हूँ।

कैंकर (आसवा)।

337. "मेरे भीतर जो भी दोष मौजूद थे

बाह्य रूप से भी वे सभी थे

बिना किसी शेष के अलग-अलग काट दिया; वे ऐसा करते हैं

दोबारा न उभरना।

338. "सचमुच, हे बहन! (भगिनी!) तुम

वे आत्मविश्वास से भरे हुए हैं (visāradā);

आपने मुझे यह (सलाह) दी थी

लाभ (अत्था); निश्चय ही, मुझमें भी

तुममें कोई स्नेह (पिहा) नहीं था; तुममें

आसक्ति का कोई जंगल जैसा विकास नहीं है

(वनाथो).

339. "कठोर पीड़ा (दुक्खा) डाल दी गई थी

सभी का अंत; यह संग्रह

मिठाई (समुस्सया) का अंतिम भाग है।

(एंटीमा); अब अस्तित्व में नहीं है

बार-बार जन्म और मृत्यु के चक्र भी

एक नए अस्तित्व के रूप में।"

वहाँ, Sādhū kira me mātā, patodaṃ upadaṃsayi का अर्थ है: यह कितना अच्छा हुआ कि मेरी माता ने मुझे सलाह के रूप में अंकुश दिखाया; इसी कारण मेरा परिश्रम प्रज्वलित (uttejenti) हुआ और मेरे शरीर के सबसे उत्तम अंग (paññāsīse) में प्रवेश (vijjhi) कर गया। Yassā का अर्थ है: मेरी माता का। Sambodhiṃ का अर्थ है: अरहंतत्व। वास्तव में, यहाँ इसका यही अर्थ है:— मेरी माता द्वारा उपदेशित (janettiyā) होकर, मैंने उनके वचन को सुनकर, जो उनका उपदेश बन गया था, अपना परिश्रम अच्छी तरह से शुरू (āraddhavīriyo) किया और मेरा मन (atta) अच्छी तरह से निर्देशित (pahita) हुआ और इस प्रकार रहते हुए, मैंने अरहंतत्व प्राप्त किया, जो सबसे उत्तम और सर्वोत्कृष्ट आत्मज्ञान है।

अरहा का अर्थ है: उन विकृतियों से दूर रहने की अवस्था के कारण; दक्खिणेयो का अर्थ है: पुण्य क्षेत्र (पुण्णखेत्त) होने के कारण मैं समर्पित दान का योग्य प्राप्तकर्ता हूँ। तेविज्जो का अर्थ है: तीन प्रकार के ज्ञान (विज्जा) जैसे कि मेरे पूर्व निवासों (पुब्बेनिवास) आदि के ज्ञान को प्राप्त करने के कारण त्रिविध ज्ञान से युक्त; अमतद्दसो का अर्थ है: निर्वाण के दर्शन के कारण अमरता का द्रष्टा; नमुचिनो सेनां का अर्थ है: मारा की सेना; मैं दोषों (आसव) से मुक्त होकर आनंदपूर्वक निवास करता हूँ, क्योंकि मैंने ज्ञान (बोधि) के पंखों (पक्खिया) की अपनी सेना द्वारा विकृति (किलेसा) के वाहक (वाहिनीं) को पराजित किया है।

अब, उन्होंने "अज्जत्तं च" से शुरू होने वाले श्लोक का उच्चारण किया ताकि "अनासवो (कैंसर रहित)" के अर्थ को और अधिक स्पष्ट किया जा सके। इसका अर्थ है: — अज्जत्तं का अर्थ है: आंतरिक आधार (वत्थु); बहिद्धा का अर्थ है: बाह्य आधार; आसवा ये का अर्थ है: श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्ग) की प्राप्ति से पहले मेरे वे कैंसर। विज्जिंसु का अर्थ है: वे प्राप्त हो रहे थे; उच्छिन्ना का अर्थ है: श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्ग) द्वारा उन सभी को बिना किसी अवशेष के काट दिया गया था और त्याग दिया गया था; अब, वे किसी भी अवसर पर फिर से उग आएंगे और प्रकट होंगे।

अब उन्होंने अपनी माता की प्रशंसा करने के लिए "विसारदा" से शुरू होने वाला श्लोक बोला, क्योंकि उन्होंने अपनी माता के वचन को अपना मार्गदर्शक (अंकुसा) बनाकर अरहंतत्व प्राप्त किया था। यहाँ, "विसारदा खो" का अर्थ है: निःसंदेह (साराज्जा)। "भगिनी" का अर्थ है: थेरा ने अपनी माता को "बहन" कहकर संबोधित किया, ताकि वे स्वयं और अपनी माता के इस प्रकार अरहंतत्व प्राप्त करने से गुरु के प्रिय पुत्र होने की स्थिति का वर्णन कर सकें। "एत्तमत्थं आभासयी" का अर्थ है: उन्होंने यह बात कही (अत्थम्) जो मेरे लिए उपदेश बन गई; मुझे नसीहत देते हुए; यद्यपि, इस प्रकार, यह पूरी तरह से विश्वास में नहीं है (विसारदा)। वास्तव में (atha kho) apihā nūna mayi pi का अर्थ है: वास्तव में (atha kho) मुझे लगता है (maññe) कि आप अपने पुत्र से भी स्नेह नहीं रखते और उससे कोई संबंध नहीं रखते; दूसरे शब्दों में, इस युक्ति (parikappana) का प्रयोग क्यों? Vanatho te na vijjati का अर्थ है: अज्ञान (avijjā) आदि जैसी ऐसी जंगली वनस्पति आपके शरीर (santāna) में विद्यमान नहीं है, क्योंकि आप मुझे अस्तित्व के क्षय की ओर धकेल रहे हैं; यही इसका अर्थ है।

अब उन्होंने "परियंतकतां" से शुरू होने वाला अंतिम श्लोक बोला, ताकि यह दिखाया जा सके: "तया नियोजितकारेन् 'एव मया पटिपन्नं (पर आपके आग्रहानुसार ही मैंने उचित कार्य किया था)।" इसका अर्थ स्पष्ट रूप से समझ में आता है।

थेरा वड्ड के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (203): नदी का कस्पा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (203) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
203. नदी का कस्सपा

बुद्ध युग में मगध ब्राह्मणों (पुजारियों) के कुल में उरुवेला-कस्सपा के भाई के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उनकी धार्मिक प्रवृत्ति ने उन्हें गृहस्थ जीवन से विमुख कर दिया और वे एक तपस्वी बन गए। [196] 300 तपस्वियों के साथ उन्होंने नेरांजरा नदी के किनारे एकांतवासी जीवन व्यतीत किया और इस प्रकार वे अपने वेश और अपने कुल के नाम से नदी के कस्सपा के नाम से जाने गए। अब किस प्रकार भगवान (बुद्ध) ने उन्हें 'आओ, भिक्षु' कहकर भिक्षुत्व और अपने साथियों को दीक्षा दी, इसका वर्णन खंडक में मिलता है। [1] भगवान के अग्नि संबंधी उपदेश द्वारा उन्हें अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त हुआ। इसके बाद अपनी उपलब्धि पर विचार करते हुए, उन्होंने त्रुटि से मुक्ति व्यक्त करते हुए ज्ञान (प्राप्ति) की घोषणा की।

[340] अत्थया वात मे बुद्धो नदीं नेरंजरं आगा,॥
यस्सहं धम्मं सुत्वना मिच्छदिथिं विवज्जयिं॥ ॥

[341] याजीṃ [39] उक्कावेस यानने अग्गिहुट्टाṃ जुही अहाṃ,॥
एसा सुद्धिति मन्नन्तो अन्धभूतो पुथुज्जणो॥ ॥

[342] दितिघहनपक्खन्नो परमसेना मोहितो,॥
अशुद्धि मान्निसां शुद्धि अन्धभूतो अविद्दसु॥ ॥

[343] मिच्छादिथि पहिना मे भव सबे विदालिता,॥
जुहामि दक्षिणेयाग्गिं नमस्सामि तथागतं॥ ॥

[344] मोहा सब्बे पहिना मे भवतन्हा पडलिता,॥
विक्खिणो जातिसंसारो नत्थि दानि पुनब्भावो' ति.॥ ॥

[340] हे, सचमुच मेरे भले के लिए ही
बुद्ध नेरंजरा के पास आए, जिनके उपदेश सुनकर मैंने गलत विचारों का त्याग किया।

[341] अनेक बलिदानों में अनुष्ठानकर्ता बनकर,
मैंने पवित्र अग्नि को पोषित किया, आहुति अर्पित की;
'ये शुद्ध और पवित्र अनुष्ठान हैं!' मैं सोचता हूँ -
हे अंधा और साधारण व्यक्ति जो मैं था!

[342] विधर्मों के जंगल में भटकता हुआ,
उनके संक्रमण से व्याकुल और गुमराह होकर,
मैंने उस धर्म को झूठा समझा जो शुद्ध था।
और मैं अंधा, लापरवाह और अज्ञानी था।

[343] अब मेरे लिए सभी त्रुटियाँ दूर हो गई हैं;
वापसी की श्रृंखला टूट गई है।
हर उपहार के लायक, मैं अग्नि का उत्सव मनाता हूँ: [2] मैं तथागत (अर्थात बुद्ध) की पूजा करता हूँ ।

[344] मैंने सभी भ्रमों को दूर कर दिया है।
आगे बढ़ने की प्यास कुचल दी गई है,
और जीवन का अंतहीन चक्र चकनाचूर हो गया है।
अब मेरे लिए कोई पुनर्जन्म नहीं होगा!

[1] विनय ग्रंथ, i. 118-185.

[2] सम्मासंबुद्ध (टीका) ।

5.6 [203] नादिकस्सापट्टेरा के श्लोक पर टीका
अत्थाय वत मे से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा नादिकसप्पा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए, और भगवान पद्ममुत्तरा (बुद्ध) के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उन्होंने गुरु को भिक्षा मांगते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और उन्होंने अपने द्वारा लगाए गए वृक्ष पर उगे पहले फल, लाल आर्सेनिक (मनोसिला) रंग के आम को भेंट किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे बार-बार जन्म लेते हुए देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे मगध राज्य के एक ब्राह्मण परिवार में उरुवेलकस्सपा के भाई के रूप में पुनर्जन्म लिए। वयस्क होने पर, उन्होंने संसार से मुक्ति पाने की तीव्र इच्छा (अज्जासय) के कारण गृहस्थ जीवन न जीने की चाह में संसार का त्याग कर संन्यासी बन गए और अपना आश्रम (अस्समा) बनाकर नारंजरा नदी के किनारे तीन सौ संन्यासियों के साथ निवास किया। वास्तव में, नदी के किनारे निवास करने और कस्सपा वंश से होने के कारण वे नदीकस्सपा के नाम से जाने गए। भगवान बुद्ध ने उन्हें और उनके अनुयायियों को "एहि भिक्खु (आओ, हे भिक्षु!)" कहकर पूर्ण दीक्षा दी। यह सब विनय के खंडक भाग में ही वर्णित है। उन्होंने आदित्तपरीय (भगवान बुद्ध की ज्वलंत उपमा) पर उपदेश (देशना) के माध्यम से अरहंत पद प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—

मैंने गुरु बुद्ध पद्ममुत्तरा को यह भेंट अर्पित की।

विश्व के सबसे बुजुर्ग ऋषि के समान एक ऋषि।

समर्पित दान के योग्य प्राप्तकर्ता,

नायक, सबसे अधिक भार वहन करने वाला (धारतो)

असाधारण प्रसिद्धि, जो इधर-उधर भटक रहा था

भिक्षा-भोजन के लिए सर्वोपरि (अग्गा) फल

मेरे द्वारा मेरे मनभावन ढंग से एकत्रित किया गया

पवित्र मन।

हे द्विपादिंडा के स्वामी!

दुनिया का सबसे बड़ा (लोकजेठ),

पुरुषों में बैल!

उस कार्य से, मैंने अविचलितता प्राप्त कर ली है

(अकलं) स्थान, त्यागने के बाद

विजय और पराजय।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने दान दिया था। मैं करता हूँ।

किसी भी बुरी सत्ता को याद नहीं; यह

यह मेरी सबसे महत्वपूर्ण कोशिश का फलदायी परिणाम है।

(अग्गा) भेंट।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।

अरहंत पद पर स्थापित होने के बाद, उन्होंने बाद में अपने उचित आचरण (पटिपत्ति) पर विचार किया और अपने गलत विचारों (दिट्ठी) को जड़ से उखाड़ फेंकने (समुग्घाता) की घोषणा (मुखेना) के माध्यम से अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए इन श्लोकों का उच्चारण किया।

340. "वास्तव में मेरे कल्याण के लिए ही बुद्ध यहाँ पहुँचे थे।"

नेरांजारा नदी; सुनकर

उनके द्वारा सिखाए गए सत्य (धम्म) को मैं

मैंने अपने गलत विचारों को त्याग दिया।

341. "मैंने उच्च और निम्न, दोनों प्रकार के बलिदान किए;

मैंने अग्नि पूजा और बलिदान किया,

इन्हें पवित्रता के कर्म मानते हुए,

मैं, एक अंधा आम आदमी (पुथुज्जना) होने के नाते।

342. "जंगल में घुस गए (पक्खंदो)

गलत विचारों (दिट्ठी) का (गहना), भ्रमित

गलत अभ्यास (परमासा) से अंधा हो गया

(अंधभूतो) और अज्ञानी, मैंने सोचा

अशुद्ध को शुद्ध करना।

343. "गलत दृष्टिकोण को त्याग दिया गया था

मुझे; सभी अस्तित्व खंडित हो गए थे।

मैं (अब) अपनी बलिदानपूर्ण सेवा अर्पित करता हूँ।

(जुहामी) अग्नि के समान, योग्य

समर्पित दान के लिए और मैं अपना शरीर नमन करता हूँ

तथागत को।

344. "मेरे सभी भ्रम दूर हो गए थे:

अस्तित्व (भव) के लिए लालसा (तण्हा)

टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए थे; बार-बार के दौर

पुनर्जन्म की संभावनाएं पूरी तरह समाप्त हो चुकी थीं;

अब कोई नया अस्तित्व नहीं है।

वहाँ, atthāya vata me का अर्थ है: वास्तव में, मेरे कल्याण के लिए। Buddho का अर्थ है: सर्वज्ञ बुद्ध। Nadiṃ Nerañjaraṃ agā का अर्थ है: नेरंजरा नदी पर पहुँचे; उस नदी के किनारे भी, वे मेरे भाई उरुवेला कस्सपा के आश्रम के पास आए; इस प्रकार, इसका महत्व है।

अब, कही गई बातों के अनुसार अर्थ स्पष्ट करने के लिए, यह इस प्रकार कहा गया है: "यस्साहं," इत्यादि। यस्सा का अर्थ है: भगवान बुद्ध का। धम्मं सुत्वन का अर्थ है: चार आर्य सत्यों से उचित रूप से संबंधित सत्य (धम्म) को सुनकर; कानों के द्वारों के अनुसार (अनुसार) गहन ज्ञान प्राप्त करके। मिच्छादित्तिं विवज्जयं का अर्थ है: मैंने "यञ्आदीहिसुच्चि होति (यज्ञ आदि के द्वारा स्वयं को शुद्ध करना)" जैसी घटनाओं से युक्त गलत (विपरीत) धारणा (दस्सना) का त्याग कर दिया।

जो कहा गया है, उसके अर्थ को विस्तार से समझाने के लिए, बस इतना कहा गया है: "मैंने अपना गलत दृष्टिकोण त्याग दिया," और फिर उन्होंने "यजिं" कहा, इत्यादि। वहाँ, यजिं उच्चावचे यञ्ञे का अर्थ है: मैंने अनेक प्रकार के यज्ञ किए, जैसे: प्रत्यक्ष (पाकत) "अर्पण", सोम अर्पण, वाजपेय्य यज्ञ इत्यादि। अग्गिहुत्तं जुहिं अहं का अर्थ है: मैंने अग्नि पर सेवा की (परिचारिं), और उन यज्ञों (यञ्ञा) के माध्यम से यज्ञ अर्पण (आहुतिं) को बढ़ावा दिया (पग्गणहन्तो)। Esā suddhī ti maññanto का अर्थ है: अग्नि पर यज्ञ और परिचारण की ये क्रियाएँ शुद्धिहेतु होने के कारण शुद्ध हैं, इस प्रकार विचार करते हुए: "इस प्रकार मेरा बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों का शुद्धिकरण (संसारशुद्धि) होता है।" Andhabhuto puthujjano का अर्थ है: अज्ञान के अंध (अविज्जा) के कारण, ज्ञान की आँख (पञ्ञा) के अभाव में, अंधभूत (पुथज्जना) होने के कारण। Diṭṭhigahanapakkhando, parāmāsena का अर्थ है: घोर गलत विचारों का जंगल, वन और पर्वत आदि के समान, पार करने में कठिनाई के कारण गलत विचारों का जंगल है; उसमें डूबकर (पक्खन्दो) उसमें प्रवेश कर गया; सत्य (धम्म) के स्वरूप से परे जाकर, अभिनिवेश की प्रवृत्ति के साथ, विकृत (परमासा) होने के कारण विकृतता से चिपके रहने के रूप में, यह कहते हुए कि: "यही सत्य है।" मोहितो का अर्थ है: भ्रमित अवस्था में पहुँच जाना। असुद्धिं मान्ञिसम् शुद्धिं का अर्थ है: मैंने अशुद्ध मार्ग को शुद्ध मार्ग (मार्ग) समझा। उन्होंने इसका कारण इस प्रकार बताया: "अंधभूतो अविद्दासु।" इसका अर्थ है: अज्ञान (अविज्जा) से अंधा हो जाने के कारण, मुझे सत्य (धम्म) और असत्य (अधम्म) के साथ-साथ उचित और अनुचित (युत्तयुत्त) का ज्ञान नहीं था; इसलिए मैंने ऐसा सोचा; यही अर्थ है।

मिच्छादित्ति पहीमानो का अर्थ है: मेरे सभी गलत विचार सही मार्ग (आर्य) के सही दृष्टिकोण (सम्मादित्ति) द्वारा त्याग दिए गए (समुच्चदपहान), जब मैंने गुरु की उपस्थिति में चार आर्य सत्यों से परिपूर्ण सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनकर अपने जीवन को इस प्रकार व्यवस्थित किया (पटिपज्जन्ता), जो इस प्रकार बुद्धिमानी से (योनिसो) बन गया था। भव विदालीता का अर्थ है: काम (इंद्रिय सुख) आदि जैसे सभी अस्तित्व आर्य मार्ग (आर्य) के शस्त्र (सत्थ) द्वारा नष्ट (विद्धांसित) हो गए। जुहामि दक्खिणेयग्गी का अर्थ है: मैं बुद्ध की सेवा करता हूँ (परीकरामि) और उन्हें अपना अर्पण अर्पित करता हूँ, जो सर्वथा बुराई को भस्म करने के कारण समर्पित दान के योग्य अग्नि हैं, क्योंकि उन्होंने यज्ञ की अग्नि आदि को त्याग दिया है (आहवनीयादिका)। नमस्सामि तथागतं का अर्थ है: उन्होंने कहा: यह मेरी गुरु के प्रति नमस्समा है, कि मैं उन्हें समर्पित दान के योग्य अग्नि के रूप में दूध-दही, ताजा मक्खन (नवनीत), मथा हुआ छाछ, घी आदि के ऐसे

अनासक्त (निरापक्खा) अर्पण के साथ सेवा करता हूँ। दूसरे शब्दों में, जुहामि दक्खिनेय्यग्गी का अर्थ है: मैंने स्वयं को उसी प्रकार ढालकर स्वयं को अर्पण किया है, स्वयं की देखभाल की है और दानदाताओं के दान को ग्रहण करके बुराई को जलाकर स्वयं को समर्पित दान के योग्य बनाया है; पहले मैं अग्नि देवता की आराधना करता था; अब मैं तथागत को नमन करता हूँ।

Mohā sabbe pahīnā me का अर्थ है: मेरे सभी भ्रम दूर हो गए; ज्ञान की कमी और पीड़ा (दुक्खा) आदि के रूप में वर्गीकृत मेरे सभी भ्रम अस्वीकृत और समाप्त हो गए। लेकिन बाद में व्याकरणिक शब्द me (मेरा) को इन तीन अभिव्यक्तियों में लाया जाना चाहिए: “Bhava taṇhā padālitā, vikkhīno jātisaṃsāro, and n'atthi 'dāni punabbhavo”, और इसकी व्याख्या की जानी चाहिए।

थेरा नदी-कस्सपा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (204): गया के कस्पा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (204) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
204. गया का कस्सपा
इस बुद्ध युग में ब्राह्मण (पुजारी) वंश में उनका पुनर्जन्म हुआ [उनकी कहानी नदी के कश्यप की कहानी से मिलती-जुलती है, उनके अनुयायियों की संख्या 200 थी, और वे गया में रहते थे]। [1] उन्होंने बुराई के निवारण को महिमामंडित करते हुए अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की, इस प्रकार:

[345] पत्तो मज्झन्तिकाऽ सयाऽ तिक्खट्टुऽ दिवास्स्सहाऽ,॥
ओटरिṃ उदकाṃ सो'हाṃ गयाया गयाफग्गुया॥ ॥

[346] यं मया पकातं पापां पुब्बे अणनासु जतिसु,॥
तं दानिधा पवाहेमि एवादिदिथि शुद्ध आहुṃ॥ ॥

[347] सुत्वा सुभाषितं वाचं धम्मत्थसहितं पडां,॥
तथाऽ यथावतं अत्थाऽ योनिसो पचवेक्खिसाऽ॥ ॥

[348] निन्हात्सब्बापापोम्ही निम्मलो पयातो सुचि,॥
सुद्धो सुद्धस्स दयादो पुत्तो बुद्धस्स ओरासो॥ ॥

[349] ओगयहाṭṭहाड़्गिकाṃ सोताṃ सब्बपापाṃ पावहायीṃ,॥
तिस्सो विज्ज अज्झागामीं कटं बुद्धस्स सासनं' ति.॥ ॥

[345] सुबह, दोपहर, शाम को,
दिन में तीन बार मैं गया गया, गया के वसंत उत्सव में पानी में, [1] क्योंकि 'मैंने पिछले जन्मों में पाप किए हैं,

[346] बीते दिनों में, जो यहाँ और अभी हैं,
मैं इसे धो देता हूँ 'ऐसा मैंने कभी माना था।

[347] मैंने एक ऐसी आवाज़ सुनी जिसने मनभावन शब्द कहे,
जिनका सार धर्म और अच्छाई को जोड़ता था।
और उनके सच्चे और वास्तविक अर्थ पर

मैंने बहुत विचार किया और गंभीरता से तर्क किया।

[348] अब मैं सचमुच सभी बुराइयों से मुक्त हो गया हूँ,
त्रुटियों से शुद्ध हो गया हूँ, पवित्र और निष्कलंक हूँ।
पवित्रता में, मैं शुद्धिकृत का उत्तराधिकारी हूँ,
उसका बच्चा हूँ, यहाँ तक कि बुद्ध का ही पुत्र हूँ।

[349] क्योंकि मैं अष्टांगिक धारा (बुद्ध का मार्ग) में विलीन हो गया हूँ,
और मैंने हर बुराई को धो डाला है।
मैंने त्रिविध ज्ञान को पा लिया है और जीत लिया है,
और बुद्ध के सभी कार्य पूरे हो चुके हैं।

[1] विचित्र रूप से, टीका में उरुवेला-कस्सपा या नदी के कस्सपा से उनके संबंध का उल्लेख नहीं है। विनय ग्रंथ देखें, उसी स्थान पर।

[2] टीका दोहराती है (ऊपर देखें, पृष्ठ 181) कि यहाँ फाग्गुना महीने में वार्षिक संस्कार उत्सव का उल्लेख किया गया है, न कि केवल शहर के नाम का, जैसा कि डॉ. न्यूमैन मानते हैं।

5.7 [204] गया-कस्सपत्थर के श्लोक पर टिप्पणी

पातो मज्जण्हिकं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा गया-कस्सपा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए, और इकत्तीस युग (कप्पा) पहले भगवान सिख के समय में एक गृहस्थ परिवार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (निस्सारण) से मुक्ति पाने की तीव्र इच्छा (अज्जसया) के कारण गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संन्यासी बनकर संसार का त्याग कर एक संन्यासी बन गए, वन क्षेत्र में एक आश्रम बनवाया और वन की जड़ों और फलों को अपने भोजन के रूप में ग्रहण करके वहाँ निवास किया। उस समय, भगवान अकेले, बिना किसी साथी के, उनके आश्रम के पास गए। भगवान बुद्ध के दर्शन करते ही वे धर्मपरायण हो गए, उनके पास गए, उन्हें प्रणाम किया, एक तरफ खड़े होकर समय देखा और गुरु को स्वादिष्ट बेर भेंट किए। इस पुण्य कर्म के फल के कारण वे जन्म-मृत्यु के चक्र में भटकते रहे, देवताओं और मनुष्यों के बीच रहे और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिए। वयस्क होने पर उन्होंने जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति पाने की तीव्र इच्छा (अज्जासय) के कारण गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संन्यासी बनकर संसार का त्याग किया और दो सौ संन्यासियों के साथ गया में निवास किया। गया में निवास करने और कस्सपा कुल के होने के कारण वे गया-कस्सपा के नाम से जाने गए। भगवान बुद्ध द्वारा "आओ, भिक्षु!" कहकर दीक्षा (उपसंपदा) दिए जाने पर, उन्हें, अपने अनुयायियों सहित, बुद्ध की आदित्तपरियायदेसना (जलने की उपमा) की शिक्षा से लाभान्वित होकर अरहंत पद प्राप्त हुआ। अतः अपदान में कहा गया है:—

"हिरण की खाल (अजीना) पहने हुए,"

उस समय मैं सरकंडे का धारण (धार) करता था।

वस्त्र (वाकसीरा); मैं वापस लाया

मेरे आश्रम में बेर के फल खाने के बाद

मैंने अपनी टोकरी उनसे भर ली।

उस मोड़ पर, बुद्ध सिख धर्म, सभी

वह अकेली थी, उसके साथ कोई साथी नहीं था;

उनके ज्ञान के कारण

हर मौके पर, वह मेरे पास आता था

आश्रम।

अपने मन को सुखद रूप से धार्मिक बनाते हुए, मैं

मैंने सद्गुणी (बुद्ध) को अपना नमन अर्पित किया;

मैंने अपने दोनों हाथ ऊपर उठाकर ऐसा किया।

मेरी ओर से बेर के फलों की भेंट

बुद्ध।

यह बत्तीस युग (कप्पा) पहले की बात है।

तब मैंने फल-बलि चढ़ाई;

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह बेर का फलदायी परिणाम है।

पेशकश।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालाँकि, अरहंत पद में स्थापित होने के बाद, उन्होंने अपने उचित कर्मों (पटिपत्तिं) पर विचार किया और अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए इन पाँच श्लोकों का उच्चारण किया, ताकि वे बुराई (पाप) को धो डालने (पवाहन) की घोषणा कर सकें।

345. "मैं पानी में उतर गया

सुबह, दोपहर और शाम, तीन बार

त्योहार के दिन गया में एक दिन

उत्तरापबागनी के चंद्र नक्षत्र का

मार्च का महीना (फग्गुनी)।

346. "जो भी पाप कर्म (पापा) किया गया हो

यह कार्य मैंने पहले, अन्य जन्मों में किया था।

अब मैं इसे इस प्रकार धो देता हूँ;

पहले, मेरा यह विचार गलत था।

347. "अच्छी तरह से बोलने वाले को सुनने के बाद

शब्द, अभिव्यक्तियाँ सत्य से परिपूर्ण

(धम्म) लाभ और कल्याण, मैं

अर्थ पर बुद्धिमानी से विचार किया।

सत्य (तथं), के अनुसार

सत्य (याथावतम्)।

348. "मैं सभी पापी बुराइयों से शुद्ध हो गया हूँ,

अशुद्धियों से मुक्त, शुद्ध और

मैं शुद्ध हूँ; मैं पवित्र हूँ, मैं इसका उत्तराधिकारी हूँ।

पवित्र, बुद्ध का प्रिय पुत्र।

349. "में डुबकी लगाने (ogayha) के बाद

अष्टांगिक श्रेष्ठता की धारा

उस मार्ग पर, मैंने अपने सभी पाप धो डाले

बुराई। मैंने (अज्जगमि) प्राप्त किया

त्रिविध ज्ञान (विज्जा); बुद्ध का

निर्देश का पालन किया जा चुका था।

तो, पहले श्लोक का संक्षिप्त अर्थ यह है: पातो का अर्थ है: सूर्योदय के समय; मझन्हिकं का अर्थ है: दोपहर के समय; सायं का अर्थ है: संध्या के समय; इस प्रकार, दिन के समय; तिक्खत्तुं का अर्थ है: तीन बार; ओतरिं का अर्थ है: मैं जल में उतरा; जल में डुबकी लगाते समय मैं न यहाँ न वहाँ न कभी न कभी उतरा; गयाया का अर्थ है: तब, वास्तव में, गया के उस स्थान पर जिसे लोगों की भीड़ "पापपवाहन, पापमय बुराई को धोने" के रूप में अच्छी तरह से पहचानती है (अभिसममता)। गयाफग्गुया का अर्थ है: मैं लगातार जल में उतरने में लगा रहता था, प्रतिवर्ष, फाग्गुनी माह के चंद्र नक्षत्र उत्तराफग्गुनी के उत्सव के दिन, जिसे गयाफग्गु के नाम से जाना जाता है।

अब, उस महत्व (अधिप्पाय) को दर्शाने के लिए, जिसके द्वारा वे जल में डुबकी लगा रहे थे, उन्होंने "यं मया" से शुरू होने वाला श्लोक बोला। उस श्लोक का अर्थ है: अहं का अर्थ है: मैं था, एवं दिट्ठी का अर्थ है: ऐसे विकृत दृष्टिकोण वाला (एवरूपविपरीत्तदस्सनो), शुद्ध का अर्थ है: पूर्व में, गुरु के निर्देश का पालन करने से पहले, मैंने स्वयं से कहा: "मेरे द्वारा पूर्व में, अन्य जन्मों में, जो भी बुरे कर्म संचित हुए थे, उन्हें मैं पावाहेमी (अब धो डालता हूँ), हटा देता हूँ और शुद्ध कर देता हूँ (विक्खलेमी), इधा (यहाँ), गया के घाट पर, इस गयाफग्गु को जल में इस (मेरे) अवतरण के माध्यम से।

धम्मत्थासहितं पदं सुत्वा का अर्थ है: पूर्वसर्गों के लोप के बिना व्याख्या (निद्देसा); बुद्ध के वचन को सुनकर, जो सर्वथा आत्मजागृत हैं, वह वचन जो बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों से मुक्ति का मार्ग बनाकर (निय्यनिक) उत्कृष्ट रूप से (सुट्ठी) और निश्चित रूप से (एकान्तेन) सत्य (धम्म) से जुड़ा है, साथ ही इसके आरंभ (आदि), मध्य (मज्जा) और अंत (परियोसानतो) के संबंध में अर्थ (अत्थ) से भी जुड़ा है, जिसमें सत्य (धम्म) और उसके अर्थ (अत्थ) का अंश (कोट्ठासा) शामिल है; तथां का अर्थ है: जो परम इंद्रिय की स्थिति के अनुसार सत्य होने के कारण सत्य है, वह सत्य जो उनके द्वारा प्रकट किया गया है; याथावकं का अर्थ है: सत्य के अनुसार, घटना की स्थिति (पवत्ति), पुनरावृत्ति (निवत्ति) और गलत धारणा (ब्यभिचार) के दृष्टिकोण से उचित (यथारहम) उपायों (उपाय) के अनुसार; अत्थं का अर्थ है: दुख (दुक्खा) आदि; योनिसो का अर्थ है: बुद्धिमानी से, पूर्ण समझ (परिञ्ञेय्य) की स्थिति के अनुसार ऐसे उपायों (उपाय) से; पच्चवेक्खिसं का अर्थ है: मैंने उचित रूप से विचार किया (पति अवेक्खिं) इस प्रकार: "दुक्खं परिञ्ञेय्यं (दु:ख को सर्वव्यापी रूप से समझना चाहिए) समुदयो पहतब्बो (दु:ख के कारण को अस्वीकार करना चाहिए) निरोधो सच्चिकतभो (दु:ख के निवारण की कल्पना करनी चाहिए) मग्गो भावेतब्बो (सही मार्ग का विकास करना चाहिए)।" मैंने अपने ज्ञान की दृष्टि से देखा और (चार आर्य सत्यों में) उचित रूप से प्रवेश किया; यही इसका अर्थ है।

निन्हातसब्बापापोम्ही का अर्थ है: मैं वह व्यक्ति हूँ जिसने श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्ग) के जल से अपने सभी पापी दोषों से स्वयं को शुद्ध कर लिया है, लेकिन ऐसा इसलिए क्योंकि मैंने (चार प्रकार के) सत्यों में उचित रूप से प्रवेश किया है। निम्मलो का अर्थ है: अशुद्धियों से मुक्त, क्योंकि मैं मैल से रहित हूँ और कामवासना आदि जैसी अशुद्धियों से मुक्त हूँ, लेकिन इसके परिणामस्वरूप। पयतो सुचि शुद्धो का अर्थ है: शुद्ध, स्वच्छ और पवित्र, क्योंकि मेरा शारीरिक आचरण, वाणी और मानसिक आचरण सर्वांगीण शुद्ध है, लेकिन इसके परिणामस्वरूप। शुद्धस्स दयादो का अर्थ है: मैं बुद्ध के दिव्य सत्य की विरासत को ग्रहण करने के परिणामस्वरूप उत्तराधिकारी हूँ, जो परम शुद्ध हैं, और सभी प्रकार की अशुद्धियों (किलेसा) और उनकी प्रवृत्ति (वासना) से मुक्त हैं। ओरासो का अर्थ है: मैं गर्भपुत्र हूँ क्योंकि मेरा जन्म विशेष रूप से गर्भ (उरो) के परिश्रम (वायाम) से हुआ है, जिससे उस (बुद्ध) के ज्ञान और शिक्षा का उद्गम होता है; यही व्याख्या है।

फिर उन्होंने समापन श्लोक (ओसाना) "ओगयहा" से शुरू करते हुए अपने स्नान (न्हातक) की स्थिति को परम अर्थ (परमत्था) के दृष्टिकोण से स्पष्ट किया। यहाँ ओगयहा का अर्थ है: डुबकी लगाना और उसमें समा जाना। अट्ठंगिकं सोतं का अर्थ है: सही मार्ग (मग्ग) की धारा जो आठ सही मार्गों (सम्मादिट्ठी) आदि के संयोजन (समोधान) में परिवर्तित हो गई है। सब्बपापं पवाहयिं का अर्थ है: मैंने पापमय बुराई की अशुद्धता को पूरी तरह से धो डाला (अनवसेसं)। श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्गा) के जल से शुद्ध होने के कारण मैं परम अर्थ (परमत्था) में शुद्ध हो गया। परिणामस्वरूप लेकिन "तिस्सो विज्जा अज्जगमिं, कतं बुद्धस्स सासनं;" अर्थ बस कहा गया है।

थेरा गया-कस्सपा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(205):वक्कली

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (205) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
205. वक्काली
भगवान (बुद्ध) के समय में, सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) कुल में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने उसका नाम वक्कली रखा। जब वह ज्ञानी हो गया और तीनों वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया, और ब्राह्मण (पुजारी) योग्यताओं में निपुण हो गया , तब उसने भगवान (बुद्ध) के दर्शन किए। भगवान (बुद्ध) के प्रत्यक्ष रूप से परिपूर्ण शरीर को देखकर कभी तृप्त न होकर, वह उनके साथ घूमने लगा। और जब अपने घर में उसने सोचा: 'मुझे यहाँ उन्हें निरंतर देखने का अवसर नहीं मिलेगा'; इसलिए उसने भिक्षु दीक्षा ली, और भोजन और शौच के समय को छोड़कर अपना सारा समय भगवान (बुद्ध) के ध्यान में व्यतीत किया। भगवान (बुद्ध), उसकी अंतर्दृष्टि की परिपक्वता की प्रतीक्षा करते हुए, लंबे समय तक कोई टिप्पणी नहीं की; फिर एक दिन उन्होंने कहा: 'वक्कली , यह कुरूप शरीर जो तुम देखते हो, तुम्हारे लिए क्या है? जो धम्म का मार्ग देखता है, वही मुझे देखता है।' धम्म के मार्ग को देखकर वह मुझे देखता है, और मुझे देखकर वह धम्म के मार्ग को देखता है।' भगवान (बुद्ध) के शब्दों पर, वक्कली ने देखना बंद कर दिया, लेकिन वह जा नहीं सका। इसलिए भगवान (बुद्ध) ने सोचा,

'यह भिक्षु, यदि गहरे रूप से विचलित न हो, तो जागृत नहीं होगा,' और वर्षा के अंतिम दिन कहा, 'चले जाओ, वक्कली!' इस प्रकार याद दिलाए जाने पर, वह रुक नहीं सका; बल्कि यह सोचकर कि 'यदि मैं उसे नहीं देख सकता तो मेरे लिए जीवन क्या है?' गिद्ध शिखर पर एक खड़ी चट्टानी जगह पर चढ़ गया। भगवान (बुद्ध), वक्कली के इरादे को जानते हुए, सोचे, 'यह भिक्षु, मुझसे दूर रहकर कोई विश्राम न पाकर, सर्वोच्च फल प्राप्त करने की परिस्थितियों को नष्ट कर देगा'; और स्वयं को एक महिमामय दिव्य स्वरूप में प्रकट करते हुए, इस प्रकार बोले:

अब भिक्षु (भिक्षु) को अत्यंत आनंद के साथ
बुद्ध के मार्ग और ज्ञान में प्रसन्न होकर
पवित्र, सुखी मार्ग पर आगे बढ़ने दो,
जहाँ सांसारिक चीजें उसे कभी उत्तेजित नहीं करतीं। [2]

और अपना हाथ बढ़ाते हुए उन्होंने कहा: 'आओ, भिक्षु!'

थेरा, 'मैं दस शक्तियों वाले परमेश्वर के दर्शन कर रहा हूँ, और मेरा सौभाग्य है कि मैं उन्हें यह कहते हुए सुनूँ: आओ!' इस विचार से अपार आनंद और परमानंद से भर उठे, फिर उन्हें होश आया और उन्हें अपने कार्य का अहसास हुआ। वायु में ऊपर उठकर, वे पहाड़ी के निकटतम बिंदु पर खड़े हो गए और भगवान (बुद्ध) के श्लोक पर चिंतन करने लगे; [199] फिर अपने परमानंद को रोकते हुए, उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया, साथ ही धम्म के रूप और अर्थ को भी समझ लिया। यही बात अंगुत्तरा टीका और धम्मपद दोनों में दर्ज है।

लेकिन यहाँ वे [3] इस प्रकार कहते हैं: भगवान (बुद्ध) के 'तुम्हें इससे क्या लेना-देना है...?' से संबोधित होकर, वक्कली गिद्ध शिखर पर रहने लगा, अंतर्दृष्टि में स्वयं को स्थापित किया, और अपनी आस्था की शक्ति से उस मार्ग में उतर गया। यह जानकर, भगवान ने उसे एक विशेष अभ्यास दिया जिसे वह पूरा नहीं कर सका, और 'अपर्याप्त भोजन के कारण उसे ऐंठन होने लगी। उसे इस प्रकार पीड़ित देखकर, भगवान (बुद्ध) उसके पास गए और उससे पूछा:

[350] वातरोगाभिनितो त्वं विहारं काने वने,॥
पविद्धगोकेरे लक्खे कथां भिक्खु करिस्सि॥ ॥

[350] हे भिक्षु, जो ऐंठन से पीड़ित हो,
जंगल में रहते हो, वनों में रहते हो,
तुम्हारा क्षेत्र सीमित हो, भयानक कठिनाइयों में जी रहे हो -
मुझे बताओ, भिक्षु, तुम कैसे जीओगे?

और थेरा ने अलौकिक सुखों के माध्यम से अपनी निरंतर खुशी का ऐलान करते हुए उत्तर दिया:

[351] पितिसुखेन विपुलेन फरमाणो समुस्सायौ,॥
लुकमपि अभिसम्भन्तो विहारिसामि काने.॥ ॥

[352] भवेंतो सतिपठाणे इन्द्रियाणि बलानि च,॥
बोजझाघानि च भवंतो विहारिसामि काने ॥॥ ॥

[353] अरद्धविरियो पहितट्टो निक्काṃ दहपरक्कमो,॥
समाग्गे सहते दिस्व विहारिसामि काने.। ॥

[354] अनुस्सरन्तो संबुद्धौ अग्गाṃ दंताṃ समाहितो,॥
अतन्दितो रत्तिनदिवं विहारिसामि काने' ति.॥ ॥

[351] आनंद और परमानंद की उमड़ती लहर से
मैं इस नश्वर शरीर को सराबोर कर दूंगा।

चाहे मुझे कितनी भी कठिन और कठोर परिस्थितियों का सामना करना पड़े,
मैं जंगल में ही जीवित रहूंगा।

[352] इसमें मैं स्वयं अभ्यास करूँगा: -
ध्यान के आरंभिक बिंदु,
पाँच शक्तियाँ, बल भी,
ज्ञानोदय के कारक -
इस प्रकार मैं जंगल में रहूँगा।

[353] क्योंकि मैंने देखा है [कि मित्रों ने क्या किया है]: [4] उनका प्रयास जागृत हुआ, उनका तनावग्रस्त मन,
उनका दृढ़ और निरंतर आगे बढ़ता कदम,
सामंजस्य में बंधे हुए, - और यह देखकर,
मैं जंगल में भी जीवित रहूँगा,

[354] [200] उन्हें याद करते हुए, जागृत,
परम शांत, एकाग्र, निर्मल, -
बिना थके मन से रात-दिन,
मैं जंगल में रहूँगा।

इस प्रकार, थेरा ने अंतर्दृष्टि विकसित की, और तब उन्हें अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त हुआ।

[1] या 'आने का कारण बनना' (आगमेंटो)। अंगुत्तरा टीका में भी यही अभिव्यक्ति है, लेकिन फिर [बिना किसी टिप्पणी के] कहती है: 'यह जानकर कि अब यह पक गया है, और वह उसे ज्ञान देने में सक्षम है, उसने कहा ...'

[2] धम्मपद, श्लोक 381. अधिगच्छे वर्तमान काल में नहीं है जैसा कि फाउसबोल्ला आदित में है, न ही भविष्य काल में जैसा कि मैक्स मुलर के अनुवाद में है। भगवान (बुद्ध) का शरीर मुख्य रूप से 'सांसारिक वस्तुओं' (संस्कार) का प्रतीक था।

[3] संभवतः स्रोत उनके स्वयं के कार्य से हैं। संदर्भित टीकाओं को उनके द्वारा सटीक रूप से उद्धृत किया गया है - wii, अंग पर मनोरथ-पुराण , i. 24, Ī 2, और श्लोक 381 पर धम्मपद टीका ।

[4] 'अपने सहधर्मियों को देखकर। इससे वह गुणी मित्रों में अपना सौभाग्य प्रकट करता है' (टिप्पणी)।

5.8 [205] वक्कलित्तेरा के श्लोक पर टिप्पणी
वातरोगाभिनीतः से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा वक्कली का है। उत्पत्ति क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, वे भगवान पद्ममुत्तरा के समय हंसवती नगर के एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म हुए; बुद्धि प्राप्त करने पर, वे गुरु के दर्शन के लिए जा रहे भक्तों के साथ मठ गए, सभा के अंत में विराजमान हुए, सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, गुरु द्वारा एक भिक्षु को परम आरोही (अधिमुत्त) धार्मिक आस्था (सद्धा) के प्रति सजग होते देखा, स्वयं भी उस पद की आकांक्षा की, सात दिनों तक दान किया और अपना संकल्प (पाणिधान) लिया। गुरु ने इसके तात्कालिक (अनंतरा) प्रभाव को देखकर उन्हें भविष्यवाणी की।

उन्होंने जीवन भर अच्छे कर्म किए, जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया, और हमारे गुरु के समय में सावत्थी में एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लिया। उनका नाम वक्काली रखा गया। बड़े होकर उन्होंने तीनों वेदों का ज्ञान प्राप्त किया और ब्राह्मण विद्याओं में सिद्धि प्राप्त की; संयोगवश उनकी मुलाकात गुरु से हुई, और उनकी शारीरिक सुंदरता को देखकर संतुष्ट न होकर वे गुरु के साथ ही विचरण करने लगे। मन में यह सोचकर कि "गृहस्थी में रहकर मुझे गुरु के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त नहीं होगा," वे गुरु की उपस्थिति में भिक्षु बन गए और अन्य कर्मों (किच्चा) का त्याग करके, उस स्थान पर स्थिर होकर जहाँ खड़े होकर तथागत के दर्शन होते थे, भोजन और स्नान के समय को छोड़कर शेष समय गुरु के दर्शन करते रहे। गुरु, अपने ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता की प्रतीक्षा करते हुए, जब वह इधर-उधर भटक रहा था तो कुछ नहीं बोला, परन्तु अपने शारीरिक सौंदर्य (रूप) को लंबे समय तक निहारते हुए, एक दिन उससे इस प्रकार कहा: "हे वक्कली! मेरे इस सड़े हुए शरीर को देखकर तुम्हें क्या लाभ है? हे वक्कली! निश्चय ही, जो

कोई सत्य (धम्म) को देखता है, वह मुझे देखता है; जो कोई मुझे देखता है, वह सत्य (धम्म) को देखता है। हे वक्कली! निश्चय ही, सत्य (धम्म) को देखकर वह मुझे देखता है; मुझे देखकर वह सत्य (धम्म) को देखता है।"

जब गुरु ने उनसे इस प्रकार कहा, तो थेरा गुरु के दर्शन त्याग कर कहीं और जाने में असमर्थ रहे। इसके फलस्वरूप, गुरु ने मन ही मन सोचा, "यह भिक्षु पश्चाताप किए बिना नहीं जागेगा," और दीक्षा के दिन वर्षा आश्रय के लिए थेरा को विदा करते हुए कहा, "हे वक्कली! तुम्हें चले जाना चाहिए।" गुरु द्वारा विदा किए जाने पर, गुरु के सामने न रह पाने के कारण, उन्होंने मन ही मन कहा, "जब मुझे गुरु के दर्शन ही नहीं होते, तो मेरे जीने का क्या लाभ?" और वे गिद्ध-शिखर पर्वत के ऊबड़-खाबड़ भाग पर चढ़ गए। गुरु को जब उस घटना का ज्ञान हुआ, तो उन्होंने मन ही मन कहा: "यह भिक्षु मुझसे कोई सांत्वना (अस्सासा) प्राप्त न करके, सही मार्ग और फल प्राप्ति के लिए आवश्यक अपनी पर्याप्त योग्यता (उपनिस्साय) को नष्ट कर सकता है," और फिर उन्होंने अपने प्रकाश की किरण को प्रकट करने के लिए एक श्लोक कहा।

"अत्यंत प्रसन्नता से भरा एक भिक्षु, जो आनंद से परिपूर्ण था"

ईश्वरीय आस्था के विधान में

बुद्ध को शांति प्राप्त होगी

मार्ग, संयम का आनंद (उपसमा)

मिठाइयों का।"

ऐसा कहकर गुरु ने अपना हाथ बढ़ाते हुए कहा: "आओ, वक्कली!" थेरा का उत्साह और आनंद उमड़ पड़ा और उन्होंने कहा: "मैंने दशबल के दर्शन कर लिए हैं; यहाँ तक कि उनका मुझे 'आओ' कहना भी मुझे प्राप्त हो गया है।" वे अपने जाने की स्थिति से अनभिज्ञ होकर मन ही मन सोचने लगे: "मैं कहाँ से आया हूँ?" वे आकाश में उड़ रहे थे कि जैसे ही उन्होंने पहाड़ी पर अपना पहला कदम रखा, उन्होंने गुरु द्वारा कहे गए श्लोक पर चिंतन किया, आकाश में ही अपना उत्साह त्याग दिया और चार प्रकार के विश्लेषणात्मक ज्ञान (पटिसंभिदा) के साथ अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। इस प्रकार उनकी कहानी अंगुत्तरा निकाय और धम्मपद की व्याख्या में मिलती है।

लेकिन यहाँ वे इस प्रकार कहते हैं:— गुरु द्वारा "हे वक्कली! आप कैसे हैं?" आदि कहकर सलाह दिए जाने पर, थेरा ने गिज्झकूट में निवास करते हुए आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में स्वयं को स्थापित कर लिया; परन्तु अपनी अत्यधिक श्रद्धा (सद्धा) के कारण वे आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के मार्ग पर नहीं उतरे; भगवान को इसका ज्ञान हुआ, उन्होंने उनके मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) की गहन जाँच (शोधत्वा) की और उन्हें उपदेश दिया। फिर भी वे आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) की ऊँचाई (मत्तक) तक पहुँचने में असमर्थ रहे; तब उनके अनुचित (वक्कल्ल) पोषण के कारण उनमें वात रोग (वातबाधो) उत्पन्न हो गया। जब भगवान बुद्ध को पता चला कि वह वात रोग से पीड़ित हैं, तो वे वहाँ गए और उनसे इस प्रकार प्रार्थना करते हुए एक श्लोक बोला:

350. "तुम्हें वात रोग हो गया है।"

यह बीमारी घने जंगल में निवास करती है।

जब आपका चारागाह छोड़ दिया गया हो

और हे भिक्षु, तुम दुखी (लूखा) हो!

आप कैसे काम करेंगे?

यह प्रश्न सुनकर थेरा ने चार श्लोक कहे।

351. "मैं जंगल में निवास करूँगा, यद्यपि

दुखी होना (लक्खं अभिसम्भोंतो),

मेरे शरीर-समूह में व्याप्त (pharamāno)

प्रचुर उत्साह और खुशी के साथ।

352. "मैं जंगल में निवास करूँगा, विकास करते हुए

जागरूकता की स्थापना (सतिपट्टाना),

इंद्रियों की शक्ति (इन्द्रियानी), सामर्थ्य

(बलाणी) और तत्वों पर ध्यान।

ज्ञानोदय (बोज्झंगानी) का।

353. "मैं बाद में जंगल में निवास करूँगा

उन लोगों को देखकर जिन्होंने अपना परिश्रम किया था

(विरिया) अच्छी शुरुआत (आरद्ध) जिसका मन

(अत्ता) को निर्देशित किया गया था (पाहिता)

निब्बाना, जो अपने दृढ़ निश्चय में सदा स्थिर रहते हैं

प्रयास (परक्कमा) और जो एकजुट हैं,

वे अपना पवित्र जीवन (साहिता) जी रहे हैं।

354. "मैं जंगल में ही निवास करूँगा, सदा के लिए

स्वयंजागृत बुद्ध को याद करते हुए,

सबसे अधिक संयमित और सुव्यवस्थित,

दिन-रात आलसी हुए बिना।

वहाँ, vātarogābhinīto का अर्थ है: वायु रोग (वातबाध) के कारण स्वेच्छाहीनता (असेरिभाव) में आ जाना; पित्ताशय की बीमारी से ग्रस्त होना। Tvaṃ का अर्थ है: थेरा को संबोधित करना। Viharaṃ का अर्थ है: शारीरिक गतिविधि से भरपूर जीवन जीने वाला निवास। Kānane vane का अर्थ है: घना वन; बड़ा वन; यही इसका अर्थ है। Paviddha gocare का अर्थ है: चरागाह से विमुख (vissaṭṭha), जहाँ एकांतवासी की आवश्यकताएँ मिलना कठिन है। Lūkhe का अर्थ है: घी आदि औषधियों की अनुपलब्धता के कारण दयनीय स्थान, जो वायु रोग (वातरोग) के लिए प्रतिकारक (सप्पाय) का कार्य करती हैं, और उस क्षेत्र की ऊबड़-खाबड़ भूमि के कारण। Kathaṃ bhikkhu(monk) karissati का अर्थ है: भगवान बुद्ध ने पूछा: "हे भिक्षु! तुम कैसे निवास करोगे?"

यह प्रश्न सुनकर, थेरा ने "पीतिसुखेन" से शुरू होने वाले श्लोकों का उच्चारण किया ताकि वे अपने आनंदमय जीवन को प्रकट कर सकें, जो परमानंद (पीति) और आनंद (सोमनस्स) आदि भावों से परिपूर्ण था; इंद्रिय-इच्छाओं से मुक्त (निरामिस)। यहाँ, पीतिसुखेन का अर्थ है: उस प्रकार के उत्साह से परिपूर्ण सुख, जो उत्तेजना और रोमांच से चिह्नित होता है। इसी कारण उन्होंने "विपुलेन" कहा, जिसका

अर्थ है अत्यंत; यही अर्थ है। फरमानो समुस्सयं का अर्थ है: जैसा कि कहा गया है, उत्साह के आनंद से परिपूर्ण (समुत्तित) उच्च दृश्य रूपों (रूप) से संपूर्ण शरीर व्याप्त हो और उसे स्थायी रूप से व्याप्त बनाए रखे। लूखम्पी अभिसंभोंतो का अर्थ है: एकांतवास के निरंतर आचरण (वुत्ति) के कारण वन में निवास करने से उत्पन्न होने वाली संन्यासियों की आवश्यकताओं (पच्चय) की कमी (लूख) को विशेष रूप से अनुभव करना (अभिभवन्तो) और सहन करना (अधिवासेनतो)। विहारिसामि कानाने का अर्थ है: मैं वन क्षेत्र में ध्यान के आनंद और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास के सुख के साथ निवास करूँगा; यही इसका अर्थ है। इसलिए उन्होंने कहा: "सुखंच कायेन पटिसंवेदेषिं। (मैंने अपने शरीर के माध्यम से भी सुख का उचित अनुभव किया।"

"क्योंकि जब भी कोई ध्यान करता है (सम्मसति)

उदय और अंत (उदयब्बाय) पर

स्कंध (समूह) से व्यक्ति को आनंद प्राप्त होता है

स्पष्टता के कारण (पीति) और आनंद (पामोज्जा)

उस अमरता (अमता) की समझ।

भावन्तो सतिपट्ठे का अर्थ है: शरीर को निरंतर देखने (कायानुपस्सना) से शुरू होने वाली जागरूकता की चार अवस्थाओं (सतिपट्टाना) को जागृत करना और विकसित करना (उप्पादन्तो), जो सही मार्ग (मग्ग) से संबंधित हैं। इंद्रियाहि का अर्थ है: सद्धा से शुरू होने वाली पाँच इंद्रियाँ, जो सही मार्ग (मग्ग) से संबंधित हैं। बलानि का अर्थ है: सद्धा से शुरू होने वाली पाँच प्रकार की शक्तियाँ, इसी प्रकार बोझांगानी का अर्थ है: सतिसंबोझंग के तत्व की मानसिक जागरूकता से शुरू होने वाले ज्ञान के सात तत्व। व्याकरणिक शब्द 'च' से इसका सामूहिक समावेशन (सम्मप्पधान), जादुई शक्तियों का आधार (इद्धिपाद) और सही मार्ग के गुण (अंग) है। वास्तव में, इससे वियोग (विनभाव) के कारण ही इनका अनुभव होता है, परन्तु इसे ग्रहण करने से ही इनका अनुभव होता है। विहारिसामि का अर्थ है: मैं मार्ग के आनंद (मग्ग), उस सिद्धि (अधिगम), फल के सुख (फल) और निर्वाण के आनंद में निवास करूँगा।

Āraddhaviriye का अर्थ है: चार प्रकार के उचित प्रयासों (सम्मप्पधान) के प्रभाव में प्रेरित (पग्गहित) प्रयास (वीर्य)। Pahitatte का अर्थ है: निर्वाण की ओर उपयुक्त रूप से निर्देशित मन। Niccaṃ daḷhaparakkame का अर्थ है: वे जिनके प्रयास हर समय कभी शिथिल (सिथिला) नहीं होते। Samagge का अर्थ है: वे जो विवाद के अभाव के प्रभाव में शारीरिक एकता प्रदान करके एकजुट होते हैं। Sahite का अर्थ है: सही दृष्टिकोण (दिठ्ठी), नैतिक उपदेशों (शील) और संन्यास (सामञ्ञ) के संबंध में पवित्र जीवन के साथी नेताओं (सब्रह्मचारी) को देखकर। इससे वह अच्छे मित्रों के होने की अपनी समृद्धि को दर्शाता है।

अनुस्सन्तो सम्बुद्धं का अर्थ है: सदा स्वयंजागृत बुद्ध को याद रखना; वे समस्त सत्यों (धम्म) के ज्ञान से भली-भांति भली-भांति परिचित हैं; अग्गं का अर्थ है: समस्त प्राणियों में श्रेष्ठ होने के कारण सर्वोपरि। दंतं का अर्थ है: सर्वोत्तम प्रशिक्षण से प्रशिक्षित; समाहितं का अर्थ है: अतुलनीय एकाग्रता से परिपूर्ण; अतंदितो का अर्थ है: आलसी न होने के बाद। रत्तिन्दिवं का अर्थ है: मैं निरंतर यह स्मरण करते हुए निवास करूंगा: "इति पि सो भगवा अरहं (इस प्रकार भी, वह भगवान पूजा के योग्य हैं), इत्यादि, हर समय।" इससे उन्होंने बुद्ध के निरंतर स्मरण (अनुसति) पर ध्यान केंद्रित करने के अपने निरंतर अभ्यास (कम्मठन) को दर्शाते हुए, सर्वत्र मानसिक अभ्यास (कम्मठन) में अपनी निरंतर संलग्नता (अनुयोग) का वर्णन किया; पूर्व (संदर्भ) से उन्होंने मानसिक अभ्यास (कम्मठन) के पोषण (परिहार्य) के प्रति अपनी भक्ति (अनुयोग) को प्रकट किया।

इस प्रकार कहने के बाद, थेरा ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में गहनता से लीन होकर (उस्सुक्कापेत्व) अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अप्पदान में कहा गया है:—

"एक लाख युग (कप्पा)

कुछ समय पहले, नेता (नायाको) का उदय हुआ।

पूर्ण (अनोमा) नाम का, अतुलनीय

(अमितो), नाम से पदुमत्तरा।

उन्होंने एक व्यक्ति के अंदाज़ में बात की (vadano)।

कमल का फूल; उसकी उत्तम त्वचा थी

कमल के समान निर्मल; वह बिल्कुल बेदाग था।

(अनुपालिटो) सांसारिक मैटर (लोकेना) द्वारा

कमल के फूल के समान, बिना नमी वाला

पानी के साथ।

उस नायक की आंखें कमल की पंखुड़ियों जैसी थीं।

(पदुमपट्टाखो); सुंदर (कंटो) जैसा

कमल की तरह; उसमें मीठी सुगंध थी।

श्रेष्ठ कमल के फूल के समान और

इसलिए वह सबसे उत्कृष्ट कमल है।

फूल (पदुमत्तरा)।

वह दुनिया के पुरुषों में सबसे उम्रदराज थे।

अहंकार से मुक्त; वह एक आँख की तरह था

अंधे लोग। वह शांतिपूर्ण था

प्रकट होना और छिपा हुआ खजाना (मिधी)

गुणों से परिपूर्ण; वह दया का सागर थे।

और विचार (सती)।

कभी-कभी उस महान नायक की प्रशंसा की जाती थी

(accito) ब्रह्माओं, दिव्य प्राणियों और

टाइटन्स (असुर); वह सबसे पूर्व था-

भीड़ के बीच उत्कृष्ट विजेता

दिव्य और मानवीय प्राणियों के साथ। उनके साथ

मधुर सुगंध वाले शब्द, मधुर ध्वनि वाले (रूटा),

उन्होंने सभी श्रोताओं को प्रसन्न किया (रंचयम्), प्रशंसा की

उनके अपने शिष्य:—

इस भिक्षु वक्काली के अनुसार, वहाँ

ऐसा कोई भी मौजूद नहीं है; उसके पास

धार्मिक आस्था (सद्धा) के प्रति उत्सुक हो जाना और

देखने के लिए अत्यधिक लालची (लालासो)

मुझे।

उस समय मैं एक ब्राह्मण का पुत्र था।

हंसवती नगर में; यह सुनकर

उस प्रशंसा के शब्द से मैं अत्यंत प्रसन्न हो गया।

(अभिरोकयिम) उस स्थिति (ठाना) का।

तथागत को आमंत्रित करने के बाद, स्पष्ट रूप से

शुद्ध (विमला) अपने शिष्यों के साथ,

फिर मैंने उन्हें सात दिनों तक खाना खिलाया और ढक दिया।

उन्हें कपड़ों के साथ।

उनके चरणों में सिर के बल गिरने के बाद,

उत्साह से भरपूर और गहराई में डूबा हुआ

गुणों के अनंत सागर (गुण), मैं

उन्होंने ये शब्द कहे: हे ऋषि! मैं चाहूँगा

जब आप उस (भिक्षु) के समान हों

सात दिन पहले, सबसे अग्रणी के रूप में प्रशंसा की गई।

वे भिक्षु जो सच्ची श्रद्धा (सद्धा) रखते हैं।

इस प्रकार कहे जाने पर,

महान वीर, निर्बाधित (अनावरण)

हे ऋषि, महान ऋषि ने यह कहा (उदिराय)।

श्रोताओं से शब्द (वाक्यम्):

इस युवक को देखिए, यह उत्तम वस्त्रों से सुसज्जित है।

पीले रंग के कपड़े (मट्ठा),

बलिदानों का संचय (उपासिटा)

(यञ्ञा) सोने में (अंग) चिह्न (हेमा)

आँखों को भाने वाला (मनचरा)

जना के समूह में से;

यह वाला, भविष्य में आने वाले समय में,

वह सबसे अग्रणी शिष्य बन जाएगा

ऋषि गौतम उन लोगों में से हैं जो उत्सुक हैं

(अधिमुत्तो) पवित्र आस्था (सद्धा)। या तो

किसी दिव्य प्राणी या मनुष्य बन जाने के बाद-

वह मुक्त हो जाएगा (वज्जितो)।

सभी चिंताओं (संताप) से, सर्वांगीण

(paribyūḷho) हर रूप से प्रदान किया गया

वह अपने सुखदायक धन के साथ इधर-उधर घूमेगा

बार-बार पुनर्जन्म के चक्रों के माध्यम से

आनंदित हो जाओ।

दुनिया में एक गुरु का उदय होगा।

कुल द्वारा गौतम नाम दिया गया, की संतान

ओक्काका का परिवार, एक लाख

इसलिए युग (कप्पा)।

वह उनकी शिक्षाओं का उत्तराधिकारी होगा।

(धम्मेसु), उनके प्रिय पुत्र द्वारा निर्मित।

वह सत्य (धम्म) का शिष्य बनेगा।

वक्काली नाम से जाने जाने वाले गुरु के।

मेरे उस विशिष्ट कार्य द्वारा जो मैंने किया है

इच्छाशक्ति और आत्म-संकल्प, होने के बाद

मैंने अपने मानव स्वरूप का त्याग कर तावतिंसा को प्राप्त किया।

(स्वर्ग)।

हर जगह खुश रहने के बाद, मैं भटकने लगा।

मेरे बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों के बारे में

प्रमुख और गौण अस्तित्व (भावभावे);

मैं एक ऐसे परिवार में पैदा हुआ था जो गैर-

सावत्थी शहर में स्थित इकाई। मेरी

दुखी (दीना) मन वाले (माता-पिता) डरे हुए

मुझे राक्षस (पिसाका) के खतरे ने ऐसा करने के लिए मजबूर किया,

जो ताजा मक्खन की तरह कोमल था (नोनी-

तसुखुमाला), अंकुर (पल्लव) के समान

प्राकृतिक कमल (कोमल) का, एक छोटा (मंडम)

बच्चा पीठ के बल लेटा हुआ है, आप भी लेट जाइए।

महान ऋषि के चरणों के आधार पर, यह कहते हुए

अत:: हे रक्षक! हे नेता! हम आपको अर्पित करते हैं

कृपया इस (बच्चे) की शरण लें।

फिर वे, ऋषि, उन लोगों के आश्रयदाता जो

वे भयभीत थे, उन्होंने मुझे अपने हाथों से स्वीकार किया।

कोमल कमल के फूल के समान, चिह्नित (अंकित)

पहियों के जाल (जाली) के साथ। आरंभ

(पभूति) उसके बाद से मेरी देखभाल की गई

जिसने ध्यान देने की आवश्यकता नहीं समझी (अरक्खेय्या),

मैं स्पष्ट रूप से शत्रुता से मुक्त हो गया और पूरी तरह से

खुशी के माहौल में पली-बढ़ी।

जब एक मिनट के लिए (मुहुत्तकम्) मैं

सुगता के बिना मुझे ऊब महसूस होने लगी (उक्कण्थामि);

मैंने अपने धर्म का त्याग कर बेघरों के संगठन में शामिल हो गया।

भिक्षुओं से मेरी सात साल की मुलाकात के बाद

जन्मदिन। मैं असंतुष्ट होकर (देखता रहा)

सुंदर रूप (रूपं) जो अच्छी तरह से विकसित हो गया था

वह अपनी समस्त परिपूर्णताओं से परिपूर्ण था और

उनकी नीली आंखों (अक्खी) के साथ, जो नयना की आंखें हैं।

मेरी इस रुचि के बारे में जानकर

विजेता बुद्ध की शारीरिक सुंदरता

फिर उन्होंने मुझे अपनी सलाह दी। हे वक्कली!

सुंदर रूप में जो कुछ है, बस इतना ही काफी है।

जिसमें तुम्हें आनंद आता है और जो मूर्खतापूर्ण है

आनंद।

बेशक जो कोई भी अच्छे सत्य (धर्म) को देखता है,

वह बुद्धिमान व्यक्ति मुझे देखता है; अच्छाई को नहीं देखता।

वह मुझे सत्य (धम्म) नहीं देखता, हालांकि

वह मेरी तरफ देखता है।

भौतिक शरीर के अनगिनत नुकसान हैं।

और यह एक विषैले पेड़ जैसा दिखता है; यह है

यह सभी बीमारियों का निवास स्थान है; यह एक

अत्यंत कष्टदायी पीड़ा (दुक्खा)।

परिणामस्वरूप, तिरस्कृत होने के बाद

आपको सुंदर शरीर (रूप) का अनुभव करना चाहिए।

उदय का उद्भव और लुप्त होना

(वया) समुच्चयों (खंड) और

शारीरिक विकृति (उपक्किलेसा); तुम

आसानी से अपने लक्ष्य तक पहुंचें (सुखेना)।

इस प्रकार निर्देश प्राप्त करने के बाद,

वह नेता, जो मेरे कल्याण का साधक है,

मैंने गिद्ध शिखर पर चढ़ाई की और अपना

पर्वत की गुफा में ध्यान (झान)

(कंदरा).

स्वयं को के चरणों में स्थापित करने के बाद

उस पहाड़ी पर, महान ऋषि ने मुझे सांत्वना दी।

(अस्सायी)। यह बात सुनकर

हे वक्काली! विजेता द्वारा निर्मित,

मुझे खुशी हुई।

मैं चट्टानी में कूद पड़ा (पक्खंदिं)

पहाड़ी की ढलान जो उतनी ही ऊँची थी जितनी कि

कई आदमियों की ऊँचाई तक पहुँच गया लेकिन ज़मीन तक पहुँच गया

तब भी आसानी से, शक्ति के कारण

बुद्ध।

फिर उन्होंने मुझे सत्य सिखाया

(धम्म), उदय और लुप्त होना

स्कंधों का; जिसमें

मैंने उस सत्य (धम्म) को समझ लिया।

अरहंत पद प्राप्त किया।

यह एक बहुत बड़े आंदोलन के बीच में था।

दर्शकों को यह पता चले कि महान गुरु

जो अपनी बुद्धि (मति) तक पहुँच चुके थे

अभ्यास (चरणा) की समाप्ति के बाद घोषणा की गई।

(paññapesi) मुझे उन लोगों के मुखिया के रूप में जो थे

(अधिमुत्त) पवित्र आस्था (सद्धा) के प्रति उत्सुक।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले मैंने अपना कर्म किया था;

किसी भी बुरी सत्ता को याद मत करो; यह

यह मेरी श्रद्धा का फलदायी परिणाम है।

बुद्ध को दिया गया सम्मान

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

लेकिन अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने अपने अरहंत पद (अन्ना) को प्रकट करते हुए ये स्वयं-श्लोक कहे। तब गुरु ने भिक्षुओं के बीच बैठकर उन्हें धार्मिक आस्था के प्रति उत्साही लोगों में अग्रणी स्थान दिया।

श्लोक पर टिप्पणी

थेरा वक्काली का

तैयार है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(206):विजिटासेना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (206) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
206. विजितसेना
बुद्ध युग में कोसलन के हाथी-प्रशिक्षकों के परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम विजितसेना रखा गया। उनके मामा सेना और उपसेना [1] दोनों भिक्षु संघ में प्रवेश कर चुके थे और अरहंत (प्रबुद्ध) बन चुके थे। विजितसेना ने अपने परिवार की कला सीखने के बाद भगवान (बुद्ध) के दोहरे चमत्कार [2] को देखा , विश्वास किया और स्वभाव से धार्मिक होने के कारण अपने मामाओं के अधीन भिक्षु संघ में प्रवेश कर लिया। उनके निर्देशों से प्रशिक्षण लेकर वे अंतर्दृष्टि के मार्ग पर अग्रसर हुए, परन्तु उनका मन विभिन्न बाह्य वस्तुओं में विवेचना करता रहा, इसलिए उन्होंने उसे संबोधित किया:

[355] ओलग्गेसामि ते चित्त आनिद्वरेव हत्थिनां,॥
न तां पापे नियोजेस्सां कामजाला सरिराजा॥ ॥

[356] त्वाm [40] ओलग्गो न गच्छसी द्वारविवराँ गजो'व अलभन्तो,॥
न च चित्तकलि पुनप्पुनाऽ पसहं पपरतो कैरिसासी॥ ॥

[357] यथा कुञ्जरां मदंतां नवग्गहामन्कुसल्लहो,॥
बलवा अवत्तेति अकामं एवं अवत्तयिस्सं तं.॥ ॥

[358] यथा वराहयदामकुसलौ सारथि पवारो दमेति अजन्नं,॥
एवं दमयिस्साँ तां पतिथितो पञ्कासु बलेसु ॥ ॥

[359] सतीया तं नबंधिस्सा पयत्तत्तो वोदापेस्सामि,॥
वीर्यधुरनिग-अहितो न नियातो दूरं गामिससे चित्ता' ति.॥ ॥

[355] मैं तुम्हें रोकूंगा, ध्यान रखो, जैसे हाथियों को
नगरद्वार के छज्जे [3] से रोका जाता है।
मैं तुम्हारे बुरे कामों में तुम्हारा साथ नहीं दूंगा,
हे इच्छाओं के जाल, हे शरीर से जन्मे।

[356] इस प्रकार रोके जाने पर, यह तुम्हारा नहीं होगा, आज़ाद घूमने के लिए।
जैसे हाथी द्वार से नहीं निकल पाता,
हे चुड़ैल, अपनी पूरी कोशिश करो, [4] बार-बार;
तुम भटक नहीं सकती, जो पाप करने में इतनी प्रसन्न हो।

[357] जिस प्रकार एक व्यक्ति दृढ़ता से हुक चलाता है,
वह अदम्य, अनियंत्रित हाथी को
उसकी इच्छा के विरुद्ध मोड़ देता है, उसी प्रकार मैं तुम्हें वापस मोड़ दूँगा।

[201] [358] जैसे कुशल चालक, घोड़े को प्रशिक्षित करने में माहिर,
शुद्ध नस्ल के घोड़े के स्वभाव को वश में करता है,
वैसे ही मैं तुम्हें भी नियंत्रण में लाऊंगा।
पंचगुणी आध्यात्मिक शक्ति के बल पर।

[359] हाँ, उचित ध्यानपूर्ण एकाग्रता से मैं तुम्हें बांध लूँगा,
मैं स्वयं संयमित हूँ, और हे मेरे हृदय, मैं तुम्हें भी संयमित करूँगा।
उचित ऊर्जा के बंधन में बंधे हुए,
हे मेरे हृदय, तुम मुझसे दूर नहीं जाओगे। [5]

इस प्रकार अपने विचारों को संयमित करके थेरा ने अंतर्दृष्टि का विस्तार किया और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

[1] सारिपुत्त का भाई नहीं (CCXXXVIII.)। न ही चाचा का कहीं और उल्लेख मिलता है।

[2] देखें XXXI.

[3] = ख़ुदका-द्वारं, या निचला, छोटा दरवाज़ा (टिप्पणी)।

[4] = चित्त-कालकानि। मैं पसहं को पसहंतो के रूप में लेता हूं , 'बल का प्रयोग करना। ब्र. साइ. पसंगा पढ़ता है , सरण-संपाससावसेना द्वारा व्याख्या । सी एफ एस. एमएस. डॉ. ओल्डेनबर्ग के नोट में, पृ. 40.

[5] यह इस शैली में रचित तीन कविताओं में से दूसरी है - अर्थात्, एक बेहतर स्व पुराने अविकसित आवेगों के विद्रोह को नियंत्रित करने का प्रयास कर रहा है। तुलना करें LXXVII. और CCLXII.

5.9 [206] विजितसेनत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी

ओलाग्गेस्सामी से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा विजितसेण का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए, और भगवान अत्थादस्सी के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर उन्होंने गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संन्यासी बनकर संसार का त्याग किया और वन में रहने लगे, तभी उन्होंने भगवान को आकाश में जाते हुए देखा, वे श्रद्धा से भर गए और अपने हाथ जोड़कर खड़े हो गए, जिससे उनकी श्रद्धा का भाव प्रकट हुआ। गुरु ने उनका इरादा जानकर आकाश से अवतरित हुए। उन्होंने भगवान को स्वादिष्ट मीठे फल भेंट किए, जिन्हें भगवान ने उन पर दया करके स्वीकार किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप वे जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे और कोसल राज्य में हाथी प्रशिक्षकों (हत्थाचरिया) के परिवार में पुनर्जन्म लिया, जब इस बुद्ध का जन्म हुआ; विजितसेन नाम धारण करके उन्होंने ज्ञान की आयु प्राप्त की। उनके चाचा सेना और उपसेना, जो दो हाथी-प्रबंधक थे, ने गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, संतत्व की प्रारंभिक अवस्था (वास धुरा) के अपने सामान्य कर्तव्यों का पूर्ण रूप से पालन किया और अरहंतत्व प्राप्त किया। विजितसेन ने हाथी प्रशिक्षण (सिप्पा) में भी निपुणता प्राप्त कर ली थी, लेकिन बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों से बचने की अपनी प्रबल इच्छा (अज्जासय) के कारण उनका मन गृहस्थ जीवन से विरक्त हो गया और उन्होंने अपने चाचा थेरों की उपस्थिति में भिक्षु का रूप धारण कर लिया। गुरु के दोहरे चमत्कार को देखने के बाद उन्होंने उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त कर ली थी; अपने चाचाओं के निर्देश और सलाह के अनुसार आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने का कर्म करते हुए, उन्होंने स्वयं आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के मार्ग से जुड़कर (लंगित्वा) अपने उस मन को परामर्श देने के लिए श्लोकों का उच्चारण किया जो बाहरी (बहिद्धा) अनेक इंद्रिय-विषयों (आरम्मण) में भटक रहा था।

355. "हे मन! मैं तुम्हें अपने वश में रखूंगा।"

मैंने हाथियों के साथ जो किया था, उसी तरह का काम मैंने पहले भी किया था।

सुई द्वार। मैं तुम्हें नहीं रोकूंगा।

बुराई में लगे हुए; हे शरीर से जन्मे,

कामुक सुखों का जाल!

356. "तुम (अब, अपनी मर्जी से) नहीं जाओगे;

चूंकि अब आपको हिरासत में रखा गया है

संयम; हाथी के समान

यदि आपको खुला द्वार नहीं मिलता है, तो आप

इधर-उधर भटकने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए क्योंकि

हे अशुभ मन! तुम जो

आपको ऐसा करने में आनंद आया था

बार-बार बुरे कर्मों के तहत

आश्रय न मिलने का प्रभाव

स्वयं (पसाक्का)।

367. "ठीक वैसे ही जैसे अंकुश धारण करने वाला,

अपनी शक्ति से, नव-कब्जे में लिए गए व्यक्ति पर विजय प्राप्त करता है।

जंगली हाथी को उसकी इच्छा के विरुद्ध (अकामं)

इसी प्रकार मैं तुम्हें भी अपने वश में कर लूंगा।

358. एक उत्कृष्ट सारथी के अनुसार,

घोड़ों को वश में करने में माहिर, वह जानवरों को भी वश में कर लेता है।

शुद्ध नस्ल का घोड़ा, उसी प्रकार,

पांचों में स्थापित हो जाने के बाद

मैं तुम्हें बलवान बना दूंगा।

359. "हे मन! मैं तुझे अपने से बांध लूंगा

जागरूकता (सति); इरादा बन जाना

मैं तुम्हें वश में कर लूंगा।

आप बोझ के नीचे दबे हुए हैं

मेरे प्रयास से, आप ज्यादा दूर नहीं जा पाएंगे

यहाँ।

वहाँ, ओलाग्गेसासामि का अर्थ है: मैं नियंत्रण करूँगा, मैं संयम रखूँगा। ते का अर्थ है: तुम (तं); यह संबंध कारक शब्द वास्तव में कर्म कारक (उपयोग) के अर्थ में है। दूसरे शब्दों में, "ते गमनं, तुम्हारा जाना" में शेष अभिव्यक्ति है। हत्थिनं का अर्थ है: हाथी (हत्थिन); इस प्रकार, यही अर्थ है। चित्त का अर्थ है: वह अपने मन को "हे मन!" कहकर संबोधित करता है। क्योंकि वह इसे नियंत्रित करने की इच्छा रखता था, इसलिए उसने इसे दिखाने के लिए "आणिद्वारेव हत्थिनम्" कहा। दीवार से घिरे शहर के छोटे द्वार को छोटा द्वार (आणिद्वार) कहा जाता है; जब किसी छोटे द्वार (आणि) में कटोरे (घटिका) जैसा छेद (चिद्दा) बना दिया जाता है, तो अंदर खड़े लोगों के लिए बिना यंत्र (यांता) के उसे खोलना संभव नहीं होता; क्योंकि मनुष्य, बैल, भैंस आदि बाहर नहीं जा सकते, इसलिए हाथी स्वामी (हत्थाचरियो) ने उस हाथी को, जो शहर से बाहर जाना चाहता था, बाहर जाने की अनुमति नहीं दी (निवारेसि), जबकि उसने उसे शहर से बाहर जाने के लिए मना लिया था (पालोभेत्वा)। दूसरे शब्दों में, एक बाधक (पालिघा) द्वार (द्वार) एक छोटा द्वार (आणिद्वार) होता है। वहाँ, एक अवरोध (पालिघा) रखकर (तिरियं) वे उस पर एक नुकीली कील (आणिं) ठोकते हैं (आवुण्ति) जिसे वृक्ष की सुई के समान माना जाता है (रुक्खसूचि)। पापे का अर्थ है: ऐसे बुरे कर्म जैसे कि उत्पन्न हुआ (उपज्जनक), लोभ (अभिज्जा) और इसी प्रकार के अदृश्य रूप (रूपे) आदि; तं न नियोजेस्सं का अर्थ है: मैं आग्रह नहीं करूँगा (नियोजिस्सामि)। कामजाल का अर्थ है: हे तुम जो कामुक सुखों (काम) के जाल (जाल) में फँस गए हो। वास्तव में, जिस प्रकार मछली पकड़ने वालों (बंध) और हिरण शिकारियों का जाल मछलियों आदि के प्रति उनकी इच्छा (काम) के अनुसार कर्म करने का फल देता है, उसी प्रकार, अज्ञानपूर्ण ध्यान (अयोनिसोमनासिकारा) के अनुरूप होने वाला मन मार की इच्छा के अनुसार कर्म करने का फल देता है। वास्तव में, इसी कारण वह जीवों को हानि (अनत्था) में डालता है। सरितज का अर्थ है: हे शरीरों (शरीरेषु) में उत्पन्न होने वाले (उपज्जनक)। वास्तव में, प्राणियों के पाँच घटकों (खंड) के अस्तित्व में, मन को "शरीरज (शारीरिक उत्पाद)" कहा गया है, क्योंकि इसमें भौतिक रूप (रूपपटीबद्धवुत्ति) पर निर्भर रहने की प्रवृत्ति होती है।

त्वं ओलाग्गो न गच्छसि का अर्थ है: हे अशुभ (कलि) मन! मैंने तुम्हें सति और ज्ञान जैसे प्रेरक (पटोदा) गुणों से वश में कर लिया है, इसलिए अब तुम अपनी इच्छा के अनुसार नहीं चल पाओगे; तुम्हें अज्ञानपूर्ण ध्यान के मार्ग पर चलने का अवसर नहीं मिलेगा। किस प्रकार? द्वारविवरम गजो व अलभंतो का अर्थ है: जैसे हाथी को नगर या हाथियों के दमन स्थल से बाहर निकलने का द्वार न मिले। चित्तकली का अर्थ है: हे दुर्भाग्यशाली मन! पुनप्पुनम का अर्थ है: बार-बार (अपरापरण)। पसाक्का का अर्थ है: शरणस्थलों के शुभ दर्शन (संपस्सा) से कोई संबंध न रखना (या उनकी शरण में न जाना)। पापरतो का अर्थ है: पहले की तरह ही बुरे कर्म करने में आनंद लेना; न करिस्ससी का अर्थ है: अब तुम ऐसा नहीं करोगे; मैं तुम्हें ऐसा करने की अनुमति नहीं दूंगा; यही इसका अर्थ है।

अदन्तं का अर्थ है: अदम्य (अदमितं); हाथी की तरह प्रशिक्षित न किया गया हो। नवग्घं का अर्थ है: हाल ही में पकड़ा गया (अचिरगहितं); अंकुसगहो का अर्थ है: हाथी-स्वामी (हत्थाचरियो)। बलवा का अर्थ है: शरीर और ज्ञान दोनों की शक्ति से युक्त। आवत्तेति अकामं का अर्थ है: निषेध के कारण (निषेधना) वह हाथी को मोड़ देता है (निवत्तेति), लेकिन उसकी इच्छा के बिना (अनिच्छन्तं)। एवं आवत्तयिस्सं का अर्थ है: जैसा कि हाथी स्वामी ने कहा है, उसी प्रकार मैं उस मन को, दुर्भाग्य के मन को, दुष्ट आचरण से रोककर मोड़ दूँगा (निवत्तयिस्सं)।

वराहयदमकुसालो का अर्थ है: उत्कृष्ट घोड़ों को वश में करने में कुशल (कुसालो)। सारथी पावरो का अर्थ है: घोड़ों को वश में करने वाले सारथियों में उससे भी श्रेष्ठ और प्रतिष्ठित (विसित्तो)। दमेति आजञ्ञं का अर्थ है: वह शुद्ध नस्ल के घोड़े को वश में करने में समय और स्थान के अनुरूप कोमल (सन्ह) और कठोर (फरुसा) दोनों तरह से वश में करता है, अनुशासित (विनेति) करता है और आज्ञाकारी (निब्बिसेवनं) बनाता है। Patiṭṭhito pañcasu balesu का अर्थ है: सद्धा (पवित्र विश्वास) आदि पाँच प्रकार की शक्तियों में स्थापित होकर, taṃ damayissaṃ का अर्थ है कि मैं तुम्हें अविश्वास (अस्साधिया) आदि से रोककर वश में कर लूँगा; इस प्रकार, यही अर्थ है।

Satiyā taṃ nibandhissaṃ का अर्थ है: हे दुर्भाग्यशाली मन! मैं तुम्हें मानसिक चेतना (sati) की रस्सी (yotta) से बांधकर अपने वश में रखूंगा (nibandhissāmi) और मानसिक अभ्यास के स्तंभ (kammaṭṭhāna thambha) पर अपने नियंत्रण में रखूंगा, तथा तुम्हें

चरागाह (gocarajjhatta) के भीतर से बाहर जाने नहीं दूंगा (adento)। Payutto te damessami का अर्थ है: मैं तुम्हें वहीं बांधकर (nibandhanto) अपने वश में कर लूंगा (damessami); मैं तुम्हें आत्म-दुराचार (saṃkilesa) की अशुद्धियों से शुद्ध कर दूंगा (yuttappayutto)। विरियाधुरा निग्ग-अहितो का अर्थ है: जिस प्रकार उक्त घोड़े को जुए (युगनिग्ग-अहितो) द्वारा वश में रखकर चतुर और कुशल सारथी द्वारा जुए में डालकर जुए से बाहर नहीं जाने दिया जाता, उसी प्रकार, हे मन! मेरे प्रयास (वीर्य) के उत्तरदायित्व (धुरा) के तहत तुम्हें भी वश में रखा गया है और सत्यनिष्ठा (सातच्च) के अलावा किसी अन्य कार्य (अञ्ञथा) की अनुमति नहीं दी गई है, इसलिए तुम यहाँ से दूर चरागाह (गोचराज्झट्टा) के भीतर नहीं जाओगे। वास्तव में, जो व्यक्ति निरंतर ध्यान (भावना) के विकास में लगा रहता है, उसके लिए मानसिक अभ्यास (कम्मत्थान) के अतिरिक्त, यहाँ तक कि निकट का पदार्थ (आसन्नं) भी दृष्टि (लक्खण) से दूर का प्रतीत होता है; इस प्रकार, थेरा इन श्लोकों के माध्यम से अपने मन को इस प्रकार वश में रखते हुए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को उत्तरोत्तर विकसित करता है और अरहंतत्व प्राप्त करता है। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

"स्वयंजागृत को देखकर

सुनहरे रंग के बुद्ध, वरदान प्राप्त

बत्तीस उत्कृष्ट अंकों (लक्खणा) के साथ

लकड़ी के ऊपर जाना, कुछ इस तरह

फूलदार साल के पेड़ पर, मेरे पास घास थी-

मैंने तैयारी कर ली और अपना अनुरोध प्रस्तुत किया।

सर्वश्रेष्ठ बुद्ध: बुद्ध को आशीर्वाद मिले

मुझ पर दया करो; मैं चाहता हूँ कि

दान-भोजन देना।

यशवान बुद्ध अत्थादस्सी

सहानुभूति और दया, यहाँ आकर

मेरा इरादा जानो, नीचे उतर गया

मेरा आश्रम।

नीचे उतरने के बाद, आत्मजागृत

बुद्ध पत्तों से बिछी चादर पर बैठ गए।

प्राप्त करने वाला अंकन अखरोट (भल्ला-

मैंने इसे बुद्ध को अर्पित किया, जो सर्वश्रेष्ठ हैं (टाका)।

तब विजेता ने उस अखरोट का सेवन किया।

जब मैं इस पर विचार कर रहा था (कि

(मेरी दान-पुण्य)। अपना मन बना रहा हूँ

इससे अत्यंत प्रसन्न होकर मैंने अपना भुगतान कर दिया।

विजेता को श्रद्धांजलि।

यह अठारह सौ युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मैंने तब अपनी भेंट चढ़ाई थी

फल; मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

मेरे द्वारा अर्पित किए गए फल का।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने अरहत्व को प्रकट करने के लिए इन श्लोकों का उच्चारण किया।

थेरा विजितसेना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(207): यशदत्त

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (207) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
207. यशदत्ता
बुद्ध युग में मल्ल (राजा) वंश में पुनर्जन्म लेकर यशदत्त नाम से उनका जन्म हुआ और उन्होंने तकशिला में शिक्षा प्राप्त की। [1] इसके बाद घुमक्कड़ सबिया के साथ यात्रा करते हुए, [2] वे सावत्थी आए, जहाँ सबिया ने बुद्ध से प्रश्न पूछे। यशदत्त ने उत्तर सुने और बैठते हुए, आलोचना करने के लिए उत्सुकता से सोचा: 'मैं समना गौतम (बुद्ध) के प्रवचन में कमियाँ दिखाऊँगा।' अब बुद्ध उनके मन की बात जान गए और 'सबिया सूत्र' के अंत में इन श्लोकों में उन्हें संबोधित किया:

[360] उपरंभाचित्तो दुम्मेधो सुनाति जिनसासनाः,॥
अराका होति सद्धम्म नभसो पथवि यथा.॥ ॥

[361] उपरंभाचित्तो दुम्मेधो सुनाति जिनसासनाः,॥
परिहयति सद्धम्म कापक्खेव कैंडिमा॥ ॥

[362] उपरंभाचित्तो दुम्मेधो सुनाति जिनसासनाः,॥

परिसुस्ति सद्धम्मे मच्च अप्पोदके यथा.॥ ॥

[363] उपरंभाचित्तो दुम्मेधो सुनाति जिनसासना:,॥
न विरूहति सद्धम्मे खेते बीजाव पूतिकौ.॥ ॥

[364] यो च तूथेना सित्तेना सुनाति जिनसासनं,॥
खेपेत्वा असवे सब्बे सच्चिकत्वा अकुप्पतं,॥
पप्पुय्य परमं शांतिं परिनिब्बाति अनासावोऽति ॥॥ ॥

[360] जिसने बुद्धिहीन और आलोचनात्मक मन से
विजेता का उपदेश सुना,
वह सच्चे मार्ग (धम्म) से बहुत दूर है,
जैसे स्वर्ग से पृथ्वी दूर है। [3]

[361] जिसने बुद्धिहीन और आलोचनात्मक मन से
विजेता का उपदेश सुना,
वह सच्चे मार्ग (धम्म) से भटक गया,
जैसे महीने के अंधकारमय भाग में चंद्रमा।

[362] [202] जो बुद्धिहीन, आदि...
सच्चे मार्ग (धम्म) में वह मुरझा जाता है,
जैसे मछली जहाँ पानी कम हो जाता है।

[363] जो बुद्धिहीन, इत्यादि...
सच्चे मार्ग (धम्म) पर वह फला-फूला नहीं,
जैसे खेत में बोया गया सड़ा हुआ बीज।

[364] जिसने प्रसन्न और संतुष्ट मन से
विजेता का उपदेश सुना,
उसने मादक पदार्थों (विकृतियों/इच्छाओं) को त्यागकर,
उतार-चढ़ाव को समझा, [4] उसने ऐसी शांति प्राप्त की जो व्यक्त करने योग्य नहीं है,
और वह परिपूर्ण, समझदार और प्रतिरक्षाशील है।

इस प्रकार भगवान (बुद्ध) द्वारा संबोधित किए जाने पर, यशदत्त भावविभोर हो गए, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और अंतर्दृष्टि प्राप्त करके समय के साथ अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। और अन्न (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा करते हुए उन्होंने इन्हीं श्लोकों का उच्चारण किया।

[1] देखें बुड. इंड., पृ. 8, 28, 203.

[2] देखें सभिया की कहावत (गाथा) CLXXXVIII.; सुट्टा-निपाता, iii. 6.

[3] = श्लोक 218 (sic is: 278), सबिया के स्वयं के कथन (गाथा) में एक पंक्ति।

[4] अकुप्पता, अकुप्पा से बना एक बहुत ही दुर्लभ अमूर्त संज्ञा शब्द है, जिसका अर्थ है अविचलित, अविचलित। 'पूर्ण हो गया है' (परिनिब्बाति, अधिक सामान्यतः प्रतिपादक रूप परिनिब्बायति) का अर्थ है पूर्ण, संपूर्ण - अर्थात् जीवन के चरमोत्कर्ष और अंत को प्राप्त कर लिया है। 'समझदार,' आदि = अनासवो।

5.10 [207] यशदत्तत्तेरा के श्लोक पर टिप्पणी

उपरम्भचित्तो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा यशदत्त का है। इसका उद्गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, जिससे उन्हें इस और उस जन्म में बार-बार पुनर्जन्म (वट्ट) के चक्र से मुक्ति मिली। इस प्रकार, वे भगवान पद्ममुत्तरा के समय एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म हुए, ब्राह्मणों की कलाओं और विज्ञानों में निपुणता प्राप्त की, काम (इंद्रिय सुख) का त्याग किया, संन्यासी बनकर संसार का त्याग किया और वन में निवास कर रहे थे, जब संयोगवश उन्होंने गुरु को देखा, अत्यंत श्रद्धा से भर गए, हाथ जोड़कर उनकी स्तुति की। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने बार-बार के पुनर्जन्म के चक्रों में विचरण करते रहे और मल्ल राज्य में मल्ल के राजपरिवार में पुनर्जन्म हुए, जब इस बुद्ध का उदय हुआ; यशदत्त नाम प्राप्त करने के बाद, वयस्क होने पर वे तेखिला गए, वहाँ उन्होंने सभी कलाओं (सिप्पा) में पारंगत हुए और भ्रमणशील दार्शनिक (परिब्बाजक) सबिया के साथ भ्रमण करते हुए अंततः सावत्थी में भगवान बुद्ध के पास पहुँचे और बैठ कर मन ही मन कहने लगे, "मैं भिक्षु गौतम के दृष्टिकोण (वाद) में दोष (दोष) देखूँगा।" सबिया द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर देते समय दोनों के बीच हुई बातचीत को उन्होंने ध्यान से सुना और स्वयं परिणाम देखे। तब भगवान बुद्ध ने उनके आचार (मानसिक व्यवहार) को जानने के लिए, सबियासुत्त के अपने संपूर्ण उपदेश के अंत में उन्हें सलाह देने के लिए ये पाँच श्लोक कहे:

360. "एक मूर्ख व्यक्ति (दुम्मेधो) जो है

शत्रुतापूर्ण हृदय वाला सुनता है

विजेता का निर्देश; वह है

अच्छे सत्य (सद्धम्म) से बहुत दूर

जिस प्रकार पृथ्वी है

आकाश।"

361. "शत्रु हृदय वाला मूर्ख संदेश लेकर आता है"

विजेता का (शासन); वह क्षीण हो जाता है

(परिहायति) अच्छे सत्य से

(सद्धम्म), चंद्रमा के समान

उसका ढलता हुआ आधा हिस्सा।

362. "शत्रुतापूर्ण हृदय वाला कुबुद्धिपूर्ण

व्यक्ति शिक्षण को ध्यान से सुनता है

विजेता का (शासन); वह बन जाता है

अच्छी सच्चाई में हर तरफ से सूख गया

(सद्धम्म) कम कपड़ों में मछली के समान

पानी।

363. "शत्रुतापूर्ण-बुद्धिहीन"

व्यक्ति इस व्यवस्था को सुनता है

विजेता का (सासनं); वह करता है

अच्छे सत्य (सद्धम्म) में वृद्धि न होना

मिट्टी में सड़े हुए बीज के समान

क्षेत्र का।

364. "दूसरी ओर जो कोई भी सुनता है

विजेता के निर्देशानुसार,

प्रसन्न (तुट्ठ) हृदय से, वह,

सभी दोषों को दूर कर दिया और कल्पना की

अरहंतत्व (अकुप्पाका) की प्राप्ति होगी

परम शांति (परमं शांति);

वह रोगमुक्त होकर निर्वाण में प्रवेश करता है।

पूरी तरह।

वहाँ, उपारम्भचित्तो का अर्थ है: आक्रामक स्वभाव वाला; जो क्रोधित होने का संकेत देता है (अधिप्पायो); यही अर्थ है। दुम्मेधो का अर्थ है: नासमझ (निप्पञ्ञो)। आरका होति सद्धम्मा नभसो विय पथवी का अर्थ है: ऐसा व्यक्ति जो उचित कर्म (पटिपत्ति) के अच्छे सत्य (सद्धम्मा) से भी उतना ही दूर है जितना पृथ्वी आकाश से; वह उचित बोध (पटिवेध) के अच्छे सत्य (सद्धम्मा) से और भी अधिक दूर होगा। जो व्यक्ति इस प्रकार के झगड़ालू भाषण में संलग्न रहता है: "तुम इस धम्म और विनय को नहीं समझते," तो उचित कर्म (पटिपत्ति) के लिए शांत और सूक्ष्म अच्छा सत्य (सद्धम्मा) कहाँ से आएगा?

परिहायति सद्धम्मा का अर्थ है: वह पूर्व भाग (पुब्बभागीय) से संबंधित विश्वास (सद्धा) जैसे अच्छे सत्य (सद्धम्मा) और नौ प्रकार के पारलौकिक (लोकउत्तर) सत्यों (धम्म) से विलीन (निह्यति) हो जाता है। परिसुस्सति का अर्थ है: आनंद (पीहन) रस (रस) और उत्साह और आनंद (पीतिपामोज्जा) जैसी अच्छी अवस्थाओं (धम्म) के अभाव के कारण वह स्पष्ट रूप से सूख जाएगा। न विरूहति का अर्थ है: वह वृद्धि (विरूल्ह) और निरंतर विकास (वद्धि) प्राप्त नहीं करता है। पूतिकं का अर्थ है वह जो गोबर (गोमय) से लेप (दान) न किए जाने के कारण सड़ने की अवस्था में पहुँच गया हो।

तुट्ठेनचित्तेन एक क्रियात्मक अभिव्यक्ति है जो अपादान कारक (इत्तम्भूत) के विशिष्ट (लक्खण) रूप में प्रकट होती है; वह अपने मूल स्वरूप (अत्तमन) में था और प्रसन्न (पामुदितो) हो गया; यही इसका अर्थ है। खेपेत्व का अर्थ है: अच्छी तरह से काट दिया। अकुप्पतं का अर्थ है: अरहंतत्व। पप्पुय्या का अर्थ है: प्राप्त (पापुणित्वा)। परमं समतिं का अर्थ है: निर्वाण, आधार से रहित (अनुपादिसेष)। उसकी प्राप्ति (तदधिगमो) भी पूर्णतः समय के बिना (आगमना) हुई; किसी भी श्रेणी का कोई भी व्यक्ति (विधो) नहीं; इसलिए, इसे दर्शाने के लिए, उसने इसे "परिनिब्बाति'नासवो" कहा है।

गुरु द्वारा इस प्रकार सलाह दिए जाने पर, उन्हें पश्चाताप हुआ, उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने के मार्ग पर अग्रसर हुए और अल्पकाल में ही अरहंतत्व प्राप्त कर लिया। अतः अपदान में ऐसा कहा गया है।

मैंने सबसे उत्तम पुरुषों को देखा (द्वि-

पदुत्तमा) कनिकारा के समान चमक रहा है

फूल, वृक्ष की तरह चमकीला

प्रज्वलित दीपक और जगमगाते हुए, जो मिलते-जुलते हैं

सोना।

लंबे मुंह वाले पानी के घड़े को रखते हुए

(कमाण्डलु), मेरा सरकंडे का वस्त्र भी

मैंने अपने पानी के बर्तन के रूप में अपने मृग को रखा।

मेरी एक कंधे की त्वचा खुली हुई है (एकंसं)

और मैंने बुद्ध की स्तुति को सर्वश्रेष्ठ बना दिया।

हे महान ऋषि! आपने स्पष्ट रूप से पार कर लिया था

घोर अंधकार का सागर, जो कि

विनाशकारी (विधमा), बुरी तरह उलझा हुआ

(समाकुल) भ्रम के जाल से

ज्ञान का प्रकाश दिखाने के बाद

(ज्ञान).

आपकी तुलना में कुछ भी नहीं है

पृथ्वी तक का ज्ञान (जगतो)

गति उस दुनिया की ओर जाती है जिसकी सीमा

सीमा का उन्मूलन हो गया है (सुमुद्धरा)।

सभी संपत्तियों से अतुलनीय (सब्बावंत-

मनुत्तरं)। हे सर्वज्ञ बुद्ध!

उस ज्ञान के कारण, आप हैं

अतः इन्हें बुद्ध, यानी प्रबुद्ध व्यक्ति कहा जाता है।

मैं उस महान नायक को नमन करता हूँ,

सर्वज्ञ, बिना किसी बाधा के (अनावरा)।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले मैंने बुद्ध की प्रशंसा की थी, जो सर्वश्रेष्ठ थे।

मुझे किसी बुरी शख्सियत के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह मेरी प्रशंसा का फलदायी परिणाम है।

(बुद्ध के) ज्ञान का।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, अपने अरहंत पद (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए ही थेरा ने इन्हीं श्लोकों का उच्चारण किया।

थेरा यशदत्त के श्लोकों पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(208):सोना-कुटिकन्ना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (208) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
208. सोना-कुटिकन्ना
बुद्ध युग में अवंती देश में एक अत्यंत धनी पार्षद के परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्हें सोन नाम दिया गया। एक करोड़ (10 करोड़) मूल्य के कान के आभूषण धारण करने के कारण, वे कोटि- या कुटि-कन्ना (करोड़ कान) के नाम से प्रसिद्ध हुए। [1] बड़े होकर वे एक जमींदार बन गए, और जब पूज्य कच्चाना महान [2] उनके घर के पास ठहरे, तो उन्होंने उनकी जरूरतों को पूरा किया, धम्म का मार्ग सीखा, और अंत में व्याकुल होकर उनके माध्यम से भिक्षु संघ में प्रवेश किया। [208] बड़ी कठिनाई से दस शिष्यों का एक समूह एकत्र करके, उन्होंने शीघ्र ही थेरा से विदा लेकर श्रावस्ती जाकर भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया। भगवान (बुद्ध) के भाग में रात्रि व्यतीत करने की अनुमति मिलने पर, और सुबह पाठ करने के लिए आमंत्रित किए जाने पर, उनकी सोलह अट्ठकों के लिए प्रशंसा की गई। और जब श्लोक -

सांसारिक जीवन की बुराइयों को देखकर,

जब यह प्रक्रिया पूरी हो गई, तो उनमें अंतर्दृष्टि विकसित हुई और उन्होंने अरहंत पद (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

और जब उन्हें कच्चाना महान द्वारा पूछे जाने वाले तीन मामलों पर भगवान (बुद्ध) की सहमति प्राप्त हो गई, तो वे अपने निवास स्थान पर लौट आए और अपने गुरु थेरा को यह बात बताई। इसका विस्तृत वर्णन उदाना और अंगुत्तरा टीकाओं में मिलता है, [3] लेकिन वहाँ यह कहा गया है कि उन्होंने अपने गुरु के अधीन अध्ययन करते हुए अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

जल्द ही, निर्वाण के आनंद में लीन होकर, उन्होंने अपनी उपलब्धि की समीक्षा की और हर्षोल्लास से भरे हुए इन छंदों का उच्चारण किया:

[365] उपसम्पदा च मे लद्धा विमुत्तो चम्हि अनासावो,॥
तो च मे भगव दिट्ठो विहारे च सहवासीं॥ ॥

[366] बहुदेवा रत्तिओ भगव अब्भो कासेटिनामयी,॥
विहारकुसलो सत्थ विहारं पविसी तदा॥ ॥

[367] संथैरित्वना संघतिŋ सेय्यं कप्पेसि गोतामो,॥
सीहो सेलागुहायौव पहिनाभयभेरवो॥ ॥

[368] ततो कल्याणवक्कराणो सम्मासंबुद्धसावको,॥
सोनो अभासि सद्धम्मं बुद्धसेठस्स सम्मुखा॥ ॥

[369] पञ्चखंडे परिणय भावयित्वाना अंजसः,॥
पप्पुय्य परमं शांतिं परिनिब्बिसत्यानासावोऽ ति.॥ ॥

[365] न केवल मैंने भिक्षु दीक्षा प्राप्त की,
बल्कि मैं मुक्त, समझदार और निर्बल भी हो गया;
हाँ, मैंने अब उन्हें देखा है, परम पूज्य (बुद्ध), और जहाँ वे रहते थे, वहीं मैं उनके साथ रहा।

[366] रात भर वह आकाश के नीचे रहा,
फिर, सब कुछ में पारंगत होकर,
भगवान (बुद्ध) अपने कक्ष में विश्राम करने चले गए।

[367] उसने गौतम को अपने वस्त्रों में लपेटकर [4] लिटा दिया,
मानो किसी चट्टानी गुफा में शेर की तरह,
जिसके लिए सारा भय और डर दूर हो गया हो। [5]

[368] इसके बाद, प्रमुख,
प्रबुद्ध व्यक्ति (बुद्ध) की उपस्थिति में,
बुद्ध के शिष्य सोन ने मधुर वाणी का प्रयोग करते हुए, धम्म का मार्ग बताया।

[204] [369] वह इस जीवन के कारकों को भली-भांति जानता था,
उसने [आर्यन] मार्ग का भली-भांति अभ्यास किया,
इसलिए, उस परम परिपूर्ण शांति को प्राप्त करके, वह पूर्ण रूप से समझदार, प्रतिरक्षाशील
बन जाएगा । [6]

[1] या क्या यह संभव है कि उसके कानों में जूलियन हॉथोर्न के 'ट्रांसफॉर्मेशन' के नायक की तरह छोटा नुकीला या पंखे जैसा शिखर (कुटी) था? विनय ग्रंथ, ii. 32, n. 3 देखें।

[2] देखें सीसीएक्सएक्स.

[3] उडाना, वी. 6; अंग पर मनोरथ-पुरानी , i. 24, मैं 2; विनय ग्रंथ, ii. 32 एफएफ.

[4] XCI., n. 8 देखें, जिसमें दस के लिए नौ बार पढ़ें।

[5] परिचयात्मक छंदों की तुलना करें ।

[6] श्लोक 364 की अंतिम पंक्ति के समान, सिवाय इसके कि क्रिया भविष्य में है, परिनिब्बिस्सति, जो वैसे भी पाली मीटर में एक अनावश्यक पद बनाती है।

5.11 [208] सोनाकुटिकाण्णत्थेरा के श्लोकों पर टीका
उपसम्पदा च मे लद्धा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सोनकुटिकाण्ण का है। इसकी उत्पत्ति क्या है? कहा जाता है कि ये बुद्ध, भगवान पद्ममुत्तरा (बुद्ध) के समय हंसवती नगर में धनवान धनवान बन गए; अत्यंत समृद्ध (उलारा) स्थिति में स्थापित होकर, एक दिन संयोगवश उनकी मुलाकात गुरु से हुई, जो एक लाख अपवित्र (आसव) अरहंतों से घिरे हुए थे। बुद्ध की महान कृपा (लीला) और प्रबुद्ध गुरु की समृद्ध शक्ति से नगर में प्रवेश करते ही, वे अत्यंत श्रद्धावान हो गए, उन्हें प्रणाम किया और हाथ जोड़कर वहीं रहे। दोपहर में (पच्चाभट्टं) वे भक्तों के साथ मठ गए और भगवान बुद्ध की उपस्थिति में सत्य (धम्म) सुन रहे थे, तभी उन्होंने देखा कि गुरु एक भिक्षु को सर्वज्ञ पाठियों (कल्याणवाक्करण) में अग्रणी स्थान दे रहे हैं। स्वयं भी उस स्थान की आकांक्षा रखते हुए उन्होंने बड़ा दान दिया और संकल्प लिया। गुरु ने उनकी सिद्धि की तत्काल निश्चितता (अनंतरायतं) देखकर उनसे भविष्यवाणी की: “आने वाले समय में, गौतम नामक सर्वज्ञानी बुद्ध के युग में, वे सर्वज्ञ पाठियों के प्रमुख बनेंगे।”

जब तक वे वहाँ रहे, उन्होंने पुण्य कर्म किए और देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते हुए, विपस्सी बुद्ध के समय में वे भिक्षु बने, उन्होंने प्रमुख और गौण कर्तव्यों का पालन किया, एक भिक्षु का वस्त्र सिला और उसे उस भिक्षु को भेंट किया। फिर बुद्ध रहित संसार में, वे बनारस में दर्जी बने, उन्होंने एक मौन बुद्ध के वस्त्र के फटे हुए भाग की मरम्मत की और उसे भेंट किया। इस प्रकार यहाँ-वहाँ पुण्य कर्म करते हुए, उनका पुनर्जन्म एक अत्यंत धनी धनी व्यक्ति के पुत्र के रूप में, कुरारा (मछली) के घर में, अवेन्ती राज्य में हुआ, जब बुद्ध प्रकट हुए। उन्होंने उनका नाम सोन रखा। यद्यपि उन्हें "कोटिकण्णो (करोड़ कान)" के रूप में प्रचलित (वत्तब्बे) होना चाहिए, लेकिन एक करोड़ की कीमत के कान के आभूषणों की एक जोड़ी पहनने (धारण) के कारण, उन्हें कुटिकण्ण के नाम से जाना जाता था।

समय के साथ-साथ बड़े होने पर, उन्होंने अपना गृहस्थी बसाकर, अपने पारिवारिक घर पर निर्भर रहते हुए पावट्टा पहाड़ी पर निवास करने वाले आदरणीय महाकच्चाना की उपस्थिति में सत्य (धम्म) को सुना, शरण और नैतिक उपदेशों में स्थापित हुए और चार प्रकार की संन्यासी की आवश्यकताओं के साथ (थेरा की) सेवा की। इसके बाद, बार-बार जन्म लेने के चक्रों से दुखी होकर, उन्होंने थेरा की उपस्थिति में भिक्षु का दीक्षा संस्कार ग्रहण किया, दस भिक्षुओं के एक पुरोहित मंडल को बड़े उत्साह से एकत्रित किया, स्वयं पूर्णतः दीक्षा ली, कुछ दिनों तक थेरा की उपस्थिति में रहे, थेरा से अनुमति मांगी, गुरु की पूजा करने के लिए सावत्थी गए, गुरु के साथ उसी सुगंधित कक्ष में रहने का विशेषाधिकार प्राप्त किया, सूर्योदय के समय आमंत्रित (अज्झित्तो) हुए और आठ और सोलह भिक्षुओं के एक मंडल द्वारा उत्साहपूर्वक बधाई दिए जाने के बाद उनसे बात की गई, जिसके कारण उन्होंने "दिस्वा आदिनवं लोके (संसार में हानि देखकर)" से शुरू होने वाले अपने गंभीर आनंदमय उच्चारण (उदान) के सर्वांगीण अंत में आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित की और अरहंतत्व प्राप्त किया। अतः अपदान में कहा गया है:—-

“पदुमुत्तरा नाम के विजेता ने,

पवित्र बलिदान के योग्य प्राप्तकर्ता

सौ के साथ भेंट (आहुति)

हजार प्रभावशाली (वसी) अरहंतों पर

उस समय, शहर में प्रवेश किया।

जब ऐसा ऋषि शांत था

शहर में प्रवेश करते ही, रत्न चमक उठे

उज्ज्वल; एक घोषणा हुई थी

(निघोसो) निरंतर (तावदे).

बुद्ध की शक्ति के कारण, ढोल

स्वयं ही ध्वनि उत्पन्न हुई (वज्जु-

maghaṭṭitā), वीणाएँ बज उठीं

जब बुद्ध ने प्रवेश किया, तब वे स्वयं ही प्रवेश कर गए।

शहर।

मैं बुद्ध को बहुत मानता था, वे सर्वश्रेष्ठ और महान थे।

ऋषि पद्ममुत्तरा ने यह देखकर

चमत्कारिक रूप से, मेरा मन भी पवित्र हो गया।

मैं इससे बेहद खुश हूं।

बुद्ध अद्‌भुत हैं, अद्‌भुत है

धम्म और अद्‌भुत है हमारा भला।

स्वामी के साथ सौभाग्य (संपदा);

यहां तक कि निर्जीव (acetanā) संगीतमय

वाद्ययंत्र संगीत बजाते हैं लेकिन उनके द्वारा-

स्वयं।

यह एक लाख युग (कप्पा) था।

कुछ समय पहले, मुझे तब यह धारणा प्राप्त हुई

(सन्या); मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

बुद्ध के प्रति मेरी धारणा (सन्ना) के बारे में।

मेरी सारी बुराइयाँ जलकर राख हो चुकी थीं...

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

अरहंत पद पर आसीन होने के बाद, उन्होंने पाँच वरदान (वर) मांगे: सीमावर्ती क्षेत्रों में पुरोहितों के समूह (गणेन) के साथ पूर्ण दीक्षा (उपसंपदा), जिसमें अनुशासन के स्मरणकर्ता (विनयधर) पाँचवें पुरोहित हों, स्थायी भोजन (धुवनानं), चमड़ा आवरण (सम्मत्तरण), अनेक धागों वाली चप्पलें (गुणान्गुणूपाहन) और अपने गुरु द्वारा बताए गए नियमानुसार वस्त्र धारण करने की इच्छा (चीवरा) रखना। उन्होंने ये वरदान गुरु के दर्शन से प्राप्त किए, फिर अपने निवास स्थान पर लौट आए और गुरु को इसकी सूचना दी। यहाँ यह संक्षेप में है; विस्तार से इसे उदाना की टीका में वर्णित तरीके से समझा जाना चाहिए। अंगुत्तरा की टीका में, हालांकि, इस प्रकार कहा गया है: "एक भिक्षु के रूप में पूर्णतः दीक्षित होने के बाद, उन्होंने अपने मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठाना) को एकत्रित किया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि को उत्तरोत्तर विकसित किया और अरहंत पद प्राप्त किया।"

इसके बाद एक अवसर पर, मुक्ति के आनंद में लीन होकर, उन्होंने अपने उचित कर्म (पतिपत्ति) पर विचार किया, प्रसन्न हुए और अपने गंभीर आनंदमय उच्चारण (उदान) के माध्यम से ये पाँच श्लोक कहे:—

365. "पूर्ण दीक्षा प्राप्त कर ली गई थी

मैं; मैं मुक्त हो गया और आज़ाद हो गया

घाव; उस धन्य व्यक्ति को देखा गया था

मेरे द्वारा; मैं उनके साथ निवास करता था

मठ।

366. "भगवान बुद्ध ने (अतिनामयी) लेकिन

रात का अधिकांश समय खुले आसमान के नीचे; गुरु

मठवासी निवास में चतुर, फिर प्रवेश किया

मठ।

367. "अपनी दोहरी चादर को अच्छी तरह फैलाकर,

बुद्ध गौतम लेट गए; जो इस प्रकार प्रतीत होता है

शेर अपनी पत्थर की गुफा में था, वह था

खतरे और भय से रहित (भेरव)।

368. "इसके बाद, सोन, अच्छे वक्ता

शब्दों में, कुशल शिष्य स्वयं-

जागृत बुद्ध ने शुभ वचन कहे।

सत्य (सद्धम्म) की उपस्थिति में ही

बुद्ध के बारे में सबसे अच्छी बात यही है।

369. “पांचों को पूरी तरह से समझ लेने के बाद

समूह (खंड) और विकसित हो चुके

वह श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग (अंजस) है।

रोगमुक्त होगा और बंधा रहेगा

अस्तित्व के किसी भी आधार के बिना निब्बाना-

पूर्ण शक्ति प्राप्त करने के बाद तनाव

(परमं) शांति (सन्ती)।

वहाँ, उपसम्पदा च मे लद्धा का अर्थ है: उन्होंने दोनों पूर्ण दीक्षाओं (तदुभयं) के संबंध में कहा; एक पूर्ण दीक्षा (उपसम्पदा) जो उन्होंने दस भिक्षुओं के एक समूह को बड़ी कठिनाई से एकत्रित करके प्राप्त की थी, और दूसरी पूर्ण दीक्षा (उपसम्पदा) जो गुरु द्वारा अनुमोदित (अनुञ्ञता) थी, जिसमें अनुशासनात्मक नियमों के एक वाहक (विनयधर) को सभी सीमावर्ती क्षेत्रों में पाँचवें स्थान पर नियुक्त किया गया था, जो प्रदत्त अनुग्रह (वरदान) के फलस्वरूप प्राप्त हुआ था। व्याकरणिक शब्द च का अर्थ संचय (समुच्चय) है; इसके द्वारा, गुरु की उपस्थिति से प्राप्त अन्य अनुग्रहों को भी एकत्रित (संगणाति) किया जाता है। विमुत्तो चङ्मि अनासवो का अर्थ है, मैं वह व्यक्ति हूँ जो सर्वोत्कृष्ट मार्ग (मग्ग) के माध्यम से सभी प्रकार की बुराइयों (किलेसवत्थु) से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त कर चुका हूँ; परन्तु उसके बाद मैं इंद्रिय सुख आदि जैसे दोषों से भी मुक्त हो गया; यही व्याख्या है। सो च मे भगवा दित्तो का अर्थ है: मैं जिस उद्देश्य से अवंती राज्य से सावत्थी गया, उस भगवान को भी, जिन्हें मैंने पहले कभी नहीं देखा था, दर्शन प्राप्त हुए। विहारे च सहावासीं का अर्थ है: न केवल उस भगवान को देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, बल्कि गुरु द्वारा मुझे वहाँ रहने की अनुमति देने के लिए उचित कारण (कारणं) स्पष्ट किए जाने के बाद, मैं गुरु के सुगंधित कक्ष में मठ में उनके साथ रहा। विहारे का अर्थ है: कुछ विद्वानों (केसी) के अनुसार मठ के आसपास (समीपे) स्थित क्षेत्र।

बहुदेव रत्तिं अतिनामयि का अर्थ है: भगवान ने पहला पहर भिक्षुओं को सत्य (धम्म) का उपदेश देने और उनके मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) को शुद्ध करने (शोधन, जांच करने) में व्यतीत किया, मध्य पहर देवताओं और ब्रह्माओं के संदेहों को दूर करने (छेदन) में व्यतीत किया, इस प्रकार उन्होंने रात का अधिकांश समय खुले में बिताया। विहारकुसलो का अर्थ है: ब्रह्मा, अविचलित और श्रेष्ठ (आर्य) के दिव्य जीवन को जीने में कुशल (दिब्बा)। विहारम्पाविसि का अर्थ है: वे लंबे समय तक बैठने और इधर-उधर चलने से उत्पन्न थकान (परिस्समा) को दूर करने (विनोदन) के उद्देश्य से अपने सुगंधित कक्ष (गंधकुटी) में प्रवेश किया।

संथारित्वन संघातिं सेय्यं कप्पेसिं का अर्थ है: चार धागों से बना अपना दोहरा वस्त्र (संघाति) तैयार करने के बाद वे सिंह के समान लेट गए (सिहसेय्यं कप्पेसि)। इसी कारण उन्होंने कहा, “गोतमो सीहो सेलागुहायं व, पाहीनभयभेरवो (गौतम, अपने पत्थर की गुफा में सिंह के समान, नृत्य और भय से रहित)।” यहाँ, गौतम का अर्थ है: वे अपने कुल के द्वारा भगवान की घोषणा (कित्तेति) करते हैं। सीहो सेलागुहायं व का अर्थ है: पत्थर की पहाड़ी की गुफा में; जिस प्रकार पशुओं का राजा सिंह अपने दाहिनी ओर एक पैर दूसरे पर सावधानीपूर्वक रखकर लेटता है (सेय्यं), अपनी शक्ति (तेज) की प्रबलता (उस्साद) के कारण भय और खतरे से मुक्त रहता है, उसी प्रकार भगवान गौतम बुद्ध ने भी भय और खतरे से मुक्त होकर लेटे, क्योंकि उन्होंने मानसिक उत्तेजना (चित्तुत्रास), रोंगटे खड़े होने और कंपकंपी पैदा करने वाले सभी दोषों (किलेसा) को भलीभांति काट डाला था; यही इसका अर्थ है।

तातो का अर्थ है: बाद में (पच्छा); सिंह के लेटने (सीहसेय्या) के बाद, वह उठ खड़ा हुआ, तब गुरु ने उससे पूछा (अज्जेशितो): “हे भिक्षु! जो सत्य (धम्म) तुम्हें सिखाया जाना है, वह तुम्हें स्पष्ट रूप से (पटिभतु) समझ में आ जाए;” यही अर्थ है। कल्याणवक्करणो का अर्थ है: उत्कृष्ट वाणी निर्माता (वचीकरणो); विशिष्ट चिह्नों (लक्खण) से युक्त शब्दों का प्रवाह (काम); यही अर्थ है। Soṇo abhāsi saddhammaṃ Buddhaseṭṭhassa sammukhā का अर्थ है: थेरा सोन कुटिकाण्ण ने स्वयं को किसी अन्य भिक्षु के समान समझा, जो सर्वथा आत्मजागृत बुद्ध की उपस्थिति में आठवें अध्याय के सोलह सूत्रों का प्रवचन दे रहे थे (अट्टक वग्गीयसुत्तनि)।

पंचक्खन्धे परिञ्ञाय का अर्थ है: तीन प्रकार के पूर्ण ज्ञान (परिञ्ञाहि) के माध्यम से पांचों स्कंधों (उपादानक्खन्ध) को सर्वथा समझ लेना और उन्हें सर्वथा जानना; अंजसं का अर्थ है: श्रेष्ठ अष्टांगिक मार्ग (मग्ग) का विकास करना (भावयित्वा); परमं सन्तं का अर्थ है: निर्वाण;

पप्पुय्या का अर्थ है: पापुनित्वा प्राप्त करना; अनासव का अर्थ है: दोषों से मुक्त होना; परिनिब्बिस्ति का अर्थ है: इसके बाद, अब, वह अस्तित्व के किसी भी आधार को छोड़े बिना उस क्षीणता के मार्ग से निर्वाण में प्रवेश करेगा।

थेरा सोनकुटिककण्ण के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(209):कोसिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (209) ------>>>> अगला

अध्याय V.
पाँच श्लोक
209. कोसिया
बुद्ध युग में मगध के एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्हें उनके पारिवारिक नाम कोसिया से पुकारा गया। वयस्क होने पर, वे अक्सर धर्मप्रधान (धम्म) के उपदेश सुनने जाते थे, [1] और इस सिद्धांत में विश्वास रखते हुए, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और समय आने पर अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। अपनी इस उपलब्धि की समीक्षा करते हुए, उन्होंने इन श्लोकों में बुद्धिमानों की आदरणीयता और भलाई के लिए निर्णायक शक्ति को व्यक्त किया:

[370] यो वे गरुणु सेनानु धीरो॥
वसे च तमहि जनये च पेमṃ,॥
तो भट्टिमा नाम च होति पण्डितो॥
सातत्व च धम्मेसु विसेसि अस्स॥ ॥

[371] यं अपादा उप्पतिता उषारा॥
नक्खमफयन्ते पॅसिसोन्खायन्तं,॥
सो थमव नाम च होति पण्डितो॥
सातत्व च धम्मेसु विसेसि अस्स॥ ॥

[372] यो वे समुद्दो'वा ṭहितो अनेजो॥
गम्भीरापन्नो निपुणत्थदस्सी,॥
असंहारियो नाम च होति पण्डितो॥
सातत्व च धम्मेसु विसेसि अस्स॥ ॥

[373] बहुसुतो धम्मधरो च होति॥
धम्मस्सा होति अनुधस्साचारि,॥
सो तदिसो नाम च होति पण्डितो॥
सातत्व च धम्मेसु विसेसि अस्स॥ ॥

[374] अत्थाऽ च यो जानाति भासीतस्स॥
अत्थौ च न्त्वाना तथा करोति॥
अत्थन्तरो नाम स होति पण्डितो॥
सातत्व च धम्मेसु विसेसि अस्स ति.॥ ॥

[370] जो वीर और गुरुओं के वचन में पारंगत है,
उसमें विश्राम पा सकता है [2] और इसलिए स्नेह संजो सकता है, उसे आप समर्पित [3] और बुद्धिमान

कह सकते हैं : इस प्रकार वह सिद्धांतों के ज्ञान में विशिष्टता प्राप्त करने वाला हो सकता है। [4]

[205] [371] वह, जिसका दृढ़ दर्शन अद्वितीय कठिनाई
परीक्षा को विचलित या भ्रमित नहीं कर सकता,
उसे आप दृढ़ इच्छाशक्ति वाला और बुद्धिमान कह सकते हैं: इस प्रकार वह
सिद्धांतों के ज्ञान में विशिष्टता प्राप्त करने वाला हो सकता है।

[372] जो
सूक्ष्म और नाजुक समस्याओं में अपनी अंतर्दृष्टि के मामले में अथाह सागर के समान रहता है, उसे आप अजेय, [5] बुद्धिमान कह सकते हैं : इस प्रकार वह सिद्धांतों के ज्ञान में विशिष्टता प्राप्त करने वाला हो सकता है।

[373] विद्वान, जो अपने स्मृति में वचन धारण करता है,
वह सभी सिद्धांतों का अभ्यास करता है, चाहे वे बड़े हों या छोटे,
उसे आप यह सब और बुद्धिमान कह सकते हैं: इस प्रकार वह
वह हो सकता है जो सिद्धांतों के ज्ञान में विशिष्टता प्राप्त करता है।

[374] जो कही गई बात का अर्थ जानता है,
वह अर्थ जानकर अपने कार्यों को तदनुसार ढालता है।
'अंतर्निहित अर्थ' [6] उसे बुद्धिमान कहो: इस प्रकार वह
वह हो सकता है जो सिद्धांतों के ज्ञान में विशिष्टता प्राप्त करता है।

[1] सारिपुत्त, मगध के एक गाँव का निवासी।

[2] Vase' = vaseyya (टिप्पणी).

[3] भट्टिमा, जिसका अर्थ या तो यह है, या वह जो भेद कर सकता है (देखें चाइल्डर्स)। पूर्व अर्थ 'स्नेह को पोषित कर सकता है' के लिए आवश्यक प्रतीत होता है, लेकिन मुझे संदेह है कि यह (बाद में बहुत प्रचलित) अर्थ पिटकों में कहीं और मिलता है। टीका की टिप्पणी है: सो ति सो गौणं वचञ्ञा धीरो, सो यथानुसित्तकं पटिपत्तिया, तत्था, भट्टिमा च नाम होति।

[4] देखें सुत्त-निपाता, iv. 13, 11, जहाँ यह पंक्ति आती है। मुझे नहीं लगता कि इसमें डॉ. न्यूमैन द्वारा सुझाए गए परिवर्तन की आवश्यकता है। Visesi assa: viaesavā siyā. Cy.

[5] शाब्दिक रूप से, 'जिन्हें हटाया नहीं जा सकता।'

[6] अत्थ-अंतरो। हमें एम. बर्गसन के इस वाक्यांश की याद आती है कि 'अंतर्ज्ञान से हम भीतर से चीजों के बनने को देख सकते हैं, सहानुभूति के प्रयास से प्रेरित होकर' (क्रिएटिव इवोल्यूशन, पृ. 361 एफ. 334)। हालाँकि , साइ. में इसे अत्थंधरो पढ़ा गया है। ठीक ऊपर धम्मधरो देखें ।

5.12 [209] कोसियाथेथेरा के छंद पर टिप्पणी
यो वे गरूणं से शुरू होने वाला श्लोक आदरणीय थेरा कोसिया का है। इसका उद्गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने वाले पुण्य कर्म संचित किए, और भगवान विपस्सी के समय एक परिवार में पुनर्जन्म लिया। जब वे ज्ञान प्राप्त कर चुके, तो एक दिन संयोगवश उनकी मुलाकात गुरु से हुई, वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें गन्ने के टुकड़े भेंट किए। इस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच अपने जन्मों के चक्र में विचरण करते रहे और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब उनका मगध राज्य के एक ब्राह्मण परिवार में पुनर्जन्म हुआ। उनके कुल के कारण उनका नाम कोलिया रखा गया। ज्ञान प्राप्ति के बाद, वे निरंतर सत्य के पूज्य सेनापति (धम्मसेनापति) के पास जाते और उनकी उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनते थे। इसके फलस्वरूप धर्म में उचित श्रद्धा उत्पन्न करने के बाद वे भिक्षु बन गए, निरंतर मानसिक अभ्यास में लगे रहे और शीघ्र ही अरहंत पद प्राप्त कर लिया। इसीलिए अपदान में कहा गया है:—-

"बंधुमती नगर में मैं द्वारपाल था;

मैंने निर्मल बुद्ध प्रतिमा देखी, जो एकदम परिपूर्ण थी।

सभी सत्यों (धम्म) का ज्ञान (पारागू)।

मैं अपने साथ गन्ने के कटे हुए टुकड़े ले जा रहा था।

मैंने उन्हें बुद्ध को अर्पित किया, जो श्रेष्ठ और महान हैं।

ऋषि विपस्सी, जो धर्मपरायण और अच्छे स्वभाव के थे-

दयालु।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है,

फिर मैंने (कटे हुए टुकड़ों का) अपना चढ़ावा चढ़ाया।

गन्ना; मुझे किसी भी बुरी हस्ती के अस्तित्व की याद नहीं है;

यह (अर्पण) कटौती का फलदायी परिणाम है

गन्ने के टुकड़े।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने स्वयं के उचित आचरण (पटिपत्ति) पर विचार किया और एक शिक्षक के मार्गदर्शन में जीवन और अच्छे लोगों की विश्वसनीय सलाह (सप्पुरिसुपनिसया) की प्रशंसा करते हुए पांच श्लोक कहे।

370. "एक दृढ़ बुद्धिमान व्यक्ति (धीरो) जो स्पष्ट रूप से

(ve) बुद्धिमानों की सलाह को समझना

शिक्षकों (गरु) को निवास करना चाहिए (जैसा कि

सलाह दी) और (स्वयं में) स्नेह जगाया

इसके लिए (तम्ही)। वह स्वामी के रूप में जाना जाता है।

जीविका (भट्टिमा) और एक बुद्धिमान व्यक्ति;

धर्म की सच्चाइयों को समझकर

वह विशिष्ट (visesi) बन जाएगा।

371. “वह व्यक्ति, जिसे हिंसक (उलारा) खतरे हों

(āpadā) जो उत्पन्न हुए हैं (uppatita) करते हैं

उसे न हिलाओ (नक्खम्भयन्ते)

उनके चिंतनशील भेदभाव के कारण

(paṭisankhayantaṃ) को स्वामी कहा जाता है

शक्ति और बुद्धि का; समझकर

वह सत्य (धम्म) बन जाएगा

विशिष्ट।

372. “जो कोई भी वास्तव में किसी के समान खड़ा रहा हो

महासागर, लालसा (अनेजो) से मुक्त, समर्थक-

ज्ञान प्राप्त करने वाला, सूक्ष्म ज्ञान का द्रष्टा (दस्सी) है।

(निपुण) का अर्थ है, वह एक बुद्धिमान के रूप में जाना जाता है

वह मनुष्य जिसे नष्ट नहीं किया जा सकता (असंहारीय)

धर्म की सच्चाइयों को समझकर,

वह प्रतिष्ठित व्यक्ति बन जाएगा।

373. “वह बहुत विद्वान हैं, साथ ही साथ

सत्य (धम्म) का वाहक (स्मृति में);

वह अपने आचरण को इसके अनुरूप ढालता है।

वह सत्य (धम्म) के नाम से जाना जाता है।

ऐसा बुद्धिमान व्यक्ति; जिसने समझ लिया हो

वह सत्य (धम्म) से विमुख हो जाएगा।

क्षीण।

374. “वह, जो इसका अर्थ भी जानता है

उनसे बात की गई है और वे उसी के अनुसार काम करते हैं।

उस अर्थ के रूप में जिसे उसने समझा है,

वह एक बुद्धिमान व्यक्ति के रूप में जाना जाता है जो

स्वयं को अर्थ के अनुसार योग्य घोषित किया

(अत्थंतरा) सत्यों को समझकर

(धर्म) के मामले में, वह विशिष्ट होगा।

वहाँ, यो का अर्थ है ऐसे श्रोताओं (परिसा) की चार श्रेणियों में से कोई भी, जैसे कि राजकुमार योद्धा (खत्तीय) आदि। वे का अर्थ है: स्पष्ट रूप से (व्यत्तं)। गरुणं का अर्थ है: ऐसे बुद्धिमान पुरुष जो शिक्षक के गुणों से युक्त हों, जैसे नैतिक उपदेश आदि। वचनाञ्ञु का अर्थ है: उनके उपदेशों को जानकर, अपने जीवन को उनके निर्देशों के अनुसार व्यवस्थित करना (पतिपज्जमाहो) और उस (व्यवस्थित जीवन) के फलदायी परिणाम का ज्ञान होना; यही अर्थ है। धीरो का अर्थ है: दृढ़ता से युक्त व्यक्ति। वसे च तम्ही जनयेत पेमं का अर्थ है: उसे शिक्षकों की सलाह का पालन करना चाहिए (वसेय्य), उसे अपने जीवन को उनके निर्देशों के अनुसार व्यवस्थित करना चाहिए; अपने जीवन को व्यवस्थित करने के बाद, उसे उनके प्रति स्नेह और सम्मान जगाना चाहिए, इस प्रकार: वास्तव में, इस सलाह के माध्यम से मैंने जन्म आदि जैसे कष्टों (दु:ख) पर विजय प्राप्त की है। वास्तव में, ये दोनों अभिव्यक्तियाँ "गेरूणं वचनणञ्ञु धीरो (शिक्षकों के वचन जानने वाला दृढ़ ज्ञानी व्यक्ति)" के द्वारा कही गई बात के अर्थ को प्रकट करती हैं (पाकटकरणं)। अत: भट्टिमा च नाम होति का अर्थ है: वह दृढ़ ज्ञानी व्यक्ति, जो शिक्षकों के वचन जानता है, वहाँ दिए गए निर्देशों के अनुसार उचित पालन (पटिपत्ति) करके जीविका का स्वामी (भट्ट) कहलाता है; पण्डितो, वह अपने जीवन निर्वाह (जीवितहेतु) के कारण भी उस (निर्देश) का उल्लंघन न करने (अनतिक्कमनतो) के कारण ज्ञानी कहलाता है। Nātvā ca dhammesu visesi assa का अर्थ है: अपने जीवन को उसी प्रकार व्यवस्थित करना, और उस उचित कर्म (paṭipatti) के माध्यम से, वह विशिष्ट और विशिष्ट (visesa) होगा, जैसे: "Tevijjo, chaḷabhiñño, patisambhidā patto (त्रिविध ज्ञान (vijja) और छह प्रकार के अलौकिक ज्ञान (abhiññā) को जानने वाला, विश्लेषणात्मक ज्ञान (paṭisambhidā) प्राप्त करने वाला); चार प्रकार के आर्य सत्यों के ज्ञान से उत्पन्न ज्ञान के परिणामस्वरूप, सांसारिक और अलौकिक सत्यों (lokiyalokuttaradhamma) में त्रिविध ज्ञान (vijjā) के माध्यम से; इस प्रकार, यही अर्थ है।

यं का अर्थ है: जो भी व्यक्ति (पुग्गलं); उचित कर्म में बाधा उत्पन्न करने (पटिपत्ति) के कारण, वे खतरे (परिस्या) जिन्हें (वोहार) "आपदा (खतरे)" कहा जाता है, जैसे कि सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास आदि प्रत्यक्ष खतरे, साथ ही कामवासना (राग) आदि अप्रत्यक्ष (पटिच्छन्न) खतरे; उपपटिता का अर्थ है: उत्पन्न हुए (उप्पन्ना); उलारा का अर्थ है: जरा भी विचलित न करना (न किंचि चालेंति)। क्यों? पतिसंखवंतं का अर्थ है: विवेकपूर्ण चिंतन करना और विवेकपूर्ण चिंतन की शक्ति में स्थिर होना; यही इसका अर्थ है। इसलिए, इसका अर्थ है: वह जो कठोरतम खतरों से भी विचलित न हो (अक्खम्भनीयो); तामवा का अर्थ है: जो दृढ़ है, वह दृढ़ प्रयास करने वाला कहलाता है; पंडितो का अर्थ है: वह ज्ञान की अपार शक्ति से संपन्न होने के कारण बुद्धिमान कहलाता है, जो आत्म-दुराचार के चरम (पक्खा) पक्ष (अनवसेसा) में निहित है। नात्वा च धम्मेसु विशेषि अस्स का अर्थ है: इसी प्रकार (तथाभूतो) होकर वह सत्य को समझकर उसमें विशिष्ट हो जाएगा। यही अर्थ कहा गया है।

समुद्दो व ṭhito का अर्थ है: उसका स्वभाव सागर के समान स्थिर है। वास्तव में, जिस प्रकार शिनेरु पर्वत के चरणों में स्थित चौरासी हजार मील (योजन) गहरा विशाल सागर ṭhito anejo है, जो दृढ़ता से स्थिर है और आठ दिशाओं से उठने वाली सामान्य (पकति) हवाओं से भी अविचलित रहता है, वह भी गहरा है, उसी प्रकार, (एक दृढ़ बुद्धिमान व्यक्ति) ṭhito anejo है, जो दृढ़ता से स्थिर है और दुराचार (किलेसा) की हवाओं और विधर्मी विचारों (तित्तियवाद) के तूफान से अविचलित रहता है। गंभीरपञ्ञो निपुणस्सदस्सी का अर्थ है: वह गहन ज्ञान से परिपूर्ण है, सूक्ष्म ज्ञान का ज्ञाता है, क्योंकि उसने प्रतीत्यसमुत्पाद आदि के सूक्ष्म और कोमल अर्थ को भलीभांति समझा है, जो ज्ञान के संचित संचय (संभर) से प्राप्त न होने वाले व्यक्ति के लिए अत्यंत सूक्ष्म और कोमल है। असम्भारियो नाम च होति पंडितो का अर्थ है: ऐसा ज्ञानी व्यक्ति अभेद्य कहलाता है, क्योंकि वह युवा देवता मार आदि से या दुष्टता के रूपों से भी नष्ट नहीं होता। इसी अर्थ के कारण वह ज्ञानी (पंडित) कहलाता है। बाकी सब कुछ पहले बताए गए तरीके से ही है।

बहुस्सुतो का अर्थ है प्रामाणिक ग्रंथों (परियत्ति) में गहन ज्ञान के माध्यम से अत्यधिक विद्वान होना। धम्मधारो का अर्थ है: वह सत्य (धम्म) का वाहक है, क्योंकि वह उस सत्य (धम्म) को नष्ट किए बिना धारण करता है, ठीक उसी प्रकार जैसे सिंह का वीर्य (वसा) सोने के पात्र में डाला जाता है। धम्मस होति अनुधम्मचारी का अर्थ है: वह व्यक्ति जो सत्य (धम्म) के अनुरूप आचरण करता है, इस प्रकार: वह चार

पूर्णतः शुद्ध नैतिक उपदेशों, कठोर अभ्यास (धुतंग), अप्रिय वस्तुओं पर चिंतन करने वाले मानसिक अभ्यास (असुभकममट्ठान) आदि के अनुसार अभ्यास (चरति) करता है और अपने जीवन को (पटिपज्जति) इस प्रकार नियंत्रित करता है, जिसे अभ्यास (पुब्बभाग) के प्रारंभिक भाग के रूप में उचित प्रदर्शन (पटिपदा) माना जाता है, नौ पारलौकिक सत्यों (लोकउत्तरधम्म) के अनुरूप (अनुरूपं) कर्म (धम्म) का अभ्यास, पाठ (धम्म) को समझने और सत्य (धम्म) के अर्थ (अत्थ) को समझने के बाद, जैसा उसने सुना है और पवित्र ग्रंथों (परियत्ति) के अनुरूप (अनुरूपं) करता है। वह स्पष्ट रूप से आर्य सत्यों में उचित अंतर्दृष्टि (पटिवेध) प्राप्त करने की लालसा (आकंठो) रखते हुए आचरण करता है, जैसे कि "आज और अभी भी।" अतः तदिसो नामच होति पंडितो का अर्थ है: जो भी व्यक्ति किसी गुरु पर निर्भर रहकर बहुत ज्ञानी और सत्य (धम्म) का वाहक बन गया हो और सत्य (धम्म) के अनुरूप आचरण करता हो; तदिसो, ऐसा व्यक्ति उचित आचरण (पटिपत्ति) में समानता के कारण उस गुरु के समान ज्ञानी कहलाता है। परन्तु, समान होने पर वह नात्वा च धम्मेसु विशेषि अस्सा होगा; यही अर्थ कहा गया है।

अत्थं चयो जानाति भासितस्स का अर्थ है: जो भी व्यक्ति आत्मजागृत बुद्ध द्वारा उपदेशित सत्य ग्रंथों (परियत्तिधम्म) का अर्थ समझता है; अत्थं च ञत्वान तथा करोति का अर्थ है: समझकर, जैसा कि यहाँ-वहाँ कहा गया है: "यहाँ नैतिक उपदेश (शील) दिए गए हैं; यहाँ एकाग्रता (समाधि) दी गई है, यहाँ ज्ञान (पञ्ञा) दिया गया है," वह गुरु द्वारा दिए गए निर्देशों के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करता है (पटिपज्जति)। अत्थंतारो नाम स होति पंडितो का अर्थ है: जो व्यक्ति अर्थ के अनुरूप (अत्थंतारो) हो गया है, वह ज्ञानी पुरुष है जिसने अर्थ के कारण (अत्थकारणा) अपनी योग्यता (उपनिस्सेयं) को अर्थ की समझ (अत्तजाननामत्तं) के अनुरूप ही निर्धारित किया है। शेष जैसा कहा गया है वैसा ही है।

यहां फिर से, "यो वे गरूणं" से शुरू होने वाले पहले श्लोक के माध्यम से, विशिष्टता (विशेषभावो) की स्थिति, यानी सद्धा (उपनिस्सेय) की योग्यता (उपनिस्सेय) का उल्लेख किया गया है; "यं आपदा" से शुरू होने वाले दूसरे श्लोक के माध्यम से, परिश्रम (वीर्य) (उपनिस्सेय) की योग्यता (उपनिस्सेय) का उल्लेख किया गया है; "यो वे समुद्दो व ठितो" से शुरू होने वाले तीसरे श्लोक के माध्यम से, समाधि (एकाग्रता) (उपनिस्सेय) की योग्यता (उपनिस्सेय) का उल्लेख किया गया है; "बहुस्सुतो" से शुरू होने वाले चौथे श्लोक के माध्यम से, सती (मानसिक जागरूकता) (उपनिस्सेय) की योग्यता (अत्थांच यो जानातो) के माध्यम से, ज्ञान (पञ्ञा) (उपनिस्सेय) की योग्यता को विशिष्टता (विशेष) की स्थिति के रूप में बताया गया है; इस प्रकार, इसे समझा जाना चाहिए।

थेरा कोसिया के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।

पांचवें खंड पर टिप्पणी पूरी हो चुकी है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (210): उरुवेला का कस्पा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (210) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
210. उरुवेला के कस्सपा
हमारे परम पूज्य (बुद्ध) के समय में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में तीन बंधुओं में से प्रथम पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, वे सभी अपने पारिवारिक नाम कस्सपा [1] से जाने जाते थे , और उन सभी ने तीनों वेदों का अध्ययन किया। उनके अनुयायी क्रमशः पाँच, तीन और दो सौ ब्राह्मण (पुजारी) युवक थे। और अपने शास्त्रों में कोई महत्वपूर्ण सत्य न पाकर, [2] बल्कि केवल सांसारिक हितों के विषय पाकर, [3] उन्होंने संसार त्याग दिया (सन्यास के लिए) और तपस्वी बन गए। और वे उन स्थानों के नाम पर ऋषि कहलाए जहाँ वे रहते थे, सबसे बड़े ऋषि अपने साथियों के साथ उरुवेला में रहने चले गए। इसके कई दिनों बाद हमारे बोधिसत्व (बुद्ध) का महान त्याग हुआ, धम्म-चक्र की शुरुआत हुई, पाँचों थेरों को अरहंत का दर्जा प्राप्त हुआ, यासा के नेतृत्व में तिरपन सहयोगियों का धर्मांतरण हुआ, साठ अरहंतों (प्रबुद्धों) को यह संदेश देकर भेजा गया, 'जाओ भिक्षुओं, और भ्रमण करो...', तीस धनी मित्रों का धर्मांतरण हुआ, और भगवान (बुद्ध) उरुवेला आए। जब उन्होंने वहाँ नाग को वश में करने से शुरू करके कई चमत्कार किए, तो कस्सपा आश्वस्त हो गए और भिक्षु

संघ में प्रवेश कर गए, उनके भाइयों ने भी उनका अनुसरण किया। उन्हें और उनके [207] 1,000 अनुयायियों को, भगवान (बुद्ध), गया पर्वत पर एक चट्टान की चोटी पर बैठे हुए, अग्नि पर प्रवचन दिया, और उन सभी को अरहंत (प्रबुद्ध) के रूप में स्थापित किया।

लेकिन उरुवेला-कस्सपा ने अपनी उपलब्धि की समीक्षा करते हुए सिंह-गर्जन वाले छंदों का उच्चारण किया और अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[375] दिसवना पतिहिरानि गोतमस्सा यस्सिनो,॥
न तवाहं पणिपतिं इस्सामेनेन वञ्चितो॥ ॥

[376] मामा संकप्पामनया कोडसि नरसारथि,॥
ततो मे असि सवेगो अब्भुतो लोमहांशनो॥ ॥

[377] पुब्बे जटिलभूतस्स या मे सिद्धि1 परित्तिका,॥
तहं तदा निराङ्कत्वा पब्बजीं जिनसासने ॥ ॥

[378] पुब्बे यान्नेन संतुथो कामधातुपुरक्खतो,॥
पच्चा रागं च दोसां च मोहं कपि समुहनिं॥ ॥

[379] पुब्बेनिवासां जानामि दब्बाचक्खु विसोधितां,॥
इद्दिमा परचित्तन्नु दिब्बसोतां च पापुनिं॥ ॥

[380] यस्सा कैथाय पब्बजितो अग्रस्मानगरियौ,॥
सो मे अत्थो अनुप्पत्तो सब्बासंयोजनक्खयो' ति.॥ ॥

[375]
गौतम (बुद्ध) की उच्च शक्तियों द्वारा किए गए सभी अद्भुत कार्यों को देखकर ,
मैंने पहले तो स्वयं को विनम्र नहीं किया,
ईर्ष्या और अहंकार से धोखा खाकर।

[376] परन्तु हे मनुष्यों के मार्गदर्शक, जो मेरे विचार
और मेरे इरादे को जानते थे, उन्होंने अंततः मुझे फटकारा।
उस पीड़ा से मैं व्याकुल हो गया,
एक रहस्यमय रोमांच और रोंगटे खड़े कर देने वाले भय से भर गया।

[377] और फिर वे उपहार जो पहले मेरे लिए थे [4] प्रसिद्ध तपस्वी गरीब और बेकार प्रतीत होते थे।
मैंने उन सभी को कुछ भी नहीं समझा,
और विजेता के आदेश में नामांकित हो गया।

[378] एक बार त्याग से संतुष्ट होकर, सबसे बढ़कर
इन संसारों में फिर से जीने के लिए चिंतित,
अब मैंने अपने आप को
सभी वासना, सभी दुःख, इच्छाशक्ति, भ्रम को भी मिटाने के लिए दृढ़ संकल्पित किया है।

[379] मैं जानता हूँ कि मैंने पहले कैसे जीवन व्यतीत किया (पूर्व जन्मों में); मैंने दिव्य दृष्टि,
दिव्य परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट किया है; मैंने
अलौकिक शक्ति, दूसरों के विचारों को पढ़ने,
अविश्वसनीय श्रवण शक्ति को प्राप्त किया है।

[380] और वह महान खोज जिसके लिए मैंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व के लिए),
घर छोड़कर, बेघर जीवन जीने के लिए,
वह खोज, वह उच्च पुरस्कार भी मैंने प्राप्त कर लिया है,
क्योंकि अब हर बंधन टूट गया है। [5]

[1] सीसी III, सीसी IV देखें। यहाँ वर्णित घटनाएँ विनय पाठ, i. 119-139 में बताई गई हैं। इस कस्सपा को उन भिक्षुओं (भिक्षुओं) में प्रमुख स्थान दिया गया है जिनके बहुत अनुयायी थे (अंग., 25)।

[2] शाब्दिक रूप से, उनकी अपनी पुस्तक में, attano ganthe.

[3] दीठधम्मिकम् एव अत्थṃ।

[4] लाभ-सक्कर-सम्मिद्धि। साइ.

[5] वह छह प्रकार के अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) या उच्च ज्ञान के तरीकों की गणना करते हैं, केवल अंतिम को चार मादक पदार्थों (विकृतियों/इच्छाओं) के बजाय 'दस बंधनों का नाश' कहते हैं, जो अधिक सामान्य सूत्र है (cf. पृष्ठ 32, n. 1)। अंतिम दो पंक्तियाँ (CXXVIII.) श्लोक 136 के समान हैं; श्लोक 379 में चार पंक्तियाँ, थोड़ी भिन्न रूप में, उप्पलावण्णा की गाथाओं (बहनें, श्लोक 227) में आती हैं। श्लोक 380 = 136.

6. छठा खंड

6.1 [210] उरुवेलकस्सपत्थेरा के श्लोक पर टीका
दिसवान पातिहिरणी से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा उरुवेला कस्सपा का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति पाने के लिए लाभकारी कर्म संचित किए, और भगवान पद्ममुत्तरा के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया। वयस्क होने पर, उन्होंने गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) सुना, जो एक भिक्षु को बहुसंख्यक श्रोताओं में सबसे आगे बैठाते हुए देखे गए थे। उन्होंने स्वयं भी उस स्थान की आकांक्षा की, महान दान किया और संकल्प लिया। भगवान ने उनकी निरंतर सिद्धि को देखकर उनसे भविष्यवाणी की: "आने वाले समय में बुद्ध गौतम के युग में वह बहुसंख्यक श्रोताओं में सबसे आगे होगा।"

उन्होंने जीवन भर वहाँ पुण्य कर्म किए, फिर उनका निधन हो गया और वे जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और बानवे युग (कप्पा) पहले भगवान फुस्सा के परस्त्री माता से जन्मे छोटे भाई के रूप में पुनर्जन्म लिया। उनके दो अन्य छोटे भाई भी थे। उन तीनों ने भी बुद्ध के नेतृत्व वाले भिक्षु संघ को परम आदरपूर्वक भेंट (परमय पूजा) की, जीवन भर अच्छे कर्म किए, जन्म-मृत्यु के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, बनारस के एक ब्राह्मण परिवार में भाई बने, लेकिन हमारे भगवान बुद्ध के जन्म से पहले, एक के बाद एक अपने उचित क्रम (अनुक्कामेना) में जन्म लेने के कारण, वे तीनों अपने कुल के कारण कस्सप कहलाए। वयस्क होने पर, उन तीनों ने तीन वेदों का अध्ययन किया। उनमें सबसे बड़े भाई के पाँच सौ बालक थे; मध्य भाई के तीन सौ और सबसे छोटे भाई के दो सौ बालक थे। अपने वैदिक ग्रंथों में सार का अध्ययन करने पर, उन्होंने केवल वर्तमान जीवन से संबंधित लाभ (दित्तधम्मिका) को देखा और त्याग के प्रति प्रलोभित हो गए। तीनों में से, सबसे बड़े भाई अपने अनुयायियों के साथ उरुवेला गए, वहाँ उन्होंने संन्यासी के रूप में संसार का त्याग किया और उरुवेला कस्सपा के नाम से जाने गए। मध्य भाई ने गंगा नदी के मोड़ पर संसार का त्याग किया और नादिकसप्पा के नाम से प्रसिद्ध हुए, और सबसे छोटे भाई ने गयासीसा में संसार का त्याग किया और गया कस्सपा के नाम से प्रसिद्ध हुए।

जब उन्होंने संसार का त्याग कर तपस्वी संन्यासी बन गए और उस स्थान पर निवास कर रहे थे, तब हमारे बोधिसत्व ने महान त्याग किया, कई दिनों के बाद सर्वज्ञ ज्ञान को उचित रूप से प्राप्त किया, सत्य (धम्म) के चक्र को उचित रूप से घुमाया, पांच (पंचवग्गी) थेरों के समूह को अरहंत पद पर स्थापित किया, योशा के नेतृत्व में पचपन सहायों को परिवर्तित (विनत्वा) किया, साठ संतों (अरहंतों) को यह कहकर विदा किया: "हे भिक्षुओं! अपनी यात्रा पर निकलो," अच्छे राजकुमारों (भद्धवग्गी) के समूह को अपने अनुशासन में लिया, उरुवेला कस्सपा के निवास स्थान पर गए, वहाँ निवास करने के उद्देश्य से अग्नि (या ताप) गृह (अज्ञागार) में प्रवेश किया, उरुवेला कस्सपा को परिवर्तित किया, वहाँ निवास करने के उद्देश्य से अग्नि (या ताप) गृह (अज्ञागार) में प्रवेश किया, उरुवेला को परिवर्तित किया। कस्सपा ने अपने श्रोताओं (सपरिसा) सहित साढ़े तीन हजार चमत्कारों के द्वारा उन्हें भिक्षु बना दिया। जब उनके भिक्षु बनने की

शर्त का पता चला, तो उनके दो अन्य भाई अपने श्रोताओं (सपरिसा) सहित आए और गुरु के समक्ष भिक्षु बन गए। जब उन्हें "आओ भिक्षुओं!" कहकर पुकारा गया, तो वे सभी जादुई प्याले धारण करने वाले और जादुई वस्त्र धारण करने वाले बन गए।

गुरुदेव अपने साथ उन हजार भिक्षुओं को लेकर गयासीसा गए, एक पत्थर पर बैठे और आदित्तपरीय (अग्निप्राय) पर अपने प्रवचन के माध्यम से उन सभी को अरहंत पद पर स्थापित किया। इसीलिए अपदान में ऐसा कहा गया है।

"पदुमुत्तरा नामक विजेता,

वह ऋषि जिसे ज्ञान था

संपूर्ण विश्व, दृष्टि का स्वामी

एक लाख युगों पहले (कप्पा) उत्पन्न हुआ।

पहले।

बुद्ध, जो सलाह देने वाले थे,

जिसने समझ पैदा की (की)

सत्य), जीवित प्राणियों का प्रेषक

संसार के सागर के पार, चतुर

शिक्षण प्रवचन (देसनकुसला), भेजा गया

बहुत सारे लोगों के बीच।

सहानुभूति रखने वाला, दयालु, साधक

सभी जीवित प्राणियों के कल्याण के लिए,

सभी विधर्मी (तित्तिया) जो पहुँच चुके थे

(उनकी उपस्थिति) पाँचों में स्थापित हो चुकी है

नैतिक उपदेश।

इस प्रकार वह मुक्त हो गया

अशांति (निराकुल) और शून्य (सुञ्ञत)

विधर्मियों का भी; वह बहुरंगी हो गया

(vicittaṃ) उन अरहंतों के साथ जो बन गए थे

ऐसे ऋषि जो शक्तियों से संपन्न थे

(वसी).

वह महान ऋषि अट्ठावन हाथ लंबा था।

(रतन) ऊंचाई में, उनका स्वरूप (संकासा)

कीमत (अघघिया) लीलके सोना (कंकाना) थी;

वह बत्तीस उत्कृष्ट चरित्र वाले व्यक्ति थे।

टिक।

उनकी जीवन अवधि निरंतर (tāvade) थी।

एक लाख वर्षों तक; शेष

इतने लंबे समय तक (जीवित रहते हुए) उसने बहुत बड़ी भीड़ भेजी

संसार के सागर के पार पुरुष। मैं था

फिर हंसवती (शहर) में एक कुआँ

मान्यता प्राप्त (सम्मातो) ब्राह्मण।

चमकते प्रकाश (पज्जोता) के पास पहुंचा

मैंने संसार में सत्य (धम्म) को सुना।

उनके द्वारा सिखाया गया। यह सुनकर फिर

महापरिसा का शिष्य

सबसे आगे की स्थिति में रखा जाना (etadag-

उन लोगों में से जिनके पास बहुत सारे श्रोता थे (गम्ही)

(महापरिसातिम्) मुझे प्रसन्नता हुई।

महान विजेता को आमंत्रित करके, साथ में

मैंने उनके विशाल दल के साथ दान दिया।

साथ ही एक हजार ब्राह्मण भी।

मैंने अपनी महान दानशीलता का प्रस्ताव देकर भुगतान किया।

नेता को मेरा नमन; खड़े होकर

एक तरफ खुशी से मैंने ये शब्द कहे।

हे वीर! मेरी पवित्र आस्था के माध्यम से

आप, और मेरी गुणवत्ता के कारण

वहाँ समर्पित सेवा (अधिकारगुण) हो सकती है

मेरे लिए हर जगह एक बड़ा दर्शक वर्ग (परिसा) हो।

मेरा पुनर्जन्म हो सकता है।

फिर, गुरु, जिनकी आवाज ऐसी थी

किसी के तुरही बजाने के समान उत्कृष्ट

हाथी (गजगज्जिता) और (जितना मीठा)

कोयल का गायन (करविहारुतो)

उन्होंने श्रोताओं से कहा; इस ब्राह्मण को देखो।

(उसे देखो) जिसका रंग सुनहरा है,

उसकी मजबूत भुजाएँ (बहु), उसकी आँखें और मुँह

कमल के फूल की तरह, उसकी उमंग से जन्मा

शरीर से प्रसन्न और हृदय से प्रसन्न, धर्मपरायणता से परिपूर्ण

मुझे अपने गुणों पर भरोसा है।

यह व्यक्ति इस पद की आकांक्षा रखता है।

भिक्षु सिहाघोष (शेर की दहाड़); वह

वह वांछित वस्तु (मनोरथ) प्राप्त कर लेगा।

एक लाख युगों (कप्पा) बाद,

दुनिया में गुरु अवश्य होंगे

कुल द्वारा गौतम नाम दिया गया, भेंट

ओक्काका(इक्ष्वाकु).

वह अपने सत्य (धर्म) का उत्तराधिकारी होगा।

सत्य (धम्म) द्वारा सृजित एक घनिष्ठ पुत्र (ओरासो);

वह गुरु का शिष्य बन जाएगा।

कुल के अनुसार इसका नाम कस्सपा रखा गया था।

बानवे युग (कप्पा) पहले, एक उत्पत्ति हुई

अद्वितीय मास्टर फुस्सा, सबसे अग्रणी

विश्व का नेता, अद्वितीय (अनुपामो)

और अतुलनीय (asadiso)।

सभी अंधकार को दूर करके, उलझनों से मुक्त होकर

प्रचुर उलझन, उसने बारिश बरसा दी

अमरता की वर्षा, संतुष्टिदायक (तप्पयंतो)

विश्व के साथ-साथ दिव्य जगत।

उस समय, वास्तव में, बनेरेस में, हम थे

संप्रभु के पुत्र, तीन भाई

सभी, लेकिन अच्छी तरह से विश्वसनीय (saṃvisaṭṭha) द्वारा

राजा।

हमारे भौतिक शरीर की विशेषताएँ इस प्रकार थीं:

वीरांगरूप होने के नाते, हम बलवान थे।

हम युद्ध के मैदान में अजेय थे;

उस अवसर पर, सीमा थी

विद्रोह और पृथ्वी के स्वामी ने बात की

हम लोगो को।

“आओ। सीमा पर जाकर, तुम

जंगल को पूरी तरह से साफ कर देना चाहिए।

विद्रोही सेना और उसे पूरी तरह से जीत लेने के बाद

(विजिरितं) और सुरक्षित, आपको देना चाहिए

इसे मुझे फिर से दे दो;" उसने इस प्रकार कहा।

इसके बाद हमने (जवाब में) कहा; “अगर आप

इससे हमें वह नेता मिल जाएगा जिसकी देखभाल की जानी है।

हम आपकी इच्छा पूरी करेंगे।

फलस्वरूप।

(मांगी गई) कृपा प्राप्त करने के बाद

इसके बाद, हमें भेज दिया गया

पृथ्वी की चर्बी से सीमा बनी थी

विद्रोहियों ने अपने हथियार डाल दिए और आगे बढ़े

फिर से संप्रभु।

हमने राजा से अपनी विनती की,

हमारे लिए यह करने के लिए लोक के नेता (जनता के नेता)

स्वामी की सेवा; प्राप्त कर लिया

(सेवा करने की अनुमति) वीर ऋषि, हम

हमने अपनी पवित्र भेंट तब तक अर्पित की जब तक हम

रहते थे।

बेहद महंगे कपड़े पेश करने के बाद,

उच्च कोटि के रस से युक्त भोजन। आनंददायक।

मठों और लाभकारी दवाओं के लिए

ऋषि अपने भिक्षुओं के संघ के साथ,

(हमारी भेंट की वस्तुएं) प्राप्त की गईं

हमारे द्वारा धार्मिकतापूर्वक (धम्मेना)।

वे नैतिक उपदेशों (सीला) से युक्त थे।

हम दूसरों के प्रति सहानुभूति रखते थे और हमारा

लोगों का ध्यान विकास की ओर लगा हुआ था।

ध्यान (भावना)।

नेता की देखभाल करने के बाद

पवित्र आस्था और प्रेमपूर्ण दयालु हृदय,

और जब दुनिया का वह अग्रणी व्यक्ति प्रवेश कर गया

हमने निब्बाना के लिए अपनी श्रद्धापूर्वक भेंटें अर्पित कीं।

हमारी क्षमता (बाला) के अनुसार।

वहाँ से निकल जाने के बाद, हम चले गए

उत्कृष्ट तुसिता स्वर्ग में, जहाँ

हम सभी को बहुत खुशी मिली; यही है

हमारी श्रद्धा को साकार करने का फलदायी परिणाम

बुद्ध को अर्पित की जाने वाली वस्तुएँ।

एक जादूगर के अनुसार कई करतब प्रदर्शित किए जाते हैं

नाट्यकला में आकृतियों और रूपों (विकती)

अवस्था (रंगा), इसी प्रकार, मैं, इधर-उधर लुढ़कता हुआ

अस्तित्व में, संप्रभु प्रमुख बन गया

विदेह राज्य के (अधिपति)। मेरी रुचि थी।

(असायो) गलत दृष्टिकोण की ओर (मिच्चदिथि-

(गता) नग्न तपस्वी के कथन के कारण

गुण (गुण) का (असेल); चढ़ाई करने वाला

मैंने नरक के मार्ग को नहीं चुना।

मैंने अपनी बेटी रूका की सलाह मानी;

कई बार ब्रह्मा पर निर्भर (संसितो)

नारोदा, मैंने बुरी दृष्टि को त्याग दिया।

दस को विशिष्ट रूप से पूरा करने के बाद

मानसिक व्यायाम के रूप (कम्मट्ठाना),

मैं स्वर्ग (सग्गा) में ऐसे पहुँच गया मानो वह मेरा ही हो।

मेरे शरीर के विघटन पर, मेरा अपना महल।

जब मेरा अंतिम अस्तित्व समाप्त हो चुका था

वहाँ पहुँचकर मैं ब्राह्मण (ब्रह्मबंधु) बन गया;

मैं एक महान ब्राह्मण (विप्पा) परिवार में पैदा हुआ था।

समृद्ध (फीता) शहर बनारस में।

मृत्यु के खतरे से भयभीत होकर,

बीमारी और बुढ़ापे के कारण, मैं इसमें डूब गया।

घने जंगल में; मैंने संसार का पूर्ण त्याग कर दिया।

गुंथे हुए बालों वाले तपस्वियों के बीच चक्कर लगाते हुए,

निर्वाण के मार्ग की खोज में (esanto)।

उस अवसर पर, मेरे दोनों भाइयों ने

उन्होंने मेरे साथ मिलकर त्याग किया।

उरुवेला में एक आश्रम बनाने के बाद, मैंने

वहाँ निवास करता था।

कबीले ने मेरा नाम कसापा रखा था (जरूरी था), मैं उनमें से एक था।

जो उरुवेला में रहने लगे; परिणामस्वरूप

मैं इस नाम से जाना जाने लगा: उरुवेला कस्सपा।

मेरे भाई, की उपस्थिति (सकासा) में

उस नदी का नाम (सवयो) नादी कस्सपा था।

वह (मेरा सबसे छोटा भाई) वहाँ मौजूद था।

गया के निवासी, और उनका नाम गया कस्सपा रखा गया।

मेरे सबसे छोटे भाई के दो बच्चे थे।

सौ; मेरे मध्य के तीन (सौ)

भाई; निश्चय ही पाँच सौ मेरे थे;

मेरे सभी छात्र मेरे पीछे-पीछे चले।

उस समय बुद्ध मेरे पास आए;

मनुष्यों का सारथी, सबसे आगे

दुनिया ने कई प्रकार बनाए हैं

मेरे लिए चमत्कार, मुझे परिवर्तित (vinesi) कर दिया।

मैं 'आओ, भिक्षु' प्रकार का भिक्षु बन गया

अपने हजार साथियों के साथ;

उन सभी के साथ मिलकर, मैंने हासिल किया

अरहंत पद।

वे और साथ ही कई अन्य छात्र

मेरे चारों ओर घेरा हुआ था। मैं भी ऐसा करने में सक्षम था।

बोलो। परिणामस्वरूप

सातवां तपस्वी (इसिसत्तमो)

मेरा मूल्यांकन किया।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने उचित कर्म (पटिपत्ति) पर विचार किया और शेर की दहाड़ लगाने के लिए इन छह श्लोकों का उच्चारण किया।

375. "प्रसिद्ध लोगों के चमत्कारों को देखकर

गौतम, मैं अभी तक इतना नीचे नहीं गिरा हूँ।

(पणिपतिम्, उनके समक्ष प्रणाम करना)

बेईमानों द्वारा धोखा दिए जाने के कारण

इच्छा (इस्सा) और अभिमान (मान)।

376. "मेरी मंशा का पता चलने पर

पुरुषों के सारथी ने मुझे प्रेरित किया (कोडेसी);

परिणामस्वरूप मुझे पश्चाताप हुआ।

अजीब और रोंगटे खड़े कर देने वाला।

377. "त्याग कर (निराकत्वा)"

तब वह अल्प (परित्तिका) समृद्धि

जब मैं

पहले मैं चोटीदार बालों वाला एक तपस्वी था।

के युग में भिक्षु बन गया

विजेता।

378. "पहले मैं (अपनी) स्थिति से संतुष्ट था।"

पवित्र अग्नि पूजा (यज्ञा संस्कृत)

(पुरक्खतो) कामुक तत्व द्वारा (काम-

बाद में, मैंने अपनी वासना को नष्ट कर दिया।

(राग), घृणा (दोष) और भ्रम

(मोह) भी।

379. "मुझे अपने पूर्व निवास (निवास) याद आ गए;

मेरी दिव्य दृष्टि पूरी तरह से शुद्ध हो चुकी थी;

मुझे दिव्य श्रवण शक्ति भी प्राप्त हुई, मैं एक बन गया

जादुई शक्ति का धारक, एक ज्ञाता

दूसरों के मन को भी।

380. “मेरे लिए वह लाभ, जिसके उद्देश्य से

मैं गृहस्थी से भिक्षु बन गया था

बेघर जीवन को जीवन देना;

तदनुसार हासिल किया; मेरे सभी बंधन

(संयोजन) नष्ट हो गया था।

वहाँ, disvāna pāṭihārāni का अर्थ है: विशाल सर्प को वश में करने से लेकर तीन हज़ार पाँच सौ चमत्कारों को देखने वाला। “Pātihīraṃ, pātiheraṃ और pātihāriya” ये अभिव्यक्तियाँ अर्थ की दृष्टि से एक ही हैं; केवल वर्तनी (ब्यञ्जन) के विवरण में ही इनमें अंतर है। Yasassino का अर्थ है: जिसका सत्य (yathābhuccaṃ) के अनुसार विश्व में, साथ ही दिव्य प्राणियों के जगत में भी, “Iti pi so bhagava (इस प्रकार वह धन्य है)” से प्रारंभ होकर, उसकी प्रतिष्ठा (patthaṭa) फैली हुई है। Na tāvā'haṃ paṇipatiṃ का अर्थ है: जब तक भगवान बुद्ध ने मुझे इस प्रकार धमकी नहीं दी: “हे कस्सपा! वास्तव में, तुम न तो अरहंत हो और न ही तुमने अरहंतत्व के सही मार्ग (मार्ग) पर चलने के लिए अपना जीवन व्यवस्थित किया है; वह उचित अभ्यास (पटिपदा) जिससे तुम या तो अरहंत बन सको या अरहंतत्व के मार्ग पर चल सको, तुममें विद्यमान भी नहीं हो सकता,” तब तक मैंने किस परिस्थिति में प्रणाम नहीं किया? Issāmānena vañcito का अर्थ है: न केवल दुर्भावना (issāya c'eva) के कारण धोखा खाकर नीचे गिर जाना, जिसकी विशेषता दूसरों की समृद्धि को सहन न कर पाना है, जैसे कि: “जब मैंने इस व्यक्ति का शिष्यत्व ग्रहण किया, तो मेरा लाभ और यश (sakkāro) सब जगह कम हो जाएगा और केवल इसी का लाभ और यश बढ़ेगा,” बल्कि अहंकार के कारण भी, जिसकी विशेषता कठोरता (abbhunnata) है, जैसे कि “मैं बहुत से लोगों द्वारा मान्यता प्राप्त समूह का नेता (pāmokkho) हूँ; यही इसका अर्थ है।

मामा संकल्पमञ्ञाय का अर्थ है: मेरे गलत इरादे को जानने के बाद, भगवान ने जादुई शक्तियों के चमत्कार दिखाए, जो मानवीय कर्मों (धम्म) से परे (उत्तरी) हैं; (चमत्कार) देखने के बाद, यद्यपि उन्होंने ऐसा सोचा; “वास्तव में, महान भिक्षु उच्च जादुई शक्ति और महान प्रभाव वाले हैं,” उन्होंने ऐसा कहा; 'वास्तव में, मेरी स्थिति के अनुसार, वे अभी तक अरहंत नहीं हैं; यद्यपि वे इस प्रकार उत्पन्न हुए दुष्ट और उबड़-खाबड़ विचार (मिच्छावितक्कं) को जानते थे, फिर भी उन्होंने अपने ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता की प्रतीक्षा करते हुए समभाव (अज्जुपेक्खित्वा) बनाए रखा। बाद में, नेरांजरा नदी के मध्य में नदी के जल को पीछे हटाकर (उस्सारेत्वा), वे धूल से भरी (हता) भूमि पर आगे-पीछे चले, अपने द्वारा लाई गई नाव पर खड़े हुए, तब भी उन्होंने "महिद्धिको (अत्यंत जादुई रूप से शक्तिशाली)" से शुरू करते हुए इस प्रकार सोचा, परन्तु फिर कहा, "जैसा मैं हूँ, वह वास्तव में अरहंत नहीं है।" इस प्रकार, उत्पन्न हुई दुष्ट प्रवृत्ति को जानकर, यही अर्थ है। कोदेसी नरसारथी का अर्थ है: तब, मेरे ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता को जानकर, गुरु, सारथी और मनुष्यों के प्रशिक्षक ने मुझे "न'एव खो त्वं अरहा (वास्तव में, तुम अरहंत नहीं हो)" से शुरू होने वाले कथन से प्रेरित किया और मुझे अपने अधीन (निग-गणही) कर लिया। ततो मे आसी संवेगो, अब्भूतो लोमहंसनो का अर्थ है: इसके बाद, जैसा कहा गया है, उस आग्रह (कोदना) के कारण, यह अब्भूतो (अजीब) है क्योंकि ऐसी स्थिति पहले कभी इतने लंबे समय तक नहीं हुई थी, यह लोमहंसनो (बाल खड़े होने) के कारण है, बाल खड़े होने के कारण; संवेगो का अर्थ है: मुझे ज्ञान का उद्भव (णाणुप्पादो) हुआ, साथ ही पाप करने के भय (ओत्तप्पा) की भावना भी उत्पन्न हुई; "मुझे ऐसा लगता है मानो मैं अरहंत हूँ, यद्यपि मैं ऐसा नहीं हूँ।"

जटिलभूतस्स का अर्थ है: (मुझे) जो एक तपस्वी था। सिद्धि का अर्थ है उत्कृष्ट समृद्धि, लाभ और सम्मान (सक्कारा)। परित्तिका का अर्थ है: सीमित मात्रा में (अप्पमत्तिका)। ताहं का अर्थ है: वह मैं। तदा का अर्थ है: उस समय जब भगवान द्वारा दिए गए आग्रह के कारण (मुझमें) पश्चाताप उत्पन्न हुआ। निराकत्व का अर्थ है: हटाने (अपनेत्व) और त्यागने (छद्देत्व) के बाद, अनासक्त हो जाने (अनपेक्खो) के बाद; इस प्रकार, अर्थ है: "इद्धि तो भावनामय इद्धि (जादुई शक्ति), इस प्रकार, ध्यान (भावना) के विकास से बनी शक्ति है," ऐसा वे कहते हैं। यह उचित नहीं है (आयुत्तं) क्योंकि उस समय उन्होंने ध्यान प्राप्त नहीं किया था। वास्तव में, इसी प्रकार कहा गया है; “कामधातुपुरुक्खतो (इंद्रिय सुख (काम) के तत्व (धातु) द्वारा संचालित)।”

यञ्ञेन सन्तुच्छो का अर्थ है: पवित्र यज्ञ अर्पण करने से संतुष्ट (यञ्ञायजनेन), यह बोध (संञि) रखते हुए कि जो करना चाहिए वह पूरा हो गया है, यह कहते हुए: “पवित्र यज्ञ अर्पण करने के बाद मुझे स्वर्गिक आनंद प्राप्त होगा; इतना ही काफी है (अलमेत्तवता)।”

कामधातुपुरक्खतो का अर्थ है: यज्ञ अर्पण (यञ्ञायजनेन) के माध्यम से अपने सामने (पुरक्खतवा) इंद्रिय सुखों (काम) का संसार रखकर (पुरक्खतवा) जो इंद्रिय सुखों (काम) के उत्तम अस्तित्व (एउगति) के संबंध में (आरब्ब) उत्पन्न लालसा (उप्पन्नतण्हो) के कारण हुआ हो। यदि उस यज्ञ अर्पण (यञ्ञो) में (पटिसंयुत्तो होति) जीवित प्राणियों की हत्या करने से उसे उत्तम अस्तित्व (सुगति) प्राप्त नहीं हो सकता; वास्तव में, बुरे कर्मों से वांछनीय (इट्ठो) और सुखद (कन्तो) परिणाम (विपाको) प्राप्त नहीं होता। यद्यपि दान (दान) आदि जैसे पुण्यकारी (कुसला) संकल्प (चेतना) होने पर, जब सहायक परिस्थितियाँ एक साथ आती हैं (पच्चयासमवाय), तो वह उस संकल्प के माध्यम से उत्तम अस्तित्व (सुगति) प्राप्त कर सकता है। पच्चा का अर्थ है: संन्यास के बाद, जब उसने गुरु की सलाह पर संन्यासियों के विधर्मी दृष्टिकोण (लद्धि) को त्यागकर चार आर्य सत्यों के मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठना) में लीन हो गया था। समूहिं का अर्थ है: मैंने विधिपूर्वक अंत किया। आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के विकास में गहनता से लीन रहने के बाद, निरंतर सही मार्गों (मग्गपटीपतिया) के माध्यम से काम (राग), घृणा (दोष) और भ्रम से पूर्णतः मुक्ति प्राप्त करना।

हालांकि, इस थेरा ने छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत का दर्जा प्राप्त कर लिया था, तथा उत्तम (आर्य) मार्ग (मार्ग) के माध्यम से कामवासना (राग) आदि का उचित अंत कर लिया था, इसलिए उन्होंने "पुब्बेनिवासं जानामि" से शुरू होने वाला श्लोक कहा।

यह दर्शाने के लिए कि स्वयं छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत हैं। वहाँ, pubbenivāsaṃ janāmi का अर्थ है कि मैं पूर्व (pubbe) निवासों (nivāsa), उत्पन्न (nibbatta) समूहों (khandha) और उन समूहों पर निर्भर (khandhapaṭibaddha) के ज्ञान के माध्यम से हथेली (hatthatala) की सतह पर मायरोबलन फल (āmalaka) के समान स्पष्ट रूप से (paccakkhato) ज्ञान प्राप्त करता हूँ और प्रबुद्ध (bujjhāmi) होता हूँ, अपने और दूसरों के पूर्व निवास (pubbenivāsaṃ) के ज्ञान के माध्यम से। Dibbacakkhu visodhitaṃ का अर्थ है: दिव्य दृष्टि का ज्ञान स्पष्ट रूप से शुद्ध हो गया है; ध्यान (भावना) के विकास के माध्यम से उसे पूर्णतः शुद्ध करने के बाद, मैंने उस अत्यंत सूक्ष्म (सुखुमा) दृश्य वस्तु (रूप) को, जो दिव्य या मानव रूपी हो, दूर (दूर) स्थित (ठित) इस प्रकार प्रकट करने की क्षमता का ज्ञान प्राप्त किया है मानो वह सामान्य (पकतो) दृश्य वस्तु (रूप) हो जो सामान्य (पकति) आँखों द्वारा देखे जाने की सीमा (आपाथा) तक पहुँच चुकी हो; यही अर्थ है। इद्धिमा का अर्थ है: जादुई शक्ति का स्वामी, जिसमें दृढ़ (अधिष्ठान) जादुई शक्ति और मानसिक शक्ति (विकुब्बनिद्धि) आदि शामिल हैं; विविध जादुई शक्तियों का ज्ञान प्राप्त करने वाला; यही अर्थ है। परचित्तञ्ञु का अर्थ है: दूसरों के मन का ज्ञाता, क्योंकि वह कामुक (सारग) माने जाने वाले दूसरों के मन को जानता है, और इसी कारण उसे दूसरों के विचारों का ज्ञान प्राप्त करने वाला (चेतोपरिया) कहा गया है। दिब्बासोतञ्च पापुणि का अर्थ है: मैंने दिव्य श्रवण का ज्ञान भी उचित रूप से प्राप्त कर लिया है।

इसलिए me attho anupatto, sabbasaṃyojanakkhayo का अर्थ है: विनाश से या सभी बंधनों से मुक्त होने से जो भी लाभ प्राप्त होता, वह परम (परम) लाभ और मेरा स्वयं का लाभ (सदत्थ) मुझे श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्ग) की प्राप्ति से प्राप्त हो चुका है। इस प्रकार, इस श्लोक के माध्यम से थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) का प्रकटीकरण हुआ; इसे इसी प्रकार समझा जाना चाहिए।

थेरा उरुवेला कस्सपा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(211):तेकिचाकारी

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (211) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
211. Tekicchakāri
बुद्ध युग में सुबुद्ध नामक एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, चिकित्सकों की सहायता से उनका जन्म सुरक्षित रूप से हुआ। इसलिए उनका नाम तेकिच्छाकारी रखा गया, जिसका अर्थ है 'चिकित्सक द्वारा निर्मित'। [1] वे अपने कुल की कलाओं और विद्या को सीखते हुए बड़े हुए। उनके पिता ने अपनी बुद्धिमत्ता और नीति के कारण बनारस के राजा (sic) की ईर्ष्या और संदेह को आकर्षित किया, जिसके परिणामस्वरूप राजा चंदगुत्त ने उन्हें कारावास में डाल दिया। तब तेकिच्छाकारी ने यह सुनकर भयभीत होकर भाग गए और विहार (मठ) हॉल में रहने वाले थेरा के पास शरण ली और उन्हें अपनी परेशानी का कारण बताया। थेरा ने उन्हें भिक्षु दीक्षा दी और उन्हें एक अभ्यास दिया, जिसके बाद वे खुले में एकांतवास करने वाले भिक्षु बन गए, [2] जो गर्मी या सर्दी की परवाह नहीं करते

थे और विशेष रूप से उदात्त भावों की साधना में लीन रहते थे। दुष्ट देवता हिम मारा (मृत्यु के देवता/शैतान) ने उसे अपने चंगुल से फिसलते हुए देखा; और थेरा को असंतुलित करने की इच्छा से, फसल कटाई समाप्त होने के बाद, वह एक चरवाहे के वेश में उसके पास आया और उसे इस प्रकार लुभाया:

[381] अतिहिता विहि खलगता साली,॥
न च लभे पिण्डदां कथमहौ कस्सां॥ ॥

[381] अब सारी फसल चावल की हो चुकी है, और
जौ की पिसाई भी हो चुकी है। मुझे एक निवाला भी नहीं मिलेगा!
मैं क्या करूँ?

तब थेरा ने सोचा, 'यह व्यक्ति मुझे अपनी स्थिति के बारे में बता रहा है। लेकिन मुझे तो खुद से बात करनी चाहिए। मुझे प्रवचन देने का कोई अधिकार नहीं है,' इस प्रकार उसने स्वयं को तीन आधारों पर ध्यान करना सिखाया:

[382] बुद्धमप्पमेय्यं अनुस्सार पसन्नो,॥
पिटिया फूटसारिरो होहिसि सततमुदग्गो॥ ॥

[383] धम्ममप्पामेय्यं अनुसरा पसन्नो,॥
पिटिया फूटसारिरो होहिसि सततमुदग्गो॥ ॥

[384] सउघमप्पामेय्यं अनुसरा पसन्नो,॥
पिटिया फूटसारिरो होहिसि सततमुदग्गो॥ ॥

[385] अब्भोकसे विहारसि सीता हेमन्तिका इमा रत्तियो,॥
मा सितेना पारेतो विहान्नित्थो पविसा त्वं विहारं फुसिताग्गाणं॥ ॥

[386] फूसिसा कैटासो अप्पमन्नायो॥
ताहि च सुखितो विहारिसं,॥
नहँ सितेन विहन्निस्साm॥
अनिन्जितो विहारन्तो ति.॥ ॥

[382] बुद्ध का ध्यान करो! अनंत ध्यान!
इस प्रकार तुम आनंदमय भक्ति में, तुम्हारा शरीर परमानंद से परिपूर्ण होकर, सदा ऊंचाइयों पर
रहोगे ।

[383] [209] धम्म पर विचार करो! [3] ...

[384] भिक्षु के आदेश पर विचार करो! अनंत विचार! [3]

इस प्रकार तुम परमानंदमय भक्ति में, तुम्हारा शरीर परमानंद से परिपूर्ण होकर, सदा ऊंचाइयों पर
विराजमान रहोगे ।

फिर मारा (मृत्यु का देवता/शैतान) ने उसे एकांतवास से रोकने की इच्छा से, उसका शुभचिंतक होने का नाटक करते हुए कहा:

[385] क्या यह नंगे आसमान के नीचे रहता है? ये रातें ठंडी हैं
और अब सर्दी का मौसम है। सावधान रहो, कहीं
ठंड से मर न जाओ। अपने घर में चले जाओ,
अपने दरवाजे को अच्छी तरह बंद कर लो!

तब थेरा ने यह दर्शाते हुए कहा कि गृहस्थी में रहना एक बंधन है, परन्तु वहाँ उसे आराम मिलता है:

[386] मेरा हृदय आनंदित होकर
चारों असीम भावों को स्पर्श करेगा; [4] इससे
मैं सदा आनंदमय विश्राम में रहूँगा।
ठंड से हारना मेरा नहीं, जो
अविचलित और शांत रहते हैं।

इस प्रकार, थेरा ने अंतर्दृष्टि विकसित की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

और चूंकि यह थेरा राजा बिन्दुसार के समय में रहते थे, इसलिए इन छंदों को तीसरे परिषद में प्रामाणिक रूप से पूर्वाभ्यास किया गया समझा जाना चाहिए। [5]

[1] इसलिए ओल्डेनबर्ग की एमएसएस. और ब्र. सी.वाई. में केवल एस. सी.वाई. में -कानी है।

[2] धुतंगों के दो रूप । मिलिंदा, ii., पुस्तक vi देखें ।

[3] श्लोक 382 के अनुसार दोहराएँ।

[4] उनकी और सुभूति की कहानी देखें। चार भाव थे प्रेम, दया, सुख के प्रति सहानुभूति और समभाव। पंक्ति 1 'मैं स्पर्श करूँगा' से विस्तारित है, यह अभिव्यक्ति हमारे लिए उतनी महत्वपूर्ण नहीं है जितनी किसी बौद्ध या नव-प्लेटोवादी के लिए है। मेरी पुस्तक 'बुद्धिज्म', पृष्ठ 218 देखें।

[5] यह दिलचस्प ऐतिहासिक पहलू ओल्डेनबर्ग के संस्करण, पृष्ठ 42 एन., और बुद्ध के संवाद, i. xvi में देखा गया था । बिण्डूसार, अशोक के पिता, हथियाने वाले चंद्रगुप्त (चंदगुट्टा) के पुत्र थे, जिन्होंने थेरा के पिता को कैद कर लिया था।

6.2 [211] टेकिचकारित्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
अतिहितवीहि से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेर तेकिच्छक का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों के प्रति समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने इक्यावन युग (कप्पा) पहले भगवान विपस्सी के समय में एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने चिकित्सा ग्रंथों (वज्जसत्थ) में निपुणता प्राप्त की और भगवान विपस्सी की सेवा में कार्यरत बीमार थेर अशोक को रोगमुक्त किया; उन्होंने करुणावश अन्य जीवों को भी उचित औषधि प्रदान की (संविदहि)।

उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, उन्होंने अपने बार-बार के पुनर्जन्मों के चक्र में देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण किया और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे सुबुद्ध नामक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए; गर्भावस्था के दौरान बहुत सी औषधियों के द्वारा खतरे को दूर करने (अपहारित्वा) के बाद सर्वांगीण सुरक्षा (परिपालिता) की स्थिति के कारण उनका नाम टेकिच्छकारी रखा गया। उन्होंने अपने परिवार के अनुरूप शिक्षा स्थल पर सभी कलाओं और विज्ञानों का अध्ययन किया। उस समय, सुबुद्ध की बुद्धिमत्ता, संसाधनों और कार्यों में निपुणता देखकर, चानक्का ने अपने स्वाभाविक ईर्ष्या के कारण राजा चंदगुट्ट से उसे कारागार में डलवा दिया और मन ही मन कहा: "यह व्यक्ति इस राजपरिवार में समर्थन प्राप्त करके मुझे भी पीछे छोड़ सकता है।" अपने पिता के कारावास की खबर सुनकर (बंधनागारप्पवेदनम्), टेकिच्चकारी भयभीत होकर भाग गए और थेरा सानवासी के पास गए। उन्होंने थेरा को अपने पश्चाताप का कारण बताया और भिक्षु बन गए। उन्होंने मानसिक साधना की और खुले में रहने वाले स्वामी और तपस्वी के रूप में तपस्वी जीवन व्यतीत करने के बाद, एकांतवास में निवास किया। उन्होंने शीत-ऋतु और शीत-ऋतु की परवाह किए बिना भिक्षु के कर्तव्यों का पालन किया। वे ब्रह्मविहारभावन के पवित्र जीवन पर ध्यान लगाने में निरंतर तल्लीन रहे। उसे देखकर, दुष्ट मारा, फसल कटाई (सस्सा) के समय खेत के रखवाले (खेत्तगोपका) के वेश में (वण्ण) थेरा के पास गया, अशांति (विक्खेप) उत्पन्न करने की इच्छा से मन ही मन बोला; "मैं इसे अपने प्रभाव क्षेत्र (विषय) से बाहर नहीं जाने दूंगा," और उसे डराने (निप्पण्डेन्तो) के लिए एक श्लोक कहा।

381. "धान (वीही) की कटाई हो चुकी थी"

(अतिहिता); जौ (साली) चला गया था

पीटा जाना (खाला); फिर भी मैं करता हूँ

भोजन का एक टुकड़ा भी प्राप्त न हो;

मुझे यह कैसे करना चाहिए?

यह सुनकर थेरा ने कहा (तीन छंदों में):—

382. "धर्मपरायणता से प्रसन्न होकर

(pasanno) चिंतन करना (anussara)

बुद्ध की असीमता;

सदा (सततं) प्रसन्न (उदग्गो), तुम

आपके शरीर में प्रवेश हो जाना चाहिए (फुटा)

उत्साह के साथ (पीटी)।

383. "सत्य (धम्म) की असीमता।"

... हमेशा प्रसन्न।

384. "आदेश की असीमता"

भिक्षु... सदा प्रसन्न रहते हैं।

यह सुनकर मारा ने कहा:

385. "तुम खुले में रहते हो; ये

बर्फीले ठंडे मौसम की रातें

सर्दी लग गई है। खुद को इससे पीड़ित न होने दें।

और ठंड से परेशान; आपको प्रवेश करना चाहिए

वह मठ जिसका द्वार हो सकता है

बांधे रखा (फुसिटग्गलम्)।"

इस पर थेरा ने इस प्रकार उत्तर दिया:

386. "मैं स्वयं को इसमें समाहित कर लूँगा

असीम पवित्र जीवन के चार रूप

दयालुता और इसी प्रकार के जीवन (अप्पमञ्ञा);

मैं उनके साथ आनंदपूर्वक रहूँगा

(असीम भावनाएँ)। मैं नहीं करूँगा

सर्दी से परेशान होना (विहञ्ञिस्सम्)

(क्योंकि मैं) अविचलित होकर रह रहा हूँ

jhāna (aniñjito).

वहाँ, अतिहिता वीहि का अर्थ है: धान के दाने को अन्न भंडार (कोट्ठागार) में ले जाया गया था और वहाँ रखा गया था; वहाँ (अनाज) को व्यवस्थित (पटिसामिता) किया गया था; दूसरे शब्दों में, (धान के दाने खलिहान से घर ले जाए गए थे (खलतो); यही अर्थ है। यहाँ धान लेने (वीहिगहनेन) के साथ-साथ अन्य अनाज (धञ्ञं) भी लिए जाते हैं (संगण्हाति)। खगता साली का अर्थ है: जौ की फसलें (साली), आमतौर पर धान (वीहितो पच्चा) के बाद पकती हैं (पच्चन्ति); वे अनाज बनाने के स्थान पर चली गई हैं; वहाँ उन्हें ढेर की अवस्था में रखा गया है और रौंदने (मद्दना), फटकने (चावन) आदि द्वारा; यही अर्थ है। यहाँ जौ के दानों को अलग से लेना (विसुं) मुख्य अनाज (धञ्ञ) की स्थिति को दर्शाने के लिए है; वह दोनों के माध्यम से यह भी दर्शाता है कि गाँव में और गाँव के बाहर भी, कटाई की गई फसल (धञ्ञं) चारों ओर से भरपूर खड़ी है। ना च लब्बे पिंडं का अर्थ है: ऐसे समय में जब चावल आसानी से उपलब्ध हैं, मुझे पके हुए चावल का एक टुकड़ा (पिण्डं) भी नहीं मिल रहा है। कथमहांकसं का अर्थ है: अब मैं क्या करूँ? मैं कैसे जीवन यापन करूँ? इस प्रकार उसने (थेरा का) उपहास किया।

यह सुनकर थेरा ने मन ही मन कहा: "इस दुखी व्यक्ति (वराको) ने स्वयं ही अपने व्यथ (पवत्ति) को मेरे समक्ष प्रकट किया; परन्तु मुझे स्वयं ही सलाह देनी चाहिए; मुझे कुछ भी नहीं बोलना चाहिए," और "बुद्धमप्पमेय्यम" से शुरू करते हुए तीन श्लोक कहे, और अपने आप को तीन वास्तविकताओं (वत्थु) पर चिंतन (अनुस्सति) करने के लिए प्रेरित किया। वहाँ, Buddhappameyyaṃ anussara pasanno का अर्थ है: चिंतन करो, अपनी जागरूकता उत्पन्न करो (satiṃpavattehi) बुद्ध को एकाग्रता के विषय (Buddhārammaṇaṃ) के रूप में ध्यान में रखते हुए, तदनुसार और निरंतर, "Iti pi so bhagavā arahaṃ sammāsambuddho (इस प्रकार वह भी) सम्मान के योग्य है, सर्वथा आत्मजागृत बुद्ध," से प्रारंभ करते हुए, धार्मिक मन से, विशेष रूप से भक्तिपूर्ण आनंद से प्रसन्न होकर, जो विश्वास (okappana) द्वारा चिह्नित (lakkhana) है; भगवान बुद्ध असीम (अपमेय्यं) हैं क्योंकि उनमें कामवासना (राग) जैसी विकृतियाँ (किलेसा) नहीं हैं, जिनके कारण उनका मात्रात्मक मापन (पमाणकार) संभव नहीं है। साथ ही, वे अज्ञान (अविज्जा) और उसकी प्रवृत्ति (सवासनाया) की सुस्ती से निश्चित (अच्छन्त) मुक्ति (विगम) के कारण असीम गुणों से संपन्न होने के कारण अतुलनीय रूप से उपजाऊ (पुण्णक्खेत्त) क्षेत्र हैं। सततमुदग्गो का अर्थ है: आप शारीरिक उल्लास (उदग्गम) उत्पन्न करने के बाद आकाश में उड़ने (लंघितुम) के योग्य (समत्थो) हो सकते हैं, परमानंद (उब्बेगा) उत्साह (पीति) से प्रफुल्लित (उदग्गो), शरीर उदात्त दृश्य रूपों से अभिभूत (समुत्थान) हो जो उत्साह को अच्छी तरह से बढ़ावा देते हैं (समुत्थान), शरीर हमेशा आनंद (पीति) से ओतप्रोत हो जो रोमांचकारी प्रवाह (फरण) से चिह्नित हो, लेकिन निरंतर चिंतन (अनुस्सरन्तोव) द्वारा; आप बुद्ध को ध्यान का विषय (आरम्मणम्) बनाकर अपार (उलारम्) उत्साह और आनंद का उचित रूप से आनंद उठाएंगे, बुद्ध पर अपने चिंतन (अनुस्सति) के माध्यम से; आपको ठंड और गर्मी के परिणामस्वरूप भूख और प्यास से भी अभिभूत नहीं होना चाहिए; अतः, यही अर्थ है।

धम्म का अर्थ है: श्रेष्ठ (अरीयं) पारलौकिक (लोककुत्तर) सत्य (धम्म)। संघ का अर्थ है श्रेष्ठ (अरीयं) पूर्णतः (परम) अर्थपूर्ण (अत्थ) भिक्षु संघ। बाकी सब तो पहले ही कहा जा चुका है। यहाँ, अनुस्सर का अर्थ है: धम्म पर इस प्रकार चिंतन करो कि "भगवान बुद्ध ने सत्य (धम्म) का भली-भांति प्रतिपादन (अक्खातो) किया है", इत्यादि; भिक्षु संघ पर इस प्रकार चिंतन करो कि "भिक्षुओं का संघ गठित करने वाले शिष्य अपने जीवन को भली-भांति व्यवस्थित (सुप्पतिपन्नो) करते हैं"; इस प्रकार इसकी व्याख्या की जानी चाहिए।

जब इस प्रकार, थेरा ने स्वयं उन्हें तीन रत्नों के चिंतन (अनुसारण) की ओर प्रेरित करते हुए सलाह दी, तो मारा ने उन्हें एकांतवास से अलग करने की इच्छा से पाँचवाँ श्लोक "अब्भोकासे विहारति" से शुरू करते हुए कहा, मानो वे थेरा के कल्याण चाहने वाले (हितेसी) की स्थिति में हों। इसका अर्थ है: हे भिक्षु! अब्भोकासे विहारसी (खुले आकाश में, बिना छत वाले (अपटिच्छन्ने) आंगन में निवास करते

हुए, आप अपने शारीरिक आंदोलनों (इरियापथे कप्पेसी) को करते हैं। हेमंतिका इमा रत्वो का अर्थ है: ये ठंडी रातें (वत्तन्ति) में समाहित (परियापन्ना) हो जाती हैं। हिमपात का मौसम (समय) है; इसलिए, ठंड से भयभीत न होकर (अभिभूतो), विघात से परेशान न हों, ऊब न जाएँ। फुसितग्गलं का अर्थ है: उस मठ में प्रवेश करें जिसके द्वार बंद हैं; इस प्रकार, वहाँ आपका सुखमय निवास (विहारो) होगा।

यह सुनकर, थेरा ने "फुसिस्सम" से शुरू होने वाला छठा श्लोक इस प्रकार कहा: "मुझे मठ जाने की कोई इच्छा (पयोजन) नहीं है; मुझे अपने निवास में ही सुख (सुख) मिलता है।" वहाँ, फुसिस्सम चतसो अप्पमञ्ञायो का अर्थ है: मैं अपने आप को ब्रह्मविहार के चार रूपों का पालन करके परिपूर्ण (फुसिस्सामि) करूँगा, जिन्हें असीम प्रभाव क्षेत्र (अप्पनानागूआर) की स्थिति के कारण "अप्पमञ्ञा (असीम)" नाम दिया गया है, मैं समय-समय पर अपने जीवन को (तदनुसार) व्यवस्थित करूँगा (कालें कालं)। ताहिचसुखितो विहारिस्सं का अर्थ है: मैं उन असीम पवित्र प्राणियों (अप्पमञ्ञाहि) के साथ सुखपूर्वक (सुखितो) रहकर, अपने चारों शारीरिक क्रियाओं (इरियापथ) का प्रयोग करूँगा और निवास करूँगा। इसी कारण मुझे हर समय केवल आनंद ही प्राप्त होगा, कष्टदायक पीड़ा नहीं। यतो नाहं सीताण विहार्जिस्सं का अर्थ है: हिमपात के मौसम में पूर्णिमा (अंतरट्ठक) से आठ दिन पहले और आठ दिन बाद भी मुझे ठंड से कष्ट नहीं होगा। अनिंजितो विहारन्तो का अर्थ है: अतः मैं सुखी (सुखितो) होकर ध्यान (समापत्ति) की आत्म-प्राप्ति के आनंद से परिपूर्ण होकर निवास करूँगा, क्योंकि मैंने द्वेष (ब्यापाद) आदि का पूर्णतः त्याग कर दिया है, जिससे मन में हलचल उत्पन्न होती है। इस प्रकार, इस श्लोक का उच्चारण करते हुए ही थेरा ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) का निरंतर विकास किया और अरहंतत्व की कल्पना की। अतः अपदान में कहा गया है:—

मैं बंधुमती नगर में रहता था।

चिकित्सक, सुप्रशिक्षित, लाने वाला

पीड़ित लोगों के समूह को सुख

(आतुरा) रोग से ग्रस्त और परेशान

पीड़ा (दुक्खा)।

एक बीमार भिक्षु को देखकर, प्रेतवाधित व्यक्ति

नैतिक उपदेशों (सीला) का, अत्यंत प्रतिभाशाली

(जुती), मैं, जो धर्मपरायण और दयालु हूँ, तब,

उन्होंने उसे दवा दी।

लेकिन उस औषधि से भिक्षु ठीक हो गया।

उसका स्वास्थ्य (अरोगो)। भिक्षु उनमें से एक था।

जिनकी इंद्रियाँ (इंद्रियाँ) अच्छी तरह से नियंत्रित थीं

(संवुट) वे अशोक नाम से जाने जाते थे।

बुद्ध विपस्सी का परिचारक।

यह 91 युग (कप्पा) पहले की बात है।

मैंने औषधि का अपना अर्पण किया; मैं करता हूँ

मुझे किसी भी बुरी सत्ता का स्मरण नहीं है; यही है

औषधि (अर्पण) का फलदायी परिणाम।

इससे पहले के आठवें युग (कप्पा) में

वर्तमान में मैं एक विश्व राजा था जिसका नाम था

महान फल का सब्बोसधा, संपन्न

सात प्रकार के रत्नों के साथ।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी। :P

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

यहां, इन छंदों को तीसरी सभा में एक साथ गाया गया था क्योंकि राजा बिंदुसारा के समय में इस थेरा की स्थापना हुई थी; इसलिए, इसे इस प्रकार समझा जाना चाहिए।

थेरा टेकिच्चकारी के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(212):महा-नाग

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (212) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
212. महा-नाग
साकेत में मधु-वसेट्ठ नामक एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में इस बुद्ध युग में पुनर्जन्म लेकर, उन्हें महा-नाग नाम दिया गया। [1] उन्होंने थेरा गवम्पति द्वारा उत्पन्न चमत्कार को देखा, [2] जब भगवान (बुद्ध) अंजना वन में रह रहे थे, और श्रद्धा प्राप्त करके, उन्होंने थेरा के अधीन भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और उनकी सलाहों के माध्यम से अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया।

अब जब वे निर्वाण के आनंद में लीन थे, तब थेरा महा-नाग ने देखा कि कैसे छह भिक्षु (भिक्षु) [3] अपने सहधर्मियों के प्रति आदर दिखाने में आदतन विफल रहे, और उन्होंने उन्हें श्लोकों में संबोधित किया जो उनकी अञ्ञा (सर्वोच्च प्राप्ति) की घोषणा बन गई :

[387] यस्सा [43] सब्रह्मचारिसु गारवो न्युपलभति,॥
परिहयति सद्धम्मा मच्छो अपोदके यथा.॥ ॥

[388] यस्सा सब्रह्मचारिसु गर्वो न्युपलभति,॥
न विरूहति सद्धम्मे खेते बीजाव पूतिकौ.॥ ॥

[389] यस्सा सब्रह्मचारिसु गारवो न्युपलभति,॥
अराको होति निब्बाना, धम्मराजस्स सासाणे॥ ॥

[390] यस्सा सब्रह्मचारिसु गारवो न्युपलभति,॥
न विहायति सद्धम्म मच्छो बव्होदके यथा.॥ ॥

[391] यस्सा सब्रह्मचारिसु गर्वो न्युपलभति,॥
सो विरुहति सद्धम्मे खेते बिजाउव भद्दकान्॥ ॥

[392] यस्सा सब्रह्मचारिसु गर्वो न्युपलभति,॥
संतिके होति निब्बाणं धम्मराजस्स ससाने' ति॥ ॥

[387] जो अपने धर्म के साथियों के प्रति
आदर या सम्मान नहीं दिखाता,
वह सच्चे मार्ग (धम्म) से मुरझा जाता है,
जैसे मछली जहाँ पानी कम हो जाता है।

[388] जो अपने धर्म के साथियों के प्रति
आदर या सम्मान नहीं दिखाता,
वह सच्चे मार्ग (धम्म) पर फलता-फूलता नहीं,
जैसे खेत में बोया गया सड़ा हुआ बीज।

[389] जो
निर्वाण से दूर ,
धम्म-भगवान के पंथ और विद्यालय के भीतर खड़ा है।

[390] जो अपने धर्म के साथियों के प्रति
उचित आदर और सम्मान दिखाता है, वह
सच्चे मार्ग (धम्म) से नहीं भटकता,
जैसे मछली जहाँ बहुत पानी होता है।

[391] [211] जो अपने साथियों के प्रति
उचित आदर और सम्मान दिखाता है,
वह सच्चे मार्ग (धम्म) में अच्छी तरह फलता-फूलता है,
जैसे हल में बोया गया सौम्य बीज।

[392] जो अपने नियम के साथियों के प्रति
उचित श्रद्धा और आदर दिखाता है,
वह निर्वाण के बहुत निकट है,
धम्म-भगवान के पंथ और विद्यालय के भीतर। [4]

[1] इस भिक्षु के बारे में और कुछ ज्ञात नहीं है। उनके नाम पर 'ब्लैक क्रीपर पवेलियन' का उल्लेख बहुत बाद में हुआ (जात., iv. 490; vi. 30 [पाठ]; जे.आर.ए.एस. , 1901, पृ. 893)। यह नाम = महान अद्भुत प्राणी या आत्मा, जो सर्प, हाथी, थेरा और परियों के एक वर्ग पर समान रूप से लागू होता है।

[2] देखें XXXVIII.

[3] षड्यंत्रकारियों का एक कुख्यात समूह, जिनके कार्यों ने संघ के संगठन की कड़ी परीक्षा ली। देखें भजन 5; विनय ग्रंथ, i. 218 n.

[4] जो अपने सहधर्मियों के प्रति श्रद्धा नहीं दिखाता, शाब्दिक अनुवाद: जिसके प्रति अपने सहधर्मियों के प्रति श्रद्धा नहीं है, या पाई नहीं जाती, या देखी नहीं जाती (देखें कथावत्थु टीका , नुपलभति , पृष्ठ 8; संवाद, ii. 166, 'पाया नहीं जाता')। धम्मपाल द्वारा ऊपर वर्णित इन श्लोकों का अवसर, धार्मिक परिणामों को तो छोड़ ही दें, डॉ. न्यूमैन के अनुवाद से मेरी असहमति को उचित ठहराता है। उपमाओं के लिए देखें CCVII. पंथ और संप्रदाय = शासन।

6.3 [212] महानागत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
यस्स सब्रहमचारीसु से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा महानागा का है। इसका उद्‌गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, अच्छे कर्म संचित किए, जो इस और उस जन्म के बार-बार होने वाले पुनर्जन्मों (वट्ट) से मुक्ति दिलाने में सहायक थे। वे तेजस्वी काकुसंध के समय एक पारिवारिक घर में पुनर्जन्म लेकर आए; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उन्होंने संयोगवश भगवान काकुसंध को देखा, जो वन में उतरकर एक वृक्ष के चरणों में ध्यान की अवस्था में विलीन थे। वे श्रद्धा से भर गए और उन्हें अनार (दालिम) भेंट किया। उस पुण्य कर्म के फलस्वरूप, वे बार-बार जन्म लेते हुए देवताओं और मनुष्यों के बीच विचरण करते रहे, और जब बुद्ध का जन्म हुआ, तब वे साकेत में मधुवासेत्थ नामक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए। उनका नाम महानागा था। जब वे ज्ञान की आयु प्राप्त कर चुके थे, और भगवान साकेत के शलजम वन (अंजनवन) में निवास कर रहे थे, तब उन्होंने संयोगवश थेरा गवंपति का चमत्कार देखा, उचित श्रद्धा से प्रेरित हुए, उन्हीं थेरा की उपस्थिति में भिक्षु बन गए, उनकी सलाह का पालन किया और अर्हतत्व प्राप्त किया। इसलिए, अपदान में ऐसा कहा गया है।

“महान नायक काकुसंध, जिन्होंने

सभी सत्यों के सुदूर तट पर चले गए

(धम्म) एकांतप्रिय (वापकट्ठो) स्वयं

भिक्षुओं (गण) की भीड़ से निकलकर वह चला गया।

घने जंगल में।

सारगर्भित बीजों (बीजामिंजा) को एकत्रित करने के बाद

मैंने उन्हें (आवणिण) लता से पिरोया;

उस समय, भगवान

पहाड़ी के अंदर ध्यान करना (झायते)

(pabbatantare).

दिव्य दर्शन करने के बाद

मैंने दिव्य (देवदेवं) अर्पित किया

नायक को सारगर्भित बीज (बीजामिंज) अर्पित करना।

समर्पित के योग्य प्राप्तकर्ता

मेरी श्रद्धापूर्वक प्रसन्नता के साथ दान।

(विप्पसन्नेन) मन.

यह तो इसी युग (कप्पा) में हुआ था कि

फिर मैंने मज्जा का अर्पण किया।

(मिंजम्); मुझे कोई बुराई याद नहीं है

अस्तित्व; यही फलदायी परिणाम है

मेरे द्वारा सारगर्भित बीज का अर्पण करने के बारे में।

मेरी सारी बुराई जलकर राख हो गई थी।

बुद्ध के उपदेशों का पालन किया गया था।

बाहर।"

हालांकि, अरहंत पद प्राप्त करने के बाद, थेरा ने छह श्लोकों में उन छह भिक्षुओं (छब्बाग्गिये भिक्खु) को सलाह दी, जिन्हें उन्होंने अपने साथी पवित्र जीवन के नेताओं (सब्रह्मचारी) का कोई सम्मान किए बिना रहते हुए देखा, जबकि वे स्वयं मुक्ति के आनंद में लीन थे।

387. "वह व्यक्ति, जिसका उचित सम्मान नहीं किया जाता है

अपने साथी नेताओं के बीच प्राप्त किया

पवित्र जीवन (सब्रमकारिसु) क्षीण हो जाता है

(परिहायति) अच्छे सत्य से (सद्धम्म)

जैसे कम पानी में रहने वाली मछली।

388. "वह व्यक्ति, जिसके मन में सम्मान का भाव नहीं है

जो लोग पवित्र जीवन जी रहे हैं, जैसे

वह (सब्रह्मकारिसु) नहीं बढ़ता है

वह अच्छा सत्य (धम्म) जो एक

खेत में सड़े हुए बीज।

389. "जिसके मन में सम्मान नहीं है

उसके साथी भिक्षु (सब्रह्मचारी) दूर हैं

व्यवस्था में निर्वाण से दूर

आध्यात्मिक सम्राट (धम्मराजा) का।

390. “वह व्यक्ति जिसके प्रति आदर विद्यमान है”

उनके साथी भिक्षु (सब्रह्मचारी) ऐसा नहीं करते

अच्छे सत्य से विलीन हो जाना

(सद्धम्म) प्रचुर मात्रा में मछली की तरह

पानी।

391. “वह व्यक्ति, जिसका अपने साथियों के प्रति सम्मान—

भिक्षु अस्तित्व में हैं, और अच्छे सत्य में विकसित होते हैं।

(सद्धम्म) अच्छे बीजों के समान

एक मैदान।

392. “वह व्यक्ति जिसका अपने साथी भिक्षुओं के प्रति सम्मान

विद्यमान है, निर्वाण के निकट है।

आध्यात्मिक संप्रभु का प्रतिफल।

वहाँ, सब्रह्मचारीसु का अर्थ है: वे समतुल्य (समानं) के बीच नैतिक उपदेशों आदि के रूप में पवित्र (ब्रह्म) कर्म (धम्म) का अभ्यास करते हैं; इस प्रकार, साथी भिक्षु (सब्रह्मचारी); और सहधार्मिक लोग (सहधम्मिका) जो भिक्षुत्व के नैतिक उपदेशों (शील) और दृष्टिकोण (दिट्ठी) तक पहुँच चुके हैं (गता)। गारवो का अर्थ है: शिक्षक होने की स्थिति (गरुभावो), शिक्षक का निर्माण (गरुकरणं) जो नैतिक उपदेशों (शील) आदि के गुणों से युक्त है (निमित्तं)। नूपलभति का अर्थ है: अस्तित्व में नहीं है, अस्तित्व में नहीं है, घटित नहीं होता, निकट नहीं है (उपतित्तति); इस प्रकार, यही अर्थ है। निब्बाना का अर्थ है दुराचार (किलेसा) की आग के बुझने (निब्बापन) से, दुराचार (किलेसाक्खया) के समाप्त होने से; यही इसका अर्थ है। धम्मराजस्स का अर्थ है: गुरु का। वास्तव में, गुरु सांसारिक और अलौकिक सत्य (धम्म) के अनुसार, दिव्य जगत सहित संसार को प्रसन्न (रंजेति) और तृप्त (तोसेति) करते हैं, इस प्रकार वे धम्मराज (आध्यात्मिक स्वामी) कहलाते हैं। यहाँ भी “धम्मराजस्स सासाने (आध्यात्मिक स्वामी के विधान में);” इसी से निर्वाण का नाम दिया गया है, केवल आध्यात्मिक स्वामी के विधान में; कहीं और नहीं। वहाँ, जो कोई अपने साथी भिक्षुओं के प्रति आदरहीन है, वह निर्वाण से दूर है; इसी प्रकार, वह आध्यात्मिक स्वामी के विधान से भी दूर है; इस प्रकार, वे दर्शाते हैं। बावहोदके का अर्थ है; बहुत जल में। शांतिके नोटि निर्वाणं निर्वाण केवल उनकी उपस्थिति में उनके निकट है। शेष जैसा कहा गया है वैसा ही है। वे श्लोक बन गए जो थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करते हैं।

थेरा महानागा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(213): कुल्ला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (213) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
213. कुल्ला
बुद्ध युग में सावत्थी में एक जमींदार के परिवार में पुनर्जन्म लेकर कुल्ला नाम से जन्मे कुल्ला ने आस्था से प्रेरित होकर भगवान (बुद्ध) द्वारा भिक्षु दीक्षा प्राप्त की। परन्तु वे अक्सर कामुक आवेश से ग्रस्त रहते थे। भगवान (बुद्ध) उनकी प्रवृत्ति को जानते हुए उन्हें क्षुद्र कर्मों का अभ्यास कराया और श्मशान में ध्यान करने को कहा। जब इससे भी संतोष नहीं हुआ, तो वे स्वयं उनके साथ गए और उन्हें सड़न और विघटन की प्रक्रिया देखने को कहा। तब कुल्ला निर्विवश हृदय से खड़े थे, तब भगवान (बुद्ध) ने एक दिव्य छवि प्रकट की, जिससे कुल्ला में ऐसी चेतना उत्पन्न हुई कि उन्होंने पाठ को ग्रहण किया, प्रथम ध्यान प्राप्त किया और उसी के आधार पर अंतर्दृष्टि विकसित करते हुए अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

अपने अनुभव की समीक्षा करते हुए, उन्होंने ये श्लोक कहे, पहले अपने बारे में बोलते हुए (फिर भगवान (बुद्ध) के शब्दों को दोहराते हुए और अंत में अपने स्वयं के शब्द जोड़ते हुए):

[393] कुल्लो सिवाथिकौ गन्त्वा अडासा इत्थिमुज्जताṃ,॥
अपविद्धां सुसानस्मिं खजजन्तीं किमिहि फूटाṃ॥ ॥

[394] Āturaṃ asuciṃ pūtiṃ passa kulla samussayaṃ,॥
उघ्घरान्ताँ पग्घारान्ताँ बलाणं अभिनन्दितौ.॥ ॥

[395] धम्मदासं गहेत्वाना णाणदासनपत्तिया,॥
पचवेक्खीइ इमाँ कायं तुच्चाँ संतराबहिराँ॥ ॥

[396] यथा इदं तथा एतं, यथा एतं तथा इदं,॥
यथा अधो तथा उद्धां यति उद्धां तथा अधो॥ ॥

[397] यथा दिवा तथा रतिṃ यथा रतिṃ तथा दिवा,॥
यथा शुद्ध तथा पच्च यथा पच्च तथा शुद्ध॥ ॥

[398] पंचांगिकेन तुरियेना न रति होती ताड़सी,॥
यथा एकग्गचित्तस्स सम्मा धम्मं विपश्यतोऽ ति.॥ ॥

[393] कुल्ला उस जगह गया जहाँ मुर्दे पड़े थे
और वहाँ उसने एक स्त्री का शव देखा,
खेत में लावारिस पड़ा हुआ, कीड़ों का भोजन। [1]

[394] [212] देखो वह घिनौना भौतिक शरीर, कुल्ला, रोगग्रस्त,
अशुद्ध, [2] टपकता हुआ, रिसता हुआ, मूर्खों का अभिमान।' [3]

[395] पवित्र मार्ग (धम्म) के दर्पण को पकड़ते हुए,
इसके प्रकट ज्ञान द्वारा दृष्टि प्राप्त करने के लिए,
मैंने वहाँ प्रतिबिंबित देखा, बाहर, भीतर,
इस खाली क्षणभंगुर ढांचे का स्वरूप।

[396] जैसा यह शरीर है, वैसा ही वह शरीर भी कभी था,
और जैसा वह शरीर था, वैसा ही यह शरीर होगा। [4] और जैसा नीचे है, वैसा ही ऊपर है,
और जैसा ऊपर है, वैसा ही नीचे है।

[397] जैसा दिन में होता है, वैसा ही रात में होता है,

और जैसा एक बार था, वैसा ही आगे होगा,
और जैसा होगा, वैसा ही अतीत में था।

[398] संगीत की पंचांगीय विवाहित ध्वनियाँ [5] ऐसा आकर्षण उत्पन्न नहीं कर सकतीं
, जैसा उस व्यक्ति पर आता है जो एकाग्र और शांत हृदय से
सही ढंग से मार्ग (धम्म) देखता है!

ये श्लोक थेरा द्वारा ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा थे।

[1] तुलना करें. सीएक्ससीवीआईआई.

[2] सी.एफ. बहनें, xix.; डी हम्मापाड़ा कॉमी., iii., पी. 118 एफ., श्लोक 150 पर।

[3] इसे 'मैं', 'मेरा' कहने में आत्मसंतुष्ट (टिप्पणी)।

[4] सी.एफ. सुत्त-निपात, श्लोक 202।

[5] देखें पृष्ठ 175, टिप्पणी 1; और श्लोक 1071.

6.4 [213] कुल्लत्थेरा के छंद पर टिप्पणी
कुल्लो शिवथिकं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कुल्ला का है। इसका उद्गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए और जब इस बुद्ध का जन्म हुआ, तब सावत्थी में एक जमींदार के परिवार में पुनर्जन्म लिया; कुल्ला नाम प्राप्त करने के बाद, बुद्धि प्राप्त करने पर, उन्होंने गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) सुना, उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की और भिक्षु बन गए; यद्यपि वे अपने राग (चरित) आचरण के कारण जन्मजात कामुक (तिब्बारागजातिका) व्यक्ति थे। इसी कारण उनके मन में लगातार विकृति (किलेसा) बनी रही। तब गुरु ने उनके मन की स्थिति जानकर उन्हें अप्रिय वस्तुओं से संबंधित मानसिक अभ्यास (कम्मट्ठान) कराया और कहा, “हे कुल्ला! तुम्हें श्मशान में भ्रमण करना चाहिए।” वे श्मशान में गए, वहाँ उन्होंने फूले हुए शव आदि अप्रिय वस्तुएँ देखीं; क्षण भर के लिए उनका ध्यान अप्रिय वस्तुओं की ओर आकर्षित हुआ, परन्तु श्मशान से बाहर आते ही वे कामुक सुखों (कामराग) के आवेश में डूब गए। फिर एक दिन, भगवान बुद्ध ने उनके इस प्रसंग को जानकर उन्हें एक सुंदर युवती (तरुणित्तिरूपन) का दर्शन कराया, जिसकी त्वचा श्मशान क्षेत्र में पहुँचने के समय तक अप्रभावित (अविनात्तच्छविं) रही थी। उसे देखते ही उसके मन में तीव्र कामुकता (सहसा) उत्पन्न हो उठी, मानो वह असाधारण वास्तविकता (वत्थु) वाली सजीव स्त्री हो। तब गुरु ने उसे शव दिखाया, जबकि वह केवल उसे देख ही रहा था (पेक्खंत), वह शव अत्यंत घृणित (बीभच्छं), दुर्गंधयुक्त, घिनौना (जेगुच्छं) और नफ़रत करने योग्य (पटिक्कूलं) था, कीड़े-मकोड़ों से भरा हुआ था (किमिकलाकुलं), जिसकी अशुद्धियाँ (असुचि) घावों (वनमुख) के नौ छिद्रों से रिस रही थीं; उसे देखते हुए (पेक्खंतो), वह विरक्त (विरत्त) मन से स्थिर रहा। तब भगवान ने अपनी प्रकाश किरणें फैलाकर (फरित्वा), उसकी चेतना (सति) को जागृत किया (जानन्तो), और यह श्लोक कहा।

"हे कुल्ला! दुखी को देखो (आतुरं),

गंदा (असुसी) सड़ा हुआ (पुटी) ढेर (समुस्साया)

रिसकर ऊपर आ रहा था और बह रहा था, जो कि

मूर्ख लोगों का आनंद।"

यह सुनकर, थेरा ने भौतिक शरीर (शरीरसभाव) के स्वरूप को भलीभांति (उपधारेन्तो) जान लिया, परन्तु उचित रूप से (सम्मेदेव), अप्रिय वस्तु (असुभ) की अनुभूति (संज्ञा) प्राप्त कर ली, वहाँ अपना पहला ध्यान उत्पन्न किया, उसे अपना आधार (पादक) बनाया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को उत्तरोत्तर विकसित किया, अरहंतत्व प्राप्त किया, अपने उचित कर्म (पटिपत्ति) पर चिंतन (पच्चवेक्खित्वा) किया और आनंदमय उच्चारण (उदान) के रूप में इन श्लोकों का पाठ किया।

393. "कुल्ला कब्रिस्तान गया और उसने देखा

एक महिला जिसे त्याग दिया गया, छोड़ दिया गया

(अपविद्धं) कब्रिस्तान में,

कीड़े-मकोड़ों द्वारा काटे जाने और उनके द्वारा ग्रस्त होने के कारण।

394. "पीड़ित (āturam) ... होने के कारण

मूर्ख लोगों के मनोरंजन का साधन बन जाना।

395. "दर्पण को पकड़ लेने के बाद

सत्य (धम्म) का (आदास), के लिए

ज्ञान की अंतर्दृष्टि की प्राप्ति

(ज्ञानदस्सना), मैंने इस पर विचार किया

वह शरीर जो व्यर्थ (तुच्छ) है

भीतर और बाहर (संतारबाहिरं)।

396. "जिस प्रकार यह (मेरा शरीर) भी

क्या यह (मृत महिला) है; इसके अनुसार

(मृत महिला) इसी प्रकार इस (शरीर) में

मेरा); नीचे दिए गए अनुसार भी है

ऊपर; जैसा ऊपर है वैसा ही है

नीचे।

397. "जैसे दिन होता है, वैसे ही रात होती है;

जैसे रात होती है, वैसे ही दिन होता है।

जैसा पहले था, वैसा ही बाद में भी होगा;

बाद में जो होता है, वही पहले भी होता है।

398. "पांच प्रकार के संगीत के माध्यम से

आप जैसे उपकरण

प्रसन्न न होना (रती), के अनुसार

जैसे जब आपका एकाग्र मन देखता है

स्पष्ट रूप से (विपस्सतो) सत्य (धम्म)

धार्मिक तरीके से (सम्मा)।

वहां, कुल्लो का अर्थ है: थेरा केवल अपने बारे में इस प्रकार बात करता है मानो वह कोई और (भिक्षु) हो।

आतुरं का अर्थ है: उचित रूप से पीड़ित (पटिपीलितं), सदा अनेक प्रकार के दुखों से ग्रस्त। असुचिं का अर्थ है: अपवित्र, घृणित और अप्रिय। पुतिं का अर्थ है: दुर्गंधयुक्त (दुग्गंधं)। पस्सा का अर्थ है: इसके स्वभाव के अनुसार देखो। कुल्ला का अर्थ है: भगवान बुद्ध ने थेरा को सलाह देते समय उनसे ये शब्द कहे। यद्यपि, अपने आनंदमय वाणी के अवसर पर, थेरा ने अपने बारे में ही कहा, लेकिन स्वयं के माध्यम से। समुस्सायं का अर्थ है: भौतिक शरीर। उग्घरंतं का अर्थ है: घावों के मुखों से ऊपर की ओर बहने वाली अशुद्धता। पग्घरंतं का अर्थ है: घावों के मुखों से चारों ओर नीचे की ओर बहने वाली अशुद्धता। बालानं अभिनंदितं का अर्थ है: मूर्ख, अंधे, आम लोगों (पुथुज्जन) द्वारा गलत दृष्टिकोण (लिट्ठी अधिणंदना) और लालसा (तन्हा) के विशेष आनंद के साथ इसका पालन करने के बाद (अभिनिविस्सा)।

धम्मदासं का अर्थ है: धम्म से बना दर्पण। जिस प्रकार सजीव अपने चेहरे या शरीर पर दर्पण की सहायता से अच्छे (गुण) और बुरे (दोष) बिंदुओं को देखते हैं, उसी प्रकार एक गंभीर विद्यार्थी (योजावचर) अपने शरीर (अत्तभाव) में आत्म-दुराचार (संकिलेसा) और पवित्रता (वोदान) के कर्मों (धम्म) को निरंतर (यथावतो) देखता है; उस स्पष्ट आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के ज्ञान को यहाँ धम्मदास (सत्य का दर्पण) कहा गया है; यहाँ, मैंने अपने शरीर (सन्ताने) में उस दर्पण को उत्पन्न किया है ताकि आध्यात्मिक दृष्टि (धम्मचक्खु) की प्राप्ति (अधिगम) हो सके, जिसे अंतर्दृष्टि (ज्ञान) के सही मार्ग (मार्ग) का ज्ञान माना जाता है। पच्चवेक्खिं इमं कायं का अर्थ है: मैंने इस दयनीय शरीर पर चिंतन किया, जो सदा सारहीन (निच्च) है। संतरबाहिरं का अर्थ है: अपने शरीर और अन्य लोगों के शरीर के वर्गीकरण के अंतर्गत, मैंने ज्ञान की दृष्टि से बार-बार अवलोकन किया।

"यथा इदं" से शुरू होने वाला श्लोक इसे दर्शाने के लिए कहा गया है, जैसा कि मैंने अपने चिंतन में पाया है। वहाँ, यथा इदं तथा एतं का अर्थ है: जिस प्रकार मेरा यह अप्रिय पदार्थ (असुभं), जिसे मेरा भौतिक शरीर (शरीर) माना जाता है, जीवनकाल (आयु), ऊष्मा (उस्मा) और चेतना (विज्ञाना) के न मिटने (अनपगमा) के कारण अनेक (नाना) विवरणों (विधं) में माया (भ्रम) के रूप में अपने कर्म (उपमं) प्रकट करता है, उसी प्रकार यह मृत शरीर भी पहले इन घटनाओं (धम्म) के न मिटने के कारण मृत था। जिस प्रकार इस मृत शरीर में वर्तमान में धम्म तत्वों के लुप्त होने के कारण कोई क्षुद्रण नहीं है, उसी प्रकार मेरा यह शरीर भी धम्म तत्वों के लुप्त होने के कारण नष्ट (नस्साते) हो जाएगा। जिस प्रकार मेरा यह शरीर वर्तमान में मृत नहीं था और श्मशान में दफनाया नहीं गया था, और न ही फूला हुआ आदि अवस्था में पहुंचा था, उसी प्रकार यह शरीर भी पहले मृत था, यद्यपि वर्तमान में मृत है। यद्यपि यह मृत शरीर वर्तमान में श्मशान में दफनाया गया है और फूला हुआ आदि अवस्था में पहुंच गया है, उसी प्रकार मेरा यह शरीर भी हो जाएगा। दूसरे शब्दों में, जिस प्रकार मेरा यह शरीर अशुद्ध, दुर्गंधयुक्त, घृणित, नाखुश, क्षणभंगुर, पीड़ादायक (दुक्खा) और अनात्म (अनत्त) है, उसी प्रकार यह मृत शरीर भी है। दूसरे शब्दों में, जिस प्रकार इस मृत शरीर में असुचि (गंदगी) और इसी प्रकार के गुण हैं तथा यह क्षणभंगुर (नश्वर) है, उसी प्रकार मेरा यह शरीर भी है। यथा अधो तथा उद्दं का अर्थ है: जिस प्रकार नाभि के नीचे का यह शरीर असुचि (गंदगी), दुर्गंधयुक्त, घृणित, क्षणभंगुर, पीड़ादायक (दुक्खो) और अनात्म है, उसी प्रकार नाभि से ऊपर का मेरा शरीर भी असुचि (गंदगी) और इसी प्रकार के गुणों से युक्त है। यथा उद्दं तथा अधो का अर्थ है: जिस प्रकार नाभि के ऊपर का मेरा शरीर असुचि (गंदगी) और इसी प्रकार के गुणों से युक्त है, उसी प्रकार नाभि से नीचे का मेरा शरीर भी है।

यथा दिवा तथा रत्तिं का अर्थ है: जिस प्रकार दिन के समय इस शरीर से "अक्खिम्हा अक्खिगूतको (आँखों से निकलने वाला मैल)" आदि अशुद्धियाँ निकलती हैं, उसी प्रकार रात्रि में भी। यथा रत्तिं तथा दिवा का अर्थ है: जिस प्रकार रात्रि में यह शरीर अशुद्धता उत्सर्जित करता है, उसी प्रकार दिन में भी; समय के विभाग (वर्गीकृत विभाजन) के कारण कोई भेद (अञ्ञथाभावो) नहीं है; यही अर्थ है। यथा पुरे तथा

पच्चा का अर्थ है: जिस प्रकार यह शरीर पहले शिशु अवस्था में (तरुण) गंदा, दुर्गंधयुक्त, घिनौना और अप्रिय था, उसी प्रकार वृद्धावस्था में भी (इस शरीर में) गंदा (असुची) होने की प्रवृत्ति रहती है, इत्यादि, ठीक उसी प्रकार पहले शिशु अवस्था में भी। दूसरे शब्दों में, जिस प्रकार अतीत में और जीवित अवस्था में (सविज्ञाण) इस शरीर में गंदा (असुची) होने की प्रवृत्ति रहती है, अनित्य होने की प्रवृत्ति रहती है, इत्यादि, और इसी प्रकार आगे आने वाले समय में, निर्जीव अवस्था में, चेतनाहीन होने पर भी; इस प्रकार, यहाँ अर्थ को समझना चाहिए।

पंचांगिकेन तुरियेन का अर्थ है: इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण शासक (इस्राजन) को पाँच प्रकार के वाद्ययंत्रों (अंग) से सुसज्जित संगीत से इस प्रकार व्याकुल होना: "आततं विततं अततविततं घनं सुसीरं (एक तरफ से बंद ढोल, दोनों तरफ से बंद ढोल, चारों तरफ से बंद ढोल, ठोस और खोखला (सुसीर)); तदिसी का अर्थ है: उसके समान आकार का (तथा), रति का अर्थ है सुख का कोई आनंद नहीं (अस्सादो)। यथा एकग्गचित्तस्स, सम्मा धम्मं विपस्सतो का अर्थ है: धर्म में ऐसा आनंद (रति) जैसा कि एक गंभीर विद्यार्थी (योगावचर) को आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि से स्कंधों (खंड) के उदय और अपघटन (उदयब्बय) का अनुभव होता है। ज्ञान की प्रक्रिया (विथी) में प्रवेश (पटिपन्न) करने से, इंद्रियों के एकत्व (एकरस) से, शांत भाव (समथा) और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को एक साथ जोड़कर (युगनद्धं); इंद्रिय सुख (कामरति) में आनंद, धर्म में आनंद के एक अंश के भी निकट नहीं आता। वास्तव में, यह भगवान बुद्ध द्वारा कहा गया है।

वह कब से और कहाँ से ध्यान करता है

का उदय और लुप्त होना

वह संघटकों (खंडों) से उत्साह प्राप्त करता है

और उल्लास तथा वह अमरता (अमता)

उन लोगों में से जिन्हें स्पष्ट समझ है

(विजानतं).

ये वही श्लोक थे जो बाद में थेरा के अरहंतत्व (अञ्ञा) को उजागर करने वाले श्लोक बन गए।

थेरा कुल्ला के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (214): मलुनक्य का पुत्र

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (214) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
214. मालुंक्य का पुत्र [1]
बुद्ध युग में सावत्थी में कोसल के राजा के मूल्यांकक के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, [2] उनकी माता का नाम मालुंक्या था, और वे उन्हीं के नाम से जाने जाने लगे। जब वे वयस्क हुए तो उनका स्वाभाविक धार्मिक स्वभाव प्रबल हुआ, और उन्होंने एक घुमंतू तपस्वी के रूप में संसार त्याग दिया। फिर, भगवान (बुद्ध) का उपदेश सुनकर, उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और उचित समय पर छह गुना अभिज्ञा (आध्यात्मिक शक्तियों का उच्च ज्ञान) प्राप्त किया। उनके परिवार के प्रति करुणा [213] के कारण उनके घर जाकर , उनके परिवार ने उनका बड़े ही सत्कार के साथ स्वागत किया, उन्हें वापस बुलाने का प्रयास करते हुए कहा: 'आपके इस धन से आप परिवार का भरण-पोषण कर सकते हैं और अच्छे कार्य कर सकते हैं।'

लेकिन थेरा ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा:

[399] मनुजस्सा पमत्तकारिनो तन्हा वदहति मालुवा विया,॥
सो पालवति हुरा हुरां फलमिच्छै वा वनस्मिं वानरो॥ ॥

[400] यं एसा सहते जम्मी तान्हा लोके विसात्तिका,॥
सोका तस्स पवधति अभिवत्थं वा बिराणौ ॥ ॥

[401] यो सीताṃ सहते जम्मीṃ ताṇहाṃ लोके दुरक्कायाṃ,॥
सोका तम्हा पापतन्ति उदबिंदुव पोक्खरा॥ ॥

[402] ताṃ [44] वो वदामि भद्दौ वो यावंतेत्था समागता,॥
तन्हाय मूलं खानथा उसीरत्थेव बिराणां,॥
मा वो नादां वा सोतो वा मारो भाणजी पुनप्पुना.॥ ॥

[403] करोथा बुद्धवाकाकां खाणो वो मा उपाकागा,॥
खनातिता हि सोकन्ति निरायमहि संप्पिता॥ ॥

[404] पमादो रजो सब्बदा पमादानुपतितो रजो,॥
अप्पमादेन विजयाय अब्बे सल्लमत्तनो' ति.॥ ॥

[399] क्या [3] कोई ऐसा मनुष्य है जो लापरवाह, बेपरवाह रहता है,
उसमें लालसा लता की तरह बढ़ती है।
वह जन्म-जन्मांतर तक लालसा में लगा रहता है, [4] जैसे जंगल के वृक्ष में बंदर फल की तलाश में।

[400] जिसे उसने पराजित किया, - शर्मनाक जेड,
लालसा, समस्त मानव जाति का विषैला, - [5] उसके लिए जंगल की घास के समान कष्ट उत्पन्न करो।

[401] परन्तु जिसने उसे नीचा दिखाया, - वह लज्जास्पद जेड,
जिसे मात देना कठिन है, - उससे दुःख ऐसे दूर हो जाते हैं
जैसे कमल से ओस की बूँद फिसलती है।

[402] यह संदेश तुम सभी को, जो यहाँ उपस्थित हो [6] सब मिलकर आओ: तुम्हें सारी सफलता मिले!
लालसा की जड़ उखाड़ फेंको, जैसे तुम
मीठी उशीरा जड़ की खोज में लगे थे।
ऐसा न हो कि तुम, हे सरकंडे, और मारा (मृत्यु और पुनर्जन्म की धारा), तुम्हें बार-बार तोड़ डाले!

[403] बुद्ध-वचन को साकार करने के लिए;
युगों के इस क्षण को यूँ ही न जाने दो!
वह क्षण खो जाने पर मनुष्य दुःख में विलाप करते हैं। [7]

[404] [214] जैसे धूल [मिश्रित और दूषित], वैसे ही लापरवाही है;
और धूल-दूषण लापरवाही से आता है।
गंभीरता और उस ज्ञान से जो तुम सुनते हो,
प्रत्येक व्यक्ति अपने हृदय से [पाप का] भाला निकाल ले। [8]

[1] इस थेरा की दूसरी कविता को CCLII के रूप में दिया गया है। थेरा सांग्यी, iv. 72 (बाद वाली कविता के समान एक सूत्र) में और संभवतः अंगी, ii. 248 और मज्झ, i., सूत्र 63, 64 में मिलती है।

[2] अघ्यापनिका। सी एफ XX: अघ्यापानी; [लेकिन ?] जाट., मैं, नं. 5.

[3] धम्मपद, पृ. 334-337.

[4] टीका में, हुराहुरांग का अर्थ 'लालसा' और 'जन्म-जन्म से' दोनों प्रतीत होता है, बाद वाले में पूर्व निहित है। जेपीटीएस, 1909, पृष्ठ 168 देखें।

[5] विसत्ती-का को विसंग से जोड़ना व्युत्पत्ति की दृष्टि से सही नहीं हो सकता। विसत्ती का अर्थ अत्यंत शक्तिशाली या शक्ति छीनने वाला हो सकता है, लेकिन एक क्रिया के रूप में हमें लगभग वेसत्तिका की अपेक्षा करनी चाहिए। लेकिन बुद्धघोष (अत्थसालिनी, पृ. 264) और धम्मपाल दोनों इस शब्द को विष से जोड़ते हैं। हालाँकि, धम्मपाल इसमें आसत्तता जोड़ते हैं। धम्मपद टीका (फॉसबॉल), पृ. 409 देखें।

[6] तुलना करें. सीएलएक्सएक्सआईआई. डीएचपी. 337.

[7] देखें पृ. 162, नोट 3; एस.-निपाता, श्लोक 333 = धम्मपद, श्लोक 815.

[8] बहनें, श्लोक 131. टिप्पणी, हदायनिसिटाŋ।

6.5 [214] मालुक्यपुत्तथेरा के श्लोक पर टिप्पणी

मनुजस्सा से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मलुक्यपुत्त का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, इस बुद्ध के जन्म के समय, वे कोसल के राजा के मुख्य सिंहासनधारी (अग्गसानिका) के पुत्र के रूप में सावत्थी में पुनर्जन्म लिए। उनकी माता का नाम मलुक्य था; उन्हीं के कारण वे मलुक्यपुत्त कहलाए। वयस्क होने पर, उन्होंने पलायन की प्रवृत्ति (अज्जासय) के कारण गृहस्थ जीवन त्याग दिया, संसार का त्याग कर एकांतवासी बन गए और भटकते हुए गुरु की उपस्थिति में सत्य (धम्म) की शिक्षा सुनी, उस विधान में उचित श्रद्धा (सासने) प्राप्त की, भिक्षु बन गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म किया और छह प्रकार के उच्च ज्ञान (अभिज्ञा) से युक्त अरहंत बन गए, लेकिन कुछ ही समय बाद, अपने सगे-संबंधियों के प्रति करुणावश, वे अपने कुलम में चले गए। उनके रिश्तेदारों ने उन्हें उत्तम भोजन से सजाया, जिसमें कठोर और नरम दोनों प्रकार के व्यंजन शामिल थे। धन से उन्हें लुभाने की इच्छा से उन्होंने उनके सामने धन का एक विशाल ढेर लगा दिया और उनसे निवेदन किया: "यह धन आपका है; आप अपने वस्त्र उतार दें और इस धन से अपनी पत्नी और बच्चों का भरण-पोषण करने के लिए पुण्य कर्म करें।" थेरा आकाश में खड़े होकर इन छह श्लोकों से सत्य का उपदेश देते हुए उनके इरादे को विफल कर दिया।

399. "मनुष्य की लालसा (तन्हा)

जो व्यक्ति लापरवाह है (पामत्ता),

आचरण (कारिनो) में वृद्धि होती है जैसे

मालुवा लता; वह इधर-उधर दौड़ती है

(प्लावती) इस अस्तित्व से

वह अस्तित्व फल लाने जैसा है

जंगल में बंदर।

400. "जिस किसी को भी यह अर्थ (जम्मी) आसक्त करता है

(visattikā) लालसा (taṇhā) पर विजय प्राप्त करता है

दुनिया में, उसकी चिंताएँ बढ़ जाती हैं

संपन्न की तरह (अभिविष्ठः)

बीराणा घास।

401. "जो भी इस पर काबू पा ले, उसका क्या अर्थ होगा?"

ऐसी लालसा जिस पर काबू पाना मुश्किल है

त्यागा हुआ (दुरच्चयं), चिंताएँ

उससे गिरती हुई बूँदें, मानो

कमल के पत्ते से निकला पानी।

402. "हालांकि, इस साधन पर काबू पाना चाहिए

ऐसी लालसा जिस पर काबू पाना मुश्किल है

त्यागा हुआ (दुरच्चयं), चिंताएँ

उससे गिरती हुई बूँदें, मानो

कमल के पत्ते से निकला पानी।

402. "उस परिस्थिति में (तम्),

मैं आपसे बात कर रहा हूँ। आप स्वस्थ रहें।

(भद्दं), आप सभी जो एकत्रित हैं

यहां एक साथ: "जड़ खोदकर निकालो"

लालसा का, उसके समान जो है

उस प्रकार की घास की आवश्यकता है जिसका नाम है

उसिरा, जिसे बीराना के नाम से भी जाना जाता है;

मारा तुम्हें टुकड़े-टुकड़े न कर दे

(भांजी) बार-बार समान

नदी के बहते पानी के लिए

नरकट को नष्ट करना (जो उस पर उगता है)

नदी के किनारे)।"

403. "बुद्ध के वचनों पर अमल करो; तुम

किसी भी क्षण को व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए;

वास्तव में, वे लोग जो (अच्छे) क्षणों को जाने देते हैं

गुजर जाना, शोक में पड़ जाना, जल जाना

नरक में।

404. "लापरवाही का अर्थ है कमी

जागरूकता; यह कामवासना के कारण धूल भरी है;

अनुपती के प्रभाव के कारण

लापरवाही, यह कलंकित (रजो) है; द्वारा

परिश्रम और ज्ञान के साधन (के)

सबसे प्रमुख मार्ग) व्यक्ति को अपना हटा देना चाहिए

अपना कांटा (वासना आदि का)।

वहाँ, मनुजस का अर्थ है: किसी सजीव प्राणी का। पमत्तचारिनो का अर्थ है: लापरवाहीपूर्ण आचरण वाले व्यक्ति का, जिसकी लापरवाही सती (सती) के त्याग (वोसग्ग) से चिह्नित होती है; न तो ध्यान, न ही आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना), न ही मार्ग (मग्ग), न ही फल (फल) में वृद्धि होती है। जिस प्रकार मालुव लता पेड़ को घेरकर उसे नष्ट कर देती है, उसी प्रकार तृष्णा (इच्छा) छह इंद्रियों पर निर्भर होकर बार-बार दृश्य रूपों (रूप) में उत्पन्न होती है; जिस प्रकार मालुव लता आकार में बढ़कर उस पेड़ को गिरा देती है जो उसका सहारा था, उसे डुबोने के बाद, उसी प्रकार तृष्णा (तन्हा) के प्रभाव में व्यक्ति नरक में गिर जाता है। अतः प्लवति का अर्थ है: वह व्यक्ति, तृष्णा (तन्हा) के प्रभाव में आकर, समय-समय पर (अपरापरं) वृहत और गौण, सभी लोकों में विचरण करता रहता है। किस प्रकार? फलमिच्छं व वनस्मि वाणरो का अर्थ है: जिस प्रकार वृक्षों के फल खाने की इच्छा से कोई बंदर जंगल में दौड़ते हुए किसी शाखा को पकड़ लेता है, उसे छोड़कर दूसरी शाखा पकड़ लेता है, और उसे भी छोड़ने के बाद, वह उस अवस्था तक नहीं पहुँचता (आपज्जति) जब यह कहा जाए कि "शाखा न मिलने के कारण वह बैठ गया है"; ठीक उसी प्रकार, तृष्णा (तन्हा) के प्रभाव में आकर, इधर-उधर भटकने वाला व्यक्ति उस अवस्था तक नहीं पहुँचता जब यह कहा जाए कि "इंद्रियों को भोगने का कोई विषय (आरम्मणं) प्राप्त न होने के कारण उसकी तृष्णा (तन्हा) समाप्त हो गई है"।

यं का अर्थ है: जो भी व्यक्ति; जम्मी का अर्थ है: यह लालसा नीच (या घटिया) है क्योंकि यह निम्न (लामक) है। विसत्तिका का अर्थ है: छह द्वारों वाली लालसा जो विष धारण करने, विष का मूल होने, विष के फल की संरचना, विष ग्रहण करने (परिभोग), दृश्य वस्तुओं (रूप) से आसक्त होने आदि के कारण विषैली और आसक्तिपूर्ण मानी जाती है; सहते का अर्थ है: यह उस व्यक्ति पर हावी हो जाती है। बीरणम् का अर्थ है: जैसे जंगल में बार-बार वर्षा होने पर अच्छी तरह से भीगी हुई (अभिवड्ढम्) बीरणम् (बीरण प्रजाति की घास) खूब बढ़ती है, उसी प्रकार बार-बार जन्म-जन्म के चक्रों से उत्पन्न चिंताएँ विशेष रूप से बढ़ती हैं और अत्यधिक बढ़ जाती हैं; यही इसका अर्थ है।

यो च'एतम ... दुराच्चयम का अर्थ है: दूसरी ओर, वह व्यक्ति जो जन्म-जन्म के चक्रों में निहित चिंताओं (वट्टमूलका) को दूर करने में कठिनाई के कारण होने वाली लालसा (दुराच्चयं) पर विजय प्राप्त कर लेता है, ठीक उसी प्रकार जैसे कमल के बिस्तर पर कमल के पत्ते पर गिरने वाली पानी की बूंद स्थिर नहीं रहती; इस प्रकार उसकी चिंताएँ स्थिर नहीं रहतीं; यही अर्थ है।

Taṃ vo vadāmi का अर्थ है: इसीलिए मैं तुमसे कहता हूँ। Bhaddaṃ vo का अर्थ है: तुम्हें मेरा आशीर्वाद मिले! तृप्ति (taṇhā) के आदेशों (anuvatta) के अधीन कार्य करने वाले व्यक्ति के समान विभवम् और हानि (anatthaṃ) की स्थिति में न पहुँचो। Yavant'ettha samāgatā का अर्थ है, इस स्थान पर जो भी मात्रा एकत्रित हुई है, वह संख्या। यदि पूछा जाए; उन्होंने क्या कहा? Taṇhāya mūlaṃ khaṇatha का अर्थ है: अरहंतत्व के मार्ग के ज्ञान के कुदाल (kudāla) से अज्ञान (avijjā) जैसी विकृतियों के जंगल (gahana) को खोदकर काट डालो, जो इस छह द्वार वाली तृप्ति (chadvārika taṇhā) की नींव है। किसके समान? Usīrattho va bīraṇaṃ का अर्थ है, जिस प्रकार एक व्यक्ति जिसे उसिर की जड़ की आवश्यकता होती है, वह उसिर नामक घास (बीरण) को एक बड़े फावड़े से खोदता है, उसी प्रकार आपको भी उसकी जड़ खोदनी चाहिए; यही इसका अर्थ है। Mā vo naḷaṃ va soto va, māro bhañji punappunaṃ का अर्थ है: दुष्टता के मार (किलेसा), मृत्यु के मार (मच्चु), दिव्य युवक, तुम्हें बार-बार उसी प्रकार कुचल (भङ्जी) न दें, जैसे नदी की तेज धारा किनारे पर उगे सरकंडों को बहा ले जाती है; यही इसका अर्थ है।

करोथा सुद्धवचनं का अर्थ है: अतः, भगवान बुद्ध के वचन के अनुसार कार्य करो, जैसा कि “झायथा भिक्खवे मा पमादत्था (हे भिक्षुओं! ध्यान करो, लापरवाही मत करो)” से शुरू होता है, अपने जीवन को उचित कर्म (पटिपत्ति) के साथ व्यवस्थित करो (संपादेथा) जैसा कि निर्देश दिया गया है। खणो वो मा उपच्चगा का अर्थ है: वास्तव में, जो कोई भी बुद्ध के वचन के अनुसार कार्य नहीं करता है, ऐसे सभी क्षणिक अवसर भी, जैसे बुद्ध के उदय (बुद्धुप्पादक्खण) का यह क्षणिक अवसर, उपयुक्त निवास में उत्पन्न होने का क्षणिक अवसर, उचित दृष्टिकोण (सम्मादिट्ठी) प्राप्त करने का क्षणिक अवसर, छह इंद्रियों (आयतन) की कमी (वेकल्लक) की अनुपस्थिति (लक्खणो) से चिह्नित होने का क्षणिक अवसर; उस क्षणिक अवसर को मत चूकना। खणातीता का अर्थ है: जो लोग उस क्षणिक अवसर को चूक जाते हैं, या वे व्यक्ति जिनके लिए वह क्षणिक अवसर बीत गया; निरयंहि सम्पिता का अर्थ है: वे नरक में उत्पन्न होकर लंबे समय तक दुखी रहते हैं।

पमादो राजो का अर्थ है, दृश्य रूप आदि इंद्रिय-विषयों (आरम्मण) में जागरूकता (सती) की अनुपस्थिति (वोसग्ग) से चिह्नित (लक्खनो); आत्म-वंचितता की स्थिति के कारण कामवासना (रागराज) के दाग से मिश्रित (मिस्सा) होने के कारण दाग (रागो)। पमादानुपतितो राजो का अर्थ है: वास्तव में, जो भी दाग है, वह कामवासना आदि से ग्रस्त (रागदिका) के रूप में जाना जाता है; जो कुछ भी लापरवाही के कारण उत्पन्न होता है (उप्पज्जति)। अप्पमादेन का अर्थ है: लापरवाही न करने के लिए उचित पालन (पटिपत्ति) द्वारा। विजय का अर्थ है: प्रमुख मार्ग (मग्ग) के ज्ञान के माध्यम से। अब्बाहे सल्लमत्तनो का अर्थ है: व्यक्ति को अपने हृदय में सुप्त अवस्था में पड़े कामवासना आदि के काँटे को उखाड़ फेंकना चाहिए (उद्धरय्या) और हटाना चाहिए (समूहनय्या)।

थेरा मालुक्यपुत्त के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(215):सप्पादासा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (215) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
215. सप्पदासा
इस बुद्ध युग में कपिलवस्तु में राजा [1] सुद्धोदन के पुरोहित के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम सप्पदास रखा गया। भगवान (बुद्ध) के अपने लोगों के आगमन के अवसर पर उन्होंने आस्था प्राप्त की, [2] और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। भ्रष्ट मानसिक आदतों (किलेसा) से ग्रस्त होने के कारण, उन्हें कभी एकाग्रता और एकाग्रता प्राप्त नहीं हुई। अंततः इससे वे इतने व्याकुल हो गए कि आत्महत्या करने ही वाले थे, तभी अचानक उनकी आंतरिक दृष्टि का विस्तार हुआ और उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार करते हुए उन्होंने कहा:

[405] पण्विसति वस्सानि यतो पब्बजितो अहं,॥
अच्चरासंघातमत्तमपि सेतोसन्तिमनज्झाग:॥ ॥

[406] अलद्धा सित्तस्सेकाग्गाṃ कामरागेना एडिटो,॥
बाहा पग्गयः कन्दन्तो विहार उपनिक्खमिः॥ ॥

[407] सत्थौ वा अहरिसामि को अत्थो जीवितेन मे,॥
कत्थौ ही सिक्खं पक्कक्खां कलां कुब्बेथा मदिसो॥ ॥

[408] तदहाउ खुरमादाय मनकाकमि उपविसिṃ,॥
परिणितो खुरो असि धमनिन्न चेट्टुमत्तनो॥ ॥

[409] ततो मे मनसिकारो योनिसो उदपज्जथा,॥
आदिनावो पतुराहु निब्बिदा समतिथथा॥ ॥

[410] ततो चित्ताṃ विमुची मे पासा धम्मसुधम्मताṃ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[405]
संसार छोड़कर (भिक्षुत्व के लिए) और भिक्षु संघ में रहने के बाद पूरे पच्चीस वर्ष बीत चुके हैं ,
और फिर भी एक पल के लिए भी
मुझे मन की शांति [और विवेक [3]] नहीं मिली।

[406] मैंने कभी भी दृढ़ निश्चय और एकल दृष्टि नहीं पाई,
इंद्रियजन्य इच्छाओं से व्याकुल और परेशान;
आँसुओं में, हाथ मलते हुए, मैंने लॉज छोड़ दिया। [4]

[407] नहीं, अब मैं चाकू उठा लूँगा, वरना -
मेरे लिए जीवन का क्या अर्थ है? और मुझ जैसे व्यक्ति के लिए,
जिसने अपने जीवन भर शिक्षा को नकार दिया है,
इससे बेहतर क्या हो सकता है कि मैं इसे समाप्त कर दूँ और मर जाऊँ?

[408] तब मैं आया और एक तरकश लेकर
अपने पलंग पर बैठ गया। और अब ब्लेड को
मेरी गर्दन पर धमनी को काटने के लिए चलाया गया। ...

[409] [215] तभी देखो! मेरे मन में गहरा विचार उत्पन्न हुआ:
तथ्य और कारण पर ध्यान।
सारी पीड़ा स्पष्ट थी;
मन में अरुचि और उदासीनता थी।

[410] और इस प्रकार मेरा हृदय मुक्त हो गया!
हे देखो, धर्म (धम्म) के उचित भिक्षु का क्रम!
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध के सभी कार्य पूरे हो चुके हैं। [5]

[1] कमेंटरी द्वारा महाराजा के रूप में प्रतिष्ठित।

[2] देखें CXXXIX.

[3] सीतासो समदानं। कॉमी.

[4] कॉमि.: अनुपनिक्खमिउ, बहि निक्खान्तो।

[5] = श्लोक 269 f. तुलना करें CXV., CCV.

6.6 [215] सप्पदासत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
पन्नवीसति से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सप्पदास का है। इसका उद्गम क्या है? उन्होंने पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, जिससे उन्हें इस और उस जन्म में बार-बार पुनर्जन्म (वट्ट) के चक्र से मुक्ति मिली। इसी कारण जब बुद्ध प्रकट हुए, तब वे कपिलवस्तु में महान राजा सुद्धोदन के निजी पुरोहित के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए; उनका नाम सप्पदास था। वयस्क होने पर, उन्होंने गुरु के रिश्तेदारों के मिलन समारोह में उचित रूप से धार्मिक आस्था प्राप्त की, भिक्षु बन गए, और दुराचार (किलेसा) से ग्रस्त होने के कारण मन की एकाग्रता (सेतो) प्राप्त न कर पाने के कारण ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत किया, पश्चाताप किया, और बाद में स्वयं को छुरा घोंपकर (सत्तम आहारन्तो) अपनी चेतना को बुद्धिमानी से विकसित किया (योनिसो), अरहंतत्व प्राप्त किया और अपने अरहंतत्व को प्रकट करते हुए ये श्लोक कहे:—

405. "अब पच्चीस साल बीत चुके हैं

जब से मैं भिक्षु बना हूँ; मैंने नहीं

मानसिक शांति प्राप्त करना (अज्जगं)

(cetosantiṃ) यहाँ तक कि

उंगलियां चटकाना (अच्चरासंघता)।

406. "एकल लक्ष्यता प्राप्त न कर पाने के कारण

ध्यान रहे, मैं उत्पीड़ित (अत्तितो) था

कामुक सुख (काम) के लिए वासना (राग);

मैं हाथ ऊपर उठाकर रोते हुए बाहर आ गई।

मेरे मठ का।

407. "मैं खुद को चाकू मारना ज़्यादा पसंद करूँगा (सत्थं वा)

āharissāmi); इसका क्या उपयोग है (attho)

मेरे जीवित होने का। वास्तव में, यह कैसे संभव है?

मेरे जैसे भिक्षु की मृत्यु हो जाती है (कालम)

कुब्बेथा) अपने नैतिक सिद्धांतों का त्याग करना

भिक्षुत्व का?

408. "फिर मैंने एक रेज़र उठाया और उसे

मेरे सोफे पर; रेज़र वहीं था

मैं अपनी नसें काटने के लिए तैयार होकर आया था।

409. "इसके बाद मेरे बुद्धिमान उठे

(योनिसो) सचेतनता; हानि

स्पष्ट हो गया और घृणा (निब्बिडा)

अच्छी तरह से उभरा (समतिट्ठथा)।

410. "इसके बाद, मेरा मन बन गया

मुक्त। अच्छे स्वभाव को देखो।

(सुधम्मता) सत्य (धम्म) की;

त्रिविध ज्ञान (विज्जा) था

विधिवत रूप से प्राप्त किया गया; बुद्ध का

निर्देश का पालन किया जा चुका था।

वहाँ, paṇṇavisativassāni, yato pabbajito ahaṃ का अर्थ है: ये पच्चीस वर्ष हैं जो मेरे भिक्षु बनने के समय से शुरू होते हैं। Accharāsaṅghātamattampi, cetosantīmanajjhagaṃ का अर्थ है: इतने समय तक ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करते रहने के बावजूद मुझे उंगलियों के चटकने में लगने वाले समय के बराबर भी एकाग्रता (समाधान) और मानसिक शांति प्राप्त नहीं हुई।

यद्यपि इस प्रकार मन की एकाग्रता प्राप्त न कर पाने के कारण उन्होंने "कामरागेनट्टितो" से प्रारंभ होने वाला श्लोक कहा, जिसमें उन्होंने कारण (कारणम्) बताया। अत्तितो का अर्थ है: उत्पीड़ित और व्याकुल होना; यही इसका अर्थ है। बाहा पग्गयह कंदन्तो का अर्थ है: अपनी भुजाएँ ऊपर उठाकर मैं मुख ऊपर करके रोता रहा, इस प्रकार: "यहाँ यह अत्यंत अनुचित घटना घटित होती है; जब मैं पुनर्जन्मों के चक्रों से मुक्ति दिलाने वाले धर्म (सासने) में भिक्षु बनने के बाद भी, पाप (किलेसा) के दलदल (प|का) से स्वयं को बाहर नहीं निकाल पाता।" विहारा उपनिक्खमि का अर्थ है: मैं अपने आवासीय मठ से बाहर चला गया।

जिस महत्व के कारण वे अपने मठ से बाहर निकले, उसे दर्शाने के लिए उन्होंने "सत्थं वा आहारीस्सामि" से शुरू होने वाला श्लोक कहा। यहाँ सत्थं वा आहारीस्सामि का अर्थ है: वा शब्द का प्रयोग अनिर्णय (विकप्पन) के अर्थ में किया गया है। उस शब्द के माध्यम से वह मृत्यु के तौर-तरीकों (पकारा) को एक साथ लाता है (संगण्हाति), जैसे कि: "रुक्खा वा पापतिस्सामि, उब्बन्धित्वा वा मरिस्सामि (या तो मैं पेड़ की चोटी से गिर जाऊँगा, या फांसी लगाकर मर जाऊँगा (उब्बन्धति)।" सिक्खं का अर्थ है उच्च नैतिक उपदेशों (अधिशील) का पालन। पच्चक्खं का अर्थ है: त्याग करना (पच्चाचिक्खंतो), सब कुछ छोड़ देना (परिच्चाजंतो)। एक ऐसा पाठ (पाली) भी है "पच्चाक्खा", त्यागने के बाद (पच्चाक्खाय); यही अर्थ है। कालं का अर्थ है: मृत्यु; वास्तव में, मुझ जैसा भिक्षु अपने भिक्षुत्व के नैतिक मूल्यों को छोड़े बिना अपनी मृत्यु कैसे ला सकता है? (सिक्खापच्चक्खानेन); यही अर्थ है। वास्तव में, नैतिक नियमों (सिक्खा) का त्याग करना श्रेष्ठ (आर्य) के अनुशासन (विनय) में मृत्यु के समान है। तदनुसार भगवान बुद्ध ने कहा: "मरणः अतं भिक्खवे यो सिक्खं पच्चक्खाय हीनयावत्तति (हे भिक्षुओं! वास्तव में, यह मृत्यु है जब कोई भिक्षु भिक्षुत्व के नैतिक नियमों का त्याग करने के बाद निम्न जीवन (हीनया आवत्तति) में लौटता है। "सिक्खं पच्चक्खा" के पाठ में, मेरे जैसा भिक्षु भिक्षुत्व के नैतिक नियमों का त्याग करने के बाद कैसे मरेगा? मैं तो भिक्षुत्व के नैतिक नियमों से संपन्न होने के बाद ही मरूँगा; इसलिए, शायद मैं छुरा घोंप दूँ। मैं स्वयं; मेरे जीवित रहने का क्या लाभ है; यही व्याख्या है।

तदाऽहं का अर्थ है: जब मैं अपने जीवन से घृणा (निब्बिंदन्तो) कर रहा था, क्योंकि मैं दुराचार (किलेसा) से ग्रस्त (अभिभव) होने के कारण भिक्षु बनने में असमर्थ था, तब। खुरं का अर्थ है: तेज धार वाला तरकश या तरकश जैसा हथियार। मंचकम्हि उपाविसिं का अर्थ है: अन्य भिक्षुओं के अवरोध (निवारण) के भय से अपने भीतरी कक्ष (ओवरक) में प्रवेश करने के बाद अपने पलंग पर बैठ गया। परिनीतो का अर्थ है: पास लाया गया (उपनीतो); मेरे गले (गल) पर रखा गया; इस प्रकार इसका अर्थ है। धामनिं का अर्थ है: वे कहते हैं "यंथे धमनिं, कंठधामनिं गलावलया (गले की नस, गले की नस, गले का गोल (वलया)। चेट्टु का अर्थ है: काटना।

Tato me manasikāro, yoniso upapajjatha का अर्थ है: मैंने अपनी गर्दन की नस काटने के लिए उस्तरा अपनी गर्दन पर रखा और कहा, "जब मैं मरूँगा:" इसके बाद, बाद में, मेरे नैतिक उपदेशों को सर्वांगीण शुद्ध, बिना टूटे (अक्खण्ड) या फटे (अच्छिद्धण) देखकर मेरे मन में उत्साह (पीति) उत्पन्न हुआ; "सचमुच! क्या मेरा नैतिक उपदेश (सीला) स्वस्थ है? मेरे आनंदमय मन का शरीर शांत हो गया; मेरे मन की एकाग्रता (समाहित) की स्थिति के कारण आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) के प्रभाव (वास) से बुद्धिमान (योनिसो) जागरूकता उत्पन्न हुई, जबकि मैं अपने शांत शीतल शरीर (पसद्धकाय) के निराधार (निरामिस) आनंद का अनुभव करता रहा। दूसरे शब्दों में, ततो का अर्थ है जब मेरे गले पर उस्तरा (उपनय) रखा गया और जब घाव (वण) में सनसनी (वेदनं) उत्पन्न हुई; अब, सही मार्ग (मग्ग) पर चिंतन (पच्चवेक्खण) करने के लिए और "आदिनवो पातुरहु (हानि स्पष्ट हो गई)" इत्यादि। इसका अर्थ पहले ही कहा जा चुका है (हेट्ठा)।"

थेरा सप्पदास के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(216):कटियाना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (216) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
216. कातियाना
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में कोसिया परिवार के एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में हुआ, [1] लेकिन उनकी माता के परिवार के नाम पर उनका नाम कातियाना रखा गया। अपने मित्र सामञ्चकानी [2] को थेरा बनते देख, उन्होंने भी भिक्षु दीक्षा ले ली। अपनी पढ़ाई के दौरान उन्होंने रात में सोने के लिए खुद को अनुशासित करने का निश्चय किया। छत पर टहलते हुए उन्हें नींद आ गई और वे वहीं जमीन पर गिर पड़े। भगवान (बुद्ध) ने यह सब देखकर स्वयं जाकर उनके ऊपर खड़े होकर उन्हें 'कातियाना!' कहकर पुकारा। इससे वे उठ खड़े हुए, प्रणाम किया और बहुत व्याकुल होकर खड़े हो गए। तब भगवान (बुद्ध) ने उन्हें इस प्रकार धम्म का मार्ग सिखाया:

[411] उत्थेहि निसीदि कटियान॥
मा निद्दबहुलो अहु जगरासु,॥
मा तां अलसां पमत्तबंधु॥
कुत्तेनेव जिनातुमक्कुराजा॥ ॥

[412] सयाथापि महासमुद्दवेगो॥
एवं जातिजरातिवत्तते तं,॥
सो करोहि सुदीपमत्तन त्वऽ॥
न हि तानं तव विज्जतेव अण्णां॥ ॥

[413] सत्था हि विजेसि मग्गेमेटाm॥
सोंगा जातिजाराभया अतितां,॥
पुब्बापरात्तमप्पमत्तो॥
अनुयुञ्जस्सु दःहं करोहि योगो॥ ॥

[414] पुरिमानि पमुन्चा बंधनानि॥
संघति खुरामुंडभिक्खभोजी,॥
मा खिद्दारतिन्च निद्दं॥
अनुयुञ्जित्थ झाय कात्याना।॥॥

[415] झायाहि जिनाहि कटियाना॥
योगक्खेमापथेसु कोविदोसि,॥
पप्पुय्य अनुत्तराm विशुद्धm॥
परिनिब्बाहिसि वारिणाव जोति.।॥

[416] पज्जोतिकारो परित्तरासो॥
वतेन विनमयते लताव,॥
एवमपि तुवं अनादियाणो॥
मरौ इंदासगोट्टा निद्दुनाही,॥
तो वेदयितसु वितरससो॥
कालं कंख इधेव सतीभूतो' ति.॥॥

[411] उठो, जाग जाओ, कातियान, पालथी मारकर बैठ जाओ। [3] उन्मत्त मत हो। देखते रहो और चौकस रहो, हे लापरवाह वंश के पुत्र, हे आत्मभोगी, साधारण चाल से
मनुष्यों के राजा को तुम पर विजय प्राप्त न करने दो ।

[412] जैसे विशाल सागर पर लहरें उमड़ती हैं,
वैसे ही जन्म और उम्र का चक्र तुम्हें डुबो सकता है।
ध्यान रखो कि तुम अपने लिए एक सुरक्षित द्वीप बना लो, [4] क्योंकि और कुछ भी तुम्हें शरण नहीं दे सकता।

[413] देखो! तुम्हारे लिए भगवान (बुद्ध) ने यह सही मार्ग तैयार किया है, जो
सभी बंधनों और जन्म-मृत्यु के सभी भय से परे है।
रात के समय और उसके बाद भी लगन से काम करो;
अपनी पूरी शक्ति से प्रयास करो और लगन से अध्ययन करो।

[414] सभी पुराने बंधनों को त्याग दो; भिक्षु के समान जीवन व्यतीत करो,
पीले वस्त्र धारण करो, सिर को तंदूर से मुंडवाओ और भिक्षा ग्रहण करो।
मनोरंजनों से प्रसन्न मत हो, न ही लंबी नींद से। [5] व्यस्त रहो। चिंतन करो, हे कातियान!

[415]
हे कातियान, एकाग्रता से विजय प्राप्त करो! निश्चय ही मोक्ष की ओर ले जाने वाले मार्ग में निपुण बनो ।
परम शुद्धि प्राप्त कर लो,
तो जल में ज्वाला की तरह तुम भी मोक्ष के मार्ग पर अग्रगामी हो जाओगे।

[416] क्षीण किरण का प्रकाश हवा से फटी लता के समान है।
हे इंद्र के कुलवासी, तुम भी, [6] कुछ भी न पकड़ते हुए,
मारा (मृत्युदेव/राक्षस) को झटक दो। इंद्रियों के प्रति वासना से मुक्त होकर,
पवित्र शांतिपूर्ण जीवन में भी अपने समय की प्रतीक्षा करो।

इस प्रकार, भगवान (बुद्ध) के उपदेशों से प्रेरित होकर, जो पुनर्जन्म के किसी भी आधार से रहित निर्वाण प्राप्त करने का मार्ग बताते हैं, थेरा ने अंतर्दृष्टि विकसित की और अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद उन्होंने भगवान (बुद्ध) द्वारा सिखाए गए श्लोकों का उच्चारण करते हुए अन्ञा (सर्वोच्च प्राप्ति) को स्वीकार किया।

[1] तुलना करें. सीसीएक्स.

[2] देखें XXXV.

[3] अतः टीका ध्यान के लिए निर्धारित आसन है।

[4] देखें सुत्त-निपाता, 501.

[5] Cy . (Br.) niddaṃ के बाद अन्य ca की आपूर्ति करता है।

[6] कोसियागोट्टा। कोसिया, इंद्र देवता के नामों में से एक है। प्रकाश (दीपक) की उपमा का प्रयोग, मेरा मानना है, यह नहीं दर्शाता कि मारा (मृत्यु के देवता/राक्षस) की मृत्यु-मशाल को कोसिया द्वारा बुझाया जाना था (देखें न्यूमैन), बल्कि यह कि उसका अपना पुनर्जन्म - 'अग्नि', जो 'शीघ्र' और मंद हो गई थी, बुझने के द्वारा उसके पुनर्जन्म की योजनाओं को विफल कर रही थी।

6.7 [216] कातियानथेरा के श्लोक पर टिप्पणी
उत्ठेहि से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा कातियान का है। इसका उद्गम क्या है? इस व्यक्ति ने भी पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म किए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित किए, और कोसिया वंश के एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया; अपनी माता के वंश से कातियान नाम प्राप्त करके, वे वयस्क हुए, संयोगवश उन्होंने उस थेरा को देखा जो थेरा सामञ्चकानी के गृहस्थ साथी थे, भिक्षु बन गए, और भिक्षु के कर्तव्यों का पालन करते हुए रात में मठ के चबूतरे (चंकमा) पर चढ़ते हुए मन ही मन कहने लगे: “मैं अपनी नींद (निद्दाभिभवं) को दूर करूँगा (विनोदस्सामि)।” इधर-उधर घूमते हुए वे नींद से व्याकुल हो गए; वह कुछ करने ही वाला था (पचलायामानो), गिर पड़ा (परिपटित्वा) और नंगी ज़मीन पर लेट गया (अनंतराहिताय भूमिया); गुरु को उसकी इस घटना का पता चला (पवत्तिं), वे स्वयं वहाँ गए और आकाश में खड़े होकर थेरा को “हे कातियान” कहकर याद किया (संज्ञां आकाशि)। गुरु को देखते ही वह उठ खड़ा हुआ, उन्हें प्रणाम किया और पश्चाताप करता रहा। तब गुरु ने उसे सत्य (धम्म) सिखाने के लिए ये श्लोक कहे।

411. "हे कातियाना! खड़े हो जाओ; बैठ जाओ;

बहुत ज्यादा सोने से मत थको;

आपको सतर्क रहना चाहिए; इसे होने न दें

मृत्यु का राजा, का रिश्तेदार

लापरवाही, आलस्य के कारण तुम पर हावी हो जाती है

भिक्षु लेकिन अपने जाल (कूट) के माध्यम से।

412. तरंगों की गति के अनुसार

विशाल महासागर, उसी प्रकार

जन्म और बुढ़ापा आप पर हावी हो जाते हैं

(एक के ऊपर एक)। आपको चाहिए

अपना खुद का एक अच्छा द्वीप बनाओ;

क्योंकि केवल एक ही अस्तित्व है, और कोई दूसरा नहीं।

आपके लिए आश्रय।

413. "निश्चित रूप से, गुरु ने तैयार किया (विजेसी)

यह मार्ग (मग्गा), जो ले जा सकता है

आसक्ति (संग) से परे (अतीतं)

कामवासना (राग) आदि, और इसके खतरे

जन्म और वृद्धावस्था। आपको यह सुनिश्चित करना चाहिए।

अपने ध्यान (योग) को दृढ़ बनाएं,

अपने निरंतर प्रयास को आगे बढ़ाएं (अनुयुंजस्स)।

दोनों ही स्थितियों में पूरी तरह से सचेत रहकर

रात के शुरुआती और बाद के हिस्से।

414. "हे कातियान! अपने पूर्व को त्याग दो!

बेड़ियाँ, क्योंकि अब तुम जकड़े हुए हो

दोहरा वस्त्र (संघटी), गंजा

रेजर की सहायता से और भिक्षा से प्राप्त भोजन से पोषित।

कोई भी प्रकार का खेल-कूद का आनंद (खिड्डारति) न हो;

निरंतर प्रयास (अनुयुंजित्था) और

ध्यान करना (झाय)।

415. "हे कातियान! अपने दुराचार को जला डालो!

गहरी ध्यान साधना (झयाहि); यह जान लो कि

तुम्हारी दुष्टता पर विजय प्राप्त कर ली गई थी (जानाही)।

आपको मार्ग तक पहुँचने में चतुर होना चाहिए

निर्वाण की ओर, चार बंधनों से मुक्त।

(योग)। अतुलनीय अवस्था प्राप्त कर ली है

(अनुत्तरं) स्पष्ट शुद्धता (विशुद्धिं),

आपको परिनिर्वाण में प्रवेश करना चाहिए जो इससे मिलता-जुलता हो।

अग्नि (ज्योति) का वह समूह जो बुझ गया

पानी।

416. "एक छोटी सी बाती से जलाया गया दीपक ऐसा होता है जैसे

एक लता जिसे हवा आसानी से नष्ट कर देती है।

हे तुम, तुम्हारे जैसे कुल के लोगो, उसी प्रकार से

इंदा को हिलाकर मार को मुक्त कर दो

आसक्ति से मुक्त। तुम ही हो वो एक।

क्योंकि वे कामवासना (राग) से रहित हो गए हैं

सभी संवेदनाएँ (वेदयितसु) और होना

शांत हो जाना (अर्थात निर्वाण की ओर अग्रसर होना)

इस अस्तित्व में, अपने समय का पालन करो।

(कॅख)

वहाँ, उत्थेही का अर्थ है: नींद से उठने के बाद अपनी सक्रियता (उठान) बनाए रखें; क्योंकि लेटना आलस्य का अंग माना जाता है, इसलिए सोने के लिए न लेटें। निसीदा का अर्थ है: पैरों को क्रॉस करके बैठें, शरीर को दृढ़ता से सीधा रखें और सचेत रहें। कातियाना का अर्थ है: बुद्ध ने उन्हें उनके नाम से संबोधित किया। मा निद्दाबहुलो आहु का अर्थ है: अधिक नींद न लें और नींद से अभिभूत न हों। जागरस्सु का अर्थ है: जागृत रहें, निरंतर जागृति में लीन रहें। Mā taṃ alasaṃ pamattabandhu, kuṭen'eva jinātu maccurājā का अर्थ है: मृत्यु के राजा, लापरवाही के रिश्तेदार को तुम पर विजय, विजय और आलस्य न करने दो, तुम वृद्धावस्था और रोगों से ग्रस्त हो, तुम आलसी, निष्क्रिय और निरंतर जागृति से जुड़े नहीं हो, ठीक वैसे ही जैसे कोई शिकारी बिना मार्ग बनाए (दुहाना) हिरण या किसी पंख वाले प्राणी का शिकार करता है; यही अर्थ है।

सेय्याथा पि का अर्थ है: शायद के अनुसार। महासमुद्देवेगो का अर्थ है: विशाल महासागरों की लहरों की तीव्र शक्ति। एवं का अर्थ है: जिस प्रकार विशाल महासागरों की उग्र और तीव्र लहरें उठती हैं और जो मनुष्य उन्हें पार करने में असमर्थ होता है, उसे डुबो देती हैं, उसी प्रकार जन्म और वृद्धावस्था भी एक दूसरे को निगल जाती हैं (अज्जोत्तरति) जो आलस्य से ग्रस्त होता है (कोसज्जाभिभूतं)। सो करोहि सुदीपं अत्तनो का अर्थ है: हे कातियान! तुम्हें अपने शरीर में एक द्वीप उत्पन्न करना चाहिए (उप्पादेहि) जो अरहंतत्व का फल हो, और जिसे चारों ओघों द्वारा निगला न जाए (अनज्जोत्तरनीयं)। Na hi tāṇaṃ tave vijjate'eva aññaṃ का अर्थ है: hi कारण (hetu) के अर्थ में एक अविघटनीय कृदंत है; क्योंकि इस लोक में या परलोक में आपके लिए सर्वोच्च फल के अतिरिक्त कोई अन्य आश्रय (tāṇaṃ) नहीं है, इसलिए आपको उस उत्तम द्वीप को अरहंत पद के रूप में मानना चाहिए।

Satthā hi vijesi maggaṃ etam का अर्थ है: गुरु ने जन्म आदि के खतरे से परे, पाँच प्रकार के आसक्ति (संग) से मुक्त होकर, उस श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग (मग्ग) पर विजय प्राप्त की और आपके लिए उसे तैयार किया, जो मार आदि पर विजय प्राप्त करने के बाद उस अच्छे द्वीप का कारण बना। यह वह मार्ग है जिसे अन्य मतों के कई अनुयायी (अञ्ञतित्तिया) पराजित होकर प्राप्त नहीं कर सके। Pubbāpararatt appamatto का अर्थ है: गुरु का जो भी है, वह उनके शिष्यों को प्राप्त करना चाहिए और उसे चूकना नहीं चाहिए,

इसलिए उसे प्राप्त करने के लिए उन्हें रात के पहले और बाद के समय में, पहले पहर से लेकर अंतिम पहर तक, सजग और विचारशील रहना चाहिए। अनुयुंज योगम् का अर्थ है: ऐसा हो जाने पर, आपको अपनी ध्यान (भावना) को दृढ़ करना चाहिए।

पुरीमानि पामुंच बंधनानि का अर्थ है: अपने आप को मुक्त करो और इंद्रिय सुखों के बंधनों से खुद को मुक्त करो, गृहस्थ जीवन में गृहस्थ रहते हुए गृहस्थ ने तुम्हें इन बंधनों में जकड़ रखा था; तुम्हें इन पर ध्यान नहीं देना चाहिए। संघाति खुरमुणभिक्खोजी का अर्थ है: दोहरे वस्त्र धारण करने वाला (संघातिधारी), खुरेना से गंजा (कटसिरमुंडो), भिक्षा से भोजन करने वाला (भिक्खाहारब्होगी); इस प्रकार, तीन प्रकार (विधा) का समूह, पूर्व बंधन (पुरीमबंधन) से क्रीड़ा और नींद में आनंद से निरंतर जुड़े रहने की क्रियाविधि या कारण है। हे प्रभु, जो दो वस्त्र धारण करते हो (संघतिपारुतो), और गंजे सिर वाले हो (मुंडो), भिक्षा मांगकर भोजन करते हो; अतः तुम्हारे लिए इंद्रिय सुखों, क्रीड़ा, उल्लास और नींद में लिप्त होना उचित नहीं है; इसलिए बंधनों से मुक्त हो जाओ और क्रीड़ा, उल्लास और नींद में लिप्त न हो; यही व्याख्या है। झाया का अर्थ है: ध्यान में लीन हो जाओ; अनुयुंज का अर्थ है: एकाग्रता के विषय (आरम्मन) पर निरंतर चिंतन (उपनिज्जानं) में संलग्न रहो।

इसका अभ्यास करने से और किसी भी प्रकार के ध्यान में प्रवेश करने के परिणामस्वरूप, सभी प्रकार के दुराचार (किलेसा) पर विजय प्राप्त हो जाती है (सबबस्सो जिता); उन्होंने “झायाहि जिनाहि” से शुरू होने वाला श्लोक इस प्रकार कहा; विशिष्ट चिह्न (लक्खण) पर उस चिंतन (उपनिज्जान) का अभ्यास करो। योगक्खेमपथेसु कोविदोऽसि का अर्थ है: तुम्हें ज्ञान (बोधि) के पंख (पक्खिया) के सिद्धांतों (धम्म) में चतुर और पारंगत होना चाहिए, जो चार बंधनों (योग) से मुक्त होकर निर्वाण के मार्ग बन गए हैं। इसलिए, भावना में तल्लीन होकर (उस्सुक्कापेन्तो), आप अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद परिनिर्वाण में प्रवेश करेंगे, जो निर्वाण की ओर अग्रसर एक अत्यंत शुद्ध अवस्था है, जिसकी कोई तुलना नहीं है। वारिना व ज्योति का अर्थ है: आप उस उत्तम (आर्य) मार्ग (मग्ग) की वर्षा (वुट्ठि) के फलने-फूलने से पूर्ण निर्वाण में प्रवेश करेंगे, जो प्रचुर मात्रा में वर्षा के जल की बौछार से अग्नि के पिंड के विलीन होने के समान है।

पज्जोतकारो का अर्थ है: प्रकाश देने वाला दीपक (पज्जोतिं करो)। परित्तरंसो का अर्थ है: छोटी बाती वाला। विनम्यते का अर्थ है: बुझ गया (विनमीयति) और नष्ट हो गया (अपनिय्यति)। लता व का अर्थ है: लता के समान। यह कहा गया है: — जिस प्रकार बाती आदि के अभाव के कारण कम प्रकाश (परित्तरंसो) और मंद प्रकाश (मंडपभो) वाला दीपक या छोटी लता (अप्पिका) उड़कर नष्ट हो जाती है (विद्धमसिय्यति), उसी प्रकार तुम भी उड़कर नष्ट हो जाओगे। इंदासगोत्त का अर्थ है: हे जिसका कुल इंदा, सक्का के समान है, क्योंकि उसका कुल कोसिया है। अनादीयनो का अर्थ है: उसके (मारा) प्रभाव में आए बिना (अनावत्तना) और उससे आसक्त न होने के कारण (अनुपादानातो) निद्धुनाहि का अर्थ है: उसे नष्ट करो और मारा का नाश करो; इस प्रकार, (मारा) का नाश करके, तुम अपने सभी भावों में कामुक इच्छा (चंदराग) को दूर कर लोगे; इध'एव का अर्थ है: इसी जन्म में (अत्तभाव); सीतिभूते का अर्थ है: ऊष्मा के अभाव और सभी विकारों (किलेसा) के जलने के कारण, तुम्हारी सभी अग्नियां बुझ जाएंगी और शांत हो जाएंगी; कंख का अर्थ है: तुम अपने परिनिर्वाण के समय की प्रतीक्षा करो। इस प्रकार, गुरु द्वारा दी गई शिक्षा के फलस्वरूप, जब गुरु ने निर्वाण (जो अस्तित्व के किसी भी आधार को नहीं छोड़ता) प्राप्त कर लिया, तो शिक्षा के अंत में गुरु ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) को उत्तरोत्तर विकसित किया और अरहंतत्व प्राप्त किया। अरहंतत्व प्राप्त करने के बाद, उन्होंने गुरु द्वारा सिखाई गई शैली में ही इन श्लोकों का पाठ किया। ये श्लोक गुरु के अरहंतत्व (अञ्ञा) का प्रकटीकरण बन गए।

थेरा कातियाना के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(217): मिगजला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (217) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
217. मिगाजाला
बुद्ध युग में सावत्थी में महान गृहस्थ महिला विशाखा के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, [1] वे अक्सर विहार (मठ) [217] में धम्म का पाठ सुनने जाते थे। अंततः उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और समय के साथ अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार करते हुए उन्होंने कहा:

[417] सुदेसिटो चक्कुमाता बुद्धेनादिक्काबंधुना,॥
सब्बासंयोजनातितो सब्बवत्तविनासनो॥ ॥

[418] निय्यानिको उत्तराणो तन्हामूलाविसोसनो,॥
विसामूलाऽ अघतानाऽ चेत्वा पापेति निब्बुतिऽ॥ ॥

[419] अन्नानामूलभेदाय काममयंतविघ्ननो,॥
विनाणनां परिल्लहे णाणवजिरानीपतिनो॥ ॥

[420] वेदानानं विन्नप्पनो उपादानप्पामोकानो,॥
भवान् अंगारकासुन् वा न्यानेन अनुपासको॥ ॥

[421] महरासो सुगम्भिरो जरामाक्कुनिवारणो,॥
एरियो अठहांगिको मग्गो दुक्खुपासामनो सिवो॥ ॥

[422] कम्मं कम्मन्ति न्त्वाना विपाकं च विपाकतो,॥
पतिकुप्पन्नधम्मनां यथा वा लोकादस्सणो॥
महाखेमाङ्गमो सन्तो परियोसनभद्दको ऽ ति.॥ ॥

[417] यह अच्छी तरह से सिखाया गया है, जो सब कुछ देखता है -
बुद्ध, सूर्य की उच्च जाति के वंशज [2] -
इसके माध्यम से सभी बंधन बीते हुए हैं, इसके माध्यम से
सभी निरंतर गति [3] नष्ट हो जाती है;

[418] यह आगे और बाहर ले जाता है, [4] यह आगे बढ़ता है,
इसके माध्यम से लालसा की जड़ सूख जाती है;
विष की जड़ को काटकर, हमारा दुखद अंत,
यह हमें बुराई के पूर्ण अंत तक ले जाता है; [5]

[419] अज्ञान की जड़ को काटकर,
यह कर्म के जीवित रथ को टुकड़े-टुकड़े कर देता है; [6] यह उन वस्तुओं पर अंतर्दृष्टि का वज्र डालता है
जो पुनर्जन्म में चेतना को दहेज देती हैं; [7]

[420] हमारी सारी चेतना के नीचे छिपे सत्य को उजागर करते हुए,
और सभी उत्तेजित पकड़ से मुक्त करते हुए,
यह हमें ज्ञान द्वारा प्रकट करता है,
पुनर्जन्म को अंगारों के एक धधकते गड्ढे के रूप में; [8]

[421] महान गुणों वाला, दूरगामी, गहरा,
आने वाले क्षय और मृत्यु को दूर करने वाला: -
ऐसा है आर्य, अष्टांगिक मार्ग, सभी बीमारियों का उपचार करने वाला, शुभ, धन्य। [9]

[422] यह कर्म को जानता है, - कर्म का क्या अर्थ था, -
और कर्म के फल को वास्तव में फल के रूप में जानता है। [218] सत्य के प्रकाश से एक दृष्टि दिखाते हुए,
चीजों को कारण के माध्यम से अस्तित्व में आते हुए।
हाँ, यह शक्तिशाली आश्रय [10] की ओर चला;
यह उच्च शांति लाता है और अंत में आनंद निहित है। [11]

इस प्रकार थेरा ने अनेक तरीकों से आर्य पथ (धम्म) को दर्शाते हुए यह घोषणा की कि उन्होंने स्वयं इसका अनुसरण किया है, जो कि अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा है ।

[1] सिस्टर्स देखें, पृ. 16 एन.

[2] देखें XXVI., CXXXIX.

[3] सब्बवट्टविनासानो, 'क्योंकि यह भ्रष्ट कर्मों के परिणामों के निरंतर चलने को नष्ट करता है।' साइ.

[4] निय्यनिको। सी एफ कली. साई., पी. 82, एन. 2.

[5] निब्बुति = निब्बाण - अर्थात, सभी कर्मों (कर्म संस्कारों) और किलेसा (दुखों) का। साइ.

[6] काममयंता: अट्टभावयंता। साइ.

[7] विनाणं परिग्गहे: कामभावदिसु यथासाकाक्कमुना विनानागहन उपपथिते। साइ. सी एफ संवाद, मैं. 313, एन. 1.

[8] देखें मज्झिमा, i. 74. यहाँ नरक में पुनर्जन्म निर्दिष्ट है; उपमा अन्यत्र (इरेमेन, पृ. 365) कामुक इच्छाओं पर लागू होती है, जिसके द्वारा पुनर्जन्म होता है।

[9] शिवो के लिए दो शब्द (cf शिव, बाद में लोकप्रिय हिंदू देवता)।

[10] खेमा (श्लोक 32, 227, 310)। यहाँ 'आश्रय' का तात्पर्य 'सुरक्षित स्थान' या 'पकड़' के प्राथमिक अर्थ से है, न कि किसी समुद्री चीज़ से (श्लोक 415 देखें)।

[11] यह अत्यंत प्रभावशाली गाथा पूरी तरह से विशेषणों और वाक्यांशों की माला है, जो धम्म की प्रशंसा में रची गई है, और टीका द्वारा इस संबंध की पुष्टि की गई है। ओल्डेनबर्ग पाठ में विराम चिह्नों की अनुपस्थिति से यह बात स्पष्ट रूप से इंगित होती है। डॉ. न्यूमैन द्वारा इन विशेषणों को बुद्ध पर लागू करने के लिए विकृत कर दिया गया है - इन्हें कर्ता कारक से, जबकि सामान्य स्थिति में ये सीधे खड़े होते, कर्ता कारक में बदल दिया गया है। अंग्रेज़ी अनुवाद मूल गाथा की उदात्त कविता का उपहास करता है।

6.8 [217] मिगाजालत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी

सुदेसीतो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा मिगजाला का है। इसका उद्‌गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, इस बुद्ध के उदय के समय सावत्थी में महान भक्त वैशाखा के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ। उनका नाम मिगजाला था। वे मठ गए, सदा सत्य (धम्म) सुनने के कारण उचित रूप से पवित्र आस्था प्राप्त की, भिक्षु बने, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) में निरंतर वृद्धि की, अरहंतत्व प्राप्त किया और अपने अरहंतत्व (अञ्ञा) को प्रकट करने के लिए इन श्लोकों का कथन किया।

417. "सभी से परे जाना (अतितो)

बंधन (संयोजन) और स्पष्ट

बार-बार होने वाले सभी दौरों का विनाश

पुनर्जन्मों के बारे में अच्छी तरह से शिक्षा दी गई है

बुद्ध, दृष्टि और

सूर्य का संबंधी।

418. "बुद्ध जिन्होंने स्वयं को (से) बाहर निकाल लिया था

संसार), जो पार कर गया था (

संसार की बड़ी बाढ़), जो स्पष्ट रूप से

लालसा (तन्हा) के स्रोत को सुखा दिया।

हत्या को रोककर (आघटनम्)

लालसा की विषैली जड़ (विसामूल)

पुरुषों को निर्वाण प्राप्त कराया।

419. "यांत (तंत्र) का नाश करने वाला

उस (कैंकर) किस्म की क्रिया जो

यह अज्ञान (अज्ञात) का मूल कारण है।

हीरे के हथियार का निपातानो (ड्रॉपर)

उन लोगों के लिए ज्ञान का (जो शेष रहते हैं)

चेतना का संग्रह (परिगाहे)

(विञ्ञाण);

420. "संवेदनाओं का मुखबिर (विञ्ञापानो)

(वेदना), जो मुक्त करता है (पामोकानो)

आसक्ति (उपादान), ध्यान करने वाला

(अनुपस्सानो) अस्तित्व पर (भव)

जलते हुए कोयले के गड्ढे की तरह,

ज्ञान।

421. "अष्टांगिक मार्ग (आरिया)"

(अट्ठंगिको मैगगो) बहुत स्वादिष्ट है

(महारासो), अत्यंत गहन, समर्थक-

वृद्धावस्था और मृत्यु का अवरोधक (या निवारक)

कूल (सिवो) ट्रैंक्विलाइज़र (उपासमानो) का

पीड़ा (दुक्खा)।

422. "कर्म (कर्म) का ज्ञान प्राप्त होने पर

क्रिया, प्रतिक्रिया (विपाक) के रूप में भी

प्रतिक्रिया, वह, जो देखता है (dassano)

प्रकाश (आलोक) लेकिन तदनुसार (यथाव)

आश्रित धर्म के सत्यों (धम्म) का

उत्पत्ति (paṭiceapanna) हो जाती है

शांत (संतो) महान की ओर जाने वाला

सुरक्षा (खेमा) और उत्कृष्ट (भड्डको)

अंत में (परियोसाना)।

वहाँ, सुदेसीतो का अर्थ है: उत्कृष्ट रूप से समझाया गया; परम (परम) के निरपेक्ष अर्थ (अत्थ) को प्रकट करते हुए (विभावन) शिक्षा दी गई है, जो वर्तमान (दिट्ठधम्मिको) और भविष्य (संपरायिक) दोनों से संबंधित है, और अनुशासन के अधीन प्राणियों की प्रवृत्ति (अज्जासय) के अनुरूप है; यही अर्थ है। दूसरे शब्दों में, सुदेसीतो का अर्थ है: अच्छी तरह से समझाया गया; घटना (पवत्ति) और उससे विमुख होने (निवत्ति) तथा दोनों के कारणों (हेतु) को दृढ़तापूर्वक प्रकट करते हुए (पकासना) अच्छी तरह से शिक्षा दी गई है; यही अर्थ है। चक्खुमता का अर्थ है: बुद्ध द्वारा, जिनके पास पाँच प्रकार की आँखें थीं: मांसल (मांसा) आँख, दिव्य (दिब्बा) आँख, ज्ञान (पञ्ञा) आँख, जागृत (बुद्ध) आँख और सार्वभौमिक (समन्त) आँख। बुद्धेन का अर्थ है: सर्वज्ञ बुद्ध द्वारा। आदिच्चबंधुना का अर्थ है: सूर्य के वंशज द्वारा। वास्तव में, शाही योद्धाओं (क्षत्रिय) की दो प्रकार की वंश-परंपराएँ होती हैं; सूर्य की वंश-परंपरा और चंद्रमा की वंश-परंपरा; वहाँ, राजा ओक्काका की राजवंश-परंपरा को सूर्य की वंश-परंपरा समझा जाना चाहिए; उस वंश से उत्पन्न होने के कारण, शाक्य सूर्य के कुल के थे और भगवान को "आदिच्चबंधु (सूर्य के वंशज)" कहा गया है। दूसरे शब्दों में, वे सूर्य के वंशज भी हैं, इस प्रकार, भगवान सूर्य के रिश्तेदार हैं। इसका अर्थ वही है जो पहले कहा गया था (हेट्ठ)। सब्बसंयोजनतितो का अर्थ है: सभी बंधनों से मुक्त हो जाना, क्योंकि वह स्वयं सभी बंधनों (संयोजन) से मुक्त हो गया था, जिसमें काम (राग) का बंधन भी शामिल है; सब्बवट्ट विनाशनो का अर्थ है: सभी जन्मों के चक्रों का नाश करने वाला, क्योंकि उसने सभी जन्मों (वट्ट) के दुराचार और कर्मों (कम्म) के परिणामों (विपाक) को नष्ट कर दिया था; निय्यानिको का अर्थ है: जन्मों (संसार) के चक्रों में भटकने से मुक्त होकर मुक्ति दिलाने वाला। उत्तरणो का अर्थ है: पार करने वाला, क्योंकि इसका अर्थ है पुनर्जन्मों के चक्रों (संसार) की विशाल बाढ़ (ओघ) से स्वयं को पार करना (समुत्तरणत्थ); तन्हामूलविशोसानो का अर्थ है: वह व्यक्ति जिसकी अज्ञानता (अविज्जा) के कारण तृप्ति का स्रोत सूख गया हो, क्योंकि सभी प्रकार की तृप्ति (तन्हा) जैसे कि कामतन्हा और इसी प्रकार की अन्य तृप्ति, साथ ही अज्ञानी (अयोनिसो) जागरूकता (मोनसिकारा) का स्रोत (मूल) वाष्पित और सूख गया हो। विसमूलं का अर्थ है: विष का आधार, क्योंकि यह विषैले दर्द (विस्सदुक्खस्स) का कारण है, साथ ही यह तीन प्रकार के ज्ञान (वेद) के आत्म-प्रवेश (संपटिवेध) के विनाश (विद्धंसन) का कारण भी है; आघटनम् का अर्थ है: हत्या, क्योंकि यह वह स्थान है जहाँ जीवों का विनाश (ब्यासन) उत्पन्न होता है (उप्पति), दूसरे शब्दों में, यह दुराचार (किलेसा) का कार्य (कम्मं) है; चेत्वा का अर्थ है: स्वयं काटकर अलग करने के बाद (समुच्चिन्दित्वा); निब्बुतिम् का अर्थ है:निर्वाण प्राप्त करने के कारण।

अज्ञानता (अयोनिसो) और मनोभ्रंश (आसवा) भी अज्ञानता (आआण) की जड़ हैं; वास्तव में, ऐसा कहा गया है: "अज्ञान (अविज्जा) की उत्पत्ति (सन्दय) के कारण; भेदाय का अर्थ है वजिरा के समान ज्ञान द्वारा विखंडित करना; दूसरे शब्दों में, जब "अज्ञान पर निर्भर अविज्जा पच्चया संखार" जैसे कथन के कारण अज्ञान की जड़ होती है, जिससे मिठाइयाँ उत्पन्न होती हैं, इत्यादि; अस्तित्व का चक्र

(भवचक्क); सही मार्ग (मग्ग) के ज्ञान के वजिरा रूपी हीरे के हथियार द्वारा उस चक्र को काटने (पादालन) के उद्देश्य से सिखाया गया है; इस प्रकार, संबंध (संबंध) है। कम्मयन्तविघातनो का अर्थ है: कर्मों (कम्म) को नष्ट करने (घटितसस) के लिए शरीर (अत्तभाव) की यंत्र-तंत्र (यन्त) का विनाशक (विद्धंसनो)।" viññāṇānam pariggahe का अर्थ है: जब वह अपने कर्मों के फलस्वरूप (kāmabhava) आदि में चेतना एकत्रित (gahaṇe) कर रहा था; तब यही कहना शेष है (vacanaseso)। वास्तव में, इस और उस जन्म में गर्भ धारण करने के कारण, सभी चेतनाएँ भी धारण कर ली हैं जो इस और उस जन्म पर निर्भर हैं। Nāṇavajira nipātano का अर्थ है: ज्ञान रूपी हीरे के हथियार का गिरना; ज्ञान रूपी हीरे के हथियार को गिराकर अलग कर देना; वास्तव में, दिव्य सत्य (lokuttaradhamma) उत्पन्न होकर ऐसा करता है। (उपज्जति) परन्तु चेतना के उन रूपों को तोड़कर (विञ्ञाणि) जो सातवें अस्तित्व में उत्पन्न होने के योग्य हैं इत्यादि।

वेदनां विञ्ञापणो का अर्थ है (वह जो सुख से शुरू होकर तीन प्रकार की संवेदनाओं (वेदना) की जानकारी देता है, जो क्रमानुसार (यथक्कमं) स्थायी पीड़ादायक कांटों (दुक्खा-सल्लानिच्च) के माध्यम से निरंतर (याथावतो) बनी रहती हैं)। उपादानप्पमोचनो का अर्थ है: इंद्रिय सुख आदि चार प्रकार के आसक्ति से मन (सन्ताना) को मुक्त करने वाला (विमोचको)। धवं अंगारकासुं व, ञाणेन अनुपस्सानो का अर्थ है: नौ प्रकार की इंद्रिय-संबंधी अवस्थाओं के अस्तित्व की ओर संकेत करने वाला (दस्सेता), जो मनुष्य की ऊँचाई से परे जलते हुए कोयले के ढेर के समान, फटे हुए अग्नि के रूपों से जलने के समान हैं (साधिकपोरिसं), निरंतर रूप से। सही मार्ग (मग्गा) के ज्ञान के माध्यम से चिंतन किया गया।

महारस्सो का अर्थ है: अत्यंत स्वादिष्ट, क्योंकि इसका अर्थ शांति और उत्कृष्टता के कारण असंतुष्ट (अतित्ति) करना है; सुद्व गम्भीरो जरामच्चुनिवारानो का अर्थ है: वृद्धावस्था और मृत्यु का निषेध करने वाला (पटिषेधको), क्योंकि यह भविष्य के अस्तित्व को प्रभावित करने से रोकता है (निवत्तनेन), क्योंकि यह संचित सामग्री (संभर) के माध्यम से उस चीज़ में स्थापित (पटिट्ठाय) है जिसे प्राप्त नहीं किया जाना चाहिए (अलभनेय्या), क्योंकि उसमें लीन होना कठिन (दुरवागहताय) है। अब, विशिष्ट गुण (गुणविशेष) से जुड़े सत्य (धम्म) को दर्शाने के लिए, जैसा कि उसी रूप में (सरूपतो, विस्तार से) कहा गया है, उन्होंने इस प्रकार कहा: "अरियो अत्थांगिको (आठ प्रकार के श्रेष्ठ)", और फिर अपने कुछ गुणों (कतिपाये) को प्रकट करने के लिए उन्होंने कहा "दुक्खूपसमानो शिवो" इत्यादि। इसका अर्थ है — अरियो (श्रेष्ठ) क्योंकि इसका अर्थ सर्वांगीण पवित्रता है; अत्थांगिको (आठ प्रकार के) क्योंकि इसमें आठ सत्यों (धम्म) का संयोजन (समधान) है, जो सही दृष्टि (सममदित्थी) से शुरू होता है; मार्गो (सही मार्ग), क्योंकि इसका अर्थ निर्वाण की खोज (गवेसनट्ठ) है। दुःखवुपसमनो (पीड़ादायक कष्टों का पूर्ण निवारण) क्योंकि इसका अर्थ है पुनर्जन्मों के चक्रों के संपूर्ण दर्द (सकलदुक्खा) को शांत करना (वुपसमना); शिवो (शीत) क्योंकि इसका अर्थ है सुरक्षित होना।

पटिच्चुप्पन्नधम्मनं का अर्थ है: इस व्यवस्था (इतो) के बाहर (बाहीरक) अवसर पर, सर्वथा आत्मजागृत बुद्ध द्वारा सूचित न किए जाने के कारण, कर्म और प्रतिक्रिया (कम्मविपाको) पर विकृति (विपल्लासो) हो सकती है; इस प्रकार विकृत न होकर और कर्म (कम्मम्) को कर्म और प्रतिक्रिया (विपाक) को भी आश्रित उत्पत्ति (पटिच्चसमुप्पन्नेसु) के कर्मों (धम्म) में प्रतिक्रिया के रूप में समझकर, शाश्वतवाद (सस्सता) और शून्यवाद (उच्छेद) की भ्रांति (गाह) को प्रारंभिक (पुब्बभाग) ज्ञान (ज्ञान) के संवर्धन (जनना) का कारण (हेतु) मानकर उसे नष्ट (विधमनेन) करना; yāthāvato ālokadassano (लगातार प्रकाश को देखते हुए), कर्ता (takkarassa) के पारलौकिक (या अलौकिक) ज्ञान (lokuttarañāṇa) के प्रकाश (āloka) का द्रष्टा (dassano)। Mahakhemangamo का अर्थ है: वह जाता है और जीवों को भी निर्वाण तक पहुँचाता है, जो अत्यंत सुरक्षित स्थान है क्योंकि वहाँ किसी भी समय किसी के द्वारा किसी को भी कोई कष्ट नहीं पहुँचाया जाता है। Santo का अर्थ है: शांत क्योंकि दुराचार (kilesa) की सभी जलन और गर्मी बुझ गई है और शांत हो गई है (vūpasama); परियोसानभद्दको निर्वाण के तत्व (धातु) की प्राप्ति का कारण बनता है, मन की स्थिर (अकुप्पाय) मुक्ति (चेतोविमुतीय) के साथ-साथ अस्तित्व के किसी भी आधार (अनुपादिसेसाया) के बिना, जिसे दृष्टिवान (चक्खुमा) बुद्ध ने भली-भांति बताया था; यही व्याख्या है।

इस प्रकार, थेरा ने अपने अरहंतत्व (आञ्ञा) को इंगित (पदेसेना) करके, स्वयं उस सत्य (धम्म) की प्राप्ति की अवस्था को प्रकट किया और विभिन्न तरीकों से उस महान (आर्य) सत्य (धम्म) की प्रशंसा की।

थेरा मिगाजाला के श्लोक पर टीका पूर्ण हो चुकी है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (218): जेंटा पुजारी का बेटा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (218) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
218. जेंटा
पुजारी का बेटा [1]
बुद्ध युग में सावत्थी में कोसल के राजा के पुरोहित के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम जेंत रखा गया। बड़े होकर वे जन्म, धन और पद के लाभों से इतने मुग्ध हो गए कि जहाँ उन्हें सम्मान देना चाहिए था, वहाँ उन्होंने अनादर दिखाया और अहंकार से भर गए। एक दिन वे भगवान (बुद्ध) के पास पहुँचे, जो एक विशाल सभा के बीच उपदेश दे रहे थे, और उन्होंने सोचा: 'यदि समना गौतम (बुद्ध) पहले मुझसे बात करेंगे, तो मैं भी बोलूँगा; मैं स्वेच्छा से उनसे बात नहीं करूँगा।' इस प्रकार, भगवान (बुद्ध) ने उनसे बात नहीं की और उन्होंने भी अहंकार के कारण कुछ नहीं बोला, इस प्रकार उन्होंने वहाँ खड़े-खड़े अपने आने का कारण प्रकट किया। तब भगवान (बुद्ध) ने उन्हें एक श्लोक में संबोधित किया:

अहंकार और व्यर्थ की कल्पनाओं में जीना अच्छा नहीं है।
हे ब्राह्मण (पुजारी), लाभप्रद कर्मों का पालन करो।
जिस लाभ की खोज में तुम यहाँ आए हो
, उसी पर अपना जीवन व्यतीत करो।

जेंता ने सोचा, 'वह मेरे मन की बात जानता है!' और वह उनकी ओर बहुत आकर्षित हुआ, और उनके चरणों में गिरकर सर्वोच्च सम्मान व्यक्त किया। उसने भगवान (बुद्ध) से पूछा:

किसके प्रति हमें अहंकार नहीं रखना चाहिए?
हमें किसका सम्मान करना चाहिए? हमें किसकी पूजा करनी चाहिए?
क्या किसके प्रति श्रद्धा दिखाना उचित है?

उस पर परम पूज्य बुद्ध ने कहा:

माता और पिता के लिए भी, वैसे ही
बड़े भाई के लिए, शिक्षक के लिए,
ब्राह्मण (पुजारी) के लिए और पीले वस्त्र वालों के लिए:
इनके लिए अहंकार नहीं पालना चाहिए,
इनका आदर करना चाहिए, इनका आदर करना चाहिए,
इनके प्रति श्रद्धा दिखाना अच्छा है।
शांत, कुशल, समझदार, निर्मल अरहंतों (प्रबुद्ध व्यक्तियों)
के लिए, जिनके अहंकार ने लक्ष्य पार करते ही नाश कर दिया, [2] उन्हें अन्य सभी से बढ़कर प्रणाम करना चाहिए।

उस शिक्षा से जेंता ने निर्वाण की प्रथम समाधि (सोतापना) प्राप्त की , भिक्षु संघ में प्रवेश किया और समय आने पर अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। अपनी इस उपलब्धि का जश्न मनाते हुए उन्होंने इस प्रकार अन्ञा (सर्वोच्च प्राप्ति) की घोषणा की:

[423] जातिमदेना मट्टोहाṃ भोगैसरियेना सीए,॥
संथानवनरूपेण मदमत्तो अचरिहाऽ॥ ॥

[424] नट्टनो समकाṃ कान्सी अतिरेकाṃ सीए मनिसाṃ,॥
अतिमानहतो बालो पट्ठद्धो उस्सितद्धजो॥ ॥

[425] मातरौ पितरञ्चपि अन्नेपि गरुसम्मते,॥
न कैंचि अभिवदेसिऽ मनत्थद्धो अनादारो॥ ॥

[426] दिस्वा विनायकाअग्गाअ सारथिनाअ वरुत्तमअ,॥
तपन्तं इव आदिच्चै भिक्खुसंघापुरक्खतं ॥। ॥

[427] मनं मदां च चण्डेत्वा विप्पसन्नेन चेतसा,॥
सिराणा अभिवादेसिऽ सब्बसत्तनमुत्तमं ॥। ॥

[428] अतिमानो [46] च ओमानो पहिना सुसमुहता,॥
असुमिमानो समुच्चिनो सब्बे मानवविधा हता' ति.॥ ॥

[423] अपने जन्म, अपने धन
और प्रभाव से मोहित होकर, अपने रूप की सुंदरता से
मदहोश होकर, मैंने अपना जीवन व्यतीत किया।

[424] मुझे बहुत कुछ पसंद था, लेकिन कोई भी मेरे जैसा नहीं था।
एक बेचारा नौजवान मूर्ख, घमंडी और बिगड़ा हुआ,
अभिमान से हठी, दिखावा करने वाला और असभ्य।

[425] माता और पिता, और अन्य भी,
सम्मान और आदर का दावा करते हुए,
मैंने कभी किसी को सलाम नहीं किया, असभ्य, गर्व से अकड़ा हुआ।

[220] [426] तब मैंने उन्हें मार्गदर्शक, सर्वोच्च नेता,
मानव जाति के चालकों में अद्वितीय प्रमुख,
सूर्य की तरह चमकते हुए महिमा में,
भिक्षुओं की पूरी मंडली के साथ देखा।

[427] अहंकार और व्यर्थ अभिमान को त्यागकर,
मेरे हृदय में एक पवित्र प्रसन्नता भर गई,
मैंने विनम्रतापूर्वक सिर झुकाकर
उन्हें प्रणाम किया जो समस्त प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ और श्रेष्ठ हैं।

[428] अब अच्छी तरह से मिटा दिया गया है और दूर कर दिया गया
है झूठा अभिमान और पाखंड दोनों;
'मैं क्या हूँ' और वह दो भागों में टूट गया है,
हाँ, आत्म-अभिमान का हर रूप नष्ट हो गया है। [3]

[1] उन्हें CXI के जेंटा से अलग करने के लिए।

[2] अरहंतत्व (ज्ञानोदय) की ओर ले जाने वाले चौथे या सर्वोच्च मार्ग में टूटने वाले अंतिम 'बंधनों' में से एक माना है। सोतापण के रूप में वह प्रथम मार्ग (निर्वाणिक समाधि) में प्रवेश करता है। तुलना करें बुद्ध. ण्य, पृष्ठ 298, नोट 3।

[3] टीका कहती है कि नौ रूप हैं। इनका उल्लेख विभंग, पृष्ठ 389 f में किया गया है। बौद्ध धर्म में मान में अहंकार के सभी दखल शामिल हैं। यह सत्ता एक मिथक थी, और इसे अपने पड़ोसी के मिथक के विरुद्ध प्रतिद्वंद्विता में नहीं रखा जाना था।

6.9 [218] पुरोहितपुत्तजेनतत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी

जातिमदेन मत्तोऽहं से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेर जेंता का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, जब बुद्ध का जन्म हुआ, तो वे राजा कोसल के निजी पुच्छार (पुचित) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिए; उनका नाम जेंता था। वयस्क होने पर, वे अपने धन, अधिकार (इस्रिया) और सौंदर्य (रूपा) के अहंकार (मदा) में मदहोश (मत्तो) होकर इधर-उधर भटकने (विकारति) लगे, दूसरों का तिरस्कार (हिलेंतो) करते रहे, गुरुओं (गुरुट्ठनिया) का अनादर (अपाचित्त) करते रहे और अहंकार (मानथद्धो) से फूले नहीं रहे। एक दिन उन्होंने गुरु को अपने चारों ओर विशाल श्रोताओं को सत्य का उपदेश देते हुए देखा, और पास जाकर उन्होंने ऐसा किया, जिससे उनके मन में यह विचार आया; "यदि भिक्षु गौतम पहले मुझसे बात करें तो मैं उनका अनुसरण करूंगा; यदि नहीं, तो मैं उनसे बात नहीं करूंगा;" वे उसी मुद्रा में खड़े रहे और जब भगवान बुद्ध ने पहले उनसे बात नहीं की, तो उन्होंने अपने अहंकार के कारण कोई संबोधन नहीं किया और जाने का संकेत दिया; तब भगवान बुद्ध ने एक श्लोक के माध्यम से उनसे बात की।

"हे ब्राह्मण! अभिमान शुभ नहीं है।"

हे ब्राह्मण, जो जरूरतमंद है!

उस इच्छा के अनुसार कहना चाहिए

(अत्था) जिसके लिए तुम आए थे।

उन्होंने मन ही मन कहा, "भिक्षु गौतम मेरे मन की बात जानते थे," और विशेष रूप से श्रद्धापूर्वक भगवान बुद्ध के चरणों में सिर झुकाकर, परम विनम्रता का परिचय देते हुए, इस प्रकार प्रार्थना की:

"किन लोगों में घमंड नहीं होना चाहिए?"

किसके प्रति होना चाहिए?

सम्मान? किसके प्रति होना चाहिए?

श्रद्धा? किसके प्रति है वह श्रद्धा?

श्रद्धापूर्वक भेंट (पूजिता) कुआँ

बनाया हुआ अच्छा है?

भगवान बुद्ध ने उनके प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्हें सत्य इस प्रकार समझाया:

माता और पिता दोनों में,

इसके अतिरिक्त सबसे बड़े भाई में;

चौथे, शिक्षक के साथ-साथ

भिक्षुओं और कुलीन जीवन के नेताओं में

(ब्राह्मण); उनमें अभिमान होना चाहिए

न दिखाया जाए (मानं कायिरथ); एक

उनके प्रति आदरपूर्ण व्यवहार होना चाहिए।

उनका आदर किया जाए;

आदरपूर्वक भेंट, शाबाश (सुपूजिता)

उनके लिए भलाई (साधु) हो।

अभिमान (निहस्सा) को त्यागना और

अभिमान रहित (अत्थद्धो) व्यक्ति को भुगतान करना चाहिए

अतुलनीय को श्रद्धांजलि (नमस्ते)

(अनुत्तरा) अरहंत, जो बन गए थे

शांत (सीतिभूत), जिन्होंने वह किया जो उन्होंने किया

क्या करना चाहिए और जो इससे मुक्त हो चुका था

घाव।

उस शिक्षा के माध्यम से वह धारा-विजेता (सोतापन्न) बन गया, भिक्षु बन गया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने का कर्म किया, अरहंतत्व प्राप्त किया और अपने उचित कर्म (पटिपत्ति) की घोषणा (मुखेना) करते हुए अपने अरहंतत्व को प्रकट करते हुए ये श्लोक कहे:—

423. "पागलपन से पागल हो जाने के कारण

जन्म से ही धनवान और अधिकार संपन्न

साथ ही, सुंदर (रूपा) शारीरिक

रूप (संथान) और रंग (वण),

मैं पागलपन के नशे में चूर होकर इधर-उधर भटकता रहा।

424. "मैंने सोचा था कि मेरे बराबर कोई नहीं है, सिवाय मेरे।"

सभी से परे (अतिरेका); मैंने अपना अत्यधिक अभिमान धारण किया और मैं मूर्ख था, बिलकुल अकड़ा हुआ (पत्थद्धो) और (अपना) ध्वज (धजा) ऊँचा (उस्सिता) फहराया।

425. मैंने अपना सम्मान व्यक्त नहीं किया (अभिवादेषि)

मेरी माँ और पिताजी को भी और दूसरों को भी

साथ ही, मान्यता प्राप्त (सम्मत) के रूप में

शिक्षक; मेरे अहंकार से फूले हुए थे

सम्मान की भावना का अभाव।

426. सबसे आगे स्पष्ट देखने पर

नेता (विनायक), सबसे उत्कृष्ट

रथ चालकों के बीच, चमकते हुए, समान रूप से

भिक्षुओं के दल के सबसे आगे सूर्य था।

427. मैंने अपना अभिमान और साथ ही साथ त्याग दिया

नशा किया और अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की

मेरा सिर, सभी में सबसे उत्कृष्ट के लिए

मेरे मन में श्रद्धा के साथ जीवित प्राणियों के प्रति श्रद्धा है।

प्रसन्न (vippasannena cetasā).

428. मेरा अभिमान, श्रेष्ठ और हीन

उसे त्याग दिया गया था और काफी दूर ले जाया गया था;

अहंकारी (सामी) अभिमान अच्छी तरह से था

सभी अभिमानी राजाओं का वध कर दिया गया था।

429. मेरा अभिमान, श्रेष्ठ और हीन

उसे त्याग दिया गया था और काफी दूर ले जाया गया था;

अहंकारी (सामी) अभिमान अच्छी तरह से था

सब कुछ कट गया; हर तरह का स्वाभिमान नष्ट हो गया था।"

वहाँ, जातिमदेन मत्तोऽहं का अर्थ है: मैं एक उच्च कोटि के ब्राह्मण परिवार में जन्मा था; मैंने अपने परिवार के गौरव से मदहोश होकर यह आशय किया कि "मेरे जैसा उच्च कुल का कोई और व्यक्ति नहीं है।" यही व्याख्या है। भोगैसारियेन च का अर्थ है धन और आधिपत्य के कारण उत्पन्न हुए सौभाग्य और आशीर्वाद पर निर्भर होकर, मैं अपने आप को अधर्म से मदहोश कर बैठा। संठाना वण्णरूपेण का अर्थ है: शरीर (संठाना) ऊंचाई (आरोहसंपत्ति) और परिधि (परिणाह) में समृद्धि है; रंग (वण्ण) त्वचा की सुनहरे रंगत में समृद्धि है, इत्यादि; रूप (रूपं) शरीर के प्रमुख और गौण अंगों की सुंदरता (शोभ) है। यहाँ भी, व्याख्या को इसी प्रकार समझा जाना चाहिए। मदमत्तो का अर्थ है: बताए गए तरीके के अलावा अन्य प्रकार के पागलपन से मदहोश होना।

Nāttano samakaṃ kañci' atirekaṃ ca maññissaṃ का अर्थ है: मैं जन्म आदि के संदर्भ में किसी को भी अपने समान या समरूप नहीं मानता; मैं किसी को भी अपने से समरूप या श्रेष्ठ नहीं समझता; मैं किसी को भी अपने समरूप नहीं मानता; मेरा श्रेष्ठ (अधिकं) कौन हो सकता है? यही इसका अर्थ है। Atimānahato bālo का अर्थ है: मैं मूर्ख हूँ; मूर्ख होने के साथ-साथ (tato) मैंने चालाकी से (kusalācāro) झूठे विचारों (khatūpahata) का जीवन व्यतीत किया। Patthaddho ussitaddhajo का अर्थ है: परन्तु इसके अलावा, मैं

अपने गुरुओं के प्रति आज्ञाकारिता का भाव भी न रखने के कारण अत्यधिक (bhusaṃ) कठोर (thaddho), अडिग (anonamanathaddha) हो गया था, और अपने अभिमान का ध्वज (dhaja) बुलंद (ussita) कर बैठा था।

“मातरं (माँ)” से शुरू होने वाला श्लोक कही गई बात के अर्थ को और स्पष्ट करने के लिए जोड़ा गया है। यहाँ अञ्ञा (प्राप्ति) का अर्थ है: बड़े भाइयों आदि के लिए, साथ ही भिक्षुओं और ब्राह्मणों के लिए। गरुसम्मे का अर्थ है: शिक्षक के रूप में मान्यता प्राप्त और शिक्षक का स्थान ग्रहण करने वाले। अनादरो का अर्थ है: सम्मानहीन।

Disvā vināyakaṃ aggaṃ का अर्थ है: इस प्रकार अहंकार से फूलकर (मानाथद्धो) भटकते हुए, (मैंने देखा) अनुशासनात्मक नेता को, क्योंकि वे आत्मनिर्भर होने के कारण नेता हैं, क्योंकि वे वर्तमान (दिट्ठधम्मिका) और भविष्य (संपरायिका) से संबंधित परम (परम) लाभों (अत्थ) के माध्यम से अनुशासन के योग्य (वेनेय्यानं) लोगों को अनुशासित करते हैं; वे दिव्य जगत सहित संसार में सबसे आगे (अग्गं) हैं, क्योंकि वे नैतिक उपदेशों (शील) आदि जैसे गुणों (गुण) के कारण सर्वश्रेष्ठ (सेट्ठ) हैं; सारथीनं वरुत्तमं का अर्थ है: सबसे उत्कृष्ट सारथी, क्योंकि उन्होंने निश्चित रूप से (अक्कन्तता) उन मनुष्यों को वश में कर लिया जिन्हें वश में किया जाना चाहिए; वरुत्तमं का अर्थ है: अत्यधिक उत्कृष्ट; तपन्तं वरुत्तमं का अर्थ है: सूर्य के समान प्रकाशमान, जिसकी किरणें एक फादम लंबाई की किरणों के समान हैं, इत्यादि; गुरु को, जो सभी जीवित प्राणियों में सबसे उत्कृष्ट हैं, अपने चारों ओर भिक्षुओं के दल के प्रमुख के रूप में सत्य (धम्म) का उपदेश देते हुए देखने के बाद; चड्डेत्वा का अर्थ है; धन-दौलत के नशे में चूर होकर जो उन्माद (पवत्तमानं) उस समय उत्पन्न हो रहा था, उसे त्यागकर, इस प्रकार कहा: “मेरे सिवा कोई श्रेष्ठ नहीं; अन्य हीन (हीना) हैं,” बुद्ध की शक्ति से पूर्णतः भयभीत होकर, मैंने प्रसन्न मन से अपने सिर को झुकाकर उन्हें प्रणाम किया; यही व्याख्या है। परन्तु, इस व्यक्ति ने गुरु के दर्शन मात्र से ही अपना अहंकार कैसे त्याग दिया, जबकि वह अहंकार से भरा हुआ था? वास्तव में, इसे इस प्रकार नहीं देखा जाना चाहिए। उसने गुरु के दर्शन होते ही अपना अहंकार नहीं त्यागा; उसने अपना अहंकार उस शिक्षा के कारण त्यागा, जो इस प्रकार शुरू हुई: “हे ब्राह्मण! अहंकार अच्छा नहीं है” इत्यादि। उस संबंध में (संध्या) इस प्रकार कहा गया है: "मानं मदन च चत्तत्वा, विप्पसन्नेन चेतासा सिरसा अभिवादेसिम, अहंकार और पागलपन को दूर करने के बाद, (मैं), अपने मन से प्रसन्न होकर, अपने हाथ से पूजा करता हूं।" विप्पसन्नेन चेतसा का अर्थ है: वाद्य कथन को विभक्ति मामले (इत्थमभूत) के अंकन (लक्खाने) में देखा जाना चाहिए।

अतिमानो का अर्थ है: वह अभिमान जो "अहमेव सेट्ठो (मेरे सिवा कोई श्रेष्ठ नहीं)" के रूप में उत्पन्न होता है। ओमानो का अर्थ है: वे कहते हैं: यह दूसरों से हीनता की भावना से उत्पन्न होने वाला वह अभिमान (दहन्तस्स) है, जिसमें वे कहते हैं, "ये तो नीच (निहिना) हैं।" अतिमानो का अर्थ है: श्रेष्ठ अभिमान (सेय्यामान) जो स्वयं को दूसरों से श्रेष्ठ समझने के कारण उत्पन्न होता है, और इस प्रकार कहते हैं, "सेय्यो'हमस्मि (मैं श्रेष्ठ हूँ)।" ओमानो का अर्थ है: निम्न अभिमान (हीनमान) जो इस प्रकार उत्पन्न हुआ है: “हिमोऽहमस्मि (मैं निम्न हूँ):” पाहीना सुसमुहता का अर्थ है: निम्न (हेट्ठिमा) मार्गों (मग्ग) के माध्यम से त्यागे जाने के बाद, और श्रेष्ठ (अग्ग) मार्ग (मग्ग) द्वारा उत्कृष्ट (सुट्ठु) रूप से वर्णित (समुग्घाटिता)। अस्मिमानो का अर्थ है: “एसोऽहमस्मि (यह मैं हूँ)” और स्कंधों में “अहं (मैं)” के रूप में ग्रहण (गहण) के कारण उत्पन्न अभिमान। सब्बे का अर्थ है: न केवल श्रेष्ठ अभिमान, निम्न अभिमान, अहंकारी अभिमान (अस्मिमान) बल्कि वास्तव में, अभिमान के सभी प्रकार और अभिमान के वे अंश जो नौ प्रकार के अभिमान हैं जैसे श्रेष्ठ अभिमान (सेय्यामान), श्रेष्ठ (सेय्या) आदि, और जो आंतरिक वर्गीकरण (भेद) द्वारा अनेक प्रकार के हैं: हता का अर्थ है सर्वोच्च मार्ग (मग्ग) द्वारा समाप्त कर दिया गया है।

थेरा जेंटा के श्लोक पर टीका पूर्ण हो गई है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(219):सुमना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा प्राचीन अनुवाद से रूपांतरित।
आचार्य धम्मपाल द्वारा टीका (अत्थकथा)।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (219) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
219. सुमाना
बुद्ध युग में पुनर्जन्म लेकर उन्होंने एक गृहस्थ शिष्य के परिवार में जन्म लिया, जो पूज्य थेरा अनुराधा के गृहस्थ सेवक बन गए थे। [1] उस गृहस्थ के सभी बच्चे अब तक कम उम्र में ही मर जाते थे। पिता ने कहा, 'यदि मुझे एक और पुत्र प्राप्त हुआ, तो मैं उसे थेरा से भिक्षु

दीक्षा दिलवाऊंगा।' दस महीने बाद उन्हें एक स्वस्थ पुत्र का जन्म हुआ, और जब बच्चा सात वर्ष का हुआ, तो उसे भिक्षु दीक्षा दी गई। अपनी अंतर्दृष्टि की परिपक्वता के कारण, थेरा की सेवा करते हुए उन्होंने शीघ्र ही छह प्रकार की अभिज्ञा (आध्यात्मिक शक्तियों का उच्चतर ज्ञान) प्राप्त कर ली। जल लाने के लिए एक घड़ा लेकर, सुमन इद्धि शक्ति से अनोत्तट्टा झील पर आए। [2] और झील के चारों ओर कुंडली मारे एक दुष्ट सर्प-राजा ने अपना विशाल फन ऊपर उठा लिया और उन्हें जल लेने नहीं दिया। तब सुमना ने गरुड़ पक्षी का रूप धारण किया [3] और [221] सर्प पर विजय प्राप्त की, और जल लेकर थेरा लौट आया। और भगवान (बुद्ध), जेतवन में बैठे हुए, उसे जाते हुए देखा, और सारिपुत्त को देखने के लिए बुलाया, और नीचे दिए गए चार श्लोकों में उसकी प्रशंसा की।

अब सुमना ने अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की गवाही देते हुए, अपने श्लोकों में निम्नलिखित श्लोक जोड़े:

[429] यदा नवो पब्बजिता जातिया सत्तवास्सिको,॥
इद्दिया अभिभोत्वान् पन्नगिन्दौ महिद्धिकां॥ ॥

[430] उपज्झायस्सा उदकाṃ अनोत्ता महसार,॥
आहारामि ततो दिस्व माऽ सत्थ एतदब्रवी॥ ॥

[431] सारिपुत्त इमाँ पस अगाच्छन्तं कुमारकाṃ,॥
उदकुंभकमादाय अज्झत्तं सुसमाहितो ॥ ॥

[432] पसादिकेन वत्तेन कल्याणैरियापथो,॥
समानेरोनुरुद्धस्सा इद्धिया च विसारदो॥ ॥

[433] अजनीयेन अजन्नो साधुना साधुकारितो,॥
विनितो अनुरुद्धेन कतकिच्चेन सिखितो॥ ॥

[434] सो पट्वा परमं शांतिं सच्चिकत्वा अकुप्पतं,॥
समानेरो सा सुमनो मा मन जान्नति इच्छति' ति.॥ ॥

[429] जब मैं सात साल का था और नया भिक्षु बना, तब
मैंने अलौकिक शक्ति से
सर्प राजा की अद्भुत शक्ति पर विजय प्राप्त की।

[430] जब मैं अपने गुरु के लिए
अनोतत्ता की महान झील से जल लाने गया, तब
भगवान (बुद्ध) ने मुझे इस प्रकार आते देखा और कहा:

[431] देखो, सारिपुत्त, कैसे वह छोटा लड़का
पानी का घड़ा लिए हुए आता है,
पूरी तरह तल्लीन, एकदम ध्यानमग्न।

[432] अपनी गरिमामय खोज पर उनका आचरण महान है,
और अलौकिक शक्ति में अच्छी तरह परिपक्व है,
हमारे अनुराधा के दल का यह नौसिखिया।

[433] उच्च नस्ल के प्रशिक्षक द्वारा उच्च कोटि की शिक्षा दी गई,
कुशल द्वारा पूर्णतः निपुण बनाया गया,
पूर्ण योग्यता द्वारा सक्षम बनाया गया,
अनुराधा द्वारा शिक्षा और अनुशासन दिया गया:

[434] उसने सर्वोच्च शांति और भलाई प्राप्त कर ली
और उतार-चढ़ाव को समझ लिया, यहाँ तक कि वह -
यह नौसिखिया सुमना - [अपनी शक्ति छिपाना चाहता था]
और इस प्रकार: मुझे कोई न जाने! चाहता था। [4]

[1] सीसीएलवीआई देखें।

[2] हिमालय क्षेत्र में सात पौराणिक झीलों में से एक (विनय ग्रंथ, i. 124; मिलिंदा, ii. 137)।

[3] भारत का 'रोक'-पक्षी.

[4] यदि अनुराद्ध चाचा होते, तो सुमना संभवतः सी.सी.आई. का सुमना ही होता, और यह एक द्विभाजित कथा का एक और उदाहरण हो सकता है। हालाँकि, यह नाम असामान्य नहीं है। यह सुमना संभवतः पश्चिम के पूजनीय थेरा हैं, जिन्होंने तीन अन्य और पूर्व के चार थेरों के साथ बुद्ध की मृत्यु के एक शताब्दी बाद वैशाली की सभा की अध्यक्षता की थी (विनय ग्रंथ , iii. 407)। वैसे भी एक परंपरा थी कि इन आठ थेरों में से दो - सुमना और वासभागामी - अनुराद्ध के शिष्य थे, और 'तथागत के दर्शन किए थे' (दीपवंग, iv. 48; v. 24)।

6.10 [219] सुमनत्थेरा के श्लोक पर टिप्पणी
यदानव पब्बजितो से शुरू होने वाला श्लोक पूज्य थेरा सुमन का है। इसका उद्गम क्या है? पूर्व बुद्धों की सेवा में समर्पित कर्म करते हुए, इस और उस जन्म में पुण्य कर्म संचित करते हुए, उन्होंने भगवान सिखि के समय एक माला बनाने वाले के परिवार में पुनर्जन्म लिया; बुद्धि प्राप्त करने पर, एक दिन उन्होंने भगवान सिखि को देखा, श्रद्धा से भर गए और उन्हें चमेली के फूल अर्पित किए। उस पुण्य कर्म के कारण, वे देवताओं और मनुष्यों के बीच बार-बार जन्म लेते रहे और जब बुद्ध प्रकट हुए, तब एक भक्त के घर में गर्भ धारण किया। वह भक्त पूज्य थेरा अनुराधा का सेवक था। उससे पहले जन्म लेने वाले बालक मर जाते हैं। इसलिए उन्होंने यह योजना बनाई: “यदि मुझे पुत्र प्राप्त हो, तो मैं उसे अपने स्वामी, थेरा अनुरुद्ध के समक्ष भिक्षु बनाऊँगा।” दस माह के भीतर ही उनका जन्म हुआ, वे स्वस्थ थे, धीरे-धीरे बड़े हुए और सात वर्ष के हो गए; उनके पिता ने उन्हें थेरा के समक्ष भिक्षु बना दिया। उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया और उसके बाद, ज्ञान की सर्वांगीण परिपक्वता के कारण आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि (विपस्सना) विकसित करने का कर्म करते हुए, छह प्रकार के उच्च ज्ञान से युक्त अरहंत बन गए, लेकिन कुछ ही समय बाद, थेरा की सेवा करते हुए, वे अपनी जादुई शक्ति से एक जलपात्र (घट) लेकर अनोटट्टा झील चले गए।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(220): नहटका-मुनि

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (221) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
220. न्हाटाका-मुनि [1]
बुद्ध युग में राजगृह में ब्राह्मण (पुजारी) वंश में पुनर्जन्म लेकर, वैदिक ज्ञान में निपुण होकर, वे स्नान-स्नातक के नाम से प्रसिद्ध हुए। तपस्वी बनकर, वे राजगृह से तीन मील दूर एक वन क्षेत्र में जंगली चावल खाकर और अग्नि की पूजा करके जीवन व्यतीत करते थे।

अब भगवान (बुद्ध) ने उनके हृदय में अर्हत्व (ज्ञानोदय) की अवस्था को एक दीपक की तरह चमकते हुए देखकर उनके आश्रम में आए। इससे प्रसन्न होकर उन्होंने अपने द्वारा तैयार किया हुआ भोजन उनके समक्ष रखा। भगवान (बुद्ध) ने उसे ग्रहण किया; और इस प्रकार तीन दिन बीत गए। चौथे दिन भगवान ने कहा, 'तुम जो इतने कोमल स्वभाव के हो, इस भोजन से अपना जीवन कैसे चलाते हो?' और इस प्रकार संतत्वपूर्ण संतोष पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने उन्हें धम्म का मार्ग सिखाया। और उस तपस्वी ने सोतापान (निर्वाण की पहली समाधि) से ही अर्हंत (ज्ञानोदय प्राप्त) हो गए। भगवान ने उन्हें इस बात की पुष्टि की और चले गए। लेकिन वे वहीं रहते हुए ऐंठन से बीमार पड़ गए। भगवान (बुद्ध) उनके पास गए और दयालुतापूर्वक उनका हालचाल पूछा।

[435] वातरोगाभिनितो त्वं विहारं काने वने,॥
पविद्धगोकेरे लक्खे कथां भिक्खु करिस्सि॥ ॥

[435] हे भिक्षु, जो ऐंठन से पीड़ित होकर
जंगल में रहते हो,
तुम्हारा क्षेत्र सीमित है, तुम भयानक कठिनाइयों में जी रहे हो,
मुझे बताओ, भिक्षु, तुम कैसे जीओगे?

तब थेरा ने कहा:

[436] पीतिमुखेन विपुलेन फरित्वाना समुस्सायौ,॥
लुकमपि अभिसम्भन्तो विहारिसामि काने.॥ ॥

[437] भवेंतो सत्ताबेज्झान्गे इन्द्रियाणि बलानि च,॥
झाणासोखुम्मसम्पन्नो विहारिसं अनासावो॥ ॥

[438] विप्पामुत्तṃ किलेसेहि शुद्धचित्तṃ अनाविलाṃ,॥
अभिहन् पच्चवेक्खन्तो विहारिसं अनासावो॥ ॥

[439] अज्झट्टṃ च बहिद्ध च ये मे विज्जीसु आसव,॥
सब्बे असेसा उचिन्ना न च उप्पज्जरे पुना॥ ॥

[440] पंचकखंडा परिण्णाता तिथन्ति छिन्नमूलका,॥
दुक्खक्खयो अनुप्पत्तो नत्थि दानि पुनब्भवोऽ ति.॥ ॥

[436] आनंद और परमानंद की उमड़ती लहर से
यह नश्वर शरीर पूरी तरह से सराबोर है।
चाहे मुझे कितनी भी कठिन और कठोर परिस्थितियों का सामना करना पड़े,
फिर भी मैं जंगल में जीवित रहूंगा। [2]

[437] ज्ञान की सात शाखाओं का अभ्यास करते हुए,
पाँच शक्तियों का, बल भी, [3] विचार की अलौकिक ऊँचाइयों में मग्न होकर,
मैं जंगल में रहूँगा।

[438] सभी भ्रष्ट विचारों से मुक्त होकर,
शुद्ध और निर्मल हृदय से,
अक्सर ध्यान में लीन होकर,
मैं जंगल में रहूँगा।

[439] और वे सभी मादक पदार्थ (अपवित्रता/इच्छाएँ) जो कभी
भीतर, बाहर, मेरे जीवन पर हावी थे,
तराशकर बाहर फेंक दिए गए हैं, और
फिर कभी मेरे लिए नहीं उठेंगे।

[440] पाँच कारक समझे गए हैं, [4] फिर भी टूटी हुई जड़ के साथ बने हुए हैं।
अब दुःख का अंत हो गया है,
और मेरे लिए सभी पुनर्जन्म हो चुके हैं।

[1] ब्राह्मण (पुजारी) स्नातक और हमारे योद्धा के पवित्र स्नान के बीच घनिष्ठ संबंध है। एक न्हाटक को 'सीबी', स्नान का साथी कहना अनुचित नहीं होगा।

[2] देखें वक्काली, सीसीवी.

[3] तुलना करें. संकलन, पृ. 180, एफ, डी, ई.

[4] = सी.एक्स.
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(221):ब्रह्मदत्त

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

अध्याय VI.
छह श्लोक
221. ब्रह्मदत्त
बुद्ध युग में सावत्थी में कोसल के राजा के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, ब्रह्मदत्त नाम से, उन्होंने जेतवन के उद्घाटन के समय बुद्ध की महिमा देखी, अपने विश्वास के कारण भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और समय के साथ छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान/आध्यात्मिक शक्तियां) प्राप्त की, साथ ही धर्म (धम्म) के अक्षर और अर्थ की पूर्ण समझ भी प्राप्त की।

एक दिन जब वे भिक्षा मांगने निकले थे, तो एक ब्राह्मण (पुजारी) ने उन्हें अपशब्द कहे। थेरा चुपचाप सुनते रहे और अपने काम में लगे रहे। ब्राह्मण (पुजारी) ने फिर उन्हें अपशब्द कहे, और लोगों ने थेरा की चुप्पी पर टिप्पणी की। इस पर ब्रह्मदत्त ने उन्हें उपदेश देते हुए कहा:

[441] अक्कोधस्सा कुतो कोधो दन्तस्सा सवजीविनो,॥
सम्मादानना विमुत्तस्सा उपसंतस्सा ताडिनो, ॥ ॥

[442] तस्सेवा [47] तेन पापियो यो कुद्धौ पत्तिकुज्जति,॥
कुद्धौ अप्पटिकुज्जन्तो सङ्गमाऽ जेति दुज्जयौ॥ ॥

[443] उभिन्नमत्थṃ कैरति अत्तानो सीए परसा कैṃ॥
पराऽसंकुपितां नात्वा यो सातो उपसम्मति॥ ॥

[444] उभिक्काṃ टिकिकचांटाṃ ताṃ अत्तानो सीए परसा सीए,॥
जन मन्नन्ति बलोति ये धम्मस्सा अकोविदा॥ ॥

[441]
क्रोध से रहित , अपने मार्ग के समरूप प्रवाह पर चलने वाले,
आत्म-संयमित, शांत और सर्वोच्च अंतर्दृष्टि से मुक्त व्यक्ति के लिए क्रोध कहाँ से उत्पन्न होता है ?

[442] इन दोनों में सबसे बुरा वह है जो निंदा किए जाने पर, [224] फिर निंदा करता है। जिसने निंदा किए जाने पर फिर निंदा नहीं की , वह दोहरी जीत हासिल करता है। [1]

[443] वह दूसरे और स्वयं दोनों का
भला चाहता है; क्योंकि वह दूसरे के क्रोधित स्वभाव को
समझ गया और उसने स्वयं को शांत किया।

[444]
जो स्वयं और दूसरे का भी चिकित्सक है, उसे
लोग मूर्ख समझते हैं, क्योंकि वे धम्म मार्ग को नहीं जानते।

तब निंदा करने वाले ब्राह्मण (पुजारी) ने ये शब्द सुनकर व्यथित और प्रसन्न दोनों हुए और थेरा से क्षमा मांगी। जी हाँ, उन्होंने उनके अधीन दीक्षा ली और दूसरों के प्रति प्रेम का ध्यान करने का अभ्यास सीखा, इस प्रकार थेरा ने उन्हें क्रोध के आवेश से मुक्त किया।

[445] उप्पज्जे ते सासे कोधो अवज्जा काकाकूपमाm,॥
उप्पज्जाजे सीई रसे तन्हा पुत्तमंसुपमं सरा॥ ॥

[446] ससे धावति चित्तौ ते कामेसु च भावेसु च,॥
खिप्पां निग्ग-अन्हा सतीया किठदां विया डुप्पासुं' ती॥ ॥

[445] यदि तुममें क्रोध उत्पन्न हो, तो
आरी की आकृति पर विचार करो; और यदि
लालसा उत्पन्न हो, तो स्वयं को तृप्त करो, उस दृष्टांत को याद करो
कि कैसे उन्होंने बच्चे को खाया।

[446] यदि स्वर्ग और पृथ्वी में नए जीवन की लालसा में
तुम्हारा हृदय बेकाबू हो जाए, तो हे, इसे तुरंत
सचेतनता से रोको और नियंत्रित करो, जैसे कि मनुष्य
युवा मक्का चरने वाले अतिक्रमणकारी में उस जानवर को पाते हैं, और उसे बांध देते हैं। [2]

[1] शाब्दिक रूप से, निंदा करने वाले को वापस निंदा करता है। तुलना करें I. पेट. ii. 23; धम्मपद, श्लोक 133.

[2] ये तीन दृष्टांत बुद्ध को समर्पित तीन प्रवचनों में मिलते हैं: मज्झ., i. 129; संयुत्त, ii. 98; iv. 196. सुमेधा (सिटर्स, पृ. 173) द्वारा सूत्रों से उपमाओं का एक समान संदर्भ दिया गया है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(222):सिरिमंदा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (222) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
222. सिरिमण्ड
बुद्ध युग में, सुंशुमारागिरा में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने भेषकला वन में भगवान (बुद्ध) के उपदेश सुनकर प्राप्त श्रद्धा से भिक्षु संघ में प्रवेश किया। [1] एक पर्व के दिन, जब वे उस स्थान पर बैठे थे जहाँ प्रस्तावना के पाठ के अंत में पाटीमोक्खा (स्वीकारोक्ति) [225] का पाठ किया जाना था [2] ...'क्योंकि [दोष] जब स्वीकार किया जाता है तो उसके लिए प्रकाश हो जाता है,' उन्होंने छिपे हुए दोषों की स्वीकारोक्ति से प्राप्त लाभ पर विचार किया, और उस पर उत्सुकता और प्रसन्नता के साथ कहा: 'हे भगवान (बुद्ध) का नियम कितना पूर्णतः पवित्र है!' और इस प्रकार अंतर्दृष्टि का विस्तार करते हुए उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। प्रसन्न हृदय से उस मार्ग की समीक्षा करते हुए, उन्होंने भिक्षुओं को संबोधित किया:

[447] चन्नमतिवस्सति विवत्तं नतिवस्सति,॥
तस्मा चन्नं विवरेथा एवं तं नातिवस्सति॥ ॥

[448] मैककुनाभहातो लोको जराया परिवारो,॥

तन्हासलेना ओटिनो इच्छाधूपयितो 2 सदा॥ ॥

[449] मैककुनाभहातो लोको परिक्खितो जराया च,॥
हन्नति निक्कमत्तानो पत्तदंडोएँव तक्कारो॥ ॥

[450] अगच्चन्तग्गीखंडहाव मक्कु व्याधि जरा तयो,॥
पक्कुग्गंतुṃ बलाṃ नत्थि जावो नत्थि पलयितुṃ॥ ॥

[451] अमोघṃ दिवासां कयिरा अप्पेना बहुकेना वा,॥
यं य विजाहते रत्ति तदुन्नं तस्स जीवितं॥ ॥

[452] कैराटो तिथथो वा पि असिनासयानस्सा वा,॥
उपेति कारिमा रत्ती न ते कालो पमाज्जितुन' ती॥ ॥

[447] दोष छिपाए जाने पर अपराधबोध की वर्षा भारी पड़ती है
; जहाँ दोष स्पष्ट रूप से प्रकट होता है वहाँ कम भारी पड़ती है [3]

[448] मृत्यु से संसार बहुत कुछ हार जाता है; बुढ़ापे
और क्षय से यह घिरा और त्रस्त हो जाता है,
लालसा के तीर से हमेशा के लिए छेदा जाता है,
परेशान करने वाली इच्छाओं की खुजली से त्रस्त हो जाता है।

[449] मृत्यु से संसार गुलाम बना है; उम्र
और क्षय से सुरक्षित, संरक्षित, [4] बिना किसी शरण के, हमेशा के लिए
चोर द्वारा लाठी और तलवार से मारा गया। [5]

[450] जंगल की आग की तरह उन्हें पास आते देखो: -
मृत्यु और रोग, क्षय, भयानक त्रिमूर्ति,
जिनका सामना करने के लिए कोई ताकत पर्याप्त नहीं है, हाँ,
भागने के लिए कोई तेज़ी भी काम नहीं आती।

[451] अपने दिन को व्यर्थ न होने दो,
चाहे थोड़ा हो या बहुत।
क्योंकि हर दिन और रात [6] जो तुम बर्बाद करते हो,
उतना ही कम जीवन तुम्हारे पास जीने के लिए बचता है।

[452] चाहे तुम चलो, खड़े रहो, बैठो या लेट जाओ,
तुम्हारे लिए जीवन का अंतिम दिन निकट आ रहा है;
तुम्हारे पास लापरवाही से आराम करने का समय नहीं है। [7]

[1] तुलना करें XVIII.

[2] निदान. विनय ग्रंथ देखें, i. 1 f.

[3] यह श्लोक विनय ग्रंथों, iii. 805 में बुद्ध को समर्पित है। 'दोष', 'दोष' व्याख्याएँ हैं, वहाँ का संदर्भ और यहाँ की टिप्पणी उपमा के प्रयोग को उचित ठहराती है।

[4] सांग्य., i. 40 में मिलता है ।

[5] ' सत्थदण्डो पढ़ना.

[6] शाब्दिक रूप से, केवल 'रात'। भारतीय 'दिनों' के साथ-साथ 'रातों' से भी उतना ही जाना जाता है।

[7] तुलना करें. बहनें, श्लोक 95.
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(223): सब्बाकामा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (223) ------>>>> अगला

अध्याय VI.
छह श्लोक
223. सब्बकामा
बुद्ध युग में, परम पूज्य बुद्ध के देहांत के बाद, वैशाली में एक कुलीन कुल में पुनर्जन्म लेकर, सब्बकाम नाम से, उन्होंने वयस्क होने पर अपने परिवार को दान और संपत्ति दी, और अपनी धार्मिक प्रवृत्ति का पालन करते हुए संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करके) धम्म के संहारक के अधीन दीक्षा ली। [1] अपनी पढ़ाई के दौरान वे अपने गुरु के साथ वैशाली लौटे और अपने परिवार से मिलने गए। उनकी पूर्व पत्नी, दुखी, दुबली-पतली, दयनीय वस्त्रों में और आँसुओं से भरी हुई, उनका अभिवादन करने के लिए खड़ी थीं। उन्हें इस प्रकार देखकर, उनके मन में दया से प्रेरित स्नेह उत्पन्न हुआ, और वर्तमान विषय पर गहन दृष्टि खोकर, उन पर कामुक भावनाएँ हावी हो गईं। तब कोड़े की मार से प्रचंड घोड़े की तरह, वे पीड़ा से भर गए, और व्यथित चीजों का पाठ सीखने के लिए श्मशान घाट चले गए। उस चिंतन से, उन्होंने अंतर्दृष्टि का विस्तार किया और अर्हंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। अब उनके ससुर अपनी बेटी को एक बार फिर उत्तम वस्त्रों से सजाकर, बड़ी संख्या में सेवकों के साथ विहार (मठ) में लाए, ताकि उन्हें मठ छोड़ने के लिए मना सकें, लेकिन थेरा ने उन्हें बताया कि उन्होंने इस प्रकार की सभी इच्छाओं को त्याग दिया है:

[453] दिपाडाकोयै असुसि दुग्गंदहो परिहिरति,॥
नानाकुणपापरिपूरो विस्वन्तो ततो ततो॥ ॥

[454] मिगाŋ निलिनाŋ कुएना बासीसेनेवा अंबुजाŋ,॥
वानरं विया लेपेण बधायन्ति पुथुज्जन:॥ ॥

[455] रूपा सदा रस गंधा फोथब्बा च मानेरामा,॥
पञ्चकामागुणा एते इत्थि रूपस्मि डिससारे॥ ॥

[456] ये [48] एता उपसेवंती रत्तचित्ता पुथुज्जना,॥
वन्धेन्ति कस्तसिघो घोराअनाचिन्ति पुनभभव:॥ ॥

[457] यो सीता परिवज्जेति सप्पासेवा पदा सिरो,॥
सोऽमाŋ मिसत्तिकाŋ लोके सातो समतिवत्तति॥ ॥

[458] कामेस्वदीनवं दिस्वा नेक्खम्मं दथु खेमतो,॥
निस्सातो सब्बाकामेहि पत्तो मे आसवक्खयो' ति.॥ ॥

[453] यह बदसूरत, अशुद्ध, दुर्गंधयुक्त वस्तु,
गंदी चीज़ों से भरी हुई, इधर-उधर घटती-बढ़ती हुई,
हमारी सारी चिंताओं में सबसे प्रमुख है। [2]

[454] आह, छल से छिपा हिरण, जैसे मछली काँटे से,
जैसे बंदर छल से, वैसे ही संसार फँसा हुआ है।

[455] दृश्य, ध्वनियाँ और स्वाद, गंध और स्पर्श करने योग्य वस्तुएँ,
वह आनंद और आकर्षण, इंद्रियों का पंचांग मार्ग:
ये सभी स्त्री के रूप में संयुक्त रूप से दिखाए गए हैं।

[456] [227] सांसारिक लोग, जो हृदय में प्रज्वलित होकर उसका पीछा करते हैं
और उसे रिझाते हैं, मृत्यु के भयानक मैदान को भर देते हैं [3] और पुनर्जन्म का संचय करते हैं।

[457] परन्तु जो इससे पूरी तरह दूर रहता है, जैसे पैर से
सर्प के सिर को दूर रखा जाता है, वह सतर्क रहकर
संसार के इस विषैले पदार्थ से बच जाता है। [4]

[458] और मैं, जिसने इंद्रिय-इच्छाओं में बुराई देखी
और त्याग में सुरक्षा देखी, देखो!
सांसारिक उद्देश्यों की प्रशंसा करने वाली सभी चीजों से विरक्त होकर,
सभी मादक पदार्थों (विकारों/इच्छाओं) का अंत कर दिया है। [5]

[1] आनंद. सब्बाकामा संभवतः विन का सब्बाकामा है । ग्रंथ, iii. 404.

[2] = सुत्त-निपिता, i. 11, 13. मेरी तीसरी पंक्ति paṭihīrati (ṅhiriijati के लिए) शब्द का विस्तार करती है ।

[3] तुलना करें बहनें, श्लोक 502; उदाना, vi. 8; विन. ग्रंथ, iii. 390.

[4] लालसा (सी.)। तुलना करें श्लोक 400, 401.

[5] श्लोक 122 देखें।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(224):सुंदर-समुद्दा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (224) ------>>>> अगला

अध्याय VII.
सात श्लोक
224. सुंदर-समुद्दा
बुद्ध युग में राजगृह में एक अत्यंत धनी सलाहकार के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम समुद्दा रखा गया। अपनी सुंदरता के कारण वे सुंदर-समुद्दा के नाम से प्रसिद्ध हुए। [1] अपनी युवावस्था में उन्होंने राजगृह में बुद्ध के आगमन के उत्सव में बुद्ध की महिमा देखी और श्रद्धा एवं सहज प्रवृत्ति से प्रेरित होकर संसार त्याग कर भिक्षु संघ में प्रवेश किया। एक संदेश के साथ वे राजगृह से सावत्थी गए और वहाँ एक गुणी मित्र के साथ रहकर अंतर्मन का अभ्यास करने लगे। राजगृह में उनकी माता ने अन्य सलाहकारों के पुत्रों और उनकी पत्नियों को उत्सव में उत्तम वस्त्रों में सजे-धजे आनंद मनाते देखा तो उन्हें अपने पुत्र की याद आई और वे रोने लगीं। एक वेश्या ने उन्हें सांत्वना देने के लिए उन्हें वापस लाने का प्रस्ताव रखा। माता ने वादा किया कि यदि वह ऐसा करेगी और उनका पुत्र उससे विवाह करेगा, तो वह उसे परिवार की स्वामिनी बना देगी और उसे अनेक उपहार दिए। अच्छी तरह से सजी-संवरी होकर वह सावत्थी गई और एक घर में रुकी जहाँ थेरा प्रतिदिन भिक्षा मांगने आते थे। उसने थेरा की विशेष सेवा करवाई और स्वयं को सजे-धजे और सोने की चप्पलों में प्रदर्शित किया। एक दिन, घर के द्वार पर चप्पलें उतारकर, [229] उसने गुजरते समय हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया

और मोहक अंदाज में उन्हें अंदर आने का निमंत्रण दिया। तब थेरा, सांसारिक विचारों से विचलित होकर, वहीं पर सर्वोच्च प्रयास करने का संकल्प लिया और खड़े-खड़े ध्यान लगाकर छह प्रकार का अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त किया। इस विषय में कहा गया है:

[459] अलंक्ता [49] सुवासना मालाभारी1 विभूसिता,॥
अलत्तककटपाद पादुकारुयः वेसिका॥ ॥

[460] पादुका ओरुहित्वाना पुरतो पंजलिकता,॥
स मण सान्हेन मुदुना मिहितापुब्बं आभासथ॥ ॥

[461] युवसि त्वाऽ पब्बजितो तिथःहि मम ससाने,॥
भुञ्ज मानुसके कामे अहं वित्तं ददामि ते॥ ॥

[462] सक्का ते पतिजानामी अग्गीṃ वा ते हरामहाṃ,॥
यदा जिन्ना भविस्सामा उभो दण्डपरायणा,॥
उभो पि पब्बाजिस्सामा उभयत्था कटग्गहो॥ ॥

[463] तां च दिस्वाना याकांति वेसिकं पंजालिकातां,॥
अलंकतं सुवासनं मक्कुपासं व ओदिताṃ.॥ ॥

[464] ततो मे मनसिकारा योनिसो उदपज्जथा,॥
आदिनावो पतुराहु निब्बिदा समतिथथा॥ ॥

[465] ततो चित्ताṃ विमुची मे पासा धम्मसुधम्मताṃ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससानं' ति.॥ ॥

[459] भव्य प्रदर्शन के लिए सजी-धजी,
मुकुट में फूलों की माला और कई रत्नों से सजी,
लाख से लाल हुए पैरों में चप्पल पहने,
शहर की एक महिला मेरे पास आई।

[460] चप्पल पहने हुए, सिर पर हाथ रखकर अभिवादन करते हुए,
कोमल, मधुर स्वर में और प्रारंभिक प्रशंसा के साथ:

[461] 'इतनी जवान, इतनी सुंदर, और क्या तुमने संसार त्याग दिया है (भिक्षुत्व के लिए)?
यहीं मेरे नियमों और विधानों के अंतर्गत रहो।
मानवीय सुखों का भरपूर आनंद लो। देखो,
मैं तुम्हें इसके लिए सभी साधन उपलब्ध कराऊंगा।
नहीं, मैं तुम्हें सच बता रहा हूं।
या यदि तुम्हें संदेह है, तो मैं तुम्हारे लिए आग लाऊंगा और शपथ लूंगा।'

[462] जब तुम और मैं बूढ़े हो जाएँगे, तो हम दोनों
सहारा लेने के लिए अपनी लाठी उठाएँगे, और इस प्रकार
हम दोनों संसार को (भिक्षुत्व के लिए) छोड़ देंगे और दोनों तरह से जीत हासिल करेंगे।

[463] उस सार्वजनिक स्त्री को विनती करते हुए
और चमकीले रंगों के वस्त्र पहने हुए,
साहसपूर्वक कपड़े पहने हुए, मानो मारा (मृत्युदेव/शैतान) द्वारा बिछाए गए जाल की तरह, प्रणाम करते हुए देखकर,

[464] [230] इसी कारण मुझमें गहरा दृष्टिकोण उत्पन्न हुआ:
तथ्य और कारण पर ध्यान।
सारी पीड़ा स्पष्ट थी;
मन में अरुचि और उदासीनता थी;

[465] और इस प्रकार मेरा हृदय मुक्त हो गया।
हे देखो, धर्म (धम्म) के इस सुशोभनीय भिक्षु क्रम को!
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध द्वारा हमें जो कुछ भी करना बाकी है, वह सब कर लिया है।

[1] सुंदरा-समुद्दा = सुंदर समुद्र। समुद्दा का कैनन में कहीं और कोई स्थान नहीं है, लेकिन उनका उपनाम केवल विनय में उद्धृत राजगृह के एक भिक्षु (भिक्षु) के नाम के रूप में, या उस प्रकार के भिक्षु (भिक्षु) के रूप में दिखाई देता है जिसने सेंट एंथोनी के समान कष्टों का सामना किया (विनय, iii. 86)।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(225):लकुंटका-भद्दिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (225) ------>>>> अगला

अध्याय VII.
सात श्लोक
225. लकुंटक-भद्दिया
भगवान बुद्ध के समय में, श्रावस्ती में एक समृद्ध परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम भद्दिया रखा गया, लेकिन अपनी अत्यधिक बौनेपन के कारण वे लकुंतक (बौना)-भद्दिया के नाम से जाने जाते थे। भगवान बुद्ध का उपदेश सुनकर, उन्होंने भिक्षुओं का मार्ग अपनाया और विद्वान एवं वाक्पटु बनकर, मधुर स्वर में दूसरों को उनका काम सिखाते थे। एक त्यौहार के दिन, शहर की एक स्त्री, जो एक ब्राह्मण (पुजारी) के साथ रथ में सवार थी, ने थेरा को देखा और अपने दांत दिखाते हुए हंस पड़ी। [1] थेरा ने उन दांतों की पंक्ति को एक संकेत मानकर ध्यान का अनुभव किया और उसी के आधार पर अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अनागामी (अनगामी) बन गए। [2] और शरीर के प्रति सजगता का अभ्यास करने के बाद, [3] जो मार्ग के सेनापति (सारिपुत्र) द्वारा निर्देशित किया गया था, [4] वे अरहंत (ज्ञानोदय) में स्थापित हो गए। बाद में उन्होंने इस प्रकार अन्ना (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की:

[466] पारे अंबाकारमे वनसंदमहि भद्दियो,॥
समुळान् तंहमब्बुयः तत्थ भद्दो झाययति।॥॥

[467] रमन्तेके मुतिउन्गेहि विनाहि पणवेहि च,॥
अहं च रुक्खमूलस्मिं रतो बुद्धस्स ससाने॥॥

[468] बुद्धो सीई मे वरअ दज्जा सो कै लब्भेथा मे वरो,॥
गणेहाṃ सब्बलोकास्सा निक्काṃ कायागतौ सतिṃ.॥॥

[469] ये माओ रूपेना पमिअसु ये सीए गेसेना अनवागु,॥
चंद्रागवसुपेता न मां जानन्ति ते जना॥॥

[470] अज्झत्तं च न जानाति बहिद्ध च न पस्सति,॥
समन्तवराणो बालो सा वे घेसेना वुयहति॥॥

[471] अज्झत्तं च न जानाति बहिद्ध च विपश्यति,॥
बहिद्ध फलदस्वि सोऽपि घोसेना वुयहति॥॥

[472] अज्झत्तं च पजानाति बहिद्धा च विपश्यति,॥
अनावरणदासवि न सो घोषेण वुयहति' ति.॥ ॥

[466] अंबताका के बागों से परे, [5] जंगली जंगल में, क्रीड़ा और क्रीड़ा की जड़
से विमुख होकर, और गहरी तल्लीनता (समाधि/समाधि) में लीन होकर,
वहाँ सुखी सौभाग्यशाली भद्दिया बैठा है।

[467] [231] और कुछ लोग झांझ, [6] वीणा और ढोल से मोहित हैं,
और मैं अपने पेड़ों की हरी-भरी छाया में
बुद्ध के नियम से मंत्रमुग्ध होकर रहता हूँ।

[468] बुद्ध मुझे एक वरदान प्रदान करें, और यदि वह वरदान मेरा हो, तो मैं आत्म-नियंत्रण में शाश्वत अध्ययन
को सर्वदा चुनूंगा ।

[469] जो लोग मेरे रूप के लिए मेरी निंदा करते हैं, और जो
लोग मेरी आवाज़ को मंत्रमुग्ध होकर सुनते हैं, ऐसे लोग
कामवासना और आवेग के जाल में मुझे नहीं जानते।

[470] मूर्ख चारों ओर से घिरा हुआ है, वह
आंतरिक जीवन को नहीं जानता, न ही बाहरी चीजों को देखता है,
और वास्तव में एक आवाज से बहक जाता है।

[471] और यदि वह आंतरिक जीवन को नहीं जानता,
फिर भी बाहरी चीजों को समझ सकता है,
केवल बाहरी फलों को देखकर,
वह भी एक आवाज से बहक जाता है।

[472] जो आंतरिक जीवन को समझता है,
और बाहरी चीजों को भी समझता है,
स्पष्ट दृष्टि वाला, किसी भी आवाज से बहकाया नहीं जाता। [7]

[1] किसी का परीक्षण सीलोन के थेरा महा तिस्सा के लिए समान रूप से प्रभावी साबित हुआ। देखें अत्थासलिनी, पृ. 200; बुड. साइ., पृ. 70 n.

[2] अरहंत (प्रबुद्ध) से ठीक नीचे मोक्ष का वह स्तर, जिसमें एक और जीवन के बाद दूर के स्वर्गों में से एक में अंतिम मृत्यु आनी है।

[3] देखें. संवाद, ii. 328 f.

[4] सारिपुत्त.

[5] यह पार्क संभवतः मच्चिकासाण्ड में है, जिसे चित्त ने भिक्षुओं के संघ को दिया था (धम्मपद टीका, ii. 74)।

[6] मुटिंगेही का अर्थ है ढोल की एक किस्म। इस वाद्ययंत्र की भारतीय प्रजातियों की संख्या के लिए हमारी ढोल नामकरण प्रणाली अपर्याप्त है। मधुर आवाज संभवतः संगीत की समझ के साथ थी, और यही कारण है कि वह संगीत को अपने स्वयं के परम आनंद के स्रोत के बाद दूसरे स्थान पर रखता है।

कायगतासति का अर्थ 'स्वयं पर नियंत्रण का अध्ययन' नहीं है, बल्कि 'इंद्रियों के द्वारों का ध्यान रखना' (शरीर के द्वारों का ध्यान रखना) है।

[7] भद्दिया (नाम का अर्थ है फेलिक्स, फॉर्च्यूनाटस; उनका उपनाम उन्हें अन्य भद्दिया से अलग करता है, देखें CCLIV.) अंग., i. 25 में सभी भिक्षुओं में सबसे मधुर स्वर वाले के रूप में वर्णित हैं। कहा जाता है कि यह विशिष्टता पद्ममुत्तरा बुद्ध से पहले, बीते युगों में की गई एक आकांक्षा का परिणाम थी। इस आकांक्षा के विकासवादी प्रभाव के कारण विपस्सी बुद्ध के अधीन उनका पुनर्जन्म एक 'बहुरंगी पंखों वाली कोयल' (चित्त-पट्टकोकिला) के रूप में हुआ, जो भारत में एक मधुर चहचहाने वाली चिड़िया है। साई. उनकी इच्छा की पूर्ति का उल्लेख नहीं करता है, लेकिन कविता इसका संकेत देती है। 'स्वयं पर नियंत्रण का अध्ययन': कायगतासतिं।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(226):भड्डा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (226) ------>>>> अगला

अध्याय VII.
सात श्लोक
226. भद्दा
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक पार्षद के परिवार में हुआ, जो अब तक निःसंतान माता-पिता की संतान थे। [232] देवताओं से प्रार्थना करने के बाद भी उन्हें कोई संतान नहीं हुई थी। वे भगवान (बुद्ध) के पास यह कहते हुए गए, 'हे पूज्य, यदि हमें संतान प्राप्ति हो तो हम उसे आपके सेवक के रूप में आपको अर्पित करेंगे।' उन्होंने उसका नाम भद्दा (फॉस्टस) रखा और जब वह सात वर्ष का हुआ, तो उन्होंने उसे सर्वोत्तम वस्त्र पहनाए और भगवान (बुद्ध) के पास यह कहते हुए ले गए, 'हे पूज्य, यह वही संतान है जो हमें आपसे प्रार्थना करने के बाद प्राप्त हुई है; हम इसे आपको सौंपते हैं।' भगवान (बुद्ध) ने आनंद से उन्हें भिक्षु दीक्षा देने का अनुरोध किया और सुगंधित कक्ष में चले गए। आनंद ने उन्हें शिक्षा दी और उनमें इतनी प्रबल आध्यात्मिक क्षमता विकसित हो गई कि अध्ययन करते समय, सूर्योदय होते ही, उन्होंने ध्यान साधना की अवस्था में प्रवेश किया और छह प्रकार की अभिज्ञा (आध्यात्मिक शक्तियों का उच्चतर ज्ञान) प्राप्त कर ली।

अब भगवान (बुद्ध) को पता चला कि क्या हुआ है, और उन्होंने पुकारा, 'आओ, भद्दा!' अतः वह हाथ जोड़कर भगवान (बुद्ध) को प्रणाम करते हुए चले गए। यही उनका भिक्षुत्व में दीक्षा संस्कार था। और यह बुद्ध-दीक्षा, [1] थेरा, अपने जन्म से ही, इस प्रकार अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार करते हुए महिमामंडित हुई:

[473] एकापुट्टो अहाŋ असिŋ पियो मातु पियो पितु॥
बहुहि वातक्रियाहि लद्धो अयाकनहि चा॥ ॥

[474] ते च मां अनुकम्पाया अत्थकामा हितेसिनो,॥
उभो पिता च माता च बुद्धस्स उपनामायुं, ॥ ॥

[475] किच्चा लद्धो अयं पुत्तो सुखुमालो सुखेधितो,॥
इमां ददामा ते नाथ जिनस्सा परिचरका। ॥ ॥

[476] सत्था च माŋ पटिग्गयहा आनंदं एतदब्रवि,॥
पब्बाजेहि इमाँ खिप्पां हेस्सत्याजणियो अयं॥ ॥

[477] पब्बाजेतवना माऽ सत्था विहारं पविसी जिनो,॥
Anoggatasmiŋ suryasmiŋ tato cittaŋ vimucci me.॥ ॥

[478] ततो सत्था निराङ्कत्वा पतिसन्नावुऽथतो,॥
एहि भद्दा' ती मन अहा सा मे आसुपसम्पदा॥ ॥

[479] जाति सत्तवसेन लद्धा मे उपसम्पदा,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता अहो धम्मसुधम्मता' ति.॥ ॥

[473]
मैं अपनी माँ और अपने पिता की इकलौती संतान थी । अनेक रीति-रिवाजों
और बहुत से अनुष्ठानों से मेरा पालन-पोषण हुआ, हाँ,
और बहुत सी प्रार्थनाओं से भी। उन्होंने मुझ पर कृपा की।

[474] मेरी अच्छी इच्छा और मेरी खुशी
ने मुझे - पिता और माता को भी -
धन्य बुद्ध की उपस्थिति में पहुँचाया।

[475] 'यह हमारा बच्चा अभी-अभी मिला है,
और वह नाज़ुक और कोमल रूप से पाला-पोसा गया है।
हे प्रभु, हम उसे आपको सौंपते हैं, ताकि वह
विजेता की सेवा में सेवक बनकर रहे।'

[476] भगवान (बुद्ध) मुझे अपने पास ले गए और इस प्रकार
आनंद से कहा: '
इस बच्चे को जल्दी स्वीकार करो, क्योंकि यह एक शुद्ध नस्ल का होगा।'

[477] और फिर, मेरे बाहर आने की अनुमति देते हुए,
विजेता रात बिताने के लिए चले गए।
और जैसे ही सूर्योदय हुआ,
देखो! तब मेरा हृदय मुक्त हो गया।

[478] [233] तब अपना कार्य पूरा करने के लिए भगवान (बुद्ध),
शांति से जागृत होकर: 'आओ, भद्दा!' मुझे पुकारा;
उसी से मुझे भिक्षुत्व में दीक्षा दी गई।

[479] सात वर्ष मेरे थे जब मुझे इस प्रकार भिक्षुत्व की दीक्षा दी गई।
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है।
धम्म के योग्य संघ को नमस्कार!
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(227):सोपाका2
श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (227) ------>>>> अगला

अध्याय VII.
सात श्लोक
227. सोपाका2
बुद्ध युग में एक अछूत की पत्नी से पुनर्जन्म लेकर, जन्म के अनुसार उन्हें सोपाका (अछूत) कहा गया। कुछ लोग कहते हैं कि उनका जन्म एक व्यापारी परिवार में हुआ था। अपदान ग्रंथ (पालिया) इस बात का खंडन करता है ।

जब मैंने अपने अंतिम जन्म पर विजय प्राप्त की, तब
मैं सोपाका की कोख में आया।

जन्म के चार महीने बाद ही सोपाका ने अपने पिता को खो दिया और उसका पालन-पोषण उसके चाचा ने किया। जब सोपाका सात वर्ष का था, तब उसके गुस्सैल बेटे ने उसे बच्चे को मार डालने के लिए उकसाया। इसलिए वह उसे श्मशान घाट ले गया, उसके हाथ बांध दिए और उसकी गर्दन एक शव से बांध दी, यह सोचते हुए कि 'गीदड़ों और अन्य जीवों को उसे खा जाने दो,' क्योंकि वह स्वयं उस बच्चे को नहीं मार सकता था, जो अपने अंतिम जन्म को प्राप्त कर चुका था। गीदड़ और अन्य जीव आए और आधी रात को बच्चा रोने लगा:

ओह, मेरे लिए क्या भाग्य लिखा है,
या इस अकेले अनाथ का रिश्तेदार कौन है!
भयानक मृत्युक्षेत्र में बंधा हुआ,
मुझे अपना मित्र कौन मिलेगा? [1]

उस समय भगवान (बुद्ध) ने यह देखते हुए कि कौन से साथी मनुष्य उद्धार के योग्य हैं, [2] बालक के हृदय में अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) की अवस्थाओं को चमकते हुए देखा [234] और एक शानदार दिव्य छवि प्रकट करके उसका ध्यान आकर्षित किया, और कहा:

तो आओ, सोपाका, डरो मत;
तथागत (अर्थात बुद्ध) को देखो!
मैं, हाँ मैं ही, तुम्हें पार ले जाऊँगा,
जैसे चंद्रमा राहु के जबड़ों से सुरक्षित आता है। [3]

बुद्ध की शक्ति से बालक ने अपने बंधन तोड़ दिए, और श्लोक के अंत में, सुगंधित कक्ष के सामने, सोतापना (निर्वाण की पहली समाधि) के रूप में, वह एक धारा-विजेता के रूप में खड़ा था। [4] अब उसकी माता उसे खोज रही थी, और चाचा ने उसे कुछ नहीं बताया, इसलिए वह यह सोचकर भगवान (बुद्ध) के पास गई कि 'बुद्ध भूत, भविष्य और वर्तमान सब कुछ जानते हैं।' जब वह आई, तो भगवान (बुद्ध) ने इद्धि द्वारा बालक को छिपा लिया , और उससे यह कहते हुए, 'हे प्रभु, मुझे मेरा पुत्र नहीं मिल रहा है, फिर भी भगवान जानते हैं कि वह क्या कर रहे हैं?' उन्होंने उत्तर दिया:

पुत्र न तो आश्रय होते हैं, न पिता, न ही कोई पारिवारिक रिश्तेदार।
मृत्यु से घिरे व्यक्ति के लिए रक्त संबंध कोई शरण नहीं है, ... [5]

अत: उन्होंने उसे धम्म का मार्ग सिखाया। सुनकर वह धारा-विजेता बन गई, परन्तु बालक अरहंत (प्रबुद्ध) हो गया। तब भगवान ने इद्धि वापस ले ली, और वह अत्यंत प्रसन्न होकर अपने पुत्र को देखकर प्रसन्न हुई। यह सुनकर कि वह अरहंत (प्रबुद्ध) हो गया है, उसने उसे संसार त्यागने (सन्यास में जाने) के लिए कहा और स्वयं चली गई। [6]

अब वह आया और सुगंधित कक्ष की छाया में टहलते हुए भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और उनके पीछे-पीछे चला। और परम पूज्य (बुद्ध) ने उसे भिक्षु दीक्षा देने की इच्छा से उससे दस प्रश्न पूछे, जिनकी शुरुआत इस प्रकार हुई: 'एक क्या है?' [7] उसने भगवान (बुद्ध) के इरादे को समझते हुए, अपने सर्वज्ञता से उत्तर दिया, 'सभी प्राणी भोजन से पोषित होते हैं,' इत्यादि। यहीं से 'बालक-प्रश्नों' का नाम पड़ा। और भगवान (बुद्ध) उसके उत्तरों से संतुष्ट होकर उसे भिक्षु दीक्षा दी। थेरा ने यह सब ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) को स्वीकार करते हुए इस प्रकार बताया:

[480] दिस्व पसादचयायं चाक्कमंतं नरुत्तमं,॥
तत्थ नाउ उपासांकम्मा वंदिसाṃ पुरिसुत्तमṃ॥ ॥

[481] एकं सॅ शिवराऽ कत्वा सङहरित्वन पणयो,॥
अनुचाणकमिस्साँ विराजाँ सब्बसत्तनमुत्तमौ ॥॥ ॥

[482] ततो पान्हे अपुच्छि माṃ पन्हाणां कोविदो विदु,॥
अचम्भि च अभितो च व्याकासिऽ सत्थुनो अहं॥ ॥

[483] विसज्जितेसु पन्हेसु अनुमोदी तथागतो,॥

भिक्खुसंघां विलोकेत्वा इमामत्थाऽ अभासथ.॥॥

[484] लाभ अगनमगधानां यसायं परिभुञ्जति,॥
शिवराऽपिण्डपताऽ च पच्चयं सयाणासनाऽ,॥
पच्चुथनां च समीसीं तेसां लाभति काब्रवी।॥॥

[485] अज्जतग्गे माm सोपाका असनायुपसांकमा,॥
एसा सेवा ते सोपाका भवतु उपसम्पदा॥॥

[486] जाति सत्तवसोहं लद्धाना उपसम्पदां,॥
धर्मेमि अन्तिमं देहं अहो धम्मसुधम्मता' ति.॥॥

[480] छज्जे पर चलते हुए, देखो! मनुष्यों का मुखिया।
मैं वहाँ गया, उनकी उपस्थिति में मनुष्यों के मुखिया की पूजा करते हुए।

[481] मेरा वस्त्र एक कंधे पर लिपटा हुआ था, मेरे जुड़े हुए हाथ आगे की ओर फैले हुए थे,
मैं सभी प्राणियों में सर्वोच्च के पदचिन्हों पर चलता रहा।

[482] तब उन्होंने मुझसे प्रश्न पूछे, वे प्रश्न पूछने में इतने कुशल और इतने बुद्धिमान थे।
और वहाँ अविचलित, निर्भय होकर भगवान (बुद्ध) ने उत्तर दिया।

[483] तथागत (अर्थात बुद्ध) ने पूछे गए प्रश्नों के उत्तरों की प्रशंसा की।
और भिक्षुओं के समूह ने इस बात को उनसे साझा किया।

[484] 'अंग और मगध के लोग भाग्यशाली हैं, जिनसे
वह वस्त्र, भोजन और आवास, औषधि
और उचित आदर प्राप्त करता है, हाँ, वे सुखी हैं!' ऐसा उन्होंने कहा।

[485] 'आज से, सोपाका, जब चाहो मुझसे मिलने आना।
सोपाका, केवल हमारी बातचीत ही तुम्हारा भिक्षुत्व दीक्षा संस्कार होगी।'

[486] सात वर्ष के मेरे जीवन में मुझे इस प्रकार दीक्षा दी गई।
अब मैं अंतिम शरीर धारण करता हूँ। जय हो! सुंदर भिक्षु (बुद्ध) के धम्म मार्ग के आदेश को। [8]

[1] दयाको, परोपकारी.

[2] वेनेय्या - शाब्दिक रूप से, नेतृत्व करने में सक्षम।

[3] तुलना करें. सिस्टर्स, पी.एस. ii.

[4] जेत-विहार में बुद्ध के निवास स्थान।

[5] धम्मपाल, श्लोक 2एस8, 289; पंचारा को, सी.एफ. बहनें, पी. 71.

[6] सी.एफ. यासा की कथा (CXVII) में समान प्रकरण।

[7] ख़ुद्दाका पाठ। सी एफ बहनें, पी. 66.

[8] मैंने इन अपेक्षाकृत सरल और सहज छंदों का लगभग शाब्दिक अनुवाद किया है, इन्हें अधिक सौंदर्यपूर्ण अंग्रेजी में रूपांतरित करने का प्रयास नहीं किया है। यदि इस परंपरा में कोई सच्चाई है, तो इनकी रचना एक आम लड़के ने की थी, जो (गहन प्रश्नों के लिए) स्वाभाविक प्रतिभा से संपन्न था, लेकिन अशिक्षित था। और उसकी युवावस्था और साहित्यिक क्षमता की कमी सरल पाली भाषा में स्पष्ट रूप से झलकती है। पाली और मिगाजाला, कोसिया या कस्सपा बंधुओं की कविताओं के रूप और विषयवस्तु में ज़मीन-आसमान का अंतर है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(228):सरभंगा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (228) ------>>>> अगला

अध्याय VII.
सात श्लोक
228. सरभंगा

बुद्ध युग में राजगृह में एक ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उन्हें पारिवारिक परंपराओं के अनुसार या उनसे स्वतंत्र रूप से एक नाम दिया गया, क्योंकि उनमें कोई विशिष्ट चिह्न नहीं थे [1] [और वह नाम अब लुप्त है]। लेकिन जब वे वयस्क हुए, तो वे तपस्वी बन गए और उन्होंने सरकंडों से एक कुटिया बनाई, जिन्हें उन्होंने तोड़ लिया था, और तब से वे सरभंग - सरकंडा तोड़ने वाले के रूप में जाने जाने लगे। अब परम पूज्य (बुद्ध) ने प्रबुद्ध (दिव्य) दृष्टि से संसार को देखते हुए उनमें अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) के गुण देखे और उनके पास जाकर उन्हें धम्म का मार्ग सिखाया। और वे, विश्वास करके और भिक्षु बनकर, समय आने पर अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया और अपनी कुटिया में ही रहने लगे। यह कुटिया जीर्ण-शीर्ण और जर्जर हो गई, और लोगों ने इसे देखकर कहा: 'हे पूज्य, आप इसकी मरम्मत क्यों नहीं करवाते?' थेरा ने कहा, 'यह कुटिया तब बनाई गई थी जब मैं तपस्या कर रहा था; अब मैं वैसी तपस्या नहीं कर सकता,' और फिर उन्होंने पूरी बात इस प्रकार बताई:

[487] सारे हत्थेहि भंजित्वा कत्वाना कुटिमाचिसां,॥
तेन मे सरभागोति नामां सम्मुतिया आहु॥ ॥

[488] ना [51] मयहाṃ कप्पटे अजजा सारे हत्थेहि भंजितुṃ,॥
सिक्खपादा नो पन्नत्ता गोतमेना यसस्सिना॥ ॥

[489] सकलाṃ समत्तṃ रोगाṃ सरभोगो नद्दसाṃ4 पब्बे,॥
सोऽयं रोगो दिट्ठो वचनाकरेनातिदेवस्सा॥ ॥

[490] येनेवा मैग्गेना गतो विपासि॥
येनेव मग्गेना सिखी च नेस्भु,॥
ककुसन्धकोनागमन च कस्सपो॥
तेनंजसेन अगमसि गोतमो॥ ॥

[491] वितातंहा अनादान सत्त बुद्ध खयोगधा,॥
येहयाऽ1 डेनितो धम्मो धम्मभूतेहि तदिः॥ ॥

[492] कट्टारी अरियासक्कानि अनुकंपाय पाणिनै,॥
दुक्खाऽ समुदयो मग्गो निरोधो दुक्खसाङ्खायो॥ ॥

[493] यस्मिṃ निवत्तते दुक्खाṃ ससारस्मिṃ अनंतकाṃ,॥
भेदा इमस्सा कायस्सा जीवितस्स च संखया,॥
अण्णो पुनब्भावो नत्थि सुविमुत्तोम्हि सब्बाधि' ति.॥ ॥

[487] हाँ, मैंने एक बार मुट्ठी भर सरकंडे तोड़े और
एक झोपड़ी बनाई जिसमें मैं रहता था; इसीलिए
आम बोलचाल ने मुझे 'सरकंडा चुनने वाला' नाम दिया।

[488] परन्तु आज यह मेरा काम नहीं था कि मैं
पुराने समय की तरह मुट्ठी भर सरकंडे तोड़ूँ,
क्योंकि जो प्रशिक्षण ने निर्धारित किया था, वह
हमें तेजस्वी गौतम (बुद्ध) द्वारा प्रकट किया गया था।

[489] वह कितना बुरी तरह बीमार था:-
ऐसा रीडपिकर ने पहले कभी नहीं देखा था। इस बुरी हालत को उसने देवताओं से परे परमेश्वर के वचन से
देखा ।

[490] वही मार्ग जिस पर विपस्सी (प्रथम बुद्ध) चले,
सिख (बुद्ध) और वेसभु (बुद्ध) का मार्ग, ककुसंध, कोनागमना
और कस्सपा बुद्धों का मार्ग, यहाँ तक कि उसी मार्ग से देखो!

अब हमारे सामने गौतम (बुद्ध) का आगमन होता है।

[491] और ये सभी सात बुद्ध, [2] - जिनके लिए
लालसा मर चुकी थी, और कुछ भी नहीं था, और जो
दुःख के निवारण पर स्थिर थे [3] -
उन्होंने इस मार्ग (धम्म) का उपदेश दिया, हाँ, यहाँ तक कि वे भी,
जो स्वयं मार्ग (धम्म) का शरीर थे, [4]

[492] हम सभी के प्रति अपार करुणा के कारण, ये
चार आर्य सत्य भी: दुःख का सत्य; कारण;
मार्ग; दुःख का अंत, दुःख का निवारण,

[493] जिससे
जीवन के महान चक्र में दुख और पीड़ा की अंतहीन गाथा अपना मार्ग नहीं अपना सकती; [5] क्योंकि जब यह शरीर मर जाता है और
जीवन समाप्त हो जाता है, तो
कोई और पुनर्जन्म नहीं आता - हाँ,
मैं जन्म से, बुराई से पूरी तरह मुक्त हूँ! [6]

[1] CCXXXII., CCXXXIII में किंवदंती देखें।

[2] सात पर देखें संवाद, i. 1 ff.

[3] खयोगधा. खाया - निब्बाण (टिप्पणी)।

[4] धम्मभूत - पथ (धम्म), धम्मकाया बन जाता है, धमनियापाल का संक्षिप्त रूप, इस शब्द का उपयोग बड़े पैमाने पर महायानवाद के पक्ष में आ रहा है।

[5] निब्बत्तते, इसका अर्थ है (निर्वत्तते) न पवत्तति, (नहीं) उपज्जति, अर्थात, निरोध के माध्यम से , निब्बाण।

प्रतीकात्मकता (झोपड़ी = शरीर) तो सही है, लेकिन अपनी झोपड़ी का पुनर्निर्माण न करने का कारण संभवतः ऐसा करने के लिए वनस्पतियों को नष्ट करने की आवश्यकता रही होगी।

[6] इसलिए टीका कहती है: सब्बेहि किलेसेहि, सब्बेहि भावेहि। सरल लेकिन ज्ञानवर्धक कथा के बिना पाठक इस उत्कृष्ट कविता का सार शायद न समझ पाए और यह सोचे कि किसी थेरा के लिए हाथों से काम करना उचित नहीं था, जैसा कि डॉ. न्यूमैन के अनुवाद से प्रतीत होता है। भिक्षुओं ने अनेक 'झोपड़ियाँ' बनाईं, अपने वस्त्र बनाए और उनकी मरम्मत की, आदि। लेकिन सरभंग का तात्पर्य छठे और दूसरे अध्याय में वर्णित अन्य दो झोपड़ी-थेरों से है: उनकी 'एकमात्र आवश्यक वस्तु' अत्तभाव-कुटिका का नवीनीकरण न होना है, जैसा कि टीका इसे 'व्यक्तिगत जीव-झोपड़ी' कहती है, और इसीलिए वे दुःख के अंत - अर्थात् पुनर्जन्म - पर इतना बल देते हैं। उनकी सरकंडे की झोपड़ी की स्थिति एक तुच्छ विवरण है, जो केवल एक प्रतीक के रूप में उपयोगी है। कविता और कथा संभवतः नाम की व्याख्या से उत्पन्न हुई होंगी। यह घटना जातक (iii. 454; v. 127 ff.) में ही नहीं, बल्कि महाभारत और रामायण में भी एक द्रष्टा के रूप में घटित होती है ।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (229): काकायाना द एल्डर

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (229) ------>>>> अगला

अध्याय VIII.
आठ श्लोक
229. कच्चायना महान
बुद्ध युग में उज्जैनी में राजा चंदपज्जोत के पुरोहित परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने बड़े होते हुए तीनों वेदों का ज्ञान प्राप्त किया और अपने पिता की मृत्यु के बाद पुरोहित पद संभाला। वे अपने कुल के नाम कच्चाना से जाने जाते थे। [1] अब राजा ने बुद्ध के के बारे में सुना और कहा: 'गुरुजी, क्या आप जाकर भगवान (बुद्ध) को यहाँ लाएँगे?' वे सात शिष्यों के साथ भगवान (बुद्ध) के पास गए, जिन्होंने उन्हें धम्म का मार्ग इतनी प्रभावी ढंग से सिखाया कि पाठ के अंत में, वे अपने सात सेवकों के साथ अक्षर और अर्थ की पूर्ण समझ के साथ अरहंतत्व (ज्ञानोदय) में स्थापित हो गए। तब भगवान (बुद्ध) ने कहा, 'आओ, भिक्षुओं!' उसने अपना हाथ बढ़ाया, और वे तुरंत ही एक सदी से चल रही वर्षा ऋतुओं के थेरों के समान हो गए, जिनके बाल दो उंगलियों की लंबाई तक कटे हुए थे, और वे कटोरे और वस्त्रों से सुसज्जित थे।

तब थेरा ने स्वयं मोक्ष प्राप्त करने के बाद राजा की ओर से भगवान (बुद्ध) को आमंत्रित किया:

'हे प्रभु, राजा पज्जोत आपके चरणों में पूजा करना और धर्म का पाठ सुनना चाहते हैं।' भगवान (बुद्ध) ने कहा: 'हे भिक्षु, तुम स्वयं जाओ ; तुम्हारे जाने से भी राजा संतुष्ट हो जाएँगे।' यह याद दिलाए जाने पर, वह सातों के साथ गया, राजा की इच्छा पूरी की, उसे धर्म में स्थापित किया और भगवान (बुद्ध) के पास लौट आया ।

एक दिन बहुत से भिक्षुओं ने अपने कर्तव्यों का त्याग कर सांसारिक गतिविधियों और समाज में सुख पाकर अनैतिक जीवन व्यतीत करना शुरू कर दिया। इस पर थेरा ने उन्हें दो श्लोकों में संबोधित किया और अगले छह श्लोकों में राजा को संबोधित किया:

[494] कम्माɱ बहुकाɱ न करायेll
परिवज्जेया जनाऽ न उय्यमे,ll
तो उस्सुक्को रसानुगिद्धोll
अत्थाऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ सुखाधिवाहोll ll

[495] पांको' ती ही नाɱ अवेदायुɱll
यायं वंदनपूजन कुलसु,ll
सुखुमाɱ सल्लाɱ दुरुब्बाहाɱll
सक्कारो कपूरीसेन दुज्जहोll ll

[494] भिक्षु को

व्यस्त कार्यों में नहीं लगना चाहिए, उसे लोगों से दूर रहना चाहिए,
न ही अनुकरण करने का प्रयास करना चाहिए।
जो लालच में आकर जीवन के सारे सुखों का स्वाद चखना चाहता है, वह
उस अच्छाई की उपेक्षा करता है जो सच्ची खुशी लाती है।

[495] यह एक कपटपूर्ण दलदल है,
धनी लोगों से धनुष, उपहार और दावतों का यह संरक्षण।
यह मांस में धंसे हुए एक महीन तीर की तरह है,
जिससे भटकते हुए मनुष्य को निकालना मुश्किल है। [3]

राजा को:

[496] न परसुपिधाय नम्माṃ मैकासा पासकाṃ,॥
मत्तना तां न सेनेया कम्मबंधुहि मटिया.॥ ॥

[497] न परे वचन कोरो न परे वचन मुनि,॥
अत्ता च नाऽ यथा वेत्ति देवाऽपि नाऽ तथा विदुः। ॥ ॥

[498] पारे च न विजानन्ति मायामेत्था यममसे,॥
ये च तत्थ विजानन्ति ततो सम्मन्ति मेधागा॥ ॥

[499] जीवते वा'पि सप्पाको अपि विट्टपरिक्खयो,॥
पनन्या च अलभेन वित्तवापि न जीवति॥ ॥

[496] मनुष्य के कर्म
दूसरे के [कहे या किए] कारण बुरे नहीं होते;
उसे स्वयं ही बुराई से बचना चाहिए, क्योंकि
अपने कर्मों से ही संतानें नश्वर होती हैं। [4]

[497] दूसरों के कहने से कोई व्यक्ति चोर नहीं बन जाता,
दूसरों के कहने से कोई व्यक्ति ऋषि नहीं बन जाता;
और जो हम अपने हृदय में जानते हैं,
वही हमारे हृदय को जानने वाले देवता भी जानते हैं। [5]

[498] लोग कभी भी यह नहीं समझ सकते
कि हम यहाँ थोड़े समय के लिए ही हैं।
लेकिन जो लोग इस सत्य को समझ लेते हैं,
वे सभी कलह और झगड़े दूर कर देंगे। [6]

[499] बुद्धिमान व्यक्ति जीवित है, और केवल वही जीवित है,
भले ही उसका सारा धन नष्ट हो जाए;
और यदि धनवान व्यक्ति में बुद्धि की कमी हो,
तो वह अपने सारे धन के लिए वास्तव में जीवित नहीं रहा।

राजा उससे एक सपने के बारे में सलाह ले रहा था। [7]

[500] सब्बाṃ सुणति सोतेना सब्बाṃ पस्सति चक्खुना,॥
न च दिट्ठं सुतं धीरो सब्बं उज्झतुमराहति॥ ॥

[501] चक्खुमास्सा यथा अन्धो सोतवा बधिरो यथा,॥
पन्नवास्सा यथा मुगो बलवा दुब्बलोरिव,॥
अथ त्थे समुप्पन्ने सयेथा मतासयिकान् ति.॥ ॥

[500] हम कानों से हर तरह की बातें सुनते हैं;
हम आँखों से हर तरह की बातें देखते हैं;
और बुद्धिमान और बलवान के लिए यह उचित नहीं है
कि वह सब कुछ अनदेखी, अनसुनी समझकर उपेक्षित कर दे।

[501] जो देखने में सक्षम है, वह अंधा हो जाए,
जो सुनने में सक्षम है, वह बहरा हो जाए
, जो बुद्धि में पारंगत है, वह गूंगा हो जाए,
और बलवान व्यक्ति कमजोर हो जाए;
परन्तु सच्ची भलाई की वस्तु उत्पन्न हो: -
वही उसके लिए विचार का आश्रय स्थल हो। [8]

[1] वे ग्यारह या बारह 'महान' थेरों में से एक थे (विन. ग्रंथ, ii. 317, 359), और सोन-कुटिकन्न (CCVIII.) के गुरु थे। विनय और निकाय में, उनका नाम आमतौर पर कच्चाना के रूप में मिलता है। इसी तरह, च्य. राजा का उल्लेख जात., v. 133; धम्मपद टीका, i. 192 ff.; और विनय ग्रंथों, ii. 186 में पज्जोत के रूप में मिलता है। कथासरित्सागर, i. 102 भी देखें।

[2] सासाने.

[3] = श्लोक 124, और 1052 एफ.

[4] मज्झ., iii. 203; अंग., iii. 72.

[5] टीका में लिखा है attā ca naṃ yathāvedīti naṃ sattaṃ taasa attā cittaṃ yathā ayaṃ parisuddho aparisuddho cīti yathāvato avedi jānāti. देवताओं को — अर्थात्, शुद्ध देवताओं को — दूसरों के विचारों को जानने का श्रेय दिया जाता है।

[6] = श्लोक 275.

[7] राजा के सपने का वर्णन नहीं किया गया है। केवल इतना कहा गया है कि वह अगले दिन थेरा के पास गया और उसे 'उसी क्रम में बताया जिस क्रम में उसने उसे देखा था।' भविष्यवाणी का उत्तर शायद संतोषजनक नहीं रहा होगा, लेकिन यह संवादों के 'महान शील', अध्याय 17(4) के बिल्कुल अनुरूप है। पुजारी मुख्य रूप से ज्योतिषी और स्वप्न व्याख्याकार था; जबकि साकिया-समण जागृत जीवन और नैतिक नियमों की मूलभूत वास्तविकताओं से संबंधित था।

[8] मिलिंद, ii. 282 f. में उद्धृत अंतिम छह पंक्तियाँ। मेरा अपना अनुवाद 'कथनों (गाथा)' और धम्मपाल के माध्यम से ' अत्था ' (अच्छा) के उच्च महत्व से निर्देशित है । यह सत्य है कि धम्मपाल पर्याप्त मार्गदर्शक नहीं है। वह 'ज्ञान में पारंगत' (देखें मिलिंद, ii. 288, n. 1) के किसी भी संदर्भ को छोड़ देता है, और मट- सायिकं शब्द का अर्थ केवल मटक-सायिकं के रूप में ही बताता है। इस शब्द से पहले उसने पस्सेथा = पसित्वा लिखा है। पूरी कविता प्रचलित लोकप्रिय दर्शन से लिए गए ज्ञानवर्धक कहावतों का एक मिश्रण प्रतीत होती है, जिसे सांज्युत्त प्रथम और जातक ग्रंथों की तरह ही कैनन द्वारा जोड़ा गया है, और जो मूल रूप से बौद्ध शिक्षा के अनुरूप है।

महा कच्चना

अवंती की राजधानी उज्जैनी जिले में, कच्चयन वंश के एक ब्राह्मण दंपति तिरितवच्छ और चंदीमा रहते थे। कच्चयन वंश सबसे प्राचीन और सम्मानित ब्राह्मण वंशों में से एक था, इसलिए वे बहुत प्रसिद्ध और सम्मानित थे। उनका एक पुत्र था जिसका नाम उन्होंने कंचन (सुनहरे रंग वाला) रखा, क्योंकि उसकी त्वचा असाधारण रूप से सुनहरी थी। कंचन ने ब्राह्मण वेदों का अध्ययन किया और वयस्क होने पर अपने पिता के स्थान पर दरबारी पुरोहित बन गया।

जिस राजा की वह सेवा करता था, वह अपने उग्र स्वभाव के कारण चंदपज्जोत या 'हिंसक पज्जोत' के नाम से जाना जाता था। जब राजा को पता चला कि एक भगवान बुद्ध का जन्म हुआ है, तो उनके मन में बुद्ध के दर्शन करने की तीव्र इच्छा जागी। उन्होंने अपने पुरोहित से बुद्ध को अवंती में अतिथि के रूप में आमंत्रित करने का अनुरोध किया। कंचना ने बुद्ध को आमंत्रित करने की शर्त पर सहमति जताई, बशर्ते राजा उन्हें भिक्षु बनने की अनुमति दे दें।

राजा की अनुमति से कंचना और सात अन्य दरबारी अवंती छोड़कर श्रावस्ती के लिए रवाना हुए, जहाँ बुद्ध निवास कर रहे थे। बुद्ध के उपदेशों से प्रेरित होकर, उन सभी आठों ने एक साथ अरहंतत्व और चारों विश्लेषणात्मक ज्ञान प्राप्त किए और भिक्षुओं के रूप में दीक्षा ली। दीक्षा के बाद कंचना को कच्चना के नाम से जाना जाने लगा। कच्चना ने बुद्ध को अवंती आने का निमंत्रण देने के उद्देश्य से उज्जैनी की प्राकृतिक सुंदरता का वर्णन किया। बुद्ध ने यह जानकर कि कच्चना राजा, उनके मंत्रियों और नगरवासियों को प्रेरित करने में सक्षम है, कच्चना को अपने पूर्व दरबारियों के साथ अवंती लौटने के लिए कहा।

वापसी के रास्ते में आठ भिक्षुओं ने तेलपनाली नामक नगर में रात्रि विश्राम किया। इस नगर में दो सुंदर युवतियाँ रहती थीं। एक धनी लड़की थी जिसके बाल एक बीमारी के कारण झड़ गए थे। दूसरी लड़की अपने माता-पिता की मृत्यु के बाद निर्धन हो गई थी। अपनी पूर्व दाई के साथ रहने वाली उस धनी लड़की के बाल घने, सुंदर और लंबे थे, जिनसे धनी लड़की ईर्ष्या करती थी। धनी लड़की ने बार-बार उस धनी लड़की के चमकदार बालों को अच्छी खासी रकम देकर विग बनाने का प्रस्ताव रखा था। लेकिन धनी लड़की ने उसका प्रस्ताव ठुकरा दिया था।

जब उस गरीब लड़की ने शांत भिक्षुओं को भिक्षा मांगते देखा, तो उसके मन में उन्हें भोजन कराने की इच्छा जागी। उसके पास पर्याप्त धन न होने के कारण, उसने अपने बाल काटकर एक धनी लड़की को बेच दिए। उस धन से उसने स्वादिष्ट भोजन बनाने के लिए आवश्यक सामग्री खरीदी और आठ भिक्षुओं के लिए भोजन तैयार किया। इस दान में उसकी भक्ति और प्रसन्नता इतनी प्रबल थी कि उसके इस नेक कार्य का प्रभाव तुरंत दिखाई दिया। उसके बाल फिर से पूरी तरह से लंबे और घने हो गए।

जब कच्चना अवंती लौटे, तो उन्होंने राजा को इस घटना की सूचना दी। राजा ने कन्या को अवंती लाने का आदेश दिया और उन्हें अपनी मुख्य संगिनी बना लिया। इस घटना के बाद राजा पज्जोत को कच्चना पर पूरा भरोसा हो गया। देखते ही देखते, अवंती में भगवा वस्त्रों की लहर दौड़ गई, क्योंकि मंत्री और नगरवासी बुद्ध की शिक्षाओं को अपनाकर सुगठित संप्रदाय में शामिल हो गए। रानी, जो अपने सौभाग्य के लिए कच्चना की कृतज्ञ थीं, ने उनके लिए स्वर्ण उद्यान में एक मठ बनवाया।

बुद्ध ने अपने भिक्षुओं को शिक्षा देने के लिए दो विधियों का प्रयोग किया। अक्सर वे एक छोटे श्लोक से शुरुआत करते थे, जिसे वे सुव्यवस्थित उदाहरणों और उपमाओं के साथ विस्तार से समझाते थे, और फिर अपने संदेश के गहन सार को संक्षेप में बताकर उसे आरंभिक श्लोक से जोड़ते थे। हालांकि, कभी-कभी वे एक संक्षिप्त संदेश देते थे जो गहरे अर्थ से परिपूर्ण होता था, और उस पर वे विस्तार से चर्चा नहीं करते थे, क्योंकि वे चाहते थे कि उनका संघ संदेश पर मनन करे और उसका अर्थ खोजे। आध्यात्मिक रूप से अधिक उन्नत भिक्षुओं ने इस चुनौती को उत्साहपूर्वक स्वीकार किया, क्योंकि इससे उनके मन का विस्तार हुआ और उन्हें आध्यात्मिक विकास में सहायता मिली। लेकिन कभी-कभी नौसिखिए भिक्षु उनके शब्दों का अर्थ नहीं समझ पाते थे। तब नौसिखिए भिक्षु कच्चाना के पास जाते और उनसे बुद्ध के शब्दों की व्याख्या करने का अनुरोध करते। कच्चाना ने तब शिक्षा को विस्तार से समझाया और उसे इस प्रकार व्याख्यायित किया कि संघ के कम उन्नत सदस्य भी उसे समझ सकें। कच्चाना की व्याख्या से अवगत होने पर बुद्ध ने उनकी निरंतर प्रशंसा करते हुए कहा कि यदि यह प्रश्न उनसे पूछा जाता तो वे स्वयं भी ठीक यही उत्तर देते। कच्चना के विश्लेषणात्मक, सुगठित मन और धम्म को गहराई से समझने तथा संदेश को सरल भाषा में समझाने की क्षमता के कारण, बुद्ध ने उन्हें अपने द्वारा उपदेशित लघु श्लोकों की व्याख्या करने वाले भिक्षुओं में सर्वोपरि घोषित किया। कच्चना को अन्य ब्राह्मण भिक्षुओं से अलग करने के लिए महा कच्चना के नाम से जाना जाता था।

बुद्ध ने अपने संघ को जो अन्य उपाधियाँ दीं, उनकी तरह यह नियुक्ति भी संयोगवश नहीं हुई थी। इस नियुक्ति के लिए जो आकांक्षा और पुण्य कर्म सिद्ध हुए, वे अनेक युगों पहले पद्ममुत्तरा बुद्ध के समय में ही बोए गए थे। उस समय कच्चाना एक धनी परिवार में जन्मे थे और उन्होंने पद्ममुत्तरा बुद्ध को एक भिक्षु को उनके द्वारा घोषित संक्षिप्त श्लोकों की विस्तृत व्याख्या करने वाले प्रमुख भिक्षुओं के रूप में नियुक्त करते देखा था। कच्चाना भिक्षु की इस योग्यता से प्रेरित हुए और उनके मन में भविष्य के किसी बुद्ध के समय ऐसी ही उपाधि प्राप्त करने की प्रबल इच्छा जागृत हुई। उन्होंने बुद्ध और उनके भिक्षुओं के दल को एक सप्ताह के लिए अपने घर आमंत्रित किया और उन्हें भिक्षा और आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं। फिर उन्होंने बुद्ध पद्ममुत्तरा के लिए एक स्तूप बनवाया, जिस पर सोने की जड़ाई कर एक आसन और रत्नजड़ित छत्र बनवाया।

तब कच्चना ने बुद्ध के समक्ष आदरपूर्वक प्रणाम किया और भविष्य के किसी बुद्ध द्वारा कहे गए संक्षिप्त श्लोकों की विस्तृत व्याख्या करने वाले अग्रणी भिक्षु बनने की इच्छा व्यक्त की। बुद्ध पद्ममुत्तरा ने देखा कि कच्चना की इच्छा पूरी होगी, तो उन्होंने भविष्यवाणी की कि गौतम बुद्ध के समय, जो दस लाख युगों बाद होगा, उनका जन्म एक ब्राह्मण परिवार में कच्चना नाम से होगा और उन्हें गौतम बुद्ध द्वारा कहे गए संक्षिप्त श्लोकों की विस्तृत व्याख्या करने वाले अग्रणी भिक्षु के रूप में घोषित किया जाएगा।

बुद्ध पद्ममुत्तरा ने कच्चना के भविष्य के जन्मों के बारे में अन्य भविष्यवाणियाँ भी कीं। उन्होंने घोषणा की कि अपने पुण्य कर्मों के फलस्वरूप कच्चना 30 युगों तक देवताओं के स्वामी रहेंगे। फिर वे मानवलोक में पाभासर नामक विश्व सम्राट के रूप में लौटेंगे। कच्चना संसार में पुण्य कर्म करते रहे और अपनी आकांक्षाओं को नवीकृत करते रहे, जब तक कि वे कच्चयन वंश में कंचना के रूप में पुनर्जन्म लेकर अपनी आकांक्षा को पूरा नहीं कर लेते।

इस ग्रंथ में उनके असाधारण रूप से सुंदर, सुनहरे रंग के रहस्य का भी उल्लेख है। कश्यप बुद्ध (हमारे गौतम बुद्ध से पूर्व के बुद्ध) के परिनिर्वाण के कुछ समय बाद, कच्चाना ने कश्यप बुद्ध के नाम पर एक स्तूप बनाने के लिए एक सोने की ईंट दान की थी और यह कामना की थी कि जब भी उनका पुनर्जन्म हो, उनका रंग उसी सोने के समान सुनहरा हो। इसी कामना के फलस्वरूप कच्चाना की त्वचा का रंग असाधारण रूप से सुंदर और सुनहरा हो गया था।

महा कच्चना ने धम्म के संरक्षण में अमूल्य योगदान दिया। गहन विषयों पर उनकी स्पष्ट व्याख्याओं को सावधानीपूर्वक दस्तावेजीकृत किया गया है, जिससे न केवल बुद्ध के समकालीनों को बल्कि आने वाली पीढ़ियों को भी सहायता मिली है। ग्रंथ में एक महान शिक्षक के

रूप में उनकी भूमिका का सटीक वर्णन है। हालांकि, उनकी प्राथमिक भूमिका बुद्ध द्वारा दिए गए कथनों की व्याख्या करना थी। अन्य महान शिष्यों की तुलना में, ऐसे बहुत कम उदाहरण मिलते हैं जब उन्होंने व्यक्तिगत रूप से किसी एक व्यक्ति को धम्म की शिक्षा दी हो। उनकी व्याख्याएँ और शिक्षाएँ स्पष्ट और सटीक हैं, जिनमें उपमाओं और उदाहरणों के बजाय विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण का प्रयोग किया गया है।

कच्चाना बुद्ध के एक संक्षिप्त कथन से शुरुआत करते हैं। फिर वे इसके गूढ़ अर्थ की विस्तृत व्याख्या करते हैं। निकायों में पाए जाने वाले आठ सूत्र, जिनमें मज्झिमा निकाय में तीन, समुत्त निकाय में तीन और अंगुत्तरा निकाय में दो सूत्र शामिल हैं, विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। निकायों में कुछ ऐसे उपदेश भी हैं जो सीधे महा कच्चाना से संबंधित हैं। इन उपदेशों में एक विशिष्ट भाव है जो उस मानसिकता को प्रकट करता है जिससे ये उत्पन्न हुए हैं। ये उपदेश संपूर्ण, सुव्यवस्थित, संतुलित और सटीक हैं। अक्सर कच्चाना श्लोक के सार को कुछ ही शब्दों में समझा देते हैं।

बुद्ध के वचनों के गहन अर्थ को समझाने में कच्चना की कुशलता के कुछ उदाहरण और बुद्ध द्वारा उनकी कुशलता की प्रशंसा निम्नलिखित हैं:

एक दिन जब बुद्ध कपिलवस्तु के निग्रोध उद्यान में ध्यान में बैठे थे, तभी दंडपाणि नामक एक अभिमानी शाक्य उनके पास आया और अभद्र स्वर में पूछा, "यह संन्यासी क्या दावा करता है? वह क्या प्रचार करता है?"

दंडपानी के झगड़ालू स्वभाव और इरादे को भलीभांति समझते हुए बुद्ध ने उत्तर दिया:

"मित्र, मैं इस प्रकार की शिक्षा का प्रतिपादन और प्रचार करता हूँ कि इस युग में संसार में किसी से भी झगड़ा न किया जाए, न उसके देवताओं से, न उसके मारों से, न उसके ब्रह्माओं से, न उसके संन्यासियों से, न उसके ब्राह्मणों से, न उसके राजकुमारों से और न ही उसकी प्रजा से; यहाँ तक कि उन ब्राह्मणों में भी कोई चेतना नहीं रह जाती जो इंद्रिय सुखों से विरक्त, शांत, चिंतामुक्त और किसी भी प्रकार के प्राणी के प्रति लालसामुक्त रहते हैं।" (मज्झिमा निकया)

यह उत्तर दंडपानी को बिल्कुल समझ में नहीं आया और वह निराश होकर चला गया। एक भिक्षु, जिसे बुद्ध के शब्दों का अर्थ समझ नहीं आया था, ने पूछा कि भगवान बुद्ध की वह शिक्षा क्या है जिससे सभी झगड़ों से बचा जा सकता है और साथ ही लालसा के प्रभाव से मुक्त हुआ जा सकता है।

बुद्ध का गहन उत्तर था:

भिक्षुओं, जहाँ तक उस स्रोत का संबंध है जिससे मानसिक अतिवृष्टि से ग्रस्त धारणाएँ और विचार व्यक्ति को घेर लेते हैं, यदि आनंद लेने, स्वागत करने और सहारा लेने के लिए कुछ भी न मिले, तो कामवासना, घृणा, मत, संशय, अहंकार, अस्तित्व की इच्छा और

अज्ञान जैसी अंतर्निहित प्रवृत्तियों का अंत हो जाता है; यहाँ लाठी-डंडों पर निर्भरता, झगड़े, कलह, विवाद, आरोप-प्रत्यारोप, द्वेष और झूठी वाणी का अंत हो जाता है; यहाँ ये सभी बुरी, अस्वस्थ अवस्थाएँ बिना किसी अवशेष के समाप्त हो जाती हैं। (मज्झिमा निकाय)

लेकिन भिक्षु बुद्ध के शब्दों को समझ नहीं पाए। चूंकि बुद्ध अपने कक्ष में चले गए थे, इसलिए उन्होंने उनसे और प्रश्न नहीं करना चाहा। इसके बजाय, वे महा कच्चना के पास गए और उनसे स्पष्टीकरण मांगा।

महा कच्चना ने सर्वप्रथम उन्हें बताया कि उन्हें बुद्ध के पास जाना चाहिए, क्योंकि वही उनके प्रश्नों का सर्वोत्तम उत्तर दे सकते हैं। उन्होंने भिक्षुओं को याद दिलाया कि बुद्ध की उपस्थिति में उनके पास आना, वृक्ष के तने की उपस्थिति में उसकी शाखाओं और पत्तियों के बीच उसकी मूल सामग्री को खोजने के समान है। परिस्थितियाँ बताए जाने पर उन्होंने प्रतीत्यसमुत्पाद के सिद्धांत से निकले बुद्ध के वचनों की व्याख्या इस प्रकार की:

"आंख (और अन्य इंद्रियों) पर निर्भर, आंख-चेतना (और अन्य प्रकार की इंद्रिय चेतना) उत्पन्न होती है। इन तीनों के मिलन को संपर्क कहते हैं। संपर्क की स्थिति में, भावना उत्पन्न होती है। जो महसूस होता है, वही बोध होता है। जो बोध होता है, उसी के बारे में विचार होता है। जो विचार होता है, उसे मन में प्रसारित किया जाता है। मन में प्रसारित विचारों को स्रोत मानकर, मन में प्रसारित विचारों से प्रभावित धारणाएं और विचार (परिस्थितिजन्य क्रियाएं) भूतकाल, भविष्यकाल और वर्तमान काल के उन रूपों के संबंध में व्यक्ति को घेर लेते हैं जिन्हें आंख के माध्यम से देखा जा सकता है। यही प्रक्रिया प्रत्येक इंद्रिय के लिए दोहराई जाती है।" इसके बाद, गुरु ने इसे विस्तार से समझाया और इसे आश्रित उत्पत्ति के सिद्धांत की शिक्षा से जोड़ा और भिक्षुओं को बताया कि कैसे सब कुछ पिछली स्थिति पर निर्भर है और पिछली स्थिति के समाप्त होने पर समाप्त हो जाता है।

मज्झिमा निकया के महा कच्चाना भद्देकरत्त सूत्र में भी महा कच्चाना की जटिल विषयवस्तु को समझाने की क्षमता झलकती है। समिद्धि नाम के एक भिक्षु ने बुद्ध से संपर्क किया और उनसे भद्देकरत्त सूत्र प्रदान करने का अनुरोध किया, जो सामान्यतः सभी भिक्षुओं को याद था। बुद्ध ने उत्तर देते हुए कहा:

किसी व्यक्ति को अतीत को पुनर्जीवित नहीं करना चाहिए

या फिर भविष्य पर अपनी उम्मीदें टिकाए।

क्योंकि अतीत पीछे छूट चुका है।

और अभी तक भविष्य तक नहीं पहुंचा जा सका है।

इसके बजाय, अंतर्दृष्टि से उसे देखने दो

वर्तमान में उत्पन्न प्रत्येक अवस्था;

उसे यह बात बता दें और इस बात को लेकर आश्वस्त रहें।

अजेय, अविचल।

आज ही प्रयास करना होगा;

कल मृत्यु आ सकती है, कौन जाने?

मृत्यु के साथ कोई समझौता नहीं हो सकता

उसे और उसके गिरोह को दूर रखो।

लेकिन जो इस प्रकार उत्साहपूर्वक निवास करता है

दिन-रात निरंतर —

शांतिप्रिय ऋषि ने यही कहा है।

जिसका एक ही सौभाग्यशाली लगाव है।"

तब बुद्ध उठे और अपने कक्ष में चले गए। समिद्धि बुद्ध की कविता को समझ नहीं पाए, लेकिन वे उन्हें परेशान नहीं करना चाहते थे। महा कच्चना के पास पहुँचकर समिद्धि ने उन्हें आदरपूर्वक प्रणाम किया और कविता का अर्थ पूछा।

समिद्धि को यह याद दिलाने के बाद कि बुद्ध के निवास के दौरान उनका उनके पास आना उचित नहीं था, कच्चना ने कविता की पहली दो पंक्तियों को लिया और छह इंद्रिय आधारों के माध्यम से उनकी व्याख्या की।

आँख की इंद्रिय से प्रारंभ करते हुए उन्होंने कहा, "जब कोई आँख और अतीत में देखे गए रूपों को याद करता है, और उन पर इच्छा और वासना से लीन रहता है, तो वह अतीत को पुनर्जीवित करता है। जब कोई भविष्य में उन इंद्रिय-विषयों का अनुभव करने की इच्छा रखता है जिनका उसने अभी तक सामना नहीं किया है, तो वह भविष्य के लिए आशा का निर्माण करता है। जो व्यक्ति अतीत की इंद्रिय-अनुभवों की स्मृतियों और भविष्य के इंद्रिय-अनुभवों की लालसा से उत्पन्न इच्छा और वासना से स्वयं को नहीं बांधता, वह अतीत को पुनर्जीवित नहीं करता और न ही भविष्य के लिए आशा का निर्माण करता है। इसी प्रकार, जिसका मन वर्तमान इंद्रिय-शक्तियों और उनके विषयों से वासना से जकड़ा हुआ है, वह वर्तमान में उत्पन्न अवस्थाओं के संबंध में पराजित है, जबकि जो वर्तमान इंद्रिय-शक्ति से वासना से बंधा नहीं है, वह वर्तमान में उत्पन्न अवस्थाओं के संबंध में अजेय कहलाता है।" इसके बाद उन्होंने अन्य सभी इंद्रिय-विषयों का उपयोग करते हुए उपरोक्त व्याख्या को दोहराया।

इस प्रकार, सरल भाषा में, गुरु ने भिक्षुओं को भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्यकाल की इंद्रिय संबंधी वस्तुओं से आसक्त न होने की सलाह दी। इसके बजाय, सभी घटनाओं की अनित्यता को अंतर्दृष्टि से समझने का प्रयास करें, क्योंकि मृत्यु किसी को भी कभी भी आ सकती है। और मृत्यु से कोई सौदा नहीं कर सकता। महा कच्चना ने समिद्धि को प्रोत्साहित किया कि वे एक क्षण भी व्यर्थ न करें, बल्कि अंतर्दृष्टि प्राप्त करने के लिए लगन से प्रयास करते रहें।

बाद में, जब भिक्षुओं ने बुद्ध को महा कच्चना की व्याख्या के बारे में बताया, तो उन्होंने उस बुजुर्ग की प्रशंसा करते हुए कहा कि यदि उनसे भी प्रश्न किया जाता, तो वे भी उसी तरह उत्तर देते।

महा कच्चना ने धम्म का उपदेश देने के लिए अपनी विश्लेषणात्मक क्षमताओं और संगठनात्मक कौशल का भी उपयोग किया। मज्झिमा निकाय में महा कच्चना और मधुरा के राजा अवंतीपुत्त के बीच एक बहुत ही रोचक संवाद है। अवंतीपुत्त, मधुरा के राजा चंदप्पज्जोति के पोते थे। एक बार जब महा कच्चना मधुरा में रह रहे थे, तो राजा अवंतीपुत्त ने उनकी प्रसिद्धि सुनकर महा कच्चना से संपर्क किया और उनसे प्रश्न किया। उनका प्रश्न कोई जटिल विषय नहीं था। यह एक महत्वपूर्ण विषय था जो ब्राह्मणों के मन पर गहरा प्रभाव डाल रहा था, जो स्वयं को अपने सृष्टिकर्ता भगवान महाब्रह्म द्वारा चुने गए श्रेष्ठ मानते थे। उच्च जाति के शासकों ने यह दावा करके पूरे भारत पर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया था कि वे सबसे उत्तम जाति हैं, पवित्र हैं, ब्रह्मा के पुत्र हैं, उनकी संतान हैं - ब्रह्मा से उत्पन्न, ब्रह्मा द्वारा सृजित, ब्रह्मा के वंशज हैं। बुद्ध के समय में, ब्राह्मणों ने यह घोषणा करके पूरे भारतीय सामाजिक व्यवस्था पर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया था कि ब्राह्मण जाति में, ब्राह्मण परिवार में जन्म लेने वाले लोग सृष्टिकर्ता भगवान महाब्रह्म के प्रत्यक्ष वंशज हैं। वे चुने हुए लोग थे। वे निर्विवाद नेता और कुलीन वर्ग थे। हालांकि, बुद्ध ने अपमानजनक जाति व्यवस्था की निंदा की थी और घोषणा की थी कि ब्राह्मण (कुलीन) होना जन्म से नहीं, बल्कि कर्मों से निर्धारित होता है।

राजा अवंतीपुत्त का महा कच्चना से पूछा गया प्रश्न, जो एक बहुत पुराने, प्रतिष्ठित और उच्च जाति के ब्राह्मण परिवार से थे, दूरगामी और महत्वपूर्ण था। राजा ने ब्राह्मणवादी मान्यताओं के अनुरूप, दैवीय रूप से निर्धारित स्थिति का हवाला देकर सत्ता के प्रति अपनी लालसा को उचित ठहराने का प्रयास किया। उन्होंने स्वयं प्रतिष्ठित ब्राह्मण जाति के बुजुर्ग से ब्राह्मणों की श्रेष्ठता के बारे में प्रश्न किया। तब बुजुर्ग ने उनके गलत विचारों को सुधारते हुए कहा:

“ब्राह्मणों का दावा मात्र एक कहावत है — इसका कोई दैवीय आधार नहीं है।” फिर, अपनी बात को और पुष्ट करने के लिए, उस बुजुर्ग ने विस्तार से बताया: “किसी भी सामाजिक वर्ग का कोई भी व्यक्ति जो धनवान हो जाता है, वह अन्य जातियों के लोगों से काम करवा सकता है। यहाँ तक कि एक साधारण व्यक्ति भी ब्राह्मण को अपनी सेवा में रख सकता है। किसी भी जाति का जो व्यक्ति नैतिकता के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है, वह नरक में जन्म ले सकता है (देवदत्त और राजा अजातसत्तु), जबकि किसी भी जाति का जो व्यक्ति नैतिकता और उदारता के सिद्धांतों का पालन करता है, वह सुखमय लोक में जन्म ले सकता है (लाजा)। किसी भी जाति का जो व्यक्ति कानून तोड़ता है, उसे दंडित किया जाएगा। किसी भी जाति का जो व्यक्ति संसार का त्याग करके संन्यासी बन जाता है, उसे आदर और सम्मान प्राप्त होगा (सुनीता और उपली)।” बुजुर्ग ने यह कहकर अपनी बात समाप्त की कि ये चारों जातियाँ (उस समय विद्यमान) एक समान थीं, उनमें कोई भेद नहीं था, उनमें कोई दैवीय आधार नहीं था।

चर्चा के अंत में राजा अवंतीपुत्त ने अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हुए कहा, "मैं महा कच्चना की शरण में जाता हूँ, मैं धम्म की शरण में जाता हूँ, मैं संघ की शरण में जाता हूँ।" महा कच्चना ने उन्हें सुधारते हुए कहा, "मेरी शरण में मत आओ। पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के पास जाओ, जिनकी शरण में मैं भी जाता हूँ।" जब राजा ने बुद्ध के बारे में पूछा, तो वरिष्ठ गुरु ने उन्हें बताया कि भगवान बुद्ध परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके हैं, जिससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यह चर्चा बुद्ध के देहांत के बाद हुई थी।

महा कच्चना न केवल संघ और गृहस्थ शिष्यों द्वारा आदरणीय थे, बल्कि देवताओं द्वारा भी उनका आदर और सम्मान किया जाता था। भिक्षु आमतौर पर बरसात के मौसम में विभिन्न शहरों और मठों में चले जाते थे। बरसात के मौसम के अंत में वे बुद्ध द्वारा आयोजित एक सभा में एकत्रित होते थे, जहाँ बुद्ध भिक्षुओं को सलाह देते थे और उनके किसी भी दुराचार के लिए उन्हें चेतावनी देते थे। कई भिक्षु इस सभा के लिए बुद्ध के निवास स्थान पर वापस यात्रा करते थे। महा कच्चना भी अपवाद नहीं थे। अक्सर दूर-दूर से यात्रा करते हुए, वे

बरसात के बाद की सभा में अपनी उपस्थिति सुनिश्चित करते थे। अन्य वरिष्ठ भिक्षु, महा कच्चना को देखने के आदी थे, इसलिए सभा में उनके लिए एक स्थान आरक्षित रखते थे।

एक बार तावतिंसा स्वर्ग के राजा सक्का, अपने विशाल दल के साथ, महान शिष्यों को प्रणाम करने और सम्मान देने के लिए पृथ्वी पर अवतरित हुए। जब उन्होंने देखा कि महा कच्चना वहाँ नहीं हैं, तो सक्का ने मन ही मन सोचा, "यदि पूज्य गुरुजी आ जाएँ तो अच्छा होगा, ताकि मैं उन्हें प्रणाम कर सकूँ।" तभी महा कच्चना सभा में आए और अपने लिए तैयार आसन पर बैठ गए। प्रसन्नता से अभिभूत होकर सक्का घुटनों के बल बैठ गए और गुरुजी के चरणों को छुपकर उन्हें प्रणाम किया। फिर उन्होंने उन्हें मालाएँ और धूप अर्पित की।

नवदीक्षित भिक्षु इस बात से नाराज थे कि सक्का ने महा कच्चना को विशेष सम्मान क्यों दिया। बुद्ध ने उन्हें यह कहकर फटकारा कि महा कच्चना जैसे वे भिक्षु, जो इंद्रियों के द्वारों की रक्षा करते हैं (यह सुनिश्चित करने के लिए कि कोई भी अपवित्र कर्म न हो), देवताओं और मनुष्यों दोनों के प्रिय होते हैं। फिर उन्होंने घोषणा की:

"देव भी उन्हें प्रिय मानते हैं।"

जिनकी इंद्रियां मंद पड़ गई हैं।

जैसे किसी सारथी द्वारा अच्छी तरह प्रशिक्षित घोड़े,

जिसका अभिमान चूर-चूर हो गया हो,

और कौन भ्रष्टाचार से मुक्त है?

(धम्मपद 94)

इस प्रकार बुद्ध ने अपने शिष्यों को आश्वस्त किया कि देवताओं से कृपा प्राप्त करने के लिए प्रार्थना का सहारा लेना आवश्यक नहीं है। देवता उन लोगों पर कृपा और सम्मान करना पसंद करते हैं जो सद्गुणों का अभ्यास करते हैं और नैतिकता के नियमों का पालन करते हैं।

महा कच्चना ने कई नवोदित भिक्षुओं और गृहस्थ भक्तों को जटिल शिक्षाओं को समझने में सहायता की। उनकी तीक्ष्ण बुद्धि, विश्लेषणात्मक क्षमता और संगठनात्मक कौशल ने कम आध्यात्मिक स्तर वाले कई लोगों को बुद्ध की गहन शिक्षाओं को ग्रहण करने में मदद की। बुद्ध ने महा कच्चना को उन भिक्षुओं में अग्रणी घोषित किया जो बुद्ध द्वारा घोषित संक्षिप्त कथनों की विस्तृत व्याख्या करते थे।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (230): सिरिमित्ता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (230) ------>>>> अगला

अध्याय VIII.
आठ श्लोक
230. सिरिमिता
बुद्ध युग में राजगृह में एक अत्यंत धनी जमींदार के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम सिरिमित्त रखा गया, उनकी माता सिरिगुत्त की बहन थीं, जिनकी कहानी धम्मपद टीका में शामिल है। [1] अब सिरिमित्त, जो सिरिगुत्त के भतीजे थे, ने उस समय आस्था प्राप्त की जब भगवान (बुद्ध) ने हाथी धनपाल को वश में किया। [2] और उन्होंने भिक्षु संघ में प्रवेश किया, और समय के साथ अरहंत (प्रबुद्ध) हो गए।

एक दिन पातिमोक्खा का पाठ करने के लिए अपनी सीट से उठते हुए, उन्होंने एक चित्रित पंखा लिया, [3] और वापस बैठकर, भिक्षुओं को धम्म का पाठ कराया, और ऐसा करते हुए, उन्होंने अधिक प्रमुख गुणों को इस प्रकार अलग किया:

[502] अक्कोधनोनुपनहि अमायो रित्तापेसुनो,॥
तदिसाको भिक्खु इवं पेक्का ना सोकाति को बचाएं॥ ॥

[503] अक्कोधनोनुपनाहि अमायो रित्तापेसुनो,॥
गत्तद्वारो सदा भिक्खु एवं पेक्का न सोचति॥ ॥

[504] अक्कोधनोनुपनहि अमायो रित्तापेसुनो,॥
कल्याणसिलो सो1 भिक्खु एवं पेक्का न सोकाति॥ ॥

[505] अक्कोधनोनुपनहि अमायो रित्तापेसुनो,॥
कल्याणमितो सो भिक्खु एवं पेक्का न सोचति॥ ॥

[506] अक्कोधनोनुपनहि अमायो रित्तापेसुनो,॥
कल्याणपान्नो [53] सो भिक्खु इव पेक्का न सोकाति ॥॥ ॥

[502] क्रोध और घृणा से मुक्त,
छल से शुद्ध, निंदा से रहित,
देखो! उसके जैसा भिक्षु,
जब वह यहाँ से जाएगा, [4] तो फिर कभी नहीं रोएगा।

[503] क्रोध और घृणा से मुक्त,
छल से शुद्ध, निंदा से रहित,
सदा 'द्वार-सुरक्षित' [5] भिक्षु, वह,
जब वह यहाँ से जाएगा, तो अब और नहीं रोएगा।

[504] क्रोध आदि से
... निंदा से मुक्त,
महान गुणों वाला भिक्षु, वह,
जब यहाँ से जाएगा, तो और रोएगा।

[505] [242] क्रोध आदि से,
वह गुणी साथियों का भिक्षु,
जब वह यहाँ से जाएगा, तो अब और नहीं रोएगा।

[506] क्रोध आदि से,

महान अंतर्दृष्टि वाला भिक्षु,
जब वह यहाँ से जाएगा, तो फिर कभी नहीं रोएगा।

क्रोध आदि के विरुद्ध प्रवचन देने के बाद, उन्होंने व्यक्तियों के लिए सही दृष्टिकोण का वर्णन करने वाले छंदों के माध्यम से सर्वोच्च मार्ग को प्रस्तुत किया, और इसके द्वारा स्वयं में आज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की गवाही दी।

[507] पस्सा सद्धा तथागते अचला सुपतिथिता॥
सिलाऽ च यस्सा कल्याणं अरियाकांताऽ पसाऽसिताऽ.॥ ॥

[508] सोंघे पसादो यस्सत्थि उजु भुताम्ञ सीए दस्साणो,॥
अदादिद्दोति तं आहु अमोघं तस्स जीवितान्॥ ॥

[509] तस्मा सद्धाऽ च सिलाऽ च पसादौ धम्मदस्सनाअ,॥
अनुयुन्जेथा मेधावी सारं बुद्धानसासनं ति.॥ ॥

[507] जिसका तथागत (बुद्ध) में विश्वास
दृढ़ और अविचल है,
जिसके गुणों की प्रशंसा भले लोगों द्वारा की जाती है
और जो आर्यों की दृष्टि में सुखद है, [6]

[508] जो भिक्षु के आदेश से संतुष्ट रहता है,
जो अपने विचारों में स्पष्ट और ईमानदार है:
'वह कंगाल नहीं है,' वे कहते हैं, इतनी दौलत के साथ,
न ही उसका जीवन बांझ और व्यर्थ है।

[509] अतः ज्ञानी पुरुष, जो
बुद्धों के उपदेशों को याद रखता है,
अपने आप को आस्था और धर्म के प्रति समर्पित करे,
ताकि वह उस आशीर्वाद को जान सके जो वे हमारे लिए लाए हैं
और पवित्र मार्ग (धम्म) के सच्चे दर्शन को जान सके। [7]

सीसीएक्सएक्सआई पंथक मेजर। जब हमारे भगवान (बुद्ध) धर्म के उत्तम चक्र को घुमाते हुए राजगृह गए, तब पंथक, जो कि बड़ा पुत्र था*

[1] संभवतः i. 434 ff. में वह सावत्थी का एक गृहस्थ अनुयायी था,

[2] विनय ग्रंथों में नालागिरि कहा जाता है , iii. 247-250. तुलना करें मिलिंद, i. 297 ff.

[3] विद्वान बहन खुज्जुतारा ने भी उपदेश दिया (धम्मपद टीका, 209)।

[4] 'दूसरे लोक में' (टीका)। वह अनिवार्य रूप से अरहंतों (प्रबुद्ध लोगों) के बारे में या उनसे बात नहीं कर रहे हैं। वाक्यांश के भिन्न अर्थ के लिए श्लोक 188 देखें ।

[5] गुट्टा-द्वारो, बौद्ध नैतिकता में इंद्रियों के 'द्वारों' पर नियंत्रण के लिए तकनीकी वाक्यांश।

[6] 1 बुद्ध, मौन (पच्चेक) बुद्ध, और गंभीर शिष्य (बुद्ध-सवका)।

[7] = श्लोक 204.

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (231) ------>>>> अगला

अध्याय VIII.
आठ श्लोक
231. पंथका एल्डर
जब हमारे भगवान (बुद्ध) धर्म के उत्कृष्ट चक्र को घुमाते हुए राजगृह गए थे, तब एक धनी पार्षद की पुत्री और उसके पिता के एक सेवक के बड़े पुत्र पंथक [1] [243] अपने दादा के साथ भगवान (बुद्ध) का प्रवचन सुनने जाया करते थे, और इस प्रकार उन्होंने अंतर्दृष्टि से आस्था प्राप्त की। भिक्षु संघ में प्रवेश करके, वे बुद्ध-शब्द और चार अमूर्त ध्यान (समाधि/तम्मोहन अवस्थाओं) में अत्यधिक पारंगत हो गए, और समय आने पर अरहंत (प्रबुद्ध) हो गए। ध्यान और फल प्राप्ति के आनंद में रहते हुए , एक दिन वे अपनी उपलब्धि की समीक्षा कर रहे थे, और उस कारण अत्यधिक प्रसन्नता से 'सिंह गर्जना' करते हुए इस प्रकार बोले:

[510] यदा पठममद्दक्खीṃ सत्थारमकुतोभ्यो,॥
ततो मे अहु सवेगो पास्तिवा पुरिसुत्तमं॥ ॥

[511] सिरीऽ हत्थेहि पदेहि यो पणमेय्या अगतौ,॥
एतादिसैं सो सत्थारं अराधेत्व विराधये॥ ॥

[512] तदाहाṃ पुत्तदाराṃ च धनाधन्नौ वा चाडयिṃ,॥
केसमसुनि चेदेत्वा पब्बाजीं अनागारियां, ॥ ॥

[513] सिक्खसाजीवासम्पन्नो इंद्रियेसु सुसावुतो.॥
नमास्समानो संबुद्धै विहासिऽ अपराजितो॥ ॥

[514] ततो मे पणिधि असि चेतासो अभिपत्थितो,॥
न निसीदे मुहुत्तमपि तन्हासल्ले अनुहते॥ ॥

[515] तस्सा मेवṃ विहारतो पासा वीर्यपराक्कमाṃ,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससाणं॥ ॥

[516] पुब्बेनिवासाऽ जानामि दिब्बाकक्खुṃ4 विसोधिताऽ,॥
अराहा दक्खिनेयोमहि विप्पमुत्तो निरूपधि.॥ ॥

[517] ततो रत्या विवसने सूर्यसुग्गमनाऽ पति,॥
सब्बाṃ तन्हां निसोनेत्वा पल्लांकेन उपाविसिं' ती.॥ ॥

[510] जब मैंने पहली बार भगवान (बुद्ध) को देखा,
जिनके लिए कहीं से भी भय उत्पन्न नहीं हो सकता, तो
मेरे भीतर गहरी भावना की लहर दौड़ गई,
उन्हें देखकर, जो अद्वितीय पुरुष हैं।

[511] यदि कोई व्यक्ति हाथों और घुटनों के बल बलवान होकर
भाग्य की देवी की कृपा यहाँ लाता,

और इस प्रकार भगवान (बुद्ध) की कृपा प्राप्त करता,
तब भी वह [अपनी चाही हुई चीज़] प्राप्त करने में असफल हो सकता था। [2]

[512] मैंने अपनी ओर से [सभी बाधाओं] को त्याग दिया -
[पत्नी और बच्चों, धन और अनाज की आशा], [3] और अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर
बेघर जीवन में घर से निकल गया।

[513] जीवन और प्रशिक्षण का अभ्यास करते हुए, सभी क्षमताओं को
अच्छी तरह से नियंत्रित रखते हुए, उनके प्रति निष्ठा में,
सर्वोच्च बुद्ध, आत्मा के भगवान (बुद्ध) के रूप में मैंने जीवन व्यतीत किया।

[514] तब मेरे हृदय में लालसा जागी, मैं तरस गया
[पूर्ण करने के लिए]: 'अब मैं और नहीं बैठूंगा,
एक पल के लिए भी नहीं, जबकि लालसा का तीर
चुभता रहे और निकलता न रहे।

[515] हे! मुझे इस प्रकार दृढ़ इच्छाशक्ति से देखो [4] और ऊर्जा की आगे की चाल पर ध्यान दो: [244] मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना बना लिया है,
और बुद्ध के सभी अवशेष हमें करने हैं।

[516] मैं अपने पूर्व जन्मों का स्थान और समय जानता हूँ,
और दिव्य दृष्टि स्पष्ट रूप से चमकती है।
मैं अरहंत हूँ, योग्य पुरुषों की भेंट।
मुक्त और पुनर्जन्म का कोई आधार नहीं।

[517] क्योंकि जैसे ही अंधकार प्रकाश में घुल गया,
और सूर्योदय के साथ दिन निकल आया,
लालसा से, सूखकर, मुक्ति आ गई,
और मैं अपने सोफे पर पालथी मारकर शांति से बैठ गया।

[1] लड़कों का असमय जन्म, जब उनकी माँ अपने परिवार के रिश्तेदारों के पास लौटने के लिए निकली थी, उनका नाम 'रोडलिंग' (बड़ा) और 'छोटा) रखा गया, और उनका अपने परिवार के रिश्तेदारों के साथ रहने जाना, यहाँ संक्षेप में बताया गया है, लेकिन जाट., i. 14 ff., और अंगुत्तरा कमेंट्री i. 26 में अधिक विस्तार से बताया गया है।

[2] 'दुर्भाग्यशाली ... नौवें क्षण में असफल होते हैं' (? ग्यारहवें घंटे), टीका कहती है, जो इसके अलावा, सिरिम में भाग्य की देवी (बौद्ध भारत , पृ. 217) के लिए नहीं, बल्कि एक शिक्षक के सिरिसायना या कैथेड्रा के लिए संकेत देखती है।

[3] अपने दादा-दादी के साथ नाबालिग के रूप में रहते हुए, उसके पास अभी तक इनमें से कुछ भी नहीं था, टिप्पणी में टिप्पणी की गई है।

[4] इस और अगली पंक्तियों के लिए, देखें श्लोक 167, '224, 296, 332, 477.
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(232):भूटा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (232) ------>>>> अगला

अध्याय IX.
नौ श्लोकों का कथन (गाथा)
232. भूत

बुद्ध युग में साकेता नगर के उपनगर में एक धनी पार्षद के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, वह अंतिम और एकमात्र जीवित संतान थे, क्योंकि अन्य सभी को एक शत्रुतापूर्ण यक्ष ने खा लिया था। इसलिए उनकी अच्छी तरह से रक्षा की गई, लेकिन इस बीच वह राक्षस (भूत) वेसवण [1] की सेवा करने चला गया और फिर कभी वापस नहीं आया। बच्चे के नामकरण के दिन उनका नाम भूत रखा गया, क्योंकि उन्होंने कहा: 'दयालु अमानव उनकी रक्षा करें!' [2] अपने पुण्य कर्मों के फलस्वरूप, बिना किसी दुर्घटना के पले-बढ़े, और यस [3] की तरह तीन निवासों में पले-बढ़े , जब भगवान (बुद्ध) साकेता आए, तो वे अन्य गृहस्थों के साथ विहार (मठ) गए और धम्म का पाठ सुना। भिक्षु बनने के बाद, वे अजकारणी नदी के किनारे एक गुफा में रहने चले गए। [4] वहाँ उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। इसके बाद, उन्होंने अपने रिश्तेदारों के प्रति दयालुता दिखाते हुए उनसे मिलने के लिए अंजना वन में ठहर गए। जब उन्होंने उनसे वहीं ठहरने का अनुरोध किया और कहा कि इससे दोनों पक्षों को लाभ होगा, तो थेरा ने मठवासी जीवन के प्रति अपने प्रेम और प्रसन्नता को व्यक्त करते हुए, उनसे विदा लेने से पहले ये पंक्तियाँ कहीं:

[518] यदा दुक्खान् जरामरणन्ति पण्डितो॥
अविद्दसु वत्थ सीता पुथुज्जना,॥
दुक्खं परिणया सतोवा झायति॥
ततो रतिṃ परमतरौ न विंदति.॥ ॥

[519] यदा दुक्खखा ससवहनिṃ विसात्तिकाṃ॥
पपाञ्चसंघात दुःखधिवाहिनि,॥
तन्हां पहत्वाना सतोवा झायति॥
ततो रतिṃ परमतरौ न विंदति.॥ ॥

[520] यदा शिवा द्वे कैटुरांगगामिनाṃ॥
मग्गुत्तमाṃ सब्बाकिलेसासोधनाṃ,॥
पनन्या पासित्वा सतोवा झायति॥
ततो रतिṃ परमतरौ न विंदति.॥ ॥

[521] यदा अशोका विराजा असोखताṃ॥
संताṃ पदाṃ सब्बाकिलेसासोधनाṃ,॥
भवेति संनोजनबन्धनच्चिदौ॥
ततो रतिṃ परमतरौ न विंदति.॥ ॥

[522] यदा नाभे गज्जति मेघदुन्दुभि॥
धारकुला विहागपथे समन्ततो,॥
भिक्खु च पब्भार्गतोऽव झायति॥
ततो रतिṃ परमतरौ न विंदति.॥ ॥

[523] यदा नदीनां कुसुमाकुलानां॥
विकत्तवनेयवत्तऽसकानाऽ,॥
तीरे निसिन्नो समणोऽव झायति॥
ततो रतिṃ परमतरौ न विंदति.॥ ॥

[524] यदा निशिथे रहिकामहि कानेणे॥
देवे गन्तमहि नदन्ति दाथिनो,॥
भिक्खु च पब्भार्गतोऽव झायति॥
ततो रतिṃ परमतरौ न विंदति.॥ ॥

[525] यदा वितक्के उपरुंधियात्तनो॥
नागान्तरे नागविवराण समासितो,॥
वितद्दरो विगतखिलोऽव1 झायति॥
ततो रतिm परमतरौ न विंदति.॥ ॥

[526] यदा सुखि वलाखिलसोकानासानो॥
निराग्गाओ निब्बानथे विसालो,॥
सब्बासवे ब्यान्तिकतोऽव झायति॥
ततो रतिm परमतरौ न विन्दति' ति.॥ ॥

[518] जब ज्ञानी व्यक्ति यह समझ लेता है कि बुढ़ापा और मृत्यु, हाँ, वह सब कुछ
जिससे अविवेकी संसारी लोग चिपके रहते हैं, पीड़ा है,
और इस प्रकार पीड़ा को समझकर, वह एकाग्र मन से और विचार के परमानंद में लीन रहता है : - इससे बढ़कर
कोई उच्च आनंद मनुष्य को नहीं दिया जाता।

[519] जब उस भयानक विषक [5] ने उसे प्रतिबंधित कर दिया जो पीड़ा लाता है, -
हाँ, यहाँ तक कि लालसा भी, जिसने उसे
कई चीजों के जाल में कैद होने की पीड़ा की ओर धकेल दिया,
जुनूनी, [6] - और उसने मन से जीवन बचाए
और विचार के परमानंद में डूबे हुए: -
इससे बढ़कर कोई उच्च आनंद नहीं है।

[520] जब वह अंतर्दृष्टि से शुभ संकेतित मार्ग को देखता है, जो
द्विगुणित चौगुना, परम है, जो सभी
अशुद्धियों से शुद्ध करता है, और उसे देखकर, एकाग्र मन से,
विचार के परमानंद में लीन रहता है: -
इससे बढ़कर कोई उच्च आनंद मनुष्य को नहीं दिया जाता।

[521] जब चिंतन का कार्य शांति के मार्ग को वास्तविक और सच्चा बनाता है,
दु:ख से मुक्त, बेदाग और असंबद्ध, [7] सभी अशुद्धियों से शुद्ध होकर, और
हर बंधन और जंजीर से अलग होकर, और भिक्षु चिंतन के परमानंद में लीन बैठता है : - इससे बढ़कर
कोई उच्च आनंद मनुष्य को नहीं दिया जाता।

[522] जब ढलते आकाश में तूफ़ान के बादल का ढोल गड़गड़ाता है,
और पक्षियों के सभी रास्ते बारिश से भर जाते हैं, [247] भिक्षु पहाड़ियों की खोखली घाटी में बैठा रहता है,
विचारों के परमानंद में डूबा हुआ: - इससे बढ़कर कोई आनंद
मनुष्य को नहीं दिया जाता।

[523] या जब नदियों के किनारे, जिनके तट पर
अनेक रंगों से चमकीली जंगली फूलों की मालाएँ उमड़ती हैं,
भिक्षु शांत हृदय से तट पर बैठा रहता है,
विचारों की परमानंद अवस्था में: -
इससे बढ़कर कोई आनंद मनुष्य को नहीं दिया जाता।

[524] या जब आधी रात को सुनसान जंगल में देवता वर्षा करते हैं,
और दाँतों और सूंड वाले जानवर [8] चिल्लाते और चीखते हैं,
भिक्षु पहाड़ियों की खोखली जगह में बैठा रहता है,
विचारों के परमानंद में डूबा हुआ: -

इससे बड़ा आनंद मनुष्य को नहीं दिया जाता।

[525] जब वह मन की विवेचनात्मक बेचैनी को रोक लेता है, [9] और पर्वत की गोद में जाकर किसी गुफा में
आश्रय लेकर बैठ जाता है, भय और बाधा से मुक्त होकर,
विचार के परमानंद में लीन हो जाता
है: - इससे बड़ा आनंद मनुष्य को नहीं मिलता।

[526] जब वह स्वस्थ आराम में रहता है,
कलंक, ठोकर और दुख को दूर करने वाला, शांति के लिए खुला [10] [मन के द्वार], कामवासना से मुक्त, तीर से सुरक्षित, [11] हाँ,
सभी मादक पदार्थ (अपवित्रता/इच्छाएँ) कुछ भी नहीं रह जाते, और इस प्रकार
विचार के परमानंद में लीन हो जाता
है: - इससे बड़ा आनंद मनुष्य को नहीं दिया जाता।

[1] आकाश के उत्तरी भाग और यक्षों का शासक [संवाद, ii. 259, 805)।

[2] इस प्रकार ऐसे प्राणियों को प्रायोजक बनाकर उनकी प्रसन्नता को बाध्य करना! भूत = आत्मा, जीव।

[3] सत्रहवीं.

[4] तुलना करें. सप्पाका, सीएक्ससीवीआई.

[5] On visattikā soe p. 218, n. 3.

[6] इस वाक्यांश papañcasanghāṭa(-dukkādhivāhaniṃ) के साथ, देखें Majjh., i. 271, l. 1; 383, l. 29; Milinda, 890, l. 7. टीका की व्याख्या बहुत कमजोर है, लेकिन यह papañcanti vitthārentīti का प्रतिलेखन करती है।

[7] असन्खताṃ। न केनसि पकायेना संखतन ती (टिप्पणी)।

[8] टीका में शेरों और बाघों के उदाहरण दिए गए हैं - बेशक यह केवल दूरस्थ स्थानों के लिए ही सत्य है। तुलना करें कम से कम सिस्टर्स, पृ. 151 n.

[9] वितक्का, एक ऐसा शब्द जो इस और उस पर ध्यान लगाने को इंगित करता है, जिससे एकाग्र विचार में बाधा आती है।

[10] शाब्दिक रूप से, वह व्यक्ति जो खुला हुआ है। टीका कहती है कि कुंडी अज्ञान है जो निर्वाण के प्रवेश द्वार में बाधा डालती है।

[11] 'डार्ट' से हमेशा लालसा निहित होती है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(233): कलुदायिन

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (233) ------>>>> अगला

अध्याय X.
दस श्लोक
233. कालूदायिन
देवताओं और मनुष्यों के बीच पुनर्जन्म लेते हुए, उनका जन्म हमारे बोधिसत्व (बुद्ध) के ही दिन कपिलवस्तु में राजा के एक मंत्री के परिवार में हुआ था। जी हाँ, उसी दिन इन सातों का जन्म हुआ था: बोधिसत्व, बोधि वृक्ष, राहुल की माता और चार रत्न: सवारी करने

वाला हाथी, घोड़ा कंठक, चन्ना और कालोदयिन। [1] नामकरण के दिन बच्चे का नाम उदयिन रखा गया, और क्योंकि उनका रंग सांवला था, इसलिए वे काल-उदयिन के नाम से जाने जाने लगे। वे बोधिसत्व के साथ खेलते-कूदते बड़े हुए। लेकिन बाद में, जब जगत के स्वामी ने महान त्याग में संन्यास ले लिया, सर्वज्ञ हो गए, और राजगृह के पास बाँस के वन में धम्म के उत्तम मार्ग पर विचरण करते हुए विचरण कर रहे थे, तब राजा सुद्धोदन ने यह सुना और एक हजार सेवकों के दल के साथ एक मंत्री को यह कहते हुए भेजा: 'मेरे पुत्र को यहाँ लाओ।' और जब धम्म का उपदेश दिया जा रहा था, तब वह मंत्री और उसका दल वहाँ पहुँचे, और उन्होंने सुना, और सभी अरहंत (प्रबुद्ध) हो गए, तब भगवान (बुद्ध) ने अपना हाथ बढ़ाकर कहा: 'आओ, भिक्षुओं!' ... और वे आर्यों में से थे, उन्होंने राजा का संदेश नहीं पहुँचाया। और ऐसा ही अन्य दूतों के साथ भी हुआ। इसलिए राजा ने कालुदयिन को यह कहते हुए भेजा: 'यह उदयिन दस शक्तियों वाले [249] के समान आयु का है , और मेरा सत्कार करता है और मुझसे स्नेह करता है; मैं उसे भेजूँगा; हे मेरे प्रिय, तुम एक हजार आदमियों के साथ जाओ और दस शक्तियों वाले बुद्ध को ले आओ।' तो वह यह कहते हुए चला गया: 'हे प्रभु, यदि मैं संसार त्याग कर संन्यासी बन सकूँ, तो मैं यहाँ बुद्ध को लाऊँगा।' उत्तर मिला, 'जो भी करो, मुझे दिखाओ मेरे पुत्र।' उसने भी प्रथम मंत्री की तरह ही किया और अरहंत (ज्ञान प्राप्त) हो गया। अब उसने सोचा: 'अभी उनके नगर जाने का समय नहीं आया है। जब वर्षा होगी, जंगल फूलों से खिल उठेंगे और धरती हरियाली से ढक जाएगी, तब समय आएगा।' और जब समय आया, तो उसने भगवान (बुद्ध) से यात्रा की सुंदरता की प्रशंसा करते हुए ये श्लोक कहे:

[527] अंगारिनो दानि दुमा भदन्तो॥
फलेसिनो चदानं विप्पहया,॥
ते अचिमन्तोऽव पभासायन्ति॥
समयो महावीर भगीरथनाः।॥॥

[528] दुमणी फुलानि मनोरमि॥
समन्ततो सब्बदिसा पवंति,॥
पट्टं पाहाय फलमासाना॥
कालो इतो पक्कमणया वीरा॥॥

[529] नेवतिसितां न पनातिउण्हाm्॥
सुखा उतु अद्धनिया भदन्ते,॥
पसंतु तां साकिया कोडिया चा॥
पच्चमुखान् रोहिणीं तारयन्तो।॥॥

[530] आसया कसते खेताऽ बीजाऽ असया वप्पति,॥
असया वानिजा यान्ति समुद्दं धनहारका,॥
याया असया तिथमि स मे आस समिज्जतु॥॥

[531] पुनप्पुनाअ सेवा वापंती बीजाm्॥
पुनप्पुनां वस्सति देवराजा,॥
पुनप्पुनाऽ खेताऽ कासन्ति कस्सका॥
पुनप्पुनाऽ धन्नामुपेति रथाऽ॥॥

[532] पुनप्पुनाऽ याचनाका कैरन्ति॥
पुनप्पुनां दानपति ददन्ति,॥
पुनप्पुनं दनापति ददित्वा॥
पुनप्पुनाऽ सग्गमुपेन्तीथनाऽऽ॥॥

[533] वीरो [57] ने सत्तयुगाm् पुनेति॥
यसुमीऽ कुले जयति भूरिपन्नो,॥
मन्नामहं सक्कति देवदावो॥
तया हि जातो मुनि सकानामो॥॥

[534] शुद्धेदानो नाम पिता महोसिनो॥
बुद्धस्स माता पाना मयानमा,॥
यबोधिसत्तं परिहरिया कुच्चिना॥
कायस्सा भेदा तिदिवमहि मोदति.॥ ॥

[535] सा गौतमी कलकता इतो काटा॥
दिब्बेहि कामेहि समङ्गिभूता,॥
समोदति कामगुनेहि पंचहि॥
परिवर्तिता देवगाखेहि तेहि.। ॥

[527] हे प्रभु, अब वृक्ष लाल रंग से चमक रहे हैं और
फल की तलाश में अपने प्राचीन पत्तों को त्याग रहे हैं। [2] वे ज्वाला की चोटियों की तरह दीप्तिमान हैं,
और हे महान प्रभु, आशा से भरपूर यह घड़ी है।

[528] हर पेड़ में हरियाली और फूल खिले हैं,
जहाँ भी हम देखते हैं, आँखों को सुकून मिलता है,
और हर तरफ़ सुगंधित हवाएँ बहती हैं, [3] पंखुड़ियाँ गिरती हैं, फल की लालसा होती है: -
हे महान, अब समय आ गया है कि हम यहाँ से प्रस्थान करें।

[529]
हे भगवान (बुद्ध), न अधिक गर्म, न अधिक ठंडा, बल्कि मधुर, अब वर्ष का यही मौसम है। हे शाक्य (बुद्ध का वंश) और कोलिया (पत्नी का वंश) आपको पश्चिम की ओर मुख किए हुए, रोहिणी (सीमा-नदी) पार करते हुए
देखें । [4]

[530] [250] आशा में खेत जोता जाता है, आशा में बीज बोया जाता है,
धन जीतने की आशा में व्यापारी समुद्र पार यात्रा करते हैं।
मेरी आशा पूरी हो!

[531] बार-बार हल में बीज बोया जाता है।
बार-बार बादल-राजा वर्षा बरसाता है,
बार-बार हल चलाने वाले खेत जोतते हैं,
बार-बार राज्य में अनाज आता है।

[532] बार-बार भिखारी अपना चक्कर लगाते हैं;
बार-बार उदार दाता देते हैं;
बार-बार जब बहुत सारे उपहार दिए जाते हैं,
बार-बार दाताओं को अपना स्वर्ग मिलता है।

[533] निश्चय ही एक महान व्यक्ति
सात पीढ़ियों पहले तक, चाहे वह कहीं भी जन्मा हो, उसे परम पवित्रता तक पहुंचाता है।
और मुझे लगता है कि वह भी ऐसा ही कर सकता है, जो अत्यंत बुद्धिमान है, देवताओं का देवता है
। वास्तव में, आप में एक द्रष्टा का जन्म हुआ है।

[534] सुद्धोदन को सर्वशक्तिमान भगवान (बुद्ध) का पिता कहा जाता है,
और बुद्ध की माता [हमारी रानी] माया थीं। उन्होंने अपने गर्भ में ज्ञान को धारण किया और
शरीर की मृत्यु होने पर तुषिता (स्वर्ग) में आनंद पाया। [5]

[535] हे गौतम (बुद्ध), पृथ्वी पर मरकर, यहाँ से विदा होकर,

अब उन देवताओं के साथ स्वर्गिक आनंद में निवास करती हैं।

जब परमेश्वर (बुद्ध) से यह पूछा गया, तो उन्होंने अपने जाने से बहुतों के उद्धार का ज्ञान प्राप्त किया और 20,000 अरहंतों (ज्ञानियों) के साथ प्रतिदिन एक योजन पैदल चलकर प्रस्थान किया। थेरा ने इद्धि (जादुई शक्ति) के बल पर कपिलवस्तु जाकर राजा के समक्ष अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। राजा ने उनसे पूछा, 'आप कौन हैं?' और उन्होंने उत्तर दिया, 'यदि आप उस मंत्री के पुत्र को नहीं जानते जिसे आपने परमेश्वर (बुद्ध) के पास भेजा है, तो जान लीजिए कि मैं ही वह पुत्र हूँ।'

[536] बुद्धस्सा पुत्तोम्ही असयहासहिनो॥
अंगिरस्स्सप्पतिमस्सा ताडिनो,॥
पितुपिता मयहा तुवंसी सक्का॥
धम्मेन मे गोतम अय्याकोसि' ति.॥ ॥

[536] हे बुद्ध के पुत्र, हाँ, हे
अंगिरस, जिनके समान कोई नहीं है, [251] जिन्होंने अजेय को भी विजय प्राप्त कर ली है।
हे साकियन, मेरे पिता के पिता आप ही हैं। हे गौतम, आप मेरे लिए धम्म के मार्ग में महान स्वामी हैं। [6]

[1] इन सात 'जन्मजात लोगों' पर देखें डैड. बिर्टकटोरीज़, 68 एन.; सीएफ. डायलॉग, ii. 202-208.

[2] 'इच्छा के बिना भी, वे स्वैच्छिक कार्य के बारे में सेटिंग व्यक्त करते हैं,' यह टिप्पणी है।

[3] पावंति: गंधाṃ विसज्जेंति (टिप्पणी)।

[4] धम्मपाल लिखते हैं, 'इस नदी से, जो उन दो कुलों की भूमि से उत्तर से दक्षिण की ओर बहती है, राजगृह दक्षिण-पूर्व में स्थित है, इसलिए वहाँ से कपिलवस्तु जाने के लिए इसे पश्चिम की ओर मुख करके पार करना पड़ता है,' या उत्तर-पश्चिम की ओर, 60 योजन की यात्रा (पृष्ठ 9; लगभग 435 मील)। इस नदी पर, जिसे अब रोवाई या रोहवैनी कहा जाता है, कनिंघम के भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, xii, पृष्ठ 190 आदि में विस्तृत विवरण देखें। कालुदयिन 'तब उपमाओं द्वारा अपनी आकांक्षाओं को प्रकट करते हैं' (टीका)।

[5] आनंद का स्वर्ग, इस दुनिया से चौथा ऊपर। तुलना करें सिस्टर्स, पृष्ठ 3.

[6] टीका में अंगीरस की दो व्याख्याएँ दी गई हैं, जो बुद्ध के लिए अन्यत्र प्रयुक्त नाम है - जैसे, दीघा, iii. 196; सामी., i. 196; अंग., iii. 239; जाट., i. 116। एक व्याख्याकार की व्युत्पत्ति है; दूसरी इसे सिद्धार्थ की तरह दूसरा व्यक्तिगत नाम कहती है। पहली तीन सुंदर गाथाएँ जातक टीका (बौद्ध जन्म कथाएँ, पृष्ठ 121) में अधिक संक्षेप में दी गई हैं । अगली गाथा श्लोकों में है; शेष सभी त्रिष्टुभ (उपवजिरा) हैं ; लेकिन यह मानना थोड़ा मुश्किल है कि संगीतमय आरंभ और भद्दा अनुक्रम एक ही व्यक्ति द्वारा रचित हैं। अंग. निक., i.
में कालुदयिन को दिया गया विशिष्ट भेद। 25वीं सीट इस दूतावास द्वारा जीती गई थी - यानी 'उस व्यक्ति के दूतावास द्वारा जिसने कुलों को सबसे अच्छी तरह संतुष्ट किया।'

अपदाना से और भी बहुत कुछ

बुद्ध को उनके पिता (राजा) के पास वापस लौटने में कालुदाई की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

3.19. जब तथागत उसी बाँस के बाग में निवास कर रहे थे, तब महान राजा सुद्धोदन ने यह सुना: "सुना है कि मेरे पुत्र ने छह वर्ष तक कठिन कर्म करके बुद्ध बनकर सर्वोच्च ज्ञान प्राप्त किया है, उसने धर्म का उत्कृष्ट चक्र चलाया है और वह बाँस के बाग (वेलुवन) में है।" उन्होंने एक मंत्री से कहा: "आओ, मेरे सेवक! तुम एक हजार पुरुषों से घिरे हुए राजगृह जाओ और मेरी ओर से कहो: 'तुम्हारे पिता, महान राजा सुद्धोदन अपने पुत्र से मिलना चाहते हैं' और मेरे पुत्र को लेकर वापस आओ।" उस मंत्री ने सिर झुकाकर राजआदेश ग्रहण किया और कहा, "हे महाराज!" फिर वह साठ योजन लंबी यात्रा पर, एक हजार पुरुषों से घिरे हुए, शीघ्र ही आगे बढ़े और दासबाला की चार सभाओं के बीच बैठ गए। उसी समय दासबाला धर्मोपदेश के समय मठ में प्रवेश कर गए। उस मंत्री ने मन ही मन कहा, "राजा द्वारा

भेजा गया राजसंदेश अभी के लिए स्थगित कर दिया जाए", और सभा के अंतिम छोर पर खड़े होकर गुरु के धर्मोपदेश को सुना। खड़े-खड़े ही उन्होंने अपने हजार पुरुषों के साथ अर्हतत्व प्राप्त किया और भिक्षु बनने की इच्छा व्यक्त की। भगवान ने हाथ बढ़ाकर आह्वान किया, "आओ! भिक्षुओं!" उसी क्षण वे सभी जादुई रूप से प्रकट हुए और साठ वर्ष के थेरों के समान हो गए। अर्हतत्व प्राप्त करने के समय से ही उस मंत्री ने मन ही मन कहा, "हे संतों (आर्यों), समभाव बनाए रखें" और उन्होंने दासबाला को भेजे गए राजसंदेश के बारे में कुछ नहीं कहा। राजा ने ऐसा किया। राजा ने उसी उद्देश्य से एक और मंत्री को भेजा और कहा: "जो गया था, वह न तो लौटा है और न ही उसके लौटने का कोई संदेश आया है।" वह दूसरा मंत्री भी बुद्ध के पास गया, अपने दल के साथ अर्हतत्व प्राप्त किया, लेकिन मौन रहा। फिर राजा ने उसी उद्देश्य से सात और मंत्रियों को भेजा और कहा: "आओ! मेरे सेवकों! तुम भी जाओ!" वे सभी नौ मंत्री, अपने नौ हजार पुरुषों के साथ, अपने कर्तव्य पूरे करने के बाद, मौन हो गए और वहीं रुके रहे।

3.20. राजा को कोई सूचना न मिलने पर, जो उन्हें संदेश के माध्यम से भेजी जानी थी, उन्होंने सोचा, "मेरे इतने सारे सैनिक, मेरे प्रति स्नेह की कमी के कारण, कोई सूचना संदेश के माध्यम से नहीं लाए; अब भला मेरा दूत कौन बनेगा?" और पूरी राजसेना का सर्वेक्षण करते हुए उन्होंने कालुदायी को देखा। कहा जाता है कि उन्होंने राजा के लिए सभी प्रकार के लाभ किए, वे एक विश्वासयोग्य, अत्यंत विश्वसनीय मंत्री थे, जिनका जन्म बोधिसत्व के साथ एक ही दिन हुआ था, और वे बोधिसत्व के साथ कोमल मिट्टी से खेलने वाले सहयोगी थे। तब राजा ने उनसे इस प्रकार कहा: "प्रिय कालुदाई! क्योंकि मैं अपने पुत्र को देखने की इच्छा रखता हूँ, इसलिए मैंने नौ मंत्रियों को नौ हजार सैनिकों के साथ भेजा था; उनमें से एक भी वापस नहीं आया; कोई भी आकर मुझे कोई खबर नहीं देता, यहाँ तक कि वह खबर भी नहीं जो मेरे जीवन के लिए खतरे के बारे में हो; मैं अपने जीवित रहते अपने पुत्र को देखना चाहता हूँ; क्या आप सचमुच मुझे मेरे पुत्र से मिलवा सकते हैं?" कालुदाई ने उत्तर दिया: "महाराज! मैं ऐसा कर सकता हूँ, यदि मुझे भिक्षु बनने की अनुमति मिल जाए।" राजा ने कहा: "मेरे प्रिय! चाहे तुम भिक्षु बनो या न बनो, कृपया मुझे मेरे पुत्र से मिलवा दो।" कालुदायी ने "बहुत अच्छा! महाराज!" कहते हुए राजा से राजसंदेश लिया, राजगृह गए, गुरु द्वारा धर्मोपदेश के समय सभा के अंतिम छोर पर खड़े होकर धर्म का प्रवचन सुना, अपने साथियों के साथ अर्हतत्व प्राप्त किया, "आओ! भिक्षु!" कहकर भिक्षु बन गए और वहीं निवास करने लगे।

बुद्ध अपने पिता के राज्य में लौटते हैं और अपने पुत्र राहुल को दीक्षा देते हैं ।

3.21. गुरु बुद्ध बनने के बाद, प्रथम वर्षा ऋतु के पूरे समय इसिपताना में रहे और उपवास की समाप्ति पर पवाराना समारोह संपन्न किया, फिर उरुवेला गए, जहाँ तीन माह रहकर उन्होंने गुंथे हुए बालों वाले तीन तपस्वी भाइयों को परिवर्तित किया, और फुस्सा माह की पूर्णिमा के दिन एक हजार भिक्षुओं के दल से घिरे हुए राजगृह गए और वहाँ दो माह रहे। बनारस से प्रस्थान के बाद अब तक पाँच माह बीत चुके थे। शीत ऋतु का पूरा समय बीत चुका था। थेरा कलुदयी के आगमन के बाद से सात-आठ दिन बीत चुके थे। फाग्गुन माह की पूर्णिमा के दिन, थेरा ने सोचा: "सर्दी समाप्त हो गई है; वसंत ऋतु आ गई है। फसल कटाई के बाद मनुष्यों ने चारों ओर यात्रा के लिए सड़कें बना दी हैं; धरती हरी घास से ढकी हुई है; घने जंगल सुंदर फूलों से खिले हुए हैं; सड़कें अब यात्रा के योग्य हैं; अब दशाबल के लिए अपने सगे-संबंधियों पर कृपा करने का समय आ गया है।" तब थेरा परमेश्वर के पास गए और दशाबल के कुल नगर की यात्रा की प्रशंसा में कम से कम साठ श्लोकों में बोले:

"चूंकि पेड़ पूरी तरह से खिल चुके हैं, इसलिए अब

हे पूज्यवर, गहरे लाल रंग का!

अपने पत्तों के आवरण को त्यागकर वे शुरुआत कर रहे हैं

फल देने के लिए। मानो वे आग की लपटों से चमक रहे हों।

हे महान नायक! अब समय आ गया है कि वे अपने अनुभव साझा करें।

स्वाद। मौसम न तो बहुत ठंडा है और न ही बहुत ठंडा।

गर्म; न तो दान की अत्यधिक कमी है और न ही

अकाल; ज़मीन घास से भरी और हरी है। यह है

हे महान ऋषि, वह समय!

तब गुरु ने उनसे कहा, "हे उदयि! तुम अपनी मधुर वाणी में यात्रा की इतनी प्रशंसा क्यों कर रहे हो?" उदयि ने उत्तर दिया, "आदरणीय! आपके पिता, महान राजा सुद्धोदन, आपसे मिलना चाहते हैं, कृपया अपने सगे संबंधियों पर कृपा कीजिए।" बुद्ध ने सहमति जताते हुए कहा, "उदयि! मैं अपने सगे संबंधियों पर कृपा करूंगा; भिक्षुओं के समूह को सूचित कर दीजिए, वे यात्रा के सभी कर्तव्यों का पूर्ण पालन करेंगे।" बुद्ध का उत्तर सुनकर गुरु उदयि ने कहा, "आदरणीय! ठीक है, आदरणीय," और भिक्षुओं को तदनुसार सूचित कर दिया।

3.22. बुद्ध ने अंग और मगध के दस हजार निवासियों और कपिलवस्तु के दस हजार निवासियों, कुल मिलाकर बीस हजार भिक्षुओं (जिन्होंने अपने आसवों को नष्ट कर दिया था और अरहत बन गए थे) से घिरे हुए राजगृह को छोड़कर प्रतिदिन एक योजन की दूरी तय करते हुए अपनी यात्रा पर प्रस्थान किया। उन्होंने मन ही मन कहा, "राजगृह से कपिलवस्तु साठ योजन दूर है, मैं दो महीने में वहाँ पहुँच जाऊँगा।" इस प्रकार बुद्ध ने विश्राम यात्रा पर प्रस्थान किया। थेरा कालुदयी ने भी मन ही मन कहा, "मैं महाराज के प्रस्थान की सूचना राजा को दे दूँगा।" वे आकाश में गए और राजमहल में दर्शन दिए। राजा ने थेरा को देखा, उनका हृदय प्रसन्न हुआ, उन्होंने उन्हें पालकी पर बैठने का निमंत्रण दिया और अपने लिए तैयार किए गए विभिन्न प्रकार के उत्तम स्वाद वाले भोजन से भरा एक कटोरा भेंट किया। थेरा अपने आसन से उठे और प्रस्थान के संकेत दिए। राजा ने निवेदन करते हुए कहा, "कृपया बैठिए और भोजन कीजिए, महाराज।" थेरा ने उत्तर दिया, "हे महाराज! मैं गुरु के पास जाकर भोजन करता हूँ।" राजा ने पूछा, "गुरु कहाँ हैं, महाराज?" थेरा ने उत्तर दिया, "हे महाराज! वे आपसे मिलने के उद्देश्य से बीस हजार भिक्षुओं से घिरे हुए अपनी यात्रा पर निकले हैं।" राजा प्रसन्न होकर बोले, "कृपया इस भोजन का आनंद लीजिए; जब तक मेरा पुत्र इस नगर में न पहुँच जाए, तब तक कृपया यहीं से उसके लिए भिक्षापात्र एकत्र करें।" थेरा मान गए। राजा ने थेरा का आतिथ्य सत्कार किया, भिक्षापात्र को सुगंधित पाउडर से शुद्ध किया, उसमें उत्तम भोजन सामग्री भरी और थेरा को सौंपते हुए कहा: "कृपा करके इसे तथागत को अर्पित करें।" सभी उपस्थित लोगों के देखते ही थेरा ने कटोरा आकाश में उछाल दिया, स्वयं वायुमंडल में ऊपर गए, भिक्षापात्र लाए और उसे गुरु के हाथों में रख दिया। गुरु ने भोजन का आनंद लिया। इसी प्रकार थेरा प्रतिदिन भिक्षापात्र लाते रहे। गुरु ने भी अपनी पूरी यात्रा के दौरान राजा द्वारा भिक्षा के रूप में दिए गए भोजन को ही ग्रहण किया। थेरा प्रतिदिन भोजन के अंत में यह सूचना देते थे: "आज प्रतापी इतने योजन निकट आ गए हैं; अब, उन्होंने इतनी दूरी तय कर ली है: और बुद्ध के गुणों से संबंधित विषयों पर अपने धार्मिक प्रवचनों से, बिना उन्हें देखे ही, पूरे राजपरिवार को गुरु के प्रति पूर्ण श्रद्धा से भर दिया है। इसी कारण परमेश्वर ने उन्हें सर्वोच्च पदों में से एक प्रदान करते हुए कहा: "हे भिक्षुओं! कालुदायी वह हैं, जो मेरे शिष्य भिक्षुओं में सर्वोच्च स्थान रखते हैं और मेरे परिवार के सदस्यों को मुझमें श्रद्धा दिलाते हैं।"

3.23. जब भगवान बुद्ध आए, तो शाक्यों ने भी मन ही मन कहा, "हम अपने सबसे अच्छे रिश्तेदार का स्वागत करेंगे", और वे सब एकत्रित हुए। भगवान बुद्ध के निवास स्थान पर विचार करने के बाद, उन्होंने शाक्यों के निग्रोध वन को रमणीय मानते हुए चुना। उन्होंने सभी तैयारियाँ करवाईं, सुगंधित फूल लिए और सबसे पहले युवा बालक-बच्चियों को, जो हर प्रकार के आभूषणों से सुशोभित थे, उनका स्वागत करने के लिए आगे भेजा। बाद में, उन्होंने राजकुमारियों और राजकुमारियों को आगे भेजा। उनके बीच, उन्होंने स्वयं भगवान बुद्ध को इत्र, फूल आदि से सम्मानित करते हुए, उन्हें अपने साथ निग्रोध वन ले गए। वहाँ, भगवान बुद्ध दो हजार अरहतों से घिरे हुए, बुद्ध के लिए तैयार किए गए उत्तम आसन पर विराजमान हुए। शाक्य जन्मजात अभिमानी और अत्यधिक घमंडी थे। उन्होंने इस प्रकार विचार किया: "राजकुमार सिद्धार्थ हमसे छोटे हैं; वे हमारे सबसे छोटे चचेरे भाई, भतीजे, पुत्र, पोते हैं" और उन्होंने युवा और कनिष्ठ राजकुमारों से इस प्रकार कहा: "आप सभी उन्हें प्रणाम करें; हम आप सभी के पीछे बैठेंगे।"

3.24. जब वे इस प्रकार बिना उनकी आराधना किए बैठे रहे, तब प्रतापी प्रभु ने उनका इरादा जान लिया और कहा, "मेरे सगे-संबंधी मुझे प्रणाम नहीं करते; देखो! मैं अब उन्हें अपनी आराधना करने पर मजबूर करूँगा", फिर चौथे ध्यान में प्रवेश किया, वहाँ से उठे, आकाश में गए और कंद के आम के वृक्ष के नीचे किए गए दो चमत्कारों के समान एक चमत्कार किया, मानो अपने चरणों की धूल उनके सिर पर बिखेर दी हो। उस भयानक दृश्य को देखकर राजा ने कहा, "हे पूज्यवर! आपके जन्मदिन पर, जैसे ही मैंने आपके चरणों को दूसरी दिशा में घूमते देखा, मैंने आपके चरणों में प्रणाम किया और जब कालदेवल की पूजा करने के लिए आपको आपके चरणों में बुलाया गया, तो मैं ब्राह्मण ऋषि के सिर पर विराजमान हो गया। यह मेरी पहली प्रणाम थी। हल चलाने के दिन भी, जैसे ही मैंने आपके युजेनिया वृक्ष की स्थिर छाया को देखा, जब आप ******** (पृष्ठ 159) के नीचे शुभ पलंग पर सो रहे थे, मैंने आपके चरणों की पूजा की। यह मेरी दूसरी प्रणाम थी। अब, जब मैं ऐसा चमत्कार देख रहा हूँ जो मैंने पहले कभी नहीं देखा, तो मैं आपके चरणों की पूजा कर रहा हूँ। यह मेरी तीसरी प्रणाम है।" जब राजा ने प्रतापी बुद्ध की पूजा की, तो एक भी शाक्य ऐसा नहीं बचा जो उनकी पूजा किए बिना रह सके। सभी ने स्वाभाविक रूप से उन्हें अपना-अपना सम्मान दिया।

3.25. इस प्रकार अपने सगे-संबंधियों से आराधना करवाने के बाद, भगवान आकाश से अवतरित हुए और अपने लिए तैयार किए गए आसन पर बैठ गए। जब भगवान बैठे, तो उनके व्याकुल सगे-संबंधी एकत्रित हो गए। वे सब एकाग्रचित्त होकर बैठ गए। इसके बाद एक विशाल वर्षा-बादल से कमल-वर्षा हुई। तांबे के रंग की वर्षा ध्वनि उत्पन्न करती हुई गिरी। इसने केवल उन्हीं को भीगा जो भीगना चाहते

थे। जो भीगना नहीं चाहते थे, उनके शरीर पर एक बूंद भी नहीं गिरी। इस घटना को देखकर सभी हृदय और आत्मा से विस्मित हो गए और कहने लगे, "सचमुच, यह अद्भुत है! सचमुच, यह विचित्र है!" गुरु ने उत्तर दिया, "केवल अब ही नहीं, मेरे सगे-संबंधियों की सभा पर कमल-वर्षा हुई है, पहले भी वर्षा हुई थी", और इस कथन को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने वेस्सन्तरा जन्म-कथा (जातक) सुनाई। धर्म का उपदेश सुनकर सभी शाक्य पुरुष उठे, प्रणाम किया और चले गए। राजा और उनके मंत्रियों में से एक भी ऐसा नहीं था जिसने जाने से पहले कहा हो: "कल कृपया हमारा भोजन-अर्पण स्वीकार करें।"

3.26. अगले दिन, गुरुजी बीस हजार भिक्षुओं के दल के साथ भिक्षा मांगने के लिए कपिलवस्तु नगर में प्रवेश किया। उन्हें न तो किसी ने आमंत्रित किया और न ही किसी ने उनका भिक्षापात्र ग्रहण किया। गुरुजी नगर के द्वार के स्तंभ के पास खड़े होकर मन ही मन सोचने लगे, "पूर्ववर्ती बुद्ध अपने कुल नगर में भिक्षा मांगने के लिए कैसे विचरण करते थे? क्या वे शासकों के घरों में वरीयता क्रम से जाते थे? या फिर क्या वे घर-घर जाकर भिक्षा मांगने का धुतंग अभ्यास करते थे?" इसके बाद, यह देखकर कि पूर्ववर्ती बुद्धों में से कोई भी अपने शाही रिश्तेदारों के पास भोजन के लिए नहीं गया, उन्होंने मन ही मन कहा, "मुझे भी अब उनकी इस परंपरा का पालन करना चाहिए; भविष्य में भी, मेरे शिष्य मेरे ही उदाहरण का अनुसरण करते हुए भिक्षा मांगने के कर्तव्य को पूर्णतः निभाएंगे", और वे स्वयं उस घर से भिक्षा मांगने के लिए निकल पड़े जहाँ से वे प्रवेश कर चुके थे। दो मंजिला, तीन मंजिला आदि आलीशान अपार्टमेंटों में शेर के पिंजरे जैसी खिड़कियां खोलकर बड़ी संख्या में लोग उन्हें ध्यान से देखने में व्यस्त थे और आपस में कह रहे थे: "लोग कहते हैं कि हमारे स्वामी राजकुमार सिद्धार्थ भिक्षा मांगने के लिए घूमते हैं।"

3.27. राहुल की माता ने भी अपने कमरे की खिड़की खोली और मन ही मन कहा, "कहा जाता है कि हमारे युवा स्वामी पहले इसी शहर में राजसी वैभव के साथ सोने की पालकियों आदि पर विचरण करते थे, अब भिक्षा मांगने के लिए अपने बाल और दाढ़ी मुंडवाकर, पीले वस्त्र धारण करके, हाथों में भिक्षापात्र लिए घूम रहे हैं; क्या यह वाकई शोभा देता है?" उन्होंने बाहर देखा और पाया कि प्रतापी बुद्ध, अतुलनीय महिमा से जगमगाते हुए, एक महान व्यक्तित्व के बत्तीस गुणों से सुशोभित, अपने अस्सी छोटे अंगों से दीप्तिमान, अपनी एक-दसवीं किरणें भली-भांति प्रदर्शित करते हुए, शहर की सड़कों को अपने रागों (या हर प्रकार की कामुकता से रहित, या विभिन्न रंगों (विरागों) से दीप्तिमान शरीर की चमक से रोशन कर रहे थे, और परिणामस्वरूप उन्होंने अपने सिर के मुकुट से लेकर पैरों के तलवों तक दस स्वरों से प्रतापी की स्तुति की। नर-सिंह श्लोक (नरसिहगाथा) इस प्रकार:-

शेर मनमोहक नीले मुलायम बालों वाला है

लहराते बाल; उसका माथा बेदाग जैसा दिखता है

सूर्य की सतह, उसकी नाक आनुपातिक रूप से है

प्रमुख, कोमल और लंबा; उसकी किरणों की चमक

व्यापक रूप से विकिरण करना,

और राजा को इस प्रकार सूचित किया: "आपका पुत्र भिक्षा मांगने गया है।" राजा व्याकुल हो गए, अपने वस्त्र स्वयं ठीक किए, अपने महल से शीघ्रता से बाहर निकले और उस तेजस्वी व्यक्ति के पास पहुँचे, उनके सामने खड़े होकर पूछा: "हे पूज्यवर! आप हमें कब अपमानित कर रहे हैं? आप भिक्षा मांगने क्यों गए हैं? आपने हमें यह क्यों नहीं बताया कि इतने भिक्षुओं के लिए भोजन जुटाना संभव नहीं है?" उत्तर था: "हे महाराज! यह भिक्षा मांगना हमारी खानदानी परंपरा है।" राजा ने उत्तर दिया: "हे पूज्यवर! क्या हमारा वंश महासम्मत क्षत्रिय के नाम से नहीं जाना जाता? हमारी परंपरा में ऐसा कोई क्षत्रिय नहीं है जो भिक्षा मांगने जाता हो।" बुद्ध सड़क पर खड़े-खड़े ही उत्तर देने लगे: "हे महान राजा! आपका कुल, अर्थात्, यह क्षत्रिय वंश है; परन्तु हमारा वंश, जिसमें 'दीपांकर, कोण्डञ्ञ, कस्सपा' शामिल हैं, यही है, अर्थात् बुद्ध का वंश; ये और हजारों अन्य बुद्ध भी भिक्षा मांगकर ही अपना जीवन यापन करते थे", और उन्होंने यह श्लोक पढ़ा:-

आपको प्रयास करना होगा; आपको निष्क्रिय नहीं रहना चाहिए।

लापरवाही; आपको धर्म का अभ्यास इस प्रकार करना चाहिए ताकि यह

अच्छा अभ्यास; जो धम्म का अभ्यास करता है, वह जीवन यापन करता है।

(सेती) इस दुनिया में और अपनी दुनिया में भी खुशी से

अनुवर्ती अस्तित्व"।

श्लोक के पाठ के अंत में, राजा सोतापत्ति के फल में विराजमान हो गया। यह सुनकर एक और श्लोक पढ़ा गया:

धम्म का अभ्यास इस प्रकार करो कि वह अच्छा अभ्यास बन जाए;

इसका अभ्यास इस प्रकार नहीं किया जाना चाहिए कि यह एक बुरी आदत बन जाए।

अभ्यास; जो धम्म का अभ्यास करता है, वह जीवन यापन करता है।

इस जीवन में और यहाँ भी प्रसन्नतापूर्वक रहना।

बाद में,"

राजा ने सकदागामी (वह जो केवल एक बार ही मानव जन्म लेगा) के फल को प्राप्त कर लिया। महाधम्मपाल की जन्म कथा सुनकर, राजा ने उस फल को प्राप्त कर लिया जो कभी मानवलोक में नहीं लौटेगा (अनागामी)। मृत्यु के निकट, राजा ने सफेद छत्र के नीचे अपने सुंदर राजसी पलंग पर लेटे हुए ही अर्हतत्व प्राप्त कर लिया। राजा ने वन में रहकर गहन ध्यान में लीन होने का कोई आडंबर नहीं किया। जैसे ही उन्होंने मोक्ष की प्रथम अवस्था (सोतापत्ति) को प्राप्त किया, राजा ने बुद्ध का प्याला उठाया, भगवान बुद्ध और उनके अनुयायियों को अपने महल में आमंत्रित किया और उन सभी को उत्तम भोजन से दावत दी। भोजन समाप्त होने पर, राहुल की माता को छोड़कर, राजमहल की सभी स्त्रियाँ आईं और भगवान बुद्ध को प्रणाम किया। हालांकि उसके आसपास के लोग उससे कह रहे थे: "कृपया जाइए; कृपया युवा प्रभु को अपना सम्मान दीजिए", फिर भी वह नहीं गई और बोली: "यदि मुझमें योग्यता है, तो युवा प्रभु स्वयं मेरे समक्ष आएंगे; जब वे आएंगे तभी मैं उन्हें अपना सम्मान अर्पित करूंगी।"

3.28. प्रतापी प्रभु ने अपना भिक्षापात्र राजा को सौंप दिया, अपने दो प्रमुख शिष्यों के साथ राजसी राजकुमारी के सुंदर कक्ष में गए और अपने लिए तैयार आसन पर बैठते हुए कहा: "जब राजकुमारी अपनी इच्छा अनुसार प्रणाम करे, तब कुछ न कहा जाए।" वह शीघ्र ही आई, उनके टखनों को पकड़ा, अपना सिर उनके चरणों में रखा और अपनी इच्छा अनुसार उनकी आराधना की। राजा ने राजकुमारी की उन योग्यताओं के बारे में बताया जो उन्होंने भगवान के प्रति स्नेह और श्रद्धा के रूप में प्राप्त की थीं: "हे पूज्यवर! मेरी पुत्री ने जब सुना कि आपने पीले वस्त्र, ऊपर और नीचे, पहने हैं, तब से वह भी पीले वस्त्र पहनने लगी; जब उसने सुना कि आप केवल एक बार भोजन करते हैं, तो वह भी उसी प्रकार एक बार भोजन करने लगी; जब उसने सुना कि आपने सोने के लिए आलीशान पलंग का त्याग कर दिया है, तो वह भी केवल एक कपड़े की पट्टी वाले पलंग पर सोने लगी; जब उसे पता चला कि आप मालाओं, इत्र आदि का त्याग करते हैं, तो वह भी मालाओं और इत्र का त्याग करने लगी; यद्यपि उसके अपने रिश्तेदारों ने संदेश भेजकर कहा: "हम आपकी देखभाल करेंगे", फिर भी उसने उनमें से किसी की ओर देखा तक नहीं; हे पूज्यवर! इस प्रकार मेरी पुत्री ने अपनी योग्यता प्राप्त कर ली है।" बुद्ध ने उत्तर दिया: "महाराज! यह बात विचित्र नहीं है, क्योंकि अब आपकी देखरेख में, जब राजकुमारी की बुद्धि परिपक्व हो गई है, तो वह अपना ख्याल स्वयं रख सकती है; पहले तो यह राजकुमारी, यद्यपि उसे पहाड़ी की तलहटी में असुरक्षित भटकना पड़ता था और उसकी बुद्धि अभी परिपक्व नहीं हुई थी, फिर भी वह अपना ख्याल स्वयं रखती थी।" इतना कहकर, बुद्ध ने किन्नरा की जन्म कथा (जातक) सुनाई, अपने आसन से उठे और चले गए।

3.29. अगले दिन, जब राजकुमार नंदा के नए घर में प्रवेश और विवाह समारोह के उपलक्ष्य में भोज आयोजित किए जा रहे थे, बुद्ध उनके घर गए, उन्हें भिक्षु बनाने की इच्छा से उन्हें अपना भिक्षापात्र पकड़ने को कहा, औपचारिक भाषण दिया, अपने आसन से उठे और चले गए। राजकुमार को जाते देख राजकुमारी जनपद कल्याणी ने उनसे कहा, "हे मेरे स्वामी, जल्दी लौट आइए!" और गर्दन उठाकर उनकी ओर देखने लगीं। भगवान से "कृपया अपना भिक्षापात्र वापस ले लीजिए" कहने में असमर्थ होने के कारण, वे मठ पहुँचने तक उनके साथ चले गए। उनकी इच्छा के विरुद्ध ही, भगवान ने उन्हें भिक्षु बना दिया। इस प्रकार, कपिलवस्तु नगर में आगमन के तीसरे दिन, भगवान ने राजकुमार नंदा को भिक्षु बना दिया।

3.30. सातवें दिन, राहुल की माता ने भी युवा राजकुमार को सजाया-संवारा और उसे इन शब्दों के साथ भगवान के समक्ष भेजा: “मेरे प्रिय पुत्र! इस भिक्षु को देखो, जिनका रंग ब्रह्मा के समान है, जो स्वर्ण रंग के हैं, बीस हजार भिक्षुओं से घिरे हुए हैं; वे तुम्हारे पिता हैं; उनके पास सोने का अपार खजाना है; हमने उन्हें उनके संन्यास के समय से नहीं देखा है; जाओ और उनसे अपना उत्तराधिकार मांगो, ‘मेरे प्रिय पिता! मैं, आपका राजकुमार, अभिषेक प्राप्त करके विश्वराज बनूंगा; मुझे धन की आवश्यकता है; कृपया मुझे धन दीजिए; वास्तव में, पुत्र ही पिता की संपत्ति का स्वामी होता है।’” युवा राजकुमार जैसे ही भगवान के समक्ष पहुंचा, उसे पिता तुल्य स्नेह प्राप्त हुआ, वह प्रसन्न हुआ और बोला: “हे भिक्षु! आपकी परछाई धन्य है” और अपने विषय के अनुरूप अनेक अन्य बातें कहने लगा। भोजन समाप्त करने के बाद, परम पूज्य गुरु ने धन्यवाद भाषण दिया, अपने आसन से उठे और प्रस्थान किया। युवा राजकुमार भी परम पूज्य गुरु के पीछे-पीछे यह कहते हुए चले: “हे भिक्षु! कृपया मुझे मेरा उत्तराधिकार प्रदान करें; कृपया मुझे मेरा उत्तराधिकार प्रदान करें; कृपया मुझे मेरी विरासत प्रदान करें।” परम पूज्य गुरु ने युवा राजकुमार को वापस नहीं लौटने दिया। आसपास के लोगों ने भी युवा राजकुमार को, जो परम पूज्य गुरु के साथ जा रहे थे, वापस नहीं लौटने दिया। इस प्रकार, युवा राजकुमार परम पूज्य गुरु के साथ सीधे मठ चले गए।

3.31. इसके बाद, भगवान ने मन ही मन सोचा, “पिता के पास जो भी धन है, यह व्यक्ति उसे पाने की इच्छा रखता है, जो पुनर्जन्मों के चक्र में बांधता है और विनाश लाता है; अब मैं इसे वह सात प्रकार का पवित्र धन दूंगा जो मैंने बोधि वृक्ष के प्रांगण में प्राप्त किया था; मैं इसे अलौकिक उत्तराधिकार का स्वामी बना दूंगा,” और आदरणीय सारिपुत्त से कहा, “तो फिर, सारिपुत्त! राहुल को भिक्षु संघ में शामिल होने दो।” थेरा ने उन्हें नवोदित भिक्षु बना दिया। जब युवा राजकुमार नवोदित भिक्षु बन गया, तो राजा को घोर कष्ट भोगना पड़ा। उस पीड़ा को सहन न कर पाने के कारण राजा परम पूज्य के समक्ष गए और उनसे एक वरदान मांगा: “हे पूज्य! यह अच्छा होगा यदि मेरे प्रभु माता-पिता की सहमति के बिना पुत्र का विवाह न कराएं।” परम पूज्य ने उन्हें वरदान दिया और अगले दिन, राजमहल में भोजन करने के बाद, जब राजा, जो एक तरफ बैठे थे, ने कहा: “हे पूज्य! जब आप कठिन कर्म कर रहे थे, तभी एक देवता मेरे पास आए और बोले: 'आपका पुत्र मर गया है'।” उनकी बातों पर विश्वास न करते हुए, मैंने उनकी खबर को यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया: 'मेरा पुत्र बुद्ध बनकर पूर्ण ज्ञान प्राप्त किए बिना नहीं मरेगा'। इस पर प्रतापी ने उत्तर दिया, "अब तुम ऐसी कहानी पर कैसे विश्वास कर सकते हो, जबकि पहले भी तुमने उन लोगों पर विश्वास नहीं किया था जिन्होंने तुम्हारे पुत्र की मृत्यु की कहानी सुनाते हुए हड्डियाँ दिखाई थीं?" और इस घटना के लिए महादम्मपालों की जन्म कथा (जातक) सुनाई। प्रवचन के अंत में, राजा अनागामी (अनागामी) के फल में स्थापित हो गए।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (234): एकविहारिया (तिस्सा-कुमारा)

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (234) ------>>>> अगला

अध्याय X.
दस श्लोक
=234. एकविहारिया (तिस्सा-कुमारा)=

बुद्ध युग में, परम पूज्य (बुद्ध) के देहांत के बाद, उनका पुनर्जन्म राजा धम्मासोका के सबसे छोटे भाई के रूप में हुआ। और राजा अशोक ने, उनके देहांत के 218वें वर्ष में, पूरे भारत को एक साम्राज्य में एकजुट करके और अपने छोटे भाई तिस्सा को वायसराय बनाकर, एक ही चाल से शासन के लिए तिस्सा की मित्रता प्राप्त कर ली। [1]

शिकार करते समय राजकुमार, एक वृक्ष के नीचे बैठे हुए यूनानी थेरा, महा धम्मरक्षित [2] के दर्शन से इतने प्रभावित हुए कि उनका भी जंगल में उसी प्रकार रहने का मन हुआ। थेरा की अलौकिक शक्तियों को देखकर वे [252] महल लौट आए और राजा से कहा कि वे संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करना) चाहते हैं। अशोक उन्हें किसी भी प्रकार से मना नहीं कर सके। भिक्षु के सुख की कामना करते हुए उन्होंने ये श्लोक कहे:

[537] पुरतो पच्चतो वा पि अपारो सीई न विज्जति,॥
अतिव फासु भवति राक्षसो वने.॥ ॥

[538] हांडा एको गमिसामि अरण्यं बुद्धवंणितं,॥
फासु1 एकविहारिसा पहितत्तस्सा भिक्खुनो॥ ॥

[539] योगी पितिकाराm̥ रम्माm̥ मत्तकुञ्जरसेविताm̥,॥
एको अथवसि खिप्पं पविसिसामि काणान:॥ ॥

[540] सुपुफ़िते सीतावने सीताले गिरीकंदरे,॥
गत्तानि परिसिंचित्वा चाणकमिस्सामि एककों॥ ॥

[541] एकाकियो अदुतियो रमणीये महावने,॥
कदाहान् विहारिसामि कटैकिको अनासावो॥ ॥

[542] इवं मे कट्ठुकमस्सा अधिप्पायो समिज्जतु,॥
साधयिस्समहं येव नाणनो अण्णास्सा कराको॥ ॥

[543] एसबंधामि सन्नहाऽ पविसिसामि काणांऽ,॥
न ततो निक्खमिस्सामि अप्पत्तो आसवक्खयौ ॥॥ ॥

[544] मलुते उपवायन्ते सीते सुरभिगांधिके,॥
अविज्जां ददायिस्सामि निसिन्नो नागमुद्धनि.॥ ॥

[545] वेणे कुसुमसांजन्ने पब्भारे नुना सीतले,॥
विमुत्तिसुखेन सुखितो रमिसामि गिरिब्बाजे॥ ॥

[546] सोहाm̥ [58] परिपुणसाअक्कप्पो कैंडो पनारसो यथा,॥
सब्बासव परिक्खिणो नत्थि दानि पुनब्भवो' ति.॥ ॥

[537] यदि आगे कोई न हो, न पीछे कोई
पाया जाए, तो अकेला ही जंगल में होता है,
उसका जीवन अत्यंत सुखद हो जाता है। [3]

[538] तो आओ! मैं अकेला ही यहाँ से निकलकर जाऊँगा,
बुद्ध द्वारा सराहे गए वन-जीवन को जीने के लिए, [4] और उस कल्याण का स्वाद चखने के लिए जिसे भिक्षु जानता है,
जो एकाग्र मन से अकेले रहता है।

[539] हाँ, शीघ्रता से और अकेले, अपनी खोज से बंधे हुए, [5] मैं उस जंगल में जाऊँगा जिसे मैं प्यार करता हूँ, जंगली हाथियों का
स्थान , प्रत्येक तपस्वी के लिए रोमांचकारी उत्साह का
स्रोत और साधन । [6]

[540] ठंडे वुडलैंड के फूलों से भरे मैदानों में ठंडे पानी बहते हैं, [7] पहाड़ियों की घाटियों के भीतर; और वहाँ
मैं अपने अंगों को गर्म और थका हुआ होने पर स्नान कराऊँगा, और वहाँ
मैं खुले में एकांत में घूमूँगा। (540)

[541] [253] सुंदर जंगलों में अकेला और बिना साथी के,
मैं कब आराम करने आऊँगा, काम पूरा हो जाएगा, दिल शुद्ध हो जाएगा?

[542] हे, मैं जो इतना प्रसन्न हूँ, काश मैं जीत पाता!
केवल मैं ही इस कार्य को पूरा कर सकता हूँ; इसमें
कोई भी अपने साथी मनुष्य के लिए कुछ भी नहीं कर सकता। [8]

[543] मैं अपनी आत्मा का कवच पहन लूँगा, और इस प्रकार
मैं जंगल में प्रवेश करूँगा, जहाँ से
मैं तब तक बाहर नहीं आऊँगा जब तक निर्वाण प्राप्त नहीं हो जाता। [9]

[544] मैं पर्वत की चोटी पर बैठूंगा, जबकि
ठंडी और सुगंधित हवा मेरे माथे पर बहेगी,
और अज्ञानता के भ्रामक कोहरे को तोड़ देगी।

[545] फिर जंगल के फूलों के कालीन पर,
जल्द ही चट्टान की ठंडी गुफा में,
स्वतंत्रता के आनंद में धन्य होकर मैं
तुम पर अपना आराम पाऊंगा, चट्टान के पुराने गढ़। [10]

[546] देखो! मैं वही हूँ जिसका उद्देश्य पूर्ण हो चुका है।
और पंद्रहवें दिन के चंद्रमा के समान गोलाकार।
सभी घातक रोगों से मुक्त, स्वस्थ, प्रतिरक्षाशील,
मैं जानता हूँ कि मेरे लिए पुनर्जन्म कभी नहीं आएगा।

[1] यह महावंश, अध्याय v, श्लोक 154 160 में बताया गया है । इरेमेन, 161-172, निम्नलिखित पैराग्राफ में धम्मपाल के गद्य विवरण के लिए एक छंदबद्ध समानांतर है, जो थोड़ा संक्षिप्त है।

[2] योनका-महा-धम्मरक्खितथेरा। यह थेरा, जिसे अन्यत्र ग्रीक नहीं कहा जाता, का उल्लेख है, महावंश, स्थान। सिट.; दीपवंश. viii. 8; समन्तपसादिका, पृ. 314, 317.

[3] टीका तक पहुँच प्राप्त करने से पहले, मैं इन पंक्तियों में सुत्त-निपात, श्लोक 645 (iii., 9, 52) की भावना देखने के लिए इच्छुक था ।

जिसके लिए संसार में कुछ भी नहीं है,
न आगे, न आगे, न बीच में—
लेने या अधिकार करने के लिए कुछ भी नहीं।

लेकिन टीका की संक्षिप्त टिप्पणी से अरहंत (प्रबुद्ध) की वैराग्यता नहीं, बल्कि दरबारी अधिकारी की उस निरंतर संगति से मुक्ति पाने की लालसा प्रकट होती है, जिसमें दरबारी, सेवक, सैनिक आदि हमेशा आगे-पीछे, चारों ओर मंडराते रहते हैं, चापलूस होते हैं, शिष्टाचार के गुलाम होते हैं, और शायद देशद्रोही या कम से कम चुगली करने वाले होते हैं। राजकुमार तिस्सा द्वारा अपनाया गया या उन पर लगाया गया नाम, एकविहारिया, का अर्थ है एकाकी।

[4] विनय ग्रंथ, द्वितीय 812, 813 सीएफ। कली. सुत्तस, पी. 210 एफएफ.; सुत्त-निपात, श्लोक 34-74, आदि।

[5] अत्थवासी, 'भिक्षु के व्यवसाय के प्रति समर्पण में' (सी.)।

[6] योगी-पीति-करं.

[7] धम्मपाला लिखते हैं कि जंगल में छह कुंड हैं।

[8] यह सुंदर कविता गद्य के बिना अधिक बेहतर लगती है; लेकिन धम्मपाला इसे तीन खंडों में देते हैं। खंड 2 में तिस्सा के भिक्षु बनने के बाद उनकी आनंदित ऊर्जा के विस्फोट का वर्णन है, अशोक ने उन्हें और उनके दामाद (और भतीजे) अग्गिब्रह्मा को बड़े धूमधाम और समारोह के साथ विहार (मठ) में पहुँचाया (तिस्सा के लिए यह अंतिम परीक्षा थी!)।

[9] शाब्दिक रूप से, जब तक आसव (इच्छाएँ) नष्ट न हो जाएँ।

[10] गिरिब्बाजा, राजगृह के पास स्थित 'पर्वतीय गढ़'। मीलों की परिधि में फैले इसके खंडहर आज भी मौजूद हैं और ये भारत में अब तक पाई गई सबसे प्राचीन पत्थर की इमारतें हैं। कहा जाता है कि 'नया' राजगृह मुख्य रूप से बुद्ध के समकालीन राजा बिम्बिसार का बनाया हुआ था (बौद्ध भारत, पृष्ठ 87)।

अंतिम खंड तिस्सा ('अकेले रहने वाले') के अंतिम शब्द हैं। ऐसा कहा जाता है कि वे अपने गुरु (धम्मरक्षित) के साथ कलिंग देश गए थे, जो राजगृह के दक्षिण में पूर्वी तट पर स्थित एक विशाल और प्रसिद्ध वन क्षेत्र था (देखें मज्ज, i. 378)। वहाँ अशोक ने उनके लिए भोजक-गिरि विहार (मठ) का निर्माण करवाया। कलिंग में धौली और जौगड़ा के अशोक शिलालेख हैं (कनिंघम, कॉर्प. इंस्क्र. इंड., i. 15 ff.)।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(235):कप्पा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (235) ------>>>> अगला

अध्याय X.
दस श्लोक
235. कप्पा
भगवान बुद्ध के जन्म से पहले, सीमावर्ती देश में कुक्कुट (मुर्गा) नामक नगर में, एक राजा के परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम कप्पिना रखा गया। अपने पिता की मृत्यु के बाद, वे राजा कप्पिना महान के रूप में सिंहासन पर बैठे। अपने ज्ञान को बढ़ाने के लिए, वे सुबह के समय चारों द्वारों से चौराहों पर लोगों को भेजते थे और उनसे कहते थे कि वे आने-जाने वाले विद्वानों को रोककर उन्हें बताएं। उस समय तक भगवान बुद्ध का जन्म हो चुका था और वे सावत्थी में रह रहे थे। उस नगर के व्यापारी कुक्कुट में माल लाते और बेचते थे। फिर वे कहते, 'चलो राजा से मिलते हैं,' और उपहार लेकर अपना परिचय देते थे। राजा ने उनके उपहार स्वीकार किए, उन्हें प्रणाम किया और पूछा कि वे कहाँ से आए हैं, उनका देश और राजा कैसे हैं, और उनका धर्म क्या है ? अंतिम प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा, 'महाराज, हम बिना धोए मुँह से आपको बता नहीं सकते।' राजा ने जल से भरा एक सोने का कलश मंगवाया, और उन्होंने शुद्ध मुँह और प्रणाम करते हुए हाथों से कहा, 'महाराज, हमारे देश में बुद्ध का खजाना प्रकट हुआ है।' 'बुद्ध' शब्द सुनते ही राजा का पूरा शरीर आनंद से भर गया। 'मित्रों, क्या तुम बुद्ध कह रहे हो?' और उन्होंने उनसे उस अनंत शब्द को तीन बार दोहराने को कहा और उन्हें एक लाख सिक्के दिए। उन्होंने उन्हें धम्म के खजाने और भिक्षु बनने के मार्ग के बारे में भी बताया, और राजा ने अपना दान तीन गुना कर दिया, और तुरंत संसार का त्याग कर दिया, उनके मंत्रियों ने भी ऐसा ही किया। अब वे [परमेश्वर (बुद्ध) को खोजने के लिए] निकल पड़े और गंगा नदी पर आ पहुँचे। वहाँ उन्होंने सत्य की शक्ति से एक निश्चय किया, [1] यह कहते हुए: 'यदि कोई भगवान (बुद्ध), सर्वोच्च बुद्ध हैं, तो इन घोड़ों का एक खुर भी गीला न हो!' तब वे पूरी नदी की सतह पर पार गए, और इस प्रकार एक और नदी पार की, और तीसरी बार [255] महान नदी चंदाभागा [2] पर पहुँचे , जिसे उन्होंने उसी प्रकार पार किया।

उस दिन भोर में उठे भगवान (बुद्ध) ने भी करुणा से भरकर संसार का अवलोकन किया और यह देखा कि आज महान कप्पिना ने अपना राज्य त्याग दिया है और अपने अनुयायियों के साथ भिक्षु बनने आए हैं; इसलिए उनसे मिलने के लिए दूर जाना उचित है। वे पहले भिक्षुओं के एक समूह के साथ भिक्षा मांगने के लिए सावत्थी गए, फिर स्वयं वायु में उड़कर चंदभागा नदी के तट पर गए और नदी पार करने के स्थान की ओर मुख करके एक विशाल बरगद के पेड़ के नीचे पालथी मारकर बैठ गए, [3] और बुद्ध-किरणें बिखेरने लगे। कप्पिना और उनके साथियों ने किरणों को इधर-उधर जाते देखा और कहा: 'हम भगवान (बुद्ध) के कारण आए हैं, और देखो! वे यहाँ हैं!' और वे उनके पास जाकर प्रणाम करने लगे। तब भगवान (बुद्ध) ने उन्हें धम्म का मार्ग सिखाया, जिससे वे सभी अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) में स्थापित हो गए और भिक्षु बनने के लिए कहा। भगवान (बुद्ध) ने कहा, 'आओ, भिक्षुओं!' और यही उनकी स्वीकृति और भिक्षुत्व में दीक्षा थी। फिर वे उन्हें अपने साथ वायु के माध्यम से जेतवन ले गए।

एक दिन भगवान बुद्ध ने पूछा कि क्या कप्पिना भिक्षुओं को धम्म का मार्ग सिखाते हैं? उन्होंने कहा कि वे निष्क्रिय जीवन व्यतीत करते हुए सुख का आनंद लेते हैं। जब कप्पिना को बुलाया गया, तो उन्होंने स्वीकार किया कि यह सत्य है, और उनसे कहा गया: 'ब्राह्मण! [4]

ऐसा मत करो; आज से जो भिक्षु आ चुके हैं, उन्हें धम्म का मार्ग सिखाओ।' कप्पिना ने प्रणाम किया और अपने पहले ही प्रवचन से एक हजार भिक्षुओं को अरहंतत्व (ज्ञानोदय) की प्राप्ति कराई।

[256] इसी कारण भगवान (बुद्ध) ने उन्हें भिक्षुओं को शिक्षा देने वालों में सर्वोच्च स्थान दिया। [5]

एक दिन थेरा ने सिस्टर्स को इस प्रकार शिक्षा दी:

[547] अनागतो यो पाटिगाक्का पस्सति॥
हितɱ च अत्थɱ अहिताɱ च ताɱ द्वयɱ,॥
विदेसिनो तस्सा हितेसिनो वा॥
रान्धौ न पस्सन्ति समेक्खमना.॥ ॥

[548] अनापानसति यस्सा परिपूर्ण सुभाविता,॥
अनुपुब्बं परिचिता यथा बुद्धेन देसिता,॥
सोमं लोकं पभासेति अब्भा मुत्तोवा कैंडिमा॥ ॥

[549] ओदाताɱ वात मे चित्ताअ अप्पमनाअ सुभावितो,॥
निब्बिद्धौ पग्गहितं च सब्बा ओभासते दिसा॥ ॥

[550] जीविते वा पि सप्पन्नो अपि वित्तपरिक्खयो,॥
पनन्या च अलभेन वित्त्वा पि न जीवति॥ ॥

[551] पन्ना सुताविनिचिनी पन्नाकित्तिसिलोकवधनि,॥
पन्ना सहितो नरो इधा अपि दुक्खेसु सुखानि विंदति॥ ॥

[552] नायं अज्जतानो धम्मो न चचेरो न पि अब्भूतो,॥
यत्थ जायथ मयेथ तत्थ किं विया अब्भुतां॥ ॥

[553] अनन्तराऽ हि जातस्सा जीविता मरणं धुवं,॥
जाटा जाटा मारन्तिधा एवं धम्म हि पणिनो॥ ॥

[554] न हेतदत्तय मतस्सा होति॥
याऽऽ जीवितत्थाऽ परापोरिसनाऽ,॥
मातमहि रुणणौ न यशो न लोक्यौ॥
न वनितां समानब्राह्मणेहि.॥ ॥

[555] चक्खुɱ सरिरौ उपहंति रूणं॥
निह्यति वनबलौ मति च,॥
आनंदिनो तस्सा दिसा भवन्ति॥
हितेसिनो नास्सा सुखी भवन्ति॥ ॥

[556] तस्मा हि इच्छाय कुले वसंते॥
मेधाविनो सेवा बहुसुते च,॥
येसाɱ [59] हाय पणनाविभाफवना किक्काɱ॥
तरन्ति नवाय नदीं वा पुननं ति.॥ ॥

[547] क्या तुम आने से पहले ही उसे देख सकते हो, [6] और ऐसे काम को चिह्नित कर सकते हो जो लाभ या हानि पहुँचाएगा, न तो शत्रु और न ही मित्र, चाहे वे चाहे जो भी प्रयास करें, दरार नहीं पा सकेंगे।

[548] वह व्यक्ति जिसने
आत्म-नियंत्रण के साथ श्वास अभ्यास को पूर्णता तक पहुँचाया,
बुद्ध द्वारा सिखाई गई विधि से अभ्यास किया,
वह संसार में एक दीप्तिमान चमक बिखेरता है,
जैसे बादल से मुक्त होकर निकलता हुआ चंद्रमा।

[549] देखो! अब मेरा मन सचमुच श्वेत है, [7] असीम रूप से विस्तारित, अच्छी तरह से अभ्यास किया हुआ,
इसकी प्रकृति समझी हुई, और परिश्रमी;
हर तरफ एक चमक बिखेर रहा है।

[550] बुद्धिमान व्यक्ति जीवित है और केवल वही जीवित है,
भले ही उसका सारा धन नष्ट हो जाए;
और यदि धनवान व्यक्ति में बुद्धि की कमी हो,
तो वह अपने सारे धन के लिए वास्तव में जीवित नहीं रहा। [8]

[551] बुद्धि सुनी हुई बातों का निर्णायक है।
बुद्धि ने सम्माननीय प्रसिद्धि को पोषित किया।
बुद्धि की संगति में मनुष्य
दुख और शोक में भी आनंद पाता है।

[552] यह एक ऐसा तथ्य है जो कल का नहीं है;
यह न तो असामान्य है और न ही विसंगत:
'जहाँ आपका जन्म होता है, वहीं आपकी मृत्यु भी होती है।'
इसमें प्राकृतिक के अलावा और क्या है?

[553] [257] क्योंकि जन्म लेने के बाद हम
पल-पल मरते ही रहते हैं।
जो भी उसी जीवन में जन्म लेता है, वह मर जाता है -
यही सभी जीवित प्राणियों का स्वभाव है।

[554] जो जीवितों के लिए अच्छा हो, वह मृतकों के लिए अच्छा नहीं है।
मृतकों का शोक मनाना न तो सम्मान है और न ही शुद्धि, [9] और न ही यह बुद्धिमानों, भिक्षुओं और ब्राह्मणों (पुजारियों) द्वारा प्रशंसित है।

[555] शोक आँखों और शरीर को पीड़ा देता है,
सुंदरता, शरीर और मन की शक्ति और बुद्धि को नष्ट कर देता है।
यदि वह लापरवाह हो, तो चारों ओर से
हार्दिक शुभचिंतक बन जाते हैं, भले ही उसका भाग्य सुखद न हो।

[556] इसीलिए आम लोगों को अपने परिवार में
केवल बुद्धिमान, विवेकशील और विद्वान लोगों को ही रखना चाहिए।
वे अपनी बुद्धि की शक्ति से अपना काम पूरा करते हैं,
ठीक वैसे ही जैसे कोई नाव भरी हुई नदी को पार कर लेती है। [10]

[1] सैकाधिट्ठान, अधिक सामान्य सैककिरिया के लिए।' सी एफ जाट., आई. संख्या 20, 35. सी.एफ. 2 राजा, मैं. 10.

[2] यदि यह चेनाब (यूनानियों का अकेसिन) है, तो धम्मपाल की भौगोलिक स्थिति असंभव है; लेकिन यदि हम गंगा के स्थान पर सिंधु (इंडस) को प्रतिस्थापित करें, तो सुदूर उत्तर-पश्चिम से आने वाले कप्पिना (कुक्कुट एक अज्ञात स्थान है) के लिए सिंधु और वितस्ता (झेलम) उनकी पहली और दूसरी नदियाँ होंगी। जाट, चतुर्थ, 180 में कहा गया है कि बुद्ध उनसे मिलने के लिए 2,000 योजन गए थे। यह टीकात्मक कथा है। सावत्थी से चेनाब तक, सिंधु में मिलने से पहले, कौवे (या बुद्ध) की उड़ान के अनुसार लगभग 600 मील (?) है।

[3] Uttaraṇatitthassābhimukhaṭṭhāne, whioh से लगता है कि रहस्यवादी उपलब्धि को अनावश्यक बना दिया गया है।

[4] बुद्ध कभी-कभी अपने अरिहंतों (प्रबुद्ध लोगों) को इस प्रकार संबोधित करते हैं - उदाहरण के लिए, अंगुलिमाल (मज्ज्., 2. 104; सीएफ. पीएस. सीसीएलवी.)। ब्राह्मण = पवित्र, या उत्कृष्ट व्यक्ति। सामाजिक वर्ग के अनुसार, कप्पिना एक खटिया थी।

[5] एंग., आई. 27.

[6] पाइगाक्का: प्युरेतारा येवा (साइ.)।

[7] ओडातम्। जब बुद्ध (साम्य, द्वितीय 284) भिक्षुओं को कप्पिना की ओर इशारा करते हुए उसकी प्रशंसा करते हैं, तो वे कहते हैं: 'क्या तुम उस चमकीले छोटे सफेद (ओडातक्म्) आदमी को उभरी हुई नाक के साथ आते हुए देख रहे हो?' संभवतः केवल उसके रंग-रूप का जिक्र करते हुए। देखें पृष्ठ 3, नोट 1; और श्लोक 972।

[8] = संस्करण 499

[9] मैं यह दावा नहीं करता कि मैंने यहाँ की कठिनाइयों को हल कर लिया है। यहाँ तक कि धम्मपाल भी इनसे बचते प्रतीत होते हैं। वे 'ना लोक्यम्, ना सोक्याम्' पढ़ते हैं और इसका अर्थ ' ना विशुद्धि' से निकालते हैं। मैं उनका अनुसरण करता हूँ, क्योंकि यही एकमात्र तरीका है जिससे इस अंश को बोधगम्य बनाया जा सकता है।

[10] कप्पिना बारह 'महान' थेरों में से एक थे; हालाँकि, उनकी कविताएँ अधिकांशतः लोकप्रिय दर्शन की गूढ़ व्याख्याएँ हैं, न कि वास्तविक धम्म, जो भिक्षुओं के संप्रदाय के सदस्यों के लिए उपयुक्त होती, जिन्हें वे संबोधित कर रहे थे। वे किसी प्रारंभिक यूनानी या किसी भी मूर्तिपूजक के लिए उपयुक्त होतीं। और उनसे कविता निकालना संभव नहीं था। डॉ. न्यूमैन कहीं-कहीं सफल होते हैं, लेकिन केवल मूल पाठ से हटकर। छंद में परिवर्तन केवल पाली में हुए संबंधित परिवर्तन को दर्शाने के लिए है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(236):कुल-पंथाका

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (236) ------>>>> अगला
अध्याय X.
दस श्लोक
236. चूला-पंथक
उनकी पिछली कहानी महापंथक (उनके बड़े भाई) के थेरागाथा के आठवें अध्याय में बताई गई है। शेष कहानी [चुल्लक-सेट्ठी-जातक की टीका में बताई गई है । [1]

उन्होंने एक अन्य अवसर पर ये छंद कहे:

[557] दण्ड मयहं गति असि परिभूतो शुद्ध अहं,॥
भता च मण पनामेसि गच्छ दानि तुवं घरं॥ ॥

[558] सोहाऽ पणमितो भता सङ्घारामस्स कोऽथके,॥

दुम्मणो तत्थ अट्ठासिऽ ससानस्मिऽ अपेखवा।॥॥

[559] भगव तत्थ अगांची सिसां मयहां परमसि,॥
बहया मण गहेत्वाना संघरामन पवेसायी॥॥

[560] अनुकम्पया मे सत्था पदासि पदपुंजनी॥
एतं शुद्धो अधिष्ठेहि एकमन्तो स्वधिऽहिताऽ॥॥

[561] तस्सहाऽ वचनाऽ सुत्वा विहासिऽ ससाने रतो,॥
समाधिं पतिपदेसिऽ उत्तममत्थस्स पत्तिया॥॥

[562] पुब्बेनिवासां जानामि दिब्बाकक्खु विसोधितां,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससाणं॥॥

[563] सहस्सक्खट्टमत्तनं निम्मिनित्वान पन्थाको,॥
निसीदम्बवने रम्मे याव कलप्पवेदाना।॥॥

[564] ततो मे सत्था पाहेसि दुतं कलप्पवेदकं,॥
पवेदितमहि कलमहि वेहसादुपसांकमिः।॥॥

[565] वंदित्वा सत्थुणो पदे एकमंतं निसीदहौ,॥
निसिन्नं माऽ विदित्वान अथ सत्थ पतिग्गहि.॥॥

[566] अयागो सब्बलोकस्सा आहुतिनां पातिग्गाहो,॥
पुन्नक्खेत्तां मनुस्सानां पतिगणहित्था दक्खिनं' ति.॥॥

[557] मेरी प्रगति धीमी और रुकी हुई थी,
और इसलिए मुझे कम सम्मान मिला।
मेरे भाई ने सोचा कि मुझे वापस भेज देना चाहिए,
और मुझसे पूछा, 'अब तुम घर जाओ।'

[558] अतः मैं, बर्खास्त और दुखी होकर,
भिक्षुओं के पार्क (मठ) के द्वार के भीतर खड़ा था,
हृदय में नियम (आदेश) के भीतर रहने की लालसा लिए हुए।

[559] और वहाँ वह मेरे पास आया, हे भगवान (बुद्ध),
और उसने अपना हाथ मेरे सिर पर रखा; और
मेरी बांह पकड़कर मुझे वापस बगीचे में ले गया।

[560] भगवान (बुद्ध) ने अपनी कृपा से मुझे
पैरों के लिए एक रुमाल दिया और मुझे इस प्रकार निर्देश दिया:
'अपना मन इस स्वच्छ वस्तु पर लगाओ, और साथ ही
अच्छी तरह एकाग्र होकर [2] अलग बैठो।'

[561] और मैं जिसने उसका धन्य वचन सुना,
केवल और हमेशा उसके नियम का पालन करने में प्रसन्न रहा, [3] एकाग्र विचार और इच्छा प्राप्त करते हुए,
ताकि मैं अपनी सारी खोज का मुकुट जीत सकूँ।

[260] [562] और अब मैं जानता हूँ कि मैं कहाँ और कैसे रहता था,
और दिव्य दृष्टि स्पष्ट रूप से चमकती है; [4] मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना बना लिया है,
और बुद्ध हमें जो करने के लिए कहते हैं वह हो चुका है।

[563]
पंथक ने स्वयं असाधारण शक्ति से हज़ारो अलग-अलग रूपों में खुद को कई गुना बढ़ा लिया ;
और रमणीय आम के बाग में बैठकर, [5] उस घड़ी के प्रकट होने तक प्रतीक्षा की।

[564] तब भगवान (बुद्ध) ने एक दूत भेजा,
जो मुझे समय का रहस्योद्घाटन करने आया,
और नियत समय पर मैं उसके पास उड़ गया।

[565] मैंने उनके चरणों में झुककर पूजा की; फिर
मैं एक तरफ बैठ गया; और जब मैं पास बैठा था, तब
भगवान (बुद्ध) ने यह समझ लिया कि मनुष्य उनकी सेवा करें। [6]

[566] उच्च वेदी [7] वह जहाँ सारा संसार दे सकता है,
मानव जाति की भेंटों का प्राप्तकर्ता,
मनुष्यों के पुत्रों के लिए पुण्य का मैदान,
उसने धर्मपरायणता के उपहार स्वीकार किए।

[1] जाट., i., अनुवाद पृ. 114. धम्मपाल भी कथा देते हैं, कुछ विवरणों को छोड़कर सभी में सहमत हैं, जिसमें उनका संस्करण सरल है। 'शेष' का सार उपरोक्त श्लोकों में निहित है। वे दोहरी श्रेष्ठता (मन-निर्मित रूपों और मानसिक विकास में) का भी उल्लेख करते हैं, जिसे बुद्धघोष ने चार प्रकार के रूप और अरूप ध्यान में कौशल के रूप में परिभाषित किया है, जो क्रमशः चूल-पंथक और उनके बड़े भाई को सौंपा गया है (अंग., i. 24)।

[2] स्वधित्तितंग का वर्णन केवल मनसिकरेण द्वारा ही किया गया है । पंथक चिंतन करते हुए कपड़े को तब तक संभालता है जब तक वह साफ और चिकना नहीं रह जाता।

[3] बहनें, श्लोक 187, 194, 202.

[4] ऊपर, श्लोक 516.

[5] दरबारी चिकित्सक और गृहस्थ अनुयायी, जीवक की संपत्ति। सिस्टर्स देखें, पृष्ठ 139 एन.

[6] कथा के अनुसार, जबकि पंथक के बड़े भाई, जो प्रबंधक थे, ने जीवक द्वारा दोपहर के भोजन पर आमंत्रित भिक्षुओं में अपने छोटे भाई को शामिल नहीं किया था, बुद्ध (जिन्होंने चूल-पंथक को तौलिये से अशुद्धता का अध्ययन करने के लिए छोड़ दिया था) ने चूल के बुलाए जाने तक भोजन परोसे जाने पर अपना कटोरा हाथ से बंद कर दिया। चूल की जादुई शक्तियों ने किस प्रकार दूत को आश्चर्यचकित कर दिया, इसका वर्णन जातक टीका में किया गया है।

[7] डॉ. न्यूमैन के अनुसार, आयगो की यह व्याख्या , कमेंट्री के यजितब्बा-ठानभूतो, 'जो आहुति देने का स्थान बन गया है' द्वारा समर्थित है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(237):कप्पा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (237) ------>>>> अगला

अध्याय X.
दस श्लोक
237. कप्पा

बुद्ध युग में मगध राज्य में एक प्रांतीय वंशानुगत राजा के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर , उन्होंने अपने पिता का उत्तराधिकार संभाला, लेकिन वे आत्म-भोग और कामुकता में लिप्त थे। भगवान (बुद्ध) ने उन्हें देखा, जब वे महान करुणा की समाधि से जागे और अपनी अंतर्दृष्टि के जाल के लिए खजाने की तलाश में संसार का अवलोकन कर रहे थे। और यह सोचते हुए कि 'अब वह क्या बनेगा?' उन्होंने यह समझा कि 'यह, मुझसे बुरी चीजों पर प्रवचन सुनकर, अपने हृदय को कामवासनाओं से दूर कर लेगा, और संसार का त्याग करके अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त करेगा।' वायु के माध्यम से कप्पा के पास जाकर, उन्होंने उनसे ये श्लोक कहे:

[567] नानाकुणपासमपुणो महाउक्करसंभवो,॥
कैंडानिकं वा परिपक्कं महगाण्डो महावनो॥ ॥

[568] पुब्बरुहिरासम्पुणो गुत्थाकूपेण गाहितो,॥
आपो पग्घराणो कायो सदा संदति पूतिकान् ॥ ॥

[569] सहिकाṇḍरासंबन्धो [60] मासलेपनलेपिटो ,॥
चम्मकंकुकसन्नद्धो पूतिकायो निरथको ॥ ॥

[570] अट्ठसङ्घाघतितो नाहरु सुत्तनिबन्धनो,॥
नेकेसां संगतिभावा कप्पेति इरियापथाअन्॥ ॥

[571] धुवप्पयतो मरानस्स मैक्कुराजस्सा संतिके,॥
इधेव छंदयित्वाना येन कामाङ्गमो नरो॥ ॥

[572] अविज्जा निवुतो कायो कैटुगंथेना गत्थिटो,॥
ओघासंसीदानो कायो अनुसयाजलमोत्थतो॥ ॥

[573] पञ्चनिवराने युत्तो वितक्केन समाप्पितो,॥
तन्हामुलेनानुगतो मोहच्चदानाचादितो॥ ॥

[574] एवायं वत्तते कायो कम्मयन्तेन यन्तितो,॥
संपत्ति च विपत्तयंता निनाभावो विपज्जति॥ ॥

[575] यमं कायं ममयंती अंधबला पुथुज्जना,॥
वन्धेन्ति कस्तिसिं घेरं अदियंति पुनभभव:॥ ॥

[576] ये'माṃ कायं विवज्जेंति गुथलिट्टाṃव पन्नगाṃ,॥
भवमूलं वमित्वान परिनिब्बन्त्यनसव। ॥ ॥

[567] अनेक अशुद्धियों से भरा हुआ,
मल का बड़ा ढेर,
बासी और स्थिर कीचड़ के तालाब की तरह,
एक बड़े कैंसर की तरह, एक घाव की तरह,

[568] सीरम और रक्त से भरा हुआ,
मानो गोबर के ढेर से निकल रहा हो,
तरल पदार्थ टपक रहा हो—इसी तरह

शरीर रिसता है, एक सड़ा हुआ जीव।

[569] साठ टेंडन द्वारा स्थिर रखा गया,
और मांस के प्लास्टर से लिपटा हुआ,
डर्मिस सशस्त्र और क्यूटिकल द्वारा -
सड़े हुए शव में थोड़ा लाभ है।

[570] दृढ़ अस्थि संरचना द्वारा निर्मित,
एक साथ बुने हुए स्नायु-धागों द्वारा,
जो एक साथ काम करते हुए,
हमारी मुद्राओं को अनेक प्रकार से प्रभावित करते हैं;

[571] मृत्यु के अंत तक अनंत संसार में भटकते हुए,
यहाँ तक कि नश्वरों के राजा के राज्य तक: -
यदि इसे यहाँ भी फेंक दिया जाए, तो
मनुष्य जहाँ चाहे जा सकता है। [1]

[572] अज्ञान से ढका शरीर,
चौगुने बंधन से बाधित, [2] [261] बाढ़ में डूबा हुआ शरीर,
गुप्त पूर्वाग्रह के जाल में फंसा हुआ,

[573] पाँच बाधाओं का गुलाम,
मन की बेचैन क्रीड़ाओं से ग्रस्त,
गर्भाधान की तीव्र लालसा से निरंतर पीछा किया जाने वाला,
भ्रम की बाधाओं में लिपटा हुआ: -)

[574] देखो! यह शरीर ऐसी वस्तु है,
कर्म के रथ पर इधर-उधर ले जाया जाता है,
अनेक प्रकार के परिवर्तनों के लिए अभिशप्त है,
कभी सफलता, कभी असफलता।

[575] और जो इसके बारे में कहते हैं 'यह मेरा है!' -
बेचारे मूर्ख अंधे बहुत से लोग -
वे मृत्यु के भयानक मैदान को भर देते हैं, [3] बार-बार पुनर्जन्म को पकड़ते हुए।

[576] जो इस शरीर से बचना चाहते हैं,
जैसे वे कीचड़ से सने सर्प से बचते हैं,
वे, पुनर्जन्म के मूल (कारण) को उल्टी करते हुए,
अंत करेंगे, समझदार और प्रतिरक्षा से मुक्त।

कप्पा ने भगवान (बुद्ध) को शरीर-समूह के स्वरूप और नियति पर अनेक रूपों में प्रवचन देते हुए सुना, तो अपने शरीर से भयभीत और घृणा करते हुए उन्होंने व्यथापूर्वक भिक्षु दीक्षा की विनती की। भगवान (बुद्ध) ने उन्हें एक भिक्षु के पास दीक्षा के लिए भेज दिया। कप्पा ने पाँच साधनाएँ कीं और जैसे ही उनके बाल मुंडवाए जा रहे थे, उन्हें अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त हो गया। इसके बाद वे भगवान (बुद्ध) को प्रणाम करने गए और एक तरफ बैठकर उन्हीं श्लोकों में ज्ञान (सर्वोच्च प्राप्ति) की घोषणा की। अतः ये श्लोक थेरा-श्लोक कहलाए।

[1] इस श्लोक पर, जिसे कहावत के रूप में जीववादी साहित्य से लिया गया हो सकता है, टीका में लिखा है: 'इस संसार में ही त्याग कर (चड्डेत्वा) ... इन शब्दों से वह दर्शाता है कि, चूंकि शरीर क्षणभंगुर है, इसलिए कोई बंधन नहीं बनाना चाहिए।' डॉ. न्यूमैन का मानना है कि जिसे त्यागा जा सकता है वह मृत्यु की शक्ति है।

[2] अर्थात्, लोभ, द्वेष, अनुष्ठान में विश्वास, हठधर्मिता से चिपके रहना (बुड. पे., पृ. 804 एफ.; कंपेंडियम, पृ. 171)। चार बाढ़ों और सात गुना पूर्वाग्रह (अनुसया) पर देखें (कंपेंडियम, इरेमेन., एफ.)।

[3] श्लोक 456 देखें।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (238): उपासना, वंगंता का पुत्र

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (238) ------>>>> अगला

अध्याय X.
दस श्लोक
238. उपसेना, वांगंत का पुत्र
इस बुद्ध युग में नालक गाँव में रूपसारी ब्राह्मणी के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम उपसेना रखा गया। [1]

वयस्क होने और तीनों वेदों का ज्ञान प्राप्त करने के बाद, उन्होंने भगवान (बुद्ध) से धम्म का मार्ग सीखने के बाद संसार का त्याग कर दिया। केवल एक वर्ष के लिए भिक्षु दीक्षा लेने के बाद, उन्होंने सोचा, 'मैं आर्यों की वंश-प्रणाली बढ़ाऊंगा,' और स्वयं एक अन्य भिक्षु को दीक्षा दी और उसके साथ भगवान (बुद्ध) की सेवा करने चले गए। यह सुनकर, बाद वाले ने उनकी जल्दबाजी भरी कार्रवाई की निंदा की। तब उपसेन ने सोचा: 'यदि अब, अनुयायियों के कारण, भगवान (बुद्ध) द्वारा मेरी निंदा की जाती है, तो उसी कारण से मैं उनकी प्रशंसा प्राप्त करूंगा।' [2] और अंतर्दृष्टि के लिए अध्ययन करते हुए, उन्होंने उचित समय में अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, स्वयं कठोर साधनाओं को अपनाते हुए, [3] उन्होंने दूसरों को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित किया, और इतनी सफलता प्राप्त की कि भगवान (बुद्ध) ने उन्हें सर्वव्यापी रूप से लोकप्रिय लोगों में सर्वोच्च स्थान दिया। [4]

एक बार दूसरे भिक्षु ने उनसे पूछा कि कोसंबी में रहते हुए वहाँ के मतभेदों और विभाजन के दौरान क्या किया जाना चाहिए? [5] उपसेना ने उन्हें इस प्रकार समझाया:

[577] विवित्तŋ अप्पनिघघोसाŋ वा़मिगनीसेविताŋ,॥
सेवे सेनासन भक्खु पतीसल्लनकारणा ॥॥ ॥

[578] सङ्करपुञ्जा अहत्वा सुसाना रथियाहि च,॥
ततो साङ्घतिकाऽ कत्वा लुकाँ धारेय्य शिवराऽ॥ ॥

[579] निकाŋ मनअ कारित्वाना सपादानां कुलाकुला,॥
पिण्डिकाया ध्याने भिक्खु गुत्तद्वारो सुसान्वुतो॥ ॥

[580] लक्खेना'पी सीए संतुसे नाण्णाŋ पत्थे रसाŋ बहुŋ,॥
रसेसु अनुगिद्धस्सा झाणे नरामति मानो॥ ॥

[581] अप्पिचो सी'एवा संतुथेही पविवित्टो वसे मुनि,॥
असंसठो गहथेहि अनागारेहि चुभयौ॥ ॥

[582] यथा जओऽव मुगोऽव अत्तानाऽ दासये तथा,॥
नातिवेलेऽ पभासेय सङ्घवज्जमहि पण्डितो॥ ॥

[583] न सो उपवदे कैंचि उपघातो विवज्जये,॥
सवुतो पतिमोक्खस्मिं मत्तान्नु कैसा भोजने ॥॥ ॥

[584] पग्गहितनिमित्तस्स चित्तसुप्पदाकोविदो,॥
समथां अनुयुञ्जेय कलां च विपश्यनां॥ ॥

[585] वीर्यसताच्चासम्पन्नो [61] युत्तयोगो सदा सिया,॥
न च अप्पत्वा दुक्खन्तं विस्सासं एय पण्डितो॥ ॥

[586] एवं विहारमानस्स शुद्धिकामस्स भिक्खुनो,॥
खियंती आसव सब्बे किब्बुतिनचाधिगच्छति' ति.॥ ॥

[577] एकांत स्थान और दूर जहाँ शोर
मुश्किल से आता है, जंगली प्राणियों का स्थान:
वहीं भाई को
अध्ययनपूर्ण एकांतवास के लिए अपना पलंग तैयार करना चाहिए।

[578] कूड़े के ढेर से, या श्मशान घाट से,
या राजमार्गों से, वह
फटे-पुराने कपड़े ले और लाए और उनसे चिथड़े-चिट्ठों का एक वस्त्र बनाए,
और ऐसे खुरदुरे वस्त्र पहने।

[579] मन की विनम्रता में घर-घर,
बारी-बारी से अटूट [6] भिक्षु को घूमना चाहिए [263] भिक्षा मांगते हुए, इंद्रियों को सुरक्षित रखते हुए, अच्छी तरह से नियंत्रित;

[580] चाहे जैसा भी व्यवहार हो, वह संतुष्ट रहता है,
उसे जो मिलता है या उससे अधिक के लिए प्रसन्न नहीं होता,
क्योंकि यदि वह एक बार स्वाद के लिए लालच में लिप्त हो जाता है, तो
उसका मन कभी भी ध्यान में आनंद नहीं ले सकता।

[581] बड़े संतोष में, बहुत कम इच्छाओं के साथ,
दूर, एकांत में: ऋषि को ऐसा ही जीवन जीना चाहिए,
गृहस्थों और बेघरों, दोनों से विरक्त।

[582] उसे ऐसा दिखाना चाहिए जैसे वह मंदबुद्धि
और गूंगा हो, और बुद्धिमान व्यक्ति को
एकत्रित लोगों के बीच में अनावश्यक रूप से भाषण लंबा नहीं करना चाहिए।

[583] उसे किसी को भी अपशब्द न कहने दो; उसे
चोट पहुँचाने से परहेज़ करने दो; उसे नियम
और उपदेश में प्रशिक्षित होने दो, और भोजन में संयमी रहने दो।

[584] वह ऐसा व्यक्ति हो जो
प्रतीक पर ध्यान केंद्रित करे, विचार की उत्पत्ति में कुशल हो।
उसे शांत रहने का अभ्यास करना चाहिए,
और उचित समय पर अंतर्ज्ञान का भी अभ्यास करना चाहिए।

[585] ऊर्जा और दृढ़ता से लैस होकर,
उसे सदा अपने अध्ययन में लगे रहना चाहिए;
और जब तक वह दुःख के अंत तक न पहुँच जाए,

बुद्धिमान व्यक्ति को विश्वास के साथ आगे नहीं बढ़ना चाहिए।

[586] इस प्रकार यदि भिक्षु,
ज्ञान और दृष्टि की पवित्रता से प्रसन्न होकर [7] साथ रहेगा, तो
मादक पदार्थों (विकारों/इच्छाओं) का प्रभाव समाप्त हो जाएगा,
और वह निर्वाण की शांति प्राप्त कर लेगा। [8]

अब थेरा ने उस भिक्षु को संबोधित करते हुए अपनी स्वयं की उपलब्धि प्रदर्शित की और ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की।

[1] इसलिए सारिपुत्त (CCLIX.) और तीन बहनों कला, आदि के भाई। धम्मपद चक्र , ii. 84 देखें ।

[2] विन. ग्रंथों में बताया गया है , i. 175 f.; जाट. ii., संख्या 300.

[3] धुतंगा। मिलिंडा, खंड देखें । ii., पुस्तक vi.

[4] अंग., i. 24. सी.एफ. मिलिंडा, ii. 270; 289, 326, 329 भी।

[5] पृष्ठ 16, नोट 2 देखें; विनय ग्रंथ, ii. 312.

[6] सपादानाm̧। इस पद पर जेपीटीएस, 1909, पृष्ठ देखें। 72; जेआरएएस, 1912, पृ. 786 एफएफ। धम्मपाल ने इसे घरेसु अवखंड-रहितौ, अनुघराओ के रूप में परिभाषित किया है।

[7] तो साइ.

[8] निब्बुति, निब्बाना के रूप में समझाया गया है, यानी पुनर्जन्म और मृत्यु को भी समाप्त करना।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(239):कप्पा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (239) ------>>>> अगला

अध्याय X.
दस श्लोक
239. कप्पा
हमारे पूज्य (बुद्ध) के प्रकट होने से पहले सावत्थी में, उदिच्चा के एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, [1] वे वेदों के विशेषज्ञ और अद्वितीय वक्ता के रूप में विकसित हुए।

अब हमारे परम पूज्य प्रभु, यश और उनके मित्रों के शिष्य बनने के बाद, जब वे उठे और धम्म के मार्ग का चक्र चलाना शुरू किया, [2] अनाथपिंडिक के आग्रह पर सावत्थी आए। ब्राह्मण (पुजारी) गौतम ने उन्हें देखा और सुना, और भिक्षु बनने की दीक्षा मांगी। भगवान (बुद्ध) के उपदेश पर एक भिक्षु द्वारा दीक्षा प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अपने बाल मुंडवाते समय ही अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त कर लिया। कोसल देश में लंबे समय तक निवास करने के बाद, वे सावत्थी लौट आए। और उनके कई रिश्तेदार, प्रख्यात ब्राह्मण (पुजारी), उनसे मिलने आए और उनसे पूछा कि जीवन के मार्गदर्शन के लिए प्रचलित अनेक पुस्तकों [3] में से वे किसका अनुसरण करना उचित समझते हैं। उन्होंने उन्हें इस प्रकार संबोधित किया:

[587] विजानेय सकाअ अत्थअ अवलोकेयथा पावकनं,॥
यान्चेत्था अस्सा पतिरुपाँ समानं अज्झपगतस्सा॥ ॥

[588] मित्तm̩ इधा च कल्याणं सिक्खा विपुला समदानं,॥
सुस्सुसा च गरुणां एतं समांस्सा पतिरूपान्, ॥ ॥

[589] बुद्धेसु च सागरवता धम्मे अपासीति यथाभूतौ,॥
सङ्घे च चित्तिकारो एतां समनस्सा पतिरूपाऽ॥ ॥

[590] Ācāragocare yutto ājīvo sodhito agārayho,॥
Cttassa ca saṇṭhapanaṃ etaṃ samaṇassa patirūpaṃ.॥ ॥

[591] चारित्तो अथ मरित्तो इरियापथियै पसादनिअ,॥
अधिचित्ते च अयोगो एतं समांस्सा पतिरूपान्॥ ॥

[592] अरण्यकानि सेनासननि पन्तनि अप्पासद्दानि,॥
भजिताब्बानि मुनिना एतं समनस्सा पतिरुपाँ॥ ॥

[593] सिलाm̩ च बहुसच्चान्चा धम्मनाउ पविकयो यथाभूतौ,॥
सच्चनं अभिसमायो एतं समाणस्स पतिरूपं॥ ॥

[594] भावये च अनिच्चंति अनत्तसान्नाm̩ असुभासनन्याm̩ च,॥
लोकमहि च अनाभिरतिएतं समांस्सा पतिरूपाः॥ ॥

[595] भावेया च बोजझान्गे इधिपादानी इंद्रियानि बलानि,॥
अङ्थाङ्गमग्गमारिअएतं समांस्सा पतिरूपाm̩॥ ॥

[596] तन्हाअ पजाहेय मुनि समुलाके आसवे पडलेय,॥
विहारेया विप्पमुत्तो एतं समनस्स पतिरुपण् ति.॥ ॥

[587] भिक्षु को अपनी वास्तविक भलाई को समझना चाहिए, और उसे अपने द्वारा सुने गए
सभी उपदेशों पर अच्छी तरह विचार करना चाहिए , और उसमें निहित पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) मार्ग का अर्थ समझना चाहिए जिस पर वह आया है।

[588] नियम में धार्मिक मित्रता,
पर्याप्त प्रशिक्षण का एक पाठ्यक्रम, और सिखाने के योग्य पुरुषों को सुनने की इच्छा
: - भिक्षु इसका अनुसरण करता है।

[589] बुद्धों के प्रति श्रद्धा; धम्म के मार्ग के प्रति
सच्ची श्रद्धा; भाईचारे के प्रति
देखभाल और आदर: - भिक्षु इसका अनुसरण करता है।

[590] सुसंस्कृत और शुद्ध जीवन जीने वाला,
आचरण में निर्दोष, और बुद्धि [265] अच्छी तरह से समायोजित: - भिक्षु इसका अनुसरण करता है।

[591] वह जो करता है और जो नहीं करता, उसमें वह
ऐसा आचरण अपनाता है जो अनुकूल हो;
हृदय और मन के उच्च प्रशिक्षण के लिए
उत्साहपूर्वक समर्पित: - भिक्षु इसका अनुसरण करता है।

[592] जंगल के एकांत, एकांत स्थान, जहाँ ध्वनियाँ
मुश्किल से ही पहुँचती हों, इनमें से गंभीर ऋषि को
अपना चुनाव करना चाहिए: - भिक्षु इसका अनुसरण करता है।

[593] और सद्गुण, और बहुत ज्ञान, और शोध,
यह जानने के लिए कि वास्तव में चीजें कैसी हैं,
सत्यों की समझ: - भिक्षु इसका अनुसरण करता है।

[594] अनित्यता पर ध्यान करना,
और सभी स्व के अभाव पर, और
दु:ख पर, और संसार में
हृदय को बांधने के लिए कोई आकर्षण न पाना: - भिक्षु इसी का अनुसरण करता है।

[595] ज्ञान की सात भुजाओं पर ध्यान करना,
रहस्यमय शक्ति के मार्गों पर, (जादुई) शक्तियों
और पाँच बलों पर, और अष्टांगिक मार्ग पर,
आर्य [4] : - भिक्षु इसका अनुसरण करता है।

[596] सच्चे ऋषि को लालसा को दूर रखना चाहिए;
उसे मादक पदार्थों (विकृतियों/इच्छाओं) को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिए;
उसे स्वतंत्र जीवन जीना चाहिए: - भिक्षु इसी का अनुसरण करता है।

इस प्रकार, थेरा (वरिष्ठ भिक्षु) ने भिक्षु के लिए उपयुक्त मार्ग की प्रशंसा करते हुए, अपने भिक्षु संघ की प्रभावशीलता को बढ़ाया और इसके विपरीत, उस संघ से बाहर के भिक्षु की अप्रभावीता को उजागर किया। फिर वे ब्राह्मण (पुजारी), जो बुद्ध के मार्ग (नियम) को पूरी तरह से स्वीकार करते थे, उपदेशों में स्थापित हो गए, इत्यादि।

[1] एक उत्तर-पश्चिमी जिला। देखें पृष्ठ 79, n.

[2] ऊपर देखें, CXVII.; कली. जन्म कथाएँ, पृ. 130.

[3] शाब्दिक अर्थ, शुद्धिवाद (शुद्धिवाद) या शिक्षाएँ। अंगी., iii. 277 (तुलना करें संवाद, i. 220) से प्रतीत होता है कि ऐसे सिद्धांतकारों में गौतमक या गौतमवादी कहलाते थे। स्पष्टतः गौतम कहलाने वाले तीनों थेरों (C2XIX., CLXXXIII., और ऊपर) में से कोई भी यह सिद्धांतकार नहीं था। साइप्रस में उन्हें 'एक अन्य' (अपरा-) गौतम कहा गया है ।

[4] तुलना करें। 'आर्यन' शब्द बौद्धों को वही अर्थ देता था जो 'ईसाई' शब्द हमें देता है। मूल रूप से एक नस्लीय शब्द, इसका अर्थ 'महान, सौम्य' और विशेष रूप से धम्म का एक संत 'स्वीकारक' हो गया था। ये विषय सैंतीस बोधिपक्खिया धम्म, या ज्ञानोदय के कारक हैं, जिनमें से चार ध्यान की शुरुआत (श्लोक 166, 352) और चार सर्वोच्च प्रयास कम हैं। संकलन देखें, पृष्ठ 179 f.
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(240):संकिक्का

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (240) ------>>>> अगला

अध्याय XI.
ग्यारह श्लोकों का कथन (गाथा)
240. संकिक्का
बुद्ध युग में, सावत्थी में एक अत्यंत प्रतिष्ठित ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में उनका पुनर्जन्म हुआ। उनकी माता का निधन उनके जन्म से ठीक पहले हो गया था, जिसके कारण वे अंतिम संस्कार की चिता पर बिना जले पाए गए। क्योंकि अंतिम जन्म में किसी प्राणी का जीवन अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त करने से पहले नष्ट नहीं हो सकता, चाहे वह शिनेरु पर्वत से ही क्यों न गिर जाए। सात वर्ष की आयु में, जब उन्होंने अपने जन्म के समय अपनी माता के निधन के बारे में सुना, तो वे व्याकुल हो गए और बोले, 'मैं संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करूँगा)।' अतः उन्हें सारिपुत्त के पास लाया गया। और जब उनके बाल काटे जा रहे थे, तभी उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त कर लिया। धम्मपद टीका में यह वर्णन है कि कैसे उन्होंने 8,000 भिक्षुओं को बचाने के लिए लुटेरों को अपना प्राण त्याग दिए। [1]

अब एक साधारण व्यक्ति, जो उनकी सेवा करना चाहता था, ने उनसे पड़ोस में रहने का अनुरोध करते हुए कहा:

[597] किय तवत्थो वने तत उज्जुहानो वा पावुसे,॥
वेरम्बा रमणीय ते पविवेको हि झायिनं॥ ॥

[597] हे प्रिय बालक, [2]
वर्षा ऋतु में दूर के जंगलों में,
उज्जुहाना की तरह दलदली, घने जंगलों से घिरे रहने से तुम्हें क्या लाभ है?
तुम्हारे लिए वेरम्भा, हवाओं की गुफा, अधिक मधुर है,
क्योंकि जो ध्यान करते हैं उन्हें अलग रहना पड़ता है। [3]

तब थेरा ने जंगल और अन्य चीजों के आकर्षण को दर्शाने के लिए उत्तर दिया:

[598] यथा अभानि वेराम्बो वातो नुदति पावुसे,॥
सन्न्या मे अभिकिरन्ति विवेकाप्तिसंनुता॥ ॥

[599] अपांडारो अंडसंभावो शिवथिकाया निकेतवारिको,॥
उपपादयातव मे सतिṃ सन्देहस्मिṃ1 विरागनिसितौ.॥ ॥

[600] यं च अण्णे न रक्खन्ति यो च अण्णे न रक्खति,॥
सा वे भिक्खु सुखं सेति कामेसु अनापेक्खवा॥ ॥

[601] अचोदिका पुथुसिला गोनागुलामिगायुता,॥
अंबुसेवलसंचन्ना ते सेला रामयंती माऽ॥ ॥

[602] वसिताऽ मे अरण्यनेसु कंदरासु गुहासु च,॥
सेनासनेसु पेंटेसु वदमिगनिसेविते॥ ॥

[603] इमे हन्नन्तु वज्झन्तु दुक्खाँ पप्पोंतु पणिनो ।॥
नानकप्पां नाभिजानामि अनारियं दोषसंहितं॥ ॥

[604] पैरिसिणो माया सत्था काटां बुद्धस्स ससाणो,॥
ओहितो गरुको भरो भवनेति समुहता॥ ॥

[605] यस्सा कैथाय पब्बजीतो अग्रस्मानगरियं,॥
सो मे अत्थो अनुप्पत्तो सब्बसन्नोजनाक्खयो॥ ॥

[606] नाभिनंदामि मरणं नाभिनदामि जीविता,॥

कलौं च पतिकोखामि निब्बिसं भक्तो यथा.॥॥

[607] नाभिनंदामि मरणं नाभिनदामि जिनितौ,॥
कलौं च पतिकोखामि संपजाणो पतिस्सतोऽ ति.॥॥

[598] जैसे मानसून की हवा चलती है
और चारों ओर बादल गरजते हैं, बारिश में,
[वैसे ही एकांत, दूरस्थ जंगल में, उठते हैं]
वे विचार जो वैराग्य के साथ सामंजस्य स्थापित करते हैं,
और मेरी आत्मा को अभिभूत और फैला देते हैं। [4]

[599] यह गिद्ध (लाश खा रहा था), [5] श्मशान क्षेत्र (कब्रिस्तान) में
चक्कर लगा रहा था, जिसने मुझमें
इस शरीर के बारे में स्पष्ट विचार उत्पन्न किया, जो वासना से शुद्ध हो गया था।

[600] इसके अलावा, जिसकी रक्षा करने की दूसरों को आवश्यकता नहीं है,
जिसकी रक्षा करने के लिए कोई और नहीं है: -
भिक्षु भी आनंदमयी अवस्था में रहता है,
चाहे मनुष्य कुछ भी चाहें और प्रेम करें। [6]

[601] चट्टानें जहाँ स्वच्छ जल बहता है, एक पथरीली दुनिया,
काले चेहरे वाले बंदरों और डरपोक हिरणों से आबाद,
जहाँ चमकीले फूलों के नीचे चांदी की धाराएँ बहती हैं: -
वे मेरे दिल के आनंद के उच्चभूमि हैं। [7]

[602] मैं जंगलों और पर्वतीय गुफाओं में,
चट्टानी घाटियों में और दूरस्थ स्थानों में रहा हूँ,
और जहाँ जंगली जीव घूमते हैं;

[603] लेकिन कभी भी दुर्भावना से भरी,
असभ्य और नीच खोज न करें। [8] - 'चलो शिकार करें,
चलो इन प्राणियों को मार डालें, चलो उनके साथ बुरा व्यवहार करें!'

[268] [604] भगवान (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है,
और बुद्ध की सभी शिक्षाएँ पूरी हो चुकी हैं।
मैंने अपने ऊपर का भारी बोझ नीचे रख दिया है; [9] मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं है।

[605] वह भलाई जिसके लिए मैंने दुनिया को अलविदा कहा,
और घर छोड़कर बेघर जीवन जीने के लिए निकल गया,
वह सर्वोच्च भलाई मैंने पूरी कर ली है,
और हर बंधन और जंजीर टूट गई है।' [10]

[606] मृत्यु के विचार से मुझे न तो शांति मिलती है और न ही
जीने में आनंद आता है। मैं उस घड़ी की प्रतीक्षा करता हूँ,
जैसे कोई भाड़े का सैनिक अपना काम पूरा कर लेता है।

[607] मृत्यु के विचार से मैं न तो सहज होता हूँ, न ही
जीवन में आनंदित होता हूँ। मैं

विवेकशील मन और पूर्ण ध्यानमग्नता के साथ उस घड़ी की प्रतीक्षा करता हूँ। [11]

[1] खंड ii, पृ. 240-252: संकिच्चा नामक नवोदित की कहानी, और कैसे उसने डाकुओं को परिवर्तित किया, धम्मपद के श्लोक 110 की परिस्थितियों की व्याख्या करते हुए। उसके जन्म के साथ, देखें डब्बा, वी., पृ. 10, नोट 4.

[2] धम्मपाल कहते हैं , टाटा, लड़के से ऐसे बात कर रहे हैं जैसे वह उसका पिता हो। उन्होंने आगे कहा, किम को (एथो) के लिए है।

[3] उज्जुहाना को या तो जंगल से ढकी और पानी से भरपूर पहाड़ी कहा जाता है, या बारिश के मौसम में झाड़ियों में रहने वाला पक्षी। इसी प्रकार, वेरम्भा मानसूनी हवा है, या जंगल की तुलना में आम आदमी के घर के पास स्थित एक गुफा है। मैं इस बारे में स्पष्ट राय नहीं रखता कि वास्तव में इसका क्या अर्थ था।

[4] यहां पाली बहुत संक्षिप्त है। अभिकिरन्ति के लिए (जाट देखें, iii. 67) = अज्ज्जोथरन्ति। सी एफ पी.एस. CXXXII., किरण.

[5] अर्थात्, शवदाह करने वाला कौआ (या गिद्ध), श्मशान-क्षेत्र में घर जैसा महसूस करता है, मृतकों पर भोजन करता है। अपण्डरो, अस्पष्ट, अस्पष्ट, को कालवण्णो के रूप में व्याख्यायित किया गया है।

[6] जात., i., क्रमांक 10 देखें ।

[7] देखें CXIII., CCLXI.

[8] तुलना करें. XLVIII., CCXLIV.

[9] 'खंडों का भार' (टीका) - अर्थात्, उन्होंने उनके भविष्य के नवीनीकरण का कारण (तन्हा, अगली पंक्ति देखें) हटा दिया था। अब वे अपने उत्तर को उनसे पूछे गए प्रश्न, अर्थात् 'अच्छा' या 'लाभ' (अत्थ) के संदर्भ में समाप्त करते हैं।

[10] = संस्करण 136; 380.

[11] देखें सीएलएक्सवीआईआई, सीसीएलएक्स (1002 एफ.); तुलना करें मिलिंदा, 1 70. दूसरे के लिए काम करने वाला मजदूर अपने काम के पूरा होने पर कोई खास खुशी नहीं लेता (टीका)। तुलना करें मनु के नियम (एसबीई 25), पृष्ठ 207

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(241): सिलावट

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (241) ------>>>> अगला

अध्याय XII.
बारह छंदों की कविताएँ
241. सीलावत
बुद्ध युग में राजगृह में बिम्बिसार राजा के पुत्र के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम शीलवत रखा गया। जब वे वयस्क हुए, तब उनके भाई अजातसत्तु राजा थे और वे उन्हें मृत्युदंड देना चाहते थे, पर ऐसा करने में असमर्थ रहे, क्योंकि शीलवत अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर थे और उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञान) प्राप्त नहीं किया था। [1] तब भगवान (बुद्ध) ने स्थिति को भांपते हुए उन्हें लाने के लिए महान मोग्गल्लाना को भेजा। राजकुमार शीलवत अपने हाथी से उतरे और भगवान को प्रणाम किया। तब भगवान ने उन्हें उनके स्वभाव के अनुसार शिक्षा दी, जिससे युवक ने विश्वास प्राप्त किया, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और उचित समय पर अर्हत (ज्ञान प्राप्त) हो गए। वे कोसल में रहते थे, और जब अजातसत्तु ने उन्हें मारने के लिए अपने आदमियों को भेजा, तो उन्होंने उन्हें मार्ग दिखाया और उन्होंने

सोतापना (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त कर ली, जिससे वे भी भिक्षुओं के संघ में शामिल हो गए। और उन्होंने उन्हें इस प्रकार उपदेश दिया:

[608] सिलमेविधा सिखेथा अस्मिṃ लोके सुसिक्खिताṃ,॥
सिलौं हि सब्बासम्पत्तिं उपनामेति सेवितां॥ ॥

[609] सिलाऽ रक्खेया मेधावी पत्थयाणो तयो सुखे,॥
Pasaṃsaṃ विटिलाभाṃ सीए पेक्का सग्गे सीए मोडानाṃ॥ ॥

[610] सिलवा हि बाहु मित्ते सन्नामेनाधिगच्छति,॥
दुस्सिलो पना मिट्ठेहि धां सते पापमाचरं॥ ॥

[611] अवनअ सीए अकित्ति सीए दुसीलो लभते नरो,॥
वन्नं कित्ति पसांसं च सदा लभाति सिलवा॥ ॥

[612] आदि सिलाṃ पतिथ च कल्याण नं च मतुकाṃ,॥
पमुखं सब्बधम्मनां तस्मा सिलौ विशोधये.॥ ॥

[613] वेला च सँवारो सिलाṃ चित्तसा अभिहासन,॥
तित्थौ च सब्बबुद्धानां तस्मा सिलौ विशोधये॥ ॥

[614] सिलाṃ बलाअ अप्पाइमṃ सिलाṃ अवुधमुत्तमṃ,॥
शीलमाभरणं सेठं शीलं कवचंभूतां.॥ ॥

[615] सिलाṃ सेतु महेसक्खो सिलाṃ गंधो2 अनुत्तरो,॥
शीलं विलेपनं सेठंहां येन वती डिसोडिसां॥ ॥

[616] सिलाṃ सम्बलमेनग्गाṃ सिलाṃ पथेय्यमुत्तमṃ,॥
सिलैं सेठो अतिवाहो येन याति डिसोडिसां ॥ ॥

[617] इधेवा निंदां लभाति पेक्कापाये च दुम्मानो,॥
सब्बत्था दुम्मानो बालो सिलेसु असामहितो॥ ॥

[618] इधेवा कितिṃ लभती पेक्का सग्गे सीए सुम्मानो,॥
सब्बत्थ सुमनो धीरो सिलेसु सुसामहितो॥ ॥

[619] सिलमेव इधा अग्गाṃ पन्नवा पना उत्तमो,॥
मनुस्सेसु च देवेसु सिलापन्ननातो जयं' ति.॥ ॥

[608] नैतिकता में [2] यही वह है कि आपको
इस पृथ्वी पर स्वयं को प्रशिक्षित करना चाहिए, अच्छी तरह से अभ्यास की गई नैतिकता में। क्योंकि अच्छी तरह से लागू नैतिक संस्कृति ने
हमें हर तरह की सफलता के करीब ला दिया। [3]

[609] बुद्धिमान व्यक्ति को अपने नैतिक मूल्यों की अच्छी तरह रक्षा करनी चाहिए,
जिसने तीन प्रकार के सुख की आकांक्षा की:
एक अच्छा नाम और इस दुनिया के धन का लाभ
और, जब यह जीवन समाप्त हो जाए, तो स्वर्ग के आनंद।

[610] नैतिक व्यक्ति, संयमित, बहुत से मित्र प्राप्त करता है;
अनैतिक व्यक्ति, बुराई करने से मित्र खो देता है।

[611] अनैतिक व्यक्ति को निंदा और बदनामी मिलती है;
अच्छे व्यक्ति को निश्चित रूप से प्रसिद्धि, स्वीकृति और प्रशंसा मिलती है।

[612] आध्यात्मिक मूल्य की कोई वस्तु नहीं है
, लेकिन नैतिक आदत ही उसका आधार,
उसका आधार, उसका अग्रदूत और उसका स्रोत है;
इसलिए तुम अपने नैतिक मूल्यों को पूरी तरह शुद्ध बनाओ।

[613] नैतिकता बंधन और सीमा प्रदान करती है,
हृदय को प्रकाश और आनंद प्रदान करती है; [4] वह किनारा जहाँ सभी अज्ञानी समुद्र में चले जाते हैं; [5] इसलिए अपनी नैतिकता को पूरी तरह शुद्ध बनाओ।

[614] नैतिक बल के समान कोई बल नहीं है;
नैतिक आदत सर्वोच्च हथियार है;
नैतिक जीवन ही मुख्य आभूषण है;
अद्भुत अभेद्य कवच है। [6]

[615] नैतिकता एक शक्तिशाली मार्ग है;
एक अद्वितीय सुगंध, सर्वोच्च लोबान,
जिसके द्वारा हम सुरक्षित रूप से दूर-दूर तक यात्रा करते हैं। [7]

[616] अच्छे नैतिक मूल्य सबसे अच्छा मार्ग हैं, [8] जीवन की तीर्थयात्रा के लिए सर्वोपरि हथियार,
अच्छे नैतिक मूल्य एक अद्वितीय सौभाग्य का प्रतीक हैं,
जिससे हम सुरक्षित रूप से दूर-दूर तक यात्रा करते हैं। [9]

[617] दुष्ट व्यक्ति [10] पृथ्वी पर निंदा पाता है,
और परलोक में एक दुखद नियति पाता है;
मूर्ख चाहे कहीं भी हो, उसे दुखद प्रसन्नता मिलती है, क्योंकि वह
नैतिकता पर दृढ़ता से स्थापित नहीं होता।

[618] सदाचारी मन वाला व्यक्ति पृथ्वी पर यश पाता है,
और परलोक में प्रकाशमान लोकों में विख्यात होता है।
चाहे कहीं भी हो, वीर लोग प्रसन्न रहते हैं,
उनके हृदय नैतिकता में दृढ़ रहते हैं।

[619]
यहाँ नीचे सर्वोपरि नैतिकता है, परन्तु बुद्धिमान व्यक्ति सर्वोच्च है; देवताओं और मनुष्यों में
वही विजयी हुआ जो अच्छा और बुद्धिमान दोनों है। [11]

[1] सी.एफ. CCXXVII., CCXL.; विन्न्या ग्रंथ भी , iii. 241 फं.

[2] मुझे 'नैतिकता' आदि जैसे जटिल शब्दों के स्थान पर सुंदर शब्द ' शील' को बनाए रखने का मन हुआ। 'सद्गुण' अधिक सुरुचिपूर्ण है, पर थोड़ा अस्पष्ट है। शील का अर्थ है नैतिक आदत, नियमित अच्छाई या नैतिक आचरण - ऐसे व्यक्ति का आचरण जो जीवित

प्राणियों को हानि नहीं पहुँचाता या लूटता नहीं है, यौन रूप से सीधा है, सत्यवादी है, वाणी में सौम्य है और पेय के मामले में संयमी है। बस इतना ही। ऐसा आचरण ही उच्च जीवन का मूल आधार है। यह उपदेश भाड़े के हत्यारों को संबोधित है, भिक्षुओं को नहीं।

[3] मनुष्य के रूप में, ईश्वर के रूप में, या निर्वाण में सफलता (टीका)।

[4] अभिभासनम् का अर्थ है या तो; टीका बाद वाले अर्थ को पढ़ती है।

[5] 'निब्बाना की महान नदी (या समुद्र) को पार करते हुए' (टीका)।

[6] टीका का मानना है कि अब्भुतय, अद्भुत, का अर्थ अभेज्जा, अटूट है।

[7] शाब्दिक रूप से, एक दिशा (कंपास) से दूसरी दिशा तक, इस प्रकार सभी मनुष्यों को सद्गुण स्वीकार्य हैं।

[8] संबलाम् को पुटाभट्टम्, या यात्री द्वारा ली गई पत्ती में लिपटी हुई हलवी द्वारा चित्रित किया गया है ।

[9] नोट 5 देखें।

[10] दुम्मनो और इसके विपरीत को आमतौर पर 'उदास' और 'खुशमिजाज' के रूप में अनुवादित किया जाता है, लेकिन संदर्भ एक नैतिक अनुवाद की मांग करता है। टीका इसे पापधम्मो, आदि और कल्याणधम्मो द्वारा व्याख्यायित करती है।

[11] = श्लोक 70.

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(242):सुनीता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (242) ------>>>> अगला

अध्याय XII.
बारह छंदों की कविताएँ
242. सुनीता
बुद्ध युग में पुष्प संग्रहण करने वाले परिवार में पुनर्जन्म लेकर, [1] वे सड़क साफ करके जीविका कमाते थे, लेकिन उनकी भूख भी नहीं मिटती थी। रात के पहले पहर में, बुद्ध ने, बुद्धों द्वारा व्यापक रूप से अपनाई जाने वाली महान करुणा की भावना को प्राप्त करते हुए, संसार का अवलोकन किया। उन्होंने सुनीता के हृदय में अर्हत्व (ज्ञानोदय) की अवस्था को देखा, जो एक कलश में रखे दीपक की तरह चमक रही थी। जब रात ढलकर भोर हुई, तो वे उठे, वस्त्र धारण किए, और भिक्षापात्र और वस्त्र धारण करके, अपने भिक्षुओं के साथ, भिक्षा मांगने के लिए राजगृह गए, और उस गली को खोजने लगे जहाँ सुनीता सफाई कर रहे थे। सुनीता कूड़ा-कचरा आदि इकट्ठा कर ढेर लगा रहे थे, और फिर उन्हें अपने कंधे पर रखी टोकरियों में भर रहे थे। जब उन्होंने भगवान (बुद्ध) और उनके अनुयायियों को आते देखा, तो उनका हृदय आनंद और श्रद्धा से भर गया। सड़क पर छिपने की कोई जगह न पाकर, उसने अपना जुआ [272] दीवार के मोड़ में रख दिया और हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए दीवार से चिपके हुए खड़े हो गए। तब भगवान (बुद्ध) पास आकर उनसे मधुर वाणी में बोले, 'सुनीता! तुम्हें यह दयनीय जीवन शैली कैसी लगती है? क्या तुम संसार को त्यागकर (सन्यास में) जाने का कष्ट सह सकते हो?' सुनीता, अमृत से सराबोर व्यक्ति के आनंद से भर उठे और बोले, 'हे भगवान (बुद्ध), यदि मुझ जैसे व्यक्ति को भी इस जीवन में भिक्षु बनने का अवसर मिल सकता है, तो मैं क्यों न ग्रहण करूँ? भगवान मुझे भी ऐसा करने का मार्ग दिखाएँ।' तब भगवान (बुद्ध) ने कहा, 'आओ, भिक्षु!' और उस शब्द से स्वीकृति और भिक्षु दीक्षा प्राप्त करके, उन्हें जादुई शक्ति से कुंड और वस्त्र पहनाए गए। भगवान (बुद्ध) उन्हें विहार (मठ) में ले गए और उन्हें एक अभ्यास सिखाया, जिससे उन्होंने पहले आठ उपलब्धियाँ [2] और पंचगुण अभिन्न (उच्च ज्ञान) प्राप्त कीं; फिर अंतर्दृष्टि विकसित करके छठी उपलब्धि प्राप्त की। और सक्का (देवताओं के राजा) और ब्रह्मा देवता (प्रधान देवदूत) आए और उन्हें प्रणाम किया, जैसा कि लिखा है:

वे सात सौ तेजस्वी देवता,

ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) और इंद्र के अनुयायी पास आए और वृद्धावस्था और मृत्यु पर विजय प्राप्त करने वाले उच्च कुल के व्यक्ति सुनीता को प्रसन्नतापूर्वक सम्मान दिया । [3]

भगवान बुद्ध ने उन्हें देवताओं से घिरा हुआ देखा और मुस्कुराते हुए उनकी प्रशंसा की, तथा इस श्लोक के द्वारा धम्म का मार्ग सिखाया:

'पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) के अनुशासन द्वारा! ... [4]

अब बहुत से भिक्षु, अपनी 'सिंह गर्जना' करने की इच्छा से, सुनीता से पूछने लगे: 'आप किस कुल से आए हैं? आपने संसार क्यों छोड़ा (भिक्षुत्व क्यों ग्रहण किया)? और आपने सत्यों को कैसे जाना?' तब सुनीता ने उन्हें सारी बात इस प्रकार बताई:

[620] नीस कुलमहि जातो'हाṃ दादिद्दो अप्पाभोजनो,॥
हिनकम्मां मामं असि अहोसि पुप्पचडको.॥ ॥

[621] जिगुच्चिटो पनुस्सानां परिभूतो च वामहितो,॥
निकैं मनं करित्वाना वंदिसाṃ1 बहुकां जनाआं॥ ॥

[622] अथद्दससिṃ [64] संबुद्धभि भिक्खुसांघपुरक्खताṃ,॥
पवित्रं महावीरं मगधनां पुरुत्तमं॥ ॥

[623] निक्खिपित्वना व्याभाङ्गीṃ वन्दितुऽ उपासांकमिṃ,॥
मामेव अनुकम्पाय अट्ठसि पुरिसुत्तमो॥ ॥

[624] मंडित्वा सत्थुणो पदे एकमंतां थितो तदा,॥
पब्बजजं अहमयासीं सब्बसत्तनमुत्तमं ॥ ॥

[625] ततो करुणिको सत्था सब्बलोकानुकंपको,॥
एहि भिक्खुति माऽ अहा सा मे आसुपासम्पदा॥ ॥

[626] सो'हाṃ एको अरनानास्मिṃ विहारंतो अतंदितो,॥
आकाशिऽ सत्थु वचनं यथा माऽ ओवदि जिनो॥ ॥

[627] रत्तिया पठमं यमं पुबजतिमानुस्सरिṃ,॥
रत्तिया मज्झमं यमं दिब्बाकक्खुं विसोधयिं,॥
रत्तिया पच्चिमे यामे तमेखंडहं पडालैयि॥ ॥

[628] ततो रत्या विवसने सूर्यसुग्गमनाऽ पति,॥
इन्दो ब्रह्मा च आगन्त्वा माऽ नमस्सिऽसु पंजिलि॥ ॥

[629] नमो ते पुरीसाजन नमो ते पुरीसुत्तमा,॥
यस्सा ते आसवा खिना दक्खिनेय्योसि मारिसा॥ ॥

[630] ततो दिस्वना माऽ सत्था देवसङ्घपुरक्खात्,॥
सीतौ पटुकरित्वाना इमामत्था अभिसथ:॥ ॥

[631] तपेण ब्रह्मचर्येण संनामेना दामेना च,॥
एतेन ब्राह्मणो होति एतं ब्राह्मणमुत्तम, नति॥ ॥

[620] जिस कुल में मेरा जन्म हुआ, उसे नीच बना दो,

और मैं गरीब था और मेरा भाग्य अल्प था;
मेरा काम तुच्छ था, फूलों का सफाईकर्मी।

[621] जिसकी किसी ने परवाह नहीं की, जिसे तिरस्कृत किया गया, जिसका अपमान किया गया, मैंने अपना मन विनम्र किया और लोगों की एक अच्छी कहानी के सम्मान में
सिर झुकाया ।

[622] और फिर मैंने सर्व-प्रबुद्ध को आते देखा,
अपने भिक्षु-समूह से घिरे और उनके पीछे-पीछे,
महान योद्धा मगध के प्रमुख नगर में प्रवेश कर रहे थे।

[623] मैंने अपनी टोकरियाँ और अपना जुआ एक तरफ रख दिया,
और वहाँ आया जहाँ मैं उचित प्रणाम कर सकूँ,
और अपनी दयालुता के कारण, जो उसने मुझ पर ही दिखाई,
मनुष्य के मुखिया ने अपने रास्ते में विराम लिया।

[624] मैं उनके चरणों में नतमस्तक हुआ, फिर पास खड़े होकर
मैंने भगवान (बुद्ध) से उनके शासन में शामिल होने
और उनका अनुसरण करने की अनुमति मांगी, सभी प्राणियों के प्रधान।

[625] तब, जिसकी कोमल दया समस्त
संसार पर विचरण करती है, दयालु और कृपालु भगवान (बुद्ध)
ने मुझे मेरा उत्तर दिया: आओ, भिक्षु! उन्होंने कहा।
इसी द्वारा मुझे भिक्षुत्व की दीक्षा दी गई। [5]

[626] देखो! मैं अकेले ही वन की गहराइयों में निवास करता हूँ,
अटूट उत्साह के साथ भगवान (बुद्ध) के वचन के अनुसार,
यहाँ तक कि विजेता की सलाहों का भी पालन करता हूँ।

[627] जब रात का पहला पहर बीता, तो
बीते जीवन की लंबी यादें जाग उठीं।
जब मध्य पहर बीता, तो दिव्य दृष्टि,
दिव्य परिप्रेक्ष्य, स्पष्ट हो गया।
जब रात का आखिरी पहर बीता, तो मैंने
अज्ञानता के सारे अंधकार को चीर डाला। [6]

[628] फिर जब रात ढलकर भोर हुई
और सूर्य उदय हुआ, तब इंद्र और ब्रह्मा आए और हाथ जोड़कर मुझे प्रणाम किया:

[629] हे श्रेष्ठ पुरुषों, आपको नमस्कार!
हे श्रेष्ठ पुरुषों, आपको नमस्कार!
आपके लिए सभी मादक पदार्थ (अपवित्रता/इच्छाएँ) नष्ट हो गए हैं;
और हे श्रेष्ठ पुरुष, आप उपहारों के योग्य हैं।

[630] भगवान (बुद्ध) ने मुझे देवताओं के दल से
घिरा और पीछे-पीछे आते हुए देखकर, एक मुस्कान
प्रकट की और इस कथन से उत्तर दिया:

[631] 'पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) के अनुशासन, संयम
और आत्म-नियंत्रण द्वारा: इससे मनुष्य
पवित्र होता है; यही सर्वोच्च पवित्रता है!' [7]

[1] यानी, कटे हुए फूलों, मालाओं आदि को हटाने वाले, जिन्हें एक तरफ फेंक दिया गया था। यह एक 'निम्न' वंशानुगत व्यापार था।

[2] तुलना करें बुड. साइ., 846, एन. 3; कंपेंडियम, पृ. 133, एन. 3 (भाग IX., Ī 11, XI., Ī 12 के स्थान पर पढ़ें। पाँच ज्ञानों को अक्सर चार माना जाता है)। छठा अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) आसवों का उन्मूलन है = अरहंतत्व (ज्ञानोदय)।

[3] देखें सिस्टर्स , पृष्ठ 146, श्लोक 365। ये पंक्तियाँ अपादान से उद्धृत नहीं की गई हैं। अतीत से प्राप्त आध्यात्मिक शिक्षा को निःसंदेह उनके जीवन के अंतिम काल की घृणित परिस्थितियों के साथ सौंदर्य और नैतिक विरोधाभास में बल दिया गया है।

[4] श्लोक 681.

[5] तुलना करें , भद्दा, सीसी 26; सिस्टर्स, श्लोक 109

[6] सिस्टर्स के लगभग समान , श्लोक 172, 173.

[7] अर्थात्, टीका कहती है, सर्वोच्च ब्राह्मणत्व (ब्रह्मञ्ञा), "जाति और इसी प्रकार की चीजें नहीं, और धम्मपद, श्लोक 58, 59 उद्धृत करती है:

जैसे राजमार्ग पर कूड़े के ढेर पर
एक सुगंधित और मधुर लिली उग सकती है,
वैसे ही इन कूड़े-कचरे से बने प्राणियों, अंधे सांसारिक लोगों के बीच
अंतर्दृष्टि से बुद्ध का बालक चमकता है।

पाली भाषा में 'पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य), 'पवित्र', 'पवित्रता' शब्द ब्रह्मचर्य, ब्राह्मणो, ब्राह्मणा से आए हैं। भजन संहिता 11वीं के श्लोक 1086 में एक महान थेरा द्वारा दिए गए इस दिव्य सम्मान से उनके चेहरे पर मुस्कान आ जाती है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह मुस्कान केवल आत्मसंतुष्टि के कारण नहीं बल्कि परिस्थिति में निहित हास्य तत्व (मनुष्य का ईश्वर के समान हो जाना) के कारण थी।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(243):सोना-कोलिविसा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (243) ------>>>> अगला

अध्याय XIII.
तेरह श्लोकों का कथन (गाथा)
243. सोना-कोलिविसा
हमारे परम पूज्य (बुद्ध) के जीवनकाल में, उनका पुनर्जन्म चंपा नगर में एक प्रतिष्ठित पार्षद के परिवार में हुआ। उनके जन्म की प्रत्याशा से ही उनके पिता की अपार संपत्ति और भी बढ़ गई, और उनके जन्मदिन पर पूरे नगर में उत्सव मनाया गया। अब, मौन बुद्ध के पुत्र के रूप में अपने पिछले जन्म में उनकी उदारता के कारण, उनका शरीर उत्तम स्वर्ण और अत्यंत कोमल था, इसी कारण उनका नाम सोन (स्वर्ण) रखा गया। उनके पैरों के तलवों और हथेलियों पर सुनहरे रंग के महीन रोएँ उगते थे, और उनका पालन-पोषण तीन ऋतुओं के अनुरूप तीन महलों में विलासितापूर्ण ढंग से हुआ। [1]

जब हमारे भगवान (बुद्ध) सर्वज्ञता प्राप्त कर चुके थे और धर्ममार्ग (धम्म) का प्रचार शुरू कर चुके थे, और राजगृह में रह रहे थे, तब राजा बिम्बिसार ने सोन को बुलवाया। सोन अपने साथ कई नगरवासियों को लेकर आए और उन्होंने भगवान (बुद्ध) को धर्ममार्ग (धम्म) का

उपदेश देते हुए सुना। सोन का विश्वास जीतकर, उन्होंने अपने माता-पिता की सहमति प्राप्त कर भिक्षु बनने का निश्चय किया। उन्हें भगवान (बुद्ध) से अध्ययन का एक विषय मिला, लेकिन शीत वन में रहने के दौरान लोगों के साथ मेलजोल बनाए रखने के कारण वे ध्यान केंद्रित नहीं कर पाए। उन्होंने सोचा, 'मेरा शरीर इतना नाजुक है कि मैं सुख को प्रसन्नतापूर्वक प्राप्त नहीं कर सकता। [2] एक [276] भिक्षु के कर्तव्यों में शारीरिक थकान शामिल होती है।' इसलिए उन्होंने इधर-उधर चलने से पैरों में हुए दर्दनाक घावों की परवाह नहीं की और पूरी कोशिश की, लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली। उन्होंने सोचा, 'मैं न तो मार्ग बना सकता हूँ और न ही फल। मेरे लिए धार्मिक जीवन का क्या उपयोग है?' [3] मैं निम्नतर चीजों की ओर लौटकर पुण्य कर्म करूंगा।' तब भगवान (बुद्ध) ने उनकी बुद्धि को समझा और उन्हें वीणा के दृष्टांत [4] के उपदेश से बचाया, जिससे उन्हें ऊर्जा को शांत भाव से नियंत्रित करना सिखाया गया। इस प्रकार सुधरकर वे गिद्ध शिखर गए और समय आने पर उन्हें अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त हुआ। अपनी उपलब्धि पर विचार करते हुए उन्होंने अपनी अञ्ञा (सर्वोच्च प्राप्ति) की घोषणा की :

[632] याहु रथे समइउक्काठो रणनो अन्गस्सा पद्धगु,॥
स्वज्जा धम्मे सु उक्कठो सोनो दुक्खस्सा परागु॥ ॥

[633] पञ्च चिन्दे पञ्च जहे पञ्च कटर भावये,॥
पञ्च संगतिगो भिक्खु ओघातिनो' ति वुकाति ॥ ॥

[634] उन्नास्सा पमत्तस्सा बहिरासस्सा भिक्खुनो,॥
शीलं समाधि पन्न च परिपूरि न गच्छति॥ ॥

[635] याṃ हाय किक्काṃ तदापविद्धाṃ अकिक्काṃ पना काइरति,॥
उन्नानां पमत्तनां तेसां वदंहन्ति आसव.॥ ॥

[636] येसां च सुसमरद्धा निककैं कायगता सति,॥
अकिक्कां ते ना सेवंती किस्से सातक्काकारिनो,॥
सतानां संपजानां अत्थान् गच्छन्ति आसवा॥ ॥

[637] उजुमग्गमहि अक्खाते गच्छथ मा निवत्तथ,॥
अत्ताना कोडयट्टनां निब्बानमभिहारये॥ ॥

[638] अच्चरद्धमहि वीर्यमहि सत्था लोके अनुत्तरो,॥
विनोपमं किरित्वा मे धम्मं देसेसि चक्खुमा॥ ॥

[639] तस्सहाऽ वचनाऽ सुत्वा विहासिऽ ससाने रतो,॥
समथं पतिपदेसिऽ उत्तममत्थस्स पत्तिया,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससाणं॥ ॥

[640] नेक्खम्मे अधिमुत्तस्सा पविवेकाṃ सीए सीटासो,॥
अभ्यपज्जधिमुत्तस्सा उपादानक्खयस्सा चा॥ ॥

[641] ताहक्खयाधिमुत्तस्स असम्मोहाṃ सीए सीटासो,॥
दिस्वा आयतानुप्पदां सम्मा चित्तं विमुच्चति॥ ॥

[642] तस्सा [66] सम्मा विमुत्तस्स संतचित्तस्स भिक्खुनो,॥
कटास्सा पटिकायो नत्थि करणीयं न विज्जति॥ ॥

[643] सेलो यथा एकाघानो वतेन न समिरति,॥
एवं रूप रस सद्दा गंध फस्सा च केवला॥ ॥

[644] इत्था धम्म अनित्था च नप्पामेधेन्ति ताडिनो,॥
हितं चित्तं विसंन्नुत्तं वयञ्चसतुपासति' ति.॥ ॥

[632] जो कभी अंग के राज्य में अत्यंत धनी था,
अंग के राजा का एक सहायक, [5] देखो! वह आज
आध्यात्मिक वस्तुओं में पर्याप्त धनवान है।
हाँ, सोन ने सभी दुःखों को पार कर अपना मार्ग प्रशस्त कर लिया है।

[633] पाँच तुम्हें काट देते हैं; पाँच पीछे छोड़ देते हैं, और इनसे परे पाँच का अभ्यास करते हैं!
जो पंचांग बंधन को पार कर जाता है - उसे बाढ़ पार करने वाला भिक्षु कहा जाता है। [6]

[634] आप एक भिक्षु को उतावले मन से देखते हैं,
[अकड़ू और खाली], [7] तुच्छ, बाहरी चीजों का स्वाद चखने के लिए उत्सुक ? वह नैतिक संहिता के भीतर विकास की पूर्णता,
मानसिक प्रशिक्षण, या अंतर्दृष्टि की पकड़ में
कभी नहीं पाएगा । [8]

[635] [277] ऐसे लोग अपने कर्तव्य की उपेक्षा करते हैं,
परन्तु जो नहीं करना चाहिए वो करते हैं।
इन अभिमानी, लापरवाह मनों में
मादक पदार्थों (अपवित्रताओं/इच्छाओं) की सड़ी हुई घास उगती है।

[636] जिनमें इंद्रियों का निरंतर नियंत्रण
अच्छी तरह और गंभीरता से शुरू हो जाता है, वे उन चीजों का
अभ्यास नहीं करते जिन्हें नहीं किया जाना चाहिए;
वे हमेशा वही करते हैं जो किया जाना चाहिए।
जो सचेत और आत्मसंयमित रहते हैं, उनके लिए
मादक पदार्थ (विकृतियाँ/इच्छाएँ) पूरी तरह से दूर हो जाते हैं।

[637] सीधे मार्ग पर, उस मार्ग पर जो घोषित किया गया है,
ध्यान रखो कि तुम दाएं या बाएं न मुड़ो।
प्रत्येक स्वयं को संबोधित करे और प्रेरित करे;
प्रत्येक स्वयं को निर्वाण की ओर ले जाए!

[638] जब मेरी ऊर्जा अत्यधिक थक गई और तनावग्रस्त हो गई, तब
भगवान (बुद्ध) - क्या संसार उनके समकक्ष प्रकट कर सकता है? -
ने मुझे वीणा के बारे में दृष्टांत दिया,
और इस प्रकार उस साक्षी पुरुष ने मुझे धम्म का मार्ग सिखाया।

[639] और मैं, जिसने उनके आशीर्वाद भरे वचन सुने,
केवल और सदा उनकी इच्छा पूरी करने में प्रसन्न रहा। [9] मैंने शांत भाव से विकास किया और संतुलन का अभ्यास किया, [10] ताकि
मैं सर्वोच्च कल्याण को प्राप्त कर सकूँ।
और अब मैंने त्रिविध ज्ञान प्राप्त कर लिया है,
और बुद्ध के सभी विधान पूरे हो गए हैं।

[640] जिसने संसार का त्याग कर दिया है,
और मन की वैराग्यता प्राप्त कर ली है, [11] जिसने शत्रुता पर विजय प्राप्त कर ली है,
और जन्म देने वाले मोह को जड़ से उखाड़ फेंका है,

[641] और उसने लालसा की मृत्यु प्राप्त कर ली है और वह सब कुछ
जो मन को भ्रमित और अस्पष्ट करता था, [278] और संवेदनाओं की उत्पत्ति को चिह्नित किया है: -
उसका हृदय पूर्ण रूप से स्वतंत्र है।

[642] ऐसे भिक्षु के लिए, जो सही ढंग से मुक्त हो गया हो, जिसका हृदय
शांत हो, कर्मों का कोई संचय नहीं होता,
और न ही उसके लिए कुछ शेष रहता है।

[643] जैसे कोई चट्टान एक अखंड स्तंभ हो, [12] और हवा के झोंके में कभी कांपती न हो,
वैसे ही सारी दुनिया के दृश्य, स्वाद और ध्वनियाँ,
गंध और स्पर्शनीय वस्तुएँ, हाँ, वांछित वस्तुएँ,

[644] और अवांछनीय कभी भी
उसके जैसे व्यक्ति को उत्तेजित नहीं कर सकता। उसका मन स्थिर, उदासीन रहता है।
और वह [13] यहाँ से गुजरने को देखता है।

[1] यह प्रकरण और निम्नलिखित विनय ग्रंथों, ii. 1 ff. में आते हैं। कोलिविसा, उनका पारिवारिक नाम, उन्हें अन्य सोनों से अलग करता है (CLVII., CCVIII.)।

[2] तुलना करें सीएलएक्सएक्स, श्लोक 220.

[3] निब्बत्तेतुम.

[4] ओप. सिट., पृ. 8, एंग. iii., 874 ff. उसे प्रयास में उचित मध्य मार्ग विकसित करना था, जैसे ऊन से बंधे वीणा की तरह।

[5] इसलिए बिम्बिसार अंग और मगध दोनों का राजा था। सी एफ सेशन. सिट., 1, एन. 2. 'स्क्वॉयर' पर, पद्धागु, पटागु, सीएफ। सुत्त निपाता, श्लोक 1094, 'कॉमरेड।'

[6] = XV. वहाँ टिप्पणी देखें.

[7] उन्नालो बौद्धों द्वारा व्युत्पन्न थुआ है। चाइल्डर्स के शब्दकोश की तुलना करें । टीका में उद्धृत वाक्यांश है: 'अभिमान की सरकंडे को ऊपर उठाना।' व्युत्पत्ति संभवतः केवल व्याख्यात्मक है; लेकिन यह व्यक्त करता है कि बौद्ध के लिए इस शब्द का क्या अर्थ है - और यही यहाँ मायने रखता है।

[8] तीन प्रशिक्षण। तुलना करें मेरी बौद्ध धर्म, अध्याय 8।

[9] देखें श्लोक 561; बहनें, LIX. ff.

[10] पांडुलिपियों में यहाँ कुछ समाथाम्, कुछ समाताम् लिखा है। साइप्रस दोनों का उपयोग करता है, और अनुवाद भी।

[11] ये पंक्तियाँ अंत तक विनय ग्रंथों, लोके. सिट. और अंगुत्तरा iii., 378 में शब्दशः मिलती हैं।

[12] धम्मपद, श्लोक 81.

[13] टासा के लिए अस्सा । साइ . अरम्मानधम्मस्सा द्वारा व्याख्याएँ ... खाणे भिज्जनसभवं।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(244):रेवाता

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (244) ------>>>> अगला

अध्याय 14.
चौदह श्लोक
244. रेवता
इस थेरा का श्लोक पहले अध्याय में पहले ही दर्ज किया जा चुका है, [1] जहाँ उनकी बहनों के पुत्रों को सचेत रहने की शिक्षा दी गई है। यहाँ उनके द्वारा भिक्षु संघ में रहते हुए प्रकाशित श्लोक शामिल हैं। उनका सार यह है: जब उन्होंने अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त कर लिया, तो वे समय-समय पर महान थेराओं, सारिपुत्त और अन्य के साथ भगवान (बुद्ध) के दर्शन करने जाते थे, और कुछ समय वहाँ रहने के बाद, बबूल के वन में लौट आते थे, जहाँ वे प्राप्त फल के आनंद और उदात्त भावों में लीन रहते थे। [2] और इस प्रकार वे वृद्धावस्था तक रहे। एक दिन बुद्ध के दर्शन करने जाते हुए, वे सावत्थी से कुछ दूर एक जंगल में ठहरे। तभी पुलिस चोरों का पीछा करते हुए वहाँ पहुँची। भागते हुए चोरों ने थेरा के पास अपना लूटा हुआ माल गिरा दिया और भाग गए। पुलिस ने दौड़कर थेरा को गिरफ्तार कर लिया, उन्हें राजा के सामने घसीटकर लाया और कहा: 'हे प्रभु, यही चोर है!' राजा [3] ने उसे रिहा कर दिया और उससे पूछा: 'क्या महाराज ने यह डकैती की है या नहीं?' तब थेरा, जिसने जन्म से कभी ऐसा कुछ नहीं किया था, ने ऐसे कृत्य के लिए अपनी अक्षमता दर्शाते हुए, इन श्लोकों में धम्म का उपदेश दिया:

[645] यदा अहं पब्बजितो अग्रस्मानगरियौ,॥
नाभिजानामि संकप्पाअन अनार्यं दोषसंहितं॥ ॥

[646] इमे हन्नन्तु वज्झन्तु दुक्खाँ पप्पोंतु पणिनो,॥
संकप्पां नाभिजानामि इमास्मि दीघमन्तरे॥ ॥

[647] मेत्तm̩ च अभिजानामि अप्पमाणअ सुभावितो,॥
अनुपुब्बं परिसीतां यथा बुद्धेन देसितां॥ ॥

[648] असाहिराm̩ असाकुप्पाm̩ चित्ताm̩ अमोदयामहाm̩,॥
ब्रह्मविहारं भवेमि अनापुरिससेवितां॥ ॥

[650] अवितकक्कं समापन्नो सम्मासंबुद्धसावको,॥
अरियेन तुन्हिभावेन उपेतो होति तावदे॥ ॥

[651] यथाअपि पब्बतो सेलो अकालो सुप्पतिथितो,॥
एवं मोहक्खया भक्खु पब्बतोऽव न वेदति॥॥ ॥

[652] अनांगगासा पोसासा निक्काm̩ सुसिगावेसिनो,॥
वलग्गमत्तं पपास्स अभ्मत्तं वा ख्याति॥ ॥

[653] नागाराऽ यथा पचंताऽ गुट्टां संतराबहिराऽ,॥
एवं गेपेथा अत्तानां खानो वो मा उपक्कागा॥ ॥

[654] नाभिनंदामि मरणं निभिनंदामि जीविता,॥
कालं च पतिकोखामि संपजाना पतिस्सतो॥ ॥

[655] नाभिनंदामि मरणं नाभिनदामि जीविता,॥
कलौं च पतिकोखामि संपजानो पतिस्सतो॥ ॥

[656] पैरिसिणो माया सत्था कतां बुद्धस्स ससाणो,॥
ओहितो गरुको भरो भवनेति समुहता॥ ॥

[657] यस्सा कैथाय पब्बजितो अग्रस्मानगरियौ,॥
सो मे अत्थो अनुप्पत्तो सब्बासाणो जनक्खायो॥ ॥

[658] सम्पादेथप्पामादेन एसा मे अनुसानि,॥
हंदाहाऽ परिनिब्बास्सं विप्पमुत्तोऽ सब्बाधिऽ ति.॥ ॥

[645] जब से मैं घर छोड़कर (भिक्षुता के लिए) बेघर जीवन में गया हूँ,
मैंने कभी भी सचेत इच्छा या योजना नहीं रखी है
जो आर्य विरोधी हो या शत्रुता से जुड़ी हो।

[646] इस लंबे अंतराल में खोज को कभी मत छोड़ो; -
'चलो अपने साथी प्राणियों को मार डालें, चलो मार डालें,
उन्हें दर्द और पीड़ा पहुँचाएँ।' [4]

[647] नहीं, मैं प्रेम को स्वीकार करता हूँ, जो अनंत है,
अच्छी तरह से प्रशिक्षित है, व्यवस्थित प्रगति से विकसित है,
जैसा कि बुद्ध द्वारा सिखाया गया है।

[648] मैं सभी का मित्र हूँ, सभी का साथी हूँ,
और सभी प्राणियों के प्रति दयालु और करुणामय हूँ;
मैं करुणा का हृदय विकसित करता हूँ,
और सदा सद्भावना ही मेरा आनंद है।

[649] मैं उस हृदय को अपना आनंद बनाता हूँ जो विचलित या अस्थिर नहीं हो सकता
; मैं उन उदात्त भावनाओं का
पोषण करता हूँ जिनसे बुरे लोग दूर भागते हैं।

[650] जो कोई भी परमानंद की अवस्था को प्राप्त कर लेता है [5] निरंतर बदलते इंद्रिय सुखों की सीमा से परे,
वह, परम प्रबुद्ध के अनुयायी,
सीधे आर्य मौन को प्राप्त कर लेता है। [6]

[651] जैसे कोई पर्वत चट्टान अडिग
, दृढ़ आधार पर खड़ी होती है, वैसे ही भ्रम से मुक्त एक भिक्षु
पर्वत की तरह अडिग खड़ा रहता है। [7]

[652] निष्कलंक जीवन जीने वाला व्यक्ति, जो सदा
शुद्धता की खोज करता है, उसने किसी तुच्छ दोष को,
जो बाल के सिरे से भी हल्का है,
[गर्भवती महिला के] बादल के भार के समान भारमय समझा।

[653] जैसे सीमावर्ती शहर
भीतर और बाहर से अच्छी तरह सुरक्षित रहता है, वैसे ही तुम भी अपनी अच्छी तरह रक्षा करो।
ध्यान रखो कि यह क्षण व्यर्थ न बीत जाए। [8]

[654] [281] मृत्यु के विचार से [9] मैं न तो सहज होता हूँ, न ही
जीने में आनंद लेता हूँ। मैं उस घड़ी की प्रतीक्षा करता हूँ
जैसे कोई भाड़े का सैनिक जिसने अपना काम पूरा कर लिया हो।

[655] मृत्यु के विचार से न तो मुझे शांति मिलती है और न ही
जीने में आनंद आता है। मैं
विवेकपूर्ण मन और पूर्ण ध्यानमग्नता के साथ उस घड़ी की प्रतीक्षा करता हूँ।

[656] भगवान (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है,
और बुद्ध की सभी शिक्षाओं का पालन किया जा चुका है।
मैंने अपने ऊपर का भारी बोझ नीचे रख दिया है,
मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं बचा है।

[657] वह भलाई जिसके लिए मैंने दुनिया को अलविदा कहा,
और बेघर जीवन जीने के लिए घर छोड़ दिया,
वह सर्वोच्च भलाई मैंने पूरी कर ली है,
और हर बंधन और बेड़ी टूट गई है।

[658] उत्साह और लगन से अपना भला करो:
यही मेरी [अंतिम] आज्ञा है तुम्हारे लिए। [10] क्योंकि देखो! अब मैं पूरी तरह से चला जाऊंगा,
मुझे पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो रही है। [11]

[1] एक्सएलआईआई। रेवता सारिपुत्त का भाई है, और इसलिए उपसेना (CCXXXVIII.) और कुंडा (CXXXI.) का भाई है। सारांश संदर्भ धम्मपाल के अपने शब्दों में है।

[2] श्लोक 286, एन देखें।

[3] कोसल के राजा पसेनादि (प्रसेनाजित) एक उत्साही गृहस्थ अनुयायी थे और बुद्ध के अंतिम वर्षों में जीवित थे (मज्झ., ii. 124)। पृष्ठ 109 पर एक बहुत अलग न्यायाधीश के साथ इसी तरह के प्रकरण की तुलना करें ।

[4] सी.एफ. XLVIII.; सीसीएक्सएल., श्लोक 603.

[5] -   उनके भाई की कविता में 999 आगे के छंद।

[6] अर्थात्, झाना (टीका) के दूसरे चरण में   । टीका में मज्झ. निक., i. 161 उद्धृत है। तुलना करें. साम. निक., ii. 273.

[7] देखें CXLVI. और पूर्ववर्ती Ps., श्लोक 643.

[8] श्लोक 231, 403 और बहनों, श्लोक 5 और टिप्पणी देखें । यहाँ टिप्पणी प्रासंगिक रूप से 'मध्य देश' (पृष्ठ 107) में जन्म लेने को महान 'संयोग' में जोड़ती है।

[9] = श्लोक 606, 607, 604, 605.

[10]   बुद्ध के अंतिम शब्दों (संवाद, ii. 173) और सारिपुत्त के, नीचे, श्लोक 1017 की तुलना करें ।

[11] क्रॉनिकल में बताया गया है कि वह वहीं और वहीं गुजर गया - शाब्दिक रूप से, 'बुझ गया' - जैसे कोई लौ बुझ जाती है। पाली शब्द paritnibissaṃ में 'यहाँ से गुजर जाना' नहीं है, जैसा कि मूल रूप से समझा गया था।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(245):गोदत्त

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (245) ------>>>> अगला

अध्याय 14.
चौदह श्लोक
245. गोदाट्टा
बुद्ध युग में सावत्थी में कारवां-नेताओं के परिवार में पुनर्जन्म लेकर उनका नाम गोदात्त रखा गया। पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने अपनी संपत्ति का प्रबंधन किया और 500 बैलगाड़ियों में माल भरकर व्यापार करते हुए यात्रा करने लगे। एक दिन गाड़ी खींचते समय एक बैल रास्ते में गिर गया और उनके आदमी उसे उठा नहीं सके, इसलिए उन्होंने स्वयं जाकर उसे बुरी तरह पीटा। [282] तब बैल उनकी इस निर्दयता से क्रोधित होकर मनुष्य की आवाज में बोला, 'गोदात्त, इतने समय तक मैंने निःस्वार्थ भाव से आपके बोझ ढोने के लिए अपनी शक्ति दी, लेकिन आज जब मैं असमर्थ होकर गिर गया, तो आपने मुझे बुरी तरह चोट पहुँचाई। अच्छा! अब से जहाँ कहीं भी आपका पुनर्जन्म हो, मैं वहाँ आपका शत्रु बनकर आपको हानि पहुँचा सकूँ!' यह सुनकर गोदात्त रोमांचित हो गए और सोचने लगे, 'इस जीवन में मैं क्या कर रहा हूँ जो इस प्रकार जीवित प्राणियों को चोट पहुँचाता हूँ?' और उन्होंने अपनी सारी संपत्ति त्याग दी और एक महान थेरा के अधीन दीक्षा ली, और समय आने पर अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया।

अब एक दिन जब वह फल प्राप्ति के आनंद में थे, तो उन्होंने आर्य समूहों, गृहस्थ और धार्मिक दोनों को सांसारिक ज्ञान पर प्रवचन दिया: [1]

[659] यथाअपि भद्दो अजन्नो धुरे युत्तो धुरासहो॥
मथितो अतिभरेण संयुगं नाटिवत्तति ॥॥

[660] एवं पनन्या ये तित्ता समुद्दो वारिणा यथा,॥
न पारे अतिमन्नन्ति अरियधम्मोऽव पणिनौ ॥॥

[661] काले [68] कलावसां पत्त भावाभववसां गता,॥
नारा दुक्खं निगच्छन्ति तेधा सोकन्ति मनावा॥॥

[662] उन्नत सुखदम्मेना दुक्खधम्मेना कोनता,॥
द्वयेन बलाहन्नन्ति यथाभूतं अडस्सिनो॥॥

[663] ये सीए दुक्खे सुखस्मिṃ सीए मज्झासिब्बनिमाकागु॥
हिता ते इंदखिलोऽव न ते उन्नतिओनता॥॥

[664] नहेव लाभे नालभे अयासे न च कित्तिया,॥
न निंदायं पसांसाय न ते दुक्खे सुखमहि च॥॥

[665] सब्बत्था ते न लिप्पन्ति उदबिन्दुवा पोक्खरे,॥
सब्बत्था सुखिता धीरा सब्बत्था अपराजिता॥॥

[666] धम्मेन च अलभो यो यो च लाभो अधम्मिको,॥
अलाभो धम्मिको सेय्ये यं वे लाभो अधम्मिको॥॥

[667] यसो च अप्पाबुद्धिनाṃ विन्निनु अयासो च यो,॥
अयासोऽव सय्यो विष्णुनाऽ न यसो अप्पाबुद्धिनाऽ॥॥

[668] दुम्मेधि पसांसा च मिन्नुहि गाराहा च या,॥
गार्हाव सेय्यो विन्नुहि यं सी बलपसाणसना॥ ॥

[669] सुखाऽ च कामामयिकाऽ दुक्खाऽ सीए पविवेकियाm,॥
पविवेक1 दुक्खाँ सेय्यो यां सी काममयं सुखं॥ ॥

[670] जीविताm च अधम्मेना धम्मेना मरणाm च याm,॥
मरणं धम्मिकां सेय्यो यां सी जीवे अधम्मिकां॥ ॥

[671] कामकोप्पहिना ये संतचित्त भवभावे,॥
कैरन्ति लोके असिता नत्थि तेसां पियाप्पियं॥ ॥

[672] भावयित्वाना बोजझान्गे इन्द्रियाणि बलानि च,॥
पप्पुय्य परमं शांतिं परिनिब्बन्त्यनसवति।॥ ॥

[659] यहाँ तक कि कुलीन नस्ल का बलवान पशु भी,
अपने बोझ से बंधा हुआ, उसे खींचता हुआ,
यद्यपि अपनी शक्ति से अधिक बोझ से थका हुआ है, [अनुचित],
अपने बंधनों से विद्रोह करके नहीं भागता,

[660] अतः जिनमें सागर के जल के समान
ज्ञान प्रचुर मात्रा में है, वे अन्य मनुष्यों को तुच्छ न समझें;
प्राणियों में यही आर्य (धर्मी) नियम है। [2]

[661] समय में जीना, समय की शक्ति के अधीन आना;
भविष्य के जीवन के बारे में भय के अधीन, [3] मनुष्य दर्द और दुख के रास्ते पर चलते हैं,
हाँ, यहाँ नीचे मनुष्य के पुत्र शोक मनाते हैं।

[662] किसी सुखद घटना से उत्साहित, और दुःख से
निराश, मूर्ख इधर-उधर व्याकुल हो जाते हैं, [4] जो कुछ भी वास्तव में नहीं देख सकते।

[663] परन्तु जो जाल बुनने वाले से बच सकते हैं, वे [5] मध्य मार्ग धारण करके दुख और सुख के बीच गिर पड़े, [283] वे द्वार पर किसी स्तंभ की तरह खड़े हैं।
न तो वे उत्साहित हैं, न ही उदास।

[664] लाभ या हानि, सम्मान, प्रसिद्धि,
प्रशंसा या निंदा, सुख या दुख के लिए नहीं -

[665] चाहे वह कहीं भी हो - वे पकड़ लेते हैं और चिपके रहते हैं,
कमल के पत्ते पर ओस की बूंद से अधिक नहीं।
स्वस्थ और शांत हर जगह विजेता हैं,
और हर जगह अजेय [जीतने के लिए बाध्य]। [6]

[666] जो सही ढंग से खोजता है और कुछ भी हासिल नहीं करता,
और जो गलत तरीके से खोजता है, उसमें
से बेहतर है वह जिसने सही ढंग से खोज की और खो दिया,
बजाय उसके जिसने गलत तरीकों से हासिल किया।

[667] उनमें से जो प्रतिष्ठा तो रखते हैं, पर
बुद्धि का अभाव रखते हैं, और जो जानते तो हैं, पर प्रतिष्ठा का अभाव रखते हैं,
उनमें से प्रतिष्ठाहीन धूर्त पुरुष,
महान प्रतिष्ठा और कम बुद्धि वाले पुरुषों से बेहतर हैं।

[668] बुद्धिहीनों द्वारा की गई प्रशंसाओं
और बुद्धिमानों द्वारा की गई निंदा और आलोचनाओं में से,
बुद्धिमानों की आलोचना
मूर्ख की प्रशंसाओं से कहीं बेहतर है।

[669] इंद्रिय-संबंधी इच्छा से उत्पन्न सुख,
वैरागी, कठोर जीवन से आने वाला दर्द,
कठोर जीवन से आने वाला दर्द
इंद्रिय-संबंधी इच्छा से उत्पन्न सुख से बेहतर है।

[670] गलत तरीके से जीना; सही काम करने के लिए मरना,
ऐसे जीना से बेहतर था कि ऐसे मर जाओ।

[671] जिन्होंने इंद्रिय-इच्छा और क्रोध को त्याग दिया है,
आने वाले जीवन के विषय में अपने हृदय में शांति रखते हैं, [7] वे दुनिया में कामवासना और लालसा से मुक्त होकर चलते हैं;
पसंद और नापसंद ऐसे लोगों के लिए नहीं हैं।

[672] उन्होंने ज्ञान के कारकों, शक्तियों
और बलों का अध्ययन किया है।
इस प्रकार पूर्ण शांति प्राप्त करके, जैसे अग्नि बुझ जाती है (निर्वाण),
वे पूरी तरह से स्वस्थ और निर्जीव होकर विदा हो जाते हैं।

[1] लोकधम्मा.

[2] भारतीय बैल के विरोध की तुलना बालाक के हिब्रू गधे के विरोध से करना रोचक है। टीका के अनुसार, 'आर्य नियम' का सार यह है कि हम अपनी सफलताओं पर स्वयं को बधाई दें या न दें, हमें अपनी असफलताओं पर दूसरों को नीचा नहीं दिखाना चाहिए। इस प्रकार, दोनों ही मामलों में, समृद्ध ज्ञान मनुष्य को प्रसन्न करता है।

[3] अधिक शाब्दिक रूप से, बनने के अधीन और न बनने के अधीन।

[4] तुलना करें सीआईआई.

[5] यानी, लालसा (तन्हा), जो जीवन को जीवन से जोड़ता है (बुद्ध. मनोविज्ञान, पृ. 278)।

[6] टिप्पणी से यह अंतिम (मेट्री कारण) : अनाभिभवनियतो।

[7] देखें पद 661, नोट 8.

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(246):अन्ना-कोंडन्ना

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (246) ------>>>> अगला

अध्याय पंद्रह.
सोलह श्लोक
246. अञ्ञ-कोण्डञ्ञ
हमारे परम पूज्य (बुद्ध) से पहले, कपिलवस्तु से कुछ ही दूरी पर स्थित दोना-वत्थु गाँव में, एक अत्यंत धनी ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका उपनाम उनके परिवार का नाम कोण्डाञ्ञ पड़ा। बड़े होकर वे तीनों वेदों के ज्ञाता और लक्षणों के ज्ञान में निपुण थे। [1] अब जब हमारे बोधिसत्व का जन्म हुआ, तो वे भविष्यवाणी करने के लिए भेजे गए आठ ब्राह्मणों (पुजारियों) में से एक थे। और यद्यपि वे बिल्कुल नौसिखिया थे, उन्होंने शिशु में उस महान पुरुष के लक्षण देखे और कहा: 'निश्चित रूप से यह बुद्ध बनेगा!' इस प्रकार वे उस महान पुरुष के त्याग की प्रतीक्षा करते हुए जीवन व्यतीत करते रहे। जब बोधिसत्व के उनतीसवें वर्ष में यह घटना घटी, तो कोंडञ्ञ को इसकी सूचना मिली और वे चार अन्य ब्राह्मण (पुजारी) पुत्रों, वप्पा [2] और अन्य लोगों के साथ संसार छोड़कर (भिक्षु बनने के लिए) चले गए और बोधिसत्व के महान संघर्ष के दौरान छह वर्षों तक उनके निकट उरुवेला में रहे । फिर जब बोधिसत्व ने उपवास समाप्त किया, तो वे निराश हो गए और इसिपताना चले गए। वहाँ बुद्ध ने उनका अनुसरण किया और अपने चक्र उपदेश का प्रचार किया, जिससे कोंडञ्ञ और असंख्य ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) ने प्रथम मार्ग (निर्वाणिक समाधि) का फल प्राप्त किया। और पाँचवें दिन, 'स्वयं के किसी भी चिह्न का अभाव' विषय पर उपदेश के माध्यम से, कोंडञ्ञ ने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। बाद में, महान जेतवन विहार (मठ) में आयोजित सभा में, भगवान (बुद्ध) ने भिक्षु संघ में लंबे समय से रह रहे भिक्षुओं में प्रमुख स्थान प्राप्त किया। [3] और एक अवसर पर कोंडञ्ञ के चार सत्यों पर दिए गए उपदेश - तीन संकेतों की छाप लिए हुए, निराकारता से संबंधित, कई विधियों द्वारा भिन्न, निर्वाण पर आधारित, और बुद्ध की स्वयं की धाराप्रवाहता के साथ दिया गया प्रवचन - ने देवता सक्का (देवताओं के राजा) को इतना प्रभावित किया कि उन्होंने यह श्लोक कहा:

[673] एसा [69] भय्यो पसीदामि सुत्वा धम्मौ महरासाऽ,॥
विरागो देसितो धम्मो अनुपादाय सब्बासो॥ ॥

[673] आपके सिद्धांत के महान गुणों को सुनकर,
देखो! मैं इससे पूर्णतः संतुष्ट हूँ।
इस प्रकार सिखाया गया मार्ग (धम्म) अत्यंत भावहीन और शुद्ध है,
जो हर प्रकार के आलिंगन से पूर्णतः मुक्त है। [4]

एक अन्य अवसर पर, थेरा ने देखा कि कुछ सांसारिक लोगों के मन गलत विचारों से ग्रसित हो गए हैं, तो उन्होंने इस प्रकार स्वयं को मुक्त कर दिया:

[674] बहुनि लोके सित्राणि असामीm पाथविमांडेले,॥
माथेन्ति मन्ने संकप्पां शुभं रागुपाससंहितां॥ ॥

[675] राजमुहतौ च वतेन यथा मेघोपासम्मये,॥
एवं सम्मन्ति संकप्पा यदा पनन्या पस्सति, ॥ ॥

[676] सब्बे संखारा अनिच्चति यदा पनन्या पस्सति,॥
अथ निब्बिंदति दुक्खे एसा मग्गो विशुद्धिआ॥ ॥

[677] सब्बे संखारा दुक्खति यदा पन्नया पस्सति,॥
अथ निब्बिंदति दुक्खे एसा मग्गो विशुद्धिआ॥ ॥

[678] सब्बे धम्म अनात्ता' ति यदा पन्नया पस्सति,॥
अथ निब्बिंदति दुक्खे एसा मग्गो विशुद्धिआ॥ ॥

[674] दुनिया में कई रंगीन चित्र हैं,
इस पृथ्वी की परिधि के भीतर आनंद लिया जाता है,

मैं ध्यान देता हूँ, मनुष्य के उद्देश्यों को उत्तेजित करते हैं,
सुंदर दिखने वाली आशाएँ, और तीव्र इच्छा से जुड़ी हुई हैं।

[675] जैसे हवा से धूल उड़कर बारिश के बादल को बिखेर देती है,
वैसे ही वे उद्देश्य रचित और शांत हो जाते हैं,
जब वह बुद्धि से पहचान कर देखता है।

[676] जब उसने बुद्धि से यह जान लिया और देख लिया कि
'जीवन में सब कुछ क्षणभंगुर है,'
तब उसे इस सारे कष्ट से घृणा हुई।
देखो! इसी में पवित्रता का मार्ग निहित है।

[286][677] जब उसने बुद्धि से यह जान लिया और देख लिया
कि 'जीवन में सब कुछ दुख के लिए बाध्य है' [5] तब उसे इस सब पीड़ा से घृणा होती है।
देखो! इसी में पवित्रता का मार्ग निहित है।

[678] 'जीवन में सब कुछ आत्महीन है',
तब उसे इस सब पीड़ा से घृणा होती है।
देखो! इसी में पवित्रता का मार्ग निहित है।

इस पर उन्होंने स्वयं इस अंतर्दृष्टि को प्राप्त करने का प्रमाण देते हुए, ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) को स्वीकार किया और कहा:

[679] बुद्धानुबुद्धो यो थेरो कोंडाणो तिब्बनिकमो,॥
पाहिनाजातिमारणो ब्रह्मचर्यस्स केवली॥ ॥

[680] ओघापासो दहाखिलो पब्बतो दुप्पादाल्यो,॥
चेत्वा खिलाऽ च पसाऽ च सेलेऽ भेट्वाना दुब्भिदां,॥
तिणो पारंगतो झायि मुत्तो सो मरबन्धना॥ ॥

[679] भिक्षु कोण्डाञ्ञ, प्रबुद्ध व्यक्ति (भगवान बुद्ध) द्वारा जागृत: -
देखो! वह शक्ति के साथ आगे बढ़ गया है;
उसने जन्म और मृत्यु को दूर कर दिया है,
पूर्णतः उदात्त जीवन को प्राप्त कर लिया है।

[680] चाहे वह 'बाढ़' हो या 'जाल' या 'ठोकर का पत्थर',
या चाहे वह 'पहाड़' हो जिसे दो भागों में तोड़ना मुश्किल हो, [6] मैंने जाल, ठोकर का पत्थर काट डाला है,
और उस चट्टान को तोड़ दिया है जिसे तोड़ना बहुत मुश्किल था,
और बाढ़ पार कर ली है।
मैं परमानंदित विचार में डूबा हुआ जीता हूँ, बुराई के बंधन से मुक्त।

एक दिन थेरा ने एक भिक्षु को फटकारा, जो अयोग्य मित्रता के कारण बुरी आदतों में पड़ गया था, और उससे कहा:

[681] उद्धतो कपालो भक्खु मिटे अगम्मा पापाके,॥
संसीदति महोघस्मिं उमिया पतिकुज्जितो॥ ॥

[682] अनुद्धतो अकापालो निपाको सावुतिन्द्रियो,॥
कल्याणमित्तो मेधावी दुक्खस्सन्तकारो सिया॥ ॥

[683] कलापब्बांगसांककासो किसो धमनिसंथातो,॥
मत्तान्नु अन्नपानस्मिं आदिनामानसो नरो॥ ॥

[684] फुṭṭहो ḍaṃsehi makasehi araññasmiṃ ब्रहावने,॥
नागो सङ्गमसीसेव सत्तो तत्राधिवासये॥ ॥

[685] नाभिनंदामि मरणं नाभिनदामि जीविता,॥
कलौं च पतिकोन्खामि निब्बिसां भटको यथा ॥ ॥

[686] नाभिनंदामि मरणं नाभिनदामि जीविता,॥
कलौं च पतिकोन्खामि संपजाणो पतिस्सतो ॥ ॥

[687] परिसीणो माया सत्था कतां बुद्धस्स ससाणो,॥
ओहितो गरुको भरो भवनेति समुहता॥ ॥

[688] यस्साथया पब्बजितो अग्रस्मानगरियौ,॥
तो मे अत्थो अनुप्पत्तो किय मे सद्धिविहारिनति। ॥ ॥

[681] एक व्याकुल, अस्थिर मन वाला भिक्षु,
जिसने दुष्ट मित्रों की संगति की,
[लगातार जीवन जीने की] महान बाढ़ में
सिर के बल गिरता है और उसकी लहरों के नीचे डूब जाता है।

[682] परन्तु जिसने एकाग्र, स्थिर मन से,
हृदय और बुद्धि में विवेक और आत्मसंयम से,
बुद्धिमानी से सद्गुणी मित्रों से संबंध स्थापित किया,
उसी के लिए दुःख का अंत संभव हो।

[287][683] देखो! यहाँ1 एक आदमी है जिसका शरीर थका हुआ और पीला है;
उसके जोड़ बेंत के गांठदार तनों की तरह हैं, और
उसकी नसों का जाल तीखा और कमजोर है;
भोजन और पेय में संयमी,
उसकी आत्मा न तो कुचली हुई है और न ही उदास।

[684] विशाल जंगल में, विशाल वनों में,
भले ही मैं मक्खी और मच्छर से प्रभावित हो जाऊं,
फिर भी मैं योद्धा-हाथी की तरह,
युद्ध के अग्रभाग में, सचेत, सतर्क होकर घूमना चाहूंगा।

[685] मृत्यु के विचार से [7] मैं न तो सहज होता हूँ, न ही
जीने में आनंद लेता हूँ। मैं उस घड़ी की प्रतीक्षा करता हूँ
जैसे कोई भाड़े का सैनिक अपना काम पूरा कर लेता है।

[686] मृत्यु के विचार से मैं न तो सहज होता हूँ, न ही
जीवन में आनंदित होता हूँ। मैं
विवेकशील मन और पूर्ण ध्यानमग्नता के साथ उस घड़ी की प्रतीक्षा करता हूँ।

[687] भगवान (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है,

और बुद्ध की सभी शिक्षाओं का पालन किया जा चुका है।
मैंने अपने ऊपर का भारी बोझ नीचे रख दिया है,
मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं बचा है।

[688] वह अच्छाई [8] जिसके लिए मैंने संसार को त्याग दिया,
और घर छोड़कर बेघर जीवन व्यतीत किया,
वह सर्वोच्च अच्छाई मैंने प्राप्त कर ली है।
मुझे भिक्षु के रूप में जीने की क्या आवश्यकता है?

[1] संवाद, i. 17, n. 2. भविष्यवाणी पर, बौद्ध जन्म कथाएँ , पृष्ठ 72 f में एक पूर्ण संस्करण देखें।

[2] ऊपर देखें, एलएक्सआई.

[3] अंग., i. 26. बुद्ध के उपदेश के लिए, विनय ग्रंथ, i. 100 f देखें। [संपादक: एसएन 3.22.59 के विभिन्न अनुवाद भी देखें, और विनय संस्करण के वारेन के अनुवाद के लिए: अनुवाद में बौद्ध धर्म, पृष्ठ 146]

[4] अनुपादाय, अगाहेत्वा विमुत्तिसाधनवीन पवत्तत्ता द्वारा व्याख्यायित।

[5] यहाँ पिछली दो पंक्तियों को दोहराएँ। धम्मपद, श्लोक 277-279 देखें ।

[6] सुत्तस के सभी रूपक - उदाहरण के लिए, दीघा निक।, iii। 230; Saŋy. निक., मैं. 105 एफ.; मैं। 27; मज्झ. निक., iii. 130.

[7] = सीएल.एक्स.एक्स.वी. यह भटके हुए व्यक्ति को संन्यासी जीवन का आदेश देने के लिए है (टीका)।

[8] = श्लोक 606 f., 654 f.; 604 और 655.
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(247):उदयिन

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (247) ------>>>> अगला

अध्याय पंद्रह.
सोलह श्लोक
247. उदयिन
इस बुद्ध युग में कपिलवस्तु में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने बुद्ध की शक्ति और महिमा को तब देखा जब [288] वे अपने परिवार से मिलने गए, उन पर विश्वास किया, भिक्षु संघ में प्रवेश किया और समय के साथ अरहंत (प्रबुद्ध) हो गए। अब उदयिन नाम के तीन थेरा हैं: मंत्री का पुत्र, कलुदयिन, जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, [1] यह ब्राह्मण (पुजारी), और महान उदयिन। [2] जब राजा पसेनदी (प्रसेनजित) के हाथी सेता की सार्वजनिक रूप से प्रशंसा की जा रही थी, उस अवसर पर हाथी दृष्टांत का सूत्र पढ़ाया जा रहा था, [3] तब बुद्ध के विचार से वे उत्साह से भर गए और सोचने लगे: 'ये लोग तो बस एक जानवर की प्रशंसा करते हैं। अब आओ, मैं उस महान और अद्भुत हाथी, बुद्ध के गुणों का बखान करूंगा!' उन्होंने ये श्लोक कहे:

[689] मनुस्सभूताŋ संबुद्धाअत्तदन्तो समाहितो,॥
इरियामाणा3 ब्रह्मपते चित्तसुपासमे रताŋ॥ ॥

[690] यं मनुस्सा नमस्सांति सब्बधम्मना परागु,॥
देवाऽपि तं नमस्सन्ति इति मे अरहतो सुत॥॥ ॥

[691] सब्बसाअयजनातिताṃ वना निब्बानमागाताṃ,॥
कामेहि नेक्खम्मरातां मुत्तं सेला'व6 कांचनां॥ ॥

[692] सा वे एकांतारुसी नागो हिमावा मन्ने सिलुक्काये,॥
सब्बेसां नागाणां सच्चनामो अनुत्तरो॥ ॥

[693] नागां वो कित्तायिस्सामि न हि अगुं करोति सो,॥
सोरक्कन अविहिंसा च पदा नागासा ते डुवे॥ ॥

[694] सती च सम्पजान्नस च कैराना नागासा ते पारे,॥
सद्दा हत्थो महानागो उपेक्खसेतदन्तवा॥ ॥

[695] सती च सम्पजान्नना कैराना नागासा ते पारे,॥
धम्मकुच्चिसमवाससो विवेको तस्स वलाधि.॥ ॥

[696] So jhāyī assāsarato ajjhattaṃ susamāhito,॥
Gacchaṃ samāhito nāgo ṭhito nāgo samāhito.॥ ॥

[697] सयं समाहितो नागो निसिन्नोऽपि समाहितो,॥
सब्बत्थ सवुतो नागो एसा नागासा सम्पदा॥ ॥

[698] भुञ्जति अनवज्जनि सवज्जनि न भुञ्जति,॥
घसमच्छदाणं लद्धा सन्निधिं परिवज्जायं॥ ॥

[699] सयोजनानाअ अउउ थुलाअ सब्बाअ चेतवना बंधना,॥
येना येनेवा गच्छति अनापेक्खोवा गच्छति॥ ॥

[700] यथापि उदके जातऽ पुण्डरीकाऽ पवदहति,॥
नोपालिप्पति तोयेना सुसीगंधाṃ मनोरमाṃ॥ ॥

[701] तथेव च लोके जातो बुद्धो लोके विहारति,॥
नोपालिप्पति लोकेन तोयेन पदुमं यथा.॥ ॥

[702] महागिनी पज्जलितो अनाहारोपसम्मति,॥
अंगारेसु च संतेसु निब्बुतो' ति पावुक्कति॥ ॥

[703] अत्थससायं विण्णापानी उपमा विण्णुहि देसिता,॥
विनिस्सान्ति महानागा नागां नागेण देसितां॥ ॥

[704] वीतरागो वीतदोसो वीतमोहो अनासवो,॥
सरिरं विजाहं नागो परिनिब्बिसन्त्यनासावो' ति.॥ ॥

[689] बुद्ध, प्रबुद्ध, मनुष्य के पुत्र,
आत्म-संयमी, अंतर्मुखी दृष्टि से लीन,
उदात्त मार्गों में अपने भीतर तल्लीन,
हृदय की शांति में प्रसन्न;

[690] मनुष्य उन्हें आदर देते हैं, मानो

वे उन सभी चीजों से परे हों जिन्हें हम जानते हैं; [4] देवता भी उन्हें आदर देते हैं:-
ऐसा मैंने, एक अरहंत (प्रबुद्ध), सुना है-

[691] जंगल से निर्वाण में आओ, [5] हर बंधन को पीछे छोड़कर,
सांसारिक सुखों का त्याग करके प्रसन्न होकर,
अयस्क से शुद्ध सोने की तरह निकाले गए,

[692] वह हाथी की तरह ही शानदार है,
हिमालय की वनभूमि में:-
देखो, उसे! नाग शानदार- [289] क्योंकि, निश्चित रूप से, हम सभी 'नाग' नाम के लोगों में
(सर्प या हाथी या मनुष्य)
उसके लिए यह नाम सर्वोत्कृष्ट सत्य है -

[693] मैं इस नाग की आपके सामने प्रशंसा करूँगा,
क्योंकि उसने कोई पाप नहीं किया । [6] दयालुता, संयम: [7] ये नाग के दो चरण हैं;

[694] बुद्धि और सजगता:
इस हाथी के अन्य दो पैर।
नाग की सूंड आत्मविश्वास है;
उसके सफेद दांत समभाव हैं;

[695] उसका कंठ जागरूकता, [8] और उसका सिर
अंतर्दृष्टि है; धड़ का परीक्षण स्पर्श
अच्छे और बुरे का बुद्धिमानी से तौलना है;
मार्ग (धम्म) का मंदिर उसका आंतरिक अंग है;
वैराग्य उसकी पूंछ है।

[696] अत: ध्यानमग्न होकर, और आनंदमय श्वास लेते हुए, [9] शरीर और मन से शांत होकर,
शांत होकर, यह नाग जब चलता है,
शांत होकर, यह नाग जब खड़ा होता है,

[697] लेटे हुए यह नाग शांत है,
और बैठे हुए भी शांत है;
उसने जो कुछ भी किया, वह स्व-नियंत्रित रहा:
यही नाग का उत्तम मार्ग है।

[698] वह अपने सभी सुखों में निर्दोष है,
किसी भी ऐसी चीज का आनंद नहीं लेता जो निंदा के योग्य हो,
उसे केवल भोजन और सामान मिला है,
उसने भंडार से परहेज किया है।

[290] [699] चाहे बंधन मोटा हो या महीन,
वह हर तरह के बंधन तोड़ देता है;
वह जहाँ चाहे जाता है,
और जहाँ चाहे जाता है।

[700] जैसे कमल किसी झील में जन्म लेता है,
पानी से किसी भी प्रकार से दूषित नहीं होता,

बल्कि सुगंधित और सुंदर हो जाता है,

[701] इस संसार में बुद्ध भी ऐसे ही हैं,
संसार में जन्म लेकर वहीं निवास करते हैं,
परन्तु संसार से किसी प्रकार अपवित्र नहीं होते,
जैसे झील के किनारे लिली का फूल।

[702] एक भयंकर आग जो बुझ गई है,
और जिसका कोई ईंधन नहीं बचा है, वह खुद ही बुझ जाती है,
और सुलगती राख के बारे में लोग
कहते हैं 'वह आग अब बुझ गई है।' [10]

[703] देखो! यहाँ एक दृष्टांत है जो बुद्धिमानों ने
अपने अर्थ को समझाने के लिए सिखाया है।
महान नाग, वे समझ जाएँगे।
नाग ने उस नाग के द्वारा सिखाया:

[704] वासना समाप्त, घृणा समाप्त,
और सुस्ती समाप्त, स्वस्थ और निर्बल,
यह नाग, अपना प्राण त्यागकर,
स्वस्थ और निर्बल होकर 'निकल जाएगा'।

[1] सीसीXXXIII देखें.

[2] प्रामाणिक कथाओं में 'आयस्मा उदयी' का उल्लेख करने वाले अंतिम व्यक्ति का पता लगाना आसान नहीं है। ऐसा व्यक्ति अक्सर विनय में मुसीबत में पड़ते हुए, सूत्रों में बुद्ध और शिष्यों से बातचीत करते हुए दिखाई देता है, लेकिन उसे कभी 'महान' नहीं कहा गया, न ही उसने ऐसा कुछ किया जिससे वह इस उपाधि का हकदार हो। संभवतः वह टीकाकार के समय के आसपास रहता था।

[3] अंग. निक., iii. 345 f. देखें , जहाँ यह कहावत (गाथा) भी दी गई है। ई. हार्डी द्वारा अनुवादित, बुद्ध, 1903, पृ. 51.

[4] धम्म-ई, बोधगम्य वस्तुएँ।

[5] Vanā nib-banam āgataṃ; शब्द-क्रीड़ा को पुन: प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। संकलन देखें, पृष्ठ 168।

[6] नाग, चाहे इसकी वास्तविक व्युत्पत्ति (यहाँ की तरह व्याख्यात्मक नहीं) कुछ भी हो, एक परी, दैत्य या रहस्यमय प्राणी को दर्शाता था। सर्प भारतीयों के लिए उतना ही रहस्यमय था जितना कि क्रेता और यूनानियों के लिए। हाथी भी उतना ही रहस्यमय था। संत भी उतने ही रहस्यमय थे। कोष्ठक में दी गई पंक्ति टीका से ली गई है। देखें सुत्त-निपात, श्लोक 522।

[7] संयम (सोरच्चं टिप्पणी = सीलं) पर, बुद्ध. मनोविज्ञान, पृष्ठ 849 देखें । अन्य दो चरणों को, आंग. निक. में, 'तपस्या' (तपो) और 'पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य)' कहा जाता है।

[8] सती, 'सजगता,' ऊपर, भी सती है ।

[9] शाब्दिक रूप से, 'साँस लेने में आनंद लेना,' एक शब्द जिसका अर्थ आराम भी है - अर्थात्, निब्बाना (टीकाकरण) का ।

[10] निब्बुतो.
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(248):अधिमुत्त

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (248) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.
बीस श्लोक
248. अधिमुत्ता
इस बुद्ध युग में थेरा संकिच्चा की बहन के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, [1] उन्होंने अपने चाचा के मार्गदर्शन में संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण किया) और नौसिखिए रहते हुए ही अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया। फल के आनंद में लीन होकर, उन्होंने भिक्षुत्व में पूर्ण दीक्षा की इच्छा की और अपनी माता से अनुमति लेने घर गए। जाते समय, उनका सामना कुछ लुटेरों से हुआ जो अपने देवता को भेंट चढ़ाने के लिए घात लगाए बैठे थे, और उन्होंने उन्हें एक उपयुक्त बलि समझकर पकड़ लिया। इस प्रकार हमला होने पर भी वे निडर और भयभीत नहीं हुए। तब लुटेरों का सरदार चकित रह गया और उनकी प्रशंसा करते हुए कहा:

[705] यन्नत्थाऽ वा धनत्थाऽ वा ये हनमा मयाऽ शुद्ध,॥
अवसे तं भयं होति वेधन्ति विलापंती च॥ ॥

[706] तस्स ते नत्थि भित्तत्तो भिय्यो वणो पसीदति,॥
कस्मा न परिदेवसि एवरुपे महभभये॥ ॥

[705] उन सभी लोगों में से जिन्हें हमने, ईश्वर [2] या धन के लिए,
अपने समय में पराजित किया है, उनमें से एक भी ऐसा नहीं रहा
जिसने भय न दिखाया हो, कांप न गया हो और बहुत शोर न मचाया हो।

[706] परन्तु तुम, जो भयभीत नहीं हो, नहीं, जिसका चेहरा
अधिक उज्ज्वल दिखता है, [3] तुम विलाप क्यों नहीं करते?
जब ऐसा भयानक संकट तुम्हें धमकाता है?

अधिमुत्ता:

[707] नत्थि सीतादिकाṃ दुक्खाṃ अनापेक्खस्सा गमानी,॥
अतिक्कंता भया सब्बे खिनसाणयोजनास्सा वो॥ ॥

[708] खिनया भवनेत्तिया दाठे धम्मे यथाथे,॥
न भयं मरणे होति भरणीक्खेपणे यथा.॥ ॥

[709] सुसिनाṃ ब्रह्मकारियाṃ मे मग्गो कैपि सुभावितो,॥
मरणे मे भयं नत्थि रोगाणमिव सोंखये ॥॥ ॥

[710] सुसिनाṃ ब्रह्मकारियाṃ मे मग्गो कैपि सुभावितो,॥
निरासदा भव दिट्ठा विशां पीत्वा चदितां ॥॥ ॥

[711] परागु अनुपादनो काटाकिस्को अनासावो,॥
तूत्थो अयुक्खया होति मुत्तो अघाटना यथा.॥ ॥

[712] उत्तमाṃ धम्मताṃ पत्तो सब्बलोके अनत्थिको,॥
आदित्तव घरा मुत्तो मरणस्मिं न सोचति॥ ॥

[713] यदत्थि सङ्गतं किनसि भावो वा यत्थ लब्भाति,॥
सब्बाṃ अनिसारṃ एताṃ इति वुत्ताṃ महेसिना॥ ॥

[714] यो तं तथा पजानाति यथा बुद्धेन देसितां,॥
न गंहति भवान् किञ्चि सुत्तत्त्व अयोगुडान् ॥ ॥

[715] न मे होति अहोसिंति भविसंति न होति मे,॥
संखारा विगामीसन्ति तथा का परिदेवना॥ ॥

[716] शुद्धाṃ धम्मसमुप्पादां शुद्धाṃ सङ्खरसंततिṃ,॥
पसंतस्स यथाभूतं न भयं होति गमानी॥ ॥

[717] तिनकाṭṭहासमाṃ लोनाṃ यदा पनन्या पस्सति,॥
ममत्तṃ सो असवविंदाṃ 'नत्थी मे' ति न सोकाति ॥ ॥

[718] उक्कण्ठामि [72] सारेरेण भवेणमहि अनत्थिको,॥
सोऽयं भिज्जिस्सति कायो अण्णो च न भविष्यसति॥ ॥

[719] याṃ वो किक्काṃ सारेरेना ताṃ करोथा यदिच्छथा,॥
न मे तप्पक्कया तथा दोसो पेमां च होहिती॥ ॥

[707] हे मुखिया,
जिसे कोई आवश्यकता नहीं है, उसके लिए मन का कोई दुख नहीं है। मैंने सभी भय को
पार कर लिया है, क्योंकि बंधन नष्ट हो गए हैं।

[708] पुनर्जन्म की ओर ले जाने वाली मृत्यु से, [4] सत्य वैसे ही देखे जाते हैं जैसे वे वास्तव में हैं,
और इसलिए मृत्यु में मेरे लिए कोई भय नहीं है,
यह मेरे द्वारा उठाए गए बोझ को उतारने जैसा है।

[709] मैंने पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) भली-भांति जिया है, और
आर्य मार्ग में भली-भांति प्रगति की है;
मृत्यु से कोई भय नहीं है, जो दुःखों का अंत करती है। [5]

[710] जन्म के रूप आनंद से रहित प्रतीत होते हैं, [6] जैसे कोई जहर पीकर फेंक देता है।

[711] जो व्यक्ति मोहभंग से मुक्त होकर आगे बढ़ चुका है,
जिसका कार्य पूरा हो चुका है, जो स्वस्थ और निर्बल है, वह
जीवन की अवधि समाप्त होने पर प्रसन्न होता है, दुखी नहीं,
जैसे कोई कसाईखाने से बच निकलता है।

[712] जिसने आदर्श भिक्षु का आदेश [7] प्राप्त कर लिया है,
वह समस्त संसार में कुछ भी अपना नहीं चाहता,
जैसे कोई जलते हुए घर से बच निकलता है,
जब मृत्यु निकट आती है तो वह शोक नहीं करता।

[713] जो कुछ भी अस्तित्व में आया है,
और जहाँ कहीं भी पुनर्जन्म होता है,
उसमें कहीं भी व्यक्तिगत उद्देश्य नहीं है: - [8] इस प्रकार महान ऋषि ने हमें बताया है।

[714] और जो जानता है कि चीजें ऐसी ही हैं,
जैसा कि बुद्ध द्वारा सिखाया गया है,
वह किसी भी प्रकार के जन्म को नहीं पकड़ेगा,
जैसे वह लाल गर्म लोहे की गेंद को नहीं पकड़ेगा।

[715] मेरे मन में यह विचार नहीं आता: 'मैं यही रहा हूँ,'
न ही यह विचार आता है: 'मैं आगे क्या बनूँगा?'
विचार, कर्म और शब्द कोई स्थायी [स्वयं] नहीं हैं,
इसलिए यहाँ विलाप करने का क्या आधार है? [9]

[716] जो देखता है, जैसा कि वास्तव में है, चीजों का
शुद्ध और सरल [10]
कारणिक उदय, हमारे कार्यों का शुद्ध और सरल क्रम: -
ऐसे व्यक्ति को कोई भय नहीं आ सकता, हे मुखिया।

[717] यह सारा संसार जंगल की घास
और झाड़ियों की तरह है [किसी की संपत्ति नहीं] जब कोई
बुद्धि से इसे देखता है, तो उसे कुछ भी 'मेरा' नहीं मिलता,
यह सोचकर: 'यह मेरे लिए नहीं है,' वह शोक नहीं करता। [11]

[718] यह शरीर मुझे परेशान करता है; मैं
जीने का कोई साधक नहीं हूँ। यह नश्वर शरीर टूट जाएगा,
और इससे कभी दूसरा जन्म नहीं होगा।

[719] मेरे शरीर के साथ तुम्हारा जो भी काम हो, आओ, जो
चाहो करो; और इस कारण
मुझमें न तो घृणा उत्पन्न होगी और न ही स्नेह।

[720] तस्स ताṃ वचनाṃ सुत्वा अब्भुताṃ लोमहाअसंनाṃ,॥
सत्तानि निक्खिपित्वाना मनावा एतदब्रवुऽ॥ ॥

[721] किय भद्दन्ते1 करित्वाना को वा अकारियो तव,॥
कस्सा सासनमागम्मा लब्भफता तां असोकता॥ ॥

[720] युवक उसके शब्दों पर चकित हुए, और
विस्मय से भर उठे, उन्होंने अपने चाकू फेंक दिए और कहा:

[721] आपके आदरणीय अभ्यास क्या हैं, [12] या
आपका शिक्षक कौन है? आप किसके अध्यादेश के
सदस्य हैं, जिससे आपको यह शोकहीनता प्राप्त हुई है?

अधिमुत्ता:

[722] सब्बान्नु सब्बदस्सावी जिनो अकारियो मामा,॥
महाकारुणिको सत्था सब्बलोकाटिकिचको ॥॥ ॥

[723] तेनायै देसितो धम्मो खायगामी अनुत्तरो,॥
कस्सा सासनमागम्मा लब्भतो तां असोकता॥ ॥

[722] मेरे गुरु सर्वज्ञ
और सर्वदर्शी विजेता हैं, असीम दया वाले भगवान (बुद्ध)
, समस्त संसार के चिकित्सक, वे हैं।

[723] और वही हैं जिनके द्वारा ये सत्य सिखाए जाते हैं,
निर्वाण की ओर ले जाने वाला मार्ग (धम्म) अतुलनीय है।
उनके शासन में ही मैंने यह दुःखहीनता प्राप्त की है।

[724] सुत्वना कोरा इसिनो सुभासीतां,॥
निक्खिप्प सत्थानि च अवुधानि च॥
तम्हा च कम्मा विरामीसु एके॥
एके पब्बज्जा मरोकायिउसु.। ॥

[725] ते पब्बजित्वा सुगतस्सा ससाने॥
भवेत्वा बोजझांगबलानी पंडिता॥
उदग्गचित्त सुमना कटिन्द्रिया॥
फ़ुसींसु निब्बानपदां असोन्खतन' ति.॥ ॥

[724] अब जब लुटेरों ने ऋषि के सुविचारित वचन सुने,
तो उन्होंने अपने चाकू, अपने हथियार रख दिए, और कुछ ने वह धंधा छोड़ दिया,
और कुछ ने प्रार्थना की कि वे संसार (भिक्षुत्व) को छोड़कर पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) अपना लें।

[725] इस प्रकार वे बुद्ध के स्वागत नियम [13] के भीतर विख्यात हो गए,
सात कारकों का अभ्यास करते हुए और पाँच शक्तियों के लिए कड़ी मेहनत करते हुए,
शक्तियों में प्रशिक्षित होकर, प्रसन्न हृदय से वे लक्ष्य तक पहुँच गए।

[1] सीसीएक्सएल देखें.

[2] शाब्दिक रूप से, 'बलिदान के लिए।'

[3] अधिमुत्ता एक युवा नवोदित था।

[4] भवनेति - अर्थात, तन्हा।

[5] शाब्दिक रूप से, रोग। तुलना करें टेनीसन की एलेन:

और मृत्यु मधुर है, क्योंकि यह पीड़ा का अंत कर देती है।

[6] डॉ. न्यूमैन द्वारा दिया गया यह कथन कि 'जीवन जीने लायक नहीं है' मुझे बौद्ध धर्म के अनुरूप प्रतीत नहीं होता। जीवन से अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया जा सकता है - जो सर्वोच्च मूल्यवान वस्तु है, समस्त पूर्व प्रयासों का शिखर है। 'पुनर्जन्म असंतोषजनक हैं'; निरस्सादा भाव पाठ का शाब्दिक अनुवाद है। बौद्ध दृष्टिकोण को समझने के लिए हमें अपनी रूढ़ियों को त्यागना होगा।

[7] धम्मतṃ उत्तमṃ - अर्थात्, 'मार्ग (धम्म) का स्वरूप; पूर्ण अरहंतत्व में, और उसके कारण' (टीकाकरण)।

[8] ना-इस्सारा - शाब्दिक रूप से, जिसका कोई स्वामी या शासक नहीं है; इस्सारा का प्रयोग व्यक्तिगत निर्माता के लिए किया जाता है।

[9] शाब्दिक रूप से, 'गुज़र जाएगा।' 'स्वयं' टिप्पणी से लिया गया है।

[10] शुद्ध, शुद्ध, अमिश्रित - अर्थात, आटा के साथ ; केवल अभूतपूर्व प्रक्रिया: धम्ममत्तप्पवत्ती (टिप्पणी)।

[11] = सुत्त-निपात, श्लोक 951।

[12] तपस: धार्मिक तपस्या या जादू (टीकाकरण)।

[13] शाब्दिक रूप से, स्वागत (सु-गत) का नियम, यह उपाधि अक्सर बुद्ध के लिए प्रयोग की जाती है। कारकों, बलों और शक्तियों के लिए, संकलन, पृष्ठ 180 देखें, जिन्हें क्रमशः कारक, शक्तियाँ और क्षमताएँ कहा गया है। 'लक्ष्य तक पहुँचे' - शाब्दिक रूप से, 'निर्वाण की अवस्था, यानी निर्गुण अवस्था को स्पर्श (प्राप्त) किया।' टीका में आगे कहा गया है कि युवा संत अविचलित होकर अपने मार्ग पर चले, भिक्षु संघ में प्रवेश करने के लिए अपनी माता की सहमति प्राप्त की और अपने चाचा द्वारा भिक्षु दीक्षा प्राप्त की। श्लोक 722 पर धम्मपाल इति-वुत्तक पर अपनी ही टीका का उल्लेख करते हैं।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(249):परापरिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (249) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.
बीस श्लोक
249. पारापरिया
बुद्ध युग में सावत्थी में एक अत्यंत प्रतिष्ठित ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, वयस्क होने पर उन्हें उनके पारिवारिक नाम पारापरा के नाम पर 'पारापरिया' (पारा-परिते) कहा गया । [1] ब्राह्मण (पुजारी) ज्ञान और उपलब्धियों में सुशिक्षित होकर, वे एक दिन भगवान (बुद्ध) के उपदेश के समय जेतवन विहार (मठ) में गए और सभा के किनारे पर बैठ गए। भगवान (बुद्ध) ने उनके चरित्र का ध्यान करते हुए, [295] उन्हें 'इंद्रियों का अभ्यास' नामक सूत्र का उपदेश दिया, [2] जिस पर पारापरिया ने विश्वास किया और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। सूत्र को कंठस्थ करने के बाद, उन्होंने उसके अर्थ पर विचार किया और सोचा: 'श्लोकों में इसका अर्थ इस प्रकार प्रकट होगा।' इस प्रकार इंद्रिय-बोध के विषय पर चिंतन करते हुए उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और समय आने पर अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। बाद में उन्होंने अपने विचारों को काव्य में इस प्रकार व्यक्त किया:

[726] समांस्सा अहु चिंता पारासरियस्सा भिक्खुनो,॥
एककस्सा निसिनस्सा पविवित्तस्सा झायिनो॥ ॥

[727] किमानुपुब्बाṃ पुरिसो किṃ वाताṃ किṃ समाकाराṃ,॥
अट्टानो किक्काकिरिसा न च किंची विहेथये.॥ ॥

[728] इन्द्रियाणि मनुस्सानां हिताय हिताय च,॥
अरक्खितानि हिताय रक्खितानि हिताय चा॥ ॥

[729] इन्द्रियानेवं सरक्खाँ इन्द्रियाणि च गोपायं,॥
अत्तानो किक्काकारिसुसा न च नकिनचि विहेथये.॥ ॥

[730] चक्कुंद्रियै सी रूपेसु गच्चन्तं अनिवारयं,॥
अनादीनवादसवि सो दुक्खा न हि मुक्कति॥ ॥

[731] सोतिन्द्रियाm̥ सीई1 सद्देसु गच्चन्तं अनिवारयं,॥
अनादीनवादसवि सो मुखा न हि मुक्कति॥ ॥

[732] अनिसारनदासवि [73] गंधे सी पतिसेवती,॥
न सो मुच्चति दुक्खम्हा गंधेसु अधिमुच्चितो॥ ॥

[733] अंबिलाm̥ मधुरग्गाm̥ सीए टिट्टाकग्गामानुस्साराm̥,॥
रसतन्हाय गधीतो हदयं नवबुज्जति ॥ ॥

[734] सुभन्याप्पिकुलानि फोहब्बानि अनुस्सारm̥,॥
रत्तो रागाधिकारं विविधं विन्दते दुःखं॥ ॥

[735] मनm̥ सेतेहि धम्मेहि यो न सक्कोति रक्खितुm̥,॥
ततो नां दुक्खमन्वेति सब्बहेतेहि पञ्चहि ॥ ॥

[736] पुब्बालोहितासंपुणं बाहुस्सा कुणपासा सीए,॥
नरवीरकातं वाग्गुm̥ समुग्गमिव चित्तितां॥ ॥

[737] कौउकाm̥ मधुरस्सदाm̥ पियानिबंधनाm̥ दुक्खाm̥,॥
खुराँव मधुना लित्तौ उलिहाँ नावबुज्जति ॥ ॥

[738] इथिरूपे इथिसारे फोथब्बे'पि इत्थिया,॥
इत्थिगन्धेसु शरत्तो विविधै विन्दते दुःखः॥ ॥

[739] इत्थिसोटानि सब्बानि संदन्ति पंच पंचसु,॥
तेसामावरणं कटुऽ सो सक्कोटि वीर्यवा॥ ॥

[740] सो अथवा सो धम्मथो सो दुक्खो सो विकक्खणो,॥
करेय राममानो पि किच्चं धम्मत्थसंहितां॥ ॥

[741] अथो सिदति संनुत्तm̥ माज्जे किक्काm̥ निरथकाm̥,॥
न तां किच्चन्ति मन्नित्वा अप्पमत्तो विकक्खणो॥ ॥

[742] याm̥ च अत्थेना संनुन्तं या च धम्मगता रति,॥
तां समादाय वत्तेथा सा हि उत्तम रति॥ ॥

[743] उच्चावसेहुपायेहि॥
परेसमाभिजिगीसति,॥
हन्त्वा वधित्वा अथ समाजयित्वा,॥
आलोपति सहसा यो परेसां॥ ॥

[744] तच्चन्तो अनिया अनिअ निहंति बलवा यथा,॥
इंद्रियानिन्द्रयेहेव निहन्ति कुसालो तथा॥ ॥

[745] सद्धां वीर्यं समाधिं च सतिं पन्नञ्च1 भावयं,॥

पञ्च पञ्चहि हन्त्वाना अनिघो याति ब्राह्मणो॥ ॥

[746] सो अत्तवा सो धम्मथो कत्वा वाक्यानुसानिः,॥
सब्बेना सब्बाṃ बुद्धस्स सो नरो सुखमेधति' ती॥ ॥

[726] ये प्रेरणाएँ एक भिक्षु को प्राप्त हुईं,
उस भिक्षु पारापरिया को, जब वह एकांत में,
संसार से विरक्त होकर ध्यान कर रहा था:

[727] ऐसा क्या नियम या व्यवस्था है,
ऐसा क्या रीति-रिवाज या आचरण है,
जिससे मनुष्य
वह कार्य पूरा कर सके जो उसे स्वयं करना है,
और किसी अन्य को हानि न पहुँचाए?

[728] देखो! मनुष्य के अंग और शक्तियाँ
कल्याण और बुराई दोनों के लिए होती हैं:
असुरक्षित शक्तियाँ बुराई की ओर ले जाती हैं,
संरक्षित शक्तियाँ कल्याण की ओर ले जाती हैं।

[729] जो अपने अंगों और शक्तियों की रक्षा करता है,
जो अपने अंगों और शक्तियों का ध्यान रखता है,
वह अपने कर्तव्य का पालन करे,
और किसी अन्य को हानि न पहुँचाए।

[730] यदि वह
इंद्रिय-विषयों के बीच दृष्टि की अनियंत्रित शक्ति के साथ जाए, तो वह सभी बुराईयों को कभी न पहचानते हुए भी
दुःख से नहीं बच पाएगा। [3]

[731] यदि वह
अपने आस-पास की आवाज़ों को सुनने की अनियंत्रित शक्ति के साथ जाता है, तो
वह सभी बुराई को कभी नहीं पहचानता,
वह दुख से नहीं बच पाता।

[732] यदि वह अनेक प्रकार की गंधों में
लिप्त होकर, भोग-विलास में डूबा रहे,
शरण का मार्ग कभी न पहचानते हुए, [4] वह दुःख से नहीं बच पाया।

[733] खट्टे, मीठे और कड़वे स्वाद का
आनंद लेते हुए और उस पर विचार करते हुए,
स्वाद की इच्छाओं से चिपके हुए:
उसका दिल कभी जागृत नहीं होगा।

[734] सुंदर, संपर्क की लुभावनी चीजें,
छूना, महसूस करना, विचार करना,
कामुकता को उत्तेजित करना, वह भावुक होकर
दुख के कई रूप पाता है।

[735] हाँ, जो इन इंद्रिय-अनुभूतियों में
मन [प्राप्तकर्ता] की रक्षा नहीं कर सकता,
दु:ख उसका पीछा करेगा,
यहाँ तक कि सभी पाँचों इंद्रियों के माध्यम से भी।

[736] शरीर रक्त और पदार्थ से भरा हुआ है
और कई अन्य घिनौनी चीजों से भी,
इसलिए मानवीय कौशल और बुद्धि से इसे
चित्रित ताबूत की तरह सुंदर बना दिया गया है,

[737] इससे होने वाली कड़वी पीड़ा
मीठी संतुष्टि के रूप में प्रकट होती है,
जो हमारे प्रिय से बंधी होती है, जैसे शहद की मोटी परत के नीचे
छिपा हुआ एक तेज धार वाला ब्लेड , [297] जिसे लालची लोग नहीं पहचान पाते। [5]

[738] जो स्त्री के रूप,
स्त्री के स्वाद, स्पर्श और सुगंध पर मोहित होता है,
उसे दु:ख के अनेक रूप मिलते हैं।

[739] स्त्री से निकलने वाली हर चीज [6] [पुरुषों की सभी इंद्रियों में व्याप्त होकर,] -
इस और उस पुरुष के पाँच द्वार [खुल जाते हैं,] -
इन सबके विरुद्ध अवरोध बनाने के लिए
यदि किसी पुरुष में साहस और वीरता हो,

[740] वह बुद्धिमान और धर्मी है,
वह चतुर और दूरदर्शी है;
क्योंकि वह आराम से और प्रसन्न होकर,
अपने आप को धार्मिक कर्तव्यों में लगा सकता है।

[741] जब सांसारिक लाभ में लीन हो, [7] यदि वह व्यर्थ उपक्रमों से परहेज करे,
यदि वह उनसे परहेज करना उचित समझे, तो
वह गंभीर और दूरदर्शी होता है।

[742] क्या यह अच्छे संबंध वाला काम है,
क्या उसका प्रेम आदर्श पर टिका है, [8] उसे काम लेने दो और उसे करने दो;
अन्य प्रेम उस प्रेम से बढ़कर हैं।

[743] अनेक, अनेक प्रकार के तरीके
जिनसे मनुष्य अपने साथियों को धोखा देता है;
हमला करके, हत्या करके, बहुत कष्ट देकर
वह हिंसा से अत्याचार करता है। [9]

[744] जैसे लकड़ी का काम करने वाला एक बलवान व्यक्ति,
कील निकालने के लिए कील का उपयोग करता है, [298] वैसे ही बुद्धिमान और गुणी भिक्षु
एक शक्ति का उपयोग दूसरों को प्रहार करने के लिए करते हैं: -

[745] विश्वास और प्रयास, एकाग्रता,
सजगता और बुद्धि का प्रयोग,

पाँच को दूसरे पाँच से दूर करते हुए,
संत दोषों से मुक्त हो जाता है। [10]

[746] वह बुद्धिमान और धर्मात्मा है;
उसने बुद्ध द्वारा घोषित नियम का
पूर्णतः पालन किया है।
वह सुखी है, उसने समृद्धि प्राप्त की।

[1] संभवतः राजगृह पारापरों के सोलहवें अध्याय के पारापरिया से संबंधित है, लेकिन उससे बिल्कुल अलग नहीं है। यह पारापरिया सोलहवें अध्याय का है।

[2] इस शीर्षक (इन्द्रिय-भावन) से मुझे जो एकमात्र सूत्र मिला है, वह मज्झिमा निकाय का अंतिम सूत्र है । इसमें ब्राह्मण (पुजारी) शिक्षक पारसरिया द्वारा प्रयुक्त विधियों का उल्लेख है, और फिर 'आर्यन विनय' में सिखाई गई 'संपन्नता-प्रशिक्षण' विधि का वर्णन है, जिसमें बुद्ध (सावत्थी नहीं, कजंगला में) बोल रहे हैं, और वार्ताकार ब्राह्मण के शिष्य उत्तरा और आनंद हैं। विषय की समानता ही सूत्र और कविता को जोड़ती है। विवेचन में कोई समानता नहीं है, और दो समस्याएं उत्पन्न होती हैं: (1) क्या पारपरिया किसी अन्य संस्करण का पुनर्कथन कर रहे थे? (2) क्या पारपरिया स्वयं पारसरिया थे?

[3] टिप्पणी ना ही मुक्काती पाठ का समर्थन करती है, जिसे न्यूमैन द्वारा संशोधित किया गया है।

[4] डॉ. न्यूमैन की 'उंड निष्ट डाई फ्री होहे सीहट' शायद अनावश्यक रूप से मुक्त है, और सुगंधित गंधों के लिए शायद ही कोई अच्छा विपरीतार्थक शब्द है, जैसा कि कोई भी जानता है जिसने जून में फूलों से ढके ऊंचे इलाकों की गंध के लिए एक बदबूदार अल्पाइन गांव छोड़ दिया है।

[5] 'जैसे मीठी चीजों का लालची व्यक्ति किसी तेज धार वाले चाकू की धार को चाटता है' (टिप्पणी)।

[6] शाब्दिक रूप से, धाराएँ - अर्थात्, उसका दृश्य आकार, आदि, इंद्रियों की वस्तुएँ (टिप्पणी)। पाली, न्यूमैन जर्मन संस्करण की तुलना में अधिक परिष्कृत है, और बदनाम ठोस 'वीब' को फिर से घसीटना - 'Wo nieder man zum Weibe sinkt' - पाली द्वारा पूरी तरह से अनुचित है।

[7] टीका atho (in exegesis tato) sīdati saññutaŋ का समर्थन करती है। 'यदि वह सांसारिक प्रकार की भलाई को पकड़ लेता है।'

[8] धम्मगता रति - शाब्दिक रूप से, पथ (धम्म) पर स्थापित।

[9] अनुवाद में छोड़े गए अनावश्यक पद पाली में आ गए हैं।

[10] यहाँ भी जर्मन अनुवाद मुख्य बिंदु को समझने में चूक गया है। पाँच प्रकार के इंद्रिय सुखों से संतुष्टि को पाँच प्रकार की आध्यात्मिक इंद्रियों, इंद्रिय शक्तियों या क्षमताओं द्वारा आध्यात्मिक शक्तियों द्वारा दूर किया जाना चाहिए। देखें XV, n. 2, और संकलन, पृष्ठ 180। तुलना करें ऊपर, श्लोक 725, n. यहाँ आणि (नेल) और अनिघो (दोषरहित) शब्दों का खेल है, जिसका अंग्रेजी में अनुवाद संभव नहीं है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(250):तेलकानि

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (250) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.

बीस श्लोक

250. तेलकानी

बुद्ध युग में, भगवान बुद्ध के जन्म से पहले, उनका पुनर्जन्म सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में हुआ और उनका नाम तेलकानि रखा गया। परिपक्व पूर्वजों के कारण, वे सांसारिक इच्छाओं से ऊब गए और संसार छोड़कर एक संन्यासी के रूप में विचरण करने लगे। आत्मा की मुक्ति (निर्वाण) की खोज में वे भ्रमण करते रहे और सोचते रहे, 'संसार में वह कौन है जो निर्वाण से परे पहुँच गया है?' और संन्यासियों और ब्राह्मणों (पुजारियों) से प्रश्न पूछते रहे, लेकिन उन्हें कोई उत्तर नहीं मिला। इसी बीच, हमारे परम पूज्य (बुद्ध) का उदय हुआ और वे धम्म-चक्र घुमाते हुए संसार के कल्याण के कार्य में लगे हुए थे। एक दिन तेलकानि ने यह सुना और विश्वास से भर गए, भिक्षुओं के मार्ग में दीक्षित हुए और कुछ ही समय बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया।

एक दिन भिक्षुओं के साथ बैठे हुए, अपने परिश्रम और विजय को याद करते हुए, उन्होंने उन सभी को इस प्रकार बताया:

[747] सिरारट्टे मतातापि धम्मं अनुविचिन्तायं,॥
समं चित्तस नालत्थं पुच्वं समणब्राह्मणे॥ ॥

[748] को [74] सो पारंगतो लोके को पत्तो अमातोगधाm,॥
कस्सा धम्मं पतिच्छामि परमत्थविजाननं॥ ॥

[749] अंतोवांकागाटो असी माचोवा घसामामिसाm,॥
बद्धो3 महिन्दपसेन वेपचित्तसूरो यथा.॥ ॥

[750] अंचामि नां न मुनचामि अस्मा सोकापरिद्दव,॥
Ko me बन्धm मुनकाm लोके संबोधि वेदयिस्सति.॥ ॥

[751] समानं ब्राह्मणं वा कां आदिसंतं पभौगुणा,॥
कस्सा धम्मं पतिच्चामि जरामक्कुवाहनं॥ ॥

[752] विकिसिच्चाकांकखगाथितां सरंभबालासंनुतां,॥
कोधप्पत्तमनत्तद्धधं अभिजप्पपदारणं॥ ॥

[753] ताड़्हाधनुसामुत्थानं द्वे च पन्नरसयुताऽ,॥
पस्सा ओरासिकां बधां भेत्वा यदि तिथति.॥ ॥

[754] अनुडिथिनाm अप्पाहानाm संकप्पापरातेजिताm,॥
तेन विद्धो पवेधामि पत्तौऽव मालुतेरिताऽ॥ ॥

[755] अज्झट्टm मे समुथथया खिप्पाm पच्चति मामकाm,॥
चफस्सयतानि कायो यथा सारति सब्द॥ ॥

[756] तां न पासामि तेकिचाm यो मेटां सल्लामुद्धारे,॥
नानारज्जेण सत्थेन नान्नेण विकिचिचितां॥ ॥

[757] को मे असत्थो अवणो सल्लमभनतारपासयm,॥
अहिंसा सब्बगत्तना सल्लं मे उद्धरिससतं॥ ॥

[758] धम्मप्पति हि सो सेठो विसदोसप्पवहाको,॥
गम्भिफरा पतितस्स मे थलं पणिनि च दस्सये॥ ॥

[759] रहादेऽहमस्मि ओगाधो अहरियाराजमत्तिके,॥

मयासुयसारंभ थिनामिद्धमपत्थते.॥ ॥

[760] उधक्कमेघथानिताꞐ संनोजनावलाहाकाꞐ,॥
वाहा वहन्ति दुद्दिथिं संकप्पा रागनिसिता॥ ॥

[761] सवंति सब्बाधि सोता लता उब्भिज्ज तिथति,॥
ते सोते को निवारेया तां लतां को ही चेकति॥ ॥

[762] वेलैं करोथा भद्दंते सोतानां सन्निवारनं,॥
मा ते मनोमायो सोतो रुक्खाव सहसा लवे॥ ॥

[763] एवं मे भयजातस्स अपरा परमेसतो,॥
ताणो पणनावुधो सत्था इसिसाघनिसेवितो॥ ॥

[764] सोपाणं सुकतं शुद्धं धम्मसारमयं दड़ं,॥
पदासि वुयहमानस्सा 'मा भयि' ति च अब्रावी॥ ॥

[765] सतिपठनपासादौ अरुयहा पक्कवेक्खिसाꞐ,॥
यं तां पुब्बे अमानिसिसां सक्कयाभिरतं पजं॥ ॥

[766] यदा च मग्गमद्दक्खिं नवाय अभिरूहणं,॥
अनादिथया अत्तनं तित्थमद्दक्खिमुत्तमं ॥॥ ॥

[767] सल्लाꞐ अत्तसमुङ्घनꞐ भवनेत्तिपभावितꞐ,॥
एतेसाऽ अप्पवत्तया देसेसि मग्गामुत्तम ॥॥ ॥

[768] दीघारत्तनुसायितं चिररतमधिऽहिताऽ,॥
बुद्धो मे पाणुदि गंथां विसदोसप्पवाहणो ति.॥ ॥

[747] ओह, मैं कितने लंबे दिनों तक विचारों में डूबा रहा,
सत्य की खोज में व्याकुल रहा [जो मुझे मुक्त कर सके]! [1] मुझे मन की शांति नहीं मिली, [बल्कि मैं इधर-उधर भटकता रहा,] ब्राह्मण (पुजारी) और संन्यासी से पूछता रहा:

[748] [299] 'संसार में कौन सा मनुष्य इससे आगे बढ़ पाया है?
किसने अमृत में पैर जमाया है? [2] मैं किसका सिद्धांत अपने हृदय में धारण कर सकता हूँ,
जिससे सर्वोच्च [3] को मैं जान सकूँ?'

[749] भीतर ही भीतर एक कांटे में फँसकर, मेरी आत्मा लटकी हुई थी,
ठीक वैसे ही जैसे कोई मछली चारा निगलती है।
मैं फँसा हुआ पड़ा था, जैसे कभी वेपचित्ति (राक्षस राजा),
असुर (राक्षस), शक्तिशाली इंद्र के चंगुल में। [4]

[750] मैं अपनी बेड़ियों को घसीटता रहा,
इस [अंतहीन दुख और पीड़ा के स्रोत] से मुक्ति नहीं पा सका।
क्या पृथ्वी पर कोई ऐसा मनुष्य नहीं है जो मेरे बंधनों को खोल सके
और मुझे ज्ञान प्रदान कर सके?

[751] कौन सा ब्राह्मण (पुजारी), कौन सा संन्यासी मुझे बता सकता है कि

मैं उन्हें कैसे दूर करूँ? मैं किसका मार्ग (धम्म) अपना सकता हूँ,
जो वृद्धावस्था और मृत्यु को दूर कर सके?

[752] इस बोझ को देखो! उलझन और संदेह का कुंडल
, इसकी घातक शक्ति
स्वभाव को कमजोर कर रही है, मन को कठोर बना रही है,
और एक विशाल इच्छा से चीर रही है।

[753] लालसा के धनुष से गिरा हुआ उपशाखा,
[झूठे मत के रूपों के कारण,] पंद्रह दो बार [5] -
देखो, मैं कहता हूँ, यह दबाव मेरे सीने को कितनी ज़ोर से
कुचल रहा है जहाँ यह स्थित है! [6]

[754] व्यर्थ विचारों का शोर [7] दूर नहीं हुआ [300] बल्कि गहरी आशाओं और यादों से प्रेरित होकर: [8] इस स्तब्ध से मैं इधर-उधर लड़खड़ाता हूँ,
और हवा से उड़ते पत्ते की तरह कांपता हूँ।

[755] यह मेरे भीतर से ही है जिसने बाण छोड़ा है, [9] जहाँ से मेरा यह स्व तेज़ी से भस्म हो जाता है, [10] यहाँ तक कि यह शरीर भी अपने छह गुना
संपर्क क्षेत्र के साथ, जहाँ यह हमेशा आगे बढ़ता रहा।

[756] मैं उसे नहीं देखता, वह कुशल सर्जन, जो
डार्ट निकाल सकता है और
सूक्ष्म जांच से मुझे मेरे संदेह से मुक्त कर सकता है, न कि किसी अन्य चाकू से। [11]

[757] क्या कोई बिना चाकू या घाव के,
मेरे सभी अंगों को बिना नुकसान पहुंचाए,
मेरे दिल में फंसे इस बाण को निकाल सकता है?

[758] धम्म (मार्ग) के स्वामी, वह सर्वश्रेष्ठ,
जो विष के बुखार-हानि को दूर कर सकते हैं,
जो, यदि मैं गहरे में गिर जाऊं, तो
हाथ दिखा सकते हैं और [12] बता सकते हैं कि उथले पानी कहाँ से ज़मीन की ओर ढलान बनाते हैं।

[759] हाँ, मैं एक तालाब में डूबा हुआ हूँ,
धूल और कीचड़ का एक गड्ढा जो कभी खाली नहीं होता,
कपटपूर्ण नकलीपन से चौड़ा फैला हुआ है,
ईर्ष्या और अतितनाव, [13] सुस्ती और आलस्य।

[760] [301] विचारों की गड़गड़ाहट ने मेरा ध्यान भटका दिया,
और बेड़ियों ने मेरे रास्ते को घेर लिया: -
वासना से उपजी आवेग और इरादे की बाढ़ ने
मुझे वहाँ बहा दिया - एक संशयवादी के विनाश की ओर। [14]

[761] और हर जगह धाराएँ बह रही हैं,
और लताएँ लगातार बढ़ती जा रही हैं -
वे धाराएँ जिनकी शक्ति उन्हें रोक सकती है?
वह लता जो अपनी जड़ से अलग हो सकती है? [15]

[762] आप [16] एक बांध बना लें, भले आदमी, धाराओं को बांधने के लिए;
ध्यान रहे कि मन की प्रबल धारा
आपको किसी लट्ठे की तरह बेरहमी से यहाँ से न फेंक दे!

[763] मेरे लिए भी ऐसा ही था, जो भय से
इस ओर दूर तट की ओर खोज रहा था, जब वह,
भगवान (बुद्ध), अपने संत अनुयायियों के साथ चल रहे थे,

[764] वह सच्चा शरणदाता, और अंतर्दृष्टि से सुसज्जित,
मुझे एक सीढ़ी दी, जो दृढ़ता से बनी थी,
और दृढ़ थी, जो धम्म के शुद्ध हृदय से बनी थी, [17] और मुझसे परिश्रम करते हुए कहा: 'डरो मत!'

[765]
मैं छत पर चढ़ गया जहाँ सचेत और सतर्क मन स्वयं को लगाता है, [18] वहाँ से मैं मनुष्यों के पुत्रों का चिंतन कर सकता था,
'मैं' और 'मेरा' की भावना में आनंदित होते हुए, [19] जिसमें मैं कभी अभिमान पालता था।

[766] और जब मैंने मार्ग देखा, यहाँ तक कि वह जहाज़ भी
जिस पर सवार होना था, और स्वयं पर जीना छोड़ दिया,
तब मैंने निर्वाण का किनारा देखा। [20]

[767] [302] स्वयं से निकला तीर, उसकी शाखा
जो बनने की ओर ले जाती है [21] - वह सब रोकने के लिए जो
उसने सिखाया था।

[768] मेरे जीवन में लंबे समय से दबे हुए गांठदार बंधन, जो
इतने वर्षों से मेरे चारों ओर जमे हुए थे,
बुद्ध ने उन्हें मुझसे मुक्त कर फेंक दिया,
और हर विषैले नासूर को साफ कर दिया।

[1] अतः टीका, vimuttidhammaṃ, vimokkhadhammo.

[2] 'इस संसार में, जो लोग धार्मिक शिक्षक माने जाते हैं, उनमें से कौन संसार (अर्थात लगातार जीवन और मृत्यु) से परे निर्वाण तक पहुँच गया है ? कौन निर्वाण में, मुक्ति के मार्ग पर स्थापित है?' (टीका)।

[3] परमत्थ, सर्वोच्च अच्छाई, या अर्थ।

[4] देखें Saṃy. Nik., i. 220, Ī 4.

[5] टीका के अनुसार, 'दो बार पंद्रह' से तात्पर्य सक्कायादिट्ठी के बीस रूपों (6 x 4) से है, या शरीर-स्व-दृष्टि (ध. एस., Ī 1003 = बुड. साइ., पृ. 259), और मिच्छदिट्ठी के दस रूपों (विभंग, पृ. 392) से है।

[6] मैंने टीका bāḷhaṃ और tiṭṭhati के साथ पढ़ा।

[7] अनुडिथिनाṃ शब्द की व्याख्या अनुडिथिना... सस्सातादिहि आदिनाṃ से की गई है ।

[8] टीका में लिखा है sankappa-paratejitaŋ ... micchāvitakkena parajane ... ussāhitaŋ. दूसरा पाठ, sankappasara-tejitaŋ, अधिक बोधगम्य और कम अटपटा लगता है। sarasankappā (Majjh. Nik., i. 458; Saŋy. Nik., iv. 76) में इसका लगभग समान उदाहरण मिलता है। शाब्दिक रूप से, 'टालना नहीं' का अर्थ है 'तेज करना'।

[9] टीका में घाव के स्वयं द्वारा पहुँचाए जाने पर जोर दिया गया है, जो मसीह के शब्दों की शैली में है: '... वे चीजें जो ... हृदय से निकलती हैं; ... वे मनुष्य को अपवित्र करती हैं' (मत्ती 15:18)।

[10] ममकारु = मम संतक: अत्तभाव:।

[11] 'संदेह,' 'बाण' के रूप में, यहाँ किलेसों (शाब्दिक रूप से, पीड़ा, घाव; cf. बुड. साइ., 327, n.) के पूरे समूह का प्रतीक कहा गया है। जांच, नानाराज्जा, को एसानी-सलाका द्वारा व्याख्यायित किया गया है । अहिंसा = अबाधेन्तो।

[12] टीका में pāṇiñ ca लिखा है ।

[13] सारंभ (cf. श्लोक 752) की व्याख्या करकुट्टारिया-लक्खाणो द्वारा की गई है।

[14] टीका vāhā vahanti की व्याख्या 'मुझे विनाश के सागर में ले जाने वाले विशाल जल का प्रवाह' के रूप में करती है। तुलना करें जात., खंड 888 f.; धम्प., खंड 339 f.

[15] ये 'लालसा' (तन्हा) के लिए मानक उपमाएँ हैं। श्लोक 1094 देखें ।

[16] करोथा का अर्थ है 'तुम्हें बनाना', लेकिन इस विभक्ति का सामना एकवचन अर्थ में होता है, जैसा कि संदर्भ की मांग होती है।

[17] शाब्दिक रूप से, 'धर्म (मार्ग) के सार से बना।'

[18] सतिपठन-पासादौ।

[19] सक्कया, अहं ममति के रूप में अनुवादित ।

[20] तित्थाम् उत्तमम् - शाब्दिक रूप से, सर्वश्रेष्ठ या सर्वोच्च तट - 'निर्वाण नामक अमृतमय महान-परलोक के उतरने का स्थान' द्वारा व्याख्या की गई।

[21] तन्हा. पृष्ठ 292, नोट 1 देखें. पभावित = समुत्तित (टीका)।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(251):रत्थपाल

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (251) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.
बीस श्लोक
251. रट्ठपाल
उनका पुनर्जन्म बुद्ध युग में कुरु देश के थुल्लकोट्ठिका नगर में हुआ, जहाँ वे रट्ठपाल नामक एक पार्षद के पुत्र थे। [1] उनका नाम उनके परिवार के नाम पर ही रखा गया। एक बड़े दरबार में पले-बढ़े, किशोरावस्था में ही उनका विवाह एक योग्य पत्नी से हुआ और उन्होंने देवताओं के समान समृद्धि का आनंद लिया। अब, कुरु देश में भ्रमण करते हुए, भगवान (बुद्ध) थुल्लकोट्ठिका आए और रट्ठपाल उनका प्रवचन सुनने गए। श्रद्धा प्राप्त करके, उन्होंने बड़ी कठिनाई से अपने माता-पिता से संसार त्यागने की अनुमति प्राप्त की।

भगवान (बुद्ध) के पास जाकर, उन्होंने भगवान (बुद्ध) के आदेश पर एक भिक्षु से भिक्षु दीक्षा प्राप्त की और लगन से अध्ययन करके अंतर्दृष्टि विकसित की और अर्हंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद उन्हें अपने माता-पिता से मिलने की अनुमति मिल गई और वे भिक्षा मांगने के लिए घर-घर घूमते हुए थुलकोट्थिका चले गए। अपने पिता के घर उन्हें बासी दलिया मिला, लेकिन उन्होंने उसे अमृत के समान खाया। अगले दिन अपने पिता के निमंत्रण पर वे अपने घर गए। जब सुंदर वस्त्र पहने महिलाओं ने उनसे पूछा, 'हे स्वामी, अप्सराएँ कैसी होती हैं? आप किसके लिए ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करते हैं?' तो उन्होंने अनित्यता आदि से संबंधित धर्म का उपदेश दिया और उनके दुष्प्रचारपूर्ण व्यवहार को अस्वीकार कर दिया।

[769] पासा चित्तकाटाŋ बिंबाŋ अरुकायाŋ समुसिताŋ,॥
आतुरं बहुसंकप्पां यस्सा नत्थि धुवं तिथि.॥ ॥

[770] पासा चित्तका रूपाŋ मनिना का1ंडलेना सीए,॥
अट्ठीŋ तासेना ओनद्दधां सहा वत्थेहि शोभति.॥ ॥

[771] अलट्टकटा पदा मुखं कुणकमक्खितां,॥
अलं बलास्सा मोहया नो च परागवेसिनो॥ ॥

[772] अट्ठपादकटा केसा नेत्ता अंजनमक्खिता,॥
अलं बलास्सा मोहया नो च परागवेसिनो॥ ॥

[773] अंजनीव नवा चित्त पूतिकायो अलंकातो,॥
अलं बलास्सा मोहया नो च परागवेसिनो॥ ॥

[774] ओदाहि मिगावो पासाँ नासादा वागुरां मिगो,॥
भत्वा निवापं गच्छमा कन्दन्ते मिगबन्धके॥ ॥

[775] चिन्नो पासो मिगावसा नासादा वागुरां मिगो,॥
भुत्वा निवापं गच्छमा सोकांते मिगालुद्दके॥ ॥

[769] देखो, बनावटी कठपुतली के आकार (मानव शरीर) को,
घावों के ढेर को, रोगग्रस्त ढेर को, और
अनेक उद्देश्यों और योजनाओं से भरा हुआ, फिर भी
जिसमें दृढ़ रहने की कोई शक्ति नहीं है! [2] (769)

[770] देखो, सजे-धजे रूप (मानव शरीर) को, गहनों से सजा हुआ, अंगूठियों से लिपटा हुआ,
हड्डियों और पतले आवरण में लिपटा हुआ,
बढ़िया और देखने में सुंदर उपकरणों की मदद से!

[771] लाख से रंगे पैर, लाल रंग से सने होंठ:
ये सब एक मूर्ख की मंद बुद्धि के लिए काफी अच्छा है,
लेकिन उसके लिए नहीं जो परलोक की तलाश करता है!

[772] आठ गुना गुंथी हुई लटें, काली काजल से सजी आंखें:
ये सब एक मूर्ख की मंद बुद्धि के लिए काफी हैं,
लेकिन उसके लिए नहीं जो परलोक (निर्वाण) की तलाश करता है!

[773] जैसे काजल के घड़े की तरह, [3] एकदम नया, उभरा हुआ,
भीतर से दूषित शरीर को बेधड़क सजाया गया है:
मूर्ख की मंद बुद्धि के लिए सब ठीक है,

लेकिन उसके लिए नहीं जो परलोक की तलाश करता है।

[774] शिकारी ने अपना जाल बिछाया। हिरण
जाल के विरुद्ध नहीं आया। [4] हमने चारा खा लिया है -
चलो चलें! [5] इस बीच हिरण पकड़ने वाले विलाप करते हैं।

[775] शिकारी का जाल टूट गया है! हिरण
जाल के विरुद्ध नहीं आया। हमने चारा खा लिया है -
चलो चलें; इस बीच हिरण पकड़ने वाले रोते और विलाप करते हैं।

इसके बाद रट्ठपाल वायु में विचरण करते हुए [6] राजा कोरव्य के मृग उद्यान में गए और एक पत्थर की शिला पर बैठ गए। थेरा के पिता ने अपने सातों द्वारों पर कुंडी लगवा दी थी और उन्हें बाहर निकलने से रोकने के लिए तथा उनके पीले वस्त्र उतारकर उन्हें सफेद वस्त्र पहनाने के लिए आदमी भेजे थे। [7] इसलिए थेरा वायु में विचरण कर गए। तब राजा ने जब सुना कि वे कहाँ बैठे हैं, तो उनके पास जाकर विनम्रतापूर्वक अभिवादन करते हुए उनसे पूछा: 'हे स्वामी रट्ठपाल, इस संसार में मनुष्य किसी न किसी विपत्ति - बीमारी, राजा की मृत्यु, धन या परिवार की हानि - के कारण इसे त्याग देते हैं। परन्तु आपने ऐसा कुछ भी नहीं सहा, तो आपने संसार क्यों छोड़ा (सन्यास के लिए)?' तब थेरा ने उत्तर दिया: 'संसार क्षणभंगुर है; संसार का कोई आश्रय या ईश्वरीय कृपा नहीं है; संसार का कोई गढ़ नहीं है; संसार अभावग्रस्त और निर्धन है, असंतुष्ट है, भोग-विलास का दास है।' इस प्रकार अपनी पृथक स्थिति दर्शाते हुए, उन्होंने पद्य में एक समानांतर उदाहरण प्रस्तुत किया:

[776] पसिसामि लोके साधने मानुस्से॥
लद्धना वित्तं न ददन्ति मोहा,॥
लुद्धा [76] धनाṃ सन्निकायṃ करोंती॥
भय्यो वा कामे अभिपत्थयन्ति॥ ॥

[777] राजा पसायहा पथविṃ विसेत्वा॥
ससागरान्ताः महिमावसंतो,॥
ओराṃ समुद्दस्सा अतित्तारुपो॥
पराण् समुद्दस्सऽपि पत्तयेथा ॥ ॥

[778] राजा च अण्णे च बहु मानुषा॥
अवितातंहा मरणं उपेन्ति,॥
स्नाव हुत्वान् जंहांति देहं॥
कामेहि लोकमहि न हत्थि तिति.॥ ॥

[779] कंदन्ति नैनाति पकिरिया केसे॥
अहो वाता नो अमरति चहु,॥
वत्थेन नैं परतं निहारितवा॥
सीतां समेधाय ततो दहंति.॥ ॥

[780] सो दैहति सुलेहि तुज्जमानो॥
एकेन वत्थेन पाहाय भोगे,।
न मियामानस्स भवन्ति ताना॥
ज्ञाति च मित्ता अथवा सहाय.। ॥

[781] दयादका तस्स धनं हरन्ति॥
सत्तो पण गच्छति येन कम्मं,॥
न मियामानं धन्मन्वेति किञ्चि॥
पुत्त च दारा च धनं च रथं॥ ॥

[782] न दीघमायु लभते धनेन॥
न चा'पि वित्तेन जरां विहन्ति,॥
अप्पं हि तं जीवितमाहु धीरा॥
अस्सस्सतं विप्परिणामधम्मं.॥ ॥

[783] अड्ढा ददिद्दा च फुसन्ति फस्सां॥
बालो च धीरो च तथैव फूटथो,॥
बालो हि बल्या वधितोऽव सेति॥
दिरो च नो वेधाति फस्साफुतहो॥ ॥

[784] तस्मा हि पन्नाव धनेन सेय्य॥
याया वोसानमिदाधिगच्छति,॥
अभ्योसितत्ता हि भवभवेसु,॥
पापानि कम्मानि करोति मोहा॥ ॥

[785] उपेति [77] गब्भं च पारं च लोकाṃ॥
संसारमापज्जा परम्पराय,॥
तस्सप्पन् च अभिसद्दहंतो॥
उपेति गभन् च पराञ्च लोकाṃ॥ ॥

[786] कोरो यथा संधिमुखे गहितो॥
सकाम्मुना हन्नति पापधम्मो,॥
एवं पजा पक्का परमहि लोके॥
सकाम्मुका हन्नति पापधम्म।॥ ॥

[787] काम ही चित्र मधुरा मनोरमा॥
विरूपरूपेण माथेंती चित्ताṃ,॥
आदिनावं कामगुनेसु दिसवा॥
तस्मा अहं पब्बजितोमहि राजा॥ ॥

[788] दुमप्पलानिव पतन्ति मनावा॥
दहरा च वुधा च शरीरभेदा,॥
एतम् पि दिस्व पब्बजितोमहि राजा॥
अपानकाकं समानमेव सेय्यो, ॥ ॥

[789] सद्ध्याहाऽ पब्बजितो उपेतो जिनसासने,॥
अवंझा मयहं पब्बज्जा अन्नो भुञ्जामि भोजनं॥ ॥

[790] कामे आदित्ततो दिस्वा जातरूपाणि सत्थतो,॥
गब्भवोक्कन्तितो दुक्खाऽनिरयेसु महब्भाय॥॥ ॥

[791] एतम् आदिनवं णत्वा सवेगṃ अलभिṃ तदा,॥
सोऽहं विद्धो तदा सन्तो संपत्तो आसवक्खयः॥ ॥

[792] पैरिसिणो माया सत्था कतं बुद्धस्स ससनं,॥
ओहितो गरुको भरो भवनेति समुहता॥ ॥

[793] यस्साथया पब्बजितो अग्गस्मानगरियौ,॥
सो मे अत्थे अनुप्पत्तो सब्बासंयोजनकखायोऽ ति.॥ ॥

[776] मैं दुनिया में बहुत धनवान पुरुषों [8]
को देखता हूँ:- धन अर्जित करने में वे देने में गलती करते हैं।
लालच से अपनी संपत्ति का बड़ा भंडार बनाते हैं,
हाँ, फिर भी और अधिक सुखों की लालसा करते हैं।

[777] राजा ने बलपूर्वक पृथ्वी पर विजय प्राप्त कर ली,
समुद्र के किनारे तक,
समुद्र के इस तरफ की भूमि पर अधिकार रखते हुए, वह अभी भी असंतुष्ट होकर
दूसरी तरफ की भी लालसा कर सकता है।

[778] देखो जहाँ राजा और कई अन्य लोग
अपनी लालसाओं को पालते हुए मर रहे हैं।
कंगाल होकर, [9] वे इस शरीर को त्याग देते हैं,
क्योंकि वे इस दुनिया के सुखों से कभी संतुष्ट नहीं होते।

[779] रिश्तेदार उसके लिए विलाप करते हैं, बाल बिखरे हुए,
रोते हुए: 'हाय! काश हमारा रिश्तेदार अमर होता!' [10] उसे कफ़न में लपेटकर वे ले जाते हैं;
चिता उठाकर वे तुरंत उसका दाह संस्कार कर देते हैं।

[305] [780] वह जल रहा है, कांटों से कुरेदा जा रहा है,
एक ही वस्त्र पहने, सारी दौलत से वंचित।
मरने वाले को कभी परिवार
, दोस्त, यहाँ तक कि पड़ोसी भी शरण नहीं देते।

[781] उसकी संपत्ति उसके उत्तराधिकारियों द्वारा छीन ली जाती है, लेकिन वह [11] अपने सभी पिछले कर्मों के अनुसार चलता है।
मरने वाले के पीछे कभी धन नहीं जाता,
न बच्चे, न पत्नी, न धन, न राज्य।

[782] धन से कभी दीर्घायु प्राप्त नहीं होती,
न ही संपत्ति से बुढ़ापा दूर होता है।
यह जीवन क्षणभंगुर है, जैसा कि सभी ऋषियों ने हमें बताया है;
यह क्षणिक है, और मूलतः परिवर्तनशील है।

[783] सभी स्पर्श का अनुभव करते हैं, [12] चाहे गरीब हों या अमीर;
बुद्धिमान भी मूर्ख से कम स्पर्शित नहीं होता।
परन्तु मूर्ख अपनी मूर्खता से अभिभूत होकर ज़मीन पर पड़ा रहता है;
बुद्धिमान, स्पर्श का अनुभव करते समय कभी नहीं कांपता।

[784] इसीलिए धन से कहीं श्रेष्ठ ज्ञान है,
जिसके द्वारा हम यहाँ तक पहुँचते हैं।
क्योंकि लक्ष्य तक न पहुँचने के कारण [13] मंदबुद्धि लोग
भ्रम में दुष्ट कर्म करते हैं, और
उच्चतर या तुच्छ लोकों में पुनर्जन्म लेते हैं। [14]

[785] एक मनुष्य गर्भ में आता है और दूसरे लोकों में पुनर्जन्म पाता है, संसार (लोक)

में फँसकर , अनगिनत पूर्व जन्मों के चक्रों में; अल्प बुद्धि वाला उसका अनुसरण करता है, यहाँ और दूसरे लोकों में भी जन्म लेता है।

[786] यहाँ तक कि एक चोर जो चोरी करते हुए पकड़ा जाता है,
अपने ही कृत्य से अपराधी के रूप में निंदा की जाती है, [15] [306] उसी प्रकार, मृत्यु के बाद, दूसरे लोक में, जाति
अपने ही कर्मों से अपराधी के रूप में निंदा की जाती है।

[787] क्योंकि इंद्रिय-इच्छाओं के मीठे और अनेक आकर्षण से,
मन किसी न किसी तरह असंतुलित हो जाता है;
और इंद्रिय सुखों में बुराई देखकर
, हे राजा, मैंने सब कुछ त्याग दिया है।

[788]
शरीर के क्षय होने पर, सभी मनुष्य, चाहे युवा हों या वृद्ध, वृक्ष से फल की तरह गिरते हैं।
हे राजा, यह देखकर ही मैं (भिक्षुत्व में) चला गया हूँ।
धर्म का सुरक्षित, निश्चित जीवन बेहतर है।

[789] उच्च आत्मविश्वास से परिपूर्ण [16] मैंने संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व के लिए)
और विजेता (बुद्ध) के भिक्षु संघ में शामिल हो गया।
मेरा प्रस्थान निष्कलंक रहा है, और
ऋणमुक्त होकर मैं अपने हिस्से पर जीवन यापन करता हूँ। [17]

[790] इंद्रिय-इच्छाओं को प्रज्वलित अग्नि के समान देखना।
सोने और चांदी को एक [हानिकारक] चाकू के समान देखना,
गर्भ में जन्म से ही दुःख के साथ जीवन को देखना,
और नरक के भयानक खतरे को देखना: -

[791] मैं कहता हूँ, हर जगह बड़ी बुराइयाँ देखकर,
मैं बहुत व्यथित हो गया था।
फिर मुझे, घायल और जख्मी हालत में,
चौगुनी विजय प्राप्त हुई: इंद्रिय-इच्छाओं पर विजय,
पुनर्जन्म पर विजय, त्रुटि पर विजय, अज्ञान पर विजय! [18]

[792] भगवान (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है, [19] और बुद्ध की सभी शिक्षाएँ पूरी हो चुकी हैं।
मैंने अपने ऊपर से भारी बोझ उतार दिया है,
मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं है।

[793] वह भलाई जिसके लिए मैंने संसार को अलविदा कहा,
और घर छोड़कर ऐसी जगह रहने चला गया जहाँ घर नहीं था,
वह सर्वोच्च भलाई मैंने पूरी कर ली है,
और हर बंधन और बेड़ी टूट गई है। [20]

तब थेरा ने राजा कोरव्य को धम्म का मार्ग सिखाने के बाद भगवान (बुद्ध) के पास लौट गए। और उसके बाद उन्होंने आर्यों की सभा में रट्ठपाल को विश्वास के माध्यम से संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण करने वालों में) सर्वोत्कृष्ट घोषित किया। [21]

[1] क्योंकि वह एक दिवालिया राज्य को सहारा देने के लिए पर्याप्त धनी था (टीका)। यह कथा मज्झिमा, खंड 2, संख्या 82 में अधिक विस्तार से बताई गई है। यह विनय ग्रंथों और जातक (खंड 1, संख्या 14) में भी पुनः प्रकट होती है। इस पर श्री डब्ल्यू. लप्टन की

चर्चा देखें, जो उन्होंने रट्ठपाल सूत्र के अपने संस्करण और अनुवाद की प्रस्तावना में लिखी है, जे.आर.ए.एस., 1894, पृष्ठ 769 आदि। मैंने श्री लप्टन के श्लोकों के अनुवाद से बहुत लाभ उठाया है। धम्मपाल का संक्षिप्त परिचय पूर्ण रूप से दिया गया है।

[2] तुलना करें श्लोक 1020 एफ.

[3] यहाँ श्री लप्टन ने कुछ हद तक बात को गलत समझा है।

[4] नासदा = न संघत्सेसि (टिप्पणी)।

[5] या, 'हम जाते हैं।'

[6] मज्झिमा निकया में वर्णित पुराने वृत्तांत में थेरा के इस कारनामे का, और न ही पिता के उपायों का उल्लेख है।

[7] आम आदमी का रंग.

[8] श्लोक 789 तक, छंद त्रिष्टुभ (वैदिक) छंद में है, जो 5 + 5 चरणों वाला है।

[9] अर्थात्, उनकी इच्छाओं में (टिप्पणी)।

[10] अहो वात (लंबी मेत्रि कौइसा, 'गाथा- सुखत्तन') अम्हाकं नाति अमारा सियान (! सियुन) ती द्वारा व्याख्या ।

[11] सैटो.

[12] aniṭṭhaphassaŋ pāpunanti द्वारा व्याख्या की गई .

[13] अनाधिगतनिट्ठत्ता (टिप्पणी)।

[14] भावाभावेषु। इस विचित्र शब्द को इस प्रकार व्यक्त किया गया है: महन्ता महन्तेउ भावेउ।

[15] शाब्दिक रूप से: बर्बाद (हञ्ञाती) है, क्योंकि यह बुरी प्रकृति का है।

[16] पाली शब्द सद्धा, 'विश्वास' में यह प्रमुख स्वर है। डॉ. न्यूमैन की ज़ुवेर्सिच्ट देखें , न कि ग्लौबे। श्लोक छंद यहाँ पुनः प्रवेश करता है। मज्झ में कविता (788) के साथ समाप्त होती है।

[17] तुलना करें. बहनें, श्लोक 110.

[18] संपत्तो आसवक्खयांग का विस्तार ।

[19] =श्लोक 604, 605, 687.

[20] = श्लोक 136.

[21] एंग. निक., आई. 24.

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (252): मालुन्क्य का पुत्र

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (252) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.
बीस श्लोक
252. मालुंक्य का पुत्र
इस पूजनीय व्यक्ति की कथा अध्याय छह (14वीं शताब्दी) में दी गई है, जिसमें थेरा, जो अरहंत (ज्ञानोदय) प्राप्त कर चुके थे, ने अपने परिवार को मार्ग की शिक्षा देते हुए एक गाथा (कथन) कही। लेकिन इस गाथा में, थेरा, जो अभी तक अरहंत (ज्ञानोदय) प्राप्त नहीं हुए थे, ने भगवान (बुद्ध) से संक्षेप में सिद्धांत के बारे में पूछा था, और उन्हें यह उत्तर मिला: 'हे मालुंक्य पुत्र, तुम उन चीजों के बारे में क्या सोचते हो जिन्हें तुमने कभी देखा, सुना, सूंघा, चखा, छुआ या अनुभव नहीं किया है, जिनका तुम्हें वर्तमान में कोई आभास नहीं है, और न ही तुम चाहते हो कि तुम्हें उनका आभास या अनुभूति हो: - क्या तुम उनके लिए इच्छा, लालसा या लगाव महसूस करते हो?' 'नहीं, भगवान।'
'तो फिर, हे मालुंक्य पुत्र, जब तुम्हें किसी चीज का कोई आभास या अनुभूति होगी, तो तुम्हें केवल वही आभास या अनुभूति होगी।' और चूंकि ऐसा है, और आपको इससे या इसमें, न तो यहाँ, न कहीं और, न ही भविष्य में, कोई [लालच, दुर्भावना या भ्रम] प्राप्त होगा, यही, यहाँ तक कि यही, पीड़ा का अंत है। [1]

और मालुंक्य के पुत्र ने, यह दर्शाते हुए कि उसने उस संक्षेपित सिद्धांत को कितनी अच्छी तरह से सीखा था, उसे इन छंदों में व्यक्त किया:

[794] रूपाऽ दिस्व सति मुङ्ढा पियाऽ निमित्ताऽ मानसिकारोतो,॥
सरत्तचित्तो वेदेति तं च अज्झोस्सा तिट्ठति॥ ॥

[795] तस्स वन्धन्ति वेदना अनेक रूपसम्भव,॥
अभिज्झा च विहेसा च चित्तमसुपहन्नति,॥
एवामासिनतो दुक्खाँ अरा निब्बानां वुक्कति.। ॥

[796] सददाउ सुत्वा सति मुठहा पियाm̥ निमित्तm̥ मानसिकारोतो,॥
सरत्तचित्तो वेदेति तं च अज्झोस्सा तिट्ठति॥ ॥

[797] तस्स वन्धन्ति वेदना अनेक सदसम्भवा,॥
अभिज्झा च विहेसा च चित्तमसुपहन्नति,॥
एवामासिनतो दुक्खाँ अरा निब्बानां वुक्कति.। ॥

[798] गन्धौ घट्वा सति मुठ पियाm̥ निमित्तौ मनसिकरोतो,॥
सरत्तचित्तो वेदेति तं च अज्झौस्सा2 तिथति ॥ ॥

[799] तस्स वन्धन्ति वेदाना अनेका गंधसम्भव,॥
अभिज्झा च विहेसा च चित्तमसुपहन्नति,॥
एवामासिनतो दुक्खान् अरा निब्बाना3 वुक्काति॥ ॥

[800] रसाऽ भोत्वा सति मुङ्ढा पियाऽ निमित्ताऽ मानसिकारोतो,॥
सरत्तचित्तो वेदेति तं च अज्झोस्सा तिट्ठति॥ ॥

[801] तस्स वन्धन्ति वेदना अनेक रससम्भव,॥
अभिज्झा च विहेसा च चित्तमसुपहन्नति,॥
एवामासिनतो दुक्खाँ अरा निब्बानां वुक्कति.। ॥

[802] फस्साm̥ [78] फुस्सा सती मुङ्ढा पियाm̥ निमित्तm̥ मानसिकारोतो,॥
सरत्तचित्तो वेदेति तं च अज्झोस्सा तिट्ठति॥ ॥

[803] तस्स वन्धन्ति वेदाना अनेका फस्सासम्भव,॥
अभिज्झा च विहेसा च चित्तमसुपहन्नति,॥
एवामासिनतो दुक्खाँ अरा निब्बानां वुक्कति.। ॥

[804] धम्मm̥ नात्वा सति मुङ्ढा पियाm̥ निमित्तm̥ मानसिकारोतो,॥
सरत्तचित्तो वेदेति तं च अज्झोस्सा तिट्ठति॥ ॥

[805] तस्स वन्धन्ति वेदाना अनेका धम्मसम्भव,॥
अभिज्झा च विहेसा च चित्तमसुपहन्नति,॥
एवामासिनतो दुक्खाँ अरा निब्बानां वुक्कति.। ॥

[806] नासो राजजति रूपेसु रूपाm̥ दिस्व पतिसातो,॥
विरत्तचित्तो वेदेति तां च नज्झौस्सा तिथति ॥ ॥

[807] यथास्सा पस्सतो रूपाऽ सेवातो चाऽपि वेदनाऽ,॥
खीयति नोपचयति एवं सो कैरति सातो,॥
एवन अपासिनतो दुक्खाँ संतिके निब्बानाm̥3 वुक्काति॥ ॥

[808] नासो राजजति सद्देसु सद्दां सुत्वा पतिस्सतो,॥
विरत्तचित्तो वेदेति तां च नज्झौस्सा1 तिथति ॥ ॥

[809] यथास्स सुणतो सद्दौ सेवतो चापि वेदनाऽ,॥
खीयति नोपचयति एवं सो कैरति सातो,॥
एवॅ अपासिनतो दुक्खाँ संतिके निब्बानाऽ2 वुक्काति॥ ॥

[810] नासो राजजति गंधेसु गंधाऽ घट्वा पतिस्सतो,॥
विरत्तचित्तो वेदेति तां च नज्झौस्सा1 तिथति ॥ ॥

[811] यथास्सा घायतो गन्धौ सेवतो चपि वेदनाऽ,॥
खीयति नोपचयति एवं सो कैरति सातो,॥
एवॅ अपासिनतो दुक्खाँ संतिके निब्बानाऽ2 वुक्काति॥ ॥

[812] नसो राजजति रसेसु रसाऽ भोत्वा3 पतिस्सतो,॥
विरत्तचित्तो वेदेति तां च नज्झौस्सा तिथति ॥ ॥

[813] यथास्सा सयातो रसाऽ सेवातो चाऽपि वेदनाऽ,॥
खीयति नोपचयति एवं सो कैरति सातो,॥
एवॅ अपासिनतो दुक्खाँ संतिके निब्बाणो वुक्काति॥ ॥

[814] नासो राजजति फस्सेसु फस्साm̥ फुस्सा पतिसातो,॥
विरत्तचित्तो वेदेति तां च नज्झौस्सा तिथति ॥ ॥

[815] यथास्सा फुसतो फस्साअ सेवतो कापि वेदनाऽ,॥
खीयति नोपचयति एवं सो कैरति सति,॥
एवॅ अपासिनतो दुक्खाँ संतिके निब्बाणो वुक्काति॥ ॥

[816] नासो राजजति धम्मेसु धम्मं णत्वा पतिस्सतो,॥
विरत्तचित्तो वेदेति तां च नज्झौस्सा तिथति ॥ ॥

[817] यथास्स विजानतो धम्मौ सेवतो चपि वेदनाऽ,॥
खीयति नोपचयति एवं सो कैरति सातो,॥
एवॅ अपासिनतो दुक्खाँ संतिके निब्बानाऽ2 वुक्काति॥ ॥

[794] सुंदर आकृति का दर्शन स्पष्ट विचार को भ्रमित कर देता है, [2] यदि कोई केवल उस मधुर और प्रिय छवि पर ध्यान दे, तो हृदय भावनाओं से भर उठता है,

[795] और आसक्ति बनी रहती है। इस प्रकार उसमें
दृष्टि से उत्पन्न अनेक भावनाएँ पनपती हैं,
लोभ और घृणा, [3] और उसका हृदय
अत्यंत पीड़ा से ग्रस्त होता है। उसके विषय में हम कहते हैं,
इस प्रकार पीड़ा और कष्टों का भंडार जमा करने वाला:
निर्वाण से दूर!

[796] ध्वनि, [4] विस्मयकारी स्पष्ट विचार,
यदि कोई केवल मधुर और प्रिय छवि पर ध्यान दे, तो
हृदय भावना से प्रज्वलित होकर बह उठता है,

[797] और आसक्ति बनी रहती है। इस प्रकार उसमें
दृष्टि से उत्पन्न अनेक भावनाएँ पनपती हैं,
लोभ और घृणा, और उसका हृदय
अत्यंत पीड़ा से ग्रस्त होता है। उसके विषय में हम कहते हैं,
इस प्रकार पीड़ा और कष्टों का भंडार जमा करने वाला:
निर्वाण से दूर!

[798] विस्मयकारी स्पष्ट विचार की गंध,
यदि कोई केवल मधुर और प्रिय छवि पर ध्यान दे, तो
हृदय भावनाओं से भर उठता है,

[799] और आसक्ति बनी रहती है। इस प्रकार उसमें
दृष्टि से उत्पन्न अनेक भावनाएँ पनपती हैं,
लोभ और घृणा, और उसका हृदय
अत्यंत पीड़ा से ग्रस्त होता है। उसके विषय में हम कहते हैं,
इस प्रकार पीड़ा और कष्टों का भंडार जमा करने वाला:
निर्वाण से दूर!

[800] स्वाद विस्मयकारी स्पष्ट विचार है,
यदि कोई केवल मधुर और प्रिय छवि पर ध्यान दे, तो
हृदय भावनाओं से भर उठता है,

[801] और आसक्ति बनी रहती है। इस प्रकार उसमें
दृष्टि से उत्पन्न अनेक भावनाएँ पनपती हैं,
लोभ और घृणा, और उसका हृदय
अत्यंत पीड़ा से ग्रस्त होता है। उसके विषय में हम कहते हैं,
इस प्रकार पीड़ा और कष्टों का भंडार जमा करने वाला:
निर्वाण से दूर!

[802] स्पर्श, विस्मयकारी स्पष्ट विचार,
यदि कोई केवल उस मधुर और प्रिय छवि पर ध्यान दे, तो
हृदय भावनाओं से भर उठता है,

[803] और आसक्ति बनी रहती है। इस प्रकार उसमें
दृष्टि से उत्पन्न अनेक भावनाएँ पनपती हैं,
लोभ और घृणा, और उसका हृदय
अत्यंत पीड़ा से ग्रस्त होता है। उसके विषय में हम कहते हैं,
इस प्रकार पीड़ा और कष्टों का भंडार जमा करने वाला:
निर्वाण से दूर!

[804] वस्तु, विचार, [5] विस्मयकारी स्पष्ट विचार,
यदि कोई केवल उस मधुर और प्रिय छवि पर ध्यान दे, तो
हृदय भावनाओं से भर उठता है,
और आसक्ति बनी रहती है। इस प्रकार उसमें वृद्धि होती है।

[805] [309] विचार में निहित अनेक भावनाएँ,
लोभ और घृणा; और उसका हृदय
अत्यंत पीड़ा से ग्रस्त था। उसके विषय में हम कहते हैं, -
इस प्रकार पीड़ा और कष्टों का भंडार जमा करने वाला: -
निर्वाण से दूर!

[806] जो व्यक्ति देखी हुई चीजों के प्रति आसक्ति उत्पन्न नहीं करता,
परन्तु सचेत रहकर, स्पष्ट मन से, वह समझ सकता है,
बिना उत्तेजित हृदय से, न ही आसक्ति से चिपका रहता है;

[807] और जैसा वह देखता है, वैसा ही वह धर्म के अनुसार अनुभव करता है; [6] उसके लिए संचय नहीं, बल्कि कमी करना ही सर्वथा।
इस प्रकार उसने सावधानीपूर्वक अपने मार्ग का अनुसरण किया।
उसके विषय में, जो दुःखों का भंडार नहीं बनाता, हम कहते हैं: -
निर्वाण निकट है!

[808] जो सुनी हुई बातों के लिए कोई जुनून पैदा नहीं करता,
बल्कि सचेत और स्पष्ट मन से समझ सकता है,
बिना उत्तेजित हृदय से, न ही आसक्ति से चिपका रहता है;

[809] और जैसा वह सुनता है, वैसा ही वह धर्म के अनुसार अनुभव करता है;
उसके लिए संचय नहीं, बल्कि कमी करना ही सर्वथा।
इस प्रकार उसने सावधानीपूर्वक अपने मार्ग का अनुसरण किया।
उसके विषय में, जो दुःखों का भंडार नहीं बनाता, हम कहते हैं: -
निर्वाण निकट है!

[810] जो व्यक्ति जिन चीजों की गंध नहीं समझता, उनमें कोई जुनून पैदा नहीं करता,
बल्कि सचेत और स्पष्ट मन से समझ सकता है,
बिना उत्तेजित हृदय से, न ही आसक्ति से चिपका रहता है;

[811] और जैसा वह गंध लेता है, वैसा ही वह धर्ममय अनुभव करता है;
उसके लिए संचय नहीं, बल्कि कमी करना ही सर्वथा।

इस प्रकार उसने सावधानीपूर्वक अपने मार्ग का अनुसरण किया।
उसके विषय में, जो दुःखों का भंडार नहीं बनाता, हम कहते हैं: -
 निर्वाण निकट है!

[812] जो चीजों का स्वाद नहीं लेता, वह कोई जुनून पैदा नहीं करता,
बल्कि सचेत और स्पष्ट दिमाग से समझ सकता है,
बिना उत्तेजित हृदय से, न ही आसक्ति से चिपका रहता है;

[813] और जैसे-जैसे वह स्वाद लेता है, वैसे-वैसे वह धर्म का अनुभव करता है;
उसके लिए संचय नहीं, बल्कि कमी करना ही सर्वथा।
इस प्रकार उसने सावधानीपूर्वक अपने मार्ग का अनुसरण किया।
उसके विषय में, जो दुःखों का भंडार नहीं बनाता, हम कहते हैं: -
 निर्वाण निकट है!

[814] जो चीजों से प्रभावित होता है, वह कोई जुनून पैदा नहीं करता,
बल्कि सचेत और स्पष्ट दिमाग से समझ सकता है,
बिना उत्तेजित हृदय से, न ही आसक्ति से चिपका रहता है;

[815] और जैसे ही वह प्रभावित होता है, वैसे ही वह धर्म के अनुसार अनुभव करता है;
उसके लिए संचय नहीं, बल्कि कमी करना ही सर्वथा।
इस प्रकार उसने सावधानीपूर्वक अपने मार्ग का अनुसरण किया।
उसके विषय में, जो दुःखों का भंडार नहीं बनाता, हम कहते हैं: -
 निर्वाण निकट है!

[816] जो चीजों के लिए महसूस करता है [ed1] कोई जुनून पैदा नहीं करता,
लेकिन सचेत, स्पष्ट दिमाग से, समझ सकता है,
बिना उत्तेजित हृदय से, न ही आसक्ति से चिपका रहता है;

[817] और जैसा उसने देखा, वैसा ही उसने धर्म के अनुसार अनुभव किया;
उसके लिए संचय नहीं, बल्कि कमी करना ही सर्वथा।
इस प्रकार उसने सावधानीपूर्वक अपने मार्ग का अनुसरण किया।
उसके विषय में, जिसने दुःखों का भंडार नहीं बनाया, हम कहते हैं: -
 निर्वाण निकट है! [7]

तब थेरा उठे, भगवान (बुद्ध) को प्रणाम किया और चले गए, कुछ ही समय बाद उन्हें यह अंतर्दृष्टि प्राप्त हुई कि उन्होंने अरहंत पद (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया है।

[1] अर्थात्, आप उत्तेजित होने की लालसा के बिना इंद्रियों और बुद्धि का उपयोग कर सकते हैं। मैंने इस अंश पर बुद्धघोष की सारत्थपकासिनी में दी गई टीका से कोष्ठक में दिए गए शब्दों को शामिल किया है। थेरा द्वारा अपने पूर्ववर्ती काव्य में तन्हा पर दिए गए ज़ोर की तुलना करें। टीका लगभग शब्दशः सषयतना-संयुत्त (संयु. निक., iv. 72) में सुत्त संगायह का अनुसरण करती है , जहाँ यह काव्य भी मिलता है।

[2] श्लोक 98 और n देखें। 'स्पष्ट विचार' सती के लिए 'आत्म-संयम' से बेहतर है, जिसके लिए सती सहायक है।

[3] टीका के अनुसार, विहेसा तब उत्पन्न होती है जब वस्तु सुखद के विपरीत होती है। संभवतः यह लोभ से उत्पन्न शत्रुता है। देखें संवाद, ii. 55.

[4] प्रत्येक अर्थ को एक अलग श्लोक दिया गया है। [संपादक का नाम यहाँ शामिल है]

[5] धम्मं ञत्वा - अर्थात्, संज्ञान का वह पहलू जो मन की क्रिया के रूप में, इंद्रिय-धारणाओं का पूरक है, या, यह हो सकता है, उनसे स्वतंत्र है।

[6] चेतना का शेष भाग अपने गोचरा, या पथ (धम्म) प्रक्रिया (टिप्पणी) का अनुसरण करता है।

[7] पहले की तरह, प्रत्येक अर्थ को एक पूर्ण श्लोक सौंपा गया है। [संपादक: यहाँ पूर्ण] संयुत्त निकया के अनुसार, बुद्ध ने मालुंक्या के पुत्र के अनुवाद की हार्दिक प्रशंसा की।

[ed1] जाहिर तौर पर श्रीमती राइस डेविड्स का इरादा यही है कि यह मन-इंद्रिय का विषय हो।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(253):सेला

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (253) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.
बीस श्लोक
253. सेला [1]
बुद्ध युग में, अंगुत्तरापा [2] में , ब्राह्मण परिवार में, आपना नामक ब्राह्मण गाँव में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम सेला रखा गया। वयस्क होने पर वे वहाँ तीनों वेदों और ब्राह्मण विद्याओं में निपुण होकर 300 ब्राह्मण युवकों को मंत्रों का शिक्षण देते रहे। उस समय भगवान (बुद्ध) सावत्थी छोड़कर 1250 भिक्षुओं के साथ अंगुत्तरापा की यात्रा पर निकले। सेला और उनके शिष्यों की अंतर्दृष्टि की परिपक्वता को देखकर वे एक वन में ठहरे। तब तपस्वी केनिया ने भगवान (बुद्ध) और उनके दल को अगले दिन के लिए आमंत्रित किया और बहुत भोजन की व्यवस्था की। सेला अपने 300 शिष्यों के साथ आश्रम में गए और पूछा, 'अब क्या, केनिया, राजा के मंत्री से क्या अपेक्षा की जा रही है?' इत्यादि। केनिया ने उत्तर दिया: 'मैंने कल के लिए परम पूज्य बुद्ध को आमंत्रित किया है।' अब सेला, 'बुद्ध' शब्द सुनकर आनंदित होकर, अपने युवकों के साथ तुरंत भगवान (बुद्ध) के पास गया और शिष्टाचार का आदान-प्रदान करने के बाद एक तरफ बैठ गया। परम पूज्य का ध्यान करते हुए उसने सोचा: 'उनमें वे सभी लक्षण हैं जो या तो विश्व-सम्राट के हैं, या संसार के पर्दे को हटाने वाले बुद्ध के; फिर भी मुझे नहीं पता कि यह धार्मिक तपस्वी बुद्ध हैं या नहीं। लेकिन मैंने सुना है कि जो परम पूज्य, अरहंत (प्रबुद्ध), सर्वोच्च बुद्ध हैं, वे अपनी प्रशंसा किए जाने पर स्वयं को प्रकट करते हैं; क्योंकि जो ऐसा बुद्ध नहीं है, जब कोई उसके सामने किसी बुद्ध के गुणों की प्रशंसा करता है, तो वह चिढ़ जाता है और असंतुष्ट हो जाता है, क्योंकि उसने बुद्धों का शांत विश्वास प्राप्त नहीं किया है, [3] और वह इन उल्लेखों को सहन नहीं कर सकता। [4] यदि मैं अब समना गौतम (बुद्ध) की उनके सामने उपयुक्त श्लोकों से प्रशंसा करूँ तो क्या होगा? इस प्रकार उन्होंने आरंभ किया:

[818] परिपुणकायो सुरुचि सुजातो चारुदस्सानो,॥
सुवाणावणोसि भगव सुसुक्कदथो वीर्यवा॥॥

[819] नरस हि सुजातस्ये भवन्ति वियञ्जना,॥
सब्बे ते तव कायास्मिं महापुरिसलक्खणा॥॥

[820] पसन्ननेट्टो सुमुखो ब्रह्मा उजु पतपावा,॥
मज्जे समनसांघास्सा आदिकोवा विरोकासी॥॥

[821] कल्याणदास्सणो भिक्खु कंकनासन्निभट्टको,॥
किओ ते समनाभावेन एवं उत्तमवनिनो॥॥

[822] राजा अरहसि भवितुं चक्कवत्ती रथेसभो,॥
चतुरंतो विजितवी जंबुसंदस्सा इस्सरो॥॥

[823] खटिया भोगा राजनो अनुयंता भवन्ति ते,॥
राजाधिराज4 मनुजिंदो रज्जन करेहि गोतम॥ ॥

[818] हे परिपूर्ण रूप और दुर्लभ सौंदर्य वाले,
सबसे सुंदर (शारीरिक) अंगों वाले [5] और देखने में मनमोहक,
हे पूज्य (बुद्ध)! आपका रंग शुद्ध सोने के समान है,
हे वीर आत्मा, चमकते दांतों वाले,

[819] जिसका शरीर उन विशेषताओं को दर्शाता है जो
पूर्णतः समायोजित (शारीरिक) अंगों वाले व्यक्ति को प्रकट करती हैं,
हाँ, वे सभी लक्षण जो सुपर-मैन की पहचान हैं;

[820] तुम इतनी स्पष्ट आँखों के साथ, तुम्हारा शांत स्वभाव
इतना सुंदर, विस्तृत, [6] सीधा, राजसी, तुम चमकते हो
जैसे सूर्य, तुम सभी का केंद्र हो,
भिक्षुओं का चुना हुआ समूह तुम्हारे चारों ओर इकट्ठा हुआ।

[821] हे भिक्षु (भिक्षु), हे सुंदर रूप वाले, जिनकी त्वचा
स्वर्णमय है, कहिए,
आपके लिए, इतनी सुंदर उपस्थिति के साथ, संन्यासी का जीवन क्या है?

[822]
तुम वाकई राजकुमार बनने के योग्य हो, विश्व साम्राज्य के रथ को खींचने वाला बैल ;
पृथ्वी के छोर से छोर तक चौकोर स्वामी,
जंबूद्वीप (भारतीय उपमहाद्वीप) के विजेता।

[823] हे कुलीन और धनी सामंतों,
हे प्रभुओं के सामंत, हे मनुष्यों के राजा,
हे गौतम (बुद्ध), अपनी शक्ति ग्रहण करो और शासन करो!

तब परम पूज्य बुद्ध ने सेला की इच्छा पूरी करते हुए उत्तर दिया:

[824] राजहामासुहि सेला (सेलति भगव) धम्मराज अनुत्तरो,॥
धम्मेना वक्कण्ण वत्तेमु चक्कण्ण अप्पतिवत्तियण्ण॥ ॥

[824] 'हे सेला, मैं निश्चय ही राजा हूँ;
धम्म का राजा, मुझसे ऊपर कोई नहीं है। [312] और मैं अपने सिद्धांत [7] से संप्रभुता का पहिया घुमाता हूँ
, वह पहिया जो अपरिवर्तनीय है।'

फिर सेला ने पुष्टि जीतने के लिए फिर से बात की: [8]

[825] सम्बुद्धो पतिजानासि (इति सेलो ब्राह्मणो) धम्मराज सनुत्तरो,॥
धम्मेन चक्कं वत्तेमि इति भासि गोतम ॥ ॥

[826] को नु सेनापति भोतो सावको सत्थु अन्वयो,॥
को ते माण्ण अनुवत्तेति धम्मचक्काण्ण पवत्तिताण्ण॥ ॥

[825] पूर्णतः प्रबुद्ध आप स्वयं को यह कहते हैं:
'धर्म के राजा, मुझसे ऊपर कोई नहीं है
और मैं अपने सिद्धांत से ही संप्रभुता का पहिया घुमाता हूँ
' - ऐसा आप कहते हैं, गौतम।

[826] मेरे स्वामी राजा का सेनापति कौन है,
जो भगवान (बुद्ध) के पदचिन्हों पर चलने वाला शिष्य है?
कौन उसके उदाहरण का अनुसरण करते हुए पहिया घुमाता है?

अब पूज्य सारिपुत्त भगवान बुद्ध के दाहिनी ओर विराजमान थे, उनका सिर सोने के ढेर की तरह चमक रहा था। और उन्हें दिखाते हुए भगवान ने कहा:

[827] माया पवत्तिताṃ चक्कṃ (सेलति भगव) धम्मचक्कṃ अनुत्तराṃ,॥
सारिपुत्तो अनुवत्तेति अनुजातो तथागत:॥ ॥

[828] अभिनन्याय अभिनतन भवेतबब च भविता,॥
पहतब्बं पहिनां मे तस्मा बुद्धोस्मि ब्राह्मण॥ ॥

[829] विनयसु मयि कांखां अधिमुक्कसु ब्राह्मण,॥
दुल्लाभाऽ दस्सानाऽ होति सम्बुद्धनाऽ अभिन्हासो॥ ॥

[830] यसं वे दुलाभो लोके पतुभावो अभिनहसो,॥
सोऽहं ब्राह्मण सम्बुद्धो सल्लकत्तो अनुत्तरो॥ ॥

[831] ब्रह्मभूतो अतितुलो मरसेनप्पमद्दनो,॥
सब्बामित्ते वसे कत्वा मोदामि अकुतोभ्यो॥ ॥

[827] 'मैंने जिस धम्म पथ का चक्र चलाया,
जिसके ऊपर, सेला, कोई नहीं है, उस चक्र
को सारिपुत्त ने मेरे उदाहरण के बाद घुमाया, जो तथागत (बुद्ध) के समान हो गया है ।

[828] जो कुछ जानना चाहिए वह सब मुझे ज्ञात है,
मैंने मन की सारी संस्कृति का अभ्यास किया है,
जो कुछ त्यागना चाहिए था वह मैंने त्याग दिया है,
अतः, हे ब्राह्मण! मैं बुद्ध हूँ - सत्य में जागृत व्यक्ति।

[829] [313] मेरे बारे में अपने संदेह दूर करो, ब्राह्मण!
मुझ पर विश्वास रखो। जीतना बहुत कठिन है,
बार-बार दर्शन करना - [जैसा कि तुम अब देख सकते हो] -
जो पृथ्वी पर सर्वोच्च बुद्धों का उदय करते हैं।

[830]
और मैं वास्तव में उन्हीं में से एक हूँ जिनका संसार में आगमन कठिन और दुर्लभ है
, हे ब्राह्मण! हाँ, मैं बुद्ध हूँ,
चिकित्सक और उपचारक, [10] जिस पर कोई नहीं है।

[831] मेरा स्थान सर्वोच्च है और मेरा कार्य अतुलनीय है, मैं
मारा (मृत्यु के देवता/राक्षस) की सेनाओं के आक्रमणों को कुचल देता हूँ। जो कुछ भी शत्रुतापूर्ण है, वह मेरे वश में है,

और मैं प्रसन्न हूँ क्योंकि भय कहीं से नहीं आता।'

तब सेला ब्राह्मण (पुजारी), जो भगवान (बुद्ध) से इतना प्रभावित हुआ कि उसने भिक्षु बनने की इच्छा व्यक्त की, ने कहा:

[832] इदां भोंतो निसामेथा यथा भासति चक्खुमा,॥
सल्लकत्तो1 महावीरो निहोऽव नदति वने ॥॥ ॥

[833] ब्रह्मभूतmֽ अतितुला मरसेनप्पमद्दनmֽ,॥
को दिस्व नप्पसीदेय अपि कान्हाभिजातिको॥ ॥

[834] यो माmֽ इच्छाति अन्वेतु यो वा निच्चति गच्चतु,॥
इधाहं पब्बजिस्सामि वरपन्नस्सा संतिके॥ ॥

[832] 'अब ध्यान से सुनो, सज्जनों, उन शब्दों पर जो वह
देखता है, चंगा करने वाला और महान, हमसे कहता है,
जंगल के शेर की दहाड़ की तरह प्रभावशाली।

[833] स्थान में सर्वोच्च और कर्म में अतुलनीय,
जो मारा (मृत्यु के देवता/राक्षस) की सेनाओं के आक्रमणों को कुचल देता है: -

[834] जिसने भी उसे देखा होगा, वह आश्वस्त क्यों नहीं होगा,
चाहे उसका जन्म कितना भी गुमनाम क्यों न हो? [11] जो मुझसे प्रसन्न है, वह मेरा अनुसरण कर सकता है;
और जो प्रसन्न नहीं है, वह अपने मार्ग पर जा सकता है;
परन्तु मैं इस नियम में संसार का त्याग करूँगा,
उस महान और बुद्धिमान के अधीन।

तब ब्राह्मण (पुजारी) युवकों ने भी, क्योंकि वे अपेक्षित अवस्थाओं को प्राप्त कर चुके थे, उत्तर दिया:

[835] एताmֽ सी रुकाति भोतो सम्मासंबुद्धसासनं,॥
मयामपि पब्बाजीस्सामा वरपन्नस्सा संतिके॥ ॥

[835]
'यदि आपके निर्णय के अनुसार, महोदय, परम बुद्ध का यह नियम हमें पसंद आया,
तो हम भी उस नियम का पालन करते हुए संसार का त्याग करेंगे,
उस महान और बुद्धिमान व्यक्ति के अधीन।'

तब सेला उन युवकों के अपने संकल्प में भागीदार होने से प्रसन्न होकर उन्हें भगवान (बुद्ध) के पास ले गया और भिक्षु दीक्षा देने का अनुरोध किया।

[836] ब्राह्मण तिसाता इमे याकन्ति पंजलिकता,॥
ब्रह्मचर्यं करिश्मा भगव तव संतिके॥ ॥

[836] ये तिस सौ ब्राह्मण (पुजारी) हाथ जोड़कर
आपसे विनती करते हैं, हे पूज्य (बुद्ध), कि हम
आपकी दृष्टि में पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य/ऋषि का जीवन) व्यतीत करें।

तब परम पूज्य परमेश्वर ने, यद्यपि बीते युगों में सेला ने, उन्हीं 300 शिष्यों के गुरु के रूप में, पुण्य का बीज बोया था, और अब अंतिम जन्म में उन्होंने स्वयं अपनी अंतर्दृष्टि और उनकी परिपक्वता दोनों को उत्पन्न किया था, यह जान लिया कि वे भिक्षु दीक्षा के लिए तैयार हैं और कहा:

[837] सवक्खाताऽ ब्रह्मकारियाऽ (सेलति भगवा) सन्दिथिकमकालिकाऽ,॥
यत्था अमोघा पब्बज्जा अप्पमत्तस्सा सिक्खतो॥ ॥

[837] 'अच्छा, सेला, पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य/ऋषि का जीवन)
स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है, जिसे देखा और सुना जा सकता है; फल शीघ्र ही मिलता है, [12] जिसमें उस व्यक्ति का आना व्यर्थ नहीं है
जिसने स्वयं को गंभीरता से प्रशिक्षित किया।'

इस पर भगवान ने कहा: 'आओ, भिक्षुओं!' और उन्होंने, उनकी रहस्यमयी शक्ति से, जिन्हें उन्होंने लंबे समय से भिक्षुओं के वस्त्र और कुंड प्रदान किए थे, [13] प्रणाम किया और अंतर्दृष्टि के लिए अध्ययन शुरू किया, और सातवें दिन अरहंतत्व (ज्ञान) प्राप्त किया। इसी कारण वे भगवान (बुद्ध) के पास आए और इस प्रकार ज्ञान (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा की , सेला ने कहा:

[839] तुवं बुद्धो तुवं सत्था तुवं मराभिभू मुनि,॥
तुवं अनुसये चेत्वा तिणो तारेसिमं पजां॥ ॥

[840] उपधि ते समतिक्कंता आसव ते पदलिता,॥
सिहोऽव अनुपादनो पहिनाभयभेरवो॥ ॥

[841] भिक्खवो तिसाता इमे तिथंथन्ति पंजलिकता,॥
पदे वीर पसारेहि नागा वंदन्तु सत्थुनो ति.॥ ॥

[838] हे सर्वज्ञानी! हमें आए और शरण पाए आठ दिन हो गए हैं । हे परम पूज्य (बुद्ध)!
मात्र एक रात में ही हम आपके नियम में प्रशिक्षित हो गए हैं।

[839] आप बुद्ध हैं! हे हमारे प्रभु (बुद्ध) आप! और आप ही
वह महान द्रष्टा हैं जिन्होंने मारा (मृत्यु के देवता/राक्षस) का वध किया। आप ही हैं जिन्होंने सभी बुरी प्रवृत्तियों को शुद्ध किया
और [जीवन के शाश्वत सागर की बाढ़] को पार किया,
आप ही हैं जो मनुष्यों के पुत्रों को पार करने में सहायता करते हैं।

[840] आपने जन्म के हर कारण को पार कर लिया है,
और भीतर के हर विषैलेपन को चकनाचूर कर दिया है,
आप सिंह के समान, कुछ भी न पकड़ते हुए,
भय और दहशत के हर स्रोत को दूर कर चुके हैं।

[841] हे भगवान! आपके सामने तीन सौ भिक्षु खड़े हैं,
हाथ जोड़कर आपका सम्मान करते हुए,
अपने चरण फैलाएँ, हे भगवान! उन्हें अनुमति दें।

अरहंत (प्रबुद्ध लोग), [14] आपको प्रणाम करते हैं..

[1] कहानी और कविता दोनों ही सुत्त-निपात और मज्झिमा निकाय (ii. 146) में 'सेला-सुत्त' का बड़ा हिस्सा हैं । धम्मपाला इन पुराने संस्करणों पर आश्चर्यजनक रूप से मौन हैं। उनका अपना संस्करण संक्षिप्त है और नीचे उल्लिखित अधिक विकसित मिथक (पृष्ठ 314, नोट 2) को छोड़कर, अधिक सरल है। हालाँकि, उनके द्वारा 'आदि', 'और इसी प्रकार' का प्रयोग , उनके द्वारा ज्ञात अधिक मानक विवरण की ओर संकेत करता प्रतीत होता है।

[2] सुत्त-निपात टीका में यह गंगा के उत्तर में माही नदी के आसपास का क्षेत्र है। आपण का अर्थ है 'बाजार', 'बाजार।'

[3] यह इस विश्वास पर आधारित है कि उनमें बुद्ध के लिए आवश्यक वास्तविक बौद्धिक और नैतिक गुण हैं, और वे जो सिखाते हैं वह सत्य है और इसके परिणाम निश्चित हैं (अंग. निक., ii 8)।

[4] ये नकारात्मक खंड सुत्त-निपाता कथा में नहीं हैं ।

[5] टीका में सुजातो का अर्थ है 'उपस्थिति में पूर्ण', ऊंचाई और चौड़ाई के संदर्भ में। इन अनुपातों पर, संवाद, ii. 14-16 देखें।

[6] ब्रह्म; टीका में ब्रह्मा लिखा है, उत्कृष्ट - अर्थात्, अनुपात में।

[7] पारियाति-धम्मो, पथ (धम्म) अपने साहित्यिक रूप में, या तैयार किए गए सिद्धांत (टिप्पणी)।

[8] मैं पाठ से 'इस प्रकार सेला ने कहा,' आदि की व्याख्याओं को हटा देता हूँ, जो पाली मीटर में बाधा डालती हैं।

[9] अंग. निक. , i. 28. अनु, अनुवत्तेति, अनुजातो में , अनुरूपता, समानता को व्यक्त करने के लिए अभिप्रेत है, न कि समय में अनुक्रम को। इति-वुत्तक (अनुवाद: बुद्ध के वचन), Ī 74 में इस शब्द की तुलना करें , जहाँ इसका प्रयोग उन बच्चों के लिए किया गया है जिनका जीवन उनके माता-पिता के जीवन से मिलता-जुलता है। टीका कहती है कि आर्य बनने पर, सारिपुत्त तथागत के समान जन्म या जाति (जाति) के हो गए । सारिपुत्त भगवान (बुद्ध) के उत्तराधिकारी के रूप में जीवित नहीं रहे।

[10] अर्थात्, लोभ, घृणा और भ्रम (टीकाकरण) .

[11] शाब्दिक रूप से, 'अंधेरे वंश का', nīcajāto के रूप में व्याख्या की गई।

[12] पच्चक्खो, संदित्तिको का भावार्थ है ; अकालिको - शाब्दिक अर्थ, 'समयहीन' - को उस स्थिति के रूप में समझाया गया है जहाँ प्रत्येक मार्ग के तुरंत बाद, समय के अंतराल के बिना, फल प्राप्त किया जाना है। सुत्त-निपाता टीका व्यावहारिक रूप से समान शब्दों में इसकी व्याख्या करती है।

[13] यह पौराणिक विशेषता सुइता-निपाता कहानी में नहीं है।

[14] नाग। इस शब्द पर उदावी का कथन (गाथा) (सीसीXLVII) देखें।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (254): भद्दिया, गोधाओं के काली का पुत्र

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (254) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.
बीस श्लोक
254. गोध वंश के काली के पुत्र भद्दिया।
बुद्ध युग में कपिलवस्तु में शाक्य राजाओं के कुल में पुनर्जन्म लेकर, [1] उनका नाम भद्दिया रखा गया। वयस्क होने पर, उन्होंने अनुरुद्ध और अन्य चार कुलीनों के साथ संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण किया), जबकि भगवान (बुद्ध) अनुपिया के आम के बाग में ठहरे हुए थे। भिक्षु संघ में प्रवेश करके, उन्होंने अर्हतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। उन्हें (एक आदि व्रत और उनके प्रयासों के फलस्वरूप), भगवान (बुद्ध) ने जेतवन में आयोजित सभा में, कुलीन कुल के भिक्षुओं में सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया। [2] और वे, निर्वाण के आनंद में, फल प्राप्ति के आनंद में रहते हुए, वन में, किसी वृक्ष के नीचे, किसी एकांत स्थान पर, हमेशा यह उद्घोष करते रहते थे: 'आह, क्या आनंद है! आह,

क्या आनंद है!' अब भिक्षुओं ने उन्हें सुनकर भगवान (बुद्ध) से कहा; जब भद्दिया को बुलाया गया, तो उसने अपनी इस आदत को स्वीकार करते हुए कहा: 'हे प्रभु, [316] पहले जब मैं अपने राज्य पर शासन कर रहा था, तब मुझे पर्याप्त सुरक्षा प्राप्त थी, फिर भी मैं हमेशा भयभीत, घबराया हुआ और अविश्वासी रहता था। लेकिन अब जब मैंने सब कुछ त्याग दिया है, तो मैं उस अवस्था में नहीं हूँ।' और भगवान (बुद्ध) के समक्ष उसने अपनी 'सिंह गर्जना' इस प्रकार की:

[842] यतौ मे हत्थिगिवय सुखुमा वत्थ पधारिता,॥
सालिनां ओदानो भुट्टो सुसीमासुपासेकानो॥ ॥

[843] सोऽज्जा भद्दो सात्तिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[844] पांसुकुलि साततिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[845] पिण्डपति सततिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[846] तेसिवरि सातटिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[847] सपादनचारि साततिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[848] एकासनि सततिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[849] पट्टापिंडी सततिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[850] खलूपच्चभट्टी सातटिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[851] अरन्निको साततिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[852] रुक्खामूलिको सातटिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[853] अब्भोकसी सातटिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[854] सोसानिको सातटिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[855] यथासंथतिको सततिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[856] नेसज्जिको सातटिको उंचापत्तगते1 रतो,॥

झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[857] अप्पिचो सातटिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[858] संतुथहो सातटिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[859] पविवित्टो सातटिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[860] असंसाथो साततिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[861] अरद्धवीरियो सततिको उंचापत्तगते1 रतो,॥
झायति अनुपादनो पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[862] हित्वा सतापाला काअसाṃ सोवनाअ सताराजिकाṃ,॥
अग्गहिं मत्तिकापट्टं इदं दुतियाभिसेकनां.॥ ॥

[863] उच्चे मांडलिपाकरे दहामातालाकोथके,॥
रक्खितो खग्गहत्थेहि उत्तासंं विहारिं शुद्ध॥ ॥

[864] सोऽज्जा भद्दो अनुत्रासि पहिनाभयभेरवो,॥
झायति वनमोगयः पुत्तो गोधाय भाद्दियो॥ ॥

[865] शिलाखंडे पतिथया सतिṃ पण्णौ च भवायौ,॥
पापुणिं अनुपुब्बेना सब्बासंयोजनकखायं' ति.॥ ॥

[842]
मेरे हाथियों पर सवार होते समय मुझे कितना नाजुक वस्त्र पहनना पड़ता था,
मेरे भोजन में कितना शानदार व्यंजन मिलता था,
जो चावल और मांस से तैयार किया जाता था! [3]

[843] आज एक सुखी विजेता, [4]
अपने कटोरे में जो कुछ बचा है उससे प्रसन्न होकर ,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[844] फटे-पुराने वस्त्र पहने, और
अपने कटोरे में भरे टुकड़ों से संतुष्ट होकर,
ध्यान में लीन, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[845] प्रतिदिन भिक्षा मांगते हुए और
अपने कटोरे में जो कुछ भी भरा होता है, उससे संतुष्ट रहते हुए,
ध्यान में लीन, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है। [5]

[846] तीन वस्त्रों में, और कुछ नहीं, और
अपने कटोरे में भरे हुए टुकड़ों से संतुष्ट होकर,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[847] बारी-बारी से प्रत्येक घर में जाकर, और
अपने कटोरे में जो कुछ भी बचा है उससे संतुष्ट होकर,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[848] दिन में एक अच्छा भोजन करके, [6] और
अपने कटोरे में बचे-खुचे टुकड़ों से संतुष्ट रहकर,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[849] केवल कटोरे से खाते हुए और
अपने कटोरे में बचे हुए टुकड़ों से संतुष्ट रहते हुए,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[850] भोजन के बाद निःसंकोच करते हुए और अपने कटोरे में बचे-खुचे टुकड़ों से संतुष्ट रहते हुए , ध्यान में लीन , कुछ भी न पकड़ते हुए, गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[851] एकांत जंगलों में रहते हुए और
अपने कटोरे में जो कुछ भी भरा है, उससे संतुष्ट रहते हुए,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[317] [852] वृक्ष की छाया में आश्रय लेकर [7] और
अपने कटोरे में जो कुछ भी बचा है उससे संतुष्ट होकर,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[853] खुले आकाश के नीचे, बिना आश्रय के,
अपने कटोरे में जो कुछ भी भरा है, उससे संतुष्ट रहते हुए,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[854] श्मशान घाटों में रहते हुए और
अपने कटोरे में जो कुछ भी भरा होता है, उससे संतुष्ट रहते हुए,
ध्यान में लीन, कुछ भी ग्रहण न करते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[855] चाहे कहीं भी बैठा रहे और बना रहे,
अपने कटोरे में जो भी जूठा भरा हो, उससे संतुष्ट,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,

गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[856] बैठने की मुद्रा में विश्राम करते हुए, [8] शेष,
अपने कटोरे में भरे हुए टुकड़ों से संतुष्ट,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[857] सरल और कम ही उसकी ज़रूरतें हैं और शेष,
जो कुछ उसका कटोरा भरा है उससे संतुष्ट, ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[858] मन से संतुष्ट, शांत और
अपने कटोरे में भरे हुए टुकड़ों से प्रसन्न रहते हुए,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[859] एकांत में, बहुत अकेला और
अपने कटोरे में जो कुछ भी भरा है, उससे संतुष्ट होकर,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[860] विरक्त, मनुष्यों से अलग और
अपने कटोरे में भरे टुकड़ों से संतुष्ट,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[861] उमंग भरी ऊर्जा के साथ [9] और
अपने कटोरे में जो कुछ भी बचा है उससे संतुष्ट रहते हुए,
ध्यान में, कुछ भी न पकड़ते हुए,
गोधा का पुत्र भद्दिया रहता है।

[862]
सोने और लाख से बने महंगे बर्तनों का त्याग करके ,
मैंने इस मिट्टी के कटोरे को पकड़ा, और इस प्रकार दूसरी बार
अभिषेक का अभिषेक प्राप्त किया। [10]

[863] ऊँची-ऊँची दीवारों से घिरे,
और ऊँचे पहरेदार बुर्जों वाले शक्तिशाली द्वारों से घिरे
, और हाथों में तलवार लिए सशस्त्र पुरुषों से घिरे,
मैं डर के मारे जीने का आदी था।

[318] [864] आज एक खुशहाल विजेता, देखो,
आराम से, सभी भय और डर दूर,
वन ध्यान में डूबा हुआ है
गोधा का पुत्र भद्दिया।

[865] नैतिक संहिता पर दृढ़ रूप से स्थापित,
स्पष्टता [11] और अंतर्दृष्टि में प्रशिक्षित,

उचित क्रम में मैंने जीता है [12] हर बंधन के साथ मुक्ति, चला गया!

[1] मुझे कहीं और गोधों के बारे में जानकारी नहीं है, लेकिन काली का उल्लेख संग्य, श्लोक 396 में मिलता है, जहाँ उन्हें कपिलवस्तु में भगवान (बुद्ध) के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ था और प्रथम मार्ग (सोतापत्ति/निर्वाणिक समाधि) में विश्वास रखने वाली के रूप में उनकी आस्था की प्रशंसा की गई है। उन्हें कालीगोध साकीयं के रूप में वर्णित किया गया है और 'गोधे' कहकर संबोधित किया गया है। यह स्पष्ट नहीं है कि राजा भद्दिया और सुद्धोदन के बीच क्या राजनीतिक संबंध थे, जिन्हें दीघ-निकाय में केवल राजा कहा गया है ; महाराज नहीं , जैसा कि इस टीका में एक बार कहा गया है। तुलना करें: राइस डेविड्स बुद्धिस्ट इंडिया, पृष्ठ 19 आदि। भद्दिया की कहानी उदाना, द्वितीय 10 में मिलती है।

[2] अंग. निक., i. 23. ऐसे लोगों को और भी अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। तुलना करें बहनें, आयत 517; मज्झ. निक., iii. 129 f.

[3] निर्दिष्ट चीजें इन सभी मामलों में विलासितापूर्ण जीवन के प्रकार हैं (टिप्पणी)।

[4] यहां भड्डा-भड्डिया पर एक शब्द-नाटक है ।

[5] प्रत्येक गाथा में कोरस की तीन पंक्तियों को समझना चाहिए। [संपादक: यहाँ पूरा किया गया]

[6] एकासनी: दिन में केवल एक 'बैठकर भोजन करना'।

[7] यानी, छत के बजाय।

[8] श्लोक 844-856 तेरह दकुटांगों में से बारह को सूचीबद्ध करते हैं, या भिक्षुओं के लिए वैकल्पिक अतिरिक्त तपस्या। मिलिंद, ii. 268 में सूचीबद्ध। देखें मज्झ. निक., 77वां सूत्र।

[9] श्लोक 857-861 उन प्रथाओं को संदर्भित करते हैं जो सभी भिक्षुओं पर बिना विकल्प के अनिवार्य हैं।

[10] श्लोक 97, एक पूर्व राजकुमार द्वारा भी कहा गया।

[11] सती, जो बुद्धिमान जागरूकता है। देखें श्लोक 794, n.

[12] इस 'उत्तराधिकार' पर, राइस डेविड्स, अमेरिकन लेक्चर्स, पृ. 141-150 देखें।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(255): अंगुलिमाल

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (255) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.
बीस श्लोक
255. अंगुलिमाला
बुद्ध युग में उनका पुनर्जन्म ब्राह्मण (पुजारी) भगव [1] के पुत्र के रूप में हुआ , जो कोसल के राजा के पुजारी थे। उनके जन्म की रात शहर के सभी कवच चमक उठे। [2] राजा का राजकीय कवच भी चमक उठा, जिसे देखकर राजा बिस्तर पर लेटे-लेटे सो नहीं सके, बल्कि घबरा गए और भयभीत हो गए। उस रात पुजारी ने नक्षत्रों का अध्ययन किया और निष्कर्ष निकाला कि उनके पुत्र का जन्म चोरों के नक्षत्रों के संयोग में हुआ है। [3] भोर होते ही वे राजा के पास गए और पूछा कि क्या उनकी नींद अच्छी रही। राजा ने उत्तर दिया, 'हे गुरुजी, मैं कैसे अच्छी नींद सो सकता था? मेरा कवच तो पूरी रात चमकता रहा। अब इससे क्या संकेत मिलता है?' [319] 'महाराज,

भयभीत न हों, मेरे घर में एक बालक का जन्म हुआ है। उनके प्रभाव से पूरे शहर के कवच चमक उठे।' 'तो फिर वह क्या बनेगा, गुरुजी?' 'बालक चोर बनेगा।' 'अकेला चोर, या किसी गिरोह का सरदार?' 'अकेले ही, प्रभु।' 'क्या हमें उसे मार नहीं डालना चाहिए?' 'यदि अकेले ही, तो उसे काबू में रखा जा सकता है।'

क्योंकि वह जन्म से ही राजा के मन को चिढ़ाने वाला था, इसलिए उसका नाम हिंसक (हिंसक) रखा गया। लेकिन बाद में जब जो दिखाई देता था वह दिखना बंद हो गया, तो वह अहिंसक (अहिंसक) के नाम से जाना जाने लगा। [4] अपने पूर्व कर्मों के फलस्वरूप उसमें सात हाथियों के बराबर बल था। और जब वह तकशिला में प्रथम गुरु के अधीन अध्ययन कर रहा था, तो वह आदरपूर्वक गुरु और उनकी पत्नी की सेवा करता था, जिससे वह अक्सर उनके साथ भोजन आदि करता था। लेकिन अन्य ब्राह्मण (पुजारी) युवक उसे सहन नहीं कर सके, [5] और अंततः उन्होंने गुरु को उसके विरुद्ध भड़काकर उसके और ब्राह्मण (पुजारी) गुरु के बीच कलह उत्पन्न कर दी। अपने शिष्य के अत्यधिक बल के कारण, ब्राह्मण (पुजारी) ने उसके विनाश की एक योजना बनाई और कहा: 'अहिंसक, अब तुम्हारा मेरे शिष्य के रूप में अध्ययन समाप्त हो गया है: मुझे मेरा मानदेय दे दो।' 'बहुत अच्छा, गुरुजी, आप इसे कैसे लेंगे?' 'मुझे एक हजार मनुष्य की दाहिनी उंगलियां ला दो।' क्योंकि उसे उम्मीद थी कि अहिंसक शर्म से केवल एक को ही लाएगा, और तब उसे दंडित किया जा सकेगा। इसी कारण अहिंसक का लंबे समय से संचित निर्ममता प्रकट हुई, और कवच पहनकर वह कोसल के जालिनी वन [6] में गया, और मुख्य मार्ग के निकट एक चट्टान से राहगीरों को देखता रहा, और नीचे झपट्टा मारकर उनकी उंगलियां काट कर एक पेड़ पर लटका देता था, जब तक कि गिद्धों और कौवों ने हड्डियों से मांस नोच न लिया। फिर उंगलियों की हड्डियों की माला बनाकर उसने उसे अपने कंधों पर इस प्रकार लटका लिया मानो वह बलिदान के लिए तैयार हो रहा हो। उस समय से उसे उंगलियों की मालाधारी (अंगुलिमाला) कहा जाने लगा। और जब उसके कृत्यों के कारण मार्ग निषिद्ध हो गया, तो वह गांवों में प्रवेश कर गया, और वे गांव वीरान हो गए। तब राजा ने घोषणा की: ' एक मजबूत सेना भेजो ताकि हम डाकू को शीघ्र पकड़ सकें।' और अंगुलिमाला की माता, जो मंतानी ब्राह्मण (पुजारी) थीं, [7] ने अपने पति से कहा: 'हमारा बेटा चोर है और तरह-तरह के अपराध करता है। उसे बुलवाओ, उसे ये सब करने से रोको।' लेकिन उसने उत्तर दिया: 'मुझे ऐसे बेटों से कोई लेना-देना नहीं है; राजा जो चाहे करे।' तब वह प्रेमवश भोजन सामग्री लेकर निकली और बोली: 'मैं अपने बेटे को लाकर उसे रोकूंगी।'

भगवान बुद्ध ने सोचा, 'यदि वह उसके पास आई, तो अंगुलिमाला उसे मारकर अपनी हजार उंगलियां पूरी कर लेगा। यह उसका अंतिम जन्म है। यदि मैं नहीं गया तो बहुत बड़ा नुकसान हो सकता है। मैं उससे बात करूंगा।' अतः भोजन के बाद वे तीस मील की दूरी तय करके ग्वालों और अन्य लोगों को रास्ता दिखाते हुए जालिनी वन की ओर बढ़े। अंगुलिमाला ने अभी-अभी अपनी माता को देखा था और अपनी संख्या पूरी करने के लिए उसकी उंगली के बारे में सोच रहा था, तभी भगवान बुद्ध उनके बीच प्रकट हुए। तब पुत्र ने कहा, 'मैं अपनी माता को एक उंगली के लिए क्यों मारूं? मेरी माता को जीने दो! मैं तो उस भिक्षु की उंगली छीनने ही जा रहा हूं।' और अपनी तलवार निकालकर वह भगवान बुद्ध के पीछे चल पड़ा। तब भगवान ने ऐसी जादुई शक्ति का प्रयोग किया कि अंगुलिमाला अपनी सामान्य गति से चलते हुए भी दौड़कर भी उन्हें पकड़ नहीं सका, बल्कि हांफता हुआ, पसीने से तरबतर, पैर उठाने में असमर्थ, एक खंभे की तरह खड़ा रहा और चिल्लाया: 'रुको, भिक्षु!' भगवान ने कहा: 'यद्यपि मैं चल रहा हूँ, फिर भी मैं रुक गया हूँ, और तुम भी, अंगुलिमाला, रुक जाओ!' तब चोर ने सोचा: 'ये शाकियान साधु सच कहते हैं, फिर भी वह कहता है कि वह रुक गया है, जबकि मैं रुका हूँ। उसका क्या मतलब है?' इसलिए उसने पूछा

[866] गच्चाṃ वदेसी समाना ṭहितोऽम्हि॥
मामौ च ब्रूसि हितितं अथितो' ति,॥ [81] पुच्छमि तं समं एतम् अत्थौ॥
कस्मा अट्ठितोऽमहि.॥ ॥

[866.] हे साधु, तुम जो चल रहे हो, कहो:
'देखो! मैं रुक गया हूँ!'
और मुझसे कहते हो, कौन रुका है,
मैं तो नहीं रुका!
हे साधु, मैं तुमसे पूछता हूँ, तुम्हारे शब्दों का क्या अर्थ है?
तुम कैसे कहते हो कि तुम रुक गए हो, पर मैं नहीं रुका?

[321] तब परम पूज्य (बुद्ध) ने उत्तर दिया:

[867] हितो अहं अंगुलिमाला सब्बादा॥
सब्बेसु भूतेसु निधाय दण्डौ,॥

तुवं च पनेसु आसननतोऽसि,॥
तस्मा ठीतोऽहाऽ तुवं अथितोऽसि.॥ ॥

[867.] हाँ, मैंने रुक गया हूँ, अंगुलिमाला, हमेशा के लिए,
सभी जीवित प्राणियों के प्रति हिंसा का त्याग करते हुए;
तुम अपने साथी मनुष्यों के विरुद्ध हाथ नहीं उठाते,
इसलिए मैं रुक गया हूँ, परन्तु तुम अभी भी आगे बढ़ते हो।

इसी कारण अंगुलिमाला ने, जब भगवान बुद्ध वहाँ खड़े होकर अपने सच्चे गुणों को प्रकट कर रहे थे, अपने बारे में सुनी हुई अफवाहों को याद किया और उनकी अंतर्दृष्टि परिपक्व हो गई, जिससे उनके भीतर परमानंद छा गया, मानो जल की चादर पूरी पृथ्वी पर फैल गई हो। और मन ही मन सोचते हुए, 'इस सिंह की दहाड़ कितनी महान है। मुझे लगता है कि यह समना गौतम (बुद्ध) के अलावा और कोई नहीं हो सकता; भगवान बुद्ध मेरी सहायता के लिए यहाँ आए हैं!' उन्होंने कहा: -

[868] सिरास्सो वात मे महितो महेसि॥
महावनाऽ समणो पच्चुपदि,॥
सोऽहाऽ चजिस्सामि सहससापाऽ॥
सुत्वान गाथां तव धम्मयुत्तं॥ ॥

[869] इति एव कोरो असीम अवुधं च॥
सोब्बे पापते नरके अनवकासी,॥
अवंदी कोरो सुगतस्सा पदे,।
तत्थेव पब्बज्जं अयाचि बुद्धौ.॥ ॥

[870] बुद्धो च खो करुणिको महेसि॥
यो सत्था लोकास्सा सदेवकस्सा,॥
तम् 'एहि भिक्खु' ति तदा अवोका;।
एसेवा तस्स अहु भिक्खुभावो॥ ॥

[871] यो पुब्बे पमज्जित्वाना पच्चा सो न पपमज्जति,॥
सोऽमं लोकं पभासेति अब्भा मुत्तो वा कैंडिमा॥ ॥

[872] यस्सा पापां कटैं कम्मं कुसलेना पिथियाति,॥
सोऽमं लोकं पभासेति अब्भा मुत्तो वा कैंडिमा॥ ॥

[873] यो हवे दाहरो भिक्खु युञ्जति बुद्धसासने,॥
सोऽमं लोकं पभसेति अब्भा मुत्तो वा कैंडिमा॥ ॥

[868.] हे महान ऋषि, बहुत समय हो गया है जब से मैंने उनका आदर किया है,
एक साधु, इस महान वन में अपना मार्ग पा गया है! देखो! मैं तुम्हारे इस श्लोक में निहित धार्मिक उपदेश को सुनकर
हज़ार अपराध सहर्ष छोड़ दूँगा ।

[869.] और इसलिए [8] डाकू ने [9] अपना कवच और अपनी तलवार उतार दी
और उन्हें एक चट्टान से नीचे, एक गड्ढे में, एक खाई में फेंक दिया।
स्वागत करने वाले के सामने, विनम्र पूजा करते हुए, चोर ने
तुरंत बुद्ध से (भिक्षु संघ में) भर्ती होने का अनुरोध किया।

[870.] इसी कारण बुद्ध, हे परम दयालु ऋषि,
समस्त जगत और समस्त देवताओं के स्वामी (बुद्ध),

ने उनसे ये शब्द कहे: 'हाँ, आओ, भिक्षु!'
और इसी कारण उन्हें भिक्षु का दर्जा दिया गया।

[871.] जो पूर्व में फिजूलखर्ची करता था,
बाद में ऐसा समय नहीं व्यतीत करता,
वह संसार में प्रकाश बिखेरता है,
जैसे बादल भरे आकाश में चंद्रमा मुक्त होकर निकलता है।

[872.] जिसके भी बुरे कर्म उसने किए हैं,
अच्छे जीवन से बंद और सील हो गए हैं, [10] वह दुनिया भर में प्रकाश बिखेरता है
जैसे चंद्रमा बादलों से घिरे आकाश में मुक्त होकर आता है।

[873.] निश्चय ही वह भिक्षु जिसने यौवन में
स्वयं को बुद्ध के नियम के अनुसार जीवन व्यतीत करने के लिए समर्पित कर दिया,
वह संसार में प्रकाश बिखेरता है,
जैसे बादल भरे आकाश में चंद्रमा स्वतंत्र रूप से निकलता है।

इस प्रकार, निर्वाण के आनंद और सहजता में लीन होकर, वह भिक्षा मांगने के लिए नगर में गया। और लोगों ने उस पर कभी मिट्टी का ढेला तो कभी डंडा फेंका, जिससे उसके सिर पर चोट लगी और वह टूटे हुए कटोरे [11] के साथ विहार (मठ) लौट आया और भगवान (बुद्ध) की शरण ली। बुद्ध ने उससे कहा: 'इसे सहो, ब्राह्मण (ऋषि), तुम्हें इसे सहना होगा। तुम्हारे कर्मों का फल, जिसके लिए तुम्हें सदियों तक नरक में जलाया जा सकता था, तुम अब इस जीवन में भोग रहे हो।' तब थेरा ने सभी प्राणियों के प्रति बिना किसी भेद के प्रेम का भाव धारण करते हुए [12] कहा:

[874] दिसा हि मे धम्मकथां सुनंतु॥
दिसा हि मे युञ्जन्तु बुद्धसासने,॥
दिसा ही मे ते मानुषे भजन्तु॥
ये धम्मम एवादपयन्ति संतो॥ ॥

[875] दिसा ही मे खंतीवादनअविरोधप्पसाअसिणṃ,॥
सुनन्तु धम्मं कालेन तं च अनुविधियन्तु॥ ॥

[876] ना ही जातु सो ममाṃ हिṃसे अण्णाṃ वा पना कांसिनाṃ,॥
पप्पुय्य परमं शांतिं रक्खेया तसथवारे॥ ॥

[82] [877] उदकाऽ हि नयन्ति नेत्तिका, उसुकारा नमयन्ति तेजनाऽ,॥
दारुं नमयन्ति तच्चका, अत्तानां दमयंति पंडिता॥ ॥

[878] दानें'एके दमयंती अंकुसेहि कसाहि च:॥
एडंडेन असत्थेन अहं अंतोमि तदिना॥ ॥

[879] 'अहिंसको' ति मे नामाṃ हिअसाकस शुद्ध सातो,॥
अज्जाहं सच्चनामोऽम्हि, न नाण् हिंसामि किञ्चिनौ ॥॥ ॥

[880] कोरो अहाṃ प्योर असिṃ अगुलिमलो' ती विसुतो,॥
वुयहमानो महोघेन बुद्धं शरणं अगमः॥ ॥

[881] लोहितापाणि शुद्ध असिṃ अंगुलिमालो' ति विसुतो,॥
शरणागमनं पस्सा; भवनेति समुहता.॥ ॥

[882] तदिसैं कम्मं कतवना बहुं दुग्गतिगामिनाऽ॥
फूटथो कम्मविपाकेण अन्नो भुञ्जामि भोजनान्॥॥

[883] पमादं अनुयुञ्जन्ति बाला दुम्मेधिनो जना॥
अप्पमादां च मेधावी धनं सेठं वा रक्खति॥॥

[884] मा पमादम अनुयुञ्जेथा मा कामरतिसंथवं,॥
अप्पमत्तो हि झायन्तो पप्पोति परमं सुखं॥॥

[885] स्वागताṃ नपागाताṃ, न'एताṃ दुम्मंतिताṃ मामा,॥
सङ्विभत्तेसु धम्मेसु यं सेठठं तद् उपागमौ॥॥

[886] स्वागताṃ नपागाताṃ एन'एटाṃ दुम्मंतिताṃ मामा,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा, कतं बुद्धस्स ससाणं॥॥

[887] अरण्ये रुक्खमुले वा पब्बतेसु गुहासु वा,॥
तत्थ तत्थेव अट्ठसिउ उब्बिग्गमानसो तदा॥॥

[888] सुखं सयामि थयामि, सुखं कप्पेमि जीवितं,॥
अहत्थपासो मरास्साः अहो सत्थानुकम्पितो॥॥

[889] ब्रह्मजाको शुद्ध असिṃ, उडिको उभातो अहṃ,॥
सोऽज्जा पुत्तो सुगात्स्स धम्मराजस्सा सत्थुनो॥॥

[890] वितातन्हो अनादानो गुत्तदवारो सुसावुतो,॥
अघमूलं वधित्वाना पत्तो मे आसवक्खयो॥॥

[891] पैरिसिणो माया सत्था, कतौ बुद्धस्स ससाणो,॥
ओहितो गरुको भरो, भवनेति समुहता' ति.॥॥

[874.] हे मेरे शत्रुओं, कृपया मुझे बताए गए धम्म मार्ग को सुनें,
और सुनकर मेरे साथ बुद्ध के नियमों का पालन करें!
हे मेरे शत्रुओं, कृपया शांतिप्रिय लोगों की सेवा करें,
जिन्होंने उस पवित्र धम्म मार्ग को अपने हृदय में बसा लिया है!

[875.] हे मेरे शत्रु समय-समय पर
उन लोगों से धम्म (मार्ग) सुन लें जो कोमलता का गुणगान करते हैं और
स्नेह की प्रशंसा करते हैं, और जो वे सुनते हैं, उसके अनुसार उनके कर्म भी उचित होते हैं!

[323] [876.] ऐसा शत्रु मुझे,
या किसी भी अन्य प्राणी को, चाहे वह कहीं भी पाया जाए, हानि नहीं पहुँचाएगा।
वह स्वयं उस शांति को प्राप्त करेगा जो अवर्णनीय है,
और इस प्रकार प्राप्त करके सभी अच्छे और बुरे का पालन-पोषण करेगा। [13]

[877.] नहर बनाने वाले धारा का नेतृत्व करते हैं,
धनुष बनाने वाले तीर के शाफ्ट को सीधा करते हैं,
बढ़ई लकड़ी के तख्ते को आकार देते हैं,

स्वयं ही वह है जिसे धर्मनिष्ठ वश में करते हैं।

[878.] कुछ प्राणियों को बलपूर्वक वश में किया जाता है,
कुछ को हुक से, और कुछ को कोड़ों से;
परन्तु मैं ऐसे व्यक्ति द्वारा वश में किया गया
जिसे न तो लाठी की आवश्यकता थी और न ही तलवार की।

[879.] निर्दोषता! यही नाम मैं धारण करता हूँ, [15] जबकि अतीत में मैं हानिकारक था;
आज मुझे सबसे सही नाम दिया गया है,
क्योंकि अब मैं किसी को चोट नहीं पहुँचाता।

[824] [880 .] एक समय मैं एक घृणित डाकू था, जिसे
उंगली-माला के नाम से जाना जाता था,
जब तक कि भयानक बाढ़ के बीच मेहनत करते हुए,
मैंने बुद्ध की शरण ली।

[61.] एक समय मेरे हाथ खून से सने हुए थे;
मेरा नाम उंगलियों की माला के नाम से जाना जाता था।
हे देखो, मैंने जो शरण पाई है,
हर लालसा [16] जड़ से उधेड़ दी गई है!

[882.] मैं, जिसने ऐसे भयानक कर्म किए थे,
अपने विनाश के स्थान की ओर तेजी से जा रहा हूँ,
मेरे ऊपर उन सभी कर्मों का परिणाम
यहाँ तक भी पड़ा है—और ऋणमुक्त होकर
अब मैं अपना नियत हिस्सा लेता हूँ। [17]

[883.] अपनी जान को व्यर्थ जाने देना मूर्खता है:-
ऐसे लोग ही समझते नहीं हैं।
बुद्धिमान व्यक्ति गंभीरता से काम लेता है,
मानो वह अपनी सबसे बड़ी संपत्ति की रखवाली कर रहा हो।

[884.] अपने जीवन को व्यर्थ के कामों में मत लगाओ,
न ही इंद्रियों के सुखों में लिप्त रहो।
जिसने गहन ध्यान किया,
उसे ही परम आनंद प्राप्त होगा।

[885.] हे स्वागत [18] यह जो आया और न ही गलत आया!
हे मुझे दी गई सलाह कितनी अच्छी थी!
मनुष्यों के बीच प्रचलित अनेक सिद्धांतों में से,
निश्चित रूप से यह सबसे अच्छा था जिसे मैंने खोजा और पाया।

[886.] हे स्वागत है इस आने वाले का, जो व्यर्थ नहीं आया!
हे मुझे दी गई सलाह कितनी अच्छी थी!
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध के सभी विधानों का पालन किया है।

[887.] घने जंगल में, किसी वन वृक्ष के नीचे,

या पर्वत की गुफा में, क्या यह यहाँ है, क्या यह वहाँ है,
मैं ऐसे ही खड़ा रहा और अपने धड़कते दिल को धड़कने दिया

[325] [888.] आनंदित होकर मैं विश्राम करता हूँ,
प्रसन्न होकर उठता हूँ, प्रसन्न होकर दिन गुजारता हूँ,
बुराई के जाल से बच निकला हूँ - आह! देखो
भगवान (बुद्ध) की मधुर करुणा मुझ पर!

[889.] मैं एक अच्छे ब्राह्मण (पुजारी) वंश का पुत्र था;
शुद्ध और उच्च वंश का, इस तरफ से उस तरफ से।
आज ही के दिन स्वागत करने वाले ने मुझे पुत्र कहा, [19] भगवान (बुद्ध), हाँ, धम्म के मार्ग के स्वामी।

[890.] सारी लालसा दूर हो गई है, कहीं भी मेरा कोई बंधन नहीं है।
मैंने द्वारों की रक्षा की है और अपनी इंद्रियों को अच्छी तरह नियंत्रित किया है।
इस संसार के दुखों की जड़ को उखाड़ फेंकते हुए,
मैं हर विष-दाग (पाप) से मुक्त हूँ। [20]

[891.] भगवान (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है,
और बुद्ध के सभी विधान पूरे हो चुके हैं।
मैंने अपने ऊपर से भारी बोझ उतार दिया है:
मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं बचा है। [21]

[1] भगव से पहचान योग्य नहीं, जिनके आश्रम में राजकुमार सिद्धार्थ (जो बुद्ध बने) ने अपने संन्यास के बाद पहली बार अध्ययन किया था। सिस्टर्स, पृष्ठ 2 देखें।

[2] मैंने इस विचित्र कथा को - किसी उपनाम की व्याख्या करने के लिए गढ़ी गई? - पूरी तरह से प्रस्तुत किया है, ताकि बुद्धघोष (मज्झिमा निक्यूया पर टीका, 'सूत्र 86') और धम्मपाल के विद्वतापूर्ण पत्रकारिता की तुलना की जा सके। 'दोनों वृत्तांत विवरणों में भिन्न हैं, और संभवतः परस्पर स्वतंत्र और लगभग समकालीन हैं। यह कहानी लोकप्रिय थी; यह अवदान-शतक (संख्या 27) में मिलती है, और इसका उल्लेख (मिलिंद, ii. 355) में किया गया है। धम्मपद, श्लोक 173, 422, इसका उल्लेख करते हैं, लेकिन टीका और जातक V., संख्या 537, दोनों बुद्धघोष के वृत्तांत का उल्लेख करते हैं। क्या शिशु जेंता का भाई था, CCXVIII?

[3] इस 'ब्राह्मण (पुजारी) कला' पर, देखें संवाद , i. 16 f., 20 f. मुझे नहीं पता कि किस तारे या तारों का मतलब है।

[4] हमारे सबसे करीबी समकक्ष नोसेन्स और इनोसेंस हैं, जिनमें से बाद वाला कभी एक पसंदीदा ईसाई नाम था। डॉ. न्यूमैन का वैगनरियन 'फ्रीडरिच,' आदि, अधिक सटीक नहीं है। पाप. सूद. के अनुसार, उनका नाम अहिंशका, या अभिंशका, पहले से ही था।

[5] मज्झिमा निकया टीका में वे 'विदेशी' (बाहिरका) थे ।

[6] 'ट्रैप वुड।'

[7] तुलना करें IV

[8] टीकाओं के अनुसार, डाकू ये शब्द वहीं और उसी समय बोलता है। श्लोक 871 में अंगुलिमाला का अरहंत (प्रबुद्ध) के रूप में विजय गीत शुरू होता है।

[9] अनवाकासी (पाप सूद, अनवाकारी) को खिपी, चदेसी के रूप में व्याख्यायित किया गया है।

[10] पिथियाति टीका एक दरवाजे के बंद होने से जुड़ती है।

[11] मज्झिमा निकया अधिक रंगीन चित्र प्रस्तुत करता है: 'टूटे हुए सिर और बहते खून के साथ, कटा हुआ और कुचला हुआ।' धम्मपद टीका, iii., 169 में, उसे इन छंदों का उच्चारण करने के बाद मरते हुए दर्शाया गया है।

[12] तुलना करें. I., पृ. 4, 5, n. 1.

[13] ताआ-थावरे: चाइल्डर्स में 'कमजोर-मजबूत', लेकिन निश्चित रूप से एक संदिग्ध अर्थ वाला शब्द। धम्मपाल में 'सभी प्राणी' हैं। बुद्धघोष कहते हैं: तासा को सतण्हा, थावरा, नित्तण्हा (लालसा और उसके विपरीत) कहा जाता है ।

डॉ. न्यूमैन, जो इन तीनों गाथाओं में 'दिसा ' का अर्थ 'शत्रु' नहीं, जैसा कि दोनों टीकाओं में है, बल्कि आकाश की दिशाओं (दिसा, दिसायो) से लगाते हैं , अपने आप को 'दी लुफ्ते' की स्तुति में पूरी तरह से लीन कर देते हैं, जो पिछली शताब्दी के जर्मन रोमांटिक कवियों की शैली और शब्दों में है। परिणाम, थेरा की परंपरा के अनुरूप न होते हुए भी, कविता के रूप में अधिक सुंदर है, जैसा कि उनके उपहास करने वाले टीकाकारों ने कहा है। थेरा को इस बात का खेद है कि 'उनके अनेक पीड़ितों के रिश्तेदार' यह नहीं जानते कि वह कितना बदल गए हैं, और न ही उस चीज़ के गुणों को जानते हैं जिसने उन्हें बदला है।

[14] XIX देखें। [878] में छंद श्लोक में वापस आ जाता है। थेरा ने अपनी रक्षा (बुद्धघोष) और दूसरों को बुराई से बचाने (धम्मपाल) के लिए उपरोक्त बातें कहने के बाद, अब अपने पूर्ण किए गए कार्य की घोषणा की।

[15] 'मैं वहन करता हूँ' हमारी टीका से अधिक मेल खाता है, जो हिंसाका को थेरा का मूल नाम और अहिंसक को उनके धर्मांतरण पर दिया गया नाम बताती है। बुद्धघोष का संस्करण शायद अधिक तर्कसंगत है। देखें पृष्ठ 319, नोट 1। यह भी याद रखना चाहिए कि जब तक उन्होंने अपने महाविद्यालय का शुल्क चुकाने का प्रयास नहीं किया, तब तक उनका रिकॉर्ड बेदाग था।

[16] भवानत्ति, 'पुनर्जन्म का मार्गदर्शक' = तन्हा। श्लोक 604, n. 1 देखें।

[17] श्लोक 789 देखें।

[18] पिलिंडा-वाचा की कविता (IX.)

[19] धम्मपद टीका (iii. 170) में वर्णित है कि जब अंगुलिमाला का देहांत हुआ और भगवान (बुद्ध) ने इसके बारे में सुना, तो उन्होंने कहा: 'मेरे पुत्र, भिक्षुओं, परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके हो।' 'हे प्रभु, क्या वह व्यक्ति परिनिर्वाण प्राप्त कर चुका है जिसने इतने लोगों को मारा?' 'हाँ, उसने तब बुराई की जब उसका एक भी गुणी मित्र नहीं था, लेकिन जब उसे एक मिला, तो उसने पूरी लगन से प्रयास किया, इसी कारण उसकी बुराई अच्छाई से ढक गई।'

[20] तुलना करें. सोलहवीं.

[21] = श्लोक 604, 792.

संदर्भ:

मज्झिमा निकुइया, 'सुत्त 86' जातक वि., संख्या 537,

BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी

अंगुलिमाला

राजा पसेनादि कोसल की प्रजा में भगव गग्गा नाम का एक विद्वान ब्राह्मण (पुजारी) भी था, जो उनके शाही सहायक के रूप में सेवा करता था। भगव और उनकी पत्नी मंतानी का एक पुत्र हुआ। उस समय की प्रथा के अनुसार, उनके पिता ने नवजात शिशु की कुंडली बनाई। उन्हें यह जानकर गहरा आश्चर्य हुआ कि शिशु "अपराधी नक्षत्र" के अंतर्गत पैदा हुआ है, जिसके कारण उसमें अपराध की प्रवृत्ति विकसित होने की संभावना है।

उस सुबह जब पादरी राजा से मिलने आया और उनसे पूछा कि उनकी नींद कैसी रही, तो राजा ने बताया कि उनकी रात भयानक रही। राजा ने कहा, "मैं रात में जागा और देखा कि मेरे हथियार, जो मेरे बिस्तर के किनारे पड़े थे, तेज़ी से चमक रहे थे। क्या इसका मतलब मेरे राज्य या मेरे लिए कोई खतरा हो सकता है?"

भगगवा ने राजा को बताया कि पूरे शहर में ऐसी ही विचित्र घटनाएँ घटी हैं और इसका कारण उनका नवजात पुत्र है, जिसकी कुंडली में डाकुओं के लक्षण हैं। राजा ने भगगवा से पूछा कि क्या नक्षत्रों ने भविष्यवाणी की है कि लड़का एक अकेला डाकू बनेगा? भगगवा ने राजा को बताया कि वास्तव में नक्षत्रों ने भविष्यवाणी की है कि उनका पुत्र एकाकी अपराध का जीवन व्यतीत करेगा। भगगवा ने राजा से पूछा कि क्या उन्हें बच्चे को अभी मार देना चाहिए ताकि भविष्य में होने वाले अपराधों को रोका जा सके, यदि यह बच्चा जीवित रहा। राजा पसेनादि ने इस तथ्य पर विचार करते हुए कि बच्चा बड़ा होकर एक अकेला डाकू बनेगा, अपने पुरोहित को आदेश दिया कि वह बच्चे का सावधानीपूर्वक पालन-पोषण करे और उसे अच्छी शिक्षा दे ताकि इस भविष्यवाणी को टाला जा सके।

भगगवा और मंतानी ने बच्चे का नाम अहिंसक रखा, इस उम्मीद में कि नाम और अच्छे पालन-पोषण व शिक्षा से उसमें छिपी बुरी प्रवृत्तियाँ बदल जाएँगी। अहिंसक शारीरिक रूप से बलवान, बुद्धिमान और अच्छे व्यवहार वाला बच्चा बना। पढ़ाई में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने के कारण उसके पिता ने उसे उच्च शिक्षा के लिए भारत के प्रसिद्ध प्राचीन विश्वविद्यालय तक्षशिला में भेज दिया। एक होशियार छात्र होने के कारण अहिंसक ने जल्द ही अन्य सभी छात्रों को पीछे छोड़ दिया और उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। कुछ ही समय में वह अपने शिक्षक का प्रिय बन गया। शिक्षक उसे अपने बेटे की तरह मानते थे और अक्सर उसे अपने घर भोजन करने के लिए आमंत्रित करते थे। अहिंसक की शैक्षणिक उत्कृष्टता और शिक्षक के साथ उसकी घनिष्ठ मित्रता ने उसके कई शत्रु बना दिए। उसकी सफलता से ईर्ष्या करने वाले उसके सहपाठियों ने मित्रता तोड़ने के लिए शिक्षक के मन में जहर घोलने की योजना बनाई।

उन्होंने अहिंसाका पर झूठे आरोप लगाकर शिक्षक के मन में संवेगपूर्ण विष डालना शुरू कर दिया। आरंभिक रूप से शिक्षक ने उनकी निंदा को अनसुना कर उन्हें फटकारा, परन्तु जब अधिकाधिक विद्यार्थी स्वतंत्र रूप से वही कहानी लेकर उनके पास आने लगे तो उनका विश्वास डगमगा उठा। धीरे-धीरे उनके मन में संदेह का बीज बोया जाने लगा। क्या अहिंसाका उनके विरुद्ध षड्यंत्र रच रहा था? क्या वह उनके शिष्यों को अपने अधीन करके उनसे आगे निकलने की योजना बना रहा था? शिक्षक ने निश्चय किया कि स्वयं मारे जाने से पहले उन्हें अहिंसाका को मारना होगा। परन्तु अहिंसाका विशाल और बलवान था। उसे मारना आसान नहीं था। इसके अतिरिक्त, अहिंसाका की मृत्यु से किसी भी प्रकार का संबंध होने पर शिक्षक के रूप में उनकी प्रतिष्ठा धूमिल हो जाती। शिक्षक ने अहिंसाका से छुटकारा पाने की एक योजना पर विचार किया, जिसे अब वे अपने लिए खतरा मानते थे, और यह योजना इस प्रकार बनाई गई कि उन पर कोई आरोप न लगे।

अहिंसक ने अभी-अभी अपनी पढ़ाई पूरी की थी। उस समय शिष्यों द्वारा गुरु को उपहार देकर उनका सम्मान करने की प्रथा थी। अहिंसक को इस सम्मानजनक प्रथा की याद दिलाते हुए, उन्होंने एक हजार उंगलियों की माला मांगी, जिनमें से प्रत्येक उंगली अलग-अलग व्यक्ति के शरीर से ली जानी थी। गुरु ने संभवतः गुप्त रूप से अहिंसक की कुंडली स्वयं बनाई थी, क्योंकि उस समय कुंडली विज्ञान काफ़ी प्रचलित था, और उन्होंने देखा था कि अहिंसक में आपराधिक प्रवृत्ति है। उन्हें यह भी आशंका थी कि जल्द ही अहिंसक

राजा के आदमियों द्वारा पकड़ा जाएगा और अपने अपराधों के लिए उसे मृत्युदंड दिया जाएगा। इसलिए, यह सोचकर कि उन्होंने अहिंसक को मारने की एक अचूक योजना बना ली है, उन्होंने अहिंसक के हिचकिचाने पर भी उपहार देने पर ज़ोर दिया।

अहिंसक एक ऐसे परिवार से थे जो अहिंसा में विश्वास रखता था। अपने माता-पिता और परिवार के मूल्यों को याद रखते हुए, अहिंसक ने यह भेंट देने से इनकार कर दिया। लेकिन गुरु ने ज़ोर देकर कहा कि उनसे यही अपेक्षा की जाती है और अगर वे यह भेंट नहीं देंगे तो उन्होंने जो कुछ भी सीखा है उसका कोई महत्व नहीं रह जाएगा, क्योंकि वे आदरणीय गुरु की इच्छा पूरी नहीं करेंगे। इसलिए अहिंसक को सहमत होना पड़ा।

इस समय अहिंसक की हिंसा की दबी हुई प्रवृत्ति जागृत हुई और उसके भीतर फूट पड़ी। पिछले जन्मों में वह बलवान और हिंसक था। वास्तव में, उसने मानव मांस खाया था और हत्या करने में आनंद लिया था। उसका अंधकारमय अतीत और करुणा का अभाव फिर से उभर आया और माता-पिता का अच्छा प्रभाव और परवरिश भुला दी गई। खतरे, रोमांच और हत्या के प्रति उसका प्रेम हावी हो गया। शवों से हजार उंगलियां इकट्ठा करने के बजाय, जो कब्रिस्तानों में मिल सकती थीं, उसने अपने गृह राज्य कोसला के जलिनी जंगल में अपराध का जीवन अपना लिया।

वहाँ वह एक ऊँची चट्टान पर रहता था और यात्रियों पर नज़र रखता था, जिन पर वह झपट्टा मारकर उन्हें मार डालता था। उन्हें मारने के बाद, वह प्रत्येक शिकार की एक उंगली काट लेता था। पहले वह उंगली को एक पेड़ पर लटका देता था ताकि पक्षी और अन्य जीव सड़ते हुए मांस को खा सकें, और फिर हड्डियों को पिरोकर एक माला बनाता था जिसे वह अपने गले में पहनता था। जल्द ही वह अंगुलिमाला, यानी "उंगलियों की माला" के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

पूरा शहर दहशत में था। अंगुलिमाला की शक्ति और सामर्थ्य अजेय थी। कई लोगों ने इस खूंखार सीरियल किलर को पकड़ने की कोशिश की, लेकिन उसकी क्रूरता और अमानवीयता के आगे वे सब मारे गए। अंगुलिमाला को अपने क्रूर जीवन में आनंद आने लगा था और वह अपने अतीत के हत्या और क्रूरता भरे काले जीवन में पूरी तरह डूब चुका था। मौत के डर से कोई भी जंगल के पास जाने की हिम्मत नहीं करता था। अंगुलिमाला अपने शिकारों की तलाश में शहर के बाहरी इलाकों में जाने लगा। वह घरों में घुसने लगा और रात में शहर में छापा मारकर लोगों को मारने और उनकी उंगलियां निकालने लगा। भयभीत ग्रामीण अपने घर छोड़कर सावत्थी की राजधानी भाग गए। उन्होंने महल की दीवारों के बाहर डेरा डाला और राजा से शिकायत की कि अंगुलिमाला द्वारा शहर के लोगों को बेरहमी से मारा जा रहा है। इसलिए राजा ने उसे पकड़ने के लिए सेना तैयार की।

इस समय अंगुलिमाला ने गुरु को भेंट करने के लिए आवश्यक हजार उंगलियों में से 999 उंगलियां एकत्र कर ली थीं। अंगुलिमाला का असली नाम और वंश ज्ञात नहीं था, क्योंकि उसका रूप बदल चुका था। उसकी दाढ़ी और बाल उलझे हुए थे और वह बासी, सूखे खून से लथपथ था। उसके चारों ओर मृत्यु और कच्चे मांस की दुर्गंध फैली हुई थी। वह एक खूंखार, भयानक हत्यारे जैसा दिख रहा था। सौम्य स्वभाव वाले अहिंसक को पहचानना असंभव था।

अंगुलिमाला द्वारा मचाए गए आतंक की खबर अंततः उसके माता-पिता तक पहुँच गई। अंगुलिमाला को संदेह था कि वही उनका बेटा है जो तकशिला विश्वविद्यालय से कभी वापस नहीं लौटा। उसकी माँ ने अपने पति से अपने बेटे को वापस लाने की विनती की। लेकिन भगगवा को ऐसे बेटे की कोई ज़रूरत नहीं थी। उसने यह कहते हुए इनकार कर दिया, "उसे पकड़ लिया जाए, राजा के आदमियों द्वारा उसे मार डाला जाए।" मंतानी ने अपने बेटे को बचाने के लिए अकेले जंगल में जाने का फैसला किया। एक माँ का अपने बच्चे के प्रति

अटूट प्रेम उसे उम्मीद थी कि वह अंगुलिमाला को अपना रास्ता सुधारने के लिए मना लेगी, क्योंकि राजा उसे पकड़ने और मारने के लिए अपनी सेना तैयार कर रहा था।

अंगुलिमाला अपने आखिरी शिकार की बेताब तलाश में था। वह अपराध की दुनिया से ऊब चुका था और अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए बेचैन था। दूर से उसने जलिनी जंगल में स्थित अपने ठिकाने की ओर आती एक महिला को देखा। पहाड़ से नीचे उतरते हुए वह उस बूढ़ी औरत का पीछा करने लगा, जिसे उसने जल्द ही अपनी माँ के रूप में पहचान लिया।

उस समय बुद्ध करुणामयी दृष्टि से संसार का अवलोकन कर रहे थे, ज्ञानवान और जरूरतमंद लोगों की तलाश में थे जिनकी सहायता की जा सके। उन्होंने अंगुलिमाला को अपनी माता की अंतिम हत्या के लिए भागते हुए देखा। उन्होंने यह भी देखा कि अंगुलिमाला के भीतर मोक्ष प्राप्त करने का गुण मौजूद था। यह अंगुलिमाला से बुद्ध की पहली मुलाकात नहीं थी। अनेक पूर्व जन्मों में उनका मिलन हुआ था और बुद्ध ने अपने मन की शक्ति से अंगुलिमाला के शारीरिक बल पर विजय प्राप्त की थी। एक बार तो अंगुलिमाला बोधिसत्व का मामा भी था (जातक 513)। वे मातृहत्या के जघन्य अपराध को रोकने के लिए जलिनी वन की ओर चल पड़े। नगरवासियों ने उन्हें उस कुख्यात हत्यारे के बारे में बताकर आगे बढ़ने से रोकने का प्रयास किया।

उनकी विनती अनसुनी करते हुए बुद्ध घने जंगल में चले गए। अंगुलिमाला और उसकी माता के बीच खड़े होकर उन्होंने अंगुलिमाला का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। शांत और गंभीर बुद्ध को देखकर अंगुलिमाला मुड़ गया। अंगुलिमाला ने सोचा, "मैं अपनी माता को क्यों मारूँ? मेरा अंतिम शिकार तो यह तपस्वी होगा जो शांति से मेरे मार्ग में खड़ा है।"

अंगुलिमाला मुड़ते हुए बुद्ध के पीछे चल पड़ा। घने पत्तों के बीच से निकलते हुए उसने अपनी तलवार लहराई, उसका इरादा बुद्ध को पकड़ने का था। लेकिन अपनी असाधारण शक्ति और तेज गति के बावजूद वह बुद्ध के साथ नहीं चल सका। बुद्ध दौड़ते हुए प्रतीत नहीं हो रहे थे, फिर भी अंगुलिमाला के प्रयासों के बावजूद वे कुछ कदम आगे ही रहे। थककर अंगुलिमाला ने बुद्ध को पुकारा, "रुको, संन्यासी! रुको, संन्यासी!" बुद्ध ने शांत भाव से उत्तर दिया, "मैं रुक गया हूँ, अंगुलिमाला। तुम्हें भी रुक जाना चाहिए।"

अंगुलिमाला बुद्ध के शब्दों से व्याकुल हो गया। रुककर उसने बुद्ध से पूछा कि उनका क्या तात्पर्य है। तब बुद्ध ने समझाया:

"अंगुलिमाला, मैंने हमेशा के लिए रुकना शुरू कर दिया है।"

मैं सभी जीवित प्राणियों के प्रति हिंसा से परहेज करता हूँ।

लेकिन तुम सांस लेने वाली चीजों के प्रति कोई संयम नहीं रखते।

इसलिए मैंने रुकना शुरू कर दिया है और आपने नहीं।"

अंगुलिमाला ने ये शब्द सुनकर एक चमत्कारिक परिवर्तन देखा। उनके पूर्व के अच्छे कर्म और पवित्रता प्रकट हो उठी। उन्हें पता चला कि करुणा बुद्ध केवल उन्हीं के लिए जालिनी वन में आए हैं। अंतर्मन से द्रवित होकर अंगुलिमाला ने अपनी तलवार फेंक दी, बुद्ध के समक्ष सिर झुकाकर घुटने टेके और परिवर्तन का संकल्प लिया।

"अरे, आखिरकार इस एकांतवासी, एक पूजनीय ऋषि को देख ही लिया,"

वह मेरे लिए इस जंगल में आया है।

आपके श्लोक को सुनकर, आपने मुझे सत्य (धम्म) का उपदेश दिया।

मैं निश्चय ही बुराई का सदा के लिए त्याग करूंगा।

बुद्ध ने अंगुलिमाला को दीक्षा दी और उसे सावत्थी के जेतवन मठ में वापस ले गए। गाँव वाले, जो हुए परिवर्तन से अनभिज्ञ थे, राजा से शिकायत करते रहे। राजा अपने सर्वश्रेष्ठ सैनिकों के साथ अंगुलिमाला को पकड़ने के लिए जलिनी वन की ओर चल पड़े। रास्ते में वे जेतवन मठ से गुज़रे। प्रबुद्ध बुद्ध के परम अनुयायी होने के कारण, राजा पसेनादि कोसल बुद्ध को प्रणाम करने के लिए मठ में रुके। बुद्ध ने राजा को युद्ध के वस्त्रों में अपने सर्वश्रेष्ठ सैनिकों के साथ देखकर पूछा कि क्या वे किसी पड़ोसी राज्य से युद्ध करने जा रहे हैं। राजा पसेनादि ने उत्तर दिया कि वे किसी राज्य को नहीं, बल्कि अंगुलिमाला, उस खूंखार हत्यारे को उखाड़ फेंकने का प्रयास कर रहे हैं। उन्होंने आगे कहा कि यद्यपि उन्होंने अपने सर्वश्रेष्ठ सैनिकों को अपने साथ भेजा है, फिर भी उन्हें नहीं लगता कि वे उस क्रूर हत्यारे को पकड़ने में सफल होंगे।

बुद्ध ने राजा से पूछा कि यदि अंगुलिमाला अपने हत्यारे मार्ग को त्यागकर भिक्षुओं के मार्ग पर चल पड़े तो राजा उसके साथ कैसा व्यवहार करेगा। राजा ने उत्तर दिया कि वह उसे भिक्षुओं के योग्य आदर और पूजा करेगा। तब बुद्ध ने अंगुलिमाला को आगे आने को कहा। एक शांत और सौम्य, मुंडा हुआ भिक्षु राजा की ओर बढ़ा। अंगुलिमाला को देखते ही राजा भय से कांप उठा। बुद्ध के साथ होने और भगवा वस्त्र धारण करने से यह तथ्य नहीं बदल सका कि वह एक खूंखार हत्यारा था। राजा भयवश पीछे हट गया।

तब बुद्ध ने राजा से कहा कि उन्हें डरने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि अंगुलिमाला ने हत्या करना छोड़कर उनके मार्ग का अनुसरण किया था। राजा ने अंगुलिमाला से उनके परिवार और उत्पत्ति के बारे में पूछा। अंगुलिमाला ने उत्तर दिया कि वे भगव गग्गा और मंतानी के पुत्र हैं। राजा को तुरंत अंगुलिमाला के जन्म का दिन और रात में घटी असामान्य घटना याद आ गई। लेकिन बुद्ध द्वारा पूर्व हत्यारे को स्वीकार किए जाने पर विश्वास रखते हुए, राजा ने उन्हें गग्गा मंतानीपुत्त कहकर संबोधित किया ताकि अतीत से उनका संबंध भुला दिया जाए। राजा पसेनादि ने मंतानीपुत्त (मंतनी के पुत्र) को अपना संरक्षण और भिक्षु बनने के लिए आवश्यक वस्तुएँ प्रदान करने की पेशकश की। हालाँकि, मंतानीपुत्त ने तपस्या करने का निश्चय किया था। उनके पास पहले से ही भिक्षु बनने के लिए आवश्यक तीन वस्त्र थे। उन्होंने राजा की पेशकश को अस्वीकार कर दिया। इस परिवर्तन से चकित होकर, राजा पसेनादि ने बुद्ध की इस प्रकार प्रशंसा की:

"यह अद्भुत है, पूज्यवर। यह आश्चर्यजनक है कि भगवान किस प्रकार अविचल को वश में करते हैं, अशांत को शांत करते हैं, अशांत को स्थिर करते हैं। जिसे हम दंड और शस्त्रों से वश में नहीं कर सके, उसे भगवान ने बिना दंड या शस्त्रों के वश में कर लिया है।"

राजा द्वारा मंतानिपुत्त (अंगुलिमाला) को स्वीकार किए जाने के बावजूद, नगरवासी उस पूर्व हत्यारे से भयभीत थे। जब मंतानिपुत्त भिक्षा मांगने जाते थे, तो लोग डर के मारे भाग जाते थे। यद्यपि वे प्रतिदिन भिक्षा मांगने जाते थे, जैसा कि बुद्ध के भिक्षुओं का रिवाज था, फिर भी उन्हें शायद ही कभी भिक्षा प्राप्त होती थी। ग्रामीणों को यह भी भय था कि इस प्रथा के फलस्वरूप अनुभवी अपराधी भी अपने दंड से बचने के लिए भिक्षु संघ में शामिल हो जाएंगे। उनकी चिंताओं पर विचार करते हुए, बुद्ध ने महसूस किया कि केवल उन्हीं के पास किसी व्यक्ति के भीतर की अच्छाई को देखने की क्षमता है। भविष्य में दुष्ट व्यक्तियों द्वारा भिक्षु संघ का दुरुपयोग हो सकता है। उनकी विनती को स्वीकार करते हुए, बुद्ध ने घोषणा की कि दोषी अपराधियों को अपने दंड या कारावास से बचने के साधन के रूप में भिक्षु संघ में शामिल होने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

बुद्ध की शिक्षाओं का पूर्ण आदर करने वाले मंतानिपुत्त को अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में कठिनाई हो रही थी। उनके अतीत के पीड़ितों के जीवनदान, उनकी पीड़ा और व्यथा की चीखें उन्हें सताती रहती थीं। अपने बुरे अतीत को याद करके वे अपने मन को शांत नहीं कर पाते थे और अपने विचारों को एकाग्र नहीं कर पाते थे। उन्होंने निरंतर प्रयास जारी रखा और भिक्षा न मिलने के बावजूद, वे अन्य भिक्षुओं के साथ प्रतिदिन भिक्षा मांगने जाते थे। एक दिन उन्होंने एक स्त्री को प्रसव पीड़ा में देखा, क्योंकि वह अपने बच्चे को जन्म नहीं दे पा रही थी। उसके कष्टों पर करुणा से भरकर वे बुद्ध के पास गए और उनसे पूछा कि क्या वे उस युवती की सहायता के लिए कुछ कर सकते हैं।

इसके बाद बुद्ध ने सत्य का एक श्लोक सुनाया, जिसे अब अंगुलिमाला सूत्र के नाम से जाना जाता है। बुद्ध ने उनसे उस स्त्री के पास जाकर निम्नलिखित बातें कहने को कहा:

"चूंकि मैं कुलीन परिवार के साथ था,

मुझे याद नहीं है कि मैंने कभी जानबूझकर ऐसा किया हो

एक जीवित प्राणी को उसके जीवन से वंचित कर दिया।

इस सत्य से आप स्वस्थ रहें और आपका शिशु सुरक्षित रहे।"

निर्देशानुसार मंतानिपुत्त उस स्त्री के घर लौट गए। उन्होंने सूत्र का पाठ किया। स्त्री का कष्ट समाप्त हो गया और उसने एक स्वस्थ बच्चे को जन्म दिया। सत्य की शक्ति और उससे उत्पन्न चमत्कार पूरे नगर में फैल गया। ग्रामीणों का मंतानिपुत्त के प्रति भय समाप्त हो गया और वे करुणा से उनका स्वागत करने लगे। भिक्षा मांगने के दौरान उन्हें भोजन मिलने लगा।

बुद्ध सामान्यतः अपने शिष्यों को चमत्कार करने या आस्था के बल पर उपचार करने के लिए प्रोत्साहित नहीं करते थे। तो फिर इस घटना में उन्होंने मंतानिपुत्त (अंगुलिमाला) को सत्य की शक्ति से उस स्त्री की सहायता करने के लिए क्यों प्रेरित किया? ऐसा इसलिए था क्योंकि बुद्ध जानते थे कि मंतानिपुत्त को कोई भिक्षा नहीं मिलती थी क्योंकि ग्रामीणों को उन पर विश्वास नहीं था। यह मंतानिपुत्त को किसी सकारात्मक चीज़ पर ध्यान केंद्रित करने के लिए भी था ताकि वे अपने अतीत को भुलाकर अपने मन को अनुशासित करने पर ध्यान दे सकें। इस घटना के बाद लोगों का मंतानिपुत्त पर विश्वास धीरे-धीरे पुनः जागृत होने लगा। वे भी अपने बुरे अतीत को बार-बार याद किए बिना ध्यान केंद्रित करने में सक्षम हो गए। उस स्त्री के प्रति उनकी करुणा और इस कार्य से प्राप्त सुख ने उनके मन को शांत करने में सहायता की। इसके कुछ ही समय बाद, निरंतर अभ्यास से, पूर्व हत्यारे अंगुलिमाला मंतानिपुत्त ने अरहंत पद प्राप्त किया।

लेकिन स्वीकृति पूर्ण नहीं थी। जिन परिवारों को उसने मारा था, उनमें से कई ने उसे कभी क्षमा नहीं किया। उन्होंने उसे लाठियों और पत्थरों से पीटा और मंतानिपुत्त अक्सर फटे वस्त्रों में लहूलुहान जेतवन लौटता था। उसने इस पीड़ा को शांति से सहन किया क्योंकि अंततः उसे मोक्ष प्राप्त हो गया था। उसका शरीर क्रूर हमलों का शिकार था क्योंकि उसे अपने बुरे कर्मों का फल भोगना था, परन्तु उसका मन मुक्त हो चुका था।

आज भी विश्वभर के बौद्ध अंगुलिमाला सूत्र में अटूट आस्था रखते हैं। प्रसव पीड़ा के दौरान बौद्ध महिलाओं के लिए सुरक्षित और सुखदायक प्रसव हेतु इस सूत्र का उपयोग करना एक आम प्रथा है। यहीं से मंतानिपुत्त की करुणा का प्रसार हुआ। उन्होंने वनों और वनभूमियों में रहकर तपस्या करते हुए एकांत जीवन व्यतीत किया।

इस थेरागाथा में मंतानिपुत्त अपने शत्रुओं और अन्य गलत काम करने वालों को प्रोत्साहित करते हैं और बुद्ध के प्रति अपने परिवर्तन और कृतज्ञता का वर्णन करते हैं।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(256):अनुरुद्ध

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (256) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.
बीस श्लोक
256. अनुराधा
इस बुद्ध युग में कपिलवस्तु में, साकियन अमितोदन के घर में उनका पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम अनुरुद्ध रखा गया। [1] इस प्रकार उनके बड़े भाई साकियन महानामा थे, जो भगवान (बुद्ध) के चाचा के पुत्र थे। उनका पालन-पोषण अत्यंत सुख-सुविधाओं से संपन्न हुआ, प्रत्येक ऋतु के लिए एक अलग घर में, [326] और वे नर्तकों और अभिनेताओं से घिरे रहे, और उन्हें दिव्य सौभाग्य प्राप्त था। जब उन्हें साकियन राजाओं के साथ भगवान (बुद्ध) की रक्षा के लिए बुलाया गया, तो वे अनुपिया के आम के जंगल में उनके पास गए, भिक्षु दीक्षा ली और वर्षा ऋतु के दौरान दिव्य दृष्टि प्राप्त की। फिर, धर्म के सेनापति (धम्म) के मार्गदर्शन में अभ्यास प्राप्त करते हुए, वे पूर्वी बाँस के जंगल में गए और अध्ययन करते हुए एक महान व्यक्ति के सात विचारों में महारत हासिल की, लेकिन आठवें विचार को नहीं सीख सके। भगवान (बुद्ध) ने यह जानकर उन्हें आर्य वंश की महान परंपरा का उपदेश दिया। [2] इस पाठ को याद रखते हुए, अनुराद्ध ने अंतर्दृष्टि विकसित की और अलौकिक एवं विश्लेषणात्मक शक्तियों के साथ अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। [3] भगवान (बुद्ध) ने उन्हें दिव्य दृष्टि प्राप्त करने वालों में सर्वोपरि स्थान दिया। [4] और वे निर्वाण के आनंद में लीन होकर एक दिन अपनी इस उपलब्धि की समीक्षा करने लगे। और आनंद से भर कर उन्होंने यह वाणी (गाथा) कही:

[892] पहाया मातापितारो भगिनी नातिभतारो,॥
पञ्चकामागुने हित्वा अनुरुद्धोऽव झायतु॥ ॥

[893] समेटो नक्कागितेहि सम्मतअप्पबोधनो,॥
न तेन सुद्धिमज्झगां मरास्सा विसाये रतो॥ ॥

[894] एताṃ सीए समतिक्कम्मा रातो बुद्धस्सा ससाने,॥
सब्बोघं समतिक्कम्मा अनुरुद्धोऽव झायति ॥॥ ॥

[895] रूपा सदा रस गंधा फेठब्बा च मनोरमा'॥
एते च समतिक्कम्मा अनुरुद्धोऽव झायति.॥ ॥

[896] पिण्डपता पतिक्कन्तो एको अदुतियो मुनि,॥
एसाति पौंसुकुलानि अनुरुद्धो अनासवो॥ ॥

[897] विचिनी अग्गहि धोवि राजयी धारयी मुनि,॥
पणसुकुलानि मतिमा अनुरुद्धो अनासवो॥ ॥

[898] महिच्चो च असन्तुऽहो सङसाऽहो यो च उद्धतो,॥
तस्सा धम्म इमे होंति पापाका सोंकिलेसिका॥ ॥

[899] सातो च होति अप्पिचो संतुथो अविघातव,॥
पविवेकरतो विट्टो निच्चमरद्धवीरियो॥ ॥

[900] तस्सा धम्म इमे होंति कुसल बोधिपक्खिका,॥
अनासावो च सो होति इति वुत्तं महेसिना॥ ॥

[901] मम संकप्पामनया सत्था लोके अनुत्तरो,॥
मनोमयेन कायेन इद्धिया उपसंकामि.॥ ॥

[902] यदा मे अहु संकप्पो ततो उत्तरि देसायी,॥
निप्पपञ्चरातो बुद्धो निप्पपञ्चमदेसायि ॥॥ ॥

[903] तस्माहं धम्ममन्नया विहासीं सासने रतो,॥
तिस्सो विज्जा अनुप्पट्टा कतं बुद्धस्स ससाणं॥ ॥

[904] पंचापन्नसवस्सानि यतो नेसज्जिको अहं,॥
पञ्चविसतिवासनि यतो मिद्धान् समुहताः॥ ॥

[905] नाहु अस्स्सापास्सा ऋहितवित्तस ताडिनो,॥
अनेजो संतिमारभ चक्खुमा परिनिब्बुतो॥ ॥

[906] असल्लीनेना सित्तेना वेदानां अज्झावसायी,॥
पज्जोतस्सेवा निब्बाणं विमोक्खो चेतासो आहु॥ ॥

[907] एते पचिमिका दानी मुनिनो फस्सापनकामा,॥
नान्ने धम्म भविस्संति समुबद्दे परिनिब्बुते॥ ॥

[892] माता, पिता, अपने सभी सगे-संबंधियों,
बहन और भाई को त्यागकर, इंद्रियों के सुखों का त्याग करके,
अनुराद्ध समाधि में मग्न बैठे हैं।

[893]
नृत्य और गीत के साथ, सुबह झांझ की आवाज़ से जागृत हुआ: - ऐसा नहीं
था कि शुद्ध धर्म (धम्म) तक पहुँचा जा सके,
मैं मारा (मृत्यु के देवता/राक्षस) के स्थान पर होने से बहुत प्रसन्न था।

[894] और अब जब वे सब बातें पीछे छूट गई हैं,
बुद्ध के नियम का पालन करते हुए पूरे मन से प्रसन्न होकर,
हाँ, उस भयंकर बाढ़ को पार करते हुए,
अनुराद्ध समाधि में मग्न बैठे हैं।

[895] [327] दृश्य, ध्वनियाँ और स्वाद, गंध और स्पर्श करने योग्य वस्तुएँ,
वह आनंद और आकर्षण, [5] इन सबको पीछे छोड़कर,
अनुराद्ध समाधि में मग्न बैठे हैं।

[896] भिक्षा की खोज से वह अकेला लौटता है,
एक निर्मल [6] मौन ऋषि;
कूड़े के ढेर से अपने वस्त्रों को नवीनीकृत करने के लिए
अनुराधा ने खोज की, समझदार और निर्मल।

[897] वह खोजता है, लेता है, धोता है, रंगता है, पहनता है
जर्जर वस्त्र, [7] यह ऋषि विचारपूर्वक: -
क्योंकि अनुरुद्ध ऐसा ही है, समझदार, प्रतिरक्षाशील।

[898] जो चाहतों और असंतोष से भरा है, वह
घमंडी है [8] और अपने जैसे लोगों से चिपका रहता है,
भ्रष्ट और नीच गुणों को प्रदर्शित करता है।

[899] और क्या वह सचेत है, जिसकी इच्छाएँ कम हैं,
जो संतुष्ट और शांत है और कभी विचलित नहीं होता,
एकांत में आनंदित रहता है, जिसका हृदय प्रसन्न रहता है?

[900] निश्चय ही परिश्रमी: - उसके गुण अच्छे हैं
और ज्ञान से संबंधित हैं,
और वह समझदार और निर्बल है, - महान द्रष्टा कहते हैं।

[901] मेरे हृदय के इरादे को जानने वाले, भगवान (बुद्ध),
जिनकी दुनिया में कोई समानता नहीं है, वे
रहस्यमयी शक्ति से मन द्वारा निर्मित शरीर के साथ मेरे पास आए। [9]

[902] [328] मुझे, जब मैं और सत्य सीखना चाहता था, तो
जागृत व्यक्ति, बुद्ध ने [वह अंतिम सत्य] प्रकट किया;
जिसने जुनून से मुक्ति में आनंद लिया [10],
उसने मुझे जुनून से मुक्ति सिखाई।

[903] और मैं, जिसने धन्य मार्ग (धम्म) का निवास सुना,
केवल और हमेशा उसके नियम का पालन करने में प्रसन्न हूँ;
मैंने त्रिविध ज्ञान को अपना लिया है,
और बुद्ध के सभी विधानों का पालन किया है। [11]

[904] मैं पचास वर्षों से बिस्तर पर कभी ठीक से आराम नहीं कर पाया, [12] आलस्य पर विजय प्राप्त किए हुए पच्चीस वर्ष हो गए हैं।

[905] जब वह लेटा था, तब उसकी साँसें रुकी हुई थीं;
मन ध्यान की स्थिर अवस्था में था,

हर लालसा से मुक्त विचार के साथ,
निरंतर शांति पर स्थिर था:
इस प्रकार वह मनुष्य चला गया जिसने देखा।

[906] मन अविचलित रखते हुए, जैसे ही वे आए,
उन्होंने शांति से मृत्यु की पीड़ा सहन की;
उनके हृदय पर अंतिम मुक्ति छा गई: बुझी हुई लौ का निर्वाण। [13]

[907] अंतिम चीजें जो अब हम उनके बारे में देखते हैं, -
स्पर्श और ऋषि की अन्य इंद्रियां -
कोई अन्य सचेत अवस्था [14] नहीं आएगी,
जब एक पूर्णतः जागृत व्यक्ति का निधन हो गया।

अब, एक आत्मा, [15] जो पिछले जन्म में उसकी परिचारिका थी, थेरा को बूढ़ा और कमजोर देखकर, [329] उसके प्रति अपने पूर्व प्रेम के कारण आई और उससे देवताओं के बीच पुनर्जन्म लेने की आकांक्षा रखने के लिए कहा। लेकिन उसने उत्तर दिया:

[908] नत्थि दानि पुनावासो देवकायमहि1 जालिनी,॥
विक्खिणो जातिसंसारो नत्थि दानी पुनभभावो॥ ॥

[908] देवताओं की संगति में रहते हुए , हे मोहक, [16]
फिर कभी मेरे पास नहीं आएगा। पुनर्जन्म का सारा नवीनीकरण नष्ट हो गया है। अब फिर से अस्तित्व में आने का कोई रास्ता नहीं है।

तब अन्य भिक्षु, देवता को न देखकर, यह सोचने लगे कि थेरा किससे बात कर रहे हैं। अपनी रहस्यमयी शक्ति दिखाने के लिए उन्होंने यह श्लोक कहा:

[909] यस्सा मुहुत्तेन सहस्सधा लोको सविदितो सबब्रह्मकप्पो,॥
वसि इधिगुने कटुपापते काले पस्सति देवता स भिक्खु। ॥ ॥

[909] जो एक पल में ही हज़ार तरीकों से
समस्त संसार का अवलोकन कर सकता है, वह ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) के स्वर्ग के योग्य है। [17] परन्तु यहाँ एक ऐसा भिक्षु है जो जादू की शक्ति में पारंगत है, जिसने देखा कि
हे देवी, किस समय [मनुष्य और देवता दोनों] मरते हैं और जन्म लेते हैं।

अब वह अपने पूर्व कर्मों का खुलासा करता है: -

[910] अन्नभरो शुद्ध असिṃ ददिद्दो घसाहारको,॥
समानाऽ पतिपदेसिऽ उपरिऽथाऽ यस्स्स्सनऽ॥ ॥

[911] सोमहि शाक्यकुले जातो अनुरुद्धो' ति माṃ विदु,॥
उपेतो नक्कागितेहि सम्मतअप्पबोधनो॥ ॥

[912] अथद्दससिṃ संबुद्धौ सत्थारौ अकुतोभयṃ,॥
तस्मिं चित्तं पसादेत्वा पब्बाजीं अनागारियां॥ ॥

[913] पुब्बेनिवासां जानामि यथा मे वुसितां शुद्ध,॥
तावतिसेसु देवेसु अट्ठासिऽ सतजतिया.॥ ॥

[914] सत्तकखट्टुm मनुसिन्दो अहाm राजजमकारयिm,॥
चतुरंतो विजितवी जंबुसंदस्सा इस्सरो,॥
अदंडेन असत्थेन धम्मेन अनुसासायिं॥ ॥

[915] इतो सत्त ततो सत्त सःसारनि चतुद्दसा,॥
निवासमभिजानिस्सां देवलोके ठितो तदा॥ ॥

[916] पंचांगिके समाधिमहि संते एकोडिभाविते,॥
पटिपाससद्धिलद्धमहि दिब्बाचक्खु विसुज्ज मे.॥ ॥

[917] कटुपपताऽ जाणवी सत्तनाऽ अगतिm गतिm,॥
इत्थभवननाथभवं झाणे पंचांगिके ठितो॥ ॥

[918] पैरिसिणो माया सत्था कतां बुद्धस्स ससाणो,॥
ओहितो गरुको भरो भवनेति समुहता॥ ॥

[919] वज्जिणौ वेफवगामे अहं जीवितसंखया,॥
हेतथतो वेफगुंबस्मिm निबबयिस्सं अनासावो' ति.॥ ॥

[910] देखो! मैं बहुत पहले अन्नाभार था, [18] एक गरीब आदमी जो अपनी रोजी-रोटी के लिए काम करता था, तब मैंने उपरिट्ठ को, पवित्र यश वाले
संन्यासी को , विनम्र भेंट दी।

[911] [330] तब मेरा जन्म साकियान वंश में हुआ,
जैसा कि अनुरुद्ध को ज्ञात है; नृत्य और गीत द्वारा
उपस्थित होकर, और झांझ की झंकार से जागृत हुआ। [19]

[912] परन्तु मैंने बुद्ध को देखा, प्रबुद्ध व्यक्ति,
भगवान (बुद्ध), जिनके लिए कहीं से भी भय नहीं आता।
उनमें मेरा हृदय विश्वास कर बैठा और शांत हो गया,
और मैंने घर छोड़कर बेघर जीवन की खोज की।

[913] मैं अपने पूर्व जन्मों को जानता हूँ, और जानता हूँ कि
बीते वर्षों में मैं कहाँ और कैसे रहता था; देवताओं में
मैं सक्का (देवताओं के राजा) के पद का तैंतीसवाँ हिस्सा था।

[914] सात बार मैंने मनुष्यों के राजा के रूप में अपना शासन किया,
पृथ्वी के छोर से छोर तक स्वामी,
जंबुदीपा का विजेता, [20] बिना किसी बल या हथियार के मैंने अधिकार से शासन किया। [21]

[915] वहाँ से सात, और जीवन के अन्य सात कालखंड,
यहाँ तक कि चौदह पूर्व जन्मों को भी मैं पहचानता हूँ,
तब भी जब देवताओं के संसार में पुनर्जन्म हुआ।

[916] पांच गुना केंद्रित परमानंद में, [22] मेरा हृदय शांति और एकता में ऊपर उठता है।
मैंने शांत संयम को अपना बना लिया है;
एक देवता के रूप में मेरी दृष्टि स्पष्ट हो गई है।

[917] मैं अन्य जीवन के नियति को जानता हूँ: -
जहाँ से प्राणी आते हैं और जहाँ जाते हैं;
यहाँ नीचे का जीवन, या जीवन का अन्य स्थान -
दृढ़ और तल्लीन, पंचगुणी ध्यान में डूबा हुआ।

[918] भगवान (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है, [23] और बुद्ध के सभी विधान पूरे हो चुके हैं। [331] मैंने अपने ऊपर का भारी बोझ नीचे रख दिया है,
मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं बचा है।

[919] वेलुवा में, [24] वज्जियन भूमि में ऐसा होगा
कि मेरे लिए जीवन अपने अंतिम चरण तक पहुँच जाएगा;
और मैं उस दिन बाँस की झाड़ियों की छाया में,
स्वस्थ और निर्बल होकर, पूरी तरह से विदा हो जाऊँगा।

[1] पाठ और किंवदंती दोनों में उनके पिछले जन्म में, कस्सपा बुद्ध के समय में, उनके नामों में से एक का उल्लेख है (श्लोक 910)। ब्र. पांडुलिपि में पिता के नाम की वर्तनी गलत है (अंगुत्तरा निकया टीका में सही रूप से दिया गया है) अमित्तोधन। आगे देखें, विनय ग्रंथ, iii. 224 ff. नर्तकियों आदि (नाटक) के बारे में, देखें iremain., iii. 225, n. 1.

[2] आठ विचार (अंग. निक., iv. 228 ff. जहाँ संवाद दिया गया है) यह है कि धम्म उसके लिए है जो - (1) कम इच्छाएँ रखता है; (2) संतुष्ट, शांत, (8) बहुत एकांतप्रिय, (4) परिश्रमी, (5) अंतर्मुखी, (6) एकाग्र, और (7) बुद्धिमान; (8) जुनून से मुक्ति में आनंदित।

अंग. निक., ii. 26 में आर्यों की वंश परंपरा (अरियावांसपटीपदा) का मार्ग भिक्षु की 'चार स्थितियों' या आवश्यकताओं में से तीन - वस्त्र, भोजन और आश्रय - तथा व्यायाम या अध्ययन तथा चयनात्मक या छंटाई संस्कृति (भावना, पाहन) से संतुष्ट रहना है।

[3] एक अनोखा रूपांतर: अभिन्यापतिअम्बिदापरिवरा अरहन्तता।

[4] एंग. निक., i. 23. तुलना करें ऊपर, पृ. 32, n. 2; संवाद, i. 91.

[5] श्लोक 455 देखें ।

[6] शाब्दिक अर्थ, अप्रतिबद्ध, अयुग्मित (देखें श्लोक 54, 541)। टीका इसे नित्तन्हो, यानी लालसा रहित, के रूप में व्याख्यायित करती है। देखें बौद्ध मनोविज्ञान, पृष्ठ 278; सुत्त निपीता, श्लोक 740; और सय्य निचिता, अध्याय 25, जहाँ विश्वास 'साथी' है। जैसा कि अनुरुद्ध, मज्झिमा निकाय में, एक स्नेही, वफादार साथी भिक्षु (सम्मोहन) का प्रतीक है (सुत्त 82, 128), वह एकविहारिया (सीसीXXXIV) जैसे संन्यासी का प्रतीक नहीं हो सकता । श्लोक 155 भी देखें।

[7] पहला धुतंगा. तुलना करें . सी.सी.एल.आई.वी., श्लोक 844.

[8] उद्धातो, अक्सर, जैसा कि यहाँ है, संतुलन की कमी के साथ समानार्थी बनाया जाता है, जैसे कि हमारे 'सूजे हुए सिर' में।

[9] श्लोक 901-903 अंगुत्तरा निक., चतुर्थ 235 में हैं , जो संदर्भित पाठ का समापन करते हैं। 'मानो मन से बना हो... इस शरीर को इस मन के समान होने दो: इस प्रकार इच्छा-स्थिरीकरण की प्रक्रिया द्वारा इद्धि' (टीका)। तुलना करें संकलन, पृष्ठ 61, अधिष्ठानिद्धि। अंगुत्तरा चक्र (i. 23) श्लोक 901-903 उद्धृत करता है।

[10] पापांका, एक शब्द जिसे यहाँ केवल 'दस किलेसा (दुःख की जड़ें), वासना,' आदि के रूप में व्याख्यायित किया गया है। देखें पृष्ठ 343, n. 4, और बुड.साइ., पृष्ठ 327 f.

[11] तुलना करें श्लोक 561 और बहनें, श्लोक 187, 194, 202.

[12] श्लोक 856 देखें।

[13] अन्यत्र श्लोकों का श्रेय बुद्ध के परिनिर्वाण के समय अनुरुद्ध को दिया जाता है (संवाद, द्वितीय 176; अवदाना, 100)। दो संस्करणों पर (संवादों में, पंक्ति 4, है: ... यन कालम अकारी मुनि, 'द्रष्टा मर गया'), सीएफ। ओल्डेनबर्ग की चर्चा, 'स्टूडियन ज़ूर गेस्चिच्टे डेस बुद्धिस्टिसचेन कानोन,' नचरिचेन डेर विसेनशाफ्टन ज़ू गोटिंगेन, 1912. पी. 168 फं.

[14] धम्मा.

[15] देवता.

[16] टीका के अनुसार, देवी को संबोधित। साम. निक., i. 200 में, जहाँ देवी के छंद दिए गए हैं, जालिनी (मोहक, फँसाने वाली) को उनका नाम बताया गया है। हालाँकि, नीचे, श्लोक (1181) देखें।

[17] टीका में sa Brahmakappo को saha -Brṅ पढ़ा गया है, जैसा कि अक्सर sa-Brahmako आदि शब्दों में प्रयोग होता है। लेकिन यह उपरोक्त व्याख्या से अधिक जटिल प्रतीत होता है, जिसमें अधिक शाब्दिक अनुवाद के साथ मैं डॉ. न्यूमैन का अनुसरण करता हूँ। टीका में devatā का संबोधन में अर्थ नहीं बताया गया है , अन्यथा श्लोक का सही अर्थ नहीं निकलता। Sa bhikkhu(भिक्षु) को मैं eso bhikkhu मानता हूँ। श्लोक 1181, n. 1 देखें।

[18] यह प्रसंग 'हमारे बुद्ध' के समय से पहले उनके जीवन की गद्य कथा में दर्ज नवीनतम घटना है। अन्नभार, 'भोजनवाहक' (देखें अंग. iii. 122), नाम निस्संदेह कथा के अनुरूप गढ़ा गया है या इसके विपरीत। अन्नभार बनारस के एक पार्षद सुमना के लिए काम करता है, जिसने यह सुनकर कि उसने मौन बुद्ध को भोजन कराने के लिए भोजन त्याग दिया था, उसे पुरस्कृत किया और उसे व्यापार में स्थापित किया।

[19] पबोधनो.

[20] श्लोक 822 देखें।

[21] देवताओं में सात, मनुष्यों में सात (टीका)। तथाकथित 'दिव्य आँख' या दृष्टि का वर्णन श्लोक 916, 917 में किया गया है।

[22] समाधि - अर्थात्, चौथे ध्यान की - उनकी अभिज्ञा शक्ति पर आधारित (टीका)। टीका के अनुसार, 'पंचगुण' गुण चार अवस्थाओं का समूह नहीं है, जिसमें प्रथम को विभाजित किया गया है (देखें बुद्ध मनोविज्ञान, पृष्ठ 52), बल्कि कुछ इसी तरह के गुणों की सूची है - (1) उत्साह; (2) आनंद; (8) चेतो, इच्छा या बुद्धि; (4) प्रकाश; (5) एक प्रतिनिधि छवि। पंचगुण ध्यान (917) को इस प्रकार परिभाषित नहीं किया गया है। मुझे अभी तक यह वर्गीकरण कहीं और नहीं मिला है।

[23] = श्लोक 891, इत्यादि।

[24] टीका के अनुसार यह वेसाली के पास हत्थिगामा था।

BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी

अनुराधा

अनुराधा राजकुमार सिद्धार्थ के चचेरे भाइयों में से एक थे। उनके पिता, जिनका नाम अमितोदन था, राजा सुद्धोदन के छोटे भाई थे। अमितोदन की दो पत्नियाँ थीं। अनुराधा, उनके भाई महानामा और उनकी बहन रोहिणी, एक पत्नी से उत्पन्न हुए थे। आनंद, जो बाद में बुद्ध के निजी सेवक बने, दूसरी पत्नी के पुत्र थे। इस प्रकार आनंद अनुराधा के सौतेले भाई थे।

अनुराधा का पालन-पोषण अत्यंत विलासिता में हुआ था। उनकी माँ, जो उनसे बहुत प्यार करती थीं, उनकी हर इच्छा पूरी करती थीं। निम्नलिखित कहानी उनकी विलासिता का उदाहरण है। एक दिन अनुराधा अपने दोस्तों के साथ कंचे खेल रहे थे और उन्होंने अपनी जीत पर शर्त लगा दी। उन्होंने वादा किया कि जो भी उन्हें कंचे में हराएगा, उसे ताज़े केक मिलेंगे। लेकिन किस्मत उनके साथ नहीं थी। बार-बार वे अपने दोस्तों से हारते रहे। हर बार वे अपनी माँ को संदेश भेजकर केक मांगते, जिसे उनकी माँ बड़े प्यार से भेज देती थीं। अंत में संदेश आया कि केक नहीं है। अनुराधा, जिन्हें हमेशा सब कुछ मिलता था, ने सोचा कि यह कोई नया प्रकार का केक है और उन्होंने अपनी माँ को संदेश भेजकर कहा कि वे केक न होने पर भी उनका कर्ज चुका दें।

जब शाक्य राजकुमारों ने बुद्ध का अनुसरण करने के लिए अपने राजवंश को त्यागना शुरू किया, तो राजा अमितोदन के बड़े पुत्र महानामा ने महसूस किया कि या तो अनुराद्ध को या उन्हें अपने महान चचेरे भाई के पदचिन्हों पर चलना चाहिए। उन्होंने अपने छोटे भाई को बुलाया और पूछा कि क्या वह बुद्ध के अधीन दीक्षा लेना चाहेंगे। हालांकि, अनुराद्ध इंद्रिय सुखों के प्रति अत्यधिक आसक्त थे। वे नृत्य, संगीत और विलासिता के प्रति अपने प्रेम के लिए प्रसिद्ध थे। अनुराद्ध को लगा कि विलासिता में पले-बढ़े व्यक्ति के लिए बेघर जीवन बहुत कठिन होगा। लेकिन महानामा ने अपने भाई को एक कुलीन व्यक्ति के रूप में अपने कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को निभाते समय आने वाली कठिनाइयों का वर्णन करके उन्हें समझाया। जब अनुराद्ध को यह अहसास हुआ कि यदि वे अपने बड़े भाई का स्थान लेंगे तो उन्हें अनेक जिम्मेदारियाँ निभानी होंगी और संसार के अंतहीन चक्रों में उलझकर कष्ट भोगना होगा, तो उन्होंने विलासितापूर्ण जीवन त्यागने का निश्चय किया। वे अपनी माता के पास गए और शाक्य ऋषि के अधीन दीक्षा लेने की अनुमति मांगी।

उनकी माता, जो अपने दोनों पुत्रों को अपने पास रखना चाहती थीं, ने इनकार कर दिया। यह सोचकर कि सिंहासन का उत्तराधिकारी उनका मित्र कभी भी अपनी राजसी विरासत नहीं छोड़ेगा, उन्होंने अनुराधा को बताया कि यदि उनका मित्र भद्दिया उनके साथ जाए तो वह जा सकता है। अनुराधा ने अपने मित्र से संघ में शामिल होने के लिए बात की। भद्दिया ने इनकार कर दिया, क्योंकि भावी राजा बनने का गौरव उन्हें अधिक आकर्षित कर रहा था। अनुराधा ने हार नहीं मानी। धीरे-धीरे उन्होंने अपने मित्र के प्रतिरोध को तोड़ दिया। पहले भद्दिया सात वर्षों में संघ में शामिल होने के लिए सहमत हुए। और अधिक आग्रह और विनती करने पर, भद्दिया ने समय कम कर दिया और अंततः सात दिनों में जाने के लिए सहमत हो गए क्योंकि उन्हें अपने मामलों को निपटाने और वायसराय के पद का उत्तराधिकार अपने उत्तराधिकारी को सौंपने में इतना समय लगेगा। उनके इस निर्णय के बारे में सुनकर अनुराधा के सौतेले भाई आनंद, उनके चचेरे भाई देवदत्त और दो अन्य शाक्य राजकुमार, किंबिला और भागू ने भी उनके साथ शामिल होने का निर्णय लिया। राजकुमार, दरबारी नाई उपाली के साथ, आनंद उद्यानों में जाने के बहाने महल से निकल गए।

कुछ दूर यात्रा करने के बाद राजकुमारों ने अपने राजसी आभूषण और कीमती वस्त्र उपाली को सौंप दिए और स्वयं तपस्वियों के साधारण वस्त्र धारण कर लिए। फिर उन्होंने उपाली को यह संदेश लेकर महल लौटने का निर्देश दिया कि शाक्य राजकुमार महान शाक्य ऋषि बुद्ध के मार्गदर्शन में भिक्षुओं के संघ में शामिल होने के लिए निकल गए हैं। हालांकि, उपाली को डर था कि शाक्य, जो एक अत्यंत क्रूर योद्धा जाति थे, उस पर विश्वास नहीं करेंगे। उसे लगा कि उसकी हत्या कर दी जाएगी, क्योंकि शाक्य सोचेंगे कि उपाली ने ही युवा राजकुमारों को लूटा और मार डाला है। उसने बुद्ध के मार्गदर्शन में दीक्षा लेने के लिए उनके साथ जाने की अनुमति मांगी। राजकुमारों ने सहमति दे दी।

वे सब मिलकर बुद्ध के निवास स्थान पर पहुँचे और दीक्षा लेने का अनुरोध किया। शाक्य राजकुमार, जो अपने अभिमान और घमंड के लिए प्रसिद्ध थे, ने बुद्ध से अनुरोध किया कि वे उपाली को, जो लंबे समय से उनकी सेवा कर रहा था, पहले दीक्षा दें, ताकि वह उनसे वरिष्ठ हो जाए। इस प्रकार उन्हें उपाली को प्रणाम और सम्मान करना पड़ता, जिससे उनका शाक्य अभिमान कम हो जाता। बुद्ध ने उनकी विनती मान ली।

कुछ ही समय में अनुराधा ने दिव्य दृष्टि प्राप्त कर ली — भौतिक आँख की पहुँच से परे देखने की क्षमता। वे एक हजार विश्व प्रणालियों का अवलोकन कर सकते थे (बुद्ध दस हजार विश्व प्रणालियों को देख सकते थे और उनका वर्णन भी कर चुके हैं)। इन विश्व प्रणालियों की तुलना आधुनिक आकाशगंगाओं से की जा सकती है। बुद्ध ने कहा था कि प्रत्येक विश्व प्रणाली में अस्तित्व के 31 तल होते हैं जिनमें 31 विभिन्न जीवन रूप विद्यमान होते हैं, और उन्होंने ऐसी दस हजार विश्व प्रणालियों का अवलोकन किया था। हालांकि, अनुराधा ने अपनी दिव्य दृष्टि को केवल एक हजार विश्व प्रणालियों को देखने की क्षमता तक ही विकसित किया। उनमें दूसरों के पिछले जन्मों को देखने और मृत्यु के बाद उनके पुनर्जन्म के स्थान को जानने की क्षमता भी थी।

दिव्य दृष्टि का विकास सांसारिक प्रकृति का है। इसे आध्यात्मिक विकास के चार चरणों - सोतापन्न, सकदागामी, अनागामी या अरहंतत्व - में से किसी को भी प्राप्त किए बिना विकसित किया जा सकता है। वास्तव में, अनुराद्ध ने संतत्व के प्रथम चरण को प्राप्त करने से पहले ही इसे प्राप्त कर लिया था। इस प्रकार, इसे एक अमुक्त सांसारिक व्यक्ति भी प्राप्त कर सकता है। दिव्य दृष्टि का विकास वह व्यक्ति कर सकता है जो मानसिक एकाग्रता (झान) के चौथे चरण को प्राप्त कर चुका हो और विशुद्धिमग्ग (शुद्धिकरण का मार्ग) में वर्णित अनुसार इस ध्यान को आगे बढ़ाता हो। अनुराद्ध अक्सर अपने छात्रों को यह कौशल सिखाते थे। थेरागथा में उनके श्लोक उनके अनुभव को वर्णित करते हैं।

इस उपलब्धि के बावजूद अनुराधा को अरहंत पद प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। हालांकि, उनके आध्यात्मिक विकास ने उन्हें किंबिला और नंदिया नामक दो अन्य भिक्षुओं के साथ सद्भावपूर्वक जीवन जीने में सहायता की। ये तीनों पूर्वी बांस उद्यान में एकांतवास में रहते थे और प्रत्येक पांचवीं रात को धम्म पर चर्चा करने के लिए मिलते थे। इन भिक्षुओं के बीच का सद्भाव प्रसिद्ध हो गया। एक बार बुद्ध ने अनुराधा से पूछा कि वे अपने दोनों साथियों के साथ शांति और सद्भाव से कैसे रहते हैं। अनुराधा ने उत्तर दिया, "कर्म, वचन और विचार से मैं सार्वजनिक और निजी मन से इन पूज्य भिक्षुओं के प्रति प्रेम और दया भाव रखता हूँ। मैं अपनी इच्छाओं को त्यागकर केवल वही क्यों न करूँ जो वे चाहते हैं? हे पूज्यवर, हम शरीर से भिन्न हैं, परन्तु मन से एक हैं।" बुद्ध ने उनके सद्भाव की प्रशंसा की और उन्हें संघ की एकता को मजबूत करने के लिए अन्य भिक्षुओं के लिए एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया।

तब बुद्ध ने अनुराद्ध से मोक्ष प्राप्त करने में आ रही कठिनाइयों के बारे में प्रश्न किया। अनुराद्ध ने बताया कि वे एकाग्रता की एक उच्चतर अवस्था तक पहुँच गए थे जिसमें उन्होंने एक आंतरिक प्रकाश और दीप्ति का अनुभव किया, लेकिन वह प्रकाश और दीप्ति बहुत शीघ्र ही लुप्त हो गई और उन्हें इसका कारण समझ नहीं आया।

अपने स्वयं के अनुभव से वर्णन करते हुए बुद्ध ने ग्यारह दोषों या बाधाओं की व्याख्या की और उनसे निपटने के तरीके बताए। अनुराधा ने बुद्ध की सलाह का पालन किया और ध्यान की परिष्कृत अवस्था में और अधिक विकास किया। यद्यपि वे अरहंत पद तक नहीं पहुँचे।

एक दिन अनुराधा सारिपुत्त के पास गए और बोले, "भाई सारिपुत्त, दिव्य दृष्टि से मैं हजार प्रकार की विश्व प्रणालियों को देख सकता हूँ। मेरी ऊर्जा प्रबल है, मेरा ध्यान सजग और स्पष्ट है, मेरा शरीर एकाग्र और एकीकृत है। फिर भी मेरा मन अशुद्धियों से मुक्त नहीं हो पा रहा है।"

सारिपुत्त ने उत्तर दिया, "हे अनुराद्ध भाई, जब तुम यह सोचते हो कि तुम्हारी दिव्य दृष्टि से तुम हज़ार प्रकार की विश्व व्यवस्थाओं को देख सकते हो, तो यह अहंकार है। जब तुम अपनी अथक ऊर्जा, सजगता, शांत शरीर और एकाग्र मन के बारे में सोचते हो, तो यह बेचैनी है। जब तुम सोचते हो कि तुम्हारा मन अभी भी दोषों से मुक्त नहीं हुआ है, तो यह तुम्हारे भीतर का संशय है। इन तीनों बातों को त्याग दो। इन पर ध्यान मत दो। इसके बजाय, अपने मन को अमरता की ओर लगाओ।" अनुराद्ध फिर एकांत में चले गए और इन बाधाओं को दूर करने के लिए पूरी लगन से अपना मन लगाया।

बुद्ध ने यह जानकर कि अनुराद्ध ज्ञान प्राप्ति के निकट हैं, परन्तु उन्हें और अधिक शिक्षा की आवश्यकता है, उनके समक्ष मन से निर्मित एक रूप में प्रकट हुए। बुद्ध द्वारा अनुराद्ध को दिए गए अविभाजित ज्ञान ने उन्हें पूर्णता प्राप्त करने में सहायता की। सिद्धि प्राप्त करने के एक घंटे बाद उन्होंने थेरागाथा श्लोकों का पाठ किया।

अनुराधा द्वारा दिव्य दृष्टि के विकास के कारण बुद्ध ने उन्हें दिव्य दृष्टि विकसित करने वाले भिक्षुओं में अग्रणी घोषित किया। अनुराधा ने एक लाख विश्व चक्र पूर्व, पद्ममुत्तरा बुद्ध के समय, दिव्य दृष्टि के विकास में अग्रणी होने की आकांक्षा रखी थी। पद्ममुत्तरा बुद्ध द्वारा अपने एक भिक्षु को दिव्य दृष्टि में अग्रणी नियुक्त करते देख और उस भिक्षु के चरित्र और गुणों से प्रेरित होकर, अनुराधा ने निश्चय किया कि वे भविष्य के किसी बुद्ध के अधीन ऐसा पद प्राप्त करना चाहेंगे। इसी विचार से उन्होंने अनेक पुण्य कर्म किए और भविष्य के किसी बुद्ध के अधीन दिव्य दृष्टि में अग्रणी होने की आकांक्षा रखी। पद्ममुत्तरा बुद्ध ने अनुराधा की आकांक्षा पूर्ण होते देख घोषणा की कि गौतम बुद्ध के समय अनुराधा दिव्य दृष्टि में अग्रणी होंगे।

पद्ममुत्तरा बुद्ध के देहांत के बाद, अनुराधा ने भिक्षु से संपर्क किया और उनसे पूछा कि उन्हें ऐसा पद प्राप्त करने के लिए कौन से पुण्य कर्म करने चाहिए। भिक्षु ने उन्हें पद्ममुत्तरा बुद्ध के अवशेषों वाले मंदिर में अनेक दीपक जलाने और यह प्रार्थना करने का निर्देश दिया कि जैसे ये दीपक अंधकार को दूर करके आसपास के क्षेत्र में प्रकाश फैलाते हैं ताकि अन्य लोग देख सकें, वैसे ही उन्हें अनेक विश्व प्रणालियों और दिव्य प्राणियों को देखने की दिव्य दृष्टि प्राप्त हो। थेरागाथा में कहा गया है कि कस्सपा बुद्ध के समय, अनुराधा ने कस्सपा बुद्ध की समाधि पर घी के दीपक जलाए और अपनी प्रार्थना को नवीकृत किया। अनुराधा द्वारा किए गए इन और अनेक अन्य पुण्य कर्मों के कारण गौतम बुद्ध के समय उनकी प्रार्थना पूर्ण हुई।

जातक कथाओं (बुद्ध के जन्म वृत्तांतों) में अनुरुद्ध के तेईस पूर्व जन्मों का वर्णन मिलता है। इनमें से पंद्रह जन्म स्वर्गलोक में हुए, जिनमें से तेरह जन्म तावतिंसा स्वर्ग के प्रमुख सक्का के रूप में थे। सक्का रूप में अनुरुद्ध ने ही एक वृद्ध ब्राह्मण का वेश धारण करके वेस्सन्तारा जातक में बोधिसत्व की परीक्षा ली और उनकी पत्नी, राजकुमारी मद्दी को मांगा। सक्का रूप में अनुरुद्ध ने दो बार बोधिसत्व का जीवन संकट में रहते हुए बचाया। गुट्टिला जातक में अनुरुद्ध ने ही बोधिसत्व को स्वर्ग और नरक लोक का दर्शन कराया। सात सांसारिक जन्मों में वे अक्सर तपस्वी रहे। केवल एक जन्म कथा में पशु (लकड़ी का कबूतर) के रूप में जन्म का वर्णन है। इन कथाओं में अनुरुद्ध के दृढ़ चरित्र, उनकी निष्ठा और दूसरों के प्रति उनकी करुणा बार-बार प्रकट होती है। अनेक जन्मों में उन्होंने बोधिसत्व की सहायता की थी। थेरागाथा में उनके कुछ पूर्व जन्मों का भी वर्णन है। अनुराधा, जो अपने पिछले जन्मों को देख सकते थे, ने उनमें से कुछ का वर्णन थेरागाथा में किया है।

अनुरुद्ध बुद्ध से अधिक समय तक जीवित रहे और बुद्ध के अंतिम संस्कार में देवताओं की इच्छाओं की पूर्ति सुनिश्चित करने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। बुद्ध के निधन पर महा ब्रह्मा (ब्राह्मण सृष्टिकर्ता देवता) और सक्का (तावतिंसा स्वर्ग के शासक) ने शोक संतप्त ब्रह्माओं और देवताओं को सांत्वना देने के लिए अनित्यता के नियम का आह्वान करते हुए श्लोकों द्वारा बुद्ध का सम्मान किया। तीसरे वक्ता अनुरुद्ध थे, जिन्होंने निम्नलिखित शब्दों से शोक संतप्तों को सांत्वना दी:

"श्वास की कोई गति नहीं, परन्तु दृढ़ हृदय से,

इच्छा रहित और शांत भाव से ऋषि अपने अंत की ओर अग्रसर होते हैं।

किसी भी पीड़ादायक भावना से हृदय अविचलित रहते हुए,

जैसे कोई लौ बुझ जाती है, वैसे ही उनका मन मुक्त हो गया।

अनुरुद्ध ने प्रथम संघ सभा से पहले आनंद को अरहंत पद प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित और सहायता भी की। प्रथम सभा में अनुरुद्ध अंगुत्तरा निकाय के प्रभारी थे। उनका निधन वज्जियान भूमि के वेलुवा में हुआ।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(257):परापरिया

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (257) ------>>>> अगला

अध्याय सोलह.
बीस श्लोक
257. पारापरिया
उनकी कहानी ऊपर दर्ज है [1] अब ये श्लोक उन्होंने भगवान (बुद्ध) के जीवनकाल में कहे थे, जब वे स्वयं अभी तक अरहंत (प्रबुद्ध) नहीं हुए थे, और ये छह शक्तियों (पाँच इंद्रियों और मन) के शासन से संबंधित थे। परन्तु ये श्लोक उन्होंने भगवान (बुद्ध) के देहान्तरण के बाद और अपने स्वयं के देहान्तरण के निकट होने पर कहे थे। और उनमें उन्होंने विकृत मार्ग के अंतर्गत भिक्षुओं के भविष्य की घोषणा की थी।

(संकलनकर्ताओं द्वारा पहला श्लोक अब रखा गया।)

[920] Samaṇassa ahu cintā pupphitamhi mahāvane,‖
Ekaggassa nisinnassa pavivattassa jhāyino.‖ ‖

[921] अनंता लोकानाथमहि तिथंते पुरिसुत्तमे,॥
इरीयं असि भक्खुनं अनंत दानी डिस्सति॥ ॥

[922] सीतावतपरित्तनं हिरिकोपिनाचदानं,॥
मत्तत्थियं अभान्जिंसु संतुत्था इतरितरे ॥ ॥

[923] पणितां यदि वा लुकहाअ अप्पां वा यदि वा बहुं,॥
यापनत्थाऽ अभुञ्जिऽसु अगिद्ध नाधिमुच्चितः॥ ॥

[924] जीवितानां परिक्खरे भेसज्जे अथा पकाए,॥
न बाधं उस्सुका आसुऽ यथा ते आसवक्खये॥ ॥

[925] अरण्ये रुक्खमुलेसु कंदारसु गुहासु च,॥
विवेकमनुब्रुहेन्ता विहंसु तप्परायण॥ ॥

[926] निका निविथा सुभारा मुदु अत्थद्धमानसा,॥
अभ्यसेका अमुखरा अट्ठचिन्तावसानुगा॥ ॥

[927] ततो पसादिकां असि गतं भुत्तां निसेवितां,॥
सिनिधा तेलधाराव अहोसि इरियापथो॥ ॥

[928] सब्बासवपरिक्खिना महाझायि महहिता,॥
निब्बुता दानी ते थेरा परित्ता दानी तदिसा॥ ॥

[929] कुसलानां च धम्मनां पणन्या च परिक्खया,॥
सब्बाकारवरूपेतं लुज्जते जिनसासनं॥ ॥

[930] पपकानां च धम्मनां किलेसाणं च यो उतु,॥
उपथिता विवेकाय ये च सद्धम्मसेसाका॥ ॥

[931] ते किलेसा पवन्दहंता अविसन्ति बहुऽ जनाऽ,॥
किंन्ति मन्ने बलेहि उम्मतेहि वा रक्खसा॥ ॥

[932] किलेसाभिभूत ते तेन तेन विधाविता,॥
नारा किलेसवत्थुसु ससाङ्गामेव घोसिते.॥ ॥

[933] परिच्चजित्वा सद्धम्मं अण्णामन्नेहि भण्डारे,॥
दिथिगतानी अन्वेंटा इदां सेय्योति रणनारे ॥॥ ॥

[934] धनौ च पुत्तṃ भारियौ च चडयित्वना निगता,॥
कटच्चुभिक्खहेतु अकिक्कानि निसेवारे॥ ॥

[935] उदारवदेहक भुत्वा सयन्तुत्तनसेयका,॥
कथा वन्धेन्ति पतिबुद्धा या कथा सत्थुगृहिता॥ ॥

[936] सब्बाकारुकासिप्पनि चित्तिकत्वन सिक्खरे,॥
अवूपासंता अज्झत्तं समान्नत्थो ति अच्छति॥ ॥

[937] मटिकाṃ तेलाṃ क्यूनाṃ सीए उदकासनभोजन,॥
गिहिनां उपानामेंटि अकाकंखंता बहुत्तारं॥ ॥

[938] दन्तपोनाṃ कपित्थाṃ च पुप्फाṃ खादनियानि सीए,॥
पिण्डपते च सम्पन्ने अम्बे अमलकानि च॥ ॥

[939] भेसज्जेसु यथा वेज्जा किक्काकिस्से यथा गिहि,॥
गणिकाव विभूषायं इस्सरे खट्टिय यथा ॥॥ ॥

[940] नेकाटिका मन्चानिका कुत्साक्खि अपातुका,॥
बहुहि परिकप्पेहि अमिसान् परिभुञ्जरे ॥॥ ॥

[941] लेसकाप्पे परियाये परिकाप्पेनुधविता,॥
जीविकत्था उपयेन संखन्दन्ति बहुऽ धनौ ॥॥

[942] उपाथपेंती परिसां कम्मातो नो सीए धम्मतो,॥
धम्मं परेसां देसेन्ति लभतो नो च अत्थतो॥॥

[943] संघलाभस्सा भंन्ति संघतो परिबाहिरा,॥
परलाभूपजीवंता अहिरिका न लज्जारे॥॥

[944] नानुयुत्ता तथा एके मुंडा संघातिपरुता,॥
संभवानं येविच्छन्ति लाभसक्करामुच्चितः॥॥

[945] एवं नाणप्पयतामहि न दानि सुकारं तथा,॥
अफुसितां व फुनितुं फुनासितां नानुरक्खितुं॥॥

[946] यथा कनकठनमहि कैरेया अनुपाहनो,॥
सतिउ उपत्थपेत्वना एवं खेल मुनि देखभाल॥॥

[947] सरित्वा पुब्बके योगी तेसाअ वत्तमनुस्सरm,॥
काकिनचा'पि पचिमो कालो फुसेय अमातां पदो ॥॥

[948] इदां वत्वा सालवने समणो भवितिन्द्रियो,॥
ब्राह्मणो परिनिब्बायि इसि खिणपुणभवो' ति.॥॥

[920] ये वे विचार हैं जो एक भिक्षु के मन में आए, जो
विशाल वन के [2] सुंदर फूलों के नीचे,
एकांत और एकांत में, गहन ध्यान में बैठा था: -

[921] भिक्षुओं का आचरण कैसे बदल गया है?
जब से जगत के स्वामी (बुद्ध),
परम पुरुष, पृथ्वी पर निवास कर रहे थे!

[922] ठंडी हवाओं से बचाव के लिए कपड़े,
जो छिपाना चाहिए, बस उतना ही, इससे ज़्यादा नहीं, उन्होंने चाहा,
जो कुछ भी मिला, उसका उन्होंने संतोषपूर्वक आनंद लिया।

[923] चाहे भोजन उत्कृष्ट हो या घटिया,
चाहे वह बहुत हो या थोड़ा, उन्होंने
जीवन को आगे बढ़ाने के लिए, लालची सनक से मुक्त रहने के लिए, उसमें भाग लिया।

[924] जीवित प्राणियों के रूप में मनुष्यों के लिए आवश्यक चीजें,
और जीने के साधन के रूप में दवा भी: - इनके लिए
उन्होंने उतनी गंभीरता से परवाह नहीं की, जितनी कि उन्होंने
मन के जहर को नष्ट करने के बारे में की।

[925] घने जंगलों में पेड़ों की छाया में,
गुफाओं में, चट्टानों की गोद में,

वैराग्य का अध्ययन और विकास करते हुए: -
इस प्रकार वे जीवन व्यतीत करते थे, इसे अपनी तात्कालिक खोज बनाते हुए।

[926] विनम्र, नम्र स्वभाव और मितव्ययी स्वभाव का,
कोमल हृदय वाला, लचीला और बुद्धिमान,
शालीन व्यवहार वाला, आपत्तिजनक वाणी नहीं बोलने वाला,
दूसरों और स्वयं के भले के लिए तत्पर। [3]

[927] इसलिए उनका जीवन सुखद और प्यारा है: -
उनका आना-जाना, उनके आनंद, उनके काम, -
तेल की धारा की चिकनी रेखा की तरह।

[928] उनके लिए हर तरह का नशा (अपवित्रता/इच्छा) मर चुका था,
वे ध्यान में महान थे, भलाई के लिए महान थे:
अब वे बुजुर्ग पूरी तरह से गुजर चुके हैं।
आजकल उनके जैसे बहुत कम लोग बचे हैं।

[929] अच्छी परिस्थितियों और अंतर्दृष्टि की कमी से,
विजेता का शासन,
योजना और तरीके में जो कुछ भी सर्वश्रेष्ठ है, वह बिखर जाता है और घिस जाता है।

[930] परिस्थितियाँ बुरी हैं और युग भ्रष्ट है,
जिसमें वे भी, जिन्होंने जीवन के लिए विरक्त होकर
अच्छी शुरुआत की थी, और जो अभी भी उच्चतर चीजों की ओर
अग्रसर हो सकते हैं, - वे भी

[931] भ्रष्टाचार के तीव्र विकास से,
कई लोग बुराई की ओर प्रभावित होते हैं।
मुझे लगता है कि वे मूर्खों के विवेक से इस प्रकार खिलवाड़ करते हैं
जैसे शैतान पागलों के साथ खेलते हैं।

[932] भ्रष्टाचारों पर विजय प्राप्त करके, ऐसे लोग, -
इधर-उधर जो भ्रष्ट किया है उसका पीछा करते हुए,
जैसे कोई जोर से चिल्लाता है कि उसे क्या मिला है, - [4]

[933] वे आपस में झगड़ा करते हैं,
पवित्र मार्ग (धम्म) को पूरी तरह से त्याग देते हैं, और त्रुटियों के बाद
सोचते हैं: - देखो! यह बेहतर है, यह सबसे अच्छा है।

[934] जिन्होंने धन, पत्नी
और बच्चे से मुंह मोड़ लिया है और अपना घर छोड़ दिया है, अगर उन्हें
भीख भी मिल जाए तो वे अनुचित काम करेंगे।

[935] वे पेट भर खाते हैं, फिर
बिस्तर पर लेट जाते हैं, और जागने पर
उन मामलों पर चर्चा करते हैं जिनकी भगवान (बुद्ध) निंदा करते हैं। [5]

[936] वे सभी कलाओं और हस्तशिल्पों को उच्च दर्जा देते हैं

और अभ्यास करते हैं: - भिक्षुओं के कर्तव्य यही माने जाते हैं,
जबकि वे आंतरिक विजय से परहेज करते हैं।

[937] और स्नान के लिए मिट्टी, तेल और पाउडर,
पानी, भोजन और आवास वे
आम लोगों को देते हैं, इस आशा में कि उन्हें अधिक दान मिलेगा;

[938] हाँ, टूथस्टिक्स भी और कपिट्ठ फल, [6] चबाने के लिए फूलों की पंखुड़ियाँ, और पसंद की करी,
आम [7] और नारियल, मायरोबालन (आंवला)।

[939] दवा बेचने में वे डॉक्टरों की तरह होते हैं, [8] व्यापारिक मामलों में आम लोगों की तरह,
वेश्याओं की तरह वे अपना सामान दिखाते हैं,
और किसी कुलीन जमींदार की तरह स्वामी की तरह व्यवहार करते हैं।

[940] [334] वे मिलावटखोर, छल करने वाले और धोखेबाज हैं,
बेईमान हैं, अनेक षड्यंत्रों से
वे इस दुनिया की चीजों में खुलकर लिप्त होते हैं,

[941] धोखाधड़ी के लिए उपयुक्त तरीकों और विधियों का अनुसरण करते हुए, चालाकी से
जीविका की तलाश करते हुए [9]
वे धन का प्रचुर भंडार इकट्ठा करते हैं।

[942] व्यापार निपटाना वह अध्याय है जिसे
पवित्र मार्ग (धम्म) के हित में नहीं कहा जाता है।
और जब वे दूसरों को उपदेश देते हैं, तो
उनका उद्देश्य केवल लाभ होता है, न कि मनुष्यों का भला।

[943] भिक्षु संघ के दायरे से बाहर बहुत से लोग हैं
जो भिक्षु संघ के लाभों पर झगड़ा और कलह करते हैं:
वे असभ्य आत्माएं हैं,
दूसरों को दिए गए चढ़ावों पर जीने के लिए बिल्कुल भी लज्जित नहीं हैं।

[944] कुछ ऐसे भी हैं जिनमें धर्मपरायणता का अभाव है,
यद्यपि उनका सिर मुंडा हुआ है और वे पीले वस्त्र पहने हुए हैं, फिर भी
वे हर समय आदरणीय होने की लालसा रखते हैं,
और कृपा, दावत और उपहारों की लालसा करते हैं।

[945] इस प्रकार जब अब इतना कुछ खो गया है,
तो यह उतना आसान नहीं है जितना पहले था,
न तो अपात्र को छूना और जीतना,
न ही छुए और जीते हुए को थामे रखना।

[946] जैसे कोई व्यक्ति काँटेदार झाड़ी में बिना जूते के चलता है,
हर कदम पर ध्यानमग्न रहता है,
वैसे ही नगर में ऋषि को अपना भ्रमण करना चाहिए।

[947] बीते दिनों के संतों को याद करते हुए,
और उनके जीवन को याद करते हुए,

भले ही आज का समय बीत चुका हो,
वह शांति का अमृतमय मार्ग पा सकता है।

[948] इस प्रकार साल के जंगल में, सुशिक्षित और अपने ज्ञान में निपुण साधु ने वाणी मारी । तब संत को मृत्यु की शांति प्राप्त हुई - उस द्रष्टा को जिसके लिए पुनर्जन्म का कोई ध्येय नहीं है।

[1] सीसीएक्सएलआईएक्स.

[2] साल के पेड़ों के विशाल जंगल में (टीका, 948)। कपिलवस्तु, वैशाली और मगध में नेरंजरा पर एक 'महावन' था। पारापरिया एक सावत्थी थेरा था; इसलिए जंगल की पहचान नहीं की जा सकती।

[3] तो टिप्पणी। Ver. 926-8 अरियावंसपपतिपदा दिखाएँ।

[4] उपर्युक्त तीनों गाथाएँ कठिनाइयों से भरी हैं, जो मेरे लिए टीका द्वारा हमेशा स्पष्ट नहीं हो पातीं। उपठित-विवेकीय सुविशुद्धशीलचारा पि समाना है । शेषधम्मका का शाब्दिक अर्थ है 'नियम का शेष भाग'। 'अंतरात्मा' शब्द प्रक्षेपित है। सयामगहे आदि के स्थान पर ससंगामे का सुझाव दिया गया है , जो किलेशों (दुःखों) के सेनापति मारा (मृत्यु के देवता/राक्षस) का युद्धघोष है । ये सामान्यतः बुराई या पाप के प्रतीक हैं: लोभ, घृणा, सुस्ती, अहंकार, त्रुटि, उलझन, आलस्य, विचलित होना, धृष्टता, अविवेकीपन। डॉ. न्यूमैन केवल पहले का उल्लेख करते हैं, जिससे बुरी स्थितियों को सरलीकृत कर दिया गया है।

[5] संयम, केवल करवट लेकर लेटना और कुछ विषयों से बचना भिक्षु के कर्तव्यों में शामिल थे। तुलना करें बुद्ध मनोविज्ञान, पृ. 858; संवाद, i. 245 ('वीर' के लिए 'चैंपियन, एथलीट' समझें); अंग निक, i. 114; बुद्ध सूत्र, 227.

[6] जाहिरा तौर पर एक प्रकार का सेब। तुलना करें मिलिंडा, i. 202. चाइल्डर्स के शब्दकोश में फेरोनिया एलिफेंटम के रूप में पहचाना गया।

[7] टीका कहती है कि आम कई फलों का प्रतीक है, जैसे नींबू, नारियल आदि।

[8] भिक्षुओं के लिए लाभ के लिए चिकित्सा और सर्जरी का अभ्यास निषिद्ध है (संवाद, i. 25/.)।

[9] जीविकत्था (जहाँ डॉ. न्यूमैन का अनुवाद चतुर है, भले ही थोड़ा अटपटा हो) को जीविकप्पयोजन; आजीवहेतुका द्वारा पुनर्कथन किया गया है।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(258):फुस्सा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (258) ------>>>> अगला

अध्याय XVII.
तीस श्लोक
258. फुस्सा
बुद्ध युग में एक प्रांत के शासक के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लेकर, [1] उनका नाम फुस्सा रखा गया और उन्हें कुलीन युवकों के सभी गुणों में प्रशिक्षित किया गया। लेकिन अपनी प्राप्त परिस्थितियों के कारण उनका हृदय सांसारिक इच्छाओं से अछूता रहा, इसलिए जब उन्होंने एक महान थेरा को धम्म का उपदेश देते सुना, तो उन्होंने विश्वास किया और भिक्षु संघ में प्रवेश किया। ध्यान का अभ्यास करते हुए, उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और समय के साथ छह प्रकार की अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) अर्जित की।

एक दिन पाण्डरागोत्त [2] नामक एक तपस्वी ने उन्हें धम्म का उपदेश देते हुए सुना। थेरा के चारों ओर सदाचारी, तन-मन से प्रशिक्षित और संयमित भिक्षुओं का समूह देखकर उस तपस्वी ने सोचा, 'यह धर्म प्रणाली कितनी उत्कृष्ट है! यह पृथ्वी पर लंबे समय तक कायम रहे!' और उन्होंने थेरा से पूछा, 'हे पूज्यवर, भविष्य में भिक्षुओं की प्रगति कैसी होगी?'

इस स्थिति को समझाने के लिए संकलकों ने सर्वप्रथम यह श्लोक रखा:

[949] पसादिके बहु दिस्व भावितते सुसावुते,॥
इसि पांडारस्सा गोत्तो अपुच्चि फुस्सासवहायो ।॥ ॥

[950] किंचंदा किमधिप्पया किमकप्पा भविसरे,॥
अनागतमहि कलमहि तां मे अक्खाहि पुच्छितो॥ ॥

[949] पाण्डरस-गोत्त, भिक्षु,
ऐसे सुसंस्कृत श्रोताओं को देखकर,
विनम्र, शांत, ध्यानमग्न होकर,
फुस्सा से प्रश्न पूछते हुए:-

[950] आने वाले दिनों में तुम्हारे उद्देश्य क्या होंगे,
और तुम्हारी प्रवृत्तियाँ क्या होंगी [3] और
तुम्हारे रीति-रिवाज और प्रथाएँ क्या होंगी? [4] मुझसे, जो तुमसे यह पूछता है, तुम यह बताओ।

फुस्सा:

[951] सुओहि वचनाṃ मयहाṃ इसिपाङरसवहाय,॥
सक्कच्चान् उपाधारेहि अक्खिस्साम्यनागतान् ।॥ ॥

[952] कोधाना उपनाहि च मक्खी थम्भी साथा बहु,॥
इस्सुकी नानावदा च भविस्संति अनागते॥ ॥

[953] अनानातामानिनो धम्मे गंभीरे तिरगोचरा,॥
लहुका अगरु धम्मे अण्णामन्नमगरावा॥ ॥

[954] बहु आदिनावा लोके उप्पज्जिस्सन्त्यनागते,॥
सुदेसितां इमां धम्मं किलेसिसंति दुम्मति.॥ ॥

[955] गुनाहिनापि सङ्घमहि वोहरन्ता2 विसारदा,॥
बलवंतो भविस्संति मुखरा अस्सुताविनो॥ ॥

[956] गुणवंतोऽपि सङ्घमहि वोहरंता यथात्ततो,॥
दुब्बाला ते भविस्संति हिरीमाना अनात्तिका॥ ॥

[957] राजताṃ जातरूपाṃ च खेताṃ वत्थुमाजेḷकाṃ,॥
दासीदासं च दुमेधा सादियिस्सन्त्यनागते।॥ ॥

[958] उज्जहनसान्निनो बाला सिलेसु अस्महिता,॥
उन्नदा विकारिस्संति कलहाभिरता मगा॥ ॥

[959] उद्धता च भविसंति नीलशिवरापरुता,॥

कुहा थधा लपा सिंगी कैरिसन्तारिया विया॥ ॥

[960] तेलसांथे केसेही कैपलाṃ अंजितक्खिका,॥
रथियाया गमिस्संति दंतवनिकपरुता।॥ ॥

[961] Ajeguccham̩ vimuttehi surattam̩ arahaddhajam̩,॥
Jigucchissanti kāsāvam̩ odātesu samucchitā.॥ ॥

[962] लाभकामा भविसंति कुसीता हिनावीरिया,॥
किच्चन्ता वनपत्थानि गावन्तेसु वसिसरे.॥ ॥

[963] ये [88] ये लाभं लभिसंति मिच्छाजीवरता सदा,॥
ते तेव अनुसिक्खान्ता भमिसंन्ति1 असन्याता॥ ॥

[964] ये ये अलभिनो लाभं न ते पुज् भविसरे,॥
सुपेसालेऽपि ते धीरे सेविसंन्ति न ते तदा॥ ॥

[965] पिलक्खुराजानाṃ रत्ताṃ गरहंता साकाṃ धजाṃ,॥
तिट्ठियानां धजं केचि धारेस्सन्त्यवदातकं॥ ॥

[966] अग्रवो च कासवे तदा तेसां भविस्सति,॥
पतीसोन्खा च कासवे भिक्खुनं न भविष्यसति॥ ॥

[967] अभिभूतस्स दुक्खेन सल्लविद्धस्स रुप्पतो,॥
पतिसंखा महाघोरा नागासासी अचिन्तिया॥ ॥

[968] छद्दन्तो हाय तदा दिस्वा सुरत्तṃ अरहद्दजाṃ,॥
तवदेव भानि गाथा गजो अत्थोपसंहिता॥ ॥

[969] अनिक्कसावो कासावं यो वत्थाऽ परिदहेस्साति,॥
अपेतो दमासक्केन न सो कासावमारहति॥ ॥

[970] यो च वंतकासावस सिलेसु सुसामहितो,॥
उपेतो दमासक्केन सा वे कासावमारहति॥ ॥

[971] विपन्नसिलो दुम्मेधो पकाता कम्मकारियो,॥
विब्भंताचित्तो निस्सुक्को न सो कासावमरहति॥ ॥

[972] यो च सिलेना संपन्नो वीतरागो समाहितो,॥
ओदतमनसांकप्पो सेव कसावमरहति॥ ॥

[973] उद्धतो उन्नाओ बालो सिलौ यस्सा न विज्जति,॥
ओदातकं अरहति कसावं कीं करिस्सति॥ ॥

[974] भिक्खु च भक्खुनियो च दुथचित्त अनादारा,॥
तादिनां मेत्तचित्तनां निगिगणहिसंत्यानागते॥ ॥

[975] सिक्खापेन्टापपि तरेहि बाला शिवराधारणा,॥

न सुनिस्सान्ति दुमेधा पकाता कामकारिया॥ ॥

[976] ते तथा सिक्खिता बला अण्णामन्न्यां अगरवा,॥
नदियिस्सन्तुपज्झये थफाँको विया सारथीं॥ ॥

[977] एवं अनागतद्धनां पतिपत्ति भविस्सति,॥
भिक्खुन्नै भिक्खुनिन्न च पत्ते कलम्हि पछिमे ॥॥ ॥

[978] पुरा अगाच्छते एतं अनागतं महाभभयं,॥
सुब्बाचा होथा सखिला अण्णामण्णां सागरवा॥ ॥

[979] मेटासिट्टा करुणिका होथा सिलेसु सवुता,॥
अरद्धविरिय पहितत्ता निक्कं ददहापरक्कम॥ ॥

[980] पमादाm [89] भयतो दिसावा अप्पमादाm च खेमातो,॥
भवेथथंघिकां मग्गाm फुसंता1 अवतं पदं' ति.॥ ॥

[951] हे द्रष्टा, पाण्डरसा नाम के, मेरी बातें सुनो,
और उन्हें ध्यानपूर्वक अपने मन में संजो लो;
मैं आने वाली बातों के विषय में बताऊंगा। [5]

[952] उग्र स्वभाव वाले और द्वेषी,
अभिमानी, पाखंडी,
कपटी, ईर्ष्यालु, झगड़ालू:
उन दिनों में बहुत से लोग ऐसे ही होंगे;

[953] वे सत्य की गहराई को जानते हैं,
जबकि वे जल के किनारे खड़े हैं।
चंचल, धर्म के प्रति अनादरपूर्ण;
और परस्पर अनादरपूर्ण।

[954] हाँ, भविष्य में इस पृथ्वी पर अनेक बुराइयाँ
घटित होंगी।
हमारे इस धम्म मार्ग को इतनी अच्छी तरह से प्रस्तुत किया गया है कि
मूर्ख लोग इसे भ्रष्ट कर देंगे।

[955] जब सभा में आवाज और वोट
दिए जाते हैं, तो लोग, भले ही सद्गुण में गरीब
हों, आगे बढ़ेंगे, समर्थकों में मजबूत, [6] अपमानजनक और अविद्वत्तापूर्ण।

[956] जब सभा में आवाज़ और वोट
दिए जाते हैं, तो सदाचारी
और ईमानदार लोग कमज़ोर हो जाएँगे,
लज्जित मनोदशा और कम उत्साह वाले।

[337] [957] चांदी और सोना, खेत, स्थल और झुंड, [7] दास, दासियाँ और पुरुष, आने वाले दिनों में
अविवेकी लोग स्वीकार करेंगे।

[958] और चिड़चिड़े स्वभाव के मूर्ख,
नैतिक संयम का अभाव रखते हुए, जंगली जानवरों की तरह लड़ाई के लिए उतावले होकर
बर्बरता से इधर-उधर भटकेंगे ।

[959] वे संयम नहीं जानेंगे:-
वे नीले वस्त्रों में लिपटे रहेंगे, [8] पाखंडी, हठी, जिद्दी,
बकवास करने वाले, कुशल कूटनीतिज्ञ, [9] पुराने संतों की नकल करते हुए।

[960] तेल से चिकने बाल, और गंभीर न दिखने वाले,
और काजल से रंगी पलकें,
और हाथीदांत रंग के वस्त्र में लिपटे हुए:
इस प्रकार वे सड़कों पर चलेंगे।

[961] पीला वस्त्र, वह उत्तम रंग,
जिसे मुक्त लोग बिना घृणा के धारण करते हैं,
अरहंत (प्रबुद्ध) का ध्वज,
उनमें केवल बेचैनी पैदा करता है,
जो सफेद वस्त्रों की लालसा करते हैं।

[962] लाभ के लालची हो जाएँगे,
सुस्त और ऊर्जाहीन;
वन क्षेत्रों में थकान पाकर,
वे बस्ती के आसपास ही रहेंगे।

[963] और हमेशा गलत रास्तों पर चलने के लिए तत्पर,
बिना किसी रोक-टोक के, जैसे छात्र अक्सर करते हैं,
वे उनका अनुसरण करेंगे जिन्हें सबसे अधिक उपहार मिलते हैं।

[964] लेकिन जिन्हें कोई उपहार नहीं दिया जाता,
उन्हें न सम्मान मिलेगा, न आदर;
चाहे वे योग्य और आकर्षक पुरुष ही क्यों न हों,
उस दिन उनका कोई अनुयायी नहीं होगा।

[338] [965] अपने पीले वस्त्रों का तिरस्कार करते हुए,
कुछ लोग विदेशी रंग के लाल वस्त्र पहनेंगे, [10]
और अन्य लोग किसी सांप्रदायिक ध्वज के सफेद वस्त्र पहने हुए पाए जाएँगे ।

[966] पीले वस्त्र के प्रति अनादर
वे उन दिनों में दिखाएंगे; भिक्षु (भिक्षु)
इस बात पर विचार नहीं करेंगे कि इसका क्या अर्थ है।

[967] इस प्रकार विवेक का अभाव उस बुद्धिमान जानवर के लिए
अकल्पनीय त्रासदी थी जो दर्द से व्याकुल, घायल और भयानक संकट में पड़ा था। [11]

[968] तब छह दांत वाले हाथी ने
अरहंतों (प्रबुद्धों) का अच्छी तरह से रंगा हुआ झंडा देखा,
और उस पर हाथी के विषय में,

नैतिक शिक्षा देते हुए, श्लोक कहे:

[969] जो बुराई करता है, फिर भी भगवा वस्त्र धारण करता है,
आत्मसंयम और सत्य से विमुख रहता है,
वह भगवा रंग धारण करने के अयोग्य है।

[970] जो बुराई को त्यागकर, सदाचारी मार्ग पर दृढ़ रहता है,
और आत्मसंयम और सत्य से जुड़ा रहता है,
वही भगवा रंग धारण करने योग्य है [12]

[971] अनैतिक, मूर्ख और विकृत,
एक व्यभिचारी, जिसका हृदय
अस्थिर है, जिसका मन (विचारों से) घिरा हुआ है:
वह भगवा वस्त्र के अयोग्य है।

[339] [972] जो सद्गुण से धन्य है,
कामवासना से मुक्त है, हृदय से एकाग्र है,
जिसकी आशाएँ और उद्देश्य श्वेत हैं [13] वह केसरिया वस्त्र के योग्य है।

[973] एक मूर्ख, जिसका मन घमंडी और व्याकुल है,
जिसके लिए कोई नैतिक संहिता नहीं है:
सफेद रंग के वस्त्र ही उसके योग्य थे।
केसरिया वस्त्र का उसे क्या उपयोग है?

[974] उस दिन भिक्षु और ननें,
भ्रष्ट और अधर्मी हृदयों से, उन लोगों
को धमकाएंगे और अपमानित करेंगे
जिन्होंने अपने हृदयों को प्रेम में प्रशिक्षित किया है।

[975] और मूर्ख, जिन्हें उनके बड़ों ने
वस्त्र पहनने और उपयोग करने का सही तरीका सिखाया है,
बुद्धि की कमी के कारण नहीं सुनते, वे
सभी कुटिल और मनमानी करने वाले हैं।

[976] और इसलिए मूर्ख, इस प्रकार शिक्षित होकर,
आपसी सम्मान की कमी के कारण,
अपने शिक्षकों के वचन का पालन नहीं करेंगे,
दुष्ट अपने रखवाले को काटने के समान।

[977] इस प्रकार आने वाले युग में भिक्षुओं और भिक्षुणियों का
मार्ग और प्रवृत्तियाँ होंगी , जब अंतिम समय निकट होगा। [14]

[978] इस भयंकर भय के समय तक
, जो अब नहीं है,
तुम कोमल, विनम्र हृदय वाले बनो,
आपसी सम्मान से भरे रहो।

[979] प्रेममय और दयालु बनो

और सद्‌गुणों के मार्ग में अच्छी तरह से नियंत्रित रहो, [340] परिश्रमी, लक्ष्य पर केंद्रित,
और हमेशा बहादुरी से आगे बढ़ते रहो।

[980] वह खतरा छेड़छाड़ में निहित था:-
वह गंभीरता निश्‍चित और सुरक्षित है:-
जब तुम यह देख लो, तो
अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास करो, तो तुम उसे स्पर्श करोगे,
इस प्रकार अपना बना लो, [15] अमर मार्ग।

इस प्रकार थेरा ने अपने अनुयायियों से कहा। अब केवल यही श्लोक उनकी अञ्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा थे।

[1] मँडलिकारान्नो। पी देखें. 83, एन. 5.

[2] टीका में पाण्ड, पाण्डरा और पाण्डरसा को समान रूप से मान्य बताया गया है। उनके बारे में इससे अधिक कुछ ज्ञात नहीं है; लेकिन संभवतः उनका संबंध पाण्डरंगों से है, जो बिंदुसार और उनके पुत्र सम्राट अशोक के समय के 'भटकने वाले' समूह थे। (समंतपासादिका, त्वनय, iii., 300)

[3] = किं-दिसाज्जासया (टीकाकरण) .

[4] = vārittacārittavanto (टिप्पणी).

[5] भविष्य में संघ को घेरने वाले खतरों (अनागत-भयानी, आदि) की समान भविष्यवाणियाँ कई प्रवचनों में बुद्ध को सौंपी गई हैं [अंग. निक., iii. 105-110; cf. पृ. 176 f., 247 f., 329 f., 340 [? 339])।

[6] = पक्खबलेना बलवंतो (टिप्पणी) ।

[7] अर्थात्, भवन निर्माण के लिए, या परती भूमि - akatabhūmibhāgo vatthu, 'झुंड,' शाब्दिक रूप से, बकरियाँ, सभी मवेशियों का प्रतिनिधित्व करती हैं (Cy.). cf. Vin. Texts, iii. 389 f.

[8] 'आम तौर पर अनुपयुक्त रंग से रंगा हुआ' (टिप्पणी) ।

[9] सी.एफ. जेपीटीएस, 1885, पृ. 53; मिलिंडा, ii. 258 ; इति-वुट्टका, पृ. 112. टीका स्थानों में बुद्धघोष (अंग. निक., ii. 26) के समान शब्दों में परिभाषित करती है।

[10] मिलक्कुराजानां रत्तं पर टिप्पणी में काकड़राजनेन रत्तं है, ' मिलक्कुराजना-रतं में 'नाक ŋ को मेट्री कॉज डाला जा रहा है' ।

[11] रुप्पाटो, दैट। रुप्पां का ; शरीरविकारं अपज्जतो (टिप्पणी) . सी एफ सुत्ता निपाता, वी. 331.

[12] छद्दंत (छह दांत वाला) जातक, खंड, संख्या 514 से । हाथी, जिसके बारे में दावा किया गया था कि वह बोधिसत्व (बुद्ध बनने के लिए नियत) था, एक शिकारी की चालाकी से एक गड्ढे में फँस जाता है, जो जानवर के मन में नुकसान का संदेह पैदा करने से बचने के लिए, खुद को एक भिक्षु के रूप में भेस बदल लेता है! जातक के श्लोक धम्मपद के श्लोक 9, 10 में भी शामिल हैं। तुलना करें कासाव-जातक, द्वितीय, संख्या 221। शब्द-क्रीड़ा पर, कासाव, 'बुराई', कासाव, 'पीला रंग', देखें एम. मुलर का धम्मपद, एसबीई, x. 5, n. 9. खुद्दक-निकाय की एक अन्य पुस्तक द्वारा इस प्राचीन गाथा और इसकी कहानी का उल्लेख ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

[13] सी.एफ. श्लोक 549. सुविशुद्धमानो विटक्को अनाविलसंकप्पो वा (सा.)।

[14] टीका में पूछा गया है, 'अंतिम समय (पच्चिमो कालो) क्या है? "तीसरी सभा से" (पटना में, अशोक के शासनकाल में) यह उत्तर कुछ लोगों द्वारा विवादित है। क्योंकि शासन के जीवन में पाँच अवस्थाएँ (युगानि) होती हैं : विमुक्ति, समाधि, शील, सुत, दान। ये इसी क्रम में तब तक चलती हैं जब तक केवल बाहरी लक्षण (लिंगमत्तं) शेष नहीं रह जाते।'

[15] 'स्पर्श' - यानी, 'अनुभव करना,' टिप्पणी पाठ फुसंता.
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(259): सारिपुत्त

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (259) ------>>>> अगला

अध्याय XVII.
तीस श्लोक
259. सारिपुत्त
उनकी और महान मोग्गलाना [1] की कहानी को एक साथ लिया गया है। युगों पूर्व, बुद्ध अनोमदस्सी के समय में, शारदा और सिरिवद्धा नाम के दो साथी थे, जो एक प्रख्यात ब्राह्मण (पुजारी) के पुत्र थे, और दूसरे एक महान जमींदार के पुत्र थे। शारदा को अपने पिता की संपत्ति विरासत में मिली, लेकिन सभी प्राणियों के सामान्य दुर्भाग्य से व्याकुल होकर, उन्होंने मोक्ष का मार्ग खोजने के लिए संसार त्याग दिया (भिक्षुत्व ग्रहण किया) और सिरिवद्धा को भी ऐसा ही करने के लिए आमंत्रित किया। 'मैं नहीं कर सकता,' सिरिवद्धा ने उत्तर दिया, लेकिन जब शारदा को बुद्ध ने ऋषि के रूप में दर्शन दिए, तो वे मान गए। अब शारदा के सभी अनुयायी, मुख्य शिष्य अनोमा द्वारा धर्म (धम्म) के उपदेश सुनने के बाद, अरहंत (प्रबुद्ध) हो गए। लेकिन शारदा स्वयं, मन में लीन होने के कारण, धर्म के मार्ग और फल को ग्रहण करने में असमर्थ रहे। इस पर शारदा और सिरिवद्ध दोनों ने बुद्ध की उपस्थिति में, अनोमा की तरह, भविष्य में किसी बुद्ध के प्रमुख शिष्य बनने की इच्छा व्यक्त की। बुद्ध ने यह आश्वासन दिया कि गौतम बुद्ध के समय में ऐसा ही होगा। उनके बाद के कर्मों का कोई विवरण नहीं है, लेकिन हमारे परम पूज्य (बुद्ध) के जन्म से पहले, शारदा का पुनर्जन्म राजगृह से कुछ ही दूरी पर उपतिसों के नगर [341] में ब्राह्मण रूपसारी के घर हुआ, और उसी दिन सिरिवद्ध का जन्म राजगृह से कुछ ही दूरी पर कोलितों के नगर में ब्राह्मण मोग्गली के घर हुआ। और क्योंकि दोनों अपने-अपने परिवार के मुखिया के पुत्र थे, इसलिए एक का नाम उपतिस और दूसरे का कोलित रखा गया। दोनों बालकों [3] का पालन-पोषण विलासिता में हुआ और वे सभी गुणों में निपुण थे। लेकिन एक दिन राजगृह में पहाड़ी पर लगे मेले [4] में उमड़ी भीड़ को देखकर , उनकी अंतर्दृष्टि परिपक्व हो चुकी थी, और उन्होंने देखा कि एक सदी के भीतर ही सभी लोग मृत्यु के चंगुल में गिर पड़ेंगे, और उन्होंने तुरंत मुक्ति का मार्ग खोजने का निश्चय किया। और वे संसार छोड़कर (भिक्षुत्व के लिए) घुमक्कड़ संजय के विद्यालय में चले गए, और इस बात पर सहमत हुए कि यदि कोई पहले अमाता पहुंचेगा तो वे एक-दूसरे को सूचित करेंगे।

संजय की शिक्षा में उन्हें कुछ भी वास्तविक नहीं मिला, और उन्होंने संन्यासियों और ब्राह्मणों (पुजारियों) से पूछते हुए अपनी खोज जारी रखी, यहाँ तक कि भिक्षु अस्सजी के माध्यम से उन्हें परम पूज्य (बुद्ध) प्राप्त हुए, [5] और उन्होंने हाथ रखकर और "आओ, भिक्षुओं" कहकर उन्हें भिक्षुत्व की दीक्षा दी। अस्सजी द्वारा धम्म के सारांश से सोतापना (निर्वाण की पहली समाधि) प्राप्त करने के बाद, [6] उन्हें अन्य तीन मार्गों में से किसी का भी अध्ययन करने की आवश्यकता नहीं रही। क्यों? क्योंकि शिष्य होने के बावजूद भी उन्हें पूर्ण ज्ञान प्राप्त था। इसके द्वारा पूज्य मोग्गलाना ने सातवें दिन मगध के कल्लावाला गाँव में भगवान (बुद्ध) के आदेश से आलस्य और सुस्ती पर विजय प्राप्त की और तत्वों पर एक अभ्यास सुनकर [7] सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया, जबकि पूज्य सारिपुत्त ने भिक्षु दीक्षा के आधे महीने बाद राजगृह में सुकराखात गुफा [8] में भगवान (बुद्ध) के साथ रहते हुए इसे प्राप्त किया ; जबकि [342] उनकी बहन के पुत्र दीघनाखा, जो एक घुमक्कड़ थे, को 'वेदनपरिग्गह' सूत्रंत [9] की शिक्षा दी जा रही थी। इसके बाद भगवान (बुद्ध) ने जेतवन में एक सभा में सारिपुत्त को अपने शिष्यों में ज्ञान और अंतर्दृष्टि में श्रेष्ठ स्थान दिया।

और उन्होंने, धम्म के सेनापति के पद पर स्थापित होकर, प्राणियों के कल्याण के लिए कार्य करते हुए, एक दिन अपने साथी शिष्यों के समक्ष अपनी अज्ञा (सर्वोच्च उपलब्धि) की घोषणा इस प्रकार की:

[981] यथाचारि यथासतो सतीमा यतसाङ्कम्मज्झायि अप्पमत्तो,॥
अज्झत्तरतो समाहितत्तो एको सन्तुसितो तमाहु भिक्खुन्॥ ॥

[982] अल्लाऽ सुक्खाँ वा भुञ्जन्तो न बङहाऽ सुहितो सिया,॥

स्नोदरो मिताहारो सातो भिक्खु परिब्बाजे॥ ॥

[983] कैटारो पंचा आलोपे अभुत्वा उदकां पिवे,॥
अलां फासुविहाराय पहितत्तस्सा भिक्खुनो॥ ॥

[984] कप्पियाṃ ताṃ सी चदेति तिवराṃ इदमत्थिताṃ,॥
अलां फासुविहाराय पहितत्तस्सा भिक्खुनो॥ ॥

[985] पल्लौकेना निसिन्नस्सा जानुके नाभिवस्सति,॥
अलां फासुविहाराय पहितत्तस्सा भिक्खुनो॥ ॥

[986] यो सुखाṃ दुक्खतो अड्डा दुक्खमद्दक्खी सल्लतो,॥
उभयन्तरेण नहोसि केन लोकस्मिं किओ सिया॥ ॥

[987] मा मे कदाचि पपीचो कुसिटो हिनाविरियो,॥
अप्पसुतो अनादारो केना लोकस्मिं किओ सिया॥ ॥

[988] बहुसुतो च मेधावी सिलेसु सुसामहितो,॥
सेतोसमथमनुयुत्तो अपि मुद्धनि तिथतु॥ ॥

[989] यो पापञ्चमनुयुत्तो पापञ्चभारतो मगो,॥
विराधयी सो निर्वाणं येगक्खेमं अनुत्तराऽ॥ ॥

[990] यो सीए पपनकाṃ हित्वाना निप्पापनाकापथे रतो,॥
अराधयी सो निब्बाणं योगक्खेमं अनुत्तराऽ॥ ॥

[981] जो कोई अपनी सामर्थ्य के अनुसार
गुणी हो, [10] संत, मन से स्पष्ट,
अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिए गंभीर,
जो आत्मनिरीक्षण कार्य से प्रेम करता हो, [11] अच्छी तरह से एकाग्र और अभिमानी,
एकांत और विरक्त, आनंदित, शांत:
इस व्यक्ति को सही मायने में भिक्षु (भिक्षु) कहा जाता है।

[982] जब भी वह गीला या सूखा भोजन खाए, [12] उसे पूरी तरह संतुष्ट नहीं होना चाहिए।
पेट में हल्कापन रखो, भोजन में संयम बरतो,
और भिक्षु (भिक्षु) को अपने मार्ग पर सतर्क रहना चाहिए। [13]

[983] क्या उसने केवल चार या पाँच निवाले ही खाए हैं? उसे पानी पीने दो: — यहाँ उत्साह से भरे भिक्षु (भिक्षु) के लिए पर्याप्त ताज़गी है ।

[984] जो चीज़ें उचित हैं, उन्हें वह प्राप्त कर सकता है और ले सकता है: -
इस विशेष उद्देश्य के लिए पहने जाने वाले वस्त्र: -
उत्साह से भरे भिक्षु (भिक्षु) के लिए पर्याप्त आराम।

[985] [343] और जब वह अपने पलंग पर पालथी मारकर बैठता है,
अगर उसके घुटने बारिश से सुरक्षित रहें, [14] तो उत्साह से भरे भिक्षु (भिक्षु) के लिए यह पर्याप्त आराम है।

[986] जिसने भी सुख को केवल पीड़ा समझा है;

जिसने पीड़ा में चुभने वाला तीर देखा है; जिसने
दोनों के बीच कोई आत्म नहीं देखा: - [15] वह संसार क्या धारण करेगा, कौन सा भाग्य उस मनुष्य को रोके रखेगा?

[987] मुझे कभी भी ऐसा व्यक्ति न दो जिसके हृदय में बुराई हो,
जो जड़, निष्क्रिय और हठी हो,
और जो पवित्र मार्ग (धम्म) का बहुत कम ज्ञान रखता हो।
वह संसार उसे क्या धारण करेगा, उसका क्या भाग्य होगा? [16]

[988] जो पवित्र मार्ग (धम्म) में विद्वान है,
समझ सकता है,
नैतिक आधार पर पूरी तरह से एकाग्र है, और आंतरिक शांति से जुड़ा हुआ है: -
उसे मेरे लिए मुखिया और सबसे आगे खड़ा रहने दो।

[989] जिसका हृदय जुनूनों [17] में डूबा हुआ है -
मोह के जाल में फँसा हिरण -
वह निर्वाण से बहुत दूर भटक जाता है,
परम आश्रय में भी मार्ग नहीं पाता।

[990] परन्तु जो अपने हृदय को आसक्तियों से मुक्त करता है,
उस मार्ग में आनंदित होता है जहाँ ये नहीं हैं,
वह निश्चय ही निर्वाण का मार्ग पाता है,
परम आश्रय की ओर सुरक्षित रूप से अपना मार्ग तय करता है।

अब एक दिन थेरा ने अपने छोटे भाई रेवता [18] के रहने की जगह देखकर - काँटेदार और बबूल के पेड़ों के एक जलहीन जंगल में - उसकी प्रशंसा करते हुए कहा:

[991] गेमे वा यदि वा रानने निन्ने वा यदि वा थले,॥
यत्था अरहंतो विहारन्ति तं भूमिं रामनेय्यका:॥ ॥

[992] रमणीय अरण्यनि यथा न रमति मनो,॥
वीतरागा रामिस्संति न ते कामगावेसिनो॥ ॥

[991] गाँव में हो या जंगल में, घाटी में हो या पहाड़ी पर,
जहाँ कहीं भी योग्य पुरुष, अरहंत (प्रबुद्ध लोग),
अपना जीवन व्यतीत करते हैं, वह स्थान रमणीय होता है।

[992] वन रमणीय हैं, जहाँ भीड़
आनंद लेने नहीं आती; वहाँ वे लोग
आनंद पाते हैं जो वासनाओं से मुक्त हैं।
वे इंद्रिय-संतुष्टि के साधक नहीं हैं।

फिर, थेरा ने राधा नामक एक दुर्भाग्यशाली ब्राह्मण (पुजारी) पर दया दिखाई, जिसके कारण उसने संसार त्याग दिया और भिक्षु संघ में प्रवेश कर लिया। [19] इसके बाद, यात्रा के दौरान, उन्होंने राधा के सौम्य व्यवहार से प्रसन्न होकर उनसे बात की:

[993] निधिनाउ'व पवत्ताराṃ याṃ पस्से वज्जदस्सीनाṃ,॥
निग्ग-अहवादिं मेधाविं तदिसैं पण्डितं भजे,॥
तदिसैं भजमानस्सा सेय्यो होति न पापियो॥ ॥

[993] जैसे कोई छिपे हुए खजाने दिखाता है,
वैसे ही बुद्धिमान व्यक्ति यह जानता है
कि क्या टालना चाहिए और समझदारी भरी सलाह देता है: -
यदि तुम ऐसे योग्य मार्गदर्शक को देखते और मानते हो,
तो तुम्हारा अनुसरण करना बेहतर है, बुरा नहीं।

अब एक दिन, भगवान (बुद्ध) स्वयं किता पहाड़ी पर स्थित असजी-पुनब्बासु भिक्षुओं की भ्रष्ट बस्ती को दबाने के लिए नहीं गए, [20] बल्कि सारिपुत्त मोग्गलाना और उनके अनुयायियों के साथ गए। और जब सारिपुत्त के निर्देश की अवहेलना की गई, तो उन्होंने इस प्रकार कहा:

[994] ओवदेय्यानुसासेय असब्भा च निवारये,॥
सातो ही सो पियो होति असातौ होति अप्पियो॥ ॥

[994] हमें सिखाना चाहिए, निर्देश देना चाहिए, मना करना चाहिए,
बुराई और गलत कामों में बाधा डालनी चाहिए।
ऐसा करने से, अच्छे कामों से ही व्यक्ति प्रिय होता है;
केवल बुरे काम करने वाले ही घृणा पाते हैं।

जब भिक्षु कह रहे थे कि जिसे गुरु शिक्षा दे रहे थे - अर्थात् दीघनाखा [21] - वह अपने पूर्ववृत्तों से पूरी तरह तैयार था, तब सारिपुत्त ने हस्तक्षेप करते हुए कहा: ऐसा नहीं था:

[995] अनास्स भगव बुद्धो धम्मं देसेसी चक्खुमा,॥
धम्मे देसियामानमहि सोतामोधेसिमत्थिको॥ ॥

[996] ताṃ मे अमोघṃ सवानाṃ विमुत्तोमि अनासावो॥
नेवा पुब्बेनिवासया न'पि दिब्बासा चक्खुनो॥ ॥

[997] सेतोपरिया इदिधिया कुतिया उपपत्तिया,॥
सोतधातुविशुद्धिया पणिय मे न विज्जति॥ ॥

[995] दूसरा वह था जिसे उन्होंने धम्म का मार्ग सिखाया -
हे परम पूज्य, बुद्ध, वह जो देखता है -
क्योंकि जब धम्म का मार्ग सिखाया जा रहा था, मैंने सुना,
पूरी एकाग्रता से सुनकर भलाई की तलाश करते हुए।

[996] और मुझे विश्वास है कि मेरा सुनना व्यर्थ नहीं गया,
क्योंकि मुझे मुक्ति मिल गई है, मैं स्वस्थ हूँ, प्रतिरक्षा प्राप्त है।
न तो अपने अतीत की दृष्टि प्राप्त करने के लिए,
न ही दिव्य दृष्टि से देखने के साधन के लिए -

[997] मनुष्यों के विचारों को पढ़ने की रहस्यमय शक्ति,
पृथ्वी और स्वर्ग में मृत्यु, पुनर्जन्म को समझने की शक्ति,
न ही दिव्य रूप से अनुकूलित कान के लिए
मुझे मन को समायोजित करने की आवश्यकता थी। [22]

अगले तीन श्लोकों में उनके बारे में बात की गई है, जब कबूतर गुफा विहार (मठ) में रहते हुए, उन्हें यक्ष के प्रहार से कोई चोट नहीं आई: [23]

[998] रुक्खमूलाऽ वा निस्साया मुन्दो सङ्घातिपरुतो,॥
पनन्या उत्तमो थेरो उपतिस्सो च झायति॥ ॥

[999] अवितकक्कु समापन्नो सम्मासंबुद्धसावको,॥
अरियेन तुन्हिभाणे उपेतो होति तावडे॥ ॥

[1000] यथापि पब्बतो सेलो अकालो सुप्पतिथितो,॥
एवं मोहक्खया भिक्खु पब्बतोऽव न वेधति॥ ॥

[998] वृक्ष की तलहटी में बैठे, मुंडा सिर वाले,
अपने वस्त्रों में लिपटे हुए, ज्ञान में सर्वोच्च स्थान प्राप्त,
थेरा उपतिस्सा गहन ध्यान में लीन हैं।

[999] उनके विचार क्रिया-बोध से परे हैं, [24] सर्वोच्च बुद्ध के शिष्य, वे
अब तक आर्य मौन में लीन थे।

[1000] जैसे कोई पर्वत-चट्टान अडिग खड़ी रहती है,
दृढ़ आधार वाली, वैसे ही भ्रम से मुक्त एक भिक्षु,
उस पर्वत की तरह अडिग खड़ा रहता है।

एक दिन, थेरा की अनमनेपन से, उनके वस्त्र का फासला नीचे लटक गया। तब एक शिष्य ने कहा: 'महामहिम, इसे आपके चारों ओर लपेटा जाना चाहिए।' तब सरी-पुत्त ने सिर हिलाते हुए कहा: 'अच्छा, तुमने सही कहा!' और थोड़ा आगे जाकर उन्होंने अपना वस्त्र उनके चारों ओर लपेट दिया। और यह बताते हुए कि उनके जैसे व्यक्ति के लिए यह एक दोष है, उन्होंने कहा:

[1001] अनांगगासा पोसासा निक्काm̐ सुसिगावेसिनो,॥
वलग्गमत्तै पपास्स अभ्मत्तैव ख्याति॥ ॥

[1001] निष्कलंक जीवन जीने वाला व्यक्ति, जो सदा
शुद्धता की खोज करता है, उसने किसी तुच्छ दोष को,
जो किसी बाल के सिरे से भी हल्का है,
[गर्भवती] बादल के भार के समान भार समझा। [25]

उन्होंने एक बार फिर इस श्लोक के माध्यम से जीने या मरने के संबंध में अपने मन की समता प्रदर्शित की:

[1002] नाभिनंदामि मरणं नाभिनदामि जीविता,॥
निक्खिपिस्साँ इमाँ कायं सम्पाजाणो पतिस्सतो॥ ॥

[1003] नाभिनंदामि मरणं नाभिनदामि जीविता,॥
कलौं च पतिकोखामि निब्बिसं भक्तो यथा.॥ ॥

[1002] न तो मुझे मरने की खुशी है और न ही जीने की।
मैं जल्द ही इस नश्वर शरीर को त्याग दूंगा
, सचेत मन से, नियंत्रित चेतना के साथ।

[1003] मृत्यु के विचार से मुझे आराम नहीं मिलता, न ही
जीने में आनंद आता है। मैं उस घड़ी की प्रतीक्षा करता हूँ
जैसे कोई भाड़े का सैनिक अपना काम पूरा कर लेता है। [26]

फिर, धम्म का उपदेश देते हुए उन्होंने ये श्लोक कहे:

[1004] उभयेनमिदां मरणमेव नामारणं पच्च वा शुद्ध वा,॥
पतिपज्जथा मा विनस्सथ खानो वो1 मा उपच्चगा॥ ॥

[1005] नागाराऽ यथा पचंताऽ गुट्टाअ संतराबहिराऽ,॥
एवं गोपेथा अत्तानां खानो वो मा उपक्कागा,॥
खनातिता हि सोकन्ति निरायमहि संप्पिता॥ ॥

[1004] दृश्य के दोनों ओर [हम देखते हैं], और देखो!
यह मृत्यु है, मृत्यु की कमी नहीं [हम देखते हैं], [347] चाहे वह पीछे का दृश्य हो या आगे का। [27] तो तुम अपना मार्ग पूरा करो, कहीं तुम खो न जाओ!
देखो कि यह क्षण व्यर्थ न बीत जाए! [28]

[1005] जैसे सीमावर्ती नगर
भीतर और बाहर से अच्छी तरह सुरक्षित रहता है, वैसे ही तुम भी अपनी अच्छी तरह रक्षा करो!
ध्यान रखो कि क्षण बीत न जाए और खो न जाए,
क्योंकि बहुत से लोग बीते हुए क्षण पर शोक मनाते हैं।

अब एक दिन, आदरणीय कोट्टिता महान को देखकर, उन्होंने उनकी श्रेष्ठता का बखान करते हुए तीन श्लोक बोले: [29]

[1006] उपसंतो उपरतो मंतभानि अनुद्धतो,॥
धुनाति पापे धम्मे दुमापट्टं वा मालुतो॥ ॥

[1007] उपसंतो उपरतो मंतभानि अनुद्धतो,॥
अप्पासि पापके धम्मे दुमापट्टं वा मालुतो॥ ॥

[1008] उपसंतो अनायासो विप्पसन्नो अनाविलो,॥
कल्याणसिलो धोवि दुक्खस्सन्तकारो सिया॥ ॥

[1006] जो कोई भी शांत और स्थिर है, संसार से विरक्त है, वह
बिना अहंकार के बुद्धिमान वाक्य बोल सकता है,
बिना विचलित हुए, उसने शरारती चीजों को झटक दिया,
जैसे कि वे पवन-देव द्वारा उड़ाई गई वन-पत्तियाँ हों।

[1007] जो कोई भी शांत और स्थिर है, संसार से विरक्त है, वह
बिना अहंकार के बुद्धिमान वाक्य बोल सकता है,
बिना विचलित हुए, उसने शरारती चीजों को त्याग दिया,
जैसे कि वे पवन-देव द्वारा उड़ाए गए वन-पत्तों की तरह हों।

[1008] शांत और निर्मल, दोष से अप्रभावित;
मन की स्पष्टता में बाधा डालने वाली हर चीज से मुक्त,
सद्गुणों में सुंदर, विवेकशील बुद्धि वाला,
उसे दुख का अंत करने वाला होना चाहिए।

देवदत्त में विश्वास करने वाले वज्जियों के विषय में निम्नलिखित कहा गया था, [30] और उनके सिद्धांत को स्वीकार किया गया था:

[1009] ना विसासे एकतियेसु एवm॥

अगरिसु पब्बजितेसु चापि,॥
साधुऽपि हुत्वान् असाधु होंति॥
असाधु हुत्वा पुना साधु होन्ति॥ ॥

[1010] कामछन्दो च व्यापादो थिनमिद्धौ च भिक्खुनो,॥
उद्धाक्कं विकिसिच्चा च पैन्सेटे चित्ताकेलिसा॥ ॥

[1011] यस्सा सक्करियामानस्सा असक्करेण चुभायौ,॥
समाधि न विकमपति अप्पमादविहारिनो॥ ॥

[1012] तं झायिकां सातातिकां सुखुमादिथिविपासकअ,॥
उपादानक्खयारामं आहु सप्पुरिसो इति॥ ॥

[1009] कुछ [31] ऐसे भी हैं जिन पर किसी को भरोसा नहीं करना चाहिए,
चाहे वे गृहस्थ हों या भिक्षुओं में से कोई भी।
ऐसे लोग जो कभी अच्छे थे और बुरे बन गए,
और फिर बुरे से अच्छे की ओर मुड़ गए।

[1010]
भिक्षु में इंद्रिय-संबंधी इच्छाएँ, द्वेष, सुस्ती और आलस्य , मन का विचलित होना,
और संदेह: - ये पाँच हृदय की बुराइयाँ हैं [32] ।

[1011] जो कोई भी भाग्य की दोनों चरम सीमाओं को सहन कर सकता है:
संसार के पक्ष और विपक्ष,
जब तक वह गंभीर गंभीरता में रहता है,
अपने एकाग्र मन को अविचलित रखता है: -

[1012] वह, जो गहन और अथक ध्यान में लीन है,
सूक्ष्म और कोमल अंतर्ज्ञान के साथ,
पकड़ने की प्रवृत्ति को समाप्त करने के लिए उत्सुक है: -
उसे वास्तव में 'एक अच्छा आदमी' कहना चाहिए।

अन्य भेदों को स्पष्ट करने के लिए, उदाहरण के तौर पर भगवान (बुद्ध) और स्वयं के बीच, उन्होंने ये श्लोक कहे:

[1013] महासमुद्दो पाथवि पब्बतो अनिलोपि च,॥
उपरया न युज्जन्ति सत्थु वरविमुत्तिया॥ ॥

[1014] चक्कनुवत्तको थेरो महानानि समाहितो,॥
पथवापग्गिसमानो न राजजति न दुःसति.॥ ॥

[1015] पन्नपारमितां पत्तो महाबुद्धि महामति,॥
अजजो जसासामानो सदा चरति निब्बुतो॥ ॥

[1013] विशाल सागर, विस्तृत पृथ्वी,
पर्वत, हाँ, आकाश [33]
कोई भी ऐसा चित्र प्रस्तुत नहीं करते जो यह दर्शा सके
कि हमारे भगवान (बुद्ध) के मन की मुक्ति (निर्वाण) कितनी उत्कृष्ट है।

[1014] वह वरिष्ठ भिक्षु, अत्यंत बुद्धिमान, एकाग्र,
जो उनके उदाहरण का अनुसरण करते हुए चक्र घुमाता है,
पृथ्वी, जल और अग्नि के समान है,
क्योंकि वह न तो किसी के प्रति स्नेह रखता है और न ही घृणा। [34]

[1015] अब ज्ञान में उनका सर्वोच्च स्थान है,
बुद्धि में पराक्रमी, एक महान ऋषि;
यद्यपि वे बुद्धि में मंद प्रतीत होते हैं, वे मंदबुद्धि नहीं हैं; [35] वे सदा आनंदमय शांति में अपने मार्ग पर चलते हैं।

अपने जीवन के उद्देश्य की पूर्ति दर्शाने के लिए उन्होंने कहा:

[1016] परिसीने मया सत्था काटां बुद्धस्स ससाणो,॥
ओहितो गरुको भरो भवनेति समुहता' ति.॥ ॥

[1016] गुरु (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है,
और बुद्ध के सभी विधान पूरे हो चुके हैं।
मैंने अपने ऊपर का भारी बोझ नीचे रख दिया है;
मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं बचा है। [36]

और जब उनका पूर्णतः शरीर त्यागने का समय आया, तो उन्होंने अपने चारों ओर एकत्रित भिक्षुओं को इस प्रकार संबोधित किया:

[1017] संपदेथ'अप्पामादेन एसा मे अनुसानि,॥
हन्दाहाऽ परिनिब्बिस्साँ विप्पमुत्तोऽमहि सब्बाधिऽ ति.॥ ॥

[1017] पूरी लगन से आगे बढ़ो और लक्ष्य प्राप्त करो!
यही आज्ञा मैं तुम्हें देता हूँ।
देखो! अब मेरा प्रस्थान पूर्ण होगा।
मैं सब से मुक्त और पूर्णतः मुक्त हो गया हूँ। [37]

[1] सी.सी.एल.एक्स.आई.आई.आई. देखें। धामिनपाला द्वारा कथा का वर्णन यहाँ कुछ संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया गया है।

[2] नालका। उपतिस्सा उनके परिवार का नाम था, वंगंता उनके पिता का नाम था (धम्मपद टिप्पणी, ii. 84, ऊपर देखें, CCXXXVIII।)।

[3] उनकी घनिष्ठ मित्रता का विस्तृत वर्णन धम्मपद टीका, i. 90 ff. (अग्गसावक-वत्थु, श्लोक 11, 12 पर) में किया गया है।

[4] गिरग्गसमाज्जा। समाज्जा पर , संवाद देखें , i. 7, n. 4.

[5] विनय ग्रंथों में पूर्णतः वर्णित है , i. 144 ff.; इसलिए मैंने यहाँ वर्णन को बहुत संक्षिप्त कर दिया है।

[6] अर्थात्, बुद्ध ने सभी चीजों को कारण-कार्य संबंध के आधार पर समझाया।

[7] मैं निकायों में इस विशेष अभ्यास का पता नहीं लगा सकता , लेकिन कई ऐसे हैं जो इस तरह के उद्देश्य की पूर्ति कर सकते हैं - उदाहरण के लिए, धातु -संयुत्त, ii. 143; भी 248; iii. 227 ff.; अंग. निक., iii. 245, 290.

[8] या सूकरा। यह नाम कहीं और नहीं मिलता। धम्मपद टीका, i. 96 देखें ।

[9] अर्थात, 'दिघनखा सुत्तंता' (मज्झ. निक., आई., संख्या 74). धम्मपद भाष्य में इसे उपरोक्त कहा गया है । सीआईटी., और दीघा पर सुमंगला-विलासिनी में , ii., XIV., Ī 10.

[10] टीका यथाचारि को यतो कायाधि संयतो, सवुतो हुत्वा कैरति के रूप में परिभाषित करती है, जो केवल व्याख्यात्मक है; -साटो -सैंटो के लिए है ।

[11] अजहत्तरतो। यह शब्द, जो देखने में विचित्र लगता है - शाब्दिक रूप से, स्वयं से संबंधित या व्यक्तिगत चीज़ों में आनंद लेना - सुत्त-पिटक में चार बार दोहराए गए एक श्लोक में आता है: दिघा निक., 2. 107; सांघ निक., श्लोक 268; धम्मपद, श्लोक 862; उदाना, 6. 1. संवादों में, 2. 113 में, इसका अनुवाद 'आंतरिक आनंद के साथ' किया गया है, टीका में इसका केवल नियाक, 'स्वयं का' (थेरीगाथ, श्लोक 469) द्वारा पुनर्कथन किया गया है। यहाँ हमारी टीका इसका 'ध्यान अभ्यास में आनंद लेना' द्वारा पुनर्कथन करती है।

[12] यहाँ छंद एक लंबे अनियमित छंद से श्लोक में बदल जाता है।

[13] परिब्बाजे = विहारेया (Cy.)। मिल में उद्धृत . द्वितीय. 850; जाट. साइ., ii., 293.

[14] यह मिलिंद में सारिपुत्त की गाथाओं में से पहली है (ii 280)। इनमें से कुछ गाथाएँ कैनन में नहीं मिलतीं। टीका में बताया गया है: 'जिसकी कुटिया में बैठे रहने पर भी बारिश से उसके घुटने नहीं भींचते।'

[15] सांध्य निक., चतुर्थ 207; इति-वुत्तक, ई 58 में वर्णित सिद्धांत का संदर्भ देते हुए। नैतिक बिंदु इंद्रियजन्य अवसरों पर तीन प्रकार की भावनाओं के संबंध में आत्म-नियंत्रण है। तीसरे प्रकार, तटस्थ भावना का सामान्य संदर्भ 'इसे अनित्य माना है' (aniccato) है। यहाँ यह anattato है। टीका में nāhosīti: yathābhūtāva-bodhe na attaniyābhinivesanaṃ ahosi. है।

[16] शाब्दिक रूप से: दुनिया में किससे क्या हो सकता है? मिलिंदा, ii. 332 में उद्धृत, लेकिन शब्दशः नहीं । डॉ. ओल्डेनबर्ग का मानना है कि अनाकारो , अनादारो, असाध्य (थेरागाथा, पृ. 89, एन.) से अधिक सही हो सकता है ।

[17] कठिन शब्द पापंचा। इस अंश पर डॉ. न्यूमैन की टिप्पणी और हमारी टिप्पणी देखें (संवाद, ii. 812)। पूर्व इसे सोंडरहेट, विएलहाइट, विविधता, बहुलता के रूप में प्रस्तुत करता है। लेकिन जब उनमें मौजूद खतरे को 'एकाग्रता', 'चयन', 'सरलता' आदि के विपरीत रखा जाता है, तो एकत्त के विपरीत शब्द , जैसा कि मुझे लगता है, नानात्त है, न कि पापंचा। पापंचा को तीन गुना परिभाषित किया गया है: 'लालसा', 'अभिमान' और 'त्रुटि' (दिट्ठी)। विभंग में , पृष्ठ। 390, papañcitāni भविष्य के व्यक्तिगत अस्तित्व के बारे में अटकलों (diṭṭhi) के नौ रूप हैं , एक ऐसा विषय जो maññitāni (कल्पना), phanditāni ('वाष्प,' कल्पनाएँ), sankhatāni (मानसिक रचनाएँ) शब्दों द्वारा साझा किया जाता है । तुलना करें मेरा नोट JRAS, 1906, 246 f.

[18] तुलना करें. XLII., CCXLIV.

[19] यह धम्मपद टीका (राधा-थेरा-वत्थु), ii में पूरी तरह से संबंधित है । 104 एफ.एफ., श्लोक 76 पर। राधा संभवत: CXXVII की वृद्ध थेरा हैं, जिन्हें सारिपुत्त द्वारा भिक्षुत्व में दीक्षित किया गया था।

[20] प्रथम विद्वतावाद के इस खंड पर, विनय ग्रंथ, द्वितीय देखें। 847 एफएफ। सी एफ iii. 211; धम्मपद टीका, ii. 109. पहाड़ी श्रावस्ती के पास थी ।

[21] ऊपर देखें, पृष्ठ 84, नोट 5.

[22] पाणिधि मे न विज्जति। सारिपुत्त की कहानी देखें - उसे मध्यवर्ती अध्ययन की आवश्यकता नहीं थी।

[23] यह विचित्र रूप से वर्णित प्रसंग उदाना, iv. 4 में है। विहार अभी तक कहीं और नहीं मिलता। उस ग्रंथ में अंतिम तीन पंक्तियाँ बुद्ध द्वारा उनके बारे में कही गई बताई जाती हैं। श्लोक 998-1000 रेवता (CCXLIV.) को भी समर्पित हैं।

[24] वह चौथे झाना (टीका) में थे । लेकिन अविताक्का दूसरे चरण में ही पहुँच जाता है।

[25] उनके भाई की कविता में भी, = श्लोक 652.

[26] = श्लोक 606. ये, फिर से, रेवता के श्लोकों में आते हैं।

[27] मध्य आयु में खड़े होकर वृद्धावस्था या युवावस्था को देखना (टीका)। इन चार पंक्तियों में श्लोक को एक अनियमित प्रकार के श्लोक से बदल दिया गया है। उभयेन-म-इदं पढ़ें।

[28] तुलना करें श्लोक 408, 053; बहनें, श्लोक 5.

[29] आश्चर्यजनक रूप से पहला कोट्टित को ही समर्पित है। देखें II.

[30] बुद्ध के प्रथम चचेरे भाई देवदत्त के जीवन पर, विनय ग्रंथ, i. 228 f., 288 ff., विशेष रूप से 239 ff. देखें। मिलिंद, i. 162 ff. देखें। सारिपुत्त, जिसने पहले उसकी प्रशंसा की थी, उसे धर्मत्यागी घोषित करने के लिए नियुक्त किया गया था, जिसके गुण स्वयं अविश्वसनीय थे।

[31] ekatiyesu (Cy ekaccesu) पर , देखें ट्रेंकनर, पाली मिसलेनी, पृ. 56

[32] ये पाँच 'बाधाएँ' यहाँ किलेस (मानसिक पीड़ाएँ), या केलुसा (बुद्ध. साइ., 310 ff.) के रूप में वर्गीकृत की गई हैं - इसी प्रकार (ब्र.) साइ. = चित्तुपक्किलेस।

[33] 'जो पूर्व, इत्यादि में विभाजित है' (टिप्पणी)।

[34] टीका कहती है कि भगवान (बुद्ध) जानबूझकर और उदारतापूर्वक, वांछनीय और अवांछनीय चीजों के प्रति उतने ही समभाव रखते थे, जितने कि तत्व अनजाने में रखते थे। भिक्षु को इसी उद्देश्य से पृथ्वी-मन और जल-मन का विकास करना पड़ता था (मज्झ. निक., i. 423; अंग. निक., iv. 374; तुलना करें जात., iii. 247; मिलिंद, i. 258; ii. 308, 311)।

[35] श्लोक 501 देखें। 'उनकी ज़रूरतों की सादगी के कारण।' टीका, महामुनि के स्थान पर महामती पढ़ते हुए, और सारिपुत्त की बुद्ध की स्तुति का उद्धरण देते हुए, मज्झ., iii. 25.

[36] = श्लोक 604, 792, 891, 918.

[37] उनके भाई रेवता को समर्पित, जब बाद वाला भी मर रहा था (श्लोक 658)। बुद्ध के अंतिम शब्द, संवाद, ii. 178 देखें ।

BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी

सारिपुत्र

सारिपुत्त बुद्ध के प्रथम (दाहिने) प्रमुख शिष्य और ज्ञान में अग्रणी थे। उनका विशेष कार्य धर्म का विस्तृत विश्लेषण और व्यवस्थितीकरण करना था। परम सत्य की गहरी समझ के कारण वे धम्म के सूक्ष्म निहितार्थों को उजागर करने और जटिल शिक्षाओं के अर्थ को समझाने के लिए उत्तरदायी थे।

अपनी बुद्धिमत्ता के साथ-साथ, सारिपुत्त अपने धैर्य, करुणा, विनम्रता और दूसरों की मदद करने की भावना के लिए भी प्रसिद्ध थे। उन्होंने न केवल धम्म में समुदाय और भिक्षुओं की सहायता की, बल्कि भौतिक सहायता और आराम भी प्रदान किया। जब भिक्षु सुबह-सुबह भिक्षा मांगने निकलते थे, तो सारिपुत्त उनके साथ नहीं जाते थे। इसके बजाय, वे मठ में ही रहते थे और यह सुनिश्चित करते थे कि

सब कुछ व्यवस्थित रहे। यदि कोई नौसिखिया भिक्षु किसी कमरे की सफाई करना भूल जाता था या कोई वस्तु अव्यवस्थित होती थी, तो सारिपुत्त उसे सही जगह पर रखते थे और परिसर की सफाई करते थे। वे यह सुनिश्चित करना चाहते थे कि मठ हर समय व्यवस्थित रहे ताकि दर्शनार्थियों पर संघ के बारे में कोई नकारात्मक प्रभाव न पड़े।

सारिपुत्त की देखभाल

इसके बाद उन्होंने बीमारों के आश्रम का दौरा किया और बीमार भिक्षुओं को सांत्वना और दवा दी। बुद्ध ने तिस्सा नामक एक बीमार भिक्षु की देखभाल करते हुए कहा था, जिसे सभी ने ठुकरा दिया था, "जो बीमारों की देखभाल करते हैं, वे मेरी देखभाल करते हैं (मेरे उपदेशों का पालन करते हैं)।" सारिपुत्त ने भिक्षुओं को यह याद दिलाते हुए, नए भिक्षुओं को बीमारों की देखभाल और उन्हें सांत्वना देने में मदद करने के लिए प्रोत्साहित किया। यदि उनमें से किसी को ऐसी दवा की आवश्यकता होती जो वहां उपलब्ध नहीं होती, तो उन्होंने उसे उपलब्ध कराने की व्यवस्था की। इन सभी कार्यों के पूरा होने के बाद ही सारिपुत्त भिक्षा मांगने के लिए निकले।

सारिपुत्त द्वारा बीमारों की सेवा करने के अनेक प्रमाण मिलते हैं। अनाथपिंडिका को दिए गए उनके उपदेश और सांत्वना विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। सारिपुत्त ने दो अवसरों पर अनाथपिंडिका की सहायता की। पहला अवसर तब था जब वे बीमार थे और असहनीय पीड़ा से ग्रस्त थे। सारिपुत्त ने अनाथपिंडिका को याद दिलाया कि वे सोतापन्न हैं और इस प्रकार ज्ञानोदय के मार्ग पर अग्रसर हैं। वे धर्म से विमुख नहीं हो सकते और न ही दुखमय लोकों में पुनर्जन्म ले सकते हैं। इन शब्दों से अनाथपिंडिका का मन शांत हुआ और उन्हें अपार प्रसन्नता प्राप्त हुई। उनकी असहनीय पीड़ा दूर हो गई। अनाथपिंडिका सारिपुत्त के प्रति इतने कृतज्ञ थे कि उन्होंने अपने सेवकों द्वारा तैयार किया गया स्वादिष्ट भोजन उन्हें खाने के लिए प्रेरित करने हेतु अर्पित कर दिया।

दूसरी घटना अनाथपिंडिका के मृत्युशय्या पर घटी। सारिपुत्त पर अथाह विश्वास और आदर रखने वाले अनाथपिंडिका ने 'उन पर दया भाव से' उनकी उपस्थिति का अनुरोध किया था। सारिपुत्त, आनंद के साथ आए और अनासक्ति पर एक प्रेरणादायक उपदेश दिया। अनाथपिंडिका उस गहन प्रवचन से इतने भावुक हो गए कि उनकी आँखों में आँसू आ गए, ऐसा प्रवचन उन्होंने पहले कभी नहीं सुना था। कुछ ही समय बाद, अनाथपिंडिका का निधन हो गया और वे तुषिता स्वर्ग में एक देव के रूप में पुनर्जन्म हुए। उसी रात वे अपने प्रधान शिष्य की महिमा का गुणगान करने के लिए वैभवशाली रूप में जेतवन आए। बुद्ध को प्रणाम करते हुए उन्होंने कहा:

सारिपुत्त वास्तव में ज्ञान से परिपूर्ण हैं।

सद्‌गुण और आंतरिक शांति के साथ,

यहां तक कि एक भिक्षु भी जो इससे आगे बढ़ चुका है

"अधिकतम तो वह केवल उसके बराबर ही हो सकता है।"

अगली सुबह बुद्ध ने अपने भिक्षुओं को अपने आगंतुक और उसकी कही बातों के बारे में बताया, लेकिन देव की पहचान नहीं बताई। आनंद ने तुरंत अनाथपिंडिका की सही पहचान करते हुए कहा कि देव अवश्य ही अनाथपिंडिका होंगे, जिन्होंने देव के रूप में पुनर्जन्म लिया है, क्योंकि उन्हें सारिपुत्त के प्रति बहुत आदर और विश्वास था।

सारिपुत्त की विनम्रता

सारिपुत्त की विनम्रता का वर्णन भी ग्रंथों में मिलता है। बुद्ध के साथ यात्रा करते समय, उन्हें यह उचित नहीं लगा कि प्रथम प्रमुख शिष्य होने के नाते उनका स्थान बुद्ध के बगल में होना चाहिए। इसके बजाय, वे पीछे-पीछे चलते रहे और उन बीमार और दुर्बल भिक्षुओं की सहायता करते रहे जो अक्सर पीछे रह जाते थे। वास्तव में, उनकी अपार करुणा और देखभाल के कारण, एक बार सारिपुत्त सबसे अंत में पहुँचे। क्योंकि सभी अच्छे आवास भरे जा चुके थे, सारिपुत्त ने वस्त्रों से बने तम्बू में रात बिताई। जब यह बात बुद्ध के ध्यान में लाई गई, तो उन्होंने कहा कि आवास की व्यवस्था संघ में वरिष्ठता के आधार पर की जानी चाहिए और तित्तिर जातक का पाठ सुनाया, जिसमें पिछले जन्म में बुद्ध और उनके प्रमुख शिष्यों ने इसी प्रकार यह निर्णय लिया था कि वे तीनों सबसे वरिष्ठ सदस्य को प्रणाम और सम्मान करेंगे।

एक अन्य अवसर पर, सात वर्षीय एक नवोदित भिक्षु ने सारिपुत्त का ध्यान इस ओर दिलाया कि उनका भीतरी वस्त्र उनके बाहरी वस्त्र से नीचे घिसट रहा है। एक तरफ हटकर, सारिपुत्त ने अपना वस्त्र ठीक किया, फिर उस युवा भिक्षु को प्रणाम किया और पूछा, "अब ठीक है, गुरुजी?" मिलिंदपन्हा में इस घटना का सारिपुत्त का विवरण इस प्रकार दर्ज है:

"यदि कोई व्यक्ति जो आज सात वर्ष की आयु में बाहर चला गया है"

अगर मुझे सिखाया जाए, तो मैं इसे सिर झुकाकर स्वीकार करता हूँ;

उन्हें देखते ही मैं अपना उत्साह और सम्मान प्रकट करता हूँ:

काश मैं उसे हमेशा शिक्षक के स्थान पर ही रख सकूँ।

सारिपुत्त का अपने गुरु असाजी के प्रति आदर, जिन्होंने उन्हें सर्वप्रथम धम्म का ज्ञान दिया, एक ऐसा उदाहरण है जिसका सभी को अनुसरण करना चाहिए। प्रत्येक रात्रि को सोने से पहले सारिपुत्त बुद्ध को प्रणाम करते थे। फिर वे चारों ओर देखते, प्रणाम करते और किसी दिशा की आराधना करते। यह देखकर भिक्षुओं ने बुद्ध को सूचित किया कि सारिपुत्त विभिन्न दिशाओं (उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम) की आराधना करने लगे हैं। बुद्ध ने उनकी इस धारणा को सुधारते हुए कहा कि प्रत्येक रात्रि को सारिपुत्त अपनी दिव्य दृष्टि से यह देखते थे कि उनके प्रथम गुरु असाजी किस दिशा में निवास कर रहे हैं। फिर, उन्हें प्रणाम करने के बाद, वे अपना सिर उसी दिशा में रखकर सोते थे, इस बात का विशेष ध्यान रखते हुए कि उनके पैर उस दिशा में न हों जिस दिशा में असाजी निवास कर रहे हैं।

गुरुओं का आदर करना बुद्ध की शिक्षा का अभिन्न अंग है। नव सूत्र में यह निर्देश दिया गया है कि व्यक्ति को अपने गुरुओं का आदर करना चाहिए, विशेषकर उन गुरुओं का जो धम्म का अमृत सिखाते हैं। सूत्र की शुरुआत इस प्रकार होती है:

"जैसे देवता इंद्र को श्रद्धापूर्वक श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं,

तो क्या हमें उस व्यक्ति का आदर करना चाहिए?

जिनके माध्यम से धम्म का ज्ञान प्राप्त हुआ है।

सारिपुत्त का धैर्य

सारिपुत्त का धैर्य और सहनशीलता भी प्रसिद्ध है। कुछ लोग सारिपुत्त के गुणों की प्रशंसा कर रहे थे, तभी एक युवक ब्राह्मण ने उन्हें चुनौती देते हुए कहा कि सारिपुत्त ने कभी क्रोध नहीं दिखाया, क्योंकि उन्हें कभी उकसाया ही नहीं गया। यह साबित करने के लिए कि सारिपुत्त भी दूसरों की तरह क्रोध करते हैं, वह सारिपुत्त के पीछे गया और उन्हें ज़ोरदार प्रहार किया। सारिपुत्त ने कहा, 'यह क्या था?' और फिर, यह देखे बिना कि किसने उन्हें प्रहार किया है, आगे बढ़ते रहे। ब्राह्मण अपने इस व्यवहार से अपराधबोध और लज्जा से भर गया। घुटनों के बल गिरकर उसने क्षमा मांगी और सारिपुत्त को बताया कि उसने उन्हें क्रोधित करने के लिए प्रहार किया था। तब सारिपुत्त ने ब्राह्मण को क्षमा कर दिया। ब्राह्मण केवल मौखिक क्षमा से संतुष्ट नहीं हुआ और उसने सारिपुत्त को दोपहर के भोजन के लिए अपने घर आने का निमंत्रण दिया ताकि यह दिखाया जा सके कि उसके मन में कोई द्वेष नहीं है। सारिपुत्त ने निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

भोजन के बाद, जब सारिपुत्त जा रहे थे, तो उन्होंने देखा कि ब्राह्मण को दंडित करने के लिए क्रोधित समर्थकों की भीड़ लाठी-पत्थर लेकर जमा हो गई थी। उन्होंने ब्राह्मण द्वारा अपने प्रिय और आदरणीय बुजुर्ग के साथ किए गए दुर्व्यवहार को देखा था। सारिपुत्त ने उनसे पूछा कि यह हंगामा किस बात का है। जब उन्हें बताया गया, तो उन्होंने पूछा, "ब्राह्मण ने किसे मारा, आपको या मुझे?" यह जानकर कि ब्राह्मण ने बुजुर्ग को मारा है, उन्होंने क्रोधित भीड़ को यह कहकर शांत किया, "मैंने उसे क्षमा कर दिया है। क्रोध का क्या कारण है जब मुझे, जिसे उसने मारा है, कोई क्रोध नहीं है।"

सारिपुत्त की दयालुता, करुणा और विनम्रता ने उन्हें अनेक मित्र बना दिए। वे बुद्ध के प्रमुख शिष्य थे और ज्ञान में बुद्ध के बाद दूसरे स्थान पर थे। फिर भी वे विनम्र, दयालु और करुणामय थे। उन्होंने कभी भी अपने पद का दुरुपयोग विशेष व्यवहार के लिए नहीं किया। अपने बचपन के मित्र मोग्गलाना के साथ घनिष्ठ मित्रता के अलावा, उनका बुद्ध के निजी सेवक आनंद के साथ भी घनिष्ठ संबंध था।

सारिपुत्त, जो अपने प्रमुख शिष्य होने के नाते बुद्ध की आवश्यकताओं का ध्यान रखना अपना कर्तव्य समझते थे, आनंद द्वारा बुद्ध के प्रति दिखाए गए आदर, देखभाल और ध्यान के लिए अत्यंत कृतज्ञ थे। बदले में, आनंद भी बुद्ध के प्रमुख शिष्य के प्रति अत्यंत आदर रखते थे, जो बुद्ध के विशाल अनुयायी समूह के प्रबंधन और प्रशिक्षण में सहायक थे। जब आनंद नवोदित भिक्षुओं को दीक्षा देते थे, तो उन्हें उच्च दीक्षा के लिए सारिपुत्त के पास ले जाते थे। इसी प्रकार, जब सारिपुत्त नवोदित भिक्षुओं को दीक्षा देते थे, तो उन्हें उच्च दीक्षा के लिए आनंद के पास ले जाते थे। इस प्रकार, इन दो महान भिक्षुओं ने भिक्षुओं के एक विशाल समुदाय का सह-मार्गदर्शन किया।

आनंद भी बुद्ध की अनुमति से सारिपुत्त के लिए प्राप्त उत्तम वस्त्रों को अक्सर अपने पास रखते थे। इसी प्रकार, सारिपुत्त भी अपने द्वारा प्राप्त उत्तम भेंटों को आनंद को सौंप देते थे। एक बार आनंद को एक धनी ब्राह्मण से एक अत्यंत कीमती वस्त्र प्राप्त हुआ और उन्होंने बुद्ध की अनुमति से उसे सारिपुत्त के लौटने तक दस दिनों के लिए अपने पास रखा। अन्य भिक्षुओं ने इस गहरी मित्रता पर टिप्पणी करते हुए कहा, "हम समझ सकते हैं कि आनंद, जिन्होंने अभी तक अर्हत्व प्राप्त नहीं किया है, सारिपुत्त के प्रति इतना गहरा स्नेह रखते हैं, लेकिन यह कैसे संभव है कि सारिपुत्त, जो दोषों से मुक्त हैं, ऐसा स्नेह प्रदर्शित करें?" इसका उत्तर यह था कि सारिपुत्त का आसक्ति

सांसारिक आसक्ति नहीं थी, बल्कि आनंद के गुणों के प्रति प्रेम और सम्मान था। यह इसलिए भी था क्योंकि अर्हन्तों ने सांसारिक गुणों (वासना गुण) का नाश नहीं किया है। वासना गुण का नाश केवल बुद्ध ने ही किया है।

सारिपुत्त एक अत्यंत प्रेरक साथी रहे होंगे, क्योंकि अनेक लोग उनसे संगति करना चाहते थे। लोगों को उनकी ओर आकर्षित करने वाली बातें थीं उनका दूसरों के प्रति गहरा स्नेह, उनका अपार धैर्य और उनका अनुकरणीय व्यवहार। जब सारिपुत्त ध्यानमग्न अवस्था में प्रवेश कर गए, तो देव (देवदूत) भी उन्हें प्रणाम करने आए।

हालांकि उनके बहुत से अनुयायी थे और वे बहुत सम्मानित थे, फिर भी सारिपुत्त को अपनी माता रूपासरी को सत्य के प्रति आश्वस्त करने में कठिनाई हुई, क्योंकि उन्हें जन्म से ही ब्राह्मणों के सिद्धांतों की शिक्षा दी गई थी। सारिपुत्त के तीन भाई थे - चुंडा, उपसेना और रेवता, और तीन बहनें थीं - चाला, उपकला और शिशुकला। इन सभी छह भाइयों ने बुद्ध के मार्गदर्शन में दीक्षा ली और अरहंत पद प्राप्त किया। बाद के वर्षों में चुंडा सारिपुत्त के सेवक बन गए। हालांकि रूपासरी के इतने प्रतिष्ठित पुत्र संघ में थे, फिर भी वे स्वयं ब्राह्मण रीति-रिवाजों में गहरी आस्था रखती थीं और किसी भी संप्रदाय में विश्वास नहीं करती थीं। वास्तव में, वे अपने सबसे छोटे पुत्र रेवता को दीक्षा नहीं देना चाहती थीं और उन्हें संघ में प्रवेश करने से रोकने के लिए बहुत कम उम्र में ही उनका विवाह निर्धारित कर दिया था। हालांकि, विवाह के दिन, जब रेवता ने अपनी होने वाली दुल्हन की बहुत बूढ़ी दादी को देखा, तो वे निराश हो गए और सभी चीजों की क्षणभंगुरता को समझते हुए, दीक्षा लेने के लिए विवाह स्थल से भागकर मठ चले गए। उनकी तीनों बहनों ने शादी तो कर ली, लेकिन गृहस्थी जीवन त्यागकर भिक्षुणी बन गईं। उनके बच्चे भी भिक्षुणी बन गए।

रूपासरी पर उनके किसी भी बच्चे या पोते-पोती का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। जब सारिपुत्त भिक्षुओं के एक बड़े समूह के साथ अपने जन्म नगर गए, तो वे भिक्षा मांगने अपनी माता के घर आए। उनकी माता ने उन्हें भोजन देते हुए सभी भिक्षुओं के सामने उनका अपमान किया और उन्हें फटकारा। उन्होंने कहा, "हे दूसरों का जूठा खाने वाले! जब तुम्हें भोजन नहीं मिलता, तो तुम अजनबियों के घर-घर जाकर उनके चम्मचों से जूठा चाटते हो। इसी कारण तुमने अस्सी करोड़ की संपत्ति त्याग दी। तुमने मुझे बर्बाद कर दिया। अब जाओ और खाओ।" फिर उन्होंने भिक्षुओं को अपने छोटे बेटे को सेवक बनाने के लिए फटकारा और कहा, "तो तुम ही हो जिन्होंने मेरे छोटे बेटे को अपना सेवक बनाया है।" लेकिन सारिपुत्त ने एक शब्द भी नहीं कहा। उन्होंने चुपचाप भोजन ग्रहण किया और मठ लौट गए।

भिक्षुओं के दल में शामिल राहुल ने यह घटना बुद्ध को सुनाई। तब बुद्ध ने भिक्षुओं की सभा के सामने सारिपुत्त की प्रशंसा करते हुए कहा:

जो क्रोध से मुक्त है,

जो अपने कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक निर्वाह करता है,

जो नियमों का पालन करता है और कामवासना से मुक्त है,

जिसने स्वयं को वश में कर लिया है,

जो अपना अंतिम शरीर धारण करता है -

मैं इसे ब्राह्मण (अरहंत) कहता हूँ।

(धम्मपद 400)

हम सभी सारिपुत्त के महान धैर्य, सहनशीलता और विनम्रता से सीख सकते हैं। बुद्ध ने हमें माताओं के प्रति आदर का उपदेश दिया है। सारिपुत्त का अनुकरणीय आचरण हम सभी के लिए उपयुक्त है।

सारिपुत्त का ज्ञानोदय

सारिपुत्त ने अपने भतीजे दिघनाखा को संबोधित करते हुए बुद्ध के प्रवचन को सुनते समय परम ज्ञान प्राप्त किया। बुद्ध भावबोध का ज्ञान दे रहे थे और उन्होंने शरीर की प्रकृति समझाते हुए प्रवचन का शुभारंभ किया। फिर उन्होंने दिघनाखा से शरीर का चिंतन करने को कहा ताकि शरीर के प्रति इच्छा और चिंता का त्याग हो सके। इसके बाद उन्होंने समस्त भावों की अनित्यता और आश्रित उत्पत्ति के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। बुद्ध को पंखा झलते हुए सारिपुत्त प्रवचन सुनते रहे और फिर उन्होंने तेरगाथा में वर्णित अपने अरहंतत्व प्राप्ति का वर्णन किया।

बुद्ध ने सारिपुत्त के प्रशासन और भिक्षुओं के प्रति उनके व्यवहार की बार-बार प्रशंसा की और उसे सुदृढ़ किया। यद्यपि एक अवसर ऐसा भी आया जब बुद्ध ने सारिपुत्त को हल्के से फटकारा। सारिपुत्त ने ब्राह्मण धनंजनी को उनकी मृत्युशय्या पर शिक्षा दी थी और उन्हें चार ब्रह्म विहारों - मेत्ता (प्रेम-कृपा), करुणा (दया), मुदिता (सहानुभूतिपूर्ण आनंद) और उपेक्षा (समभाव) - का ज्ञान देकर ब्रह्मलोक में पुनर्जन्म सुनिश्चित किया था। बुद्ध ने उनसे पूछा कि उन्होंने धनंजनी को आगे क्यों नहीं पढ़ाया और उनके सभी दोषों को नष्ट करके निर्वाण प्राप्त करने में उनकी सहायता क्यों नहीं की। बुद्ध के विपरीत, सारिपुत्त किसी व्यक्ति की आध्यात्मिक क्षमताओं को जानने में सक्षम नहीं थे। धनंजनी ब्राह्मण थे, इसलिए उन्होंने सुनिश्चित किया कि उनका लक्ष्य, जो ब्रह्मलोक में जन्म लेना था, पूरा हो जाए। बुद्ध ने समझाया कि इसके फलस्वरूप धनंजनी को अरहंतत्व प्राप्त करने के लिए मनुष्यलोक में पुनः जन्म लेना होगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि ब्रह्मलोक में भी पुनर्जन्म वांछनीय नहीं है, क्योंकि सोतापन्न प्राप्ति न कर पाने वाला व्यक्ति अगले जन्म में कोई ऐसा अशुभ कर्म कर सकता है जिससे उसे किसी दुखी लोक में पुनर्जन्म लेना पड़े। बुद्ध ने देखा था कि उचित मार्गदर्शन से धनंजनी अरहंतत्व प्राप्त करने में सक्षम होते।

सारिपुत्त के अंतिम दिन

जब सारिपुत्त का जीवन अंत के निकट था, तब उन्होंने निश्चय किया कि अब समय आ गया है कि वे अपनी माता को सत्य का विश्वास दिलाएं और उन्हें बुद्ध के मार्ग पर अग्रसर करें। सारिपुत्त जानते थे कि उन्हें पहले उनका मन खोलना होगा ताकि वे बुद्ध की शिक्षाओं को ग्रहण कर सकें। वे यह भी जानते थे कि ऐसा करने का एकमात्र तरीका महाब्रह्म में उनकी आस्था को भंग करना था। यह जानते हुए कि महाब्रह्म सहित सभी ब्रह्मा उनका बहुत आदर करते हैं, उन्होंने अपने जन्मस्थान जाकर उसी पलंग पर अंत्येष्टि करने का निश्चय किया जिस पलंग पर उनका जन्म हुआ था। परन्तु पहले उन्हें बुद्ध से विदा लेनी थी। अपने भिक्षुओं के दल के साथ वे बुद्ध के पास गए और उन्हें आदरपूर्वक प्रणाम किया। फिर उन्होंने कहा:

हे महान ऋषि, जगत के स्वामी,

मुझे जल्द ही जीवन से मुक्ति मिल जाएगी।

अब आना-जाना नहीं रहेगा।

यह आखिरी बार है जब मैं आपकी पूजा करता हूँ।

अब मेरे जीवन में जो क्षणिक समय बचा है, वह बहुत कम है।

लेकिन अब से सात दिन बाद मैं लेट जाऊंगा

इस शरीर को नीचे गिराकर बोझ उतार फेंकना।

हे स्वामी! इसे स्वीकार कीजिए! हे प्रभु! अनुमति दीजिए!

अंततः मेरे निर्वाण का समय आ गया है

अब मैंने जीने की इच्छा त्याग दी है।

तब बुद्ध ने सारिपुत्त से पूछा कि वे अंतिम निर्वाण कहाँ प्राप्त करेंगे। सारिपुत्त ने उत्तर दिया कि वे मगध देश के नलका (उपतिस्सा) नामक गाँव में प्राप्त करेंगे। बुद्ध ने सारिपुत्त से कहा कि वे अपने छोटे और बड़े भाइयों को धर्म का उपदेश दें, क्योंकि उन्हें अब उनके जैसा भिक्षु देखने का अवसर नहीं मिलेगा।

तब उस महान गुरु ने प्रवचन दिया जिसमें उन्होंने अपनी सभी अद्‌भुत शक्तियों का प्रदर्शन किया। सत्य की सर्वोच्च ऊँचाई तक पहुँचकर, सांसारिक सत्य तक उतरकर, बार-बार ऊपर उठते हुए, उन्होंने धम्म का प्रत्यक्ष और उपमाओं के साथ विवेचन किया।

फिर उन्होंने बुद्ध के चरणों की पूजा की, उन्हें आलिंगन किया और कहा: "इन चरणों की पूजा करने के लिए मैंने अनगिनत काल और एक लाख विश्व चक्रों में सभी सिद्धियों को प्राप्त किया है। मेरे हृदय की मनोकामना पूरी हो गई है। अब आगे कोई संपर्क या संवेदना नहीं रहेगी। मैं शीघ्र ही निर्वाण नगर में प्रवेश करूँगा, जो अमर, शांत, आनंदमय और सुरक्षित है, जिसे लाखों बुद्धों ने प्राप्त किया है। हे प्रभु, यदि मेरे किसी कर्म या वचन से आप प्रसन्न न हुए हों, तो भगवान मुझे क्षमा करें। अब मेरे जाने का समय हो गया है।"

तब बुद्ध ने सारिपुत्त को क्षमा करते हुए कहा, "सारिपुत्त, न तो कर्म से और न ही वचन से मुझे तुम्हें दोषी ठहराने की कोई बात है, क्योंकि तुम विद्वान हो, महान बुद्धि के स्वामी हो, व्यापक और उज्ज्वल बुद्धि के स्वामी हो, तीव्र, तीक्ष्ण और मर्मस्पर्शी बुद्धि के स्वामी हो।"

जैसे ही बुद्ध ने सारिपुत्त को निर्वाण प्राप्त करने की अनुमति दी, पृथ्वी कांप उठी और आकाश में मूसलाधार वर्षा हुई, मानो स्वयं स्वर्ग उस महान गुरु के देहांत पर विलाप कर रहा हो। तब बुद्ध उठे और अपने सुगंधित कक्ष में चले गए। सारिपुत्त ने तीन बार कक्ष की परिक्रमा की और प्रणाम करते हुए कहा, "असंख्य काल और एक लाख विश्व-चक्र पूर्व मैंने अनोमदस्सी बुद्ध के चरणों में प्रणाम किया

था और आपके दर्शन की कामना की थी। अब मेरी यह कामना पूर्ण हो गई है और मैंने आपको देख लिया है। पहली मुलाकात में ही मैंने आपको पहली बार देखा था। यह मेरा अंतिम दर्शन है। अब आगे कोई दर्शन नहीं होगा।" और हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए उन्होंने बुद्ध को प्रणाम किया और पीछे की ओर तब तक चलते रहे जब तक कि बुद्ध दृष्टि से ओझल नहीं हो गए।

भगवान बुद्ध ने अपने चारों ओर उपस्थित भिक्षुओं को संबोधित करते हुए उनसे सारिपुत्त की अंतिम यात्रा में उनका साथ देने का अनुरोध किया। उनके ऐसा कहते ही जेतवन में उपस्थित चारों सभाएँ गुरु को अकेला छोड़कर उनके साथ चल पड़ीं। सावत्थी के नागरिक भी धूप और सुगंधित फूल लेकर उनके साथ शामिल हो गए। रोते-बिलखते भक्तों की एक बड़ी भीड़ गुरु के पीछे-पीछे चली। सारिपुत्त ने भक्तों को संबोधित करते हुए उन्हें सभी वस्तुओं की अनित्यता का स्मरण कराया। उन्होंने कहा, "क्या मैंने तुम्हें हमारे प्रियतम सभी वस्तुओं की अनित्यता के बारे में नहीं सिखाया है?" फिर उन्होंने सभी से सावत्थी लौटने का अनुरोध किया, क्योंकि गुरु अकेले थे और उन्हें अकेला नहीं छोड़ा जाना चाहिए।

स्वयं द्वारा दीक्षित किए गए पाँच सौ भिक्षुओं के दल के साथ सारिपुत्त अपने जन्मस्थान के लिए रवाना हुए। नालका पहुँचने में उन्हें एक सप्ताह लगा और रास्ते में उन्होंने प्रत्येक नगर में एक रात बिताई, जहाँ उन्होंने अंतिम बार भक्तों को करुणापूर्वक धम्म का उपदेश दिया। अपने जन्म नगर में प्रवेश करते ही उन्होंने अपने भतीजे के माध्यम से अपनी माता को संदेश भेजा कि वे और उनके साथी एक दिन उनके साथ रहेंगे और उनसे अपने जन्म कक्ष और 500 भिक्षुओं के निवास की व्यवस्था करने का अनुरोध किया।

फिर वह धीरे-धीरे अपने बचपन के घर की ओर चल पड़ा। रूपासारी अपने बेटे की इस हालत को देखकर व्याकुल हो उठी। उसने सोचा, "पता नहीं उसे अपनी सारी संपत्ति छोड़ने की गलती का एहसास हो गया है या नहीं। शायद बुढ़ापे में वह समझदार हो गया है और अपनी संपत्ति वापस लेने लौट आया है।" इसके बाद वह अपने बेटे और उसके दल के स्वागत की तैयारी में जुट गई।

सारिपुत्त अपनी माता के घर पहुँचा और उस शयनकक्ष में प्रवेश किया जहाँ उसका जन्म हुआ था। परन्तु वह अत्यंत पीड़ा में था और पेचिश से बुरी तरह बीमार था। वह लेट गया और आराम करने लगा, जबकि उसका भाई, नवोदित चुंडा, उसकी देखभाल करने लगा।

चतुमहाराजिका स्वर्ग के चार प्रमुख देवताओं ने देखा कि धम्म के सेनापति का देहांत होने वाला है, तो वे अपनी पूर्ण ज्योति के साथ पूज्य गुरु को प्रणाम करने के लिए पृथ्वी पर अवतरित हुए। कुछ ही समय बाद, तावतिंसा स्वर्ग के राजा सक्का ने पूरे क्षेत्र को प्रकाशित किया और पृथ्वी पर अवतरित होकर गुरु के समक्ष घुटने टेककर उन्हें प्रणाम किया। अंत में, महा बहामा अपनी पूर्ण ज्योति के साथ पृथ्वी पर अवतरित हुए ताकि वे गुरु को अंतिम श्रद्धांजलि अर्पित कर सकें और उनके अंतिम दर्शन कर सकें।

रूपासारी अपने पुत्र के पास आईं और उससे उसके आगंतुकों के बारे में पूछा। उन्होंने पूछा, "वे चार तेजस्वी प्राणी कौन थे, जिन्होंने आपको प्रणाम किया?" सारिपुत्त ने उत्तर दिया, "वे चार महान दिव्य राजा, उपासिका थे।" उनकी माता ने पूछा, "तो क्या आप उनसे श्रेष्ठ हैं?" सारिपुत्त ने उत्तर दिया, "वे मंदिर के सेवकों के समान हैं। जब से हमारे गुरु ने पुनर्जन्म लिया है, वे तलवारें लिए उनकी रक्षा कर रहे हैं।"

फिर उनकी माता ने उनसे उनके अगले आगंतुक के बारे में पूछा, जो तेज में चारों राजाओं से भी श्रेष्ठ था। सारिपुत्त ने कहा, "वह देवों के राजा सक्का हैं।" उनकी माता ने पूछा, "तो क्या तुम देवों के राजा से भी श्रेष्ठ हो, प्रिय?" सारिपुत्त ने उत्तर दिया, "वह एक भिक्षु के समान हैं जो भिक्षु का सामान ढोते हैं। जब हमारे गुरु तावतिमास स्वर्ग से लौटते हैं, तो सक्का उनका कुंड और अतिरिक्त वस्त्र लेकर पृथ्वी पर अवतरित होते हैं।"

"और जब सक्का चले गए," उनकी माँ ने पूछा, "तुम्हारे कमरे में कौन आया और अपने प्रकाश से कमरे को भर दिया?" "वह," सारिपुत्त ने उत्तर दिया, "तुम्हारे महाब्रह्म हैं। वह स्वामी और स्वामी जिन्हें तुम प्रणाम करते हो।" "तो क्या आप मेरे स्वामी महाब्रह्म से भी महान हैं?" उनकी माँ ने पूछा।

"जी हां, उपासिका," सारिपुत्त ने उत्तर दिया, "ऐसा कहा जाता है कि जिस दिन हमारे स्वामी का जन्म हुआ था, उस दिन महा ब्रह्मा ने उस महान प्राणी को एक सुनहरे जाल में ग्रहण किया था।"

यह सुनकर ब्राह्मण स्त्री ने सोचा, "मेरे पुत्र के स्वामी की शक्ति और अच्छाई कितनी महान होगी," और वह परम पूज्य में प्रसन्नता, आनंद और विश्वास से भर उठी।

सारिपुत्त ने देखा कि उनकी माता अब बुद्ध की शिक्षाओं को ग्रहण करने के लिए तैयार हैं, इसलिए उन्होंने बुद्ध के गुणों पर आधारित धम्म का उपदेश दिया। प्रवचन के अंत में उनकी माता ने संतत्व की प्रथम अवस्था, सोतापन्न प्राप्त की। सोतापन्न अवस्था के आनंद का अनुभव करते हुए उन्होंने सारिपुत्त से पूछा कि इतने वर्षों तक उन्होंने उन्हें अमर ज्ञान का अमृत क्यों नहीं दिया। सारिपुत्त को आभास हुआ कि उनका अंत निकट है। यह देखकर कि उनकी माता अब मोक्ष के मार्ग पर हैं और इस मार्ग से विमुख नहीं होंगी, सारिपुत्त ने अपने भिक्षुओं के समूह को अपने पास बुलाया।

जब भिक्षु एकत्रित हो गए, तो उन्होंने चुंडा से बैठने में सहायता करने का अनुरोध किया। भिक्षुओं को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा, "मैं पैंतालीस वर्षों से आपके साथ रहा और यात्रा की है। यदि मैंने अपने कर्म या वचन से आपको दुख पहुँचाया हो, तो मुझे क्षमा कर दीजिए, भाइयों।"

भिक्षुओं ने उत्तर दिया कि उन्होंने कभी भी अप्रसन्नता या पीड़ा का कोई कारण नहीं दिया था और बदले में उन्होंने सारिपुत्त से अपने द्वारा किए गए किसी भी गलत कार्य के लिए क्षमा मांगी। तब बड़े भिक्षु ने अपना वस्त्र अपने चारों ओर लपेटकर दाहिनी ओर लेटकर ध्यान की नौ क्रमिक अवस्थाओं में प्रवेश किया, फिर चार समाधि अवस्थाओं से गुजरे और जैसे ही सूर्योदय हुआ, भोर होते ही वे अंतिम निर्वाण को प्राप्त हुए।

अगली सुबह जब उसकी माता को पता चला कि उसका निधन हो गया है, तो वह अपने पुत्र के लिए पुण्य कर्म करने का अवसर चूक जाने पर विलाप करने लगी। इस प्रकार, अपनी पिछली मूर्खता पर विलाप और रोते हुए उसने पूरी सुबह बिताई, क्योंकि सोतापन्ना होने के बावजूद भी वह सभी आसक्तियों से मुक्त नहीं हो पाई थी।

एक सप्ताह तक चले अनुष्ठानों और श्रद्धांजलि के बाद, वरिष्ठ संत के अंतिम संस्कार के लिए चंदन की लकड़ी से बनी चिता का निर्माण किया गया, जिस पर सोने के अलंकृत मेहराब बनाए गए। वरिष्ठ संत की मृत्यु की खबर फैल गई और दूर-दूर से लोग धम्म के महापुरुष को श्रद्धांजलि अर्पित करने और अंतिम सम्मान देने के लिए आए। रात भर भक्त धम्म के प्रवचन सुनते रहे, अंततः पूज्य अनुराधा ने सुगंधित जल से दहकते अंगारों को बुझाया और एक छलनी कपड़े का उपयोग करके वरिष्ठ संत के अवशेषों को छाना।

जब सारिपुत्त के सेवक चुंडा ने आनंद को सूचित किया कि सारिपुत्त का देहांत हो गया है और उन्हें उनके गुरु का वस्त्र और कुंड सौंपा, तो आनंद अपने मित्र के शोक से क्षीण और पीले पड़ गए। उन्होंने बुद्ध से कहा, "हे प्रभु, नवोदित चुंडा ने मुझे बताया है कि सारिपुत्त का देहांत हो गया है। तब, हे प्रभु, मेरा शरीर लता के समान क्षीण हो गया; मेरे चारों ओर सब कुछ धुंधला हो गया और मुझे कुछ भी स्पष्ट दिखाई नहीं दे रहा था..."

तब बुद्ध ने आनंद से पूछा कि ऐसा कैसे हो सकता है, क्योंकि सारिपुत्त अपने प्राण त्यागते समय आनंद का कोई ज्ञान या सद्गुण अपने साथ नहीं ले गए थे। बुद्ध ने आनंद को अनित्यता का स्मरण कराया और यह भी बताया कि उन्होंने ही आनंद को सिखाया था कि हमारे सभी प्रियतम अंततः इस दुनिया से चले जाएंगे।

सारिपुत्त का योगदान

धम्म के सेनापति के रूप में सारिपुत्त के विशाल योगदान को उनके द्वारा सर्वोच्च ज्ञान की प्राप्ति के वर्णन और बुद्ध द्वारा उनकी प्रशंसा से समझा जा सकता है। सारिपुत्त ने कहा:

"मेरे दीक्षा संस्कार के छह महीने बाद, दोस्तों, मुझे इन सभी बातों के हर पहलू और हर छोटी-छोटी बात का एहसास हुआ,

अर्थ का विश्लेषणात्मक ज्ञान,

सिद्धांत का विश्लेषणात्मक ज्ञान,

भाषा का विश्लेषणात्मक ज्ञान,

दूरदर्शिता का विश्लेषणात्मक ज्ञान।

मैं इन बातों को अनेक तरीकों से समझाता हूँ, सिखाता हूँ और लोगों को बताता हूँ, स्थापित करता हूँ और प्रकट करता हूँ, इनकी व्याख्या करता हूँ और इन्हें स्पष्ट करता हूँ। यदि किसी को कोई शंका या अनिश्चितता हो, तो वह मुझसे पूछ सकता है और मैं उसे समझा दूँगा। (अंगुत्तरा निकया)

सारिपुत्त ने अपने इस चार प्रकार के विश्लेषणात्मक ज्ञान से न केवल धम्म को समझने में उत्कृष्टता प्राप्त की, बल्कि इसे दूसरों को समझाने में भी निपुणता हासिल की। अनुपदा सूत्र में उनकी उत्कृष्टता के कारण, बुद्ध ने उन्हें सच्चा आध्यात्मिक पुत्र और "धम्म चक्र को आगे बढ़ाने" में अपना मुख्य सहायक घोषित किया। बुद्ध ने कहा:

"यदि किसी व्यक्ति के बारे में सही-सही कहा जा सकता है कि उसने श्रेष्ठ सद्गुण, श्रेष्ठ एकाग्रता, श्रेष्ठ ज्ञान और श्रेष्ठ मुक्ति में निपुणता और पूर्णता प्राप्त कर ली है, तो वह सारिपुत्त ही हैं जिनके बारे में ऐसा सही-सही कहा जा सकता है।"

यदि किसी के बारे में यह कहना उचित हो कि वह भगवान बुद्ध का सच्चा पुत्र है, जो उनकी वाणी से उत्पन्न हुआ है, धम्म से उत्पन्न हुआ है, धम्म से बना है, धम्म का उत्तराधिकारी है (सांसारिक लाभों का उत्तराधिकारी नहीं), तो वह सारिपुत्त ही है जिसके बारे में यह बात उचित रूप से कही जा सकती है।

हे भिक्षुओं, मेरे बाद सारिपुत्त उसी प्रकार धम्म के सर्वोच्च चक्र को सही ढंग से घुमाते हैं जैसे मैंने घुमाया है।

सारिपुत्त से संबंधित अनेक प्रवचन और पुस्तकें हैं जो बुद्ध की शिक्षाओं का एक व्यापक संग्रह प्रस्तुत करती हैं। सारिपुत्त ने गहन और समृद्ध धम्म को बौद्धिक रूप से प्रेरक और प्रेरणादायक बनाने के लिए उसे व्यवस्थित और प्रस्तुत करने का अनूठा तरीका समझा। बुद्ध ने तावतिंसा स्वर्ग में देवताओं को जो अभिधम्म सिखाया था, उसका संहिताकरण भी उन्होंने ही किया था। बुद्ध प्रतिदिन भिक्षा ग्रहण करने के लिए पृथ्वी पर आते थे और फिर यह ज्ञान सारिपुत्त को प्रदान करते थे। इस प्रकार, उच्चतर शिक्षाओं की विधि का ज्ञान उस प्रमुख शिष्य को दिया जाता था जो विश्लेषणात्मक ज्ञान से संपन्न होता था, और फिर वह इसे भिक्षुओं तक पहुंचाता था।

बुद्ध का सारिपुत्त के प्रति उच्च सम्मान बार-बार देखने को मिलता है। एक उदाहरण में बुद्ध ने सारिपुत्त की तुलना युवराज से इस प्रकार की:

हे भिक्षुओं, यदि कोई विश्व सम्राट पाँच गुणों से संपन्न है, तो वह अपने पिता द्वारा चलाए गए सत्ता के चक्र को विधिपूर्वक आगे बढ़ाता है। और सत्ता का यह चक्र किसी शत्रु मनुष्य द्वारा पलटा नहीं जा सकता। वे पाँच गुण क्या हैं? विश्व सम्राट का वृहद पुत्र लाभकारी ज्ञान रखता है, विधि का ज्ञान रखता है, उचित माप का ज्ञान रखता है, उचित समय का ज्ञान रखता है और उस समाज का ज्ञान रखता है (जिसके साथ उसे व्यवहार करना है)।

इसी प्रकार, हे भिक्षुओं, सारिपुत्त पाँच गुणों से युक्त हैं और वे धर्म के सर्वोच्च चक्र को उसी प्रकार सुचारू रूप से घुमाते हैं जैसे मैंने घुमाया है। और धर्म के चक्र को न तो तपस्वी, न पुरोहित, न देवता, न ब्रह्मा, और न ही संसार में कोई और घुमा सकता है। वे पाँच गुण क्या हैं? हे भिक्षुओं, सारिपुत्त लाभ को जानते हैं, धर्म को जानते हैं, उचित माप को जानते हैं, उचित समय को जानते हैं और उस सभा को जानते हैं जिसे उन्हें संबोधित करना है।

सारिपुत्त ने अपने ज्ञान और सौम्य स्वभाव से धर्मानुयायी लोगों को प्रोत्साहित किया। उन्होंने कहा:

संयमित आचरण वाला, सचेतनता से परिपूर्ण,

जैसे कोई सचेत व्यक्ति संयमित इरादों के साथ ध्यान कर रहा हो,

सतर्क, अंतर्मुखी चीजों में आनंद लेने वाला,

स्वयं को पूरी तरह से एकाग्र रखने के साथ,

एकांत में रहने वाले, संतुष्ट रहने वाले व्यक्ति को भिक्षु कहते हैं।

चाहे नम भोजन खा रहे हों या सूखा भोजन,

उसे संतुष्ट होना चाहिए;

भिक्षु को खाली पेट ही घूमना चाहिए।

संयम से और सोच-समझकर भोजन करें।

चार-पाँच निवाले छोड़कर,

उसे पानी पीना चाहिए;

आराम से रहने वालों के लिए यह पर्याप्त है।

एक दृढ़ निश्चयी भिक्षु का।

यदि वह उचित वस्त्र धारण कर ले,

जो इस उद्देश्य के लिए है,

आराम से रहने वालों के लिए यह पर्याप्त है।

एक दृढ़ निश्चयी भिक्षु का।

जिस प्रकार एक चट्टानी पर्वत स्थिर रहता है,

अच्छी तरह स्थापित, इसलिए एक भिक्षु।

जैसे पहाड़ कांपता नहीं,

भ्रम के नाश के बाद।

जो व्यक्ति पापरहित है,

हमेशा पवित्रता की तलाश में,

बुराई का पैमाना बाल बराबर ही प्रतीत होता है।

मानो बादल के आकार का हो।

मुझे मृत्यु की कामना नहीं है।

मुझे जीवन की लालसा नहीं है।

मैं इस शरीर को सचेत अवस्था में त्याग दूंगा।

और सचेत।

सीमावर्ती शहर की सुरक्षा अंदर और बाहर दोनों तरफ से की जाती है।

इसलिए आपको अपनी सुरक्षा करनी चाहिए।

इस अवसर को हाथ से जाने न दें।

उन लोगों के लिए जिन्होंने यह अवसर खो दिया है

नरक में भेजे जाने पर शोक मनाएं।

शांत, संयमित, कम बोलने वाला

वह अभिमानी नहीं है, वह अपनी बुरी विशेषताओं को त्याग देता है।

जैसे हवा पेड़ के पत्तों को झटक देती है।

शांत, संयमित, कम बोलने वाला

वह अभिमानी नहीं है, बल्कि वह बुरी विशेषताओं को उजागर करता है।

जैसे हवा पेड़ के पत्तों को तोड़ देती है।

शांत, शोक रहित, स्थिर और अविचलित।

अच्छे गुणों का, उसे रखना चाहिए

दर्द का अंत।

कामुक सुख की इच्छा,

दुर्भावना, आलस्य और सुस्ती,

अहंकार और अनिश्चितता,

भिक्षु के मन में ये पाँच दोष पाए जाते हैं।

ध्यान करना, दृढ़ रहना,

विचारों की सूक्ष्म समझ होना,

लालच के नाश में आनंदित होना,

लोग उसे अच्छा आदमी कहते हैं।

यहां तक कि विशाल समुद्र, पृथ्वी, पर्वत और हवा भी,

उपमा में लागू नहीं होते।

शिक्षक की शानदार प्रस्तुति के लिए।

पहिए को घूमते रहना,

बहुत ज्ञान होना,

एकाग्र, पृथ्वी, जल, अग्नि के समान।

बड़ा व्यक्ति आसक्त नहीं है।

विरोध नहीं किया जाता।

ज्ञान की पूर्णता प्राप्त करने के बाद,

गहरी समझ और गहन चिंतन रखने वाला,

नीरस नहीं (बल्कि) मानो नीरस हो।

वह हमेशा प्यास बुझाकर भटकता रहता है।

मैंने शिक्षक की सेवा कर ली है।

बुद्ध की शिक्षा पूरी हो चुकी है।

भारी बोझ नीचे रख दिया गया है।

जिस चीज से नए जीवन की प्राप्ति होती है, उसे जड़ से उखाड़ फेंका गया है।

सारिपुत्त की महान प्रतिष्ठा उनके बाद भी लंबे समय तक कायम रही। उनका महान कार्य आज भी मौजूद है, जो बुद्ध के वचनों के साथ बौद्ध धर्म के कुछ सबसे प्राचीन ग्रंथों में संरक्षित और अंकित है।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(260):आनंद

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (260) ------>>>> अगला

अध्याय XVII.
तीस श्लोक
260. आनंद
तुषिता स्वर्ग से हमारे बोधिसत्व के साथ प्रस्थान करने के बाद, उन्होंने साकियन अमितोदना के परिवार में जन्म लिया। [1] और क्योंकि परिवार ने कहा, 'वह तुम्हें सुख देने के लिए पैदा हुआ है' (आनंद) , इसलिए उन्होंने उसका नाम रखा। जब वह बड़ा हुआ, और त्याग, परम ज्ञान और चक्र-घुमाव हो चुका था, और भगवान (बुद्ध) ने कपिलवस्तु की अपनी यात्रा पूरी कर ली थी, तब आनंद ने भद्दिया [2] और अन्य लोगों के साथ संसार का त्याग कर दिया, और भगवान द्वारा भिक्षु दीक्षा प्राप्त की। इसके कुछ ही समय बाद उन्होंने मंतानी [3] के पुन्ण द्वारा दिए गए प्रवचन को सुना, और प्रथम मार्ग (निर्वाणिक समाधि) को पूर्ण किया।

[350] अब, भगवान बुद्ध के बुद्धत्व के पूर्व बीस वर्षों के दौरान, उनके निजी सेवक स्थायी रूप से नहीं थे। एक दिन नागसमला [4] थे , जो कुंड और भिक्षु वस्त्र लेकर उनके पीछे-पीछे चलते थे; दूसरे दिन नागिता [5] , तीसरे दिन उपवान [6] , सुनक्खत्त [7] , चुंडा (नवदीक्षित), [8] सागत [9] , मेघिया [10] । सामान्यतः भगवान (बुद्ध) किसी एक को दूसरे से अधिक पसंद नहीं करते थे। परन्तु एक दिन भगवान (बुद्ध), सुगंधित कक्ष की कोठरी में, बुद्ध के सर्वोच्च आसन पर विराजमान, भिक्षुओं से घिरे हुए, उनसे इस प्रकार कहा: 'हे भिक्षुओं, मैं अब वृद्ध हो गया हूँ; [11] और कुछ भिक्षु, जब उन्हें कहा जाता है, "चलो इस मार्ग से चलें," तो वे दूसरा मार्ग अपना लेते हैं, और कुछ मेरे कुंड और वस्त्र जमीन पर गिरा देते हैं। क्या आप किसी ऐसे भिक्षु को जानते हैं जो मेरा स्थायी देह-सेवक बन सके?' तब भिक्षुओं में एक धार्मिक उत्साह दौड़ गया, और पूज्य सारिपुत्त उठे और भगवान को प्रणाम करते हुए बोले: 'हे प्रभु, मैं आपकी सेवा करूंगा।' भगवान ने उन्हें और महान मोग्गलाना को भी अस्वीकार कर दिया। सभी महान शिष्यों ने कहा, 'हम आपकी सेवा करेंगे,' सिवाय आनंद के। लेकिन वह चुपचाप बैठे रहे। तब उन्होंने उनसे कहा: 'भिक्षु, क्या आप भी भगवान (बुद्ध) से सेवक का पद मांगते हैं?' 'यदि मैं मांगूं, तो वह किस प्रकार का पद होगा? वह स्वयं ही बता देंगे कि वे किसे पसंद करते हैं।' तब भगवान ने कहा: 'आनंद, भिक्षुओं, दूसरों के दबाव में नहीं आना चाहिए; यदि वह स्वयं जानता है, तो वह मेरी सेवा करेगा।' तब भिक्षुओं ने फिर कहा: 'उठो, भिक्षु आनंद, भगवान (बुद्ध) से पद मांगो।'

[351] तब आनंद खड़े होकर बोले: 'हे प्रभु, यदि परमेश्वर मुझे चार वस्तुएँ देने से मना करें और चार वस्तुएँ दें, तो मैं उनकी सेवा करूँगा। क्या वे मुझे कभी भी अपने द्वारा प्राप्त उत्तम वस्त्र या भोजन नहीं देंगे, न ही कोई अलग "सुगंधित कोठरी" देंगे, और न ही निमंत्रण मिलने पर जाएँगे? क्योंकि यदि वे मुझे ये वस्तुएँ नहीं देंगे, तो कुछ लोग कहेंगे: "ऐसी सेवा का क्या लाभ? आनंद तो वस्त्र, अच्छा व्यवहार और आवास पाने के लिए सेवा करता है, और निमंत्रणों में शामिल होने के लिए।" और फिर, क्या परमेश्वर मेरे निमंत्रण मिलने पर जाएँगे? क्या वे मुझे दूर-दूर से आने वालों को उनके पास लाने के लिए कहेंगे? क्या वे मुझे दुविधा में होने पर अपने पास बुलाएँगे? क्या वे मुझे वे उपदेश दोहराएँगे जो उन्होंने मेरी उपस्थिति में दिए थे? [अनुपस्थित, उपस्थित नहीं] [ed1] क्योंकि यदि वे मुझे ये वस्तुएँ नहीं देंगे, तो कुछ लोग कहेंगे: "ऐसी सेवा का क्या लाभ?" यदि अगले दिन मुझे भगवान को भोजन पर लाने के लिए कहा जाए और वे न आएं, या यदि वे मेरे द्वारा लाए गए व्यक्ति से मिलने के लिए सहमत न हों, तो लोग मुझ पर भरोसा नहीं करेंगे और कहेंगे कि वे मेरी ओर ध्यान नहीं देते। और यदि वे सिद्धांत और उसके विभाजनों की व्याख्या न करें, तो वे कहेंगे: "मित्र, क्या तुम नहीं जानते, चाहे तुम उनकी परछाई की तरह उनका अनुसरण ही क्यों न करते हो?" तो यदि भगवान (बुद्ध) मुझे ये आठ वरदान प्रदान करें, तो मैं उनकी सेवा करूंगा। और भगवान ने उन्हें वरदान प्रदान किए। [12]

उस दिन से आनंद दस शक्तियों के स्वामी (दशबल, अर्थात् बुद्ध) की सेवा में लग गए, वे उनके लिए जल और माचिस लाते, उनके पैर धोते, उनके साथ रहते, उनकी कुटिया की सफाई करते आदि। दिन के समय वे भगवान (बुद्ध) के निर्देशों का पालन करते थे, जैसे 'यह लाया जाए', 'वह किया जाए'। रात में, एक मजबूत लाठी और लालटेन लेकर वे 'सुगंधित कुटिया' के नौ चक्कर लगाते, ताकि भगवान (बुद्ध) के आह्वान पर वे उत्तर दें और उन्हें नींद न आ जाए।

तब भगवान (बुद्ध) ने जेतवन में आर्य सभा में, [352] उन्हें पाँच गुणों में श्रेष्ठ भिक्षु का दर्जा दिया: विद्वत्ता, मानसिक सतर्कता, चलने की शक्ति, दृढ़ता और सेवाभाव। [13] ... और इस प्रकार, भगवान (बुद्ध) के देहांत के बाद भी विद्यार्थी बने रहे इस महान भिक्षु ने, जब भिक्षुओं द्वारा संबोधित किया गया [14] और एक परी द्वारा भयभीत किया गया [15] - जैसा कि ऊपर बताया गया है - सोचा, 'कल

[16] सभा होगी, लेकिन मेरे लिए, जो विद्यार्थी का कार्य कर रहा हूँ, गुरुओं, वरिष्ठों के साथ धर्मग्रंथ का पाठ करने के लिए सभा में जाना उचित नहीं है।' तब उनमें उत्साह जागा, और उन्होंने रात भर चबूतरे पर अंतर्दृष्टि का अभ्यास किया। अपने प्रयासों के फलहीन होकर वे विहार में प्रवेश कर गए और पलंग पर बैठ गए। लेटने की इच्छा से उन्होंने अपना शरीर झुकाया। उनका सिर तकिये से नहीं लगा था और न ही उनके पैर जमीन से उठे थे कि उसी क्षण उनका हृदय बिना किसी आसक्ति के मादक पदार्थों (विकारों/इच्छाओं) से मुक्त हो गया और उन्होंने छह गुना अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) प्राप्त कर ली। अतः वे सभा भवन में प्रवेश कर गए।

अब समय-समय पर उनके द्वारा कहे गए श्लोकों को एकत्रित किया गया और खुद्दक-निकाय के पाठ में भिक्षुओं के कथनों (गाथा) में शामिल किया गया। [17]

पहले श्लोक उन भिक्षुओं को उपदेश के रूप में दिए गए थे जिन्हें उन्होंने देवदत्त के अनुयायियों के साथ ठहरते हुए देखा था:

[1018] पिसुनेना च कोधनेन च मच्छरिना च विभूतानंदिना,॥
सखितां न करेय पण्डितो पापो कपूरिसेण सङ्गमो ॥॥

[1019] सद्धेन च पेसलेना च पन्नवता बहुसुतेन च,॥
सखितां हि1 करेया पण्डितो भद्दो सप्पुरिसेण सङ्गमो ॥॥

[1018] निंदा करने वाले और क्रोधी व्यक्ति के साथ,
नीच और द्वेषी [18] के साथ बुद्धिमान व्यक्ति को कोई व्यापार नहीं करना चाहिए।
बुरे लोगों के साथ संगति बुरी है।

[1019] विश्वासी और बुद्धिमान के साथ,
सज्जन और विद्वान व्यक्ति के साथ [19] बुद्धिमान व्यक्ति को संगति रखनी चाहिए।
क्योंकि भले लोगों के साथ संगति धन्य है।

जब गृहस्थ अनुयायी उत्तरा अपनी सुंदरता के प्रति आसक्त होकर कामुकता में लिप्त थी, तब यह श्लोक कहा गया था, ताकि उसे शरीर की कमजोरी का एहसास हो सके। कुछ लोग कहते हैं कि यह श्लोक उन लोगों को चेतावनी देने के लिए कहा गया था जो अंबपाली को देखते ही अपना आपा खो बैठे थे: [20]

[1020] पासा चित्तकटाṃ बिम्बाṃ अरुकायाṃ समुसिताṃ,॥
आतुरं बहुसंकप्पां यस्सा नत्थि धुवं तिथि.॥॥

[1020ए] पासा चित्तकटाṃ रूपाṃ मनिना कुंडलेना सीए,॥
आथिṃ तासेना ओनदधाṃ सहा वत्थेन शोभति.॥॥

[1020बी] अलट्टकाकाटा पद मुखाṃ कुणकाकमक्खिताṃ,॥
अलं बलास्सा मोहया नो च परागवेसिनो॥॥

[1020सी] अट्ठपादकटा केसा नेत्ता अंजनमक्खिता,॥
अलं बलास्सा मोहया नो च परागवेसिनो॥॥

[1020डी] अंजनीव नवा चित्त पूतिकायो अलंकातो,॥
अलं बलास्सा मोहया नो च परागवेसिनो॥॥

[1020e] ओदाहि मिगावो पासाँ नासादा वागुरां मिगो,॥
भुत्वा निवापं गच्छमा कन्दन्ते मिगबन्धके॥॥

[1020एफ] चिन्ना पासा मिगवस्सा नासादा वागुरां मिगो,॥

भुत्वा निवापं गच्छमा सोकांते मिगालुद्दके॥ ॥

[1020] देखो वह बनावटी कठपुतली का आकार (मानव शरीर),
घावों का ढेर, एक बीमार ढेर,
अनेक उद्देश्यों और योजनाओं से भरा हुआ, और फिर भी
जिसमें बने रहने की कोई शक्ति नहीं है।

[1020a] देखो, सजी-धजी आकृति (मानव शरीर), गहनों से सजी, छल्लेदार,
हड्डियों और पतले आवरण में लिपटी हुई,
बढ़िया और देखने में सुंदर उपकरणों की मदद से। [21]

[1020b] पैरों और चेहरे को सजाने के लिए मेकअप करने की आदत के साथ

मोह (सुंदर शरीर होने का भ्रम) के प्रभाव में रहना,

कि कोई भी व्यक्ति देवत्व की अवस्था तक नहीं पहुंचेगा।

[1020 ई.पू.] बालों को संवारने और आँखों को सजाने की आदत के साथ

मोह (सुंदर शरीर होने का भ्रम) के प्रभाव में रहना,

कि कोई भी व्यक्ति देवत्व की अवस्था तक नहीं पहुंचेगा।

[1020 ई.पू.] शरीर के अन्य अंगों को सजाने-संवारने की आदत के साथ

मोह (सुंदर शरीर होने का भ्रम) के प्रभाव में रहना,

कि कोई भी व्यक्ति देवत्व की अवस्था तक नहीं पहुंचेगा।

[1020d,e,f] [स्वयं को संवारने और सजाने की आदत वाले लोग]

शरीर के विखंडन (मृत्यु) के बाद उन्हें एक दुखद अवस्था का सामना करना पड़ेगा।

[जैसे कोई हिरण जाल में फंस जाता है और शिकारी उसे उठाकर ले जाता है]

अगले छंद एक कविता थे जो थेरा ने उस रात अपने पलंग पर अरहंत पद (ज्ञानोदय) प्राप्त करने के बाद कही थी:

[1021] बहुसुतो चित्तकथि बुद्धस्स परिचारको,॥
पन्नभरो विष्णुनुत्तो सेय्यं कपपेति गोतमो॥ ॥

[1022] खिनसावो विसान्नुत्तो संगतितो सुनिब्बुतो,॥
धारेति अन्तिमं देहं जातिमरनपरागु।॥ ॥

[1023] यस्मिṃ पस्मिṃ पतिहितता धम्म बुद्धसदिच्चहँधुनो,॥
निब्बानागमाने मग्गे सोऽयं तिट्ठति गोतमो॥ ॥

[1021] पवित्र ज्ञान में बहुत विद्वान और वाक्पटु,
बुद्ध का सच्चा सेवक वही है (आनंद);

अब उसके कंधों से बोझ उतर गया है। [22]

मुक्त होने पर (और दिव्य ज्ञान प्राप्त होने पर), गौतम बुद्ध का अनुयायी विश्राम करने के लिए लेट जाता है।

[1022] उसके लिए भीतर की घातक बुराइयाँ अब जीवित नहीं
हैं; जंजीरें, सारी बाधाएँ पीछे छूट गई हैं;
वह परम शांति में अपना अंतिम शरीर धारण करता है,
जन्म और मृत्यु की शक्ति से हमेशा के लिए परे।

[1023] जिसमें
सूर्य वंश के महान बुद्ध द्वारा सिखाई गई सत्य स्थापित और स्थापित हैं: -
वह मार्ग जो सीधे निर्वाण की ओर ले जाता है -
वहाँ गौतम वंश के आनंद भी खड़े हैं। [23]

एक दिन मोग्गलाना नामक ब्राह्मण (पुजारी) पशुपालक [24] ने थेरा से पूछा: 'आप बुद्ध के नियमों में बहुत विद्वान हैं। आपके प्रभु (बुद्ध) द्वारा सिखाए गए कितने सिद्धांतों को आप अपने मन में रखते हैं?' थेरा ने उत्तर दिया:

[1024] द्वादसिति बुद्धतो गणहिं द्वे सहसानि भिक्खुतो,॥
चतुरासंतिसाहासनि ये मे धम्म पवत्तिनो॥ ॥

[1024] मैंने स्वयं बुद्ध से बयासी हजार
और भिक्षुओं से दो हजार और सीखे हैं:
अतः कुल मिलाकर चौरासी हजार ग्रंथ,
जो मेरे लिए प्रासंगिक हैं। [25]

एक दिन थेरा ने एक अव्यवस्थित जीवन जीने वाले व्यक्ति को संस्कृतिहीनता के खतरे को इस प्रकार समझाया:

[1025] अप्पासुता'यं पुरिसो बालिवड्डो'व जिरति,॥
मंसानि तस्स वन्धति पञ्जा तस्स न वन्धहति॥ ॥

[1025] जिसे थोड़ा सा भी ज्ञान है,
वह बैल की तरह बूढ़ा हो जाता है। [26] उसका शारीरिक आकार तो बढ़ जाता है,
पर ईश्वरीय समझ नहीं बढ़ती।

उन्होंने एक भिक्षु के विषय में निम्नलिखित श्लोक कहे, जो दूसरे भिक्षु को अपने से कम विद्वान समझकर उसका तिरस्कार करता था:

[1026] बहुसुतो अप्पसुताṃ यो सुतेनातिमान्ति,॥
अन्धो पदीपधारोऽव तथेव पतिभाति माऽ॥ ॥

[1027] बहुसुताṃ उपासेय सुताṃ च न विनाशये,॥
तं मूलं ब्रह्मचर्यस्स तस्मा धम्मधारो सिया॥ ॥

[1028] पुब्बापरन्नु अत्थान्नु निरुत्तिपदाकोविदो,॥
सुग्गहितां च गंहाति अत्थाँ कोपरिक्खति॥ ॥

[1029] खांत्या चंडिकातो होति उस्सहित्वा तुलेति तं,॥
समये सो पदहति अज्झत्तौ सुसमाहितो॥ ॥

[1030] बहुसुताṃ धम्मधराṃ सप्पन्नṃ बुद्धसावकाṃ,॥
धम्मविनाणामकंखं तं भजेथा तथाविधं॥ ॥

[1031] बहुसुतो धम्मधरो कोसारक्खो महेसिनो,॥
चक्खु सब्बास्सा लोकस्सा पूजनीयो बहुसुतो॥ ॥

[1032] धम्मरामो धम्मरतो धम्मṃ अनुविचिंतयṃ,॥
धम्मौ अनुस्सरं भिक्खु सद्धम्म न परिहयति॥ ॥

[1026] वह विद्वान जिसने
ज्ञान के लिए अल्पज्ञानी व्यक्ति का तिरस्कार किया, वह
उस अंधे व्यक्ति के समान है जो
दीपक लेकर चलता है: - इसलिए यह बात मुझे समझ में आती है। [27]

[1027] विद्वानों की प्रतीक्षा करो; ध्यान रखो
कि विद्या को किसी प्रकार से ठेस न पहुँचे;
क्योंकि यह पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) की जड़ है; [28] अतः इस सिद्धांत को अपने हृदयों में धारण करो।

[1028] पाठ के क्रम को जानते हुए, [29] और पाठ के अर्थ में पारंगत, [355] व्याख्या और स्पष्टीकरण करने में सक्षम: [30] यह
विद्वान धम्म पथ को सही ढंग से समझता है,
और इसके अर्थ को अच्छी तरह से समझता है।

[1029] धैर्य से उत्सुक उद्देश्य बढ़ता है, [31] प्रयास उमड़ता है; फिर वह तौलता है;
इस प्रकार समय पर इच्छाशक्ति का प्रयोग करते हुए, [32] भीतर वह शांत, एकाग्र हो जाता है।

[1030] जो धम्म मार्ग में व्यापक रूप से पारंगत है
और उसके सिद्धांतों को अपने हृदय में धारण करता है,
बुद्ध का शिष्य, बुद्धिमान,
धम्म मार्ग को समझने के लिए उत्सुक: [33] तुम उसका अनुसरण करो।

[1031] जो धम्म के मार्ग में व्यापक रूप से पारंगत है
और उसके सिद्धांतों को अपने हृदय में धारण करता है,
वह महान भगवान (बुद्ध) के खजाने का संरक्षक है, [34] वह समस्त संसार के लिए आँख है,
जिसका समस्त आदर एवं सम्मान करना चाहिए।

[1032] जो धम्म मार्ग में व्यापक रूप से पारंगत है,
जो धम्म मार्ग में आनंद लेता है, [35] जिसने इसे अच्छी तरह से प्रेम किया और इस पर विचार किया,
और इसे स्मृति में जीवित रखा,
वह भिक्षु पवित्र धम्म मार्ग से
कभी विमुख नहीं होगा और न ही विमुख होगा।

एक दिन उन्होंने एक सुस्त और आलसी भिक्षु को इस प्रकार जगाया:

[1033] कयामाचेरागारुणो हिय्यमाने अनुथहे,॥
शरीररसुखगिद्धस्स कुतो समानफासुता॥ ॥

[1033] क्या तुम इतने भारी हो, कार्य करने के लिए अनिच्छुक?
जीवन पल-पल घटता जा रहा है, उठ नहीं पा रहे?

अपने शरीर को स्थूल सुख देने के लिए इतने लालची? तुम्हें पवित्र भिक्षु का सुख
कहाँ से मिलेगा ?

धम्म पथ के सेनापति के निधन की खबर सुनकर थेरा ने निम्नलिखित श्लोक कहा: [36]

[1034] न पक्खन्ति दिसा सब्बा धम्म नप्पटिभन्ति माm,॥
गते कल्याणमित्तमहि अंधकरव ख्याति॥ ॥

[1035] अब्भतीतसहायस्स अतीतगतसत्थुनो,॥
नत्थि एतादिसैं मित्तं यथा कायगता सति॥ ॥

[1036] ये पुराण अतिता ते नवेहि न समेटि मे,॥
स्वज्जा एकोऽव झायामि वासुपेटोऽव1 पक्खिमा॥ ॥

[1034] चारों ओर आकाश धुंधला हो रहा है, हाँ, सभी सत्य जो मुझे समझ में आते थे,
भ्रमित खड़े हैं । [37] हमारा प्रिय मित्र (बुद्ध) चला गया है, और पृथ्वी और ऊपर आकाश अंधकारमय है।

[1035] और क्या साथी का देहांत हो गया है,
और क्या भगवान (बुद्ध) यहाँ से चले गए हैं?
मुझे लगता है
कि कर्म और बुद्धि पर नियंत्रण रखने से बेहतर कोई मित्र नहीं बचा है। [38]

[1036] पुराने समय के लोग चले गए;
नए लोग मुझे बिल्कुल भी पसंद नहीं हैं।
आज यह बच्चा अकेला ही बैठा रहा,
जैसे घोंसला बनाने वाला पक्षी [39] जब बारिश हुई।

अगला श्लोक भगवान (बुद्ध) ने तब कहा था (जब उनका देहांत निकट था):

[1037] दस्सनाया अभिक्तंते नाना वेरज्जाके बाहु,॥
मा वारयित्थ सोतारो पासन्तु समायो मामौ ॥॥ ॥

[1037] अनेक क्षेत्रों से अनेक लोग
मुझे देखने आए हैं। उन्हें धम्म के श्रोता होने से मत रोको;
उन्हें मुझे देखने दो, यही समय है।

और उसके बाद थेरा (आनंद) द्वारा, उनकी इच्छा पूरी करने में प्रसन्नता का अनुभव करते हुए:

[1038] दस्सानाया अभिक्कंते नाना वेरज्जाके पुथु,॥
करोति सत्था ओकासां न निवारेति चक्खुमा॥ ॥

[1038] बहुत से लोग बहुत से क्षेत्रों से
देखने आते हैं। भगवान (बुद्ध) ने अवसर
दिया। देखने वाला किसी को नहीं रोकता। [40]

अगले पांच छंदों को मुख्य परिचारक के रूप में उनकी स्थिति को दर्शाने के लिए बोला गया था:

[1039] पण्विसति वस्सानि शेखभूतस्स मे सातो,॥
न कामसान्या उप्पज्जि पस धम्मसुधम्मत:॥ ॥

[1040] पण्विसति वस्सानि शेखभूतस्स मे सातो,॥
न देसासंना उप्पज्जि पस धम्मसुधम्मतौ ॥॥ ॥

[1041] पण्विसति वस्सानि शेखभूतस्स मे सातो,॥
मेत्तेन कायकम्मेन चायैव अनपायिनि॥ ॥

[1042] पण्विसति वस्सानि शेखभूतस्स मे सातो,॥
मेत्तेन वाचिकम्मेन चायैव अनापायिनि॥ ॥

[1043] पण्विसति वस्सानि शेखभूतस्स मे सातो,॥
मेत्तेना मनोकम्मेन चायैव अनपायिनि॥ ॥

[1039] मैं पच्चीस वर्षों तक एक विद्यार्थी रहा;
मुझमें कोई इंद्रिय चेतना उत्पन्न नहीं हुई।
हे देखो, धर्म (धम्म) के इस सुशोभनीय भिक्षु क्रम को! [41]

[1040] मैं पच्चीस वर्षों तक एक विद्यार्थी रहा;
मुझमें कोई शत्रुतापूर्ण चेतना उत्पन्न नहीं हुई।
हे देखो, धम्म मार्ग के इस सुशोभित भिक्षु क्रम को!

[1041] पच्चीस वर्षों तक
मैंने परम पूज्य (बुद्ध) की प्रतीक्षा की, प्रेममय कर्मों द्वारा उनकी सेवा की,
और उनकी परछाई की तरह उनके पीछे-पीछे चला।

[1042] मैंने पच्चीस वर्षों तक परम पूज्य की
प्रतीक्षा की, प्रेमपूर्ण वाणी से उनकी सेवा की,
और उनकी परछाई की तरह उनके पीछे-पीछे चला।

[1043] पच्चीस वर्षों तक
मैंने परम पूज्य की प्रतीक्षा की, प्रेमपूर्ण विचारों से उनकी सेवा की,
और उनकी परछाई की तरह उनके पीछे-पीछे चला।

अधिक...

[1044] बुद्धस्सा चकामांतासा पिṭṭहितो अनुकाŋकामिŋ,॥
धम्मे देसियामानमहि नानाना मे उदपज्जथा॥ ॥

[1045] अहं सकाराणिओमहि सेखो अप्पत्तमानसो,॥
सत्थु च परिनिब्बाणो यो अम्हाँ अनुकमपको॥ ॥

[1046] तदासि यऽभिŋसनकाŋ तदासि लोमहाअसंनाअ,॥
सब्बाकारवरूपेते सम्बुद्धे परिनिब्बुते॥ ॥

[1044] जब बुद्ध इधर-उधर टहलते थे,
मैं हमेशा उनकी पीठ के पीछे कदम रखता था;

और जब धम्म का उपदेश दिया जा रहा था, तो मुझमें
उसका ज्ञान और समझ बढ़ती गई।

[1045] परन्तु मैं तो अभी भी काम करने वाला हूँ,
एक ऐसा विद्यार्थी जिसका मन अभी परिपक्व नहीं हुआ है;
और अब भगवान (बुद्ध) यहाँ से चले गए हैं,
जिन्होंने मुझ पर इतनी मधुर करुणा दिखाई! [42]

[1046] हे! तब आतंक था, तब घोर भय था,
तब रोंगटे खड़े हो गए और नसें सिहर उठीं,
जब वे, हर श्रेष्ठ कृपा से परिपूर्ण,
सर्वप्रबुद्ध बुद्ध का निधन हो गया।

निम्नलिखित तीन श्लोक परिषद के सदस्यों द्वारा थेरा (आनंद) की प्रशंसा में जोड़े गए थे:

[1047] बहुसुतो धम्मधारो कोसारक्खो महेसिनो,॥
चक्खु सब्बास्सा लोकास्सा आनंदो परिनिब्बुतो॥ ॥

[1048] बहुसुतो धम्मधारो कोसारक्खो महेसिनो,॥
चक्खु सब्बास्सा लोकास्सा अन्धकारे तमोनुदो॥ ॥

[1049] गतिमंतो सतिमंतो धितिमंतो च यो इसी,॥
सद्धम्मधरको थेरो आनंदो रत्नाकरो॥ ॥

[1047] जो धम्म के मार्ग में व्यापक रूप से पारंगत है,
और उसके सिद्धांतों को अपने हृदय में धारण करता है -
वह महान भगवान (बुद्ध) के खजाने का संरक्षक है।

जिनका देहांत हो गया है,

आनंद की एक आंख पूरी दुनिया के लिए थी।

[1048] जो धम्म के मार्ग में व्यापक रूप से पारंगत है,
और उसके सिद्धांतों को अपने हृदय में धारण करता है -
महान भगवान (बुद्ध) के खजाने का रक्षक -
वह समस्त संसार के लिए एक आँख था,
अंधकारमय स्थान में भी अंधकार को दूर करता था।

[1049] अथक सेवा के ऋषि,
सचेत सतर्कता में सबसे आगे,
दृढ़ धैर्य में सबसे आगे! [43] पवित्र मार्ग (धम्म) के रक्षक,
इसके सभी रत्नों की एक जीवित खान: -
हमारे थेरा, आनंद।

और अंतिम मृत्यु के समय लेटे हुए उन्होंने ये वचन कहे:

[1050] पैरिसिणो माया सत्था कतां बुद्धस्स ससाणो,॥
ओहितो गरुको भरो नत्थि दानि पुनब्भवोऽ ति.॥ ॥

[1050] गुरु (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है,
और बुद्ध के सभी विधान पूरे हो चुके हैं।
मैंने अपने ऊपर का भारी बोझ नीचे रख दिया है,
मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं बचा है। [44]

[1] राइस डेविड्स, बौद्ध धर्म, पृष्ठ 52 में वंशावली तालिका देखें , जहाँ धम्मपाल के बाद के अधिकारियों के अनुसार, उन्हें सुद्धोदना के एक अन्य भाई सुक्लोदना का पुत्र बनाया गया है। यहाँ उन्हें महानामा और अनुरुद्ध का भाई (संभवतः सौतेला भाई) बनाया गया है (देखें सीसीएलवीआई)।

[2] तुलना करें . सी.सी.एल.आई.वी.

[3] तुलना करें IV.

[4] तुलना करें. सीएलएक्सएक्सवी.

[5] तुलना करें LXXXVI.

[6] देखें. संवाद, ii. 151.

[7] देखें. संवाद, iii., XXIV., II 8, 4.

[8] जाहिरा तौर पर चुंडा महान नहीं (CXXXI.)। वह सारिपुत्त की मृत्यु तक उनका परिचारक था। फिर उसने आनंद और बुद्ध को मृत्यु की सूचना दी (सांयी निक., खंड 161 f.)।

[9] देखें विनय ग्रंथ, ii. 2 आगे; जातक, i., संख्या 81.

[10] तुलना करें. LXVI.

[11] आनंद द्वारा श्लोक 1089-1043 में निरंतर परिचारक के रूप में अपने कार्यकाल के वर्णन के अनुसार, बुद्ध उस समय छप्पन वर्ष के रहे होंगे। इन पच्चीस वर्षों में अस्थायी परिचारण के बीस वर्ष जोड़ने से बुद्ध की सेवा का काल पूरा हो जाता है।

[12] आनंद के विवेकपूर्ण अनुबंध के बारे में बुद्धघोष का विवरण (अंगुत्तरा पर टिप्पणी, i. 24 f.) धमुईपाला की टिप्पणी की हमारी बर्मी पांडुलिपि में दिए गए विवरण की तुलना में अधिक सुसंगत है। मैंने उपरोक्त में इसकी सहायता ली है, और दोनों विवरणों को कुछ हद तक संक्षिप्त किया है।

[13] एंग. निक., आई. 24 एफ.

[14] विनय, ii. 288.

[15] सांगी. निक., i. 199. तुलना करें ऊपर, CXIX.

[16] विनय ग्रंथ, iii. 373 f.

[17] सुत्त-पिटक का पाँचवाँ और समापन खंड , जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ वर्तमान कृति भी शामिल है ।

[18] शाब्दिक अर्थ, (दूसरों के) विनाश में आनंद लेना। देवदत्त पर, पिछली कविता देखें। [v 1009 f.]

[19] पेसालो, मिलनसार, टीका में, आकर्षक गुण (पियासीलो) है ।

[20] मैं दोनों में से किसी भी घटना का पता नहीं लगा सकता। श्लोक 769, 770 देखें। उत्तरा, एक गृहस्थ अनुयायी, की कहानी धम्मपद टीका, iii. 802 ff में है, लेकिन यह ऊपर संदर्भित कहानी नहीं है।

[21] डॉ. ओल्डेनबर्ग पांडुलिपियों में पे, 'आदि,' के लिए केवल एक श्लोक (769) की अनुमति देते हैं, लेकिन टिप्पणी में श्लोक 769, 770 पूर्ण रूप से दिए गए हैं।

"बुनियान में।" यह अंग्रेजी लेखक जॉन बुनियान (1628-1688) की विशेषता है , जिन्होंने अन्य रचनाओं के साथ-साथ 'पिलग्रम्स प्रोग्रेस ' भी लिखी है। इस लेखक की किस विशेषता का यहाँ उल्लेख किया गया है, यह बुनियान के बारे में मेरे ज्ञान से परे है।

[22] पन्नाभारो, 'गिरा हुआ बोझ उठाने वाला' (मज्ह. निक., i. 189, आदि)। यह, बून्यान में नए धर्मांतरित व्यक्ति की एक योग्यता है, बौद्ध धर्म में अरहंत (प्रबुद्ध) के लिए एक चरमोत्कर्ष घटना है।

[23] यह टिप्पणी एक महान ब्रह्मा देवता को इन शब्दों के द्वारा परिषद में उनके प्रवेश पर अरहंत (प्रबुद्ध) के रूप में आनंद की उपाधि प्रदान करती है। सी एफ ऊपर, खुज्जा-शोभिता, CLXXV। गौतम वंश के सूर्य वंश पर, cf. XXVI. और CXXXIX.

[24] गोपका-मोग्गल्लाना-सुत्त (मज्ह. निक., iii. 7. ff.) में आनंद के वार्ताकार , जहाँ, हालाँकि, यह प्रश्न स्थान नहीं पाता है।

[25] पावत्तिनो, 'जो आगे बढ़ते हैं'; बौद्ध मनोविज्ञान में लोकप्रिय 'ध्यारेति' (ध्यारेति) को व्यक्त करने का बेहतर तरीका।

[26] अर्थात् माता-पिता, सगे-संबंधियों या किसी और की भलाई न चाहना (टिप्पणी)।

[27] अर्थात्, जबकि उसका ज्ञान दूसरों को लाभ पहुँचाता है, उसका अभिमान उसकी स्वयं की प्रगति को अंधकारमय कर देता है (टिप्पणी)।

[28] संत प्रयास का आधार (टिप्पणी)।

[29] यानी अगर आधा श्लोक दिया गया है, तो वह दूसरा आधा भाग दे सकता है (टिप्पणी)।

[30] निरूत्ती यहाँ अन्य तीन पटिसंभिदासों का भी प्रतिनिधित्व करता है (टीका)। तुलना करें सिस्टर्स, पृ. 17, नोट 1.

[31] चंडीकतो होती। विब्बंग, पृष्ठ 208 में , चंडीकता, संगत भाववाचक संज्ञा, कट्टुकम्यता, करने की इच्छा का पर्यायवाची है। टीका में इसे चंडजातो के रूप में व्याख्यायित किया गया है। अतः स्पष्टतः -कतो का अर्थ 'गठित' या 'स्थापित' है, न कि 'किया गया' या 'पूर्ण किया गया'।

[32] पदाहती.

[33] धम्म-विनाणं आकंखं: धम्म-विनासंखतं धम्मनानां। विनाणम् का अर्थ है इंद्रिय-वस्तुओं के अवसर पर या उनके संबंध में जानना। इसका उपयोग संभवतः यहां नाननान के लिए मेट्री कॉसा के रूप में किया गया है, क्योंकि मैं इस शब्द के ऐसे उपयोग से मेल नहीं खा सकता।

[34] कोसाराक्खो: धम्मभण्डगारिका, पथ (धम्म) के कोषाध्यक्ष , उनके सामान्य (टीकाकरण) शीर्षक का संकेत ।

[35] शाब्दिक रूप से, सिद्धांत को अपना आनंद मानते हुए (धम्मपद टीका, 364)।

[36] सारिपुत्त। श्लोक का पहला भाग आनंद के मुख से तब कहा गया है जब वह सारिपुत्त के सेवक चुंडा द्वारा भगवान (बुद्ध) को लाई गई खबर सुना रहे थे (संध्या निकेत, श्लोक 163)। श्लोक 1035 और आगे संभवतः महामृत्यु के बाद कहे गए थे। संभवतः ब्र. पांडुलिपि ने टीका से प्रारंभिक वाक्य को छोड़ दिया है।

[37] ' मैंने मृत्यु के बारे में भी सिद्धांतों (परियत्तिधम्मा) को अच्छी तरह से सीख लिया था' (टीका)।

[38] देखें संवाद, ii. 177 ff., शोक में कायगत सती की आवश्यकता पर ।

[39] 'वर्षा ऋतु में अपने घोंसले में चला गया' (टिप्पणी)।

[40] देखें ḍnanda का छठा अनुरोध, पृ. 351.

[41] तुलना करें XXIV., n.

[42] देखें संवाद, ii. 158 f., जहाँ आनंद विलाप करता है और भगवान (बुद्ध) उसे सांत्वना देते हैं; अगले श्लोक के लिए फिर से देखें, पृष्ठ 177।

[43] गतिमन्तो, सतीमन्तो, धितिमन्तो, जो कि विशुद्ध रूप से कर्ता कारक बहुवचन हैं, टीका में इसि के विशेषण के रूप में समझाए गए हैं , और संभवतः एक काव्यात्मक स्वतंत्रता हैं। पहले को पन्नाणगति के रूप में समझाया गया है। हालाँकि, बुद्धघोष (अंग. निक. पर टीका , i. 24) आनंद की अथक सक्रियता और अपने भगवान (बुद्ध) की सेवा में कार्य करने की तत्परता पर निर्भर करते हैं।

[44] श्लोक 1016 और वहाँ दिए गए नोट देखें।

[ed1] DPPN में 'अनुपस्थिति' शब्द है, जैसा कि जातक 456 की प्रस्तावना में वर्णित कहानी में भी है। यह अधिक तर्कसंगत है क्योंकि आनंद के पास एक फोटोग्राफिक मेमोरी होने की बात कही जाती है। देखें AN 1 220

BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी

आनंदा

आनंद राजकुमार सिद्धार्थ के चचेरे भाइयों में से एक थे। उनके पिता अमितोदन, राजा सुद्धोदन के छोटे भाई थे। उनके जन्म से उनके परिवार में अपार प्रसन्नता आई, इसलिए उनका नाम आनंद रखा गया। उनका जन्म राजकुमार सिद्धार्थ के ही दिन हुआ था।

बुद्ध के उपदेशों के दूसरे वर्ष में, जब आनंद 37 वर्ष के थे, तब उन्होंने भिक्षु दीक्षा ली। इसके कुछ ही समय बाद, पूज्य पुन्ना मंतानिपुत्त का उपदेश सुनकर, उन्होंने संतत्व की पहली अवस्था, सोतापन्न, प्राप्त कर ली। जब बुद्ध 55 वर्ष के थे, तब आनंद उनके निजी सेवक बन गए।

बुद्ध ने उपस्थित भिक्षुओं को संबोधित करते हुए बताया कि उनके कई सेवक थे जो समय-समय पर उनकी सहायता करते थे, लेकिन उनमें से कोई भी अपने कर्तव्यों का पूर्ण पालन नहीं कर पाया था। उन्होंने कहा, "अब समय आ गया है कि हमें एक विश्वसनीय और भरोसेमंद सेवक मिले।" फिर उन्होंने पूछा कि क्या उपस्थित भिक्षुओं में से कोई उनका निजी सेवक बनना चाहेगा। सभी भिक्षुओं ने तुरंत उनकी सेवा की पेशकश करते हुए उनके अनुरोध का उत्तर दिया। हालांकि, आनंद, जो उनका सेवक बनने की प्रबल इच्छा रखते थे, विनम्रतापूर्वक पीछे हट गए, यह सोचते हुए कि "यदि मैं सबसे उपयुक्त व्यक्ति होता तो बुद्ध मुझे अवश्य नियुक्त करते।" बुद्ध ने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा कि कई युगों पहले आनंद ने एक बुद्ध के निजी सेवक बनने की इच्छा की थी, जिसकी पूर्ति उनके शासनकाल में होनी थी। अन्य भिक्षुओं के प्रस्तावों को अस्वीकार करते हुए, उन्होंने आनंद की ओर रुख किया और उन्हें यह पद प्रदान किया।

आनंद ने यह पद स्वीकार करने की शर्त पर सहमति जताई कि बुद्ध आठ शर्तें मान लें। इनमें से चार शर्तें बुद्ध से उपहार या अनुग्रह न लेने से संबंधित थीं। आनंद यह सुनिश्चित करना चाहते थे कि किसी को भी यह संदेह न हो कि उन्होंने भौतिक लाभ के लिए यह पद स्वीकार किया है। अन्य चार शर्तें अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए आध्यात्मिक मार्ग पर अपनी उन्नति का ध्यान रखने से संबंधित थीं। बुद्ध ने आनंद की सभी शर्तें मान लीं।

आनंद का अपने प्रिय और आदरणीय बुद्ध से, जिनके प्रति वे निष्ठावान थे, सशर्त स्वीकृति मांगने में सहज महसूस करना, बुद्ध और उनके भिक्षुओं के बीच के संबंध और बुद्ध द्वारा अपने उपदेशों को संचालित करने के तरीके को दर्शाता है। बुद्ध निर्विवाद नेता थे, लेकिन उनके शासनकाल में कोई भय नहीं था। भिक्षु अपनी राय व्यक्त करने और बुद्ध से इच्छानुसार प्रश्न पूछने के लिए स्वतंत्र थे।

वास्तव में, निजी सेवक शब्द आनंद द्वारा निभाए गए सभी कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को पूरी तरह से व्यक्त नहीं करता है। बुद्ध की सभी व्यक्तिगत आवश्यकताओं की देखभाल करने के अलावा, आनंद बुद्ध के कार्यकारी सहायक थे और उनके भिक्षुओं, भिक्षुणियों और भक्तों के विशाल दल के प्रबंधन में भी सहायता करते थे। उन्हें बुद्ध के अधिकांश प्रवचनों को सुनने का अनूठा सौभाग्य भी प्राप्त था और अपनी असाधारण स्मृति के कारण उन्हें धम्म का संरक्षक घोषित किया गया था।

किसी बुद्ध के निजी सेवक का पद प्राप्त करने के लिए, व्यक्ति को इस पद की आकांक्षा रखनी चाहिए और 100,000 विश्व चक्रों तक अनेक पुण्य कर्म करने चाहिए। आनंद ने 100,000 विश्व चक्र पहले, बुद्ध पद्ममुत्तरा के समय में, यह आकांक्षा रखी थी। उस समय उनका जन्म सुमना के रूप में हुआ था, जो बोधिसत्व गौतम (उस समय जटिला के नाम से जाने जाते थे) के छोटे सौतेले भाई थे। उन्होंने वर्षा ऋतु के तीन महीनों के दौरान पद्ममुत्तरा बुद्ध और उनके 100,000 भिक्षुओं के दल को आवश्यक सामग्री प्रदान की। तब उन्होंने भविष्य के किसी बुद्ध के निजी सेवक बनने की आकांक्षा रखी। बुद्ध पद्ममुत्तरा ने भविष्य में देखा और पाया कि उनकी यह आकांक्षा पूरी होगी। उन्होंने आनंद को सूचित किया कि 100,000 विश्व चक्रों में वे बुद्ध गौतम के निजी सेवक होंगे। तब से आनंद ने अपनी आकांक्षा को पूरा करने के लिए निरंतर पुण्य कर्म किए।

धम्म के संरक्षक होने के अलावा, आनंद दो अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं के लिए भी प्रसिद्ध थे जिनकी उन्होंने शुरुआत की थी। ये थीं आनंद बोधि वृक्ष की स्थापना और भिक्षुणियों के संघ की स्थापना।

अनेक लोग बुद्ध को प्रणाम करने और उनके उपदेश सीखने के लिए जेतवन आते थे। कभी-कभी जब वे आते थे, तो बुद्ध किसी संकटग्रस्त व्यक्ति की सहायता करने के लिए दूर होते थे। चूंकि अनेक लोग उनसे मिलने के लिए लंबी दूरी तय करके आए थे और निराश हुए थे, इसलिए आनंद ने बुद्ध से पूछा कि इन निराश भक्तों की सहायता के लिए क्या किया जा सकता है।

तब बुद्ध ने आनंद से बुद्धगया में स्थित बोधि वृक्ष से एक पौधा लाकर जेतवन में लगाने को कहा। फिर उन्होंने कहा, "मेरी अनुपस्थिति में, मेरे भक्त उस महान बोधि वृक्ष को प्रणाम करें जिसने मुझे ज्ञान प्राप्ति के दौरान सुरक्षा प्रदान की। बोधि वृक्ष मेरी उपस्थिति का प्रतीक हो। जो लोग बोधि वृक्ष का आदर करते हैं, वे वास्तव में मेरा आदर और प्रणाम कर रहे होते हैं।"

तब से लेकर आज तक, विश्वभर के बौद्ध बोधि वृक्ष की पूजा उसी प्रकार करते आए हैं जैसे वे बुद्ध की, सुगंधित जल, फूलों और अगरबत्ती से। अनेक अज्ञानी लोगों ने इस प्रतीकात्मक क्रिया को गलत समझा है और कहा है कि बौद्ध वृक्षों की पूजा करते हैं। बुद्ध प्रतिमा, बोधि वृक्ष, बुद्ध के अवशेष, ये सब बुद्ध के प्रतीक मात्र हैं जिनका उपयोग लोग बुद्ध के करुणामय और शांत गुणों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए करते हैं। बुद्ध की पूजा से मन को वह शांति और सुकून मिलता है जो अनेक लोगों को ध्यान, अध्ययन और उनके उपदेशों को सुनने से आसानी से प्राप्त नहीं होता।

आनंद के अनुरोध पर, महा प्रजापति की ओर से, बुद्ध ने भिक्षुणियों के संघ की स्थापना की। बुद्ध ने प्रारंभ में महा प्रजापति गौतमी के दीक्षा लेने के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया था। आनंद द्वारा यह प्रश्न पूछे जाने पर कि क्या स्त्रियाँ आध्यात्मिक ऊँचाइयों तक पहुँचने में असमर्थ हैं, और बुद्ध द्वारा यह उत्तर दिए जाने पर कि स्त्रियाँ पुरुषों के समान ही आध्यात्मिक ऊँचाइयों तक पहुँचने में सक्षम हैं, बुद्ध भिक्षुणियों के संघ की स्थापना के लिए सहमत हुए। इस प्रकार, स्त्रियों के मन में आनंद के प्रति विशेष आदर और श्रद्धा थी। उनके इस आदर और उनके प्रसन्न स्वभाव ने उन्हें अत्यंत लोकप्रिय बना दिया। कहा जाता है कि बुद्ध के निकट और उच्च पद पर होने के बावजूद, कोई भी आनंद की निंदा नहीं करता था और न ही उनसे ईर्ष्या करता था।

आनंद के पूर्व जन्मों की लिखित कथाओं से पता चलता है कि वे शायद ही कभी देवता (अपने सौतेले भाई अनुराद्ध के विपरीत) या पशु (अपने चचेरे भाई देवदत्त के विपरीत) थे। आनंद अक्सर मनुष्य के रूप में ही जन्म लेते थे और कई जन्मों में बोधिसत्व के भाई भी रहे।

यद्यपि आनंद अत्यंत विद्वान और ज्ञानी थे, फिर भी वे बुद्ध के जीवनकाल में ही संतत्व की प्रथम अवस्था, सोतापन्न, तक पहुँच पाए। बुद्ध के प्रति उनके गहरे लगाव ने उन्हें अरहंतत्व प्राप्त करने से रोक दिया। परिणामस्वरूप, उन्हें बुद्ध के देहांत का सटीक समय ज्ञात नहीं था। यह सोचकर कि बुद्ध परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके हैं, उन्होंने अपने सौतेले भाई अनुराधा को सूचित किया। अनुराधा, जो एक अरहंत (पूर्ण, पूर्णतः प्रबुद्ध) थे, ने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा कि ऐसा नहीं था, और उन्होंने आनंद को स्पष्ट किया कि बुद्ध का अभी देहांत नहीं हुआ था। वे ध्यान की उस अवस्था तक पहुँच चुके थे जिसे बोध और भावना का अंत कहा जाता है।

बुद्ध के परिनिर्वाण के कुछ ही समय बाद, प्रथम धम्म सभा (सांगायण) के दिन, आनंद ने अरहंत पद प्राप्त किया। बुद्ध ने आनंद को पाँच श्रेणियों में अग्रणी नियुक्त किया था। वे श्रेणियाँ थीं:

पांडित्य

प्रतिधारण स्मृति

अच्छा व्यवहार

दृढ़ता

देखभाल प्रदान करना

आनंद के तीस श्लोक थेरागाथा में संरक्षित हैं जो अच्छे मित्रों और धम्म में पारंगत लोगों के साथ संगति करने के लिए उनके प्रोत्साहन को दर्शाते हैं।

आनंद ने धम्म के संरक्षक के रूप में अपने उदाहरण का अनुसरण करने के लिए दूसरों को प्रेरित करने हेतु थेरागथा श्लोकों की घोषणा की। उन्होंने दूसरों को अभ्यास से पहले शिक्षाओं का ध्यानपूर्वक अध्ययन और समझना भी प्रोत्साहित किया।

आनंद का निधन एक सौ बीस वर्ष की आयु में हुआ। धम्मपद में वर्णित है कि रोहिणी नदी के दोनों किनारों पर रहने वाले लोग उनके अवशेष प्राप्त करना चाहते थे, इसलिए आनंद ने नदी के मध्य में वायु में बैठकर लोगों को धम्म का उपदेश दिया और कामना की कि उनका शरीर दो भागों में विभाजित हो जाए, एक भाग नदी के एक किनारे पर और दूसरा भाग दूसरे किनारे पर गिरे। इसके बाद वे अग्नि समाधि में लीन हो गए। उनके शरीर से तुरंत ज्वालाएं निकलीं और इच्छा के अनुसार, उनके अवशेषों का एक भाग नदी के एक किनारे पर और दूसरा भाग दूसरे किनारे पर गिर गया। तब लोगों ने उनके अवशेषों को स्तूपों में स्थापित किया ताकि वे उनका सम्मान कर सकें।

धम्म के प्रति आनंद का सबसे बड़ा योगदान भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण के तीन महीने बाद हुआ। बुद्ध ने आनंद को उनकी असाधारण स्मृति के कारण धम्म का संरक्षक घोषित किया था। प्रथम संघ सभा में, महा कस्सपा के मार्गदर्शन में, आनंद ने पाँच सौ अरहंतों को शिक्षाओं का पाठ कराया और धम्म के संहिताकरण में सहायता की। धम्म के संरक्षण की यह विधि बाद के वर्षों में भी अपनाई गई। द्वितीय संघ सभा का नेतृत्व आनंद के एक शिष्य ने किया।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (261): कस्पा द एल्डर

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (261) ------>>>> अगला

अध्याय XVIII.
चालीस श्लोक
261. कस्सपा महान [1]
हमारे भगवान (बुद्ध) पहले ही अवतरित हो चुके थे और धर्ममार्ग (धम्म) का चक्र चला रहे थे तथा राजगृह में निवास कर रहे थे, तभी मगध के महातीथ के ब्राह्मण ग्राम में, इस थेरा का पुनर्जन्म पिप्पली-मानव के रूप में हुआ, जो ब्राह्मण (पुजारी) कपिल की प्रमुख पत्नी के पुत्र थे। चार वर्ष बाद, भद्दा कपिलाणी का पुनर्जन्म मद्दा राज्य के सागला में कोसिया-गोत्त ब्राह्मण (पुजारी) की प्रमुख पत्नी से हुआ। [2] अब पिप्पली-मानव ने विवाह करने से इनकार कर दिया। उन्होंने अपने माता-पिता से कहा, 'जब तक आप जीवित रहेंगे, मैं आपकी देखभाल करूंगा; उसके बाद मैं संसार त्यागकर संन्यास ले लूंगा।' लेकिन अपनी माता को प्रसन्न करने के लिए उन्होंने लाल वस्त्र और आभूषणों से सजी एक सुंदर कन्या की मूर्ति बनवाई और उन्हें दिखाते हुए कहा: 'माँ, यदि मुझे ऐसी कोई मिल जाए, तो मैं गृहस्थ जीवन व्यतीत करूंगा।' उनकी माता एक चतुर महिला थीं, और उन्होंने ब्राह्मणों (पुजारियों) को मूर्ति के साथ उस खोज पर भेजा। वे सागला पहुँचे और मूर्ति को नदी के किनारे रखकर अलग बैठ गए। भद्दा की धाय, जो अपनी देखभाल करने वाली को नहलाकर खुद नहाने के लिए नीचे गई थी, ने मूर्ति को देखा और सोचा, 'क्या! क्या मेरी [360] युवती इतनी बदतमीज़ है?' उसने मूर्ति के गाल पर एक थप्पड़ मारा और पाया कि यह भद्दा नहीं, बल्कि सोने की मूर्ति थी। ब्राह्मण (पुजारी) उसके पास आए और उसकी स्वामिनी के बारे में पूछताछ की, और वह उन्हें कोसियागोत्ता के घर ले गई, जहाँ उनका स्वागत किया गया। और उन्होंने कपिल को संदेश भेजा:

'हमें कन्या मिल गई है; आप उसी के अनुसार कार्य करें।' लेकिन पिप्पली-मानव और भद्दा, दोनों ही विवाह के इच्छुक नहीं थे, इसलिए उन्होंने एक-दूसरे को गुप्त रूप से पत्र लिखे - उन्होंने: 'भद्दा!' और उन्होंने: 'महोदय!' 'आपको अपने कुल और भाग्य के अनुरूप

जीवनसाथी मिले। मैं संसार त्याग कर संन्यासी बनने जा रही हूँ। ऐसा कोई कार्य न करें जिससे आपको बाद में पछतावा हो।' अब दोनों पत्रवाहक मिले, एक-दूसरे से प्रश्न किए, पत्र पढ़े और बोले: 'देखो इन बच्चों का काम!' उन्होंने पत्र जंगल में फेंक दिए, दूसरे पत्र लिखे और उन्हें ले आए। इस प्रकार विवाह संपन्न हुआ। लेकिन नवविवाहित जोड़े ने रात फूलों की माला से अलग होकर बिताई। और जब पिप्पली-मानव के माता-पिता का देहांत हो गया, तो एक दिन भोजन करने और बातचीत करने के बाद उन्होंने और भद्दा ने संसार त्यागने का निश्चय किया।

और उन्होंने अपनी अलमारियों से पीले वस्त्र निकाले, एक दूसरे के बाल काटे, अपने कंधों से कटोरे लटकाए, अपने रोते हुए सेवकों के बीच से गुजरे, जिन्हें उन्होंने अपनी स्वतंत्रता दी, और एक साथ चले गए, पिप्पली-मानव आगे-आगे चल रहे थे।

और पीछे मुड़कर देखते हुए उन्होंने सोचा: 'यहाँ भद्दा कपिलाणी हैं, जो पूरे भारत के बराबर मूल्यवान स्त्री हैं, मेरे पीछे-पीछे चल रही हैं। हमें देखकर कोई सोचेगा: "इन्होंने संसार त्याग दिया है, लेकिन एक-दूसरे के बिना नहीं रह सकते।" इसलिए, हम पर झूठा आरोप लगाकर वे नरक के खतरे में पड़ सकते हैं।' और उन्होंने भद्दा को यह बताया, और वह मान गईं कि एक स्त्री पुरुष भिक्षु के लिए बाधा अवश्य ही होती है। अतः उन्होंने चौराहे पर तय किया कि वह दाईं ओर जाएँगे और वह बाईं ओर। तब पृथ्वी, यद्यपि वह सभी सिनेरू का भार सहन कर सकती थी, ऐसे सद्गुण के भार से काँप उठी। [3] और सर्वोच्च बुद्ध, बाँस के जंगल में स्थित महान विहार (मठ) के सुगंधित कक्ष में विराजमान, भूकंप का अर्थ जानते थे, और अस्सी प्रमुख थेरों [361] को एकत्रित करके, वे तीन मील सड़क पर चले, और राजगृह और नालंदा के बीच बहुपुत्तक बरगद [4] के चरणों में बैठ गए। यद्यपि वे फटे-पुराने वस्त्र पहने हुए थे, फिर भी उनसे बुद्ध की किरणें निकलकर इधर-उधर फैल गईं और वृक्ष का रंग बदल गया। तब महान कस्सपा [5] ने यह समझा: 'यही हमारे प्रभु (बुद्ध) होंगे, जिनके कारण मैंने संसार त्यागकर (भिक्षुत्व ग्रहण किया है)।' और झुककर उन्होंने कहा: 'परमेश्वर, परम पूज्य (बुद्ध), मेरे प्रभु (बुद्ध) हैं! मैं उनका शिष्य हूँ।' तब परमेश्वर ने कहा: 'बैठो, कस्सपा, मैं तुम्हें तुम्हारा उत्तराधिकार दिखाऊँगा।' और तीन प्रवचनों में उन्होंने उन्हें भिक्षु दीक्षा दी। अतः वे राजगृह लौट आए, कस्सपा ने अपना नया वस्त्र भगवान (बुद्ध) के पुराने वस्त्र से बदल लिया, [6] और विनम्रता और उत्साह के साथ तेरह धुतंगों का अभ्यास करने का निश्चय किया। [7] और उसके आठवें दिन उन्होंने धम्म के सार और अक्षर को भलीभांति समझकर अर्हत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। भगवान (बुद्ध) ने उन्हें अतिरिक्त तपस्या करने वालों में श्रेष्ठ घोषित किया। और उन्होंने वैराग्य का आकर्षण दिखाते हुए भिक्षुओं को संबोधित करते हुए अपने अनुभवों को इस प्रकार बताया:

मैं।

भिक्षुओं को भीड़ में घुलमिलते और गृहस्थों के घरों में बार-बार जाते देखकर:

[1051] न गणेना पुरक्खतो देखभाल॥
विमानो होति समाधि दुलाभो,॥
नाना जनसंगहो दुखो॥
इति दिस्वन गणन न रोकाये॥ ॥

[1052] न कुलानि उपब्बाजे मुनि॥
विमानो होति समाधि दुलाभो,॥
तो उस्सुक्को रसानुगिद्धो॥
अत्थाऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ सुखवाहो॥ ॥

[1053] पांकोटि हाय नाṃ पवेदायुṃ॥
यायं वंदनपूजन कुलसु,॥
सुखुमाṃ सल्लाṃ दुरुब्बाहाṃ॥
सक्कारो कपूरीसेन दुज्जहो॥ ॥

[1051] ऐसी जगह मत चलो जहाँ बहुत से लोग तुम्हें मुखिया बनाना चाहें।
इससे मन चकरा जाता है, [8] और एकाग्रचित्त मन को जीतना कठिन हो जाता
है। और जो जानता है:
'बहुत से लोगों की संगति दुर्भाग्य लाती है,'
वह भीड़-भाड़ वाली जगहों से दूर रहेगा।

[1052] हे ऋषि, नागरिकों के घरों में मत जाओ।
जो [9] लालची होकर जीवन के संपूर्ण भोज का स्वाद लेना चाहता है,
वह उस अच्छाई की उपेक्षा करता है जो सच्ची खुशी लाती है।

[1053] यह एक कपटपूर्ण दलदल है,
धनी लोगों से धनुष, उपहार और दावतों का यह संरक्षण।
यह मांस में धंसे हुए एक महीन तीर की तरह है,
जिससे भटकते हुए मनुष्य को निकालना मुश्किल है।

II.

भिक्षुओं को जीवन की चार आवश्यक चीजों का सम्मान करते हुए संतोष का अभ्यास करने की शिक्षा:

[1054] सेनासनमहा ओरुयहा नागारापि पिंडाय पविसी,॥
भुञ्जन्तं पुरिसाṃ कुथि सक्कक्काṃ ताṃ उपाथहिṃ॥ ॥

[1055] सो मे पक्केना हत्थेना आलोपाऽ उपानामयी,॥
अलोपाṃ पक्खिपंतस्सा अंगुलीपेत्था चिज्जथा॥ ॥

[1056] कुḍḍअमूलाṃ च निस्साया अलोपाṃ ताṃ अभुञ्जिसाṃ,॥
भुंजमने वा भुत्ते वा जेगुच्छं मे न विज्जति॥ ॥

[1057] उत्तिथपिंदो अहारो पुतिमुत्तṃ च ओसाधाṃ,॥
सेनासनं रुक्खमूलं पसुकुलं च शिवरां,॥
यस्सेते अभिसंभूत्वा स वे चतुद्दिसो नरो॥ ॥

[1054] मैं एक दिन अपनी पहाड़ी झोपड़ी से नीचे आया [10]
और गलियों में भीख माँगने लगा।
वहाँ मैंने एक कुष्ठ रोगी को भोजन करते देखा,
[और जैसा उचित था, कि उसे मौका मिल सके, [11]]
मैं [मौन] शिष्टाचार से उसके पास रुक गया।

[1055] उसने अपने कुष्ठ रोगग्रस्त हाथ से
मेरे कटोरे में एक निवाला डाला; जैसे ही उसने फेंका,
एक उंगली दर्दनाक रूप से टूट कर गिर गई।

[1056] दीवार से टिककर मैंने अपना हिस्सा खाया,
न उस समय और न बाद में मुझे घृणा महसूस हुई।

[1057] केवल वही जो आता है उसे लेता है
, भोजन के टुकड़े, मल से बनी दवा, [12] पेड़ के नीचे का पलंग, पैचवर्क वस्त्र,
उत्तर, दक्षिण, पूर्व या पश्चिम में एक आदमी के रूप में खड़ा है।

III.

जब उनसे उनके जीवन के अंतिम वर्षों में पूछा गया: 'आपकी इस आयु में आप प्रतिदिन पहाड़ियों पर चढ़ने में कैसे सक्षम हैं?'

[1058] यथा एके विहानन्ति अरुहंता सिलुच्चयं,॥
तत्थ बुद्धस्स दयादो संपजानो पतिस्सतो,॥
इद्धिबालेनुपत्थद्धो कस्सपो अभिरूहति॥ ॥

[1059] पिण्डपातापाटिक्कान्तो सेलामारुयहा कस्सपो,॥
झायति अनुपादनो पहिनाभयभेरवो॥ ॥

[1060] पिंडापतापिकाकांतो सेलामारुयहा कस्सपो,॥
झायति अनुपादनो द्यहमानेसु निब्बुतो॥ ॥

[1061] पिंडापतापिकाकांतो सेलामारुयहा कस्सपो,॥
झायति अनुपादनो कताचिक्को अनासावो॥ ॥

[1058] जहाँ कुछ लोग चट्टानों पर चढ़ते हुए मर जाते हैं,
बुद्ध के उत्तराधिकारी, [13] सचेत, आत्मसंयमित, [363] आत्मा (आध्यात्मिक शक्ति) की शक्तियों द्वारा मजबूत होकर,
कश्यप पर्वत शिखर पर चढ़े।

[1059] भिक्षा मांगने के लिए दैनिक चक्कर से लौटकर,
कस्सपा किसी चट्टानी कोने पर चढ़ जाता है और
ध्यान में मग्न होकर बैठ जाता है, किसी भी चीज़ को पकड़े हुए नहीं,
क्योंकि उसने भय और डर को अपने से दूर रखा है।

[1060] भिक्षा मांगने के लिए दैनिक चक्कर से लौटकर,
कस्सपा किसी चट्टानी कोने पर चढ़ जाता है और
ध्यान में मग्न होकर बैठ जाता है, कुछ भी नहीं पकड़ता,
क्योंकि वह जलने वालों के बीच शांत और स्थिर है।

[1061] भिक्षा मांगने के लिए दैनिक चक्कर से लौटकर,
कस्सपा किसी चट्टानी कोने पर चढ़ जाता है और
ध्यान में मग्न होकर बैठ जाता है, किसी भी चीज़ को पकड़े बिना,
उसका काम पूरा हो गया है, और वह [भौतिक] इच्छाओं से मुक्त है।

IV.

आगे पूछे जाने पर: 'लेकिन इस उम्र में आप पर्वतीय-जंगल में क्यों रहते हैं? क्या आपको बांस का जंगल या उसके जैसे अन्य जंगल सुखद नहीं लगते?' उन्होंने उत्तर दिया:

[1062] करेरीमालविता [95] भूमिभागा मनोरमा,॥
कुंजराभिरुदा रम्मा ते सेला रामयंती माऽ॥ ॥

[1063] नीलाभवाना रुचिरा वरिसिता सुविंधरा,॥
इंदगोपाकसञ्चन्ना ते सेला रामयन्ति माऽ॥ ॥

[1064] नीलाभकुतसदिसा कूटगारावरूपमा,॥
वारणाभिरुदा रम्मा ते सेला रामयन्ति माऽ॥ ॥

[1065] अभिवुथ रम्मतला नागा इशिहि सेविता,॥
अभुन्नदिता सीखि ते सेला रामयन्ति माऽ॥ ॥

[1066] अलं झायितुकमस्सा पहितत्तस्सा मे सातो,॥
अलं मे अत्थकमस्सा पहितत्तस्सा भिक्खुनो॥ ॥

[1067] अलं मे फासुकमस्सा पहितत्तस्सा भिक्खुनो,॥
अलं मे योगकामस्सा पहितत्तस्सा ताडिनो॥ ॥

[1068] उम्मपुप्पेण समाना गगनववभचदिता,॥
नानादिजगनाकिन्ना ते सेला रामयन्ति माऽ॥ ॥

[1069] अनाकिना गहथेहि मिगसंघनिसेविता,॥
नानादिजगनाकिन्ना ते सेला रामयन्ति माऽ॥ ॥

[1070] अचोदिका पुथुसिला गेनागुलामिगायुत,॥
अंबुसेवलसंचन्ना ते सेला रामयंती माऽ॥ ॥

[1071] न पंचांगिकेन तुरियेना रति में होति तदिसी,॥
यथा एकग्गचित्तस्स सम्मा धम्मं विपश्यतो.॥ ॥

[1062] वे ऊंचे मैदान जो आत्मा को प्रसन्न करते हैं,
जहाँ करेरी अपने जंगली वलय फैलाती है, [14] जहाँ हाथियों की तुरही की आवाजें गूंजती हैं:
वे पहाड़ियाँ हैं जिनमें मेरी आत्मा प्रसन्न होती है।

[364] [1063] गहरे नीले बादलों के रंग से ढकी वे चट्टानी ऊंचाइयाँ,
जहाँ
क्रिस्टल-स्पष्ट, ठंडे पानी के कई चमकते हुए तालाब स्थित हैं, और जिनकी ढलानों को
'इंद्र के झुंड' ढकते और सजाते हैं:
वे पहाड़ियाँ हैं जिनमें मेरा मन आनंदित होता है। [15]

[1064] नीले-काले बादलों की कतारबद्ध प्राचीरों की तरह,
भव्य महल पर बने शिखरों की तरह,
जंगल के लोगों की पुकारों की गूंज:
वे पहाड़ियाँ हैं जिनमें मेरा मन आनंदित होता है।

[1065] वर्षा से ताज़गी से भरे सुंदर ऊंचे इलाके, और
मुकुटधारी प्राणियों की प्रतिध्वनि से गूंजते हुए,
एकांत ऊंचाइयां जहां मौन ऋषि अक्सर शरण लेते हैं:
वे पहाड़ हैं जिनमें मेरा मन प्रसन्न होता है।

[1066] मेरे लिए इतना ही काफी है, जो प्रसन्नतापूर्वक
ध्यान में तल्लीन, सचेत और तल्लीन रहना चाहता है।
मेरे लिए इतना ही काफी है, जो
उत्साह से भरे भिक्षु के रूप में सर्वोच्च कल्याण की खोज करना चाहता है।

[1067] मेरे लिए इतना ही काफी है, जो
सुखमय आराम में रहना चाहता हूँ, एक उत्साही भिक्षु।
मेरे लिए इतना ही काफी है, जो स्वयं को
अध्ययनशील परिश्रम में लगाता हूँ, इसलिए मैं उत्साह से भरा हुआ हूँ।

[1068] अलसी के पौधों के नीले रंग के फूलों से लदे, शरद ऋतु में आकाश की तरह नीले बिंदीदार ; अपने विविध पंखों वाले जीवों की भीड़ से जीवंत : ये वे पहाड़ हैं जिनमें मेरा मन प्रसन्न होता है।

[1069] नीचे नागरिकों की भीड़ से मुक्त,
लेकिन कई पंखों वाले जीवों के झुंडों से भरा हुआ,
जंगली चरवाहा प्राणियों का घर:
ऐसी पहाड़ियाँ हैं जिनमें मेरा मन प्रसन्न होता है।

[1070] चट्टानें [16] जहाँ स्वच्छ जल बहता है, एक पथरीली दुनिया,
काले चेहरे वाले बंदरों और डरपोक हिरणों से आबाद,
जहाँ चमकीले फूलों के नीचे चांदी की धाराएँ बहती हैं:
ऐसी पहाड़ियाँ हैं जिनमें मेरा मन आनंदित होता है।

[1071] क्योंकि जो मुझे अत्यंत आनंद देता है,
वह तार, बांसुरी और ढोल की धुनें नहीं हैं, [17] बल्कि जब, बुद्धि को अच्छी तरह से संतुलित करके,
धम्म के मार्ग (विपश्यना) में तल्लीन होकर।

वी

सांसारिक गतिविधियों में आनंद लेने वाले और जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं के दान के प्रति लालची भिक्षुओं को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा:

[1072] कम्माṃ बहुकाṃ न करये परिवज्जेया जनाṃ न उय्यमे,॥
उस्सुक्को सो रसानुगिद्धो अत्थं रिन्काति यो सुखवाहो॥ ॥

[1073] कम्माṃ बहुकाṃ न करये परिवज्जेया अनत्तनेय्यमेता,॥
किच्चति कायो किलमति दुक्खितो सो समथौ न विन्दति॥ ॥

[1072] भिक्षु को
व्यस्त कार्यों में नहीं लगना चाहिए; उसे लोगों से दूर रहना चाहिए,
न ही [नकल करने का] प्रयास करना चाहिए।
जो लालच में आकर जीवन के संपूर्ण भोज का स्वाद चखना चाहता है,
वह उस अच्छाई की उपेक्षा करता है जो सच्ची खुशी लाती है। [18]

[1073] भिक्षु को
व्यस्त कार्यों में स्वयं को लगाम नहीं लगाना चाहिए; उसे इससे दूर रहना चाहिए
जो किसी भी तरह से उसके वास्तविक कल्याण की ओर अग्रसर नहीं होता;
शरीर परिश्रम करता है और थकावट से ग्रस्त होता है,
और इस प्रकार पीड़ित होकर उसे शांति प्राप्त नहीं होती।

VI.

निम्नलिखित श्लोक कुछ विशेष अवसरों पर संबोधित करने के लिए बोले जाते थे:

[1074] ओथप्पाहाटमट्टेन अत्तनमपि ता पासति,॥
पट्ठद्धागिवो चरति अहं सय्योति मन्नति ॥॥ ॥

[1075] असेय्यो सेय्यसामानं बालो मन्नति अत्तानां,॥
न तं विण्णु पसासंन्ति पत्थद्धमानसां नरौ ॥॥ ॥

[1076] यो च सेय्योहामास्मिति नहाओ सेय्योति वा पुना,॥
हिनोहाऽ1 सदिसो वा' ति विधासु न विकमपति॥ ॥

[1077] पन्नवंताṃ [96] तथा तदिं सिलेसु सुसामहितां,॥
Cetosamathamanuyuttṃ taṃ ve viññu pasaṃsare.॥ ॥

[1078] यस्सा सब्रह्मचारिसु गर्वो न्युपलभति,॥
अराका होति सद्धम्म नभसो पथवि यथा.॥ ॥

[1079] येसाṃ सीए हिरी ओट्टप्पाṃ सदा सम्मा उपाथिताṃ,॥
विरूहब्रह्मचर्य ते तेसां किना पुनब्भवा॥ ॥

[1080] उद्धतो कैपालो भिक्खु पसुकुलेना परुतो,॥
कपिव सिहाकम्मेन न सो तेनुपासोभाति॥ ॥

[1081] अनुद्धतो अकापालो निपाको सावुतिन्द्रियो,॥
लोभति पौंसुकुलेन सिहोऽव गिरिगबभारे॥ ॥

[1074] केवल बुदबुदाते होंठों से दोहराने मात्र से, [19] हम स्वयं को भी नहीं देख पाते कि हम क्या हैं;
और इसलिए, हठीले होकर हम इधर-उधर घूमते हैं और सोचते हैं:
'मैं उससे, उनसे बेहतर आदमी हूँ!'

[1075] मूर्ख वास्तव में श्रेष्ठ नहीं है, फिर भी
वह स्वयं को श्रेष्ठ समझता है।
परन्तु हे हठी मन के उस बेचारे प्राणी,
जो सचमुच समझदार है, उसकी प्रशंसा मत करो।

[366] [1076] जो अपने बारे में चिंतित नहीं है,
चाहे इस तरह से हो या उस तरह से: [20] - 'मैं बेहतर आदमी
हूँ'; 'मैं बेहतर नहीं हूँ'; या 'मैं बदतर हूँ,'
या फिर 'मैं उसके जितना ही अच्छा हूँ' -

[1077] जो वास्तव में जानता है, और सत्य बोलता है, [21] जिसका हृदय धार्मिकता में अच्छी तरह से स्थिर है,
और संत की शांति को दृढ़ता से धारण करता है, [22] उसकी प्रशंसा करते हैं, जो वास्तव में समझते हैं।

[1078] जो अपने साथी भिक्षुओं के बीच
आदर नहीं पाता, वह धर्म के मार्ग (धम्म) से उतना ही दूर है
जितना आकाश पृथ्वी से दूर होता है। [23]

[1079] परन्तु जिन्होंने नम्रता को अच्छी तरह रोपा है
तथा अपने हृदय में विवेक के लिए सदा परिश्रम किया है,
वे पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) में भरपूर फलते-फूलते हैं;
उनके लिए पुनर्जन्म का कोई अंत नहीं है।

[1080] एक भिक्षु जो, यद्यपि चितकबरा वस्त्र पहने हुए है,
घमंडी और अस्थिर मन का है,
जैसे शेर की खाल में बंदर,
अपने भव्य वस्त्रों से कोई यश प्राप्त नहीं कर सका।

[1081] परन्तु जो, संयमित, दृढ़ मन से,
विवेकशील है, अपनी इंद्रियों को अच्छी तरह नियंत्रित रखता है,
वह चितकबरी पोशाक में शानदार ढंग से चमकता है,
जैसे अंधकारमय पर्वतीय गुफा में शेर।

सातवीं।

ब्रह्मा जगत के देवताओं को पूज्य सारिपुत्त को प्रणाम करते देख और पूज्य कप्पिना के मुस्कुराते चेहरे को देखकर:

[1082] एते संबहुला देवा इधिमंतो यसस्सिनो,॥
दशदेवसहस्सानि सब्बे ते ब्रह्मकायिका॥ ॥

[1083] धम्मसेनापतिं वीरं महझायिं समाहितं,॥
सारिपुत्तं नमस्संतं तिथंथन्ति पंजलिकता.॥ ॥

[1084] नमो ते पुरीसाजन नमो ते पुरीसुत्तमा,॥
यस्सा ते नाभिजानाम यपि निस्साय झायति॥ ॥

[1085] अच्चेराऽ वात बुद्धानाऽ गंभीरो गोकारो सको,॥
ये मायां नाभिजानाम वलावेधिसमागता॥ ॥

[1086] तं तथा देवकायेहि पूजितां पूजनाराहं,॥
सारिपुत्तं तदा दिस्व कप्पिनस्सा सीतां आहु॥ ॥

[1082] देखो वे कैसे खड़े हैं, रहस्यमय शक्ति और महिमा से परिपूर्ण देवताओं से भरे हुए,
दस हजार गुना, ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) के सभी स्वर्ग।

[1083] हमारे वीर पथ-प्रदर्शक (सारिपुत्र),
सारी के महान पुत्र, के चारों ओर शांत और चिंतनशील होकर,
हाथ जोड़कर उनकी स्तुति करते हुए: -

[1084] 'हे मानवता के अभिजात वर्ग, आपको प्रणाम!
हे सर्वोच्च पुरुष, आपकी महिमा हो!
देखो! आपके विचार हमारी सोच से परे हैं;

[1085] हे संसार के प्रबुद्ध कितने अद्भुत हैं! [24] उनकी अंतर्दृष्टि कितनी गहरी है,
उन शक्तियों से परे जिनकी हम गवाही देते हैं,
भले ही हम बाल की खाल निकालने वाले धनुर्धर की तरह कुशल हों!' [25]

[1086]
तब, सारिपुत्त को इस प्रकार दिव्य सेनाओं द्वारा पूजे जाते हुए देखकर , हे सबसे प्यारे संत,
कप्पिना के चेहरे पर एक मुस्कान आ गई। [26]

आठवीं।

थेरा की अपने बारे में 'शेर की दहाड़':

[1087] यावता बुद्धखेत्तमहि थपयित्वा महामुनि,॥
धुतगुने विसिथोहां सदिसो मे न विज्जति॥ ॥

[1088] परिसीनो मया सत्था कतां बुद्धस्स ससाणो,॥
ओहितो गरुको भरो नत्थि दानी पुनभभवो॥ ॥

[1089] न सिवारे न सयाने भोजने नुपालिप्पति,॥
गोतमो अनप्पामेय्यो मूलापुप्फहां विमलाउ'व,॥
अम्बुना निक्खमानिन्नो तिभवभिनिस्सातो। ॥ ॥

[1090] सतिपत्थनागिवो सो सद्धहत्थो महामुनि,॥
पणनासीसो महानानी सदा कैरति निब्बुतो' ति.॥ ॥

[1087] बुद्ध के अनुयायियों के पूरे क्षेत्र में,
केवल सर्वशक्तिमान भगवान (बुद्ध) को छोड़कर,
मैं तपस्वी मार्गों में सबसे आगे खड़ा हूँ;
किसी ने भी मेरे जितना तपस्वी मार्ग नहीं अपनाया।

[1088] भगवान (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है, [27] और बुद्ध के सभी विधान पूरे हो चुके हैं।
मैंने अपने ऊपर का भारी बोझ नीचे रख दिया है,
मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं बचा है।

[1089] क्योंकि हमारे गौतम (बुद्ध) के महान, असीम मन ने कभी वस्त्र, भोजन या
विश्राम के बारे में नहीं सोचा, [368] जैसे निर्मल कमल जल से कोई निशान नहीं लेता; [28] आत्म-बलिदान के लिए [29] निरंतर प्रवृत्त, वह नए बनने के त्रिगुण क्षेत्र से [30] विरक्त है।

[1090] उनका गला
सजगता के चौगुने मीनार के समान है; हाँ, महान द्रष्टा
के हाथों में विश्वास और भरोसा है; ऊपर,
उनका माथा अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण है;
वे अत्यंत बुद्धिमान हैं, और सदा शांतिमय आनंद में विचरण करते हैं।

[1] महा-कस्सपा और उनकी पत्नी की कथा, उनके पूर्व और अंतिम जन्मों में (देखें सिस्टर्स, पृष्ठ 47 आगे), जो स्वयं एक कविता का उपयुक्त विषय है, इतनी लंबी है कि इसे पूर्ण रूप से प्रस्तुत करना संभव नहीं है, इसलिए इसे यहाँ संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है। यह अंग निक. i. 23 पर टिप्पणी में दिए गए संस्करण का बहुत बारीकी से अनुसरण करती है। विपस्सी-बुद्ध के अधीन वे एक ब्राह्मण (पुजारी) दंपत्ति थे, जिनके पास बाहर पहनने के लिए केवल एक ही वस्त्र था। यह वस्त्र कस्सपा ने बुद्ध को भेंट किया था। वे कई जन्मों तक पति-पत्नी रहे।

[2] सी.एफ. जाट. वी. (सं. 531), 283, 289; vi. (सं. 545), 280.

[3] संवादों में भूकंप के आठ कारणों में से दूसरा , ii. 144.

[4] अर्थात्, अनेक पुत्रों का; संभवतः (इसके चेतिया के साथ) संतान के लिए प्रार्थना करने वाले माता-पिता के लिए एक मन्नत का पेड़।

[5] यहाँ वह नाम अचानक प्रकट होता है जिससे वह जाना जाता है। यह संभवतः उसके कबीले का नाम था।

[6] ऐसा माना जाता है कि बुद्ध ने जानबूझकर फटे-पुराने वस्त्र पहने थे। इस घटना का विस्तृत वर्णन किया गया है, लेकिन संक्षिप्तता के लिए इसे छोड़ दिया गया है।

[7] पृष्ठ 317, नोट 2 देखें।

[8] विमानो, विकारिभूतचित्तो (Cy.).

[9] तुलना करें श्लोक 124, और CCXXIX., श्लोक 494, 495.

[10] पब्बतसेनाइसनट्टा (टिप्पणी)। मिलिंडा में उद्धृत, ii. 830.

[11] एक अरहंत (प्रबुद्ध) की सेवा करने का गौरव प्राप्त करने का अवसर (जैसा कि टीका में है)।

[12] गोमुत्तपरिभाविताहरिताकादि (Cy.).

[13] तुलना करें XVIII.

[14] चाइल्डर्स के शब्दकोश में करेरी को - मुझे नहीं पता किस आधार पर; यह स्पष्ट रूप से संस्कृत साहित्य में नहीं है - कैपरिस ट्राइफोलियाटा वृक्ष कहा गया है। इसी वृक्ष के नाम पर सावत्थी के जेतवन में एक मंडप, या मंडाल-माला का नाम रखा गया है (संवाद, 2:4; उदाना, 3:8)। ऊपर दिए गए अभिव्यक्ति, करेरीमाल-विताता से, मुझे इस पौधे में नेपाल और उत्तर-पश्चिमी हिमालय के कस्तूरी गुलाब के पेड़ (रोजा मोएचाटा) को देखने की बहुत इच्छा होती है, जिसे अभी भी कुछ बोलियों में करेर के नाम से जाना जाता है , और डायट्रिच ब्रांडिस की इंडियन ट्रीज़ (लंदन, 1906) में इसका वर्णन इस प्रकार है: 'एक कांटेदार झाड़ी जो ऊंचे पेड़ों की चोटियों तक चढ़ती है, फूलों की शाखाएं समृद्ध मालाओं की तरह नीचे लटकती हैं। फूल, सफेद, ... बड़े संयुक्त टर्मिनल कोरिम्ब्स में। दो से ग्यारह हजार फीट की ऊंचाई पर पाया जाता है।' भूमध्यसागरीय क्षेत्र के रोजा सेम्परविरेंस से लगभग मिलता-जुलता । क्या 'केपर' वृक्ष को एक लता बनाने वाले मैदान को मालाविटाटा, 'जालेदार' या 'मालाओं से सजा हुआ' के रूप में वर्णित किया जा सकता है, साथ ही एक चढ़ने वाले गुलाब के रूप में भी?

[15] = XIII., जंगल का वाचा।

[16] = CXIII., वाचा ऑफ़ द वुड्स और CCXL., श्लोक 601, संकिक्का।

[17] शाब्दिक रूप से, पाँच प्रकार के संगीत वाद्ययंत्र; = श्लोक 398.

[18] तुलना करें श्लोक 494, 1052.

[19] 0ṭṭhapahatamattena, sjjhāyakaranavasena (टिप्पणी)। सी एफ मज्झ. निक., मैं. 164.

[20] विधासु. विभंग, पृ. 389 में आत्म-अभिमान के ऐसे नौ तरीके दर्ज हैं। तुलना करें बुद्ध. मनोविज्ञान, Ī 1116; अंग. निक., iii. 359.

[21] टिप्पणी में लिखा है, तथावादिं नहीं, बल्कि तथा तदिं: इथादिस इ तदि-भवपपत्तिया। पूर्व वाचन कम बाध्य है।

[22] अरहन्तफलसमापत्तिसमापज्जनेन। . . (टिप्पणी).

[23] = श्लोक 278.

[24] बौद्ध: सीएफ। संवाद, ii. 2; इतिवुत्तका, Ī 68.

[25] एक वाक्यांश जो कहीं और सारिपुत्त की बौद्धिक क्षमताओं से जुड़ा है। उनके भाई का श्लोक देखें, XL.

[26] महान कप्पिना। तुलना करें सीसीXXXV। हमने देखा है कि देवताओं की यह भेंट भगवान (बुद्ध) पर समान प्रभाव डालती है। तुलना करें सीसीXLII, श्लोक 629, 680।

[27] = श्लोक 1050 और पासिम.

[28] श्लोक 701 देखें; साथ ही उस कविता के पूर्ववर्ती श्लोकों को भी देखें, जिनमें ऊपर दिए गए अंतिम उपमाएँ हैं।

[29] निखम्मा.

[30] अस्तित्व के तीन स्तर: काम-भाव, या -लोक, रूप-भाव, अरूप-भाव। देखें सार-संग्रह, पृ. 186.

BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी

महा कस्सपा

मगध जिले के महातीत्था नामक एक गाँव में कपिला और सुमनादेवी नामक एक धनी ब्राह्मण दंपति रहते थे। उनका एक पुत्र था जिसका नाम उन्होंने पिप्पली कस्सपा रखा था।

उस समय की प्रथा के अनुसार, जब पिप्पली बालिग हुए तो उनके माता-पिता ने उनके लिए एक उपयुक्त कन्या की तलाश की। लेकिन पिप्पली को विवाह में कोई रुचि नहीं थी और उन्होंने अपने माता-पिता को बताया कि वे उनके देहांत तक उनकी देखभाल करेंगे और फिर संन्यासी का जीवन व्यतीत करेंगे। उनके माता-पिता इस निर्णय से प्रसन्न नहीं हुए और उन्होंने जोर दिया कि पिप्पली को एक उपयुक्त कन्या का चयन करना चाहिए। अपने माता-पिता को प्रसन्न करने के लिए, कश्यप ने अपने सुनार से ठोस सोने की एक सुंदर कन्या की मूर्ति बनवाई और कहा कि यदि उन्हें कोई ऐसी कन्या मिल जाए जो मूर्ति से मिलती-जुलती हो, तो वे विवाह करेंगे।

तब कपिल ने आठ ब्राह्मणों को बुलाया और उन्हें बड़ी रकम और मूर्ति देकर अपने बेटे के लिए सोने की मूर्ति से मिलती-जुलती दुल्हन की तलाश में देश भर में घूमने को कहा।

ब्राह्मण सगला नामक गाँव में थे, जहाँ उनकी नज़र भद्दा कपिलानी नाम की एक बेहद खूबसूरत लड़की पर पड़ी, जो मूर्ति से हूबहू मिलती-जुलती थी। उन्होंने उसके माता-पिता से बात की और पता चला कि वे विवाह के लिए सहमत हैं। फिर वे वापस गए और कपिला और सुमनादेवी को सूचना दी कि एक उपयुक्त दुल्हन मिल गई है।

जब कश्यप को भद्दा से अपने होने वाले विवाह के बारे में पता चला, तो उन्होंने भद्दा को पत्र लिखने का फैसला किया। उन्होंने बताया कि वे संन्यासी बनना चाहते हैं और भद्दा से अनुरोध किया कि वे इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दें और कहीं और उपयुक्त साथी की तलाश करें। कश्यप को यह ज्ञात नहीं था कि भद्दा की भी विवाह करने की कोई इच्छा नहीं थी और उन्होंने संन्यासी जीवन को चुना था। उन्होंने

भी कश्यप को ऐसा ही पत्र लिखकर उनसे कहीं और से दुल्हन ढूंढने का अनुरोध किया था। हालांकि, दोनों बच्चों के माता-पिता, जो अपने बच्चों की भावनाओं से अवगत थे, ने पत्रों को रोक लिया और प्रेम भरे पत्र लिखकर विवाह के लिए सहमति दे दी।

एक भव्य विवाह समारोह आयोजित किया गया और बड़े धूमधाम से भद्दा का विवाह कश्यप से संपन्न हुआ। हालांकि, दोनों में से किसी को भी वैवाहिक जीवन में रुचि नहीं थी। उनके पिछले पुण्य कर्मों और तपस्वी जीवन का प्रभाव इतना प्रबल था कि दोनों ने ब्रह्मचर्य का जीवन जीने का निश्चय किया। वे सौहार्दपूर्वक मित्रवत रहे, कश्यप के वृद्ध माता-पिता की रीति-रिवाजानुसार मृत्यु तक देखभाल की और पारिवारिक संपत्ति व जागीर के उत्तराधिकारी बने।

महा कस्सपा का त्याग

एक दिन जब कस्सपा फसल के मौसम की तैयारी में खेत की जुताई का निरीक्षण कर रहा था, तो वह एक ऐसी आम चीज़ को देखकर चौंक गया जो पहले कभी उसकी नज़र में नहीं आई थी। जुताई के परिणामस्वरूप कई कीड़े और छोटे जीव ज़मीन से बाहर आ गए थे और कीड़ों से आकर्षित होकर कई पक्षी उसके खेत के चारों ओर चक्कर लगा रहे थे और दावत उड़ा रहे थे।

अनेक निर्दोष प्राणियों के विनाश को देखकर कश्यप ने अपने श्रमिकों से पूछा कि उनके कष्ट और मृत्यु के लिए कौन जिम्मेदार है। तब श्रमिकों ने उन्हें बताया कि वे स्वयं इसके लिए जिम्मेदार हैं, क्योंकि वे उनके नाम पर खेत जोत रहे थे। इस कथन का कश्यप पर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने निश्चय किया कि वे परिवार की सारी संपत्ति भद्दा को सौंप देंगे और मोक्ष की खोज में निकले एक तपस्वी का प्राण त्याग देंगे।

उसे इस बात का पता नहीं था कि लगभग उसी समय भद्दा ने भी ऐसा ही निर्णय लिया था। उसके नौकरों ने कुछ तिल धूप में सुखाने के लिए रख दिए थे। छोटे-छोटे जीव तिलों के चारों ओर जमा हो गए थे और शोर मचाने वाले पक्षी उन नन्हे जीवों को खाने के लिए इकट्ठा हो गए थे। भद्दा ने उन नन्हे जीवों का कष्ट देखा और अपने नौकरों से पूछा कि उनके कष्ट और मृत्यु के लिए कौन जिम्मेदार है। उसे भी बताया गया कि वह स्वयं जिम्मेदार है, क्योंकि उसी के निर्देश पर और उसी के खाने के लिए तिल धूप में फैलाए गए थे।

अपने कष्टों पर विचार करते हुए, भद्दा ने परिवार की सारी संपत्ति कश्यप को सौंपने और संन्यासी जीवन व्यतीत करने का निश्चय किया। शाम को कश्यप और भद्दा ने अपने निर्णय पर चर्चा की और पाया कि दोनों का मत एक जैसा है। आपस में विचार करने के बाद, दोनों ने पवित्र जीवन व्यतीत करने और कष्टों से मुक्ति पाने का संकल्प लिया। एक-दूसरे के सिर मुंडवाकर उन्होंने संन्यासियों के साधारण वस्त्र धारण किए और अपना घर छोड़ दिया।

जब उनके नौकरों और ग्रामीणों को उनके संन्यास के बारे में पता चला तो वे रोने-धोने लगे और दंपति को समझाने की कोशिश करने लगे। लेकिन कश्यप और भद्दा ने अपना मन बना लिया था। उन्होंने अपनी संपत्ति नौकरों में बाँट दी और आगे बढ़ गए। इस तरह वे गुरु की तलाश में भटकते रहे, कश्यप आगे और भद्दा कुछ गज पीछे।

कुछ समय बाद, कश्यप को लगा कि उनकी खूबसूरत पूर्व पत्नी का उनके पीछे आना उचित नहीं है। उन्होंने सोचा कि लोग मान लेंगे कि उनका भद्दा से संबंध है और अफवाहें फैलाकर आरोप लगाएंगे। चूंकि वे दोनों पवित्र और निर्दोष थे, इसलिए लोगों की गलत धारणाएं उन्हें बहुत कष्ट पहुंचाएंगी। भद्दा से अपने विचार साझा करते हुए, उन्होंने उनसे अनुरोध किया कि वे अब उनका पीछा न करें। भद्दा ने उनकी बात मान ली और अगले चौराहे पर उनसे अलग हो गईं। कश्यप ने अपने दाहिनी ओर का रास्ता लिया, जबकि भद्दा ने अपने बाईं ओर का रास्ता लिया।

इस ग्रंथ से पता चलता है कि तपस्वियों की पवित्रता और पुण्य के कारण इस त्याग से पृथ्वी कांप उठी। पृथ्वी के इस कंपन को देखकर बुद्ध ने अपनी अलौकिक दृष्टि से यह जान लिया कि उनके भावी महान शिष्यों में से एक उनसे मिलने आ रहा है। उन्होंने कश्यप से मिलने का निश्चय किया और महातीथ की ओर चल पड़े।

नालंदा और राजगृह के बीच के मार्ग पर बुद्ध अपने भावी शिष्य की प्रतीक्षा में एक अंजीर के वृक्ष के नीचे बैठ गए। जिस क्षण कश्यप ने बुद्ध को देखा, वह समझ गया कि उसे अपना गुरु मिल गया है। बुद्ध अपने पूर्ण प्रकाश में विराजमान थे, उनके चारों ओर एक आभा फैली हुई थी। कश्यप ने बुद्ध के चरणों में गिरकर उन्हें आदरपूर्वक प्रणाम किया और भिक्षु संघ में प्रवेश करने की अनुमति मांगी।

इसके बाद बुद्ध ने कश्यप को तीन विषयों पर उपदेश दिया। उन्होंने कश्यप को ये निर्देश इसलिए दिए ताकि वे:

उसे स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए कि वह वरिष्ठों, नौसिखियों और कुलीन वर्ग में मध्यम स्तर के लोगों के प्रति अनुचित कार्य करने पर गहरी शर्म महसूस करे।

उन शिक्षाओं को सुनें, उनका अध्ययन करें, उन पर मनन करें और आत्मसात करें जो अच्छे कर्मों के लिए सहायक हों।

अपने शरीर और उसके विचारों और कार्यों के प्रति सचेत रहें।

इस प्रवचन के बाद गुरु और उनका नया शिष्य राजगृह वापस चले गए।

रास्ते में बुद्ध एक वृक्ष की जड़ के नीचे विश्राम करना चाहते थे। तब कश्यप ने अपना बाहरी वस्त्र लिया, उसे चार तहों में मोड़ा और बुद्ध से उस पर बैठने का अनुरोध किया, क्योंकि ऐसा करने से उन्हें लंबे समय तक लाभ होगा। बुद्ध ने कश्यप का वस्त्र स्वीकार किया और उसकी कोमलता की प्रशंसा की। यह सुनकर कश्यप ने तुरंत अपना वस्त्र बुद्ध को देते हुए कहा, "हे भगवान, मुझ पर दया करके, इस वस्त्र को स्वीकार करें।" तब बुद्ध ने कश्यप से पूछा कि क्या वे अपना पुराना, खुरदुरा वस्त्र पहनेंगे। खुशी से भरकर कश्यप ने बुद्ध का वस्त्र स्वीकार कर लिया और उसे पहनने के लिए सहमत हो गए। कश्यप एकमात्र भिक्षु थे जिनके साथ बुद्ध ने वस्त्रों का आदान-प्रदान

किया था। यद्यपि इस आदान-प्रदान का महत्व ग्रंथ में वर्णित नहीं है, फिर भी संभवतः इसने कश्यप को तपस्वी साधनाओं में अग्रणी भिक्षु बनने की अपनी प्राचीन आकांक्षा की याद दिलाई होगी, क्योंकि उन्होंने तेरह तपस्वी साधनाओं का पालन किया था।

महा कस्सपा की आकांक्षा

एक लाख विश्व चक्र पूर्व, पद्ममुत्तरा बुद्ध के समय, कश्यप का जन्म वेदेह नामक एक धनी जमींदार के रूप में हुआ था, और उस समय भी भद्दा उनकी पत्नी थीं। पद्ममुत्तरा बुद्ध हंसवती नगर के निकट खेमा हिरण उद्यान में निवास कर रहे थे। वेदेह ने देखा कि पद्ममुत्तरा बुद्ध ने महानिसभा नामक एक भिक्षु को कठोर तपस्या में अग्रणी शिष्य और अपना तीसरा सबसे श्रेष्ठ शिष्य नियुक्त किया। पद्ममुत्तरा बुद्ध से प्रेरित होकर, वेदेह ने बुद्ध और उनके अनुयायियों को अगले दिन अपने घर भोजन के लिए आमंत्रित किया।

जब बुद्ध और उनके भिक्षु भोजन कर रहे थे, तब वेदेह ने देखा कि भिक्षु महानिसभा भिक्षा मांगने के लिए सड़कों पर घूम रहे हैं। वेदेह ने उन्हें अपने घर पर भिक्षा ग्रहण करने के लिए आमंत्रित किया। जब महानिसभा ने मना कर दिया, तो उन्होंने भिक्षु का कटोरा लेकर उसे सुगंधित भोजन से भर दिया और उन्हें वापस दे दिया। फिर उन्होंने बुद्ध से पूछा कि महानिसभा ने उनके घर भोजन के लिए आने का निमंत्रण क्यों स्वीकार नहीं किया। तब पद्ममुत्तरा बुद्ध ने समझाया कि अनेक विश्व चक्रों पहले महानिसभा ने तपस्या में अग्रणी बनने की इच्छा रखी थी, और अपनी इसी इच्छा के अनुरूप उन्होंने केवल भिक्षा मांगने से प्राप्त भोजन ही ग्रहण किया था।

महानिसभा से प्रेरित होकर वेदेह अत्यंत प्रसन्न हुए। उन्होंने निश्चय किया कि वे भी तपस्या में अग्रणी भिक्षु और भावी बुद्ध के शिष्य कहलाना चाहते हैं। उन्होंने बुद्ध पद्ममुत्तरा और उनके भिक्षुओं के दल को सात दिनों के लिए भोजन और आवश्यक सामग्री भेंट की और पद्ममुत्तरा बुद्ध के समक्ष प्रणाम करते हुए भावी बुद्ध के शिष्य के रूप में तपस्या में अग्रणी भिक्षु बनने की इच्छा व्यक्त की। यह देखकर कि वेदेह उनकी इस इच्छा को पूरा करेंगे, बुद्ध पद्ममुत्तरा ने घोषणा की कि गौतम बुद्ध के समय में वेदेह महा कस्सपा के नाम से जाने जाएंगे और उन्हें तीसरे सबसे प्रतिष्ठित भिक्षु और तपस्या में अग्रणी घोषित किया जाएगा।

गौतम बुद्ध और कश्यप का संबंध कई जन्मों पहले शुरू हुआ था। जातक कथाओं में कश्यप के उन्नीस जन्मों का वर्णन है जिनमें वे बोधिसत्व से संबंधित थे, कभी उनके पिता के रूप में, कभी उनके भाई के रूप में, और अक्सर उनके गुरु या मित्र के रूप में। इस प्रकार, जब कश्यप ने बुद्ध को देखा तो उनके बीच जो तत्काल संबंध स्थापित हुआ, वह गहरा था। कश्यप ने बाद के बुद्धों की उपस्थिति में भी अपनी आकांक्षा को नवीकृत किया और अनगिनत वर्षों तक कई पुण्य कर्म किए। जैसा कि भविष्यवाणी की गई थी, कश्यप ने गौतम बुद्ध के समय अपनी आकांक्षा को पूरा किया। बुद्ध ने कश्यप को कठोर साधना करने वाले भिक्षुओं में सर्वोपरि नियुक्त किया।

बुद्ध ने कश्यप की तपस्या और वैराग्यपूर्ण व्यवहार की बार-बार प्रशंसा की। उन्होंने कहा:

"जब कस्सपा परिवारों के बीच जाते हैं, तो उनका मन आसक्त नहीं होता, व्यथित नहीं होता, बंधा हुआ नहीं होता। वे सोचते हैं, 'लाभ चाहने वाले लाभ प्राप्त करें! पुण्य चाहने वाले पुण्य करें!' वे दूसरों के लाभ से प्रसन्न और प्रसन्न होते हैं, जैसे वे अपने लाभ से प्रसन्न और प्रसन्न होते हैं। ऐसा भिक्षु परिवारों के बीच जाने के योग्य है।"

"जब वह उपदेश देता है, तो वह व्यक्तिगत मान्यता और प्रशंसा के लिए नहीं, बल्कि परमेश्वर की शिक्षाओं को लोगों तक पहुंचाने के लिए देता है, ताकि सुनने वाले उन्हें स्वीकार करें और तदनुसार अभ्यास करें। वह शिक्षा की उत्कृष्टता और करुणा एवं सहानुभूति के कारण उपदेश देता है।" -- (साम्युत्त निकाय)

महा कस्सपा की तपस्या पद्धति

देवताओं के साथ दो रोचक मुलाकातों से कश्यप की तपस्या के प्रति प्रतिबद्धता और भी स्पष्ट होती है। पहली घटना देवी लाजा की सेवा के प्रति उनकी प्रतिक्रिया है। लाजा को याद था कि उनकी वर्तमान वैभवशाली स्थिति उस भेंट के कारण थी जो उन्होंने उस महान गुरु को अर्पित की थी। लाजा, जो एक गरीब महिला थीं, ने बड़े श्रद्धा से उस गुरु को भुने हुए चावल अर्पित किए थे। घर लौटते समय उन्हें एक विषैले सांप ने काट लिया और उनकी मृत्यु हो गई। उनकी भेंट के फलस्वरूप उन्हें तावतिंसा स्वर्ग में अपार वैभव के साथ पुनर्जन्म मिला।

कृतज्ञ लाजा ने बुजुर्ग की कुटिया साफ करने और उनके बर्तनों में पानी भरने का निश्चय किया। तीसरे दिन उसने देवी को पूर्ण प्रकाश में उनकी कुटिया साफ करते हुए देखा। कश्यप ने उनसे पूछा कि वे क्या कर रही हैं और जब उन्हें बताया गया, तो उन्होंने उनसे कहा कि वे भविष्य में उनकी सेवा न करें क्योंकि वे कठोर साधना में लीन थे। निराश लाजा बड़े दुख में चली गईं। बुद्ध ने निराश लाजा को देखकर करुणा से उनके सामने आकर उन्हें उनकी सेवा के पुण्य फल बताए। फिर उन्होंने बुजुर्ग की मनोकामना के बारे में बताकर उन्हें सांत्वना दी।

दूसरी घटना तब की है जब कश्यप पिप्पली गुफा में निवास कर रहे थे। वे ध्यान की अवस्था में पहुँच गए थे और सात दिनों तक वहीं रहे। इसके बाद वे राजगृह के लिए भिक्षा मांगने निकले। कश्यप से प्रेरित होकर देवता दिव्य भोजन लेकर पृथ्वी पर अवतरित हुए। परंतु कश्यप ने देवताओं का अमृत यह कहते हुए ग्रहण करने से इनकार कर दिया कि वे यह अवसर गरीबों को देना चाहते हैं ताकि वे पुण्य अर्जित कर सकें। निराश देवता स्वर्ग लौट गए और उन्होंने स्वर्ग के राजा सक्का को कश्यप के इनकार के बारे में बताया।

जब सक्का को कश्यप के इनकार के बारे में पता चला, तो उसके मन में उस महान वृषभ की सेवा करने की तीव्र इच्छा जागी। एक गरीब बुनकर का वेश धारण करके उसने कश्यप को चावल भेंट किए। जब वृषभ ने भोजन ग्रहण किया, तो एक दिव्य सुगंध उत्पन्न हुई और कश्यप तुरंत समझ गए कि देव ने उन्हें छल किया है। तब उन्होंने सक्का को गरीबों से पुण्य कमाने का अवसर छीनने के लिए फटकारा। सक्का ने कश्यप से पूछा कि क्या छल के कारण उन्हें इस कर्म से पुण्य नहीं मिला? कश्यप ने सक्का को बताया कि छल के बावजूद उन्हें पुण्य प्राप्त हुआ है और वे अपने भिक्षाटन कार्य में आगे बढ़ गए।

बुद्ध ने कश्यप को तपस्वी जीवन के गुणों और मोक्ष प्राप्ति में तपस्या के लाभों के बारे में भी बताया। इससे कश्यप को न केवल अपनी तपस्या जारी रखने की प्रेरणा मिली, बल्कि दूसरों के लिए एक आदर्श बनकर इसे आगे बढ़ाने की भी प्रेरणा मिली। बुद्ध ने कहा:

"पहले, कस्सपा, संघ में ऐसे वरिष्ठ भिक्षु थे जो वनवासी थे, भिक्षा पर जीवन यापन करते थे, चिथड़े-चिथड़े पहनते थे, केवल तीन प्रकार के वस्त्र धारण करते थे, उनकी आवश्यकताएँ कम थीं और वे समाज से अलग एकांत में रहकर संतुष्ट रहते थे, ऊर्जावान थे, और वे ऐसे जीवन शैली की प्रशंसा और प्रोत्साहन करते थे। जब ऐसे वरिष्ठ या युवा भिक्षु मठ में आते थे, तो उनका सहर्ष स्वागत किया जाता था और उन्हें धम्म के अभ्यास के प्रति समर्पित मानकर सम्मानित किया जाता था। तब जो लोग उन श्रेष्ठ भिक्षुओं का स्वागत और सम्मान करते थे, वे भी उनके जीवन शैली का अनुकरण करने का प्रयास करते थे और इससे उन्हें दीर्घकाल तक बहुत लाभ होता था।"

"परन्तु आजकल, कश्यप, मठ में आने वाले भिक्षुओं का सम्मान कठोर और गंभीर जीवन व्यतीत करने वाले भिक्षुओं को नहीं, बल्कि प्रसिद्ध और लोकप्रिय भिक्षुओं को किया जाता है, जिन्हें भिक्षु बनने के लिए आवश्यक सभी सुख-सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं। इनका स्वागत और सम्मान किया जाता है, और मेज़बान इनका अनुकरण करने का प्रयास करते हैं, जिससे उन्हें दीर्घकाल तक हानि होती है। अतः यह कहना उचित होगा कि ऐसे भिक्षुओं को उस चीज़ से हानि पहुँचती है और वे उस पर हावी हो जाते हैं जो भिक्षु के जीवन को हानि पहुँचाती है।" --(साम्युत्त निकाय)

कासपा, जिन्होंने पद्ममुत्तरा बुद्ध के समय में तपस्या में अग्रणी भिक्षु बनने की आकांक्षा रखी थी, ने इन शब्दों को दिल से आत्मसात कर लिया। वास्तव में, एक बार उन्होंने आनंद को फटकारा, जो धम्म में उन्नत होने से पहले ही 200 नवोदित भिक्षुओं को उनके शिष्यों के घर ले गए थे। सांसारिक सुखों के आकर्षण में आकर, नवोदित भिक्षुओं ने संघ त्याग दिया था और पारिवारिक जीवन में लौट गए थे। कासपा ने आनंद को अपने शिष्यों की देखभाल न करने के लिए फटकारा। धनी लोग अक्सर बुद्ध और उनके अनुयायियों को भोजन के लिए आमंत्रित करते थे। कासपा ने भिक्षा मांगने के लिए स्वयं जाकर और ऐसे निमंत्रणों को अस्वीकार करके यह सुनिश्चित किया कि भिक्षा देने के इस पुण्य कार्य का अवसर गरीबों को भी मिले। वे मार्ग में प्रत्येक घर पर रुके और प्रत्येक दान को समान विनम्रता से स्वीकार किया।

कस्सपा के तपस्वी जीवन और वैराग्य का वर्णन उन्होंने अपनी थेरागथा कविताओं में किया है।

एक अन्य अवसर पर बुद्ध ने कश्यप से पथभ्रष्ट भिक्षुओं को शिक्षा देने का अनुरोध किया। बुद्ध ने कहा, "कश्यप, भिक्षुओं को उपदेश दो। या तो मैं, कश्यप, भिक्षुओं को उपदेश दूँ, या तुम। या तो मैं या तुम उन्हें धम्म पर प्रवचन दो।" ये शब्द कश्यप पर बुद्ध के विश्वास को दर्शाते हैं, क्योंकि प्रत्येक अरहंत में इस प्रकार शिक्षा देने की क्षमता नहीं होती कि उसे समझा जा सके।

इस ग्रंथ में यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि बुद्ध ने अपने प्रमुख शिष्यों सारिपुत्त और मोग्गलाना के बजाय कश्यप को इस उपदेश के लिए क्यों चुना। वे भी उत्कृष्ट शिक्षक थे। संभव है कि यह उपदेश उनके देहांत के बाद या ठीक पहले दिया गया हो, क्योंकि बुद्ध जानते थे कि कश्यप उनसे अधिक समय तक जीवित रहेंगे, जबकि उनके प्रमुख शिष्य उनसे पहले ही देहांत प्राप्त कर लेंगे। यह भी संभव है कि बुद्ध ने अपने भिक्षुओं में कठोर जीवन शैली से हटकर सुख-सुविधाओं और भौतिकवाद की ओर रुझान देखा हो। कश्यप, जिन्होंने कठोर जीवन व्यतीत किया, पथभ्रष्ट भिक्षुओं के लिए आदर्श थे।

अन्य भिक्षुओं की तरह कस्सपा भी अक्सर बुद्ध से प्रश्न पूछते थे। एक बार कस्सपा ने बुद्ध से पूछा कि उनके उपदेश के आरंभ में भिक्षुओं के लिए नियम कम और अरहंत अधिक क्यों थे, जबकि बाद में भिक्षुओं के लिए नियम अधिक और अरहंत कम हो गए। बुद्ध ने उत्तर इस प्रकार दिया:

"तो ऐसा होता है, कस्सपा, जब प्राणी पतित हो जाते हैं और सच्चा धम्म लुप्त हो जाता है: तब नियम बढ़ जाते हैं और अरहंत कम हो जाते हैं। लेकिन जब तक संसार में कोई पाखंडी धम्म उत्पन्न नहीं होता, तब तक धम्म का लुप्त होना संभव नहीं है। परन्तु जब संसार में पाखंडी धम्म उत्पन्न हो जाता है, तब नियम बढ़ जाते हैं और अरहंत कम हो जाते हैं।"

"परन्तु, कस्सपा, धम्म के लुप्त होने का कारण पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु - इन चार तत्वों का प्रलय नहीं है। न ही इसके लुप्त होने का कारण किसी जहाज पर अत्यधिक भार लादने के कारण उसके डूबने जैसा है। बल्कि, पाँच हानिकारक मनोवृत्तियों की उपस्थिति ही धम्म के आवरण और लुप्त होने का कारण है।"

ये पाँच बातें हैं: भिक्षुओं, भिक्षुणियों और पुरुष एवं स्त्री भक्तों द्वारा बुद्ध, धम्म, संघ, प्रशिक्षण और ध्यान में एकाग्रता का अभाव। परन्तु जब तक इन पाँचों बातों का आदर और सम्मान बना रहेगा, धम्म अपवित्रता से मुक्त रहेगा और लुप्त नहीं होगा।

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि धम्म के संरक्षण का दायित्व केवल संघ को ही नहीं सौंपा गया है। गृहस्थ भक्त भी इसके संरक्षण में योगदान दे सकते हैं और उन्हें देना भी चाहिए। वास्तव में, हममें से प्रत्येक को धम्म के संरक्षण को सुनिश्चित करने के लिए अपनी पूरी कोशिश करनी चाहिए ताकि भावी पीढ़ियों के लिए धम्म सुलभ बना रहे।

कश्यप ने बुद्ध से यह प्रश्न नहीं किया कि संसार में छद्म धम्म कब प्रकट होगा या छद्म धम्म से उनका वास्तव में क्या तात्पर्य है। यद्यपि संसार में बौद्ध धर्म की अनेक परंपराएँ हैं, उन सभी में चार आर्य सत्य और प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धांत समाहित है, जो बुद्ध की शिक्षाओं का मूल है।

यद्यपि बुद्ध अक्सर कश्यप की तपस्या और वैराग्य की प्रशंसा करते थे, फिर भी उन्हें वृद्ध कश्यप के प्रति गहरी करुणा थी। दो अवसरों पर बुद्ध ने कश्यप को याद दिलाया कि अब जब वे वृद्ध हो गए हैं, तो उनका खुरदरा, फटा हुआ वस्त्र उनकी त्वचा के लिए असुविधाजनक हो सकता है, इसलिए उन्हें अब कोमल वस्त्र धारण करने चाहिए। उन्होंने उनसे गृहस्थों से भिक्षा मांगने के निमंत्रण स्वीकार करने और भिक्षा मांगने तथा वनवास में रहने के बजाय मठों में रहने का भी अनुरोध किया। परंतु कश्यप ने यह कहते हुए इनकार कर दिया कि वे लंबे समय तक वनवासी रहे हैं और फटे वस्त्र धारण करते रहे हैं, और उन्होंने दूसरों को भी ऐसा करने की सलाह दी है। उन्होंने यह भी कहा कि उनकी आवश्यकताएँ कम हैं और वे अपने पास जो कुछ है उससे संतुष्ट और प्रसन्न हैं, और उन्होंने दूसरों को भी ऐसा करने की सलाह दी है। इसलिए, उन्होंने उन तपस्याओं में बने रहना पसंद किया जिनकी उन्होंने कई अवसरों पर दूसरों को सलाह दी थी।

बुद्ध ने उनसे पूछा कि वे इतना तपस्वी जीवन क्यों व्यतीत करते हैं, तो उन्होंने उत्तर दिया कि यह उनके स्वयं के कल्याण और आने वाली पीढ़ियों के प्रति करुणा के कारण है। उन्होंने कहा कि वे उनके अनुकरणीय आचरण का अनुसरण कर सकते हैं और उनसे प्रेरणा ले सकते हैं। क्योंकि उन्होंने न केवल दूसरों को तपस्या का उपदेश दिया, बल्कि अपने आचरण में भी इसका उदाहरण प्रस्तुत किया। बुद्ध ने उनके शब्दों की प्रशंसा की और उन्हें वनवासी के रूप में रहने, वस्त्र धारण करने और भिक्षा मांगने की अनुमति दी, क्योंकि ऐसा करना मनुष्यों और देवताओं दोनों के लिए लाभकारी होगा।

ऐसा प्रतीत होता है मानो बुद्ध ने परिनिर्वाण के बाद मठवासी मूल्यों में गिरावट को भांपते हुए कश्यप को धम्म के संरक्षण में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका के लिए तैयार किया था। बुद्ध ने स्पष्ट रूप से कहा था कि उनके निधन के बाद कोई उत्तराधिकारी नहीं होगा, बल्कि धम्म ही उनका गुरु होगा। फिर भी बुद्ध ने यह पूर्वाभास कर लिया था कि कश्यप की तपस्या उन्हें एक प्रतिष्ठित, उत्कृष्ट नेता बनाएगी, जिनका भिक्षुओं द्वारा सम्मान किया जाएगा। बुद्ध ने अनेक अवसरों पर कश्यप की तपस्या की प्रशंसा और प्रोत्साहन किया। कश्यप ने भी अपने शिष्यों को भौतिकवाद से दूर और तपस्वी जीवन की सुंदरता की ओर प्रेरित करने का हर अवसर प्रयोग किया।

थेरागाथा में, कस्सपा वनवास की सुंदरता और उससे मिलने वाली अंतर्दृष्टि और शांति का वर्णन करते हैं, जो धम्म की गहरी समझ की ओर ले जाती है।

महा कस्सपा का महान योगदान

धम्म के संरक्षण में कश्यप का सबसे बड़ा योगदान भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण के बाद हुआ। बुद्ध के महान शिष्यों में से केवल आनंद और अनुराधा ही कुशीना में बुद्ध के निधन के समय उपस्थित थे, क्योंकि सारिपुत्त और मोग्गलन दोनों का निधन बुद्ध से पहले ही हो चुका था। कश्यप अपने भिक्षुओं के दल के साथ पावा से कुशीना की ओर यात्रा कर रहे थे, तभी उनकी मुलाकात एक तपस्वी से हुई, जिसके पास मंदारव (मूंगा वृक्ष) का फूल था। चूंकि यह पौधा स्वर्ग में उगता है, कश्यप समझ गए कि कुछ असामान्य हुआ है। उन्होंने तपस्वी से पूछा कि क्या वे बुद्ध के बारे में कुछ जानते हैं, और तपस्वी ने पुष्टि की कि बुद्ध का निधन एक सप्ताह पहले हो चुका था। उन्होंने बताया कि देवता और मल्ल राजा अगरबत्ती और फूलों से बुद्ध को श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे थे। उन्होंने कहा कि यह मंदारव का पौधा उन्होंने श्मशान स्थल से लिया था।

जब भिक्षुओं ने बुद्ध के देहांत का समाचार सुना, तो जो भी अर्हंत पद प्राप्त नहीं कर पाए थे, वे सब विलाप करने और रोने लगे। परन्तु सुभद्दा नामक एक भिक्षु ने अन्य भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "बस करो मित्रों। शोक मत करो, विलाप मत करो। हम महान तपस्वी से मुक्त हो गए हैं। उनके द्वारा यह बताने से कि क्या अच्छा है, क्या बुरा है, हम बहुत परेशान थे। अब हम अपनी इच्छा अनुसार कार्य कर सकते हैं और हमें वह करने की आवश्यकता नहीं है जो हमें पसंद नहीं है।"

इस लेख में कश्यप की इन कठोर बातों पर प्रतिक्रिया का उल्लेख नहीं है। हो सकता है कि कश्यप भिक्षुओं के बीच कलह उत्पन्न न हो इसलिए चुप रहे हों। इसके बजाय, उन्होंने शोक संतप्त भिक्षुओं को बुद्ध द्वारा सिखाई गई अनित्यता की सच्चाई याद दिलाकर उन्हें सांत्वना दी। कश्यप ने इस घटना का उल्लेख अवश्य किया, क्योंकि प्रथम संघ परिषद के लिए अरहंतों को एकत्रित करते समय उन्होंने इसी घटना का जिक्र किया था।

कस्सपा ने मन ही मन यह कामना की कि जब तक वह और उनके भिक्षुओं का दल कुसिनारा न पहुँच जाए, तब तक चिता प्रज्वलित न हो। उनकी कामना के अनुरूप चंदन की चिता प्रज्वलित नहीं हुई। जब कस्सपा और उनके भिक्षु वहाँ पहुँचे, तो लकड़ी खिसक गई और बुद्ध के पवित्र चरण दिखाई दिए। कस्सपा और उनके भिक्षुओं ने सिर झुकाकर बुद्ध को प्रणाम किया, जिसके बाद चंदन की चिता में आग लग गई।

बुद्ध के अंतिम संस्कार और अवशेषों के वितरण के बाद, कश्यप ने अपना सारा ध्यान धम्म के संरक्षण पर केंद्रित किया। सुब्बद्दा की चुनौती और नैतिक शिथिलता तथा धम्म के पतन की संभावना को ध्यान में रखते हुए, उन्होंने एक संघ परिषद आयोजित करने का प्रस्ताव रखा, जिसमें धम्म और संघ के नियमों, विनय की समीक्षा की जाएगी। जब उन्होंने अपने विचार अन्य संघ सदस्यों के साथ साझा किए, तो वे सहमत हो गए।

प्रथम संघ सभा के लिए, कश्यप ने संघ से 500 सदस्यों का चयन किया, जिनमें आनंद को छोड़कर सभी अरहंत थे। आनंद, जो धम्म के संरक्षक के रूप में जाने जाते थे, को उनकी उत्कृष्ट स्मृति और बुद्ध तथा उनके महान शिष्यों द्वारा प्रतिपादित 84,000 सूत्रों के विस्तृत ज्ञान के कारण चुना गया था। शाक्य राजकुमार के पूर्व नाई, उपाली, जो एक अरहंत थे, ने विनय पाठ का नेतृत्व किया क्योंकि बुद्ध ने उन्हें विनय नियमों के ज्ञान में अग्रणी भिक्षु घोषित किया था। अन्य सभी भिक्षुओं को सात माह की पाठ अवधि के लिए राजगृह छोड़ने का आदेश दिया गया था। बुद्ध की सभी शिक्षाओं और मठवासी अनुशासन का पाठ किया गया। धम्म को संहिताबद्ध किया गया और पाँच संग्रहों (निकायों) तथा तीन पिटकों: सूत्र पिटक, विनय पिटक और अभिधम्म पिटक में व्यवस्थित किया गया। बुद्ध के निधन के तीन महीने बाद, मगध देश की राजधानी राजगृह में राजा अजातसत्तु के संरक्षण में पहली संघ परिषद का आयोजन किया गया था।

अनुराधा के प्रोत्साहन से आनंद ने ध्यान किया और प्रथम संघ सभा के दिन भोर में अरहंत पद प्राप्त किया। फिर उन्होंने सूक्ष्म आध्यात्मिक यात्रा का उपयोग करते हुए वायुमार्ग से यात्रा की, जो उनके मोक्ष का प्रतीक था, और सभा के अन्य सदस्यों के बीच अपना स्थान ग्रहण किया।

प्रथम सभा के बाद भिक्षुओं का कश्यप के प्रति आदर और भी बढ़ गया। उन्हें संघ का मुखिया माना जाता था, यद्यपि बुद्ध ने स्पष्ट रूप से कहा था कि उनका कोई उत्तराधिकारी नहीं होगा और उनके जाने के बाद धम्म ही गुरु होगा। अपनी मृत्यु से पहले, कश्यप ने बुद्ध का कुंड आनंद को सौंप दिया, जो धम्म के निष्ठापूर्वक संरक्षण की निरंतरता का प्रतीक था। कश्यप, जिन्हें आम तौर पर उत्तराधिकार में सबसे योग्य माना जाता था, ने आनंद को अपने बाद सबसे योग्य चुना।

कस्सपा ने थेरागाथा में अपनी मुक्ति, कृतज्ञता और गुरु की प्रशंसा का वर्णन किया है।

कस्सपा को महा कस्सपा (महान) के नाम से जाना जाता था ताकि उन्हें समान ब्राह्मण नाम वाले अन्य भिक्षुओं से अलग किया जा सके। ऐसा कहा जाता है कि महा कस्सपा एकमात्र ऐसे भिक्षु थे जिनमें बुद्ध के बत्तीस कुलीन लक्षणों में से सात लक्षण थे। अपनी आकांक्षा के अनुरूप, बुद्ध ने महा कस्सपा को तपस्वी साधनाओं में अग्रणी भिक्षु घोषित किया। वे बुद्ध के अनुयायियों में तीसरे सबसे प्रतिष्ठित भिक्षु भी थे।

प्रथम संघ परिषद बुद्ध के वचन के संरक्षण में अत्यंत सफल रही। इस पद्धति के प्रचलन से महा कस्सपा को "धम्म का पिता" कहा जाने लगा और आवश्यकतानुसार इसका प्रयोग बाद के वर्षों में भी किया गया। इसी से बुद्ध के वचन के लिए "थेरवाद" या वरिष्ठों (अरहंतों) द्वारा पाठ शब्द का प्रयोग भी शुरू हुआ। तब से थेरवाद परंपरा के अंतर्गत छह और संघ परिषदें तथा महायान परंपरा के अंतर्गत एक संघ परिषद का आयोजन हो चुका है। द्वितीय संघ परिषद बुद्ध के परिनिर्वाण के सौ वर्ष बाद, राजा कलाशोक के संरक्षण में, वैशाली के

वलुकर्म में आयोजित की गई थी। आनंद के शिष्यों में से एक, 120 वर्षीय अरहंत सब्बक मि ने द्वितीय संघ परिषद की अध्यक्षता की और संघ के 700 सदस्य, जो सभी अरहंत थे, ने इसमें भाग लिया। द्वितीय संघ परिषद को पूरा होने में आठ माह लगे।

तीसरी संघ सभा बुद्ध के परिनिर्वाण के 235 वर्ष बाद, राजा अशोक के शासनकाल के सत्रहवें वर्ष में, उनके संरक्षण में पाटलिपुत्त के अशोकराम में आयोजित की गई थी। अरहंत मोग्गलिपुत्त तिस्सा ने तीसरी संघ सभा की अध्यक्षता की और संघ के 1,000 सदस्यों ने, जो सभी अरहंत थे, इसमें भाग लिया। तीसरी संघ सभा को पूरा होने में नौ महीने लगे।

बुद्ध के परिनिर्वाण के लगभग साढ़े चार सौ वर्ष बाद, लगभग 90 ईसा पूर्व, थेरवाद परंपरा में चौथी संघ सभा आयोजित की गई, और बुद्ध के वचनों को पहली बार श्रीलंका के अलुविहार स्थित मतले में राजा वट्टा गामिनी अभय (वालगम्भाहु) के संरक्षण में लिखित रूप में दर्ज किया गया। चौथी संघ सभा में संघ के पाँच सौ सदस्य, जो सभी अरहंत थे, ने भाग लिया। विशुद्धि मार्ग (शुद्धि मार्ग) के लेखक महान टीकाकार बुद्धघोष का कहना है कि ताड़ के पत्तों पर लिखी गई पुस्तकों की संख्या इतनी अधिक थी कि उन्हें एक के ऊपर एक रखने पर उनकी ऊँचाई छह हाथियों के बराबर हो गई।

महायान परंपरा की पहली संघ सभा, जो कि अगली संघ सभा थी, भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण के लगभग पाँच सौ वर्ष बाद कश्मीर में राजा कनिष्क (78 ईसा पूर्व - 101 ईस्वी) के संरक्षण में आयोजित की गई थी। पूज्य वसुमित्त ने इसकी अध्यक्षता की।

भगवान बुद्ध के निधन के 2415 वर्ष बाद, नवंबर 1871 में म्यांमार (बर्मा) के मांडले में थेरवाद परंपरा की पांचवीं संघ परिषद का आयोजन राजा मिंडन के संरक्षण में किया गया था। ताड़ के पत्तों पर लिखे गए ग्रंथ समय के साथ नष्ट हो जाते थे। इन ग्रंथों के संरक्षण को सुनिश्चित करने के लिए बुद्ध धम्म को संगमरमर की शिलाओं पर उत्कीर्ण किया गया।

दक्षिणाराम मठ के पूज्य जागृतभिवांस के नेतृत्व में, पूज्य नरिंदभिधजा और पूज्य सुमंगलसामी के सहयोग से, दो हजार चार सौ भिक्षुओं ने परंपरागत विधि से शास्त्रों का पाठ शुरू किया। यह सामूहिक धम्म पाठ पाँच महीने तक चला। फिर कुशल कारीगरों की सहायता से इसे सात सौ उनतीस संगमरमर की शिलाओं पर उकेरा गया। इस कार्य को पूरा करने में सात वर्ष छह महीने और चौदह दिन लगे। इन संगमरमर की शिलाओं को मंडले पहाड़ी की तलहटी में स्थित राजा मिंडन के कुथोडॉ पैगोडा के परिसर में बने पिटक पैगोडा में स्थापित किया गया। अब इसे विश्व की सबसे बड़ी पुस्तक के रूप में जाना जाता है।

छठी संघ परिषद, जिसे काबा आये के नाम से जाना जाता है, जो थेरवाद परंपरा की थी, 1954 में यांगोन (रंगून) में आयोजित की गई थी। इसका प्रायोजन माननीय प्रधानमंत्री यू नू के नेतृत्व वाली बर्मी सरकार ने किया था। उन्होंने महा पासना गुफा, 'महान गुफा' के निर्माण को अधिकृत किया, जो एक कृत्रिम गुफा थी और उस गुफा के समान थी जिसमें पहली संघ परिषद का पाठ किया गया था। छठी संघ परिषद इस मायने में अनूठी थी कि इसमें भाग लेने वाले भिक्षु आठ अलग-अलग देशों से आए थे। म्यांमार, कंबोडिया, भारत, लाओस, नेपाल, श्रीलंका, थाईलैंड और वियतनाम के ढाई हजार विद्वान थेरवाद भिक्षुओं ने इस महत्वपूर्ण अवसर को सुशोभित किया। स्वर्गीय पूज्य महासी सयादाव को आवश्यकतानुसार धम्म पर प्रश्न पूछने के लिए नियुक्त किया गया था और पूज्य भदंत विवित्तसरभिवंसा ने प्रश्नों के उत्तर वाक्पटुता से दिए। इस समय तक भारत को छोड़कर सभी भाग लेने वाले देशों की मातृभाषा में शास्त्रों का अनुवाद हो चुका था। पारंपरिक पाठ में दो वर्ष लगे। विभिन्न टीकाओं और ग्रंथों की भी जाँच की गई और जहाँ आवश्यक था, उनमें सामंजस्य स्थापित किया गया। त्रिपिटक का यह संस्करण, जिसे संपूर्ण थेरवाद बौद्ध जगत द्वारा मान्यता प्राप्त है, अब बुद्ध गौतम की मूल शिक्षाओं के रूप में स्वीकार किया जाता है।

अरहंतों के मन की धारण क्षमता वर्षों के ध्यान से विकसित हुई, बुद्ध की शिक्षा देने की शैली दोहरावपूर्ण थी, और उन्होंने शिक्षा को याद करके दूसरों तक पहुंचाने का निर्देश दिया, जिसके परिणामस्वरूप भावी पीढ़ियों के लिए एक व्यापक ग्रंथ तैयार हुआ। प्रारंभिक संगयानों में केवल अरहंतों को ही प्रवेश दिया जाता था, जिससे यह सुनिश्चित हुआ कि सत्य का अनुभव कर चुके, निर्वाण के परम आनंद को प्राप्त कर चुके लोग ही इस महत्वपूर्ण संरक्षण में भागीदार थे। बुद्ध द्वारा जांच-पड़ताल, प्रश्न पूछने और वाद-विवाद करने की स्वतंत्रता ने भी इसमें योगदान दिया, क्योंकि जब भी मतों में मतभेद होता था, शिक्षाओं का विश्लेषण किया जाता था और यह सुनिश्चित करने के लिए सुधार किया जाता था कि बुद्ध के वचन ही संरक्षित रहें। इस प्रकार, अरहंत महा कस्सपा, जो बुद्ध के तीसरे सबसे प्रमुख भिक्षु थे और जिन्हें अक्सर "धम्म के पिता" के रूप में जाना जाता है, ने भावी पीढ़ियों के लिए धम्म के संरक्षण को सुनिश्चित किया।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(262):तालपुटा

श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (262) ----->>>> अगला

अध्याय XIX.
पचास श्लोक
262. तालपुट

बुद्ध युग में राजगृह में एक अभिनेता परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उन्होंने कुल के लोगों के लिए उपयुक्त थिएटरों में निपुणता प्राप्त की, [1] और अभिनेताओं की एक मंडली के नेता के रूप में पूरे भारत में प्रसिद्ध हो गए। पाँच सौ महिलाओं की मंडली और भव्य नाटकीय प्रदर्शन के साथ वे गाँव, कस्बे और राजमहल में आयोजित उत्सवों में भाग लेते थे और बहुत प्रसिद्धि और कृपा प्राप्त करते थे। अब जब वे राजगृह [2] में अपनी सामान्य सफलता के साथ प्रदर्शन कर रहे थे, तो उनकी बढ़ती अंतर्दृष्टि ने उन्हें भगवान (बुद्ध) से मिलने के लिए प्रेरित किया। और एक तरफ बैठकर उन्होंने कहा: 'मैंने सुना है, आदरणीय, शिक्षकों और उनके शिक्षकों द्वारा अभिनेताओं के बारे में बात करते हुए, कि जो अभिनेता मंच पर सत्य का अनुकरण करके अपने दर्शकों का मनोरंजन और आनंद करता है, वह मृत्यु के बाद हँसी के देवताओं के बीच पुनर्जन्म लेगा। इस विषय पर भगवान (बुद्ध) क्या कहते हैं?' भगवान ने तीन बार प्रश्न को अस्वीकार करते हुए कहा: 'मुझसे यह मत पूछो, निर्देशक।' लेकिन जब चौथी बार पूछा गया, तो उन्होंने कहा: 'निर्देशक महोदय, जो लोग दूसरों में कामुक, मानवद्वेषी या मानसिक रूप से भ्रमित अवस्थाएँ उत्पन्न करते हैं और उन्हें उत्साह खोने का कारण बनते हैं, वे मृत्यु के बाद नरक में पुनर्जन्म लेंगे। लेकिन यदि वह वैसा ही सोचता है जैसा आपने सुना है, तो उसकी राय गलत है। और इस प्रकार गलत राय रखने वाले का भाग्य या तो नरक में पुनर्जन्म लेना है, या पशु के रूप में।' इस पर तालपुत रो पड़े। 'क्या मैंने आपसे, निर्देशक महोदय, यह नहीं कहा था कि " मुझे इस विषय में नहीं कहा था?"' 'हे आदरणीय, मैं इस कारण नहीं रो रहा हूँ कि भगवान ने भविष्य की स्थिति के बारे में ऐसा कहा है, बल्कि इसलिए रो रहा हूँ क्योंकि पुराने अभिनेताओं ने मुझे धोखा दिया है, यह कहकर कि सार्वजनिक प्रदर्शन करने वाला अभिनेता सुखी जीवन में पुनर्जन्म लेता है।'

तब तलपुता ने भगवान (बुद्ध) की शिक्षा सुनी और श्रद्धापूर्वक भिक्षु दीक्षा ली, तथा उचित अध्ययन के बाद अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त किया। इसके बाद, उन्होंने अपने हृदय को गहन समझ के लिए संयमित और संयमित करने के विभिन्न तरीकों का विस्तृत वर्णन करते हुए ये श्लोक कहे:

मैं।

[1091] कदा नु'हाṃ पब्बताकंदरसु॥
एकाकियो अद्दुतियो विहस्सान्॥
अनिच्चतो सब्बाभावाउ विपश्याṃ॥
ताṃ मे इदां तां नु कदा भविष्यति.॥ ॥

[1092] कदा नु'हाṃ भिन्नापंडधारो1 मुनि॥

कसाववत्थो अममो निरासो॥
रागं च दोसां च तथेव मोहान्॥
हन्त्वा सुखि पावनगतो विहस्सा:॥ ॥

[1093] कदा अनिच्चा वधरोगनि!अm̥॥
कायऽ इमाऽ मैक्कुजारायुपद्दुताऽ॥
विपश्यमानो विताभ्यो विहस्सान्॥
एको वने तां नु कदा भविष्यति.॥ ॥

[1094] कदा नु'हाm̥ भयजानानीm̥ दुक्खावहm̥॥
तन्हालता बहुविधानुवत्तनिं॥
पन्नमयं तिखिनमसीं गहेत्वा॥
चेत्वा वसे तम्पि कड़ा भविष्यसति॥ ॥

[1095] कदा नु पन्नमयमुग्गतेजाm̥॥
सत्थौ इसिनां सहसदियित्वा॥
मराऽ ससेनऽ सहसा भंजिस्साऽ॥
सिहासने तं नु कदा भविष्यति॥ ॥

[1096] कदा नु'हाm̥ सब्भिसमागमसु॥
दिट्ठो भवे धम्मगारुहि तदिहि॥
यथावदस्सीहि जितिन्द्रियेहि॥
पधानियो तं नु कदा भविष्यति.॥ ॥

[1097] कदा नू मां तंदीखुदा पिपासा॥
वातातपा कितासिरिसपा वा॥
नबधायिस्सन्ति न तां गिरिब्बाजे॥
अत्थत्थियौ तं नु कदा भविस्सति॥ ॥

[1098] कड़ा [98] नू खो याअ विदिताm̥ महेसिना॥
चत्तारि सच्चनि सुदुद्दसानि॥
समाहितत्तो सतीमा अगाच्छं,॥
पनन्या तं तं नु कदा भविष्यति.॥ ॥

[1099] कादा नु रूपे अमिते च साड्ढे॥
गंधे रसे फुसिताब्बे च धम्मे॥
अदित्ततोहाऽ समथेहि युत्तो॥
पनन्या दक्खं तदिदां कदा मे.॥ ॥

[1100] कदा नु'हाm̥ दुब्बाकेनेना वुट्टो॥
ततो निमित्तौ विमानो न हेस्सा॥
अथो पसत्थोऽपि ततो निमित्तौ॥
तुमो न हेस्सां तदिदां कदा मी.॥ ॥

[1101] कदा नु काथे च तिने लाता च॥
खंडे इमेहाm̥ अमिते च धम्मे॥
अज्जत्तिकानेव च बहिराणि च॥
समं तुलेययं तदिदां कदा मे.॥ ॥

[1102] कदा नु माṃ पावुसाकालमेघो॥
नवेना टोयेना सैकिवरां वेने॥
इसिप्पयतमहि पथे वजन्तं॥
ओवस्सते तं नु कदा भविष्यति.॥ ॥

[1103] कादा मयूरसा सिखंडिनो वेन॥
दिजस्सा सुत्वा गिरिगब्भारे रुतं॥
पच्चुथहित्वा अमातस्सा पत्तिया॥
सङ्िचन्तिये तां नु कदा भविष्यसति ॥॥ ॥

[1104] कदा नु गोंगाṃ यमुनाअ सारस्सतिṃ॥
पातालखितत्तं वववामुखं चा॥
असज्जमानो पतरेयमिद्धिया॥
विभीसनं तं नु कदा भविस्सति॥ ॥

[1105] कदा नु नागो'वा असंगचारी॥
पदालये कामगुनेसु चन्दां॥
निब्बज्जयौ सब्बासुभाṃ निमित्तṃ॥
झणे युतो तं नु कदा भविस्सति॥ ॥

[1106] कड़ा [99] इनाṭṭओव ददिद्दको निधिṃ॥
अराधयित्वा धनिकेहि पण्डितो॥
तुऽथो भविस्सौ अधिगम्मा सासणो॥
महेसिनो तं नु कदा भविस्सति.॥ ॥

[1091] मैं कब पर्वतीय गुफाओं में रहने आऊँगा,
कभी यहाँ, कभी वहाँ, [इच्छा से] अविभाजित,
और उस दृष्टि से जो प्राप्त हुई है, उस सब की
अनित्यता में जो अस्तित्व में आया - हाँ, मेरे लिए यही, यही कब होगा? [3]

[1092] हे मैं, जो पैचवर्क वाला वस्त्र पहनती हूँ, कब
पीले वस्त्रों वाली सच्ची संत बनूँगी,
बिना इस विचार के कि 'मेरा' क्या है;
और सभी लालसाओं से शुद्ध होकर,
कामवासना और घृणा से, हाँ, और भ्रमों से भी,
इस प्रकार जंगली जंगलों में जाकर, आनंद में रहूँगी?

[1093] हे मैं, जो देखता और जानता हूँ कि
मेरा यह शरीर, [4] मृत्यु और रोग का घोंसला,
उम्र और मृत्यु से पीड़ित,
सब कुछ क्षणभंगुर है, कब
जंगल में अकेले भय से मुक्त रहूँगा ?

[371] [1094] हे, मैं कब अंतर्दृष्टि की तेज तलवार से
इसे काट डालूँगा, इच्छा की इस लता को, [5] अपनी सभी शाखाओं के साथ दूर और मजबूत रूप से लिपटते हुए,
अनेक भयों को जन्म देने वाली,

दर्द और दुख को सहने वाली -
हाँ, यहाँ तक कि यह भी! यह कब होगा?

[1095] हे, मुझे कब अंतर्दृष्टि की तलवार खींचने की शक्ति मिलेगी
, संतों की अग्निमय चमक,
और
विजेता की मुद्रा में बैठे हुए मारा (मृत्युदेव/शैतान) और उसकी सेना को शीघ्रता से चकनाचूर कर दूँगी - [6] हाँ, ये बातें कब घटित होंगी?

[1096] हे, मैं कब पवित्र संगति में
धम्म का
आदर करने वाले, नेक परिश्रम में लगे रहने वाले
, सार को
समझने वाले और इंद्रियों पर विजय प्राप्त करने वाले लोगों के बीच देखा
जा सकूँ?

[1097] हे कब सुस्ती, भूख, प्यास
मुझे और परेशान नहीं करेंगी, न ही हवा, गर्मी,
कीड़े-मकोड़े और रेंगने वाले जीव उसे नुकसान पहुंचाएंगे।
जिसने चट्टान की दुर्गमता पर [7] अपनी उच्च आवश्यकताओं का ध्यान रखा -
हाँ, यह कब होगा?

[1098] हे, मैं कब शांत विचार, एकाग्रचित्त
और अंतर्दृष्टि की स्पष्टता के साथ उस चीज़ को स्पर्श कर पाऊँगा
जिसे महान द्रष्टा ने समझा था -
वे चार आर्य सत्य,
जिन्हें देखना अत्यंत कठिन है -
हाँ, यह भी, यह कब होगा?

[372] [1099] हे, मैं कब शांति के रास्तों से बंधा हुआ,
गहरी दृष्टि से इंद्रियों की
असंख्य चीजों को देख पाऊंगा - दृश्य और ध्वनियाँ,
गंध और स्वाद और स्पर्शनीय वस्तुएँ,
और मन की सभी आंतरिक वस्तुएँ
जैसे जलती हुई और धधकती हुई वस्तुएँ - [8] हाँ, यह मेरे लिए कब आएगा?

[1100] हे मैं कब [अविचलित] रहूँगा -
अपमानजनक शब्दों के कारण निराश नहीं,
और न ही जब मेरी प्रशंसा फिर से गाई जाए,
तो आत्मसंतुष्टि से भर जाऊँगा - [9] यह मेरे लिए कब आएगा?

[1101] हे कब, जैसे इतनी सारी जलाऊ लकड़ी, जंगली घास, भूसा,
मैं अपने जीवन के कारकों को महत्व दूँ, [10] उन सभी अनगिनत वस्तुओं के साथ, जिन्हें इंद्रियों द्वारा जाना जाता है, [11] आंतरिक या बाहरी,
उन सभी को एक समान मानते हुए -
[खोखला, क्षणभंगुर] [12] - हाँ, यह मेरे लिए, () कब?

[1102] हे कब [मेरे सिर के ऊपर]
बारिश का बैंगनी तूफ़ानी बादल छाएगा,

और नए जलप्रपात से जंगलों में मेरे कपड़े भिगो देगा,
जिस रास्ते पर मैं चलता हूँ,
उस पथ पर जिस पर द्रष्टा पहले चल चुके हैं -
हाँ, यह कब होगा?

[1103]
हे, कब मैं, जंगल में से आती हुई , मुकुटधारी, द्विज [13] मोर की पुकार सुनकर, [जब मैं पहाड़ी की गोद में विश्राम कर रहा हूँ]
उठूँगा और अमृत को पाने के लिए विचार और इच्छाशक्ति का आह्वान करूँगा
?
हाँ, यह कब होगा?

[1104] हे, मैं कब आध्यात्मिक शक्तियों से जागृत होकर
गंगा, यमुना पार करूँगी, [14] सरस्वती, बिना डूबे, हाँ, नरक से निकले भयानक
सागर के मुख पर तैरूँगी -
हाँ, यह कब होगा?

[1105] हे कब, युद्ध में आक्रमण करते हाथी की तरह,
मैं इंद्रिय सुखों की इच्छा को तोड़कर,
और तल्लीन ध्यान में लीन होकर,
बाहरी सुंदरता के सभी चिह्नों से दूर हो जाऊँगा?
हाँ, ये बातें कब घटित होंगी?

[1106] हे, कब, जैसे कोई कंगाल गरीब,
छुपे हुए खजाने को पाकर
आनंदित हो उठता है,
कि मैंने
सर्वशक्तिमान भगवान (बुद्ध) के शासन की शरण पा ली है?
हाँ, यह कब होगा?

II. [15]

[1107] बहुनि वस्सानि तयामहि याचितो॥
अग्रवसेन अलं नु ते इदां॥
तां दानी मण पब्बजितां समानं॥
किंकरणा चित्त तुवं न युञ्जसि.॥ ॥

[1108] ननु अहं चित्त तयामहि याचितो॥
गिरिब्बाजे चित्रचदा विहंगमा॥
महिन्दघोसत्थनताभिगाज्जिनो॥
ते तां रामिस्संति वनमहि झायिनं॥ ॥

[1109] कुलमहि मित्ते च पिये च नाताके॥
ख़िन्द्रतिं कामगुणं च लोके॥
सब्बाऽ पहाया इमामज्झापगातो॥
अथोऽपि त्वाऽ चित्त न मयः तुस्सासी॥ ॥

[1110] ममेवा एताm̩ ना ही त्वाm̩ परेसाm̩॥

सन्नाहकाले परिदेवितेन किṃ॥
सब्बाṃ इदां कैलमिति पेक्खमानो॥
अभिनिखमीṃ अमातापडाṃ जिगिसाṃ॥ ॥

[1111] सुयुत्तवादी द्विपादनमुत्तमो॥
महाभिषक्को नारदम्मसारथि॥
चित्तṃ कैलाṃ मक्कसंसनिभाṃ इति॥
अवितरागेण सुदुनिवारयं॥ ॥

[1112] काम ही चित्र मधुरा मनोरमा॥
अविद्दसु यत्थ सीता पुथुज्जना॥
ते दुक्खमिच्छन्ति पुनब्भावेसिनो॥
चित्तेन निता निराये निराकाता॥ ॥

[1113] मयूरकोन्चाभिरुतमहि कणेन॥
दीपिहि व्याग्घेहि पुरक्खतो वसन्॥
काए अपेक्खं जहां मा विराधय॥
इतिसु माṃ चित्त शुद्ध नियुञ्जसि.॥ ॥

[1114] भावेहि [100] झानानि च इनिद्रियानि॥
बलानि बोज्झाङ्गसमाधिभवना॥
तिस्सो च विज्जा फुसा बुद्धसासने॥
इतिसु माṃ चित्त शुद्ध नियुञ्जसि.॥ ॥

[1115] भावेहि मग्गाṃ अमतस्सा पत्तिया॥
निय्यनिकं सब्बदुक्खक्खयोगधौ॥
अठहाङगिकाṃ सब्बाकिलेसासोधनṃ॥
इतिसु माṃ चित्त शुद्ध नियुञ्जसि.॥ ॥

[1116] दुक्खन्ति खंडे पतिपासा योनिसो॥
यतो च दुक्खं समुदेति तां जहा॥
इधेवा दुक्खस्सा करोहि अन्ताṃ॥
इतिसु माṃ चित्त शुद्ध नियुञ्जसि.॥ ॥

[1117] अनिक्काṃ दुक्खन्ति विपश्या योनिसो॥
सुन्नं अनात्तति अघां वधन्ति च॥
मनोविकारे उपरुन्ध सीतासो॥
इतिसु माṃ चित्त शुद्ध नियुञ्जसि.॥ ॥

[1118] मुण्डो विरुपो अभिसापमागतो॥
कपालहत्थोवा कुलेसु भिक्खसु॥
युञ्जस्सु सत्थुवाकेन महेसिनो॥
इतिसु माṃ चित्त शुद्ध नियुञ्जसि.॥ ॥

[1119] सुसावुत्तो विशिकंतारे कैराṃ॥
कुलेसु कामेसु असंगमनासो॥
कैंडो यथा दोसिनपुन्नमसिया॥
इतिसु माṃ चित्त शुद्ध नियुञ्जसि.॥ ॥

[1120] अरन्निको होहि च पिनादापटिको॥
सोसानिको होहि कै पांसुकुलिको॥
नेसज्जिको होहि सदा धुते रतो॥
इतिसु माṃ चित्त शुद्ध नियुञ्जसि.॥ ॥

[1121] रोपेत्व रुक्खानि यथा फलेसी॥
मुले तरुऽ चेत्तु तमेव इच्छासि॥
तथुपमं चित्तमिदं करोसि॥
याṃ माṃ अनिच्चमहि काले नियुञ्जसि.॥ ॥

[1122] अरूपा दुरंगमा एकाचारी॥
ना ते करिसाअ वकानाइ इदानिहाṃ॥
दुक्खा हि कामा कटुका महभभाय॥
निब्बानामेवाभिमानो कैरिसां॥ ॥

[1123] नाहऽ अलक्ख्य अहिरिकट्टया3 वा॥
न चित्तहेतु न च दूरकांताना॥
अजीवहेतु च अहं न निक्खमिṃ॥
कातो च ते चित्त पतिसावो मया॥ ॥

[1124] अप्पिच्चता सप्पुरिसेहि वनिता॥
मक्खप्पाहनं वीपसामो दु:खस्सा॥
इतिस्सु [101] माṃ चित्त तदा नियुञ्जसि॥
इदाकि त्वं गच्छसि पुब्बसिणं॥ ॥

[1125] तन्हा अविज्जा च पियाप्पियानचा॥
सुभानि रूपाणि सुख च वेदना॥
मनपिया कामगुण च वन्ता॥
वन्ते अहं अवामितुऽ न उस्सहे॥ ॥

[1126] सब्बत्था ते चित्त वाको काटां माया॥
बहुसु जातिसु न मेसि कोपिटो॥
अज्झत्तसम्भवो कतन्नुताय ते॥
दुक्खे सिराँ संसारिता ताया कते.॥ ॥

[1127] त्वन्नैव नो चित्त करोसि ब्राह्मणो॥
त्वं खत्तियो राजदसि करोसि॥
वेस्सा च सुदा च भवामा एकदा॥
देवत्तनं वापि तवेव वाहसा॥ ॥

[1128] तवेव हेतु असुर भावमसे॥
त्वंमूलकान् नेरायिका भावमसे॥
अथो तिरच्चनगतापि एकदा॥
पेत्तातनं वापि तवेव वाहसा॥ ॥

[1129] नानू दुब्भिस्सासि माṃ पुनप्पुनाṃ॥
मुहुं मुहुं चारणिकैव दासयं॥

उम्मत्तकेनेव मया पलोभासि॥
किंचापि ते चित्त विराधितं मया॥ ॥

[1130] इदाṃ शुद्ध चित्तामाकारी कारिकाṃ॥
येनिच्चकां यथाकामां यथासुखं॥
तदज्जहाṃ निग-अहेसामी योनिसो॥
हत्थिप्पभिन्नं विया अंकुसग्गहो॥ ॥

[1131] सत्था च मे लोकमिमाऽ अधिष्ठाहि॥
अनिच्चतो अधुवतो असरतो,॥
पाखंडा माṃ चित्त जिनस्सा ससाने॥
तारेहि ओघा महता1 सुदत्तरा॥ ॥

[1132] न ते इदां चित्त यथा पुराणकौ॥
नहाṃ अलं तुयहवसे निवत्तितुṃ,॥
महेसिनो पब्बाजितोमहि ससाणे॥
न मदीसा होन्ति विनाशधारिनो॥ ॥

[1133] नागा [102] समुद्दा सरिता वसुंधरा॥
दिसा कैटसो विदिसा अधो दिवा,॥
सब्बे अनिच्च तिभव उपद्दुता॥
कुहिṃ गतो चित्त सुखो रामिस्ससि.॥ ॥

[1134] धितिप्पराṃ किṃ मामा चित्त कहिसी॥
न ते अलं चित्त वसानुवत्तको,॥
न जातु भस्तां उभतोमुखं छुपे॥
धीरत्थु पुराण नवा सोत्संदनीṃ॥ ॥

[1135] वराहानेय्य विगाहसेविते॥
पब्भराकुते पकातेव सुन्दरे,॥
नवम्बुना पवुसासित्तकाणे॥
ताहिं गुहगेहागातो रामिसासि.॥ ॥

[1136] सुनिलगिवा सुसिखा सुपेखुना॥
सुचित्तपट्टच्चदाना विहंगमा,॥
सुवान्जुघोसत्थनिताभिगाज्जिनो॥
ते तां रामिस्संति वनमहि झायिनं॥ ॥

[1137] वुṭṭहमहि देवे कैटुरांगुले तिने॥
संपुप्फाइटे मेघनिभामहि काने,॥
नागनतारे वितापिसामो सइसाṃ॥
तं मे मुदु हेहिती तुलासन्निभां॥ ॥

[1138] तथा तु कस्सामि यथापि इस्सरो॥
यऽ लब्भाति तेनाऽपि होतु मे अळाऽ,॥
न ताहं कस्सामि8 यथा अतन्दितो॥
बिसारभस्तौव यथा सुमाद्दितौ ॥॥ ॥

[1139] तथा तु कस्सामि यथापि इस्सरो॥
यऽ लब्भाति तेनाऽपि होतु मे अळाऽ,॥
विरियेना तं मयः वासनायिस्सं॥
गजाउ'व मत्ताṃ कुसलांकुसाग्गाहो॥ ॥

[1140] तया सुदन्तेन अवतिथितेन1 हि॥
हयेना योगगाकारियोएव उज्जुना,॥
पाहोमी मग्गाṃ पाइपज्जितुṃ शिवाṃ॥
चित्तानुरक्खिहि सदा निसेवितां॥ ॥

[1141] अरम्माणे [103] ताṃ बालासा निबन्धिसाṃ॥
नागौव थंभमहि दधाय रज्जुय,॥
तं मे सुगुत्तं सत्यं सुभावितं॥
अनिसिताऽ सब्बाभावेसु हेहिसि.॥ ॥

[1142] पनन्या चेत्वा विपथानुसारिनाना॥
योगेना निग्ग-अयहा पथे निवेसिया,॥
दिसुवा समुदयौ विभावाऽ च संभवाऽ॥
दयादाको हेहिसि अग्गवादिनो॥ ॥

[1143] कैटुबिपल्लसवसाअ अधिशिताṃ॥
गमंडलाव परिनेसी चित्त माṃ,॥
नूना संनोजनबंधनच्चिदौ॥
संसेवासे करुणिकै महामुनिः॥ ॥

[1144] मिगो यथा सेरी सुचित्तकाणे॥
रम्ममं गिरिṃ पवुसाअभमालिनीṃ,॥
अनाकुले तत्थ नागे रामिस्सं॥
असंस्यायं चित्त परभविस्सासि.॥ ॥

[1145] ये तुयाहा चंदेना वसेना वत्तिनो॥
नारा च नारी च अनुभूति यं सुखं,॥
अविद्दसु मारवसानुवत्तिनो॥
भावभनन्दि तव चित्त सवाकति.॥ ॥

[1107] हे मेरे हृदय, तुमने अनेक वर्षों से मुझे प्रेरित किया था,
‘अब बस करो, इस गृहस्थ जीवन से!’
देखो! मैंने संसार त्याग दिया है (सन्यास के लिए)। हे हृदय, तुम अपने कार्य के प्रति समर्पण क्यों नहीं रखते?

[374] [1108] हे मेरे हृदय, क्या तुमने मुझे प्रेरित नहीं किया:
'चट्टान की दुर्ग पर,
वायु के चमकीले पंखों वाले यात्री,
महान इंद्र के गर्जन का अपनी चीखों से स्वागत करते हुए,
जंगल में चिंतन करने वाले को आनंद प्रदान करो। [16]

[1109] सामाजिक दायरे में, दोस्तों, प्रियजनों और रिश्तेदारों के बीच,
खेल, कला, इंद्रियों के सुखों को

मैंने त्याग दिया है, ताकि मैं यहाँ आ सकूँ।
तो फिर, हे हृदय, क्या तुम मुझसे प्रसन्न नहीं हो?

[1110] मैंने ऐसा केवल अपने लिए किया,
किसी और के लिए नहीं [यह बलिदान मैंने किया]।
तो फिर हथियार उठाने का समय आने पर क्यों विलाप करें?
यह जीवन तो पूरी तरह से कांप रहा है! - ऐसा मैंने देखा। [17] और मैंने संसार का त्याग कर अमृतमय मार्ग चुना।

[1111] क्या उसने नहीं कहा - जो सब कुछ अच्छी तरह से कहता है,
प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ, [18] महान चिकित्सक,
मनुष्यों के पुत्रों का वशीकरण और मार्गदर्शन करने वाला -
हृदय नाचते हुए बंदर की तरह अस्थिर है, [19] इसलिए उस हृदय को,
अनवरत भावनाओं से, नियंत्रित रखना मुश्किल है।

[1112] इंद्रियों की इच्छाएँ विविध, मधुर और मोहक होती हैं,
जिनमें अज्ञानी बहुसंख्यक
उलझे रहते हैं।
जो लोग फिर से जीना चाहते हैं, वे तो केवल दुख की कामना करते हैं,
अपने हृदय द्वारा नरक में नष्ट होने के लिए प्रेरित होते हैं।

[375] [1113] 'वहाँ जंगल में
मोर और बगुले की चीखों से गूंजते हुए तुम रहोगे,
तेंदुओं और बाघों के मुखिया बनकर। [20] और अपने शरीर को चिंताओं से मुक्त करो;
अपना समय, अपना लक्ष्य मत चूकना!' [21] हे मेरे हृदय, तुम मुझे प्रेरित करते थे।

[1114] 'उत्पन्न करो, विकसित करो [22] तुम परमानंद (समाधि/समाधि),
पंच प्रकार की नैतिक शक्तियाँ और सामर्थ्य,
ज्ञान के सात पंख
और एकाग्रता की चार अवस्थाओं को; [23]
बुद्ध के नियम के भीतर त्रिविध ज्ञान को स्पर्श करो ': -
हे मेरे हृदय, तुम मुझे प्रेरित करते हो।

[1115] 'अपने जीवन में वह मार्ग बनाओ, विकसित करो
जिससे तुम अमृत पा सको -
प्रगति और निकास का मार्ग, जो
सभी दुखों के अंत पर आधारित है,
आठ गुना, सभी अशुद्धियों से शुद्ध करता है': -
हे मेरे हृदय, तुम मुझे ऐसा ही प्रेरित करते हो।

[1116] 'इस मन और शरीर की तुम गहन जांच करो
और इसे "दुःख" मानो; और दुःख के सभी स्रोतों को भी।

क्या तुम इसे अपने से दूर रखते हो;
हाँ, यहीं और अभी अपने दुखों का अंत करो! -
इसलिए, मेरे हृदय, तुम मुझे प्रेरित करते हो।

[1117] 'और समझो कि क्षणभंगुरता दुख है,
खाली है, आत्महीन है, अभिशाप और बुराई है;

अपने मन की विवेचनात्मक भटकन को रोको': -
हे मेरे हृदय, तुम मुझे प्रेरित करते हो।

अपोस्ट्रोफ़ाइज़्ड। अर्थ है छोटा करना। यहाँ अपने पूर्व यश और धन के बिना अस्तित्व में रहना। "वह गृहस्थ के सुखों से वंचित रह गया है..." आईटीआई 91

[376] [1118] 'मुंडा सिर, बदसूरत, और अभिमंत्रित [24] जब भिक्षा मांगने आते हैं, हाथ में खोपड़ी जैसे कटोरे के साथ [25]
नागरिकों के बीच,
क्या अब आप स्वयं को
पूरी तरह से भगवान (बुद्ध) के वचन, द्रष्टा के वचन को पूरा करने के लिए समर्पित करते हैं -
इसलिए आप, मेरे हृदय, मुझे प्रेरित करते हैं।

[1119] 'गलियों में सुशासित होकर चलो, अपने
मन को उन लोगों की इंद्रिय-इच्छाओं से मुक्त रखो
जो वहाँ रहते हैं।
बादलों से रहित आकाश में दो सप्ताह पुराने चाँद की तरह बनो:' [26] -
हे मेरे हृदय, तुम मुझे ऐसा ही प्रेरित करते हो।

[1120] 'जो जंगल में रहता है और भिक्षा से जीवन यापन करता है,
जो मृत्यु के मैदान (कब्रिस्तान) में विचरण करता है, चितकबरा वस्त्र पहनता है,
लेटने से परहेज करता है, [27] वह सदा सच्चे तपस्वी आनंद को पाता है': -
तो तुम चाहते हो, मेरे हृदय को मुझे प्रेरित करने के लिए।

[1121] 'जैसे कोई वृक्ष बोकर फल की तलाश करता है,
क्या अब तुम फल न पाकर
अपने वृक्ष को जड़ से काट देना चाहते हो?' - हे
मेरे हृदय, तुमने यही दृष्टांत रचा था,
जब तू, जो अस्थिर और क्षणभंगुर है,
ने मुझे प्रेरित किया।

[1122] हे अदृश्य सत्ता, जो दूर से सब जानती है, [28] एक पंक्ति में खड़े होकर,
मैं अब तेरे वचन का पालन नहीं करूँगा। क्योंकि तेरी इंद्रियजन्य इच्छाएँ
केवल दुःख, कड़वे फल और भय की ओर ले जाती हैं।
अब से
मैं केवल निर्वाण की शांति की ओर ही चलूँगा।

[377] [1123] मैंने दुर्भाग्यवश संसार नहीं छोड़ा (भिक्षुत्व के लिए),
न ही बेशर्म मजाक के रूप में, न ही सनक से,
न ही मुझे अपमानित करके निर्वासित किया गया,
न ही जीविका की तलाश में,
जब मैंने अपना हृदय तुम्हें सौंप दिया।

[1124] 'अच्छे लोग छोटी ज़रूरतों और भरपूर संतोष की प्रशंसा करते हैं,
हाँ, और पाखंड का त्याग करने
और सभी पीड़ाओं को दूर करने की भी प्रशंसा करते हैं': -
हे मेरे हृदय, तुमने तब मुझे यही सिखाया था।
अब तुम अपने पुराने प्रेमों की ओर लौट जाओ।

[1125] लालसा और अज्ञान और प्रेम और घृणा,
और सौंदर्य की वस्तुएँ, सभी सुखद रोमांच
और इंद्रिय सुखों का आकर्षण: - मैंने इन सबको त्याग दिया है,
और मैं फिर कभी इन चीजों की ओर लौटने का प्रयास नहीं कर सकता।

[1126] हे मेरे हृदय, मेरा जीवन जहाँ कहीं भी गिरा हो,
मैंने तेरे वचन का पालन किया है।
अनेक जन्मों में तू मुझसे नाराज़ नहीं हुआ।
और यही तेरी कृतज्ञता है: -
यह सांसारिक शरीर,
तेरे द्वारा दिए गए सभी कष्टों के साथ,
मेरे जीवन के लंबे-लंबे युगों तक क्षीण रहा।

[378] [1127] हे हृदय, तुम ही हमें वह बनाते हो जो हम हैं।
तुम बनाते हो, हम बन जाते हैं। आज ब्राह्मण (पुजारी),
फिर हम कुलीन, हाँ, राजा, ऋषि, [29] एक दिन कुलीन, और अगले दिन सेवक,
या यहाँ तक कि देवता भी - और यह सब
केवल तुम्हारी ही कृपा से;

[1128] केवल आप ही के कारण हम असुर बने हैं,
आपके कार्य से ही हम नरकीय विनाश से गुज़रे हैं;
फिर, एक दिन, जानवरों के लोक में पुनर्जन्म लेंगे,
या पेटों में, केवल आपकी ही कृपा से।

[1129]
नहीं, अब तुम मुझे पहले की तरह बार-बार धोखा नहीं दोगे ,
जैसे कोई धूर्त अपना छोटा सा खेल दिखाता है; [30] तुम मेरे साथ छल-कपट भरे खेल खेलते हो,
जैसे किसी पागल के साथ। [31] हे मेरे हृदय, मुझे बताओ, मेरी गलती क्या है?

[1130] कभी यह हृदय मैदान में भटकता था, एक घुमक्कड़,
जहाँ इच्छा, सनक या आनंद ले जाता था।
आज मैं उस हृदय को पूरी तरह से नियंत्रण में रखूँगा,
जैसे प्रशिक्षक का हुक जंगली हाथी को नियंत्रित करता है। [32]

[1131] भगवान (बुद्ध) ने मुझसे आग्रह किया [33] : - यह संसार
क्षणभंगुर, अस्थायी और आत्माहीन है।
अब, हिम्मत रखो, विजेता के शासन में आगे बढ़ो,
और मुझे भयानक बाढ़ से पार ले जाओ। [34]

[1132] हे हृदय, तेरे लिए अब पहले जैसी स्थिति नहीं है। [35] यह पर्याप्त नहीं होगा कि मैं तेरे वश में होकर
फिर से जीवन व्यतीत करने के लिए लौट जाऊं। [379] मैं महान भगवान (बुद्ध) के शासन के अधीन (भिक्षुत्व में) चला गया हूँ।
मुझ जैसे मनुष्य अब किसी भी दंड को सहन नहीं कर सकते।

[1133] पहाड़ और समुद्र, नदियाँ, स्वयं पृथ्वी,
चारों दिशाएँ, बीच के बिंदु, निम्नतम
बिंदु, हाँ, और ऊपर के सभी आकाश [36] : -
अस्तित्व के तीन तल [37] प्रत्येक क्षणभंगुर
और वे सभी वीरान - तो

फिर, मेरे हृदय, तुम कहाँ आराम और विश्राम पा सकते हो?

[1134] हे हृदय, चूंकि मेरा लक्ष्य इतना दृढ़, इतना निश्चित है, [38] तू मुझे मोड़ने के लिए क्या करेगा?
अब मेरा, मेरे हृदय का, तेरा अनुसरण करना नहीं।
कोई भी समझदार व्यक्ति उस थैली को नहीं छुएगा
जो दोनों सिरों से खुलती हो। घिनौना! फिर,
उस भरे हुए शरीर पर जो नौ छिद्रों से बह रहा है। [39]

[1135] हे [तुम्हें जीवन से प्रेम होगा], चाहे वह
गुफादार चट्टानों की चोटी पर हो, जहाँ सूअर और हिरण चरते हैं,
या सुंदर खुले मैदान में, या नई बारिश से ताज़ा हुए जंगल की गहराई में - गुफा-कुटिया से दूर तुम्हारे लिए आनंद
वहीं है । [40]

[1136] सुंदर पंखों वाले, सुंदर कलगी वाले वायु के यात्री,
गहरे नीले गले और अनेक रंगों वाले पंखों के साथ, मधुर, अनेक प्रकार की आवाज़ों से
गरजते हुए बादल का अभिवादन करते हैं
; वे ही
आपको वहाँ ध्यान करते समय आनंद देंगे।

[380] [1137] और जब देवता चार इंच घास पर वर्षा करते हैं, [41] और कलियों वाले जंगलों की बादल जैसी चोटियों पर,
पहाड़ के हृदय में मैं
एक कटी हुई शाखा की तरह अचल बैठा रहूँगा, [42] और मेरी पथरीली चारपाई पर रुई की तरह कोमल
प्रतीत होऊँगा।

[1138] मैं ऐसा ही करूँगा, जैसे किसी स्वामी को करना चाहिए।
जो कुछ भी मिले, मेरे लिए पर्याप्त हो।
और जैसे कोई अथक चमड़ा तैयार करता है, [43] मैं तुम्हें बिल्ली की खाल की तरह कोमल बना दूँगा।

[1139] मैं ऐसा ही करूँगा जैसे स्वामी को करना चाहिए।
जो कुछ भी मिले, मेरे लिए पर्याप्त हो।
मैं तुम्हें अपनी शक्ति और इच्छाशक्ति से नेतृत्व करूँगा, [44] जैसे एक कुशल महावत द्वारा एक भयंकर हाथी।

[1140] जब तुम अंततः अच्छी तरह से वश में हो जाओगे और दृढ़ हो जाओगे,
जैसे प्रशिक्षक घोड़े को बुराई से मुक्त कर देता है,
तब मैं सुखद भाग्य के मार्ग पर चल सकता हूँ,
उन लोगों द्वारा चाहा जाता हूँ जिनके दिल अच्छी तरह से सुरक्षित हैं।

[1141] और जिस विषय पर तुम्हें चिंतन करना चाहिए, उस पर
मैं तुम्हें प्रशिक्षण की शक्ति से बांध दूँगा,
जैसे हाथी को खंभे से मजबूत रस्सी से बांधा जाता है।
इसलिए जब मैं तुम्हारी अच्छी तरह से रक्षा करूँगा और तुम्हें
स्पष्ट विचार से प्रशिक्षित करूँगा, तो तुम
भविष्य के जीवन के सभी रूपों से मुक्त हो जाओगे।

[1142] जब अंतर्दृष्टि की सहायता से आपने
अपने भटके हुए मार्ग को रोका, अध्ययन द्वारा संयमित किया, [381] उसे सत्य के मार्ग पर मोड़ा, [45] तो आप देख सकते हैं कि सभी
चीजें कैसे होती हैं: -
अस्तित्व में आती हैं और फिर विलीन हो जाती हैं -

तब आप उसके [बच्चे और] उत्तराधिकारी होंगे:
सर्वोच्च चीजों के ज्ञाता और शिक्षक।

[1143] चौगुनी मतिभ्रम पर, [46] जैसे गाँव के बदमाश ने मुझे भगाया, हे मेरे हृदय। [47] अब आओ और उसका अनुसरण करो, दयालु,
महान द्रष्टा जिसके लिए सभी बंधन और जंजीरें टूट गई हैं।

[1144] जैसे जंगली जीव
सुंदर फूलों से भरे जंगल में विचरण करते हैं, वैसे ही तुम भी
सुंदर बादलों से घिरी चोटी पर चढ़ गए हो।
वहाँ पहाड़ पर, जहाँ कोई भीड़ नहीं आ सकती,
तुम्हें आनंद मिलेगा, हे हृदय, क्योंकि कभी संदेह मत करना
, तुम निश्चित रूप से परलोक में पहुँच जाओगे। [48]

[1145] जो आपकी इच्छा के अधीन रहते हैं,
चाहे पुरुष हों या स्त्री, वे आपके दिए हुए का आनंद लेते हैं,
बार-बार लौटकर आने में प्रसन्न होते हैं: -
अनजाने में, मारा (मृत्यु के देवता/राक्षस) की शक्ति के प्रभाव में,
ये सभी, हे हृदय, आपके ही अनुयायी हैं। [49]

[1] कुलानूरूपेसु नक्कत्थानेसु।

[2] नगरवसीनं समाजं दस्सेत्वा।

[3] पाठ का मीटर पूरी तरह से त्रिष्टुभ है। आरंभिक भाग की उदास लालसा को पुन: प्रस्तुत करने के प्रयास में, मैंने टेनीसन के 'लोटस-ईटर्स' के 'कोरस सॉन्ग' को ध्यान में रखा है। Ekākiyo = ekeko.

[4] कायो, शाब्दिक रूप से, समूह, जिसमें न केवल शरीर बल्कि मानसिक समूह भी शामिल हैं (टिप्पणी)। 'घोंसला': तुलना करें इतिवुत्तक, Ī 43.

[5] तन्हा-लता। धर्मग्रंथ में एक पसंदीदा उपमा। श्लोक 761 देखें ।

[6] पूरी पंक्ति शब्द sīhāsane 'शेर की सीट पर' या 'सिंहासन पर' में निहित है। टिप्पणी: thirāsane aparājitapallanke.

[7] गिरिब्बाजा। देखें CCXXXIV., 545, एन.

[8] तुलना करें सिटर्स, श्लोक 200, 351. टीका, 'इंद्रिय की चीजों' का नमूना लेते हुए, 'आंतरिक वस्तुओं' में सुखद और पीड़ादायक चीजों को निर्दिष्ट करती है; लेकिन उनमें ठोस धारणाएं (संवेदना के प्रत्येक तरीके से अलग), छवियां, विचार आदि भी शामिल हैं।

[9] यह तालपुट के एक व्यक्ति के लिए पार करने के लिए एक बड़ा कदम था।

[10] खंडे.

[11] धम्मे. टिप्पणी: rūpadhamme.

[12] अनिच्चैवसेन सीएव असारादि-उपमानवसेन (टिप्पणी)।

[13] द्विज अंडप्रजक प्राणियों के लिए एक सामान्य नाम है, 'माँ और अंडे से पैदा हुआ' (टिप्पणी)।

[14] देखें पृष्ठ 159. अतिरिक्त जानकारी आदि भी देखें।

[15] 'अब, संसार त्यागने से पहले अपने विचारों का मार्ग दिखाने के बाद, वह भिक्षु के क्रम में रहते हुए, दिखाता है कि उसने किस प्रकार अपने हृदय को प्राप्त करने के लिए संबोधित किया' (टिप्पणी)।

[16] अर्थात्, अध्ययन करना (टीका)।

[17] सी. सिस्टर्स, पृ. 188, श्लोक 200, 201.

[18] शाब्दिक रूप से, द्विपादों का। तुलना करें बहनें, श्लोक 432. डॉ. न्यूमैन एक अन्य उदाहरण उद्धृत करते हैं: एपिग्राफिया इंडिका, iii., पृ. 3131, 6.

[19] भजन संहिता CXXIII देखें।

[20] सार्वभौमिक प्रेम के अभ्यास के कारण' [mettā{brahma) vihāratāya] (टीका)।

[21] मा विराधया टीका में पाठ है, और टिप्पणी मा विराधेहि है, 'इस पल को मत चूको जिसे जीतना इतना कठिन है।' श्लोक 403 देखें ।

[22] भावेहि के लिए टीका में 'उत्पन्न होने का कारण, बढ़ने का कारण' दिया गया है।

[23] टीका में संख्याएँ दी गई हैं। अंतिम संख्याएँ चार इद्धिपादों को संदर्भित करती हैं। तुलना करें संकलन, पृष्ठ 180, डी, ई, एफ, सी, और ऊपर, श्लोक 437।

[24] धम्मपाल, अभिसापम-अगतो को भी पढ़ते हुए , इत्तुत्तका, 91 को संदर्भित करता है । उस कार्य पर उनकी टिप्पणी में अभलापो ती अक्कोसो है।

[25] देखें पृ. 113, नोट 1.

[26] श्लोक 306 देखें ।

[27] श्लोक 856 देखें।

[28] देखें ध्पदा, श्लोक 37; टिप्पणी, i. 304. बाद वाला ग्रंथ इस और अगले वाक्यांश पर हमारी टिप्पणी से काफी हद तक शाब्दिक रूप से सहमत है। चेतना के कोई दृश्य गुण नहीं होते, और वह मकड़ी के धागे की चौड़ाई जितनी जगह में भी गति नहीं कर सकती, लेकिन वह ऐसे संपर्क के बिना ही अपने विषय को जानती है। फिर, यह मानसिक जीवन की इकाइयों की एक श्रृंखला है जो एकल रूप से उत्पन्न होती है। 'दो, तीन चेतनाएँ एक साथ उत्पन्न नहीं होतीं। एक समाप्त होती है, दूसरी उत्पन्न होती है।' यह संभव है कि पाली में जो हमें सुझाया गया है - 'हे निराकार, अकेले दूर यात्री!' - वह विद्वानों की मनोवैज्ञानिक व्याख्या की तुलना में तालपुत के अर्थ के अधिक निकट हो। फिर भी, जब अन्यत्र पंक्तियाँ बाद वाले के लिए रोमांस का सुझाव देती हैं, तो वे इसे दबाती नहीं हैं। वैसे भी, विशिष्ट बौद्ध अंतर दिलचस्प है।

[29] (राजा)राज -द-इसी में दो शब्दों (Cy.) को जोड़ने के लिए द डाला गया है ।

अतिरिक्त जानकारी आदि। "V और c अक्सर न केवल सिंहली में, बल्कि बर्मी में भी, ताड़ के पत्तों पर लिखे जाने पर भ्रमित हो जाते हैं। सुत्त-निपात के श्लोक 162 f. में, -cāraṇo और -vāraṇo के बीच , फाउसबॉल ने पहले वाले को चुना। तो फिर, cāraṇikaŋ क्या है? टीका स्वयं अस्पष्ट है: abhinhako carakārahaŋ viya mano-dassento carakārahaŋ purisaŋ tantaŋ-bhavaŋ dassento. मैं carakārahaŋ और tantaŋ-bhavaŋ पर प्रकाश डालने के लिए आभारी रहूंगा । संस्कृत में cāraṇo एक टहलते हुए खिलाड़ी को

कहते हैं, इसलिए मेरा अनुवाद ऐसा है। यदि यह सही है, तो यह तालपुट के पारंपरिक पूर्वजों द्वारा प्रयुक्त एक बहुत ही संभावित उपमा है।"

[30] cāraṇikaŋ पढ़ना । अतिरिक्त देखें, आदि।

[31] देखें श्लोक 931; जेपीटीएस, 1889, पृ. 203.

[32] देखें LXXVII., पृष्ठ 76.

[33] अधित्थाहि, इस शब्द का एक असामान्य उपयोग।

[34] संसार (टीका) का ।

[35] तुलना करें श्लोक 126, 280.

[36] दिसा ति देवलोक (टिप्पणी)।

[37] श्लोक 1089 देखें।

[38] टिप्पणी में लिखा है: धितिप्परं ती धिति-परायणं परं माŋ तिरभावे थितां ... माŋ कैलेतुं न सक्खिस्सि ति अथो। यह 'प्रतिकारक' पढ़ने से बेहतर लगता है! फिर से यहाँ, और घृणित!' फिर से उसी गाथा में।

[39] टीका के साथ पढ़ने पर उभतो। यह अन्यथा अस्पष्ट पंक्ति शरीर की आकृति के विचित्र लेकिन सटीक विरोधाभास में अपना स्थान ग्रहण करती है। तुलना करें श्लोक 279, 1151।

[40] पाली अनुप्रास को पुन: प्रस्तुत करने का प्रयास - गुहागेहागातो।

[41] 'लाल रंग के कंबल जैसा' (टिप्पणी) हमें हमारे तिपतिया घास के खेतों की याद दिलाता है।

[42] शाब्दिक रूप से, 'बिना सहायक अंगों के लट्ठे की तरह' (टिप्पणी)। तुलना करें LXII.

[43] सी.एफ. मज्झ में यह उपमा . निक., मैं. 128. टिप्पणी में कहा गया है, तां तां करिसामं, नहंता-कस्सामि के लिए।

[44] विरियेना.

[45] पाथे को विपस्सनावीथियां द्वारा पुनर्कथनित किया गया है ।

[46] अर्थात्, अनित्य को स्थायी मानना, और कुरूप (असुभं), पीड़ादायक, निस्वार्थ को क्रमशः सुंदर, सुखद और आत्मा से युक्त मानना। अंतिम भ्रम, ब्र. एम.एस. कॉमी. में या तो असामान्य रूप से लिखा गया है - अतानी अत्ता ति ('स्वयं में एक आत्मा'), या लेखक ने अनात्तानी ('आत्माहीन में एक आत्मा') से 'अन' हटा दिया है।

[47] गामाण्डलं। टीका में पहले गामाण्डलं पढ़ा जाता है, फिर टिप्पणी करते हुए गामंतलं, लेकिन इसका अर्थ गामन्दरकं बताया गया है - 'मेरे अच्छे दिल, तुम मुझे इधर-उधर घसीटते (परिकड्धसि) हो , मानो मैं कोई (मूर्ख) गाँव का लड़का हूँ।' डॉ. न्यूमैन गा के स्थान पर गो पढ़ते हैं।

[48] शाब्दिक अर्थ: 'तुम उससे भी आगे बढ़ जाओगे, उसे नीचा दिखाओगे या उससे श्रेष्ठ हो जाओगे।' व्याख्या: 'तुम अपने संसार के विनाश के समय दृढ़ रहोगे।'

[49] अंतिम श्लोक, साथ ही 1143, कविता में थोड़ा पीछे रखे जाने पर बेहतर लगेगा।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा (263): महा मोग्गल्लाना
श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (263) ------>>>> अगला

अंतर्वस्तु

अध्याय XX.
साठ छंदों की कविता
263. महा मोग्गल्लाना
उनकी कहानी पूज्य सारिपुत्त की कथा में वर्णित है। [1] भिक्षु दीक्षा लेने के एक सप्ताह बाद, जब वे मगध के छोटे से गाँव कल्लावला [2] के पास अपने कर्तव्यों में व्यस्त थे , तो उन्हें आलस्य और नींद आने लगी, जिससे भगवान (बुद्ध) ने उन्हें इन शब्दों से जगाया: 'मोग्गल्लाना, आलस्य आर्य मौन के समान नहीं है।' भगवान (बुद्ध) द्वारा दिए गए तत्वों पर एक अभ्यास को सुनकर ही उन्होंने अपनी कमजोरी पर विजय प्राप्त कर ली और बुद्ध के शिष्य द्वारा प्राप्त की जा सकने वाली सर्वोच्च अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली। एक अन्य अवसर पर, भगवान (बुद्ध) ने जेतवन में आयोजित सभा में उन्हें असाधारण इच्छाशक्ति (इद्धि) में अग्रणी घोषित किया । और इस प्रकार वरदान प्राप्त होने पर उनके द्वारा बोले गए श्लोकों को सभा के समय धर्मग्रंथ के संकलकों द्वारा एक श्रृंखला में संकलित किया गया था।

मैं।
भिक्षुओं को शिक्षा देते समय:

[1146] अरण्यक पिंडपतिका उंचपट्टगते रता,॥
दाडेमु मैककुनो सेनं अज्झट्टां सुसामहिता॥॥
[1147] अरण्यक पिंडपतिका उंचापत्तगते रता,॥
धुनामा1 मैककुनो सेनना नदगाराणव कुंजरो॥॥
[1148] रुक्खमूलिका सात्तिका उंचापत्तगते रता,॥
दाडेमु मैककुनो सेनं अज्झट्टां सुसामहिता॥॥
[1149] रुक्खमूलिका सात्तिका उंचापत्तगते रता,॥
धुनामा मैक्कुनो सेनं नागागाराणव कुंजरो॥॥

[1146] हम वनवासी, सभी भिखारी,
अपने कटोरे में रखे जूठे टुकड़ों से संतुष्ट हैं।

हम मारा के सैनिकों को नष्ट कर सकते हैं [3] यदि हमने आत्म-संयम अच्छी तरह सीख लिया है।
[1147] [383] हम वनवासी, सभी भिखारी,
जिन टुकड़ों से हमारा पेट भरता है, उनसे संतुष्ट, मारा और मेजबानों, चलो, हाथी की तरह सरकंडे से बनी झोपड़ी को साफ कर दें । [4]

[1148] हम जो छायादार वृक्ष की जड़ में
अपने काम में निरंतर लगे रहते हैं,
अपने कटोरे में रखे टुकड़ों से संतुष्ट रहते हैं,
हम मारा के सैनिकों को नष्ट कर सकते हैं
यदि हमने आत्म-नियंत्रण अच्छी तरह सीख लिया हो।
[1149] हम जो छायादार वृक्ष की जड़ में
अपने काम में निरंतर लगे रहते हैं,
जिन टुकड़ों से हमारा पेट भरता है, उनसे संतुष्ट रहते हैं,
हे मारा और मेजबानों, चलो उन्हें झाड़ दें,
जैसे हाथी सरकंडे से बनी झोपड़ी को झाड़ देता है।

II.
एक वेश्या को जिसने उसे लुभाने की कोशिश की: [5]

[1150] अथिहिकाओन्कलाकुतिके मनसनानाहरुसिब्बिते,॥
धीरत्थु पूरे दुग्गन्धे पारगत्ते मामयसे, ॥ ॥
[1151] गुत्थभस्ते तकोनाद्दे उरगंड4 पिसासिनि,॥
नवा सोतानि ते काये यानि संदन्ति सबबदा॥ ॥
[1152] तव शरीरारौ नवसोताɱ दुग्गन्धकराɱ परिबन्धɱ,॥
भिक्खु परिवज्जयते तं मिधाञ्च यथा सुचिकामो॥ ॥
[1153] इवं सीई तं जानो जनना यथा जानामि तं अहं,॥
अरका परिवज्जेया गुठत्थानौव पावुसे ॥ ॥
[1154] एवं एतं महावीर यथा समान भाससि,॥
एत्था चेके विसीदंति पंचमहिव जारग्गावो॥ ॥
[1155] अकासम्हि हलिद्दिया यो मन्ने, राजेतवे,॥
अन्नेन वापि रंगेण विघातुदयामेव तां॥ ॥
[1156] तदाकासासमाɱ चित्ताɱ अज्झट्टाɱ सुसमाहिताɱ,॥
मा पापचित्ते अहनि अग्गिखंडहौव पक्खिमा॥ ॥
[1157] पासा चित्तकाटाɱ बिंबाɱ अरुकायाɱ समुसिताɱ,॥
आतुरं बहुसंकप्पां यस्सा नत्थि धुवं तिथि.॥ ॥
[1157ए] पासा चित्तकटाɱ रूपाɱ मनिना कुंडलेना सीए,॥
अट्ठीɱ तासेना ओनद्दधां सहा वत्थेहि शोभति.॥ ॥
[1157बी] अलट्टकाकाटा पद मुखाɱ कुणकाकमक्खिताɱ,॥
अलं बलास्सा मोहया नो च परागवेसिनो॥ ॥
[1157सी] अट्ठपादकटा केसा नेत्ता अंजनमक्खिता,॥
अलं बलास्सा मोहया नो च परागवेसिनो॥ ॥
[1157डी] अंजनीव नवा चित्त पूतिकायो अलंकातो,॥
अलं बलास्सा मोहया नो च परागवेसिनो॥ ॥
[1157ई] ओदाही मिगावो पासाण् नासादा वागुरां मिगो,॥
भुत्वा निवापं गच्छमा कन्दकान्ते मिगबन्धके ॥ ॥
[1157एफ] चिन्नो पासो मिगावसा नासादा वागुरां मिगो,॥
भुत्वा निवापं गच्छमा सोकांते मिगालुद्दके॥ ॥

[1150] तुम उस छोटी सी झोपड़ी के साथ, जो हड्डियों के ढांचे
और मांस से बनी है, और रेशेदार सिलाई से घिरी है: -
तुम पर लानत है, घिनौने! तुम अशोभनीय गंधों से भरे हो,
अपने आप को उन अंगों में पाते हो जो 'तुम' नहीं हैं। [6]
[1151] हे चमड़ी में लिपटी गंदगी की थैली! हे
घावदार छाती वाली चुड़ैल! नौ धाराएँ हैं
जो रात-दिन तुम्हारे शरीर पर रिसती हैं;
[1152] तुम्हारा शरीर नौ धाराओं से भरा और दुर्गंधयुक्त है,
बंधनों का निर्माता: [7] - जिससे भिक्षु (भिक्षु) दूर रहे
, जैसे कोई गोबर से दूर रहता है, वैसे ही वह साफ रहना चाहेगा।
[1153] अगर लोग तुम्हें वैसे ही जानते जैसे मैं
जानता हूँ, तो वे तुम्हें दूर से ही दूर भगाते,
जैसे वे बारिश में गंदे पानी के तालाब से दूर भागते हैं।
तब उस स्त्री को शर्म महसूस हुई और उसने थेरा के सामने सिर झुकाकर कहा:
[1154] हाँ, हे महान वीर, ऐसा ही है
जैसा कि आपने, हे पवित्र भिक्षु, कहा है।
और इसमें बहुत से लोग बुरी तरह असफल हो जाते हैं
और दलदल में बूढ़े बैल की तरह कमजोर पड़ जाते हैं।
थेरा:
[1155] जो यह कल्पना करता है कि वह आकाश को
पीले रंग से, या शायद किसी अन्य रंग से रंग सकता है,
वह निश्चित रूप से हार जाएगा, और केवल यही।
[1156] मेरा हृदय उस आकाश के समान है, जो तुम्हारी पहुँच से परे है,
क्योंकि यह भीतर से अच्छी तरह नियंत्रित और शांत है। [8] इसलिए अपने बुरे विचार मुझ पर मत लाओ,
जैसे कोई पक्षी आग में व्याकुल होकर उड़ता है।
[1157] देखो वह बनावटी कठपुतली-आकार (मानव शरीर),
घावों का ढेर, एक रोगग्रस्त ढेर,
अनेक उद्देश्यों और योजनाओं से भरा हुआ, और फिर भी
जिसमें बने रहने की कोई शक्ति नहीं है। [9]
[1157a] देखो, सजी-संवरी आकृति (मानव शरीर), गहनों से सजी, छल्लेदार,
हड्डियों और पतले आवरण में लिपटी हुई,
बढ़िया और देखने में सुंदर उपकरणों की मदद से। [21]
[1157b] पैरों और चेहरे को सजाने के लिए मेकअप करने की आदत के साथ
मोह (सुंदर शरीर होने का भ्रम) के प्रभाव में रहना,
कि कोई भी व्यक्ति देवत्व की अवस्था तक नहीं पहुंचेगा।
[1157 ई.] बालों को संवारने और आँखों को सजाने की आदत के साथ
मोह (सुंदर शरीर होने का भ्रम) के प्रभाव में रहना,
कि कोई भी व्यक्ति देवत्व की अवस्था तक नहीं पहुंचेगा।
[1157 ई.स.] शरीर के अन्य अंगों को सजाने-संवारने की आदत के साथ
मोह (सुंदर शरीर होने का भ्रम) के प्रभाव में रहना,
कि कोई भी व्यक्ति देवत्व की अवस्था तक नहीं पहुंचेगा।
[1157d,e,f] [स्वयं को संवारने और सजाने की आदत वाले लोग]
शरीर के विखंडन (मृत्यु) के बाद उन्हें एक दुखद अवस्था का सामना करना पड़ेगा।
[जैसे कोई हिरण जाल में फंस जाता है और शिकारी उसे उठाकर ले जाता है]

III.
सारिपुत्त थेरा के निधन के विषय में: [10]

[1158] तदासि यङ् भिṃसनकाṃ तदासि लोमहाऽसानाऽ,॥
अनेकाकारसम्पन्ने सारिपुत्तमहि निब्बुते॥ ॥
[1159] अनिच्चा [105] वात संखारा उप्पादावयधम्मिनो,॥
उपज्जित्वा निरुज्जन्ति तेसां वुपसमो सुखो॥ ॥
[1160] सुखुमाउ ते पतिविज्जन्ति विलग्गाउ उसुना यथा,॥
ये पञ्चकखंडे पासन्ति परतो नो च अत्ततो॥ ॥
[1161] ये च पस्संती सोंखरे परतो नो सीए अत्ततो,॥
पच्चब्याधिंसु निपुणं वलग्गं उसुना यथा.॥ ॥

[1158] हे! तब आतंक था, तब घोर भय था,
तब रोंगटे खड़े हो गए और कंपकंपी हुई नसें कांप उठीं,
जब वह, हर श्रेष्ठ कृपा से परिपूर्ण, [11] आदरणीय सारिपुत्त का निधन हो गया।
[1159] [385] हे क्षणभंगुर हैं हमारे जीवन के अनुभव!
उनका स्वभाव है उठना और चले जाना।
वे हमारी समझ में घटित होते हैं, उनका अस्तित्व समाप्त हो जाता है।
हे हमारे लिए कितना अच्छा है जब वे विश्राम में डूब जाते हैं! [12]
[1160] वे जो हमारे पंचांग जीव को
किसी 'अन्य' के रूप में देखते हैं, स्वयं नहीं, आत्मा नहीं, [13] वे [सत्य की] नाजुक चीजों में प्रवेश करते हैं
जैसे तीर की नोक बाल के सिरे को भेदती है।
[1161] जो हमारे जीवन के अनुभव को
किसी 'अन्य' के रूप में देखते हैं, स्वयं के रूप में नहीं, आत्मा के रूप में नहीं,
उन्होंने सूक्ष्म [सत्य के रहस्यों] को भेद दिया है,
जैसे तीर की नोक बाल के सिरे को भेद देती है।

चतुर्थ
तिस्सा थेरा के विषय में कहा गया: [14]

[1162] सत्तिया विया ओमाथो दैहमानोऽव मत्थके,॥
कामरागप्पाहनाय सातो भिक्खु परिब्बजे॥ ॥

[1162] जैसे कोई आसन्न तलवार से हारा हुआ हो,
जैसे किसी के बाल और पगड़ी जल रहे हों,
वैसे ही भिक्षु सचेत और सतर्क होकर
आगे बढ़े, सभी सांसारिक भावनाओं को पीछे छोड़कर।

यद्धमाना थेरा के विषय में कही गई बातें:

[1163] सत्तिया विया ओमाथो दैहमानोऽव मत्थके,॥
भवरागप्पाहनाय सातो भिक्खु परिब्बजे॥ ॥

[1163] जैसे कोई आसन्न तलवार से घायल होकर गिर जाता है,
जैसे किसी के बाल और पगड़ी जल उठते हैं,
वैसे ही भिक्षु सचेत और सतर्क होकर
आगे बढ़े, जीवन की सभी वासनाओं को पीछे छोड़कर।

वी

'टेरेस के अधिनियम' संवाद के संबंध में बोला गया: [15]

[1164] कोदितो भावित्तेन सरिरन्तिमाधारिना,॥
मिगरामातुपासादं पदुंगुत्थेन कम्पयिं॥ ॥

[1164] उनके द्वारा सलाह दी गई, जो पूर्ण रूप से विकसित हुए, [16] अंतिम बार एक नश्वर शरीर धारण करते हुए,
मैंने अपने पैर की उंगली से अपना पैर उठाकर
मिगारा की माँ द्वारा निर्मित चबूतरे को हिला दिया।

छठी
एक भिक्षु के विषय में कहा गया: [17]

[1165] नायिदṃ सिथलामरभ नायिदṃ अप्पेना थमासा,॥
निब्बानमाधिगंतबब सब्बगंथपमोकाना.॥ ॥
[1166] अयाṃ सीए दहारो भिक्खु अयामुत्तमपोरिसो,॥
धारेति1 अन्तिमं देहाऽ चेत्वा मारऽ सवाहिनि।॥॥

[1165] सुस्ती और सुस्ती से इसका कोई लेना-देना नहीं है ,
थोड़े से परिश्रम से निर्वाण प्राप्त नहीं हो सकता, हर बंधन और बेड़ी से मुक्ति नहीं मिल सकती।
[1166] इस युवा भिक्षु को देखो, तुममें यह अद्वितीय है!
उसने मारा और उसकी सारी सेना को परास्त कर दिया है,
और [इसलिए] वह अपना अंतिम शरीर धारण करता है।

सातवीं
उनके स्वयं के वैरागी जीवन के संबंध में:

[1167] विवरमनुपतन्ति विज्जुता वेहरस्स च पण्डावस्स च,॥
नागविवरगतोऽव झायति पुत्तो अप्पतिमस्सा ताडिनो॥ ॥

[1167] चट्टानी गुफा में भी बिजली चमकती है,
वेभारा की चोटी और पांडव पर प्रहार करती है, और पर्वत की गोद में छिपे हुए,
अतुलनीय भगवान (बुद्ध) का एक बच्चा बैठा है,
ध्यानमग्न समाधि में लीन। [18]

आठवीं
राजगृह में भिक्षा मांगने के लिए प्रवेश करते हुए, वह सारिपुत्त थेरा के भतीजे को संबोधित करते हैं, जो गलत मतों वाला एक ब्राह्मण (पुजारी) है, जिसने महान कश्यप को देखकर घृणा का अनुभव किया, मानो उसने स्वयं दुर्भाग्य की देवी को देख लिया हो।

[1168] उपसंतो उपरतो पन्तसेनसाणो मुनि,॥
दयादो बुद्धसेठस्स ब्राह्मणा अभिवन्दितो॥ ॥
[1169] उपसंताṃ उपराताṃ पन्तसेनसानाṃ मुनिṃ,॥
दयादां बुद्धसेठस्स वंदा ब्राह्मण कस्सापं॥ ॥
[1170] यो च जातिसतां गच्छे सब्बा ब्राह्मणजातियो,॥
सोत्थियो वेदसम्पन्नो मनुस्सेसु पुनसुनाṃ.॥ ॥
[1171] अज्झायको'पि सी अस्सा तिन्नन वेदना परागु,॥
एतस्सा वंदनयेतौ कलं नागघाटी सोऽसिṃ॥ ॥
[1172] यो सो अष्टविमोक्खनि प्योरभट्टṃ अफसायि,॥
अनुलोमं पतीलोमं ततो पिंडाय गच्छति॥ ॥

[1173] तदिसैं भिक्खुं मा हानि मत्तनं खाणि ब्राह्मण,॥
अभिप्पसादेहि मनः अरहंतामि तादिनो॥
खिप्पं पञ्जालिको वंदा मा ते विजति मत्थाकं॥ ॥

[1168] शांत और निर्मल द्रष्टा, संसार से विरक्त,
जिसका जीवन दूर है, मनुष्यों से विरक्त है, [19] बुद्ध का उत्तराधिकारी, जागृत और सभी का प्रमुख,
महान ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) द्वारा सम्मानपूर्वक अभिवादन किया गया;
[1169] उन्हें देखो, शांत, निर्मल, संसार से विरक्त,
वह ऋषि जो दूर, मनुष्यों से अलग रहते हैं,
बुद्ध के उत्तराधिकारी, प्रबुद्ध और सभी के प्रमुख: -
ब्राह्मण (पुजारी), कस्सपा को प्रणाम करो!
[1170] जो सौ पीढ़ियों पहले तक
अपने वंश का पता लगा सकता है, सभी ब्राह्मण (पुजारी) पूर्वजों का,
स्वयं स्नातक और वेद ज्ञाता होते हुए,
बार-बार मानवजाति में पुनर्जन्म लेता है।
[1171] यद्यपि वह वेदों में तीन
भूतपूर्व-भगवान (बुद्ध) के रूप में शिक्षक है, तुम इसके लिए उसका सम्मान करोगे, उसके लिए तुम्हारा आदर एक तिनके के बराबर भी नहीं होगा।
[1172] जो व्यक्ति उपवास तोड़ने से पहले
मानसिक मुक्ति (निर्वाण) की आठ अवस्थाओं को
आरोही क्रम में और फिर वापस उसी क्रम में स्पर्श कर सकता है:- [20] तभी वह भिक्षा मांगने के लिए निकलता है: -
[1173] आक्रमण [21] तुम इस प्रकार के भिक्षु (साधु) नहीं हो।
अपने आप को खोदने से बचो, [अपने भले]! [22]
प्रसन्न करो, ब्राह्मण (पुजारी), और ऐसे अरहंत (प्रबुद्ध) का ध्यान करके अपने मन को प्रसन्न करो ।
शीघ्रता से अपने हाथ उठाओ और प्रणाम करो।
अपने उस सिर को खतरे में मत डालो। [23]

नौवीं
पोट्ठिला नामक भिक्षु (भिक्षु) को संबोधित करते समय:

[1174] नेसो पस्सति सद्धम्मं ससैरेण पुरक्खतो,॥
अधोगमं जिम्हपठां कुम्मग्गमनुधावति।॥ ॥
[1175] किमिअवा मिढासल्लिटो संखरे अधिमुच्चितो,॥

[1174] उसने अभी तक उस धन्य मानक को नहीं देखा है
जिसके साथ शाश्वत जीवन है;
वह पाठ्यक्रम परिसर से दूर भटकता है,
त्रुटि के कुटिल खतरनाक रास्तों में भटकता है।
[1175] गोबर से सने हुए घिनौने कीड़े की तरह,
वह जीवन की पापमय चीजों में लिप्त रहता है, [24] एहसान और लाभ की खोज में डूबा हुआ,
पोट्ठिला [सच्चे लाभ से] वंचित रहता है।

एक्स
आदरणीय सारिपुत्त की प्रशंसा में: [25]

[1176] इमाṃ सीए पासा अयंताṃ सारिपुत्तṃ सुदस्सानाṃ,॥
विमुत्तं उभतोभगे अज्झत्तं सुसमाहितां॥ ॥
[1177] विसल्लाṃ [106] खिनसाअयोगṃ तेविज्जाṃ मक्कुहायिनाṃ,॥

दक्खिनेयय्यं मनुस्नानं पुननक्खेत्तां अनुत्तराऽ, ॥ ॥

[1176] वहाँ देखो जहाँ सारिपुत्त जा रहे हैं,
कितने सुंदर और गरिमामय!
ध्यान में मग्न होकर वे मुक्त हो गए हैं, और पवित्रता से, [26] और उनका सारा आंतरिक स्वरूप सुव्यवस्थित है।
[1177] नैतिक हानि से मुक्त, सभी बंधन टूट गए,
उच्च वेदों में वर्णित, मृत्यु का संहारक,
इस योग्य कि मनुष्य उसे भेंट लाएँ;
महान पुरस्कार के लिए अतुलनीय क्षेत्र। [27]

ग्यारहवीं
आदरणीय सारिपुत्त द्वारा महान थेरा मोग्गलाना की प्रशंसा में कहे गए शब्द:

[1178] एते संबहुला देवा इद्दमंतो यसस्सिनो॥
दशदेवसहस्सानि सब्बे ब्रह्मपुरोहिता॥
मोग्गल्लानां नमस्सांता तिथंथन्ति पंजलिकता॥ ॥
[1179] नमो ते पुरीसाजन नमो ते पुरीसुत्तमा॥
यस्सा ते आसवा खिना दक्खिनेय्योऽसि मारिसा॥ ॥
[1180] पूजितो नरदेवेन उप्पन्नो मरणाभिभू॥
पुण्डरीकाऽव तोयेना सङ्खारेनोपलिप्पति, ॥ ॥
[1181] यस्सा मुहुत्तेन सहस्साधा लोको सविदितो सबब्रह्मकप्पो वासी॥
इधिगुने कटुपापते काले पस्सति देवता स भिक्खु॥ ॥

[1178] देखो वे कैसे खड़े हैं, जो देवताओं से भरे हुए हैं [28] रहस्यमय शक्ति और महिमा से परिपूर्ण,
दस हजार गुना, ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) के सेवक,
श्रद्धापूर्वक मोग्गलाना की स्तुति कर रहे हैं: -
[1179] 'हे मानवता के अभिजात वर्ग,
आपको प्रणाम! हे मनुष्यों में सर्वोच्च, आपकी महिमा हो!
आपके लिए मादक पदार्थ (अपवित्रता/इच्छाएँ) नष्ट हो गए हैं,
और हे प्रभु, आप उपहारों के सबसे योग्य हैं!
[1180] मनुष्यों और देवताओं द्वारा समान रूप से सम्मानित, [29] मृत्यु के विजेता के रूप में उठे,
जैसे कमल जल से कोई दाग नहीं लेता,
वैसे ही तुम बदलते संसार में चिपके नहीं रहते।' [30]
[1181] जो एक क्षण में ही हज़ार तरीकों से
समस्त संसार का अवलोकन कर सकता है, [31] मानो वह स्वयं ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) हो। [32] हाँ, यहाँ एक ऐसा भिक्षु है जो
आध्यात्मिक [जादू] की शक्ति में पारंगत है [33] जिसने देखा
कि देवताओं और मनुष्यों के लिए मरने और जन्म लेने का समय क्या उपयुक्त है। [34]

बारहवीं
मोग्गलाना महान बोलते हैं, और अपनी प्रतिभाओं की पुष्टि करते हैं:

[1182] सारिपुत्तोऽव पन्नया सिलेना उपासमेन च॥
योऽपि पराङ्गतो भिक्खु एतावपरमो सिया॥ ॥
[1183] कोइसातासाहास्सा अत्तभावं खनेना निम्मिने॥
अहं विकुब्बानासु कुसालो वसिभूतोमहि इद्धिया॥ ॥
[1184] समाधिविज्जवसिपारामी गतो.॥
मोग्गलानगोत्तो असितस्स ससाने॥
धीरो नमुच्छिंदि समाहितिन्द्रियो॥

नागो यथा पुतिलताव बन्धनान्॥ ॥
[1185] पैरिसिणो माया सत्था काटां बुद्धस्स ससाणो॥
ओहितो गरुको भरो भवनेति समुहता॥ ॥
[1186] यस्साथया पब्बजितो अग्रस्मानगरियौ॥
सो मे अत्थो अनुप्पत्तो सब्बासंयोजनकखायो॥ ॥

[1182] अब सारी का पुत्र ज्ञान, सद्गुण और आत्मसंयम से
सभी को श्रेष्ठ मानता है; यहाँ इस भिक्षु को सर्वोच्च स्थान प्राप्त हो।
[1183] लेकिन मैं पल भर में अनगिनत बार
एक सजीव आकृति बना सकता हूँ; स्वयं को
दूसरों के रूप में रूपांतरित करने में कुशल, हाँ, मेरे पास इच्छा से सभी जादुई शक्तियाँ हैं। [35]
[1184]
मोग्गलानाओं में से वह, जो अकेले खड़े हैं, उनके नियम में , [36] अपनी शक्तियों को सिद्ध कर चुका है; [37] ध्यानमग्न परमानंद और उच्चतर ज्ञान में
निपुण, वीर और आत्म-संयमित होकर उसने अपने बंधन तोड़ दिए हैं,
जैसे हाथी ने सड़ी हुई रस्सी तोड़ दी थी। [38]
[1185] भगवान (बुद्ध) के प्रति मेरी निष्ठा और प्रेम है, [39] और बुद्ध के सभी विधान पूरे हो चुके हैं।
मैंने अपने ऊपर से भारी बोझ उतार दिया है;
मुझमें पुनर्जन्म का कोई कारण नहीं बचा है।
[1186] वह भलाई जिसके लिए मैंने दुनिया को अलविदा कहा, [40] और घर छोड़कर ऐसी जगह रहने चला गया जहाँ कोई घर नहीं है,
वह सर्वोच्च भलाई मैंने प्राप्त कर ली है और जीत ली है,
और वह सब कुछ जो मुझे बांधे और जंजीरों में जकड़े हुए था, चला गया है।

तेरहवें
मारा (मृत्युदेव/शैतान) को फटकारते हुए, जो थेरा के गर्भगृह में प्रवेश कर गया था और फिर बाहर निकल गया था: [41]

[1187] किदिसो निरायो असि यत्थ दुस्सी अपाचत्था॥
विधुरं सवकमसज्ज ककुसंन्धौ च ब्राह्मणाः॥ ॥
[1188] सातो असी अयोसांकु सब्बे पचट्टवेदाना॥
इदिसो निरयो असि यत्था दुस्सी अप्पाचत्था॥
विधुरं सवकमसज्ज ककुसंन्धौ च ब्राह्मणाः॥ ॥
[1189] यो एतं अभिजानाति भिक्खु बुद्धस्स सावको॥
तदिसैं भिक्खुमसज्जा कान्हा दुक्खं निगच्छसी॥ ॥
[107] [1190] मज्झे सरस्स तिथन्ति विमान कप्पाथयिनो॥
वेफरियावना रुचिरा अचिमन्तो पभास्सार॥
अच्चरा तथा नच्चन्ति पुथु ननत्तवनियो॥ ॥
[1191] यो एतं अभिजानाति भिक्खु बुद्धस्स सावको॥
तदिसैं भिक्खुमसज्जा कान्हा दुक्खं निगच्छसी॥ ॥
[1192] यो वे बुद्धेना कोदितो भिक्खुसांघस्सा पेक्खतो॥
मिगरामातुपासदां पदांगुत्थेन काम्पिसाण। ॥ ॥
[1193] यो एतामभिजानाति भिक्खु बुद्धस्स सावको॥
तदिसैं भिक्खुमसज्जा कान्हा दुक्खं निगच्छसी॥ ॥
[1194] यो वैजयंता पसादौ पदांगुधेन कम्पायि॥
इद्धि बालेणुपत्थद्धो सवेजेसि च देवता॥ ॥
[1195] यो एतामभिजानाति भिक्खु बुद्धस्स सावको॥
तदिसैं भिक्खुमसज्जा कान्हा दुक्खं निगच्छसी॥ ॥
[1196] यो वेजयंतपसादे सक्कं सो परिपुच्छति॥
अपि आवुसो जनासि तंहक्खयाविमुत्तियो॥

तस्स साको वियाकासि पन्हां पुठो यथातथ:॥ ॥
[1197] यो एतामभिजानाति भिक्खु बुद्धस्स सावको॥
तदिसैं भिक्खुमसज्जा कान्हा दुक्खं निगच्छसी॥ ॥
[1198] यो ब्राह्मणान् परिपुच्छति सुधम्मयैऽहितो4 सभाऽ॥
अज्जाऽपि त्यावुसो सा दितिथि य ते दितिथि शुद्ध आहु॥
पस्सासि वीतिवत्तन्तं ब्रह्मलोके पभस्सरौ ॥॥ ॥
[1199] तस्स ब्रह्मा वियाकासि पन्हां पुठो यथातथौ॥
न मे मारिसा सादिति य मे दितिथि शुद्ध आहु॥ ॥
[1200] पासामि वितिवत्तन्तं ब्रहुमलोके पभस्सरṃ॥
सोऽहाṃ अज्ज कटो वज्जṃ अहाṃ निक्कोहि सस्सतो॥ ॥
[1201] यो एतामभिजानाति भिक्खु बुद्धस्स सावको॥
तदिसैं भिक्खुमसज्जा कान्हा दुक्खं निगच्छसी॥ ॥
[1202] यो महानेरुणो कुत्तो विमोक्खेना अफस्सासि॥
वनं पुब्बविदेहनां ये च भूमिसया नारा॥ ॥
[1203] यो एताम्बिजानाति भिक्खु बुद्धस्स सावको॥
तदिसैं भिक्खुमसज्जा कान्हा दुक्खं निगच्छसी॥ ॥
[1204] न वे अग्गि चेतायति अहं बालौ दाहामिति,॥
बालोऽव1 जलितौ अग्गिऽ असज्जन पदैहति॥ ॥
[1205] एवमेव तुवं मरा असज्जना3 तथागतौ॥
सयं दहिस्सासि अत्तानां बालो अग्गीव सम्फुसां॥ ॥
[1206] अपुन्नं पसवि मापो असज्जना तथागतं॥
किन्नु हन्नसि पणिमा न मे पापं विपच्चति॥ ॥
[1207] करातो ते चीयते पापां सिरारट्टया अंतकाका॥
मरा निब्बिंडा बुद्धमहा असां मकासि भिक्खुसु॥ ॥
[1208] इति मरौ अतज्जेसि भिक्खु भेसाकलावने॥
ततो सो दुम्मणो यक्खो तत्थेवंतराध्यायथति। ॥ ॥

[1187] वह किस प्रकार का नरक था जहाँ दुस्सी
पीड़ा में खाना पका रहा था, जब उसने
शिष्य विदुर और पवित्र काकुसंध को भी घायल कर दिया था?
[1188] यह लोहे की कीलों का नरक लोक था,
सौ नुकीले कांटे, जिनमें से प्रत्येक भयंकर पीड़ा देता था।
यह उस प्रकार का नरक था जहाँ दुस्सी
पीड़ा में खाना पका रहा था, जब उसने
शिष्य विदुर और पवित्र काकुसंध को भी घायल कर दिया था।
[1189] यदि तुम एक भिक्षु हो जो इतना कुछ बता सकते हो -
बुद्ध के शिष्य - हमला करो,
काले दिल वाले प्रेत! तुम्हें दुख में जाना होगा। [42]
[1190] सागर के बीचोंबीच,
युगों से महल खड़े हैं, बेहद खूबसूरत,
बेरिल पत्थरों के रंग से जगमगाते, ज्वाला की चोटियों की तरह चमकते हुए।
वहाँ अनेक अप्सराएँ अनेक रंगों में नृत्य करती हैं:-
[1191] यदि तुम एक भिक्षु हो जो इतना कुछ बता सकते हो -
बुद्ध के शिष्य - हमला करो,
काले दिल वाले प्रेत! तुम्हें दुख में जाना होगा।
[1192] बुद्ध के स्वयं द्वारा प्रेरित होकर मैंने ऐसा किया,
समस्त भिक्षु संघ के समक्ष, [392] अपना पैर उठाकर, अपने अंगूठे से मैंने
मिगारा की माता द्वारा निर्मित चबूतरे को हिला दिया। [43]

[1193] यदि तुम एक भिक्षु हो जो इतना कुछ बता सकते हो -
बुद्ध के शिष्य - हमला करो,
काले हृदय वाले आत्मा! तुम्हें दुख में जाना होगा।
[1194] मैं जिसने अपना पैर उठाकर, अपने अंगूठे से
वेजयंत के सीढ़ीदार मंदिर को हिला दिया,
अपनी जादुई शक्ति से लोहे की तरह कठोर कर दिया,
और देवताओं के बीच भय का रोमांच भेज दिया:- [44]
[1195] यदि तुम एक भिक्षु हो जो इतना कुछ बता सकते हो -
बुद्ध के शिष्य - हमला करो,
काले दिल वाले प्रेत! तुम्हें दुख में जाना होगा।
[1196] जिसने वेजयंत के सीढ़ीदार मंदिर में
देवता सक्का (देवताओं के राजा) से प्रश्न किया:- [44] 'आओ, मित्र, क्या तुमने वास्तव में
भोग-विलास के अंत से मुक्ति को समझा [जो तुम्हें सिखाया गया था]?'
जिस पर सक्का ने सत्यपूर्वक उत्तर दिया-
[1197] यदि तुम एक भिक्षु हो जो इतना कुछ बता सकते हो -
बुद्ध के शिष्य - हमला करो,
काले हृदय वाले प्रेत! तुम्हें दुख में जाना होगा।
[1198]
जिन्होंने सुधम्मा के हॉल में सभा में बैठे हुए महान ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) से ही प्रश्न किया : - [45] 'आओ मुझे बताओ, मित्र, क्या आज तुम्हारे वे विचार हैं
जो बीते दिनों में तुम्हारे विचार थे?
या अब तुम अपने स्वर्ग की महिमा देखते हो,
कि कैसे युग-युग बीतता जा रहा है?'
[393][1199] जिस पर ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) ने सत्यपूर्वक उत्तर दिया: -
'मेरे स्वामी, मैं अब उन विचारों को नहीं मानता,
जो बीते दिनों में मेरे विचार थे।
[1200] मैं अपने स्वर्ग की महिमा देखता हूँ,
कैसे युग-युग बीतते जा रहे हैं।
आज मैं अपने उस कथन को असत्य मानता हूँ जो मैंने कभी कहा था: -
"मैं शाश्वत हूँ; मैं स्थायी हूँ!"
[1201] यदि तुम एक भिक्षु हो जो इतना कुछ बता सकते हो -
बुद्ध के शिष्य - हमला करो,
काले हृदय वाले प्रेत! तुम्हें दुख में जाना होगा।
[1202] जिसने मुक्ति (निर्वाण) [के परमानंद] में [46] महान नेहरू के सर्वोच्च शिखर को छुआ है, [47] पुब्बाविदेह के वन जगत को देखा है, [48] और उस सुदूर मैदान में रहने वाले मनुष्यों को देखा है: -
[1203] यदि तुम एक भिक्षु हो जो इतना कुछ बता सकते हो -
बुद्ध के शिष्य - हमला करो,
हे काले हृदय वाले प्रेत! तुम्हें दुख में जाना होगा।
[1204] आग ने नहीं सोचा: 'देखो! मैं मूर्ख को जला दूँगा!'
लेकिन अगर मूर्ख धधकती आग पर हाथ रख दे, तो
आग को जलाना ही होगा और उसे जलना ही पड़ेगा।
[1205] इस प्रकार, मारा (मृत्युदेव/राक्षस), तुमने तथागत (अर्थात बुद्ध) [49] पर पहले आक्रमण किया था, परन्तु यह तुम्हारे अपने ही नुकसान के लिए था,
जैसे कोई मूर्ख बच्चा आग को छू लेता है।
[1206] दुष्ट ने दोष उत्पन्न किया है,
जिसने तथागत (अर्थात बुद्ध) पर आक्रमण किया।
क्या? हे दुष्ट, क्या तुम सोचते हो
कि बुराई तुम्हें उसका निश्चित फल नहीं देती?

[1207] हे मृत्यु , तुमने जो किया है, उसके कारण
यह बुराई बहुत समय तक समाप्त नहीं होगी। [50] [394] हे मारा (मृत्युदेव/राक्षस), जागृत मन से दूर हो जाओ! [51] भिक्षुओं के विरुद्ध अपनी दुष्ट साजिशें बंद करो।
[1208] इस प्रकार भेसकला [52] के जंगल में मारा को एक भिक्षु द्वारा निंदा की गई थी।
इसके कारण वह निंदा किया गया शरारती व्यक्ति बहुत निराश होकर,
जहाँ वह खड़ा था, वहीं से पूरी तरह गायब हो गया।
इस प्रकार पूज्य मोग्गलाना महान ने अपने छंदों का उच्चारण किया।

---

[1] सी.सी.एल.आई.एक्स. देखें।
[2] आंग देखें । निक., मैं. 28. इधि पर, कम्पेंडियम देखें, 60 एफ।
[3] एमू में ऑप्टेटिव पर , देखें ई. मुलर की पाली व्याकरण, पृ. 109.
[4] तुलना करें श्लोक 256; साम. निक., i. 156.
[5] सिस्टर्स के अनुसार , पृष्ठ 52, यह वैसाली की विमला थीं। वह एक गृहस्थ अनुयायी बनीं, फिर एक भिक्षुणी, अंततः एक अरहंत (प्रबुद्ध)।
[6] परागत्ते। परा-, 'अन्य' पर , सिस्टर्स, श्लोक 101, n. 8 देखें: परतो दिस्वा। तुलना करें मज्ज, i. 465, अंग. iv. 422. साई. जोड़ता है: गत्तभूते कलेवरे ममत्तम करोसि: 'तुम अंगों वाले शव के प्रति अपनापन बनाते हो ।' स्पष्ट रूप से दूसरे के अंगों का कोई संदर्भ नहीं है।
[7] टिप्पणी में कारिपरिबंध पढ़ा जाता है, लेकिन इसके विश्लेषण से कारि- को हटा दिया जाता है: सम्मापतिपत्ति परिबंधभूतः।
[8] = शब्दशः, आयत 1146 की अंतिम पंक्ति। तुलना करें मज्जह, i. 127.
[9] तुलना करें श्लोक 769, 1020.
[10] श्लोक 1046 देखें।
[11] टीका 'सद्गुणी आचरण, आत्म-संयम,' आदि के उदाहरण देती है।
[12] टीका में ये पंक्तियाँ पूर्ण रूप से दी गई हैं। ये बौद्धों के लिए एक कहावत के समान हैं, और शायद इन्हीं से परिचित होने के कारण, यद्यपि ये इन कविताओं में केवल एक बार ही आती हैं, इस पाठ के संपादक द्वारा प्रयुक्त पांडुलिपियों में केवल पहली पंक्ति ही दी गई है, जिसमें 'एतो' जोड़ा गया है। देखें संवाद, ii. 175; 176, n. 1; 194. धम्मपाला कोई टिप्पणी नहीं करते। मैं संस्कार को व्यक्तिपरक रूप से विचारित घटनाओं (अनुभवों) के रूप में मानना पसंद करता हूँ ; ज्ञात और अनुभव की गई वस्तुएँ ; बौद्ध शब्दावली में, कर्म, वचन और विचार का संस्कार । तुलना करें श्लोक 1175, 1180, श्लोक 3।
[13] तत्थ परतो ति अनात्ततो; तस्सा अट्टागाहा-पइक्खेपा-दस्सानां हेताओ, तेनाहा नो सीए अत्ततो ती (टिप्पणी)। (इतनी क्रांतिकारी किसी भी चीज़ के लिए कोई लाइसेंस नहीं दिया जाता है कि संवेदनाओं के पांच वर्गों को पांच खंड कहा जाए। Cf. न्यूमैन।)
[14] यह श्लोक बुद्ध को बताया गया है, जिसमें तिस्सा, XXXIX, और वाधमान, XL को संबोधित किया गया है।
[15] पसादकम्मा-सुत्तंता। मज्झ देखें . निक., मैं. 337. मज्झिमा में इस संवाद का नाम मारा-तज्जनिया-सुट्टा[एनटीए] (मारा (मृत्युपति/शैतान) का तिरस्कार) है - शीर्षक का एक और अंतर जो दिलचस्पी से रहित नहीं है। पैर की अंगुली-करतब का उल्लेख केवल सुट्टंता से जुड़े छंदों में किया गया है। मिगारा की माँ - विशाखा, थेरा मिगाजाला की भी माँ, CCXVII। ध'पाड़ा साइ. आई., पी.384 एफ.
[16] भावितत्तेन, शाब्दिक रूप से, उसके द्वारा जो विकसित या अभ्यासी अवस्था में था - अर्थात्, जिसने शरीर और मन के विकास का पूरा पाठ्यक्रम पूरा कर लिया था - अर्थात्, बुद्ध।
[17] दो भिक्षुओं (भिक्षुओं) की तुलना की गई है; लेकिन टीका में केवल पहले संदर्भित भिक्षु का उल्लेख है, जिसे 'सुस्त और कामुक' बताया गया है, दूसरे का नहीं।
[18] = श्लोक 41, सिरिवाढ की उक्ति (गाथा)।
[19] देखें कस्सपा थेरा की विशेषताएँ, सी.सी.एल.एक्स.आई., 1057 आगे।
[20] संवाद, ii. 119. 'स्पर्श', एपी(एच)असायी = समापज्जी।
[21] आहारी', आसादति द्वारा व्याख्या की गई । विनय ग्रंथ, ii. 373; मिलिंद पाठ), 100.
[22] अतः टीका।
[23] शाब्दिक रूप से, अपने केशविन्यास को न बिगाड़ें! (व्यंग्यपूर्वक कहा गया)। जोखिम पर, संवाद, i. 116 देखें। ब्राह्मण (पुजारी) ने शिष्टाचार की कमी के लिए क्षमा मांगी।
[24] सांखरा। पोथिला धम्मपद भाष्य का विषय है , iii. 417 एफएफ., श्लोक 282 पर।
[25] मोगल्लाना स्वयं से बात करता है (टीका)।
[26] संवाद देखें , ii. 70. शाब्दिक रूप से, 'दोनों तरफ से मुक्त।'

[27] आम तौर पर इस संप्रदाय के लिए एक पसंदीदा रूपक। पुण्य धर्मनिष्ठ समर्थकों को प्राप्त होता है, जैसे बीज से फसल। तुलना करें (1087)।
[28] तुलना करें 1082; साथ ही 629.
[29] टीका वैकल्पिक पाठ के रूप में सुझाव देती है, 'मनुष्य-ईश्वर द्वारा, पूज्य (बुद्ध), जो ऊपर उठे हैं,' आदि।
[30] देखें सुत्त-निपाता, श्लोक 547. संखारगते, घटनाओं के बीच जन्म लेने वाला, वह लालसा और भ्रम के कीचड़ से नहीं चिपकता; ना उपलिम्पति (sic) कत्थाचि पि, अनिस्सितो ति अत्थो (टीका)। सुत्त-निपाता, श्लोक 812 में थोड़ी सी छंद संबंधी अनियमितता देखें , जहाँ संखारा को दिठ्ठसुतṃ-मुतेसु के रूप में विस्तृत किया गया है ।
[31] अंतरिक्ष की दुनिया (टिप्पणी)।
[32] यहाँ (श्लोक 629 के लिए टिप्पणी देखें) [sic v 631] स-ब्रह्मकप्पो को महा-ब्रह्म-सदिसो के रूप में समझाया गया है ।
[33] इधि पर , सीएफ। सार-संग्रह, पृ. 71, संवादों के साथ, i. 87 फं.
[34] यहाँ टीका अनुरुद्ध की कविता, श्लोक 911 की तरह किसी विशेष प्राणी के साथ देवता, देवात्मा, देवदूत को जोड़ने का प्रयास नहीं करती है। इससे देवता का प्रयोग थोड़ा असामान्य हो जाता है। मोग्गलाना की दृष्टि एक देव की है - ' वह भिक्षु एक देवता है!'
[35] देखें एन. 6, पृ. 389.
[36] असितसे, तन्हानिस्सायदि रहितस्स। (साइ.)
[37] जातक इ. (पाठ) 17 89
[38] सुत्त-निपात, श्लोक 29 देखें। मज्झ. नि. के सुत्तंत 141 में इन महान 'जुड़वां भिक्षुओं' का वर्णन उनके भगवान (बुद्ध) द्वारा इस प्रकार किया गया है:
'सारिपुत्त जन्म देने वाली स्त्री के समान हैं, मोग्गलाना जन्म लेने वाले की पालन-पोषण करने वाली हैं। सारिपुत्त प्रथम मार्ग (निर्वाणिक समाधि) के फल के लिए प्रशिक्षण देते हैं, जबकि मोग्गलाना सर्वोच्च मार्ग के लिए। सारिपुत्त चारों आर्य सत्यों को सिखाने और स्पष्ट करने में सक्षम हैं।'
[39] = 604, 656, 687, 792, 891, 918, 1016, 1088, 1050.
[40] = 136, 380, 605.
[41] मज्झ. निक., i., 50वें सूत्र में वर्णित । श्लोक 1164 देखें। दुस्सी, पिछले जन्म में मारा (मृत्यु के देवता/राक्षस) का एक नाम। काकुसंध, गौतम से दो पहले बुद्ध। विदुर (या विधुरा, ओल्डेनबर्ग के संस्करण में देखें; ब्र. साइ. विदुर), उनके दो प्रमुख शिष्यों में से एक। कांटों का नरक कई यातनास्थलों में से एक था। टीका, इसके वर्णन के लिए, देवदूत-सूत्र (अंग. निक., i. 138 ff.) का संदर्भ देती है। राक्षस के विलक्षण विश्राम के बारे में, उप्पलावन्न की कविता, सिस्टर्स, पृष्ठ 114 देखें।
[42] =श्लोक 25.
[43] तुलना करें श्लोक 1164, और n.
[44] संबंधित मज्झ. निक., i., संख्या 37, चूला तन्हा सांक्खया सुत्त ; टीका द्वारा इस प्रकार संदर्भित। तुलना करें. साम्य i. 234 f. ध्य. साइ. i. 273.
[45] शाब्दिक अर्थ, 'ब्रह्मा एक सभा में उपस्थित हैं।' इसका वर्णन मज्झ. नि., i., क्रमांक 49, ब्रह्मा निमान्तणिक-सूत्र में मिलता है, जिसे टीका में 'बका-ब्रह्मा सूत्र' कहा गया है। टीका में ' ठितो सभा' लिखा है, लेकिन आगे केवल इतना जोड़ा गया है: 'यह ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) लोक में सुधम्म सभा है, न कि तावत्स लोक में। सुधम्म सभा के बिना कोई स्वर्गीय लोक नहीं है।'
[46] झना-विमोखेना (टिप्पणी)।
[47] माउंट सिनेरू, या मेरु, दुनिया का काल्पनिक केंद्र।
[48] मेरु के चारों ओर समूहीकृत चार महान महाद्वीपों में से पूर्वी महाद्वीप।
[49] तथागत को यहाँ स्पष्ट रूप से, टीका में स्पष्ट रूप से, एक थेरा अरहंत (प्रबुद्ध) पर लागू किया गया है।
[50] अंतका, या 'अंतर' (जीवन काल का); इन कविताओं में मारा के लिए प्रयुक्त, केवल यहाँ और बहनों में, छंद 59, 62।
[51] बुद्धमहा (अबल.), शिष्य पर लागू।
[52] श्लोक 18 देखें।

BUDSAS.ORG से और अधिक जानकारी

महा-मोग्गलाना

मोग्गलाना, जो बुद्ध के दूसरे (बाएँ) प्रमुख शिष्य थे, ने भावी पीढ़ियों के लिए धम्म के संरक्षण, संवर्धन और संवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे अलौकिक शक्तियों में भी अग्रणी थे। जल्द ही उन्हें महा मोग्गलाना या "महान मोग्गलाना" के नाम से जाना जाने लगा, ताकि उन्हें उसी नाम के अन्य समकालीनों से अलग किया जा सके।

कई भिक्षु विभिन्न अलौकिक शक्तियों में निपुण थे। लेकिन उनमें से प्रत्येक ने केवल एक या दो शक्तियों में ही महारत हासिल की थी। अनुराधा और भिक्षुणी शकुला के पास अलौकिक दृष्टि या दिव्य नेत्र था। भिक्षु शोभिता और भिक्षुणी भद्दा कपिलानी कई जन्मों को याद रख सकते थे। चुला पंथक सूक्ष्म यात्रा में कुशल थे, जबकि भिक्षु सगाला ने अग्नि तत्व में महारत हासिल की थी और पिलिंदी वच्छा दिव्य प्राणियों से संवाद करने में माहिर थे। महा मोग्गलाना ने इन सभी अलौकिक शक्तियों में व्यापक रूप से महारत हासिल की थी और इस प्रकार वे अन्य भिक्षुओं और भिक्षुणियों से श्रेष्ठ थे। उनकी शक्तियां भिक्षुणी उप्पलावन्ना से भी अधिक शक्तिशाली थीं, जो अलौकिक शक्तियों में भिक्षुणियों में अग्रणी थीं।

सामान्यतः हम अपने ज्ञान को पाँचों इंद्रियों से प्राप्त होने वाले अनुभवों तक ही सीमित रखते हैं। अपनी इंद्रियों की सीमित क्षमताओं के कारण हम अपने सीमित अनुभवों को ही परम सत्य मान लेते हैं। अतः, हम आत्मविश्वास से एक खाली कमरे में देखते हैं और कहते हैं कि उसमें कुछ नहीं है, जबकि वास्तव में वह कमरा इतने छोटे जीवों से भरा होता है कि उन्हें नंगी आँखों से नहीं देखा जा सकता। इसी प्रकार, अनेक ऐसी ध्वनियाँ हैं जिन्हें हम सुन नहीं सकते और कई ऐसी गंध हैं जिन्हें हम महसूस नहीं कर सकते। वास्तव में, यह सिद्ध हो चुका है कि कुत्ते की श्रवण और गंध की क्षमता मनुष्य से कहीं अधिक श्रेष्ठ होती है। इस तथ्य के बावजूद, हम अपने अनुभव को सीमित कर लेते हैं और अपनी इंद्रियों की सीमाओं के कारण सत्य को ही परम सत्य मान लेते हैं। बुद्धिमानों द्वारा अनुभव किया जाने वाला ब्रह्मांड कहीं अधिक विशाल होता है, क्योंकि वे अपने विकसित मन से ऊर्जा के अन्य स्रोतों का भी उपयोग कर सकते हैं।

शक्ति के चार मार्गों (इद्धिपाद) के विकास के माध्यम से, महा मोग्गलाना अंतरिक्ष और समय में कहीं अधिक व्यापक अनुभव प्राप्त करने में सक्षम थे। उनका ज्ञान सामान्य मन की सीमाओं से परे था। अनंत काल तक अपने मन का विकास करते हुए, मोग्गलाना ने ऐसी अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त कीं जो आधुनिक मनुष्य को अकल्पनीय लग सकती हैं। उनकी कुछ शक्तियों और कारनामों को सावधानीपूर्वक प्रलेखित और संरक्षित किया गया है ताकि भावी पीढ़ियाँ मन की पूर्ण क्षमता को समझ सकें। महा मोग्गलाना ने छह प्रकार की अलौकिक शक्तियाँ विकसित की थीं। ग्रंथों में दर्ज उदाहरणों के साथ उनका संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

(1). दूसरों के मन में प्रवेश करना और विचार पढ़ना।

मोग्गलाना, बुद्ध की ही तरह, दूसरों के मन को जानने और समझने की क्षमता रखते थे और अक्सर इसी गुण का उपयोग करके बुद्ध की सहायता करते थे। एक रात बुद्ध भिक्षुओं की सभा के सामने चुपचाप बैठे रहे और बिना कुछ बोले बारी-बारी से सभी भिक्षुओं को देखते रहे। सुबह होने पर बुद्ध ने सभा को संबोधित करते हुए कहा कि यह सभा अपवित्र है, क्योंकि इसमें एक भ्रष्ट भिक्षु मौजूद है।

मोग्गलाना ने सभा में उपस्थित सभी भिक्षुओं के मन का अवलोकन किया और पाया कि उनमें से एक भिक्षु भ्रष्ट है। उसके पास जाकर उन्होंने उसे सभा छोड़कर जाने को कहा। भिक्षु ने इनकार कर दिया। मोग्गलाना ने तीन बार उससे सभा छोड़ने का अनुरोध किया। हर बार भिक्षु ने इनकार कर दिया। तब मोग्गलाना उसे सभा से बाहर ले गए और दरवाजा बंद कर दिया। फिर मोग्गलाना ने बुद्ध से अनुरोध किया कि वे मठवासी अनुशासन (पतिमोक्खा) के नियमों का पाठ करें, क्योंकि अब सभा शुद्ध हो चुकी थी। बुद्ध ने सभा को शुद्ध देखकर भिक्षुओं को मठवासी अनुशासन पर उपदेश दिया।

इस ग्रंथ में एक ऐसी घटना का भी उल्लेख है जिसमें मोग्गलाना ने अपने 500 शिष्यों के मन में प्रवेश करके यह निर्धारित किया था कि वे सभी अरहंत थे। अपनी काव्यमय भाषा के लिए प्रसिद्ध भिक्षु वांगिसा ने तुरंत इस घटना को समझ लिया और मोग्गलाना की इस क्षमता की प्रशंसा करते हुए बुद्ध से इस प्रकार कहा:

"जब ऋषि पर्वत की ढलान पर बैठे होते हैं,
दुःख के उस पार चले गए,
उनके शिष्य उनकी सेवा में बैठे हैं।
वे त्रिगुण ज्ञानी पुरुष जिन्होंने मृत्यु को पीछे छोड़ दिया है।
मोग्गलाना, आध्यात्मिक शक्तियों में महान,
उन्होंने अपने विचारों से उनके मन को भर दिया
और वह उनके मन की खोज करने आया था।
पूरी तरह से मुक्त, बिना किसी लगाव के।"

(2). ऐसी आवाज़ें सुनने की क्षमता जो मनुष्य नहीं सुन सकते - दैवीय कान

एक शाम जब सारिपुत्त मोग्गलाना से मिलने आए, तो उन्होंने अपने मित्र के चेहरे पर ऐसा शांत और सौम्य भाव देखा कि उन्होंने मोग्गलाना से पूछा कि क्या वे मन की शांति के किसी लोक में लीन थे। मोग्गलाना ने सारिपुत्त को बताया कि ऐसा नहीं था, वे भगवान बुद्ध से गहन प्रवचन में लीन थे। सारिपुत्त ने कहा कि बुद्ध श्रावस्ती में निवास कर रहे थे जबकि वे स्वयं राजगृह में कई मील दूर थे। उन्होंने पूछा कि क्या मोग्गलाना बुद्ध के पास गए थे या बुद्ध उनके पास आए थे। मोग्गलाना ने कहा कि ऐसा कुछ नहीं हुआ था। वे दिव्य दृष्टि और श्रवण शक्ति का उपयोग करके ऊर्जा की मानसिक शक्ति पर धम्म प्रवचन में लगे हुए थे। अपने मित्र की अलौकिक शक्तियों को देखकर सारिपुत्त ने कहा कि मोग्गलाना की अलौकिक शक्तियां इतनी शक्तिशाली हैं कि यदि वे चाहें, तो बुद्ध की तरह वे भी एक युग तक जीवित रह सकते हैं।

मोग्गलाना में दिव्य प्राणियों और आत्माओं की वाणी सुनने की क्षमता भी थी। उदाहरण के लिए, एक आत्मा ने उन्हें देवदत्त द्वारा बुद्ध पर मंडरा रहे खतरे के बारे में चेतावनी दी थी, जो उनकी हत्या की साजिश रच रहा था। मोग्गलाना अक्सर स्वर्ग और पाताल लोकों की यात्रा करते थे और वहां निवास करने वाले प्राणियों से उनके द्वारा किए गए कर्मों के बारे में पूछते थे, जिनके कारण उन्हें यह जन्म प्राप्त हुआ था। फिर वे यह जानकारी अपने शिष्यों को देते थे ताकि वे अच्छे कर्म करें और बुरे कर्मों से दूर रहें।

(3). ऐसी चीजों को देखने की क्षमता जो सामान्यतः मनुष्यों द्वारा नहीं देखी जा सकतीं - दैवीय दृष्टि

मोग्गलाना अक्सर अपनी दिव्य दृष्टि का उपयोग बुद्ध के ठिकाने का पता लगाने के लिए करते थे। वे इसका उपयोग अन्य प्राणियों को देखने के लिए भी करते थे। एक बार जब सारिपुत्त गहन ध्यान में बैठे थे, मोग्गलाना ने देखा कि एक राक्षस उनके सिर पर प्रहार कर रहा है। तब उन्होंने अपने मित्र से पूछा कि उन्हें कैसा लग रहा है। सारिपुत्त ने उत्तर दिया कि प्रहार के कारण उन्हें हल्का सिरदर्द हो रहा है। मोग्गलाना ने अपने मित्र की एकाग्रता की शक्ति की प्रशंसा की, जबकि सारिपुत्त ने राक्षस को देखने की उनकी क्षमता की प्रशंसा की, जिसे उन्होंने स्वयं नहीं देखा था।

ऐसी ही एक घटना दर्ज की गई है जब मोग्गलाना और भिक्षु लक्खाना गिद्ध शिखर से नीचे उतर रहे थे। मोग्गलाना ने एक पेटा (दुखी आत्मा) को देखा और वह मुस्कुराया। लक्खाना को जब यह एहसास हुआ कि मोग्गलाना ने कुछ ऐसा देखा है जो उन्होंने नहीं देखा था, तो उन्होंने मोग्गलाना से प्रश्न किया। मोग्गलाना ने बुद्ध की उपस्थिति में उत्तर देने का वादा किया।

जब वे बुद्ध के पास पहुँचे, तो लक्खाना ने फिर मोग्गलाना से पूछा कि वह क्यों मुस्कुरा रहे थे। मोग्गलाना ने उत्तर दिया कि उन्होंने एक विशाल सर्प के आकार की आत्मा को ज्वालाओं में घिरा हुआ देखा, जो गिद्धों द्वारा पीछा किए जाने और नोचे जाने के दौरान चीख रही थी। मोग्गलाना को उस पीड़ित प्राणी पर दया आई और फिर इस ज्ञान से राहत मिली कि भविष्य में उनका ऐसा जन्म कभी नहीं होगा, क्योंकि यह उनका अंतिम जन्म था। इसी राहत के कारण वे मुस्कुराए थे। मोग्गलाना को लगा कि बुद्ध द्वारा पुष्टि किए बिना कोई भी उनके देखे पर विश्वास नहीं करेगा। फिर उन्होंने ऐसे जन्म का कर्मिक कारण बताया। उन्होंने कहा कि पिछले जन्म में यह आत्मा एक किसान थी। उसका एक खेत था, जिसे वह उस स्थान के पास जोत रहा था जहाँ पच्चेक (मौन) बुद्ध विराजमान थे। नगरवासी अक्सर पच्चेक बुद्ध के दर्शन के लिए उसके खेत से होकर गुजरते थे। इससे किसान परेशान हो गया और उसने लोगों को अपने खेत से गुजरने से रोकने के लिए हर संभव प्रयास किया। हालांकि, श्रद्धालुओं की भीड़ ने उनके निर्देशों को नजरअंदाज कर दिया और उनके खेत पर चलना जारी रखा।

किसान ने पच्चेक बुद्ध के अपने निवास से निकलने का अवसर तलाशते हुए, उनका सामान नष्ट कर दिया और उनकी कुटिया जला दी। जब भक्तों को पता चला कि किसान ने पच्चेक बुद्ध की कुटिया और सामान नष्ट कर दिया है, तो वे क्रोधित हो गए। उन्होंने अपना क्रोध किसान पर निकालते हुए उसे पीट-पीटकर मार डाला। किसान का पुनर्जन्म अविची नरक में हुआ और हजारों वर्षों के बाद, वह गिद्ध शिखर पर अग्नि में घिरे सर्प प्रेत (पेटा) के रूप में पुनर्जन्म लिया।

बुद्ध ने मोग्गलाना के दर्शन और कहानी की पुष्टि करते हुए कहा कि उन्होंने स्वयं उसी आत्मा को उस दिन देखा था जिस दिन उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ था।

बुद्ध की तरह, मोग्गलाना भी कर्म के नियम को क्रियान्वित होते देख सकते थे। वे देखते थे कि बुरे कर्म करने वाले लोग पेटा और असुर लोकों में पुनर्जन्म लेते हैं और अच्छे कर्म करने वाले स्वर्ग लोकों में पुनर्जन्म लेते हैं। पेटवत्थु में 51 घटनाओं का और विमानवत्थु में 85 घटनाओं का वर्णन है जिन्हें मोग्गलाना ने देखा था और जिनका उपयोग उन्होंने अपने शिष्यों को अच्छे और बुरे कर्मों के परिणामों को समझाने में किया था। वास्तव में, इस क्षमता के बल पर मोग्गलाना ने अन्य गुरुओं के कई शिष्यों को आर्य मार्ग की ओर आकर्षित किया। इससे उन गुरुओं में ईर्ष्या उत्पन्न हुई जिन्होंने अपने शिष्यों को खो दिया।

(4). अंतरिक्ष में यात्रा करने की क्षमता - एस्ट्रल ट्रैवल

सातवीं वर्षा ऋतु के दौरान बुद्ध ने तीन महीने तक तावतिंसा स्वर्ग में देवताओं को अभिधम्म, यानी उच्चतर शिक्षाओं का पाठ किया। सूक्ष्म यात्रा का उपयोग करते हुए, मोग्गलाना समय-समय पर बुद्ध से मिलने जाते थे और उन्हें श्रेष्ठ धर्म की प्रगति के बारे में सूचित करते थे।

एक अन्य अवसर पर जब मोग्गलाना बुद्ध की खोज में निकले थे, तब उन्होंने देखा कि बुद्ध एक ब्रह्मा के अहंकार को तोड़ने के लिए ब्रह्मालोक गए थे। वह ब्रह्मा इस भ्रम में था कि ब्रह्मा होने के नाते वह बुद्ध और अन्य स्वामियों से श्रेष्ठ है। यह देखकर और उस ब्रह्मा की क्षमता को पहचानकर बुद्ध अपने सिंहासन पर प्रकट हुए। मोग्गलाना ने बुद्ध के इरादे को समझकर उनका साथ दिया और इस प्रकार ब्रह्मा के अहंकार को परास्त कर दिया। परास्त ब्रह्मा बुद्ध और उनकी शिक्षाओं की सर्वोच्चता को स्वीकार करने के लिए तैयार हो गए।

मोग्गलाना ने अपनी सूक्ष्म यात्रा की क्षमता का उपयोग सारिपुत्त की बीमारी में उनकी सहायता करने के लिए भी किया। चिकित्सक ने कमल के डंठलों से बनी एक औषधि की सलाह दी थी, जो केवल हिमालय पर्वत में ही उपलब्ध थी। मोग्गलाना तुरंत पर्वतों की यात्रा पर गए और अपने मित्र के उपचार के लिए आवश्यक औषधि प्राप्त की।

मोग्गलाना ही आनंद बोधि वृक्ष को बुद्ध गया से सावत्थी लेकर आए थे। आनंद ने बुद्ध से पूछा कि उन अनेक निराश भक्तों की सहायता के लिए क्या किया जा सकता है जो बुद्ध के दर्शन के लिए सावत्थी आते हैं, लेकिन पाते हैं कि बुद्ध किसी अन्य व्यथित व्यक्ति की सेवा में अनुपस्थित हैं। बुद्ध ने उस महान बोधि वृक्ष का एक पौधा सावत्थी में लगाने का अनुरोध किया, जिसके नीचे उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ था। उन्होंने घोषणा की कि बोधि वृक्ष बुद्ध का प्रतीक होगा, जिसकी भक्त उनकी अनुपस्थिति में पूजा कर सकेंगे। मोग्गलाना ने अपनी अलौकिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए बुद्ध गया की यात्रा की और वह पौधा लेकर आए।

(5). पदार्थ पर महारत - असाधारण गति

इस ग्रंथ में अनेक उदाहरणों का उल्लेख है, जहाँ बुद्ध के अनुरोध पर मोग्गलाना ने अपनी अलौकिक शक्तियों का प्रयोग करके लोगों को धर्म के प्रति उनकी निष्क्रियता और उदासीनता से जगाया। एक बार मिगारा की माता के महल में रहने वाले भिक्षु लापरवाह और आलसी थे। बुद्ध ने मोग्गलाना को एक चमत्कार करके उनमें विश्वास जगाने का निर्देश दिया। मोग्गलाना ने अपने पैर के अंगूठे से महल को धक्का देकर हिला दिया। भिक्षुओं ने इस अलौकिक चमत्कार को देखकर और मोग्गलाना की शक्तियों को पहचानकर, लगन से साधना में लौट आए और आध्यात्मिक विकास के उच्च स्तर प्राप्त किए।

एक अन्य घटना में, मोग्गलाना ने देखा कि स्वर्ग के राजा सक्का, इंद्रिय सुखों में लिप्त होकर लापरवाही बरत रहे थे। सक्का के स्वर्गलोक जाकर, मोग्गलाना ने अपने पैर के अंगूठे से सक्का के महल को हिलाया और इस प्रकार उन्हें उनकी नश्वरता और समस्त घटनाओं की क्षणभंगुरता का स्मरण कराया। तब सक्का ने एक अधिक धार्मिक जीवन शैली अपना ली।

एक बार बुद्ध और उनके अनुयायियों को भारी विपत्ति का सामना करना पड़ा क्योंकि बारिश में देरी हो रही थी और अकाल पड़ गया था। मोग्गलाना ने मिट्टी को पलटने का प्रस्ताव रखा ताकि नीचे की उपजाऊ मिट्टी ऊपर आ जाए और फसल काटी जा सके। बुद्ध ने मोग्गलाना का प्रस्ताव यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया कि ऐसा करने से कई निर्दोष जीव मारे जाएंगे क्योंकि मिट्टी में कई छोटे जीव रहते हैं। फिर मोग्गलाना ने अपनी अलौकिक शक्तियों का उपयोग करके उस शहर और एक अन्य हरे-भरे शहर के बीच सड़क बनाने का प्रस्ताव रखा। बुद्ध ने फिर से यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया कि वे इस अकाल को सहन कर लेंगे, जो जल्द ही समाप्त हो जाएगा। ये एकमात्र ऐसे उदाहरण हैं जहां बुद्ध ने मोग्गलाना के अनुरोध को अस्वीकार किया। सामान्यतः, बुद्ध, जिन्हें मोग्गलाना पर बहुत विश्वास और सम्मान था, उनके निर्णयों और अनुरोधों का समर्थन करते थे।

(6). रूप का रूपांतरण

मोग्गलाना की शक्तियों में सबसे प्रसिद्ध और अद्‌भुत शक्ति थी स्वयं को अन्य प्राणियों में रूपांतरित करने की उनकी क्षमता। नाग नाग नंदोपानंद के साथ सत्ता संघर्ष और अंततः उसकी पराजय सर्वविदित है। विशुद्धिमग्ग में इस युद्ध का वर्णन इस प्रकार है: एक बार बुद्ध 500 अरहंतों के साथ तावतिंसा स्वर्ग गए। वहाँ से गुजरते हुए उन्होंने दिव्य नाग नंदोपानंद को विवश कर लिया। क्रोधित होकर उसने विशाल कुंडलियों से सिनरू पर्वत को घेर लिया और अपना विशाल फन फैला दिया, जिससे नीचे का संसार अंधकार में डूब गया। कई

भिक्षुओं ने क्रोधित नाग को वश में करने का प्रस्ताव रखा, लेकिन बुद्ध ने दिव्य नाग की शक्तियों को भलीभांति जानते हुए मोग्गलाना को इस कार्य के लिए चुना। तब मोग्गलाना ने स्वयं को एक विशाल नाग में रूपांतरित कर नंदोपानंद के साथ भयंकर युद्ध किया। एक के बाद एक शक्ति का प्रयोग करते हुए, विभिन्न रूपों में प्रकट होकर, उसने अपने प्रतिद्वंद्वी पर विजय प्राप्त की। युद्ध के अंतिम चरण में उन्होंने सर्प के कट्टर शत्रु, दिव्य बाज सुपन्ना का रूप धारण कर लिया। इस समय नंदोपानंद पराजित होकर पीछे हट गए और मोग्गलाना ने भिक्षु का रूप धारण कर लिया और पराजित नंदोपानंद को क्षमा मांगने के लिए बुद्ध के पास ले आए। जातक कथा में मोग्गलाना के पूर्व जन्मों के अनेक संदर्भ मिलते हैं। अनेक जन्म कथाओं में बोधिसत्व, मोग्गलाना और सारिपुत्त भाई, मित्र, सेवक या शिष्य के रूप में सह-अस्तित्व में रहे थे। अन्य पूर्व संबंधों के भी उदाहरण मिलते हैं। जातक कथा मोग्गलाना और सारिपुत्त के बीच के मजबूत बंधन को भी उजागर करती है, क्योंकि अनेक अवसरों पर वे सह-अस्तित्व में रहे और घनिष्ठ मित्र थे। सामान्यतः, सारिपुत्त मोग्गलाना से उच्च पद पर थे, हालांकि यह बात तब अधिक स्पष्ट होती है जब दोनों का जन्म पशु रूप में हुआ था। जातक कथा में उनके पूर्व संबंधों के 30 से अधिक उदाहरण दर्ज हैं।

मोग्गलाना का ज्ञानोदय

मोग्गलाना ने अपने अनुभवों की विरासत को तिरसठ छंदों में समेटा है, जो थेरागाथा में दर्ज हैं और जो उनके आंतरिक प्रयासों, उनकी ध्यान शक्ति, अपने मित्रों की मुक्ति पर उनकी खुशी, आत्माहीनता और अलौकिक सत्य के उनके अनुभव और उनकी अंतिम मुक्ति पर जोर देते हैं।

मोग्गलाना के अंतिम दिन यद्यपि मोग्गलाना के पास असाधारण शक्तियाँ थीं और वे एक अरहंत थे, फिर भी अपने मित्र सारिपुत्त के विपरीत उन्हें शांतिपूर्ण मृत्यु प्राप्त नहीं हुई। मोग्गलाना की अन्य लोकों में झाँकने और कर्म के नियम की व्याख्या करने की क्षमता, साथ ही उनके असाधारण शिक्षण कौशल ने उन्हें अत्यंत लोकप्रिय बना दिया। मोग्गलाना ने कई अन्य शिक्षकों के शिष्यों को बुद्ध के श्रेष्ठ मार्ग पर स्थापित किया। अन्य संप्रदायों के तपस्वियों ने अपनी घटती संख्या देखकर मोग्गलाना को मारने का निश्चय किया। स्वयं इस जघन्य कृत्य को अंजाम देने से भयभीत होकर, उन्होंने हत्यारों को काम पर रखा। जब हत्यारों ने पहली बार प्रयास किया, तब मोग्गलाना राजगाह के बाहरी इलाके में स्थित इसिगिली पर्वत पर ब्लैक रॉक में अपनी कुटिया में ध्यान कर रहे थे। मोग्गलाना ने अपनी अलौकिक शक्तियों का उपयोग करके बिना किसी की नज़र में आए भाग निकले। दूसरी बार भी हत्यारों को कुटिया खाली मिली। तीसरे प्रयास में मोग्गलाना की अलौकिक शक्तियां क्षण भर के लिए उनका साथ छोड़ गईं। हत्यारों ने उन्हें बुरी तरह पीटा और उनकी हड्डियां चूर-चूर कर दीं और उन्हें मरा समझकर छोड़ दिया। मोग्गलाना बुद्ध के दूसरे प्रमुख शिष्य थे। वे बुद्ध को प्रणाम किए बिना और परिनिर्वाण की अनुमति प्राप्त किए बिना परलोक नहीं जाना चाहते थे। अत्यंत प्रयास से, सूक्ष्म यात्रा का उपयोग करते हुए, मोग्गलाना अपने घायल शरीर को समेटकर बुद्ध के निवास स्थान पर गए और परलोक जाने की अनुमति मांगी। फिर, प्रमुख शिष्य की परंपरा के अनुसार, उन्होंने उपस्थित लोगों को धर्म का उपदेश दिया, भीड़ को विश्वास दिलाने के लिए अनेक चमत्कार किए और परनिर्वाण प्राप्त कर लिया। मोग्गलाना का परलोक उनके मित्र सारिपुत्त के दो सप्ताह बाद, कत्तिका (अक्टूबर/नवंबर) माह में हुआ। अपने प्रिय गुरु की असमय मृत्यु से भिक्षु और शिष्य व्यथित थे। राजा ने हत्या की जांच का आदेश दिया और हत्यारों को पकड़ लिया, जिन्होंने बताया कि उन्हें निगंथनाथ तपस्वियों ने किराए पर लिया था। इसके बाद राजा ने उस समय के हत्यारों के लिए निर्धारित कानूनों के अनुसार तपस्वियों को यातना देकर मार डाला। भक्तों ने बुद्ध से यह भी पूछा कि महा मोग्गलाना की मृत्यु इतनी पीड़ादायक क्यों हुई। बुद्ध ने कर्म के उस नियम की व्याख्या की जिससे एक अरहंत भी नहीं बच सकता, और मोग्गलाना द्वारा पिछले जन्म में किए गए एक गंभीर अपराध का वर्णन किया। अपनी पत्नी के उकसावे पर, मोग्गलाना ने अपने दोनों अंधे माता-पिता को पीट-पीटकर मार डाला। उसके बूढ़े माता-पिता, जिन्हें लगा कि उन पर लुटेरों का एक गिरोह हमला कर रहा है, ने अपने प्रिय पुत्र से जान बचाने की गुहार लगाई। उन्हें जरा भी अंदाजा नहीं था कि लुटेरों के वेश में उनका अपना ही पुत्र इस जघन्य अपराध को अंजाम दे रहा था। मोग्गलाना ने हजारों वर्षों तक नरक में कष्ट भोगा और अरहंत के रूप में भी उसे भीषण मृत्यु का सामना करना पड़ा, क्योंकि माता-पिता की हत्या एक गंभीर (गरुका) अपराध है, जिसके परिणाम आसानी से नहीं मिटते।

मोग्गलाना की शिक्षण क्षमता और उनकी अलौकिक शक्तियों ने संघ और जनसमूह के प्रशिक्षण में उनकी सहायता की। यह मोग्गलाना ही थे जिन्होंने अपने मित्र सारिपुत्त के साथ मिलकर, देवदत्त द्वारा संघ में फूट डालने पर पथभ्रष्ट भिक्षुओं को बुद्ध के पास वापस लाया। उन्होंने धम्म के सुदृढ़ीकरण और संघ के प्रशासन में भी सहयोग दिया।
टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दाका निकाय >> थेरागाथा >> थेरा(264):वांगीसा
श्रीमती सी.ए.एफ. राइस डेविड्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।
नोट: पाली पाठ में 'सी' का उच्चारण 'च' की तरह होता है, जैसे 'चाइना' में।

पिछला <<<<------ (264) अंत॥

अंतर्वस्तु

अध्याय XXI.
इकहत्तर छंदों की कविताएँ जिन्हें 'महान निपाता'
भी कहा जाता है ।

264. वांगीसा

बुद्ध युग में सावत्थी में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में पुनर्जन्म लेकर, उनका नाम वांगीसा रखा गया और उन्हें तीनों वेदों की शिक्षा दी गई। उन्होंने अपनी उंगली के नाखून से खोपड़ियों पर थपथपाकर और उनके पूर्व निवासों के पुनर्जन्म के स्थान का पता लगाकर एक शिक्षक के रूप में लोकप्रियता हासिल की। [1] ब्राह्मणों (पुजारियों) ने इसमें लाभ का साधन देखा और वांगीसा को अपने साथ लेकर गांवों, कस्बों और राजमहलों का भ्रमण किया। तीन वर्षों तक वांगीसा के पास खोपड़ियाँ लाई गईं और उनसे भविष्यवाणी करवाई गई। लोगों को अपने ऊपर विश्वास दिलाने के लिए उन्होंने 100 और यहाँ तक कि 1000 (कहापन) तक की फीस अर्जित की। और ब्राह्मण (पुजारी) उन्हें अपने साथ जहाँ भी जाना चाहते थे, ले जाते थे। अब उसने भगवान (बुद्ध) के गुणों के बारे में सुना और उनसे मिलने की इच्छा की, लेकिन ब्राह्मणों (पुजारियों) ने आपत्ति जताते हुए कहा: 'गौतम (बुद्ध) भिक्षु अपनी चालाकी से तुम्हें बहका देंगे।' [2] लेकिन वांगीसा ने उनकी बात नहीं मानी और जाकर एक तरफ बैठ गए। भगवान (बुद्ध) ने उन्हें देखकर पूछा: 'वांगीसा, क्या तुम कोई कला या शिल्प जानते हो?' 'जी, भगवान गौतम (बुद्ध), मैं खोपड़ी मंत्र जानता हूँ। इसके द्वारा, अपनी उंगली के नाखून से खोपड़ी पर थपथपाकर , मैं पिछले तीन वर्षों से यह पता लगाता आ रहा हूँ कि पुनर्जन्म कहाँ हुआ है।' भगवान (बुद्ध) ने उन्हें नरक में पुनर्जन्म लेने वाले व्यक्तियों की खोपड़ियाँ दिखाईं, मनुष्य के रूप में, देवता के रूप में, और एक ऐसे व्यक्ति की जो पूरी तरह से मर चुका था। अंतिम को छोड़कर बाकी सभी के बारे में अनुमान लगाने पर, वह कुछ भी नहीं जान सका। तब भगवान (बुद्ध) ने पूछा: 'क्या तुम्हारी कला सक्षम नहीं है?' "वांगीसा?" "मुझे अच्छी तरह से पता कर लेना चाहिए," वांगीसा ने कहा, और वह उसे तब तक बार-बार घुमाता रहा जब तक उसके माथे पर पसीना नहीं आ गया - क्योंकि उसे अरहंत के जाने का पता कैसे चलेगा? और वह वहाँ चुपचाप और शर्मिंदा खड़ा रहा। "क्या तुम थक गए हो, वांगीसा?" "हाँ, भगवान गौतम (बुद्ध), मुझे पता नहीं चल रहा है कि इसका पुनर्जन्म कहाँ हुआ है। यदि आपको पता है, तो बताएँ।" "वांगीसा, मुझे यह भी पता है, और इससे भी अधिक पता है:"

जो प्रत्येक प्राणी को भली-भांति जानता है
कि वे कहाँ से मरते हैं और कहाँ से आते हैं, वह
प्रबुद्ध, आनंदित, हर बंधन से मुक्त है:
मैं उसे ब्राह्मण (ऋषि) कहता हूँ।
जिसका भाग्य न देवदूत, न देवता, न मनुष्य
जानता था, वह अरहंत (प्रबुद्ध), समझदार और निर्मल है:
मैं उसे ब्राह्मण (ऋषि) कहता हूँ।' [3]

तब वांगीसा ने कहा, "हे गौतम बुद्ध, मुझे यह गुप्त ज्ञान दीजिए।" प्रणाम करते हुए वे बुद्ध के शिष्य के रूप में बैठ गए। लेकिन बुद्ध ने कहा, "आइए हम आपको भिक्षु के लक्षण सिखाते हैं।" तब वांगीसा ने सोचा, "मुझे हर हाल में यह मंत्र सीखना है।" और उन्होंने अपने साथी ब्राह्मणों (पुजारियों) से कहा, "यदि मैं भिक्षु बन जाऊं तो इसे गलत न समझें। जब मैं यह मंत्र सीख लूंगा, तो मैं पूरे भारत में प्रथम हो जाऊंगा, और इससे मुझे सौभाग्य प्राप्त होगा।" अतः उन्होंने भिक्षु दीक्षा का अनुरोध किया, और बुद्ध ने पास खड़े निग्रोधकप्पा थेरा को वांगीसा को भिक्षु दीक्षा देने का आदेश दिया। थेरा ने ऐसा ही किया, और फिर यह कहते हुए: 'तुम्हें पहले मंत्र के सहायक तत्व सीखने होंगे,' उन्हें शरीर के बत्तीस घटकों का अभ्यास कराया, [4] और एक अंतर्दृष्टि का अभ्यास कराया। पहले का अभ्यास करके उन्होंने दूसरी क्षमता विकसित की। और जब ब्राह्मण (पुजारी) यह पूछने आए कि क्या उन्होंने कला प्राप्त कर ली है, तो उन्होंने उत्तर दिया: 'कैसी कला प्राप्त करना? तुम यहाँ से चले जाओ; मुझे तुमसे कोई लेना-देना नहीं है।' ब्राह्मण (पुजारी) बोले: 'देखो! यह भी धूर्तता से भ्रष्ट होकर गौतम (बुद्ध) भिक्षु के प्रभाव में आ गया है। गुरु के रूप में हमें तुमसे क्या लेना-देना है?' और वे चले गए। लेकिन वांगीसा ने अरहंतत्व (ज्ञानोदय) प्राप्त कर लिया।
अरहंत (प्रबुद्ध) होने पर, वे भगवान (बुद्ध) के समक्ष गए और दर्जनों श्लोकों में उनकी महिमा का बखान करते हुए उनकी तुलना चंद्रमा, सूर्य, आकाश, सागर, पर्वत, सिंह और हाथी से की। सभा में बैठे भगवान (बुद्ध) ने उन्हें वाणी की सुगमता में सर्वोपरि घोषित किया। [5] परन्तु अरहंत (प्रबुद्ध) होने से पहले और बाद में उन्होंने जो कुछ श्लोकों में कहा, उसे आनंद और अन्य थेरों ने सभा में इस प्रकार संकलित और दर्ज किया:

मैं।
यह बात तब कही गई जब एक नौसिखिए ने विहार (मठ) के पास आई कई चमकीले रंग के कपड़े पहने महिलाओं को देखकर प्रभावित होने के बाद, एक ऐसी भावना जिसे उसने दबा दिया: [6]

[1209] निकखन्तं वात माऽ सन्तं अग्रस्मानगरियं॥
विटक्का उपधावन्ति पगब्भा कान्हा तो इमे॥॥
[1210] उग्गपुत्त महिस्सा सिक्खिता दधधम्मिनो॥
समंता परिकिमेय्युं सहस्सां अपालयिनं॥॥
[1211] ससेऽपि एत्तका भय्यो अगामिस्सान्ति इत्थियो॥
नेव मां ब्याध्यायिस्संति धम्मे समहि पतिथितां॥॥
[1212] सक्खिहि मे सुताṃ एतां बुद्धस्सदिक्काबन्धुनो॥
निब्बानगमनं मग्गं तथा तथा मे निरतो मानो॥॥
[1213] इवाṃ सीई माṃ विहारंताṃ पपीमा उपगच्छसि॥
तथा मक्कु करिसामि न मे मग्गमपि दक्खसी॥॥

[1209] हाय! कि अब जब मैं घर से निकलकर
बेघर जीवन में आ गया हूँ, तो
अंधेरे से उपजे ये अप्रिय विचार मेरे मन से दूर हो जाएँ। [7]
[1210] वे उच्च कुल के योद्धा थे, पराक्रमी तीरंदाज थे,
श्रेष्ठ धनुष-बाण में प्रशिक्षित थे, ऐसे जो कभी भागते नहीं थे,
और चारों ओर हजारों तीर बिखेर देते थे। ...
[1211] लेकिन महिलाएं! खैर, उनसे कहीं अधिक आ सकती हैं,
फिर भी वे मेरी मन की शांति को कभी भंग नहीं करेंगी,
मैं जिन सत्यों में दृढ़ हूं, उनमें दृढ़ हूं। [8]
[398] [1212] क्योंकि उनकी उपस्थिति में भी [9] मैंने
सूर्य के उच्च वंश के बुद्ध को [10] निर्वाण की ओर जाने वाले मार्ग के बारे में बताते हुए सुना है;
और वहाँ मेरे पूरे हृदय का प्रेम दिया गया है।
[1213] अब जबकि मैं हमेशा साथ रहने के ऐसे मूड में हूँ,
हे नीच, क्या तुम सोचते हो कि तुम मेरे पास आ सकते हो?
तब मैं भी वैसा ही करूँगा, हे मृत्यु, और तुम
कभी नहीं जान पाओगे कि मैं कौन सा रास्ता अपनाता हूँ। [11]

II.
अपनी भावनाओं, घृणा आदि को दबाते हुए बोला गया:

[1214] अरतीṃ रतिṃ सीए पहाया सब्बसो गेहेसिटाṃ सीए विटक्कṃ॥
वनाथो न करेया कुहिनसि निब्बानथो अवनाथो सा भिक्खु॥ ॥
[1215] यमिधा पाथविṃ च वेहसाṃ रूपगताṃ जगतोगधाṃ किञ्ची॥
परिजीयति सब्बमनिच्चै एवं समेच्च कैरन्ति मुत्तत्ता॥ ॥
[1216] उपधिसु जन गधितासे दिट्ठे सुते पतिघे च म्यूट चा॥
एत्थ विनोदाय चन्द्रमनेजो यो हेत्थ न लिप्ति मुनि तमाहु ॥ ॥
[1217] अट्ठा सहिसिता सवितक्का पुथुज्जनतायṃ11 सधम्म निविट्ठा॥
न च वग्गागत्स्स कुहिनचि नो पना दुतहुल्लागाहि सा भिक्खु॥ ॥
[1218] डब्बो सिराट्टसामहितो अकुहाको निपाको अपिहालु,॥
सन्तं पदं अज्झगमा मुनि पॅतिका परिनिब्बुतो कांखति कलां ॥ ॥

[1214]
मैं, जिसने सांसारिक कल्पना को उत्तेजित करने वाली हर चीज में नापसंद और पसंद का त्याग कर दिया है ,
कहीं भी वासना के लिए जगह नहीं बना सकता।
जो जंगली बुराई [12] से मुक्त होकर खुले में पहुँच गया है
, वही वास्तव में भिक्षु है।
[1215] पृथ्वी पर दिखाई देने वाली आकृति की सभी वस्तुएँ,
या पृथ्वी पर आधारित ऊपरी आकाश में, [13] सब क्षणभंगुर हैं, और सब कुछ बीत जाता है: -
इस प्रकार जो सोचते हैं वे समझते हुए चलते हैं। [14]
[1216] जीवन के लिए जो कुछ भी आवश्यक है, उसमें [15] लोग हमेशा [16] जो देखा, सुना, छुआ और सोचा जाता है, उससे जुड़े रहते हैं। [17] [399] जो यहाँ इच्छाओं को दबाकर, अप्रभावित,
कहीं भी नहीं टिकता, उसे [बुद्धिमान] संत कहते हैं।
[1217] जो अड़ियल और साठ गलत विचारों से चिपके रहते हैं, [18] उनका स्वभाव सामान्य औसत दर्जे का होता है,
वे बुरे और अधर्मी रास्तों पर चलते रहते हैं। [19] परन्तु जो कोई किसी संप्रदाय में न जाए,
और व्यर्थ की राय के सहारे न चले, [20] उसे सब लोग एक सच्चे भिक्षु के रूप में जान सकते हैं।
[1218] पूर्ण रूप से संपन्न, [21] बहुत समय से स्वयं भगवान (बुद्ध),
स्पष्टवादी फिर भी बुद्धिमान, और लालसा की शक्ति से मुक्त,
एक संत, उन्होंने शांति का मार्ग प्राप्त कर लिया है;
शांत और निर्मल, अपने अंतिम क्षण की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

तृतीय
अपनी वाक्पटुता से संबंधित अपने स्वयं के व्यवहार को दबाते हुए बोला गया:

[1219] मनन पजाहसु गोतम मनपथाṃ सीए जहस्सु असेसाṃ॥
मनापथमहि सा मुच्चितो विप्पतिसारि हुवा सिरारत्तो॥ ॥
[1220] मक्खेन मक्खिता पजा मानहत निरयं पापतन्ति॥
सोकन्ति जना सिरार्त्तं मनहता निरयं उपपन्ना॥ ॥
[1221] न हि सोकाति भिक्खु कदाचि मग्गाजिनो सम्मा पतिपन्नो॥
कित्तिओ च सुखं चनुभोति धम्मदासो' ति तमाहु तथात्तो ॥ ॥
[1222] तस्मा अखिलो पधानावा निवारणानि पहाय विशुद्धो॥
मनन च पहाया असेसां विज्जयंतकरो समितवी ॥ ॥

[1219] हे गौतम (बुद्ध) के शिष्य, अहंकार का त्याग करो! [22] अपने पैर को अहंकार के मार्ग से पूरी तरह हटा लो।
क्योंकि तुम कुछ समय के लिए उस मार्ग पर मोहित हो गए थे, और
आज से बहुत पहले तुमने वास्तव में पश्चाताप किया था।

[1220] आत्म-प्रवंचना से धोखा खाकर यह पीढ़ी,
अभिमान से नष्ट होकर, विपत्ति के लिए अभिशप्त है।
कई युगों तक नरक में पुनर्जन्म लेकर,
अभिमान से नष्ट हुए लोग अपने विनाश पर विलाप करेंगे।
[1221] [400] भिक्षु कभी नहीं रोता:
पथ-विजेता जिसने सर्वोच्च को प्राप्त किया है। वह
प्रसिद्धि और सुखी अंतरात्मा [23]
दोनों का आनंद लेता है। 'मानदंड-द्रष्टा' [24] कहते हैं, और बुद्धिमान सही कहते हैं।
[1222] अतः इस जीवन में, संयमी और निर्बाध,
सभी बाधक बादलों को दूर करके, और मन से स्पष्ट होकर,
अभिमान और व्यर्थ की धारणाओं का पूर्णतः त्याग करके,
मुझे अंत-निर्माता और शांत पाया जाए। [25]

चतुर्थ

एक दिन, एक नौसिखिए के रूप में, वे पूज्य आनंद के पास गए, जिन्हें राजा के एक मंत्री ने उनसे मिलने के लिए कहा था। वहाँ वे अत्यधिक सजी-धजी महिलाओं से घिरे हुए थे, जिन्होंने थेरा को प्रणाम किया और प्रश्न पूछे, और उनका धर्मोपदेश सुना। लेकिन वांगीसा उत्तेजित और इच्छा से भर गए। तब, एक सुसंस्कृत, धर्मनिष्ठ और ईमानदार व्यक्ति होने के नाते, उन्होंने सोचा: 'मेरी यह बढ़ती हुई भावना मेरे वर्तमान और भविष्य के भले के लिए उपयुक्त नहीं है।' और बैठे-बैठे ही उन्होंने थेरा को अपनी स्थिति बताते हुए कहा:

[1223] कामरागेना दायहामि चित्तौ मे परिद्यहति॥
साधु निब्बापनं ब्रूहि अनुकम्पाय गौतम ॥॥ ॥

[1223] मेरी इंद्रियाँ जोश से जल रही हैं, मेरा मन प्रज्वलित है।
मुझ पर दया करो, हे गौतम वंश के!
मुझे सच-सच बताओ कि कैसे बुझाया जाए! [26]

और पूज्य आनंद ने उत्तर दिया:

[1224] सान्या विपरियेसा चित्तं तेपरिद्यहति॥
निमित्तौ परिवज्जेहि सुभौ रघुपासाऽहिताऽ॥ ॥
[1224ए] सौंखरे परतो पासा दुक्खतो मा च अत्ततो॥
निब्बापेहि महरागं मा दयिहितथो पुनप्पुना। *॥ ॥
[1225] असुभया चित्ताऽ भवेहि एकग्गाऽ सुसमाहिताऽ॥
सति कायगतात्यथु निब्बिदबाहुलो भव॥ ॥
[1226] अनिमित्तं च भवेहि मननुस्यामुज्जहा॥
ततो मनाभिसमय उपसंतो कैरिसि.॥ ॥

[1224] क्योंकि तुम्हारा निर्णय बिगड़ा हुआ है, विकृत है,
इसलिए तुम्हारा मन प्रज्वलित है। तुम्हें [27] सुंदर वस्तुओं को देखने से बचना चाहिए जो वासना से जुड़ी हैं।
[1225] अपने दृढ़ और संयमित मन को
उन चीजों पर विचार करने के लिए विवश करो जो देखने में उचित नहीं हैं,
इंद्रियों के प्रति ध्यानपूर्ण सतर्कता रखो।
और एक विवेकपूर्ण अरुचि से परिपूर्ण रहो।
[1226] त्रिविध चिह्न की अनुपस्थिति का अध्ययन करो; [28] अहंकार के हानिकारक पूर्वाग्रह को त्याग दो।
क्या मन ने व्यर्थ कल्पनाओं पर विजय प्राप्त कर ली है?
तब तुम शांत और निर्मल होकर अपने मार्ग पर चल सकते हो।

वी

यह कथन परम पूज्य (बुद्ध) द्वारा भगवान (बुद्ध) की स्तुति में 'अच्छी तरह से कही गई बातें' [29] पर सूत्र सिखाने के बाद कहा गया था:

[1227] तमेव वाचान् भासेय ययत्तनः न तपये॥
पारे च न विहिनसेय सा वे वाचा सुभाषिता॥ ॥
[1228] पियवाकामेव भासेय या वाचा पतिनंदिता॥
यं अनादया पापानि परेसां भासते पियौं॥ ॥
[1229] सक्कै वे अमाता वाचा एसा धम्मो सनंतनो॥
सच्चे अत्थे च शम्मे च आहु सत्तो पतितिता॥ ॥
[1230] यं बुद्धो भासति वाचं खेमं निब्बानपत्तिया॥
दुक्खस्सन्तकिरिया सा वे वचनमुत्तमा॥ ॥

[1227] जो कोई ऐसा शब्द बोल सकता है जिससे
वह स्वयं को कष्ट न पहुँचाए,
और न ही साथी मनुष्यों को हानि पहुँचाए -
वह शब्द अच्छा बोला गया है।
[1228] जो शब्द बोले जाएं वे कितने सुखद होते हैं।
जो शब्द कानों को भाते हों,
जो दूसरों की कमियों को न पकड़ें,
वे सुनने में कितने मधुर होते हैं।
[1229] सत्य वह शब्द है जो स्वयं समाप्त नहीं होता।
यही प्राचीन आदिम मार्ग (धम्म) है। [30] सत्य, अच्छाई और मार्ग (धम्म) पर कहा जाता है कि
संत दृढ़ता से खड़े रहते हैं।
[1230] जिसके बारे में प्रबुद्ध व्यक्ति बात करता है,
निर्वाण को हमारा बनाने का निश्चित सुरक्षित मार्गदर्शक,
दुख का स्थायी अंत करने के लिए -
वही सर्वोच्च शब्द है।

छठी
सारिपुत्त की प्रशंसा में बोले गए शब्द:

[1231] गंभीरापन्नो मेधावी मग्गमग्गसा कोविडो॥
सारिपुत्तो महापन्नो धम्मं देसेति भिक्खुणं॥ ॥
[1232] संखितेन'पि देसेटि विट्ठरेण'पि भासति॥
सालिकायिव1 निग-घोसो पतिभानां उदिर्यि। ॥ ॥
[1233] तस्स ताm देसायंतस्सा सुनंती3 मधुरागिराm॥
सरेण रजनीयेन सवानीयेन वग्गुना,॥
उदग्गचित्ता मुदिता सोतां ओधेन्ति भिक्खवो॥ ॥

[1231] गहन रहस्यों की अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण,
और विद्वत्तापूर्ण ज्ञान से भरपूर,
सत्य और असत्य दोनों मार्गों में निपुण,
सारी के पुत्र, अत्यंत बुद्धिमान,
भिक्षुओं को धम्म के मार्ग पर शिक्षा देते हैं।
[1232] वह पहले संक्षिप्त रूपरेखा में सिखाता है,
और फिर पूरी तरह से विस्तार से समझाता है।
और मैना पक्षी के मधुर गीत की तरह, [31] उसका स्पष्टीकरण बह निकलता है।
[1233] और जब वह सिखाते हैं, तो जो लोग
उनके मधुर भाषण को सुनते हैं, वे उनकी

मनमोहक, संगीतमय आवाज़ के स्वरों को पसंद करते हैं,
मंत्रमुग्ध कानों और आनंदित हृदयों से,
उनके हर शब्द को प्रसन्नतापूर्वक सुनते हैं।

सातवीं
परमपुरुष (बुद्ध) द्वारा पवाराण (प्रत्यावर्तन या बर्खास्तगी) सुत्तंता में प्रवचन देने के बाद बोली गई: [32]

[1234] अजजा पनारसे विशुद्धिआ भिक्खु पंचसाता समागता॥
संयोजनबन्धनच्चिदा अनिघा खिनपुनभवा इसी.।॥
[1235] चक्कवत्ती यथा राजा अमाक्कपरिवारितो॥
समंता अनुपर्येति सागरंतां महीऽ इमाऽ॥॥
[1236] इवं विजितसङ्गमाṃ सत्थवाहाऽ अनुत्तराṃ॥
सावका पयिरुपासन्ति तेविज्जा मक्कुहायिनो॥॥
[1237] सब्बे भगवतो पुत्ता पलासेत्थ4 न विज्जति॥
तन्हासल्लस्स हन्तराण वन्दे आदिच्चबन्धुनः॥॥

[1234] आज पूर्णिमा के दिन, पूर्ण पवित्रता के लिए
पाँच सौ भिक्षु एक साथ आए हैं।
उन सभी ने अपनी बेड़ियाँ और बंधन काट दिए हैं;
वे द्रष्टा हैं जो पुनर्जन्म और दुःख से मुक्त हैं।
[1235] और एक राजा के रूप में जो पूरी दुनिया पर राज करता है,
अपने राज्य सलाहकारों से घिरा हुआ,
अपने साम्राज्य में हर जगह भ्रमण करता है,
उन सभी भूमियों में घूमता है जो समुद्र में समाप्त होती हैं,
[403] [1236] इसलिए, जो युद्ध में हमारे विजेता हैं,
हमारे कारवां के अद्वितीय भगवान (बुद्ध),
हम अनुयायी उनकी सेवा करते हैं और उनकी प्रतीक्षा करते हैं,
जो त्रिविध ज्ञान धारण करते हैं, मृत्यु के नाशवान।
[1237] हम सब परम पूज्य के पुत्र हैं। हमारे बीच
कोई निरर्थक बकवास करने वाला नहीं पाया जाता। [33]
मैं उसकी पूजा करता हूँ जो लालसा के बाणों को भेदता है।
मैं सूर्य के महान वंश की संतानों को प्रणाम करता हूँ।

आठवीं
परम पूज्य (बुद्ध) की प्रशंसा में कहा गया, जो निर्वाण पर भिक्षुओं को धार्मिक प्रवचन दे रहे थे: [34]

[1238] परोसहस्साṃ भिक्खुनाṃ सुगाताṃ पयिरुपसति॥
देसेंतां विरजां धम्मं निब्बाणं अकुतोभायं॥॥
[1239] सुनन्ति धम्मṃ विमलाṃ5 सम्मासंबुद्धदेसिताṃ॥
शोभति वात सम्बुद्धो भिक्खुसाङ्घपुरक्खतो॥॥
[1240] नागानामोसि भगव इसिनं इसिसत्तमो,॥
महामेघोवा हुत्वान् सावके अभिवस्सति।॥॥
[1241] दिवाविहार निखम्मा सत्थुस्सानकमायता॥
सावको ते महावीर पदे वंदति वाङगिसो॥॥

[1238] एक हजार भिक्षु, हाँ, और इनसे भी अधिक,
उस स्वागतयोग्य व्यक्ति के चारों ओर सेवा करते हैं, जिसने यहाँ
धर्म का मार्ग (शुद्ध धर्म), निर्मल धर्म, [35] यहाँ तक कि निर्वाण का भी उपदेश दिया, जहाँ कोई भय नहीं आ सकता।

[1239] वे धम्म के प्रचुर प्रवाह को सुनते हैं,
जो परम बुद्ध द्वारा प्रदान किया जाता है,
हे अद्‌भुत सुंदर, सर्व-प्रबुद्ध चमकते हैं,
चारों ओर बैठे भिक्षुओं के सभी समूह के साथ।
[1240] रहस्यमय आत्मा [36] आप, हे पूज्य (बुद्ध)!
द्रष्टाओं की वंशावली में सातवें, [37] ग्रीष्म आकाश में एक विशाल तूफानी बादल की तरह,
आप अपने अनुयायियों पर बहुमूल्य वर्षा बरसाते हैं।
[1241] और इनमें से एक, ध्यान से आया,
अपने कृपालु स्वामी (बुद्ध) को देखकर अत्यंत प्रसन्न हुआ -
हे वीर, देखो! आपका सच्चा शिष्य
आपके चरणों में झुककर आपकी पूजा करता है।

तब [38] भगवान (बुद्ध) ने पूछा: 'हे वांगीसा, क्या तुमने ये श्लोक पहले से रचे थे, या ये तुम्हें अभी-अभी सूझे?' वांगीसा ने उत्तर दिया, 'ये मुझे अभी-अभी सूझे।' ['तो फिर, तुम्हें ऐसे और श्लोक सूझने चाहिए।' 'जी प्रभु' - और वांगीसा ने आगे स्तुति की:]

[1242] उम्मग्गपथाṃ मरास्सा अभिभुय कैरति पभिज्जा खिलानि॥
तं पस्सथ पंधानपमुन्चकारान् असितौव भगसो पतिभज्जा।॥॥
[1243] ओघास्सा हि नित्थराणत्थṃ अनेकविहिताṃ मग्गाṃ अक्खासी॥
तस्मिञ्च अमाते अक्खाते धम्मदसा ठीका असाहिरा॥॥
[1244] पज्जोत्कारो अतिविज्ज धम्मṃ सब्बाऽहितिनाऽ अतिक्कममदा॥
तत्त्वा च सच्चिकत्वा च अग्गं सो देसायि दशद्धानां॥॥
[1245] एवाṃ सुडेसाइट धम्मे॥
को पमादो विजानातं धम्मं॥
तस्मा हि तस्स भगवतो ससाने॥
अप्पमट्टो सदा नमस्सामनुसिक्खे॥॥

[1242] वह मारा के कुटिल मार्गों पर विजयपूर्वक विचरण करता है,
और हर बाधा को तोड़ देता है।
देखो, वह हमारे मुक्तिदाता हैं, जो सभी बंधनों से मुक्त हैं;
स्वयं परिपूर्ण होकर, वे मार्ग (धम्म) का विभाजक हैं। [39]
[1243]
क्योंकि उसने अनेक विधियों से भयंकर चौगुनी बाढ़ को पार करने का मार्ग दिखाया है ; [40] और हम, जिन्हें उसने अमृत बताया है, [41] अजेय धम्म-द्रष्टा के रूप में खड़े हैं।
[1244] प्रकाश लाने वाले, उन्होंने
उन सभी पड़ावों को पार करते हुए, जहाँ मन ठहर गया था, पार कर लिया है। [42] सर्वोच्च ऊँचाइयों को जानते और समझते हुए, वे हमें दृष्टि का मार्ग दिखाते हैं। [43]
[1245] देखो! अब इतने अच्छे से प्रकट हुए सत्यों में, तुच्छ समझे जाने
वालों में उनकी बुद्धि का क्या स्थान है?
अतः प्रत्येक व्यक्ति उस भगवान (बुद्ध) की प्रणाली में उत्साहपूर्वक
अभ्यास करे, और अभ्यास करते समय आराधना करे।

नौवीं
आदरणीय थेरा अन्ना-कोंडान्ना की प्रशंसा में कहा गया: [44]

[1246] बुद्धानुबुद्धो यो थेरो कोंडाणो तिब्बानिक्खमो॥
लसि सुखविहरणं विवेकाणं अभिनहासो॥॥
[1247] याṃ [112] सवकेण पत्तब्बाṃ सत्थुसासनकारिना॥
सब्बास्सा तं अनुप्पत्तं अप्पमत्तस्सा सिक्खतो॥॥

[1248] महानुभावो तेविज्जो सिटोपेरियाकोविडो॥
कोंडाणिनो बुद्धदायदो पदे वंदति सत्थुनो॥ ॥

[1246] हमारे महान प्रबुद्ध (बुद्ध) के बाद कौन जागृत हुआ,
भिक्षु कोंडञ्ञा, ऊर्जा में बलवान,
जो अक्सर आनंदमय सहजता के घंटे बिताता है -
[पूर्ण वैराग्य] की फसल - [45]
[1247] भगवान (बुद्ध) के अनुयायी जो कुछ भी जीत सकते हैं,
यदि वे नियम के प्रशिक्षण को पूरा करते हैं - यह सब कोंडञ्ञा ने परिश्रमपूर्वक और लगन से अध्ययन करके
चरण दर चरण जीता है ।

[1248] शक्ति में श्रेष्ठ और त्रिविध ज्ञान में पारंगत,
दूसरों के विचारों को समझने में निपुण, [46] बुद्ध के सही उत्तराधिकारी कोंडञ्ञा,
भगवान (बुद्ध) के चरणों में उन्हें लेटे हुए देखें।

एक्स
पूज्य मोग्गलाना महान की प्रशंसा में, परम पूज्य (बुद्ध) के समक्ष, जब उन्होंने देखा कि राजगृह में ऋषियों की पहाड़ी पर काले पत्थर पर एकत्रित 500 अरहंतों (प्रबुद्धों) के हृदय मुक्त हो गए थे और पुनर्जन्म की स्थितियों से मुक्त थे: [47]

[1249] नागास्सा पासे असीनाṃ मुनिṃ दुक्खासा परागुṃ॥
सावका पयिरुपासन्ति तेविज्जा मक्कुहायिनो॥ ॥
[1250] चेतासा अनुपरायेति मोग्गलानो महिधिको॥
चित्तṃ नेसाṃ समन्वेसाṃ विप्पमुत्तṃ निरूपधिṃ॥ ॥
[1251] एवाṃ सब्बांगसम्पन्नाṃ मुनिṃ दुक्खस्सा परागुṃ॥
अनेकाकारसम्पन्नै पयिरुपासन्ति गोतमौ ॥ ॥

[1249] पहाड़ी ढलानों पर शिष्य बैठे हैं,
त्रिविध ज्ञान धारण किए हुए, मृत्यु के संहारक, [406] बैठे हुए संत की प्रसन्नता पर,
जिन्होंने दुःख की समस्त शक्ति को पार कर लिया है।
[1250] और मोग्गलाना, जो रहस्यवादी शक्ति में महान थे,
ने सभी के हृदयों का चिंतन किया,
और इस प्रकार जाँच करके उन्होंने पाया कि वे मुक्त हो गए हैं,
और उनके पास पुनर्जन्म लेने के लिए कुछ भी नहीं है। [48]
[1251] इसलिए वे उस पूर्ण संत की प्रतीक्षा करते हैं,
जिसने दुःख की समस्त शक्ति को पार कर लिया है,
और हर तरफ अपने कार्य को पूर्ण कर दिया है -
इसलिए गौतम (बुद्ध) की प्रतीक्षा और सम्मान करें।

ग्यारहवीं
अपनी सुंदरता और महिमा से प्रकाशित, परम पूज्य की प्रशंसा में बोले गए, जब वे कैम्पा में गग्गरा कमल-झील पर भिक्षुओं के संघ और आम लोगों से घिरे हुए थे: [49]

[1252] कैंडो यथा विगतावलाहे नभे॥
विरोचति वीतमलोऽव भानुमा॥
एवङपि अंगिरस त्वं महामुनि॥
अतिरोकासि यसासा सब्बलोकान्॥ ॥

[1252] जैसे जब आकाश से बादल छंट जाते हैं, तो

चंद्रमा सूर्य के समान चमकता है,
वैसे ही हे अंगीरासा, [50] हे सबसे शक्तिशाली द्रष्टा,
आप अपनी महिमा से समस्त विश्व को प्रकाशित करें।

बारहवीं
नवशिक्षित अरहंत (ज्ञानी) के रूप में अपने अनुभवों और भगवान (बुद्ध) पर चिंतन करते समय बोले गए शब्द:

[1253] काव्यमत्ता विचारिम्हा पुब्बे गामा गमं पुरा पुरm̐॥
अथद्दसाम संबुद्धौ सब्बधम्मना परागु:॥ ॥
[1254] सो मे धम्मदेसेसि मुनि दुक्खस्सा परागु॥
धम्मं सुत्वा पसीदिम्हा अद्धा नो उदपज्जथा॥ ॥
[1255] तस्साह वचनं सुत्वा खंडे आयतनानि च॥
धातुयो च विदित्वाना पब्बाजीं अनागारियौ ॥ ॥
[1256] बहुन्नै वात अत्थया उपज्जन्ति तथागत॥
इत्थिनां पुरिसानां च ये ते ससनकारका॥ ॥
[1257] तेसां खो वात अत्थया बोधिमज्झागमा मुनि॥
भिक्खुन्नै भिक्खुनिन्न च ये नियमगतद्दसा।॥ ॥
[1258] सुदेसिता चक्कुमाता बुद्धेनादिच्चबंधुना॥
कत्तारि अरियासच्चनि अनुकंपाय पणिनं॥ ॥
[1259] दुक्खाm̐ दुक्खसमुप्पादाm̐ दुक्खस्सा च अतिक्कमm̐॥
अरिअयं चथौंगिकाm̐1 मग्गाm̐ दुक्खुपसमागमिनाm̐॥ ॥
[1260] एवमेते तथा वुत्ता दिट्ठा मे ते यथा तथा॥
सदत्तो मे अनुप्पत्तो कटं बुद्धस्स ससनं॥ ॥
[1261] स्वागतो वात मे असि मम बुद्धस्स संतिके॥
सङ्विभत्तेसु धम्मेसु यं सेठंहां तदुपगामिऽ॥ ॥
[1262] अभिन्यापारमिप्पत्तो सोतधातु विसोधिता॥
तेविज्जो इधिपट्टोमहि सेतोप्रियकोविदो.॥ ॥

[1253] भविष्यवाणी की कला में मदहोश होकर, [51] हम पुराने समय
में शहर-गांव घूमते थे, फिर शहर लौट आते थे।
तब हमने सर्व-प्रबुद्ध को देखा,
जिसने हमारे ज्ञान से परे जाकर सब कुछ पार कर लिया है।
[1254] उन्होंने मुझे धम्म के मार्ग में उपदेश दिया - द्रष्टा,
जो दु:ख की समस्त शक्ति से परे हैं।
और जब हमने वह धम्म मार्ग सुना तो हमारा हृदय प्रसन्न हुआ,
और उसमें विश्वास और आस्था हमारे भीतर जागृत हुई।
[1255]
शरीर, मन, संवेदनाओं, उनके विषयों और
हमारे ज्ञान के सभी डेटा के बारे में उनके वचन को सुनकर [52] - इन्हें समझकर,
मैंने दुनिया (मठवास के लिए) छोड़ दी और बेघर जीवन जीने लगा।
[1256] हे निश्चय ही अनेक लोगों के कल्याण के लिए
उनका आगमन हुआ है जो इस प्रकार आए हैं! -
उन स्त्रियों और पुरुषों का जो अपने नियम का पालन करते हैं।
[1257] हाँ, निश्चय ही, और उन लोगों के सर्वोच्च कल्याण के लिए -
भिक्षुओं और ननों, जो देखते हैं
कि क्या है, क्या हो सकता है [53] -
उनके लिए द्रष्टा ने ज्ञान प्राप्त किया।
[1258] सूर्य वंश के, जो दृष्टि रखते हैं, बुद्ध द्वारा, [54] सभी प्राणियों के प्रति दयालुता में अच्छी तरह से शिक्षित

हैं चार आर्य, चार आर्य सत्य;
[1259] दुःख क्या है और क्यों है,
दुःख कैसे आता है और दुःख को कैसे दूर किया जा सकता है,
आर्य मार्ग से भी, जो अष्टमार्ग है,
जिससे सभी दुःख दूर हो जाते हैं। [55]
[1260] इस प्रकार उपदेश दिए गए, और मैंने
उन्हें वैसे ही देखा जैसे मुझे दिखाए गए थे;
और अब मैंने निश्चय ही मोक्ष प्राप्त कर लिया है,
और बुद्ध के सभी विधान पूरे हो गए हैं।
[1261] हे शुभ समाचार! मेरे लिए शुभ समय है
भगवान (बुद्ध) के चरणों के निकट रहने और अध्ययन करने का;
मनुष्यों के बीच प्रचलित अनेक सिद्धांतों में से,
मैंने निश्चित रूप से इसे ही सर्वश्रेष्ठ पाया। [56]
[1262] मैंने अंतर्ज्ञान की ऊँचाइयों को प्राप्त कर लिया है, [57] श्रवण शक्ति से सुस्ती दूर हो गई है;
मेरे पास त्रिविध ज्ञान और जादुई शक्ति है;
मैं दूसरों के विचारों को जानने में निपुण हूँ।

तेरहवें
जब यह पूछताछ की जा रही थी कि क्या उनके शिक्षक [58] की मृत्यु के समय पूरी तरह से मृत्यु हो गई थी:

[1263] पुच्चामि [113] सत्थारमनोमपन्नṃ॥
दिट्ठोऽव धम्मे यो विकिसिच्चनं चेत्वा॥
अग्गादवे कलमकासि भिक्खु॥
सातो यस्सि अभिनिब्बुत्तो॥ ॥
[1264] निग्रोधकप्पो इति तस्स नामाṃ,॥
तया कतं भगव ब्राह्मणस्स॥
सोऽहाṃ नमस्साṃ अकारिṃ मुत्त्यपेखो॥
अरद्धवीरियो दधधम्मदस्सी.॥ ॥
[1265] ताऽ सवकाऽ सक्का मयाऽपि सब्बे॥
अन्नातुमिच्छामा समन्तचक्खु॥
समावथिता नो सवानाय सोता॥
तुवं नो सत्था त्वमानुत्तरोसि.॥ ॥
[1266] चिंदा नो विकिकिचाṃ ब्रूहि मेटाṃ॥
परिणिब्बुतां वेदया भूरिपन्न॥
मज्जहेव नो भासा समन्तचक्खु॥
सत्तोऽव देवान् सहस्सनेत्तो॥ ॥
[1267] ये केचि गंथा इधा मोहमग्गा॥
अनानापक्खा विकिचिच्छना॥
तथागतं पट्वा न ते भवन्ति॥
चक्खुṃ हि एतां परमं नारायणं॥ ॥
[1268] नो सीई ही जतु पुरिसो किलिसे॥
वतो यथा अब्भघनान् विहने॥
तमोवस्सा निवुतो सब्बालोको॥
जोतिमन्तोऽपि न पभासेयुऽ ॥ ॥
[1269] धीरा च पज्जोत्कारा भवन्ति॥
तं तं अहं वीर तथैव मन्ने॥
विपश्यिनं जनमुपागमिम्हा॥
परिसासु नो अविकारोहि कप्पां॥ ॥

[1270] खिप्पाṃ गिराṃ एराया वग्गु वग्गुṃ॥
हंसो'वा पग्गयहा सैनिकानि निकुजा॥
बंडुसरेना [114] सुविकप्पितेना॥
सब्बे' ते उज्जुगत सुनोमा॥ ॥
[1271] पाहिनाजतिमरणाṃ असेसाṃ॥
निग-गयः धोनं पतिवेदीयामि॥
न कामकारो हि पुथुज्जनानं॥
सान्खेय्यकारोऽव तथागतानान्॥ ॥
[1272] सम्पनवेय्याकारणं तवेदाṃ॥
समुज्जुपन्नस्सा समुग्गहितं॥
अयमंजलि पचिमो सुप्पनामितो॥
मा मोहयि जन्मनोमपन्न.॥ ॥
[1273] परोवरअ अरियाधम्मं विदित्वा॥
मा मोहयि जन्मनोमावीरा॥
वारिं यथा घम्मानि घम्मतत्तो॥
वाचभिकंखामि सुतं पवस्सा॥ ॥
[1274] यसत्थिकाṃ ब्रह्मकारियाअचरी॥
कप्पायणो कच्चि सतां अमोघं॥
निब्बायी सो अदु सौपादिसेसो॥
यथा विमुत्तो अहु ताओ सुनोमा॥ ॥

[1263] मैं भगवान (बुद्ध) से पूछता हूँ - उनकी बुद्धि असीम है -
जो इस जीवन के बारे में हर संदेह को दूर करते हैं: [59] -
यहाँ अग्गलवा [60] में एक भिक्षु का निधन हो गया है,
जो सुप्रसिद्ध और प्रसिद्ध थे, शांत और स्थिर [उनका हृदय];
[1264] निग्रोधा-कप्पा, आपने ही उन्हें
ऐसा नाम दिया था, इस भले आदमी का यही नाम था, हे पूज्य (बुद्ध)। [61] आपका आदर करते हुए वे रहते थे, उनकी दृष्टि स्वतंत्रता पर थी,
और स्थिर के द्रष्टा, [62] उन्होंने अच्छा प्रयास किया।
[1265] हे शाक्यन,
हम सब इस शिष्य के भाग्य को जानने के लिए उत्सुक हैं, हे सर्वदर्शी;
आप ध्यानपूर्वक इसे सभी के कानों तक पहुंचाते हैं: -
आप हमारे भगवान (बुद्ध) हैं और आप सर्वोच्च हैं।
[409] [1266] क्या आप हमारे सभी संदेहों को दूर कर देंगे?
हे परम ज्ञान, मुझे बताइए:
क्या उसने वास्तव में अपने जीवन का लंबा चक्र पूरा कर लिया है?
हे सर्वज्ञ द्रष्टा, हमारे बीच में हमसे बात कीजिए,
जैसे स्वर्गिक हॉल में हजार आँखों वाले सक्का (देवताओं के राजा) कहते हैं। [63]
[1267] यहाँ हमें बांधने वाले बंधन, भ्रम के मार्ग,
अज्ञान के कारक, संदेह के स्थान: -
चाहे वे कुछ भी हों, भगवान (बुद्ध) के सामने, तथागत (अर्थात बुद्ध)
के सामने , वे अस्तित्वहीन हो जाते हैं, क्योंकि मनुष्यों में सर्वोच्च नेत्र वही है।

[1268] क्योंकि यदि, वास्तव में, कोई मनुष्य संसार के भ्रष्टाचारों को
हवा की तरह नीचे आते बादलों को नहीं बहाता, तो
संसार [64] पूरी तरह से घने अंधकार में ढक जाएगा,
और यहाँ तक कि उज्ज्वल दिमाग भी अपना प्रकाश खो देंगे।
[1269] हम सभी के लिए प्रकाश लाने वाले बुद्धिमान पुरुष हैं;

और हे ऋषि, मुझे लगता है कि आप भी वैसे ही हैं।
हम उस व्यक्ति के निकट आए हैं जो देखता है, जानता है; [65] हम सभी को कप्पा का भाग्य प्रकट कीजिए!
[1270] हे सबसे सुंदर , अपनी सारी सुंदरता के साथ शीघ्रता से अपनी आवाज़ भेजो
; जैसे हंस,
मधुर और सुरीले स्वरों के साथ,
लयबद्ध तुरही बजाते हुए अपनी गर्दन उठाता है,
और हम सब सच्चे दिलों से सुनेंगे।
[1271] उसके मार्ग से जन्म और मृत्यु का सारा रिवाज़ दूर हो गया; [66] और जिसने उन्हें बिना किसी अवशेष के त्याग दिया,
अब मैं उसी को विवश करके बोलने का आग्रह करूँगा।
क्योंकि [67] आम लोग अपनी इच्छाओं को पूरा करने में असफल रहते हैं,
परन्तु संत जो भी योजना बनाते हैं, उसे पूरा करते हैं।
[410] [1272] हमने अच्छी तरह से सीख लिया है कि आप कैसे उत्तर दे सकते हैं,
जिनकी अंतर्दृष्टि सीधे चीजों के मर्म तक जाती है,
व्यर्थ में हम खड़े नहीं हैं, एक बार फिर प्रणाम करते हुए।
हे ज्ञान में असीम, भ्रमित न करें,
जो [कप्पा के भाग्य] को निश्चित रूप से जानते हैं।
[1273] आर्य पथ (धम्म) को आप उसकी सभी दिशाओं में जानते हैं, [68] हे ज्ञानवान और कर्म करने में सक्षम, हे भ्रमित न करें!
जैसे गर्मी से पीड़ित होने पर ठंडे पानी की प्रतीक्षा में,
हम आपके वचन की प्रतीक्षा करते हैं: - वर्षा हो ताकि हम सुन सकें! [69]
[1274] वह पवित्र जीवन (ब्रह्मचर्य) जो उसने, वांछित लक्ष्य के लिए,
कप्पसों के उस व्यक्ति ने व्यतीत किया, व्यर्थ नहीं था?
क्या वह पुनर्जन्म के बीज से भरा हुआ चला गया, [70] या पूरी तरह से मुक्त होकर? - यही हम सुनना चाहते हैं।

[परमेश्वर (बुद्ध):]
[1275] उन्होंने मन और शरीर के जीवन के लिए सभी लालसाओं को यहाँ नीचे काट दिया, और अपने भीतर गहराई से बहने वाली लालसा की
धारा को पार कर लिया , जन्म और मृत्यु दोनों से पूरी तरह परे चले गए।

(इस प्रकार पांचों में सर्वश्रेष्ठ, परम पूज्य ने कहा।) [71]

[वांगीसा]:

[1276]
हे पराक्रमी ऋषियों , आपका वचन सुनकर मेरा हृदय प्रसन्न हुआ ! [72] वास्तव में, मेरी प्रार्थना व्यर्थ नहीं थी
, हे पवित्र! [73]
[1277] जैसा कप्पा ने कहा, वैसा ही कप्पा ने किया,
वह बुद्ध का शिष्य था, [74]
क्योंकि उसने चालाक मृत्यु द्वारा फैलाए और बलवान जाल को काट डाला ।
[1278]
हे पूज्य बुद्ध! कल्पों में से जिसने पकड़ का स्रोत देखा , उसने सचमुच मृत्यु के उस क्षेत्र को
पार कर लिया है जिसे पार करना इतना कठिन है।

[1279] हे देवताओं से भी महान, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ,
तुम्हारे पुत्र के साथ, हे पुरुषों में श्रेष्ठ, [75] तुम्हारे जैसा एक महान वीर,
अद्भुत अस्तित्व का, [76] तुम्हारा पुत्र।

इस प्रकार पूज्य भिक्षु वांगीसा ने अपना वचन (गाथा) कहा।

[1] कोसल (CLI) के एक ब्राह्मण (पुजारी) मिगासिरा के बारे में भी यही कहानी बताई जाती है, और संभवतः यह एक और विभाजित कथा है। संयुत्त-निकाय में, आठवां खंड पूरी तरह से वांगीसा की उन रचनाओं को समर्पित है जो निम्नलिखित बारह खंडों में निहित हैं, साथ ही गद्य प्रसंग भी हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण हमारी टीका में दिया गया है। शेष श्लोक (1263-78) सुत्त-निपात (श्लोक 343-58) में निहित हैं, साथ ही श्लोक (1227)-(1230) भी।

[2] प्रतिद्वंद्वी शिक्षकों द्वारा अक्सर लगाया जाने वाला एक आरोप। तुलना करें मज्झ. निक., i. 375; साम. निक., iv. 341.

[3] सुत्त-निपात, श्लोक 643, 644।

[4] खुद्दक-पाठ देखें ।

[5] एंग. निक., आई. 24.

[6] सामी. निक., i. 185 एफ. वहाँ वांगीसा को विहार का संरक्षक या द्वारपाल कहा जाता है, और महिलाएं इसे देखने आती हैं।

[7] कादातो लामकभावतो (साइ.)। मरापक्खतो. Saṃy. साइ.
"ढाल क्यों नहीं?" क्योंकि लाठी से तीरों को रोकना (यह कला तलवार या हाथ से भी की जाती है) अधिक कठिन है, इसलिए तुलना और भी स्पष्ट हो जाती है। श्रीमती राइस डेविड्स ने शायद चीनी कुंग-फू फिल्में नहीं देखी होंगी जिनमें यह कौशल अक्सर देखने को मिलता है।

[8] इस कठिन अंश की व्याख्या टीका द्वारा इस प्रकार की गई है: 'एक पुरुष लाठी लेकर (ढाल क्यों नहीं?) कई तीरों को मार गिरा सकता है, लेकिन प्रत्येक स्त्री एक साथ पाँच तीर चलाती है (प्रत्येक इंद्रिय पर आक्रमण करते हुए), और इसलिए अधिक खतरनाक होती है।' 'सत्य' (धम्मेसु) का अर्थ सामान्यतः सिद्धांत है, लेकिन विशेष रूप से सैंतीस बोधिपक्खिया धम्म। तुलना करें संकलन, पृष्ठ 179 f.

[9] समुखा (टीका)।

[10] तुलना करें XXVI.

[11] सी. सिस्टर्स, उप्पलावन्न और मारा, श्लोक 231 एफ.

[12] जंगल या वन को कामवासना या लालसा के प्रतीक के रूप में देखें , बहनें, वड्ड की माँ, श्लोक 208।

[13] टीका के अनुसार, वेहसाṃ = देवलोकनिसिटाṃ; जगतो-गधाṃ = लोकिकाṃ।

[14] पढ़ना mutantā = pariññā (टिप्पणी).

[15] उपधीसु, या आधार। टीका में केवल पाँच खंधों का नाम है, लेकिन अन्यत्र तीन अन्य श्रेणियों का नाम दिया गया है (धम्मपद, श्लोक 418; एसबीई, x., पृ. 94): - काम (इंद्रिय-संबंधी इच्छाएँ), क्लेसा (बुराइयाँ, पाप; cf. पृ. 78, n. i.), और कम्म।

[16] गधितासे. टिप्पणी: paṭibandhacittā.

[17] पतीघे। टिप्पणी: घाटनिये, फोठब्बे (मारो जाने वाली, छुई जाने वाली चीजें)। यह दिलचस्पी की बात है कि धम्मपाल ने सारत्थपकासिनी (बुद्धघोष द्वारा रचित संयुत्त टिप्पणी) को उद्धृत किया है: सारत्थपकसिनियं पतिघसद्देना गंधारसा गहिता, आदि।

[18] आमतौर पर डायलॉग्स, यानी 'ब्रह्मजाल-सुत्तंत' में वर्णित अनुमानित राय को बासठ के रूप में जाना जाता है। यहां, टीका कहती है, पाली (यानी, पाठ) थोड़ा अधिक या कम के संबंध में सटीक नहीं है। द सैय. साइ. अथ सत्थिनिसिता: अथ च आराम्मनिसिता।

[19] सी.एफ. जाट. मैं। 259: अधम्मस्मिṃ निवित्थो।

[20] पदुल्ला- मुझे लगता है, किसी अन्य कृति में नहीं मिलता। तुलना करें बोथलिंगक और रोथ: sv दुल। टीका में duṭṭhullagāhī है; Saṃy.: -bhāṇi.

[21] डब्बो। टिप्पणी, डब्बाजातिको (अंग. निक., i. 354 देखें),[?] पिंडिटो। बाद वाले शब्द का उपयोग, जातक टिप्पणी (खंड II, पाठ का पृष्ठ 439) में, पक्षी की समृद्ध या पूर्ण आवाज़ , बिंदुसारो की व्याख्या करने के लिए किया जाता है। अंगुत्तारा साइ. पंडिता-जातिको द्वारा व्याख्या ; Saṃy. साइ. दुब्बाजातिको पंडितो (एसआईसी) द्वारा । वैसे भी, मुझे डॉ. न्यूमैन की तरह थेरा डब्बा (वी.) को इसमें घसीटने का कोई औचित्य नहीं दिखता।

[22] गोतमगोत्तस भगवतो सावकत्त अत्तनः गोतमगोत्तṃ कट्वा अलपति (टिप्पणी)।

[23] चेतना के मूल अर्थ में। 'सर्वोच्च': सम्मा।

[24] धम्मदासो. सय . निक. 'मानद-प्रेमी,' धम्मरातो.

[25] सुत्त निपाता, श्लोक 520 और उसके संदर्भ की तुलना करें।

[26] निब्बापना, (इस जुनून की आग या बुखार को) बुझाना। बाद की व्याख्या शायद निब्बाना के इस अर्थ पर कम और प्रस्थान या पलायन के अर्थ में निकलने पर अधिक आधारित थी (संकलन, पृष्ठ 168); फिर भी ऊपर देखें, श्लोक 691।

[27] = सुत्त-निपात, श्लोक 340 एफ।

[28] सिस्टर अभिरूप-नंदा को भी श्रेय दिया जाता है, लेकिन, उनके कथन (गाथा) में, बुद्ध से प्रेरित (सिस्टर्स, पृ. 23)। 'स्टील,' एकग्गाम्; शाब्दिक रूप से, एक-बिंदु; 'अध्ययन,' आदि: चीजों को क्षणभंगुर, दुख से युक्त, आत्माहीन (स्वयं से रहित) के रूप में देखें।

[29] साय. निक., i. 188; सुत्त निप., श्लोक 450 f.: 'अच्छी तरह से बोलने के लिए, वाणी न केवल अच्छी होनी चाहिए, बल्कि धार्मिक, सुंदर और सच्ची भी होनी चाहिए।' इस पर वांगीसा ने अपने विचार व्यक्त करने की इच्छा जताई। भगवान (बुद्ध) ने सहमति दी, और वांगीसा उनके सामने खड़े होकर गद्य सूत्र को पद्य में बदल दिया।
[30] यहां बुद्धघसा और धम्मपाल दोनों शब्दश: सहमत हैं: एसा पोराणो धम्मो करियापावेनि; इदं एव हि पोराणाणं अचिन्नं न ते (धपाल: यं ते न) अलिकां भसींसु। परिवर्धन आदि भी देखें।
सिसकिन। एक छोटा सा गाने वाला पक्षी।
[31] सालिका, शाब्दिक रूप से, 'चावल की किनारी,' जैसे हम 'सिसकिन' कहते हैं।
[32] वर्षा ऋतु की समाप्ति पर आयोजित एक सभा, जिसमें पश्चात्ताप आमंत्रित किया गया था। विनय ग्रंथ, i. 825 आदि देखें। भगवान (बुद्ध) (सुत्तंत, साम्य. निक., i. 189 में) अपने विरुद्ध शिकायतें आमंत्रित करते हैं, और सारिपुत्त, दूसरों की ओर से, उन्हें दोषमुक्ति देते हैं, और फिर स्वयं वही दोषमुक्ति प्राप्त करते हैं।
[33] हमारे पाठ में पलापो, या बड़बड़ाने वाला; पाठ और टीका की बर्मी पांडुलिपियों में पलासो, फलासो। पलासो, जिसमें फल नहीं बल्कि पत्ते हैं, संभवतः 'बांझ' का अर्थ है। दोनों टीकाएँ, हमारी और सारत्थ-पकासिनी, तुच्चो अंतो, साररहितो, दुस्सीलो (खाली, सारहीन, नैतिक रूप से बुरा) द्वारा व्याख्या करती हैं ।
[34] वांगीसा फिर सुझाव देते हैं कि उन्हें बोलने की अनुमति दी जानी चाहिए (साम्य. निक., i. 192)।
[35] तुलना करें. बहनें, श्लोक 97.
[36] नाग. तुलना करें ऊपर CCXLVII.
[37] बुद्धों में से सातवाँ। निकाय अतीत में केवल इन्हीं को ध्यान में रखते हैं।
[38] टीका में केवल प्रश्न और उत्तर उद्धृत किए गए हैं। शेष मैं सा◌ॅय. निक. धम्मपाल से लेता हूँ। इसमें केवल इतना जोड़ा गया है कि भगवान (बुद्ध) भिक्षुओं को वांगीसा का उपहार दिखाना चाहते थे।
[39] इस वाक्यांश - असिता व भागसो पविभज्जा[ṃ] - का अनुवाद डॉ. न्यूमैन की तरह 'हंसिया द्वारा खंडों (या गठ्ठों) में विभाजित' के रूप में किया जा सकता है, लेकिन (1) मैं बौद्धों के उद्धारकर्ता की तुलना हंसिया से करने में संकोच करता हूँ; (2) दोनों टीकाएँ इस बात पर सहमत हैं कि असिता , अन्य गाथाओं की तरह , जैसे (1184), अनिस्सिता (स्वतंत्र, स्वयं किसी चीज़ की आवश्यकता नहीं) है। मैंने असिता का अर्थ धात लिया है (जातक टीका, खंड 2, पृष्ठ 247, पाठ देखें, जो चाटा, अभाव के विपरीत है)। मुख्य ज़ोर शिक्षक द्वारा अपने ज्ञान को दूसरों तक पहुँचाने पर है।
[40] तुलना करें. XV., n. 2.
[41] शाब्दिक रूप से, कि अमृत घोषित किया गया है।
[42] दोनों कॉम. हव दिथिथिठानानां विनानानानाना वा।
[43] दोनों टीकाएँ dasaṭṭhānaṃ को अस्वीकार करती हैं, dasaddhānaṃ पढ़ती हैं , और पाँच भिक्षुओं को दिए गए प्रथम उपदेश को aggaṃ dhammaṃ के प्राप्तकर्ताओं के रूप में संदर्भित करती हैं , न ही इस शब्द की व्याख्या करती हैं।
[44] सामी. निक., i. 193. सी.सी.एक्सएलवी .
[45] विवेकानम्, टुकड़ियों में से -अर्थात तीन: शरीर की, मिहद की, और निर्वाण में लीन।
[46] [संपादक: अनुपस्थित, लेकिन संभवतः Saṃy. Nik., i. 193 का भी संदर्भ है ।]
[47] सामी. निक., आई. 194.
[48] निर-उपधिṃ। श्लोक 1216, एन.15 देखें
[49] देखें पृ. 82, एन. 2; 134; 275. संवाद भी देखें, i. 144.
[50] तुलना करें श्लोक 536, n. .
[51] कावेय्यमत्ता। मैंने कहीं और इसका गलत अनुवाद किया है। टीका के बिना मैंने वांगीसा को तालपुत (CCLXII) की तरह एक गायक, नाट या मूक कलाकार समझा था। उनमें कल्पनाशीलता और वाक्पटुता की क्षमता थी, लेकिन पुरानी परंपरा के स्थान पर नई कथा गढ़ने की आवश्यकता नहीं है। यह शब्द साम्य. निक., i. 110 में फिर से आता है, जहाँ बुद्ध बैठे हुए, अपने पैर में चुभे हुए कांटे से उत्पन्न दर्द को दबाते हुए, मारा (मृत्युदेव/राक्षस) पूछते हैं कि वे सिर झुकाकर अलग क्यों बैठे हैं: क्या वे 'बेहोश' या चिंतित हैं, कावेय्यमत्ता, या केवल नींद आ रही है? टीका में लिखा है 'जैसे कि वे सोच रहे हों कि उन्हें क्या कहना है, जो उन्हें करना है उसके कारण पागल हो रहे हों।' यहां दोनों टिप्पणियों में काव्ययान-कब्बा-(ous: -काव्य-) कारकेन मत्ता, मनिता, संभविता, गरुकोडायं अपन्ना है। वान्गिसा की कहानी इस शब्द के चयन की व्याख्या करती है।
[52] खन्धे आयतनानी च धातुयो च. तुलना करें सिस्टर्स, भजन XXX, XXXVIII; मेरा बौद्ध धर्म भी, पृ. 70; और n. 2 के लिए, पृ. 119 f.; 241.
[53] शाब्दिक रूप से, व्यवस्था में शामिल चीज़ों के द्रष्टा - अर्थात्, दुनिया, भौतिक और नैतिक। टीका केवल बाद वाले पर ज़ोर देती है - संपत्तिनियाम, वह व्यवस्था जिसके द्वारा (संत) सफलता प्राप्त की जा सकती है।
[54] देखें XXVI., n.

[55] सी. सिस्टर्स, श्लोक 186.
[56] तुलना करें. IX.
[57] अभिज्ञा (उच्च ज्ञान) के छह रूपों में महारत हासिल करना । तुलना करें पृष्ठ 14, नोट 8, पृष्ठ 32, नोट 2 के साथ।
[58] निग्रोधा-कप्पा थेरा। यह प्रसंग सुत्त-निपात, श्लोक 342 एफएफ में भी दिया गया है। (एसबीई, एक्स., पी. 67 एफएफ.)।
[59] ओल्डेनबर्ग के सुझाव के अनुसार, चेट्वा के स्थान पर चेट्टा पढ़ें । टीका में इसका अर्थ चेडाको से लगाया गया है: 'संदेहों को काटने वाला।'
[60] गंगा पर स्थित आलवी नामक चेतिया (पूर्व-बौद्ध तीर्थस्थल) में विहार , बनारस से 12 योजन और सावत्थी से 30 योजन दूर।
[61] क्योंकि वह नियमित रूप से बरगद (निग्रोध) की छाया में बैठता था , और वहाँ भी अरहंत (प्रबुद्ध) हो गया (टीका)।
[62] अर्थात्, निर्वाण, जो न नष्ट होता है। वह बुद्ध को इस उपाधि से संबोधित कर रहे हैं (टीका)।
[63] शाब्दिक रूप से, देवों को।
[64] निब्बुतो के लिए निवुतो (टिप्पणी) समझें ।
[65] जानन्ताम् के लिए जानन्ताम् । बौद्ध और जैन सूत्र लगातार इन दो क्रियाओं को जोड़ते हैं।
[66] धोना, धुनाति का कर्ता-संज्ञा , जो द्वितीय में आता है। देखें सुत्त-निपाता, श्लोक 818।
[67] हमारा कॉमी. भी hi और va पढ़ता है.
[68] पारोपाराṃ। सी एफ सुत्त-निपात, पृ. 59, एन. 2, पी के साथ. 193, एन. हमारी टिप्पणी उस टिप्पणी की व्याख्या को संक्षेप में प्रस्तुत करती है: [लोकुट्टारा-] लोकियावसेना सुंदराṃ [असुंदराṃ] दूरे संतिकाṃ वा अरिया-धम्मन ती।
[69] शाब्दिक रूप से, 'बारिश सुनी हुई बात' - यानी, भाषण।
[70] हमारी टिप्पणी, पाठ के विपरीत, में nibbāyi so anupādiseso है।
[71] टीका के अनुसार, बुद्ध के बारे में जोड़े गए संदर्भ संकलनकर्ताओं द्वारा हैं। मैं यहाँ पंच-सेत्थो को उतना ही नहीं समझ पा रहा जितना टीकाकारों ने समझा। सुत्त-निपात टीका में दिया गया संकेत स्पष्ट रूप से गलत है। बुद्ध पाँचों में से एक नहीं थे, न ही सामाजिक अर्थ में ब्राह्मण (पुजारी) थे। हमारी टीका पाँच इंद्रियों या पाँच उपदेशों का सुझाव देती है, जो दोनों ही यहाँ अनुपयुक्त हैं। डॉ. न्यूमैन द्वारा मध्य देश के पाँच विभाजन और बर्बरों के चार भाग विश्व-प्रशंसा का अधिक तर्कसंगत विस्तार प्रस्तुत करते हैं, लेकिन मेरे विचार से इसका कोई पूर्व उदाहरण नहीं है। संभवतः, मूल पाठ केवल पुमा-सेत्थो जैसा कोई मिश्रित शब्द रहा होगा, जिसका अर्थ है पुरुषों का मुखिया। अब छंद श्लोकों की ओर मुड़ता है।
[72] यानी, सातवें बुद्ध। तुलना करें 403, n. 5.
[73] शाब्दिक रूप से, ब्राह्मण (पुजारी), लेकिन इसके मूल अर्थ में प्रयोग किया गया है: पवित्र, उत्कृष्ट।
[74] वचन और कर्म के बीच संगति को स्पष्ट रूप से तथागत के गुण के रूप में नामित किया गया है। इति-वुत्तक, Ī 112.
[75] निग्रोध-कप्पा, ज़ाहिर है, 'पुत्र' है। 'मनुष्य' का शाब्दिक अर्थ है द्विपाद। अंतिम श्लोक सुत्त-निपात में नहीं है। देवदेवम् शब्द एक बाद के स्रोत का संकेत देता है।
[76] नाग.

एन्वॉय
अपने 'शेर' की दहाड़ की प्रशंसा करते हुए,
बुद्ध के ये बच्चे, समझदार, निर्बल,
अपनी खोज की सुरक्षित और निश्चित शरण पाकर,
बुझ चुकी अग्नि की लौ (निर्वाण) की तरह धन्य शांति में रहते थे।